

भगवानुं ठेकाणुं :
श्री अ. बा. प्रवे. स्थानकेवासी
नेनशाओद्धार समिति,
ठे. गरेडिया कुवा रोड,
राजकोट, (सौराष्ट्र).

Published by :
Shri Akhil Bharat S. S.
Jain Shastroddhara Samiti,
Garedia Kuva Road, RAJKOT,
(Saurashtra), W. Ry, India.



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैप यत्नः ।
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,
कालोह्यं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्दः

करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये ।
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।
है काल निरवधि विपुलपृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥



मूल्यः ३. २५=००

प्रथम आवृत्ति प्रत १२००
वीर संवत् २४६६
विक्रम संवत् २०२६
अमबीसन १६७३

: मुद्रक :
भण्डुलाल छगनलाल शाह
नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस,
धीकांटा रोड, अमदावाद.

श्री तत्त्वार्थसूत्र भाग दूसरे की विषयानुक्रमणिका

अ.नं.	विषय	पृष्ठ
छठा अध्याय		
१	आस्रवतत्त्वका निरूपण सू० १	१-१४
२	पुण्यपाप के आस्रवों के कारण सू० २	१५-२०
३	संपरायक्रिया के आस्रवोंका निरूपण सू० ३	२०-२४
४	अकषायजीव के संसार परिभ्रमण रूप	
	ईर्यापथ आस्रव के कारण होने का निरूपण सू० ४	२५-३१
५	साम्परायिक कर्मास्रव के भेदों का निरूपण सू० ५	३१-५१
६	सब जीवों के कर्मबन्ध समान होता है या विशेषाधिक सू० ६	५२-६९
७	अधिकरणका स्वरूप सू० ७	६९-७५
८	जीवाधिकरण के भेदका निरूपण सू० ८	७६-८७
९	अजीव के अधिकरणका निरूपण सू० ९	८७-९८
१०	कर्मबन्ध के आस्रव सब आयुवालेका अस्रव होता है सू० १०	९८-१००
११	देवायु के आस्रवका निरूपण सू० ११	१०१-१०३
सातवां अध्याय		
१२	संवर के स्वरूपका निरूपण सू० १	१०४-१०७
१३	संवर के कारणरूप समिति गुप्ति आदिका निरूपण सू० २	१०७-११५
१४	समिति के भेदों का निरूपण सू० ३	११६-१२४
१५	गुप्ति के स्वरूप निरूपण सू० ४	१२४-१३२
१६	दश प्रकार के श्रमणधर्मका निरूपण सू० ५	१३२-१४८
१७	अनुपेक्षा के स्वरूपका निरूपण सू० ६	१४८-१७९
१८	परीषहजय का निरूपण सू० ७	१७९-१८४
१९	परीषह के भेदों का निरूपण सू० ८	१८४-२१४
२०	कौन जीवको कितने परीषह होते हैं ? सू० ९	२१४-२२१
२१	भगवान् अरिहन्त भगवन्त को बारह	
	परीषह होनेका निरूपण सू० १०	२२१-२२५
२२	वादरसम्पराय को सब परीषहका संभव का निरूपण सू० ११	२२५-२३०
२३	ज्ञानावरण कर्म के निमित्त से होने वाले दो	
	परिषहों का निरूपण सू० १२	२३०-२३३

२४ दर्शनमोहनीय अन्तराय कर्म के उदय से श्रमण में दर्शन और अलाभपरीषहकी उत्पत्तिका निरूपण सू. १३	२३२-२३४
२५ चारित्रमोहनीयकर्म के निमित्त से होनेवाले सात परिषहोंका कथन सू० १४	२३५-२३८
२६ वेदनीयकर्म के उदय से होने वाले ग्यारहपरीषहों का कथन सू० १५	२३९-२४२
२७ एक जीव को एक ही काल में होने वाले परीषहों का कथन सू० १६	२४२-२४७
२८ हिंसादि से निवृत्ति आदि व्रतों का निरूपण सू० १७-२४	२४८-२५०
२९ हिंसा के स्वरूप निरूपण सू० २५	२५१-२५७
३० मृषावाद का निरूपण सू० २६	२५७-२६५
३१ स्तेय का स्वरूप निरूपण सू० २७	२६५-२७१
३२ मैथुन का निरूपण सू० २८	२७१-२७३
३३ परिग्रह का निरूपण सू० २९	२७३-२८५
३४ पांच अणुव्रत का निरूपण सू० ३०-३७	२८५-२८७
३५ मारणांतिक संलेखना का निरूपण सू० ३८	२८८-२९५
३६ सम्यग्दृष्टि के पांच अतिचार का निरूपण सू० ४००	२९६-३१३
३७ अणुव्रत एवं दिग्व्रत के पांच अतिचारका निरूपण सू० ४१-४२	३१४-३२३
३८ तीसरे अणुव्रत के स्तेनाहतादि पांच अतिचारों का निरूपण सू० ४३	३२४-३३१
३९ चौथे अणुव्रत के पांच अतिचार का निरूपण सू० ४४	३३३-३३७
४० पांचवें अणुव्रत के पांच अतिचार का निरूपण सू० ४५	३३८-३४५
४१ दिग्विरत्यादि सात शिक्षाव्रत के पांच पांच अतिचारों का निरूपण सू० ४६	३४६-३५१
४२ उपभोग परिभोग परिमाणव्रत के अतिचारका निरूपण सू० ४७	३५२-३६५
४३ अनर्थदण्ड विरमणव्रत के अतिचार का निरूपण सू० ४८	३५६-३६४
४४ सामयिकव्रत के पांच अतिचारों का निरूपण सू० ४९	३६४-३७०
४५ देशावकाशिकव्रत के पांच अतिचारों का निरूपण सू० ५०	३७०-३७७
४६ पोषधोपवासव्रत के पांच अतिचारों का निरूपण सू० ५१	३७७-३८२
४७ वारहवें व्रत के पांच अतिचार का निरूपण सू० ५२	३८३-३८९

४८ मारणांतिक संलेखना के पांच अतिचारों का निरूपण सू० ५३	३८९-३९५
४९ पांच महाव्रतों का निरूपण सू० ५४-५५	३९५-३९९
५० पच्चीस भावनाओं का निरूपण सू० ५६	४००-४१२
५१ सामान्य प्रकार से सर्वव्रत की भावनाओं का निरूपण सू० ५७	४१३-४२८
५२ सब प्राणियों में मैत्रिभावना का निरूपण सू० ५८	४२९-४३६
५३ चारित्र के भेद का निरूपण सू० ५९	४३७-४३९
५४ तप के भेद कथन सू० ६०	४५०-४५२
५५ बाह्य तप के भेद का निरूपण सू० ६१	४५३-४६४
५६ आभ्यन्तर तप के भेद का निरूपण सू० ६२	४६५-४६९
५७ दश प्रकार के प्रायश्चित्त का निरूपण सू० ६३	४६९-४८२
५८ विनयरूप आभ्यन्तर तप के भेद का निरूपण सू० ६४	४८३-४८९
५९ वैयावृत्य के भेदों का निरूपण सू० ६५	४९०-४९५
६० स्वाध्याय के भेद का निरूपण सू० ६६	४९५-४९८
६१ ध्यान के स्वरूप निरूपण सू० ६७	४९८-५०२
६२ ध्यान का चतुर्विध भेद का निरूपण सू० ६८	५०२-५०५
६३ धर्मध्यान एवं शुक्लध्यान मोक्ष के कारणरूप का निरूपण सू० ६९	५०५-५०७
६४ आर्त्तध्यान के चार भेदों का कथन सू० ७०	५०८-५१४
६५ अविरत आदि को आर्त्तध्यान होने का प्रतिपादन सू० ७१	५१४-५२१
६६ रौद्रध्यान के चार भेदों का निरूपण सू० ७२	५२६-५३७
६७ धर्मध्यान के चार भेदों का निरूपण सू० ७३	५२६-५३७
६८ शुक्लध्यान के चार भेदों का निरूपण सू० ७४	५३८-५४५
६९ शुक्लध्यान के स्वामि आदि का कथन सू० ७५	५४५-५५१
७० केवलीको अन्तिम दो शुक्लध्यान होने का कथन सू० ७६	५५२-५५६
७१ चार प्रकार के शुक्लध्यान के स्थान विशेष का निरूपण सू० ७७	५५६-५६०
७२ पहला एवं दूसरा शुक्लध्यान के संबन्ध में विशेष कथन सू० ७८	५६०-५६२
७३ वितर्क के स्वरूप निरूपण सू० ७९	५६२-५६७
७४ पांचवे आभ्यन्तर तप व्युत्सर्ग के द्रव्य भाव के भेद से द्वि प्रकारता का कथन सू० ८०	५६७-५७०

आठवाँ अध्याय

७६ निर्जरा के स्वरूप निरूपण सू० १	५७१-६७३
७६ निर्जरा के दो भेदों का कथन सू० २	५७३-५८१
७७ कर्मक्षयलक्षणा निर्जरा के हेतु कथन सू० ३	५८१-५८४
७८ तप के दो प्रकारता का कथन सू० ४	५८४
७९ अनशन तप के दो भेदों का कथन सू० ५	५८५-५८७
८० इत्वरिकतप के अनेकविधत्वका निरूपण सू० ६	५८७-५९१
८१ अनशन तप के वायत्कथिक के दो प्रकार का कथन सू० ७	५९१-५९६
८२ पादपोषगमन तप के द्वि प्रकारताका निरूपण सू० ८	५९५-५९८
८३ भक्तप्रत्याख्यान के दो प्रकारता का निरूपण सू० ९	५९८-६००
८४ अवमोदरिका के स्वरूप निरूपण सू० १०	६००-६०२
८५ द्रव्यावमोदरिका के दो भेदों का कथन सू० ११	६०२-६०४
८६ उपकरण द्रव्यावमोदरिका के त्रिविध	
प्रकारताका निरूपण सू० १२	६०४-६०७
८७ भक्तपानद्रव्यावमोदरिका के अनेक विधताका निरूपण सू० १३	६०७-६१४
८८ भावावमोदरिकातपका निरूपण सू० १४	६१४-६१७
८९ भिक्षाचर्या तप के अनेकविधता का निरूपण सू० १५	६१७-६३०
९० रसपरित्यागतप का निरूपण सू० १६	६३१-६३६
९१ कायक्लेशतप के अनेक विधत्वका निरूपण सू० १७	६३६-६४४
९२ प्रतिसंलीनतातप के चातुर्विध्य का निरूपण सू० १८	६४४-६४७
९३ इन्द्रिय प्रतिसंलीनतातप के पंचविधत्व का निरूपण सू० १९	६४७-६५२
९४ कषाय प्रतिसंलीनतातप का निरूपण सू० २०	६५२-६५७
९५ योगप्रतिसंलीनतातप का निरूपण सू० २१	६५७-६६१
९६ विविक्तशय्यासनता का निरूपण सू० २२	६६२-६६५
९७ ज्ञानविनयतप का निरूपण सू० २३	६६५-६६८
९८ दर्शनविनयतप का निरूपण सू० २४	६६८-६७१
९९ श्रुश्रवणाविनयतप का निरूपण सू० २५	६७१-६७६
१०० अनत्याशातना विनयतप के ४५ पैतालीस	
भेदों का कथन सू० २६	६७७-६८२

१०१ चारित्रविनयतप का निरूपण सू० २७	६८२-६८७
१०२ मन, वचन, कायविनयतप का निरूपण सू० २८	६८७-६९२
१०३ लोकोपचारविनयतप का निरूपण सू० २९	६९२-६९६
१०४ आभ्यन्तरतप के छठा भेद व्युत्सर्ग का निरूपण सू० ३०	६९७-
१०५ द्रव्यव्युत्सर्गतप का निरूपण सू० ३१	६९८-७००
१०६ भावव्युत्सर्गतप का निरूपण सू० ३२	७०१-७०३
१०७ कषायव्युत्सर्गतप का निरूपण सू० ३३	७०३-७०५
१०८ संसारव्युत्सर्गतप का निरूपण सू० ३४	७०५-७०८
१०९ कर्मव्युत्सर्गतप का निरूपण सू० ३५	७०८-७१३
११० निर्जरा सबको समान होती है ? या विशेषाधिक ? सू० ३६	७१३-७२६
१११ मोक्षमार्ग का निरूपण सू० ३७	७२६-६३५
११२ सम्यग्दर्शन का निरूपण सू० ३८	७३५-७३९
११३ सम्यग्दर्शन की द्वि प्रकारता का निरूपण सू० ३९	७३९-७४२
११४ सम्यग्ज्ञान स्वरूप निरूपण सू० ४०	७४२-७४७
११५ सम्यग्ज्ञान के भेदों का कथन सू० ४१	७४७-७५७
११६ मतिश्रुतज्ञान के परोक्षत्व का निरूपण सू० ४२	७५७-७६०
११७ अवधि, मनःपर्यव, केवलज्ञान के प्रत्यक्षत्व का निरूपण सू० ४३	७६०-७६५
११८ मतिज्ञान के द्वि प्रकारता का कथन सू० ४४	७६५-७६९
११९ मतिज्ञान के चातुर्विध्यत्व का निरूपण सू० ४५	७७०-७७७
१२० अवग्रह के दो भेदों का निरूपण सू० ४६	७७८-७८६
१२१ श्रुतज्ञान के दो भेदों का कथन सू० ४७	७८६-७९३
१२२ अवधिज्ञान का निरूपण सू० ४८	७९३-७९९
१२३ मनःपर्यवज्ञान के द्विविधत्व का प्रतिपादन सू० ४९	७९९-८०८
१२४ पांच प्रकार के ज्ञानों में मतिश्रुतज्ञान की विशेषता	८०८-८१३
१२५ अवधिज्ञान विषय का निरूपण	८१३-८१६
१२६ मनःपर्यवज्ञान के वैशिष्ट्य का निरूपण	८१६-८१९
१२७ केवलज्ञान की उत्पत्ति के कारण का निरूपण	८१९-८२२
१२८ केवलज्ञान के लक्षण का निरूपण	८२२-८३१

नववां अध्याय

१२९ मोक्षतत्त्व का निरूपण	८३२-८४३
१३० मोक्षावस्था में भावकर्मक्षय का निरूपण	८४४-८४९
१३१ मुक्तात्मा के गति का निरूपण	८४९-८५२
१३२ अकर्मा की गति का निरूपण एवं उस विषय में दृष्टांत	८५२-८५५
१३३ सिद्ध के स्वरूप का निरूपण	८५६-८७८

॥ समाप्त ॥



આ ગ્રંથના પ્રકાશનાર્થે સહાય કરનાર સદ્ગૃહસ્થ



રાજકોટવાળા
સ્વ. શેઠશ્રી પ્રભુદાસભાઈ દોશી તથા તેમના સુપુત્રો

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचितं
दीपिका-निर्युक्त्याख्यया व्याख्यया समलङ्कृतम्
हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादसहितम्

॥ श्री-तत्त्वार्थसूत्रम् ॥

(द्वितीयो भागः)

षष्ठोऽध्यायः

मूलम्—मण-वय-काय जोगाई आसवो ॥१॥

छाया—‘मनोवचःकाययोगादिरासवः’ ॥१॥

तत्त्वार्थदीपिका—जीवाजीवाय बंधोय-पुण्यं पावाऽऽसवो तद्वा ।

संवरो निर्जरा मोक्षो-संतेष तद्विया नव ॥१॥

इत्युत्तराध्ययनसूत्रानुसारेण क्रमशो जीवा-जीव-बन्ध-पुण्य-पापानि पञ्च
तत्त्वानि पञ्चाऽध्यायेषु प्ररूपितानि, सम्प्रति-क्रममाप्तं षष्ठमास्रवतत्त्वं प्ररूपयितुं
षष्ठाध्यायं प्रारभते—‘मणवयकाय जोगाई आसवो’ इति ।

मनोवचःकाययोगादिः—मनोयोगः १ वचोयोगः २ काययोगः ३ तदादिः तत्त्व-

छठा अध्याय का प्रारंभ

‘मण-वय-कायजोगा’-इत्यादि ।

मनोयोग, वचनयोग, काययोग आदिको आस्रव कहते हैं ॥१॥
तत्त्वार्थदीपिका-जीव, अजीव, बन्ध, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा
और मोक्ष, ये नौ तत्त्व हैं ।’ उत्तराध्ययनसूत्र के इस कथन के अनुसार
क्रम से जीव, अजीव, बन्ध, पुण्य और पाप, इन पांच तत्त्वों का पांच
अध्यायों में निरूपण किया गया । अब अनुक्रम से प्राप्त छठे आस्रव
तत्त्वकी प्ररूपणा करने के लिए छठा अध्याय प्रारम्भ किया जाता है—

छठा अध्ययनो प्रारंभ—

‘मण-वय-कायजोगाई आसवो’

सूत्रार्थ—मनोयोग, वचनयोग, काययोग आदिने आस्रव कहे छे ॥१॥

तत्त्वार्थदीपिका—जिव, अजिव, बन्ध, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर,
निर्जरा तथा मोक्ष आ नव तत्त्वो छे. उत्तराध्ययन सूत्रना आ कथन अनुसार
क्रमशी जिव, अजिव, बन्ध, पुण्य आ पाप, अने पांच तत्त्वोनु पांच अध्या-
योमां निरूपण करवामां आब्यु. हवे क्रमशी प्राप्त छठा आस्रवतत्त्वनी प्ररूपणा
करवामा आशयशी छठे अध्याय प्रारंभ करवामां आवे छे.

શ્રુતિરાસ્રવ ઉચ્યતે । તન્ન-મનોવચઃક્રયાનાં ક્રિયારૂપં કર્મયોગઃ આત્મપ્રદેશપરિ-
સ્પન્દરૂપં આસ્ત્રવ્યતે । તન્નાઽભ્યન્તરવીર્યાન્તરાય નો ઇન્દ્રિયાવરણક્ષયોપશમાત્મક
મનોલબ્ધિસાન્નિધ્યે વાહ્યનિમિત્તમનોવર્ગણાલમ્બને ચ સતિ મનઃપરિણામાભિ-
મુખી શ્રુતસ્યાત્મનઃ પ્રદેશપરિસ્પન્દો મનોયોગઃ ॥૧॥

શરીરનામકર્મોદયસમ્પાદિતવાગ્વર્ગણાલમ્બને સતિ વીર્યાન્તરાયકે સતિ-
આક્ષરાચાવરણક્ષયોપશમાપાદિતવાગ્લબ્ધિસન્નિધાને વાક્યપરિણામાભિમુખસ્યાત્મનઃ
પ્રદેશપરિસ્પન્દો વાયોગઃ ૨, વીર્યાન્તરાયક્ષયોપશમસદ્ભાવે સતિ ઔદારિક-
વૈક્રિયા-ઽઽહારકાદિ પશ્ચવિધ શરીરવર્ગણાન્યતમા-ઽઽલમ્બને ચ સતિ આત્મ-
પ્રદેશપરિસ્પન્દઃ કાયયોગઃ ૩, સ ત્રિવિધો યોગઃ-આસ્રવઃ કથ્યતે ।

મનોયોગ, વચનયોગ, ઓર કાયયોગ આદિ આસ્રવ કહલાતે હૈં ।
તાત્પર્ય યહ હૈ કિ મન, વચન, ઓર કાયકી ક્રિયા સે આત્મા કે પ્રદેશોં
મેં પરિસ્પન્દન હોતા હૈ, વહ યોગ કહલાતા હૈ । જબ આભ્યન્તર કારણ
વીર્યાન્તરાય કર્મ તથા નો ઇન્દ્રિયાવરણ કર્મ કે ક્ષયોપશમરૂપ મનો-
લબ્ધિ કા સાન્નિધ્ય હોતા હૈ ઓર વાહ્ય કારણ મનોવર્ગણા કા આલમ્બન
હોતા હૈ, તથ મન રૂપ પરિણમન કી ઓર અભિમુખ આત્મા કે પ્રદેશોં
મેં જો પરિસ્પન્દન (હલન-ચલન) હોતા હૈ, વહ મનોયોગ કહલાતા હૈ ।

શરીર નામ કર્મ કે ઉદય સે પ્રાપ્ત વચન વર્ગણા કા આલમ્બન હોને
પર તથા વીર્યાન્તરાય એવં સતિ-અક્ષરા વરણ આદિ કે ક્ષયોપશમ સે
પ્રાપ્ત હોને વાલી વચન લબ્ધિકાસન્નિધાન હોને પર વચન રૂપ પરિણામ
કે અભિમુખ આત્મા કે પ્રદેશોં કા પરિસ્પન્દન વચનયોગ કહલાતા
હૈ । જબ અન્તરંગ કારણ વીર્યાન્તરાય કર્મ કા ક્ષયોપશમ હોતા હૈ ઓર

મનોયોગ, વચનયોગ અને કાયયોગ આદિ આસ્રવ કહેવાય છે. તાત્પર્ય
એ છે કે મન, વચન અને કાયની ક્રિયાથી આત્માનાં પ્રદેશોમાં જે પરિસ્પન્દન
થાય છે, તે યોગ કહેવાય છે જ્યારે આભ્યન્તર કારણ વીર્યાન્તરાયકર્મ તથા
નોઇન્દ્રિય વાહ્ય કર્મભેદ ક્ષયોપશમ રૂપ મનોલબ્ધિનું સાન્નિધ્ય થાય
છે. અને વાહ્ય કારણ મનોવર્ગણાનું આલમ્બન હોય છે, ત્યારે મન રૂપ
પરિણમનની તરફ અભિમુખ આત્માનાં પ્રદેશોમાં જે પરિસ્પન્દન (હલન-ચલન)
થાય છે તે મનોયોગ કહેવાય છે.

શરીર નામકર્મના ઉદયથી પ્રાપ્ત વચનવર્ગણાનું આલમ્બન થવાથી તથા
વીર્યાન્તરાય અને સતિ-અજ્ઞાન વાહ્ય આદિના ક્ષયે પશમથી પ્રાપ્ત થનારી
વચનલબ્ધિના સાન્નિધ્ય થવાથી વચનરૂપ પરિણામના અભિમુખ આત્માના
પ્રદેશોના પરિસ્પન્દનને વચનયોગ કહેવાય છે. જ્યારે અન્તરંગ કારણ વીર્યા-

આસ્રવતિ-આગચ્છતિ આત્મદેશસમીપસ્થોઽપિ પુદ્ગલપરમાણુપુજ્જઃ કર્મત્વેન પરિણમતિ-અસ્માત્ ક્રિયાકલાપાદ્ इत्याસ્રवः तथाविधः क्रियासमूहः, तथाविध परिणामतो जीवः कर्माणि आदत्ते,। तथाविधपरिणामाभावेतु-कर्मबन्धो न भवति। एवञ्च-सरसः सलिलावाहि विवररन्ध्ररूप स्रोतोवद् आस्रवः-आत्मनः परिणामविशेषः कर्मरूपसालिलस्य प्रवेशे हेतु भवति। कर्माणि-आस्रवन्ति अनेनाऽऽत्मपरिणामविशेषेणाऽऽत्मना सह सम्बध्यन्ते-इत्यास्रवः, कर्मागमनद्वारभूत आत्मपरिणामविशेष इत्यर्थः। तथा च-केवलिसमुद्घाते दण्ड-कपाट प्रसर-लोक-औदारिक वर्गणा वैक्रिय वर्गणा, तथा आन्तरिक वर्गणा। आदि शरीर वर्गणाओं में से किसी भी एक वर्गणा का आलम्बन होने रूप बाह्य कारण होता है, तब उस के निमित्त से आत्मा के प्रदेशों में जो परिस्पन्दन होता है, वह काययोग कहलाता है। तीनों प्रकार का यह योग आस्रव कहा गया है।

જિન આકાશ પ્રદેશોં મેં આત્મા સ્થિત હૈ, ઉન્હીં આકાશ પ્રદેશોં મેં સ્થિત કાર્મણ વર્ગણા કે પુદ્ગલપરમાણુ જિસ ક્રિયાકલાપ સે કર્મ કે રૂપ મેં પરિણત હો જાતે હૈ, ઉસ ક્રિયાકલાપ કો આસ્રવ કહતે હૈ, ઉસ પ્રકાર કે પરિણામ સે જીવ કર્મોં કો ગ્રહણ કરતા હૈ, યદિ ઉસ પ્રકાર કા પરિણામ ન હો તો કર્મ કા બન્ધ નહીં હોતા। ઇસી પ્રકાર જૈસે જલ કો પ્રવાહિત કરનેચાહે છિદ્ર કે દ્વારા સરોવર મેં જલકા આગમન હોતા હૈ વૈસે હી આત્મા કે પરિણામ વિશેષ સે કર્મરૂપી જલકા પ્રવેશ હોતા હૈ। જિસકે દ્વારા કર્મ આતે હૈ, વહ આસ્રવ, એસી આસ્રવ

નતરાય કર્મનેા ક્ષયોપશમ થાય છે અને ઔદારિકવર્ગણા, વૈક્રિયવર્ગણા તથા આહારકવર્ગણા આદિ શરીર વર્ગણાઓમાંથી કોઈપણ એક વર્ગણાનું આલમ્બન થવા રૂપ બાહ્ય કારણ હોય છે, ત્યારે તે નિમિત્તથી આત્માના પ્રદેશોમાં જે પરિસ્પન્દન થાય છે, તે કાયયોગ કહેવાય છે. ત્રણે પ્રકારનો આ યોગ આસ્રવ કહેવાયો છે.

જે આકાશપ્રદેશોમાં આત્મા સ્થિત છે, તેજ આકાશપ્રદેશોમાં સ્થિત કાર્મણવર્ગના પુદ્ગલપરમાણુ, જે ક્રિયાકલાપથી કર્મના રૂપમાં પરિણત થઈ જાય છે, તે ક્રિયાકલાપને આસ્રવ કહે છે. તે પ્રકારનાં પરિણામથી જીવ કર્મનેા ધારણ કરે છે, જે તે પ્રકારનું પરિણામ ન થાય તો કર્મનેા બન્ધ થતો નથી. આવી રીતે જેમ પાણીને પ્રવાહિત કરનારા છિદ્ર દ્વારા સરોવરમાં જળનું આગમન થાય છે, તેવી જ રીતે આત્માના પરિણામ વિશેષથી કર્મ રૂપી જળનો પ્રવેશ થાય છે. જેના દ્વારા કર્મો આવે છે, તે આસ્રવ, એવી આસ્રવ શબ્દની વ્યુત્પત્તિ છે. આશય એ છે કે આત્માનું તે પરિણામ, જે

પૂરણલક્ષણઃ સ્વલ્પ યોગો વર્તતે, સ યોગોઽનાસ્ત્વરુપોઽપ્યસ્તિ । તત્ર-યથાઽઽદ્રંવસ્ત્ત્વં
સમન્તાત્ પવનાઽઽનીતં રજઃપુઞ્જં સ્વસ્મિન્ ગૃહ્ણતિ, એવમ્-કષાયજલેનાઽઽદ્રી-
ભૂતો જીવઃ કાયાદિ ત્રિવિધયોગાનીતં કર્મપુદ્ગલં સર્વ પ્રદેશૈરુપાદત્તે-

યથા વા-તપ્તાઽયઃપિષ્ઠઃ પયસિ પ્રક્ષિપ્તઃ સમન્તાઞ્જનલં ગૃહ્ણતિ, એવં-ક્રોધ
માયાદિ કષાય સન્તપ્તાઽઽત્મા કાયાદિ ત્રિવિધયોગાનીતં કર્મપુદ્ગલં પરિગૃહ્ણતિ,
આદિપદેન-મિથ્યાદર્શનાવિરતિ કષાયયોગાદયો વન્ધ્યહેતવ આસ્ત્રવા ઉચ્યન્તે ॥૧॥

શબ્દ કી વ્યુત્પત્તિ હૈ । અભિપ્રાય યહ હૈ કિ આત્મા કા વહ પરિણામ,
જો કર્મો' કે આગમન કા દ્વાર હૈ, આસ્ત્રવ કહા જાતા હૈ । કેવલિસમુ-
દ્ઘાત કે સમય દણ્ડ, કપાટ, પ્રતર ઓર લોકપૂરણ રૂપ જો યોગ રહતા
હૈ, વહ ઈયો'ગથિક કે સિવાય અન્ય આસ્ત્રવ કા કારણ નહીં હોતા ।

જેસે ગિલા વસ્ત્ર વાયુ દ્વારા ઉડાયે હુએ રજ કો સમી ઓર સે
ગ્રહણ કરતા હૈ અર્થાત્ વસ્ત્ર કે ગીલેપન કે કારણ ઉસમેં આ-આકર
ધૂલ ચિપક જાની હૈ વૈસે હી ક્રોધમાન, માયા યા લોભ કષાય સે આર્દ્ર
બના આત્મા કાયયોગ આદિ ત્રિ પ્રકાર કે યોગો' દ્વારા આકૃષ્ટ કર્મ
પુદ્ગલો' કો ગ્રહણ કરતા હૈ । અથવા જેસે આગ સે તપા હુઆ લોહેકા
ગોલા યદિ પાની મેં ડાલ દિયા જાય તો વહ સમી ઓર સે જલ કો
ગ્રહણ કરતા હૈ-આત્મસાત્ કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર કષાય કે તાપ સે
સન્તપ આત્મા કાયયોગ આદિ કે દ્વારા કર્મ પુદ્ગલો' કો ગ્રહણ કરતા હૈ ।

સૂત્ર મેં પ્રયુક્ત 'આદિ' શબ્દ સે મિથ્યાદર્શન, અવિરતિ ઓર

કર્મોના આગમનતુ' દ્વાર છે, આસ્ત્રવ કહેવાય છે. કેવળી સમુદ્ઘાત વેળાએ
દણ્ડ, કપાટ, પ્રતર અને લોકપૂરણ રૂપ જે યોગ હોય છે તે ઐર્થાપથિક હોવાને
કારણે આસ્ત્રવના કારણ હોતા નથી.

જેવી રીતે ભીના વસ્ત્ર, વાયુ દ્વારા ઉડાડેલી ધૂળને બધી બાજુએથી
ગ્રહણ કરે છે, અર્થાત્ વસ્ત્રની ભીનાશના કારણે તેનામાં આવી આવીને રજ
ચોંટી જાય છે, તેવી જ રીતે ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ કષાયથી આર્દ્ર
બનેલા આત્મા કાયયોગ આદિ ત્રણ પ્રકારના યોગો દ્વારા આકૃષ્ટ કર્મ પુદ્ગલોને
ધારણ કરે છે, અથવા જેવી રીતે અગ્નિથી તપેલા લોખંડના ગોળાને બે પાણીમાં
નાખવામાં આવે તો તે બધી બાજુએથી પાણીને ગ્રહણ કરે છે. આત્મસાત્
કરે છે, તેવી જ રીતે કષાયના તાપથી સન્તપ આત્મા કાયયોગ આદિથી
કર્મ પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે.

સૂત્રમાં પ્રયુક્ત 'આદિ શબ્દથી' મિથ્યાત્વ, રતિ, અવિરતિ અને કષાયને,

તત્ત્વત્થનિર્યુક્તિ-પૂર્વ તાત્ત્વ-પશ્ચમાધ્યાયે ક્રમપ્રાપ્તં પશ્ચમં પાપતત્ત્વં પ્રરૂ-
પિતમ્, સમ્પ્રતિ-ક્રમપ્રાપ્તમેવ ષષ્ઠાસ્રવત્ત્વં પ્રરૂપયિતુમાહ-‘મનવચકાય
જોગાઈ આસવો’ ઇતિ ।

મનોવચઃકાયયોગાદિઃ-મનોયોગો-વચોયોગઃ-કાયયોગઃ ઇત્યેતેષાં દ્રઢે
મનોવચઃ કાયયોગાસ્તે-આદિ યસ્ય સ મનોવચઃ કાયયોગાદિઃ આસ્રવ ઉચ્યતે ।
તત્ર-મનોવચઃ કાયનાં ક્રિયારૂપં કર્મયોગઃ ઉચ્યતે ।

વીર્યાન્તરાય ક્ષયોપશમજનિતેન પર્યાયેનાડડમનઃ સમ્બન્ધો યોગ ઇત્યર્થઃ,
સ ચ-વીર્યપ્રાણોત્સાહપરાક્રમચેષ્ટાશક્તિ સામર્થ્યાદિશબ્દવાચ્યો बोध्यः । યદ્વા-
યુનક્તિ-एनं जीवो-वीर्यान्तरायक्षयोपशमजनितं पर्यायमिति योगः, સ ચ
મનોયોગાદિભેદાત્ ત્રિવિધઃ । તત્ર-મનોયોગ્ય પુદ્ગલાત્મપ્રદેશપરિણામો મનો-

કષાય કો જો કર્મબન્ધ કે કારણ હૈં, સમજ્ઞ લેના ચાહિએ ॥૧॥

તત્ત્વત્થનિર્યુક્તિ-પાંચવે અધ્યાય મેં ક્રમ પ્રાપ્ત પાપ નામક પાંચવે તત્ત્વકી
પ્રરૂપણા કી ગઈ હૈ । અવ છઠે તત્ત્વ આસ્રવ કી પ્રરૂપણા કી જાતી હૈ-

મનોયોગ, વચનયોગ ઓર કાયયોગ આદિ કો આસ્રવ કહતે હૈં ।
અભિપ્રાય યહ હૈ કિ મન વચન ઓર કાય ક્રિયા કો યોગ કહતે હૈં ।

વીર્યાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે ઉત્પન્ન હોનેવાલે પર્યાય કે
સાથ આત્મા કા જો સમ્બન્ધ હોતા હૈ, વહ યોગ કહલાતા હૈ । ઉસે
વીર્ય, પ્રાણ, ઉત્સાહ, પરાક્રમ, ચેષ્ટા, શક્તિ યા સામર્થ્ય આદિ ખી
કહા જા સકતા હૈ । અથવા વીર્યાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે ઉત્પન્ન
હોને વાલે પર્યાય સે જીવ કા યુક્ત હોના યોગ હૈ । મનોયોગ આદિ કે

જે કર્મબંધના કારણો છે, સમજી લેવા જોઈએ ॥૧॥

તત્ત્વત્થનિર્યુક્તિ-પાંચમાં અધ્યાયમાં કર્મપ્રાપ્ત પાપ નામક પાંચમાં
તત્ત્વની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે. હવે છઠાં તત્ત્વ આસ્રવની પ્રરૂપણા
કરવામાં આવી રહી છે.

મનોયોગ, વચનયોગ અને કાયયોગ આદિને આસ્રવ કહે છે, અભિપ્રાય
એ છે કે મન, વચન અને કાયની ક્રિયાને યોગ કહે છે.

વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થનારા પર્યાયની સાથે આત્માનો
જે સમ્બન્ધ થાય છે તે યોગ કહેવાય છે. તેને વીર્ય, પ્રાણ, ઉત્સાહ, પરાક્રમ
ચેષ્ટા, શક્તિ અથવા સામર્થ્ય આદિ પણ કહી શકાય છે, અથવા વીર્યાન્ત-
રાય, કર્મના ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થનારા પર્યાયથી જીવનું યુક્ત થવું તે યોગ
કહેવાય છે. મનોયોગ આદિના લેહથી તે ત્રણ પ્રકારનો છે. મનોવર્ણણાના

યોગ:૧, ભાષાયોગ્ય પુદ્ગલાત્મપ્રદેશપરિણામો વચોયોગ:૨, ગમનાદિ ક્રિયાદેતુઃ શરીરાત્મપ્રદેશપરિણામ: કાયયોગ:૩ ।

તત્રાત્મનો નિવાસસ્થાનભૂત: પુદ્ગલદ્રવ્યઘટિત: શરીરરૂપ: કાય:, વૃદ્ધસ્ય-દુર્બલસ્ય વા ગમનાદૌ, આલમ્બનયષ્ઠ્યાદિવત્ વિષમેષુ-ઉપગ્રાહકો ભવતિ તથો-ગાઙ્ગીવસ્ય વીર્યપરિણામ: શક્તિ:-સામર્થ્ય કાયયોગ: । યથા-વહ્નિસંયોગાત્ ઘટસ્ય રક્તતાપરિણામો ભવતિ, એવં સ્વલ્લ-આત્મન: કાય-કરણ સંવન્ધાદ્ વીર્ય-પરિણામો बोध्य: । એવ-માત્મયુક્તકાયાધીના વાગ્વર્ગણાયોગ્ય પુદ્ગલસ્કન્ધા:

ભેદ સે વહ્નિ ત્રીન પ્રકાર કા હૈ । મનોવર્ગણા કે પુદ્ગલોં કે નિમિત્ત સે આત્મપ્રદેશોં મેં પરિસ્પન્દન હોના મનોયોગ હૈ । ભાષા કે યોગ્ય પુદ્ગલોં અર્થાત્ ભાષાવર્ગણા કે પુદ્ગલોં કે નિમિત્ત સે આત્મપ્રદેશોં મેં સ્પન્દન હોના વચનયોગ હૈ ઓર ગમન આદિ ક્રિયાઓં સે આત્મા કે પ્રદેશોં મેં જો પરિસ્પન્દ હોતા હૈ, વહ્નિ કાયયોગ હૈ ।

આત્મા કે રહને કા સ્થાન, પુદ્ગલ દ્રવ્યોં સે બના હુઆ વહ્નિ શરીર કાય કહલાતા હૈ, જૈસે વૃદ્ધ યા દુર્બલ પુરુષ કે ચલને-ફિરને મેં લાઠી સહાયક હોતી હૈ, ઝબડલાવડ માર્ગ મેં ડસસે સહાયતા મિલતી હૈ, ડસી પ્રકાર આત્મા કે લિખ શરીર સહાયક હૈ । હસ શરીર કે નિમિત્ત સે જીવકા જો વીર્યપરિણમન હોતા હૈ, વહ્નિ કાયયોગ કહલાતા હૈ । જૈસે અગ્નિ કે સંયોગ સે ઘટ મેં રક્તતા (લાલિમા) પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ડસી પ્રકાર કાય રૂપ કરણ કે નિમિત્ત સે આત્મા મેં વીર્ય-પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ્નિ કાયયોગ હૈ । હસી પ્રકાર જીવ વચન વર્ગણા કે

પુદ્ગલોના નિમિત્તથી આત્મપ્રદેશોમાં પરિસ્પન્દન થવું મનોયોગ છે ભાષાને યોગ્ય પુદ્ગલો અર્થાત્ ભાષાવર્ગણાનાં પુદ્ગલોના નિમિત્તથી આત્મપ્રદેશોમાં સ્પન્દન થવું વચનયોગ છે અને ગમન આદિ ક્રિયાઓથી આત્માના પ્રદેશોમાં જે પરિસ્પન્દન થાય છે તે કાયયોગ છે.

આત્માને રહેવાનું સ્થાન, પુદ્ગલદ્રવ્યોથી બનેલું આ શરીર કાય કહેવાય છે. જેમ વૃદ્ધ અથવા દુર્બળ પુરુષને ચાલવા-ફરવા માટે લાકડી સહાયક બને છે. ખાડા-ટેકરાવાળા રસ્તામાં તેનાથી સહાયતા મળે છે, તેવી જ રીતે આત્મા માટે શરીર સહાયક છે. આ શરીરના નિમિત્તથી જીવનું જે વીર્ય-પરિણમન થાય છે, તે કાયયોગ કહેવાય છે. જેમ અગ્નિના સંયોગથી ઘડામાં રક્તતા (લાલિમા) પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે, તેવી જ રીતે કાય રૂપ કરણના નિમિત્તથી આત્મામાં વીર્ય-પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે તે જ કાયયોગ છે. એવી જ રીતે જીવ વચનવર્ગણાના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરીને ત્યાગે છે તેના

विसृज्यमानाः वाक् कृतकरणता मासादयन्ति, अनेन च वाकरणेन सम्बन्धादौ-
त्सनो वीर्योत्थानं भाषणशक्तिः-वाग्योगः । स च-सत्यादि भेदाच्चतुर्विधः,
एषम्-कायवताऽऽत्मना सर्वप्रदेशैर्गृहीता मनोवर्गणा योग्य पुद्गलस्कन्धाः शुभादि
चिन्तनार्थं करणभावमापद्यन्ते, तत्सम्बन्धाच्चात्मनः पराक्रमविशेषो मनोयोगः,
सोऽपि-सत्यादि भेदाच्चतुर्विधः । तत्र-यद्यपि वाग्वर्गणायोग्यपुद्गलस्कन्धा-
मनोवर्गणायोग्यपुद्गलस्कन्धा वा, न परमार्थतः सत्यादिव्यपदेशयोग्याः सन्ति ।
ज्ञानस्यैव सत्यादि भेदसद्भावात् तथापि-सत्यादिज्ञाने-आत्मनो वक्राधान साधक-
तमत्वात् नो इन्द्रियावरणक्षयोपशमसमुद्भूतमनोविज्ञान परिणामे आत्मनो

पुद्गलों को ग्रहण करके त्यागता है । उनके निमित्त से या वचन रूपे
करण से आत्मवीर्य का जो उत्थान होता है, उसे वचनयोग समझना
चाहिए । सत्यवचनयोग आदि के भेद से उसके चार भेद हैं । इसी
भांति कायवान् आत्मा के द्वारा समस्त प्रदेशों से ग्रहण किये हुए मनो
वर्गणा के योग्य पुद्गलस्कन्ध शुभाशुभ चिन्तन में करण होते हैं ।
उनके संबंध से आत्मा का जो पराक्रम-विशेष उत्पन्न होता है, उसे
मनोयोग कहते हैं । सत्य आदि के भेद से वह भी चार प्रकार का है ।

यद्यपि वचन वर्गणा के योग्य पुद्गलस्कन्ध अथवा मनो वर्गणा के
योग्य पुद्गलस्कन्ध वास्तव में सत्य या असत्य शब्द से कहने के योग्य
नहीं हैं, क्योंकि सत्य असत्य आदिका भेद ज्ञान में ही हो सकता है,
तथापि सत्य या असत्य ज्ञान में वे आत्मा के सामर्थ्य को उत्पन्न करते
हैं तथा नो इन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न होनेवाले मनो-

निमित्तथी अथवा वचनरूप करणथी आत्मवीर्यनुं जे उत्थान थाय छे
तेने वचनयोग कडे छे. सत्यवचनयोग आदिना लेहथी तेना चार लेह
छे. आ रीते कायवान् आत्माद्वारा समस्त प्रदेशोथी ग्रहण करवामा आवेक्षा
मनोवर्गणाने योग्य पुद्गलस्कन्ध शुभाशुभ चिन्तनमां करण थाय छे.
तेमना संबन्धथी आत्मानुं जे पराक्रम विशेष उत्पन्न थाय छे तेने मनोयोग
कडे छे सत्य आदिना लेहथी ते पणु चार प्रकारनो छे.

जे के वचनवर्गणाने योग्य पुद्गलस्कन्ध अथवा मनोवर्गणाने योग्य
पुद्गलस्कन्ध वास्तवमां सत्य अथवा असत्य शब्दथी कडेवाने योग्य नहीं,
करण के सत्य असत्य आदिना लेह ज्ञानमां ज थछ शके छे, तो पणु सत्य
अथवा असत्य ज्ञाननी अन्दर ते आत्माना सामर्थ्यने उत्पन्न करे छे, तथा
नो इन्द्रिय (मन) आद्य कर्माना क्षयोपशमथी उत्पन्न थनारा मनोविज्ञान ईथ

બહાધાનકારિત્વાચ્ચાત્મ સહચરિત્ત્વાદુપચારતઃ-તદ્વર્ગનાયોગ્યપુદ્ગલસ્કન્ધાના-
મપિ સત્યાદિ ધ્યપદેશો बोधः । एवञ्च-कायिकवाचिकमानसभेदात् त्रिविधं
કર્મયોગઃ, તત્રાત્માધિષ્ઠિતાઃ કાયાદયઃ સમુદિતાઃ એકકાશ્ચ ક્રિયાહેતવો ભવન્તિ,
કાયિકાદિ ત્રિવિધં કર્મ કર્તૃભૂ સ્યાત્મનઃ કાયૈકત્વ પરિણત્યાઽભિન્નં કરણં ભવતિ,
વીર્યં નિર્વર્તનીયેતુ-પરસ્પરાનુગમનપરિણામાત્ દ્રવ્યરૂપાઃ કાયાદિ યોગાઃ માધ-
યોગં વીર્યં નિર્વર્તયન્તિ, યથા સ્વલુ-કર્તુરાત્મનઃ શરીરસ્યાગમને નિર્વર્ત્યેઽપિ આદૌ
અભિન્નં કારણમેકત્વાત્ એવમેતેઽપિ ત્રયો યોગા ભવન્તિ, તસ્માદેષ એવ કાયાત્મ-
પ્રદેશપિણ્ડઃ પ્રતિવિશિષ્ટ ક્રિયાકારિત્વાવચ્છિન્ન સ્ત્રિવિધો યોગ ઉચ્યતે । પર-

વિજ્ઞાન રૂપ પરિણામ મેં આત્મા કે સહાયક બનતે હૈં, હસ કારણ સે તથા
આત્મા સે સહચરિત હોને કે કારણ ઉપચાર સે ડન પુદ્ગલસ્કન્ધોં કો
ભી સત્ય યા અસત્ય આદિ શબ્દોં સે કહા જાતા હૈ । હસ પ્રકાર કાયિક,
વાચિક ઓર માનસિક કે ભેદ સે ત્રીન પ્રકાર કા કર્મયોગ કહલાતા
હૈ । આત્મા સે અધિષ્ઠિત કાય આદિ સબ મિલકર ઓર અકેલે-અકેલે
ભી ક્રિયા કે હેતુ હોતે હૈં । ક્રિયા યાહે કાયિક હો યા વાચિક અથવા
માનસિક, તથાપિ ડસકા કર્તા તો આત્મા હી હૈ । વહ સબ ક્રિયાઓંકા
અભિન્ન કારણ હૈ । દ્રવ્યરૂપ કાયયોગ આદિ આપસ મેં મિલકર ભાવયોગ
રૂપ વીર્ય કો ઉત્પન્ન કરતે હૈં । જૈસે આત્મા કર્તા કે શરીર કે આગમન
ઓર ઉત્પાદ આદિ મેં એક પ્રથમ અભિન્ન કારણ હૈ, હસી પ્રકાર યે ત્રીનો
યોગ ભી હોતે હૈં । હસ પ્રકાર શરીર ઓર આત્મા કે પ્રદેશોં કા પિણ્ડ
વિભિન્ન ક્રિયાઓં કો કરને કે કારણ ત્રીન પ્રકાર કા યોગ કહલાતા હૈ ।

પરિણામમાં આત્માના સહાયક બને છે, એ કારણથી તેમજ આત્માથી સહચરિત
હોવાના કારણે ઉપચારથી તે પુદ્ગલસ્કન્ધોને પણ સત્ય અથવા અસત્ય આદિ
શબ્દોથી કહેવામાં આવે છે. આવી રીતે કાયિક વાચિક અને માનસિકના
ભેદથી પણ ત્રણ પ્રકારના કર્મયોગ કહેવાય છે. આત્માથી અધિષ્ઠિત કાય
આદિ બધાં મળીને અને એકલા એકલા પણ ક્રિયાના હેતુ હોય છે. ક્રિયા
ભલે કાયિક હોય અથવા વાચિક અથવા માનસિક તો પણ તેનો કર્તા તો
એક આત્મા જ છે. તે બધી ક્રિયાઓનું અભિન્ન કારણ છે. દ્રવ્યરૂપ કાય-
યોગ વગેરે અંદરે અંદરે મળીને ભાવયોગ રૂપ વીર્યને ઉત્પન્ન કરે છે જેમ
આત્મા કર્તાના શરીરના આગમન અને ઉત્પાદ એક પહેલું અભિન્ન કારણ
છે, એવી જ રીતે ત્રણે યોગ પણ હોય છે. આવી રીતે શરીર અને આત્માના
પ્રદેશોના પિણ્ડ વિભિન્ન ક્રિયાઓને કરવાના કારણે ત્રણ પ્રકારના યોગ કહેવાય છે.

मार्थतस्तु - औदारिककर्मण वैक्रियकाययोग-मिश्रकाययोगभेदेन काययोगः सप्तविधः । वाग्योगश्चतुर्विधः, सत्यादि भेदात् सत्योऽसत्यः-सत्यानृतो-ऽसत्यानृतश्चेति । तत्र-पापादेर्विरतव्यमिति सत्यवाग्योगः, पापं नास्ति किञ्चिदिति-असत्यो वाग्योगः, इमा गावश्चरन्ति-इति सत्यानृतो योगः, पुंसामपि गोपदेन ग्रहणात् । 'चैत्र-१ ग्राम आगतः' इति-असत्यानृतो वाग्योगः । एवं मनोयोगोऽपि सत्यादि भेदाच्चतुर्विधः, इति पञ्चदशकायादियोगाः-अवसेयाः । स च कायादियोगः प्रत्येकं द्विविधो भवति, शुभश्चा-ऽशुभश्च, तथा च-काययोगः

वस्तुतः काययोग सात प्रकार का है-(१) औदारिक काययोग (२) औदारिक मिश्रकाययोग (३) वैक्रियकाययोग (४) वैक्रियमिश्रकाययोग (५) आहारक काययोग (६) आहारक मिश्र काययोग और (७) कर्मण काययोग । वचनयोग चार प्रकार का है-(१) सत्यवचनयोग (२) असत्यवचनयोग (३) सत्यासत्य-उभय-वचनयोग और (४) अनुभयवचनयोग । 'पाप से विरत होना चाहिए' सत्य वचन योग है । पाप कुछ भी नहीं है यह यह असत्यवचन योग है । 'ये गाये' चल रही हैं, यह सत्यासत्यवचनयोग है, क्योंकि यहां 'गो' शब्द से पुरुषों को भी ग्रहण किया गया है । 'चैत्र ! गांव से आया' यह असत्या मृषा-अनुभयवचनयोग है । इसी प्रकार मनोयोग भी सत्य आदि के भेद से चार प्रकार का है । सब मिलकर योग के पन्द्रह भेद होते हैं ।

काययोग आदि में से प्रत्येक के दो-दो भेद हैं-शुभ और अशुभ इस कारण काययोग भी शुभ-अशुभ के भेद से दो प्रकार का है ।

वस्तुतः काययोग सात प्रकारना छे- (१) औदारिक काययोग (२) औदारिक मिश्रकाययोग (३) वैक्रिय काययोग (४) वैक्रियमिश्र काययोग (५) आहारक काययोग (६) आहारक मिश्रकाययोग अने (७) कर्मण काययोग वचनयोग चार प्रकारना छे- (१) सत्य वचनयोग (२) असत्य वचनयोग (३) सत्यासत्य उभय-वचनयोग अने (४) अनुभय वचनयोग-पापही-विरत थपु' लेख्ये आ सत्य वचनयोग छे-पाप कशुं न नथी आ असत्य वचनयोग छे, 'आ गाये आली रही छे' आ सत्यासत्य वचनयोग छे कारण के अही 'गो' शब्दही पुरुषोने पणु अडणु करवामां आव्या छे, 'चैत्र' गाम आव्यो' आ असत्या मृषा-अनुभय वचनयोग छे, आवी न रीते मनोयोग पणु सत्य आदिना लेख्यी चार प्रकारना छे, अधा मणीने योगना पंदर लेख छे,

काययोग आदिमांथी प्रत्येकना जे-जे लेख छे-शुभ अने अशुभ आथी काययोग पणु शुभ-अशुभना लेख्यी जे प्रकारना छे, वचनयोग अने मनो-

શુભો-શુભશ્ચ । एवं-वचोयोगो-मनोयोगश्चाऽपि शुभोऽशुभश्च । तत्र-शुभं पुण्यं सातादि सकलकर्मक्षयो वा तद्धेतुत्वात् शुभः, अशुभं पुनः पापरूपं नारकादि जन्मफलं संसारानुबन्धि तद्धेतुत्वादशुभो योग उच्यते । तत्रा-शुभः काययोगो हि हिंसाऽस्तेया-अब्रह्मचर्यादीनि, तत्र-कायिकयोगः केवलोऽसंज्ञि पृथिव्यादिषु प्रसिद्धः । मनोव्यापाररहितो जीवानां प्राणघातको यः खलु योगत्रयभाक् प्राणी भवति तस्याऽप्युपसर्जनीभूत मनोवाग्व्यापारस्य कायिकयोग एव घातकत्वेनोद्भूतशक्तित्वाद् विवक्षितः, अन्यत्र गतचित्तस्या-ऽन्यविषयां वाचञ्च भाषमाणस्य प्रमादिनः ।

વચનયોગે ઓર મનોયોગ કે મી યહી દો-દો ભેદ હૈ । શુભ કા અર્થ હૈ પુણ્ય યા સાતાવેદનીય આદિ સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષય । જો યોગ હસકા કારણ હોતા હૈ, અતઃ શુભ કહલાતા હૈ । અશુભયોગ પાપરૂપ હોતા હૈ । નરક આદિ મેં જન્મ હોના હસકા ફલ હૈ । સંસાર કી પરમ્પરા કો ઘટાને કે કારણ વહ અશુભયોગ કહલાતા હૈ ।

હિંસા કરના, ચોરી કરના, અબ્રહ્મચર્યકા સેવન કરના આદિ અશુભ કાયયોગ હૈ । કેવલ કાયયોગ અસંજી એવં વચનલબ્ધિ સે રહિત પૃથ્વી-કાય આદિ એકેન્દ્રિય જીવોં મેં હી પાયા જાતા હૈ । તીનોં યોગોં સે યુક્ત મી જો પ્રાણી માનસિક વ્યાપાર સે રહિત હોકર જીવ કા ઘાત કરતા હૈ, હસકા કાયિક યોગ હી માના જાતા હૈ, ક્યોંકિ હસ સમય હસકે મન ઓર વચન કા વ્યાપાર ગોળ હોતા હૈ । હસકા મન કહીં

યોગના પણ આજ પ્રકારના બે-બે ભેદ છે. શુભનો અર્થ છે પુણ્ય અથવા સાતા વેદનીય આદિ સમસ્ત કર્મોના ક્ષય, જે યોગ આનું કારણ હોય છે તેથી શુભ કહેવાય છે. અશુભયોગ પાપરૂપ હોય છે. નરક આદિમાં ઉત્પન્ન થવું એ તેનું ફળ છે. સંસારની પરમ્પરાને વધારવાના કારણ રૂપ હોવાથી તે અશુભયોગ કહેવાય છે.

હિંસા કરવી, ચોરી કરવી, અબ્રહ્મચર્યનું સેવન કરવું આદિ અશુભ કાયયોગ છે. કેવળ કાયયોગ અસંજી અને વચન લબ્ધિથી રહિત પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં જ જોવામાં આવે છે. ત્રણે યોગોથી યુક્ત પણ જે પ્રાણી માનસિક વ્યાપારથી રહિત થઈને જીવનો ઘાત કરે છે તેને કાયિકયોગ જ માનવામાં આવે છે. કારણ કે તે સમયે તેના મન અને વચનના વ્યાપાર ગોળ હોય છે. તેનું મન બીજે કશુંક હોય છે અને વચન વળી કંઈ બીજું

एवं परोऽचिन्तितार्थेन वाग्योगेन हन्ति, अन्यः पुनर्मनोव्यापारेणैव काय-
वाक् क्रियानिरपेक्षः सन् हिंसां विदधाति, अन्यस्तु-काय-वाङ्-मनोव्यापारद्वान्
जीवान् पीडयति, इत्येवं तेषु-यः केवलः कायव्यापारः स विवक्ष्यते । एवं-
परपरिगृहीतरया-ऽनिसृष्टस्य तृणादेरपि चाऽऽदानं स्तेयम्, तदपि स्तेयं ग्रह्येक
योगवर्ति-समुदायवर्ति चेति द्विविधम् । तत्र-केवलं कायव्यापाररूपमत्र बोध्यम् ।
अब्रह्मचर्यमपि-संजातवेदोदयस्य विषयसेवनम्-स्वावयवनोदनजनितं स्पर्शसुख-
ञ्चा-ऽवगन्तव्यम् । प्रकृते च केवलकायव्यापाररूपो बोध्यः, आकाक्षामोहसद्भा-
वात्, पृथिव्यादिषु-आहारभयमैशुनपरिग्रहसंज्ञासम्भवात् । एवम् दहनच्छेदना

अन्यत्र होता है और वचन कोई अन्य बात कहता है, ऐसे प्रमादी
पुरुष का कायिक व्यापार काययोग ही समझना चाहिए । इसी
प्रकार दूसरा कोई अचिन्तित अर्थवाले वचनयोग से घात करता
है, कोई काय एवं वचन की क्रिया से निरपेक्ष होकर केवल मानसिक
व्यापार से ही हिंसा करता है और कोई काय, वचन तथा मन-तीनों
के व्यापार से युक्त होकर जीवों को पीड़ा पहुंचाता है । इन में से
केवल काययोग की ही विवक्षा की जाती है । इसी प्रकार दूसरे के द्वारा
गृहीत एवं अदत्ततृण आदि को भी ग्रहण करना स्तेय (चोरी) है ।
यह स्तेय भी दो प्रकार का है-किसी भी एक योग से होनेवाला और
तीनों योगों से होनेवाला । यहां केवल कायव्यापार रूप ही समझना
चाहिए । वेद के उदय से विषय का सेवन करना या अपने अवयव
विशेष की प्रेरणा से स्पर्शसुख का अनुभव करना अब्रह्मचर्य है । यहां
कायिक व्यापार रूप अब्रह्मचर्य ही समझना चाहिए । आकांक्षामोहनीय

જ વાત કહે છે આવા પ્રમાદી પુરૂષના કાયિક વ્યાપાર કાયયોગ જ સમજવા
જોઈએ એવી જ રીતે બીજા કોઈ અચિન્તીત અર્થવાળા વચનયોગથી હિંસા
કરે છે, કોઈ કાય અને વચનની ક્રિયાથી નિરપેક્ષ થઈને માત્ર માનસિક
વ્યાપારથી જ હિંસા કરે છે અને કોઈ કાય, વચન તથા મન-ત્રણેના વ્યા-
પારથી યુક્ત થઈને જીવોને પીડા પહોંચાડે છે. આમાંથી પ્રાપ્ત કાયયોગીની
જ વિવક્ષા કરવામાં આવી રહી છે. આવી જ રીતે બીજા દ્વારા ગૃહીત અને
અદત્ત તૃણ આદિને પણ ગ્રહણ કરવું એ સ્તેય (ચોરી) છે. આ સ્તેય પણ બે
પ્રકારનું છે-કોઈપણ એક યોગથી થનારી તેમજ ત્રણે યોગથી થનારી અત્રે
ફક્ત કાય વ્યાપાર રૂપ જ સમજવું જોઈએ. વેદના ઉદયથી વિષયનું સેવન
કરવું અથવા પોતાના અવયવ વિશેષની પ્રેરણાથી સ્પર્શસુખનો અનુભવ
કરવો અબ્રહ્મચર્ય છે. અહીં કાયિક વ્યાપારરૂપ અબ્રહ્મચર્ય જ સમજવું

ડાલેલન હાસ્ય ધાવન વલ્લન લઢ્ઢના-ડવરોડના-ડડસ્ફોટન મમૃતિ કર્મવિશેષાઃ
કાયિકોડશુભયોગઃ૧ સાડવચ ડનૃતપરુપિશુનાદીનિ વાચિકો-ડશુભયોગઃ૨
સત્યમપિ-વચઃ સાવઘં વાચિકં કર્માડશુભવાચિકો યોગઃ, યથા-‘હન્યન્તાં ચૌરાઃ’
‘વ્યાષાચન્તાં હિંસ્રાઃ’ । અનૃતં પુન-રયથાર્થમેવ, યથા-‘ડચૌર’ ચૌરક્રારમાક્રો-
શયતિ’ । પુરુષં તાવદ-નિષ્ઠુરં રનેહરજિતં વચનમ્, યથા-‘ધિગૂનામ્૧ મૂર્લ-
સ્ત્વં પાપાચાર-૧’ ઇતિ । પિશુનં-સત્યમપિ પ્રીતિરાહિત્યાપાદનાન્યદસ્ય પરોક્ષસ્ય
સતો દોષસૂચકં વચઃ, એવમ્-અસત્ય ંછલશતં દમ્ભોલ્લુઠિકા કટુક સન્દિગ્ધ-
કા સદ્માવ હોને સે પૃથ્વીકાય આદિ મેં આહાર, ભય, મૈથુન એવં પરિગ્રહ
સંજ્ઞા વિદ્યમાન રહતી હૈ ।

જલાના, છેદન-ભેદન કરના, આલેલન કરના, હંસના, દૌડના,
કૂદના, લાંઘના, ચઢના-ડતરના, પછાડના આદિ-આદિ કર્મ અશુભ
કાયયોગ કહલાતે હેં । સાવચ ભાષા વોલના, અસત્યવોલના, કઠોર
વચન કહના, ંગલી લાના આદિ અશુભ વચનયોગ હૈ । વચન ભલે
સત્ય હો તથાપિ વહ યદિ સાવચ હૈ તો અશુભ વચનયોગ હી સમજના
વાહિએ । જૈસે-ચૌરોં કા હનન કરોં, હિંસક પ્રાણિયોં કો માર ઢાલો,
હત્યાદિ । અનૃત અયથાર્થ હી હોતા હૈ, જૈસે જો ચોર નહીં હૈ, ડસે ચોર
કહના । નિષ્ઠુર યા સ્નેહ સે હીન વચનોં કા પ્રયોગ ‘પરુષ’ કહલાતા
હૈ, જૈસે=મરે જાલિમ ! તૂ મૂર્લ હૈ, તૂ પાપી હૈ । પીઠ પીઢે કિસી કે
વિદ્યમાન મી દોષોં કો પ્રકટ કરનેવાલે વચન કો પિશુન કહતે હેં ।
હસ પ્રકાર અસત્ય, ંછલ સે મરે હુએ, દંભપૂર્ણ અસમ્ય, કટુક, સંદિગ્ધ

નેઁઁએ આકાંક્ષા મે ઢનીયનો સદ્લાવ થવાથી પૃથ્વીકાય આદિમાં આહાર,
ભય, મૈથુન અને પરિગ્રહ સંજ્ઞા વિદ્યમાન રહે છે.

સળગાવવું છેદન-ભેદન કરવું, આલેલન કરવું, હસવું, દોડવું, કૂદવું,
લાંઘવું, ચઢવું-ડતરવું, પછાડવું આદિ-આદિ કર્મ અશુભ કાયયોગ કહેવાય
છે. સાવચ ભાષા વદવી અસત્ય ભાષણ કરવું, કઠોર વચન કહેવા, આડી
ભાવી આદિ અશુભ વચનયોગ છે વચન ભલે સત્ય હોય પણ ને તે અસાવચ
હોય તો અશુભ વચનયોગ જ સમજવો નેઁઁએ. દા ત ચૌરોને હણી નાખો
હિંસક પ્રાણીઓને મારી નાખો’ ઇત્યાદિ અનૃત અયથાર્થ જ હોય છે, જેમ કે
જે ચોર નથી તેને ચોર કહેવો નિષ્ઠુર અથવા સ્નેહથી હીન વચનનો પ્રયોગ
પરુષ (કઠોર) કહેવાય છે. જેમ કે-મરે જુલમી તું મૂર્ખ છે, તું પાપી છે. પીઠ
પાછળ ઢાઢના વિદ્યમાન પણ દોષોને પ્રકટ કરવાવાળું વચન પિશુન કહેવાય
છે. આ પ્રકારે અસત્ય ંછલપટથી ભરેલા, દંભપૂર્ણ, અસમ્ય, કટુક, સંદિગ્ધ

મિતવિકૃતિશ્રિતઃ પ્રવચનચિરંધી સર્વો વાચિકો યોગો ગ્રાહ્ય । અભિધ્યા-
વ્યાપાદેષ્યાઃસૂચ્યાદીનિ માનસો યોગોઽશુભઃ, તત્ર-સર્વદા પ્રાણિષ્વભિદ્રોહાનુધ્યાનમ્
અભિધ્યા, યથા-‘અસ્મિન્ મૃતે સતિ સુખં વસામઃ-’ इति । સાપાયઃ-ઉત્પાદના-
ઽઽરમ્ભો વ્યાપારો ભવતિ, યથા-‘ઽસ્ત્યસ્થ સંશક્તઃ કોઽપિ શત્રુ સ્તમેવ ક્રોધયામિ
યથા સ એનં હન્યાત્’ इति । પરગુણોત્કર્ષાસહિષ્ણુતા-ઈષ્યા, ગુણેષુ દોષાવિષ્ક-
રણમ્-અમૂયા । અભિમાનહર્ષશોકદૈન્યાદયોઽપિ-અશુભ માનસયોગા બોધ્યાઃ,
તદ્વિનાઃ શુભાઃ કાયિક વાચિક માનસયોગા અવગન્તવ્યાઃ इति भावः ॥

અંટસંદ્ર જિતને ભી વચન હૈં અથવા પ્રવચન સે વિરુદ્ધ જો વચન હૈં, ઉન
સવ કો અશુભ વચનયોગ સમજ્ઞ લેના ચાહિયે । અભિધ્યા હિંસા, ઈર્ષ્યા,
હાહ આદિ જિતને ભી અપ્રશસ્ત માનસિક વ્યાપાર હૈં, વે અશુભ મનો-
યોગ મેં પરિગણિત હોતે હૈં । સદૈવ પ્રાણિયોં કે દ્રોહ-અનિષ્ટ કા
ચિન્તમ કરના અભિધ્યા હૈ, જૈસે યહ સોચનો ક્રિ-અમુક મર જાય તો
હમ સુખ સે રહેં ।’ હસકા શત્રુ અમુક પુરુષ હૈ, ઉસે કુપિત કર દેં
જિસસે વહ હસે માર ડાલે હસ પ્રકાર કા ચિન્તન સાપાય-ચિન્તન કહ
લાતા હૈ । દૂસરે કે ગુણોં કે ઉત્કર્ષ કો સહન ન કર સકના ઈર્ષ્યા હૈ ।
પરાયે ગુણોં કો ભી દોષ કે રૂપ મેં પ્રકટ કરના અસૂચા હૈ । અભિમાન,
હર્ષ, શોક, દૈન્ય આદિ ભી અશુભ મનોયોગ હી સમજ્ઞના ચાહિયે ।

ઉલ્લિખિત અશુભ કાયિક, વાચિક ઓર માનસિક યોગ સે વિપ-
રીત જો યોગ હૈં, વે શુભ હૈં ।

અને એલેક્ષ જેટલાં પણ વચન છે અથવા પ્રવચનથી વિરુદ્ધ જે વચન છે.
તે સઘળાને અશુભ વચનયોગ સમજી લેના જો-એ. અભિધ્યા હિંસા, ઈર્ષ્યા,
દ્રોહ આદિ જેટલાં પણ અપ્રશસ્ત માનસિક વ્યાપાર છે તે મનોયોગમાં
પરિણત થાય છે. સદૈવ પ્રાણિઓના દ્રોહ-અનિષ્ટનું ચિન્તન કરવું તે અભિધ્યા
છે. જેમ કે એવું વિચારવું કે-અમુક મરી જાય તો અમે સુખે રહીએ આનો
શત્રુ અમુક પુરુષ છે તેને ગુસ્સામાં લાવી દઈએ જેથી તે પેલાને મારી નાખે
‘આ પ્રકારનું ચિન્તન સાપાય ચિન્તન કહેવાય છે ખીજનાં ગુણોના ઉત્કર્ષને
સહન ન કરી શકવા તે ઈર્ષ્યા છે. ખીજનાં ગુણોને પણ દોષના રૂપમાં પ્રગટ
કરના એ અસૂચા છે. અભિમાન, હર્ષ, શોક, ગરીબાઈ, આદિ પણ અશુભ
મનોયોગ જ સમજવા જોઈએ.

ઉલ્લિખિત અશુભ કાયિક વાચિક અને માનસિક યોગથી વિપરીત જે
યોગ છે તે શુભ છે.

ઉક્તશ્ચ-સમવાયાંગે-સમવાયે-‘પંચ આસ્રવદારા પળ્લતા, તં જહા-મિચ્છત્તં, અવિરદ્, પ્રમાયા, કષાયા, જોગા’ ઇતિ । પશ્ચા-SSસત્ત્વાદારાણિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તદ્ધયા-મિથ્યાત્વપૂ-અવિરતિઃ-પ્રમાદાઃ-કષાયાઃ-યોગાઃ, ઇતિ । વ્યા-ક્યાપ્રજ્ઞપ્તૌ ભગવતીસૂત્રે-૧૬ સ્તકે ૧ ઉદ્દેશકે ૫૬૪ સૂત્રે ચોક્તમ્-‘તિવિદ્દે જોણ્ પળ્લત્તે, તં જહા-મળજોણ, વહજોણ, કાયજોણ’ ઇતિ । ત્રિવિધો યોગઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્ધયા-મનોયોગઃ-વચોયોગઃ-કાયયોગઃ’ ઇતિ । તથાચા-SSદિશવ્દેન મિથ્યાદર્શના-અવિરતિ પ્રમાદ-કષાય-અભૂતયો ગૃહ્યન્તે, એવશ્ચ-મનોયોગ-વચોયોગ-કાયયોગ-મિથ્યાદર્શના-અવિરતિ-પ્રમાદ-કષાયાઃ-આસ્રવા ઇતિ ફલિતમ્ યથા-સરઃ સલિલાવાહિવિવરદ્વારં સલિલાસ્રવકારણત્વાદાસ્રવ ઉચ્યતે, એવમ્-યોગ-મિથ્યાત્વા-અવિરતિ-પ્રમાદ-કષાય પ્રણાલિક્રયા-SSત્મનઃ કર્મા-SSસત્ત્વતીતિ યોગાદય આસ્રવા વ્યપદિશ્યન્તે ॥૧॥

સમવાયાંગસૂત્ર મેં કહા હૈ-આસ્રવદ્વાર પાંચ હૈ, યથા-મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ કષાય ઓર યોગ । ભગવતીસૂત્ર કે સોલહવેં શતક કે ઉદ્દેશક પ્રથમ, સૂત્ર ૫૬૪ મેં કહા હૈ-‘યોગ ત્રીન પ્રકાર કા કહા હૈ, મનોયોગ, વચનયોગ ઓર કાયયોગ ।’

સૂત્ર મેં ગ્રહણ કિયે હુએ ‘આદિ’ શબ્દ સે મિથ્યાદર્શન, અવિરતિ પ્રમાદ, કષાય, યોગ કા ગ્રહણ હોતા હૈ । ઇસસે ફલિત યહ હુઆ કિ મનોયોગ, વચનયોગ, કાયયોગ, મિથ્યાદર્શન, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય, ઓર યોગ યે સ્રવ આસ્રવ હૈ । જૈસે તાલાબ મેં પાની કે આને કા જો દ્વાર-છિદ્ર આદિ હોતા હૈ, વહ આસ્રવ કહલાના હૈ, ઉસી પ્રકાર યોગ, મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય યોગ રૂપી નાલી મેં આત્મા મેં જો કર્મ આતે હૈ, ઉન્હેં ભી આસ્રવ કહતે હૈ ॥૧॥

સમવાયાંગસૂત્રમાં કહ્યું છે-આસ્રવદ્વાર પાંચ છે-યથા-મિથ્યાત્વ, અવિરતિ પ્રમાદ, કષાય અને યોગ ભગવતી સૂત્રના સોળમાં શતકના ઉદ્દેશક પ્રથમ સૂત્ર ૫૬૪માં કહ્યું છે-‘યોગ ત્રણ પ્રકારનાં કહેવામાં આવ્યા છે, મનોયોગ, વચનયોગ અને કાયયોગ સૂત્રમાં ગ્રહણ કરવામાં આવેલ-આદિ શબ્દથી મિથ્યાત્વ વિરતિ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય યોગનું ગ્રહણ થાય છે. આનાથી ફલિત એ થયું કે મનોયોગ, વચનયોગ કાયયોગ, મિથ્યાત્વ વિરતિ, અવિરતિ પ્રમાદ, કષાય અને યોગ આ બધાં આસ્રવ છે જેમ તળાવમાં પાણીના આવવાનું જે દ્વાર છિદ્ર વગેરે છે તે આસ્રવ કહેવાય છે, તેજ રીતે યોગ મિથ્યાત્વ, અવિરતિ પ્રમાદ, કષાયયોગ રૂપી ગરનાળાથી આત્મામાં જે કર્મ આવે છે તેમને પણ આસ્રવ કહેવામાં આવે છે. ॥૧॥

मूलम्—पुण्यपावाणं सुभासुभा जोगा ॥२॥

छाया—‘पुण्य-पापयोः शुभाऽशुभौ योगौ’ ॥२॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावद् आस्रवस्वरूपं निरूपितम्, सम्प्रति—पुण्यपापयोः शुभाऽशुभौ योगौ—आस्रवो प्ररूपयितुमाह—‘पुण्यपावाणं सुभासुभा जोगा’ इति । कर्म तावत् द्विविधं पुण्यं—पापञ्च, तत्र—पुण्यकर्मणः—आस्रवहेतुः शुभयोगः,—पापकर्मणश्चाऽऽस्रवहेतुरशुभयोगः । तत्र—प्राणातिपात, स्तेय, मैथुनादिरशुभकाययोगः, अनृतभाषण, परुषाऽसभ्याऽल्लोलवचनादि शुभो वाग्योगः, प्राणिबध चिन्तनेर्ष्या—ऽम्रयादिरशुभो मनोयोगः, तद्—विपरीत—शुभः कायादियोगः इति ॥२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं खलु द्विविधो योगः प्रतिपादितः शुभश्चाशुभश्च, तत्र—

‘पुण्यपावाणं’ इत्यादि—

सूत्रार्थ—शुभयोग पुण्य का और अशुभयोग पापका कारण है ॥२॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले आस्रव के स्वरूप का निरूपण किया गया है, अब यह बतलाते हैं कि पुण्य और पापका आस्रव किस कारण से होता है ?

कर्म के दो भेद हैं—पुण्यकर्म और पापकर्म । इन में से पुण्यकर्म के आस्रव का कारण शुभयोग और पाप कर्म के आस्रव का कारण अशुभ कर्म है । प्राणातिपात, चोरी, मैथुन आदि अशुभ काययोग है । असत्य, कठोर, असभ्य या अश्लील वचन बोलना अशुभ वचनयोग है । हिंसा का विचार करना, ईर्ष्या करना, डाह करना, आदि अशुभ मनोयोग है । इनसे विपरीत जो योग हैं, उन्हें शुभ काययोग आदि समझना चाहिए ॥२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले योग के दो प्रकार प्रतिपादित किए गए हैं—

‘पुण्यपावाणं सुभासुभा जोगा’

सूत्रार्थ—शुभयोग पुण्यनुं अने अशुभयोग पापनुं कारणुं छे ॥२॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले आस्रव स्वरूपनुं निरूपणुं करवामां आब्युं हवे जे दर्शावीजे छीजे के पुण्य अने पापने आस्रव क्या कारणथी थाय छे ?

कर्मना जे लेह छे—पुण्यकर्म अने पापकर्म आमांथी पुण्यकर्मना आस्रवनुं कारणुं शुभयोग अने पापकर्मना आस्रवनुं कारणुं अशुभ कर्म छे प्राणातिपात, चोरी, मैथुन आदि अशुभ काययोग छे. असत्य, कठोर, असभ्य, अथवा अश्लील वचन बोलवा अशुभ वचनयोग छे हिंसानो विचार करवो, ईर्ष्या करवी, द्रोहकरवो आदि अशुभ मनोयोग छे. आनाथी जे योग छे तेमने शुभ काययोग वगेरे समझवा जेधजे ॥२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—अगाडि-योगना जे प्रकार प्रतिपादित करवामां आब्या छे—

યઃ શુભઃ કાયાદિયોગઃ સ કિં સર્વસ્યૈવ કર્મણોઽવિશેષેણાઽઽસ્રવો ભવતિ ? આદ્યો-
સ્વિત્-કસ્યચિદેવ કર્મણઃ આસ્રવઃ ? एवम्-अशुभोऽपि कयादियोगः किं सर्व-
स्यैव कर्मण आस्रवो भवति ? उताहो कस्यचिदेव कर्मणः ? इत्याशङ्काया निरासार्थ-
माह-‘पुण्यपापाणं सुभासु मा जोगा’ इति । पुण्य-पापयोः पुण्य कर्म पाप
કર્મણોઃ શુભાઽશુભૌ યોગૌ-આસ્રવૌ ભવતઃ । તત્રઃ-પુણ્યં તાવદ્-દ્વિત્વારિશ્ચ
વિધં કર્મ ચતુર્થાઽધ્યાયે તૃતીયસૂત્રે પ્રતિપાદિતમ્ । તસ્ય સ્વલ્લુ એવંચિદસ્ય પુણ્ય
કર્મણઃ શુભઃ કાયાદિયોગ આસ્રવો ભવતિ । અશુભશ્ચ કાયાદિયોગઃ-પાપકર્મણ
આસ્રવો ભવતિ, પાપકર્મ-તાવદ્ દ્વચશીતિવિધં પશ્ચમાધ્યાયે પ્રરૂપિતમ્ । તત્ર-
પ્રાણાતિપાતાદિ નિવૃત્ત્યાદયઃ સત્યાદયોઽપરિગ્રહતા ધર્મધ્યાનાદયશ્ચ શુભો યોગઃ
પુણ્યસ્યૈવ કર્મણ અસ્રવો વોદ્યઃ । ન તુ પાપકર્મણઃ, પ્રાણાતિપાતાદિલક્ષણ સ્ત્રિ-

શુભ ઓર અશુભ । इन में से शुभ काययोग आदि क्या सामान्य रूप
से सभी कर्मों के कारण होते हैं अथवा किसी विशिष्ट कर्म के कारण
होते हैं ? इस आशंका का निराकरण करने के लिए कहते हैं-

પુણ્યકર્મ કે આસ્રવ કા કારણ શુભયોગ હૈ ઓર પાપ કર્મ કે
આસ્રવ કા કારણ અશુભયોગ હૈ । પુણ્ય (શુભકર્મ) કે વચાલીસ ભેદ
હૈં ઉનકા પ્રતિપાદન ચૌથે અધ્યાય કે તૃતીય સૂત્ર મેં કિયા જા ચુકા
હૈ । હસ પુણ્યકર્મ કે આસ્રવ કા કારણ શુભયોગ હૈ । હસસે વિપરીત
પાપકર્મ કે આસ્રવ કા હેતુ અશુભયોગ હૈ । પાપ કર્મ કે વચાસી ભેદો
કા નિરૂપણ પાંચવેં અધ્યાય મેં કિયા ગયા હૈ । પ્રાણાતિપાત આદિ સે
વિરતિ, સત્ય આદિ! અપરિગ્રહતા એવં ધર્મધ્યાન આદિ શુભયોગ હૈ
ઓર इन में पुण्यकर्म का ही आस्रव होना है ।

શુભ અને અશુભ આમાંથી શુભ કાયયોગ આદિ શુ' સામાન્ય રૂપથી બધા
કર્મોના કારણ હોય છે, અથવા કોઈ વિશેષ કર્મના કારણ હોય છે ? આ
શંકાના નિવારણ અર્થે કહીએ છીએ-

પુણ્યકર્મના આસ્રવનું કારણ શુભયોગ છે અને પાપકર્મના આસ્રવનું
કારણ અશુભયોગ છે. પુણ્ય (શુભકર્મ) ના બેતાલીસ ભેદ છે તેમનું પ્રતિપાદન
ચોથા અધ્યાયના ત્રીજા સૂત્રમાં કરી દેવામાં આવ્યું છે. આ પુણ્યકર્મના આસ્ર-
વનો હેતુ અશુભયોગ છે. આનાથી વિપરીત પાપકર્મના આસ્રવનો હેતુ અશુભ
યોગ છે. પાપકર્મના બ્યાંશી ભેદોનું નિરૂપણ પાંચમાં અધ્યાયમાં કરવામાં
આવ્યું છે પ્રાણાતિપાત આદિથી વિરતિ, સત્ય આદિ, અપરિગ્રહ તથા
ધર્મધ્યાન આદિ શુભ યોગ છે અને એનાથી પુણ્યકર્મનો જ આસ્રવ થાય છે,

વિધોઽપિ-અશુભઃ કાયાદિયોગઃ પાપસ્ય દ્વયશીતિભેદમિન્નસ્ય કર્મણ આસ્રવો ભવતિ । એવશ્ચ-તથાવિધશુભો યોગઃ પુણ્યસ્યૈવ કર્મણ આસ્રવો ન તુ-પાપસ્યેતિ રીત્યા-એવકારેણ-પાપકર્મણ એવ નિવૃત્તિ રુચ્યતે, ન તુ તસ્ય શુભયોગસ્ય કર્મ-નિર્જરાહેતુત્વનિષેધઃ ક્રિયતે । તથા ચ-શુભો યોગઃ પુણ્યસ્ય-નિર્જરાયાશ્ચ હેતુ ભવતિ, અશુભો યોગશ્ચ-પાપસ્યૈવ કર્મણો હેતુ ભવતિ, કદાચિત્ પુણ્યસ્ય કર્મણ હિતિ માત્રઃ । તત્રા-ઽષ્ટવિધે જ્ઞાનાવરણીયાદિ મૂલકર્મણિ દ્વાચત્વારિંશત્ પુણ્યપ્રકૃતયઃ-

તથાહિ-સાતાવેદનીયમ્-દેવ-મનુષ્ય-તિર્યંગાર્યુષિ, ઉચ્ચૈર્ગોત્રમ્ । નામકર્મ સપ્તત્રિંશદ્ વિધમ્, તથાહિ-દેવગતિઃ ૧ દેવગત્યાનુપૂર્વી ૨-મનુષ્યગતિઃ ૩-મનુષ્ય-

પ્રાણાતિપાત આદિ ત્રીનો પ્રકાર કે અશુભ કાયયોગ આદિ સે વચાસી પ્રકાર કે કર્મ કા આસ્રવ હોતા હૈ । હસ પ્રકાર પૂર્વોક્ત શુભ યોગ પુણ્યકા હી આસ્રવ હૈ, પાપ કા નહીં યહાં જો ‘એવ’ શબ્દકા પ્રયોગ ક્રિયા ગયા હૈ, ઉસસે યહ સમજના ચાહિયે કિ શુભયોગ પાપ કર્મ કે આસ્રવ કા કારણ નહીં હોતા, મગર એસા નહીં સમજના ચાહિયે કિ શુભયોગ કર્મનિર્જરા કા કારણ નહીં હૈ । હસ પ્રકાર શુભયોગ પુણ્ય કા ભી કારણ હૈ ઓર નિર્જરા કા ભી । ઓર અશુભ યોગ પાપ કા હી કારણ હોતા હૈ, મગર કદાચિત્ પુણ્યકર્મ કા ભી કારણ હો જોતા હૈ ।

જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કી વચાલીસ ઉત્તર પ્રકૃતિયાં પુણ્યપ્રકૃતિયાં હૈ । વે હસ પ્રકાર હૈ-સાતાવેદનીય, દેવાયુ, મનુષ્યાયુ, તિર્યંચાયુ, ઉચ્ચગોત્ર તથા સૈંતીસ નામ કર્મ કી નિમ્નલિખિત પ્રકૃતિયાં-(૧) દેવગતિ (૨) દેવગત્યાનુપૂર્વી (૩) મનુષ્યગતિ (૪) મનુષ્ય-

પ્રાણાતિપાત આદિ ત્રણે પ્રકારના અશુભ કાયયોગ આદિથી જ્યાંશી પ્રકારનાં કર્મોનાં આસ્રવ થાય છે. આવી રીતે પૂર્વોક્ત શુભયોગ પુણ્યનો જ આસ્રવ છે. પાપનો નહીં અહીં જે ‘એવ’ શબ્દનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે, તેનાથી એવું સમજવાનું છે કે શુભયોગ પાપકર્મના આસ્રવનું કારણ હોતું નથી, પરંતુ એવું ન સમજવું. જોઈએ કે શુભયોગ કર્મનિર્જરાનું કારણ નથી. આવી રીતે શુભયોગ પુણ્યનું પણ કારણ છે અને નિર્જરાનું પણ અને અશુભયોગ પાપનું જ કારણ હોય છે પરંતુ કદાચીત પુણ્યકર્મનું પણ કારણ બની જાય છે.

જ્ઞાનાવરણીય આદિ સાત પ્રકારના કર્મોની બેતાલીશ ઉત્તર પ્રકૃતિઓ પુણ્યપ્રકૃતિઓ છે. તે આ રીતે છે.-સાતા વેદનીય, દેવાયુ મનુષ્યાયુ, તિર્યંચાયુ, ઉચ્ચગોત્ર તથા સાંત્રીસ નામકર્મની નિમ્નલિખિત પ્રકૃતિઓ-(૧) દેવગતિ

गत्यानुपूर्वी ४-पञ्चेन्द्रियजाति ५-औदारिकादीनि पञ्चशरीराणि १०-औदारिकादि
शरीरत्रयस्याऽङ्गोपाङ्गानि १३-प्रथमं संहननम् १४-प्रथमं संस्थानम् १५-चत्वारि
प्रशस्त-वर्ण-गन्ध-रस-स्पर्शानि १९-त्रसादिदशकम्-तथाहि-त्रस-वादर पर्याप्त-
प्रत्येकशरीर-स्थिर-शुभ-सुभग-सुस्वरा-ऽऽदेय-यशः कीर्तिनामानि २९-अगुरु-
लघुवाप्टकम् तथाहि-अगुरु लघुनामो-च्छासा-ऽऽतपोदद्योत-प्रशस्तविहायोगति-
पराधात-तीर्थकर-निर्माणनामचेत्यष्टौ । सर्वसङ्कलनया सप्तत्रिंशद्विधं नामकर्म
भवति । ३७ । सातावेदनीयादयः पञ्चेत्येवं मिलित्वा द्विचत्वारिंशद्विधाः
पुण्यप्रकृतयो भवन्तीति ।

गत्यानुपूर्वी (५) पञ्चेन्द्रियजाति (६-१०) औदारिक आदि पांच शरीर
(११-१३) औदारिक आदि तीन शरीरों के अंगोपांग (१४) प्रथम
संहनन-वज्रर्षभनाराच संहनन (१५) प्रथम संस्थान-समचतुरस्र (१६)
प्रशस्त वर्ण (१७) प्रशस्त गंध (१८) प्रशस्त रस (१९) प्रशस्तस्पर्श (२०-
२९) त्रसदशक अर्थात् त्रस, वादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर शुभ, सुभग,
सुस्वर, आदेय और यशः कीर्ति नाम कर्म (३०-३७) अगुरु लघु
अष्टक में से सात अर्थात् अगुरुलघु नाम कर्म, उच्छ्वास नाम कर्म,
आतपनाम कर्म, उद्योत नाम कर्म, प्रशस्तविहायोगति नाम कर्म, परा-
धात नामकर्म, तीर्थकर नाम कर्म और निर्माण नाम कर्म । इस प्रकार
सब को जोड़ने से नाम कर्म के सैंतीस भेद होते हैं । इन में साता-
वेदनीय आदि पूर्वोक्त पांच भेद सम्मिलित कर देने पर बयालीस भेद
हो जाते हैं । यही बयालीस पुण्य प्रकृतियां हैं ।

(२) देवगत्यानुपूर्वी (३) मनुष्यजाति (४) मनुष्यगत्यानुपूर्वी (५) पञ्चेन्द्रिय
जाति (६-१०) औदारिक आदि पांच शरीर (११-१३) औदारिक आदि त्रय
शरीरों के अंगोपांग (१४) प्रथम संहनन वज्रर्षभनाराच संहनन (१५) प्रथम
संस्थान-समचतुरस्र (१६) प्रशस्त वर्ण (१७) प्रशस्त गंध (१८) प्रशस्त
रस (१९) प्रशस्त स्पर्श (२०-२९) त्रस दशक अर्थात् त्रस, वादर, पर्याप्त,
प्रत्येक शरीर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय और यशः कीर्तिनामकर्म (३०-
३७) अगुरु लघु अष्टकमाथी सात अर्थात् अगुरुलघुनाम कर्म, उच्छ्वासनाम
कर्म, आतपनाम कर्म, उद्योतनाम कर्म, प्रशस्त विहायोगतिनामकर्म,
पराधातनाम कर्म, तीर्थकरनाम कर्म और निर्माणनाम कर्म आरंभ में अध्याने
सरवाणो धरवाथी नामकर्मना साठवीस भेद थाय छे. आरंभ में सातावेदनीय
आदि पूर्वोक्त पांच भेद धरवाथी अंतालीस भेद थाय छे आरंभ में सातावेदनीय
आदि पुण्यप्रकृतियां छे.

દ્વયધિકાશીતિવિધં પાપકર્મ, તત્ર-પञ्चज्ञानवरणानि-૫ નવ દર્શનાવરણી-
યાનિ-૧૪ અસાતાવેદનીયમ્-૧૫, પદ્મવિંશતિવિધં મોહનીયમ્-૪૧ અષ્ટાવિંશતિ-
વિધેષુ મોહનીયેષુ સમ્યક્ત્વ-સમ્યગ્મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિદ્વયસ્ય પાપકર્મત્વં ન સમ્ભવતિ,
યતોડનયોર્વન્ધો નાસ્તિ, કેવલં મિથ્યાત્વમેવૈકં વદ્ધં સદ્ પાપકર્મતયા પરિણમતે ।
एवं-નરકાયુષ્મ ૪૨-નામકર્મ ચતુર્વિંશદ્ વિધમ્ તથાહિ-નરકગતિ ૧-નરકાનુ-
પૂર્વી ૨-તિર્યગ્ગતિ ૩-તિર્યગાનુપૂર્વી ૪-એકેન્દ્રિયજાતિ ચતુષ્ટયમ્ ૮-દશસંહનન-
સંસ્થાનાનિ ૧૮-અપ્રશસ્તવર્ણાદિ ચતુષ્ટયમ્ ૨૨-સ્થાવરનામદશવિધમ્, તથાહિ-
સ્થાવર ૧-સૂક્ષ્મા ૨-અપર્યાપ્ત ૩-સાધારણ શરીરા ૪-અસ્થિરા ૫-અશુભ ૬-

પાપ કર્મ વ્યાપ્તિ પ્રકાર કા હૈ, યથા-(૧-૫) પાંચ જ્ઞાનાવરણ
(૬-૧૪) નૌ દર્શનાવરણ (૧૫) આસાતાવેદનીય (૧૬-૪૧) છઠ્ઠીસ
મોહનીયકર્મ કી પ્રકૃતિયા-મોહનીય કર્મ કી અઠ્ઠાઈસ પ્રકૃતિયોં મેં સે
સમ્યક્ત્વમોહનીય ઔર મિથ્રમોહનીય નામક દો પ્રકૃતિયાં પાપકર્મ
પ્રકૃતિયોં મેં પરિગણિત નહીં હૈં ક્યોંકિ ઉનકા બન્ધ નહીં હોતા,
કેવલ મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિ કા બન્ધ હોતા હૈ ઔર વહ પાપ કર્મ કે રુપ મેં
પરિણત હો જાતી હૈ (૪૨) નરકાયુ (૪૩-૭૬) ચૌંત્રીસ પ્રકાર કા
નામ કર્મ, યથા-(૧) નરકગતિ (૨) નરકાનુપૂર્વી (૩) તિર્યંચગતિ (૪)
તિર્યંચાનુપૂર્વી (૫-૮) એકેન્દ્રિય આદિ ચાર જાતિયાં અર્થાત્ એકેન્દ્રિય
જાતિ, દ્વીન્દ્રિયજાતિ, ત્રીન્દ્રિયજાતિ, ચતુરિન્દ્રિયજાતિ (૯-૧૮) પાંચ
સંહનન ઔર પાંચ સંસ્થાન (૧૯-૨૨) અપ્રશસ્ત વર્ણ, ગંધ, રસ, સ્પર્શનામ-
કર્મ (૨૩-૩૨) સ્થાવરદશક, યથા-(૧) સ્થાવર (૨) સૂક્ષ્મ (૩) અપર્યાપ્ત

પાપકર્મ ય્યાંશી પ્રકારના છે, -(૧-૫) પાંચ જ્ઞાનાવરણ ૬-૧૪) નવ
દર્શનાવરણ (૧૫) અસાતાવેદનીય (૧૬-૪૧) છઠ્ઠીસ મોહનીય કર્મની પ્રકૃતિઓ
મોહનીય કર્મની અઠ્ઠાવીસ પ્રકૃતિઓમાંથી સમ્યક્ત્વ મોહનીય અને મિથ્ર મોહ-
નીય એ બે પ્રકૃતિઓ પાપકર્મ પ્રકૃતિઓમાં પરિગણિત નથી કારણ કે તેમનો
બન્ધ થતો નથી, માત્ર મિથ્યાત્વપ્રકૃતિનો બન્ધ થાય છે અને તે પાપકર્મના
રૂપમાં પરિણત થઈ જાય છે (૪૨) નરકાયુ (૪૩-૭૬) ચૌત્રીસ પ્રકારના નામ
કર્મ યથા-(૧) નરકગતિ (૨) નરકગતિ આનુપૂર્વી (૩) તિર્યંચગતિ (૪) તિર્યંચા
નુપૂર્વી (૫-૮) એકેન્દ્રિય આદિ ચાર જાતિઓ અર્થાત્ એકેન્દ્રિય જાતિ, બે
દ્વિન્દ્રિય જાતિ, ત્રેદ્વિન્દ્રિય જાતિ, ચતુરીન્દ્રિય જાતિ (૯-૧૮) પાંચ સંહનન અને
પાંચ સંસ્થાન (૧૯-૨૨) અપ્રશસ્તવર્ણ, ગંધ, રસ, સ્પર્શનામ કર્મ (૨૩-૩૨)
સ્થાવરદશક યથા-(૧) સ્થાવર, (૨) સૂક્ષ્મ (૩) અપર્યાપ્ત (૪) સાધારણ

દુર્ભગ ૭-દુઃસ્વરા ૮-અનાદેય ૯-અયશઃ કીર્તિનામાનિ ૩૨-ઇતિ, ઉપઘાતનામા ૩૩-અશુભવિહાયો ગતિઃ ૩૪ । (૭૬) નીચગોત્ર ૭૭-પાંચવિધમન્તરાયમ્-૮૨ તદેવં પુણ્યપાપકર્મણોઃ શુભાઅશુભૌ યોગૌ-આસ્રવૌ ભવતઃ ॥

ઉક્તચ્છોત્તરાધ્યયને ૨૮અધ્યયને ૧૪-ગાથાયામ્-‘પુણ્યપાવાસવો તદ્દા-’
ઇતિ । પુણ્ય-પાપાસ્રવસ્તથા ॥૨॥

મૂલમ્-સકસાયસ્સ જોગો સંપરાયકિરિયાણ ॥૩॥

છાયા-‘સકસાયસ્ય યોગઃ સમ્પરાયક્રિયાયાઃ-’ ॥૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વ પુણ્યપાપકર્મણોઃ શુભાઅશુભયોગૌ આસ્રવરૂપૌ પ્રરૂપિતૌ,
સમ્પ્રતિ-સમ્પરાયક્રિયાયા આસ્રવં પ્રરૂપયિતુમાદ-‘સકસાયસ્સ જોગો સંપરાય

(૪) સાધારણ શરીર (૫) અસ્થિર (૬) અશુભ (૭) દુર્ભગ (૮) દુઃસ્વર (૯) અનાદેય (૧૦) અયશઃકીર્તિ (૩૩) ઉપઘાતનામકર્મ (૩૪) અશુભ વિહાયોગતિનામકર્મ (૭૭) નીચગોત્ર (૭૭=૮૨) પાંચ અન્તરાય । ફસ પ્રકાર શુભયોગ ઓર અશુભયોગ પુણ્ય ઓર પાપ કે કારણ હોતે હૈ ।

ઉત્તરાધ્યયનસૂત્ર કે ૨૮ વેં અધ્યયન કી ચૌદહવીં ગાથા મેં કહા હૈ-‘પુણ્યપાવાસવો તદ્દા’ અર્થાત્ પુણ્ય કા ઓર પાપ કા આસ્રવ હોતા હૈ ॥૨॥

સૂત્રાર્થ-‘સકસાયસ્સ જોગો’ ઇત્યાદિ ।

કસાયયુક્ત જીવ કા યોગ સમ્પરાયક્રિયા કે આસ્રવ કા કારણ હોતા હૈ ॥૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલે બતલાયા ગયા હૈ કિ શુભ યોગ પુણ્ય કે ઓર અશુભ યોગ પાપ કે આસ્રવ કા કારણ હૈ । અથ સામ્પરાયિક ક્રિયા કે

(૫) અસ્થિર (૬) અશુભ (૭) દુર્ભગ (૮) દુઃસ્વર (૯) અનાદેય (૧૦) અયશઃ કીર્તિ (૩૩) ઉપઘાતનામ કર્મ (૩૪) અશુભવિહાયોગતિનામ કર્મ (૭૭) નીચગોત્ર (૭૮-૨) પાંચ અન્તરાય આવી રીતે શુભયોગ અને અશુભયોગ પુણ્ય અને પાપના કારણ હોય છે.

ઉત્તરાધ્યયનસૂત્રનાં ૨૮માં અધ્યયનની ચૌદમી ગાથામાં કહ્યું છે-
‘પુણ્યપાવાસવો તદ્દા’ અર્થાત્ પુણ્યનો અને પાપનો આસ્રવ થાય છે. ॥૨॥

‘સકસાયસ્સ જોગો સંપરાયકિરિયાણ’

સૂત્રાર્થ-કસાયયુક્ત જીવનો યોગ સમ્પરાયક્રિયાના આસ્રવનું કારણ હોય છે.

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલા બતાવવામાં આવ્યું કે શુભયોગ પુણ્યના અને અશુભ યોગ પાપના આસ્રવના કારણ છે. હવે સમ્પરાયિક ક્રિયાના આસ્રવની પ્રશ્નણા કરીએ છીએ-

किरियाए-’ इति । सकषायस्य-कषायेण क्रोधमानमायालोभरूपेण सहितस्याऽऽत्मनः घोषो-मनोवाक्कायरूढः आत्मपरिणतिविशेषः सम्परायक्रियायाः-संसारपर्यटनकारकक्रियायाः भवभ्रमणजनककर्मण आस्रवो भवति । तथा च-मनो वचः काययोगादिलक्षणः पूर्वोक्तस्वरूपाऽस्रवः सर्वसंसारिणां न समान-फलारम्भहेतुर्भवति, अपितु-सकषायस्यात्मनः कायादियोगरूप आस्रवः संसाररूप सम्परायजनककर्मणो हेतुर्भवति, अकषायस्यात्मनस्तथाविध आस्रवन्तु-ईर्यापथ कर्मणः संसारापरिभ्रमणस्य हेतुर्भवतीति बोध्यम् । तत्र-कषति-आत्मानं हिनस्ति दुर्गतिं प्रापयतीति कषायः, यद्वा-कषायो न्यग्रोधत्वक् विभीतक-हरीतक्यादिकम्,

आस्रव की प्ररूपणा करते हैं ।

जो जीव क्रोध, मान, माया, और लोभ रूप कषाय से युक्त है उसका योग अर्थात् आत्मपरिणति रूप मन वचन काय का व्यापार सम्पराय क्रिया का अर्थात् संसार में भ्रमण कराने वाली क्रिया का आस्रव होता है । तात्पर्य यह है कि मनोयोग वचनयोग और काययोग से होने वाला पूर्वोक्त आस्रव सब संसारी जीवों को समान फलप्रद नहीं होता, वरन् कषाययुक्त जीव को आस्रव होता है वह साम्परायिक आस्रव कहलाता है, जिसके कारण उसे संसार-परिभ्रमण करना पड़ता है । किन्तु जो जीव कषाय से मुक्त हो जाते हैं, उन्हें ईर्यापथ आस्रव होता है । वह संसार परिभ्रमण का कारण नहीं होता ।

जो आत्मा कषे-हने अर्थात् दुर्गति में ले जाय, वह कषाय कहलाता है अथवा जैसे बटकी छाल, बहेडा और हरड आदि कषाय वस्त्र

જે જીવ ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ રૂપ કષાયથી યુક્ત છે તેનો યોગ અર્થાત્ આત્મપરિણતિ રૂપ મન વચન કાયનો વ્યાપાર સમ્પરાય ક્રિયાનો અર્થાત્ સંસારમાં ભ્રમણ કરવાવાળી ક્રિયાનો આસ્રવ થાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે મનોયોગ, વચનયોગ અને કાયયોગથી થનારો પૂર્વોક્ત આસ્રવ બધાં સંસારી જીવોને એકસરખો ફળપ્રદ થી નીવડતો નથી, નહીતર કષાયયુક્ત જીવને જે આસ્રવ થાય છે તે સામ્પરાયિક આસ્રવ કહેવાય છે, જેના કારણે-તેને સંસાર-પરિભ્રમણ કરવો પડે છે, પરંતુ જે જીવ કષાયથી મુક્ત થઈ જાય છે, તેમને ઈર્યાપથ આસ્રવ થાય છે અને તે સંસાર પરિભ્રમણનું કારણ બનતું નથી.

જે આત્માને કષે-હણે અર્થાત્ દુર્ગતિમાં લઈ જાય તે કષાય કહેવાય છે અથવા જેમ વડની છાલ, બહેડા અને હરડ-આદિ કષાય વસ્ત્ર વગેરેમાં રાગનાકારણ હોય છે તેવી જ રીતે ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ રૂપ કષાય

યથા-વસ્ત્રાદૌ રાગશ્લેષ હેતુ સ્તથા-ક્રોધમાનમાધાલોભલક્ષણઃ કષાયા કષાય
 હ્વાત્મનઃ કર્મશ્લેષહેતુર્ભવતિ, તેન-કષાયેણ સહ વર્તેતે इति सकषायः तस्य-सकषा-
 यस्यात्मनो मिथ्यादृष्ट्याદેः कायादि योगवशादानीतस्य स्थित्यनुभागबन्धकारक
 साम्परायिकस्य कर्मण आस्रवो भवकारणं भवति । तत्र-सम्परास्तावत्-सं-
 सम्यक्, उत्कृष्टः, अयो गतिः-पर्यटनं प्राणिनो यत्र भवति, स सम्परायः, संसार
 उच्यते, संसारपर्यटनकारकं कर्म साम्परायिकम्, तस्य-साम्परायिकस्य कर्मणो
 हेतुः खलु-सकषायस्यात्मनो मिथ्यादृष्टे कायादियोगरूप आस्रवो भवति ॥३॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ-અથ-કાયિક-વાચિક-માનસયોગાદિલક્ષણ આસ્રવઃ કિં

આદિ મેં રાગ કે કારણ હોતે હૈં, ઉસી પ્રકાર ક્રોધ માન માયા ઔર
 લોભ રૂપ કષાય આત્મા કે લિએ કર્મ બન્ધ કે કારણ હોતે હૈં । એસે
 કષાય સે યુક્ત જીવ કો સકષાય કહતે હૈં । સકષાય મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિ
 જીવ કો કાયબોગ આદિ કે દ્વારા જિન કર્મોં કા આસ્રવ હોતા હૈ, ઊનમેં સ્થિતિ બન્ધ ઔર અનુબોગ બન્ધ બી પડતા હૈ । અતઃવ વહ
 બન્ધ સામ્પરાયિક બન્ધ કહલાતા હૈ । ‘સામ્પરાય’ શબ્દ કા અર્થ ઇસ
 પ્રકાર હૈ-સમ્ અર્થાત્ સમ્યક્, પર અર્થાત્ ઉત્કૃષ્ટ, અય અર્થાત્ ગતિ
 યા પર્યટન, તાત્પર્ય યહ હૈ કિ પ્રાણિયોં કા જહાં પરિભ્રમણ હોતા હૈ,
 ઉસ સંસાર કો સામ્પરાય કહતે હૈ ઔર સંસાર-પરિભ્રમણ કે કારણ-
 ભૂત કર્મ કો સામ્પરાયિક કહતે હૈ । સામ્પરાયિક કર્મ કે કારણ કષાય-
 વાન જીવ કા યોગ હૈ । સારાંશ યહ હૈ કિ સકષાય જીવ કે યોગ સે
 જો કર્મબંધ હોતા હૈ, વહ સામ્પરાયિક બન્ધ કહલાતા હૈ ઔર ઉસમેં
 સ્થિતિ ઇવં અનુભાગ બી પડતે હૈ ॥૩॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-કાયિક, વાચિક ઔર માનસિક યોગ રૂપ આસ્રવ કયા

આત્માને માટે કર્મ બન્ધના કારણ હોય છે. આવા કષાયથી યુક્ત જીવને
 સકષાય કહે છે. સકષાય મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિ જીવને કાયયોગ આદિ દ્વારા જે
 કર્મોના આસ્રવ થાય છે તેમાં સ્થિતિબન્ધ અને અનુભાગબન્ધ પણ પડે છે.
 આથી તે બન્ધ સામ્પરાયિકબન્ધ કહેવાય છે. ‘સમ્પરાય’ શબ્દનો અર્થ આ
 પ્રમાણે થાય છે-સમ્ અર્થાત્ સમ્યક્ પર અર્થાત્ ઉત્કૃષ્ટ, અય અર્થાત્ ગતિ
 અથવા પર્યટન, તાત્પર્ય એ છે કે પ્રાણિઓનું ન્યા પરિભ્રમણ થાય છે તે
 સંસારને સમ્પરાય કહે છે અને સંસાર પરિભ્રમણના કારણભૂત કર્મોને સામ્પરાયિક
 કહે છે. સામ્પરાયિક કર્મનું કારણ કષાયવાન જીવનોયોગ છે. સારાંશ એ છે
 કે સકષાય જીવના યોગથી જે કર્મ બંધાય છે તે સામ્પરાયિક બન્ધ કહેવાય
 છે અને તેમાં સ્થિતિ તેમજ અનુભાગ પણ પડે છે ॥૩॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-કાયિક, વાચિક અને માનસિકયોગ રૂપ આસ્રવ શું બધાં

સર્વેષાં સંચારિણાં સમાનફલારમ્ભહેતુર્ભવતિ ? ઉત્તરો-અન્યસ્યા-ડન્યાદશઃ અન્યસ્યા ડન્યાવા ? इत्याकाङ्क्षायां-कश्चिद्विशेष प्रतिपादयितुमाह-‘सकषायस्स जोगो संपरायकिरियाए-’ इति । सकषायस्य-कषायैः क्रोधमान-माया-लोभैः सह वर्तते इति सकषायः, कषः-कर्म, तस्या-डडपो लाभः प्राप्तिः-कायः क्रोधमान-माया लोभः कर्महेतुः भवहेतुर्वा भवति, तै कषायैः-क्रोधादिभिः सहितस्य सकषायस्या-डडत्यनो मिथ्यादृष्टेः कायादियोगरूपः आस्रवः संपरायक्रियायाः-संपरैति-आत्मा-डस्मिन् इति सम्परायः-निरय-देव-मनुष्य-तिर्यग्गतिलक्षणश्चतुर्गतिकः संसार स्तस्य-संचारपरिभ्रमणस्य हेतुभूता-कर्मरूपा क्रिया-संपरायक्रिया तस्य हेतुर्भवति । तथा च-त्रिविधोऽपि मनो वाक् काययोगः शुभाऽशुभभेदः

સમી સંસારી જીવોં કો સમાન ફલદાયક હોતા હૈ અથવા ઉસકે ફલ મેં વિસદશતા હોતી હૈં ? इस आशंका का निवारण करने के लिए विशेष प्रतिपादन करते हैं-

જો ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ સે યુક્ત હોના હૈ, વહ સકષાય કહલોતા હૈ । कष अर्थात् कर्म का आय अर्थात् लाभ होना कषाय है । क्रोध, मान, माया और लोभ कर्मके अथवा संसार के कारण हैं । क्रोध आदि कषायों से युक्त जीव को काययोग आदि साम्परायिक क्रिया के कारण होते हैं । नरकगति, देवगति, मनुष्यगति और तिर्यंचगति रूप संसार सम्पराय कहलाता है, उस सम्पराय अर्थात् संसार में परिभ्रमण के कारण जो क्रिया है, वह साम्परायिक क्रिया कहलाती है । तात्पर्य यह है कि मनोयोग वचनयोन और काययोग शुभ और अशुभ के भेद से दो-दो प्रकार का है । यह योग चाहे समस्त हो या व्यस्त, जब

સંસારી જીવોને સરખાં ફળદાયક હોય છે ? અથવા તેના ફળમાં વિસદશતા હોય છે ? આ શંકાના નિવારણુ અર્થે વિશેષ પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

જે ક્રોધ માન માયા અને લોભથી યુક્ત હોય છે, તે સકષાય કહેવાય છે. कष अर्थात् कर्मનું आपवું अर्थात् लाभ થવો कषाय છે ક્રોધ, માન; માયા અને લોભ કર્મના અથવા સંસારના કારણુ છે. ક્રોધ આદિ કષાયોથી યુક્ત જીવના કાયયોગ આદિ સામ્પરાયિક ક્રિયાના કારણુ હોય છે. નરકગતિ, દેવગતિ, મનુષ્યગતિ અને તિર્યંચગતિ રૂપ સંસાર સમ્પરાય કહેવાય છે તે સમ્પરાય અર્થાત્ સંસારમાં પરિભ્રમણના કારણુ રૂપ જે ક્રિયા છે તે સામ્પરાયિક ક્રિયા કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે મનોયોગ, વચનયોગ, અને કાયયોગ શુભ અને અશુભના ભેદથી બે-બે પ્રકારનાં છે. આ યોગ ભલે સમસ્ત હોય

સમસ્તો વ્યસ્તો વા કષાયસ્ય કર્તુરાત્મનઃ સામ્પરાયિકસ્ય સંસારપરિભ્રમણદેતુ
ભૂતસ્ય કર્મણ આસ્રવો ભવતિ ।

ઉક્તશ્ચ વ્યાખ્યાપણશ્ચૌ ભગવતીસૂત્રે ૭-શતકે ૧-ઉદ્દેશકે ૧૬૭-સૂત્રે-‘જસ્ય
ખં ક્રોહમાણમાયાલોભા અવોચ્છિન્ના ભવંતિ, તસ્ય ખં સંપરાયકિરિયા
ક.જજહ નો ઈરિયાવહિયા’ ઇતિ । યસ્ય-ક્રોધ માન માયા લોભા અવ્યુચ્છિન્ના
ભવન્તિ, તસ્ય-સ્વલ્લ સામ્પરાયક્રિયા ક્રિયતે નો ઈર્યાપથિકી ક્રિયા-’ ઇતિ ॥૩॥

મૂલમ્-અકસાયસ્સ જોગો ઈરિયાવહિયા કિરિયાણ ॥૪॥

છાયા-અકષાયસ્ય યોગઃ-એર્યાપથિકક્રિયાયાઃ-’ ॥૪॥

કષાય યુક્ત આત્મા કા હોતા હૈ તો ઉસસે સામ્પરાયિક આસ્રવ હોતા
હૈ ઓર વહ સંસાર-પરિભ્રમણ કો કારણ બનતા હૈ ।

ફલિતાર્થ યહ હૈ કિ ચાર પ્રકાર કૈ બન્ધો મૈ સે સ્થિતિબન્ધ ઓર
અનુભાગબન્ધ કષાય કૈ નિમિત્ત હોતૈ હૈ ઓર પ્રકૃતિબન્ધ તથા પ્રદેશ
બન્ધ યોગ કૈ નિમિત્ત સે હોતૈ હૈ । જો જીવ કષાયયુક્ત હોતા હૈ, ઉસકૈ
સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગબન્ધ અવશ્ય હોતૈ હૈ ઓર હસ કારણ
યહ બન્ધ સંસારભ્રમણ કા કારણ હોતા હૈ ।

ભગવતીસૂત્ર કૈ સાતવેં શતક કૈ પ્રથમ ઉદ્દેશક કૈ સૂત્ર ૧૬૭ વેં
મૈ કહા હૈ-જિસ જીવ કૈ ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ વિચ્છિન્ન નહીં
હોતૈ, ઉસે સામ્પરાયિક ક્રિયા હોતી હૈ, ઈર્યાપથ ક્રિયા નહીં હોતી હૈ ॥૩॥

સૂત્રાર્થ--‘અકસાયસ્સ જોગો’ ઇત્યાદિ ।

કષાય સે રહિત જીવ કા યોગ એર્યાપથિક ક્રિયાકા કારણ

કૈ વ્યસ્ત, જ્યાદે કષાયયુક્ત આત્માનો થાય છે, ત્યાદે તેનાથી સામ્પરાયિક
આસ્રવ થાય છે અને તે સંસાર પરિભ્રમણનું કારણ બને છે.

ફલિતાર્થ એ છે કે ચાર પ્રકારના બન્ધોમાંથી સ્થિતિબન્ધ અને
અનુભાગબન્ધ કષાયના નિમિત્તથી થાય છે અને પ્રકૃતિબન્ધ તથા પ્રદેશબન્ધ
યોગના નિમિત્તથી થાય છે. જે જીવ કષાયયુક્ત હોય છે તેના સ્થિતિબન્ધ
અને અનુભાગબન્ધ અવશ્ય થાય છે અને આ કારણથી જ આ બન્ધ સંસાર
ભ્રમણનું કારણ બને છે.

ભગવતીસૂત્રમાં સાતમાં શતકના પ્રથમ ઉદ્દેશકના સૂત્ર ૧૬૭માં કહ્યું
છે-જે જીવના ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ વિચ્છિન્ન થતાં નથી તેને
સામ્પરાયિક ક્રિયા થાય છે. ઈર્યાપથિક્રિયા થતી નથી. ॥૩॥

‘અકસાયસ્સ જોગો ઈરિયાવહિયા કિરિયાણ’

સૂત્રાર્થ-કષાયથી રહિત જીવનો યોગ એર્યાપથિકક્રિયાનું કારણ હોય છે.

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रे—क्रोधादिकषाययुक्तस्यात्मनः कायिकादियोगः संसारपरिभ्रमणरूपसम्परायक्रियाया आस्रवो भवतीति प्रतिपादितम्, सम्पत्ति-कषायरहितस्य कायादियोगः संसाराऽपरिभ्रमणरूपैर्यौपथिकक्रियाया आस्रवो भवतीति प्रतिपादयितुमाह—‘अकषायस्त्व जोगो ईरिया वहिया किरियाए’ इति ।

अकषायस्य—न विद्यते क्रोधादिकषायो यस्य सोऽकषायस्तस्य क्रोधादिकषाय रहितस्याऽऽत्मन उपशान्तकषायादेः कायिक-वाचिक-मानसयोगः—ऐर्यापथिक क्रियायाः—ईर्यापथकर्मणः संसारपरिभ्रमणकारणस्याऽऽस्रवो भवति । ऐर्यापथिक शब्दार्थस्तु—‘ईर+गतौ’—इत्यस्माद् भावे ण्यत्ति—ईर्या—ईरणम्, योगो गतिः योग-प्रवृत्तिः काय-वाङ्-मनो व्यापारः काय-वाङ्-मनो वर्णालम्बी-आत्मप्रदेश

होता है ॥४॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्र में प्रतिपादन किया गया है कि क्रोध आदि कषायों से युक्त आत्मा का काययोग आदि संसार भ्रमण के कारण साम्परायिक आस्रव का कारण होता है, इस सूत्र में यह बतलाया जा रहा है कि जो जीव कषाय से रहित है, उसका योग केवल ईर्यापथ-आस्रव का कारण होता है जो कि संसार परिभ्रमण का कारण नहीं होता है—

क्रोध आदि समस्त कषायों से रहित आत्मा का-उपशान्तकषाय या क्षीणकषाय आत्मा का-जो कायिक वाचिक अथवा मानसिक योग होता है, उससे केवल ईर्यापथ-आस्रव ही होता है । ईर् धातु गति अर्थ में है । उससे भोव के अर्थ में प्रत्यय करने से ईर्या शब्द बनता है, जिसका अर्थ है गति या योग की प्रवृत्ति, अथवा मन, वचन काय

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रमां प्रतिपादन करवामां आण्युं के क्रोध आदि कषायोथी युक्त आत्मानो काययोग आदि संसारभ्रमणना कारणथी साम्परायिक आस्रवतुं कारणुं भने छे, प्रस्तुत सूत्रमां ओ दर्शावार्ध रह्युं छे के ओ ओव कषायथी मुक्त होय छे, तेनो योग मात्र ईर्यापथ आस्रवतुं कारणुं होय छे के ओ संसार परिभ्रमणतुं कारणुं भनतुं नथी.

क्रोध आदि समस्त कषायोथी रहित आत्मानो—उपशान्त-कषाय अथवा क्षीणकषाय आत्मानो—ओ कायिक, वाचिक अथवा मानसिकयोग थाय छे, तेनाथी इक्त ईर्यापथ-आस्रव न थाय छे. ‘ईर्’ धातु गति अर्थमां छे, तेथी भावना अर्थमां ईयत् प्रत्यय लगावार्थी ईर्या शब्द भने छे, तेनो अर्थ थाय छे गति अथवा योगनी प्रवृत्ति, अथवा मन, वचन कायना निमित्तथी थनारां

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ-પૂર્વે તાવત્-સકષાયકસ્યાઽઽત્મનઃ કાયાદિયોગઃ સામ્પરાયિક કર્મણો ભવભ્રમણજનકસ્યાઽઽસ્રવો ભવતીતિ પ્રરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ-અકષાયસ્યો-પશાન્તકષાયાદેરાત્મનઃ કાયાદિયોગઃ સંસારા-ડરિભ્રમણહેતુકસ્ય-એર્યાપથિક કર્મણ આસ્રવો ભવતીતિ પ્રરૂપયિતુમાદ-‘અકષાયસ્ય-ક્રોધાદિકષાયરહિતસ્યો-પશાન્તમોહકષાયાદેરાત્મનઃ કાયાદિયોગઃ એર્યાપથિક ક્રિયાયાઃ ઈર્યાપથકર્મણઃ -સંસારાડરિભ્રમણહેતુકસ્યા-ઽઽસ્રવો ભવતિ । તત્ર-ઈરણ મીર્યા ગતિ રાગાનુ-સારિણો સતિ-પ્રયોજને પુરસ્તાદ્ યુગ માત્રદષ્ટિઃ સ્થાવરજઙ્ગમાભિભૂતાનિ પરિ-મેં उसकी निर्जरा हो जाती है । किन्तु कषाययुक्त जीव को स्थितिबन्ध होता है और अनुभागबन्धक भी होता है. अतएव उसके संसारभ्रमण करना पड़ता है ।

इस प्रकार उपशान्त कषाय और क्षीणकषाय आत्मा को ऐर्यापथिक आस्रव ही होता है जो दो समय की स्थितिवाला होता है और संसार परिभ्रमण का कारण नहीं होता ॥४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पहले कथन किया जा चुका है कि सकषाय जीव का योग साम्परायिक आस्रव का कारण होता है, अब यह प्रतिपादन किया जाता है कि उपशान्त-क्षीणकषाय आत्मा का जो काययोग आदि है, वह संसारभ्रमण के हेतु कर्मका कारण नहीं होता—

कषाय से रहित जीव का योग ऐर्यापथિકक्रिया का कारण होता है, जो संसारभ्रमण का कारण नहीं होता । प्रयोजन होने पर आगम के अनुसार चार हाथ सामने की भूमि पर दृष्टि रखते हुए और त्रस

થઈ બાય છે. પરન્તુ કષાયયુક્ત જીવને સ્થિતિબન્ધ થાય છે અને અનુભાગ બન્ધ પણ થાય છે આથી તેને સંસાર-પરિભ્રમણ કરવો પડે છે.

આવી રીતે ઉપશાન્ત કષાય અને ક્ષીણકષાય આત્માને ઐર્યાપથિક આસ્રવ જ થાય છે, જે બે સમયની સ્થિતિવાળો હોય છે તેમજ સંસાર-પરિભ્રમણનું કારણ બનતો નથી ॥૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલાં કહી દેવામાં આવ્યું છે કે સકષાય જીવનો યોગ સામ્પરાયિક આસ્રવનું કારણ હોય છે હવે એ પ્રતિપાદન કરવામાં આવી રહ્યું છે કે ઉપશાન્ત-ક્ષીણ કષાય આત્માના જે કાયયોગ વગેરે છે, તે સંસાર ભ્રમણના હેતુ કર્મનું કારણ હોતું નથી—

કષાયથી રહિત જીવનો યોગ ઐર્યાપથિક ક્રિયાનું કારણ હોય છે, જે સંસારભ્રમણનું કારણ હોતું નથી. પ્રયોજન થવાથી આગમ મુજબ ચાર હાથ પોતાની સામેની ભૂમિ પર દૃષ્ટિ રાખતા થકા અને ત્રસ તેમ જ સ્થાવર

વર્જયન્ અપ્રમત્તઃ જનૈર્યાયાત્ તપસ્વી સ્યેવંવિદ્યા ગતિઃ પન્થઃ-માર્ગઃ પ્રવેશો यस્ય કર્મણ સ્તત્-ઈર્યાપથપ્, ઈર્યાપથમેવ ઈર્યાપથિકી તદ્વરૂપા ક્રિયા, ઈર્યાપથિકી ક્રિયોચ્યતે । તત્ર-કાયાદિયોગમાત્રપ્રત્યયત્વાત્ ગચ્છત સ્તિષ્ઠતો વા ત્રિસમય સ્થિતિકો બન્ધો-કષાયસ્ય ભવતિ, । અકષાયસ્તાવત્-પ્રથમં દ્વિવિધો ભવતિ, વીતરાગઃ-સરાગથ, । તત્ર-વીતરાગ સ્ત્રિવિધઃ, ઉપશાન્તમોહકષાયઃ-ક્ષીણમોહ-કષાયઃ-કેવલી ચ । તત્ર-ક્ષીણમોહકષાય-કેવલિનો કાત્સ્ન્યેન સમૂહ્યાતોપહત કર્મકદમ્બૌ ભવતઃ । સરાગસ્તુ-સંજ્વલનકષાયયુક્તોઽપ્યવિધમાનોદયત્વાદકષાય એવાવગન્તવ્યઃ તસ્ય-કષાયાવનો મન્દાનુભાવત્વાત્ ઉક્તશ્ચ-

एवं स्थावर जीवों की रक्षा करते हुए, धीरे-धीरे अप्रमत्त होकर मुनि का ईरण-गमन-करना ईर्यापथ कहलाना है ? उसे ऐर्यापथिक की क्रिया भी कहते हैं । अभिप्राय यह है कि योग मात्र के निमित्त से गमन करते या खड़े हुए कषायरहित मुनि को दो समय की स्थिति-वाला जो बन्ध होता है, वह ईर्यापथ बन्ध है ।

કષાયરહિત કે મૂલતઃ દો ભેદ હે-વીતરાગ ઓર સરાગ । વીતરાગ ત્રીન પ્રકાર કે હોતે હે-ઉપશાન્તમોહ (ગ્યારહવે ગુણસ્થાનવર્તી) ક્ષીણમોહ છદ્મસ્થ ઓર ક્ષીણમોહ કેવલી । ક્ષીણમોહ છદ્મસ્થ ઓર કેવલી મેં મોહનીય કર્મ કા સમૂહ ક્ષય હો જાને સે કષાય કી સત્તા નહીં હોતી, ઉપશાન્તમોહ જીવ મેં કષાય કી મત્તા રહતી હૈ કિન્તુ ઉદય નહીં હોતો જિસકો સંજ્વલન કષાય વિદ્યમાન હૈ કિન્તુ ઉસકા ઉદય નહીં હૈ, ઉસ સરાગ કો બી અકષાય હી સમજના ચાહિયે । કહા બી હૈ—

જીવોની રક્ષા કરતાં થકા હળવે હળવે અપ્રમત્ત થઈને મુનિનું ઈરણુ-ગમન કરવાની ક્રિયાને ઈર્યાપથ કહેવાય છે તેને ઈર્યાપથિકની ક્રિયા પણ કહે છે, અભિપ્રાય એ છે કે યોગ માત્રના નિમિત્તથી ગમન કરતાં અથવા ઉભા રહેલાં કષાયસહિત મુનિને બે સમયની સ્થિતિવાળો બે બન્ધ થાય છે, તે ઈર્યાપથ બન્ધ છે.

કષાયરહિતના અસલમાં બે ભેદ છે-વીતરાગ અને સરાગ વીતરાગ ત્રણ પ્રકારના હોય છે-ઉપશાન્તમોહ-(અગીયારમાં ગુણસ્થાનવર્તી) ક્ષીણમોહ છદ્મસ્થ અને ક્ષીણમોહ કેવળી. ક્ષીણમોહ છદ્મસ્થ અને કેવળીમાં મોહનીય કર્મનો સમૂહગો ક્ષય થઈ જવાના કારણે કષાયની સત્તા હોતી નથી, ઉપશાન્ત મોહ જીવમાં કષાયની સત્તા રહે છે, પરંતુ ઉદય થતો નથી. જેમના સંજ્વલન કષાય વિદ્યમાન છે, પરંતુ તેનો ઉદય થતો નથી, તે સરાગને પણ અકષાય જ સમજવા લેખ્યો. વળી કહ્યું પણ છે-

‘ઉચ્ચાલિયમ્મિ પાણ, ઇરિયાસમિયસ્સ સંકમટ્ટાણ ।

વાવજ્જેજ્જ કુલિંઘી, મરેજ્જ તં જોગ ઘાસજ્જ ॥૧॥

‘ ન ચ તસ્ય તન્નિમિત્તો વંધો સુહુગો વિ દેસિઓ સમણ ।

સુદ્ધસ્સ ડ સંપત્તી અફલ્લો વુત્તા જિનવરેહિ ॥૨॥

‘ઉચ્ચલિતે ણદે ઈર્યાસમિતસ્ય સંક્રમાર્થમ્ ।

વ્યાપયેત કુલિંઘી ઝિયતે તં યોગમાસાચ ॥૧॥

અત્ર—કુલિંઘિ શબ્દેન કુન્થુ પ્રભૃતિ શુદ્રજન્તુઃ પરિગૃહ્યતે ॥

‘ન ચ તસ્ય તન્નિમિત્તો વંધઃ સૂક્ષ્મોપિ દેશિતઃ સમયે ।

શુદ્રસ્ય તુ સમ્પત્તિઃ અફલોક્તા જિનવરૈઃ ઇતિ ॥૨॥

एवञ्चा—ऽकषायस्यो—पशान्तकषायदेः कायादियोग ईर्यापथस्यैव संसाराऽ-
परिभ्रमणकारणस्य कर्मण एकसमयावस्थानकस्या-ऽऽस्रवो भवति । तत्रा-
ऽऽद्यो बन्धप्रथमः—वेद्यमानकर्मसमयो मध्यमः २—स एव स्थितिकालः, तृतीयः

‘ઉચ્ચાલિયમ્મિ પાણ’ ઇત્યાદિ

ઈર્યાસમિતિ તે સ્વપન્ન સંયમી ને ઝડપ કરને કે લિખે પાંચ જંચા ઉઠાયા હો ઓર ઉસકા નિમિત્ત પાકર કદાચિત્ કોઈ વેન્દ્રિય આદિ જીવ મૃત્યુ કો પ્રાપ્ત હો જાય તો ઓ ઉસ સંયમી કો ઉસકે કારણ સૂક્ષ્મ બન્ધ ઓ નહીં કહા ગયા હૈ । જિનેન્દ્ર ભગવાન્ ને શુદ્ર પુરુષ કી ક્રિયા કો પાપ-ફલપ્રદાયિની નહીં કહા હૈ ।

इस प्रकार जो उपशान्तकषाय आदि कषाय रहित है, उसके काय-
योगके निमित्त से ईर्यापथ कर्म का ही बन्ध होता है और संसारपरि-
भ्रमण का कारण नहीं होता । उस कर्म की स्थिति सिर्फ एक समय की
होनी है, अर्थात् प्रथम समय में कर्म का बन्ध होता है, दूसरे समय में

‘ઉચ્ચાલિયમ્મિ પાણ’ ઇત્યાદિ ઈર્યાસમિતિથી સમ્પન્ન સંયમીએ ગતિ કરવા માટે પગ ઉંચો કર્યો હોય અને તેનું નિમિત્ત પામીને કદાચિત્ કોઈ બેન્દ્રિય આદિ જીવ મૃત્યુને શરણ થઈ જાય તો પણ તે સંયમીને તેના કારણે સૂક્ષ્મ બન્ધ પણ કહેવામાં આવ્યો નથી. જિનેન્દ્ર ભગવાને શુદ્ધ પુરુષનીક્રિયાને પાપક્ષણ આપનારી કહેલી નથી.

આ રીતે જે ઉપશાન્ત કષાય આદિ કષાય રહિત છે તેના કાયયોગનાં નિમિત્તથી ઈર્યાપથ કર્મનો જ બન્ધ થાય છે તેમજ સંસારપરિભ્રમણનું કારણ બનતું નથી. તે કર્મની સ્થિતિ માત્ર એક સમયની હોય છે, અર્થાત્ પ્રથમ સમયમાં કર્મ બંધાય છે, બીજા સમયમાં તેનું વેદન થાય છે અને આ વેદન

પરિણાટસમયઃ ઇતિ । ઉક્તશ્ચ=‘પઢમે સમયે ચદ્વપુટ્ટા, ચિતીએ સમયે વેદિતા તદ્દે સમયે ણિજિજ્ઞાના । સેઆલે અકર્મમં વા વિ ભવતિ’ ઇતિ । પ્રથમે સમયે બન્ધઃ સ્પર્શનં-દ્વિતીયે સમયે વેદનં તૃતીયે નિર્જરણમ્, વ્યવત્કાલેઽકર્મ ભવતિ ઇતિ । અત્રેદં બોધ્યમ્-યસ્ય યાવાન્ કાયાદિયોગઃ સમ્ભવતિ-તસ્ય તાવાન્ એવ યોગઃ સામ્પરાયિકકર્મણઃ-ઈર્યાપથ્યકર્મણો વા-ભવતીતિ । તત્રૈ-કેન્દ્રિયાણાં તાવત્ અસંજ્ઞિ કાયયોગઃ, દ્વિ-ત્રિ-ચતુરિન્દ્રિય-પચ્ચેન્દ્રિયાણાં કાય-વાગ્યોગૌ, સંજ્ઞિપચ્ચેન્દ્રિયાણા-મનોવાક્ કાયયોગાઃ, અકષાયસ્ય સંજ્વલનકષાયવર્તિનઉપશાન્તકષાયક્ષીણ-કષાયમોહયોશ્ચ મનોવાક્કાયયોગાઃ, કેવલિનશ્ચ-વાક્કાયયોગૌ ચેતિ, । ઉક્તશ્ચ વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞસૌ ભગવતીસૂત્રે ૭-શતકે ૧-ઉદ્દેશકે ૨૬૭-સૂત્રે-‘જસ્સ ણં કોહમાણ

ઉસકા વેદન હોતા હૈ ઓર યહ વેદનકાલ હી ઉસકા સ્થિતિકાલ સમ-જ્ઞના ચાહિયે । તીસરે સમય મેં ઉસ કર્મ કી નિર્જરા હો જાતી હૈ । કહા મી હૈ-‘પ્રથમ સમય મેં બન્ધ હુઆ, દૂસરે સમય મેં વેદન હુઆ ઓર તીસરે સમય મેં નિર્જરા હો ગઈ, નિર્જરા હો જાને કે પશ્ચાત્ વહ કર્મ અકર્મ રૂપ મેં પરિણત હો જાતા હૈ ।

યહાં ઇતના સમજ્ઞ લેના ચાહિયે-જિસ જીવ કે જિતને યોગ હોતે હૈં, ઉસકે ઉતને યોગોં સે હી સામ્પરાયિક અથવા ઐર્યાપથિક કર્મ કા આસ્રવ હોતા હૈ । એકેન્દ્રિય જીવોં મેં સિર્ફ કાયયોગ હી પાયા જાતા હૈ, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય ઓર અસંજ્ઞીપચ્ચેન્દ્રિય મેં કાયયોગ તથા વચન યોગ હોતે હૈં, સંજ્ઞીપચ્ચેન્દ્રિય જીવોં મેં તીનોં યોગ હોતે હૈં । અકષાય યા સંજ્વલન કષાય વાલોં મેં મનોયોગ, વચનયોગ ઓર કાયયોગ-તીનોં હોતે હૈં ઓર કેવલી મેં કાયયોગ ઓર વચનયોગ હી

કાળજ તેનો સ્થિતિકાળ સમજવો નોઈએ. ત્રીજા સમયમાં તે કર્મની નિર્જરા થઈ જાય છે. કહ્યું પણ છે-પ્રથમ સમયમાં બન્ધ થવો, બીજા સમયમાં વેદન થયું, અને ત્રીજા સમયમાં નિર્જરા થઈ ગઈ, નિર્જરા થઈ ગયા બાદ તે કર્મ અકર્મ રૂપમાં પરિણત થઈ જાય છે.

અહીં એટલું સમજી લેવાની જરૂર છે-જે જીવના જેટલા યોગ હોય છે તેને તેટલા યોગોથી જ સામ્પરાયિક અથવા ઐર્યાપથિક કર્મનો આસ્રવ થાય છે. એકેન્દ્રિય જીવોમાં માત્ર કાયયોગ જ જોવામાં આવે છે એકેન્દ્રિય, તેકેન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય તથા અસંજ્ઞી પચ્ચેન્દ્રિયમાં કાયયોગ તથા વચનયોગ હોય છે, સંજ્ઞીપચ્ચેન્દ્રિય જીવોમાં ત્રણે યોગ હોય છે અકષાય અથવા સંજ્વલન કષાયવાળા જીવોમાં મનોયોગ, વચનયોગ અને કાયયોગ-ત્રણે હોય છે અને કેવળીમાં કાયયોગ તથા વચનયોગ જ જોવા મળે છે. ભગવતીસૂત્રના સાતમાં

माया-लोभा वोच्छिन्ना भवन्ति, तस्स णं-ईरियावहिया किरिया कज्जह
नो सांपराइया किरिया कज्जह, जस्स णं कोहमाण मायालोभा अवो-
च्छिन्ना भवन्ति तस्स णं संपरायकिरिया कज्जह नो ईरिया वहिया' इति ।
यस्य खलु-क्रोध मान माया लोभाः व्युच्छिन्ना भवन्ति, तस्य खलु-ऐर्या-
पथिकी क्रिया क्रियते-नो साम्परायिकी क्रिया क्रियते । यस्य खलु-क्रोध
मान मान माया लोभाः अव्युच्छिन्ना भवन्ति, तस्य खलु-साम्परायिकी
क्रिया क्रियते-नो ऐर्यापथिकी, इति । ४।

मूलम्-इंदियकसाया सुभजोगाव्वयकिरिया भेदओ संपरा-
इय कम्मासवा वायालीसविहा ॥५॥

छाया-‘इन्द्रिय कषाया शुभयोगा-ऽव्रतक्रियाभेदतः साम्परायिककर्मा-
स्त्रवाः-द्विचत्वारिंशद्विधाः-’ ॥५॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वं तावत्-साम्परायिकस्य-ऐर्यापथिकस्य च कर्मणो
द्विविध आस्रवः प्ररूपितः सम्प्रति-साम्परायिककर्मास्त्रवभेदान् प्ररूपयितुमाह-

पाये जाते हैं । भगवतीसूत्र के सातवें शतक के प्रथम उद्देशक के २६७ वे
सूत्र में कहा है-जिस जीव का क्रोध, मान, माया और लोभ का विच्छेद
हो जाता है, उसे ऐर्यापथिकी क्रिया होती है साम्परायिक क्रिया नहीं
होती और जिस जीव के क्रोध, मान, माया और लोभ का विच्छेद नहीं
होता, उसके साम्परायिक क्रिया होती है, ऐर्यापथिकी क्रिया नहीं । ४॥

‘इंदियकसाया सुभओगा’ इत्यादि ।

इन्द्रिय, कषाय, शुभयोग अव्रत और क्रिया के भेद से साम्परा-
यिक कर्मास्त्रव के वयालीस भेद हैं ॥५॥

तत्त्वार्थदीपिका-साम्परायिक और ऐर्यापथिक के भेद से आस्रव
के दोभेद कहे जा चुके हैं, अब साम्परायिक कर्मास्त्रव के भेदों का
प्रतिपादन करने के लिए कहते हैं-

शतकना प्रथम उद्देशकना २६७मां सूत्रमां उहुं छे-जे जिवेना क्रोध, मान,
माया अने लोभने विच्छेद थछ जय छे तेनी ऐर्यापथिक क्रिया जे होय छे,
साम्परायिक क्रिया होती नथी अने जे जिवेना क्रोध मन, माया, तथा
लोभने नाश थतो नथी तेनी साम्परायिक क्रिया होय छे, ऐर्यापथिक क्रिया
होता नथी. ॥४॥

‘इंदियकसाया सुभजोगा’ इत्यादि

सुत्रार्थ-इन्द्रिय, कषाय, शुभयोग, अव्रत अने क्रियाना लेखी साम्प-
रायिक कर्मास्त्रवना जेताणीस लेख छे.

तत्त्वार्थदीपिका-साम्परायिक अने ऐर्यापथिकना लेखी आस्रवना जे
लेख कहेवामां आवी गया छे, हवे साम्परायिक कर्मास्त्रवना लेखेनुं प्रतिपादन
करवा भाटे कहुँजे छीजे-

‘इन्द्रिय कषाया शुभयोगादयः’ इत्यादि । इन्द्रिय कषाया शुभयोगाग्रतः क्रिया भेदतः—इन्द्रियाणि स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्रभेदेन पञ्चविधानि, कषायाः—क्रोध मान माया लोभभेदेन चतुर्विधाः, अशुभयोगा मनोवाक्यायभेदेन त्रिविधाः, अव्रतानि—हिंसा—ऽनृत—स्तेय—सैश्वर्य—परिग्रह भेदेन पञ्चविधानि, क्रियाश्च—कायिक्यादि भेदेन पञ्चविंशतिविधाः, इत्येवं रीत्या—इन्द्रिय कषाया—ऽव्रतक्रियाणाम्—एकोनचत्वारिंशद् भेदात् साम्प्रदायिककर्मास्त्रयाः—संसारपरिभ्रमकारणभूतस्य साम्प्रदायिककर्मणो हेतुरूपा आसन्ना एकोनचत्वारिंशद्विधाः भवन्ति । तत्रेन्द्रिय कषाया—ऽव्रतानां भेदाः प्रदर्शिताः एव—। क्रियाः पञ्चविंशतिविधाः—यथा कायिकी, कायेन निर्वृत्ता—कायिकी काय व्यापारः—१ आधिकरणिकी, अधिक्रियते—आत्मा नरकादिषु येन—तदधिकरणम्, इह खड्गादिकं वस्तु विवक्षितम्, तत्र भवा—

સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ, ચક્ષુ ઓર શ્રોત્ર કે ભેદોં સે પાંચ ઇન્દ્રિયાં, ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ કે ભેદ સે ચાર પ્રકાર કે કષાય, મન, વચન ઓર કાય કે ભેદ સે ત્રીજ પ્રકાર કે યોગ, હિંસા, અસત્ય, ચોર્ય અબ્રહ્મચર્ય ઓર પરિગ્રહ કે ભેદ સે પાંચ પ્રકારકે અવ્રત, કાયિકી આદિ કે ભેદ સે પચ્ચીસ પ્રકાર કી ક્રિયા, યે સર્વ સામ્પ્રદાયિક કર્મ કે કારણ હોતે હૈં, જો ભવબ્રહ્મણ કે કારણ હોતે હૈં । इन में से इन्द्रियों, कषायों और अव्रतों के भेद निरूपित किये जा चुके हैं, क्रियाएं पचचीस इस प्रकार हैं—

(૧) કાયિકી—કાયા સે ક્રિયા જાને વાલા વ્યાપાર ।

(૨) આધિકરણિકી—જિસકે કારણ આત્મા નરક આદિ કા અધિકારી બને । અધિકરણ કા અર્થ હૈં खड्ग आदि हिंसा के साधन, उन से होने वाली क्रिया ।

સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ, ચક્ષુ અને શ્રોત્રના ભેદથી પાંચ ઇન્દ્રિયો, ક્રોધ, માન, માયા અને લોભના ચાર પ્રકારના કષાય, મન, વચન અને કાયના ભેદથી ત્રણ પ્રકારના યોગ, હિંસા, અસત્ય, ચોર્ય, અબ્રહ્મચર્ય અને પરિગ્રહના ભેદથી પાંચ પ્રકારના અવ્રત, કાયિકી આદિના ભેદથી પચ્ચીસ પ્રકારની ક્રિયા, આ બધાં સામ્પ્રદાયિક કર્મના કારણો હોય છે, જે ભવબ્રહ્મણના પણ કારણો છે. આમાંથી ઇન્દ્રિયો, કષાયો અને અવ્રતોના ભેદનું નિરૂપણ કરી દેવામાં આવ્યું છે પચ્ચીસ ક્રિયાઓ આ પ્રકારે છે.—

(૧) કાયિકી—કાયાથી કરવામાં આવતો વ્યાપાર.

(૨) આધિકરણિકી—જેના કારણે આત્મા નરક આદિનો અધિકારી બને અધિકરણનો અર્થ છે खड्ग आदि हिंसाના સાધન, તેનાથી થનારી ક્રિયા.

ऽऽधिकरणिकी-२ प्राद्वेषिकी, प्रद्वेषेण निवृत्ता-प्राद्वेषिकी-३ पारितापनिकी, परि-
तापनं-ताडनादि दुःखविशेषरूपं, तेन निवृत्ता-परितापनिकी-४ प्राणातिपातिकी ।
यद्वा प्राणातिपातेन-प्राणातिपाताऽध्यवसायेन यः प्राणातिपातः क्रियते, सा प्राणा-
तिपातिकी-५ प्राणातिपाताध्यवसायेन जायमाना ताडनादिरूपा क्रियाऽपि प्राण
वियोजनाऽभावेऽपि प्राणातिपातक्रियैव बोध्या । तथा-अप्रत्याख्यानिकी, अप्रत्या-
ख्यानम्-अविरति स्तब्धचित्ता कर्मबन्धरूपा या क्रियाऽपि-अप्रत्याख्यानिकी-६
आरम्भिकी, आरम्भे भवा-ऽऽरम्भिकी-७ पारिग्रहिकी परिग्रहे भवा-पारि-
ग्रहिकी-८ मायाप्रत्ययिकी, माया प्रत्ययो यस्याः क्रियायाः सा तथा-९ माया-
हेतुक कर्मबन्धक्रियेत्यर्थः । तथा-मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी, मिथ्यादर्शनं-मिथ्यात्वं,
प्रत्ययः-कारणं यस्याः सा-मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी-१० दार्शनिकी, दर्शनादयः

(३) प्राद्वेषिकी-द्वेष से होने वाली क्रिया ।

(४) पारितापनिकी-ताडन आदि परिताप से होने वाली क्रिया ।

(५) प्राणातिपातिकी-प्राणियों के प्राणों का वियोग करना अथवा
प्राणातिपात के अध्यवसाय से प्राणातिपात करना । प्राणातिपात के
विचार से की जाने वाली ताडन आदि रूप क्रिया प्राणों का वियोग न
होने पर भी प्राणातिपातिकी क्रिया ही समझनी चाहिए ।

(६) अप्रत्याख्यानिकी-अविरति के कारण होने वाली कर्म बन्ध
रूप क्रिया ।

(७) आरंभिका-आरंभ से होने वाली क्रिया ।

(८) पारिग्रहिकी-परिग्रह से होने वाली क्रिया ।

(९) मायाप्रत्ययिकी-मायाचार से होने वाला कर्मबन्ध ।

(१०) मिथ्यादर्शन प्रत्ययिकी-मिथ्यात्व के कारण होनेवाली क्रिया ।

(३) प्राद्वेषिकी-द्वेषही बनारी किया.

(४) पारितापनिकी-ताडन आदि परितापही बनारी किया.

(५) प्राणातिपातिकी-प्राणीओंना प्राणोंना वियोग करवे। अथवा प्राणा-
तिपातना अध्यवसायही प्राणातिपात करवे। प्राणातिपातना आशयही कर-
वामां आवती ताडन आदि रूप किया-प्राणोंना वियोग न थवा छतां पशु
प्राणातिपातनी किया न समझवी जेठ अ.

(६) अप्रत्याख्यानिकी-अविरतिना कारणे बनारी कर्मबन्ध रूप किया.

(७) आरंभिकी-आरंभही बनारी किया.

(८) पारिग्रहिकी-परिग्रहही बनारी किया.

(९) मायाप्रत्ययिकी-मायाआरही बनाई कर्मबन्धन.

(१०) मिथ्यादर्शन प्रत्ययिकी-मिथ्यात्वना कारणे बनारी किया,

कर्मबन्धरूपो व्यापारः सा दार्शनिकी-११ स्पर्शिकी, स्पृशतोति स्पर्शः सावद्य स्पर्श
जनितो व्यापारः स एव-स्पर्शिकी-१२, प्रातीतिकी, बाह्यं वस्तु प्रतीत्या-५५ अत्रि-
त्य या क्रिया भवति सा-प्रातीतिकी-१३, सामन्तोपनिपातिकी, समन्तात्-सर्वतः,
उपनिपातः-लोकानां सम्मेलनम्, तत्र-भवा सामन्तोपनिपातिकी-१४ स्वाह-
स्तिकी, स्वाहस्तेन निवृत्ता-स्वाहस्तिकी-१५ नैसृष्टिकी, निसर्जनं निसृष्टं क्षेपण-
मित्यर्थः, तत्र भवा-नैसृष्टिकी-१६, आज्ञापनिकी, आज्ञापनम्-आदेश स्तस्ये-
यम्-आज्ञापनिकी-१७, तज्जनितः कर्म बन्ध इत्यर्थः । तथा-विदारणस्येयं वैदार-
णिकी-१८ अनाभोगप्रत्ययिकी, अनाभोगो-५५ ज्ञानं प्रत्ययः-कारणं यस्याः सा-
नाभोगप्रत्ययिकी-१९ अनवकाङ्क्षा प्रत्ययिकी, अनवकाङ्क्षा-स्वशरीराद्यनपेक्षत्वं,

(११) दृष्टिजा (दार्शनिकी)-किसी वस्तु को रागपूर्वक देखने से होनेवाली क्रिया ।

(१२) स्पर्शिका -सावद्य स्पर्श जनित व्यापार ।

(१३) प्रातीतिकी-बाह्य वस्तु के निमित्त से जो क्रिया हो ।

(१४) सामन्तोपनिपातिकी-बहुत लोगोंके सम्मिलन से होने वाली ।

(१५) स्वाहस्तिकी-अपने हाथ से की जाने वाली क्रिया ।

(१६) नैसृष्टिकी-किसी वस्तु को गिराने वाली क्रिया ।

(१७) आज्ञापतिकी-दूसरे को आदेश देने से होने वाली क्रिया ।

(१९) अनाभोग प्रत्ययिकी-उपयोग शून्यता के कारण होने वाली क्रिया ।

(२०) अनवकाङ्क्षा प्रत्ययिकी-अपने और दूसरे के शरीर के प्रति

(११) दृष्टिजा-कैऽर्ध वस्तुने रागपूर्वक जेवाथी थनारी क्रिया.

(१२) स्पर्शिका-सावद्य स्पर्शजनित व्यापार

(१३) प्रातीतिकी-बाह्य वस्तुना निमित्तथी जे क्रिया थाय.

(१४) सामन्तोपनिपातिकी-धण्ण लोकना जेगा थवाथी थती क्रिया

(१५) स्वाहस्तिकी-पोताना हाथथी करवाभां आवती क्रिया.

(१६) नैसृष्टिकी-कैऽर्ध वस्तुने पाडी नाजवाथी थनारी क्रिया.

(१७) आज्ञापतिकी-भीजने आदेश आपवाथी थनारी क्रिया.

(१८) वैदारणिकी-विदारण करवाथी थनारी क्रिया.

(१९) अनाभोगप्रत्ययिकी-उपयोग शून्यताना कारणे थनारी क्रिया.

(२०) अनवकाङ्क्षाप्रत्ययिकी-पोताना तथा भीजना शरीर तरङ्ग जेदरकारी

સૈવ પ્રત્યયો યસ્યાઃ સા-ડનવકાદ્ઘ્વા પ્રત્યયિકી-૨૦ પ્રેમ પ્રત્યયિકી, પ્રેમો-
રાગઃ માયાલોભરૂપઃ સ પ્રત્યયઃ કારણં યસ્યાઃ સા-પ્રેમપ્રત્યયિકી-૨૧ દ્વેષ
પ્રત્યયિકી, દ્વેષઃ-ક્રોધમાનરૂપઃ સ પ્રત્યયઃ કારણં યસ્યાઃ સા-દ્વેષ પ્રત્યયિકી-૨૨
પ્રાયોગિકી, મનો વાક્કાયપ્રયોગપૂર્વકં જાયમાના ક્રિયા-પ્રાયોગિકી-૨૩,
સામુદાનિકી, યથા-મનોવાક્કાયપ્રયોગગૃહીતં કર્મ સમુદાયાવસ્થં સત્ સ્થિત્યનુભાવ
પ્રદેશરૂપતયા વ્યવસ્થાપ્યતે-સા-સામુદાનિકી-ક્રિયા-૨૪ ઐર્યાપથિકી, ઇરણમ્-
ઈર્યાગમનં, તદ્વિશિષ્ટ સ્તત્પ્રધાનો વા પન્થાઃ ઈર્યાપથસ્તત્ર ભવા-ઐર્યાપથિકી-૨૫
વ્યુત્પત્તિમાત્રમિદં પ્રદર્શિતમ્ । પ્રવૃત્તિનિમિત્તં તુ-યત્-ઉપશાન્તમોહસ્ય, ક્ષીણ-
મોહસ્ય સયોગિકે ચલિનશ્ચ સાતાવેદનીયકર્મતયાડજીવસ્ય પુગ્દલરાશેર્ભવનં, સા-

લાપરવાહી કરને સે હોનેવાલી ક્રિયા ।

(૨૧) પ્રેમપ્રત્યયિકી-માયા ઓર લોભ કે કારણ હોનેવાલી ક્રિયા ।

(૨૨) દ્વેષપ્રત્યયિકી-ક્રોધ યા માન સે હોનેવાલી ક્રિયા ।

(૨૩) પ્રાયોગિકી-મન વચન કાય કે વ્યાપાર પૂર્વક હોનેવાલી ક્રિયા

(૨૪) સામુદાનિકી-મન વચન ઓર કાયકે દ્વારા ગૃહીત કર્મ જિસ
ક્રિયા કે દ્વારા સમુદાય અવસ્થા મેં હોતે હુએ સ્થિતિ, અનુભાગ, ઓર
પ્રદેશરૂપ મેં પરિણિત ક્રિયે જાણે ।

(૨૫) ઐર્યાપથિકી-ચલને-ફિરને સે લગને વાલી ક્રિયા । યહ અર્થ
સિર્ફ વ્યુત્પત્તિનિમિત્ત સે ક્રિયા ગયા હૈ, હસકા પ્રવૃત્તિનિમિત્તક
આશય યહ હૈ-ઉપશાન્તમોહ, ક્ષીણમોહ ઓર સયોગ કેવલી કો યોગ કે
નિમિત્ત સે સાતાવેદનીય કર્મ કા જિસસે બન્ધ હોતા હૈ, વહ ઐર્યાપથિકી
ક્રિયા હૈ । હન ઉપશાન્તમોહ આદિ મેં પ્રમાદ ઓર કષાય કા ઉદય

રાખવાથી થવાવાળી ક્રિયા.

(૨૧) પ્રેમપ્રત્યયિકી-માયા અને લોભના કારણે થનારી ક્રિયા.

(૨૨) દ્વેષપ્રત્યયિકી-ક્રોધ, અને માનથી થનારી ક્રિયા

(૨૩) પ્રાયોગિકી-મન, વચન, કાય દ્વારા ગૃહીત કર્મો જે ક્રિયાની
દ્વારા સમુદાય અવસ્થામાં થતાં થકા સ્થિતિ, અનુભાગ અને પ્રદેશ રૂપમાં
પરિણત કરવામાં આવે.

(૨૫) ઐર્યાપથિકી-હાલવા ચાલવાથી લાગવાવાળી ક્રિયા. આ અર્થમાત્ર
વ્યુત્પત્તિ નિમિત્તથી કરવામાં આવ્યો છે. આનો પ્રવૃત્તિ નિમિત્તક આશય
આ પ્રમાણે છે-ઉપશાન્ત મોહ, ક્ષીણમોહ અને સયોગ કેવળીના યોગના
નિમિત્તથી સાતાવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે તે ઐર્યાપથિકી ક્રિયા
છે. આ ઉપશાન્ત મોહ આદિમાં પ્રમાદ અને કષાયનો ઉદય થતો નથી,

પ્રયોગો-ડમિલાપકરણં કામભોગાશંસાપ્રયોગઃ, રુચિરવિષયસ્પૃહયાલ્લુતેત્યર્થઃ ૫
 હૃત્યેતે પશ્ચજીવિતાશંસાદયો મારણાન્તિકસંલેખના જોષણાયા અતિચારા બોધ્યાઃ ।
 एवञ्च-પશ્ચાણુવ્રતેષુ ત્રિગુણવ્રતેષુ ચતુઃશિક્ષાવ્રતેષુ મારણાન્તિકસંલેખનાજોષણાસુ
 ચ સર્વ સમ્મિલિતત્રયોદશવ્રતેષુ પ્રત્યેકં પશ્ચ-પશ્ચાતિચારૈઃ પશ્ચપષ્ટિરતિચારાઃ
 પૂર્વોક્તરીત્યા પ્રરૂપિતાઃ, તે ચ-સર્વેડતિચારાઃ સર્વથાડણુવ્રતશીલવ્રતધારિભિઃ
 પરિહર્તવ્યાઃ । યદ્યપિ-સમ્યક્ત્વસ્યાડપ્યતિચાર પશ્ચકસ્ય સદ્ભાવેન સમ્પતિ સંખ્યકાઃ
 સર્વેડતિચારા ભવન્તિ, ન તુ-પશ્ચપષ્ટિ સંખ્યકા એવ, -તથાપિ-મૂલપ્રાસાદ પીઠ
 રચનાવત્ સમ્યક્ત્વવ્રતમ્ અણુવ્રતાદીનામાધારો વર્તતે, તસ્માત્-તસ્યા-ડધારત્વા-
 દ્વવ્રતશીલેષુ ન તદતિચારગ્રહણં ભવતિ । એવન્ન-ઉક્તરીત્યા વદ્વપાયદર્શનાત્-

કામ કહલાતે હૈં ઔર સ્પર્શન, રસના તથા ગ્રાણ ઇન્દ્રિયોં કે વિષય
 અર્થાત્ ગંધ, રસ ઔર સ્પર્શ ભોગ કહલાતે હૈં । इन काम और भोग
 की इच्छा करना कामभोगाशंसाप्रयोग है । तात्पर्य यह है कि मनोज्ञ
 विषयों की कामना करना कामभोगाशंसाप्रयोग है ।

इस प्रकार पांच अणुव्रतों के, तीन गुणव्रतों के चार शिक्षाव्रतों
 के तथा मारणान्तिकसंलेखनाजोषणा के, सब मिलकर तेरह व्रतों के
 पांच-पांच अतिचार होने से $13 \times 5 = 65$ अतिचार हुए । इन सब का
 प्ररूपण किया जा चुका । इन सब का अणुव्रतधारी एवं सप्त शील-
 धारी श्रावक को परिहार करना चाहिए । यद्यपि सम्यक्त्व के भी पांच
 अतिचार हैं, इस कारण अतिचारों की संख्या पैसठ नहीं सत्तर होती
 है, तथापि सम्यक्त्व, महल की नींव की तरह सब व्रतों का आधार
 है । अतएव व्रतों के अतिचारों के साथ उसके अतिचारों की गणना

કહેવાય છે અને સ્પર્શન, રસના (ગ્રાણ) તથા ઘ્રાણ ઇન્દ્રિયોના વિષય અર્થાત્
 ગંધ, રસ અને સ્પર્શ ભોગ કહેવાય છે. આ કામ અને ભોગની ઇચ્છા કરવી
 કામભોગાશંસાપ્રયોગ છે. તાત્પર્ય એ છે કે મનોજ્ઞ વિષયોની કામના કરવી
 કામભોગાશંસાપ્રયોગ છે.

‘આ રીતે પાંચ આણુવ્રતોના ત્રણ ગુણવ્રતોના, ચાર શિક્ષાવ્રતોના તથા
 મારણાન્તિકસંલેખના જોષણાના,’ બધાં મળીને તેર વ્રતોના પાંચ-પાંચ અતિચાર
 હોવાથી $13 \times 5 = 65$ અતિચાર થયા આ બધાનું પ્રરૂપણ કરવામાં આવ્યું
 આ બધાનો આણુવ્રતધારી અને સપ્તશીલધારી શ્રાવકે ત્યાગ કરવો જોઈએ.
 જો કે-સમ્યક્ત્વનાં પણ પાંચ અતિચાર છે આથી અતિચારોની સંખ્યા
 પાંસઠ નહીં સીત્તેર થાય છે, તો પણ સમ્યક્ત્વ, મહેલના પાયાની જેમ બધા
 વ્રતોનો આધાર છે. આથી વ્રતોના અતિચારોની સાથે તેના અતિચારોની

एतेषु सम्यक्त्वव्रतशीलव्यतिक्रमस्थानेषु पञ्चषष्ठ्यतिचारस्थानेषु व्रतशीलैः श्रावकैः प्रमादो न कर्तव्यः, अपितु अप्रमादो न्यायः ॥५३॥

मूलम्—एएसिं विप्पजहणाओ वयसुद्धी ॥५४॥

छाया—एतेषां विप्रहाणाद्व्रतशुद्धिः ॥५४॥

मूलम्—पाणाइवायाइहिंतो सव्वओ वेरमणं पंच महवया ॥५५॥

छाया—प्राणातिपातादिभ्यः सर्वतो विरमणं पञ्चमहाव्रतानि ॥५५॥

तत्त्वार्थदीपिका—तदेव मुक्तान्यगारिणो द्वादशव्रतानि सातिचाराणि अतिचारवर्जनाद् व्रतशुद्धिरित्यप्पुक्तम्, सम्प्रति—पूर्वं यदुक्तं—‘सव्वओ महं’ सर्वतोमह-

नहीं की गई है । इस प्रकार अनेक प्रकार की हानियां होने से सम्यक्त्व के तथा व्रतों और शीलों के पैसठ अतिचारों के विषय में श्रावकों को प्रमाद नहीं करना चाहिए, बल्कि अप्रमाद ही न्यायसंगत है ॥५३॥

‘एएसिं विप्पजहणाओ’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—इन पूर्वोक्त अतिचारों का त्याग करने से व्रत की शुद्धि होती है ॥५४॥

‘पाणाइवायाइहिंतो’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—प्राणातिपात आदि से सर्वथा विरत होना पांच महाव्रत हैं ॥५५॥

तत्त्वार्थदीपिका—इस प्रकार गृहस्थ के बारह व्रतों का अतिचार कथन किया गया और यह भी बतला दिया गया कि अतिचारों का

अत्युत्तरी कस्वामां आवी नथी. आ रीते अनेक प्रकारની ક્ષતિઓ હોવાથી સમ્યક્ત્વના તથા વ્રતો અને શીલોના પાંસઠ અતિચારોના વિષયમાં શ્રાવકે પ્રમાદ કરવો જોઈએ નહીં, બલકિ અપ્રમાદ જ ન્યાયસંગત છે. ॥૫૩॥

‘एएसिं विप्पजहणाओ वयसुद्धी’ इत्यादि

सूत्रार्थ—आ पूर्वोक्त अतिचारोना त्याग कस्वाथी व्रतनी शुद्धि थाय છે. ॥૫૪॥

‘पाणाइवायाइहिंतो सव्वओ वेरमणं’ इत्यादि

सूत्रार्थ—प्राणातिपात आदिथी सर्वथा विरत थपुं पांच महाव्रत છે. ॥૫૫॥

तत्त्वार्थदीपिका—आ रीते ગૃહસ્થના બાર વ્રતોનું અતિચાર સહિત કથન કરવામાં આવ્યું અને એ પણ બતાવી દેવામાં આવ્યું કે અતિચારોના

દિતિ, સર્વતો યત્ર વિરતિર્ભવતિ—તાનિ મહાવ્રતાનિ કથ્યન્તે’ इत्यत्र पञ्चमहाव्रतानि प्रदर्शयन्ते—‘पाणाहवायाहर्हितो’ इत्यादि । प्राणातिपातादिभ्यः सर्वतो विरमणं महाव्रतानि, तानि पञ्च, प्राणातिपातः १ आदिशब्देन—मृषावादा २ अदत्तादाना ३ अब्रह्मचर्य ४ परिग्रहाणां ५ ग्रहणं भवति तेभ्यः सर्वतो विरमणं महाव्रतानि—उच्यन्ते । तानि पञ्च, तत्र—प्राणातिपातः प्राणिवधः, मृषावादोऽसत्यभाषणम्, अदत्तादानं—स्तेयम्, अब्रह्मचर्यं मैथुनम्, परिग्रहो मूर्च्छा, एतेभ्यः सर्वतः सर्व-प्रकारेण त्रिकरण—त्रियोगैर्विरमणं—विरतिर्निवृत्तिरिति भावः ॥५५॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વ દ્વાદશવ્રતાનિ સાત્તિચારાણિ પ્રદર્શિતાનિ, દ્વાદશ વ્રતીચ તદનન્તરં પશ્ચ મહાવ્રતીભવિતુ મર્હતીતિ તત્પ્રસ્તાવાત્—મોક્ષહેતુભૂતાનિ

ત્યાગ કરને સે હી વ્રત કી શુદ્ધિ હોતી હૈ । અવ પદ્ધતે જો કહા થા—‘સવ્વઓ મહં’ અર્થાત્ હિંસા આદિ કા પૂર્ણ રૂપેણ જો ત્યાગ કિયા જાતા હૈ ઉસે મહાવ્રત કહતે હૈ, સો અવ મહાવ્રતોં કા કથન કિયા જાતા હૈ

પ્રાણાતિપાત આદિ સે પૂર્ણ રૂપ સે નિવૃત્ત હોના મહાવ્રત હૈ । મહા-વ્રત પાંચ હૈ—(૧) પ્રાણાતિપાત (૨) મૃષાવાદ (૩) અદત્તાદાન (૪) અબ્રહ્મચર્ય ઓર (૫) પરિગ્રહસે સર્વથા વિરત હોના । પ્રાણાતિપાત કા અર્થ પ્રાણી કી હિંસા, મૃષાવાદ કા અર્થ મૈથુન ઓર પરિગ્રહ કા અર્થ મૂર્છા હૈ । इनसे सर्वथा अर्थात् तीन करण और तीन योग से विरत होना महाव्रत कहलाता है ॥५५॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—इस पूर्व अतिचारों सहित बारह व्रतों का निरूपण किया गया । बारहव्रतों का धारक श्रावक भी बाद में महा-

ત્યાગ કરવાથી જ વ્રતની શુદ્ધિ થાય છે. હવે પહેલા જે કહ્યું હતું—‘સવ્વઓ મહં’ અર્થાત્ હિંસા આદિને પૂર્ણ રૂપથી જે ત્યાગ કરવામાં આવે છે તેને મહાવ્રત કહે છે જેથી હવે મહાવ્રતોનું કથન કરવામાં આવે છે—

પ્રાણાતિપાત આદિથી પૂર્ણ રૂપથી નિવૃત્ત થઈ જવું મહાવ્રત છે. મહાવ્રત પાંચ છે—(૧) પ્રાણાતિપાત (૨) મૃષાવાદ (૩) અદત્તાદાન (૪) અબ્રહ્મચર્ય અને (૫) પરિગ્રહથી સર્વથા વિરત થવું. પ્રાણાતિપાતનો અર્થ પ્રાણીની હિંસા મૃષાવાદનો અર્થ અસત્ય ભાષણ, અદત્તાદાનનો અર્થ ચોરી, અબ્રહ્મચર્યનો અર્થ મૈથુન અને પરિગ્રહનો અર્થ મૂર્છા છે. આ બધાંથી સર્વથા અર્થાત્ ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી વિરત થવું મહાવ્રત કહેવાય છે. ॥૫૫॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—आनी अगाઉ अतिचारे सहित बार व्रतोंनું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું. બારવ્રતોનો ધારક શ્રાવક પણ પાછળથી મહાવ્રતી

पञ्च महाव्रतान्याह—‘प्राणाहवायाहर्हितो सव्वओ वैरमण महव्वया, ते पंच’ इति । प्राणातिपातः १ आदिशब्देन—मृषावादा २ ऽदत्तादाना ३ ऽब्रह्मचर्य ४ परिग्रहाः ५ गृह्यन्ते, तेभ्यः सर्वतः—सर्वांशेन द्रव्य—क्षेत्र—काल—भावेन त्रिकरणै स्त्रियोगैः सर्वथा विरति—निवृत्तिः पञ्च महाव्रतान्युच्यन्ते । तत्र—प्राणातिपातः कषायादि प्रमादपरिणाम परिणतेना—ऽऽत्मना कर्त्ता मनोवाक्कायादिरूपयोग-व्यापारात् करणकारणाऽनुमोदन रूप कायव्यापारेण द्रव्य—भावभेदेन द्विविधेन प्राणिमाणव्यपरोपणरूपः १ मृषावादस्तावत्—असत्यभाषणम् अनृतवचनम्—अली-काभिभाषणम् २ अदत्तादानञ्च—अदत्तस्य स्व—स्वत्वनिवृत्ति पूर्वक मन्त्रितीर्णस्या व्रती हो सकता है, इस संबंध से मोक्ष के कारणभूत पांच महाव्रतों का कथन किया जाता है—

प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, अब्रह्मचर्य और परिग्रह से सर्वांश से—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से, तीनों करणों और तीनों योगों से सर्वथा निवृत्त होना महाव्रत हैं ।

कषाय आदि प्रमाद रूप परिणाम से युक्त कर्त्ता आत्मा के द्वारा, मन वचन और काय आदि योग के व्यापार से, द्रव्य एवं भाव दोनों प्रकार से करण (स्वयं करना), कारण (करवाना) और अनुमोदन रूप कायव्यापार से प्राणी के प्राणों का व्यपरोपण करना प्राणातिपात है । असत्य भाषण करना, अनृत वचन बोलना, अलीक भाषण करना मृषावाद कहलाता है । दत्त का अर्थ है स्वामी का अपने स्वत्व को हटा लेना । जो दत्त न हो वह अदत्त कहलाता है । उस अदत्त को

થઈ શકે છે આ સંબંધથી મોક્ષના કારણભૂત પાંચ મહાવ્રતોનું કથન કરવામાં આવે છે—

પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, અબ્રહ્મચર્ય અને પરિગ્રહથી સર્વાંશે—દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવથી, ત્રણે કરણો અને ત્રણે યોગોથી સર્વથા નિવૃત્ત થવું મહાવ્રત છે.

કષાય આદિ પ્રમાદરૂપ પરિણામથી યુક્ત કર્તા આત્માદ્વારા, મન વચન અને કાયા વગેરે યોગના વ્યાપારથી દ્રવ્ય અને ભાવ બંને પ્રકારના કરણ (બંને કરવું), કારણ (કરાવવું) અને અનુમોદન રૂપ કાયવ્યાપારથી પ્રાણીનાં પ્રાણોની હિંસા કરવી પ્રાણાતિપાત છે. અસત્ય ભાષણ કરવું, અનૃત (જુઠું) વચન બોલવું, અલીક ભાષણ કરવું મૃષાવાદ કહેવાય છે. દત્તનો અર્થ થાય છે માલિકનું—પોતાનું આધિપત્ય જતું કરવું. જે દત્ત ન હોય તે અદત્ત કહેવાય છે. તે અદત્તને ગ્રહણ કરવું અદત્તાદાન કહેવાય છે. સ્ત્રીસંયોગ

ડડાનમુચ્યતે ૩ અબ્રહ્મચર્ય-સ્ત્રીસંયોગઃ, મૈથુન મિતિયાવત્ ૪ પરિગ્રહસ્તુ-મૂર્ચ્છા, સચિત્તાડચિત્તમિશ્રેષુ .શાસ્ત્રાનુમતિરહિતેષુ દ્રવ્યાદિષુ મમત્વરૂપઃ ૫ એતેભ્યઃ પ્રાણાડતિપાતાદિભ્યઃ સર્વતઃ-સર્વાત્મના ત્રિકરણે સ્ત્રિયોર્ગૈર્મનોવાક્રકાર્યે વિરમણ-નિવૃત્તિઃ પશ્ચ મહાવ્રતાન્યવસેયાનિ । પ્રાણિવધાદિતો નિવૃત્તિર્વ્રત મુચ્યતે, તત્ર સ્થિતો હિંસાદિલક્ષણં ક્રિયાકલાપં નાડનુતિષ્ઠતિ, આપતુ-અહિંસાદિલક્ષણમેવ ક્રિયાકલાપમનુતિષ્ઠતીતિ ફલતિ । પ્રાણાતિપાતાદિભ્યો નિવૃત્તસ્ય શાસ્ત્રવિદિત ક્રિયાડનુષ્ઠાનાત્ સદસત્પ્રવૃત્તિનિવૃત્તિક્રિયાસાધ્યં કર્મક્ષપણં ભવતિ, કર્મક્ષપણાચ્ચ -મોક્ષાડવાસિરિતિ શ્રાવઃ । અત્રેદં વાધ્યમ્-પ્રાણાતિપાતસ્તાવત્-પ્રાણવિયોજનમ્,

ગ્રહણ કરના અદત્તાદાન હૈ । સ્ત્રી સંયોગ યા મૈથુન અબ્રહ્મચર્ય કહલાતા હૈ । મૂર્ચ્છા અર્થાત્ શાસ્ત્ર કી અનુમતિ જિનકે લિએ નહીં હૈ એસે સચિત્ત, અચિત્ત ઓર મિશ્ર દ્રવ્ય આદિ મૈં મમત્વધારણ કરના પરિગ્રહ હૈ ।

इन प्राणातिपात आदि से पूर्ण रूपेण तीन करण और तीन योग से मन वचन काय से निवृत्त होना पांच महाव्रत हैं । हिंसा आदि से निवृत्त होना व्रत कहलाता है, व्रत में स्थित पुरुष हिंसा रूप क्रिया-कलाप नहीं करता है । इससे यह फलित हुआ कि वह अहिंसा रूप क्रियाकलाप ही करता है । भावार्थ यह है कि जो प्राणातिपात आदि से विरत होता है वह शास्त्रोक्त क्रियाओं का अनुष्ठान करता है, अतएव सत्प्रवृत्ति और असत्निवृत्ति रूप क्रियाओं द्वारा होने वाला कर्मक्षय करता है और कर्मों का क्षय करके मोक्ष प्राप्त कर लेता है ।

यहां यह समझ लेना चाहिए-प्राणातिपात का अर्थ है-प्राणवि-

અથવા મૈથુન અબ્રહ્મચર્ય કહેવાય છે. મૂર્છા અર્થાત્ જેના માટે શાસ્ત્રની અનુમતિ નથી એવા સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્ર દ્રવ્ય આદિમાં મમત્વ ધારણ કરવું પરિગ્રહ છે.

આ પ્રાણાતિપાત આદિથી પૂર્ણતયા, ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી-મન વચન કાયાથી નિવૃત્ત થવું પાંચ મહાવ્રત છે. હિંસા આદિથી નિવૃત્ત થવું વ્રત કહેવાય છે. વ્રતમાં રહેલો પુરૂષ હિંસારૂપ ક્રિયાકાન્ડ કરતો નથી. આનાથી એવું સાબિત થયું કે તે અહિંસારૂપ ક્રિયાકલાપ જ કરે છે. ભાવાર્થ એ છે કે જે પ્રાણાતિપાત આદિથી વિરત થાય છે તે શાસ્ત્રોક્ત ક્રિયાઓનું અનુષ્ઠાન કરે છે આથી સત્પ્રવૃત્તિ અને અસત્નિવૃત્તિ રૂપ ક્રિયા દ્વારા થનારાં કર્મ ક્ષય કરે છે અને કર્મોનો ક્ષય કરીને મોક્ષ પ્રાપ્ત કરી લે છે.

અહીં એક બાબત સમજ લેવાની જરૂર છે-પ્રાણાતિપાતનો અર્થ છે-

प्राणाश्चेन्द्रियादयः तत्सम्बन्धात्प्राणिनो जीवाः पृथिवीकायाद्येकेन्द्रियद्वीन्द्रिय-
त्रीन्द्रिय-चतुरिन्द्रिय-पञ्चेन्द्रियास्तान्-जीवान् विज्ञाय-श्रद्धया प्रतिपद्य भावत-
स्तस्याऽकरणं ज्ञानश्रद्धानपूर्वकं चारित्रमुच्यते, तच्च-सदसत्प्रवृत्तिनिवृत्तिक्रिया-
लक्षणं चारित्रं मनोवाक् कायकृतकारिताऽनुमोदितभेदेनाऽनेकविधं बोध्यम् ।
उक्तञ्च-स्थानाङ्गे पञ्चमस्थाने प्रथमोद्देशके-‘पंच महव्वया पणत्ता, तं जहा-
सव्वाओ पाणाहवायाओ, जाव सव्वओ परिग्गहाओ वेरम्मणं’ इति, ।
पञ्च महाव्रतानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-प्राणातिपाताद्विरमणम्, यावत्-सर्वस्मात्
परिग्रहाद् विरमणम्-इति, आवश्यके दशवैकालिकेऽप्युक्तम् ॥५५॥

योजन । प्राण इन्द्रिय आदि दस हैं । उन्हीं के संबंध से जीव प्राणी
कहलाते हैं । पृथ्वीकाय आदि एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय
और पंचेन्द्रिय, ये सब प्राणी हैं । इन जीवों को जानकर एवं इन पर
श्रद्धा करके भाव से प्राणातिपात न करना ज्ञान-श्रद्धान-पूर्वक चारित्र
कहलाता है । सत् अनुष्ठान में प्रवृत्ति और असत् अनुष्ठान से
निवृत्ति उसका लक्षण है । मन, वचन, काय, कृत, कारित और
अनुमोदन आदि के भेद से चारित्र अनेक प्रकार का है । स्थानांगसूत्र
के पंचम स्थान के प्रथम उद्देशक में कहा है-‘पांच महाव्रत कहे गए
हैं, वे इस प्रकार हैं-समस्त प्राणातिपात से विरत होना, जाव अर्थात्
समस्त मृषावाद से विरत होना, समस्त अदत्तादान से विरत होना,
समस्त मथुन से विरत होना और समस्त परिग्रह से विरत होना ।’
आवश्यक और दशवैकालिक सूत्र में भी ऐसा ही कहा है ॥५५॥

प्राणवियोजन प्राण इन्द्रिय आदि दस છે તેમના જ સંબંધથી જીવ પ્રાણી
કહેવાય છે. પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને
પંચેન્દ્રિય, આ બધાં પ્રાણી છે આ જીવોને જાણીને અને એમનામાં શ્રદ્ધા
કરીને ભાવથી પ્રાણાતિપાત ન કરવો જ્ઞાન-શ્રદ્ધાનપૂર્વક ચારિત્ર કહેવાય છે.
સત્ અનુષ્ઠાનમાં પ્રવૃત્તિ અને અસત્ અનુષ્ઠાનથી નિવૃત્ત તેનું લક્ષણ છે.
મન, વચન, કાયા, કૃત, કારિત અને અનુમોદન આદિના ભેદથી ચારિત્ર
અનેક પ્રકારના છે સ્થાનાંગસૂત્રના પંચમ સ્થાનના પ્રથમ ઉદ્દેશકમાં કહ્યું છે-
‘પાંચ મહાવ્રત કહેવામાં આવ્યા છે તે આ મુજબ છે-સમસ્ત પ્રાણાતિપાતથી
વિરત થવું, સમસ્ત મૃષાવાદથી વિરત થવું, સમસ્ત અદત્તાદાનથી વિરત થવું,
સમસ્ત મૈથુનથી વિરત થવું અને સમસ્ત પરિગ્રહથી વિરત થવું. આવશ્યક
તેમજ દશવૈકાલિક સૂત્રમાં પણ આ પ્રમાણે જ કહેવામાં આવ્યું છે. ॥૫૫॥

મૂલ્ય—તત્થેજ્જટું ઈરિયાહયા પળવીસં ભાવનાઓ ॥૫૬॥

છાયા—‘તત્થેર્યાર્થમ્-ઈર્યાદિકાઃ પચ્ચવિંશતિ ભાવનાઃ’ ॥૫૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે દેશતો હિંસાદિવિરતિલક્ષણ પચ્ચાણુવ્રતાદિસ્વરૂપે પ્રરૂપિતમ્, સમ્પત્તિ-તેષાં વ્રતાનાં સ્થિરતા સમ્પાદનાર્થં તાવદ્ ઈર્યાદિકાઃ પચ્ચવિંશતિભાવનાઃ પ્રરૂપયિતુમાહ—‘તત્થેજ્જટું’ इत्यादि । तत्तथैर्यार्थम्—तेषां पूर्वोक्तानां व्रतानां स्थूल प्राणातिपातविरमणादिलक्षणानां स्थिरताकरणार्थं दृढीकरणार्थम् इर्यादिकाः—इर्यादिलक्षणाः पच्यविंशतिभावनान् भवन्ति । तत्र—इर्या—इरणं यतनया गमनम् १ आदिपदेन—मनः प्रशस्त्य २ वचः प्रशस्त्यै ३ षणा ४ आदाननिक्षेपरूपाः ५ पच्य प्रथममहाव्रतस्य भावनाः १ अलोच्य सम्भाषणम् १ क्रोध

‘તત્થેજ્જટું ઈરિયાહયા’ इत्यादि ॥५६॥

સૂત્રાર્થ—વ્રતોં કી સ્થિરતા કે લિએ ઈર્યાદિક પચ્ચીસ ભાવનાએ હૈં । ૫૬

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે એક દેશ સે હિંસાદિ સે વિરતિ રૂપ પાંચ અણુવ્રત આદિ કા લક્ષણ કહા ગયા હૈ, અવ હન વ્રતોં મેં સ્થિરતા લાને કે લિએ ઈર્યા આદિ પચ્ચીસ ભાવનાઓં કા પ્રરૂપણ કરતે હૈં—પૂર્વોક્ત સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ વ્રતોં કી સ્થિરતા કે લિએ અર્થાત્ હન્હેં દૃઢ કરને કે લિએ ઈર્યા આદિ પચ્ચીસ ભાવનાએં કહી ગઈ હૈ । વે હસ પ્રકાર હૈ ।

(૧) ઈર્યા અર્થાત્ યતનાપૂર્વક ગમન કરના (૨) મન કી પ્રશસ્તતા (૩) વચન કી પ્રશસ્તતા (૪) એષણા (૫) આદાનનિક્ષેપ, યહ પાંચ પ્રથમ વ્રત કી ભાવનાએં હૈ ।

(૧) સોચ—વિચાર કર ભાષણ કરના (૨) ક્રોધત્યાગ (૩) લોભ-

‘તત્થેજ્જટું ઈરિયાહયા પળવીસં ભાવનાઓ’

સૂત્રાર્થ—વ્રતોની સ્થિરતા માટે ઈર્યાદિક પચ્ચીસ ભાવનાઓ છે । ૫૬

તત્ત્વાર્થદીપિકા—અગાઉ એકદેશથી હિંસાદિથી વિરતિરૂપ પાંચ અણુવ્રત આદિના લક્ષણ કહેવામાં આવ્યા છે હવે તે વ્રતોમાં સ્થિરતા લાવવાના આશયથી ઈર્યા વગેરે પચ્ચીસ ભાવનાઓનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ—

પૂર્વાક્ત સ્થૂલપ્રાણાતિપાત વિરમણ વગેરે વ્રતોની સ્થિરતા માટે અર્થાત્ તેમને દૃઢ કરવા માટે ઈર્યા વગેરે પચ્ચીસ ભાવનાઓ કહેવામાં આવી છે. તે આ પ્રમાણે છે—(૧) ઈર્યા અર્થાત્ યતનાપૂર્વક ગમન કરવું (૨) મનની પ્રશસ્તતા (૩) વચનની પ્રશસ્તતા (૪) એષણા (૫) આદાન નિક્ષેપ આ પાંચ પ્રથમ વ્રતની ભાવનાઓ છે.

(૧) સમજ વિચારીને જોલવું (૨) ક્રોધ ત્યાગ (૩) લોભત્યાગ (૪)

२ लोभ ३ भय ४ हास्येषु ५ अनृतविवर्जनश्चेति पञ्च द्वितीय महाव्रतस्य भावनाः
 २ अष्टादशनिध विशुद्धवसतेर्याचनापूर्वकं सेवनम् १ प्रतिदिनमवग्रहं याचित्वा
 तृणकाष्ठादिग्रहणम् २ पीठफलकाद्यर्थमपि वृक्षादीनां छेदनम् ३ साधारण पिण्डस्या-
 ऽधिकतो न सेवनम् ४ साधुवैद्यावृत्यकरणश्चे ५ ति पञ्च तृतीयमहाव्रतस्य भावनाः ३ ।
 स्त्रीपशुपण्डकरहितवसतिसेवनम् १ स्त्रीकथावर्जनम् २ रज्यङ्गोपाङ्गाऽनवलोक-
 नम् ३ पूर्वभुक्तसुरतरस्तेरस्मरणम् ४ प्रतिदिनं भोजनपरित्यागश्चे ५ ति पञ्च
 चतुर्थमहाव्रतस्य भावनाः ४ प्रशस्ताऽपशस्तद्वन्द्व १ रूप २ रस ३ गन्ध ४

त्याग (४) अयत्याग और (५) हास्यत्याग यह द्वितीयव्रत की पांच भावनाएं हैं ।

(१) अठारह प्रकार से विशुद्ध वस्ति का याचना पूर्वक सेवन करना (२) प्रतिदिन अवग्रह की याचना करके तृण काष्ठ आदि को ग्रहण करना (३) पाट आदि के लिए भी वृक्ष आदि का छेदन न करना (४) साधारण पिण्ड का अधिक सेवन न करना अर्थात् अनेक साधुओं का जो तमिल्लित आहार हो उसमें से अपने उचित भाग से अधिक न लेना और (५) साधुओं का वैद्यावृत्य करना, यह तृतीयव्रत की पांच भावनाएं हैं ।

(१) स्त्री, पशु और पण्डक से रहित वस्ति का सेवन करना (२) स्त्रीकथा न करना (३) स्त्री के अंगोपांगों का अवलोकन नहीं करना (४) पूर्व भुक्त भोगों का स्मरण न करना और (५) प्रतिदिन गरिष्ठ भोजन का परित्याग करना, यह चौथे व्रत की पांच भावनाएं हैं ।

अयत्याग અને (૫) હાસ્યત્યાગ, આ બીજાવ્રતની પાંચ ભાવના છે.

(૧) અઠાર પ્રકારથી વિશુદ્ધ વસ્તીનું યાચનાપૂર્વક સેવન કરવું (૨) દરરોજ અવગ્રહની યાચના કરીને તૃણ કાષ્ઠ વગેરેને ગ્રહણ કરવા (૩) પાટ વગેરે માટે પણ વૃક્ષ વગેરેનું છેદન ન કરવું (૪) સાધારણ પિણ્ડનું અધિક સેવન ન કરવું અર્થાત્ અનેક સાધુઓ માટેનો જે ભોગો કરેલો આહાર હોય તેમાંથી પોતાના ભાગે હોય તેનાથી વધુ ન લેવું અને (૫) સાધુઓની વૈયાવચ્ચ (સેવા) કરવી આ ત્રીજા વ્રતની પાંચ ભાવનાઓ છે.

(૧) સ્ત્રી, પશુ અને નપુંસક વગરની વસતીમાં વાસ કરવો (૨) સ્ત્રીકથા ન કરવી (૩) સ્ત્રીના અંગોપાંગોનું અવલોકન ન કરવું (૪) પૂર્વ ભોગવેલા ભોગોનું સ્મરણ ન કરવું અને (૫) દરરોજ સ્વાદિષ્ટ ભોજનનો પરિત્યાગ કરવો, આ ચોથા વ્રતની પાંચ ભાવના છે.

स्पर्शेषु ५ रागद्वेषजर्जनं शब्दादिभेदात् पञ्च पञ्चमहाव्रतस्येति मिलिताः
पञ्चविंशतिर्भावनाः कर्तव्याः ॥२५॥५६॥

‘तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वसर्वप्राणातिपातविरमणादिलक्षणानि पञ्चमहाव्रतानि
प्ररूपितानि, सम्प्रति—तेषां व्रतानां द्वावर्च्यार्थं मैकैकस्य महाव्रतस्य पञ्च पञ्चभावनाः
प्ररूपयितुमाह—‘तत्त्वेज्जट्टं ईरियाहया पणवीसं भावणाओ’ इति । तत्स्थैर्या-
र्थम्—ईर्यादिकाः पञ्चविंशतिर्भावना भावनीयाः, तेषां पूर्वोक्तस्वरूपाणां सर्वतः,

(१) प्रशस्तरूप (२) रस (३) गंध (४) स्पर्श और (५) शब्द में
राग और अप्रशस्त रूपादि में द्वेष धारण न करना, यह पांच पंचमव्रत
की भावनाएं हैं । सब मिलकर पच्चीस भावनाएं होती हैं ॥५६॥

तत्त्वार्थनिर्युक्त—पहले सम्पूर्ण प्राणातिपातविरमण आदि पांच
महाव्रतों की प्ररूपणा की गई, अब उन व्रतों की दृढता के लिए—एक-
एक महाव्रत की पांच-पांच भावनाएं कहते हैं ।

उन व्रतों की स्थिरता के लिए ईर्या आदि पच्चीस भावनाओं का
सेवन करना चाहिए अर्थात् सम्पूर्ण प्राणातिपातविरमण आदि पांच
महाव्रतों का तथा स्थूलप्राणातिपात विरमण आदि पांच अणुव्रतों को
दृढ करने के लिए पच्चीस भावनाएं कही गई हैं । वे इस प्रकार हैं—
(१) ईर्यासमिति (२) मनोगुप्ति (३) वचनगुप्ति (४) एषणा (५) आदा-
ननिक्षेपणा (६) आलोच्य संभाषण—सोच-विचार करके बोलना (७)
क्रोध का त्याग (८) लोभ का त्याग (९) भय का त्याग (१०) हास्य

(१) प्रशस्त रूप (२) रस (३) गंध (४) स्पर्श और (५) शब्दमां
राग तथा अप्रशस्त रूपादिमां द्वेष धारण न करवे। ये पांच पांचमहाव्रतनी
भावनाओ छे. जधी भणीने पच्चीस भावनाओ थाय छे ॥ ५६ ॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—अगाऊ सम्पूर्ण प्राणातिपात विरमण आदि
पांच महाव्रतनी प्ररूपणा करवामां आवी हुवे आ व्रतनी द्रढताने माटे
ओक ओक महाव्रतनी पांचे पांच भावनाओ कहीओ छीओ

ते व्रतनी स्थिरता माटे धर्या आदि पच्चीस प्रकारनी भावनाओतुं
सेवन करवुं जेधओ अर्थात् सम्पूर्ण प्राणातिपात विरमण आदि पांच अणुव्रतो
ने दृढ करवा माटे पच्चीस भावनाओ कहेवामां आवी छे जे आ प्रमाणे
छे— (१) धर्यासमिति (२) मनोगुप्ति (३) वचनगुप्ति (४) एषणा (५) आदान
निक्षेपणा (६) आलोच्य संभाषण—समझी विचारीने ओहवुं (७) क्रोधनो
त्याग (८) दोलनो त्याग (९) लयनो त्याग (१०) हास्यनो त्याग (११)

प्राणातिपातविरमणादि लक्षणानां पञ्च महाव्रतानां देशतः प्राणातिपातादिविरति-
लक्षणाऽणुव्रतानाञ्च स्थैर्यार्थं दृढतासम्पादनार्थम् ईर्यासमितिः १ आदिपदेन-
मनोगुप्तिः २ वचोगुप्तिः ३ एषणा ४ आदाननिक्षेपणा आलोच्य सम्भाषणम् ६ क्रोध
प्रत्याख्यानम् ७ लोभप्रत्याख्यानम् ८ भयप्रत्याख्यानम् ९ हास्य प्रत्याख्यानम्
१० अष्टादशविधविशुद्धवसतीर्याचनापूर्वकं सेवनम् ११ प्रतिदिनमवग्रहं याचित्वा
तृणकाष्ठादिग्रहणम् १२ पीठ फलकाद्यर्थमपि वृक्षादीना मच्छेदनम् १३ साधारण-
पिण्डस्याऽधिकतो न सेवनम् १४ साधु वैयावृत्यकरणञ्च १५ स्त्रीपशुनपुंसक
संसर्गशयनाऽऽसनवर्जनम् १६ रागयुक्तस्त्रीकथा वर्जनम् १७ स्त्रीणां मनोहरेन्द्रिय-
वर्जनम् १८ पूर्वव्रतानुस्मरणवर्जनम् १९ प्रतिदिनं भोजनपरित्यागञ्च २० मनो-
ज्ञाऽमनोज्ञस्पर्श २१ रस २२ गन्ध २३ वर्ण २४ शब्दानां २५ रागद्वेषवर्जनञ्च
—त्येवं पञ्चविंशतिर्भावनाः । तत्र-प्रथमाः पञ्च भावनाः ईर्यासमितेः (प्राणाति-

का त्याग (११) अठारह प्रकार से विशुद्ध वसति का याचनापूर्वक सेवन
(१२) प्रतिदिन अवग्रह की याचना करके तृण काष्ठ आदि को ग्रहण
करना (१३) पीठ फलक आदि के लिए भी वृक्ष आदि को न काटना
(१४) साधारण पिण्ड का अपने समुचित भाग से अधिक सेवन न
करना (१५) साधुओं का वैयावृत्य करना (१६) स्त्री, पशु और नपुं-
सक के संसर्गवाले शय्या एवं आसन के सेवन से बचना (१७) राग-
युक्त स्त्री कथा का त्याग (१८) स्त्रियों की मनोहर इन्द्रियों को न
देखना (१९) पहले भोगे भोगों का स्मरण न करना (२०) प्रतिदिन
सरस भोजन का त्याग करना-कभी-कभी उपवास आदि करना
(२१-२५) मनोज्ञ और अमनोज्ञ स्पर्श, रस, गंध, रूप और शब्द पर
राग-द्वेष न करना, ये पञ्चीस भावनाएं हैं ।

अठार पकारथी विशुद्ध वसतीनुं याचनापूर्वक सेवन करवुं (१२) हरदोण
अवग्रहनी याचना करीने तृण काष्ठ वगेरेनुं ग्रहण करवुं (१३) पीठ-पाठ
वगेरे भाटे पशु वृक्ष वगेरे न कापवा (१४) साधारण पिण्डनुं पोताना लागथी
वधादे सेवन न करवुं (१५) साधुओनी वैयावत्या (शुश्रूषा) करवी (१६) स्त्री पशु
अने नपुंसकना संसर्गवाणी पथारी अने आसनना सेवनथी हर रहवुं
(१७) रागयुक्त स्त्रीकथानो त्याग (१८) स्त्रीओनी मनोहर इन्द्रियोने न लेवी
(१९) पूर्वे लोगवेदा लोगोनुं स्मरण न करवुं (२०) हरदोण स्वादु लोण-
ननो त्याग करवो-क्यारेक क्यारेक उपवास वगेरे करवा (२१-२५) मनोज्ञ
अने अमनोज्ञ स्पर्श रस, गंध, रूप तथा शब्द पर राग-द्वेष न करवो,
आ पञ्चीस भावनाओ छे.

પાતવિરતેઃ) દ્વિતીયાઃ પञ्च भावनाः-असत्यविरतेः, तृतीयाः पञ्चभावनाः स्तेय-
विरतैः, चतुर्थ्यः पञ्च भावनाः-ब्रह्मचर्यस्य, पञ्चम्यः पञ्च भावनाः परिग्रहविरते
रक्षगन्तव्याः तत्र तावत्-ईरणं गमनम्-ईर्या, तस्यां समितिः-सङ्गतिः श्रुतरूपेणा-
ऽऽत्मनः परिणतिः, तदुपयोगेन पुरस्तान् युगमात्रया दृष्ट्या स्थावरजङ्गमानि-
भूतानि परित्यजन् अप्रमत्तः सन् गच्छेत्-इत्यादिरूपो विधिः ईर्यासमिति रुच्यते १
मनोगुप्तिश्च-मनसो रक्षणम्, आर्तरीद्रध्यानाऽपचारः-धर्मध्याने उपयोगश्च २ वचो-
गुप्तिश्च-एषणासमितिरूपा ३ एषणा च-त्रिविधा, गवेषण १ ग्रहण २ ग्रास ३
भेदात् । तस्यामेषणायामसमितस्य षण्णामपि कार्यानां मुपधानापत्तिः स्यादतस्त-
त्संरक्षणार्थं सकलेन्द्रियोपयोगरक्षणा-एषणासमितिः कर्तव्या ४ आदाननिक्षेपणा

इनमें से प्रारंभ की पांच भावनाएं प्राणातिपात विरमणव्रत की,
दूसरी पांच असत्यविरति की, तीसरी पांच स्तेयविरति की, चौथी
पांच ब्रह्मचर्यव्रत की और पांचवीं भावनाएं परिग्रहविरति की हैं ।

इन भावनाओं का अर्थ इस प्रकार है-गमन करने में यतना
रखना ईर्यासमिति है अर्थात् चार हाथ आगे की भूमि देखकर स्थावर
और चल जीवों की रक्षा करते हुए, अप्रमत्त भाव से गमन करना
प्रथम भावना है । मनोगुप्ति का अर्थ है आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान से
बच कर धर्मध्यान में लीन होना । वचन को गोपन करना अर्थात्
मौन धारण करना वचनगुप्ति है । एषणा के तीन भेद हैं-गवेषणा,
ग्रहणेषणा और ग्रासेषणा । जो एषणा समिति से रहित होता है, वह
छहों कार्यों का विराधक होता है, अतएव जीवों की रक्षा के लिए

આમાંથી પ્રારંભની પાંચ ભાવનાઓ પ્રાણાતિપાત વિરમણ વ્રતની બીજી
પાંચ અસત્યવિરતિની ત્રીજી પાંચ સ્તેયવિરતિની, ચોથી પાંચ બ્રહ્મચર્ય વ્રતની
અને પાંચમી પાંચ ભાવનાઓ પરિગ્રહ વિરતિની છે.

આ ભાવનાઓનો અર્થ આ પ્રમાણે છે. ચાલવામાં જતના રાખવી
ઈર્યાસમિતિ છે. અર્થાત્ ચાર હાથ આગળની જમીનનું બારીકાઈથી નિરીક્ષણ
કરીને સ્થાવર તેમજ ચલ જીવોની રક્ષા કરતા થકા અપ્રમત્ત ભાવથી ગમન
કરવું એ પ્રથમ ભાવના છે. મનોગુપ્તિનો અર્થ છે. આર્તધ્યાન તથા રૌદ્ર
ધ્યાનથી અજણા રહીને ધર્મધ્યાનમાં લીન થવું, વચનને ગોપવું અર્થાત્
મૌનવ્રત ધારણ કરવું વચનગુપ્તિ છે. એષણાના ત્રણ ભેદ છે-ગવેષણા,
ગ્રહણેષણા અને ગ્રાસેષણા જેઓ એષણા સમિતિથીરહિત હોય છે તે છએ કાર્યોનો
વિરાધક હોય છે આથી જીવોની રક્ષા માટે એષણાસમિતિનું પાલન કરવું

સમિતિસ્તુ-ઔધિક-ઔપગ્રહિકભેદેન દ્વિવિધસ્યોપધેર્ગ્રહણ-સ્થાપનલક્ષણયોરાદાન નિક્ષેપણયોરાગમનાલુસારેણ પ્રત્યવેક્ષણ-પ્રમાર્જનરૂપા સમિતિ રુચ્યતે ૫ આલોકિન્, પાનમોજનન્તુ-પ્રતિગૃહં પાત્રમધ્યપતિતપિઙ્ડસ્ય ચક્ષુરાદ્યુપયોગેન તત્સમુત્થાઽઽ-ગન્તુકસત્ત્વસંરક્ષણાર્થં પ્રત્યવેક્ષણં કર્તવ્યમ્ ઉપાશ્રયમાગત્ય ચ પુનરપિ પ્રકાશયુક્તે-પ્રદેશે સ્થિત્વા પાનમોજનં સુપ્રત્યવેક્ષિતં કૃત્વા પ્રકાશપ્રદેશાઽવસ્થિતેન વલ્ગનં કર્તવ્ય મિતિ વૌધ્યમ્ इत्येवं रीत्या-एताः पञ्चभावनाः पुनः पुनर्भाषयन् वासयन् बाहुल्येन सम्पादयन् समस्ताम् प्राणातिपातलक्षणमर्हिसां पातुं समर्थो भवतीति भावः । अथाऽनृतविरतिलक्षण सत्यवचनस्य दाढ्यार्थं पूर्वोक्त पञ्च भावनासु प्रथमं तावत्-अनुवीचिभाषणमुच्यते, अनुवीचिशब्दो देशीयः-आलोचनार्थकः । तथा च

एषणासमिति का पालन करना चाहिए । औधिक और औपग्रहिक के भेद से दोनों प्रकार की उपधि के धरने-उठाने में, आगम के अनुसार प्रमार्जन एवं प्रतिछेदन का ध्यान रखना आदाननिक्षेपणा समिति है ।

પાત્ર મેં પડે હુએ યા રક્ષે હુએ આહાર કો ચક્ષુ આદિ કા ઉપયોગ લગા કર, ઉસમેં ઉત્પન્ન હુએ અથવા બાહર સે ઓએ જીવોં કી રક્ષા કે લિએ દેખના ચાહિએ । ઉપાશ્રય મેં આકર પુનઃ પ્રકાશયુક્ત પ્રદેશ મેં સ્થિત હોકર આહાર-પાની કો બલી-ભાંતિ દેખકર પ્રકાશપૂર્ણ સ્થાન મેં હો ઉસે રાના ચાહિએ । યહ આલોકિતપાનમોજન ભાવના હૈ । इन पांच भावनाओं से सम्पन्न श्रमण पूर्णरूपेण प्राणातिपातविरमण व्रत का पालन करने में समर्थ होता है ।

મૃષાવાદવિરમણવ્રત કી દૃઢતા કે લિએ इन पांच भावनाओं का सेवन करना चाहिए-‘अनुवीचिभाषण’ यहां ‘अनुवीचि’ शब्द देशीय

જોઇએ, ઔધિક અને ઔપગ્રહિકના લેહથી બને પ્રકારની ઉપધિને ઉપાડવા તથા મૂકવામાં આગમ અનુસાર પ્રમાર્જન તથા પડિદ્વેહણાનું ધ્યાન રાખવું આદાનનિક્ષેપણા સમિતિ છે.

પાત્રમાં પડેલા અથવા રાખેલા આહારને ચક્ષુ વગેરેનેા ઉપયોગ લગાવીને, તેમાં ઉત્પન્ન થયેલા અથવા બહારથી આવેલા જીવોની રક્ષા માટે અવલોકન કરવું જોઇએ. ઉપાશ્રયમાં આવીને ફરી એકવાર પ્રકાશવાળી જગ્યાએ બેસીને આહાર-પાણીને સારી પેઠે જોઇ તપાસીને અજવાળું હોય એવી જગ્યાએ જ તેનેા ઉપયોગ કરવો જોઇએ. આ છે આલોકિતપાન લોજન ભાવના આ પાંચ ભાવનાઓથી સંપન્ન સાધુ સંપૂર્ણતયા પ્રાણાતિપાત વિરમણવ્રતનું પાલન કરવામાં સમર્થ થાય છે.

મૃષાવાદ વિરમણવ્રતની દૃઢતા કાજે આ પાંચ ભાવનાઓનું સેવન કરવું

-સમીક્ષ્યાઽઽલોચ્ય વચનપ્રવર્તનમ્ અનુવીચિભાષણં વોધ્યમ્, અનાલોચિતવક્તા કદાચિન્મૃષા મપિ વ્રૂયાત્ તતશ્ચાઽઽત્મનોલાઘવ-વૈર-પીડાઃ સ્વલુ-પેદિકાનિ-ફલાનિ સ્યુઃ, પરપ્રાણોપધાતશ્ચાઽવશ્યંભાવી, અતઃ-સમીક્ષ્યોદાહરણેનાઽઽત્માનં ભાવયન્ ન મૃષાભાષણ જનિતપાપેન સમ્પૃક્તો ભવતિ ૧ ક્રોધસ્ય કપાયવિશેષસ્ય મોહકર્મોદયનિષ્પન્નપદ્ધેષપાયસ્યાઽપ્રીતિલક્ષણસ્ય પ્રત્યાખ્યાનં-નિવૃત્તિરનુવૃત્તિર્વા, તેન ક્રોધપ્રત્યાખ્યાનેન સતતમાત્માનં ભાવયેત્, તથા ભાવયન્-વાસયંશ્ચ સત્યાદિ-શ્યો ન વ્યપિચરતીતિર એવં-લોભપ્રત્યાખ્યાનં તાવત્ તૃષ્ણાલક્ષણસ્ય લોભસ્ય પ્રત્યા-ખ્યાનં-પરિત્યાગઃ, તેનાઽપ્યાત્માનં ભાવયન્ ન વિતથમાપીભવતિ ૩ એવં-મયશી-

હૈં ઓર उसका अर्थ है 'विचार करना' । अशय यह हुआ कि सोच-समझ कर बोलना 'अनुवीचिभाषण' कहलाता है । विना विचारे बोलने वाला कदाचिद् मिथ्या भाषण भी करता है । इससे आत्मा की लघुता, वैर और पीडा आदि इस लोक संबंधी फलों की प्राप्ति होती है और दूसरे के प्राणों का घात होता है । अतएव जो सोच-विचार कर भाषण करता है वह कभी मिथ्या भाषण के पापसे लिप्त नहीं होता ।

મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે ઉત્પન્ન હોને વાલે દ્વેષ રૂપ એવં અપ્રીતિ લક્ષણવાલે ક્રોધ કા ત્યાગ કરના ચાહિએ । ક્રોધ પ્રત્યાખ્યાન સે આત્મા કી નિરંતર ભાવના કરની ચાહિએ । જો એસી ભાવના કરતા હૈં વહ અસત્ય આદિ સે બચ જાતા હૈં । તૃષ્ણા રૂપ લોભ કા બી પરિત્યાગ કરના ચાહિએ । જો લોભ પ્રત્યાખ્યાન સે આત્મા કો ભાવિત કરતા હૈં વહ મિથ્યાભાષી નહીં હોતા । હસી પ્રકાર જો મય યા મીરુના કા

જોઈએ-‘અનુવીચિભાષણ’ અહીં ‘અનુવીચિ’ શબ્દ દેશીય છે અને તેનો અર્થ થાય છે ‘વિચાર કરવો તાત્પર્ય’ એ થયું કે સમગ્રી વીચારીને બોલવું ‘અનુ-વીચિભાષણ’ કહેવાય છે વગર વિચારે બોલનાર કવચિત્ મિથ્યાભાષણ પણ કરતો હોય છે. આથી આત્માની લઘુતા વેર અને પીડા વગેરે આલોક સંબંધી ફળોની પ્રાપ્તિ થાય છે અને બીજાના પ્રાણોની હિંસા થાય છે. આથી જે સમગ્રી -વિચારીને બોલે છે તે ક્યારેય પણ મિથ્યાભાષણના પાપથી ખુદ નથી.

મોહનીયકર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થનારા દ્વેષરૂપ તે પાણા ક્રોધનો ત્યાગ કરવો જોઈએ ક્રોધ પ્રત્યાખ્યાનથી ભાવના કરવી જોઈએ જે આવી ભાવના ભાવે છે તે અભય છે. તૃષ્ણાથી લોભનો પણ પરિત્યાગ કરવો જોઈએ. ખ્યાનથી આત્માને ભાવિત કરે છે તે મિથ્યાભાષી હો

લક્ષણ
રંતર
બથી
યા-
જ

લસ્ય મીરુત્વસ્ય પ્રત્યાખ્યાનેનાઽપિ-આત્માનં ભાવયન્ નાઽનૃતં કદાચિદ્ વદતિ
મયશીલો જનઃ કદાચિત્ વિતથમપિ ભાષતે ચૌરોઽથપિશાચો વા મયા રાત્રી દૃષ્ટિ
તસ્માદ્-નિર્ભય વાસનાધ્યાન માત્મનિ ભાવયેત્ ૪ એવં-મોહોદ્ભવપરિહાસલક્ષણહાસ્ય
પરિણતઃ આત્મપરિહાસં કુર્વન્ પરેણ સદ્ વિતથમપિ ભાષેત, તસ્માત્-તસ્ય પ્રત્યા-
ખ્યાનેનાઽઽત્માનં ભાવયન્ સત્યવ્રતપાલનક્ષમો ભવતિ ૧૦ એવં-સલુ-અનુવીચિ-
અવગ્રહયાચનં તાવત્-આલોચ્યાઽવગ્રહયાચનરૂપં બોધ્યમ્ ૧૧ અવગ્રહથ-દેવેન્દ્રરાજ-
ગૃહપતિ શય્યાતરસાધર્મિકભેદેન પञ्ચવિધઃ, તત્ત-યો યત્ર સ્વામી સ એવ યાચનીયઃ,
અસ્વામિયાચને દોષાધિક્યં સ્યાત્ । તસ્માત્-‘આલોચ્યાઽવગ્રહો યાચ્ય,’ ઇત્યેવ

પ્રત્યાખ્યાન કરતા હૈ, વહ કમી અસત્ય ભાષણ નહીં કરતા ડરપોક
હોતા હૈ વહ મિથ્યા ભાષણ મી કરતા હૈ, જૈસે-આજ રાત્રિ મેં મુજે
ચોર અથવા પિશાચ દિઝાઈ દિયા થા ઇત્યાદિ । અતઃ અપને આપકો
નિર્ભય બનના ઇચ્છિયે । મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે ઉત્પન્ન એવં પરિહાસ
લક્ષણ વાલા હાસ્ય જો કરતા હૈ વહ અપની હંસી કરતા દુઝા દુસરે કે
પ્રતિ મિથ્યા ભાષણ મી કરતા હૈ । અતએવ હાસ્ય કે પ્રત્યાખ્યાન સે
આત્મા કો ભાવિત કરને વાલા સત્ય વ્રત કા પાલન કરને મેં
સમર્થ હોતા હૈ ।

અસ્તેયવ્રત કી પાંચ ભાવનાએ-સોચ-વિચાર કર અવગ્રહ કી યાચના
કરના ઇચ્છિયે । અવગ્રહ પાંચ પ્રકાર કા હૈ-(૧) ઇન્દ્ર (૨) રાજા (૩)
ગૃહપતિ (૪) શય્યાતર ઓર (૫) સાધર્મિક કા અવગ્રહ । જહાં જો
સ્વામી હો વહાં ડસી સે યાચના કરના ઇચ્છિયે । જો સ્વામી નહીં હૈ

રીતે ભય અથવા કાયરતાનુ પ્રત્યાખ્યાન કરે છે તે કદી પણ અસત્ય બોલતો
નથી. જે ડરપોક હોય છે તે મિથ્યાભાષણ પણ કરને હોય છે જેમ કે
આજે રાતે મને ચોર અથવા પિશાચ દેખાયા હતા. વગેરે આથી દરેકે
પોતાની જાતને નિર્ભય બનાવવી જોઈએ મોહનીય કર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન
લક્ષણવાળું હાસ્ય જે કરે છે તે પોતાની મશકરી કરતો થકો બીજાની
મિથ્યાભાષણ પણ કરે છે. આથી હાસ્યના પ્રત્યાખ્યાનથી આત્માને પ્રભા-
વનાર સત્યવ્રતનું પાલન કરવા સમર્થ બને છે.

તેયવ્રતની પાંચ ભાવનાઓ-સમજી વિચારીને અવગ્રહની યાચના
અવગ્રહ કરના છે-(૧) ઇન્દ્ર (૨) રાજા (૩) ગૃહપતિ
અને (૪) શય્યાતર નો અવગ્રહ જ્યાં જે માલિક હોય ત્યાં
યાચના કરે, જે માલિક નથી તેની પાસે યાચના

ધિકીતિતત્ત્વમ્૨૫ ઈંદ્રિયાધિકી ક્રિયા યદ્યપિ-જીવ વ્યાપારરૂપા, તથાઽપ્યજીવસ્ય-
 હુરગલરાણેઃ પ્રધાન વિવક્ષયાઽજીવક્રિયેયમભિહિતા એવમેતાઃ પञ्चविंशतिः क्रियाः
 साम्परायिककर्महेतवो भवन्ति उक्तञ्च स्थानाङ्गे ૨ स्थानે ૧ ઉદ્દેશકે ૬૦ સૂત્રે-‘પાંચ-
 દિયા પળ્લસા, ચત્તારિ કસાયા પળ્લસા, પંચ અવિરયા પળ્લસા, પંચ-
 વીસા કિરિયા પળ્લસા’ હિતિ । પञ्चेन्द्रियाणि प्रज्ञप्तानि, चत्वारः कषायाः
 प्रज्ञप्ताः-पञ्चाऽव्रतानि प्रज्ञप्तानि, पञ्चविंशतिः क्रियाः प्रज्ञप्ताः, इति । नवतत्त्व-
 प्रकरणगाथाया मुक्तम्-‘इन्द्रिय ૧ कषाय ૨ अव्वय ૩ योग ૧ पंच ૧ चक्र ૨
 पंच ૩ तिष्ठि कषाया किरियाओ पणवीसइमाओ अणुक्रमसो इति ।
 इन्द्रिय कषाया-व्रत-योगाः पञ्चचत्वारः-पञ्च-त्रयः कषायाः क्रियाः पञ्चविंशतिः,
 इमाः अनुक्रमशः, इति तथाऽऽस्तवस्य मिथ्यात्वाऽव्रत ૨ प्रमाद ૩ कषाया ૪ अशुभ-

જિસમેં ઓર કષાય કા હેશ ખી ન હો, જિસકે કારણ દો સમય કી
 સ્થિતિ વાલે કર્મ કા બન્ધ હોતા હૈ । યદ્યપિ યહ ક્રિયા જીવ કા
 વ્યાપાર હી હૈ તથાપિ અજીવ શરીર યા વચન કી પ્રધાનતા કી વિવક્ષા
 હોને સે અજીવ ક્રિયા કહી ગઈ હૈ ।

इस प्रकार इन पञ्चीस क्रियाओं में से चौबीस साम्परायिक
 आस्रव का कारण होती हैं और ऐर्यापधिकी क्रिया ईर्यापथ-आस्रवका
 कारण होती है, स्थानांगसूत्र के दूसरे स्थानक के प्रथम उद्देशक के ६०
 वें सूत्र में कहा है-‘पांच इन्द्रिया, चार कषाय, पांच अव्रत और पञ्चीस
 क्रियाएं’ कही गई हैं ।’

नवतत्त्व प्रकरण में भी कहा है-इन्द्रिय पांच, कषाय चार, अव्रत
 पांच, योग तीन और क्रियाएं पञ्चीस आस्रव का कारण कही गई हैं ।

तथा (१) मिथ्यात्व (२) अव्रत (३) प्रमाद (४) कषाय (५) अशुभ-

જેમાં પ્રમાદ અને કષાય લેશમાત્ર ન હોય, જેના કારણે બે સમયની સ્થિતિ-
 વાળા કર્મ બંધાય છે. જો કે તે ક્રિયા જીવનો વ્યાપાર જ છે તો પણ અજીવ
 શરીર અથવા વચનની પ્રધાનતાથી વિવક્ષા થવાથી અજીવક્રિયા કહેવાય છે-
 આવી રીતે આ પંચીસ ક્રિયાઓમાંથી ચોવીસ સામ્પરાયિક આસ્રવના
 કારણરૂપ હોય છે અને ઈંદ્રિયાધિકી ક્રિયા ઈંદ્રિયાપથ આસ્રવનું કારણ હોય
 છે. સ્થાનાંગસૂત્રના બીજા સ્થાનકના પ્રથમ ઉદ્દેશકના ૬૦માં સૂત્રમાં કહ્યું છે
 ‘પાંચ ઇન્દ્રિયો, ચાર કષાય, પાંચ અવ્રત અને પંચીસ ક્રિયાઓ કહેવામાં આવી છે.’

નવતત્ત્વ પ્રકરણમાં પણ કહ્યું છે ‘ઇન્દ્રિયો પાંચ, કષાય ચાર, અવ્રત
 પાંચ, યોગ ત્રણ અને ક્રિયાઓ પંચીસ આસ્રવના કારણ કહેવામાં આવેલ છે.
 તથા (૧) મિથ્યાત્વ (૨) અવ્રત (૩) પ્રમાદ (૪) કષાય (૫) અશુભ-

योग ५ प्राणातिपात ६ मृषावादा ७ अदत्तादान ८ मैथुन ९ परिग्रह १० श्रोत्र चक्षु
घ्राण रसन स्पर्शनरूप पञ्चेन्द्रिय १५ मनोवाकायाऽशुभक्यापाराणि १८ भाण्डोप-
करणानामयतनया निक्षेपणं ग्रहणं च १९ सूचीकुशाग्रमात्रस्याऽप्ययतनया निक्षेपणं
ग्रहणं चेति सामान्यतया विंशतिर्भेदा भवन्ति । तथा पूर्वोक्तेषु द्विचत्वारिंशदाश्रय
भेदेषु पञ्चदशयोगानां संमेलनेन सप्त पञ्चाशदप्याश्रयाः भवन्तीति बृहद्विवेकः ॥५॥

मूलम्—तिव्व मंदादि भाव विरियाहिगरणविसेसेहिंतो
आसवविसेसो ॥६॥

छाया—‘तीव्र-मन्दादि भाववीर्याऽधिकरण विशेषेभ्यः आस्रवविशेषः ॥६॥

तत्त्वार्थदीपिका—अथ—कर्मबन्ध हेतुभूताऽस्रवं प्रति कायादि योगत्रयादेः कारण-

योग (६) प्राणातिपात (७) मृषावाद (८) अदत्तादान (९) मैथुन (१०) परि-
ग्रह (११) श्रोत्रेन्द्रिय (१२) चक्षुर्हन्द्रिय (१३) घ्राणेन्द्रिय (१४) रसनेन्द्रिय
(१५) स्पर्शनेन्द्रिय (१६) मनोयोग (१७) वचनयोग (१८) काययोग
(१९) भाण्डोपकरण का अयतना से निक्षेपण या ग्रहण करना और
(२०) सूची-कुशाग्रका भी अयतना से निक्षेपण ग्रहण, यह बीस प्रकार
का आस्रव कहा गया है । तथा पहले कहे गये आस्रव के बयालीस
भेदों में पन्द्रह प्रकार के योगों को मिलाने से आस्रव के सत्तावन
भेद भी होते हैं । यह आस्रव संबन्धी विस्तार समझना चाहिए ॥५॥

‘तिव्व मंदादिभाव’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—तीव्रभाव, मंदभाव आदि वीर्य और अधिकरण की
विशेषता के कारण आस्रव में भी विशेषता हो जाती है ॥६॥

तत्त्वार्थदीपिका—काययोग आदि आस्रव के कारण सभी जीवा में

योग (६) प्राणातिपात (७) मृषावाद (८) अदत्तादान (९) मैथुन (१०) परिग्रह
(११) श्रोत्रेन्द्रिय (१२) चक्षुर्हन्द्रिय (१३) घ्राणेन्द्रिय (१४) रसनेन्द्रिय (१५)
स्पर्शनेन्द्रिय (१६) मनोयोग (१७) वचनयोग (१८) काययोग (१९) भाण्डो-
पकरण अयतनाथी निक्षेपण अथवा ग्रहण करने (२०) सूचीकुशाग्रनुं
अयतनाथी निक्षेपण-ग्रहण, आ बीस प्रकारना आस्रव कहेवाभा आन्धा
छे. तथा अगाठ कहेवाभा आवेला आस्रवना जेतालीस लेहेभा पंहर प्रकारना
योगोने उमेरवाथी आस्रवना सत्तावन लेह पणु थाय छे. आ आस्रव संभंधी
विस्तार समझवे लेहये. ॥५॥

‘तिव्व मंदादिभाव’ इत्यादि

सूत्रार्थ—तीव्रभाव, मंदभाव, वीर्य अने अधिकरणनी विशेषतांना

સુ સુવર્ત્તમકાર્યત્વમ્ સર્વેષાં સાંસારિણાં સાધારણતયા તસ્માત્-કર્મવન્ધ-પક્ષ-
 નુમવનમ્પતિ અવિશેષઃ સ્યાદિત્યામદ્વાં-સમાધાતું કાયિકાદિયોગત્રયસ્ય પર્યાય-
 સદશ્યમ્ભવે સત્યપિ અતેકભેદેભ્યો પરિણામવિશેષેભ્યઃ કર્મવન્ધફલાનુમવનવિશેષ-
 સુમવતીત્યાહ-તિવ્ર-મન્દાદિ ભાવ-વીર્યાદિગેરણવિશેષેસેહિતો આત્મ-
 વિશેષો-इति । તીવ્ર મન્દાદિભાવવીર્યાધિકરણ વિશેષેભ્યઃ તીવ્ર મન્દાદિભાવવીર્યા-
 ધાવ-૧ મન્દભાવઃ ૨, આદિપદેન જ્ઞાતાઽજ્ઞાતભાવપ્રદ્વયમ્, તેન જ્ઞાતભાવો ઽજ્ઞાતભાવઃ
 વીર્યાવિશેષોઽધિકરણવિશેષશ્ચત્યેતેષાં દ્વન્દ્વે સતિ તીવ્ર મન્દાદિ ભાવ-વીર્યાધિ-
 કરણવિશેષા સ્તેભ્યઃ-તદપેક્ષયા સ્વલુ આસ્રવવિશેષઃ સામ્પરાયિકાઽસ્રવવિશેષો ભવતિ
 તત્ત્વાવાહ્યાધ્યન્તરકારણોદીરણવશાદુદ્ધિત્ત્વ-ઉત્કૃષ્ટ આત્માધ્યવસાયવિશેષઃ પરિ-
 નામ-સ્ત્રીવદ્યુચ્યતે તદ્વિપરીતઃ પરિણામો મન્દ-इत्यુચ્યતે, અનુત્કટ આત્માધ્યવ-

સમાત્મ્ય હૈ,યે (સમા સંસારી જીવો) મેં (સમાન) રૂપ સે પાવે જોતે હૈ,
 જીવિવ-કસંવધે ભીસંભી મેં સમાન હોનાં વાહિયે ઓર ઉસકો ફલ
 ભીસંભી(કો)સમાન પ્રાપ્ત હોનાં વાહિયે કિન્તુ એસા હોતાં નહીં હૈ,
 જીવકા-કારણ જીવ કે પરિણામો મેં રહા હુઆ ભેદ હૈ જો અનેક પ્રકાર
 કા હોતા હૈ, યહ જતલાને કેલિયે કહા ગયા હૈમ (૦૬)

અહીં તીવ્ર ભાવ, મન્દ ભાવ ઓર 'આદિ' શબ્દ સે જ્ઞાત ભાવ, અજ્ઞાત ભાવ
 વીર્યાવિશેષ ઓર અધિકરણ વિશેષ સે સામ્પરાયિક આસ્રવ મેં વિશેષતા
 (વિષમતા-ભિન્નતા) હોતી હૈ બાહ્ય એવં આધ્યન્તર કારણ મિલને પર
 આત્મા મેં જો ઉત્કૃષ્ટ અધ્યવસાય ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઉસે તીવ્ર ભાવ
 કહેતે હૈ. મન્દ ભાવ હસસે વિપરીત હોતા હૈ અર્થાત્ જો અધ્યવસાય
 ઉત્કૃષ્ટ ના હો વહ મન્દ કહેલાતા. યહ શંત્રુ હમન કરને યોગ્ય હૈ, મેં

કારણે અસિદ્ધમા પ્રણ વિશેષતા થઈ જાય છે તેવા

ત્યાગ્યુંદીપિકા (૧)કાયોગ-આદિઆસનનાકારણે) અધાણિવોમાં સોમાર્થ
 છે. આ બધા સંસારી જીવોમાં સમાનુ)રમથી જોવામાં આવે છે. આથી (કમ)
 બન્ધ પણ દરેકમાં સરળાં હોવા જોઈએ અને એવું જ્ઞેન (પણ) દરેકને સરળ
 મળેવું જોઈએ પરંતુ આ પ્રમાણે બનવું નથી, એવું કારણ જ્ઞાનના અભિભાવમાં
 રહેલા ભેદ છે જે અનેક પ્રકારના હોય છે. આ દર્શાવવા આપે કહેવામાં આવ્યું છે.
 તીવ્રભાવ, મન્દભાવ, આદિ, શબ્દથી, સમત્તાક આસીતશામ, વીર્યાવિશેષ
 અને અધિકરણ વિશેષથી સામ્પરાયિક આસનમાં વિશેષતા (વિષમતા-ભિન્નતા)
 થાય છે. બાહ્ય તથા આક્ય તર કારણે મળવાથી, આત્મામાં જે ઉત્સાહ અધ્યવસાયે
 ઉત્પન્ન થાય છે તેને તીવ્રભાવ કહે છે. મન્દભાવ, આત્માથી વિપરીત હોય છે,
 અર્થાત્ જે અધ્યવસાય ઉત્કૃષ્ટ ન હોય તે, મન્દ કહેવાય છે. આ શબ્દો હવા

सायं विशेषलक्षणः परिणाममन्द इत्यर्थः । अयं शत्रुर्हन्तव्यः, हनिष्याम्येतं पुमांसं-
मिति ज्ञात्वा प्रवर्तनं ज्ञात मित्युच्यते; मदात् प्रमादाद्वा, एतं पुमांसं हनिष्यामि,
इत्यनवबुध्य प्रवृत्तिः अज्ञातः मित्युच्यते, भावस्तु आत्मनो भवनं परिणामविशेषो
लोच्यते । भावशब्दस्य प्रत्येकमभिसम्बन्धात् तीव्रभावे मन्दभावज्ञातभावाऽज्ञात
भाव इत्यर्थः । वीर्यञ्च जीवस्य क्षायोपशमिकः क्षायिको वा भाव इत्युच्यते,
द्रव्यस्य स्वशक्तिविशेषो वा वीर्यम्, अधिकरणं पुनरधिक्रियन्तेऽर्था अस्मिन्निति
द्रव्यपत्त्याऽधिकरणं द्रव्यमित्युच्यते, विशेषपदस्य बोधयत्राऽभिसम्बन्धात् वीर्य-
विशेषो द्रव्यस्य पुरुषादे निजशक्तिविशेषलक्षणः खड्गाधिकरणविशेषश्चेति
बुध्यते । तथा च तीव्रभावः, मन्दभावज्ञातभावाऽज्ञातभाव वीर्यविशेषाऽधिकरण
विशेषेभ्यः पूर्वोक्तकोनवत्त्वादिशत्साम्परायिकाऽऽस्तवविशेषो भवति । एवञ्च

इसका हनन करूंगा । इस प्रकार जान बूझकर प्रवृत्ति करना ज्ञातभाव
कहलाता है । अनजान में प्रमाद से प्रवृत्ति होना अज्ञातभाव है भावका
अर्थ है आत्माका अध्यावसाय अथवा परिणाम प्रत्येक के साथ उसका
सम्बन्ध है, जैसे तीव्रभाव, मन्दभाव ज्ञातभाव और अज्ञातभाव । जीव
का क्षायोपशमिक या क्षायिक भाव वीर्य कहलाता है अथवा द्रव्यकी
अपनी जो विशिष्ट शक्ति है उसे वीर्य कहते हैं । अधिकरण वह द्रव्य
या साधन जिसके द्वारा कोई क्रिया हो जाती है और जिसे लोकभाषा
में ओजार कहते हैं विशेष, पद का दोनों अर्थात् वीर्य और अधिकरण
के साथ सम्बन्ध है इस प्रकार जीव की शक्ति की विशेषता को वीर्य
विशेष और तलवार आदि की शक्ति की विशेषता को अधिकरणविशेष
कहते हैं । इस प्रकार तीव्रभाव, मन्दभाव, ज्ञातभाव अज्ञातभाव वीर्य-
विशेष और अधिकरणविशेष से साम्परायिक आसक्त में विशेषता
अर्थात् तरलमत्ता उत्पन्न हो जाती है ।

वीर्य "छे" "हु" "अने" "हुणी" "आ" "रीते" "छरीहापूर्वक" प्रवृत्ति "करवी" ज्ञातभाव
"कडेवाय" "छे" "अने" "हुती" अथवा "प्रमादधी" प्रवृत्ति "थवी" "आ" ज्ञातभाव "छे" "लावने"।
अर्थ "छे" "आ" "मिनु" "अध्यवसाय" अथवा "परिणाम" प्रत्येकनी "साथे" तेनी "सं" "बन्ध"
"छे" "नेम" "क" "तीव्रभाव," "मन्दभाव," "ज्ञातभाव" अने "अज्ञातभाव" "अपनी" "क्षायी-
"उपशमिक" अथवा "क्षायिक" "लाघ" "वीर्य" "कडेवाय" "छे" अथवा "द्रव्यनी" "आशवी" "ने"
"विशिष्ट" "शक्ति" "छे" तेने "वीर्य" "कडे" "छे" "अधिकरण" ते "द्रव्य" अथवा "साधन"
"छे" "नेना" "वेडे" "कौध" "क्रिया" "करवी" "आवे" "छे" अने "नेने" लोक भाषामां "ओजार"
"कडे" "छे" "विशेष" "पहने" "अने" अर्थात् वीर्य "अने" "अधिकरणनी" "साथे" सं "बन्ध" "छे",
आपसी "अपनी" शक्ति "विशेषताने" "वीर्य" "विशेष" "अने" "तलवार" "आदिनी" शक्ति "तेनी"

તીવ્રભાવાત્ મન્દભાવાત્ જ્ઞાતભાવાત્ અજ્ઞાતભાવાત્ વીર્યવિશેષાત્ અધિકરણ
વિશેષાચ્ચાઽઽત્મપરિણતિવિશેષાત્ પૂર્વોક્તાનામેકોનચત્વારિંશત્સામ્પરાયિકાઽઽસ-
વાણાં વિશેષઃ તીવ્ર સ્તીવ્રતર સ્તીવ્રતમો, મન્દો મન્દતરો મન્દતમો, લઘુ સ્ફુટતરો
સ્ફુટતમશ્ચ પરિણામવિશેષો ભવતિ, તદ્વિશેષાચ્ચ કર્મબન્ધવિશેષો ભવતિ, તસ્માન્ન
ફલમોગવિશેષઃ इतिफलितम् ॥૬॥

અભિપ્રાય यह है कि एक जीव किसी कार्यको तीव्रभाव से करता है, दूसरा जीव उसी कार्य को मन्द परिणाम से करता है इसी प्रकार कोई जीव किसी क्रिया में जान बूझकर प्रवृत्ति करता है और किसी जीव की उसी क्रिया में अनजान में प्रवृत्ति हो जाती है तो उनके आस्रव में भी भेद होता है । प्रत्येक अवस्था में आस्रव समान ही हो, ऐसा नहीं जैसे ज्ञातभाव और अज्ञातभाव के कारण आस्रव में अन्तर पड़ जाता है, उसी प्रकार वीर्य और अधिकरण की भिन्नता से भी आस्रव में भिन्नता हो जाती है । यही कारण है कि कोई जीव तीव्र आस्रव का भागी होता है तो कोई तीव्रतर और तीव्रतम आस्रवका इसी प्रकार किसी को मन्द आस्रव होना है तो किसी को मन्दतर या मन्दतम आस्रव होता है । जब आस्रव में अन्तर पड़ता है तो बन्धमें भी अंतर पड़े बिना नहीं रह सकता और कर्मबन्ध में अन्तर पड़ने से उसके अन्तर पड़ना अनिवार्य है । ६॥

વિશેષતાને અધિકરણ વિશેષ કહે છે. આમ તીવ્રભાવ, મન્દભાવ, જ્ઞાતભાવ, અજ્ઞાતભાવ, વીર્યવિશેષ અને અધિકરણ વિશેષથી સામ્પરાયિક આસ્રવમાં વિશેષતા અર્થાત્ તરતમતા ઉત્પન્ન થાય છે.

અભિપ્રાય એ છે કે એક જીવ કોઈ કાર્યને તીવ્રભાવથી કરે છે અને બીજો જીવ તેજ કાર્યને મન્દ પરિણામથી કરે છે, એવી જ રીતે કોઈ જીવ કોઈ ક્રિયામાં જાણી-બૂઝીને પ્રવૃત્ત થાય છે અને કોઈ જીવની તેજ ક્રિયામાં અજાણ્યતાં જ પ્રવૃત્તિ થઈ જાય છે ત્યારે તેમના આસ્રવમાં પણ ભેદ થાય છે પ્રત્યેક અવસ્થામાં આસ્રવ સમાન જ હોય એવો નિયમ નથી જેમ કે જ્ઞાતભાવ અને અજ્ઞાતભાવના કારણે આસ્રવમાં અન્તર પડી જાય છે તેવી જ રીતે વીર્ય અને અધિકરણની ભિન્નતાથી પણ આસ્રવમાં ભિન્નતા થઈ જાય છે. અ.જ કારણ છે કે કોઈ જીવ તીવ્ર આસ્રવનો ભાગી થાય છે તો કોઈ જીવ તીવ્રતર અને તીવ્રતમ આસ્રવનો, એવી જ રીતે કોઈ જીવને મન્દ આસ્રવ હોય છે. તો કોઈને મન્દતર અથવા મન્દતમ આસ્રવ હોય છે. જ્યારે આસ્રવમાં અન્તર પડે છે તો બન્ધમાં પણ અન્તર પડ્યા વગર રહેતું નથી અને કર્મબન્ધમાં અન્તર પડવાથી તેનામાં અન્તર પડવું અનિવાર્ય છે ॥૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ:-અથ પૂર્વોક્તેન્દ્રિયકષાયઃઅવ્રતક્રિયાદેતુકં ભવભ્રમણકારક-
સામ્પરાયિકકર્મબન્ધં કુર્વતાં જીવાનાં કિં સર્વેષાં સમાન એવ કર્મબન્ધો ભવતિ ?
ઉત્તરો ઇન્દ્રિયાદિમત્ત્વે સતિ સામ્પરાયિકકર્મબન્ધભાજાં પરસ્પરં કર્મબન્ધ
વૈષમ્યપ્રયુક્તો વિશેષો ભવતિ ? इत्याशङ्कां समाधातुं परिणामभेदात् કર્મબન્ધ-
ભેદો ભવતીતિ પ્રતિપાદયતિ-‘તિવ્રમન્દાદિભાવ વીરિયાહિગરણવિસેસે-
દ્વિતો આસ્રવવિસેસો’ इति तीव्रमन्दादिभावेभ्यः तीव्रभाव, मन्दभाव,
ज्ञातभावाऽज्ञातभावेभ्यः, वीर्याधिकरणविशेषेभ्यः वीर्यविशेषाऽधिकरणविशेषे-
भ्यश्चाऽऽस्रवविशेषः साम्परायिककर्मास्रवतारतम्यं भवति, तद्विशेषाच्च
कर्मबन्धविशेषो भवति, तद्विशेषाच्च फलभोगविशेषः । तत्र तीव्रः प्रकृष्टः
उत्कृष्टो भावः-आत्मपरिणति विशेषः, स च तीव्रात्मपरिणामोऽध्यवसा-

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વોક્ત ઇન્દ્રિય કષાય, અવ્રત આદિ કે કારણ
જો જીવ ભવભ્રમણજનક સામ્પરાયિક કર્મ બન્ધકર રહે હૈં, ઉન સઘકો
કયા સમાન હી બન્ધ હોતા હૈ ? અથવા ઉક્ત કારણો સે હોનેવાંલે
બન્ધ મેં કુછ અન્તર મી હોતા હૈ ? इस आशङ्का का समाधान करने के
लिए यह प्रतिपादन करते हैं कि परिणाम के भेद से कर्मबन्ध में भी
भिन्नता हो जाती है—

તીવ્રભાવ, મંદભાવ, જ્ઞાતભાવ, વીર્યકી વિશેષતા ઓર અધિકરણ
કી વિશેષતા કે કારણ સામ્પરાયિક કર્મ આસ્રવ મેં મી ભિન્નતા હો
જાતી હૈ, આસ્રવ મેં ભેદ હોને સે બન્ધ મેં ઓર બન્ધ મેં વિશેષતા હોને
કે કારણ ઉસકે ફલ મેં વિશેષતા આ જાતી હૈ ।

ઉત્કૃષ્ટ પ્રકૃષ્ટ યા ઉગ્ર ભાવ તીવ્રભાવ કહલાતા હૈ । ભાવ કા અર્થ
હૈ અધ્યવસાય યા આત્મા કી વિશિષ્ટ પરિણતિ । વહી ભાવ જબ

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વોક્ત ઇન્દ્રિય, કષાય, અવ્રત આદિના કારણે જે ભવ
ભ્રમણ જનક સામ્પરાયિક કર્મબન્ધ કરી રહ્યાં છે, તે બધાને શું સરખો
જ બન્ધ થાય છે ? અથવા ઉક્ત કારણોથી થનારા બન્ધમાં થોડું અન્તર પણ
હોય છે ? આ શંકાનું સમાધાન કરવા માટે એ પ્રતિપાદન કરીએ છીએ કે
પરિણામના ભેદથી કર્મબન્ધમાં પણ ભિન્નતા થઈ જાય છે—

તીવ્રભાવ, મંદભાવ, જ્ઞાતભાવ, વીર્યની વિશેષતા અને અધિકરણની
વિશેષતાના કારણે સામ્પરાયિક કર્મ-આસ્રવમાં પણ ભિન્નતા થઈ જાય છે.
આસ્રવમાં ભેદ થવાથી બન્ધમાં અને બન્ધમાં વિશેષતા થવાના કારણે તેના
ફળમાં પણ વિશેષતા આવી જાય છે.

ઉત્કૃષ્ટ, પ્રકૃષ્ટ અથવા ઉગ્ર ભાવ તે તીવ્રભાવ કહેવાય છે. ભાવનો અર્થ
છે અધ્યવસાય અથવા આત્માની વિશેષ પરિણતિ તેજભાવ જ્યારે અધિક

कदाचिन्मृद्वधिमात्रः, कदाचिन्मृदुमध्यः, कदाचिन्मृदुः इत्येवं विविधाऽध्यवसाया-
ऽपेक्षया नानारूपो भवति ! एवम् ज्ञातस्य ज्ञानादुपयुक्तस्याऽऽत्मनो भावः परिणाम
विशेषो ज्ञातभावोऽभिसन्धि कृत्वा प्राणातिपातादौ प्रवृत्तिः, यथा 'उयं शत्रुःप्राणी
इन्तव्यः' हनिष्यात्म्येतं पुमांसमिति ज्ञात्वा प्रवर्तनं ज्ञातम्' तद्विपरीत मज्ञातम्
अज्ञातस्य ज्ञानादनुपयुक्तस्य भावः परिणामविशेषोऽज्ञातभावः, अनभिसन्धाय
प्राणातिपातादौ प्रवृत्तिः मदात्ममादाद्वाऽनवबुध्यप्राणातिपातादौ प्रवर्तनमित्यर्थः ।
तारम्याच्च ज्ञातभावाऽज्ञातभावाभ्यां पूर्ववदेव कर्मबन्धविशेषोऽवगन्तव्यः । यः

तीव्रभाव में भी तारतम्य के भेद से अनेक उच्च-नीच श्रेणियाँ
होती हैं । कोई तीव्रभाव अधिमात्र होता है, कोई अधिमात्र मध्य
होता है, कोई अधिमात्र मृदु होता है, कोई मध्य अधिमात्र होता है,
कोई मध्यम, कोई मध्य मृदु, कोई मृदु अधिमात्र कोई मृदु होता है ।
इस प्रकार अपेक्षा भेद से नाना प्रकार के अध्यवसाय होते हैं ।

इसी प्रकार उपयोग से उपयुक्त आत्मा का परिणाम ज्ञातभाव
कहलाता है, जिसका आशय है समझ-बूझकर, संकल्प पूर्वक हिंसा
आदि कार्यों में प्रवृत्त होना, जैसे इस शत्रु का हनन करना योग्य है,
मैं इस पुरुष का हनन करूँगा, इस प्रकार विचार कर घात करना ।
अज्ञातभाव इससे विपरीत होता है । वह उपयोग शून्य आत्मा का
परिणाम है, जैसे बिना संकल्प के अकस्मात् हिंसा आदि में प्रवृत्ति हो
जाना—मद या प्रमाद से अनजान में हिंसा आदि हो जाना । इस ज्ञान
भाव और अज्ञातभाव से कर्मबन्ध में विशेषता हो जाती है । उदाह-

तीव्रभावमां पणु तारतम्येना लेदथी अनेक उच्च-नीच श्रेणिओ डोय
छे. केध तीव्रभाव अधिमात्र डोय छे, केध अधिमात्र मध्य डोय छे, केध
अधिमात्र मृदु डोय छे, केध मध्य अधिमात्र डोय छे, केध मध्यम, केध
मध्य मृदु. केध मृदु-अधिमात्र केध मृदुमध्य अने केध मृदु डोय छे. आ
रीते अपेक्षा लेदथी गुहा गुहा प्रकारनां अध्यवसाय डोय छे.

એવી જ રીતે ઉપયોગથી ઉપયુક્ત આત્માનું પરિણામ જ્ઞાતભાવ
કહેવાય છે, જેનો આશય છે—જાણી-જૂઝીને, સંકલ્પપૂર્વક હિંસા આદિ કર્મોમાં
પ્રવૃત્ત થવું જેમ કે—‘આ શત્રુ હણવા યોગ્ય છે, હું આ પુરુષને હણીશ’ એ
રીતેના વિચાર કરી ઘાત કરવો. અજ્ઞાતભાવ આનાથી વિપરીત હોય છે. તે
ઉપયોગ શૂન્ય આત્માનું પરિણામ છે જેમ વગર સંકલ્પનાં અકસ્માત, હિંસા
આદિમાં પ્રવૃત્ત થઇ જવું—મદ અથવા પ્રમાદથી અજાણતા હિંસા આદિ થઇ

સ્વલુ-હરિણદેવાડપિ સન્ધાય 'હન્મિ' ઇતિ વાણં પ્રક્ષિપન્તિ યસ્તુ-સ્થાણું વિધ્યામિ
 હન્યેદસમિસન્ધાય વાણમણુશ્ચત્રિનિપાતિતશ્ચ માર્ગાન્તરાલવર્ગી મૃગઃ કપોતો વા
 તેન-વાણેન તત્ર સમાનપાણાતિપાતક્રિયયોરપ્યનયોર્ધાતકયો નિમિત્તવિશેષાત્
 કર્મબન્ધવિશેષો યત્તિ । તત્ર પૂર્વસ્ય ઘાતકસ્યાડધિકઃ કર્મબન્ધો ભવતિ, પરસ્ય ચ
 ઘાતકસ્ય પ્રાણાતિપાતાથમિસન્ધિરહિતસ્ય કપાયાદિ પ્રમાદવશવર્તિનઃ પૂર્વાડલ્પઃ
 કર્મબન્ધો ભવતિ, ચતોદિ રાગ-દ્વેષ-વિના વાણસ્ય પ્રક્ષેપો ન સમ્ભવતિ । રાગ-
 પ્રણાદો લોભ્યઃ, તથાદિ-અજ્ઞાનસન્દેહમિથ્યાજ્ઞાનરાગદ્વેષ સ્મૃત્યનવસ્થાન
 ધર્માડનાદર યોગ દુષ્પ્રણિધાન મેદાદષ્ટવિધઃ પ્રમાદઃ ઉત્કટકપાયછેશ્યાવલાધાન

રણાર્થ-એક મનુષ્ય હિરણ કો મારને કે વિચાર સે વાણ ફેંકતા હૈ
 ઔર ઉસસે હિરણ વિંધ જાતા હૈ દુસરા મનુષ્ય કિસી ટુઠ કો વેધને
 કે ઉદ્દેશ્ય સે વાણ છોડતા હૈ કિન્તુ બીચમેં કોઈ મૃગ યા કબૂતર ઉસસે
 વિંધ જાતા હૈ । યદ્યપિ હન દોનો ઘાતકોં કી પ્રાણાતિપાત ક્રિયા ઊપરી
 દૃષ્ટિ સે સમાન પ્રતીત હોતી હૈ, કિન્તુ આન્તરિક અધ્વવસાય મેં ભેદ
 હોને કે કારણ ઉનકે કર્મબન્ધ મેં ભેદ હોના હૈ । પહેલે ઘાતક કો કર્મ
 કા બન્ધ અધિક એવં તીવ્ર હોતા હૈ જવ કિ દુસરે ઘાતક કો, જો હિંસા
 કરને કા હરાદા નહીં રખતા, કિન્તુ પ્રમાદ ઔર કપાય કે વશીભૂત
 હૈ, અલ્પ કર્મબન્ધ હોના હૈ, કયોંકિ રાગ-દ્વેષકે વિના વાગ કા પ્રક્ષેપણ
 નહીં હો સકતા ઔર રાગ-દ્વેષ બી એક પ્રકાર કા પ્રમાદ હી હૈ । પ્રમાદ
 કે આઠ ભેદ કહે ગયે હૈ-(૧) અજ્ઞાન (૨) સ્નન્દેહ (૩) મિથ્યાજ્ઞાન (૪)

જવી. આ જ્ઞાતભાવ અને અજ્ઞાતભાવથી કર્મબન્ધમાં વિશેષતા થઈ જાય છે.
 ઉદાહરણાર્થ-એક માણસ હરણને મારવાના ઈર.દાથી બાણ ફેંકે છે, તેનાથી
 હરણ વિંધાય જાય છે. બીજો માણસ કોઈ થડને વિંધવાના આશયથી બાણ
 ફેંકે છે, પરન્તુ વચમાં કોઈ મૃગ અથવા કબૂતર તેનાથી વિંધાય જાય છે.
 જો કે આ બંને ઘાતકોની પ્રાણાતિપાત ક્રિયા ઉપર છલ્લેથી એક સરખી
 પ્રતીત થાય છે, પરન્તુ આન્તરિક અધ્વવસાયમાં ભેદ હોવાના કારણે તેમના
 કર્મબન્ધમાં ભેદ હોય છે. પહેલા ઘાતકને કર્મનો બન્ધ અધિક અને તીવ્ર
 હોય છે, બીજા ઘાતકને કે જે હિંસા કરવાનો ઈરાદો રાખતો નથી,
 પરન્તુ પ્રમાદ અને કપાયને વશીભૂત છે, અલ્પ કર્મબન્ધ થાય છે, કારણ કે
 રાગદ્વેષ વગર બાણ ફેંકી શકાતું નથી અને રાગદ્વેષ એ પણ એક પ્રકારનો
 પ્રમાદ જ છે. પ્રમાદના આઠ ભેદ કહેવામાં આવ્યા છે-(૧) અજ્ઞાન (૨)
 સ્નન્દેહ (૩) મિથ્યાજ્ઞાન (૪) રાગ (૫) દ્વેષ (૬) સ્મૃત્યનવસ્થાત-સ્મૃતિ ન

જ્ઞાનોત્પન્નઃ પૌરુષેયપરિણામસમુત્થાનઃ કટુવિપાકો નરકપાતાઽદિતસંસ્કારઃ
તીવ્રાહિંસાતિશયો મધ્યકષાયલેશ્યોદયવલાધાનો મધ્ય મધ્યતરાદિ ભેદઃ પ્રતનુ
કષાયલેશ્યાપરિણામપ્રમાદવલાઽધિષ્ઠાનવાસનાવાસિતત્વાત્ મન્દમન્દતરાદિ-
ભેદઃ । एवं-वीर्यान्तरायकर्मक्षयोपशमजन्या लब्धिः वीर्यम्, आत्मनः शक्ति
सामर्थ्यम्, तच्च वीर्यम् वज्रवभनाराचसंहननापेक्षमेव त्रिपृष्ठादीनां संबन्ध
सिंहपाटनादिलक्षणम् सिंहादीनाञ्च मदजलावसिक्तगण्डस्थलग्रुखदिग्गजादिकुम्भ-

રાગ (૫) દ્રેષ (૬) સ્મૃત્યનવસ્થાન-સ્મૃતિ ન રહના (૭) ધર્મ કે પ્રતિ
આદર અર્થાત્ જાગરુકતા ન હોના ઓર (૮) યોગીં કી અપ્રશસ્ત
પ્રવૃત્તિ હોના ।

તીવ્ર કષાય, લેશ્યા ઓર જ્ઞાન સે ઉત્પન્ન પૌરુષેય પરિણામ દ્વારા
જનિત, કટુક ફલ દેને વાલા એવં નરકપાત આદિ કા કારણ હિ જો
હો વહ તીવ્ર હિંસાભાવ કહલાતા હૈ । મધ્યમ કષાય એવં લેશ્યા કે
નિમિત્ત સે હોને વાલા મધ્યમ હિંસાભાવ કહલાતા હૈ ઓર જો પતલે-
હલ્કે કષાય એવં લેશ્યાપરિણામ સે તથા પ્રમાદ કે યાગ સે યુક્ત હો
વહ મન્દ યા મન્દતર હિંસાભાવ કહલાતા હૈ ।

વીર્યાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે ઉત્પન્ન હોનેવાલી લબ્ધિ વીર્ય
કહલાતી હૈ । વીર્ય આત્મા કા સામર્થ્ય-વિશેષ હૈ । વજ્રઋષભનરાચ-
સંહનન કી સહાયતા પાકર ઉલ્લકે દ્વારા સિંહ આદિ કા ભી વિદારણ

રહેવી (૭) ધર્મપ્રત્યે આદર અર્થાત્ જાગૃતિ ન હોવી અને (૮) યોગીની
અપ્રશસ્ત પ્રવૃત્તિ થવી.

તીવ્ર કષાય, લેશ્યા અને જ્ઞાનથી ઉત્પન્ન, પૌરુષેય પરિણામ દ્વારા
જનિત, કટુવાં ફળ આપનાર તથા નરકપાત આદિના કારણરૂપ જે હોય તે
તીવ્ર હિંસા ભાવ કહેવાય છે. મધ્યમ કષાય તથા લેશ્યાના નિમિત્તથી
થનાર મધ્યમ હિંસા ભાવ કહેવાય છે. અને જે પાતળા કષાય અને
લેશ્યા પરિણામથી તથા પ્રમાદના યોગથી યુક્ત હોય તે મન્દ અથવા
મન્દતર હિંસાભાવ કહેવાય છે.

વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થનારી લબ્ધિ વીર્ય કહેવાય
છે. વીર્ય આત્માનું સામર્થ્ય-વિશેષ છે. વજ્રઋષભ નારાયસંહનની
મદદ મેળવીને તેના દ્વારા સિંહ આદિનું પણ વિદારણ કરી શકાય
છે, જેમ ત્રિપૃષ્ઠે ક્યું હતું. સિંહ મદોન્મત્ત હાથિઓનાં કુંભસ્થળનું વિદારણ
કરવામાં સમર્થ હોય છે તે પણ વીર્યના જ પ્રભાવથી આ પ્રકારના વીર્યની

વિદારણાઽપિ ૦.ક્તં ભવતિ, તથાવિધ સ્વવીર્યસ્ય વિશેષાદ્ અતિશયાત્કર્મબન્ધ
વિશેષો ભવતિ । વિર્યવિશેષોઽપિ કદાચિદધિમાત્રઃ કદાચિદધિમાત્રમધ્યઃ કદા-
ચિદધિમાત્રમૃદુરિત્યાદિ પૂર્વોક્તસ્વરૂપો બોધ્યઃ । મન્દપ્રાણસ્ય જીવસ્ય કુચ્છેણ
ધૃતોઽપિ ન તથાવિધોત્કર્ષવિશેષો ભવતિ યાદૃશો મહાપ્રાણસ્ય ભવતિ તસ્માદ્-વીર્યા-
તિશયઃ કર્મબન્ધવિશેષસ્પ્રતિહેતુ યત્રવતિ । એવમ્-અધિક્રિયતે-આત્મા દુર્ગતિ-
પ્રસ્થાનસ્પ્રતિ યેન તદ્ અધિકરણં દ્રવ્યં સ્વજ્ઞાદિકમ્, તચ્ચાઽધિકરણરૂપં દ્રવ્યં નિર્વ-
ર્તના સંયોજનાદિરૂપમ્, તસ્ય-સ્વલુ અધિકરણદ્રવ્યસ્ય વિશેષાત્ અતિશયાત્ કર્મ-

ક્રિયા જા સક્તા હૈ, જૈસે ત્રિપૃષ્ઠ ને ક્રિયા થા સિંહ મદોન્મત્ત
હાથિયોં કે કુમ્ભસ્થલ કે વિદારણ મેં સમર્થ હોતા હૈ, વહ વીર્ય કે હી
પ્રભાવ સે । ઇસ પ્રકાર કે વીર્ય કી વિશેષતા સે કર્મબન્ધ મેં વિશેષતા
હોની હૈ । યહ વીર્યવિશેષ બી કદાચિત્ અધિકમોષ્ટ્ર હોતા હૈ, કદાચિત્
અધિકમાત્ર બધ્ય હોતા હૈ કદાચિત્ અધિકમાત્ર મૃદુ હોતા હૈ, ઇત્યાદિ
પૂર્વવત્ સ્વબલ્લ લેના ચાહિયે । જો પ્રાણી મન્દ પ્રાણ હોતા હૈ ઉસ મેં
વીર્ય કા વૈલા ઉત્કર્ષ નહીં હોતા જૈસા કિ મહાપ્રાણ મેં પાયા જાતા હૈ ।
ઇસ પ્રકાર વીર્ય કી તરતમતા બી કર્મબન્ધ મેં વિશેષતા ઉત્પન્ન કરતી હૈ ।

જિસકે કારણ આત્મા દુર્ગતિ કા અધિકારી બનતા હૈ વહ સ્વર્ગ
આદિ દ્રવ્ય અધિકરણ કહલાતે હૈ । અધિકરણ કે દો ભેદ હૈ-
નિર્વર્તનાધિકરણ અર્થાત્ હિંસા કારક સાધનોં કા નયે સિરે સે નિર્માણ
કરના ઓર સંયોજનાધિકરણ અર્થાત્ ઉનકે અવયવોં કો જોડકર
ઉન્હેં આરંભ-સમારંભ કે યોગ્ય બનાના । ઇસ અધિકરણ દ્રવ્ય કે

વિશેષતાથી કર્મબન્ધમાં વિશેષતા થાય છે. આ વીર્યવિશેષ પણ કહાયિત
અધિમાત્ર હોય છે, કહાયિત્ અધિમાત્ર મધ્ય હોય છે કહાયિત્ અધિમાત્ર
મૃદુ હોય છે ઇત્યાદિ પૂર્વવત્ સમજી લેવું જોઈએ. જે પ્રાણી મન્દ પ્રાણ
હોય છે તેનામાં વીર્યના એવો ઉત્કર્ષ થતો નથી, જેમ કે-મહાપ્રાણમાં
જેવામાં આવે છે. આવી રીતે વીર્યની તરતમતા પણ કર્મબન્ધમાં વિશેષતા
ઉત્પન્ન કરે છે.

જેના કારણે આત્મા દુર્ગતિનો અધિકારી બને છે, તે તલવાર આદિ
દ્રવ્ય અધિકરણ કહેવાય છે. અધિકરણના બે ભેદ છે-નિર્વર્તનાધિકરણ અર્થાત્
હિંસાકારક સાધનોનું નવેસરથી નિર્માણ કરવું અને સંયોજનાધિકરણ અર્થાત્
તેમના ભાગોને જોડીને તેમને આરંભ-સમારંભને લાયક બનાવવા આ અધિ-

વન્ધવિશેષો ભવતિ, પ્રતિદિનમેવ સ્વલ્પ નિર્ઘ્ણમાનસા નિર્દયા નિર્મયાઃ સન્દઃ પ્રાણિવધાય મૃષાસ્તેયાદિકૃતકુટિલશ્રુતીઃ સ્તજન્તિ । તે સ્વલ્પઅધિકરણદ્રવ્યવિશેષાઃ કલેશોપાદાનં પ્રતિ પ્રકૃષ્ટા સન્તઃ કૂટગલ્યન્તરાત્રપાશાદેશ્વાધિકરણવિશેષાચ્ચ કર્મવન્ધતારતમ્યં ભવતિ । એવન્ન-પૂર્વોક્તાના મેકચત્વારિંશતસામ્પરાયિકકર્માસ્ર-વાણાં તીવ્રભાવાત્ સન્દભાવાત્ જ્ઞાતભાવાત્ અજ્ઞાતભાવાત્ વિર્યવિશેષાત્ અધિકરણ-વિશેષાચ્ચ વિશેષસ્તારતમ્યરૂપો ભવતિ । સ ચ સામ્પરાયિકકર્માસ્રવવિશેષઃ તીવ્ર સ્તીવ્રતર સ્તીવ્રતમઃ, મન્દો મન્દતરો મન્દતમઃ, મધ્યમો મધ્યમતરો મધ્યમતમો વૌધ્યઃ તથાવિધાઽસ્રવવિશેષાચ્ચ કર્મવન્ધવિશેષો ભવતિ । એવન્ન ક્રોધરાગદ્વેષ-ભેદ સે મ્હી કર્મવન્ધ મેં ભેદ હોતા હૈ ।

જિન કા મન ઘૃણા સે શૂન્ય હૈ, જો નિર્દય હૈં, પાપ સે નહીં ડરતે હૈં, વે પ્રાણિવધ કે લિખ મૃષાવાદ એવં સ્તેય (ચોરી) આદિ કો ઉત્તેજના દેનેવાલી શ્રુતિઘોં કા નિર્માણ કરતે હૈં । વેં અધિકરણ દ્રવ્ય કલેશ કે ઉત્કટ કારણ હોતે હૈં । એસે ફાંસી જાલ આદિ અધિકરણોં કી વિશેષતા સે કર્મવન્ધ મેં મ્હી વિશેષતા ઉત્પન્ન હો જાતી હૈ ।

ઇસ પ્રકાર પૂર્વોક્ત ડનચાલીસ પ્રકાર કે કર્માસ્રવોં મેં તીવ્રતા, મન્દતા, જ્ઞાતભાવ, અજ્ઞાતભાવ, વીર્યવિશેષ ઓર અધિકરણવિશેષ હોતા હૈ ઓર ડસ વિશેષતા કે કારણ કર્મ કે આસ્રવ મેં મ્હી વિશેષતા ઉત્પન્ન હો જાતી હૈ । વહ સામ્પરાયિક કર્માસ્રવ તીવ્ર, તીવ્રતર તીવ્રતમ, મન્દ-મન્દ-તર, મન્દતમ, મધ્યમ, મધ્યતર ઓર મધ્યતમ સમજના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કી આસ્રવ સંબન્ધી વિશેષતા કર્મવન્ધ મેં મ્હી વિશેષતા હોતી હૈ ।

કરણુ દ્રવ્યના ભેદથી પણ કર્મવન્ધમાં ભેદ થાય છે.

જેમનું મન ઘૃણાથી શૂન્ય છે, જે નિર્દય છે, પાપથી ડરતાં નથી, તેઓ પ્રાણિવધ કાળે મૃષાવાદ અને સ્તેય (ચોરી) વગેરેને પ્રોત્સાહન આપનારી શ્રુતિઓનું નિર્માણ કરે છે. આ અધિકરણ દ્રવ્ય કલેશના ઉત્કટ કારણો હોય છે. આવા ફાંસી જાળ આદિ અધિકરણોની વિશેષતાથી કર્મવન્ધમાં પણ વિશેષતા ઉત્પન્ન થઈ જાય છે.

આ રીતે પૂર્વોક્ત ઓગણચાલીસ પ્રકારનાં કર્માસ્રવોમાં તીવ્રતા મન્દતા, જ્ઞાતભાવ, અજ્ઞાતભાવ, વીર્યવિશેષ અને અધિકરણ વિશેષ થાય છે અને આ વિશેષના કારણે કર્મના આસ્રવમાં પણ વિશેષતા ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. તે સામ્પરાયિક કર્માસ્રવ તીવ્ર, તીવ્રતર તીવ્રતમ, મન્દ, મન્દતર, મન્દતમ, મધ્યમ, મધ્યમતર અને મધ્યમતમ સમજવો જોઈએ. આ પ્રકારની આસ્રવ સંબન્ધી વિશેષતાથી કર્મવન્ધમાં પણ વિશેષતા થાય છે.

વિશિષ્ટપ્રાણિસંયોગાદ્ દેશકાલાદિવિવિધબાહ્યકારણવશાચ્ચેન્દ્રિયકષાયાઽવ્રત-
ક્રિયાણાં કુત્રચિદાત્મનિ તીવ્રો ભાવો ભવતિ સવ્રતઃ પરિણામવિશેષો ભવેત્તસ્ય
તીવ્રાસ્રવો ભવતિ । તાસામેવેન્દ્રિયકષાયાઽવ્રતક્રિયાણાં ક્રોધાઘાઞ્યન્તરકારણ
વશાદ્ દેશકાલાદ્યનેકબાહ્યકારણવશાચ્ચ કુત્રચિદ્ આત્મનિ મન્દો ભાવો ભવતિ
નિર્વલઃ સ્વલ્લ તત્રાત્મનઃ પરિણામવિશેષો ભવતિ । તસ્ય ચ મન્દાસ્રવો જાયતે,
ઇન્દ્રિયકષાયાઽવ્રત ક્રિયા પ્રવૃત્તસ્ય કસ્યચિદ્ આત્મનો જ્ઞાતત્વં ભવતિ, જ્ઞાત-
ભાવસ્ય સ્વલ્લ મહાનાસ્રવઃ સ્યાત્ । एवं સ્વલ્લ ઇન્દ્રિય કષાયાઽવ્રતક્રિયાપ્રવૃત્તસ્ય
કસ્યચિદાત્મનોઽજ્ઞાતત્વં ભવતિ, તસ્યાઽલ્પાઽસ્રવો ભવતિ । एवं વીર્યવિશેષે ચ

હસ પ્રકાર ક્રોધ, રાગ દ્વેષ સે યુક્ત પ્રાણી કે સંયોગ સે ઓર દેશ
કાલ આદિ બાહ્ય કારણોં કે વશ સે ઇન્દ્રિય, કષાય, અવ્રત ઓર
ક્રિયાઓં કા કિસી આત્મા મેં તીવ્રભાવ હોતા હૈ સ્વલ પરિણામવિશેષ
હોતા હૈ । એસે જીવ કો તીવ્ર આસ્રવ હોતા હૈ । ઊન્હોં ઇન્દ્રિય, કષાય,
અવ્રત ઓર ક્રિયાઓં કા ક્રોધ આદિ આન્તરિક કારણોં સે તથા દેશ
કાલ આદિ અનેક બાહ્ય કારણોં સે કિસી આત્મા મેં મન્દભાવ હોતા
હૈ અર્થાત્ આત્મા કા નિર્વલ પરિણામ હોતા હૈ । એસે જીવ કો મન્દ
આસ્રવ હોતા હૈ । ઇન્દ્રિય, કષાય, અવ્રત એવં ક્રિયા મેં પ્રવૃત્ત કિસી
આત્મા કા જ્ઞાતભાવ હોતા હૈ અર્થાત્ કોઈ જીવ જાન વૂઝ્ઝકર કિસી કાર્ય
મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ । ડસે મહાન્ આસ્રવ હોતા હૈ હસી પ્રકાર ઇન્દ્રિય,
કષાય, અવ્રત તથા ક્રિયાઓં મેં પ્રવૃત્ત કિસી આત્મા કા અજ્ઞાતભાવ
હોતા હૈ અર્થાત્ કિસી જીવ કે દ્વારા અનજાન મેં કોઈ પ્રવૃત્તિ હો

આમ, ક્રોધ, રાગ તેમજ દ્વેષથી યુક્ત પ્રાણીના સંયોગથી અને દેશકાળ
આદિ બાહ્ય કારણોના વશથી, ઇન્દ્રિય, કષાય, અવ્રત, અને ક્રિયાઓના ક્રોધ
આત્મામાં તીવ્રભાવ હોય છે—‘સખળ’ પરિણામ વિશેષ થાય છે. આવા જીવોને
તીવ્ર આસ્રવ થાય છે તેજ ઇન્દ્રિય, કષાય, અવ્રત અને ક્રિયાઓના ક્રોધ
આદિ આન્તરિક કારણોથી તથા દેશ-કાળ આદિ અનેક બાહ્ય કારણોથી ક્રોધ
ક્રોધ આત્મામાં મન્દભાવ થાય છે, અર્થાત્ આત્માનું નિર્બળ પરિણામ હોય
છે. આવા જીવોને મન્દ આસ્રવ થાય છે. ઇન્દ્રિય, કષાય અવ્રત અને ક્રિયામાં
પ્રવૃત્ત ક્રોધ આત્માને જ્ઞાતભાવ થાય છે અર્થાત્ ક્રોધ જીવ જાણી-સમજીને
ક્રોધ કાર્યમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તેને મહાન આસ્રવ થાય છે, એવી જ રીતે
ઇન્દ્રિય, કષાય, અવ્રત તથા ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્ત ક્રોધ આત્માને અજ્ઞાતભાવ
થાય છે અર્થાત્ ક્રોધ જીવ દ્વારા અજાણતા જ ક્રોધ પ્રવૃત્તિ થઈ જાય છે,

ઋગ્વર્ષભનારાચસંહનનમણ્ડિતપુરુષેન્દ્રિયાદેર્ઘ્યપારે મહાનાસ્ત્રવઃ સ્યાત્ અન્ય સંહનનસંયુક્તપુરુષસ્ય પાપકારણેઽલ્પાઽઽસ્રવો ભવતિ અલ્પાદપિ અલ્પતર આસ્રવો વીર્યવિશેષાદ્ ભવતિ, એવમધિકરણવિશેષે સતિ આસ્રવવિશેષો ભવતિ । યથા કસ્યચિન્મોદકસ્યાઽનુભાગો રસોઽતિમધુરઃ સ્વલ્પમધુરો વા ભવતિ । કસ્યચિદ્ વસ્તુનઃ સ્વાદોઽતિ કટુકોવા, કસ્યચિત્પુત્તર્નાતિમધુરો નાઽપ્યતિઃકટુકો ભવતિ, અચ્ચાદે ગુણીકરણાદીનાં ચ સ એવ મન્દમન્દતરમન્દતમત્વાદિ વ્યવસ્થાં ચ લભતે, પર્વ કર્મણામપિ શુભઽશુભાઽઽત્મકાનાં તીવ્ર તીવ્રતર તીવ્રતમ, મન્દ મન્દતર મન્દ-તમત્વાદિભેદભિન્નો બન્ધો ભવતિ । તત્ર શુભકર્મણા મનુભાગો રસો દ્રાક્ષેશુક્તીરમાશિ-

જાતી છે, ઉસે અલ્પ આસ્રવ હોતા છે । હસી પ્રકાર ઋગ્વર્ષ-ઋગ્વર્ષભનાચ સંહનન વાલે પુરુષ કી ઇન્દ્રિય આદિ કી જો પ્રવૃત્તિ હોતી છે, ઉસસે મહાન્ આસ્રવ હોતા છે । અન્ય સંહનનવાલે પુરુષ કો પાપ કરને મેં અલ્પ આસ્રવ હોતા છે । કિસી અલ્પતર વીર્યવાલે કો અલ્પતર આસ્રવ હોતા છે ।

હસી પ્રકાર અધિકરણ કી વિશેષતા સે મી આસ્રવ મેં વિશેષતા હોતી છે ।

જેસે કિસી લઢૂઢૂ કા રસ અતિમધુર હોતા છે ઓર કિસી કા સ્વલ્પ મધુર હોતા છે, કિસી વસ્તુ કા સ્વાદ અત્યન્ત કટુક હોતા છે, કિસી કા ન અતિ મધુર ઓર ન અતિ કટુ હોતા છે, ઓર ઉસ અલ્પતા આદિ મેં મન્દતા, મન્દતરતા, મન્દતમતા આદિ કી અનેક શ્રેણિયાં હોતી છે, હસી પ્રકાર શુભ ઓર અશુભ કર્મોં કા મી તીવ્ર, તીવ્રતર, તીવ્રતમ મન્દ, મન્દતર ઓર મન્દતમ આદિ અનેક ભેદોં વાલા બન્ધ હોતા છે । હન મેં

તેને અલ્પ આસ્રવ થાય છે. આવી જ રીતે વળ-ઋગ્વર્ષભનાચસંહનનવાળા પુરુષની ઇન્દ્રિય આદિની જે પ્રવૃત્તિ થાય છે તેથી મહાન્ આસ્રવ થાય છે. અન્ય સંહનનવાળા પુરુષને પાપ કરવામાં અલ્પ આસ્રવ થાય છે. કેઈ અલ્પતર વીર્યવાળાને અલ્પતર આસ્રવ થાય છે.

આ રીતે અધિકરણની વિશેષતાથી પણ આસ્રવમાં વિશેષતા થાય છે.

જેમ કેઈ લાડવાનો રસ અતિ મધુર હોય છે અને કેઈનો સ્વલ્પ મધુર હોય છે, કેઈ વસ્તુનો સ્વાદ અત્યન્ત કટુ હોય છે કેઈનો ન અતિ મધુર અથવા ન અતિ કટુ હોય અને તે અલ્પતા આદિમાં મન્દતા, મન્દતરતા, મન્દતમતા આદિ અનેક શ્રેણિઓ હોય છે, એવી જ રીતે શુભ અને અશુભ કર્મોનો પણ તીવ્ર, તીવ્રતર, તીવ્રતમ, મન્દ, મન્દતર, અને મન્દતમ આદિ અનેક ભેદોવાળો બન્ધ થાય છે. આમાંથી શુભકર્મોનો રસ- (અનુભાગ) દ્રાક્ષ, શેરડી, દૂધ અથવા મધ જેવો મીઠો હોય છે જેના અનુભવથી

ફલદ્ અતિસધુરો યવતિ યદનુમધેન જીવઃ સાન્દ્રાઽઽનન્દસન્દોહ તુન્દિલાન્તઃ
 ઠરણો જાયતે । અશુભકર્મણાં રસસ્તુ નિમ્બકિરાતતિક્તાદિવદ્ અતિતરાં તિક્તો
 મરતિ, યદનુમધેન જીવોઽવર્ણનીયાં વ્યાકુલતાં મજતે । તત્ર તીવ્ર તીવ્રતરસ્વાદિ
 લોચનાર્થ' ચ દદ્ધાન્તો યથા ઇક્ષુનિમ્બયોરન્યતરસ્ય ચતુઃ શેટકપરિમિતો રસઃ
 સ્વાભાવિકરસો વર્તતે, તથ વહ્નિતાપદ્વારોત્કાલિત ઉત્કાચિતો યથા શેટક ચતુઃ
 પ્લયસ્થાયે શેટક ત્રિતયસાન્નોઽવશિષ્યતે તદાઽસૌ 'તીવ્ર' ઇત્યુચ્યતે, પુનરુત્કાલ-
 નેન શેટક દ્વિતયસાન્નોઽવશિષ્યતે તદા 'તીવ્રતર' इत्यभिधीयते, પુનરુત્કાલનેન
 શેટકસાન્નેઽવશિષ્ટે 'તીવ્રતમ' इति કથ્યતે એવમ્ ઇક્ષુ નિમ્બયોરેવ શેટકૈકમાત્રો રસઃ
 સ્વાભાવિકરસો વર્તતે તત્ર શેટકૈકજલમેલનેન 'મન્દરસઃ' इति વ્યપદિશ્યતે,

સે છુમ્બ કર્મો' का रस-(अनुभाण) द्राक्षा, इक्षु, दूध या मधु के समान
 मधुर होता है जिसके अनुभव से जीव को अत्यन्त आनन्द की प्राप्ति
 होती है । अछुम્ब कर्मों' का रस नीम या चिरायते आदि के समान
 फट्टवा होता है, जिसके अनुभव से जीव अवर्णनीय व्याकुलता का
 भागी होता है । कर्मफल के तीव्रता और तीव्रतरता आदि को समझाने
 के लिए यह उदाहरण दिया जाता है-ईख या नीम का चार सेर रस
 स्वाभाविक रस है । इस रस को आग पर तपाया जाय और उवाला
 जाय जिससे कि वह चार सेर के स्थान पर तीन सेर रह जाय तो
 वह रस 'तीव्ररस' कहलाएगा । अगर उसे फिर उवाला जाय और वह
 दो सेर रह जाय तो 'तीव्रतर' कहा जाएगा उसे फिर उवाला जाय और
 वह यदि एक सेर ही शेष रह जाय तो 'तीव्रतम' कहा जायगा ।

इसी प्रकार ईख या नीम का एक-एक सेर रस स्वाभाविक रस
 है । उसमें एक-एक सेर पानी मिला देने पर मन्द रस कहा जायगा ।

છવને અત્યન્ત આનન્દની પ્રાપ્તિ થાય છે. અશુભ કર્મોનો રસ લીમડા અથવા
 કરીયાતા આદિની માફક કડવો હોય છે જેના અનુભવથી છવ અવર્ણનીય
 વ્યાકુળતાનો ભાગી થાય છે કર્મફળની તીવ્રતા અને તીવ્રતરતા વગેરેને
 સમજાવવા માટે આ ઉદાહરણ આપવામાં આવે છે-શેરડી અથવા લીમડાનો
 ચાર શેર રસ સ્વાભાવિક રસ છે. આ રસને અગ્નિ ઉપર ગરમ કરવામાં
 આવે અને ઉકાળવામાં આવે કે જેથી તે ચાર, શેરડી જગ્યાએ ત્રણ શેર
 જ રહી જાય તો તે રસ 'તીવ્રરસ' કહેવાશે અગર આ રસને ફરીવાર ઉકા-
 ળવામાં આવે અને તે બે એક શેર જ બાકી રહી જાય તો 'તીવ્રતમ' કહેવાશે.

આવી જ રીતે શેરડી અથવા લીમડાનો એક એક શેર રસ સ્વાભાવિક
 રસ છે તેમાં એક શેર પાણી ભેળવવામાં આવે તો તે મન્દરસ કહેવાશે.

દ્વિશેષકજલસંગોજનૈન પુનઃ 'મન્દતરો રસ' इति व्यपदेशो भवति शेटकत्रय-
परिमितजलमेलनૈન तु 'मन्दतमो रस' इति व्यवहारो भवति, । एवं कर्मणां शुभा-
शुभानां स्वत्वात्मपरिणतिविशेषात् तीव्र तीव्रतरत्वादितारतम्यं भवतीति भावः ।

‘उक्तञ्च सूत्रकृताङ्गे २ श्रुतस्कन्धे ५ अध्ययने ६-७ गाथायाम्—

जे केद्व खुद्रका प्राणा अथवा सन्ति महालया ।

सरिसं तेहिं वेरंति असरिसंति व णो वए ॥१॥

‘एएहिं दोहिं ठाणेहिं वचहारो ण विज्जइ ।

एएहिं दोहिं ठाणेहिं अणाधारंतु जाणए ॥२॥ इति ।

ये કેડપિ ક્ષુદ્રકાઃ પ્રાણા અથવા સન્તિ મહાલયાઃ ।

સદૃશં તૈ વૈરમિતિ અસદૃશમિતિ ચા નો વદેત્ ॥૧॥

‘एताभ्यां द्वाभ्यां स्थानाभ्यां व्यवहारो न विद्यते ।

एताभ्यां द्वाभ्यां स्थानाभ्याम् ।

अनाचारन्तु जानीयात् ॥२॥ इति ।

અયમાશયઃ—યે કેચન ક્ષુદ્રકાઃ અલ્પકાઃ સર્વાઃ પ્રાણિનઃ એકેન્દ્રિયદ્વીન્દ્રિ-
યાદયઃ પશ્ચેન્દ્રિયા વા સન્તિ, અથવા મહાલયાઃ મહાકાયાઃ સન્તિ, હસ્તિપ્રમૃતયઃ
પ્રાણિનઃ તેવાશ્ચ ક્ષુદ્રકાણા મલ્પકાયાનાં કુન્થાદીનાં મહાનાલયઃ શરીરરૂપઃ

उस में दो स्तर जल मिला दिया जाय तो मन्दतर रस कहलाएगा ।
अगर तीन स्तर जल मिला दिया जाय तो वह रस मन्दतम हो जाएगा
इसी प्रकार शुभ और अशुभ कर्मों के रस में आत्मा के परिणामों
के भेद से तीव्रता, तीव्रतरता आदि होती है । सूत्रकृतांग सूत्र के
द्वितीय श्रुतस्कंध के पांचवें अध्ययन की गाथा ६-७ में कहा है—

कोई-कोई एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय आदि क्षुद्र प्राणी होते हैं और कोई-
कोई हाथी आदि महाकाय प्राणी होते हैं । उन क्षुद्र अर्थात् अल्पकाय
कुन्थु आदि प्राणियों का घात करने पर और हाथी आदि महाकाय

તેમાં બશેરપાણી ઉમેરવામાં આવે તો તે મન્દતર રસ કહેવાશે અને જો ત્રણ
શેરપાણી ઉમેરવામાં આવે તો તે રસ મન્દતમ થઈ બશે બશે બશે બશે બશે બશે
રીતે શુભ અને અશુભ કર્મોના રસમાં આત્માના પરિણામોના ભેદથી તીવ્રતા,
તીવ્રતરતા આદિ થાય છે. સૂત્રકૃતાંગ સૂત્રના દ્વિતીય શ્રુતસ્કંધના પાંચમા
અધ્યયનની ગાથા ૬-૭ માં કહ્યું છે—

કોઈ-કોઈ એકેન્દ્રિય, દ્વિ-દ્રીય આદિ ક્ષુદ્ર પ્રાણી ર.ય છે અને કોઈ-

કોઈ હાથી આદિ વિશાળકાય પ્રાણી હોય છે તે ક્ષુદ્ર અર્થાત્ અલ્પકાય કંથવા
આદિ પ્રાણી હિંસા કરવાથી અને હાથી આદિ મહાકાય પ્રાણીઓનો ઘાત

આશ્રયો યેષાં તે મહાલયાઃ હસ્તિ પ્રભૃતયઃ તેષાંચ દનને સદૃશં વૈરમિતિ, વજ્રં કર્મ વિરોધલક્ષણં વા વૈરં તત્સદૃશં સમાનં ભવતીતિ સર્વં જન્તૂના મલપ્રદેશત્વાદ્ ઇત્યેક એકાન્તેન નો વદેત્ । एवं तेषां खलु अल्पकायमहाकायानां व्यापादनेऽसदृशं विसदृशं वैरं कर्मबन्धो विरोधो वा भवति, इन्द्रियकायविज्ञानानां विसदृशत्वात्, सत्यपि मदेकालपत्वे विष्यदृशं वैरं मित्येवमपि नो वदेत् । यदि हि वध्यापेक्ष एव कर्मबन्धः स्यात् तदा तत्तदल्पकायत्वमहाकायत्व साध्य वैषम्यात्कर्मबन्धस्यापि सादृश्य समादृश्यं वा वर्तुं शक्येत । किन्तु नहि केवलं तदृशादेव कर्मबन्धो भवति, अपितु व्यापादकस्यात्मनोऽध्यवसायविशेषवशादपि कर्मबन्धः । तथा च तीव्राध्यवसायिनो व्यापादकस्याऽऽत्मनोऽल्पकायसत्त्वव्यापादनेऽपि सदृष्टैरं महाकर्मबन्धो भवति, अक्रामस्य पुनरनध्यवसायिन आत्मनो महाकायसत्त्वव्यापादनेऽपि स्वल्पं वैरम्

પ્રાણિયોં કા ઘાત કરને પર સમાન હી વૈર અર્થાત્ કર્મબન્ધ યા વિરોધ હોતા હૈ, કયોંકિ સમી આત્મા સમાન રૂપ સે અસંખ્યોત પ્રદેશી હૈ- કિસી સી જીવ કે પ્રદેશોં સે ન્યૂનાધિકતા નહીં હૈ, એસા નહીં કહના જાહિયે । હસકે વિપરીત અલ્પકાય ઓર મહાકાય જીવોં કા ઘાત કરને પર વિસદૃશ હી કર્મબન્ધ હોતા હૈ, કયોંકિ ઉતકે હન્દ્રિયાદિ પ્રાણોં મેં ન્યૂનાધિકતા હોની હૈ, સબ પ્રાણિયોં કે પ્રાણ સમાન સંખ્યક નહીં હોતે ઓર સબ કી ચેતના એક-સી વ્યક્ત નહીં હોતી એસા સી નહીં કહના જાહિયે । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ અલ્પકાય ઓર મહાકાય જીવોં કી હિંસા સે સમાન હી કર્મબન્ધ હોતા હૈ યા અસમાન હી કર્મબન્ધ હોતા હૈ, યહ દોનોં એકાન્ત સમીચીન નહીં હૈ । કર્મબન્ધ કા તારતમ્ય એકાન્તતઃ વધ્ય જીવોં કી અપેક્ષા સે નહીં હોતા, કિન્તુ ઘાતક જીવ કે અધ્યવસાયકી તીવ્રતા ઓર મન્દતા કી સી-ઉસ મેં અપેક્ષા રહતી હૈ । કોઈ જીવ ભલે હી

કરવાથી સરખાં જ વૈર અર્થાત્ કર્મબન્ધ અથવા વિરોધ થાય છે, કારણ કે બધાં જ આત્માથી સમાન રૂપથી અસંખ્યાત પ્રદેશી છે-કોઈ પણ જીવના પ્રદેશોમાં ન્યૂનાધિકતા નથી, એવું કહેવું ન જોઈએ. આવાથી વિપરીત અલ્પકાય અને મહાકાય જીવોની હિંસા કરવાથી-વિસદૃશ જ કર્મબન્ધ થાય છે કારણ કે તેમના હન્દ્રિયાદિ પ્રાણોમાં ન્યૂનાધિકતા હોય છે, બધાં પ્રાણિઓના પ્રાણ સમાન સંખ્યક હોતાં નથી અને બધાની ચેતના એકસરખી વ્યક્ત થતી નથી એમ પણ ન કહેવું જોઈએ. તાત્પર્ય એ છે કે અલ્પકાય અને મહાકાય જીવોની હિંસાથી સરખી રીતે જ કર્મ બંધાય છે. આ બંને એકાન્ત સમીચીન નથી કર્મબન્ધનું તારતમ્ય એકાન્તતઃ વધ્ય જીવોની અપેક્ષાથી હોતું નથી, પરંતુ ઘાતક જીવના અધ્યવસાયની તીવ્રતા અને મન્દતાની પણ તેમાં

अल्पकर्मबन्धो भवतीति भावः । अत एवाऽऽभ्या मनन्तरोक्ताभ्यां स्थानाभ्या मल्पकायत्व महाकायत्वाभ्या मनयोर्जा स्थानयोरल्पकायमहाकायव्यापादनापादित-
कर्मबन्धस्य सदृशत्वविसदृशत्वयोर्व्यवहरणं व्यवहारो निर्युक्तिकत्वाच्च युज्यते ।
तथाहि न वध्यस्य सदृशत्वविसदृशत्वश्चैकमेव कर्मबन्धस्य कारणम्, अपितु घात-
कस्य तीव्रभावो मन्दभावो ज्ञातभावोऽज्ञातभावो महावीर्यत्व मलावीर्यत्वमधि-
करणत्वञ्च कर्मबन्ध सदृशत्वाऽसदृशत्वयोः प्रयोजकमिति तदेवं वध्यघातकयो
विशेषात्कर्मबन्ध तारतम्यं भवतीत्येवं व्यवस्थिते केवलं वध्यमेवापेक्ष्य कर्मबन्ध

अल्पकाय और अल्पप्राण हों किन्तु घातक जीव यदि अत्यन्त तीव्र
कषाय परिणाम से उसका हनन करता है तो महान् कर्मबन्ध होता है ।
इसके विपरीत बले ही कोई जीव महाकाय हो, अगर घातक अनि-
च्छापूर्वक या मन्दकषायपूर्वक उसका घात करता है तो उसे अल्प कर्म
बन्ध होता है । अतएव पूर्वोक्त दोनों एकान्तमय वचन समीचीन नहीं
हैं, अर्थात् अल्पकाय और महाकाय जीवों की हिंसा से कर्मबन्ध समान
ही होता है अथवा असमान ही होता है, यह कथन युक्तिसंगत नहीं है ।

अभिप्राय यह है कि मात्र वध्य जीव की सदृशता और विसदृ-
शता ही कर्मबन्ध का कारण नहीं है किन्तु घातक जीव का तीव्रभाव,
मन्दभाव ज्ञातभाव और अज्ञातभाव, महावीर्यत्व एवं अल्पवीर्यत्व
तथा अधिकरणों की असमानता भी कर्मबन्ध के तारतम्य का कारण
है । इस स्पष्टीकरण से यह निर्विवाद है कि कर्मबन्ध में जो न्यूना-
धिकता होती है, वह वध्य और घातक दोनों की विशेषता पर निर्भर
करती है, ऐसी स्थिति में केवल वध्य जीव की अपेक्षा से ही कर्मबन्ध में

अपेक्षा रहे છે કેમકે જીવલલે અલ્પકાય અને અલ્પપ્રાણ હોય પરન્તુ ઘાતક
જીવ જો અત્યન્ત તીવ્ર કષાય પરિણામથી તેનો ઘાત કરે છે ત્યારે તેને મહાન્
કર્મબન્ધ થાય છે. આનાથી વિપરીત લલે કેઈ જીવ મહાકાય હોય અગર
ઘાતક અનિચ્છાપૂર્વક અથવા મન્દકષાયપૂર્વક તેનો ઘાત કરે છે ત્યારે તેને
અલ્પ કર્મબન્ધ થાય છે. આથી પૂર્વોક્ત બંને એકાન્તમય વચન સમીચીન
નથી, અર્થાત્ અલ્પકાય અને મહાકાય જીવોની હિંસાથી કર્મબન્ધ સરખાં જ
થાય છે અથવા અસમાન જ હોય છે આ વિધાન યુક્તિ સંગત નથી.

અભિપ્રાય એ છે કે એક માત્ર વધ્ય જીવની સદૃશતા અને વિસદૃશતા
જ કર્મબન્ધમાં કારણ નથી પરન્તુ ઘાતક જીવના તીવ્રભાવ મન્દભાવ જ્ઞાતભાવ,
અને અજ્ઞાતભાવ મહાવીર્યત્વ અને અલ્પવીર્યત્વ તથા અધિકરણોની અસમાનતા
પણ કર્મબન્ધના તારતમ્યના કારણો છે. આ સ્પષ્ટીકરણથી એ નિર્વિવાદ છે કે

સદૃશત્વાઽસદૃશત્વ વ્યવહારો ન યુક્ત ઇતિ । એવ સ્વચોરેવ સ્થાનયોઃ પ્રવૃત્તસ્યાઽના-
 ચારં જિજ્ઞાસીયાત્ । તથાહિ-યદ્ જીવસામ્યાત્કર્મવન્ધસદૃશત્વ મુચ્યતે, તન્ન
 યુક્તમ્ કિન્તુ તીવ્રાદિભાવ સવ્યપેક્ષસ્યૈવ વધસ્ય કર્મવન્ધોઽભ્યુપેતું યુક્તઃ । યથાહિ,
 આગમસવ્યપેક્ષસ્ય સમ્યક્ ક્રિયાં કુર્વતોઽપિ યદ્યપિ આતુરવિપત્તિર્ભવતિ । તથા ચ
 તત્ર ન વૈદ્યસ્ય વૈરાનુષક્તો ભવતિ, ભાવદોષાઽભાવાત્ અન્યસ્ય પુનઃ સર્પવુદ્ધયા
 રજ્જુમપિ ધનતો કર્મવન્ધો ભવતિ ભાવદોષસદ્ભાવાત્ ભાવદોષરહિતસ્ય તુ ન

સમાનતા યા અસમાનતા માનવા ઔર કહના ડચિત નહીં હૈ । જો હન
 દોનોં ઇકાન્ત સ્થાનોં મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ અર્થાત્ કર્મવન્ધ કો ઇકાન્તતઃ
 સમાન યા અસમાન હી કહતા હૈ, વહ અનાચાર મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ।

સવ જીવોં કો ઇકાન્તરૂપ સે સમાન માનકર ડનકી હિંસા સે
 સમાન હી કર્મવન્ધ માનના યોગ્ય નહીં હૈ કિન્તુ તીવ્રભાવ મન્દભાવ
 આદિ કી વિશેષના સે ઔ કર્મવન્ધ મેં વિશેષતા માનના ચાહિય ।

કોઈ ચિકિત્સક આયુર્વેદ શાસ્ત્ર કે અનુકૂળ સમીચીન શલ્યક્રિયા
 યા અન્ય ચિકિત્સા કર રહા હો ફિર ઔ રોગી કી મૃત્યુ હો જાય તો
 વૈદ્ય ડસકે નિમિત્ત સે હિંસા કા ભાગી નહીં હોતા, વર્થોકિ ડસકી
 ભાવના મેં દોષ નહીં હૈ દૂસરા કોઈ પુરુષ સર્પ સમજ્ઞ કર રજ્જુ પર પ્રહાર
 કરતા હૈ ઔર ડસકે દો ઁંડ કાર દેના હૈ તો સર્પ કા ઘાત ન હોને

કર્મવન્ધમાં જે ન્યૂનાધિકતા હોય છે તે વધ્ય અને ઘાતક બંનેની વિશેષતા
 પર નિર્ભર રહે છે, તેવી સ્થિતિમાં કેવળ વધ્યશબ્દની અપેક્ષાથી જ કર્મવન્ધમાં
 સમાનતા અથવા અસમાનતા માનવી અગર કહેવી એ યોગ્ય નથી જે
 આ બંને એકાન્ત સ્થાનોમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે. અર્થાત્ કર્મવન્ધને એકાન્તતઃ
 સમાન અથવા અસમાન જ કહે છે તે અનાચારમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે.

બધા જીવોને એકાન્ત રૂપથી સરખા ગણીને તેમની હિંસાથી સરખાં
 જ કર્મવન્ધ માનવા યે ગ્ય નથી કિન્તુ તીવ્રભાવ મન્દભાવ આદિની વિશેષતાથી
 પણ કર્મવન્ધમાં વિશેષતા સ્વીકારવી જોઈએ.

કોઈ ચિકિત્સક આયુર્વેદશાસ્ત્રને અનુકૂળ સમીચીન શસ્ત્રક્રિયા અથવા
 અન્ય ચિકિત્સા કરી રહ્યો હોય, તો પણ રોગીનું મરણ થઈ જાય તો વૈદ્ય
 તેના નિમિત્તથી હિંસાનો ભાગી બનતો નથી કારણ કે તેની ભાવનામાં દોષ
 નથી બીજો કે ઇ પુરુષ સાપ માનીને દોરડાં ઉપર પ્રહાર કરે છે અને તેના
 જે દૂધડા કરી નાખે છે. આ પ્રસંગમાં સાપની હિંસા ન થવા છતાં પણ તે
 હિંસાના પાપનો ભાગી થાય છે. કારણ કે તેના ભાવોમાં દોષ વિદ્યમાન છે. ભાવ-

कर्मबन्धः इति । उपरञ्चाऽऽनमे-उच्चालिप्यंभि पाए' इत्यादि तण्डुल मत्स्या-
ख्यानकंठु सुपगीतमेव, तदैवंधि वध्य-घातकभावाऽपेक्षया सदृशमिति,
अन्यथा-पुनरनाचारः स्यादिति भावः ॥६॥

मूलम्-जीवाजीवा आसवाहिगरणं ॥७॥

छाया-‘जीवाऽजीवा आसवाधिकरणम्-’ ७॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वसूत्रे-आसवविशेष हेतुत्वेनाऽधिकरणमुक्तम्, सम्पत्ति-
भेदप्रतिपादनपूर्वकमधिकरणस्वरूपज्ञानार्थमाह ‘जीवाजीवा आसवाहि-

पर भी वह हिंसा के पाप का आगी होता है, क्योंकि उसके भावों में
दोष विद्यमान हैं। भावदोष से जो सर्वथा रहित है, उसे कर्मबन्ध नहीं
होता। आगम में कहा है कोई मुनि ईर्ष्यास्रमिति से गमन कर रहा हो
और उसने पैर ऊपर उठाया हो, इसी बीच अकस्मात् कोई वेईन्द्रिय
आदि प्राणी वहां आ जाय और पैर के नीचे दब जाय तो भी उस
मुनि को तन्निमित्तक हिंसा का दोष नहीं लगता। इसके विपरीत तंडुल
मत्स्य का दृष्टान्त भी प्रसिद्ध है। अतएव वध्यजीव और घातक जीव
दोनों की अपेक्षा से कर्म बन्धकी न्यूनाधिकता मानना चाहिए।
एकान्त मानने पर अनाचार होता है । ६।

सूत्रार्थ-‘जीवाऽजीवा आसवा’ इत्यादि ।

जीव और अजीव आसव के अधिकरण हैं ॥७॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वसूत्र में प्रतिपादन किया गया है कि अधि-
करण आसव की विशेषता का कारण है। अब उसके भेदों का

दोषधी ने सर्वथा रहित छे तेने कर्मबन्ध थतो नथी आगमभां कछुं छे-
कोई मुनि ईर्ष्यास्रमितिथी न्ह रह्या होय अने तेमछे पग उपर लीधो होय
ओ अरझाभां अकस्मात् कोछ जेईन्द्रिय आदि प्राणी त्यां आवी अछे अने
तेमना पग तणे क्यडाछ न्हय तो पछु ते मुनिराजने ते निमित्ते हिंसानो
दोष लागतो नथी. आनाथी विपरीत तंडुल मत्स्यनुं दृष्टान्त पछु प्रसिद्ध छे.
आथी वध्यजुव अने घातकजुव-जनेनी अपेक्ष थी कर्मबन्धनी न्यूनाधिकता
समजवी-मानवी जेधओ. ओकान्त मानवाथी अनचार थाय छे ॥६॥

‘जीवाऽजीवा आसवाहिगरणं’ इत्यादि

सूत्रार्थ-जुव अने अजुव आसवना अधिकरण छे. ॥७॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वसूत्रभां ओ प्रतिपादन करवाभां आन्युं के अधि-
करण ओ आसवनी विशेषतानुं कारण छे. डवे तेना लेहोनुं निरूपण करीने

ઘર્ણ'ં' इति । जीवा अजीवाश्च पूर्वोक्तस्वरूपा आस्रवाधिकरणं भवन्ति, तत्राऽधि-
क्रियन्तेऽस्मिन्नर्था इत्यधिकरणं द्रव्यं मुच्यते । तच्च-द्रव्यं पञ्चविधम्, धर्माऽस्ति-
कायाऽधर्माऽस्तिकायाऽऽकाशास्तिकाय-कालः पुद्गलास्तिकाय-जीवास्तिकायमे-
वात् । एवञ्च-यद् द्रव्यमाश्रित्याऽऽस्रव उत्पद्यते, तद् द्रव्यमधिकरणं मित्युच्यते,
यद्यपि-सर्वोऽपि शुभाशुभकायादियोगलक्षण आस्रव आत्मनो जीवस्यैव सञ्जायते
तथापि यमास्रवं मुख्यभूतो जीव उत्पादयति तस्याऽऽस्रवस्याऽधिकरणमाश्रयो
जीवद्रव्यं भवति । यः पुनरास्रवोऽजीव द्रव्यमाश्रित्य जीवस्योत्पद्यते, तस्याऽऽस्रव-
स्याऽधिकरणमाश्रयोऽजीव द्रव्यं मुच्यते । अत एवाऽत्राऽऽस्रवस्याऽधिकरणं जीवा

નિરૂપણ કરકે સ્વરૂપ કા કથન કરતે હૈ—

जीव और अजीव, जिनका स्वरूप पहले कहा जा चुका है,
आस्रव के अधिकरण होते हैं । जिस में अर्थ अधिकृत किये जाएं
उस द्रव्य को अधिकरण कहते हैं । द्रव्य के छह भेद हैं—(१) धर्मास्ति-
काय (२) अधर्मास्तिकाय (३) आकाशास्तिकाय (४) पुद्गलास्तिकाय
(५) जीवास्तिकाय और (६) काल । इस प्रकार जिस द्रव्य के आश्रय
से आस्रव उत्पन्न होता है उसे अधिकरण कहते हैं । यद्यपि समस्त
शुभाशुभ काययोग आदि रूप आस्रव जीव को ही होते हैं, तथापि
जिस आस्रव को जीव प्रधान होकर उत्पन्न करता है, उस आस्रव का
अधिकरण जीव द्रव्य होता है और जो आस्रव अजीव द्रव्य के
आश्रय से जीव को उत्पन्न होता है, उस आस्रव का अधिकरण
अजीव द्रव्य कहा जाता है । इसी कारण यहां जीव और अजीव
दोनों को आस्रव का अधिकरण कहा है । किसी न किसी पर्याय

સ્વરૂપનુ કથન કરીએ છીએ-

જીવ અને અજીવ, જેમનું સ્વરૂપ પહેલા કહેવાઈ ગયું છે, આસ્રવના
અધિકરણ હોય છે જેમાં અર્થ અધિકૃત કરી શકાય તે દ્રવ્યને અધિકરણ
કહે છે. દ્રવ્યના છ ભેદ છે—(૧) ધર્માસ્તિકાય (૨) અધર્માસ્તિકાય (૩) આક-
શાસ્તિકાય (૪) કાળ (૫) જીવાસ્તિકાય અને (૬) પુદ્ગલાસ્તિકાય આ રીતે
જે દ્રવ્યના આશ્રયથી આસ્રવ ઉત્પન્ન થાય છે તેને અધિકરણ કહે છે. જે કે
સમસ્ત શુભાશુભ કાયયોગ આદિ રૂપ આસ્રવ જીવને જ થાય છે તે પણ
જે આસ્રવને જીવ પ્રધાન થઈને ઉત્પન્ન કરે છે તે આસ્રવનું અધિકરણ
જીવદ્રવ્ય હોય છે અને જે આસ્રવ અજીવદ્રવ્યના આશ્રયથી જીવને ઉત્પન્ન
થાય છે, તે આસ્રવનું અધિકરણ અજીવદ્રવ્ય કહેવાય છે. આ કારણથી જ
અહીં જીવ તથા અજીવ એ બંનેને આસ્રવના અધિકરણ કહેવામાં આવ્યા

अजीवा इत्युक्तम् । तत्र येन केनचित् पर्यायेण विशिष्टं द्रव्यं मास्त्रवस्याऽधिकरणं भवति न तु सामान्यमिति सूचितं पर्यायाणां मास्त्राधिकरणत्वं ज्ञापनार्थं सूत्रे 'जीवा अजीवा-इति बहुवचनं कृतमिति भावः । ॥७॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वसूत्रे साम्परायिक कर्मास्त्रविशेष हेतुत्वेन तीव्रमन्दादयो भावाः—वीर्याधिकरणविशेषाश्च प्रतिपादिताः, तत्र—तीव्रमन्दादयो भावाः प्रकर्षाप्रकर्षादिलक्षणा लोकप्रसिद्धत्वात्सु प्रतीताः, वीर्यञ्च—जीवस्य वीर्यान्तराय-कर्मणः क्षयोपशमप्रयोजनः क्षयप्रयोजनो वा भावः क्षायोपशमिकः क्षायिकश्च पूर्व-मुक्तप्रायएवेति, अथ किन्तावदधिकरणस्वरूपं—३ कतिविधञ्च तत् खल्वधिकरणम्

से युक्त होकर ही द्रव्य आस्त्रव का अधिकरण होता है, सामान्य द्रव्य नहीं । (क्योंकि पर्याय विहीन सामान्य द्रव्य का अस्तित्व ही संभव नहीं है) इस तथ्य को सूचित करने के लिए, पर्याय आस्त्रव के अधिकरण हैं, यह प्रकट करने के लिए सूत्र में 'जीवाजीवा' इस प्रकार बहुवचन का प्रयोग किया गया है ॥७॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पूर्वसूत्र में बतलाया गया है कि तीव्रभाव, मन्दभाव आदि, तथा वीर्य विशेष और अधिकरण विशेष साम्परायिक आस्त्रव में विशेषता उत्पन्न करने के हेतु हैं । इन में से तीव्रभाव, मन्दभाव आदि प्रकर्ष एवं अपकर्ष रूप होते हैं और लोक में प्रसिद्ध होने के कारण सुप्रतीत हैं । वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम से उत्पन्न होनेवाला क्षायोपशमिक वीर्य और क्षय से उत्पन्न होनेवाला क्षायिक वीर्य प्रायः पहले ही कहा जा चुका है । किन्तु अधिकरण क्या है उसके कितने भेद हैं ? इस प्रकार की जिज्ञासा होने पर कहते हैं—

छे. के।ध न के।ध पर्यायधी युक्त यधने न द्रव्य आस्त्रवन् अधिकरणं थाय छे सामान्य द्रव्य नधी. (कारण के पर्यायविहीन सामान्य द्रव्यन् अस्तित्व न शक्य नधी). आ तथ्यने सूचित करवाना आशयेपर्याय आस्त्रवना अधि-करणं छे, ये प्रकट करवा भाटे सूत्रमां 'जीवाजीवा' ये मुञ्जण बहुवचनने प्रयोग करवामां आ.ये। छे ॥७॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पूर्वसूत्रमां जताववामां आ.युं के तीव्रभाव, मन्दभाव आदि तथा वीर्यविशेष तथा अधिकरण विशेष साम्परायिक आस्त्रवमां विशेषता उत्पन्न करवाना कारणरूप होय छे. आमांधी तीव्रभाव, मन्दभाव आदि प्रकर्ष अने अपकर्षरूप होय छे तेमज लोकमां प्रसिद्ध होवाना कारण सुप्रतीत छे वीर्यान्तरायकर्मना क्षयोपशमधी उत्पन्न थनार क्षायोपशमिक वीर्य अने क्षयधी उत्पन्न थनार क्षायिक वीर्य प्रायः पहले न केहेवाध गया छे परंतु

ધિત્યાકાંક્ષાયામાહ-‘જીવા અજીવા આસ્રવાદિગર્ણા’ इति । जीवा अजीवा आस्रवाधिकरणं भवति, तत्राऽधिक्रियन्तेऽस्मिन्नर्था इत्यधिकरणं द्रव्यः सित्युच्यते, तच्च द्रव्यं पञ्चविधम् धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकायाऽऽकाशस्तिकाया-
 पुद्गलास्तिकाया-जीवास्तिकाया कालभेदात् । तत्र यद् द्रव्यमाश्रित्यास्रव उत्पद्यते, तद् द्रव्यमधिकरणमुच्यते, यद्यपि-सर्वोऽपि शुभाशुभलक्षण आस्रव आत्मनो जीव-
 स्यैव संवाच्यते-तथापि-य आस्रवो मुख्यभूतेन जीवेनोत्पद्यते, तस्यास्रवस्याऽ-
 धिकरणमाश्रयो जीवद्रव्यं भवति । यः पुनरास्रवोऽजीवद्रव्यमाश्रित्य जीवस्यो-
 त्पद्यते, तस्यास्रवस्याधिकरणमाश्रयोऽजीवद्रव्यमुच्यते, तथाच-ते खल्व-
 जीवा अजीवा चो तीव्रमन्दादिभावेन परिणममानस्यात्मनो विषयमुपेताः सन्तः
 पूर्वोक्तानां द्विचत्वारिंशत्साम्परायिककर्मास्रवविशेषाणां हेतवो भवन्तीति जीवानां

जीव और अजीव आस्रव के अधिकरण हैं । जिस में अर्थ अधिकृत किये जाएं वह द्रव्य अधिकरण कहलाता है द्रव्य के छह भेद हैं-(१) धर्मास्तिकाय (२) अधर्मास्तिकाय (३) आकाशस्तिकाय (४) पुद्गलास्तिकाय (५) जीवास्तिकाय और (६) काल । इनमें से जिस द्रव्य को आश्रित करके आस्रव की उत्पत्ति होती है, वह द्रव्य अधिकरण कहलाता है । यद्यपि सभी प्रकार का आस्रव, चाहे वह शुभ हो या अशुभ, जीव को ही उत्पन्न होता है, किन्तु जो आस्रव जीव की मुख्यता से उत्पन्न होता है, उसका अधिकरण जीव कहलाता है और जो आस्रव अजीव द्रव्य की मुख्यता से उत्पन्न होता है उसका अधिकरण अजीव द्रव्य कहलाता है । तीव्र या मन्द आदि भावों के रूप में परिणत होनेवाले आत्मा के विषय बनने वाले वे जीव या अजीव पूर्वोक्त बचालील प्रकार के साम्परायिक आस्रव के

અધિકરણ શું છે અને તેના કેટલાં ભેદ છે ? આ પ્રકારની જિજ્ઞાસા થવાથી કહીએ છીએ—

જીવ અને અજીવ આસ્રવના અધિકરણ છે. જેમાં અર્થ અધિકૃત કરવામાં આવે તે દ્રવ્ય અધિકરણ કહેવાય છે. દ્રવ્યના છ ભેદ છે-(૧) ધર્માસ્તિકાય (૨) અધર્માસ્તિકાય (૩) આકાશસ્તિકાય (૪) કાળ (૫) જીવાસ્તિકાય અને (૬) પુદ્ગલસ્તિકાય આમાંથી જે દ્રવ્યને આશ્રિત કરીને આસ્રવની ઉત્પત્તિ થાય છે, તે દ્રવ્ય અધિકરણ કહેવાય છે. જો કે બધાં પ્રકારના આસ્રવ પછી ભલે તે શુભ હોય અથવા અશુભ જીવને જ ઉત્પન્ન થાય છે, પરંતુ જે આસ્રવ જીવની મુખ્યતાથી ઉત્પન્ન થાય છે તેનું અધિકરણ જીવદ્રવ્ય કહેવાય છે, તીવ્ર અગર મન્દ આદિ ભાવોના રૂપમાં પરિણત થનારા આત્માના

दुर्गतिगमननिमित्तत्वादधिकरणशब्दवाच्या अवगन्तव्याः । आत्मपरिणतिरूप-
स्याऽऽस्रवस्य प्रयोगलक्षणस्य बाह्यचेतनोऽचेतनो वा पदार्थः उत्पत्तौ निमित्तं भव-
तीति हिंसादिपरिणामो जीवाधिकरणमजीवाधिकरणञ्च भवति, तत्र जीवपर्या-
याणामजीवपर्यायाणां चास्रवाधिकरणत्वं ज्ञापयितुं येन केनचित्पर्यायेण विशिष्टं
द्रव्यं मास्रवाधिकरणं भवति-नतु-सामान्यं द्रव्यं मित्यतः सूत्रे 'जीवाजीवा'
इत्येवं बहुवचनमुक्तम् । तत्राऽधिकरणं द्विविधम्, द्रव्याधिकरणं-भावाधिकरणञ्च ।
तत्र जीवविषयम् अजीवविषयञ्चतद् द्वयं द्रव्याधिकरणं-भावाधिकरणञ्च बोध्यम्
तत्र-द्रव्यमेवाधिकरणं द्रव्याधिकरणम्, एवं-भाव एवाधिकरणं भावाधिकरण

कारण होते हैं । अतएव जीवों के दुर्गतिगमन के निमित्त होने के
कारण 'अधिकरण' शब्द द्वारा कहे जाते हैं । आत्मा की परिणति रूप
एवं प्रयोग लक्षण वाले आस्रव को उत्पत्ति में बाहरी चेतन अथवा
अचेतन पदार्थ निमित्त बनते हैं । इस कारण हिंसा आदि परिणाम
जीवाधिकरण और अजीवाधिकरण होता है । जीवद्रव्य या अजीव
द्रव्य किसी न किसी पर्याय से युक्त होकर ही आस्रव के अधिकरण
बनते हैं, पर्याय से रहित द्रव्य सामान्य अधिकरण नहीं बन सकता,
यह सूचित करने के लिए सूत्र में 'जीवाजीवा' इस प्रकार बहुवचन
का प्रयोग किया गया है ।

प्रत्येक अधिकरण के दो-दो भेद हैं-द्रव्याधिकरण और भावाधि-
करण । द्रव्यरूप अधिकरण द्रव्याधिकरण कहलाता है औ भावरूप

विषय अननारा ते शुव अथवा अशुव पूर्वोक्त जे'ताणीस प्रकारना साम्प्रयायिक
आस्रवना कारणे होय छे आथी शुवोना दुर्गतिगमनना निमित्त होवाथी
तेने 'अधिकरण' शब्द द्वारा कहेवाभां आवे छे. आत्मांनी परिणतिरूप अने
प्रयोग लक्षणवाणा आस्रवनी उत्पत्तिमां अह्य चेतन अथवा अचेतन अथवा
पदार्थ निमित्त अने छे. आथी हिंसा वगैरे परिणाम शुवाधिकरण अने
अशुवाधिकरण होय छे शुवद्रव्य अथवा अशुवद्रव्य कौं न कौं पर्यायथी
युक्त थर्छने ज आस्रवना अधिकरण अने छे, पर्यायथी रहित द्रव्य
सामान्य अधिकरण अनी शक्तुं नथी जेवुं सूचित करवा भाटे सूत्रमां 'शुवा
शुवा' जे रीते अहुवचनना प्रयोग कराये छे.

प्रत्येक अधिकरणना जे-जे लेह छे-द्रव्याधिकरण अने भावाधि-
करण द्रव्यरूप अधिकरण द्रव्याधिकरण कहेनाय छे. अने भावरूप
अधिकरणने भावाधिकरण कहे छे. छेदन-लेहन विगैरेतुं कारण शास्त्र
द्रव्यरूप आस्रवाधिकरण छे. तेना दस लेह छे. जे हेरसी, पांसणो अथवा

શુન્યતે । તથા દ્રવ્યરૂપસાસ્રવાધિકરણં છેદન-મેદનાદિસાધનમૃતં મસં દશ-
વિધમ્, છિદ્ધતે, યેન પરશુ-ગાલી વ્યઘનાદિના તત્-છેદનમ્, એવં-મિદ્યતે યેન
હુણ્દરાદિના તદ્-મેદનમ્, એવં-ત્રોટન, વિશસનો-દ્વન્ધન, યંત્રાભિઘાતાદિક
મસંસેયમ્ । દ્રવ્યશસ્ત્રં દશવિધમેવ, પરશ્વધ-દહન-વિષ લવન સ્નેહ ક્ષારાઽમ્લાનિ
જાતુશ્ચુક્તશ્ચ ચ મનોવાકાયાસ્ત્રયા, એતેન સ્વલુ દ્રવ્યાધિકરણેન જીવાજીવૈ
વિષયીકૃત્ય સામ્પરાયિકં કર્મ બંધ્યતે । તદાહિ-પાણિપાદશિરોઽધરાદીનાં પરશ્વ-
ધાદિના છેદઃ, સચેતનાના અગ્નિના દહનમ્, વિષેણ હનનમ્, લવણેન-પૃથિવીકાયા-
ઉપઘાતઃ, સ્નેહેન ઘૃતૈત્ત્વાદિના ચોપઘાતસ્તેષામ્, ક્ષારેણ સકલ ત્વડ્માંસ મજ્જા;

અધિકરણ કો આવાધિકરણ કહતે હૈં । છેદન-મેદન આદિ કા કારણ
શસ્ત્ર દ્રવ્યરૂપ સાસ્રવાધિકરણ હૈં । ઉસકે દશ મેદ હૈં । ફરસા,
વસ્ટુલા યા ઘન આદિ કે દ્વારા કિસી चीज કો છેદા જાય ઉસે છેદન
કહતે હૈં । ઓર હુદ્ગર આદિ કે દ્વારા મેદન કિયા જાય ઉસે મેદન
કહતે હૈં । હસી પ્રકાર ત્રોટન-જિસકે દ્વારા તોડા જાય, વિશસન-
જિસસે નઘટ કિયા જાય, ઉદ્વન્ધન-જિસે ફાંસી લગાઈ જાય યા
બાંધા જાય તથા યંત્રાભિઘાત-યંત્ર કે દ્વારા આઘાત કરના આદિ
બી સમસ્ત હેના ચાહિયે ।

દ્રવ્યશસ્ત્ર કે દશ મેદ હૈં-પરશુ, દહન (આગ) વિષ, લવણ સ્નેહ
(ઘી-તેલ આદિ ચિકને પદાર્થ) ક્ષાર અમ્લ, (સ્વટાઈ) ઓર ઉપયોગશૂન્ય
જીવ કે મન, વચન તથા કાય । હસ દ્રવ્યાધિકરણ સે જીવ ઓર
અજીવ કો વિષય કરકે સામ્પરાયિક કર્મ કા બંધ હોતા હૈં । જૈસે
હાથ, પૈર, જિર, અધર (હોઠ) આદિ કો પરશુ આદિ સે કાટના-છેદન
કરના, સચેતનોં કો આગ સે જલના, વિષ સે હનન કરના, લવણ

હથોડા વગેરેની મદદથી કોઇ ચીજને છેદવામાં આવે તેને છેદન કહે છે અને
હુદ્ગર આદિ દ્વારા ભેદન કરવામાં આવે તેને ભેદન કહે છે. આવી જ રીતે
ત્રોટન-જેના વડે તોડવામાં આવે, વિશસન-જેના વડે નાશ કરાય ઉદ્વન્ધન-
જેનાથી કંચી લગાવવામાં આવે અથવા બાંધવામાં આવે તથા યંત્રાભિઘાત
યંત્ર વડે આપઘાત કરવો વગેરે પણ સમસ્ત હેવા જોઈએ.

દ્રવ્યશસ્ત્રનાં દશ ભેદ છે-પરશુ, દહન (આગ), વિષ, લવણ,
સ્નેહ (ઘી-તેલ વગેરે ચિકણા પદાર્થો), ક્ષાર, અમ્લ (ખટાશ) અને ઉપયોગ
શૂન્ય જીવના મન વચન તથા કાય. આ દ્રવ્યાધિકરણથી જીવ અને અજીવને
વિષય બનાવીને સામ્પરાયિક કર્મબંધાય છે. જેમ કે-હાથ, પગ, માથું,
હોઠ આદિને ફરસી વગેરેથી કાપવા-છેદવા સચેતનોને અગ્નિ વડે સળગાવવા,
ઝેર આપીને અન્ત આણુવો, લવણથી પૃથ્વીકાય આદિને ઉપઘાત કરવો, ઘી-

दिकर्तनम्, अम्लेन चाप्यार नालादिना पृथिवीकायिकाद्युपघातः, अनुपयुक्तस्य च कायवाङ्मनांसि यां चेष्टा मभिनिर्वर्तयन्ति तथाभूतया चैष्टया साम्परायिक कर्म प्रच्यते । भावरूपमास्रवाधिकरणं पुनरष्टोत्तरशतविधं वर्तते, भावस्त्वावदात्मन स्तीव्रादिपरिणामः, तच्चाष्टोत्तरशतं भावाधिकरण मग्रिमसूत्रे वक्ष्यते । तथा च साम्परायिककर्मास्रव विशेषाधिकरणं जीवा अजीवाश्चेति बोध्यम् । उक्तञ्च व्याख्यामङ्गलप्री भगवतीसूत्रे १६ शतके १ उद्देशके 'जीवे अधिकरणं' इति जीवोऽधिकरणम्, इति । स्थानाङ्गे २ स्थाने १ उद्देशके ६० सूत्रे चोक्तम् 'एवं अजीवमपि' एवम् अजीवोऽपि, इति ॥७॥

से पृथ्वीकाय आदि का उपघात करना, घी-तेल आदि चिकनाई से किसी जीव का घात करना, क्षार से सारी चमड़ी मांस मज्जा आदि को काटना, कांजी आदि की खटाई से पृथ्वीकाय आदि का उपघात करना, और उपयोग रहित प्राणी की मन, वचन और काय की विविध प्रकार की प्रवृत्तिषां होना, इन सब कारणों से साम्परायिक कर्म का बन्ध होता है ।

भावाधिकरण के एक सौ आठ भेद हैं । आत्मा का जो तीव्र या मन्द परिणाम होना है वह भावाधिकरण है । उसके एक सौ आठ भेदों का कथन अगले सूत्र में किया जाएगा ।

इस प्रकार जीव और अजीव साम्परायिक कर्म के आस्रव के अधिकरण होते हैं । भगवतीसूत्र के सोलहवें शतक के प्रथम उद्देशक में कहा है—'जीव अधिकरण है ।' स्थानांगसूत्र के द्वितीय स्थान के प्रथम उद्देशक के ६० वें सूत्र में भी कहा है—'इसी प्रकार अजीव भी ॥७॥

तेल आदि चिकनाई का घी लवणी छिंसा करी नाभथी क्षारथी आभी आसडी, मांस, मज्जा आदिने कापवा, कांज आदिनी भट्टाशथी पृथ्वीकाय आदिने उपघात करवे। अने उपयोग रहित प्राणीनी मन वचन अने कायनी विविध प्रकारनी प्रवृत्तियो करवी, आ अधां कारणोथी साम्परायिक कर्मबन्धाय छे

भावाधिकरणना ओकसोआठ लेह छे. आत्माने जे तीव्र अथवा मन्द परिणाम थाय छे ते भावाधिकरण छे. तेना ओकसोआठ लेहानुं कथन हवे पछीना सूत्रमां करवामां आवशे.

आवी रीते लव अने अलव साम्परायिक कर्मना आस्रवना अधिकरण होय छे. भगवतीसूत्रना सोणमां शतकना प्रथम उद्देशकमां छेवामां आब्युं छे—'लव अधिकरण छे.' स्थानांग सूत्रना द्वितीय स्थानना प्रथम उद्देशकना ६०मां सूत्रमां पण्य कल्युं छे—'आवी ज रीते अलव पण्य' ॥७॥

પૂર્વ-પદમં સંરંભાઙ્ વિસેસેહિં તેરસવિહં ॥૮॥

છાયા—‘પ્રથમં સંરંભાદિ ત્રિશેષૈ સ્ત્રયોદશવિધમ્—’ ॥૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાવત્સામ્પરાયિકકર્માસ્રવદેતુતયા જીવાધિકર-
ણમ્ અજીવાધિકરણશ્ચ પ્રતિપાદિતમ્, તત્ર જીવાધિકરણભેદપ્રતિપાદનાર્થમાઙ્-
‘પદમં સંરંભાઙ્ વિસેસેહિં તેરસવિહં’ इति प्रथमं तावत्-साम्परायिककर्मस्रव
दैतुयુतं जीवाधिकरणं संरंभादिविशेषैः-संरंभ, समारंभाऽऽरंभयोगकृतकारिता-
नुमतकषायविशेषैस्त्रयोदशविधं भवति । तत्र-संरंभ, समारंभा, ऽऽरंभास्त्रयः
योगास्त्रयः कृतकारितानुमत्तास्त्रयः क्रोध मान माया लोभाख्याश्चत्वारः कषाया
श्चेति सर्वयोजनेन त्रयोदशविधैः संरंभादिभिः जीवाधिकरणं त्रयोदशविधं भवति ।

સૂત્રાર્થ—‘પદમં સંરંભાઙ્’ इत्यादि

પહલા જીવાધિકરણ સંરંભ આદિ કે ભેદ સે તેરહ પ્રકાર કા હૈ ।

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા હૈ કિ સામ્પરાયિક
કર્મ કે આસ્રવ કે કારણ હોને સે અધિકરણ કે દો ભેદ હૈ—જીવાધિ-
કરણ ઔર અજીવાધિકરણ । અવ જીવાધિકરણ કે ભેદોં કા
નિરૂપણ કરતે હૈ—

સામ્પરાયિક કર્મ કે આસ્રવ કા કારણ જીવાધિકરણ સંરંભ, સમા-
રંભ, આરંભ, યોગ, કૃત, કારિત, અનુમત તથા કષાય કે ભેદ સે તેરહ
પ્રકાર કા હૈ । સંરંભ, સમારંભ ઔર આરંભ—યે ત્રીન, ત્રીન યોગ ઇવં
કૃત, કારિત ઔર અનુમત—યે ત્રીન, ક્રોધ માન માયા લોભ યે ચાર
કષાય મિલકર તેરહ હોતે હૈ । યહી જીવાધિકરણ કે તેરહ ભેદ હૈ । હિંસા

‘પદમં સંરંભાઙ્ વિસેસેહિં’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—‘પહેલું જીવાધિકરણ, સંરંભક આદિના લેહથી તેર પ્રકારનું છે.’

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવી ગયું કે સામ્પરાયિક
કર્મના આસ્રવના કારણ હોવાથી અધિકરણના બે લેહ છે—જીવાધિકરણ અને
અજીવાધિકરણ હવે જીવાધિકરણના લેહોનું નિરૂપણ કરીએ છીએ—

સામ્પરાયિક કર્મના આસ્રવના કારણ જીવાધિકરણ સંરંભ, સમારંભ,
આરંભ, યોગ, કૃત, કારિત, અનુમાન તથા કષયના લેહથી તેરપ્રકારના છે.
સંરંભ, સમારંભ અને આરંભએ ત્રણ, કૃત, કારિત અને અનુમત એ ત્રણ તથા
ત્રણ યોગ, અને ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ એ ચાર કષાય, મળીને તેર
ધાય છે. આજ જીવાધિકરણના તેર લેહ છે હિંસા આદિમાં પ્રયત્નની શરૂઆત

તત્ર પ્રાણાતિપાતાદિષુ પ્રયત્ના વેશઃ - સંસ્કર્યઃ. સાધન સમાધ્યાસકરણં સમારંભઃ
આરંભસ્તુ પ્રક્રમઃ પ્રાણાતિપાતનિષ્પત્તિ રુચ્યતે । ઉક્તશ્ચ ભગવતીસૂત્રે ૩ શતકે
૧ ઉદ્દેશકે ૧૫૩ સૂત્રે વૃત્તી ।

સંકલ્પો સંરંભો પરિતાપકરો ભવે સમારંભો ।

આરંભો ઉદ્દવ્ધો સ્વચ્ચનઘાણં વિશુદ્ધાણં ॥૧॥ ઇતિ,

‘સંકલ્પઃ સંસ્કર્યઃ પરિતાપકરો ભવેત્સમારંભઃ ।

આરંભઉપદ્રવઃ સર્વનયનાં વિશુદ્ધાનામ્ ॥૧॥ ઇતિ ।

યોગાથ-મનોયોગ વાચોયોગ કાયયોગાથ ત્રયઃ, સ્વાતંત્ર્ય પ્રતિપર્યય કૃત
ગ્રહણં વૌધ્યમ્ । કારિતામિધાનશ્ચ પરપયોગાપેક્ષમ્, અનુમતશબ્દશ્ચ પ્રયોજકસ્ય

આદિ મેં પ્રયત્ન કી શુરુઆત કરના સંરંભ કહલાતા હૈ, ઉસકે લિપ
સાધન જુટાના સમારંભ કહલાતા હૈ ઓર હિસા કરના આરંભ
કહલાતા હૈ । ભગવતીસૂત્ર કે તીસરે શતક કે તીસરે ઉદ્દેશક મેં કહા
હૈ-હિસા આદિ કરને કા સંકલ્પ હોના સંરંભ હૈ, પરિતાપ ઉત્પન્ન કરને
વાલા સમારંભ હૈ । ઓર ઉપદ્રવ (ઘાત) હો જાના આરંભ હૈ । યહ સમી
વિશુદ્ધ નયોં કા અભિપ્રાય હૈ ॥૧॥

યોગ ત્રીન પ્રકાર કે હોતે હૈ=મનોયોગ, વચનયોગ ઓર કાયયોગ
ક્રિયા મેં સ્વતંત્રતા સૂચિત કરને કે લિપ ‘કૃત’ શબ્દ કા ગ્રહણ ક્રિયા
હૈ અર્થાત્ સ્વયં કોઈ ક્રિયા કરના ‘કૃત’ હૈ । દુસરે સે ક્રિયા કરવાના
‘કારિત’ હૈ । ‘અનુમત’ શબ્દ પ્રયોજક કે માનસ પરિણામ કા સૂચક હૈ,
અર્થાત્ દુસરા કોઈ હિસા આદિ ક્રિયા કરતા હૈ, તો ઉસકા અનુમોદન
કરના અનુમત કહલાતા હૈ । ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ, યે ચાર
કષાય હૈ । इन सब के भेद से जीवाधिकरण के तेरह भेद होते हैं ।

કરવી સંરંભ કહેવાય છે, તેના માટે સાધન લગાડવું સમારંભ કહેવાય છે.
અને હિંસા કરવી આરંભ કહેવાય છે. ભગવતી સૂત્રના ત્રીજા શતકના ત્રીજા
ઉદ્દેશકમાં કહેવામાં આવ્યું છે-હિંસા આદિ કરવાનો સંકલ્પ થવો સંરંભ
છે, પરિતાપ ઉત્પન્ન કરનાર સમારંભ છે અને ઉપદ્રવ (ઘાત) થઈ જાય આરંભ
છે આ બધાં વિશુદ્ધ નયોનો અભિપ્રાય છે ॥૧॥

યોગ ત્રણ પ્રકારના હોય છે-મનોયોગ, વચનયોગ અને કાયયોગ,
ક્રિયામાં સ્વતંત્રતા સૂચિત કરવા માટે ‘કૃત’ શબ્દને ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે
અર્થાત્ સ્વયં કોઈ ‘ક્રિયા કરવી ‘કૃત’ છે. બીજા પાસે ક્રિયા કરાવવી ‘કારિત’
છે ‘અનુમત’ શબ્દ પ્રયોજકના માનસ પરિણામનું સૂચક છે અર્થાત્ બીજો
કોઈ હિંસા આદિ ક્રિયા કરતો હોય તો તેનું અનુમોદન કરવું ‘અનુમત’
કહેવાય છે ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ કષાય છે. આ બધાંના ભેદથી
જીવાધિકરણના તેર ભેદ થાય છે.

જ્ઞાનસપરિણામપદ્ધતિનાર્થઃ, કષાયાશ્ચ ક્રોધ માન માયા લોભાઃ તેષાં વિશેષે
 જીવાધિકરણં ત્રયોદશવિધં ભવતિ । તત્ર ક્રોધકૃતમનોયોગસંરમ્ભઃ, માનકૃત
 મનોયોગ સંરમ્ભઃ, માયાકૃત મનોયોગસંરમ્ભઃ, લોભકૃતમનોયોગ સંરમ્ભશ્ચ । एवं
 ક્રોધ કારિતમનોયોગ સંરમ્ભઃ માનકારિત મનોયોગ સંરમ્ભઃ માયાકારિત મનો-
 યોગસંરમ્ભઃ લોભકારિતમનોયોગસંરમ્ભઃ, ક્રોધાનુમતમનોયોગસંરમ્ભઃ, માનાનુ-
 મતમનોયોગસંરમ્ભઃ, માયાનુમતમનોયોગસંરમ્ભઃ, લોભાનુમતમનોયોગ સંરમ્ભશ્ચે-
 ત્યેવં દ્વાદશવિધો મનોયોગસંરમ્ભઃ । एदम्-वज्योग संरम्भः, काययोगसंरम्भ-
 ष्चाऽपि-प्रत्येकं द्वादश द्वादश-भेदेन षट्त्रिंशद्भेदाः संरम्भा भवन्ति । एवं-समा-
 रम्भाः आरम्भाश्चाऽपि प्रत्येकं षट्त्रिंशद्भेदा भवन्ति सर्वे च सम्मिलिता जीवा
 धિકरणास्त्रयविशेषा अष्टोत्तरशतसंरूपकाः भवन्ति । एवमनन्तानुबन्ध्यप्रत्या-
 ख्यानसंज्ञवलनकषायभेदकृताऽत्रान्तरभेदा बहवो भवन्ति ॥८॥

ક્રોધકૃત મનોયોગસંરંભ, માનકૃત મનોયોગસંરંભ માયાકૃત મનોયોગ
 સંરંભ, લોભકૃત મનોયોગસંરંભ, इसी प्रकार क्रोधकारितमनोयोगसंरंभ,
 मानकारितमनोयोगसंरंभ, मायाकारितमनोयोगसंरंभ, लोभकारित-
 मनोयोगसंरंभ क्रोधानुमतमनोयोगसंरंभ मानानुमतमनोयोगसंरंभ,
 मायानुमतमनोयोगसंरंभ, लोभानुमतमनोयोगसंरंभ, इस प्रकार बारह
 प्रकार का संरंभ है । इसी प्रकार वचनयोगसंरंभ और काययोगसंरंभ
 के भी बारह-बारह भेद होने से संरंभ के छत्तीस भेद हो जाते हैं जैसे
 संरंभ के छत्तीस भेद बताये गये हैं उसी प्रकार समारंभ और आरम्भ
 के भी छत्तीस-छत्तीस भेद जानने चाहिए । तीनों के छत्तीस-छत्तीस
 भेद मिलकर एक सौ आठ (१०८) जीवाधिकरण के भेद होते हैं ।

अगर इन भेदों में अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यानान्तरण

ક્રોધકૃતમનોયોગસંરંભ, માનકૃતમનોયોગસંરંભ, માયાકૃતમનોયોગસંરંભ,
 લોભકૃતમનોયોગસંરંભ, એવી જ રીતે ક્રોધકારિતમનોયોગસંરંભ, માનકારિત-
 મનોયોગસંરંભ, માયાકારિતમનોયોગસંરંભ, લોભકારિતમનોયોગસંરંભ,
 ક્રોધાનુમત મનોયોગસંરંભ માનાનુમત મનોયોગસંરંભ માયાનુમતમનોયોગ-
 સંરંભ, લોભાનુમતમનોયોગસંરંભ, આ રીતે બાર પ્રકારના સંરંભ છે આજ
 પ્રમાણે વચનયોગસંરંભ અને કાયયોગસંરંભના પણ બાર-બાર ભેદ હોવાથી
 સંરંભના છત્રીશ ભેદ થઈ જાય છે. એવી રીતે સંરંભના છત્રીશ ભેદ
 દર્શાવવામાં આવ્યા છે તેવી રીતે સમારંભ તથા આરંભના પણ છત્રીશ-
 છત્રીશ ભેદ જાણવા જોઈએ. ત્રણેના છત્રીસ-છત્રીસ ભેદો મળીને એકસો-
 આઠ (૧૦૮) જીવાધિકરણના ભેદ થાય છે.

अगर आ लेदोमां अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यानान्तरण

તત્ત્વત્ત્વનિર્યુક્તિ:—પૂર્વસૂત્રે સામ્પરાયિકકર્મવન્ધેતુભૂતાસ્રવ વિશેષ
અનકતયા તીવ્રભાવ મન્દભાવાદયો વીર્યવિશેષાધિકરણવિશેષાશ્ચ પ્રતિપાદિતા
જીવાધિકરણશબ્દેન જીવરૂપાધિકરણમ્ અજીવરૂપાધિકરણમ્ ગૃહ્યતે, તત્ર-પ્રથમે
તાવદ્ જીવાધિકરણભેદ પ્રતિપાદયિતુમાહ—‘પદમં સંરંભાદિવિશેષેર્દિંદૈરશ્ચ
વિદ્’ इति । प्रथमन्तावद् जीवाधिकरणं संरम्भादिविशेषैः संरम्भ, समारम्भ
रम्भाऽऽरम्भमनोगादियोग कृत=कारितानुमत क्रोधमानमायालोभरूपकषाय
विशेषैः स्रयोदशविधं भवति । तत्र प्रथमं तावत् संक्षेपतो जीवरूप मास्रधाधिकरणं
त्रिविधं भवति संरम्भसमारम्भाऽऽरम्भ भेदात् । तत्र प्राणातिपातादि सङ्कल्पा-
संज्वलन के भेद से क्रोध आदि के भेदों की गणना की जाय तो
बहुत से अवान्तर भेद होते हैं । ८॥

તત્ત્વત્ત્વનિર્યુક્તિ-પૂર્વસૂત્ર મેં સામ્પરાયિક કર્મવન્ધ કે કારણભૂત
આસ્રવ મેં વિશેષતા ઉત્પન્ન કરને વાળે તીવ્રભાવ, મન્દભાવ વીર્ય
વિશેષ ઓર અધિકરણ કા પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા । યહાં અધિકરણ
શબ્દ સે જીવાધિકરણ ઓર અજીવાધિકરણ કા ગ્રહણ હોતા હૈ । इन
में से यहां जीवाधिकरण के भेदों का प्रतिपादन करने के लिए कहते हैं—

પ્રથમ અર્થાત્ જીવાધિકરણ સંરંભ આદિ કે ભેદ ચૈ તેરહ પ્રકાર કા
હૈ, યથા-સંરંભ, સમારંભ, આરંભ, મનોયોગ, વચનયોગ, કાયયોગ,
કૃત (સ્વયં કરના) કારિત (દુસરે સે કરવાના) ઓર અનુમત (દુસરે
કે કિયે કા અનુમોદન કરના) ક્રોધ માન, માયા ઓર લોભ ।

સંક્ષેપ સે જીવાધિકરણ કે ત્રીન ભેદ હૈ સંરંભ, સમારંભ ઓર

સંજ્વલન આદિના લેહથી ક્રોધ આદિના લેહોની ગણતરી કરવામાં આવે તો
ધણાણમાં અવાન્તર લેહો થાય છે ॥ ૮ ॥

તત્ત્વત્ત્વનિર્યુક્તિ—પૂર્વસૂત્રમાં સામ્પરાયિક કર્મબંધના કારણભૂત
આસ્રવમાં વિશેષતા ઉત્પન્ન કરવાવાળા તીવ્રભાવ, મન્દભાવ, વીર્યવિશેષ તથા
અધિકરણનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું અત્રે અધિકરણ શબ્દથી જીવાધિકરણ
અને અજીવાધિકરણ સમજવાના છે. આમાંથી અહીં જીવાધિકરણના લેહોનું
પ્રતિપાદન કરવા માટે કહીએ છીએ—

પ્રથમ અર્થાત્ જીવાધિકરણ, સંરંભ આદિના લેહથી તેર પ્રકારના છે,
જેમ કે-સંરંભ, સમારંભ, આરંભ, મનોયોગ, વચનયોગ, કાયયોગ, કૃત
(ભતે કરવું) કારિત (બીજાપાસે કરાવવું) તથા અનુમત (બીજા દ્વારા કરાતોને
અનુમોદન આપવું), ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ.

સંક્ષેપથી જીવાધિકરણના ત્રણ લેહ છે-સંરંભ સમારંભ, અને આરંભ

વેદ્યઃ સંરમ્ભઃ, પ્રાણાતિપાતાદિ સાધનસન્નિપાતજનિતપરિશાપનાદિલક્ષણઃ
 સમારમ્ભઃ, પ્રાણાતિપાતાદિ ક્રિયા નિર્ઘૃતિ સારમ્ભશ્ચોચ્યતે, એતત્ત્રિવિધમપિ
 જીવાધિકરણં પ્રત્યેકં મનોવાક્યાયયોગવિશેષાત્ત્રિવિધં ભવતિ । મનોયોગસંરમ્ભાધિકર-
 ણમ્ ૧ વચનયોગસંરમ્ભાધિકરણમ્ ૨ એવં કાયયોગ સંરમ્ભાધિકરણમ્ ૩ એવં-
 મનોયોગસમારમ્ભાધિકરણમ્ ૧ વચનયોગસમારમ્ભાધિકરણમ્ ૨, કાયયોગસમા-
 રમ્ભાધિકરણમ્ ૩ એવં-મનોયોગારમ્ભાધિકરણમ્ ૧ વાગ્યોગારમ્ભાધિકરણમ્ ૨
 કાયયોગારમ્ભાધિકરણમ્ ૩ એતિ રીત્યા નવવિધં ભવતિ, એતન્નવવિધમપિ જીવરૂપં
 તામ્પરશયિક કર્માસ્રવાધિકરણં પુનઃ કૃત-કારિતાઽનુમતવિશેષાત્ત્રિવિધં પ્રત્યેકં
 પ્રૈદિધ્ય સાપન્નં સત્ સમર્પિશતિવિધં ભવતિ । તથાહિ-કૃતમનઃ સંરમ્ભાધિકરણમ્
 કારિતમનઃસંરમ્ભાધિકરણમ્, અનુમતમનઃસંરમ્ભાધિકરણમ્, કૃતવાક્સંરમ્ભા-

ધારમ્ભ । હિંસા આદિ કરને કા સંકલ્પ ઉત્પન્ન હોના સંરમ્ભ કહલાતા
 હૈ, હિંસા આદિ કે સાધનોં કો જુટાના સમારમ્ભ હૈ ઓર પ્રાણાતિપાત
 ક્રિયા કરના આરમ્ભ હૈ ।

ચહ તીનોં પ્રકાર કા જીવાધિકરણ મનયોગ, વચનયોગ ઓર
 કાયયોગ કે એદ સે તીન-તીન પ્રકાર કા હૈ-મનોયોગસંરમ્ભાધિકરણ
 વચનયોગસંરમ્ભાધિકરણ ઓર કાયયોગ સંરમ્ભાધિકરણ । હસી પ્રકાર
 મનોયોગસમારમ્ભાધિકરણ વચનયોગસમારમ્ભાધિકરણ ઓર કાય-
 યોગસમારમ્ભાધિકરણ, મનોયોગઆરંભાધિકરણ, વચનયોગઆરંભાધિ-
 કરણ ઓર કાયયોગઆરંભાધિકરણ હસ પ્રકાર સવ મિલકર નૌ એદ
 હોતે હૈ । ચહ નૌ પ્રકાર કા અધિકરણ કૃત કારિત ઓર અનુમત કે
 એદ સે તીન-તીન પ્રકાર કા હોને સે સત્સાઈસ પ્રકાર કા હો જોતા હૈ ।
 જૈસે-કૃતમનઃસંરમ્ભાધિકરણ, કારિતમનઃ સંરમ્ભાધિકરણ, અનુમતમનઃ

હિંસા આદિ કરવાનો સંકલ્પ ઉત્પન્ન થવો સંરંભ કહેવાય છે. હિંસા આદિના
 સાધનોનો ઉપયોગ કરવો સમારંભ છે અને પ્રાણાતિપાત ક્રિયા કરવી આરંભ છે.
 આ ત્રણે પ્રકારના જીવાધિકરણ મનોયોગ વચનયોગ તથા કાયયોગના
 લેદથી ત્રણ-ત્રણ પ્રકારના હોય છે-મનોયોગસંરંભાધિકરણ, વચનયોગ
 સંરંભાધિકરણ અને કાયયોગસંરંભાધિકરણ, આવી જ રીતે મનોયોગ સમા-
 રંભાધિકરણ, વચનયોગસમારંભાધિકરણ અને કાયયોગસમારંભાધિકરણ
 મનોયોગઆરંભાધિકરણ, વચનયોગ-આરંભાધિકરણ કાયયોગ-આરંભાધિકરણ
 આ રીતે બધાં મળીને નવ લેદ થાય છે. આ નવ પ્રકારના અધિકરણ કૃત,
 કારિત અને અનુમતાના લેદથી ત્રણ-ત્રણ પ્રકારના હોય છે આથી સત્સાઈસ
 પ્રકારના થઈ જાય છે જેમ કે-કૃતમનઃ સંરંભાધિકરણ, કારિતમનઃ સંરંભા-
 ધિકરણ, અનુમતમનઃસંરંભાધિકરણ, કૃતવચનસંરંભાધિકરણ, કારિતવચન

ધિકરણમ્, કારિત્વાક્સંરમ્ભાધિકરણમ્, અનુમતવાક્સંરમ્ભાધિકરણમ્ કૃતકાય
સંરમ્ભાધિકરણમ્, કારિત્વકાયસંરમ્ભાધિકરણમ્, અનુમતકાયસંરમ્ભાધિકરણમ્
इत्येवं संरम्भजीवाधिकरणं नवविधम्, एवं-समारम्भेऽपि नवविधम्, आरम्भे च
नवविधमसेयम् । तत्र-कृतवचनं स्वतन्त्र कर्तृप्रतिपादनार्थं मुक्तम्, कारिता-
मिधानञ्च प्रयोज्यपरतन्त्रता प्रदर्शनार्थं मुक्तम्, अनुमतवचनन्तु-प्रयोजकस्य सान-
सपरिणामप्रदर्शनार्थमवसेयम् । एवञ्च-मनसा, वचसा, कायेन च प्राणाति-
पाताद्यर्थं संरम्भं करोति-संरम्भं कारयति-संरम्भं अनुमोदते च, एवं-समारम्भं
करोति-कारयति-कुर्वन्तमनुमोदते च, एवम्-आरम्भं करोति-कारयति-कुर्वन्त-

સંરમ્ભાધિકરણ, કૃતવચનસંરંભાધિકરણ, કારિત્વવચનસંરંભાધિકરણ,
અનુમતવચનસંરંભાધિકરણ, કૃતકાયસંરંભાધિકરણ, કારિત્વકાય-
સંરંભાધિકરણ અનુમતકાયસંરંભાધિકરણ । હસ પ્રકાર સંરંભજીવાધિ-
કરણ ની પ્રકાર કા હૈ, આરંભાધિકરણ બી ની પ્રકાર કા હૈ ।

यहां कृत शब्द स्वतन्त्र कर्त्ता का प्रतिपादन करने के लिए है,
कारित शब्द प्रयोज्य की परतंत्रता प्रकट करने के लिए है और अनु-
मत शब्द प्रयोजनके मानसिक परिणामको प्रदर्शित करने के लिए है ।

इस प्रकार मन से, वचन से और काय से प्राणातिपात आदि
के संरंभ करता है और संरंभ करवाता है और संरंभ का अनुमोदन
करता है । इसी प्रकार समारंभ करता है, समारंभ करवाता है और
समारंभ का अनुमोदन करता है । इसी प्रकार आरंभ करता है,

સંરંભાધિકરણ, અનુમતવચનસંરંભાધિકરણ, કૃતકાયસંરંભાધિકરણ કારિત્વકાય-
સંરંભાધિકરણ, અનુમતકાયસંરંભાધિકરણ આવી રીતે સંરંભ જીવાધિકરણ
નવ પ્રકારના છે. સમારંભાધિકરણ પણ નવ પ્રકારના છે અને આરંભાધિકરણ
પણ નવ પ્રકારના છે.

અહીં કૃત શબ્દ સ્વતંત્ર કર્તાનું પ્રતિપાદન કરવા માટે કહેલ છે,
કારિત શબ્દ પ્રયોજનની પરતંત્રતા પ્રગટ કરવા માટે છે અને અનુમત
શબ્દ પ્રયોજનના માનસિક પરિણામને પ્રદર્શિત કરવા માટે છે.

આવી રીતે મનથી, વચનથી અને કાયથી પ્રાણાતિપાત આદિ માટે
સંરંભ કરે છે, સંરંભ કરાવે છે અને સંરંભને રૂઢું બાળે છે. આવી જ
રીતે સમારંભ કરે છે, સમારંભ કરાવે છે અને સમારંભનું અનુમોદન કરે
છે, આરંભ કરે છે, આરંભ કરાવે છે અને આરંભની અનુમોદના કરે છે,

અનુમોદતે ચેત્ત્રેવં દસવિંશતિ વિધં જીવાધિકરણં भवति । तच्चापि-सप्तविंशति
 विधज्जीवाधिकरणं क्रोध, मान, माया, लोभ रूप कषायचतुष्टयभेदात् प्रत्येकं
 चतुर्विधं भवतीति सर्वसम्यग्ज्ञानेनाऽष्टोत्तरशतं जीवरूपं साम्प्रसायिककर्मास्त्रि-
 षाधिकरणं भवति । तद्यथा-क्रोधकृतमनःसंरम्भः मानकृतमनः संरम्भः मायाकृत
 मनःसंरम्भः लोभकृतमनःसंरम्भः ४ एवं-क्रोधकारितमनःसंरम्भः मान-
 कारितमनः संरम्भः मायाकारित मनःसंरम्भः लोभकारितमनः संरम्भः-८
 क्रोधानुमोदित मनः संरम्भः मानानुमोदितमनः संरम्भः मायानुमोदित मनः
 संरम्भः लोभानुमोदितमनः संरम्भश्च १२ एवं क्रोधकृतवाक् संरम्भः मानकृत
 वाक्संरम्भः मायाकृतवाक्संरम्भः लोभकृतवाक्संरम्भः १६ क्रोधकारितवाक्-

આરંભ કરવાતા હૈં ઓર આરંભ કી અનુમોદન કરતા હૈં ।
 યહ સત્તાવીસ પ્રકાર કા જીવાધિકરણ હુઆ । હસ સત્તાવીસ પ્રકાર કે
 જીવાધિકરણ હૈં હે પ્રત્યેક કે ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ રૂપ ચાર
 કષાયોં કે ભેદ સે ચાર-ચાર ભેદ હોતે હૈં । હન સમસ્ત ભેદોં કો
 સમ્મિલિત કરને પર જીવાધિકરણ કે એક સૌ આઠ ભેદ હોતે હૈં ।

એક સૌ આઠ ભેદોં કા વ્યૌરા હસ પ્રકાર હૈં-ક્રોધકૃતમનઃસંરંભ,
 માનકૃતમનઃસંરંભ, માયાકૃતમનઃસંરંભ લોભકૃતમનઃસંરંભ, (૪)
 હસી પ્રકાર ક્રોધકારિતમનઃસંરંભ, માનકારિતમનઃસંરંભ, માયા-
 કારિતમનઃ સંરંભ, લોભકારિતમનઃસંરંભ (૮) ક્રોધાનુમોદિતમનઃસંરંભ
 માનાનુમોદિતમનઃસંરંભ માયાનુમોદિતમનઃસંરંભ ઓર લોભાનુમો-
 દિતમનઃસંરંભ (૧૨) હસી પ્રકાર ક્રોધકૃતવચનસંરંભ, માનકૃતવચન-
 સંરંભ, માયાકૃતવચનસંરંભ, લોભકૃતવચનસંરંભ (૧૬) ક્રોધકારિત-

આ સત્તાવીશ પ્રકારનું જીવાધિકરણ થયું. આ સત્તાવીશ પ્રકારના જીવાધિ-
 કરણમાથી પ્રત્યેકના ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ રૂપ ચાર કષાયોના ભેદથી
 ચાર-ચાર ભેદ થાય છે. આ સઘળા ભેદોને સરવાળો કરીએ તો જીવાધિ-
 કરણના એકસોઆઠ ભેદ થાય છે.

એકસોઆઠ ભેદોનું વિવરણ આ પ્રકારે છે-ક્રોધકૃતમનઃસંરંભ માનકૃતમનઃ
 સંરંભ, માય કૃતમનઃસંરંભ, લોભકૃતમનઃસંરંભ (૪) આવી જ રીતે ક્રોધ કારિત-
 મનઃસંરંભ, માનકારિતમનઃસંરંભ, માયાકારિતમનઃસંરંભ, લોભકારિત મનઃ
 સંરંભ (૮) ક્રોધાનુમોદિતમનઃસંરંભ, માનાનુમોદિતમનઃસંરંભ, માયાનુમોદિત
 મનઃસંરંભ, અને લોભાનુમોદિતમનઃસંરંભ (૧૨) એવી જ રીતે ક્રોધકૃતવચન-
 સંરંભ, માનકૃતવચનસંરંભ માયાકૃતવચનસંરંભ, અને લોભકૃતવચનસંરંભ
 (૧૬) ક્રોધકારિતવચનસંરંભ, માનકારિતવચનસંરંભ, માયાકારિતવચનસંરંભ

સંરમ્ભઃ માનકારિત્વાકસંરમ્ભઃ માયાકારિત્વાકસંરમ્ભઃ લોભકારિત્વાકસંરમ્ભઃ
૨૦ ક્રોધાનુમત્વાકસંરમ્ભઃ માનાનુમત્વાકસંરમ્ભઃ માયાનુમત્વાકસંરમ્ભઃ
લોભાનુમત્વાકસંરમ્ભઃ ૨૪ એવં-ક્રોધકૃતકાયસંરમ્ભઃ માનકૃતકાયસંરમ્ભઃ
માયાકૃતકાયસંરમ્ભઃ લોભકૃતકાયસંરમ્ભઃ ૨૮ ક્રોધકારિતકાયસંરમ્ભઃ
માનકારિતકાયસંરમ્ભઃ માયાકારિતકાયસંરમ્ભઃ લોભકારિતકાયસંરમ્ભઃ ૩૨
ક્રોધાનુમત્કાયસંરમ્ભઃ માનાનુમોદિતકાયસંરમ્ભઃ માયાનુમોદિતકાયસંરમ્ભઃ
લોભાનુમોદિતકાયસંરમ્ભઃ ૩૬ इत्येवं षट्त्रिंशद्विधं जीवाधिकरणं भवति । एवं समा-
रम्भाऽऽरम्भयोरपि प्रत्येकं षट्त्रिंशत् षट्त्रिंशदेतदुत्तरगतं जीवरूपं साम्प-
रायिककर्मास्त्रयविशेषाधिकरणं बोध्यम् । तत्र षट्त्रिंशत्प्रकारकं संरम्भाधिकरणं
षट्त्रिंशत्प्रकारकं समारम्भाधिकरणं षट्त्रिंशत्प्रकारकमारम्भाधिकरणश्चाऽऽसेयम् ।

વચનસંરંભ માનકારિતવચનસંરંભ માયાકારિતવચનસંરંભ, લોભકારિત
વચનસંરંભ (૨૦) ક્રોધાનુમતવચનસંરંભ, માનાનુમતવચનસંરંભ, માયા-
નુમતવચનસંરંભ, લોભાનુમતવચનસંરંભ (૨૪) ક્રોધકૃતકાયસંરંભ,
માનકૃતકાયસંરંભ માયાકૃતકાયસંરંભ, લોભકૃતકાયસંરંભ, (૨૮)
ક્રોધકારિતકાયસંરંભ, માનકારિતકાયસંરંભ, માયાકારિતકાયસંરંભ,
લોભકારિતકાયસંરંભ (૩૨) ક્રોધાનુમતકાયસંરંભ, માનાનુમતકાય-
સંરંભ, માયાનુમોદિતકાય સંરંભ, લોભાનુમોદિતકાયસંરંભ (૩૬) હવ
પ્રકાર જીવાધિકરણ કે સંરંભ કી અપેક્ષા સે છત્તીસ ભેદ હૈ । સમારંભ
ઔર આરંભ કે મી હસી પ્રકાર છત્તીસ-છત્તીસ ભેદો કી ગણના
કરને પર ૩૬ + ૩૬ + ૩૬ = ૧૦૮ ભેદ જીવાધિકરણ કે હોતે હૈ । યહાં
છત્તીસ પ્રકાર કા સંરંભાધિકરણ, છત્તીસ પ્રકાર કા સમારંભાધિકરણ

અને લોભકારિતવચનસંરંભ (૨૦) ક્રોધાનુમતવચનસંરંભ માનાનુમતવચન-
સંરંભ, માયાનુમતવચનસંરંભ, લોભાનુમતવચનસંરંભ (૨૪) ક્રોધકૃતકાયસંરંભ
માનકૃતકાયસંરંભ માયાકૃતકાયસંરંભ અને લોભકૃતકાયસંરંભ (૨૮) ક્રોધ-
કારિતકાયસંરંભ, માનકારિતકાયસંરંભ, માયાકારિતકાયસંરંભ અને લોભકારિત-
કાયસંરંભ (૩૨) ક્રોધાનુમતકાયસંરંભ, માનાનુમતકાયસંરંભ, માયાનુમતકાય-
સંરંભ, લોભાનુમતકાયસંરંભ (૩૬) આ રીતે ૭૪ાધિકરણનાસંરંભની અપેક્ષાથી
છત્રીસ ભેદ છે. સમારંભ તથા આરંભના પણ આ જ પ્રકારે છત્રીશ-છત્રીશ
ભેદોની ગણતરી કરવાથી ૩૬+૩૬+૩૬=૧૦૮ ભેદ ૭૪ાધિકરણના હોય છે.
આહીં છત્રીશ પ્રકારના સંરંભાધિકરણ, છત્રીશપ્રકારના સમારંભાધિકરણ અને
છત્રીશ પ્રકારના આરંભાધિકરણ છે. આમાંથી મનોયોગના સંરંભના બાર ભેદ

તત્રાપિ—મનોયોગેન સંરમ્ભેન દ્વાદશ, વાગ્યોગેન સંરમ્ભેન દ્વાદશ, કાયયોગેન સંર-
મ્ભેન દ્વાદશ, કૃતકારિતાનુમતમેદેન, ક્રોધમાનમાયાલોભરૂપ કષાયચતુષ્ટયમેદેન
ચ લભ્યન્તે, इति द्वादशत्रिकं षट्त्रिंशद्विधं भवति । एवं समारम्भेणापि मनोयोगेन
द्वादश, वाग्योगેન દ્વાદશ, કાયયોગેન દ્વાદશ, કૃતકારિતાનુમતમેદેન, ક્રોધમાન
માયાલોભરૂપ કષાયચતુષ્ટયમેદેન ચ લભ્યન્તે, इत्यत्रापि द्वादशत्रिकं षट्त्रिंश-
द्विधं भवति । एवम्—અરમ્ભેનાપિ મનોયોગેન દ્વાદશ, વાગ્યોગેન દ્વાદશ કાયયોગેન
ચ દ્વાદશ કૃતકારિતાનુમતમેદેન ક્રોધમાનમાયાલોભરૂપ કષાયચતુષ્ટયમેદેન ચ
લભ્યન્તે । इत्येतद् द्वादशत्रिकमपि षट्त्रिंशद्विधं भवतीति सर्वमष्टोत्तरशतं

और छत्तीस प्रकार का आरंभाधिकरण है । इन में भी मनोयोग से
संरंभ के बारह भेद हैं, वचनयोग से संरंभ के बारह भेद हैं, काययोग
से संरंभ के बारह भेद हैं । ये बारह भेद कृत, कारित और अनुमत
के भेद से तथा क्रोध, मान, माया और लोभ रूप कषाय के भेद से
बनते हैं । बारह तिया मिलकर छत्तीस होते हैं । इसी प्रकार समारंभ
के मनोयोग से बारह, वचनयोग से बारह, काययोग से बारह भेद
हैं जो कृत कारित और अनुमत के भेद से तथा क्रोध, मान, माया
और लोभ रूप चार कषायों के भेद से बनते हैं । यहां भी बारह
त्रिक (तिया) मिलकर छत्तीस हो जाते हैं । इसी प्रकार आरंभ के भी
मनोयोग से बारह, वचनयोग से बारह काययोग से बारह भेद हैं
जो कृत, कारित और अनुमोदना के भेद से तथा क्रोध, मान, माया
और लोभ रूप चार कषायों से भेद से होते हैं । ये बारह त्रिक मिलकर
भी छत्तीस हो जाते हैं । सब मिलकर जीवरूप साम्प्रायिक कर्मास्रवा

છે, વચનયોગના સંરંભના પણ ૧૨ બાર ભેદ છે. તથા કાયયોગના સંરંભના
બાર ભેદ છે. આ બાર ભેદ કૃતકારિત અને અનુમતના ભેદથી તથા બાર ભેદ
ક્રોધ માન માયા અને લોભ ૩૫ કષાયના ભેદથી થાય છે. બાર ગુણના ત્રણ
બરાબર છત્રીશ થાય છે. એવી જ રીતે સમારંભના મનોયોગથી બાર, વચન-
યોગથી બાર, કાયયોગથી બાર ભેદ છે જે કૃતકારિત અને અનુમતના ભેદથી તથા
ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ ૩૫ ચાર કષાયોના ભેદથી થાય છે અહીં પણ
બાર ત્રિક (૧૨×૩) મળીને છત્રીશ થઈ જાય છે. એવી જ રીતે આરંભના પણ
મનોયોગથી બાર વચનયોગથી બાર, કાયયોગથી બાર ભેદ છે જે કૃતકારિત
અને અનુમતના ભેદથી તથા ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ ૩૫ ચાર કષાયોના
ભેદથી થાય છે. આ બાર ત્રિક મળીને પણ છત્રીશ થઈ જાય છે. બધાં મળીને
૭૨ ૩૫ સામ્પ્રાયિક કર્માસ્રવાધિકરણના એકસોઆઠ ભેદ સમજવા બેઈએ.

જીવરૂપ સામ્પ્રાયિક કર્માસન્નધિકરણમગ્નત્વમ્ । અનન્તાનુબંધ-પ્રત્યાખ્યાન પ્રત્યાખ્યાનસંજ્ઞાલક્ષણભેદકૃતાઽપ્ચાન્તરભેદેર્બહુવિધં સ્વલુ સામ્પ્રાયિક કર્માસ્રવાણાં જીવાધિકરણં ભવતીતિ બોધ્યમ્ । તથા ચ ક્રોધાદિકષાયા ઽજ્જનવશીકારાત્ સ્વયં કરણપરિણતૌ સત્યાં કારિતાઽનુમત્તિપરિણામદ્વારા ચ પ્રાણાત્તિષાતાદિ સદ્ગુણપરિતાપના વ્યાપત્તયઃ સામ્પ્રાયિકરૂપસંતારપરિભ્રમ્ણ-કારક કર્મબન્ધહેતવો સ્થાન્તિ તથાચોક્તમ્ ।—

સદ્ગુણઃ સંરમ્ભઃ પરિતાપના ભવેત્સમારમ્ભઃ ।

પ્રાણિવધસ્ત્વારમ્ભ સ્ત્રિવિધો યોગસ્તતો જ્ઞેયઃ ॥૧॥ ઇતિ,

કષાયાદિયોગાશ્ચ વ્યસ્તાઃ સમસ્તાશ્ચ કર્મબન્ધહેતવો દ્રષ્ટવ્યાઃ । તત્ર—

ધિકરણ કે એક સૌ આઠ ભેદ રજજ્ઞને ચાહિયે ।

જન એક સૌ આઠ ભેદો છે ક્રોધ માન, માયા અને લોભ કી સામાન્ય રૂપ સે એક એક ભેદ કી વિવક્ષા કી ગઈ હૈ । હસકે બદલે યદિ અનન્તાનુબંધી ક્રોધ, અપ્રત્યાખ્યાની ક્રોધ, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ ક્રોધ અને સંજ્વલન ક્રોધ, હસી પ્રકાર માન આદિ કે અચાન્તર ભેદો કી વિવક્ષા કી જાય તો જીવાધિકરણ કે અન્ય બી વધુત સે ભેદ હો સકતે હૈ । યહ સબી કષાય સામ્પ્રાયિક કર્મબન્ધ કે કારણ હૈ અને સંરંભ, સમારંભ તથા આરંભ આદિ સબી કોટિયાં ઉન મેં ઘટિત હોતી હૈ । કહા બી હૈ—

જીવ કે વિરાધન કા સંકલ્પ કરના સંરંભ હૈ, જીવ કો પરિતાપ પહુંચાના સમારંભ હૈ અને વિરાધના કરના આરંભ હૈ । યે ત્રીનો, ત્રીનો યોગો સે હોતે હૈ—

આ એકસોઆઠ ભેદોમાં ક્રોધ, માન, માયા અને લોભના સામાન્ય રૂપથી એક-એક ભેદની વિવક્ષા કરવામાં આવી છે. આના બદલે જો અનન્તાનુ-બંધીક્રોધ, અપ્રત્યાખ્યાનીક્રોધ પ્રત્યાખ્યાનાવરણક્રોધ અને સંજ્વલનક્રોધ એવી જ રીતે માન વગેરેના અચાન્તર ભેદોની વિવક્ષા કરવામાં આવે તો જીવા-ધિકરણના બીજાં પણ ઘણાં ભેદ થઈ શકે છે. આ બધાં કષાય સામ્પ્રાયિક કર્મબન્ધના કારણ છે અને સંરંભ-સમારંભ તથા આરંભ અદિ બધી કોટિઓ તેમાં ઘટિત થાય છે. વળી કહ્યું પણ છે—

જીવની વિરાધનાને સંકલ્પ કરવો સંરંભ છે, જીવને પરિતાપ પહોંચાડવો સમારંભ છે અને વિરાધના કરવી એ આરંભ છે. આ ત્રણે-ત્રણ યોગોથી થાય છે ॥૧॥

સમસ્તાઃ પુનઃ પ્રધાનોપસર્જનમાત્રેન વન્ધહેતવો મવન્તીતિ માવનીયમ્ । ઉક્તશ્ચ-
ઉત્તરાધ્યયને ૨૪ અધ્યયને ૨૧ ગાથાયામ્-

કૃતકારિતાઽનુષ્ઠ કોષ્ઠકમ્

કષાય-કષાય	કૃતકારિતા-	મનો-	સમષ્ટયા
કષાય	ઽનુષ્ઠ	વાક્રકાય	૧૦૮ અષ્ટો-
	૪ ૪ ૪	૧૨ ૧૨ ૧૨	તરણતમ્
		૩૬ ૩૬ ૩૬	

‘સંરંભ-સમારંભે, આરંભે ચ તહેન ચ’ इति । संरम्भः समारम्भ आरम्भश्च
तथैव चेति । दशवैकालिके ४ अध्याये चोक्तम्-‘त्रिविहं त्रिविहेणं मणेणं
वाथाए काएणं न करेमि । न कारयेमि करंतं पि अन्नं न समणुजानामि’
इति ॥ त्रिविधं त्रिविधेन मनसा-वचसा-कायेन न करोमि, न कारयामि, कुर्व-
न्तमपि-अन्यं न समणुजानामि, इति ॥ व्याख्याप्रज्ञसौ भगवतीसूत्रे ७ शतके
१ उद्देशके १८ सूत्रे चोक्तम्-‘जस्स णं कोहमाणमायालोभा अवोच्छिन्ना
भवन्ति, तस्स णं संपराहया किरिया कज्जह नो ईरिआवहिआ’ इति ।

ये કષાય યોગ આદિ પૃથક્-પૃથક્ ખી કર્મબન્ધ કે કારણ હોતે હૈં
ઔર મિલકર ખી । જબ મિલે હુએ કારણ હોતે હૈં તો પ્રધાન એવં ગૌણ
રૂપ સે કારણ હોતે હૈં । ઉત્તરાધ્યયન કે ૨૪ વેં અધ્યયન કી ૨૧ વીં
ગાથા મેં કહા હૈ-સંરંભ, સમારંભ ઔર આરંભ ।

દશવૈકાલિકસૂત્ર કે ચૌથે અધ્યયન મેં કહા હૈ-ત્રીન કરણ ઔર
ત્રીન યોગ સે અર્થાત્ મન સે, વચન સે ઔર કાય સે ન સ્વયં કરુંગા,
ન દૂસરે સે કરવાડુંગા ઔ ન કવતે હુએ કા અનુમોદન કરુંગા ।

ભગવતી સૂત્ર શતક ૭ ઉદ્દેશક ૧ સૂત્ર ૧૮ મેં કહા હૈ-જિસ જીવ

આ કષાય યોગ આદિ પૃથક્-પૃથક્ પણ કર્મબન્ધના કારણ હોઈ શકે
છે અને સંયુક્ત રીતે પણ બ્યારે સંયુક્ત કારણ હોય છે તો પ્રધાન તથા
ગૌણ રૂપથી કારણ હોય છે. ઉત્તરાધ્યયનના ૨૪માં અધ્યયનની ૨૧મી ગાથામાં
કહ્યું છે-સંરંભ, સમારંભ અને આરંભ’.

દશવૈકાલિકસૂત્રના ચોથા અધ્યયનમાં કહ્યું છે-ત્રણ કરણ અને ત્રણ
યોગથી અર્થાત્ મનથી, વચનથી તથા કાયાથી હું બંતે કરીશ નહીં ખીજા પાસે
કરાવીશ નહીં તેમજ અન્ય કોઈ કરતું હશે તેને અનુમોદન આપીશ નહીં.

ભગવતીસૂત્રના શતક ૭ ઉદ્દેશક-૧ સૂત્ર ૧૮માં કહ્યું છે જે જીવના

सस्य खलु क्रोध-मान-माया-लोभा अव्युच्छिन्ना भवन्ति, तस्य खलु-साम्परा-
यिकी क्रियाक्रियते ऐर्यापथिकी, इति ॥८॥

मूलम्-अन्तिमं णिव्वत्तणणिकखेवसंजोयनिसग्गेहिं चउविहं ॥९॥

छाया-अन्तिमं निर्वर्तन-निक्षेप-संयोग-निसर्गैश्चतुर्विधम् ॥९॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्व तावत् साम्परायिककर्मास्रवाणां हेतुभूतेषु तीव्रभाव
मन्दभावादि वीर्याधिकरणविशेषेषु जीवाजीवभेदेन द्विविधाधिकरणे प्रथमं
जीवरूपमधिकरणं सविशदं प्ररूपितम्, सम्पत्ति-द्वितीय जीवरूपमधिकरणं
प्ररूपयितुमाह-‘अन्तिमं णिव्वत्तणणिकखेवसंजोयनिसग्गेहिं चउविहं’
इति । अन्तिमं द्वितीयमजीवरूपं साम्परायिक कर्मास्रवाधिकरणं निर्वर्तन-निक्षेप-
संयोग-निसर्गैश्चतुर्विधं भवति । तत्र-निर्वर्त्यसे निष्पाद्यते यत्, तत् निर्वर्तन-

के क्रोध, मान, माया और लोभ कषाय का चिच्छेद नहीं होता उसको
साम्परायिक क्रिया होती है ऐर्यापथिकी क्रिया नहीं होती ॥८॥

‘अन्तिमं णिव्वत्तणणि’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ-अन्तिम अर्थात् अजीवाधिकरण चार प्रकार का है-
निर्वर्तन, निक्षेप, संयोग और निसर्ग । ९॥

तत्त्वार्थदीपिका-पहले साम्परायिक कर्मों के आस्रव में विशेषता
उत्पन्न करने वाले तीव्रभाव, मन्दभाव आदि एवं वीर्य और अधिक-
रण का निरूपण किया गया था । उन में से अधिकरण के दो भेद
कह कर जीवाधिकरण की प्ररूपणा की । अब दूसरे अजीवाधिकरण
की प्ररूपणा करने के लिए कहते हैं-

दूसरा साम्परायिक कर्मास्रवाधिकरण अर्थात् अजीवाधिकरण
चार प्रकार का है-निर्वर्तन निक्षेप, संयोग और निसर्ग ।

क्रोध, मान, माया तथा लोभ कषायनो विच्छेद यतो नथी, तेने साम्परायिक
क्रिया थाय छे, ऐर्यापथिकी क्रिया यती नथी. ॥८॥

‘अन्तिम णिव्वत्तणणिकखेव’ इत्यादि

सूत्रार्थ-अन्तिम अर्थात् अजीवाधिकरण चार प्रकारके छे-निर्वर्तन
निक्षेप, संयोग अने निसर्ग. ॥९॥

तत्त्वार्थदीपिका-पहले साम्परायिक कर्माना आस्रवमां विशेषता उत्पन्न
करवावाणा तीव्रभाव, मन्दभाव आदि तथा वीर्य अने अधिकरणनुं निरूपण कर-
वामां आण्युं छे. हवे नील अजीवाधिकरणनी प्ररूपणा करवा माटे कहीअे छीअे-
नीलुं साम्परायिक कर्मास्रवाधिकरण अर्थात् अजीवाधिकरण चार प्रका-
रुं छे-निर्वर्तन निक्षेप, संयोग अने निसर्ग.

નિષ્પાદનમ્, નિષ્પિપ્પતે-સ્થાપ્યતે इति નિક્ષેપ:-સ્થાપનમ્, સંયુજ્યતે-મિશ્રી-
ક્રિયતે इति સંયોગ:-મિશ્રણમ્, મિશ્રણમ્, નિસ્રજ્યતે-પ્રવર્ત્યતે इति નિસર્ગ:-
પ્રવર્તનમ્ । તત્ર-નિર્વર્તનાધિકરણં દ્વિવિધમ્, મૂલગુણનિર્વર્તનાધિકરણમ્-ઉત્તર-
ગુણનિર્વર્તનાધિકરણમ્-એતિ । નિક્ષેપાધિકરણં ચતુર્વિધમ્, દુષ્પ્રત્યુપેક્ષિતનિક્ષેપા-
ધિકરણમ્ ૧ દુષ્પ્રમાર્જિતનિક્ષેપાધિકરણમ્ ૨ સહસા નિક્ષેપાધિકરણમ્ ૩ અના-
શોગનિક્ષેપાધિકરણમ્ ૪ એતિ । સંયોગાધિકરણં દ્વિવિધમ્, ભક્તપાનસંયોગાધિ-
કરણમ્-ઉપકરણસંયોગાધિકરણમ્-એતિ । નિસર્ગાધિકરણં પુનસ્ત્રિવિધમ્, મનો-
નિસર્ગાધિકરણમ્ ૧ વાહનિસર્ગાધિકરણમ્ ૨ કાયનિસર્ગાધિકરણમ્ ૩ એતિ સર્વ
સમ્મેલનેનાઽજીવરૂપં સામ્પરાયિકકર્માસવાધિકરમેકાદશવિધં ભવતિ । તત્રાઽપિ-

જો ઉત્પન્ન ક્રિયા જાય હશે નિર્વર્તન કહતે હૈં । જિણે નિક્ષિપ્ત
ક્રિયા જાય-સ્થાપિત ક્રિયા જાય હશે નિક્ષેપ કહતે હૈં । જો સંયુક્ત
ક્રિયા જાય અર્થાત્ મિશ્રિત ક્રિયા જાય હશે સંયોગ કહતે હૈં । જો
પ્રવૃત્ત ક્રિયા જાય હશે પ્રવર્તન યા નિસર્ગ કહતે હૈં ।

નિર્વર્તન અધિકરણ કે દો ભેદ હૈં-મૂલગુણ નિર્વર્તનાધિકરણ ઓર
ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણ । નિક્ષેપાધિકરણ ચાર પ્રકાર કા હૈ-(૧)
દુષ્પ્રત્યુપેક્ષિતનિક્ષેપાધિકરણ (૨) દુષ્પ્રમાર્જિતનિક્ષેપાધિકરણ (૩)
સહસાનિક્ષેપાધિકરણ ઓર (૪) અનાશોગનિક્ષેપાધિકરણ । સંયોગાધિ-
કરણ કે દો ભેદ હૈ-ભક્તપાનસંયોગાધિકરણ ઓર ઉપકરણ સંયોગા-
ધિકરણ । નિસર્ગાધિકરણ કે ત્રીન ભેદ હૈ-(૧) મનોનિસર્ગાધિકરણ
(૨) વચનનિસર્ગાધિકરણ ઓર (૩) કાયનિસર્ગાધિકરણ ।

જે ઉત્પન્ન કરી શકાય તેને નિર્વર્તન કહે છે. જેને નિક્ષિપ્ત કરી
શકાય-સ્થાપિત કરી શકાય તેને નિક્ષેપ કહે છે જે સંયુક્ત કરી શકાય અર્થાત્
ભેળવી શકાય તેને સંયોગ કહે છે જે પ્રવૃત્ત કરી શકાય તેને પ્રવર્તન અથવા
નિસર્ગ કહે છે.

નિર્વર્તન અધિકરણના બે ભેદ-મૂળગુણનિર્વર્તનાધિકરણ અને ઉત્તર-
ગુણનિર્વર્તનાધિકરણ. નિક્ષેપાધિકરણ ચાર પ્રકારના છે. (૧) દુષ્પ્રત્યુપેક્ષિત
નિક્ષેપાધિકરણ (૨) દુષ્પ્રમાર્જિતનિક્ષેપાધિકરણ (૩) સહસાનિક્ષેપાધિકરણ અને
(૪) અનાશોગનિક્ષેપાધિકરણ. સંયોગાધિકરણના બે ભેદ છે-ભક્તપાન સંયો-
ગાધિકરણ અને ઉપકરણસંયોગાધિકરણ. નિસર્ગાધિકરણના ત્રણ ભેદ છે-
(૧) મનોનિસર્ગાધિકરણ (૨) વચનનિસર્ગાધિકરણ અને (૩) કાયનિસર્ગાધિકરણ.

મૂળગુણનિર્વર્તના ઔદારિકાદીનિપજ્ઞ શરીરાણિ મનોવાકકાય પ્રણાપાનાશ્ચેતિ ।
ઉત્તરગુણનિર્વર્તનશ્ચા-ડનેકવિધં ભવતિ, કાષ્ઠપાષાણ-પુસ્ત-ચિત્રકર્માદિનિષ્પાદન
જીવકૃતિનિષ્પાદન લેખનાદિ ભેદાત્ इति ॥૯॥

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિ:-પૂર્વ તાવત્ સામ્પરાયિકકર્માસ્રવહેતુતયા પ્રતિપાદિતેષુ
તીવ્રભાવાદિ વીર્યાધિકરણવિશેષેષુ જીવાજીવભેદેન દ્વિવિધાધિકરણે પ્રથમ
જીવરૂપાધિકરણં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પતિ-દ્વિતીયમ્ અજીવરૂપં સામ્પરાયિકકર્મા-
સ્રવાધિકરણં પ્રરૂપયિતુમાહ-‘અંતિમં નિવૃત્તણ ણિત્રસ્રેવ સંજોય નિસર્ગોહિં
ચઉદિવહં’ इति । અન્તિમં-દ્વિતીયમ્ અજીવરૂપં સામ્પરાયિકકર્માસ્રવહેતુમૂતમ
ધિકરણં નિર્વર્તન-નિક્ષેપ-સંયોગ-નિસર્ગૈશ્ચતુર્વિધં ભવતિ । તત્ર-નિર્વર્તનનિક્ષેપ-

इन सब भेदों को सम्मिलित करने पर अजीवाधिकरण ग्यारह
प्रकार का होता है । इन में से औदारिक आदि पांच शरीर, मन,
वचन, काय तथा प्राणापान, ये मूलगुणनिर्वर्तन हैं । उत्तरगुणनिर्वर्तन
के अनेक भेद हैं-काष्ठ, पाषाण पुस्त, चित्र आदि बनाना, जीव की
आकृति बनाना, लेखन आदि-आदि ॥९॥

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિ-પહેલે બતલાયા ગયા થા કિ તીવ્રભાવ, મન્દભાવ
આદિ તથા વીર્ય ઓર અધિકરણ સમ્પરાયિક આસ્રવ મેં વિશેષતા
ઉત્પન્ન કરતે હેં । इनमें से अधिकरण के दो भेदों का प्रतिपादन करके
जीवाधिकरण का प्ररूपण किया गया, अब दूसरे अजीवाधिकरण का
निरूपण करने के लिए कहते हैं—

दूसरा साम्परायिक आस्रवका अधिकरण अर्थात् अजीवाधिकरण
निर्वर्तन, निक्षेप, संयोग और निमर्ग के भेद से चार प्रकार का है ।

આ બધાં ભેદોનો સરવાળો કરવાથી અજીવાધિકરણ અગીયાર પ્રકારના
થાય છે. આમાંથી ઔદારિક આદિ પાંચ શરીર, મન, વચન કાય તથા પ્રાણા-
પાન એ મૂળગુણનિર્વર્તન છે. ઉત્તરગુણનિર્વર્તનના અनेक ભેદ છે. કાષ્ઠ, પાષાણ,
પુસ્ત, ચિત્ર આદિ બનાવવું, જીવની આકૃતિ બનાવવી, લેખન વગેરે ॥૯॥

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિ-પહેલા બતાવવામાં આવ્યું હતું કે તીવ્રભાવ, મન્દભાવ
આદિ તથા વીર્ય અને અધિકરણ સામ્પરાયિક આસ્રવમાં વિશેષતા ઉત્પન્ન
કરે છે. આમાંથી અધિકરણના બે ભેદોનું પ્રતિપાદન કરીને જીવાધિકરણનું
નિરૂપણ કરવા માટે કહીએ છીએ—

બીજું સામ્પરાયિક આસ્રવનું અધિકરણ અર્થાત્ અજીવાધિકરણ નિર્વ-
ર્તન, નિક્ષેપ સંયોગ અને નિસર્ગનાભેદથી ચાર પ્રકારના છે. આશય કહે-

સંયોગ-નિસર્ગાન કુર્વન્ન રાગ-દ્વેષ યુક્ત આત્મા સામ્પ્રાયિક કર્મવન્ધકો ભવતિ । તત્ત્વ-નિર્વર્ત્યતે નિષ્પાદ્યતે इति નિર્વર્તનમ્, પ્રાણાતિપાતાદ્યર્થ નિર્વર્ત્યમાન સ્વદ્વા-દિકમજીવદ્રવ્યં નિર્વર્તનમિતિ વ્યપદિશ્યતે । તત્ત્વ-નિર્વર્તનં દ્વિવિધમ્, મૂળોત્તર-ગુણબેદાત્ ૧ નિશ્ચિપ્યતે-સ્થાપ્યતેઽસાવિતિ નિશ્લેષઃ સ્થાપનીયઃ કશ્ચિદજીવ एव स च निक्षेपश्चतुर्विधाः, વક્ષ્યમાણ-દુષ્પત્યુપેક્ષાદિભેદતઃ ૨ સંયુજ્યતે-મિશ્રી ક્રિયતેઽસાવિતિ સંયોગઃ-મિશ્રણમ્, સ દ્વિવિધઃ-આહારોપકરણભેદાત્ ૩ નિસ-ર્ગતે-પ્રવર્ત્યતે इति નિસર્ગઃ પ્રવર્તનં ત્યાગઃ उज्झनम्, સ ચ નિસર્ગસ્રિત્રિવિધઃ-કાયિકવાચિકમાનસિકભેદાત્ । તત્ત્વ-જીવરૂપં સામ્પ્રાયિકકર્માસ્રવસ્યાઽન્તર-જ્ઞમધિકરણમ્, અજીવરૂપાધિકરણન્તુ-તથાવિધાસ્રવસ્ય વહિરજ્ઞં કારણં વર્તતે, અતएवाऽनन्तरज्ञत्वात् जीवाधिकरणं प्रथममुक्तम्, અજીવાધિકરણં પુનઃ પશ્ચાત્

તાત્પર્યં યહ દૈ કિ રાગ-દ્વેષ સ્ત્રે યુક્ત જીવ નિર્વર્તન, નિશ્લેષ, સંયોગ ઓર નિસર્ગ કરતા હુઆ સામ્પ્રાયિક કર્મકા વન્ધ કરતા હૈ ।

જિસકા નિષ્પાદન ક્રિયા જાય વહ નિર્વર્તન હૈ જૈસે પ્રાણાતિપાત કરને કે લિએ બનાયે જાને વાળે સ્વદ્વાગ આદિ કો અજીવદ્રવ્યનિર્વર્તન કહતે હૈ । નિર્વર્તન કે દો ભેદ હૈ મૂળગુણનિર્વર્તન ઓર ઉત્તરગુણ-નિર્વર્તન । જો નિશ્ચિપ ક્રિયો જાય, સ્થાપિત ક્રિયા જાય યા કરવા યા જાય ઉસે નિશ્લેષ કહતે હૈ ઉસકે ચાર ભેદ આગે કહે જાએગે । જો સંયુજન ક્રિયા જાય-મિશ્રિત ક્રિયા જાય, વહ સંયોગાધિકરણ હૈ । હસકે દો ભેદ હૈ-આહારસંયોગ ઓર ઉપકરણસંયોગ । નિસર્ગ કા અર્થ હૈ પ્રવર્તન, ત્યાગ યા નિકાલ દેના । કાયિક, વાચિક ઓર માન-સિક ભેદસે નિસર્ગ ત્રીન પ્રકારકા હૈ ।

સામ્પ્રાયિક આસ્રવ કા અન્તરંગ કારણ જીવાધિકરણ હૈ ઓર

વાનો એ છે કે રાગદ્વેષથી યુક્ત જીવ નિર્વર્તન નિશ્લેષ સંયોગ અને નિસર્ગ કરતો થકો સામ્પ્રાયિક કર્મનું બન્ધન કરે છે.

જેનુ નિષ્પાદન કરી શકાય તે નિર્વર્તન છે જેમ કે પ્રાણાતિપાત કરવા માટે તૈયાર કરવામાં આવતી તલવાર વગેરેને અજીવદ્રવ્યનિર્વર્તન કહે છે. નિર્વર્તના એ લેદ છે-મૂળગુણનિર્વર્તન અને ઉત્તરગુણનિર્વર્તન જેને નિશ્ચિપ કરી શકાય, સ્થાપિત કરી શકાય અથવા કરાવી શકાય તેને નિશ્લેષ કહે છે. તેના ચાર લેદ આગળ ઉપર કહેવામાં આવશે. જે સંયુક્ત કરી શકાય-મિશ્રિત કરી શકાય તે સંયોગાધિકરણ છે. એના એ લેદ-છે આહાર સંયોગ અને ઉપકરણસંયોગ નિસર્ગનો અર્થ છે પ્રવર્તન, ભાગ અથવા કાઠીમુકવું. કાયિક, વાચિક અને માનસિક લેદથી નિસર્ગ ત્રણ પ્રકારના છે.

સામ્પ્રાયિક આસ્રવનું અંતરંગ કારણ જીવાધિકરણ છે અને બાહ્ય

अन्यथा-निर्वर्तननिक्षेपादीनामपि आत्मपरिणतिसङ्गात् संस्कारादिवत् तेषामपि जीवाधिकरणेऽन्तर्भाव एव स्यात् इति भावः । तथाच-तथाविधकर्मबन्धास्रवस्य जीवपरिणामोऽन्तरङ्गो बोध्यः, कर्मबन्धस्य तदधीनत्वात् जीवाधिकरणस्य-साम्परायिककर्मबन्धं प्रतिप्रधानत्वादन्तरङ्गत्वात् प्रथमुपादानम् । अजीवाधिकरणस्य तु-तथाविधकर्मबन्धं प्रतिनिमित्तत्वादप्रधानत्वं बहिरङ्गत्वं बोध्यम्, अतएव-पश्चात् तदुपादानं कृतम् । अथवा-प्रायोगिकावैस्वसावा निर्वर्तनादयोऽवगन्तव्याः,

बाह्य कारण अजीवाधिकरण है । इसी से पहले अन्तरङ्ग कारण जीवाधिकरण का कथन किया गया है और बाद में बाह्य कारण अजीवाधिकरण का अन्यथा निर्वर्तन एवं निक्षेप आदि की आत्मा की तथा विध परिणति के बिना नहीं होते, अतः संरंभ आदि के समान उन का भी जीवाधिकरण से समावेश किया जाता । इस प्रकार साम्परायिक कर्म का आस्रव और बन्ध जीव का अन्तरङ्ग परिणाम है, ऐसा समझना चाहिए, क्योंकि कर्मबन्ध उस परिणाम के अधीन है । इस प्रकार साम्परायिक कर्म के बन्ध में जीवाधिकरण प्रधान या अन्तरङ्ग होने से पहले ग्रहण किया गया है । अजीवाधिकरण साम्परायिक कर्मबन्ध में निमित्त मात्र होता है, अतएव वह अप्रधान या बहिरङ्ग कारण है । इसी से उसको बाद में ग्रहण किया गया है ।

अथवा निर्वर्तना आदि प्रायोगिक (पुरुष के प्रयत्न से उत्पन्न) और वैस्वसिक (स्वाभाविक) जानने चाहिये । पहला जीवाधिकरण

कारण अजीवाधिकरण छे आथी न पडेला अंतरंग कारण अजीवाधिकरणतुं. कथन करवामां आन्धुं छे अने पछीथी बाह्यकारण अजीवाधिकरणतुं अन्यथा निर्वर्तन अने निक्षेप आदि पण आत्मानि तथाविध परिणति रहित होतां नथी आथी संरंभ आदिनी भाइके तेमने। पण अजीवाधिकरणमां समावेश करवामां आवत. आम साम्परायिक कर्मना आस्रव अने बन्ध अवन अंतरंग परिणाम छे ओवुं समजवानुं छे कारण के कर्मबन्ध ते परिणामने अधीन छे आ रीते साम्परायिक कर्मना बन्धमां अजीवाधिकरण प्रधान अथवा अंतरंग होवाथी प्रथम देवामां आन्धुं छे. अजीवाधिकरण साम्परायिक कर्म बन्धमां निमित्त मात्र होय छे आथी ते गौण अथवा बहिरंग कारण छे, आथी न तेने पछी देवामां आवेल छे.

अथवा निर्वर्तना आदि प्रायोगिक (पुरुषना प्रयत्नथी उत्पन्न) तथा वैस्वसिक (स्वाभाविक) जणुवा जेधये. पडेलुं अजीवाधिकरण अवविषयक होवाथी

અર્થયં સ્વલુ જીવવિષયત્વાત્-તથાવિધાસ્યસ્ય ભાવાધિકરણં મુખ્યતયા કર્મવન્ધહેતુ-
 ભવતિ । અજીવવિષયત્વાદ્ દ્વિતીયં દ્રવ્યાધિકરણં નિમિત્તમાત્રત્વાદમુખ્યતયા કર્મ-
 વન્ધહેતુર્ભવતીતિ પશ્ચાત્તદુપાદાનામિતિભાવઃ । તત્ર-નિર્વર્તનરૂપાઽજીવાધિકરણં
 દ્વિવિધમ્, મૂલગુણનિર્વર્તનાધિકરણમ્ ૧ ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણશ્ચ ૨ । તત્ર-
 મૂલગુણનિર્વર્તનાધિકરણમ્ ઔદારિકાદિ પશ્ચશરીરાણિ વાઙ્મનઃપ્રાણાપાનાશ્ચ ।
 ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણ કાષ્ઠપાષાણાદિષુ ચિત્રકર્માદીનિ, તત્ર-મૂલં ચાઽસૌ-
 ગુણશ્ચેતિ મૂલગુણઃ, મૂલમાદ્યં પ્રતિષ્ઠા સંસ્થાભિધાનો ગુણો મૂલગુણઃ, સ એવ
 નિર્વર્તનાધિકરણં મૂલગુણનિર્વર્તનાધિકરણમ્ । સ સ્વલુ મૂલગુણો નિર્વૃત્તઃ સન્
 કર્મવન્ધ્યાઽધિકરણં ભવતિ, । એવમ્-અજ્ઞોપાજ્ઞ સંસ્થાનમૃદ્વાદિ તીક્ષ્ણત્વાદિ-
 રુત્તરગુણઃ, સોઽપિ-નિર્વૃત્તઃ સન્ કર્મવન્ધ્યાધિકરણં ભવતિ, ઉત્તરગુણ એવ

જીવવિષયક હોને સે ભાવાધિકરણ એવં કર્મવન્ધ કા પ્રધાન હેતુ હૈ ।
 દૂસરા અજીવ વિષયક હોને સે દ્રવ્યાધિકરણ હૈ, વહ નિમિત્ત માત્ર
 હોને સે કર્મવન્ધ કા અપ્રધાન (ગૌણ) કારણ હૈ । હસ કારણ ઉસે બોદ
 મેં ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ ।

નિર્વર્તનરૂપ અજીવાધિકરણ દો પ્રકાર કા હૈ-મૂલગુણનિર્વર્તનાધિ-
 કરણ ઓર ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણ । ઔદારિક આદિ પાંચોં શરીર
 ઓર પ્રાણાપાન વચન તથા મન યે મૂલગુણનિર્વર્તન હૈ । કાષ્ઠ એવં પાષાણ
 આદિ પર ચિત્ર અંકિત કરના આદિ ઉત્તરગુણનિર્વર્તન હૈ । મૂલભૂત
 અર્થાત્ આદ્ય, પ્રતિષ્ઠા યા સંસ્થા રૂપ ગુણ મૂલગુણ કહલાતા હૈ । વહી
 મૂલગુણનિર્વર્તનાધિકરણ કહલાતા હૈ । વહ મૂલગુણ ઉત્પન્ન હોકર કર્મ-
 વન્ધ કા કારણ અધિકરણ હોતા હૈ । અંગોપાંગ સંસ્થાન, મૃદુતા, તીક્ષ્ણતા
 આદિ ઉત્તરગુણ હૈ । વહ બી ઉત્પન્ન હોકર કર્મવન્ધ કે અધિકરણ હોતે

ભાવાધિકરણ અને કર્મબંધનું પ્રધાન કારણ છે, બીજું અણુવ વિષયક હોવાથી
 દ્રવ્યાધિકરણ છે તે નિમિત્ત માત્ર હોવાથી કર્મબંધનું અપ્રધાન (ગૌણ)
 કારણ છે. આથી તેને પાછળ લેવામાં આવેલ છે.

નિર્વર્તનરૂપ અણુવાધિકરણ બે પ્રકારનું છે-મૂળગુણનિર્વર્તનાધિકરણ
 અને ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણ. ઔદારિક આદિ પાંચે શરીર અને પ્રાણાપાન
 વચન તથા મન આ મૂળગુણનિર્વર્તન છે. કષ્ઠ તથા પાષાણ આદિ પર ચિત્ર
 દોરવું આદિ ઉત્તરગુણનિર્વર્તન છે મૂળભૂત અર્થાત્ આદ્ય, પ્રતિષ્ઠા અથવા
 સંસ્થા રૂપ ગુણ મૂળગુણ કહેવાય છે. તેજ મૂળગુણનિર્વર્તનાધિકરણ
 કહેવાય છે, તે મૂળગુણ ઉત્પન્ન થઈને કર્મબંધ અધિકરણ થાય છે.
 અંગોપાંગ, સંસ્થાન, મૃદુતા, તીક્ષ્ણતા આદિ ઉત્તર ગુણ છે તે પણ ઉત્પન્ન

નિર્વર્તનાધિકરણમ્-ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણમ્, તત્રૌદારિકશરીરદર્ગણાપ્રાયોગ્ય
દ્રવ્યૈર્નિર્માપિતમૌદારિકશરીરસંસ્થાનં પ્રથમસમયાદારમ્થ્યાઽઽત્વનો મૂલગુણ-
નિર્વર્તનાધિકરણં ભવતિ, કર્મબન્ધનિમિત્તત્વાત્ । ઔદારિકશરીરસ્યાઽઙ્ગોપાઙ્ગ-
માર્જનકર્ણવેધાઽવયવસંસ્થાનાદિકમ્ આત્મન ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણં ભવતિ,
તસ્યાપિ-કર્મબન્ધનિમિત્તત્વાત્ । વૈક્રિયસ્યાપિ શરીરસ્ય સ્વવર્ગણાપ્રાયોગ્યદ્રવ્યૈ
નિર્માપિતં સંસ્થાનં પ્રથમસમયાદારમ્થ્ય મૂલગુણનિર્વર્તનાધિકરણં ભવતિ, વૈક્રિય-
સ્ય-શરીરસ્યા-ઽઙ્ગોપાઙ્ગ-કેશદન્તનખાદિકમુત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણં ભવતિ ।
આહારકશરીરસ્યાપિ સ્વવર્ગણાપ્રાયોગ્ય પુદ્ગલદ્રવ્યરચિતં સંસ્થાનં મૂલગુણનિર્વર્તના-
ધિકરણમ્, તસ્યાઙ્ગોપાઙ્ગાદિકં પુનરુત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણમ્ ભવતિ । एवं-

हैं । उत्तरगुण रूप निर्वर्त्तनाधिकरण को उत्तरगुणनिर्वर्त्तनाधिकरण
कहा गया है । औदारिक शरीर वर्गणा के द्रव्यों से बना हुआ औदा-
रिक शरीरसंस्थान प्रथम समय से लेकर आत्मा का मूलगुणनिर्वर्त्तना-
धिकरण है, क्योंकि वह कर्मबन्ध का कारण है । औदारिकशरीर के
अंगोपांग-मार्जन कर्णवेध अवयवों का संस्थान आदि आत्मा का उत्तर-
गुणनिर्वर्त्तनाधिकरण है, क्योंकि वह भी कर्मबन्ध का कारण है । इसी
प्रकार वैक्रिय शरीर का वैक्रिय वर्गणा के पुद्गलों से बना हुआ संस्थान
प्रथमसमय से लेकर मूलगुणनिर्वर्त्तनाधिकरण है और वैक्रिय शरीर
के अंगोपांग, केश, दांत, नख, आदि उत्तरगुणनिर्वर्त्तनाधिकरण हैं ।
आहारकशरीर के योग्य वर्गणा के पुद्गलों से बना हुआ संस्थान
मूलगुणनिर्वर्त्तनाधिकरण है और उसके अंगोपांग आदि उत्तरगुण-

થઈને કર્મબન્ધના અધિકરણ થાય છે ઉત્તરગુણ રૂપ નિર્વર્તનાધિકરણને ઉત્તર
ગુણનિર્વર્તનાધિકરણ કહેવામાં આવેલ છે. ઔદારિક શરીર વર્ગણાના દ્રવ્યોથી
બનેલું ઔદારિક શરીર સંસ્થાન પ્રથમ સમયથી લઈને આત્માનું મૂળગુણ-
નિર્વર્તનાધિકરણ છે કારણ કે તે કર્મબન્ધનું કારણ છે. ઔદારિક શરીરના
અંગોપાંગ-માર્જન, કર્ણવેધ અવયવોનું સંસ્થાન આદિ-આત્માના ઉત્તરગુણ-
નિર્વર્તનાધિકરણ છે કારણ કે તે કર્મબન્ધના કારણ છે એવી જ રીતે
વૈક્રિયશરીરનું વૈક્રિયવર્ગણાના પુદ્ગલોથી બનેલું સંસ્થાન પ્રથમ સમયથી
લઈને મૂળગુણનિર્વર્તનાધિકરણ છે અને વૈક્રિય શરીરના અંગોપાંગ, વાળ,
દાંત નખ વગેરે ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણ છે. આહારક શરીરને યોગ્ય વર્ગણાના-
પુદ્ગલોથી બનેલું સંસ્થાન મૂળગુણનિર્વર્તનાધિકરણ છે અને તેના અંગોપાંગ
આદિ ઉત્તર ગુણનિર્વર્તનાધિકરણ છે. એવી જ રીતે કર્મોના સમૂહ રૂપ

કર્મસંઘાતલક્ષણસ્ય કાર્મણશરીરસ્યાऽપિ સ્વયોગ્યદ્રવ્યરચિતસંસ્થાનં મૂલગુણનિર્વર્ત-
નાધિકરણમ્ , તસ્યોત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણન્તુ નાસ્ત્યેવ, તૈજસસ્પાપિ શરીરસ્યો
ઘ્ણલક્ષણસ્ય મુક્તપીતાનલશક્તિશાલિનો લઘ્વિમત્યસ્ય ચ પરાનુગ્રહ-નિગ્રહકારક-
સ્ય સ્વવર્ગણા રચિતસંસ્થાનં મૂલગુણનિર્વર્તનાધિકરણમ્ , તસ્યાऽપ્યુત્તરગુણાનિર્વર્ત-
નાધિકરણં નાઽસ્ત્યેવ । એવં-વાહ્મનઃપાણાપાનાશ્ચ મૂલગુણનિર્વર્તનાધિકરણમ્ ,
તત્ર-વાહ્મનોવર્ગણાપ્રાયોગ્ય દ્રવ્યરચિતૌ વાહ્મન.સંસ્થાનવિશેષૌ મૂલગુણનિર્વર્તના-
ધિકરણમ્ । એવં પ્રાણાપાનવર્ગણાપ્રાયોગ્યરચિતૌ ઉચ્છ્વાસ-નિઃશ્વાસાકારૌ
મૂલગુણનિર્વર્તનાધિકરણં ભવતઃ, એતેપામપિ-ચતુર્ણાં સ્વલુ ઉત્તરગુણનિર્વર્તના નૈવ
સમ્ભવતિ, કાષ્ઠ-પાપાણ-પુસ્ત-ચિત્રકર્માદીનિ ચોત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણમ્

નિર્વર્તનાધિકરણ હૈં इसी प्रकार कर्मों के समूह रूप कर्मण शरीर के
योग्य द्रव्यों के द्वारा रचित संस्थान मूलगुणनिर्वर्तनाधिकरण है ।
इसका उत्तरगुणनिर्वर्तनाधिकरण नहीं होता । उष्णता लक्षण वाले
एवं खाये-पीये आहार को पचाने की शक्ति वाले तैजस शरीर का
तथा निग्रह और अनुग्रह करने में समर्थ लघ्वि जनित तैजस शरीर का
अपने योग्य पुद्गलों के द्वारा निर्मित आकार मूलगुणनिर्वर्तना है । इस
शरीर की भी उत्तरगुणनिर्वर्तना नहीं होती । इसी प्रकार मन, वचन
और प्राणापान मूलगुणनिर्वर्तनाधिकरण हैं । वचन और मन के योग्य
द्रव्यों द्वारा रचित वचन एवं मन के संस्थान मूलगुणनिर्वर्तनाधिकरण
है । इसी प्रकार प्राणापानवर्गणा के द्वारा रचित उच्छ्वास और निश्वास
के संस्थान मूलगुणनिर्वर्तनाधिकरण हैं । इन चारों की भी उत्तरगुण-

કાર્મણ શરીરને યોગ્ય દ્રવ્યો દ્વારા રચિત સંસ્થાન મૂળગુણનિર્વર્તનાધિકરણ
છે. આનું ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણ હોતું નથી. ઉષ્ણતા લક્ષણવાળા અને
આધેલ-પીધેલા આહારને પચાવવાની શક્તિવાળા તૈજસ શરીરનું તથા નિગ્રહ
અને અનુગ્રહ કરવા માટે સમર્થ લઘ્વિજનિત તૈજસ શરીરનું યોગ્ય અનુગ્રહ
પુદ્ગલો દ્વારા નિર્મિત આકાર મૂળગુણનિર્વર્તના છે આ શરીરની પણ
ઉત્તરગુણનિર્વર્તના હોતી નથી એવી જ રીતે વચન, મન અને પ્રાણાપાન
મૂળગુણનિર્વર્તનાધિકરણ છે. વચન અને મનના યોગ્ય દ્રવ્યોદ્વારા રચિત
વચન અને મનના સંસ્થાન મૂળગુણનિર્વર્તનાધિકરણ છે. એવી જ રીતે પ્રાણા-
પાનવર્ગણા દ્વારા રચિતઉચ્છ્વાસ અને નિશ્વાસના સંસ્થાન મૂળગુણનિર્વર્તના
ધિકરણ છે આ ચારેની પણ ઉત્તરગુણ નિર્વર્તના હોતી નથી કાક, પુસ્ત,
ચિત્રકાર્મ આદિ ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણ છે. લાકડી અથવા પાષાણની પુતળી

भवन्ति । तत्र-काष्ठकर्म, पाषाणकर्म च काष्ठपुत्रिका कुट्टिमपुरुषादीनां कृतिरूपं भवति, अतएवोत्तरगुणनिर्वर्तनाधिकरणं तदुच्यते, एवं-प्रसिद्धपुरुषाद्याकृतेः प्रति-
विम्बनिर्वर्तनादेव पुस्त-चित्रकर्मणी अपि वक्तव्ये । तत्र-पुस्तकर्म सूत्रचीवरकादि
प्रथितकृत्रिमपुत्रकादिकं बोध्यम्, चित्रकर्मप्रसिद्धम्, आदिपदेन लेख्य पत्रच्छेद्य
जलकर्म भूकर्मपरिग्रहः । अस्त्यपि कृपाणादिक मनैकाकारमवसेयम् । वधस्थानत्वं
मूलगुणनिर्वर्तनाधिकरणम् तीक्ष्णतौज्ज्वलादिकमुत्तरगुणनिर्वर्तनाधिकरणं बोध्यम्
निक्षेपणाधिकरणं चतुर्धम्, दुष्प्रत्युपेक्षितनिक्षेपणाधिकरणम्-दुष्प्रमार्जितनि-
क्षेपणाधिकरणम्-सहस्रानिक्षेपणाधिकरणम्-अनाभोगनिक्षेपणाधिकरणञ्चेति । तत्र-
दुष्प्रत्युपेक्षिते चक्षुःगानिरीक्षिते भूदेशे निक्षेपणीयस्य मात्रादेःस्थापनं दुष्प्रत्यु-

निर्वर्तना नहीं हो सकती । काष्ठ पुस्त, चित्रकर्म आदि उत्तरगुणनि-
र्वर्तनाधिकरण हैं । लकड़ी या पाषाण की पुनली कुट्टिम पुरुष आदि की
कृति है, अतएव उसे उत्तरगुणनिर्वर्तनाधिकरण कहते हैं । इसी
प्रकार प्रसिद्ध पुरुष आदि की आकृति को बनाने से पुस्तकर्म और
चित्रकर्म बनते हैं । सूत और वस्त्र आदि को गूँथ कर गुडिया आदि
बनाना पुस्तकर्म कहलाता है । चित्रकर्म प्रसिद्ध ही है । आदि शब्द से
लेख्य पत्रच्छेद्य, जल कर्म और भूमिकर्म का ग्रहण करना चाहिए ।
कृपाण आदि शस्त्र अनेक आकार के होते हैं । वधस्थानत्व मूलगुण-
निर्वर्तनाधिकरण है और तीक्ष्णता तथा उज्ज्वलता आदि उत्तरगुण-
निर्वर्तनाधिकरण है ।

निक्षेपणाधिकरण के चार भेद हैं-दुष्प्रत्युपेक्षितनिक्षेपणाधिकरण
दुष्प्रमार्जितनिक्षेपणाधिकरण, सहस्रानिक्षेपणाधिकरण और अनाभोग-
निक्षेपणाधिकरण (१) ठीक तरह आंखों से देखे बिना भूमि पर मल-

કુટ્ટિમ પુરુષ આદિની કૃતિ છે આથી તેને ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણ કહે છે.
એવી જ રીતે પ્રસિદ્ધ પુરુષ આદિની આકૃતિનું સર્જન કરવાથી પુસ્તકર્મ
અને ચિત્રકર્મ બને છે સૂતર અને વસ્ત્ર આદિને ગુંથીને ઢીંગલી આદિ
બનાવવી પુસ્તકર્મ કહેવાય છે. ચિત્રકર્મ પ્રસિદ્ધ જ છે ‘આદિ’ શબ્દથી
લખાણ પત્રચ્છેદ, જળકર્મ અને ભૂમિકર્મને ગ્રહણ કરવાના છે. કિરપાણ
આદિ શસ્ત્ર અનેક પ્રકારના-આકારના હોય છે. વધસ્થાનત્વ મૂળગુણનિર્વર્તના-
ધિકરણ છે અને તીક્ષ્ણતા તથા ઉજ્જ્વળતા આદિ ઉત્તરગુણનિર્વર્તનાધિકરણ છે.

નિક્ષેપાધિકરણના ચાર ભેદ છે-દુષ્પ્રત્યુપેક્ષિત નિક્ષેપણાધિકરણ, દુષ્પ્રમા-
ર્જિત નિક્ષેપણાધિકરણ, સહસ્રાનિક્ષેપણાધિકરણ અને અનાભોગનિક્ષેપણાધિકરણ.
(૧) સારી પેઠે આંખોથી જોયા વગર જમીન ઉપર મળ-મૂત્ર આદિને ઢાળવા

દેશિતનિક્ષેપાધિકરણમ્ ૧, एवं प्रत्युपेक्षितेऽपि भूपदेशे दुष्प्रमार्जिते रजोहरणा-
दिनाऽप्रमार्जिते वा निक्षेप्यस्य पात्रादेः स्थापनं दुष्प्रमार्जितनिक्षेपाधिकरणम् २
सहसा, शक्त्यभावात्-चेतयतोऽपि-अप्रत्युपेक्षितं दुष्प्रमार्जितभूपदेशे निक्षेप्यस्य
स्थापनं सहसा निक्षेपाधिकरणम् ३, अनाभोगोऽत्यन्तविस्मृतिः तेन-तथाविधस्य
विस्मृतस्य निक्षेप्यस्याऽधिकरणम्, अनाभोगनिक्षेपाधिकरणम् यत्र न खलु स
स्मरति यत् प्रत्युपेक्षिते-सुप्रमार्जिते च देशे निक्षेपणीयम् ४ इति । संयोगाधि-
करणं द्विविधम्, भक्तपानसंयोजनाधिकरणम् उपकरणसंयोजनाधिकरणञ्चेति ।
दध-भक्तं पाचत् त्रिविधम्, अशन-खाद्य-स्वाद्य भेदात्, तस्य पात्रे-मुखे वा
व्यञ्जन-गुड-फल-शाकादिभिः सह संयोजनम्, । एवं-द्राक्षा दाडिम पानक-

सूत्र आदि का निक्षेपण करना दुष्प्रमार्जितनिक्षेपाधिकरण है । (२)
भूमि को देख लेने पर भी रजोहरण आदि से पूंजे विना पात्र आदि
रखता दुष्प्रमार्जितनिक्षेपाधिकरण कहलाता है । सहसा (एकदम) शक्ति
के अभाव से विना प्रतिलेखन किये और विना पूंजे भूमि पर किसी
वस्तु को रखना सहसा निक्षेपाधिकरण है । (४) बिलकुल भूल जाने
को अनाभोग कहते हैं । किसी भूली हुई वस्तु को रख देना अनाभोग-
निक्षेपाधिकरण है या विना उपयोग के अन्यमनस्क होकर किसी वस्तु
को कहीं रखना अनाभोगनिक्षेपाधिकरण है ।

संयोगाधिकरण के दो भेद हैं-भक्तपानसंयोजनाधिकरण और
उपकरणसंयोजनाधिकरण । इन में भक्त (आहार) तीन प्रकार का
है-अशन, खाद्य और स्वाद्य । उसका पात्र में या मुख में व्यंजन,
गुड, फल या शाक आदि के साथ संयोग करना अर्थात् अधिक

अथવા ફેંકવા દુષ્પ્રત્યુપેક્ષિતાધિકરણ છે. (૨) ભૂમિને ભેઈ લીધા છતાં પણ
રજોહરણ આદિથી પૂંજ્યા વગર પાત્ર વગેરે મુકવાં દુષ્પ્રમાર્જિતનિક્ષેપાધિકરણ
કહેવાય છે. (૩) સહસા શક્તિના અભાવથી પડિલેહન કર્યા વગર તેમ જ
વગર પૂંજે જમીન ઉપર કોઈ વસ્તુને રાખવી સહસાનિક્ષેપાધિકરણ છે (૪)
તદન ભુત્રીજવું તેને અનાભોગ કહે છે. કોઈ વિચરાઈ ગયેલી વસ્તુને રાખી
લેવી અનાભોગનિક્ષેપાધિકરણ છે અથવા વગર ઉપયોગની અન્યમનસ્ક
થઈને કોઈ વસ્તુને ક્યાંય રાખવી અનાભોગનિક્ષેપાધિકરણ છે.

સંયોગાધિકરણના બે ભેદ છે-ભક્તપાન સંયોજનાધિકરણ અને ઉપકરણ
સંયોજનાધિકરણ આમાં ભક્ત (આહાર) ત્રણ પ્રકારનાં છે-અશન, ખાદ્ય અને
સ્વાદ્ય. તેના પાત્રમાં અથવા મોઢામાં વ્યંજન, ગેળ, ફળ અથવા શાક આદિની
સાથે સંયોગ કરીને અર્થાત્ સ્વાદિષ્ઠ બનાવવા માટે જોકે ખાદ્ય પદાર્થને બીજા

स्य प्रासुकजलारनालादिकस्य च खण्ड-शर्करा-मरीचादिभिः सह पात्रे-मुखे वा संयोजनं भक्तपानसंयोजनाधिकरणम् । उपकरणस्य-उपधेर्वस्त्रादिकस्याऽन्यैर्वस्त्रादिकैः सह संयोजनम् उपकरणसंयोजनाधिकरणम् । निसर्जनाधिकरणं पुनस्त्रिविधम्, कायनिसर्गाधिकरणम्-वाङ्निसर्गाधिकरणम्-मनोनिसर्गाधिकरणञ्चेति । तत्र-कायस्य औदारिकादि शरीरस्य विधिना स्वच्छन्देन शस्त्रच्छेदनाऽग्निजलप्रवेशोद्बन्धनादिना निसर्जनम्-उज्झन-कायनिसर्गाधिकरणम् । वाचोनिसर्जनं शास्त्रोपदेशं विना प्रेरणं वाङ्निसर्गाधिकरणम् । मनसश्च-निसर्जनं शास्त्रोपदेशाद्

स्वादिष्ट बनाने के लिए एक खाद्य पदार्थ को दूसरे खाद्य पदार्थ के साथ मिलाना भक्तसंयोजनाधिकरण है । इसी प्रकार द्राक्षा, दाडिम आदि के रस को या प्रासुक जल एवं कांजी आदि के पानी को खांड, शक्कर, कालीमिर्च आदि के साथ पात्र में या मुख में मिलाना पान-संयोजनाधिकरण है । तात्पर्य यह है कि भोज्य अथवा पेय पदार्थों को सुस्वादु बनाने के विचार से आपस में मिलाना भक्तपान संयोजनाधिकरण है । उपकरण-उपधि-वस्त्र आदि को अन्य वस्त्र आदि से मिलाना उपकरण संयोजनाधिकरण है ।

निसर्गाधिकरण तीन प्रकार का है-कायनिसर्गाधिकरण वचन-निसर्गाधिकरण और मनोनिसर्गाधिकरण औदारिकादि शरीरका स्वच्छन्द विधि से शस्त्र द्वारा छेदन करके आग में प्रवेश करके जल में प्रवेश करके या फांसी लगाकर त्याग करना कायनिसर्गाधिकरण है । शास्त्रोपदेश के बिना प्रेरणा करना वचननिसर्गाधिकरण है और

आद्य पदार्थानीं साथे लेणववो। लतप्रयोजनाधिकरणं छे अथवा न रीत द्राक्ष, दाडिम आदिना रसने अथवा प्रासुक जल अने कांजी आदिना पाणीने भांड, साकर, मरीचा वगैरेनी साथे पात्रमा अथवा मुखमां लेणववुं पान संयोजनाधिकरणं छे। तात्पर्यं अे छे के लेणन अथवा पेय पदार्थोने सुस्वादु बनाववाना विचारथी आपसमां लेगा करवा लतपान संयोजनाधिकरणं छे। उपकरण-उपधि-वस्त्र आदिने अन्य वस्त्र आदिथी लेगा करवा उपकरण संयोजनाधिकरणं छे

निसर्गाधिकरण त्रय प्रकारनां छे-कायनिसर्गाधिकरण, वचननिसर्गाधिकरण अने मनोनिसर्गाधिकरण औदारिक आदि शरीरतुं स्वच्छन्द विधिथी शास्त्र द्वारा छेदन करीने, अग्निमां प्रवेश करीने, जलमां प्रवेश करीने अथवा फांसी उपर चढ़ीने त्याग करवो कायनिसर्गाधिकरणं छे। शास्त्रोपदेश वगर प्रेरणा करवी वचन निसर्गाधिकरणं छे अने शास्त्रोपदेश वगैरे करवो मनोनिसर्गाधिकरणं छे।

ક્રુતે પ્રેરણં મનોનિસર્ગાધિકરણમ્ ઉચ્યતે । અત્ર ગૃહિત્વ્યાપારાપેક્ષયા શરીરાદીનામ્
અજીવનિસર્ગાધિકરણત્વમુક્તમ્, જીવાધિકરણે ચાત્મનઃ પરિસ્પન્દોઽન્તઃપરિણામ-
રૂપો बोध्यः । મૂલગુણનિર્વર્તનાધિકરણેઽવસ્થાન માત્રમેતેષામવસેયમિતિવિશેષો-
ઽવગન્તव्यः । ઉક્તશ્ચ સ્થાનાંગે ૨ સ્થાને ૬૦ સૂત્રે—‘ણિવ્વત્તણાધિકરણિયા-
ચેવ, સંજોયણાધિકરણિયા ચેવ’ इति । નિર્વર્તનાધિકરણિકી ચૈવ-સંયોજના
ધિકરણિકી ચૈવ, इति । ઉત્તરાધ્યયને ૨૫ અધ્યયને ૧૪ ગાથાયાઓક્તમ્—‘આહપ
નિક્ખિલ્લવેજ્જા’ इति, આદિકે નિધિપેત્—इति । તતશ્વાદૌ ઉત્તરાધ્યયને ૨૪
અધ્યયને ૨૧-૨૩ ગાથામ્ ચોક્તમ્—‘પવત્તમાણં’—इति, પ્રવર્તમાનમિતિ ॥૯॥

મૂલમ્—મહારંભ પરિગ્રહ—માયપ્પારંભ પરિગ્રહસહાવમ-
હવત્તં નારય—તિરિય—મણુસ્સાણં ॥૧૦॥

છાયા—મહારમ્મ પરિગ્રહ માયા—ઽલ્પારમ્મપરિગ્રહ સ્વભાવમાર્દવત્વં નારક-
તિર્યગ્મનુપ્યાણામ્ ॥૧૦॥

શાસ્ત્રોપદેશ કે વિના પ્રેરણા કરના મનોનિસર્ગાધિકરણ છે ।

યહાં શરીર આદિ ચાહ્ય વ્યાપારની અપેક્ષા સે અજીવાધિકરણ
કહો ગયા છે । ખૌર આત્મા કા પરિસ્પન્દ જો આન્તરિક પરિણામ છે,
જીવાધિકરણ છે પરિગણિત છે । મૂલગુણનિર્વર્તનાધિકરણ મેં ફનકી
અવસ્થિતિ માત્ર હી અભિપ્રેત છે । સ્થાનાંગસૂત્ર કે દ્વિતીય સ્થાન કે ૬૦
વેં સૂત્ર મેં કહા છે—‘નિર્વર્તનાધિકરણિકી ઓર સંયોજનાધિ-
કરણિકી ।’ ઉત્તરાધ્યયન કે ૨૫ વેં અધ્યયન કી ગાથા ૧૪ મેં કહા
છે—‘આહપ નિક્ખિલ્લવેજ્જા’ તથા ઉત્તરાધ્યયનસૂત્ર કે ૨૪ વેં અધ્યયન મેં
ગાથા ૨૧-૨૩ મેં કહા છે—‘પવત્તમાણં’ અર્થાત્ પ્રવર્તમાન ॥૯॥

સૂત્રાર્થ—‘મહારમ્મપરિગ્રહ’ इत्यादि ।

મહારંભ, મહાપરિગ્રહ, માયા અલ્પારમ્મ ન-પરિગ્રહ ઓર સ્વભાવ કી

અહીં શરીર આદિના ચાહ્ય વ્યાપારની અપેક્ષાથી અજીવાધિકરણ કહેવામાં
આવ્યું છે અને આત્માના પરિસ્પન્દ જે આન્તરિક પરિણામ છે, જીવાધિકરણમાં
પરિણત છે. મૂળગુણનિર્વર્તનાધિકરણમાં એમની અવસ્થિતિ માત્ર જ અભિપ્રેત છે.
સ્થાનાંગસૂત્રના દ્વિતીય સ્થાનના ૬૦માં સૂત્રમાં કહ્યું છે—નિર્વર્તનાધિકરણિકી
અને સંયોજનાધિકરણિકી ‘ઉત્તરાધ્યયનના ૨૫માં અધ્યયનની ગાથા ૧૪ માં
કહ્યું છે—‘આહપ નિક્ખિલ્લવેજ્જા’ તથા ઉત્તરાધ્યાનસૂત્રના ૨૪માં અધ્યયનમાં ગાથા
૨૧-૨૩માં કહ્યું છે—‘પવત્તમાણં’ અર્થાત્ પ્રવર્તમાન ॥૯॥

‘મહારમ્મ પરિગ્રહ’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—મહારંભ, મહાપરિગ્રહ માયા, અલ્પારંભ-પરિગ્રહ અને

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्व तावत् साम्परायिककर्मस्रवहेतुत्वेन जीवाधिकरण-
मजीवाधिकरणञ्च प्ररूपितम्, सम्प्रति—कर्मबन्धास्रवस्तावत्—सर्वायुषामास्रवं
प्रतिपादयितुमाह—‘महारम्भ’ इत्यादि । महारम्भो नैरयिकायुष—स्तिर्यगायुषो ।
मनुष्यायुषश्च बन्धहेतुभूत आस्रवो भवतीति, तत्र—भोगभूमिजातानां शीलव्रत-
विहीनत्वमपि सौधर्मेशानपर्यन्तदेवायुषो बन्धकं भवतीति, एवं—केचिदल्पारम्भ-
परिग्रहा अपि—अन्यदुपचारसहिता नारकादिगतिं प्राप्नुवन्ति ॥१०॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्व तावत् साम्परायिककर्मस्रवहेतुत्वेन जीवाधि-
करणम्—अजीवाधिकरणञ्च सम्पञ्चं प्ररूपितम्, सम्प्रति कर्मबन्धास्रवस्तावत्
मृदुता नरकायु, तिर्यचायु और मनुष्यायु के कारण हैं ॥१०॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले कहा जा चुका है कि साम्परायिक आस्रव
का कारण जीवाधिकरण और अजीवाधिकरण है, अब विभिन्न
आयुष्यों के आस्रव के कारणों का प्रतिपादन करते हैं—

महारम्भ नरकायुका, तिर्यचायु का और मनुष्यायुका आस्रव
अर्थात् बन्ध का कारण है । भोगभूमि में उत्पन्न मनुष्यों और तिर्यचों
की अपेक्षा शील-व्रतविहीनता भी सौधर्म और ऐशान देवलोक तक
देवायु का कारण होती है । अर्थात् भोगभूमि के जीव शील या व्रतका
पालन न करके भी देवायु का बन्ध करते हैं, अगर प्रारम्भ के दो देव-
लोकों में ही उत्पन्न होते हैं । कोई-कोई अल्पारम्भी और अल्पपरिग्रही
होते हुए भी अन्य कारणों से नरकगति आदि को प्राप्त करते हैं ॥१०॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—साम्परायिक कर्म के आस्रव के कारण जीवाधि-

स्वभावानी मृदुता, नरकायु, तिर्यचायु અને મનુષ્યાયુના કારણ છે ॥૧૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા કહેવામાં આવી ગયું કે સામ્પરાયિક આસ્રવનું
કારણ જીવાધિકરણ અને અજીવાધિકરણ છે, હવે વિલિન્ન આયુષ્યોના આસ્ર-
વોના કારણોનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

મહારભ નરકાયુનો, તિર્યચાયુનો અને મનુષ્યાયુના આસ્રવ અર્થાત્
બન્ધનું કારણ છે. ભોગભૂમિમાં ઉત્પન્ન મનુષ્યો અને તિર્યચોની અપેક્ષા
શીલ-વ્રત વિહીનતા પણ સૌધર્મ અને ઇશાન દેવલોક સુધી દેવાયુનું કારણ
છે અર્થાત્ ભોગભૂમિના જીવ શીલ અથવા વ્રતનું પાલન નહીં કરીને પણ
દેવાયુનો બન્ધ કરે છે પરંતુ પ્રારંભના બે દેવલોકમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે.
કેઈ-કેઈ અલ્પારંભી અને અલ્પપરિગ્રહી હોવા છતાં પણ અન્ય કારણોથી
નરકગતિ આદિને પ્રાપ્ત કરે છે. ॥૧૦॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—સામ્પરાયિક આસ્રવના કારણ જીવાધિકરણ અને

સર્વાયુષામાસ્રવં પ્રતિપાદયિતુમાહ—‘મહારમ્ભ પરિગ્રહમાયપ્પારંભપરિગ્રહ
સહાવમદ્વચ્ચં નારયતિરિચમણુસ્સાણં’ इति । महारम्भ परिग्रहमाया-
ऽल्पारम्भपरिग्रहस्वभावमार्दवत्वं नारकतिर्यङ्मनुष्याणाम्, तत्र-महारम्भो-
यन्त्रादिरूपः, महापरिग्रहः-बहुक्षेत्रवास्तुधनधान्यहिरण्यपादिरूपो नारकायुषो
बन्धहेतुभूत आस्रवो भवति, तथा-माया कपटरूपा, तिर्यग्योनिकाऽऽयुषो बन्ध
हेतुभूत आस्रवो भवति, एवम्-अल्पारम्भा-ऽल्पपरिग्रहः स्वभावमार्दवश्च मनु-
ष्यायुषो बन्धहेतुभूत आस्रवो भवतीति संक्षेपः ॥१०॥

મૂલમ્—સરાગસંજમ, સંજમાસંજમાઈણિ દેવસ્સ ॥૧૧॥

છાયા—સરાગસંયમ સંયમાસંયમાદીનિ દેવસ્ય ॥૧૧॥

करण और अजीवाधिकरण का विस्तार पूर्वक प्ररूपण किया जा चुका है । अब सभी आयुष्यों के आस्रव का प्रतिपादन करने के लिए कहते हैं—

महारम्भ-परिग्रह, माया, अल्पारम्भ-परिग्रह और स्वभाव की मृदुता नरकायु, तिर्यंचायु और मनुष्यायु के आस्रव का कारण है । बड़े-बड़े यन्त्र, कारखाने आदि चलाना महारम्भ कहलाता है । क्षेत्र, वास्तु, धन, धान्य हिरण्य आदि की बहुतायत होना महापरिग्रह है । ये दोनों नरकायु के आस्रव अर्थात् बन्ध के कारण हैं । माया अर्थात् कपट तिर्यंचायु के बन्ध का कारण है । अल्पारम्भ अल्पपरिग्रह और स्वभाव की मृदुता मनुष्यायु के बन्ध का कारण है ॥१०॥

સૂત્રાર્થ—‘સરાગ સંજમ સંજમાઈ’ इत्यादि ।

સરાગસંયમ તથા સંયમાસંયમ આદિ દેવાયુ કે આસ્રવ કે હેતુ છે ।

અજીવાધિકરણનું વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપણ કરવામાં આવી ગયું છે. હવે બધાં આયુષ્યોના આસ્રવનું પ્રતિપાદન કરવા માટે કહે છે—

મહારંભ-પરિગ્રહ માયા, અલ્પારંભ-પરિગ્રહ અને સ્વભાવની મૃદુતા, નરકાયુ, તિર્યંચાયુ અને મનુષ્યાયુના આસ્રવના કારણ છે. મોટા મોટા યંત્રો, કારખાના વગેરે ચલાવવા મહારંભ કહેવાય છે. ક્ષેત્ર વાસ્તુ ધન, ધાન્ય હિરણ્ય આદિની ત્રિપૂલના હોવી મહાપરિગ્રહ છે. આ બંને નરકાયુ આસ્રવ અર્થાત્ બન્ધના કારણ છે. માયા અર્થાત્ કપટ તિર્યંચાયુના બન્ધના કારણ છે. અલ્પારંભ, અલ્પપરિગ્રહ અને સ્વભાવની મૃદુતા મનુષ્યાયુના બન્ધના કારણ છે ॥૧૦॥

‘સરાગ સંજમસંજમાસંજમાઈ’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—સરાગસંયમ તથા સંયમાસંયમ આદિ દેવાયુના આસ્રવના હેતુ છે. ॥૧૧॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रे नारकायुषां कर्मबन्धहेतुभूता महारम्भमहापरि-
ग्रहादय आस्त्राः प्रतिपादिताः सम्प्रति देवायुष आस्त्रान् प्रतिपादयितुमाह—
'सरागसंयम संयमासंयमाईणि देवस्त्र' इति । सरागः संज्वलन कषाय
स्तेन सहितः सराग स्त्रस्य संयमः, सम्यग्ज्ञानपूर्विका विरतिः संयमासंयमो देश
विरतिरूपाः आदिपदात्-अकामनिर्जराबालतपसोर्ग्रहणम् एतानि पूर्वोक्तानि
देवस्य-देवसम्बन्धायायुष आस्त्रा भवन्ति इति भावः । ११॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वसूत्रे नारकायुषां कर्मबन्धहेतुभूता महारम्भ-परि-
ग्रहादय आस्त्राः प्रतिपादिताः, साम्प्रतं-देवायुषः आस्त्रान् प्रतिपादयितुमाह—

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्र में नरकायु आदि के बन्ध के कारण
महारम्भ महापरिग्रह आदि वर्णित किये गये हैं । अब देवायु के
आस्त्रों का प्रतिपादन करते हैं—

सरागसंयम तथा संयमासंयम (देशसंयम) आदि देवायु के आस्त्र
अर्थात् बन्ध के कारण हैं । यहां राग का अर्थ है संज्वलन कषाय,
उससे युक्त संयम सरागसंयम कहलाता है । सम्यग्ज्ञान पूर्वक पाप
से निवृत्त होना संयम है । देशविरति को संयमासंयम कहते हैं ।
'आदि' शब्द से अकामनिर्जरा और बालतपसा ग्रहण करना चाहिए
ये सब देवायु के आस्त्र हैं अर्थात् बन्ध के कारण हैं । ११॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वसूत्र में नरक आदि आयुष्यों के बन्ध के
कारणों-आस्त्रों का प्रतिपादन किया गया अर्थात् यह बताया गया है
कि महारम्भ आदि नरकायु आदिके कारण हैं, अब देवायु के आस्त्रों
का प्रतिपादन करते हैं—

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रમાં નરક યુ આદિના બન્ધના કારણ મહારંભ
મહાપરિગ્રહ આદિનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે હવે દેવાયુના આસ્ત્રોનું
પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

સરાગસંયમ તથા સંયમાસંયમ (દેશસંયમ) આદિ દેવાયુના આસ્ત્ર
અર્થાત્ બન્ધના કારણ છે અહીં રાગનો અર્થ છે સંજ્વલન-કષાય, તેનાથી
યુક્ત સંયમ સરાગસંયમ કહેવાય છે સમ્યક્જ્ઞાનપૂર્વક પાપથી નિવૃત્ત થવું સંયમ
છે. દેશવિરતિને સંયમાસંયમ કહે છે—આદિશબ્દથી અકામનિર્જરા અને બાલ-
તપ લેવા બોલ્યો આ બધાં દેવાયુના આસ્ત્ર છે અર્થાત્ બન્ધના કારણ છે ॥૧૧॥

તત્ત્વર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વસૂત્રમાં નરક આદિ આયુષ્યોના કારણો-આસ્ત્ર-
ઓનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું અર્થાત્ એ બતાવાયું કે મહારંભ આદિ
નરકાયુ આદિના કારણ છે, હવે દેવાયુના આસ્ત્રોનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

‘સરાગસંયમ સંયમાસંયમાર્હણિ દેવસત્’ इति । સરાગસંયમ-સંયમા-સંયમાદીનિ દેવસ્ય તત્ર-રાગઃ સંજ્વલનકષાયઃ તેન સહિતઃ-તત્સહવર્તીવા સરાગઃ તસ્ય સંયમઃ, સંયમનં-સંયમઃ, સમ્યગ્જ્ઞાનપૂર્વિકા વિરતિઃ હિંસાઽનૃતાદિભ્યઃ પશ્ચન્નિર્વૃત્તિરિતિ યાવત્, સંયમાસંયમો દેશવિરતિરૂપઃ-અણુવ્રત મિત્યર્થઃ । આદિશબ્દાત્-અકામનિર્જરા-ચાલતપસોગ્રહણમ્, તત્રા-ઽકામનિર્જરાનામ-કામઃ ઇચ્છા, નિર્જરાકર્મપુદ્ગલાનામાત્મપ્રદેશતઃ પરિશટનમ્-પૃથગ્મવનમ્, કામેન ઇચ્છયો તદર્થોપયોગપૂર્વકં સ્વેચ્છયા યા નિર્જરા-સા કામનિર્જરા, ન કામનિર્જરા-ઽકામ-નિર્જરા, इयश्च पराधीनतया-अस्याऽप्यनुरोधेन वाऽकुशलस्थानान्निवृत्त्याऽऽहारादि-

સરાગસંયમ ઓર સંયમાસંયમ આદિ દેવાયુ કે ધંધ કે કારણ છે । યેહાં રાગ કા અર્થ સંજ્વલન કષાય છે । उससे युक्त या उसके साथ जो संयम हो वह सरागसंयम है । સંયમ કા આશય છે સમ્યગ્જ્ઞાનપૂર્વક વિરતિ-નિવૃત્તિ અર્થાત્ હિંસા અસત્ય આદિ પાપોં કા ત્યાગ । સંયમા સંયમ દેશવિરતિ યા અણુવ્રતરૂપ છે । સૂત્ર મેં પ્રયુક્ત ‘આદિ’ શબ્દ સે અકામનિર્જરા ઓર ચાલતપ કા ગ્રહણ હોતા છે ।

કામ અર્થાત્ ઇચ્છા, નિર્જરા અર્થાત્ કર્મપુદ્ગલોંકા આત્મપ્રદેશોં સે સ્થિરતા-પૃથક્ હોના । ઇચ્છાપૂર્વક, ઉપયોગ કે સાથ જો નિર્જરા કી જાની છે, વહ કામનિર્જરા કહલાતી છે । જો કામનિર્જરા ન હો વહ અકામનિર્જરા । વહ અકામનિર્જરા પરાધીનતાપૂર્વક અથવા કિસી કે આગ્રહ સે અશુભ સ્થાન સે નિવૃત્તિ હોને યા આહાર આદિકા નિરોધ હોને સે હોતી છે ।

સરાગસંયમ અને સંયમાસંયમ આદિ દેવયુના બન્ધના કારણ છે અત્રે રાગનો અર્થ સંજ્વલન કષાય છે તેનાથી યુક્ત અથવા તેની સાથે જે સંયમ થાય તે સરાગસંયમ સંયમનો આશય છે-સમ્યગ્જ્ઞાનપૂર્વક વિરતિ-નિવૃત્તિ, અર્થાત્ હિંસા અસત્ય આદિ પાપોનો ત્યાગ સંયમાસંયમ દેશ વિરતિ અથવા અણુવ્રત રૂપ છે સૂત્રમાં પ્રયુક્ત આદિ શબ્દથી અકામનિર્જરા અને ચાલતપ સમજવાં

કામ અર્થાત્ ઇચ્છા નિર્જરા અર્થાત્ કર્મપુદ્ગલોંકા આત્મ પ્રદેશોથી ખરી પડવું-જુદા પડવું ઇચ્છાપૂર્વક, ઉપયોગાનો સાથે જે નિર્જરા કરવામાં આવે છે તે કામનિર્જરા કહેવાય છે. જે કામનિર્જરા ન હોય તે અકામ-નિર્જરા આ અકામનિર્જરા પરાધીનતાપૂર્વક અથવા કોઈના આગ્રહથી અશુભ સ્થાનથી નિવૃત્ત થવાથી અથવા આહાર આદિનો નિરોધ કરવાથી થાય છે.

નિરોધેન ચ ભવતિ । વાલસ્ય-મૂઠસ્યાઽતત્ત્વે તત્ત્વાઽમિનિવેશપ્રવૃત્તસ્ય તપઃ ભૃગુપાત-
જલપ્રવેશાઽગ્નિપ્રવેશાદિ વાલતપઃ સરાગસ્ય, એતાનિ પૂર્વોદિતાનિ દેવસ્ય દેવસમ્બ-
ન્ધ્યાયુષો દેવાયુર્નિવન્ધસ્યાઽઽસન્ના ભવન્તિ, એતૈર્દેવાયુર્વન્ધો ભવતીતિ ભાવઃ ॥૧૧॥

॥ ઇતિ શ્રી વિશ્વવિખ્યાત-જગદ્વલ્લભ-પ્રસિદ્ધવાચક-પંચદશભાષા-
કલિતકલિતકલાપાઠાપકમવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માપક,
વાદિમાનમર્દક-શ્રીશાહુચ્છત્રપતિ કોલ્હાપુરરાજપદત્ત-
'જૈનાચાર્ય' પદભૂષિત — કોલ્હાપુરરાજગુરુ-
વાલબ્રહ્મચારિ — જૈનાચાર્ય — જૈનધર્મદિવાકર
-પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલવ્રતિવિરચિતસ્યા શ્રી
દીપિકા - નિર્યુક્તિવ્યાખ્યોપેતસ્ય
“તત્ત્વાર્થસૂત્રસ્ય” ષઠોઽધ્યાયઃ
સમાપ્તઃ । ૬॥

વાલ અર્થાત્ મૂઠ જીવ કા તપ વાલતપ કહલાતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ
કિ કુતત્ત્વ કો તત્ત્વ સમજ્ઞને વાલા કોઈ અજ્ઞાની પુરુષ ઉપર સે ગિરના
હૈ, જલસમાધિ યા અગ્નિસમાધિ લેતા હૈ, ઉસકા યહ કૃત્ત્વ વાલતપ
કહલાતા હૈ । યે સવ દેવાયુ કે આસ્રવ હૈ અર્થાત્ વન્ધકે કારણ હૈ ॥૧૧॥

જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજીમહારાજકૃત
“તત્ત્વાર્થસૂત્ર” કી દીપિકા-નિર્યુક્તિ વ્યાખ્યા કા
છઠ્ઠા અધ્યાય સમાપ્ત ॥૬॥

વાલ અર્થાત્ મુઠ છવનું તપ વાલતપ કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે
કે કુતત્ત્વને તત્ત્વ સમજનાર કોઈ અજ્ઞાની પુરુષ ઉપરથી નીચે પછડાય છે,
જળસમાધિ અથવા અગ્નિસ્નાન કરે છે તેનું અત્તુ કૃત્ત્વ વાલતપ કહેવાય
છે આ બધાં દેવાયુના આસ્રવ છે અર્થાત્ બન્ધના કારણ છે ॥૧૧॥

જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર શ્રી પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત
“તત્ત્વાર્થસૂત્ર” ની દીપિકા-નિર્યુક્તિ વ્યાખ્યાનો છઠ્ઠા અધ્યાય સમાપ્ત ॥૬॥



अथ सप्तमोऽध्यायः

गूलम्—आस्रवनिरोहो संवरो ॥१॥

छाया—‘आस्रवनिरोधः संवरः’ ॥१॥

तत्त्वार्थदीपिका—षष्ठाऽध्याये तावद्—

‘जीवाऽजीवा य बंधो य पुण्यं पावासहो तथा ।

संवरो णिज्जरा मोक्खो संतेए तहिया नव’ ?

इत्युत्तराध्ययनसूत्रोक्त जीवादि नवतत्त्वेषु क्रमप्राप्तस्य षष्ठस्य आस्रवतत्त्वस्य प्ररूपणं कृतम्, सम्पत्ति-क्रमप्राप्तं सप्तमसंवरत्वं प्ररूपयितुं षष्ठमाध्यायं प्रारम्भमाणाः प्रथमं संवर तत्त्वस्य लक्षणमाह—‘आस्रवनिरोहो संवरो’ इति । आस्रवनिरोधः—आस्रवस्य मिथ्यात्वाद्यभिनव कर्मादान हेतुभूतस्य निरोधः संवरणं संवर उच्यते । स च संवरो द्विविधः, द्रव्यसंवरः—भावसंवरश्च, द्रव्यसंवरस्तथादिद्रव्येण मसृण-मृत्तिकादिना सलिलोपरि तरन्नीकादेः सततं प्रविशन्नीराणां निरोधनं द्रव्यसंवरः,

सातवां अध्याय (संवर तत्त्व का विवेचन)

सूत्रार्थ—‘आस्रव निरोहो संवरो’ इत्यादि ।

आस्रव का निरोध होना संवर है ॥१॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्व सूत्र में क्रम प्राप्त छठे आस्रव तत्त्व का छठे अध्याय में निरूपण किया गया । अब सातवें तत्त्व संवर का विवेचन करने के लिये सातवें अध्याय को प्रारम्भ करते हुए सर्व प्रथम संवर का लक्षण कहते हैं—मिथ्यातत्त्वादि नवीन कर्मों के आगमन के कारण भूत आस्रव का निरोध हो जाना संवर कहलाता है ।

संवर दो प्रकार का है—द्रव्यसंवर और भावसंवर । किसी चिकनी मिट्टी आदि द्रव्य के द्वारा जल पर तैरती हुई नौका आदि में निरन्तर

सातमो अध्याय [संवर तत्त्वतुं विवेचन]

‘आस्रवनिरोहो संवरो’ इत्यादि

सूत्रार्थ—आस्रवना निरोध यवे। संवर छे ॥१॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रमां क्रमप्राप्त छठां अध्यायमां आस्रव तत्त्वतुं विवेचन कृत्वामां आभ्युं हुवे सातमं तत्त्व संवरतुं विवेचन करवा भटे सातमां अध्यायनी शङ्कात करवानी साथे सर्व प्रथम संवरतुं लक्षण कहीअे छीअे—मिथ्यात्वादि नवीन कर्मांना आगमनना कारणभूत आस्रवतुं अट्ठी जपुं संवर कडेवाय छे

संवर अे प्रकारनां छे—द्रव्यसंवर अने भावसंवर कडे। चिकली भाटी आदि द्रव्य द्वारा, पत्थनी सपाटी उपर तरती नौका आदिमां

भावतः-सम्यक्त्वसमिति गुप्ति प्रभृतिभिरात्मरूपनौकायां प्रविष्टकर्मसंल्लिखानां निरोधनं भावसंवरः स च सम्यक्त्वादि भेदैर्विंशतिविधः, समितिगुप्यादिभेदैः सप्तपञ्चाशद्विधः इति संकचनया सप्तसप्ततिविधो भावसंवरो भवतीति, स च शङ्खितादिभेदैः सप्तसप्तति इति । तथा चोक्तम्-‘आश्रयो अनहेतुः स्यात्संवरो मोक्षकारणम् । इतीयमार्हती सृष्टि रन्यदस्याः प्रपञ्चः’ इति ॥ सू० १॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वं जीवादि षट् तत्त्वा निरूपिता, सम्पत्ति सप्तमं संवर तत्त्वं प्ररूपयितुमाह-‘आत्मवनिरोहो संवरः’ इति आत्मवनिरोधः-आश्रवन्ति ज्ञानावरणादिकमष्टविधं कर्म यैरते-आश्रवाः, कर्मणां प्रवेशद्वाराः तेषां संवरणं स्थगनं संवर उच्यते स द्विविधः-देशतः सर्वतश्च, तत्र देशतः संवरः सम्यग्दृष्टि-

प्रवेश करने वाले जल को रोकना द्रव्य संवर है । और सम्यक्त्व समिति गुप्ति आदि द्वारा आत्मा रूपी नौका में प्रविष्ट होते हुए कर्म रूपी जलका निरोध करना आवसंवर है यह आवसंवर सम्यक्त्व आदि के भेदों से सत्तावन प्रकार का होता है इन प्रकार सब मिलाकर भावसंवर के सप्तदश (७७) भेद होते हैं ॥१॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्व सूत्र में छठे अध्याय तक अनुक्रम से जीव आदि छह तत्त्वों की प्ररूपणा की गई । अब आत्मव निरोध रूप संवर तत्त्व की प्ररूपणा करने के लिए कहते हैं जिनके द्वारा ज्ञानावरण आदि आठ प्रकार के कर्मों का आश्रयण-आगमन होता है, जो कर्मों के प्रवेश के मार्ग हैं इनका निरोध हो जाना अर्थात् इनकी प्रवृत्ति रुक जाना संवर है । तात्पर्य यह है कि आत्मा के परिणाम से कर्मों के उपादान (ग्रहण-आगमन) का अन्त होना है उस आत्म

निरन्तर प्रवेश करवावाणा जलने रोकपुं द्रव्य संवर छे अने सम्यक्त्व समिति गुप्ति आदि द्वारा आत्माइपी नौकाभां प्रविष्ट थनां कर्मइपी जलने निरोध करवे आवसंवर छे आ आवसंवर सम्यक्त्व आदि लेहोथी वीस प्रकारना होय छे तथा समिति गुप्ति आदिना लेहोथी सत्तावन प्रकारना होय छे आ रीते अथां मणीने आवसंवरना सीत्योतेर लेह थाय छे

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्व सूत्रमां छठा अध्याय सुधी अनुक्रमथी जव आदि छ तत्त्वानुं विवेचन करवाभां आण्युं, हवे आसव-निरोधइय संवर तत्त्वनी प्ररूपणा करवा भाटे कहीअे छीअे-जेमना द्वारा ज्ञानावरण आदि आठ प्रकारना कर्मोनुं आसवणु-आगमन थाय छे, जे कर्मोना प्रवेश मार्ग छे ओने निरोध थइ जवे अर्थात् ओमनी प्रवृत्ति अंथ थइ जवी अे संवर छे तात्पर्य अे छे के आत्माना जे परिणामथी कर्मोना उपादान (ग्रहण-आगमन) ना

નામણુવ્રતિનાં ચ ભવતિ । સર્વતઃ સંવરસ્તુ મહાવ્રતિનાં ભવતીતિ । પુનશ્ચ સંવરો
 દ્વિવિધઃ દ્રવ્યસંવરઃ ભાવસંવરશ્ચ । તત્ર દ્રવ્યસંવરઃ નૌકાદૌ પ્રવિશજ્જલનિરોધાર્થ
 લક્ષિદ્રવ્ય સમુપમૃત્તિકાદિના સંવરણમ્, ભાવસંવરશ્ચ-આત્મનિ પ્રવિશત્કર્મણાં
 સમ્યક્ત્વાદિભિઃ સંવરણં નિરોધનં ભાવસંવર ઉચ્યતે । સ ચ-સમ્યક્ત્વાદિભેદ-
 વિંશતિવિધઃ સમિતિ ગુપ્ત્યાદિભેદૈઃ સપ્તપચ્ચાશદ્વિધ इति સંમીલ્ય ભાવસંવરઃ
 સપ્તસપ્તતિવિધો ભવતિ, તથાહિ-સમ્યક્ત્વમ્ ૧ વ્રતપ્રત્યાખ્યાનમ્ ૨, અપમાદ ૩,
 અકષાય ૪, યોગનિરોધઃ ૫, પ્રાણાતિપાતાદિ પञ्चવિરમણમ્ શ્રોત્રેન્દ્રિયાદિ પञ्ચ-

પરિણામ કો સંવર કહતે હૈં । પૂર્વોક્ત સંવર દો પ્રકાર કા હૈં દેશસંવર
 ઓર સર્વસંવર, દેશસંવર સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ કો તથા અણુવ્રતધારી
 શ્રાવકકો હોતા હૈં સર્વસંવર પાંચ મહાવ્રતધારી મુનિરાજકો હોતા હૈં ।
 ફિર મી સંવર દો પ્રકારકા હોતા હૈં-દ્રવ્યસંવર ઓર ભાવસંવર । દ્રવ્ય
 સંવર વહ હોતા હૈં જો નૌકા આદિ મૈં આતે હુઅ પાની કો રોકને કે
 લિઅ ઉતકે છિદ્ર કો ચિકની મિટ્ટી આદિ દ્વારા રોકા જાતા હૈં । ઓર
 આત્મા મૈં પ્રવેશ કરતે હુઅ કર્મોં કો સમ્યક્ત્વ આદિ સે રોકના ભાવ
 સંવર હૈં । વહ ભાવ સંવર સમ્યક્ત્વાદિ ભેદોં સે વીસ પ્રકારકા, આઠ
 સમિતિ ગુપ્તિ આદિ કે ભેદ સે સત્તાવન પ્રકાર કા હૈં, ઇસ પ્રકાર સબ
 મિલાકર ભાવ સંવર કે સત્તહત્તર ભેદ હો જાતે હૈં । વે ભેદ ઇસ પ્રકાર
 હૈં-સમ્યક્ત્વ ૧, વ્રત પ્રત્યાખ્યાન ૨, પ્રમાદકા અભાવ ૩ કષાયોંકા
 અભાવ ૪ યોગ નિરોધ ૫, પ્રાણાતિપાત આદિ પાંચો સે વિરમણ હોના

અભાવ થાય છે તે આત્મપરિણમનને સંવર કહે છે. પૂર્વોક્ત સંવર બે પ્રકાર-
 રના છે-દેશસંવર અને સર્વસંવર, દેશસંવર સામ્યગ્દૃષ્ટિ જીવને તથા
 અણુવ્રતધારી શ્રાવકને હોય છે. સર્વસંવર પંચમહાવ્રતધારી મુનિરાજને હોય
 છે તો પણ સંવર બે પ્રકારના હોય છે-

દ્રવ્યસંવર અને ભાવસંવર દ્રવ્ય સંવર તે હોય છે જે નૌકા આદિમાં
 આવતા પાણીને રોકવાને માટે તેના છિદ્રને ચિકણી માટી આદિ દ્વારા રોકિ-
 વામાં આવે છે અને આત્મામાં પ્રવેશ કરતાં કર્મોને સમ્યક્ત્વ આદિથી રોકવા
 તે ભાવ સંવર છે. આ ભાવસંવર સમ્યક્ત્વાદિ લેહથી વીસ પ્રકારનો, આઠ
 સમિતિ ગુપ્તિ આદિના લેહથી સત્તાવન પ્રકારનો, એવી રીતે બધાં મળીને ભાવ
 સંવરના સિત્યોતેર લેહ થઈ જાય છે. આ લેહ આ પ્રમાણે છે-(૧) વ્રત-
 પ્રત્યાખ્યાન (૨) પ્રમાદનો અભાવ (૩) કષાયોનો અભાવ (૪) યોગનિરોધ
 (૫) પ્રાણાતિપાત આદિ પાંચે વ્રતોથી વિરમણ (૧૦) શ્રોત્ર આદિ પાંચ

न्द्रियनिग्रहणम् १५, मनोवाकायानां वशित्वम् १८, भण्डोपकरणादीनां यतनया-
ऽऽदानं निक्षेपणं च १९ सूचीकुशाग्रमात्र वस्तुनामपि यतनया ग्रहणं स्थापनं २०,
चेति विंशति २० । पञ्चसमिति ५ त्रिगुप्ति ८ क्षुधादिद्वाविंशति परिषद् सहन ३०,
दशविध श्रमणधर्म ४० द्वादशभावना ५२ सामायिकादि पञ्चचारित्र ५७ सप्त-
पञ्चाशत् एवं सर्वसंकलनया भावसंवर, सप्तसप्ततिविधो भवतीति ॥ सू० १॥

मूलम्—तस्स हेउणो समिइ—गुप्ति—धम्ममानुपेहा परीसहजया । २।

छाया—तस्य हेतवः समिति-गुप्ति-धर्माऽनुपेक्षा-परीषहजयाः ॥ २॥

तत्त्वार्थदीपिकाः—पूर्वसूत्रे शुभाशुभकर्मागमन मार्गलक्षणाऽऽस्तवनिरोध

१० अत्र आदि पांच इन्द्रियो का निग्रह करना १५, मनवचन और
काया को वश में रखना १८ भण्डोपकरण आदिको यतना से उठाना
और यतना से ही रखना १९, सूई तथा कुश-दर्भ के अग्रभागमात्र
भी किसी वस्तु को यतना से रखना और यतना से ही उठाना २०,
ये बीस तथा पांच समिति ५ तीन गुप्ति ८ क्षुधा आदि बाईस परीषहों
को सहना ३० दश प्रकार का श्रमण धर्म ४० बारह भावना ५२,
और सामायिक आदि ५ पांच चारित्र ५७, इस प्रकार सत्तावन ५७,
ऐसे सब मिलाकर भाव संवर के सतहत्तर ७७ भेद होते हैं ॥ १॥

सूत्रार्थ—‘तस्स हेउणो समिइ’ इत्यादि ।

समिति, गुप्ति, धर्म, अनुपेक्षा और परीषहजय, संवर के कारण हैं

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्र में शुभाशुभ कर्मों के आगमन के मार्ग

इन्द्रियोना निग्रह करवा (१५) मन, वचन अने कायाने वशमां राखवा
(१८) लाण्डोपकरण आदिने यतनापूर्वक उपाडवा अने जतनापूर्वक न राखवा
(१९) सोय तथा कुश-दर्भना अग्रलाग जेटली डोर्छ पणु वस्तुने यतना
पूर्वक राखवी अने यतनाथी न उपाडवी (२०) आ बीस, तथा पांच समिति
(५) त्रण गुप्ति (८) क्षुधा आदि आवीस परीषडोने सहन करवा (३०) दश
प्रकारने श्रमणधर्म (४०) आर प्रकारनी लावना (५२) अने सामायिक वगेरे
पांच चारित्र (५७) आवी रीते सत्तावन, आ जधां मणीने लाव संवरना
सित्योत्तर (७७) लेद थाय छे. ॥ १॥

‘तस्स हेउणो समिइ’ इत्यादि

सूत्रार्थ—समिति, गुप्ति, धर्म, अनुपेक्षा अने परिषहजय संवरना
कारण छे ॥ २॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रमां शुभाशुभ आगमनना मार्ग इय

परीषद् स्तस्य जयः परीषद्जय उच्यते, चरणं चारित्रम्, चर्यतेऽनेनेति वा चाहि-
त्रम्, तपश्च-तपश्चर्या इत्येने-आसन्ननिरोधलक्षणस्य संवरस्य हेतवः सन्ति ॥२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वं तावद् आसन्ननिरोधलक्षणस्य संवरस्योक्तत्वेन,
सम्प्रति तदुपायान् समितिगुमादीन् प्रतिपादयितुमाह-'तस्म हेउणो' इत्यादि।
तद्धेतवः-तस्य पूर्वोक्तासन्ननिरोधलक्षणस्य संवरस्य कर्मासन्नच्छिद्रसंवरणस्य हेतवः
-उपायः समिति-शुषि-धर्मऽनुप्रेक्षा परीषद्जय-चारित्राणि, तपश्च भवन्ति।
तत्र-समितिः सम्यगयनं सर्वज्ञप्रणीतज्ञानानुसारिण्यश्वेष्टा, ईर्ष्या भाषादिरूपाः
पञ्चविधाः, सम्यक् क्रिया रूपगति हेतुत्वात्संवरमादधते। गुप्यते-भद्रकारणात्-
कायादियोगलक्षणव्यापारात्संरक्ष्यते-आत्माऽनया, इति शुषि, मनोवाकायभेदेन

कर्मों की निर्जरा के लिए उन्हें समभाव से सहना परीषद्जय है।
सत् आचरण को या जिसके द्वारा सत् आचरण किया जाय-उसे
चारित्र कहते हैं तपश्चर्या को तप कहते हैं। ये सब आसन्ननिरोध-
रूप संवर के कारण हैं ॥२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पूर्वसूत्र में संवर के स्वरूप का प्रतिपादन किया
गया है अतएव अब उसके कारणों का प्ररूपण करते हैं--

समिति, शुषि, धर्म, अनुप्रेक्षा, परीषद्जय, चारित्र और तप ये
संवर के हेतु या उपाय हैं। इन में सर्वज्ञों द्वारा प्रणीत ज्ञान के अनु-
सार गमन भाषण आदि प्रवृत्ति करना समिति है। समिति के पांच
भेद हैं। ये समितिवां सम्यक् यतना रूप प्रवृत्ति होने के कारण
संवर को उत्पन्न करती है।

जिसके कारण आत्मा का संसार के हेतुभूत काययोग आदि

करवा परिषद्जय છે. સત્ આચરણને અથવા જેના દ્વારા સત્ આચરણ
કરવામાં આવે તેને ચારિત્ર કહે છે. તપશ્ચર્યાને તપ કહે છે. આ બધાં
આસન્ન નિરોધરૂપ સંવરના કારણ છે ॥૨॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વસૂત્રમાં સંવરના સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરવામાં
આવ્યું આથી હવે તેના કારણોનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ—

સમિતિ, શુષિ, ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા, પરીષદ્જય ચારિત્ર અને તપ એ
સંવરના હેતુ અથવા ઉપાય છે. આમાંથી સર્વજ્ઞ દ્વારા પ્રણીત જ્ઞાન અનુસાર
ગમન ભાષણ આદિ પ્રવૃત્તિ કરવી સમિતિ છે. સમિતિના પાંચ ભેદ છે,
આ સમિતિઓ સમ્યક્ યતનારૂપ પ્રવૃત્તિ હોવાના કારણે સંવરને ઉત્પન્ન
કરે છે જેના કારણે આત્માનો સંસારના હેતુભૂત કાયયોગ આદિ વ્યાપારથી

ત્રિવિધાઃ કર્માસ્રવં સંગૃહ્યતઃ પુરુષસ્ય ગુપ્ત્યાદયઃ કારણાનિ ભવન્તિ । નરકાદિ-
ગતિ પ્રપાતધારણાત્ ક્ષમાદિદશલક્ષણો ધર્મ ઉચ્ચતે । અનુપ્રેક્ષણમ્-અનુચિન્તનમ્
અનુપ્રેક્ષાઽનયા સંવરઃ સુનાધ્યો ભવતિ । एवं-પરિતઃ સમન્તત આપતિતાઃ
ક્ષુત્રિપાસાદયઃ સહ્યન્તે इति પરીપહાઃ દેવતિર્યક્ મનુષ્યાદિકૃતા સ્તેષાં જયઃ
સમ્યક્ સહનરુપઃ પરીપહજયઃ । ચર્યતે-इति ચારિત્રમ્, ચરણંવા ચારિત્રમ્, અષ્ટવિધ
જ્ઞાનાવરણાદિકર્મ ચયરિક્તીકરણાત્ ચારિત્રમ્, સામાયિકાદિ પञ्ચવિધમ્ । તપ્યતે
इति તપઃ, તપતિ ચા કર્તારમિતિ તપઃ, દ્વાદશવિધમનશનાદિકમ્ इत्यેતે સમ-

વ્યાપાર સે ગોપન-રક્ષણ હો, વહ ગુપ્તિ હૈ । ઉસકે ત્રીન ભેદ હૈ-મનો-
ગુપ્તિ, વચનગુપ્તિ, કાયગુપ્તિ, । કર્મ કે આસ્ત્રવ કો રોકનેવાલે પુરુષ કે
લિધ ગુપ્તિ આદિ કારણ હૈ । નરક આદિ દુર્ગતિ મેં ગિરતે હુએ જીવ
કો જો ધારણ કરે-ચચાવે, વહ ધર્મ હૈ । ઉસકે ક્ષમા આદિ દસ ભેદ
હૈ । વાર-વાર ચિન્તન કરના અનુપ્રેક્ષા હૈ । હસસે મી સંવર કી
સાધના મેં સરલતા હોતી હૈ । હસી પ્રકાર મૂલ્લ પ્યાસ આદિ કો
સમભાવ સે સહન કરના પરીપહ હૈ । યહ પરીપહ કમી સ્વયં ઉત્પન્ન
હોતે હૈ ઓર કમી-કમી દેવ મનુષ્ય-અથવા તિર્યચ દ્વારા ઉત્પન્ન
કિયે જાતે હૈ । ઉનકા જય અર્થાત્ સમ્યક્ પ્રકાર સે સહન કરના
પરીપહજય હૈ । આચરણ કરના યા જિસકા આચરણ કિયા જાય
વહ ચારિત્ર કહલાતા હૈ । જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મો કે
ચય (સમૂહ) કો રિક્ત કરને કે કારણ ઉસે ચારિત્ર કહતે હૈ । વહ
સામાયિક આદિ કે ભેદ સે પાંચ પ્રકાર કા હૈ । જો તપા જાય સો તપ

ગોપન-રક્ષણ થ.ય તે ગુપ્તિ છે તેના ત્રણ ભેદ છે-મનોગુપ્તિ, વચનગુપ્તિ,
કાયગુપ્તિ કર્મને આસ્ત્રવને રોકવાવાળા પુરુષ માટે ગુપ્તિ આદિ કારણ છે.
નરક વગેરે દુર્ગતિમાં પડતાં થકા જીવને જે ધારણ કરે-અચાવે તે ધર્મ
છે તેના ક્ષમા વગેરે દશ ભેદો છે. સતત ચિન્તન કરવું તે અનુપ્રેક્ષા છે.
એમાં પણ સંવરની સાધનામાં સરળતા થાય છે એવી જ રીતે ભૂખ તરસ
વગેરેને સમભાવથી સહન કરવા તે પરીપહ છે. આ પરીપહ કોઈવાર બાતે ઉત્પન્ન
થાય છે, જ્યારે કદી, કદી, દેવ મનુષ્ય અથવા તિર્યચ દ્વારા ઉત્પન્ન કરવામાં
આવે છે. તેમનો જય અર્થાત્ સમ્યક્ પ્રકારથી સહન કરવું એ પરીપહજય છે.
આચરણ કરવું અથવા જેનું આચરણ કરવામાં આવે એ ચારિત્ર કહેવાય
છે. જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોના ચય (સમૂહ) ને ખાલી કરવાના
કારણ-તેને ચારિત્ર કહે છે. તે સામાયિક આદિના ભેદથી પાંચ પ્રકારનું છે.

આસ્રવનિરોધલક્ષણસ્ય સંવરસ્ય હેતવો ભવન્તિ । તત્ર-ઈર્ષ્યાદયઃ પચ્ચસમિતયઃ, ત્રિવિધયોગ નિરોધકરૂપા ગુપ્તયસ્તિત્ત્વો મનોગુપ્ત્યાદયઃ, ક્ષમા-માર્દવાદયો દશ-વિધો યતિધર્મઃ, અનિત્યાદિ દ્વાદશ ભાવનારૂપાઽનુપ્રેક્ષા, ક્ષુત્તિપિપાસાદિ દ્વાવિંશતિ પરીવહાણાં દ્વાદશવિધો જયઃ, સામાયિકસંયમાદિઽશ્ચવિધં ચારિત્રમ્, અનશનોદિ-વાહ્ય-પ્રાયશ્ચિત્તાદિ પઢાભ્યન્તરભેદેન દ્વાદશવિધં તપોઽવગન્તવ્યમ્, સર્વેચૈતે સમિ-તિપ્રભૃતિ તપઃ પર્યન્તાઃ સંવરોપાયા યથાક્રમં સ્વરૂપ-ભેદો-પ્રભેદૈરગ્રેઽભિધાસ્યન્તે ।

અથ સમિત્યાદય સ્તાવન્કથં સંવરસ્યાઽઽસ્રવ નિરોધલક્ષણસ્ય કારણરૂપાઃ સમ્ભવન્તિ ? इति चेत्-अत्रोच्यते-रागद्वेषपरिणतिविशेषरूपाऽऽर्द्ररौद्राद्य-

યા જો કર્તાનો તપાવે તો તપ વહ અનશન આદિ કે ભેદ સે વારહ પ્રકાર કા હૈ । યે સાતો આસ્રવ નિરોધ રૂપ સંવર કે કારણ હૈ ।

ઈર્ષ્યા આદિ પાંચ સમિતિયાં હૈ, ત્રીન યોગોં કા નિરોધ રૂપ ત્રીન ગુપ્તિયાં હૈ, ક્ષમા માર્દવ આદિ દશ પ્રકાર કે ધર્મ હૈ, અનિત્ય આદિ વારહ ભાવનાં-અનુપ્રેક્ષાં હૈ ક્ષુધા પિપાસા આદિ વાર્દસ પરીવહોં કા વિજય હૈ, સામાયિક આદિ પાંચ પ્રકાર કા ચારિત્ર હૈ હહ અનશન આદિ વાહ્ય ઓર હહ પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ આભ્યન્તર યોં વારહ પ્રકાર કા તપ હૈ । સમિતિ સે પ્રારંભ કરકે તપશ્ચરણ પર્યન્ત સમી સંવર કે ઉપાયોં કા અનુક્રમ સે સ્વરૂપ ભેદ ઓર ઉપભેદ વતલાતે હુએ આગે કથન કરેંગે ।

શંકા-યે સમિતિ આદિ આસ્રવનિરોધ રૂપ સંવર કે કારણ કિસ પ્રકાર હોતે હૈ ?

જે તપાવી-શકાય તે તપ અથવા જે કર્તાને તપાવે તે તપ તે અનશન આદિના ભેદથી બાર પ્રકારનું છે. આ સાતે આસ્રવ નિરોધ રૂપ સંવરના કારણ છે.

ઈર્ષ્યા આદિ પાંચ સમિતિઓ છે, ત્રણ યોગોના નિરોધ રૂપ ત્રણ ગુપ્તિઓ છે, ક્ષમામાર્દવ આદિ દશ પ્રકારના ધર્મ છે, અનિત્ય આદિ બાર ભાવનાઓ અનુપ્રેક્ષાઓ છે, ક્ષુધા, પિપાસા આદિ બારીસ પરીવહોનો વિન્ય છે, સામાયિક સંયમ આદિ પાંચ પ્રકારના ચારિત્ર છે, છ અનશન આદિ વાહ્ય અને છ પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ આભ્યન્તર, એમ બાર પ્રકારના તપ છે. સમિતિથી પ્રારંભ કરીને તપશ્ચરણ પર્યન્ત બધા સંવરના ઉપાયોનો અનુક્રમથી સ્વરૂપ, ભેદ અને ઉપભેદ દર્શાવતું થકું કથન પછીથી કરીશું.

શંકા—આ સમિતિ આદિ આસ્રવનિરોધ રૂપ સંવરના કારણ કેવા પ્રકારના હોય છે ?

વસાયાત્ મનોનિવૃત્ત્ય-એટલિકામુષ્ણિક વિષયામિલાપરહિતસ્ય પુરુષસ્ય મનોગુપ્તત્વા
 દેવ ન રાગદ્વેષાદિમૂલકં કર્મ જનિષ્યતે । એવં વાગ્વ્યાપારવિરતસ્ય યથા વિદિત
 વાગ્માપિણઃ સ્વલુ વાચાઽપિ ગુપ્તત્વાદેવ વાચિકમપિ-અપ્રિયવચનાદિદેતુકં કર્મ
 અસંવ્રતસ્યાઽસત્પલાપિન ઇવ નોત્પત્સ્યતે । એવં-કાયોત્સર્ગમાજઃ પરિત્યક્ત
 પ્રાણાતિપાતાદિદોષવિષયકં ક્રિયાકલાપસ્ય સામાયિકક્રિયાકલાપઃપ્રાણાતિપાતઃ
 પુરુષસ્ય કાયગુપ્તત્વાદેવ ધાવન-વલ્ગના મત્યુપેક્ષિતા પ્રમાર્જિતાઽવનિપ્રદેશ
 પરિભ્રમણદ્રવ્યાન્તરગ્રહણનિષ્કેષણાદિદેતુકં કાયિકમપિ કર્મ નાશ્વિલપ્તં ભવતિ,
 इत्येवं सम्यक् मनोयोगादिनयनिरोधलक्षणास्तिस्रो गुण्यः संवरस्य करणानि

સમાધાન-જિસ પુરુષ ને રાગ-દ્વેષ કી પરિણતિ રૂપ આર્તધ્યાન
 ઓર રોદ્રધ્યાન સે અપને મન કો હટા લિયા હૈ ઓર જો હહ-પરલોક
 સંબંધી વિષયોં કી અભિલાષા સે રહિત હૈ, વ મનોગુપ્ત હોને કે કારણ
 રાગ-દ્વેષ મૂલક કર્મ કા બંધ નહીં કરતા । હસી પ્રકાર જો વચન
 સંબંધી વ્યવહાર સે નિવૃત્ત હો ગયા હૈ યા શાસ્ત્રવિહિત વચનોં કા
 હી પ્રયોગ કરતા હૈ ઓર હસ પ્રકાર વચન સે ગુપ્ત હૈ, વહ અપ્રિય
 અસત્ય વચન કે કારણ બંધને વાલે કર્મ કા બંધ નહીં કરતા । હસી
 પ્રકાર જો કાયોત્સર્ગ કી સ્થિતિ મેં હૈ, જિસને પ્રાણાતિપાત આદિ
 વિષયક ક્રિયાઓં કા ત્યાગ કર દિયા હૈ, જો સામાયિક ક્રિયાં કે
 અનુષ્ઠાન મેં તત્પર હૈ, વહ કાયગુપ્ત-હોને કે કારણ દોડને ભાગને,
 વિના દેહી ઓર વિના પૂંજી જમીન સે ચલને, દૂધરી વસ્તુઓં કે ધરને
 વંટાને આદિ કાયિક વ્યાપારોં સે બંધનેવાલે કર્મોં સે બી મુક્ત નહીં

સમાધાન-જે પુરુષે રાગ-દ્વેષની પરિણતિ રૂપ આર્તધ્યાન અને
 રોદ્રધ્યાનથી પેતાના મનને હટાવી લીધું છે અને જે આ લોક પરલોક
 સંબંધી વિષયોની અભિલાષાથી રહિત છે તે મનોગુપ્ત હોવાના કારણે રાગ-
 દ્વેષ-મૂળક કર્મનો બંધ કરતાં નથી એવી જ રીતે જે વચન સંબંધી
 વ્યવહારથી નિવૃત્ત થઈ ગયા છે અથવા શાસ્ત્ર-વિહિત વચનોનો જ પ્રયોગ
 કરે છે અને એવી રીતે વચનથી ગુપ્ત છે, તે અપ્રિય અસત્ય વચનના કારણે
 બંધનારા કર્મનો બંધ કરતાં નથી. એવી જ રીતે જે કાયોત્સર્ગની સ્થિતિમાં
 છે, જેણે પ્રાણાતિપાત આદિ વિષયક ક્રિયાઓનો ત્યાગ કરી દીધો છે, જે
 સામાયિક ક્રિયાના અનુષ્ઠાનમાં તત્પર છે તે કાયગુપ્ત હોવાના કારણે દોડવાના,
 ભાગવાના, વગર જોડે અને વગર પૂંજી જમીનમાં ચાલવાના, પારકી
 વસ્તુઓને રાખવા-ઉપાડવા આદિ કાયિક વ્યાપારોથી બંધનારા કર્મોથી મુક્ત

भवन्ति । एवम्-ईर्या-म.पै षणाऽऽदान-परिष्ठापनलक्षणाः पञ्च समितयः
 कार्यव्यापारानुविधायिन्यः, एताः पञ्च समितयोऽपि शुद्धि सहचरितत्वात्
 तामिरपि संवरो भवत्येव इति ताः अपि पञ्च समितयः संस्कारणानि भवन्ति ।
 एवं-क्षमा, मार्दवा, ऽऽर्जव, शौचानां यतिधर्माणां खलु-अनन्ताऽनुबन्ध्यादिभेद-
 सहित क्रोध-मान-माया-लोभ कषायाणां निग्रहकरणेन संवरोत्पादकत्वं भवति
 सत्य-त्यागाऽकिञ्चनत्व-ब्रह्मचर्याणाञ्च यतिधर्माणां चारित्र्यवर्द्धकतया संवर-
 काणस्त्वं बोध्यम् । संयमस्य च सप्तदशविधस्य कस्यचित् प्रथमव्रतान्तःपातित्वेन
 कस्यचित्पुनरुत्तरगुणान्तर्भूतत्वेन संस्कारणत्वं भवति । अनित्याऽशरणादि-
 होता । इस प्रकार सम्यक् प्रकार से योग का निरोध रूप जो तीन
 गुणियां हैं, वे संवर का कारण होती हैं ।

इसी प्रकार ईर्यामिति, एषणासमिति, आदानसमिति और
 परिष्ठापनसमिति, जो कायिक व्यापार से ग्यस्बन्ध रखती हैं, तीन
 गुणियों से सहचरित होने के कारण संवर का कारण होती हैं ।

इसी प्रकार क्षमा, मार्दव, आर्जव और मुक्ति-निर्लोभता (शौच)
 ये चार धर्म क्रमशः क्रोध, मान, माया और लोभ कषायों का निग्रह
 करनेवाले हैं, अतएव संवर के जनक हैं तथा सत्य, त्याग, अकिञ्च-
 नत्व और ब्रह्मचर्य धर्म चारित्र्य के वर्द्धक हैं अतएव वे भी संवर के
 कारण होते हैं, संयम धर्म के खत्रव भेद हैं । उन में से कोई
 प्रथम व्रत के अन्तर्गत है और कोई उच्चा गुणों में अन्तर्भूत है ।
 अतएव वह भी संवर का कारण होता है । अनित्यत्व, अशरणत्व

યુક્ત હોતો નથી આવી રીતે સમ્યક્પ્રકારથી યે ગના નિરોધરૂપ જે ત્રણ
 ગુણિઓ છે તે સંવરના કારણરૂપ હોય છે

એવી જ રીતે ઈર્યામમિતિ, એષણાસમિતિ, આદાન
 નિક્ષેપસમિતિ અને પરિષ્ઠાપનસમિતિ, જે કાયિક વ્યાપારથી સંબંધ રાખે
 છે, ત્રણ ગુણિઓથી સહચરિત હોવાના કારણે સંવરના કારણ હોય છે.

આવી જ રીતે ક્ષમા, માર્દવ, આર્જવ અને મુક્તિ શૌચ-નિર્લોભતા
 આ ચાર ધર્મ ક્રમશઃ ક્રોધ માન, માયા અને લોભ ડષાયોના નિગ્રહ કર-
 નારો છે આથી સંવરના પિતા છે તથા સત્ય ત્યાગ, અકિંચનત્વ અને
 બ્રહ્મચર્ય ધર્મ ચારિત્રના વર્ધક છે આથી તેઓ પણ સંવરના કારણ છે.
 સંયમધર્મના સત્તર ભેદ છે. તેમાંથી કોઈ ભેદ પ્રથમ વ્રતની અન્તર્ગત છે
 અને કોઈ ઉત્તર ગુણોમાં અન્તર્ભૂત છે, આથી તે પણ સંવરનું કારણ ગણાયે.
 અનિત્યત્વ, અશરણત્વ આદિ અનુપ્રેક્ષાઓ પણ સંવરના કારણ છે અને

માવનારૂપાનુષેષાયા અપિ સંદરહેતુત્વમ્-ઉત્તરગુણાનુવિધાયિત્વમ્ ભવતિ । एवं-
 ક્ષુત્પિપાસાદિ દ્વાર્વિજાતિ પરીવહાણાં વિજયોઽપિ સંદરકારણં ભવતિ । एवं-દ્વાદશ
 વિધં તપોઽપિ-ઉત્તરગુણાન્તઃપાતિતયા સંવરમાધિક્કરોતિ । एवं-પ્રાણાતિપાત-
 મૃષાવાદાઽદત્તાદાન-મૈથુન-પરિગ્રહ-રાત્રિભોજનાનિ સંશ્લેષ વિશેષાદિત કાલુ-
 હ્યસ્ય પુરુષસ્ય કર્માસ્રવકારણાનિ ભવન્તિ તેભ્યો વિરમણેન કર્માસ્રવનિરોધો
 ભવતિ, તસ્માત્-પશ્ચાણુવ્રતાના મપિ સંવરકરણત્વં વર્તેતે, આધાકર્માદિ પરિ-
 ભોગહેતુકં કર્માસ્રવણં ભવતિ । તત્પરિત્યાગે તુ-ન સમ્ભવતિ કર્માસ્રવણમ્,
 તસ્માત્ સમિત્યાદિ તપઃપર્યન્તં સર્વમેવ શઙ્કાદિ દોષજાલરહિતસમ્યગ્દર્શનપીઠ
 પ્રતિવન્ધં વર્તેતે, અત સ્તત્ત્વર્થશ્રદ્ધાનલક્ષણે સમ્યક્ત્વે સતિ ન સ્વલ્પ મિથ્યા-

આદિ અનુપ્રેક્ષાએ મ્હી સંવર કા કારણ હૈં ઓર ઉત્તરગુણ રૂપ હૈં ।
 ક્ષુધા પિપાસા આદિ ઘાઈસ પરીવહોં કો જિતના મ્હી સંવર કા કારણ
 હૈં । બારહ પ્રકાર કા તપ મ્હી ઉત્તર ગુણોં મ્હેં સમ્મિલિત હોને સે સંવર
 કો પ્રકટ કરતા હૈં । હસી પ્રકાર પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન,
 મૈથુન, પરિગ્રહ ઓર રાત્રિ ભોજન ચિત્ત કો કલુષતા વાલે પુરુષ કો
 કર્મ કે આસ્રવ કે કારણ હોતે હૈં ઓર દન પાપોં સે વિરક્ત હોને
 સે આસ્રવ કા નિરોધ હોતા હૈં હસ કારણ પાંચોં વ્રત મ્હી સંવર
 કે કારણ હૈં । આધા કર્મ આદિ દોષોં વાલે આહાર આદિ કા
 સેવન કરને સે કર્મ કા આસ્રવ હોતા હૈં । ઉસકા ત્યાગ કર દિયા
 જાય તો આસ્રવ નહીં હોતા અર્થાત્ સંવર હો જાતા હૈં । હમ પ્રકાર
 સમિતિ શુષ્ઠિ આદિ પૂર્વોક્ત સમ્મી સંવર કે કારણ ત મ્હી હોતે હૈં
 જબ કિ સમ્યગ્દર્શન વિજ્યાન હો ઓર સમ્યગ્દર્શન હોને પર મિથ્યા-

ઉત્તરગુણરૂપ છે. ક્ષુધા પિપાસા વગેરે બીજા પરીવહોને છતવા એ પણ
 સંવરના કારણ છે. બાર પ્રકારના તપ પણ ઉત્તરગુણોમાં સમ્મિલિત હોવાથી
 સંવરને પ્રકટ કરે છે. એવી જ રીતે પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન,
 મૈથુન, પરિગ્રહ અને રાત્રિભોજન ચિત્તની કલુષતાવાળા પુરુષને કર્મના
 આસ્રવના કારણ હોય છે અને આ પાપોથી વિરત થવાથી આસ્રવનો નિરોધ
 થાય છે. આથી પાંચે વ્રત પણ સંવરના કારણ છે. આધ કર્મ આદિ દોષો
 વાળા આહાર આદિનું સેવન કરવાથી કર્મનો આસ્રવ થાય છે. તેનો ત્યાગ
 કરી દેવામાં આવે તો આસ્રવ થતો નથી અર્થાત્ સંવર થઈ જાય છે. આવી
 રીતે સમિતિ શુષ્ઠિ આદિ પૂર્વોક્ત બધાં સંવરના કારણ છે આ બધાં સંવરનાં
 કારણ ત્યારે જ હોય છે જ્યારે સમ્યક્દર્શન વિજ્યાન હોય અને સમ્યક્દર્શન

દર્શનહેતુકઃ કર્માસ્રો ભવતીતિ સમિત્યાદયઃ સંવરસ્યાઽભ્યુપાયાઃ અભ્યુપગ-
ન્તવ્યાઃ । એવમેવાઽનશનપ્રાયશ્ચિત્તધ્યાનાદિતપોયુક્તઃ સ્વલ્લુ નૂનમેવાઽઽસત્ત્વદ્વારં
સંવૃણોતીતિ ભાવઃ । તથાચૈ-તાનિ સમિતિ-ગુપ્તિ-ધર્માઽનુપ્રેક્ષા-પરીષદ્વજય
ચારિત્ર-તપાંસિ કર્માસ્રવનિરોધલક્ષણસંવરકારણાનિ ભવન્તિ । ઉક્તશ્ચ-
સ્થાનાંજ્ઞે પ્રથમવૃત્તિસ્થાને-‘સમર્થ ગુપ્તી ધર્મો’ અણુપેહપરીસહાચરિત્તં ચ ।
સત્તાવન્નં મેવા’ પળતિગ મેવાહં સંવરણે-॥૧॥ ઇતિ, સમિતિ-૧ ગુપ્તિ-
૨ ધર્મો ૩ ઽનુપ્રેક્ષા-૪ પરીષદ્વા-૫ ચારિત્ર-૬ શ્ચ । સપ્તપશ્ચાશદ્ભેદાઃ
પશ્ચત્રિશદ્ભેદાઃ સંવરણે ॥૧॥ ઇતિ । ‘ઉત્તરાધ્યયને ત્રિશદ્ધ્યયને ષઠ્ઠાગાથાયા
શ્લોકતમ્-‘એવં તુ સંજયસ્સાવિ પાપકર્મનિરાસવે । મદ્વકોટીસંચિયં
કર્મં તવસા નિજ્જહસ્સહ ॥૩॥ ઇતિ એવશ્ચ સંયતસ્યાપિ પાપકર્મનિરાસવઃ ।
મદ્વકોટી સશ્ચિતં કર્મ તપસા નિર્જરિષ્યતિ’-૩તિ ॥૨॥

દર્શન હેતુક વર્મકા આસ્રવ રુકુ જાને સે મો સંવર હોતા હૈ ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ અનશન પ્રાયશ્ચિત્ત ધ્યાન આદિ તપોં સે જો
યુક્ત હોતા હૈ, વહ નિશ્ચય હી આસ્રવદ્વારોં કા નિરોધ કરતા હૈ ।
હસ કારણ યે સમિતિ, ગુપ્તિ, ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા, પરીષદ્વજય, ચારિત્ર
ઔર તપ, કર્મોં કે આસ્રવ કે નિરોધ રૂપ સંવર કો ઉત્પન્ન કરતે હૈ ।
સ્થાનાંગસૂત્ર કે પ્રથમ વૃત્તિસ્થાન મેં કહા હૈ-સમિતિ, ગુપ્તિ, ધર્મ,
અનુપ્રેક્ષા ઔર ચારિત્ર યે સંવરકે સત્તાવન ભેદ હોતે હૈ ॥૧॥

ઉત્તરાધ્યયન કે તીસવેં અધ્યયન કી છઠી ગાથા મેં મી વહા હૈ-
‘હસ પ્રકાર સંયમવાન પુરુષ પાપ કર્મોં કે આસ્રવ સે રહિત હો જાતા
હૈ ઔર તપશ્ચરણ કે દ્વારા કોટિ-કોટિ અર્વોં મેં ઉપાર્જિત કર્મોં કી
નિર્જરા હો જાતી હૈ ॥૨॥

હોવાથી મિથ્યાદર્શન હેતુક કર્મના આસ્રવ રોકાઈ જવાથી પણ સંવર થાય છે.
કહેવાનું એ છે કે અનશન પ્રાયશ્ચિત્ત ધ્યાન આદિ તપથી જે યુક્ત
હોય છે તે નિશ્ચયપણે જ આસ્રવદ્વારોના નિરોધ કરે છે. આ કારણથી આ
સમિતિ, ગુપ્તિ, ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા, પરીષદ્વજય, ચારિત્ર અને તપ કર્મોના
આસ્રવના અટકાવ રૂપ સંવરને ઉત્પન્ન કરે છે સ્થાનાંગસૂત્રના પ્રથમ વૃત્તિ
સ્થાનમાં કહેવામાં આવ્યું છે-સમિતિગુપ્તિ, ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા અને ચારિત્ર
આ સંવરના સત્તાવન ભેદ થાય છે ॥૧॥ ઉત્તરાધ્યાયનના ત્રીસમા અધ્યયનની
છઠી ગાથામાં પણ કહ્યું છે-આ પ્રકારે સંયમવાન પુરુષ પાપકર્મોના આસ્રવથી
રહિત થઈ જાય છે અને તપશ્ચર્યા દ્વારા કોટિ-કોટિ ભવોમાં ઉપાર્જિત
કર્મોની નિર્જરા થઈ જાય છે ॥૨॥

मूलम्—समिद्धो पंच, ईरिया—भाषा—एषणा—आयाणनि-
क्खेवणा परिट्ठापणिया भेयओ ॥३॥

छाया—‘समितयः पञ्च, ईर्या—भाषैषणाऽऽदाननिक्षेपणापरिष्ठापनिका
भेदतः ३।

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रे तावद्-आसन्ननिरोधलक्षणसंवरस्य हेतुरूपाणि
समिति-गुप्ति-धर्माऽनुपेक्षा-परीषहजय-चारित्र्यतथांसि प्रोक्तानि, सम्पत्ति-
तत्र प्रथमोपात्तायाः समितेः स्वरूपं प्रकृत्यितुमाह ‘समिद्धो पंच, ईरिया
भाषा एषणा आयाणनिक्खेवणा-परिट्ठापणिया भेयओ’ इति, समि-
तयः—प्राणिपीडापरिहारार्थं सम्यगनयनरूपाः पञ्च भवन्ति, ईर्या—१ भाषा—२
एषणा—३ आदाननिक्षेपणा—४ परिष्ठापनिका—५ चेत्येताः पञ्च समितयो ज्ञात-
तत्त्वस्य श्रमणस्य प्राणिपीडापरिहाराऽभ्युपाया अगन्तव्याः पुरतो जीव-
रक्षार्थं युग्यमात्रधूषागं निरीक्ष्य गमनम्—ईर्या समितिः—१ सावद्यपरिहार-

‘समिद्धो पंच ईरिया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—ईर्या, भाषा, एषणा, आदाननिक्षेपण और परिष्ठापनिका
के भेद से समितियां पांच हैं ॥३॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्र में समिति, गुप्ति, अनुपेक्षा, परीषहजय,
चारित्र्य और तप को आसन्ननिरोध रूप संवर का कारण कहा है।
अब इन में सब प्रथम गिनाई समिति के स्वरूप का प्रतिपादन
करने के लिए कहते हैं—

समितियां पांच हैं—(१) ईर्यासमिति (२) भाषासमिति (३) एषणा
समिति (४) आदाननिक्षेपणासमिति और (५) परिष्ठापनिकासमिति
ये समितियां तत्त्व के ज्ञाता श्रमण के लिए प्राणियों की पीडा को

‘समिद्धो पंच ईरिया’ इत्यादि

सूत्रार्थ—ईर्या, भाषा, एषणा, निक्षेपण और परिष्ठापनिकाना लेखी
समितियों पांच छे ॥३॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रमां समिति गुप्ति, धर्म, अनुपेक्षा, परीषह-
जय चारित्र्य और तपने आसन्ननिरोधरूप ‘संवरना’ कारण उह्यां छे. हुवे अ-
पेक्षी प्रथम गणवेदी समितिना स्वरूपनु प्रतिपादन करवा भाटे कड़ीये छीये-

समितियों पांच छे—(१) ईर्यासमिति (२) भाषासमिति (३) एषणा-
समिति (४) आदान निक्षेपणासमिति और (५) परिष्ठापनिकासमिति आ
समितियों तत्त्वना ज्ञाताश्रमण भाटे प्राणियोंनी पीडाने अथाववा भाटेने।

પૂર્વકં નિરવચ્ચમાપામાષણમ્-ભાષાસમિતિઃ ૨ ગવેષણા પૂર્વક ઢાચત્વારિશદો-
વાન્ વર્જયિત્વાઽઽહારાદિગ્રહણમ્ એષણાસમિતિઃ ૩ વસ્ત્ર પાત્રાદ્યુપકરણાનાં સુપતિ-
લેખિત-સુપ્રવાર્જિતાદિ ક્રમેણાઽઽદાનનિક્ષેપણમ્-આદાનનિક્ષેપણા સમિતિઃ-૪
ઉચાર-પ્રસ્રવણાદીનાં સ્થળિલ્લદોષપરિહારપૂર્વકં પરિષ્ઠાપનમ્-પરિષ્ઠાપનિકા
સમિતિઃ-૫ અયં માત્રઃ-ગજ્જતઃ શ્રમણસ્ય ચતુર્હસ્તમાત્રમાર્ગનિરીક્ષણપૂર્વકં
સાવહિતદૃષ્ટે શાન્તચિત્તસ્ય સમ્યક્તયા વિજ્ઞાતજીવસ્થાનસ્વરૂપસ્ય-ઈર્ષ્યા
સમિતિરવગન્તવ્યા-૧ હિતં=રિમિત્તમ્=અસન્દિગ્ધં સત્યમ્-અમુયાવર્જિતમ્-પ્રિયં
સન્દેહવર્જિતં-ક્રોધાદિકષાયાનુત્પાદકમ્-હુ-ધર્માવિરોધિ-દેશકાલાદ્યુચિતં-

વચાને કા ઉપાય હૈં । (૧) જીવોં કી રક્ષા કે લિખ સામને ચાર હાથ ભૂમિ
દેખકર ચલના ઈર્ષ્યાસમિતિ હૈ । (૨) સાવચ વચનોં કા ત્યાગ કરકે
નિરવચ્ચ ભાષા બોલના ભાષા સમિતિ હૈ । (૩) વચાલીસ દોષ ટાલકર
ગવેષણા પૂર્વક આહાર આદિ કો ગ્રહણ કરના એષણાસમિતિ હૈ । (૪)
વસ્ત્ર પાત્ર આદિ ઉપકરણોં કો ભલી માંતિ દેખકર ઓર પૂંજ કર ગ્રહણ
કરના ઓર રચના આદાનનિક્ષેપણાસમિતિ હૈ । મલ-મૂત્ર આદિ કો
નિર્જીવ ભૂમિ પર દેખ-માલ કર ત્યાગના પરિષ્ઠાપનિકા સમિતિ હૈ । -

તાત્પર્ય યહ હૈ-(૧) સાધુ જય ગમન કરે તો ચાર હાથ રાસ્તા
દેખકર, ઉપયોગ પૂર્ણ દૃષ્ટિ વાલા, એવં શાન્તચિત્ત હોકર જીવસ્થાનોં
કે સ્વરૂપ કો સમ્યક્ પ્રકાર સે જાનકર ચલે, યહ ઈર્ષ્યાસમિતિ હૈ-
(૨) હિતજનક, પરિમિત, અસન્દિગ્ધ, સત્ય, ઈર્ષારહિત, પ્રિય,
સન્દેહરહિત, ક્રોધ આદિ કષાયોં કો ન ઉત્પન્ન કરને બોલે, કોમલ

ઉપાય છે (૧) જીવોની રક્ષા માટે નજર સામેની ચાર હાથ જમીનનું પડિ-
વેહન કરીને ચાલવું ઈર્ષ્યાસમિતિ છે. (૨) સાવચ વચનનો ત્યાગ કરીને નિરવચ્ચ
ભાષા બોલવી ભાષાસમિતિ છે. ૩ બેતાલીશ દોષ ટાળીને ગવેષણાપૂર્વક
આહાર આદિને ગ્રહણ કરવા એષણાસમિતિ છે (૪) વસ્ત્ર પાત્ર આદિ ઉપ-
કરણોને સારી પેઠે જોધને અને પૂંજ્યા બાદ લેવા તથા મુકવા આદાન
નિક્ષેપણા સમિતિ છે મળ-મૂત્ર આદિને નિર્જીવ ભૂમિ ઉપર બારીકાઈથી
જોઈ તપાસી ત્યાગ કરવો (નાખવા) પરિષ્ઠાપનિકાસમિતિ છે.

તાત્પર્ય એ છે કે-(૧) સાધુ જ્યારે ગમન કરે ત્યારે ચાર હાથ રસ્તો,
જોધને, ઉપયોગપૂર્ણ દૃષ્ટિવાળા તથા શાન્તચિત્ત થઈને જીવસ્થાનોનાં
સ્વરૂપને સમ્યક્પ્રકારથી જાણીને ચાલે, એ ઈર્ષ્યાસમિતિ છે (૨) હિતજનક,
પરિમિત, અસન્દિગ્ધ, સત્ય, ઈર્ષારહિત, પ્રિય, સન્દેહ રહિત ક્રોધ આદિ

હાસ્યાદિરહિતં વચોઽભિધાનમ્-ભાષાસમિતિ રુચ્યતે-૨ ઉદ્ગમોત્પાદનાદિ દોષ-
રહિતમ્-પરાર્થનિષ્પાદિતં સમુચિતકાલે આહારગ્રહણમ્-એષણાસમિતિ રુચ્યતે-૩
ધર્મોપકરણગ્રહણે સમ્યગ્ વિલોક્ય રજોહરણાદિના પ્રતિલિખ્ય ગ્રહણમ્થાપનમ્
આદાનનિષ્કેષગામમિતિ:-૪ પ્રાણિના મધિરોધેનાઽન્નમલત્યાગઃ શરીરસ્ય
સ્થાપનશ્ચ પરિષ્ઠાપનિકાસમિતિ રુચ્યતે-૫ इत्येताः पञ्च समितयः प्राणिपीडा
परिहारस्याऽभ्युपाया अवगन्तव्याः ॥ ૩ ॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિઃ--‘પૂર્વ’ તાવત્-સંવરકારણભૂતાનિ સમિત્યાદીનિ
પ્રોક્તાનિ, તત્સેવનાદેવ સવરસિદ્ધિઃ પ્રતિપાદિતા, સમ્પત્તિ-કર્માસ્રવનરોધ
ધર્મ સે અવિરુદ્ધ, દેશ-કાલ કે અનુકૂલ તથા હાસ્યાદિ સે રહિત
વચન બોલના ભાષા સમિતિ હૈ । (૩) ઉદ્ગમ અને ઉત્પાદન સમ્યગ્ની
દોષો સે રહિત, દૂસરો કે નિમિત્ત બનાયે દુષ્ આહાર કો યચિત કાલ
આને પર ગ્રહણ કરના એષણા સમિતિ હૈ । (૪) ધર્મોપકરણો કો ગ્રહણ
કરતે સમય સમ્યક્ પ્રકાર સે અવલોકન કરકે ઓર રજોહરણ આદિ
સે પૂજ કર ગ્રહણ કરના ઓર હની વિધિ સે રચના આદાનનિષ્કેષણા
સમિતિ હૈ । (૫) કિસી મી પ્રાણી કો કિસી પ્રકાર કી પીડા ઉત્પન્ન ન
હો, હમ પ્રકાર શરીર કે મલ કા ઉત્સર્ગ કરના પરિષ્ઠાપનિકાસમિતિ
કહલાતી હૈ । યહ પાંચ સમિતિયા પ્રાણિયો કો પીડા સે બચાને કે
લિયે ઉપાય હૈ ॥૩॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ—હસસે પૂર્વ સમિતિ આદિ સંવર કે કારણ કહે
ગયે હૈ ઓર યહ મી બતાવાય ગયા હૈ ત્રિ વનકે સેવન સે હી સંવર કી

કષાયોને ઉત્પન્ન ન કરનર, કોમળ, ધર્મથી અવિરુદ્ધ દેશકાળને અનુકૂળ
તથા હાસ્યાદિથી રહિત વચન બોલવા ભાષાસમિતિ છે (૩) ઉદ્ગમ અને
ઉત્પાદના સંબંધી દોષોથી રહિત બીજાને બતાવેલા આહારને યોગ્ય સમય
થવાથી ગ્રહણ કરવો એષણા સમિતિ છે, ધર્મ ઉપકરણોને ગ્રહણ કરતી
વખતે સમ્યક્ પ્રકારથી અવલોકન કરીને અને રજોહરણ આદિથી પૂજાને
લેવા અને આવી જ વિધિથી પાછા મુખવા આદાન નિષ્કેષણ સમિતિ છે.
(૫) કોઈ પણ પ્રાણીને કોઈ રીતે પીડા ન ઉદ્ભવે એ રીતે શરીરના મળનો
ત્યાગ કરવો પરિષ્ઠાપનિકાસમિતિ કહેવાય છે આ પાંચ સમિતિઓ પ્રાણી
ઓને પીડાથી બચાવવાના ઉપાય છે ॥૩॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ—આની અગાઉ સમિતિ આદિ સંવરના કારણો કહે-
વામાં આવ્યા અને એ પણ સાબિત કરવામાં આવ્યું કે તેમના સેવાથી જ

લક્ષણસંવરસિદ્ધ્યર્થં પૂર્વં તદ્ગતસમિતિસ્વરૂપં પ્રરૂપયિતુમાહ—‘સમિર્દ્યો પંચ, ઈરિયા-ભાસા-એસણા-આયાણનિક્ષેપણા પરિઘાવણિયા મેયઓ’
 इति । समितयः—सम्यग्यनरूपाः पञ्च भवन्ति । ईर्या-भाषैषणाऽऽदाननिक्षेपण-
 परिष्ठापनिका भेदतः । तथा च-ईर्यासमितिः, भाषासमितिः, एषणासमितिः,
 आदाननिक्षेपणासमितिः, पारिष्ठापनिका समितिश्चेत्येवं पञ्च समितयः—अवग-
 न्तव्याः । तत्र—आगमानुसारेण ईरण मीर्या गतिपरिणामः सम्यगागमानुसारिणी
 गतिः ईर्यासमितिरुच्यते—१ एवम्—एषणासमितिः खट्व-सम्यग् आगमानु-
 सारेणाऽऽहारादे रन्वेषणं-गवेषणरूपा बोध्या—२ एवम्—सम्यग् आगमानु-
 सारेणाऽऽदानं-ग्रहणं, निक्षेपः—स्थापनम्, तयोः समितिः प्रवचनोक्तेन विधिना
 ऽनुगताऽऽदाननिक्षेपणा समितिः—४ एवम्—आहारोपधिशृशोच्चारादेरागमानु-
 सारेण परिष्ठापनम् परिष्ठापनिका समिति रुच्यते—५ ‘उक्तञ्च’-

સિદ્ધિ હોતી હૈ । અષ કર્મોં કે આસત્ર કે નિરોધ રૂપ સંવર કી સિદ્ધિ
 કે લિએ ડન મેં સે સર્વપ્રથમ સમિતિયોં કે સ્વરૂપ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ

સમિતિયાં પાંચ હૈ—(૧) ઈર્યાસમિતિ (૨) ભાષાસમિતિ (૩) એષણા
 સમિતિ (૪) આદાનનિક્ષેપણાસમિતિ ઓર (૫) પરિઘાપનિકાસમિતિ ।
 इन में से (१) शास्त्रप्रतिपादित विधि से गमन करना ईर्यासमिति है (२)
 प्रयोजन होने पर शास्त्रानुकूल वचनों का प्रयोग करना भाषासमिति
 है । (३) आगम के अनुसार आहार आदि की गवेषणा करना एषणा
 समिति है (४) आगम के अनुकूल विधि से किसी वस्तु को रखना
 और उठाना आदाननिक्षेपणा समिति है । (५) अचित्तभूमि देव-भाल
 कर मल-मूत्र आदि का त्याग करना परिष्ठापनिका समिति है कहा भी है—

સંવરની સિદ્ધિ થાય છે. હવે કર્મોના આસત્રના નિરોધ રૂપ સંવરની સિદ્ધિ
 માટે તેમાંથી સર્વપ્રથમ સમિતિઓના સ્વરૂપની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ.

સમિતિઓ પાંચ છે—(૧) ઈર્યાસમિતિ (૨) ભાષાસમિતિ (૩) એષણા
 સમિતિ (૪) આદાનનિક્ષેપણાસમિતિ અને (૫) પરિઘાપનિકાસમિતિ આમાંથી
 (૧) શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત વિધિથી ગમન કરવું ઈર્યાસમિતિ છે. (૨) પ્રયોજન
 થવાથી શાસ્ત્રાનુકૂળ વચનોના પ્રયોગ કરવો ભાષાસમિતિ છે (૩) આગમ
 અનુસાર આહાર વગેરેની ગવેષણા કરવી એષણાસમિતિ છે (૪) આગમન
 અનુકૂળ વિધિથી કોઈ વસ્તુને મુકવી-ઉપાડવી આદાન નિક્ષેપણ સમિતિ છે.
 (૫) અચેતભૂમિ બેઠ-તપાસીને મળ-મૂત્ર વગેરેને પરકવા પરિઘાપનિકા-
 સમિતિ છે. કહ્યું પણ છે—

‘તદ્ગુણ પરિશુદ્ધયર્થ—મિશ્નોર્ગુપ્તીર્જગદતિ સોર્હનં ।

‘વેષ્ટિતુકામસ્ય પુનઃ—સમિતીઃ પ્રાજિજ્ઞત્વ પશ્ચ ॥૧॥ ઇતિ

દશવૈકાલિકે પશ્ચમાધ્યયને પ્રથમોદ્દેશકે તૃતીય—ચતુર્થસૂત્રે ચોક્તમ્—

‘પુરઑ જુગમાચાપ પેહમાણો મહિંચરે ।

ઘડિજતો બીચહરિયાહં પાણેચ દગમદ્વિયં ॥૧॥

ઓચાયં વિસમં સ્વાણું વિજ્જલં પરિવજ્જણ ।

સંકમેણ ન ઘચ્છિજ્જા વિજ્જમાણે પરવકમે ॥૨॥ ઇતિ

‘ચારિત્રગુણ કી વિશુદ્ધિ કે લિપ અર્હન્ત ભગવાન્ને સાધુ કે લિપ ત્રીન ગુણિયોં કા પ્રતિપાદન કિયા હૈ, કિન્તુ જલ કિસી પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ કરની હો તલ ઉસકે લિપ પાંચ સમિતિયોં કા કથન કિયા હૈ ।૧।

દશવૈકાલિકસૂત્ર પંચમ અધ્યયન કે પ્રથમ ઉદ્દેશક કી ગાથા ત્રીસરી ઓર ચોથી યેં કહા હૈ—

‘સામે ચાર હાથ—યુગપરિમિત—ભૂમિ કા નિરીક્ષણ કરતા હુઆ ઓર બીજ તથા હરિતકાય કી રક્ષા કરતા હુઆ તથા ક્ષીન્દ્રિય આદિ પ્રાણિયોં કો, સચિન્ન જલ ઇવં મૃત્તિ કા કો બચાતા હુઆ ચલે ।૧॥

‘ગડહા ઉલડલાલડ, ટૂંઠ ઓર કીચડ સે બલે । દસરા મર્ગ હો તો સંક્રમ—માર્ગ સે ગમન ન કરે અર્થાત્ ઇસે માર્ગ સે ન જાલે જિસે પાર કરને કે લિપ પથર, ઇંટ, યા લલકડ આદિ રલ્લા હો ઓર ઉસ પર પાંચ રલ્લકર ગમન કરના પડે ॥૨॥

ચારિત્રગુણની વિશુદ્ધિ કાજે અર્હન્ત લગવાને સાધુ માટે ત્રણ ગુણિઓનું પ્રતિપાદન કર્યું છે. પરંતુ બ્યારે કે ઇ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ કરવી હોય ત્યારે તેના માટે પાંચ સમિતિઓ કહેવામાં આવી છે ॥૧॥

દશવૈકલિક સૂત્રના પાંચમા અધ્યયનના પ્રથમ ઉદ્દેશકની ગાથા ત્રીજી અને ચોથીમાં કહ્યું છે—

‘સામે ચાર હાથ—યુગપરિમિત—ભૂમિનું નિરીક્ષણ કરતો થકો, અને બીજ તથા ક્ષીલોતરીની રક્ષા કરતો થકો તથા ક્ષીન્દ્રિય આદિ પ્રાણિઓની, સચેત પ્રાણી તથા સચેત માટીનું રક્ષણ કરતો કરતો ચાલે’ ॥૧॥

‘આડો, આડા ટેકરા, અને કાદવથી બચે. બીજો માર્ગ હોય તો સાંકડા માર્ગથી ગમન ન કરે અર્થાત્ એવા માર્ગથી ન જાય કે જેને પાર કરવા માટે પથર, ઇંટ અથવા લાકડા વગેરે રાખવામાં આવ્યા હોય અને તેના ઉપર પગ મુકીને ચાલવું પડે ॥૨॥

‘पुरतो युगमात्रया भेक्षमाणो महीश्वरेत्-।

वर्जयन् बीजहरितानि प्राणिन श्रोदक-मृत्तिकाम्-॥१॥

अवपातं विषमं स्थाणुं विजलं (सकृदमं-) परिवर्जयेत्।

‘संक्रमेण-(अस्थिरेण) न गच्छेद् विद्यमाने पराक्रमे-(स्थिरे-) ॥२॥

इति। पुनरपि दशवैकालिके सप्तमाध्ययने द्वितीयोद्देशके द्वितीयसूत्रे चोक्तम्-

‘जा च सच्चचा अवत्तन्वा-रुच्चचा सोसाय जा सुसा।

जा यं बुद्धेहिं नाहण्णा-न तं भासिज्ज पण्णवं-॥१॥

या च सत्याऽवक्तव्या सत्या मृषा च या मृषा।

या च बुद्धेरनाचीर्णा न तां भाषेन मज्ञावान् ॥१॥ इति,

‘ईर्यासमितिस्वरूपं खल्वन्यत्रापि प्रोक्तम्-

‘उपयोगोद्घोतालम्बनमार्गविशुद्धिमिर्यते श्रुतः।

सूत्रोदितेन विधिना भवतीर्या समितिरेनवद्या। १॥

इति, त्यक्ताऽनृतादिदोषं सत्यमसत्यानृतं च निरवद्यम्।

सूत्रानुयायिवदतो भाषासमिति भवति साधोः ॥२॥ इति,

दशवैकालिकसूत्र में ही सातवें अध्ययन के दूसरे उद्देशक के दूसरे सूत्र में कहा है—

बुद्धिमान् साधु ऐसी भाषा का प्रयोग न करे जो सत्य होने पर भी बोलने योग्य न हो, जो सत्यामृषा (मिश्र) हो, जो मिथ्या हो और ज्ञानी जनो ने जिसका प्रयोग न किया हो ॥१॥

अन्यत्र भी ईर्यासमिति का स्वरूप कहा गया है—जो मुनि प्रकाश युक्त मार्ग में, उपयोगपूर्वक, शास्त्रोक्त विधि से चलता है उसके ईर्यासमिति होती है ॥१॥

भाषासमिति के विषय में कहा है—अनृत आदि दोषों से वञ्च

दशवैकालिक सूत्रमां सातमां अध्ययनना णीण उद्देशकना णीण सूत्रमां कथुं छे-

‘बुद्धिमान् साधु ऐसी भाषाको प्रयोग न करे जे सय होवा छतां पणु होववा योग्य न होय जे सत्यासत्य (मिश्र) होय जे मिथ्या होय तेम-ज् ज्ञानीपुरुषोअ जेनो प्रयोग न कर्यो होय ॥१॥

अन्यत्र पणु ईर्यासमितिनुं स्वरूप कहेवामां आण्युं छे-जे मुनि प्रकाश युक्त रस्तामां, उपयोगपूर्वक, शास्त्रोक्त विधिथी गमन करे छे तेनी ईर्यासमिति होय छे ॥१॥

भाषा समितिना विषयमां कथुं छे-‘अनृत आदि दोषोथी अञ्चने

एवञ्चाऽऽवश्यकार्थमेव संयमाय सप्तदशविधाय सर्वतो युगमाप्रनिरीक्षाऽऽयु-
क्तस्य शनैः शनैः स्थापितपदागति रीर्यासमितिः । हितमिताऽसन्दिग्धाऽनवद्या-
ऽर्थनियतभाषणं भाषासमितिः । अन्न-पान-रजोहरणो-पधि-वस्त्र-पात्रादीनां
धर्मसाधनानां ग्रहणायाश्चो-द्गमोत्पादनैषणा दोषवर्जन मेषणासमिति रिति । उक्तञ्च-
'उत्पादनो-द्गमैषण-धूमाऽङ्गार-प्रमाण-कारणतः ।

સંયોજનાચ પિણ્ડ શોધયતા મેષણાસમિતિ-૧૧૥૥ ઇતિ ।

રજોહરણપાત્રચીવરાદીનાં-પીઠફલકાદીનાશ્ચાઽઽવશ્યકાર્થમ્ - ઉદયકાલે
વિલોકય, પ્રમુજ્ય ચ ગ્રહણ-સ્થાપનરૂપાઽઽજ્ઞાનનિષ્કેપણામમિતિ રુચ્યતે ઉક્તશ્ચ-
કર નિરવંચ એવં આગમાનુકૂલ સત્ય તથા અસત્યામૃષા (વ્યવહાર)
ભાષા બોલને વાણે સાધુ કી ભાષાસમિતિ હોતી હૈ ॥૨॥

इस प्रकार आवश्यक कार्य के लिए, सत्तरह प्रकार के संयम के लिए
सामने चार हाथ प्रमाण भूमि का निरीक्षण करते हुए उपयोग पूर्वक
धीरे-धीरे गमन करना ईर्यासमिति है । हित, मित, असंदिग्ध अन-
वद्य और नियत अर्थवाली भाषा का प्रयोग करना भाषासमिति है ।
अन्न, पानी, रजोहरण आदि उपधि, वस्त्र, पात्र आदि धर्मोपकरणों में
उद्गम, उत्पादन एवं एषणा के दोषों से बचना एषणासमिति है ।
कहा भी है-‘जो सुनि उत्पादना, उद्गम, एषणा, धूम, अंगार, प्रमाण
कारण, संयोजना आदि दोषों से विशुद्ध पिण्ड ग्रहण करता है, वह
एषणा समिति से सम्पन्न होता है । १॥

રજોહરણ, પાત્ર, વસ્ત્ર, પીઠ, પાટા આદિ નો અવશ્યક પ્રયોજન
કે લીધે ઉદયકાલ મેં અજ્ઞાન કરકે એવં પ્રમાર્જન કરકે ગ્રહણ કરના

નિરવંચ તથા આગમ-અનુકૂળ સત્ય તથા અસત્ય મૃગા (વ્યવહાર) ભાષા-
બોલનારા સાધુની ભાષા સમિતિ છે ॥૨॥

આવી રીતે આવશ્યક કર્મને માટે, સત્તર પ્રમાણના સંયમ માટે સામેની
ચાર હાથ-પ્રમાણ ભૂમિનું નિરીક્ષણ કરતા થકા, ઉપયોગ પૂર્વક ધીમે-ધીમે
ગમન કરવું ઈર્યાસમિતિ છે, હિત, મિત, અસંદિગ્ધ, અનવદ્ય અને નિયત
અર્થવાળી ભાષાનો પ્રયોગ કરવો ભાષાસમિતિ છે. અન્નપાણી રજોહરણ
આદિ ઉપધિ, વસ્ત્ર, પાત્ર આદિ ધર્મોપકરણોમાં તથા ઉપાશ્રયમાં ઉદ્ગમ
ઉત્પાદના તથા એષણના દોષોથી બચવું એષણાસમિતિ છે કહ્યું પણ છે-‘જો
સુનિ ઉત્પાદના, ઉદ્ગમ, એષણાધૂમ, અંગાર પ્રમાણ કારણ સંયોજના આદિ
દોષોથી ‘વિશુદ્ધ પિણ્ડ’ ગ્રહણ કરે છે તે એષણાસમિતિની સમ્પન્ન હોય છે.

રજોહરણ, પાત્ર, વસ્ત્ર પીઠ પાટ વગેરેને આવશ્યક પ્રયોજન માટે
ઉદયકાળમાં અવલોકન કરીને અને પ્રમાર્જન કરીને લે તથા મુકે આદાન

‘न्यासाधिकरण दोषान्-परिहृत्य दयापरस्य निक्षिपतः ।

‘न्यासे समिति रथादाने च-उथैवादानस्य-॥१॥ इति,

एवं-स्थण्डिले त्रसस्थावरमाणिरहिते विलोक्य प्रमृज्य च मूत्रपुरीषादीनां परिष्ठापनं-परिष्ठापनिकासमिति रुच्यते । तथा चोक्तम्—

‘न्यासादानसमित्या व्युत्सर्गे चापि वर्णिता समितिः

सूत्रेक्तेन च विधिना व्युत्सृजतोऽर्थं प्रतिष्ठाप्यम् ॥१॥

‘एवं साधो नित्यं-यतमानस्याऽप्रमत्तयोगस्य ।

मिथ्यात्वा विरति-मृत्ययं निरुद्धं भवति कर्म-॥२॥ इति ।

या रखना आदाननिक्षेपणा समिति है । कहा भी है-जो साधु धरने-उठाने सम्बन्धी दोषों का परिहार करके, दयापरायण होकर अपने उपकरणों को धरता या उठाता है, वह आदाननिक्षेपण समिति से सम्पन्न कहलाता है ॥१॥

इसी प्रकार त्रस और स्थावर जीवों से रहित भूमि का प्रतिलेखन और प्रमाजन करके मलमूत्र आदि का त्याग करना परिष्ठापनिका समिति है । कहा भी है—

रखने उठाने में तथा मल-मूत्र आदि का त्याग करने में भी समिति-यतनापूर्वक प्रवृत्ति का उपदेश किया गया है । परिष्ठापनीय पदार्थ को जो शास्त्रोक्त विधि से परठता है, वह इस समिति से युक्त कहलाता है ॥१॥

इस प्रकार यतना पूर्वक प्रवृत्ति करने वाले और प्रमादयोग से रहित साधु के मिथ्यात्व और अविरति के निमित्त से आने वाले कर्मों का निरोध हो जाता है ॥२॥

निक्षेपणसमिति છે. કહ્યું પણ છે-‘જે સાધુ મુકવા ઉપાડવા સંબંધી દોષોના ત્યાગ કરીને, દયાપરાયણ થઈને પોતાના ઉપકરણો મુકે અથવા ઉપાડે, તે આદાન નિક્ષેપણસમિતિથી સમ્પન્ન કહેવાય છે ॥૧॥

એવી જ રીતે ત્રસ અને સ્થાવર જીવો વિહેણી જમીનનું પડિલેહન તેમજ પ્રમાજન કરીને વડીનીતિ-કધુનીતિ વગેરેના ત્યાગ કરવો (પરઠવવા) પરિષ્ઠાપનિકાસમિતિ છે. કહ્યું પણ છે-

લેવા-મુકવામાં મળ-મૂત્ર વગેરેના ત્યાગ કરવામાં પણ સમિતિ-યતના પૂર્વક પ્રવૃત્તિ-નો ઉપદેશ આપવામાં આવ્યા છે. પરિષ્ઠાપનીય પદાર્થને જે શાસ્ત્રોક્ત વિધિથી પરઠે છે તે આ સમિતિથી સમ્પન્ન કહેવાય છે. ॥૧॥

આ મુજબ જતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ કરનારા અને પ્રમાદયોગ રહિત સાધુના મિથ્યાત્વ અને અવિરતિના નિમિત્તથી આવનારા કર્મોનો નિરોધ થઈ જાય છે,

ઉક્તશ્ચ સમવાયાંગે ૫-સમવાદૈ-‘પંચ સમિર્દૌ ધણત્તાઓ’ તં જહા
 ર્દૌરિયા સમિર્દૌ, આત્માસમિર્દૌ, એસનામ્મિર્દૌ, આયાણમંડામત્તનિક્ષે-
 ણાસમિર્દૌ, ઉચ્ચારપ્રસવણશ્લેષ્મસિંધાણજલ્લપરિઘાવણિયા સમિર્દૌ
 इति पञ्च सप्तितयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणा-
 समिति, आदानभाण्डाऽमत्र निक्षेपणासमिति, उच्चारप्रसवणश्लेष्मसिंघाण-
 जल्लपरिघावणिकासमिति इति । ३॥

મૂલમ્—અસુહ જોગનિગ્ગહેણં અત્તસ્સ ગોવણં ગુત્તી ॥૪॥

છાયા--અશુ મયોગનિગ્ગહેણાઽઽત્મનો ગોપનં ગુત્તિઃ-’ ૧૪।

તત્ત્વાર્થદીપિકા--પૂર્વસૂત્રે-કર્માસ્રવનિરોધલક્ષણસ્ય સંવરસ્ય કારણભૂતેષુ
 પञ्चऽपथमः समितिरूपः उपायः प्ररूपितः, सम्प्रति-तस्यैव द्वितीय कारणभूताया
 गुप्तेः स्वरूपं प्ररूपयितुमाह-‘असु मज्जोगनिगगहेणं अत्तस्स गोवणं गुत्ती’

સમવાયાંગસૂત્ર કે પાંચવેં સમવાય મેં કહ્યા છે-સમિતિયાં પાંચ
 કહી ગઈ છે, તે સ્વ પ્રકાર છે-ઈર્યાસમિતિ, ભાષાસમિતિ, એષણાસમિતિ
 આદાનભાણ્ડામત્ર નિક્ષેપણાસમિતિ, ઉચ્ચારપ્રસવણ શ્લેષ્મસિંધાણ
 જલ્લપરિઘાવણિકા સમિતિ । ૩॥

‘અસુહજોગનિગ્ગહેણં’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—અશુભ યોગ કા નિરોધ કરકે આત્મા કા ગોપન કરના
 ગુપ્તિ કહલાતા હૈ ॥૪।

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ સૂત્ર મેં કર્મોં કે આસ્રવ નિરોધ લક્ષણ વાલે
 સંવર કે પાંચ કારણોં મેં સે પ્રથમ કારણ સમિતિ કા પ્રરૂપણ કિયા
 ગયા અથ્વા દૂસરે કારણ ગુપ્તિ કે સ્વરૂપ કા પ્રતિપાદન કરતે હૈ—

અશુભ યોગ કા અર્થાત્ મજ્જ વચન ઔર કાય કે અપ્રશસ્ત

સમવાયાંગસૂત્રના પાંચમાં સમવાયમાં કહ્યું છે-સમિતિઓ પાંચ કહે-
 વામાં આવી છે તે આ મુજબ આદાન ભાણ્ડામત્ર નિક્ષેપણાસમિતિ ઉચ્ચાર
 પ્રસવણ શ્લેષ્મસિંધાણજલ્લપરિઘાવણના સમિતિ ॥૩॥

‘અસુહજોગનિગ્ગહેણં’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—અશુભ યોગનો નિરોધ કરીને આત્માનું ગોપન કરવું (રક્ષણ)
 ગુપ્તિ કહેવાય છે.

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં કર્મોના આસ્રવના નિરોધ લક્ષણવાળા
 સંવરના પાંચ કારણોથી પ્રથમ કારણ સમિતિની પ્રરૂપણ કરવામાં આવી હવે
 બીજા કારણ ગુપ્તિના સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

અશુભયોગનો અર્થાત્ મન વચન અને કાયના અપ્રશસ્ત વ્યાપારના

इति, अशुभयोगस्य कायिक-३-वाचिक-२ मानसिक ३ कर्मलक्षणस्य योगनिग्रहो निरोधो-निवृत्तिः अशुभयोगनिग्रहः विषयसुखभोगाऽभिलाषार्थं प्रवृत्तिनिषेधः, तेनाऽऽत्मनो गोपनं संरक्षणं गुप्तिः, अशुभ मानसिकादि योगनिग्रहे सति-आर्द्र रौद्रध्यानलक्षणसंक्लेशस्य प्रादुर्भावो न भवतीति भावः, तस्मिन्-तथाविध संक्लेश प्रादुर्भावाभावे सति कर्मास्त्रद्वारसंवरणं भवति, तेनाऽऽत्मनो गोपनं संरक्षणं गुप्ति इत्युच्यते । सा च गुप्तिस्त्रिधा मनोगुप्तिः-वचनगुप्तिः कायगुप्तिश्चेति तत्र-विषयसुखभिलाषार्थप्रवृत्तिनिषेधाय सम्यगिति विशेषणं बोध्यम् । एवञ्च-वचोगुप्तिश्चतुर्विधा सत्या-१ मृषा-२ सत्यामृषा ३ असत्यामृषा-४ चेति, तत्र सत्पदार्थं कथनरूपवचोयोग विषया सत्या=वचोगुप्तिः १ तद् विपरीत-

व्यापार के निरोध से आत्मा को गोपन रक्षण करना गुप्ति कहलाता है । तात्पर्य यह है कि मन आदि के व्यापार का निग्रह करने से आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान रूप संक्लेश के उत्पन्न होने से कर्मों के आस्रव का द्वार रुक जाता है, इस कारण अशुभ योग से आत्मा का गोपन करना गुप्ति है और वह संवर का कारण है ।

गुप्ति तीन प्रकार की है-मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति । विषय सुख की अभिलाषा से मनोयोग आदि के व्यापार को रोकना गुप्ति समझी जाय, अतएव यहां 'सम्यक्' विशेषण और समझ लेना चाहिए ।

वचनगुप्ति चार प्रकार की है-(१) सत्या (२) मृषा (३) सत्यामृषा और (४) असत्यामृषा । सत्पदार्थ का कथन रूप वचनों का निग्रह करना सत्यवचन गुप्ति है । उससे विपरीत वचनयोग विषयक मृषा

निरोधથી આત્માનું ગોપન (રક્ષણ) કરવું ગુપ્તિ કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે મન વગેરેના વ્યાપારને નિગ્રહ કરવાથી અર્તધ્યાન અને રૌદ્રધ્યાન રૂપ સંક્લેશ ઉત્પન્ન થતો નથી. સંક્લેશના ઉત્પન્ન નહીં થવાથી કર્મોના આસ્રવનું આગમન રોકાઈ જાય છે. આથી અશુભયોગથી આત્માનું ગોપન કરવું-રક્ષણ કરવું-ગુપ્તિ છે અને તે સંવરનું કરણ છે.

ગુપ્તિ ત્રણ પ્રકારની છે-મનोगुप्ति, વચનगुप्ति અને કાયगुप्ति વિષય સુખની અભિલાષાથી મનોયોગ આદિના વ્યાપારને રોકવાને ગુપ્તિ સમજવી જોઈએ આથી અહીં-સમ્યક્ વિશેષણ સમજવું જોઈએ.

વચનगुप्ति ચાર પ્રકારની છે-(૧) સત્યા (૨) મૃષા (૩) સત્યામૃષા અને (૪) અસત્યામૃષા સત્યપદાર્થના કથનરૂપ વચનોના નિગ્રહ કરવો સત્યવચન ગુપ્તિ છે એનાથી વિપરીત વચનયોગ વિષયક મૃષા વચનगुप्ति છે. સત્યાસત્ય

ત્રયોયોગ વિષયા મૃષા ૨ ઉભયાત્મક વચોયોગવિષયા સત્યામૃષા ૩, ઉભયસ્વભાવ-
રહિત વચોવ્યાપારરૂપા વચોયોગવિષયાઽસત્યમૃષા વચોગુપ્તિઃ ૪ એવં-મનોગુપ્તિરપિ,
સત્યા-મૃષા સત્યામૃષા અસત્યામૃષા ચિન્તનરૂપભેદેન ચતુર્વિધા । વાયગુપ્તિરપિ
સત્યાદિભેદેન ચતુર્વિધા કાયવ્યાપારરૂપ કાયયોગવિષયા-સત્યા, મૃષા, સત્યામૃષા,
ઽસત્યા મૃષા ભાવેન કાયવ્યાપારઃ કાયગુપ્તિઃ । ઇયમનેકધા-રથાન નિષદન ત્વગ્વ-
ર્તનો લલંચનપલંચનેન્દ્રિયયોજનસંરમ્ભસમારમ્ભપ્રવૃત્તિનિવૃત્તિભેદાત્ । एतान् भेदाना-
શ્રિત્યાઽઽત્થનઃ સમ્યક્નય્યા સંરક્ષણ રૂપા ત્રિવિધા ગુપ્તિ રુચ્યતે । તથા ચોક્તમ્—

વચન ગુપ્તિ હૈ । સત્યાસત્ય વચનોં કા નિરોધ સત્યામૃષા વચનગુપ્તિ હૈ
और जिन्हें सत्य भी न कह सकें और असत्य भी न कह सकें ऐसे
વ્યાવહારિક વચનયોગ કા નિરોધ હોના અસત્યામૃષા વચનગુપ્તિ હૈ ।

મનોગુપ્તિ કે બી ચાર ભેદ હૈં-સત્યા, મૃષા, સત્યામૃષા ઓર
અસત્યામૃષા । વચનગુપ્તિ મેં વચન કે પ્રયોગ કા નિષેધ હોતા હૈ ઓર
મનોગુપ્તિ મેં સત્ય આદિ કે ચિન્તન કા ।

કાયગુપ્તિ બી પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે=સત્ય આદિ કે ભેદ સે ચાર પ્રકાર
કી હૈ અથવા હસકે અનેક ભેદ હૈં, खड़ा होना, बैठना, छेटना,
लुप्त होना, कूटना, इन्द्रिययोजन, संरम्भ समारम्भ सम्बन्धी प्रवृत्तिको
રોકના, यह सब कાયगुपति है ।

इन सब भेदों की अपेक्षा से आत्माका सम्यक् प्रकार से संरक्षण
करना तीन प्रकार की गुपति है । कहा भी है—‘समस्त कल्पनाओं के

वचनोना निरोध सत्यामृषा वचनगुपति છે અને જેને સત્ય પણ ન કહી
શકાય અને અસત્ય પણ ન કહી શકાય એવા વ્યાવહારિક વચનયોગને
નિરોધ થયે અસત્યામૃષા વચન ગુપ્તિ છે.

મનોગુપ્તિના પણ ચાર ભેદ છે-સત્યા, મૃષા, સત્યામૃષા અને અસત્યા
મૃષા વચનગુપ્તિમાં વચનના પ્રયોગને નિષેધ હોય છે અને મનોગુપ્તિમાં
સત્ય આદિના ચિન્તનના.

કાયગુપ્તિ પણ પૂર્વોક્ત પ્રકારથી-સત્ય આદિના ભેદથી ચાર પ્રકારની
છે અથવા એના અનેક ભેદ છે. ઉભા થવું બેસવું સુવું, ભૂખ્યા રહેવું,
હૃદયું ઇન્દ્રિયયોજન, સંરંભ, સમારંભ સંબંધી પ્રવૃત્તિઓને રોકવી આ બધું
‘કાયગુપ્તિ’ છે.

આ તમામ ભેદોની અપેક્ષાથી આત્માનું સમ્યક્ પ્રકારથી સંરક્ષણ કરવું

‘વિમુક્તકલ્પનાજાલં સમત્વે સુપ્રતિષ્ઠિતમ્ ।

આત્મારામં મનસ્તજ્ઞૈર્મનો ગુપ્તિ રુદાહતા ॥૧॥

ઉપસર્ગપ્રસન્નેપિ કાયોત્સર્ગજુષો મુનેઃ ।

સ્થિરીભાવઃ શરીરસ્ય કાયગુપ્તિર્નિગચ્યતે ॥૨॥

શયનાઽસનનિષ્કેપાઽદાનસંક્રમણેષુ ચ ।

સ્થાનેષુ ચૈહાનિયમઃ કાયગુપ્તિર્નુ સા પરા ॥૩॥

અકુશલ મનો વાક્-કાયવ્યાપારાન્ નિરુદ્ધ્ય કુશલાનાં મનોવાક્ કાય વ્યા-
પારાણા મુદીરણં મનોવાકાયગુપ્તિરિત્યર્થઃ ॥૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વં તાવદ્ આસ્રવનિરોધલક્ષણસંવરસ્ય સમિત્યાદિષુ
પશ્વસુ હેતુષુ પ્રથમઃ સમિતિરુપો હેતુઃ પ્રતિપાદિતઃ, સંપ્રતિ-સંવરસ્ય દ્વિતીયો-
સમૂહ સે રહિત, સમભાવ મેં પ્રતિષ્ઠિત ઔર આત્મા મેં રમણ કરને
વાલે મન કો મનોગુપ્તિ કહો હૈ ॥૧॥

‘ઉપસર્ગ’ ઉપસ્થિત હોને પર ખી મુનિ કાયોત્સર્ગ સે યુક્ત હોકર
અપને શરીર કો સ્થિર રસ્વતા હૈ, યહ ઉસકી કાયગુપ્તિ હૈ ॥૨॥

‘શયન’ આસન, રાવને, ઉઠાને ચલને-ફિરને યા સ્થિર રહને-મેં
શારીરિક ચેષ્ટાઓં કા નિયમન કરના કાયગુપ્તિ હૈ ॥૩॥

આશય યહ હૈ કિ અકુશલ (અશુભ) મન, વચન ઔર કાય કે
વ્યાપારોં કો રોક કર મન વચન કાય કે કુશલ વ્યાપાર કરના
ગુપ્તિ કહલાતા હૈ ॥૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—સંવર કે સમિતિ આદિ જો પાંચ કારણ ક્ષતલાપ્ત
ગય હૈ, ઉન મેં સે સમિતિ કે સ્વરૂપ કા પ્રતિપાદન કિયા જા ચુકા,

ત્રણ પ્રકારની ગુપ્તિ છે. કહ્યું પણ છે—‘સમસ્ત કલ્પનાઓના સમૂહથી રહિત
સમલાવમાં પ્રતિષ્ઠિત અને આત્મામાં પ્રમણ કરવાવાળા મનને મનોગુપ્તિ
કહેવ છે ॥૧॥

ઉપસર્ગ આવી પડ્યા છતાં પણ મુનિ કાયોત્સર્ગથી યુક્ત થઈને પોતાનાં
શરીરને સ્થિર રાખે છે, આ તેની કાયગુપ્તિ છે. ॥૨॥

શયન, આસન, લેવા-મુકવામાં, ચાલવા કરવા અથવા અડગ રહેવા માટે
શારીરિક ચેષ્ટાઓનું નિયમન કરવું કાયગુપ્તિ છે ॥૩॥

કહેવાનું એ છે કે અકુશળ (અશુભ) મન, વચન અને કાયાના વ્યાપારોને
રોકીને મનવચન કાયાનો કુશળ વ્યાપાર કરવો ગુપ્તિ કહેવાય છે. ॥૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—સંવરના સમિતિ આદિ જે પાંચ કારણ અર્તા
વવામાં આવ્યા છે, તેમાંથી સમિતિના સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવી

પાયથુતાં ગુપ્તિ પ્રરૂપયિતુમાહ—‘અસુહજોગનિગ્રહેણં અચાસ્સ મોવણં
ગુત્તી’ इति । અશુભયોગનિગ્રહોઽશુભ કાયાદિયોગનિરોધઃ, તેનાઽઽમનો
ગોપનં-સંરક્ષણં ગુપ્તિઃ, મત્તાર્ણવાદ આત્મસંરક્ષણરૂપોચ્યતે । મનોવ્યાપારો વાગ્-
વ્યાપારઃ-કાયવ્યાપારઃ યોગા સ્તેષાં સ્વલ્પશુભાનાં મનો વાકાયયોગાનાં
નિગ્રહો નિવ્યાપારતા ગુપ્તિરિત્યુચ્યતે, ન તુ પ્રત્યગ્રાપરાધસ્યાપિ સ્તેનસ્યેવ ગાઢ-
બન્ધનવદ્વસ્યાઽત્યન્તપીડિતચિત્તપ્રદેશસ્ય પરાધીનાત્મનોઽનિચ્છતો યોગનિગ્રહ
દ્રશ્યતે । એવમ્-સાવધ સંકલ્પાદિભેદભિન્નં મનોયોગમ્ ૧ સત્યામૃષાદિ ભેદભિન્નં
વાયયોગમ્-૨ ઔદારિક-વૈક્રિયાઽઽહારક-તૈજસકાર્મણભેદભિન્નં કાયયોગ-૩
વ પ્રશમ-સંવેગ-નિવેદાઽઽસ્તિકયાઽનુકમ્પાઽભિવ્યક્તિલક્ષણસમ્યગ્દર્શનં પૂર્વકં

અથ દુસરે કારણ ગુપ્તિ કા પ્રતિપાદન કરતે હૈ—

અશુભ કાયયોગ આદિ સે આત્મા કી રક્ષા કરના ગુપ્તિ હૈ ।
મન, વચન ઔર કાય કા વ્યાપાર યોગ કહલાતા હૈ । इन मन, वचन
और काय के अशुभ व्यापार को रोक देना गुप्ति है । तीव्र अपराध
करनेवाले, गाढ़े बन्धनों से बद्ध, अत्यन्त पीडित चित्तवाले, पराधीन
ચોર કે યોગોં કા ભી નિગ્રહ કિયા જાતા હૈ, કિન્તુ ઉસે ગુપ્તિ નહીં
સમજના ચાહિયે । કર્મોં કી નિર્જરા કે ઉદ્દેશ્ય સે સ્વેચ્છા પૂર્વક યોગોં
કા જો નિગ્રહ કિયા જાતા હૈ, વહી સમ્યક્ ગુપ્તિ કહલાતી હૈ । इस
प्रकार सावध संकल्प आदि के भेदों वाले मनोयोग को, सत्यामृषा
आदि भेदों वाले वचनयोग को, औदारिक काययोग, वैक्रियकाययोग
आहारककाययोग, कर्मणकाययोग आदि भेदों वाले काययोग को
प्रशम, संवेग, निवेद, आस्तिक्य और अनुकम्पा की अभिव्यक्ति लक्षण

ગયું હવે બીજા કારણ ગુપ્તિનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

અશુભ કાયયોગ આદિથી આત્માની રક્ષા કરવી ગુપ્તિ છે. મન, વચન અને
કાયના વ્યાપાર યોગ કહેવાય છે. આ મન, વચન અને કાયના અશુભ વ્યાપારો
રોકવા ગુપ્તિ છે. લયંકર અપરાધ કરવાવાળો, ગાઢ બન્ધનોથી બંધાયેલા
અત્યન્તપીડિત ચિત્તવાળો, પરાધીન ચોરના યોગોનો પણ નિગ્રહ કરી શકાય
છે પરંતુ તેને ગુપ્તિ સમજવાની ભૂલ કરવી ન જોઈએ. કર્મોની નિર્જરાના
ઉદ્દેશથી સ્વેચ્છાપૂર્વક યોગોનો જે નિગ્રહ કરવામાં આવે છે તેજ સમ્યક્ગુપ્તિ
કહેવાય છે. આ રીતે સાવધ સંકલ્પ વગેરેના ભેદોવાળા મનોયોગને, સત્યા,
મૃષા આદિ ભેદોવાળા વચનયોગને ઔદારિકકાયયોગ, વૈક્રિય કાયયોગ, આહાર-
ક કાયયોગ, કાર્મણકાયયોગ આદિ ભેદોવાળા કાયયોગને પ્રશમ, સંવેગ,

यथावदवगम्य भाषतः खलु' एवमेते योगाः कर्म न्याय परिणता सन्ति, अतः कर्मनिर्जरायै तेषां योगानां कर्मबन्धाय परिणतानां त्रिविधानां मूलभेदानामुत्तर-भेदानाञ्च योगानां निग्रहः स्ववशे व्यवस्थापनं स्वाच्छन्दप्रतिषेधेन-मोक्ष-मार्गान्तुकूल परिणति गुप्तिः, अत्यन्त भयजनकसंसार कर्मबन्धन रूप घातक-शत्रुतः-आत्मनः संरक्षण मितिभावः । सा च गुप्ति त्रिधा भवति मनोगुप्तिः-वाग्गुप्तिः-कायगुप्तिश्च, तत्र मनोगुप्ति स्तावत् मनोगुप्तिः, उन्मार्ग विचार-णाद् आत्मनः संरक्षणम् संरक्षितं खलु मनो नात्मान मषहन्ति । एवं-वचोगुप्तिः कायगुप्तिरपि तथा च-मनोगुप्तिः सावचस्य सङ्कल्पस्य गहिताऽऽर्त-रौद्रध्यान

वाले सम्यग्दर्शन पूर्वक समीचीन रूप से जान कर और यह समझ करके कि इन योगों का परिणामन कर्मबन्ध का कारण है, अतएव कर्मों की निर्जरा के लिए मूल एवं उत्तर भेदों वाले इन योगों का निग्रह करना ही श्रेयस्कर है, इनकी प्रवृत्ति कर्मबन्ध का कारण है, इनको स्वाधीन करना, इनकी स्वच्छन्द प्रवृत्ति न होने देना और उन्हें मोक्षमार्ग की ओर प्रवर्तना गुप्ति है । तात्पर्य यह है कि अत्यन्त भय उत्पन्न करने वाले, संसार एवं कर्मबन्धन रूप घातक शत्रु से आत्मा का संरक्षण करना गुप्ति कहलाता है ।

गुप्ति तीन प्रकार की है-मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति । मनका गोपन करना अर्थात् उसे उन्मार्ग में जाने से रोककर आत्मा की रक्षा करना मनोगुप्ति है । गोपन किया हुआ मन आत्मा का हनन नहीं करता । वचनगुप्ति और कायगुप्ति भी इसी प्रकार समझ लेना चाहिए ।

निर्वेद, आस्तिकाय અને અનુ ભ્યાની અભિન્નિત લક્ષણવાળા સમ્યક્દર્શન પૂર્વક સમીચીન રૂપથી જાણીને અને એવું સમજીને કે આ યોગોનું પરિણમન કર્મબન્ધનું કારણ છે, આથી કર્મોની નિર્જરા કરવા માટે મૂળ તથા ઉત્તર ભેદોવાળા આ યોગનો નિગ્રહ કરવો એ જ શ્રેયસ્કર છે, એની પ્રવૃત્તિ કર્મબન્ધનું કારણ છે, એમને સ્વાધીન કરવા એમની સ્વચ્છન્દ પ્રવૃત્તિ ન થતા દેવી અને એમને મોક્ષમર્ગની દિશા તરફ વાળવા એ ગુપ્તિ છે - તાત્પર્ય એ છે કે અત્યન્ત ભય ઉત્પન્ન કરવાવાળા સંસાર તેમજ કર્મબન્ધ-રૂપ ઘાતક શત્રુથી આત્માનું રક્ષણ કરવું ગુપ્તિ કહેવાય છે.

ગુપ્તિ ત્રણ પ્રકારની છે-મનગુપ્તિ, વચનગુપ્તિ, અને કાયગુપ્તિ. મનનું ગોપન કરવું અર્થાત્ તેને ઉન્માર્ગ તરફ જતું રોકીને આત્માની રક્ષા કરવી મનગુપ્તિ છે. ગોપવામાં આવેલું મન આત્માનો ઘાત કરતું નથી. વચન-ગુપ્તિ અને કાયગુપ્તિ પણ આ રીતે જ સમજવાના છે

રૂપસ્ય, પાપયુક્તકર્મપરિચિન્તનસ્ય ચા નિરોધઃ કરણે પ્રવૃત્તિર્જનં, સરાગસંય-
માદિલક્ષણકુશલસંકલ્પાઽનુષ્ઠાનં ચા મનોગુપ્તિઃ, યેન ચા સંકલ્પેન ધર્મોઽનુરૂઢ્યતે
ચાર્વાશ્ચાઽધ્યવસાયઃ કર્મોઽચ્છેદાય શ્વતિ । તથાવિધ કુશલસંકલ્પો યા મનોગુપ્તિ-
ર્થયતિ । યદ્વા-સરાગસંયમાદૌ કુશલેઽપિ ન પ્રવૃત્તિઃ નાપિ-અંકુશલે સંપાર
હેતૌ પ્રવૃત્તિર્વા મનોગુપ્તિઃ, યોગનિરોધાવસ્થાયાં કુશલાકુશલસંકલ્પનિરોધાત્
તદવસ્થાયાં ધ્યાનસમ્યક્ત્વેન સકલકર્મક્ષયાર્થ એવ દ્વિ-આત્મનઃ પરિણામો ભવતી-
તિમાત્રઃ । એવં-વાગુપ્તિ સ્વલ્પ યાચના પૂછના પ્રશ્ન વ્યાક્રિયાદિપુ વાઙ્નિયપન-

સાવધ અર્થાત્ પાપમય સંકલ્પ ચા અર્થાત્ નિન્દિત આર્તધ્યાન
ઔર શૌદ્રધ્યાન કા અથવા પાપયુક્ત કર્મ કે ચિન્તન કા નિરોધ કર
દેના એસા કરને મેં હોનેવાલી પ્રવૃત્તિ કો ત્યાગ દેના અથવા સરાગ
સંયમ આદિ રૂપ શુભ સંકલ્પ કો અનુષ્ઠાન કરના મનોગુપ્તિ હૈ ।
જિસ સંકલ્પ સે ધર્મ કા અનુબન્ધ હોતા હૈ ઔર જો અધ્યવસાય કર્મો
કે ઉચ્છેદ કા કારણ હોતા હૈ, વૈસા શુભ સંકલ્પ કરના મનોગુપ્તિ હૈ ।
અથવા નતો સરાગ સંયમ અદિ શુભ અનુષ્ઠાન મેં પ્રવૃત્તિ કરના ઔર
ન સંસાર કે કારણભૂત અશુભ કર્મ મેં પ્રવૃત્તિ કરના મનોગુપ્તિ હૈ ક્યોંકિ
જય યોગ કા નિરોધ હો જાતા હૈ તસ અવસ્થા મેં ન શુભ સંકલ્પ રહતા
હૈ ઔર ન અશુભ સંકલ્પ હી શેષ રહતા હૈ । તસ અવસ્થા મેં આત્મા કા
જો પરિણામ હોતા હૈ, સદ્ વ્યક્ત કર્મો કે ક્ષય કે લિપ્ત હી હોતા હૈ ।

યાચના, પૂછના ઔર ઉત્તર દેના આદિ વાચનિક ક્રિયાઓ મેં

સાવધ અર્થાત્ પાપમય સંકલ્પનું અર્થાત્ નિન્દિત આર્તધ્યાન અને
શૌદ્રધ્યાનનું અથવા પાપયુક્ત કર્મના ચિન્તનનો નિરોધ કરવો, આમ કરવા
માટે થતી પ્રવૃત્તિઓનો ત્યાગ કરવો અથવા સરાગ સંયમ આદિ રૂપ શુભ
સંકલ્પનું અનુષ્ઠાન કરવું મનોગુપ્તિ છે. જે સંકલ્પથી ધર્મનો અનુબંધ થાય
છે અને જે અધ્યવસાય કર્મોના ઉચ્છેદનું કારણ હોય છે, એવો શુભ સંકલ્પ
કરવો મનોગુપ્તિ છે. અથવા ન તો સરાગ સંયમ આદિ શુભ અનુષ્ઠાનમાં
પ્રવૃત્તિ કરવી અથવા ન સંસારના કારણભૂત અશુભ કર્મમાં પ્રવૃત્તિ કરવી
મનોગુપ્તિ છે. કારણ કે જ્યારે યોગનો નિરોધ થઈ જાય છે તે અવસ્થામાં
નથી શુભ સંકલ્પ રહેતો અથવા ન તો અશુભ સંકલ્પ પણ બાકી રહે છે. એ
અવસ્થામાં આત્માનું જે પરિણામ થાય છે, તે સકળ કર્મોના ક્ષય માટે જ થાય છે.

માગવું, પૂછવું અને જવાબ દેવો-વગેરે વાચનિક ક્રિયાઓમાં વચનનું

रूपा, मौनंवा-वाग्गुप्ति रुच्यते । तत्र-याचनं तावत् भोजनो-पधि-शय्यादीनां मन्यन्तो गृहस्थादेः प्रार्थनम्, तस्मिन् विषये वाङ्नियमने सति सदोरवमुख-वस्त्रिकावद्धमुखभागस्य प्रवचनविहित वाक्यशुद्धिमनुसृत्य भाषणं कुर्वाणस्य वाग्गुप्तिर्भवति, एवं-मार्गं गमनादिविषयं प्रच्छन्नं कुर्वतः आगमविध्यनुसारिणो वाङ्नियमनेन वाग्गुप्तिः, एवं-‘धर्ममुपदिशे’ति केनचित्-श्रावकेण पृष्ठः सन् सम्यगुपयुक्तः आगमोक्तरीत्या वाचक्षीत, अन्यद्वा सा साध्यभन्वद्वा पृष्ठः सन् लोकागमाविरोधेन समाधाय वराकुर्वीत, तथाविधः प्रच्छन्नादिविषयो वाग् नियमो वाग्गुप्ति रुच्यते । एवं-गौनेवाऽभाषण रूपे वचोगुप्ति भवति तथा चेत्तम्—

‘अनृतादिनिवृत्तिर्वा मौनं वा भवति वाग्गुप्तिः’ इति । मूलभेदतः स्त्रिविधेष्वशुभेषु योगेषु निगृहीतव्येषु काययोगनिग्रहरूपा कायगुप्तिः खलु—

वचन का नियमन करना या सर्वथा मौन धारण कर लेना वचन-गुप्ति है । इनमें से याचना का अर्थ है-गृहस्थ आदि किसी दूसरे से भोजन, उपधि-एवं उपाश्रय आदि की प्रार्थना-मांग-करना । उस विषय में वचन का नियमन होने पर मुख पर डोरा सहित मुखवस्त्रिका बांधने वाले एवं शास्त्रोक्त वचनशुद्धि का अनुसरण करके भाषण करने वाले साधु की वचनगुप्ति होती है । इसी प्रकार आगम की विधि का अनुसरण करने वाले एवं मार्गगमन संबंधी पृच्छा करने वाले पुरुष की वचन के नियमन से वचन गुप्ति होती है । मौन धारण करने से भी वचनगुप्ति होती है । कहा भी है-‘असत्य आदि वचन का त्याग करना अथवा मौन धारण करना वचनगुप्ति है ।’

मूल भेदों की अपेक्षा तीनों प्रकार के अशुभ योग निग्रह करने

नियमन करवुं अथवा सर्वथा मौनमत धारण करी लेवुं वचनगुप्ति छे. आमांथी भागवाने अर्थ छे-गृहस्थ आदि कोठ भील पासो लोअन उपधि तथा उपाश्रय आदिनी याचना मांगणी करवी करवी ते विषयमां वचननुं नियमन होवाथी मुख पर डोरा सहित मुखवस्त्रिका बांधवावाणा अने शास्त्रो-क्त वचनशुद्धिनुं अनुसरण करीने लापण करनारा स धुनी वचनगुप्ति होय छे. आवीज रीते आगमनी विधिनु अनुसरण करवावाणा तथा मार्गगमन संबंधी पृच्छा करवावाणा पुरुषनी वचनना नियमनथी वचनगुप्ति होय छे. मौन धारण करवाथी पण वचनगुप्ति थाय छे. कह्युं पण छे-‘असत्य आदि वचनने त्याग करवो अथवा मौन धारण करवुं वचनगुप्ति छे.

भूग लेहोनी अपेक्षा त्रणे प्रकारना अशुभयोग निग्रह करवाने योग्य

શયનાઽઽસનાદાનનિષેપ-સ્થાનસંવરણેષુ વિષયેષુ કાયકૃત ચેષ્ટારૂપકાયિક વ્યાપારસ્ય નિયમનમ્—‘એવં વર્તેત્યમ્ એવં ન વર્તેત્યમ્’ इत्येवं व्यवस्थारूपो बोध्यः । तथा चोक्तम्—

કાયક્રિયા નિવૃત્તિઃ કાયોત્સર્ગે શરીરગુપ્તિઃ સ્યાત્ ।

દોષેભ્યો વા હિન્ના-દિશ્યો વિરતિસ્તયોર્ગુપ્તિઃ ॥ इति । उक्तञ्चोत्तराध्ययने २४-अध्ययने पट्विंशति गायाम्—‘गुप्ती नियत्तणे वृत्ता, अशु-भत्येषु स्ववसो’ इति, गुप्ति नियन्त्रणे-उक्ता, अशुभस्थेषु सर्वशः इति । ४।

સૂત્રમ્—દસવિદે સમણધર્મસે, સ્વંતિ-મુક્તિ-અઝ્જવં-મદ્ધવ-લાઘવ-સચ્ચ-ત્તંજસ-તવ-ચિયાય-વંધવેરવાસમેયા ॥૫॥

છાયા-‘દશવિધઃ શ્રમણધર્મઃ, ક્ષાન્તિ-મુક્ત્યા-જંવ-માર્દવ-લાઘવ-સત્ય-સંયમ-તપ-સ્ત્યાગ-બ્રહ્મચર્યવાસમેદાત્—’ ॥૫॥

કે યોગ્ય હૈં, ઉનમ્ સે કાયયોગ કા નિગ્રહ કરના કાયગુપ્તિ હૈ અર્થાત્ શયન, આસન, ગ્રહણ, નિષેપણ, યજ્ઞા હોના, ચલના-ફિરના, ઇત્યાદિ શારીરિક ચેષ્ટા રૂપ કાયિક વ્યાપાર કા નિયમન કરના એવં ‘એસા કરના ચાહિયે ઓર એસા ન કરના ચાહિયે, હસ પ્રકાર કી વ્યવસ્થા કાયગુપ્તિ હૈ । કહા ખી હૈ—

‘કયોત્સર્ગ મ્ શારીરિક ક્રિયા કી નિવૃત્તિ કો અથવા હિંસા આદિ દોષો સે વિરતિ કો કાયગુપ્તિ કહતે હૈ ।’

ઉત્તરાધ્યયનસૂત્ર કે ચૌવીસવેં અધ્યયન કી ૨૬ વીં ગાથા મ્ કહા હૈ—‘અશુભ વિષયો મ્ પૂર્ણ રૂપેણ વ્યાપાર કો રોક દેના ગુપ્તિ હૈ ॥૪॥ ‘દસવિદે સમણધર્મસે’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—યતિધર્મ દસ પ્રકાર કા હૈ—(૧) ક્ષમા (૨) મુક્તિ (૩)

છે તેમાંથી કાયયોગનો નિગ્રહ કરવો કાયગુપ્તિ છે અર્થાત્ શયન, આસન, ગ્રહણ, નિષેપણ, ઉભાથવું હલન-ચલન ઇત્યાદિ શારીરિક ચેષ્ટારૂપ કાયિક વ્યાપારનું નિયમન કરવું અને ‘આમ કરવું જોઈએ અને આમ ન કરવું જોઈએ’ એ પ્રકારની વ્યવસ્થા કાયગુપ્તિ છે. કહ્યું પણ છે—

કાયોત્સર્ગમાં શારીરિક ક્રિયાની નિવૃત્તિને અથવા હિંસા આદિ દોષોથી વિરતિને કાયગુપ્તિ કહે છે.

ઉત્તરાધ્યાયન સૂત્રના ચૌવીસમાં અધ્યયનની ૨૬મી ગાથામાં કહ્યું છે—‘અશુભ વિષયોમાં પૂર્ણ રૂપથી વ્યાપારને રોકવો ગુપ્તિ છે. ॥૪॥

‘દસવિદે સમણધર્મસે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—યતિધર્મ દસ પ્રકારના છે—(ક્ષમા) (૨) મુક્તિ (૩) આજ્ઞવ

તત્ત્વાર્થદીપિકા-દશવિધઃ સ્વલુ મૂલોત્તરગુણયોગાત્ પ્રકૃષ્ટઃ શ્રમણધર્મોઽ-
નગારધર્મો વર્તેતે, ક્ષાન્તિ-મુક્ત્યા-જેવ-માર્દવ-લાઘવ-સત્ય-સંયમ-તપ સત્યાગ
બ્રહ્મચર્યવાસપેદાત્ । તત્ર-શરીરસ્થિતિ નિર્વાહાયાઽઽકારાદિ યાચનાર્થં પરગૃહ-
મુર્ખગચ્છતઃ શ્રમણસા દુષ્ટજનાઽઽક્રોશ-મહસનાઽપમાન-તાડનાદિ સત્ત્વેઽપિ
તત્ત્વસહનમ્, કાલુષ્યોત્પાદાભાવઃ ક્ષાન્તિઃ વ્યપદિશ્યતે ૧ મમત્ત્વબુદ્ધિરાહિત્ય-
મુક્તિઃ, ઉપાત્તેષ્વપિ શરીરાદિષુ સંસ્કારાઽઽશક્તિનિરાસાય 'મમેદમ્' इत्येवं
ममत्वबुद्धि निवृत्ति रूपा-इति यावत् २ मृदुस्वभावः कायादियोगस्याऽकुटिलता

आर्जव (४) मार्दव (५) लाघव (६) सत्य (७) संयम (८) तप (९)
त्याग और (१०) ब्रह्मचर्य ॥५॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-મૂલ-ઉત્તર ગુણો કે યોગ સે શ્રમણધર્મ દસ
પ્રકાર કા હૈ-(૧) ક્ષાન્તિ (૨) મુક્તિ (૩) આર્જવ (૪) માર્દવ (૫)
લાઘવ (૬) સત્ય (૭) સંયમ (૮) તપ (૯) ત્યાગ ઓર (૧૦) બ્રહ્મચર્ય ।
इनका स्वरूप निम्न प्रकार है-

(૧) ક્ષમા-શરીરયાત્રા કા નિર્વાહ કરને કે લિષે આહાર આદિ કી
યાચના કરને કે લિષે પરાયે ઘર જાને વાલે સાધુ કો દુષ્ટ જનો કા
આક્રોશ (ઢાટ-ડપટ), પ્રહસન (અપહાસ), અપમાન, તાડન આદિ હોને
પર ખી ઉસે સહન કર લેના ઓર ચિત્ત મેં કલુષતા ઉત્પન્ન ન હોને
દેના ક્ષમા ધર્મ હૈ ।

(૨) મુક્તિ-મમત્ત્વભાવ ન હો મુક્તિ હૈ । અર્થાત્ પ્રાપ્ત અથવા
ગૃહીત શરીર આદિ કે પ્રતિ આસક્તિ કો દૂર કરને કે લિષે 'મમેદમ્'

(૪) માર્દવ (૫) લાઘવ (૬) સત્ય (૭) સંયમ (૮) તપ (૯) ત્યાગ અને
(૧૦) બ્રહ્મચર્ય. ॥૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-મૂળ-ઉત્તર ગુણોના યોગથી શ્રમણધર્મ દસ પ્રકારનો
છે-(૧) ક્ષાન્તિ (૨) મુક્તિ (૩) આર્જવ (૪) માર્દવ (૫) લાઘવ (૬) સત્ય
(૭) સંયમ (૮) તપ (૯) ત્યાગ અને (૧૦) બ્રહ્મચર્ય એમનું સ્વરૂપ નીચે
મુજબ છે (૧) ક્ષમા શરીર યાત્રાના નિર્વાહ માટે ભોજન વગેરેની યાચના
કરવા માટે પારકા ઘરે જનારા સાધુને દુષ્ટ જનોનો આક્રોશ (ધાક-ધમકી)
પ્રહસન, (મશકરી) અપમાન તાડન આદિ થતાં પણ તેને સહન કરી
લેવું અને ચિત્તમાં કલુષતા ઉત્પન્ન ન થવા દેવી ક્ષમાધર્મ છે.

(૨) મુક્તિ-મમત્ત્વભાવ ન હોવો મુક્તિ છે. અર્થાત્ પ્રાપ્ત અથવા
ગૃહીત શરીર આદિ તરફની આસક્તિને દૂર કરવાને માટે-મમેદમ્-આ માટે

સરલત્વ ડડનેત્વ ૩ જાતિકુળાદિમદાડહક્કારાદભિમાનાડમાત્રો માર્દવમ્ ૪ અત્ય-
ન્તલોભાન્નિવૃત્તિ લાઘવમ્ ૫ સન્તઃ પ્રાણિનઃ, પદાર્થાવા-મુનયોવા, તેભ્યો હિતં
સત્યમ્, ઉત્તમજનેષુ સત્સુ સમીચીનં યદ્વચનં તત્સત્યમ્ ઉચ્યતે, પ્રવ્રજિતેષુ શ્રમણેષુ
તદ્ગ્રંથેષુ ચ ધર્મોત્કૃષ્ટહણાર્થં સાધુ સત્યં જ્ઞાનચારિત્રાદિકં વહ્નિપિ કર્તવ્ય મિત્યેવ
અનુજ્ઞાવચનં સત્ય મુચ્યતે ૬ ઈર્યાસમિત્યાદિષુ વર્તમાનસ્ય પ્રાણાતિપાત પશ્ચેન્દ્રિય
જો દ્વિન્દ્રિય-વિપયપરિત્યાગઃ સંયમઃ । સાવચયોગાત્ સમ્યગુપરમણં વા સંયમઃ ।

‘યહ મેઝા હૈ’ હસ પ્રકાર મમતાભાવ કો ત્યાગ દેના મુક્તિ હૈ ।

(૩) આર્જવ-સ્વભાવ કી સરલતા અર્થાત્ કાયયોગ આદિ કી કુટિલતા કા અભાવ આર્જવ ધર્મ હૈ ।

(૪) માર્દવ-જાતિમદ, કુલમદ, ચલમદ, અહંકાર એવં અભિમાન કા ત્યાગ કરના માર્દવ હૈ ।

(૫) લાઘવ-લોભ કા સર્વથા ત્યાગ ।

(૬) સત્ય-સત્ અર્થાત્ પ્રાણિયોં, પદાર્થોં યા મુનિયોં કે લિયે જો હિતકર હો વહ સત્ય । ઉત્તમ જનોં મેં સમીચીન વચન સત્ય કહલાતા હૈ, શ્રમણોં મેં ઓર ઉનકે ભક્તોં મેં ધર્મ કી વૃદ્ધિ કે લિયે ‘જ્ઞાન ચારિત્ર આદિ સ્તૂત કરના યાહિયે’ હસ પ્રકાર કા અનુજ્ઞાવચન સત્ય હૈ ।

(૭) સંયમ-ઈર્યાસમિતિ આદિ મેં પ્રવર્તમાન સાધુ કા પાંચોં દ્વિન્દ્રિયોં કે ઓર મન કે વિષય કા ત્યાગ કર દેના સંયમ હૈ । અથવા સાવચયોગ સે સમ્યક્ પ્રકાર સે વિરત હોના સંયમ હૈ । અથવા જિસકે

છે’ એ પ્રકારે મમતા લાવનો ત્યાગ કરવો મુક્તિ છે

(૩) આર્જવ-સ્વભાવની સરળતા અર્થાત્ કાયયોગ આદિની કુટિલતાનો અભાવ આર્જવધર્મ છે.

(૪) માર્દવ-જાતિમદ, કુળમદ, બળમદ, અહંકાર તથા અભિમાનનો ત્યાગ કરવો માર્દવ છે.

(૫) લાઘવ-લોભનો સર્વથા ત્યાગ.

(૬) સત્ય-સત્ અર્થાત્ પ્રાણિઓ, પદાર્થો અથવા મુનિરાજો માટે જે હિતકર હોય તે સત્ય, ઉત્તમ જનોમાં સમીચીન વચન સત્ય કહેવાય છે, શ્રમણોમાં અને તેમના ભક્તોમાં ધર્મની વૃદ્ધિ માટે ‘તીવ્ર ચારિત્ર આદિ પ્રૂમ કરવા જોઈએ’ આ પ્રકારનું અનુજ્ઞાવચન સત્ય છે.

(૭) સંયમ-ઈર્યાસમિતિ આદિમાં પ્રવર્તમાન સાધુનું પાંચે દ્વિન્દ્રિયોના તથા મનના વિષયનો ત્યાગ કરી દેવો સંયમ છે. અથવા સાવચ યોગથી સમ્યક્ પ્રકારથી વિરત થવું સંયમ છે. અથવા જેના દ્વારા આત્મા પાપ-

યદ્વા-સંયમ્યતે નિવૃત્યતે નિયમતઃ પાપસમારમ્ભા દાત્માઽનેનૈતિ સંયમઃ । સ ચ પૃથિવીકાય, સંયમાદિ ભેદેન સપ્તદશવિધઃ । સવિસ્તર મૈત્રસ્ય વ્યાખ્યાનં દશવૈકાલિકસૂત્રે પ્રથમાધ્યયનસ્ય પ્રથમસૂત્રે મત્કૃતાયામ્ ‘આચારમણિમંજૂષ ડઽખ્યાયાં વ્યાખ્યાયાં દિલોકનીયમ્ ૭ તપતિ-દહતિ, તાપયતિવાઽઽટવિધં કર્મેતિ તપઃ ૮ ત્યજનં ત્યાગઃ સંવિગ્નેકસામ્ભોગિકાનાં ભક્તાદિદાનં ત્યાગઃ, સ ચ દ્વિવિધઃ દ્રવ્યત્યાગો ભાવત્યાગશ્ચ । તત્રાઽઽહારોપધિશયનાનામ્ અપાયોગ્યાનાં પરિત્યાગઃ પ્રાયોગ્યાનાં યતિજનેભ્યો દાનં દ્રવ્યત્યાગઃ ૧ ક્રોધાદીનાં ત્યાગઃ જ્ઞાનાદીનાં યતિજને વિતરણમ્ ભાવત્યાગઃ ૨ । ૯ X અનુભૂત વનિતાસ્મરણકથાશ્રવણસ્ત્રીસંસક્ત-

દ્વારા આત્મા પાપસમારંભ સે સંયત-નિવૃત્ત ક્રિયા જાય વહ સંયમ હૈ । પૃથ્વીકાયસંયમ આદિ કે ભેદ સે સંયમ સત્તરહ પ્રકાર કા હૈ । હસકા વિસ્તારપૂર્ણ વિવેચન દશવૈકાલિકસૂત્ર કે પ્રથમ અધ્યયન કી પ્રથમ ગાથા કી મેરે દ્વારા રચિત ‘આચારમણિમંજૂષા’ નામક ટીકા મેં દેખ લેના ચાહિયે ।

(૮) તપ—જિસકે દ્વારા આઠ પ્રકાર કા કર્મ ભસ્મ હો જાય વહ તપ હૈ ।

(૯) ત્યાગ—સંવેગ સે સમ્પન્ન સંજોગી શ્રમણોં કો આહાર આદિ દેના ત્યાગ કહલાતા હૈ । ત્યાગ કે દો ભેદ હૈ—દ્રવ્યત્યાગ ઓર ભાવત્યાગ । અયોગ્ય આહાર, ઉપધિ એવં ઉપાશ્રય કા ત્યાગ કરના ઓર યોગ્ય આહાર આદિ સાધુજનોં કો દેના દ્રવ્યત્યાગ હૈ ઓર ક્રોધ આદિ કા વર્જન કરના તથા સાધુઓં કો જ્ઞાનાદિ દેના ભાવત્યાગ હૈ ।

સમારંભથી સંયત-નિવૃત્ત કરી શકાય તે સંયમ છે પૃથ્વીકાય સંયમ આદિના ભેદથી સંયમ સત્તર પ્રકારનો છે. આનું વિગતવાર વિવેચન દશવૈકાલિક સૂત્રના પ્રથમ અધ્યયનની પ્રથમ ગાથાની મારા વડે રચાયેલી ‘આચારમણિ મંજૂષા’ નામની ટીકામાં ભેઈ લેવા લલામણ છે.

(૮) તપ—જેના વડે આઠ પ્રકારના કર્મો ભસ્મ થઈ જાય તે તપ છે.

(૯) ત્યાગ—સંવેગથી સમ્પન્ન સંજોગી શ્રમણોને આહાર આદિ આપવો ત્યાગ કહેવાય છે. ત્યાગના બે ભેદ છે, દ્રવ્યત્યાગ અને ભાવત્યાગ અયોગ્ય આહાર, ઉપધિ તથા ઉપાશ્રયનો ત્યાગ કરવો અને યોગ્ય આહાર આદિ સાધુજનોને આપવો તે દ્રવ્યત્યાગ છે અને ક્રોધ આદિનો ત્યાગ કરવો તથા સાધુઓને જ્ઞાનાદિ આપવું ભાવત્યાગ છે.

શયનાડડપનાદિવર્જનં, મૈથુનવર્જનશ્ચ વ્રહ્મચર્યં તત્ર વાસો વસનં વ્રહ્મચર્યવાસઃ
૧૦-તાન્યેતાનિ સ્વલુ ધર્મ વ્યપદેશ્યાનિ શાવ્યમાનાનિ કર્માસ્રવનિરોધલક્ષણ-
સંવરકારણાનિ ભવન્તિ ॥૫॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ-પૂર્વ તાવત્-પશ્ચાત્તમિતિત્રિગુપ્તીનાં સંવરહેતુત્વં પ્રતિપા-
દિતમ્, સમ્પ્રતિ દશવિધસ્ય શ્રમણધર્મસ્ય સંવરહેતુત્વં પ્રતિપાદયિતુમાહ-‘દસ
વિદે સમણધમ્મે સ્વંતિ સુત્તિ અજ્જથ મદ્દવ લાઘવ સચ્ચસંયમ તથ
ચિયાય ધંમ્મેવેદામ્મેયા’ इति । दशविधः श्रमणधर्मः श्रमणस्य संवरापादन-
सामर्थ्यहेतुभूतधर्मविशेषो मूलोत्तरगुणप्रकर्षयुक्तः स्वलु यतिधर्मो वर्तते
एते दश क्षान्त्यादयः संवरं धारयन्ती त्यतो धर्मशब्देन व्यपदिश्यते । अत्र=

(૧૦) પૂર્વશુક્ત વનિતા કે સ્મરણ, કથા શ્રવણ એવં સ્ત્રી કે સંસર્ગ
વાળે શયન આસન આદિ કા ત્યાગ કરના ઓર મૈથુન કા ત્યાગ
કરના વ્રહ્મચર્ય યા વ્રહ્મચર્યવાસ કહલાતા હૈ ।

इन दस प्रकार के धर्मों का परिपालन करने से कर्मास्रव का
निरोध रूप संवर उत्पन्न होता है ॥५॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—હસસે પહેલે સમિતિ ઓર ગુપ્તિ કો સંવર કા
કરણ થતલાયાગયા થા, યહાં દસ પ્રકાર કે શ્રમણધર્મ કો ડસકા
કારણ કહતે હૈ—

શ્રમણ કા સંવર કો ઉત્પન્ન કરને ધેં સમર્થ તથા મૂલગુણોં એવં
ઉત્તર ગુણોં કે પ્રકર્ષ સે યુક્ત ધર્મ દસ પ્રકાર કા હૈ । યે ક્ષાન્તિ આદિ
દસ સંવર કો ધારણ કરને કે કારણ ધર્મ કહલાતા હૈ । ક્ષાન્તિ આદિ
કો ‘શ્રમણધર્મ’ શબ્દ સે કહા ગયા હૈ, અતઃ ડનમેં મૂલ ઓર ઉત્તર

(૧૦) પૂર્વે લોગવેલી સ્ત્રીનું સ્મરણ, કથા શ્રવણ તથા સ્ત્રીના સંસર્ગ,
વાળી પથારી આસન આદિનો ત્યાગ કરવો અને મૈથુનનો ત્યાગ કરવો-
બ્રહ્મચર્ય અથવા બ્રહ્મચર્યવાસ કહેવાય છે.

આ દશ પ્રકારના ધર્મોનું પરિપાલન કરવાથી કર્માસ્રવના નિરોધ રૂપ
સંવર ઉત્પન્ન થાય છે ॥૫॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-આનાથી પડેલા સમિતિ અને ગુપ્તિને સંવરના
કારણ તરીકે બતાવવામાં આવ્યા છે. આહીં હવે દશ પ્રકારના શ્રમણધર્મને
સંવરના કારણ તરીકે કહેવામાં આવે છે.

શ્રમણનો, સંવરને ઉત્પન્ન કરવામાં સમર્થ તથા મૂલગુણો અને
ઉત્તરગુણોના પ્રકર્ષથી યુક્ત, ધર્મ દશ પ્રકારનો છે. આ ક્ષાન્તિ વગેરે દસ
સંવરને ધારણ કરવાના, કારણો ધર્મ કહેવાય છે. ક્ષાન્તિ આદિને શ્રમણ

ક્ષાન્ત્યાદીનાં શ્રમણધર્મત્વકથનેન તેષુ મૂલોત્તરગુણવિશિષ્ટત્વલાભાત્ અગારિષુ તદ્વ્યાવૃત્તિ રુચ્યતે, મૂલોત્તરગુણયુક્તાઃ સ્વલુ ક્ષાન્ત્યાદયો ગૃહસ્થેષુ નોપલભ્યન્તે યથા સર્વાવરથાસુ અનગારાઃ શ્રમણાઃ ક્ષમામાણાઃ સકલમદસ્થાનનિગ્રહકારિણઃ સુવર્ણાદિધનરહિતાઃ સન્તઃ સર્વથૈવ વ્રહ્મચર્યં ધારયન્તિ ન તથાઽગારિણઃ પ્રકૃષ્ટ ક્ષાન્ત્યાદિશાલિનો અવન્તિ તત્ર શક્તિશાલિનઃ સ્વતઃશત્મનઃ ક્ષમણં સહનપરિણામઃ ક્ષાન્તિઃ ક્ષમા । અશક્તસ્ય પ્રતીકારાઽનુભૂટાનં તિતિક્ષારૂપાઃ ક્ષમા સહનશીલતા ક્રોધોદયનિરોધઃ ઉદિત ક્રોધસ્ય વા વિવેકબલેન વિફલતાઽઽપાદાનમ્, તત્રાન્યૈઃ પ્રયુક્તસ્ય ક્રોધદેહુશ્ચૂતરથ દોષાદેઃ સજ્ઞાવાઽસદ્માવપરિચિન્તનાત્ ક્ષમા કર્તવ્યા ।

ગુણો'ં કી વિશિષ્ટતા કા લાભ હોને સે ગૃહસ્થો'ં મેં ઉત્તરગુણો'ં સે યુક્ત ક્ષમા આદિ દસ ધર્મ ગૃહસ્થો'ં મેં નહીં પાચે જાતે । જૈસે અનગાર શ્રમણ ક્ષમાપ્રાણ હોતે હૈં, મદ કે સ્વસ્ત સ્થાનો'ં કા નિગ્રહ કરતે હૈં, સ્વર્ણ આદિ ધન સે રહિત હોતે હૈં ઓર પૂર્ણ રૂપ સે વ્રહ્મચર્ય કા પાલન કરતે હૈં, વૈસે ગૃહસ્થ ઉત્કૃષ્ટ ક્ષમા આદિ કે ધારક નહીં હોતે ।

(૧) ક્ષાન્તિ—પ્રતીકાર કી શક્તિ સે યુક્ત હોને પર ઓ ક્ષમા કર દેના અર્થાત્ આત્મા મેં સહન કરને કા પરિણામ હોના ક્ષાન્તિ હૈ । અશક્ત કા પ્રતીકાર ન કરના તિતિક્ષા રૂપ ક્ષમા, સહનશીલતા, ક્રોધ કે ઉદય કા નિરોધ યા ઉત્પન્ન હુએ ક્રોધ કો વિવેક કે બલ સે નિષ્ફલ કર દેના ક્ષાન્તિ હૈ । જબ કોઈ અપને મેં કિસી દોષ કા આરોપ કરે

ધર્મ' શબ્દથી કહેવામાં આવ્યો છે આથી તેમાં મૂળ અને ઉત્તરગુણોની વિશિષ્ટતાનો લાભ હોવાથી ગૃહસ્થોમાં તેમની ગેરહાજરી ગણવામાં આવી છે. અર્થાત્ મૂળગુણો અને ઉત્તરગુણોથી યુક્ત ક્ષમા આદિ દસ ધર્મ ગૃહસ્થોમાં જોવામાં આવતાં નથી. જેવી રીતે અનગાર શ્રમણ ક્ષમાપ્રાણ હોય છે, મદના તમામ સ્થાનોનો નિગ્રહ કરે છે, સુવર્ણ આદિ ધનથી રહિત હોય છે અને પૂર્ણ રૂપથી બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરે છે, તેવી રીતે ગૃહસ્થ ઉત્કૃષ્ટ ક્ષમા આદિના ધારક હોતા નથી.

(૧) ક્ષાન્તિ:—પ્રતિકારની શક્તિથી યુક્ત હોવા છતાં પણ માફી આપવી અર્થાત્ આત્મામાં સહન કરવાનું પરિણામ હોવું ક્ષાન્તિ છે. અશક્તનો પ્રતિકાર ન કરવો તિતિક્ષારૂપ ક્ષમા, સહનશીલતા ક્રોધના ઉદયનો નિરોધ અથવા ઉત્પન્ન થયેલા ક્રોધને વિવેકના બળથી નિષ્ક્રિય કરી દેવો ક્ષાન્તિ છે. જ્યારે કોઈ પોતાનામાં કોઈ દોષનું આરોપણ કરે અને તેથી ક્રોધ ઉત્પન્ન

તત્ર-દોષાદિ સદ્ભાવચિન્તનં યથા-‘સન્ત્યેવ એતે મયિ દોષાઃ ન કિમ પ્યાલૌ મૃષા વદતી’-ત્યેવં ક્ષન્તવ્યમ્ । ઇવં-દોષાદીનામસદ્ભાવચિન્તનં યથા નૈવ સ્વલુ મયિ વર્તતે-એતે દોષાઃ’ યાનજ્ઞાનાદિનાઽસૌ વદતીતિ ક્ષન્તવ્યમ્ ।
 એવમ્-ક્રોધ દોષ પરિચિન્તનાદપિ ક્ષન્તવ્યમ્ તથાહિ-ક્રુદ્ધસ્ય જનસ્ય વિદ્વેષાઽઽ-
 સાદનસ્મૃતિભ્રંશ વ્રતલોપાદયો દોષા ભવન્તિ, ક્રોધકષાયપરિણતો જીવો વિદ્વેષી
 સન્ કર્મ વઘનાતિ-અન્યં વા નિહન્તિ, સૈન-પ્રાણાતિપાતવિરતિવ્રતલોપો ભવેત્

और उससे क्रोध उत्पन्न होने की संभावना हो तो अपने में उस दोष का सद्भाव है अथवा नहीं, ऐसा विचार कर क्षमा करना चाहिए ।
 यदि दारतव में दोष का सद्भाव हो तो लोचना चाहिए-‘ये दोष मेरे अन्दर हैं ही, वह कुछ भी मिथ्या नहीं कह रहा है ।’ यदि दोष न हो तो विचार करना चाहिए-‘अज्ञान के कारण यह जिन दोषों का होना कष्टा है, वे मुझमें नहीं हैं’ ऐसा विचार करके उसे क्षमा कर देना चाहिए ।

ક્રોધ સે ઉત્પન્ન होने વાળે દોષોં કો વિચાર કરકે મી ક્ષમાભાવ ધારણ કરના ચાહિયે, જૈસે-જો મનુષ્ય ક્રોધ કે વશીભૂત હો જાતા હૈ, ઉસકે ચિત્ત મેં વિદ્વેષ કા ભાવ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, વહ હિંસા પર ઉતારુ હો જાતા હૈ, ઉસકી સ્મૃતિ નષ્ટ હો જાતી હૈ ઔર ઉસકે વ્રતોં કા વિલોપ હો જાતા હૈ । ક્રોધ કષાય કે અધીન હુઆ જીવ દ્વેષ સે યુક્ત હોકર કર્મ કા બન્ધ કરતા હૈ યા દૂસરે કી હત્યા કર ઢાલતા હૈ જિસસે ઉસકે પ્રાણાતિપાતવિરમણ વ્રત કા નાશ હો જાતા હૈ । વહ

થવાની શક્યતા ઉભી થાય તો પોતાનામાં તે દોષનો સદ્ભાવ છે કે નહીં એવું વિચારીને ક્ષમા પ્રદાન કરવી જોઈએ. જો હકીકતમાં પોતાના દોષનો સદ્ભાવ હોય તો વિચારવું જોઈએ-‘આ દોષ મારામાં તો છે જ, આ કશું જ ખોટું કહેતો નથી’ જો દોષ ન હોય તો આ પ્રમાણે વિચારવું જોઈએ-‘અજ્ઞાનના કારણે આ જે દોષો હોવાનું કહે છે, તે મારામાં નથી’ એ મુંઝવળ વિચાર કરીને તેને માફી બક્ષવી જોઈએ.

ક્રોધથી ઉત્પન્ન થનારા દોષોનો વિચાર કરીને પણ ક્ષમાભાવ ધારણ કરવો જોઈએ, જેમકે-જે મનુષ્ય ક્રોધને વશીભૂત થઈ જાય છે, તેના ચિત્તમાં વિદ્વેષનો ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તે હિંસા પર સવાર થઈ જાય છે, તેની સ્મૃતિ નાશ પામે છે તેમજ તેના વ્રતોનો વિદ્વેષ થઈ જાય છે. ક્રોધ કષાયને તાબે થયેલો જીવ દ્વેષથી યુક્ત થઈને કર્મો બાંધે છે, અથવા બીજાની હત્યા કરી નાખે છે કે જેથી તેના પ્રાણાતિપાત વિરમણ વ્રતનો નાશ થઈ જાય છે.

ગુરુનપિ માતા-પિત્રાદીન્ આસાદયેત અધિક્ષિપેત ક્રુદ્ધઃ સ્વલુ અષ્ટસ્મૃતિકો ભૂત્વા
મૃષાપિ વદત્ વિસ્મૃત પ્રવ્રજ્યા પ્રતિપત્તિઃ પરેનાઽદત્તમપિ ગૃહીયાત્ એવમપદ્રેષ-
રાગાત્-મૈથુનમપિ આસેવેત, એવં-પદ્રેષરાગયુક્તઃ સહાયથ બુદ્ધ્યાઽવિરતેષુ
ગૃહસ્થેષુ તથોગોષ્ઠકરણેષુ ચ સૂર્ઝામપિ વિદધ્યાત્ તેન પરિગ્રહદોષોઽધ્યાપયેત,
એવં ક્રુદ્ધઃ સન્ ઉત્તરગુણમદ્ગમપિ કુર્પાત્ । ઉક્તઞ્ચ—ક્રુદ્ધો દન્યાદગુરુનપિ’ ઇતિ
એવં-મૂઢસ્વભાવપરિચિન્તનાઞ્ચ ક્ષન્તવ્યમ્ તથાહિ પરોક્ષાઽપરોક્ષાઽઝ્ઞાક્રોશ તાડન
હનન ધર્મભ્રંશાના મુત્તરોત્તરરક્ષાર્થં ક્ષમા કર્તવ્યા, પરોક્ષમાઝ્ઞોશતિ સતિ મૂઢે
ક્ષમાકરણેન પ્રત્યક્ષાઝ્ઞાક્રોશનં રક્ષિતં ભવતિ । એન મુત્તરોત્તરત્રાપિ બોધ્યમ્ । એવં

અપને માતા-પિતા આદિ ગુરુજનોં પર ઓ આક્ષેપ કરને સે નહીં
ચકતા । સ્મૃતિ શૂન્ય હોકર મિથ્યા આપણ ઓ કરતા હૈ । વહ ભૂલ
જાતા હૈ કિ મૈને દીક્ષા અંગીકાર કી હૈ ઓર અદત્ત કો ઓ ગ્રહણ કર
લેતા હૈ । રાગ-દ્રેષ કે વશીભૂત હો મૈથુન કા ઓ સેવન કરતા હૈ । હસી
પ્રકાર રાગ-દ્રેષ સે યુક્ત હોકર ગૃહસ્થાં કો અપના સહાયક સમજ કર
અન પર યા અનકે ઉપકરણોં પર સૂર્ઝાં ઓ ધારણ કરતા હૈ, હસ કારણ
પરિગ્રહ કે પાપ કા ઓ ભાગી હોતા હૈ । હસી પ્રકાર ક્રોધી પુરુષ ઉત્તર
ગુણોં કો ઓ ભંગ કરતા હૈ । કહા ઓ હૈ—‘ક્રુદ્ધ હુઆ જીવ ગુરુજનોં કા
ઓ ઘાત કર ડાલતા હૈ ।’

હસી પ્રકાર મૂઢ-સ્વભાવ કા વિચાર કરકે ક્ષમા ધારણ કરના
ચાહિએ ઓર-પરોક્ષ, અપરોક્ષ, આઝ્ઞાક્રોશ, તાડન, હનન ઓર ધર્મભ્રંશ
કી ઉત્તરોત્તર રક્ષા કા વિચાર કરકે ક્ષમા કરના ચાહિએ । જૈસે કોઈ
મૂઢ પુરુષ યદિ પરોક્ષ સે આઝ્ઞાક્રોશ કરતા હૈ તો સોચના ચાહિએ કિ વહ

તે પોતાના મા-બાપ વગેરે વડીલ લોકો પર પણ આક્ષેપ કરવાની હઠ સુધી
જાય છે. સ્મૃતિશૂન્ય ઘઈને મિથ્યાભાષણ પણ કરે છે. પોતે દીક્ષા અંગીકાર
કરી છે એ વાત પણ ભૂલી જઈને નહીં આપેલી વસ્તુને પણ સ્વીકાર કરી
લે છે. રાગ-દ્રેષને વશીભૂત થઈને મૈથુન પણ સેવતો હોય છે. એવી જ રીતે
રાગ-દ્રેષથી યુક્ત થઈને ગૃહસ્થોને પોતાના મદદગાર સમજીને તેમનામાં
અથવા તેમના ઉપદ્રેષો પરત્વે મોહ પણ ધારણ કરે છે. આ કારણે પરિ-
ગ્રહના પાપનો પણ ભાગીદાર બને છે. વળી આવી જ રીતે ક્રોધી પુરુષ
ઉત્તરગુણોનો પણ ભંગ કરે છે. કહ્યું પણ છે—ક્રોધી થયેલો જીવ વડીલજનોની
પણ હત્યા કરી નાખે છે.

એવી જ રીતે મૂઢ-સ્વભાવનો વિચાર કરીને ક્ષમા ધારણ કરવી જોઈએ
અને પરોક્ષ અપરોક્ષ, આઝ્ઞાક્રોશ, તાડન, હત્યા અને ધર્મભ્રંશની ઉત્તરોત્તર
રક્ષાનો વિચાર કરીને ક્ષમા આપવી જોઈએ જેમ કોઈ મૂઢ-પુરુષ કદાચ

भाग्येन मां परोक्षमाक्रोशति न प्रत्यक्षम्' इत्येवं लाभमत्वा क्षन्तव्यम्' एवम् प्रत्यक्षमाक्रोशत्यपि न मां ताडयति इति क्षन्तव्यमेव, इत्यादिरीत्या क्षमित-
व्यम् एवम् ताडनं कुर्वत्यपि बाले मूढे क्षन्तव्यम्, एवं स्वभावाः खलु मूढा
भवन्तीति मत्वा क्षमा कर्तव्याः भाग्येन मूढोऽयं ताडयत्येव न प्राणैर्वियोजयतीति
भावः । एवं प्राणैर्वियोजयत्यपि मूढे क्षन्तव्यम्, भाग्येन खलु मूढोऽयं प्राणैरेव
वियोजयति न मां धर्माद् भ्रंशयति इति मत्वा क्षन्तव्यम् । एवं—जन्मान्तरोपार्जि-

પ્રત્યક્ષ મેં આક્રોશ નહીં કરતા, યહ મેરા લાભ હી હૈ, એસા સોચ કર
ક્ષમા કરના યાહિયે । આગે બી હસી પ્રકાર સમજના યાહિયે । અગર
કોઈ પ્રત્યક્ષ મેં આક્રોશ કરે તો સોચના યાહિયે—‘યહ આક્રોશ કરકે
હી રહ જાતા હૈ, મેરા તાડન નહીં કર રહા હૈં ઓર હસ લાભ કા
વિચાર કર કે ક્ષમા કરના યાહિયે । અગર તાડના કરને વાલે પર બી
ક્ષમાભાવ ધારણ કરના ઉચિત હૈ । ઉસ સમય સોચના યાહિયે કિ
મૂઢ જનોં કા સ્વભાવ હી એસા હોતા હૈ । યહ મૂઢ ભાગ્ય સે તાડના
કરકે હી રહ જાતા હૈ, પ્રાણોં સે રહિત તો નહીં કરતા, યહી ગનીમત
હૈ, એસા વિચાર કર ઉસ મૂઢ કો ક્ષમા કર દેના યાહિયે । કદાચિત્
કોઈ અજ્ઞાની પ્રાણ લેને પર ઉતારુ હો જાય તો વિચાર કરના યાહિયે
—‘સદ્ભાગ્ય સે યહ મૂઢ પ્રાણી મુક્તે પ્રાણોં સે હી રહિત કર રહા હૈ,
ધર્મ સે ભ્રષ્ટ નહીં કર રહા, ઓર એસા વિચાર કરકે ક્ષમા ભાવ
ધારણ કરના યાહિયે ।

અજ્ઞાનતા આક્રોશ કરે તો વિચારવું જોઈએ કે તે પ્રત્યક્ષમાં આક્રોશ કરતો
નથી. એ જ મારા કાયદામાં છે એવું સમજીને ક્ષમા આપવી જોઈએ.
આગળ પણ આ મુજબ જ સમજવાનું છે. અગર જો કોઈ પ્રત્યક્ષમાં આક્રોશ
કરે તો વિચારવું જોઈએ—‘આ ક્રોધ કરીને જ રહી જાય છે, મને મારતો
નથી’ અને આ લાભનો વિચાર કરીને ક્ષમા આપવી જોઈએ. અગર માર-
નારને પણ ક્ષમા આપવી જોઈએ તે ઉચિત ગણાય. તે સમયે એમ વિચારવું
કે મૂઢ માણસોનો સ્વભાવ જ એવો હોય છે. આ મૂઢ મારા સારા નસીબે
માર મારીને જ સંતોષ સાને છે પણ મને જીવથી તો મારતો નથી એટલું
જ સાફ છે. એવો વિચાર કરીને તે મૂઢને ક્ષમા આપી દેવી જોઈએ
કદાચિત્ કોઈ અજ્ઞાની પ્રાણ હણવા સુધીની હદે આવી જાય તો વિચાર
કરવો જોઈએ—‘સદ્ભાગ્યે આ મૂઢ પ્રાણી મને પ્રાણેથી જ રહિત કરી રહ્યો
છે, ધર્મથી ભ્રષ્ટ કરતો નથી’ અને આવી લાવના લાવીને ક્ષમાભાવ
ધારણ કરવો જોઈએ.

તસ્ય કર્મણઃ સ્વલ્પયં વિપાકો મમ વર્તતે યદયં પ્રત્યક્ષં પરોક્ષં વાઽઽક્રોશતિ માં
તાડયતિવા, મમ પૂર્વમચક્રુઃકર્મોદયસ્ય નિમિત્તમાત્રમયં વર્તતે યતો દ્રવ્યક્ષેત્ર
કાલ ભાવાનુસારેણૈવ કર્મણા મુદયો યવતીતિ મત્વા સ્વકૃતકર્મફલાભ્યાગમોઽયં
મમ વર્તતે નિમિત્તમાત્રં પરં ઇતિ ક્ષન્તવ્યમ્, ક્ષમારૂપો ધર્મઃ સંવરહેતુત્યાઽવગ-
ન્તવ્યાઃ ૧ મમત્વબુદ્ધિરાહિત્યં મુક્તિઃ સા ચ ઉપાત્તેષ્વપિ શરીરાદિષુ સંસ્કારાઽઽ-
સક્તિ નિરાસાય 'મમેદમ્' इत्येवं ममत्वबुद्धिनिवृत्तिरूपा २ एवम् ऋजोर्भावः
કર્મ વાઽઽર્જવમ્ સારલ્યમ્ ભાવવિશુદ્ધિઃ કાયવાડ્માનસભાવાનાં કુટિલતા
રાહિત્યમ્ શઠતાવિરહિતત્વં ચ, ભાવદોષ માયા છલકપટાદિ વિવર્જનમ્ આર્જવમ્ ।

इसी प्रकार मुनि को सोचना चाहिए कि—‘यह पूर्वजन्म में उपार्जित मेरे कर्मों का ही फल है कि यह प्रत्यक्ष में या परोक्ष में मेरे ताड़ना का रहा है अथवा मुझ पर आक्रोश करता है। यह वेचारा मेरे कर्मों का निमित्त मात्र बन रहा है, क्योंकि कि कर्म द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के अनुसार ही फल देता हैं। इस प्रकार यह तो वास्तव में मेरे कर्म का ही फल है, दूसरा तो इसमें निमित्त मात्र है, ऐसा विचार करके क्षमा करना चाहिए। क्षमाधर्म संवर का कारण होता है।

(२) मुक्ति—ममत्वबुद्धि से रहित होना मुक्ति धर्म है। प्राप्त या गृहीत शरीर आदि पर—पदार्थों में संस्कार एवं आसक्ति का निवारण करने के लिए ‘यह मेरा है’ इस प्रकार की ममत्व बुद्धि का न होना मुक्ति का लक्षण है।

આવી જ રીતે મુનિએ વિચારવું જોઈએ કે—‘આ પૂર્વજન્મ ઉપાર્જિત મારા જ કર્મોનું ફળ છે કે આ પ્રત્યક્ષમાં અથવા પરોક્ષમાં મને તાડન કરે છે અથવા મારા ઉપર ક્રોધ કરે છે. આ બાપડો મારા કર્મોનું નિમિત્ત માત્ર બની રહ્યો છે, કારણ કે કર્મ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ અનુસાર જ ફળ પ્રદાન કરે છે. આમ આ બધું હકીકતમાં તો મારા કર્મોનો જ વિપાક છે, બીજો તો આમાં નિમિત્ત માત્ર છે. એવું વિચારીને ક્ષમા કરવી જોઈએ આ ક્ષમાધર્મ સંવરનું કારણ હોય છે.

(૨) મુક્તિઃ—મમત્વ બુદ્ધિથી રહિત થવું મુક્તિ ધર્મ છે. પ્રાપ્ત અથવા ગૃહીત શરીર આદિ પર—પદાર્થોમાં સંસ્કાર તથા આસક્તિનું નિવારણ કરવા માટે ‘આ મારું છે’ એ પ્રકારની મમત્વબુદ્ધિનું ન હોવું મુક્તિનું લક્ષણ છે.

(૩) આર્જવ—ઋજુતા, સરળતા ભાવવિશુદ્ધિ, કાયા વચન અને મનની કુટિલતા ન હોવી શઠતા—ભુચાઈનો અભાવ અથવા ભાવ દોષરૂપ

ભાવદોષયુક્તો જનો નિકૃતિયુક્તઃ સન્નૃદ્ધા મુત્રાઽશુભફલજનકમકુશલં કર્મોપ
ચિનોતિ, અકુશલકર્મોપચિત્તથોપદિશ્યમાનં શ્રેયોઽપિ મોક્ષસાધનં સમ્યગ્દર્શ-
નાદિકં ન શ્રદ્ધર્થાતિતસ્માદ્-આર્જવધર્મઃ કર્માસ્રવનિરોધલક્ષણસંવરહેતુ મૈવતિ-૩
અવમ્-મૃદોઃ કોમલસ્ય ભાવઃ-કર્મ વા માર્દવમ્, વિનમ્રભાવઃ ગર્વરાહિત્યશ્ચ જાતિ
કુલસમ્પદાદિમદનિગ્રહઃ માનવિધાતથ્ય ભવતિ મદ્દેન, અમ્યુત્યાનાઽસનદા-
નાઽજ્ઞલગ્રહ યથાયોગ્યવિનયકરણરૂપવિનમ્રભાવેન ચિત્તપરિણામનિશેષોત્સેકરૂપ
ગર્વરાહિત્યેન ચ જાતિ-કુલાદિમદનાશો ભવતિ જાતિકુલરૂપૈશ્ચર્યવિજ્ઞાનશ્રુત

(૩) આર્જવ—ઋજુતા, સરલતા, ભાવવિશુદ્ધિ, કાચ વચન ઓર
મન કો કુદિલના ન હોના, શઠતા-ધૂર્તતા કા અભાવ યા ભાવદોષ
રૂપ માયા, છળ, કપટ આદિ કા વર્જન આર્જવધર્મ હૈ। ભાવદોષ સે
યુક્ત જન માયાચાર સે યુક્ત હો કર હસ લોક ઓર પર લોક મેં
અશુભ ફલ ઉત્પન્ન કરને કાલે અકુશલ કર્મો કા ઉપચય કરતા હૈ।
અકુશલ કર્મો કા ઉપચય કરને કાલો શ્રેયસ્કર એવં મોક્ષ કે સાધન
સમ્યગ્દર્શન આદિ પર ભી શ્રદ્ધા નહીં કરતા। યહ આર્જવ કર્માસ્રવ કે
નિરોધ રૂપ સંવર કા કારણ હોતા હૈ।

(૪) માર્દવ—મૃદુ અર્થાત્ કોમલ કા ભાવ યા કર્મ માર્દવ હૈ।
વિનમ્રતા, ગર્વ સે રહિત હોના, જાતિ કુલ સમ્પત્તિ આદિ કે મદ કા
નિગ્રહ કરના યહ સ્વ માર્દવ હૈ। મદ કરને સે માન કા વિધાત હોતા
હૈ। ગુરુજનો કે આને પર ઉઠ કર સ્વડા હો જાના, અન્હેં આસન પ્રદાન
કરના, હાથ જોડના, યથાયોગ્ય વિનય કરના તથા ચિત્ત મેં અહંકાર
ન ઉત્પન્ન હોને દેના, હન સ્વ સે જાતિમદ એવં કુલમદ આદિ કા

માયા, છળ, કપટ આદિનો ત્યાગ આર્જવધર્મ છે. ભાવદોષથી યુક્ત મનુષ્ય
માયાચારથી યુક્ત થઈને આ લોક અને પરલોકમાં અશુભ ફળ ઉત્પન્ન
કરવાવાળા અકુશળ કર્મોનો ઉપચય કરે છે. અકુશળ કર્મોનો ઉપચય કરનાર
શ્રેયસ્કર તથા મોક્ષના સાધન સમ્યગ્દર્શન આદિ પરત્વે પણ શ્રદ્ધા રાખતો
નથી. આ આર્જવ ધર્મ કર્માસ્રવના નિરોધ રૂપ સંવરનું કારણ હોય છે.

(૪) માર્દવઃ—મૃદુ અર્થાત્ કોમળનો ભાવ અથવા કર્મ માર્દવ છે.
વિનમ્રતા ગર્વથી રહિત થવું, જાતિ, કુળ સમ્પત્તિ વગેરેના મદને નિગ્રહ
કરવો. આ બધું માર્દવ કહેવાય છે, મદ કરવાથી માનનો નાશ થાય છે.
વડીલજનોના આગમન પ્રસંગે ઊભા થઈ જવું, તેમને આસન આપવું, હાથ
જોડવા, યથાયોગ્ય વિનય કરવો તથા ચિત્તમાં અહંકાર ઉત્પન્ન ન થવા દેવો.
આ બધાથી જાતિમદ અને કુલમદ આદિનો વિનાશ થાય છે. જે પુરૂષજાતિના

લાભવીર્યરૂપ મદાન્ધ-ऐश्वर्यमदान्ध-विज्ञानमदान्ध-श्रुतमदान्ध-लाभमदान्ध
वीर्यमदान्धाः खलु पुरुषाः बहुकर्मास्त्रान् उत्पादयन्ति, तस्मात्-तथाविध
मार्दवधर्मसेवनेन जातिकुलादि मदमानविनाशनद्वारा कर्मास्त्रनिरोधलक्षण
संवर उत्पद्यते, मार्दवभावे किल-जाति कुलरूपैश्वर्यादिभिरष्टभिर्मदस्थानै
र्मत्तो भूत्वा परनिन्दा-स्वप्रशंसाभिरुचिः तीव्रादङ्कारोपह्वुद्धिः खलु पुरुषोऽशुभ-
फलदायकमकुशलं कर्म संचिनोति, श्रेयः खलु-मुक्तिसाधनभूतं सम्यग्
दर्शनादिक मुपदिश्यमानमपि न श्रद्दधते, तस्मात्-एतेषां खलु जात्यादि मद
मानस्थानानां समूलघातोपघाताय मार्दवरूपो धर्मः संवरहेतुरवगन्तव्यः-४
एवम्-अलोभलक्षणं लाघवम् लघुभावोऽपि संवरहेतु भवति, अन्यथा-लोभ-

विनाश होता है। जो पुरुष जाति के, कुल के, रूप के ऐश्वर्य के,
ज्ञान के, श्रुत के लाभ के अथवा वीर्य के मद से अंधे होते, वे बहुत
कर्मों का बन्ध करते हैं। अतएव मार्दवधर्म के सेवन से जातिमद
कुलमद आदि का विनाश होकर संवर की उत्पत्ति होती है।

मार्दव के अभाव में जातिमद, कुलमद, रूपमद, ऐश्वर्यमद आदि
आठ मदस्थानों से उन्मत्त होकर पुरुष परनिन्दा और आत्म-
प्रशंसा की रुचिवाला, तीव्र अहंकार से उपहत बुद्धि वाला होकर
अशुभ फल देने वाले अकुशल कर्मों का संचय करता है। श्रेयस्कर
और मोक्ष के साधन सम्यग्दर्शन आदि का उपदेश सुनकर भी उन
पर श्रद्धा नहीं करता। अतएव जातिमद आदि का समूल विनाश
करने के लिए मार्दव धर्म का आसेवन करना चाहिए।

(५) लाघव—लोभ का त्याग या अघुता को लाघव धर्म कहते

कुળના, રૂપના, મીઠકતના, જ્ઞાનના, શ્રુતના લાભના અથવા વીર્યના મદથી
આંધળા થઈ જાય છે, તે ઘણા અર્ધા કર્મો આંધતા હોય છે આથી માર્દવધર્મના
સેવનથી જાતિમદ, કુળમદ આદિનો વિનાશ થઈને સંવરની ઉત્પત્તિ થાય છે.

માર્દવના અભાવમાં જાતિમદ, કુળમદ રૂપમદ, એશ્વર્યમદ આદિ આઠ
મદસ્થાનોથી ઉત્પન્ન થઈને, પુરુષ પરકી નિન્દા અને આત્મપ્રશંસાની રૂચિ-
વાળો, તીવ્ર અહંકારથી ઉપહત બુદ્ધિવાળો થઈને અશુભ ફળ આપનાર
અકુશળ કર્મોનો સંચય કરે છે. શ્રેયસ્કર અને મોક્ષના સાધન સમ્યક્દર્શન
આદિનો ઉપદેશ સાંભળીને પણ તેમનામાં શ્રદ્ધા રાખતો નથી આથી જાતિ
મદ આદિનો સમૂળ વિનાશ કરવા માટે માર્દવધર્મનું આસેવન કરવું જોઈએ,

(૫) લાઘવ—ઢોલનો ત્યાગ અથવા લઘુતાને લાઘવધર્મ કહે છે. આ

દોષાત્ ક્રોધમાનમાયા પ્રાણાતિપાત મૃપાવાદસ્તેથ મૈથુન પરિગ્રહરૂપ ગૌરવોપ
ચયોપચિત્તઃ સ્વલ્લાભા ભાવલાઘવરહિતત્વાત્ ગુરુર્ભવતિ, ભાવગૌરવયુક્ત
આત્મા હદામુત્રાઽશુભફલદાયકમકુશલમવદ્યં કર્મોપચિનોતિ, અશુભકર્મોપચિત્તશ્ચ
નિઃશ્રેયસ સાધનમપિ સમ્યગ્દર્શનાદિકમુપદિશ્યમાનમપિ નો શ્રદ્ધાતિ, તસ્માત્
મમતા પરિત્યાગનિરસદ્ગત્વરૂપભાવલાઘવં-દ્રવ્યલાઘવશ્ચ સંવર હેતુર્ભવતિ-૫
સતિ-પ્રશસ્તેઽર્થે ભવં સત્યમ્, દિગાદિત્વાત્ યન્ પ્રત્યયઃ, યથાવસ્થિતાર્થપ્રતીતિ-
जनकं दचः सत्यम्, सदस्यो जीवेभ्यो वा दितं सत्यम्, तत् खलु-वचो-

हैं। यह भी संवर का कारण है। लाघवधर्म के अभाव में लोभ रूप
दोष के कारण क्रोध, मान, माया, प्राणातिपात, मृपावाद, चोरी,
मैथुन एवं परिग्रहण रूप गौरव (भारीपन) से युक्त हुआ आत्मा भाव
-लाघव से रहित होने के कारण गुरु बन जाता है। भावगौरव से युक्त
आत्मा इस लोक में और परलोक में अशुभ फल देने वाले, अकुशल
पाप कर्मों का संचय करता है और जिसने अकुशल कर्मों का संचय
किया है वह जीव मोक्ष के साधन सम्यग्दर्शन आदि का उपदेश सुन-
कर भी उन पर श्रद्धा नहीं करता। अतएव ममतापरित्याग रूप
भावलाघव और निःसंगता रूप द्रव्यलाघव संवर का कारण है।

(६) सत्य—जो सत् या प्रशस्त अर्थ में हो वह सत्य है। दिक्
आदि में पाठ होने से ‘यत्’ प्रत्यय होकर ‘सत्’ से ‘सत्य’ शब्द
निष्पन्न हुआ है। तात्पर्य यह है कि यथार्थ पदार्थ की प्रतीति उत्पन्न
करने वाला वचन सत्य कहलाता है। वह सत्य वचन पुरुष (कठोर)

પણ સંવરનું કારણ છે. લાઘવધર્મના અભાવમાં લોભ રૂપ દોષના કારણ ક્રોધ,
માન, માયા, પ્રાણાતિપાત, મૃપાવાદ, ચોરી, મૈથુન અને પરિગ્રહ રૂપ ગૌરવ
(ભારેપણ)થી યુક્ત થયેલો આત્મા, ભાવ-લાઘવથી રહિત હોવાના કારણે
શુદ્ધ બની જાય છે. ભાવગૌરવથી યુક્ત આત્મા આ લોકમાં તેમજ પરલોકમાં
અશુભ ફળ આપનારા, અકુશળ પાપકર્મોને સંચય કરે છે, અને જેણે
અકુશળ પાપકર્મોને સંચય કર્યો છે તે જીવ મોક્ષના સાધન સમ્યક્દર્શન
આદિને ઉપદેશ સાંભળીને પણ તેમનામાં શ્રદ્ધા રાખતો નથી. આથી મમતા
પરિત્યાગ રૂપ ભાવલાઘવ અને નિઃસંગતા રૂપ દ્રવ્યલાઘવ સંવરના કારણ છે.

(૬) સત્ય—જે સત્ અથવા પ્રશસ્ત અર્થમાં હોય તે સત્ય છે. દિક્
આદિમાં પાઠ હોવાથી ‘યત્’ પ્રત્યય થઈને ‘સત્’થી સત્ય શબ્દ નિષ્પન્ન
થયેલ છે. તાત્પર્ય એ છે કે યથાર્થ પદાર્થની પ્રતીતિ ઉત્પન્ન કરનારું વચન
સત્ય કહેવાય છે, આ સત્ય વચન પુરુષ (કઠોર) ન હોવું જોઈએ, નિષ્કુર

अपरुषम् अनिष्टुरम्-परपीडावर्जकम्-अपिशुनम्-प्रतीतिकारकम्-चापल्यरहितम्
अनाविलम्-कषाय कालुष्यवर्जितम्-विच्छेदरहितम्-निरन्तरोच्चरितम् अविरलम्
असम्भ्रान्तम् त्वरोदोपरहितम् स्पष्टम् मधुरम् श्रुतिसुखावहम् अभिजातम्
सविनयम् असन्दिग्धम् औदार्ययुक्तम् औद्धत्यवर्जितम् अग्राध्यम् विद्वज्जन मनो-
ऽनुरञ्जनसमर्थम् आत्मश्लाघावर्जितम् प्रस्तुतार्थाभिधायि माया लोभ क्रोध मान
कषायचतुष्टयरहितं सेव्यम् । एवं गणधर्मप्रत्येकबुद्धविरचित सूत्रमार्गानुसार-
प्रवृत्तार्थम् अर्थनीयम् अर्थिपुरुषभावग्रहणसमर्थं स्वपरार्थानुग्रहकारकं निरुपधि
निश्छलम् देशकालानुपसारि-अनवयम् जैनशासनप्रशस्तं यमयुक्तम् मितं याचन-

नहीं होना चाहिए, निष्टुर नहीं होना चाहिए, पर को पीडा पहुचाने
वाला न होना चाहिए, चुगली रूप अथवा अप्रतीतिकारक नहीं होना
चाहिए । वह चपलता से रहित हो, कषाय की कलुषता से रहित हो,
अटक-अटक कर न बोला जाय-लगातार उच्चरित हो, अविरल हो,
अभ्रान्त हो, जल्दवाजी से रहित हो, स्पष्ट मधुर और श्रुति सुखद
हो, अभिजात हो विनययुक्त हो, असंदिग्ध, उदारतायुक्त, उद्धतता
से रहित, गंवारु न हो-विद्वान् जनो का अनुरंजन करने में समर्थ हो,
आत्मप्रशंसा से रहित हो, प्रस्तुत अर्थ का प्रतिपादन करनेवाला हो,
क्रोध मान माया और लोभ कषाय से रहित हो, सेवनीय हो, तथा
गणधरों प्रत्येक बुद्धों और स्थविरो' द्वारा रचित सूत्रमार्ग के अनुकूल
अर्थ वाला हो, उपधि एवं छल से रहित हो, देश-काल के अनुकूल
हो, निरवय हो, जैन शासन द्वारा प्रशस्त हो, यम-नियम से युक्त

न होवुं लेधये, भीलने पीडा पडो'याडे येवुं न होवुं लेधये, याडी रुप
अथवा अप्रतीतिकारक न होवुं लेधये, ते यपणताथी रहित होय, कषायनी
कलुषताथी रहित होय, अटकी-अटकीने न ओलवामां आवे-सतत-अेकधाइं
उत्थारणु होय, अविरल होय, अभ्रान्त होय, छेतरपी'डीथी रहित होय,
स्पष्ट मधुर अने सांलणवुं गमे येवुं होय, अभिलत होय, विनययुक्त होय,
असंदिग्ध, उदारतायुक्त, उद्धतताथी रहित, गामडियुं न होय-विद्वान्जनो'नुं
अनुरंजन करवा भाटे समर्थ होय आत्मप्रशंसाथी रहित होय प्रस्तुत
अर्थ'नुं प्रतिपादन करनाइं होय, क्रोध मान माया अने दोष कषाय युक्त
होय सेवन करवा योग्य तथा गणधरो' प्रत्येक बुद्धो तथा स्थविरो' द्वारा
रचित सूत्रमार्ग अनुकूल अर्थ'वाणुं होय अर्थनीय (वांछनीय) होय स्व-
परनो अनुग्रह करनाइं होय, उपधि तथा छल-कपट वगरनुं होय, देश-
कालने अनुकूल होय, निरवय होय, जैनशासन द्वारा प्रशस्त होय, यम-

પ્રચ્છન્નં પ્રશ્નોત્તરરૂપં સત્યં ધર્મઃ સંવરસ્ય હેતુર્ભવતિ ૬ एवं कायादियोगनिग्रह-
 लक्षणः संयमः सप्तदशविधो धर्मः कर्मास्रवनिरोधलक्षणसंवरहेतुर्भवति ७
 તપશ્ચ સંયતસ્યાઽઽત્મનો વિશોધનાથં બાહ્યાભ્યન્તરતપનરૂપં વોધ્યમ્, શરીરેન્દ્રિય
 તાપનાત્ કર્મનિર્દંહનાચ્ચ તપો વ્યપદિશ્યતે, તન્નચ તપો દ્વાદશવિધમ્, તત્ર ષટ્ક
 બાહ્ય મનશ્ચનાદિકમ્ આતાપનાદિક્ષ્ણ કાયવલ્લેશરૂપમ્, આભ્યન્તરઞ્ચ પ્રાયશ્ચિ-
 ત્તાદિકં ષટ્કમ્, । ચતુર્થષઠ્ઠાઽષ્ટમભક્તાદિરૂપં વા, અથવા તપો યવમધ્યાદિ
 ભેદેનાઽનેકવિધમ્, દ્વાદશભિક્ષુપ્રતિમારૂપં વા તપઃ સંવરસ્ય હેતુર્ભવતીતિ ૮

હો, મિત હો, એસા પ્રશ્નોત્તર રૂપ વચન સત્ય કહલાતા હૈ । યહ સત્ય
 મી સંવર કા કારણ હૈ ।

(૭) સંયમ—કાયયોગ આદિ કા નિગ્રહ લક્ષણ વાલા સંયમધર્મ
 હૈ । સંયમ સતરહ પ્રકાર કા હૈ ઓર વહ આસ્રવ કા નિરોધ કરકે
 સંવર કા કારણ હોતા હૈ ।

(૮) તપ સંયમી આત્મા કી વિશુદ્ધિ કે લિપ બાહ્ય ઓર આભ્યન્તર
 જો તપન હૈ, ઉસે તપ કહતે હૈ । શરીર કો ઓર ઇન્દ્રિયો કો તપ્ત કર
 દેને તથા કર્મો કો દગ્ધ કરને કે કારણ ઉસે તપ કહતે હૈ । તપ કે
 બારહ ભેદ હૈ, જિનમેં છહ અનશત આદિ તથા કાયવલ્લેશ રૂપ આતા-
 પના આદિ હૈ । પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ છહ આભ્યન્તર તપ હૈ । ઉપવાસ, વેલા,
 તૈલા આદિ કે ભેદ સે અથવા યવમધ્ય આદિ કે ભેદ સે અથવા દ્વાદશ
 ભિક્ષુપ્રતિમારૂપ સે તપ કે અનેક ભેદ-પ્રભેદ હૈ । ઉનકા વર્ણન અન્યત્ર
 લેખ લેના ચહિય । યહ તપ મી અસ્રવનિરોધરૂપ સંવર કા કારણ હૈ ।

નિયમથી યુક્ત હોય, ટુંકું હોય—એવું પ્રશ્નોત્તર રૂપ વચન સત્ય કહેવાય છે.
 આ પણ સત્ય સંવરનું કારણ છે.

(૭) સંયમ—કાયયોગ આદિના નિગ્રહ લક્ષણવાળો સંયમ ધર્મ છે. સંયમ
 સત્તર પ્રકારનો છે અને તે આસ્રવનો નિરોધ કરીને સંવરનું કારણ બને છે.

(૮) તપ—સંયમી આત્માની વિશુદ્ધિ માટે બાહ્ય તથા આભ્યન્તર જે
 તપશ્ચર્યા છે તેને તપ કહે છે. શરીર તથા ઇન્દ્રિયોને તપ્ત કરનાર તથા કર્મોને
 બસ્મ કરવાના કારણને તપ કહે છે. તપના બાર ભેદ છે જેમાં છ અનશન
 આદિ તથા કાયવલ્લેશ રૂપ આતાપના આદિ છે. પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ છ આભ્યન્તર
 તપ છે. ઉપવાસ, છઠ્ઠ, અષ્ટમ, આદિના ભેદથી અથવા યવમધ્ય આદિના
 ભેદથી અથવા બાર ભિક્ષુપ્રતિમા રૂપથી તપના અનેક ભેદ-પ્રભેદ છે. એમનું
 વર્ણન અન્યત્ર જોઈ લેવું. આ તપ પણ આસ્રવનિરોધ રૂપ સંવરનું કારણ છે.

ત્યાગસ્તાવત્ વાહ્યાનાં રજોહરણપાત્રાદ્યુપધિશરીરાન્નપાનાદીનામ્ આભ્યન્તરાણામ્
દુષ્ટવાહ્મનો વાક્ કાયવ્યાપાર ક્રોધાદીનાં મૂર્છાલક્ષણભાવદોષપરિત્યાગ-
રૂપઃ સંવરસ્ય હેતુર્ભવતિ । 'સંયમસાધનત્વાદ્ રજોહરણાદિકં ધારયતિ ન તુ રાગા-
દિયુક્તઃ ક્રોધાદ્યર્થમ્, તથા ચ વાહ્યાભ્યન્તરોપકરણાદિ વિષયકપરિગ્રહરૂપં ભાવ-
દોષસ્ય સર્વથા ત્યાગોહિ આસ્રવદ્ધારં સંવૃણોતિ । એવં શરીરધર્મોપકરણાદિષુ
ભાવદોષરૂપગાર્ધ્યપરિત્યાગેન મમત્વરાહિત્યં ત્યાગો વોદ્યઃ તથચોક્તરીત્યા
ભાવદોષત્યાગં કૃત્વા વાહ્યોપકરણં રજોહરણપાત્રાદિકં મુપશુઞ્જાનોઽપિ ત્યાગ્યેવ
ભવતિ, તથાવિધત્યાગોઽપિ કર્માસ્રવનિરોધલક્ષણસંવરસ્ય હેતુર્ભવતિ ૯ એવમ્ સર્વથા

(૯) ત્યાગ—રજોહરણ, પાત્ર ઉપધિ, શરીર, અન્ન-પાની આદિ
વાહ્ય પદાર્થો' કા તથા મન વચન કાય કે દૂષિત વ્યાપાર એવં ક્રોધ
આદિ આન્તરિક દોષો' કા પરિહાર કરના ત્યાગિ હૈ । યહ ત્યાગ સંવર
કા કારણ હોતા હૈ । ત્યાગી પુરુષ સંયમ કે સાધન હોને કે કારણ
રજોહરણ આદિ કો ધારણ કરતા હૈ, એગાદિ સે યુક્ત હોકર શોભા કે
લિખે નહીં । હસ પ્રકાર વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર ઉપકરણ આદિ વિષયક
પરિગ્રહ રૂપ ભાવદોષ કા સર્વથા ત્યાગ અસ્રવદ્ધાર કો રોક દેતા હૈ ।
હસ પ્રકાર શરીર તથા ધર્મોપકરણ આદિ સે ભાવ દોષ રૂપ આસ્રવ
કા પરિત્યાગ કરકે મમત્વ સે રહિત હોના ત્યાગ સ્ખમ્ભના ચાહિયે ।
ઉક્ત પ્રકાર સે ભાવદોષ કા ત્યાગ કરકે રજોહરણ પાત્ર આદિ વાહ્ય
ઉપકરણો' કા ઉપભોગ કરતા હુઆ મી ત્યાગી હી કહલાતા હૈ । યહ
ત્યાગ મી કર્મો' કે આસ્રવ-નિરોધ રૂપ સંવર કા કારણ હોતા હૈ ।

(૯) ત્યાગ—રજોહરણ, પાત્ર, ઉપધિ, શરીર, અન્ન-પાણી, આદિ
વાહ્ય પદાર્થોના તથા મન વચન કાયના દૂષિત વ્યાપાર અને ક્રોધ વગેરે
આંતરિક દોષોના પરિહાર કરવો ત્યાગ છે. આ ત્યાગ સંવરનું કારણ અને
છે. ત્યાગી પુરુષ, સંયમના કારણ હોવાને લીધે, રજોહરણ વગેરે ધારણ કરે
છે, રાગાદિથી યુક્ત થઈને માત્ર શોભા ખાતર નહીં આ પ્રકારે વાહ્ય અને
આભ્યંતર ઉપકરણ આદિ વિષયક પરિગ્રહ રૂપ ભાવદોષનો સર્વથા ત્યાગ
આસ્રવ દ્વારને બંધ કરી દે છે. આ રીતે શરીર તથા ધર્મોપકરણ આદિમાં
ભાવદોષ રૂપ આસ્રવનો પરિત્યાગ કરીને મમત્વથી રહિત થઈ જવું ત્યાગ
સમજવો ઘટે. ઉક્ત પ્રકારથી ભાવદોષનો ત્યાગ કરીને રજોહરણ પાત્ર આદિ
વાહ્ય ઉપકરણોના ઉપભોગ કરતો થકો પણ તે ત્યાગી જ ગણાય છે. આ
ત્યાગ પણ કર્માસ્રવ-નિરોધ રૂપ સંવરનું કારણ હોય છે.

મૈથુનપરિવર્જનરૂપબ્રહ્મચર્ય પરિપાલનમપિ તથાવિધસંવરસ્ય હેતુર્ભવતિ ૧૦ તથા
ચૈતે ક્ષાન્ત્યાદયો દશ શ્રમણધર્માઃ કર્માસ્રવનિરોધલક્ષણસંવરહેતવો ભવન્તીતિ
વોધ્યમ્ । ઉક્તશ્ચ-સમવાયાજ્ઞે ૧૦ સમવાયે 'દસવિહે સમણ ધમ્મે' તં જહા-
સ્વંતી ૧ મુક્તી ૨ અહજવે ૩ મદ્દવે ૪ લાઘવે ૫ સત્ત્વે ૬ સંજમે ૭ તવે ૮
ચિયાણ ૯ વંમચેરવાસે ૧૦ હિતિ, દશવિધઃ શ્રમણધર્મઃ પ્રપ્તઃ, તથા-ક્ષાન્તિઃ
મુક્તિઃ-આર્જવમ્ માર્દવમ્ લાઘવમ્-સત્યમ્-સંયમઃ-તપઃ-ત્યાગઃ-બ્રહ્મચર્યવાસઃ । ૫।

મૂલમ્-અણુપ્પેહા અણિચ્ચાઈ વારસ ભાવનારૂપા ॥૬॥

છાયા—'અનુપેક્ષાનિત્યાદિ દ્વાદશ ભાવનારૂપા-॥૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વે તાવત્-કર્માસ્રવનિરોધલક્ષણસંવરસ્ય સપ્તમતત્ત્વસ્ય
હેતુભૂતેષુ સમિતિ-ગુપ્તિધર્માનુપેક્ષા-પરીપહજય-ચારિત્રેષુ સપ્તસુ ક્રમશઃ સમિતિ-

(૧૦) બ્રહ્મચર્ય—સર્વથા મૈથુન-ત્યાગ રૂપ બ્રહ્મચર્ય કા પાલન
મી સંવર કા કારણ હૈ)

હસ પ્રકાર ક્ષાન્તિ આદિ દશ શ્રમણધર્મ સંવર કે કારણ હોતે હૈ ।
સમવાયાંગસૂત્ર કે દસવેં સમવાય મેં કહા હૈ—

'શ્રમણધર્મ દસ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ, યથા-(૧) ક્ષાન્તિ (૨)
મુક્તિ (૩) આર્જવ (૪) માર્દવ (૫) લાઘવ (૬) સત્ય (૭) સંયમ (૮)
તપ (૯) ત્યાગ ઓર (૧૦) બ્રહ્મચર્યવાસ ॥૫॥

'અણુપ્પેહાઅણિચ્ચાઈ' ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—અનિત્ય આદિ બારહ પ્રકાર કી ભાવનાએ અનુપેક્ષા
કહલાતી હૈ ॥૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—હસસે પૂર્વે કર્મ કે આસ્રવ કે નિરોધ સ્વરૂપવાલે
સાતવેં તત્ત્વ સંવર કે જો કારણ સમિતિ, ગુપ્તિ ધર્મ, અનુપેક્ષા, પરી-

(૧૦) બ્રહ્મચર્ય—સર્વથા મૈથુન-ત્યાગરૂપ બ્રહ્મચર્યનું પાલન પણ
સંવરનું કારણ છે.

આ રીતે ક્ષાન્તિ આદિ દશ શ્રમણ ધર્મ સંવરના કારણો હોય છે.
સમવાયાંગસૂત્રના દશમાં સમવાયમાં કહ્યું છે-શ્રમણધર્મ દસ પ્રકારનો કહેવામાં
આવ્યો છે જેમકે-(૧) ક્ષાન્તિ (૨) મુક્તિ (૩) આર્જવ (૪) માર્દવ (૫) લાઘવ
(૬) સત્ય (૭) સંયમ (૮) તપ (૯) ત્યાગ અને (૧૦) બ્રહ્મચર્યવાસ ॥૫॥

'અણુપ્પેહા અણિચ્ચાઈ વારસ ભાવનારૂપા' ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—અનિત્ય આદિ બાર પ્રકારની ભાવનાઓ અનુપેક્ષા કહેવાય છે. ॥૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—આની પહેલા કર્મના આસ્રવના નિરોધ સ્વરૂપ-
વાળા સાતમાં તત્ત્વ સંવરના જે કારણો સમિતિ, ગુપ્તિ ધર્મ અનુપેક્ષા

गुप्तिधर्मा इत्येते त्रयो भेदा लक्षणतः प्ररूपिताः सम्प्रति क्रमप्राप्ता मनुप्रेक्षां संवरहेतुभूतां प्ररूपयितुमाह-‘अणुप्पेहा अणिच्चाह वारसभावणा रूपा’ इति अनुप्रेक्षाऽनित्यादि द्वादशभावनारूपा, अनित्यस्य १ आदिना अशरणस्य २ संसारस्य ३ एकत्वस्य ४ अन्यत्वस्य ५ अशुचित्वस्य ६ आस्रवस्य ७ संवरस्य ८ निर्जरयाः ९ लोकस्य १० बोधिदुर्लभस्य ११ धर्मसाधकार्हत्वस्य १२ इत्येवं द्वादशानां भावनाऽनुचिन्तनम्, तद्रूपा अनुप्रेक्षा व्यपदिश्यते । एवञ्चाऽनित्यताऽनुप्रेक्षा अशरणानुप्रेक्षा संसारानुप्रेक्षा एकत्वानुप्रेक्षाऽन्यत्वानुप्रेक्षाऽशुचित्वानुप्रेक्षाऽऽस्रवानुप्रेक्षा संवरानुप्रेक्षा निर्जरानुप्रेक्षा लोकानुप्रेक्षा बोधिदुर्लभानुप्रेक्षा धर्मसाधकार्हत्वानुप्रेक्षाः इत्येवं द्वादशविधानुप्रेक्षा संवरस्य हेतवो भवन्ति ।

प्रहजय और चारित्र कहे गये थे, उनमें से समिति, गुप्ति और धर्म का निरूपण किया गया, अब अनुक्रम से प्राप्त अनुप्रेक्षा का प्ररूपण किया जाता है-

अनित्य आदि चारह भावनाएं अनुप्रेक्षा हैं । सूत्र में प्रयुक्त ‘आदि’ शब्द से अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचित्व, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ और धर्मसाधकार्हत्व का ग्रहण होता है । इन चारह भावनाओं का पुनः पुनः चिन्तन करना अनुप्रेक्षा है । इस प्रकार (१) अनित्यत्वानुप्रेक्षा (२) अशरणत्वानुप्रेक्षा (३) संसारानुप्रेक्षा (४) एकत्वानुप्रेक्षा (५) अन्यत्वानुप्रेक्षा (६) अशुचित्वानुप्रेक्षा (७) आस्रवानुप्रेक्षा (८) संवरानुप्रेक्षा (९) निर्जरानुप्रेक्षा (१०) लोकानुप्रेक्षा (११) बोधिदुर्लभत्वानुप्रेक्षा और (१२) धर्मसाधकार्हत्वानुप्रेक्षा, ये चारह अनुप्रेक्षाएं संवर का कारण हैं । इन अनुप्रेक्षाओं को

પરીષદજય અને ચારિત્ર કહેવામાં આવ્યા હતા તેમાંથી સમિતિ, ગુપ્તિ અને ધર્મનું નિરૂપણ કરવામાં આવી ગયું, હવે ક્રમ પ્રાપ્ત અનુપ્રેક્ષાનું વિવેચન કરવામાં આવી રહ્યું છે.

અનિત્ય આદિ બાર ભાવનાઓ અનુપ્રેક્ષા છે. સૂત્રમાં પ્રયુક્ત ‘આદિ’ શબ્દથી અશરણ, સંસાર એકત્વ અન્યત્વ, અશુચિત્વ, આસ્રવ, સંવર, નિર્જરા લોક, બોધિદુર્લભ અને ધર્મસાધકત્વનું ગ્રહણ થાય છે. આ બારેનું વારંવાર ચિન્તન કરવું અનુપ્રેક્ષા છે. આવી રીતે (૧) અનિત્યત્વાનુપ્રેક્ષા (૨) અશરણત્વાનુપ્રેક્ષા (૩) સંસારાનુપ્રેક્ષા (૪) એકત્વાનુપ્રેક્ષા (૫) અન્યત્વાનુપ્રેક્ષા (૬) અશુચિત્વાનુપ્રેક્ષા (૭) આસ્રવાનુપ્રેક્ષા (૮) સંવરાનુપ્રેક્ષા (૯) નિર્જરાનુપ્રેક્ષા (૧૦) લોકાનુપ્રેક્ષા (૧૧) બોધિદુર્લભતાનુપ્રેક્ષા અને (૧૨) ધર્મસાધકાર્હત્વાનુપ્રેક્ષા આ બાર અનુપ્રેક્ષાઓ સંવરના કારણો છે. આ અનુપ્રેક્ષાઓનું

તત્રાઽઽત્મનો જ્ઞાનદર્શનોપયોગસ્વભાવાદ્ અન્યન્ન કિંચિત્ સમુદિતં વસ્તુ ધ્રુવમસ્તિ, ઇમાનિ સ્વલ્લ શરીરેન્દ્રિયવિષયશબ્દરૂપગન્ધરસસ્પર્શવનિતાદ્યુપભોગપરિભોગ દ્રવ્યાણિ સમુદાયરૂપાણિ જલ બુદ્બુદવદનવસ્થિતસ્વભાવા નિવર્તન્તે, મોહવિભ્ર- માદત્રાઽજ્ઞો જનો નિત્યત્વં મન્યતે इत्येवं સ્વલ્લચિન્તનમ્ અનિત્યાનુપ્રેક્ષા વોદ્યા એવં સ્વલ્લ ચિન્તયતઃ શરીરાદિષુ મમત્વલક્ષણાઽભિષ્વક્ષામાવાત્ યુક્તોજિજ્ઞાત ગન્ધ માલ્યાદિષ્વિવ વિયોગકાલેઽપિ વિવેકભ્રંશલક્ષણો વિનિપાતો નોત્પદ્યતે ૧ એવં મરણકાલે મિત્રવાન્ધવપુત્રકલત્રાદયોઽપિ પરિત્રાતું ન સમર્થાઃ 'યમ એવ કેવલમેકશરણં નાઽન્યત્, इत्येवं માવના અશરણાનુપ્રેક્ષા, એવં સ્વલ્લ માત્રચત્તો સ્વરૂપ નિમ્નલિખિતં હૈ—

(૧) અનિત્યત્વાનુપ્રેક્ષા— જ્ઞાનદર્શનરૂપ ઉપયોગ સ્વભાવવાળે આત્મા કે અતિરિક્ત કોઈ મી અન્ય સમુદિત વસ્તુ સ્થાયી નહીં હૈ । યહ શરીર એવં ઇન્દ્રિયોં કે વિષય શબ્દ, રૂપ, ગંધ, રસ, સ્પર્શ, વનિતા આદિ જો મી ઉપભોગ-પરિભોગ કે સાધન હૈ, સમી જલ કે બુલ બુલે કે સમાન વિનાશશીલ હૈ । અપની મૂઢતા 'એવં વિભ્રમ કે કારણ હી અજ્ઞાની જન ઇન્હે' નિત્ય માન તે હૈ, એસા ચિન્તન કરના અનિત્યત્વાનુ-પ્રેક્ષા હૈ । ઇસ પ્રકાર કે ચિન્તન સે શરીર આદિ સંબંધી મમતા ઓર આસક્તિ કા અભાવ હો જાતા હૈ ઓર જૈસે ભોગ કર ફેંકી હુઈ માલા આદિ કે વિયોગ સે દુઃખ નહીં હોતા, ડસી પ્રકાર શરીર આદિ કે વિયોગ કે સમય મી દુઃખ નહીં હોતા ।

(૨) અશરણત્વાનુપ્રેક્ષા—મનુષ્ય કે મસ્તક પર જવ મૃત્યુમંડરાતી હૈ તવ મિત્ર, બાન્ધવ, પુત્ર, કલત્ર આદિ કોઈ મી ત્રાણ કરને મેં સમર્થ

સ્વરૂપ નીચે જણાવ્યા મુજબનું છે.—

(૧) અનિત્યત્વાનુપ્રેક્ષા—જ્ઞાન-દર્શન રૂપ ઉપયોગ સ્વભાવવાળા આત્મા સિવાય કોઈપણ અન્ય સમૂદિત વસ્તુ કાયમી નથી. આ શરીર અને ઇન્દ્રિ-યોના વિષય શબ્દ રૂપ, ગંધ, રસ, સ્પર્શ, સ્ત્રી વગેરે જેટલા પણ ઉપભોગ-પરિભોગના સાધનો છે, એ બધાં જ પાણીના પરપોટાની જેમ ક્ષણભંગુર છે. ચોતાની મૂઢતા તથા વિભ્રમના કારણે જ અજ્ઞાની પુરૂષ આને નિત્ય માને છે, આવી જાતનું ચિન્તન કરવું તે અનિત્યત્વાનુપ્રેક્ષા છે. આ પ્રકારના ચિન્તનથી શરીર આદિ સંબંધી મમતા અને આસક્તિનો અભાવ થઈ જાય છે અને જેમ એકવાર વાપરીને ફેંકી દીધેલી માળા વગેરેના વિયોગથી જેમ દુઃખ થતું નથી તેવી જ રીતે શરીર આદિના વિયોગના સમયે પણ દુઃખ થતું નથી.

(૨) અશરણત્વાનુપ્રેક્ષા—મનુષ્યના માથા ઉપર બધાં મૃત્યુ ડોકિયું

નિત્યમહમશરણોઽસ્મીતિ ભૃશમુદ્દિગ્નસ્ય સંસારિકભાવેષુ નિર્મમત્વ મુપજાયતે
'અર્હત્પણીતમેવ માર્ગ' પ્રતિપદ્યતે ૨ एवं पूर्वोपार्जितकर्मविपाकवशादात्मनो
भवान्तरावाप्तिः संसार उच्यते तस्मिन् संसारे जीवो नट इव रङ्गभूमौ
मातृपितृभ्रातृदासस्वामित्व नानाविधभूमिकामासाद्य जन्ममरणयन्त्रणा मनु
भवन् भवादभवान्तरं परिभ्रमति, किमधिकेन स्वयमप्यात्मनः पुत्रो भवति इत्येवं
संसार स्वभावानुचिन्तनं संसारानुप्रेक्षाः । उक्तञ्चोत्तराध्ययने ऊनविंशत्यध्ययने

નહીં હોતે । उस अवसर पर एक मात्र धर्म ही शरणभूत होता है,
अन्य कोई भी नहीं, इस प्रकार का चिन्तन करना अशरणत्वानुप्रेक्षा
है । जो इस प्रकार का चिन्तन करता रहता है वह 'मैं शरणहीन हूँ'
ऐसा सोच कर अत्यन्त विरक्त हो जाता है और सांसारिक पदार्थों
के विषय में उसका ममत्व नहीं रहता । वह अर्हन्त भगवान् द्वारा
प्रतिपादित मार्ग का ही अवलम्बन लेता है ।

(૩) સંસારાનુપ્રેક્ષા--પૂર્વોપાર્જિત કર્મવિપાક કે અનુસાર ભવાન્તર
કી પ્રાપ્તિ કો સંસાર કહેતે હૈં । સંસારી જીવ હસ સંસાર મેં, રંગભૂમિ
મેં નટ કે સમાન માતા, પિતા, ભ્રાતા, દાસ, સ્વામી આદિ કી વિવિધ
પ્રકાર કી ભૂમિકાએ (પાર્ટ) પ્રાપ્ત કરતા હુઆ જન્મ-મરણ કી યંત્રણાએ
સુગત રહા હૈં । એક ભવ કા ત્યાગ કરકે દૂસરે ભવ મેં જાતા હૈં ।
અધિક વધા કહા જાય, વહ આપ હી અપના પુત્ર બન જાતા હૈં । હસ
પ્રકાર સંસાર કે સ્વભાવ કા વિચાર કરના સંસારાનુપ્રેક્ષા હૈં । ઉત્તરા-
ધ્યયનસૂત્ર કે ઉન્નીસવેં અધ્યયન કી બારહવીં ગાથા મેં કહા હૈં ।

કરે છે ત્યારે મિત્ર, ભાઈ, પુત્ર, પત્ની વગેરે કોઈ પણ તેને બચાવવા સમર્થ
થતાં નથી. આ અવસરે એકમાત્ર ધર્મ જ તેના રક્ષણાર્થે આવીને ઉભો રહે
છે, બીજું કોઈ જ નહીં, આ જાતની ભાવના કેળવવી અશરણત્વાનુપ્રેક્ષા છે જે
આ પ્રકારનું ચિન્તન કરતો રહે છે તે 'હું' શરણ વગરનો છું' એમ વિચારીને
અત્યંત વિરક્ત થઈ જાય છે અને સાંસારિક પુદ્ગલોના વિષયમાં તેનું મમત્વ
રહેતું નથી. તે અર્હન્ત ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત માર્ગનો જ આશરો લે છે.

(૩) સંસારાનુપ્રેક્ષા--પૂર્વોપાર્જિત કર્મ વિપાક અનુસાર ભવાન્તરની
પ્રાપ્તિને સંસાર કહે છે. સંસારી જીવ આ સંસારમાં રંગભૂમિના નટની
મોઢક માતા, પિતા, ભ્રાતા, દાસ, સ્વામી આદિની જુદી જુદી ભૂમિકાઓ (પાર્ટ)
પ્રાપ્ત કરતો થકો જન્મ-મરણથી વિદગ્ન થાયો લોગવી રહ્યો છે. એક ભવનો
ત્યાગ કરીને બીજા ભવમાં જાય છે. વધારે શું કહેવું ? તે પોતે જ પોતાનો
પુત્ર બની જાય છે. આ રીતે સંસારના સ્વભાવનો વિચાર કરવો સંસારાનુપ્રેક્ષા
છે. ઉત્તરાધ્યયનસૂત્રના ઓગણીસમાં અધ્યયનની બારમી ગાથામાં કહ્યું છે-

દ્વાદશગાથાસુ 'ઇમે સરીરં અનિત્યં, અશુભં, અશુભસંભવં । અસાસયા
વાસમિણં, દુઃસ્વલેશાણભાવણં' (છાયા) इदं शरीरं अनित्यम्, अशुचि, अशुचि-
सम्भवम्, अशाश्वतावासमिदं दुःस्वलेशानां भाजनम्, इति अन्यत्राप्युक्तम्

ધી સંસારો જન્મિય, જુવાણઓ પરમરૂવગવિવચઓ ।

મરિહણ જાયહ કિમી, તત્થેવ કલેવરે નિયણ ॥૧॥

ધિક્ક સંસારો યસ્મિંશ્ચ યુવકઃ પરમરૂપગવિતઃ ।

મૃત્વા જાયતે કૃમિઃ તત્રૈવ કલેવરે નિજકે ॥૧॥ इति,

एवं भावयतः संसारभयाद् उद्विग्नस्य वैराग्यमुत्पद्यते, संसाराद् विरक्तश्च
तद्दुःखप्रहाणात् प्रयतते ३ एवं जन्मजरामरणपरम्परानुवृत्तिजन्यमहापीडानुभवम्
एकाक्यहमेव कर्तुं शक्नोमि, न तदर्थं कश्चिदन्यो मे स्वो वा परो वा सहायो

‘યહ શરીર અનિત્ય હૈ, અશુચિ હૈ ઓર અશુચિ પદાર્થો’ સે-રજ-
-વીર્ય આદિ સે, હસકી ઉત્પત્તિ હુઈ હૈ । યહ અસ્થાયી આવાસ હૈ-થોડે
દિન હસમેં ટિક્ક કર ચલ દેના હૈ ? યહ દુઃખોં ઓર કલેશોં કા ભાજન
હૈ અર્થાત્ વિવિધ પ્રકાર કે કષ્ટ હસ શરીર કી વદૌલત હી હસ જીવ
કો ભોગને પડતે હૈ ।

અન્યત્ર भी कहा है-‘इस संसार कों धिक्कार है जिसमें अपने
रूप सौन्दर्य से गर्विष्ठ बना हुआ पुरुष युवावस्था में ही मरण को
प्राप्त होकर उसी अपने कलेवर में कीड़े के रूप में पैदा हो जाता है ।
ऐसी भावना करनेवाला पुरुष संसार के भय से उद्विग्न हो जाता है
और संसार से विरक्त होकर संसारिक दुःखों का अन्त करने के
लिए प्रयत्नशील होता है ।

(૪) એકત્વ—જન્મ, જરા ઓર મરણ કે પ્રવાહ મેં ઉત્પન્ન હોને

આ શરીર અનિત્ય છે, અપવિત્ર છે અને મલીન પદાર્થોથી રજ-વીર્ય
વગેરેથી, એનું સર્જન થયું છે. આ કામચલાઉ આવાસ છે-થોડા દિવસો
મુધી એમાં રહીને નિકળી જવાનું છે. આ શરીર દુઃખો તથા કલેશોનું પાત્ર
છે અર્થાત્ વિવિધ પ્રકારનાં કષ્ટ આ શરીરને લીધે જ બીચારા જીવને
લોગવવા પડે છે.

અન્યત્ર પણ કહ્યું છે-ધિક્કાર છે આ સંસારને કે જેમાં પોતાના રૂપ
સૌન્દર્યથી ગર્વિષ્ઠ બનેલો પુરૂષ યુવાવસ્થામાં જ મરણને પ્રાપ્ત થઈને તે જ
પોતાના કલેવરમાં કીડા સ્વરૂપે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે આ જાતની ભાવના
કરનારો પુરૂષ સંસારની માયાબળથી ઉદ્વિગ્ન થઈ જાય છે, અને સંસારથી
વિરક્ત થઈને સાંસારિક દુઃખોનો અંત કરવા માટે પ્રયત્નશીલ બને છે.

(૪) એકત્વ—જન્મ જરા અને મરણના પ્રવાહમાં ઉત્પન્ન થનારી ઘોર

વર્તેતે, એકાકી એવાહં જાતઃ એક એવ મિત્રે ચ, ન કશ્ચિત્સ્વજનઃ પરજનો-
વાઽઽધિવ્યાધિજરામરણાદીનિ દુઃસ્વાન્યપહર્તુ મમ સમર્થઃ, સુહૃદ્વાન્ધવાદયો-
ઽપિ શ્મશાનભૂમિપર્યન્તમેવ ગચ્છન્તિ કેવલં ધર્મ એવ મે સહાયોઽનપાયો વર્તેતે,
એવં ચિન્તનમેકત્વાનુપ્રેક્ષા । ઉક્તશ્ચ-

‘એગોહં નસ્થિ મે કોહ નાહમન્નસ્સ કસ્સ વિ ।

એવં અદીણ મણસા અપ્પાણ મણુસાસણ ॥૧॥

(છાયા)-એકોઽહં નાસ્તિ મે કોઽપિ-નાહ મન્યસ્ય કસ્યચિત્ ।

એવમ્-અદીનમનસા-આત્માન મનુશાસયેત્ ॥૧॥ પુનરપ્યુક્તમ્

‘દ્રવ્યશ્ચ ભૂમૌ, પશવશ્ચ ગોષ્ઠયાં માર્યા ગૃહદ્વારિ જનો શ્મશાને ।

દેહ શ્રિતાયાં પરલોકવાસે-ધર્માઽનુગો ગચ્છતિ જીવ એકઃ ॥૧॥ इति

વાલી ઘોર પીડા કા અનુભવ મુજે અકેલે કો હી કરના પડતા હૈ ।
ઉસમેં કોઈ મી અપના-પરાયા સહાયક નહીં હોતા । મેં અકેલા હી
જન્મા હૂં, અકેલા હી મરુંગા, કોઈ સ્વજન અથવા પરિજન મેરે આધિ,
વ્યાધિ, જરા મરણ આદિ દુઃખોં કો દૂર કરવે મેં સમર્થ નહીં હૈ । મિત્ર
ઔર બન્ધુ-વાન્ધવ મી અધિક સે અધિક શ્મશાન ભૂમિ તક હી સાથ
જાતે હૈં । એક માત્ર ધર્મ હી સચ્ચા સહાયક-સાથી હૈ । એસા ચિન્તન
કરના એકત્વાનુપ્રેક્ષા હૈ । કહા મી હૈં-

‘મેં એકાકી હૂં । મેરા કોઈ નહીં હૈ ઔર ન મેં કિસી કા હૂં હસ
પ્રકાર દૈન્ય હીન મન સે અપની આત્મા પર અનુશાસન કરે ।’

ઔર મી કહા હૈ-‘જય જીવ મૃત્યુ કે ચંગુલ મેં પડતા હૈ તબ
ધન-દૌલત ધરતી મેં દબી રહ જાતી હૈં, પશુ વાઢે મેં બંદ રહ જાતે હૈ,

પીડાને। અનુભવ મારે એકલાને જ કરવો પડે છે. તેમાં કોઈ પણ પોતાના
કે પારકા સહાયક બનતાં નથી હું એકલો જ જન્મ્યો છું, એકલો જ મરણ
પામીશ કોઈ સ્વજન અથવા પરજન મારા આધિ, વ્યાધિ જરા (બધપણ)
મરણ વગેરે દુઃખોને દૂર કરવા માટે સમર્થ નથી. મિત્ર તથા ભાઈ-સ્નેહીઓ
પણ બહુ-બહુ તો શ્મશાનભૂમિ સુધી જ સાથે આવે છે. એક માત્ર ધર્મ જ
સાથે સહાયક-મિત્ર છે. આ બાતનું ચિન્તન કરવું એકત્વાનુપ્રેક્ષા છે-કહું
પણ છે-હું એકાકી છું. મારું કોઈ નથી અને હું કોઈનો નથી. આ રીતે
દૈન્યહીન મનથી પોતાના આત્મા પર અનુશાસન કરવું. આગળ પણ કહું
છે-જ્યારે જીવ મૃત્યુની પકડમાં આવે છે ત્યારે ધન-દૌલત જમીનમાં દાટેલાં
જ રહી જાય છે, પશુ વાડામાં બાંધેલા જ રહી જાય છે. પત્ની ધરના દ્વાર
સુધી અને સ્વજન શ્મશાન સુધી સહારો આપે છે. શરીર ચિતા સુધી સાથ

एवं खलु भावयतः स्वजनकुटुम्बपरिवारादिषु प्रीत्यनुबन्धो ममत्वञ्च नोत्पद्यते, परजनेषु द्वेषानुबन्धश्च न जायते, ततोहि-निःसङ्गता मभ्युपगच्छन् मोक्षायैव चेष्टते-४ एवं-शरीरेन्द्रियादिभ्य आत्मनोऽन्यत्वचिन्तनम् अन्यत्वानुपेक्षा-उच्यते, पौद्गलिकशरीरादहं चेतनोऽन्य एव शरीरमनित्यम्, अहं तु नित्यः, अङ्गं शरीरम्, अहन्तुज्ञोऽस्मि, शरीरं सादिनिधनम्, अहं पुनरनादिरनिधनः बहूनि मे शरीराणि व्यतीतानि संसारकान्तारं परिभ्रमतः । एव मिन्द्रियादि-पत्नी घर के द्वार तक और स्वजन इमशान तक साथ देते हैं । देह चिता तक साथ देती है । परलोक की ओर प्रयाण करते समय इनमें से कोई साथी नहीं बनता । एक मात्र धर्म ही उस समय साथ जाता है ।’

इस प्रकार विचार करने से स्वजनों तथा कुटुम्ब-परिवार आदि के प्रति प्रीति नहीं उत्पन्न होती-ममता हट जाती है और पर-जनों पर द्वेष नहीं होता । इस कारण ऐसा विचार करने वाला निःसंगता को अंगीकार करके मोक्ष के लिए प्रयत्न करता है ।

(५) अन्यत्वानुपेक्षा—शरीर और इन्द्रियों आदि से आत्मा की भिन्नता को चिन्तन करना अन्यत्वानुपेक्षा है । शरीर अचेतन है, मैं चेतन हूँ । शरीर अनित्य है मैं नित्य हूँ, शरीर अज्ञानमय है, मैं ज्ञानमय हूँ, शरीर की आदि है—अन्त है, मैं अनादि अनिधन हूँ । इस संसार—अटवी में भ्रमण करते करते मैंने बहुतेरे शरीर धारण करके त्यागे हैं ! इसी प्रकार इन पुद्गलमय और अनित्य इन्द्रियों से भी—मैं भिन्न

આપે છે. પરલોકની યાત્રા તરફ પ્રયાણ કરતા સમયે આમાંનું કોઈ સાથી બનતું નથી. એક માત્ર ધર્મ જ સાથે બાંધે છે.

આવી રીતે વિચાર કરવાથી સ્વજનો તથા કુટુંબ-પરિવાર આદિ તરફ પ્રીતિ ઉત્પન્ન થતી નથી-મમતા યાદી બાંધે છે અને અન્ય માણસો તરફ દ્વેષભાવ થતો નથી. આ બાંધતો વિચાર કરનારો નિઃસંગતાને ધારણ કરીને મોક્ષ પ્રાપ્તિ માટે જ પ્રયત્ન કરે છે.

(૫) અન્યત્વાનુપેક્ષા—શરીર અને ઇન્દ્રિયો આદિથી આત્માની ભિન્નતાનું ચિન્તન કરવું અન્યત્વાનુપેક્ષા છે, શરીર અચેતન છે, હું ચેતન છું, શરીર અનિત્ય છે, હું નિત્ય છું, શરીર અજ્ઞાનમય છે, હું જ્ઞાનવંતો છું, શરીરની આદિ છે—અન્ત છે, હું અનાદિ અનન્ત છું, આ સંસાર—અટવીમાં ભ્રમણ કરતા કરતા મેં ઘણી બાંધના શરીરો ધારણ કર્યા છે અને ત્યાગ પણ કર્યા છે એ જ રીતે આ પુદ્ગલમય અને અનિત્ય ઇન્દ્રિયોથી પણ હું નોખો છું.

અયોડપિ પૌદ્ગલિકેભ્યોડનિત્યાદિભ્યઃ સ્વલ્પહં મિન્નં એવાસ્મિ, યદા ચ-સ્વશરી-
રાદિભ્યોડપિ મેડન્યસ્ત્વં વર્તતે-તદા કિમુત વક્તવ્યમ્ વાહ્યપરિગ્રહેભ્યઃ-૩ इत्येव
भावयतः खलु मनः समादधतः शरीरादिषु स्पृहा नोपजायते, ततश्चात्मज्ञान
भावनापूर्वकनिर्वेदप्रकर्षे सति आत्यन्तिकमोक्षसुखप्राप्तिस्तस्य भवति ५ एवं-
शरीरमिदमत्यन्ताशुचिस्थानं वर्तते । शुक्रशोणितसमुद्भूतत्वात्-मूत्रपुरीषादि
युक्तत्वाच्च स्नानानुलेपनादि भिरप्यस्याप्यशुचित्वं नापहर्तुं शक्यते सम्यग्द-
र्शनादिकं पुनर्भाव्यमानं जीवस्यात्यन्तिकीं बुद्धिमाविर्भावयति, इत्येव
तत्त्वतो विचारणम्-अशुचित्वानुपेक्षा, एवं संस्मरणं कुर्वतः शरीरादिष्वसङ्गता-

हूँ । जब अपने शरीर आदि से भी मेरी भिन्नता है तो बाह्य वस्तुओं
का तो कहना ही क्या है ! शरीर ही मेरा नहीं तो अन्य पदार्थ मेरे
कैसे हो सकते हैं ! ऐसी भावना करने वाले और मन का समाधान
करने वाले पुरुष को शरीर आदि में स्पृहा नहीं रहती । ऐसी स्थिति
में आत्मज्ञान की भावना उत्पन्न होकर वैराग्य की वृद्धि होती है और
तब जीव मोक्ष के आत्यन्तिक सुख को प्राप्त करता है ।

(૬) અશુચિત્વાનુપેક્ષા—યહ શરીર અત્યન્ત હી અશુચિ કા સ્થાન
હૈ । રજ ઓર વીર્ય સે ઉત્પન્ન હોને કે કારણ તથા મલ-મૂત્ર આદિ
ગંદી વસ્તુઓ સે યુક્ત હોને કે કારણ, કિતના હી સ્નાન ઓર વિદે-
પન કર્યો ન કિયા જાય મગર હસકી ગંદગી દૂર નહીં હો સકતી ।
સમ્યગ્દર્શન આદિ કી ભાવના કી જાય તો જીવ કી આત્યન્તિક
શુદ્ધિ ઉત્પન્ન હોતી હૈ । હસ પ્રકાર ચિન્તન કરના અશુચિત્વભાવના

બ્યારે મારા શરીર આદિથી પણ મારી ભિન્નતા છે તો પછી બાહ્ય વસ્તુ-
ઓનું તો કહેવું જ શું ? જો શરીર મારું પોતાનું નથી તો અન્ય પદાર્થો
મારા કેવી રીતે હોઈ શકે ? એવી ભાવના ભાવનાર અને મનનું સમાધાન
કરનારા પુરુષને શરીર આદિમાં સ્પૃહા રહેતી નથી. આવી સ્થિતિમાં આત્મ-
જ્ઞાનની ભાવના ઉત્પન્ન થવાથી વૈરાગ્યની વૃદ્ધિ થાય છે ત્યારે જીવ મોક્ષના
આત્યન્તિક સુખને પ્રાપ્ત કરે છે.

(૬) અશુચિત્વાનુપેક્ષા—આ શરીર પુષ્કળ ગંદકીનું સ્થાન છે. રજ તથા
વીર્યથી ઉત્પન્ન થવાથી તથા મળ-મૂત્ર વગેરે ગંદી વસ્તુઓથી યુક્ત હોવાના
લીધે, કેટલીએ વાર સ્નાન તથા વિદેપન કરીએ તો પણ આ શરીરની ગંદકી
દૂર થતી નથી-થઈ શકતી નથી-સમ્યગ્દર્શન વગેરેની ભાવના કરવામાં આવે
તો જીવની આત્યન્તિક શુદ્ધિ ઉત્પન્ન થાય છે. આવું ચિન્તન કરવું અશુ-

ઽઽર્થિભવતિ, વિરક્તશ્ચ-ભવાર્ણવોત્તરણાય સમાદિતચિત્તો ભવતિ ૬ ઇન્દ્રિયકષાય
ક્રોધમાનમાયાલોભપ્રાણાતિપાતાદયઃ કર્માસ્રવકારણરૂપાઃ સન્તિ, સ્પર્શના-
દીનિ-ઇન્દ્રિયાણિ પતંગ્માતંગકુરંગભૃંગમીનાદીન્ પ્રાણિનો બન્ધવ્યસનાર્ણવે પાત-
યન્તિ, કષાયાદયોઽપિ વધબન્ધપરિક્લેશાદીન્ ઉત્પાદયન્તિ નરકાદિગતિષુ
ચ નાનાવિધદુઃસ્વપ્રજ્વલિતાસુ પરિભ્રમયન્તિ, इत्येवमास्रवदोषानुचिन्तन मास्रवा-
નુપેक्षा-उच्यते, एवं भावादयः क्षमादिषु श्रेयस्त्वभावो न प्रच्युतो भवति,
सर्वएते-मास्रवदोषाः कर्मवत् संवृतात्मनो न सम्भवन्ति-७ एवं-संवरगुणा

હે । જો એસા ચિન્તન કરતા હૈ, વહ શરીર આદિ કે પ્રતિ મમત્વહીન
બન જાતા હૈ ઓર વિરક્ત હોકર સંસાર-સાગર સે પાર હોને કે લિષ
ઉચ્ચત હો જાતા હૈ ।

(૭) આસ્રવાનુપેક્ષા—ઇન્દ્રિયાં, ક્રોધ માન માયા લોભ રૂપ કષાય
ઔર પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મ કે આસ્રવ કે કારણ હૈ । યે સ્પર્શન આદિ
ઇન્દ્રિયાં પતંગ, માતંગ (હાથી) કુરંગ (હિરણ), ભૃંગ (અમર) ઔર
મીન આદિ પ્રાણિયોં કો બન્ધન કે દુઃસ્વ સાગર મૈં પટ કતી હૈ ।
કષાય આદિ ભી વધ, બન્ધન આદિ કે વલેશોં કો ઉત્પન્ન કરતે હૈ
ઔર નાના પ્રકાર કે દુઃસ્વોં સે પ્રજ્વલિત નરક આદિ ગતિયોં મૈં પરિ-
ભ્રમણ કરાતે હૈ । હસ પ્રકાર આસ્રવ કે દોષોં કા વિચાર કરના
આસ્રવાનુપેક્ષા હૈ । જો હસ પ્રકાર વિચાર કરતા હૈ ઉસકે ચિત્ત મૈં સે
ક્ષમા આદિ પ્રતિ શ્રેયસ્કરતા કા ભાવ વ્યુત નહીં હોતા । જો અપને
આપકો કૂર્મ કે સમાન સંવૃત (સંવર યુક્ત) કર લેતા હૈ, ઉસમૈં

ચિત્તલાવના છે. જે આ જાતનું ચિન્તન કરે છે તે શરીર વગેરે પ્રતિ
મમત્વહીન બની જાય છે અને વિરક્ત થઈને સંસાર-સાગર તરી જવા માટે
તત્પર થઈ જાય છે.

(૭) આસ્રવાનુપેક્ષા—ઇન્દ્રિયો, ક્રોધ માન માયા લોભ રૂપ કષાય અને
પ્રાણાતિપાત આદિ, કર્મના આસ્રવના કારણ છે. આ સ્પર્શન વગેરે ઇન્દ્રિયો
પતંગ (પતંગીયુ) માતંગ (હાથી) કુરંગ (હિરણ), ભૃંગ (અમર) અને મીન
(માછલી) વગેરે પ્રાણીઓને બન્ધનના દુઃખસાગરમાં ફેંકે છે. કષાય આદિ
યથા વધ, બન્ધન આદિના કલેશોને ઉત્પન્ન કરે છે અને જુદા જુદા પ્રકારના
દુઃખોથી પ્રજ્વલિત નરક આદિ ગતિઓમાં પરિભ્રમણ કરે છે. આ રીતે
આસ્રવના દોષોને વિચાર કરવો આસ્રવાનુપેક્ષા છે. જે આ રીતે વિચાર
કરે છે તેના મનમાંથી ક્ષમા આદિ પ્રત્યે શ્રેયસ્કરતાની લાવનામાં ઓટ
આવતો નથી. જે પોતે-પોતાને કાચબાની માફક સંવૃત (સંવરયુક્ત) કરી

ગુણાનુચિન્તનં-સંસરાનુપ્રેક્ષા, યથા-સમુદ્રે નાવો વિવરપિધાનાભાવે ક્રમશો વિવરતઃ પ્રવિષ્ટજલાભિપ્લવે સતિ નાવારૂઢાનામવશ્યં વિનાશો ભવેત્ વિવરપિધાનેતુ-નિરૂપદ્રવમિષ્ટદેશાન્તરપ્રાપ્તિઃ એવં કર્માગમાસ્રવદ્વારસંવરણે સતિ શ્રેયઃ-પ્રતિ-બન્ધો ન ભવતિ । ઉક્તશ્ચો-ત્તરાધ્યયને-‘જા ઉ અસ્સાવિણી નાવા ન સા પારસ્સ ગામિણી જો ય નિસ્સવિણીનાવા સા ઉ પારસ્સ ગામિણી ॥૭૧॥ (અધ્યયને-૨૩) યા તુ-આસાવિણી નૌકા ન સા પારસ્ય ગામિણી । યા ચ નિઃસા-વિણી નૌકા સા તુ પારસ્ય ગામિણી ॥૧॥ ઇતિ, એવં ભાવયતઃ સંવરે કર્માસ્રવ-પૂર્વોક્ત આસ્રવદોષ કા સંભવ નહીં હોતે ।

(૮) સંવરાનુપ્રેક્ષા--સંવર કે ગુણો કા ચિન્તન કરના સંવરાનુ-પ્રેક્ષા હૈ । સમુદ્ર મેં કોઈ છિદ્રોવાલી નૌકા હો ઓર ઉસકે છિદ્રોં કો અગર બંદ ન કર દિયા જાય તો છિદ્રોં દ્વારા ઉસમેં જલ કા પ્રવેશ હોતા હૈ ઓર ઉસ પર સવાર લોગ અવશ્ય હી વિનાશ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈ । હસકે વિપરીત યદિ છિદ્ર બંદ કર દિયે જાએ તો વિના કિસી ઉપ-દ્રવ્ય કે દ્રષ્ટ મંજિલ તક પહુંચા જા સકતા હૈ । હસી પ્રકાર કર્મોં કે આગમનદ્વાર-આસ્રવ કો યદિ રોક દિયા જાય તો શ્રેયસ્ કી પ્રાપ્તિ મેં કિસી પ્રકાર કી રુકાવટ નહીં હોતી । ઉત્તરાધ્યયન મેં કહા હૈ-

‘જો નૌકા છિદ્રોં વાલી હોતી હૈ વહ પારગામિણી નહીં હોતી । કિન્તુ જો નૌકા છિદ્રરહિત હોતી હૈ વહ પાર પર્યન્ત પહુંચને વાલી હોતી હૈ । (અધ્યયન ૨૩)

જો હસ પ્રકાર કી ભાવના કરતા હૈ વહ સદૈવ સંવર મેં પરાયણ હૈ છે, તેનામાં પૂર્વોક્ત આસ્રવ દોષની શક્યતા રહેતી નથી.

(૮) સંવરાનુપ્રેક્ષા--સંવર શુણ્ણાનું ચિન્તન કરણું સંવરાનુપ્રેક્ષા છે. સમુદ્રમાં કોઈ છિદ્રોવાળી નૌકા હોય અને તેના છિદ્રોને જો પુરી ન દેવામાં આવે તો છિદ્રો દ્વારા તેમાં જળનો પ્રવેશ થાય છે અને તેમાં બેઠેલાં પ્રવાસીઓ અવશ્ય વિનાશને પ્રાપ્ત થાય છે. આથી ઉલ્ટું, જો છિદ્ર પુરી નાખવામાં આવે તો કોઈ પ્રકારના ઉપદ્રવ વગર નિશ્ચિત સ્થાન સુધી પહોંચી શકાય છે. એવી જ રીતે કર્મોના આગમનદ્વાર-આસ્રવને જો રોકી દેવામાં આવે તો શ્રેયસની પ્રાપ્તિમાં કોઈ પ્રકારનો અવરોધ આવતો નથી. ઉત્તરા-ધ્યયનમાં કહ્યું છે-જે નૌકા છિદ્રોવાળી હોય છે તે પારગામિણી હોતી નથી પરંતુ જે નૌકા છિદ્રરહિત હોય છે, તે કાંઠા સુધી પહોંચવાવાળી હોય છે. (અધ્યયન ૨૩) જે આ પ્રકારની ભાવના લાવે છે તે હંમેશાં સંવરમાં રત

નુપ્રેક્ષા, તથા ચિન્તયતો બોધિ પ્રાપ્ય પ્રમાદો ન કદાચિદપિ ભવતિ ૧૧ એવં-
ધર્મોપદેષ્ટાઽર્હન્, તદુપદિષ્ટો ધર્મોઽર્હિંસાદિલક્ષણો વિનયમૂલઃ ક્ષમાબલો બ્રહ્મચર્ય-
ગુપ્ત ઉપશમપ્રધાનો નિષ્પરિગ્રહિતાલ્કમ્બનો વર્તતે, તલ્લામાન્મોક્ષમાપ્તિર્ભવતીતિ
ચિન્તનં ધર્મ સાધકાનુપ્રેક્ષા, એવં-ચિન્તયતઃ खलु धर्मानुरागा त्सततं तदाराधने
यत्नपरो भवतीति भावः तथा चा-ऽनया खलु द्वादशविधयाऽनुप्रेक्षया कर्मास्त्रव-
निरोधरूपसंवरો भवतीति बोध्यम् १२॥

इन्द्रियकषाय क्रोध-मान-माया-लोभघ्राणातिपातादयः कर्मास्त्रवकारण-
रूपाः सन्ति स्पर्शनादीनि-इन्द्रियाणि पतङ्गमातङ्गकुरङ्गभृङ्गमीनादीन् प्राणिनो बन्ध-
व्यसनार्णवे पातयन्ति । कषायादयोऽपि-बधवन्धपरिव्लेशादीन् उत्पादयन्ति
नरकादि गतिषु च नानાવિધદુઃखપञ्चલિતાસુ પરિભ્રમયન્તિ, इत्येवमास्त्रव-
दोषાનુચિન્તનમાસ્ત્રવાનુપ્રેક્ષા ઉચ્યતે-એવં માત્રાદેતઃ ક્ષમાદિષુ શ્રેયસ્ત્વભાવો ન
પ્રચ્યુતો ભવતિ, સર્વ એતે આસ્ત્રવદોષાઃ કૂર્મવત્ સંઘટાત્મનો ન સમ્ભવન્તિ ૭
એવં-સંવરગુણાનુચિન્તનં સંવરાનુપ્રેક્ષા, યથા-સમુદ્રે નાવો વિવરપિધાનાભાવે
ક્રમશઃ વિવરતઃ પ્રવિષ્ટજલાભિપ્લવે સતિ નાવારુઢાનામવશ્યં વિનાશો ભવેત્
વિવરપિધાને તુ-નિરુપદ્રવાભિષ્ટદેશાન્તરપ્રાપ્તિઃ, એવં-કર્માગમાસ્ત્રવદ્વારસંવરણે
સતિ શ્રેયઃ પ્રતિવન્ધો ન ભવતિ । ઉક્તશ્ચોત્તરાધ્યયને ત્રયોવિંશત્યધ્યયને
एकसप्ततिगाथायाम्—

‘जा उ अस्साविणी नावा-न सा पारस्स गामिणी ।

जा य निस्साविणीनावा-सा उ पारस्स गामिणी ॥१॥

या तु आस्साविणी नौका-न सा पारस्य गामिणी ।

या च निःस्साविणी नौका-सा तु पारस्य गामिनी ॥१॥

(૧૧) બોધિદુર્લભાનુપ્રેક્ષા—હસ સંસાર મેં પ્રથમ તો મનુષ્યભવ કી
પ્રાપ્તિ દુર્લભ છે । કદાચિત્ પુણ્યયોગ સે વહ પ્રાપ્ત હો જાય તો સમાધિ
પ્રાપ્ત કરકા કઠિન છે । ડસકે હોને પર બોધિલાભ સફલ હોતા છે ।
એસા વિચાર કરના બોધિદુર્લભાનુપ્રેક્ષા છે । જો એસા ચિન્તન કરતા છે
વહ બોધિ કો પ્રાપ્ત કરકે કદાપિ પ્રમાદ નહીં કરતા ।

(૧૧) બોધિદુર્લભાનુપ્રેક્ષા—આ સંસારમાં પ્રથમ તો મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ
દુર્લભ છે. કદાચિત્ પુણ્યયોગથી તે પ્રાપ્ત થઈ જાય તો સમાધિ પ્રાપ્ત કરવી
કઠણ છે. તેના અસ્તિત્વથી જ બોધિલાભ સફળ થાય છે એવો વિચાર કરવો
બોધિદુર્લભાનુપ્રેક્ષા છે. જે આવું ચિન્તન કરે છે તે બોધિને પ્રાપ્ત કરીને
ક્યારેય પણ પ્રમાદ સેવતો નથી.

इत्येवं भावयतः संवरे कर्मास्रवनिरोधलक्षणे सततोद्युक्तता भवति निःश्रेयसपदप्राप्तिश्चेति ८ एवं-निर्जरायाः गुणदोषभावनं-निर्जरानुपेक्षा, निर्जरा च कर्मफलविपाकजन्या द्विविधा अबुद्धिपूर्वा-कुशलमूलाच । तत्र-नारकादि गतिषु कर्मफलविपाकजन्याऽबुद्धि पूर्वा १ अकुशलकर्मानुबन्धा परीषहजये कृते तु कुशलमूला शुभानुबन्धा निरनुबन्धाचेत्येवं चिन्तयतः कर्म निर्जरायै प्रवृत्ति भवति ९ समन्तादनन्तस्याऽलोकाकाशस्य बहुमध्यदेश भाग-वर्तिनो लोकस्य स्वभावानुचिन्तनं लोकानुपेक्षा, एवं भावयत स्ततत्त्व ज्ञानविशुद्धि-भवति १० संसारेऽस्मिन् मनुष्यभवो दुर्लभः तत्रापि-समाधिर्दुरवायः, सति तस्मिन् बोधि लाभः फलवान् भवतीत्येवं चिन्तनं बोधिलाभानुपेक्षा तथा चिन्तयतो बोधिं प्राप्य प्रमादो न कदाचिदपि भवति ११ एवं-धर्मोपदेष्टाऽर्हन् तदुपदिष्टो धर्मो हिंसादिलक्षणो विनयमूलः क्षमावलो ब्रह्मचर्यगुप्तः उपशम-प्रधानो निष्परिग्रहिताऽऽलम्बनो वर्तते तल्लभान्मोक्ष प्राप्तिर्भवतीति चिन्तनं धर्म साधकार्हत्वानुपेक्षा, एवं चिन्तयतः खलु धर्मानुरागात् सततं तदाराधने यत्न-परो भवतीति भावः, तथा चाऽनया खलु द्वादश विधयाऽनुपेक्षया कर्मास्रवनिरोध रूपसंवरो भवतीति बोध्यम् ॥६॥

(૧૨) ધર્મસાધકાર્હત્વાનુપેક્ષા—ધર્મ કે મૂલ ઉપદેશક અર્હન્ત ભગવાન હૈં । ડનકે દ્વારા ઉપદિષ્ટ અર્હિસામય ધર્મ વિનયમૂલક હૈ, ક્ષમા ડસકા બલ હૈ, વહ બ્રહ્મચર્ય સે ગુપ્ત હૈ, ઉપશમ કી પ્રધાનતાવાલા હૈ ઓર નિષ્પરિગ્રહિતા ડસકા આધાર હૈ । ંસે ધર્મ કે લાભ સે મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ડસ પ્રકાર વિચાર કરના ધર્મસાધકાનુપેક્ષા હૈ । જો ડસ ઓવના કા ચિન્તન કરતા હૈ, ડસમેં ધર્મ કે પ્રતિ અનુરાગ જાગૃત હોતા હૈ ઓર વહ ધર્મ કી આરાધના કરને મેં નિરન્તર તત્પર રહતા હૈ ।

ડસ પ્રકાર ડન દ્વાદશવિધ અનુપેક્ષાઓ સે આસ્રવનિરોધ રૂપ સંવર કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ॥૬॥

(૧૨) ધર્મસાધકાર્હત્વાનુપેક્ષા—ધર્મના મૂળ ઉપદેશક અર્હન્ત ભગવાન છે. તેમના દ્વારા ઉપદિષ્ટ અર્હિસામય ધર્મ વિનયમૂળક છે, ક્ષમા તેનું બળ છે, તે બ્રહ્મચર્યથી ગુપ્ત છે. ઉપશમની પ્રધાનતાવાળો છે અને નિષ્પરિગ્રહિતા તેનો આધાર છે. આવા ધર્મના લાભથી મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે. આ પ્રમાણે વિચાર કરવો ધર્મસાધકાર્હત્વાનુપેક્ષા છે. જે આ ભાવનાનું ચિન્તન કરે છે. તેને ધર્મની તરફ અનુરાગ જાગૃત થાય છે તેમજ તે, ધર્મની આરાધના કરવામાં લગાતાર તત્પર રહે છે.

આવી રીતે આ બાર અનુપેક્ષાઓથી આસ્રવનિરોધ રૂપ સંવરની પ્રાપ્તિ થાય છે. ॥૬॥

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિ:—પૂર્વ તાવદ્ ગુપ્તિસમિતિધર્માનુપ્રેક્ષા પરીપહજય ચારિ-
ત્રાણિ સંવરહેતુતયા પ્રતિપાદિતાનિ, તત્ર ક્રમશઃ સમિતિ-ગુપ્તિધર્માઃ સંભેદાઃ
પ્રતિપાદિતાઃ સમ્પત્તિ ક્રમપ્રાપ્તા મનુપ્રેક્ષાં પ્રરૂપયિતુમાહ—‘અણુપ્પેહા અણિ-
રુચાહ ચારસ ભાવના રૂવા ઇતિ, અનિત્યાદિ દ્વાદશ ભાવનાનાં ભાવના-
ડનુચિન્તનમ્ તત્રાડનિત્યસ્યાડનુચિન્તનમ્, આદિનાડશરણસ્યાડનુચિન્તનમ્,
સંસારસ્યાડનુચિન્તનમ્, એકત્વસ્યાડનુચિન્તનમ્, અન્યત્વસ્યાડનુચિન્તનમ્, અશુ-
ચિત્ત્વસ્યાડનુચિન્તનમ્, આસ્રવસ્યાડનુચિન્તનમ્, સંવરસ્યાડનુચિન્તનમ્, નિર્જરાયા
અનુચિન્તનમ્, લોકસ્યાડનુચિન્તનમ્ બોધિદુર્લભસ્યાડનુચિન્તનમ્, ધર્મ સાધકાર્હત્વ-
સ્યાડનુચિન્તનમ્, ઇત્યેવં દ્વાદશ ભાવનાઃ ઇતિ દ્વાદશાનુપ્રેક્ષા ઉચ્યન્તે । તત્રાનુપ્રેક્ષણ
નુપ્રેક્ષા ડનુચિન્તનમ્ ઇતિ વાડનુપ્રેક્ષાઃ અનિત્યત્વાડનુચિન્તનરૂપા

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિ—પહેલે પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા થા કિ ગુપ્તિ,
સમિતિ, ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા, પરીપહ જય ઓર ચારિત્ર સંવર કે સાધન
હૈં । इनमें से समिति, गुप्ति और धर्म का भेद प्रदर्शन पूर्वक प्रति-
पादन किया गया, अब क्रम से प्राप्त अनुप्रेक्षा का प्ररूपण करते हैं—
अनित्यत्व आदि बारह भावनाएं अनुप्रेक्षारूप हैं । अर्थात् अनित्यता
का अनुचिन्तन करना, अशरणता का अनुचिन्तन करना, संसार का
अनुचिन्तन करना, एकत्व का अनुचिन्तन करना, अन्यत्व का अनु-
चिन्तन करना, अशुचिता का अनुचिन्तन करना, आस्रव का अनु-
चिन्तन करना, संवर का अनुचिन्तन करना, निर्जरा का अनुचिन्तन
करना, लोक का अनुचिन्तन करना, बोधि की दुर्लभता का अनुचिन्तन
करना और धर्मसाधकार्हत्व का अनुचिन्तन करना, यह बारह भाव-
नाएं द्वादशानुप्रेक्षाएं कहलाती हैं ।

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિ—અગાઉ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હતું કે ગુપ્તિ
સમિતિ, ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા, પરીપહજય અને ચારિત્ર સંવરના સાધન છે.
આમાંથી સમિતિ, ગુપ્તિ અને ધર્મના ભેદ પ્રદર્શનપૂર્વક પ્રતિપાદન કરવામાં
આવ્યા હવે ક્રમથી પ્રાપ્ત અનુપ્રેક્ષાનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ અનિત્યત્વ આદિ
બાર ભાવનાઓ અનુપ્રેક્ષા રૂપ છે અર્થાત્ અનિત્યતાનું અનુચિન્તન કરવું,
અશરણતાનું અનુચિન્તન કરવું, સંસારનું અનુચિન્તન કરવું, એકત્વનું અનુ-
ચિન્તન કરવું, અન્યત્વનું અનુચિન્તન કરવું, અશુચિતાનું અનુચિન્તન કરવું,
આસ્રવનું અનુચિન્તન કરવું, સંવરનું અનુચિન્તન કરવું, નિર્જરાનું અનુચિ-
ન્તન કરવું, લોકનું અનુચિન્તન કરવું, બોધિની દુર્લભતાનું અનુચિન્તન
કરવું, અને ધર્મસાધકાર્હત્વનું અનુચિન્તન કરવું, આ બાર ભાવનાઓ
દ્વાદશાનુપ્રેક્ષાઓ કહેવાય છે,

ભાવનાઽનિત્યાનુપ્રેક્ષા, યથા-વાહ્યાનિ શર્યાસનવસ્ત્રૌ-ધિકૌ-પગ્નહિકોપધિ
રજોહરણપાત્રદંડાદિ દ્રવ્યાણિ । આશ્યન્તરં-શરીરદ્રવ્યમ્ જીવૈર્વર્ષાપ્તરવાત્
તૈઃ સર્વૈઃ સહ સંયોગાશ્ચાઽનિત્યાઃ સન્તિ इत्येव मनुचिन्तयेत् । તપ્ર પ્રતિદિનં
ગૃહમાણ યુપયુજ્યમાન્ઞ્ચ વસ્ત્રપાત્રાદિકમ્ ઔધિકોપધિરુચ્યતે, વર્ષાદિકારણે
કાલવિશેષે સમુપસ્થિતે સતિ અનિયતકાલાર્થં પીઠફલ્કાદીનાં સંયમાય ગ્રહણમ્
ઔપગ્નહિકોપધિરુચ્યતે । ઉપ-આત્મનઃ સમીપે કારણે સતિ સંયમયાત્રા નિર્વાહાર્થં
દરતુનો ગ્રહણમ્ ઉપગ્રહઃ સ પ્રયોજનમયે ત્યૌપગ્નાહિકઃ, તૃણકાઠપીઠફલ્ક-

અનુપ્રેક્ષણ કરના યા જિસકા અનુપ્રેક્ષણ કિયા જાય, વહ અનુ-
પ્રેક્ષા કહલાતી હૈ । इनका स्वरूप इस प्रकार है-

(૧) અનિત્યત્વાનુપ્રેક્ષા--અનિત્યતા કા ચિન્તન કરના અનિત્ય-
ત્વાનુપ્રેક્ષા હૈ । શર્યા, આશન, વસ્ત્ર, ઔધિક યા ઔપગ્નહિક ઉપધિ,
રજોહરણ, પાત્ર, દંડ આદિ વાહ્ય દ્રવ્ય કહલાતે હૈ । શરીર આશ્યન્તર
દ્રવ્ય કહલાતા હૈ. ક્યોં કિ વહ જીવોં સે વ્યાપ્ત હોતા હૈ । इन सब
के साथ जो भी संयोग हैं, वे सब अनित्य हैं, ऐसा विचार करना चाहिए ।

જો વસ્ત્ર પાત્ર આદિ પ્રતિદિન ગ્રહણ કિયે જાતે ઔર કામ મેં
લાયે જાતે હૈ, उन्हें औधिक उपधि कहते हैं । વર્ષા આદિ કારણ ઉપ-
સ્થિત હોને પર, વિશેષ અવસર પર અનિયત કાલ કે લિયે સંયમ
કે વાસ્તે જો પીઠા યા પાટ આદિ ગ્રહણ કિયે જાતે હૈ, उनको औप-
ग्नहिक उपधि कहते हैं । ઉપ અર્થાત્ આત્મા કે સમીપ, કારણ હોને
પર સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે વસ્તુ કા ગ્રહણ કરના 'ઉપગ્રહ'

અનુપ્રેક્ષણ કરવું અને જેની અનુપ્રેક્ષણ કરી શકાય તે અનુપ્રેક્ષા
કહેવાય છે. એમનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે છે-

(૧) અનિત્યત્વાનુપ્રેક્ષા-અનિત્યતાનું ચિન્તન કરવું અનિત્યત્વાનુપ્રેક્ષા
છે. શર્યા, આસન, વસ્ત્ર, ઔધિક અથવા ઔપગ્નહિક ઉપધિ, રજોહરણ, પાત્ર,
દંડ આદિ બાહ્ય દ્રવ્ય કહેવાય છે. શરીર આશ્યન્તર દ્રવ્ય કહેવાય છે કારણ
કે તે જીવથી વ્યાપ્ત હોય છે આ બધાની સાથે જે સંયોગ છે તે તમામ
અનિત્ય છે, એવો વિચાર કરવો જોઈએ.

જે વસ્ત્ર, પાત્ર આદિ દરરોજ ગ્રહણ કરવામાં આવે છે અને ઉપયોગમાં
લેવાય છે તેમને ઔધિક ઉપધિ કહેવામાં આવે છે. વરસાદ વગેરે કારણો
આવી પડવાને લીધે, વિશેષ અવસરે અનિશ્ચિત સમય માટે સંયમ કાળે જે
પીઠ અથવા પાટ વગેરે ગ્રહણ કરવામાં આવે છે, તેમને ઔપગ્નહિક ઉપધિ
કહે છે, 'ઉપ' અર્થાત્ આત્માની નજીક કારણ આવી પડવાથી, સંયમ-

કાદિ । તત્ર શરીરં તાવત્ જન્મત્ આરભ્ય પૂર્વ સ્વરૂપં પ્રતિક્ષણં પરિત્યજદ્ ઉત્તરા-
વસ્થાં પ્રતિપદ્યતે, પ્રતિપલશ્ચાઽન્યથાઽન્યથા ભવદ્ જરાજર્જરિતસર્વાવયવં પુદ્ગલચય-
વિરચનામાત્રં પર્યવસાને ત્યક્તશ્ચન્નિવેશવિશેષં વિશીર્યતે इति પરિણામાનિત્યતયા-
ઽનિત્યમેવ શરીરમિતિ એવં ચિન્તયત સ્તત્ર સ્નેહબન્ધરૂપામિષ્ઠાઙ્ગો ન ભવતિ,
તતશ્ચ-સ્નેહાભ્યઙ્ગનોદ્વર્તનમર્દનસ્નાનવિભૂષાદિષુ નિઃસ્પૃહસ્ય ધર્મધ્યાનાદિષુ
રુચિરુત્પદ્યતે । તથાચાગમેઽપ્યુક્તમ્-‘જં પિ ચ હમં સરીરં’ इदं, કંતં પિયં,
મણુળં, મળામં, ધિજ્જં, વેસાસિયં, સમ્પયં, અણુમયં, બંડકરંડગ-
સમાણં, રચણકરંડગમૂયં, મા ણં, સીયં, મા ણં, ઉપહં, મા ણં, છુહા,
મા ણં પિવાસા, મા ણં વાલા, મા ણં ચોરા, મા ણં દંલા, મા ણં મલ્લા,
મા ણં વાહ્ય પિત્તિષ-સંમિષ-સંતિલાહ્ય વિવિહા રોગાયંકા, પરીસહો-
બસગ્ગા ફાસા ફુસંતુ, એયં પિ ચ મે ન તાણાણ વા સરણાણ વા ભવહ-

કહલાતા હૈ । ઉપગ્રહ जिसका प्रयोजन हो वह औपग्रहिक है जैसे घास, काष्ठ का पीठा, पाट आदि ।

શરીર જન્મ સે લેકર ક્ષણ-ક્ષણ મેં અપને પૂર્વ સ્વરૂપ કા ત્યાગ કરતા રહતા હૈ ઓર નવીન-નવીન અવસ્થાઓ કો ધારણ કરતા રહતા હૈ । વહ પ્રતિપલ અન્ય-અન્ય રૂપ ધારણ કરતા હુઆ જરા સે જર્જરિત હો જાતા હૈ ઓર અન્ત મેં પુદ્ગલોં કી યહ શરીર રૂપ આકૃતિ થી નષ્ટ હો જાતી હૈ । હસ પ્રકાર નિરન્તર પરિણમન કરને કે કારણ શરીર અનિત્ય હૈ । જો હસ પ્રકાર કા ચિન્તન કરતા હૈ, ઉસે શરીર કે પ્રતિ આસક્તિ નહીં રહતી ઓર વહ તૈર, ઉવટન, મર્દન, સ્નાન ઓર વિભૂષા આદિ કરને મેં નિસ્પૃહ હો જાતા હૈ । ધર્મધ્યાન આદિ મેં ઉસકી રુચિ ઉત્પન્ન હો જાતી હૈ । આગમ મેં ઓ કહા હૈ ।

યાત્રાના નિર્વાહને માટે વસ્તુતું યદણુ કરવું ‘ઉપગ્રહ’ કહેવાય છે, ઉપગ્રહ જેનું પ્રયોજન હોય તે ઔપગ્રહિક છે. દા. ત. ઘાસ લાકડાનું પીઠ, પાટ વગેરે.

શરીર, જન્મથી લઈને ક્ષણ-ક્ષણમાં, યોતાના પૂર્વસ્વરૂપનો ત્યાગ કરતું રહે છે અને નવી-નવી અવસ્થાઓને ધારણ કરતું રહે છે. તે પ્રત્યેક પળે બુદ્ધા બુદ્ધા રૂપ ધારણ કરતું થકું ઘડપણથી જર્જરિત થઈ જાય છે અને છેવટે પુદ્ગલોની આ શરીર રૂપ આકૃતિ પણ નષ્ટ થઈ જાય છે. આ રીતે નિરન્તર પરિણમન કરવાના કારણે શરીર અનિત્ય છે. જે આ રીતનું ચિન્તન કરે છે, તેને શરીરની પ્રતિ આસક્તિ રહેતી નથી અને તે તેલમાલિશ, ઉવટન, મર્દન, સ્નાન અને વિભૂષા વગેરે કરવામાં નિસ્પૃહ થઈ જાય છે. ધર્મધ્યાન આદિમાં તેની રૂચિ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, આગમમાં પણ કહ્યું છે-

છાયા—યદપિ ચ મેં इदं शरीरम्-इष्टं कान्तं प्रियं मनोज्ञं मनआमं धैर्यं वैश्वासिकं सम्मतं बहुमतं भाण्डकरण्डकसमानं रत्नकरण्डभूतं मा इदम् उष्णं, मा इदं शीतं, मा इदं क्षुधा, मा इदं पिपासा, मा इदं व्यालाः, मा इदं चौराः मा इदं दंशाः मा इदं मशकाः मा इदं वातिक-पैत्तिक श्लैष्मिक-सान्निपातिका विविधा रोगा-तङ्का परीषहोपसर्गाः स्पर्शाः स्पृशन्तु । एवं रीत्या रक्षितं एतदपि च मे न त्राणाय वा न शरणाय भवति, इति । एवं-शय्या तावत् प्रतिश्रयः संस्तारफलकपट्टकादिः प्रतिदिनं रजोधूलिष्वि विपरिणतं सत् सर्वथा स्वसन्निवेशं रचनाकारं परित्यज्य

‘और यह जो शरीर इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ, मनाम (अत्यन्त मनोज्ञ) धैर्यरूप, विश्वासपात्र, सम्मत, अनुमत, उत्तम भाण्ड-सामान के करंडक के समान एवं रत्नों के करंडिये के समान है और जिसके विषय में यह सावधानी रखी जाती है कि कहीं इसे ठंड न लग जाय, गर्मी न लग जाय, भूख या प्यास की पीडा न हो, कहीं सर्प न डंस ले, चोर न चुरा ले जाएं, डांस और मच्छर न सताएं, वात पित्त कफ या सन्निपात संबंधी रोग उत्पन्न न हो जाएं, परीषह और उपसर्ग से कष्ट न पहुंचे, उसे कोई अनिष्ट संयोग न हो, ऐसा यह शरीर भी मेरे लिए प्राण कारण या शरणदाता नहीं है ।

इसी प्रकार शय्या अर्थात् उपाश्रय (स्थानक), विस्तर, पीढा, पट आदि, घास आदि के बने हुए आसन तथा चोल पट आदि वस्त्र प्रति-दिन रज एवं धूल से पलटते रहते हैं और अन्त में इतने जीर्ण-शीर्ण हो जाते हैं कि उनका पहले का आकार भी नष्ट हो जाता है ।

આ જે શરીર ઈષ્ટ, કાન્ત, પ્રિય, મનોજ્ઞ, મનામ (અત્યન્ત મનોજ્ઞ), ધૈર્યરૂપ, વિશ્વાસપાત્ર, સમ્મત, અનુમત, ઉત્તમ, ભાન્ડ જેવું, સામાનના કરંડિયા જેવું, અને રત્નોના કરંડિયા જેવું છે અને જેના માટે એવી તકેદારી રાખવામાં આવે છે કે કયાંય આને ઠંડી ન લાગી જાય, ગર્મી ન લાગી જાય, ભૂખ તથા તરસની પીડા ન થાય, કયાંય સર્પ ન ડંસે, ચોર ચોરી ન જાય, ડાંસ અને મચ્છર સતાવે નહીં, વાત, કફ, અથવા સન્નિપાત સંબંધી રોગ ઉત્પન્ન ન થાય પરીષદ અને ઉપસર્ગથી કષ્ટ ન પહોંચે તેને કોઈ અનિષ્ટ સંયોગ ન આવી પડે; આવું આ માટે શરીર મને પાર ઉતારનાર અથવા શરણુદાતા નથી.

આજ પ્રમાણે શય્યા અર્થાત્ ઉપાશ્રય (સ્થાનક) પથારી પીઠ-પાટ આદિ. ઘાસ વગેરેના બનેલા આસન તથા ચોલવટ્ટ આદિ વસ્ત્ર દરરોજ રોટી અને ધૂળથી ખરડાતાં હોય છે અને છેવટે એટલા જીર્ણ-શીર્ણ થઈ

જીર્ણાં પતિયથતે 'સંયોગા વિપ્રયોગાન્તાઃ' इति न्यायात् यावन्तो मम संयोगाः बाह्याभ्यन्तरशय्या शरीरादिभिर्द्रव्यैः संबद्धाः सम्बन्धा वर्तन्ते सर्व एव तेऽ-
काण्डे क्षणभङ्गुराः सन्ति, 'अवश्यमेव चाऽऽदिमता संयोगेन विप्रयोगा-
न्तेन भवितव्यम्' एतेषां खलु शरीरशय्यादि बाह्याभ्यन्तरद्रव्याणां विनश्वर-
त्वस्वभावः खलु वर्तते' इत्येव मनुचिन्तनेन तेष्व्वासक्तिच्छ्रणाभिष्वङ्गो न भवति,
तैः खलु बाह्याभ्यन्तरशरीरादिद्रव्यैः संयोगवियोगे सति शारीरं-मानसं वा
दुःखं नोत्पद्यते इत्यतोऽनित्यानुपेक्षा परमावश्यकी भवति १ अशरणानुचिन्तनरूपा
—ऽशरणानुपेक्षा, यथा—जगत्सूच्ये निराश्रये घनविषिने बलवता बुभुक्षितेन मांसा-

‘સંયોગોં કા અન્તિમ પરિણામ વિયોગ હૈ’ હસ ઉક્તિ કે અનુસાર બાહ્ય
યા આભ્યન્તર શય્યા એવં શરીર આદિ કે સાથ મેરે જો મી સંબંધ હૈ,
વે સબ અકાલવિનશ્વર યા ક્ષણભંગુર હૈ, કયોં કિ જિસ સંયોગ કી
આદિ હૈ ઉસકા અન્ત અવશ્યંભાવી હૈ । કયા યહ શરીર ઓર કયા
શય્યા આદિ બાહ્ય દ્રવ્ય, સમી વિનાશશીલ હૈ ।

હસ પ્રકાર કા ચિન્તન કરને સે શરીર આદિ મેં આસક્તિ નહીં
હોતી ઓર શરીર આદિ બાહ્યાભ્યન્તર દ્રવ્યોં કે સાથ સંયોગ અથવા
વિયોગ હોને પર શારીરિક યા માનસિક દુઃસ્વ ઉત્પન્ન નહીં હોતા ।
હસ કારણ યહ અનિત્ય ભાવના અત્યન્ત આવશ્યક હૈ ।

(૨) અશરણાનુપ્રેક્ષા-અશરણતા કા ચિન્તન કરના અશરણાનુપ્રેક્ષા
હૈ । જૈસે સુનસાન આશ્રયવિહીન સઘન વન મેં બલવાન્ ભૂચે ઓર

બાંધ છે કે તેમનો પ્રથમનો આકાર (આકૃતિ) પણ નષ્ટ થઈ બાંધ છે સંયો-
ગોનું અન્તિમ પરિણામ વિયોગ છે.’ આ ઉક્તિ અનુસાર બાહ્ય અથવા
આભ્યન્તર શય્યા અને શરીર વગેરેની સાથેના મારા જે પણ સંબંધ છે તે
બધાં અકાલવિનશ્વર અથવા ક્ષણભંગુર છે કારણ કે જે સંયોગની આદિ છે
તેનો અન્ત અવશ્યંભાવી છે. શું આ શરીર અથવા પથારી આદિ બાહ્યદ્રવ્ય,
છેવટે તે બધાં જ નાશવન્ત છે.

આ પ્રકારનું ચિન્તન કરવાથી શરીર આદિમાં આસક્તિ રહેતી નથી
અને શરીર વગેરે બાહ્યાભ્યન્તર દ્રવ્યોની સાથે સંયોગ અથવા વિયોગ થવાથી
શારીરિક અથવા માનસિક દુઃખ ઉત્પન્ન થતાં નથી આથી આ અનિત્યભાવના
અત્યન્ત આવશ્યક છે.

(૨) અશરણાનુપ્રેક્ષા:-અશરણતાનું ચિન્તન કરવું અશરણાનુપ્રેક્ષા છે.
જેમ સુનસાન આશ્રય વગરના ગાઠ જંગલમાં બગવાન બૂખ્યા અને માંસ-

જિના વ્યાગ્રેનાક્રાન્તસ્યાઽભિમૂતસ્ય મૃગશાબકસ્ય કિંચિદપિ શરણં ન ભવતિ, एवं-जन्मजरामरणाऽऽधिव्याधि त्रिप्रयोगाऽप्रियसंयोगाऽनिष्ट प्राप्तीष्टानवाप्ति दारिद्र्य दुर्भाग्य दुर्मनस्यादि जन्मेन दुःखेनाऽभिमूतस्य प्राणिनः संसारेऽस्मिन् न किमपि शरणं विद्यते 'धर्मविना' इत्येवमनुचिन्तयतो जीवस्य 'नित्यमहम-शरणोऽस्मि' इति सर्वथोद्विग्नस्य सांसारिकेषु मनुज-देवसम्बन्धिसुखेषु हिरण्य-रत्नसुवर्णादिषु हस्तयश्महर्षादिषु च नाभिषङ्गो भवति अपितु-तीर्थकृदुक्तागम-विहित ज्ञानदर्शनचरणादिषु नित्यं प्रवर्तते यतो हि जन्मजरामरणभयविविध-व्याधि परिक्लेशपरिष्वक्तस्य जीवस्य ज्ञानदर्शनचरणमेव परमशरणम् 'इत्य-

માંસભક્ષી વ્યાગ્ર કે દ્વારા આક્રમણ કરને પર હિરણ કે બચ્ચે કે લિષે કોઈ ભી શરણ નહીં હોતા, હસી પ્રકાર જન્મ, મરણ, આધિ, વ્યાધિ, ઇષ્ટવિયોગ, અનિષ્ટસંયોગ, અનિષ્ટ પ્રાપ્તિ, ઇષ્ટ કી અપ્રાપ્તિ, દરિ-ત્રતા, દુર્ભાગ્ય ંવં દુર્મનસ્કતા આદિ સે ઉત્પન્ન હોને વાલે દુઃખો સે સતાયે હુષે પ્રાણી કે લિષે હસ સંસાર મેં વર્મ કે અતિરિક્ત અન્ય કોઈ ભી શરણ નહીં હૈ ।

હસ પ્રકાર ચિન્તન કરને વાલે જીવ કો ંસા માન હો જાતા હૈ કિ મેં સદૈવ શરણ વિહીન હૂં ંસા જ્ઞાન હોને પર વહ વિરક્ત હો જાતા હૈ ંર મનુષ્ય તથા દેવ સંબંધી સંસારિક સુખો કે પ્રતિ તથા ંન સુખો કે સાધન સ્વર્ણ આદિ ંર હાથી ઘોડા મહલમકાન આદિ કે પ્રતિ નિરીહ ઘન જાતા હૈ । હતના હી નહીં, વહ તીર્થકર ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત જ્ઞાન દર્શન ચારિત્ર આદિ મેં સદા પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ, કયોંકિ

ભક્ષી કોઈ વાધ દ્વારા આક્રમણ થાય ત્યારે હરણના બચ્ચા માટે કોઈ પણ શરણ રહેતું નથી, એવી જ રીતે જન્મ, જરા, મરણ આધિ વ્યાધિ, ઇષ્ટ-વિયોગ, અનિષ્ટસંયોગ, અનિષ્ટપ્રાપ્તિ ઇષ્ટની અપ્રાપ્તિ દરિદ્રતા દુર્ભાગ્ય અને દુર્મનસ્કતા આદિથી ઉત્પન્ન થનારા દુઃખોથી સતાવવામાં આવેલ પ્રાણીને માટે આ સંસારમાં ધર્મ શિવાય બીજું કોઈ જ શરણ નથી.

આ રીતનું ચિન્તન કરનારા જીવને એ જાતનું જ્ઞાન થઈ જાય છે કે હું અશરણ છું અને આવી પ્રતીતિ થઈ જવાથી તે વિરક્ત થઈ જાય છે અને મનુષ્ય તથા દેવ સંબંધી સંસારિક સુખો તરફ તથા તે સુખોના સાધન સુવર્ણ આદિ અને હાથી, ઘોડા, મહલ મકાન પ્રત્યે નિસ્પૃહ બની જાય છે એટલું જ નહીં તે તીર્થંકર ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર આદિમાં હમેશાં પ્રવૃત્ત રહે છે, કારણ કે જન્મ જરા, મરણ, ભય, વિવિધ

શરણાનુપ્રેક્ષા' ૨ અથ સંસારાનુચિન્તનરૂપા-સંસારાનુપ્રેક્ષા, યથા-સંસારે સ્વલ્લ સંસારે ઘોરકાન્તારેષુ નરક-તિર્યગ્-મનુષ્ય-દેવમત્સ્યહણેષુ ચક્રવત્ પરિભ્રમન્તઃ સર્વ એવ પ્રાણિનઃ પિતૃ-માતૃ-ભ્રાતૃ-સ્વસૃ-પતિ-પત્ની-પુત્રાદિ ભાવેન યદા-સમ્બન્ધ મનુભવન્તિ, અન્વભૂવન્, અનુભવિષ્યન્તિ ચ તદા-સ્વજનશબ્દેન વ્યપદિ-શ્યન્તે । યદા તુ-તથાભાવેન સમ્બન્ધ નાડનુભવન્તિ, નાન્વભૂવન્, નાનુભવિષ્યન્તિ ચ, તદા-પરજનશબ્દેન વ્યપદિશ્યન્તે । કિન્તુ-ન નિયમતઃ સ્વજનપરજનયોઃ કાપિ વ્યવસ્થા દૃશ્યતે, તથાહિ-પિતાપિ ભૂત્વા ભવાન્તરે ભ્રાતા-પુત્રઃ-પૌત્રઃ-પૌત્રશ્ચ ભવતીત્યાદિ, એવં રીત્યા-સ્વલ્લ ચતુરશીતિલક્ષપરિમિતયોનિષુ રાગ-દ્વેષ-જન્મ, જરા, મરણ, મય, વિવિધ પ્રકાર કી વ્યાધિયોં એવં કલેશોં સે પ્રશ્ન જીવ કે લિલ જ્ઞાન, દર્શન ઓર ચારિત્ર હી ઉત્તમ શરણ હૈં । યહ અશરણાનુપ્રેક્ષા હૈ ।

(૩) સંસારાનુપ્રેક્ષા-સંસાર કે સ્વરૂપ કા વિચાર કરના સંસારાનુ-પ્રેક્ષા હૈ । જૈલે-હલ નિસાર સંસાર મૈં, ઘોર કાન્તાર કે સમાન નરક, તિર્યચ, મનુષ્ય ઓર દેવગતિયોં મૈં ચક્ર કે સમાન ભ્રમણ કરતે હુણ સમી પ્રાણી પિતા, માતા, ભ્રાતા, ભાગિની, પતિ, પત્ની, પુત્ર આદિ કે રૂપ મૈં જલ સમ્બન્ધી બનતે હૈં તલ લે સ્વજન કહલાને લગતે હૈં, ઓર જલ કિંચિત્ કાલ કે પશ્ચાત્ લહ સમ્બન્ધ નષ્ટ હો જાતા હૈ તો લહી સ્વજન પર-જન બન જાતે હૈં । હલ પ્રકાર નિયત રૂપ સે ન કોઈ સ્વજન હૈ, ન પરિજન હૈ, યહ સલ અજ્ઞાનજનિત કલ્પના કા લેલ હૈ । કિસી કો સ્વજન ઓર કિસી કો પરિજન સમજના જ્ઞાનિયોં કી દૃષ્ટિ મૈં સૂઢ જનોં કી વિલેક હીન લેલ્ટા હૈ । જો આજ પિતા હૈ લહી દૂલરે કિસી ભલ મૈં

પ્રકારની વ્યાધિઓ તથા કલેશોથી પીડિત જીવના માટે જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્ર એ જ ઉત્તમ શરણ છે. આ અશરણાનુપ્રેક્ષા છે.

(૩) સંસારાનુપ્રેક્ષા-સંસારના સ્વરૂપનો વિચાર કરવો સંસારાનુપ્રેક્ષા છે. જેમકે-આ અસાર સંસારમાં, ઘોર કાન્તારની માફક નરક, તિર્યચ, મનુષ્ય અને દેવગતિઓમાં ચક્રની માફક ભ્રમણ કરતા બધાં પ્રાણી, પિતા, ભ્રાતા ભ્રાતા, ભગિની, પતિ, પત્ની, પુત્ર આદિના રૂપમાં જ્યારે સમ્બન્ધી બને છે ત્યારે તેઓ સ્વજન કહેવાય છે અને જ્યારે થોડા સમય પછી તે સમ્બન્ધ નષ્ટ થઈ જાય ત્યારે તે જ સ્વજન પર-જન બની જાય છે. આ રીતે નિયત રૂપથી નથી કોઈ સ્વજન કે નથી પરિજન આ બધું અજ્ઞાનજનિત કલ્પનાનો ખેલ છે. કોઈને સ્વજન અને કોઈને પરિજન સમજવા એ જ્ઞાનિઓની દૃષ્ટિએ મૂઠ માણસોની વિલેકશૂન્ય લેલ્ટા છે. જે આજે પિતા છે તે બીજા કોઈ

ત્રોહામિધૂતાઃ પ્રાણિનઃ સ્પર્શરસાદિ વિષયભોગતૃષ્ણા વ્યાપૃતાઃ પરસ્પરમક્ષણ-
હનનતાડનબન્ધમર્સનાઽઽક્રોશાદિજન્ય દુઃપ્રહ નિતાન્ત તીવ્રદુઃખાનિ પ્રાપ્તુ-
વન્તિ इत्यદ્યો અત્યન્ત કષ્ટમયઃ સ્વલ્પ સંસારો વર્તતે इत्यેવમનુચિન્તયતો જન્મ-
મરણમયોદ્વિગ્નસ્ય વિવેકિનો વૈરાગ્યમુપજાયતે વિરક્તશ્ચ-સાંસારિકદુઃખજિહા-
સયા સંસારપરિત્યાગાય-ચેષ્ટતે-પ્રવર્તતે ચેતિ । સંસારાનુપ્રેક્ષાઽવસેયા ૩ એવમ્-
એકત્વાનુચિન્તનરૂપા-એકત્વાનુપ્રેક્ષા, યથા-एकाकी एवाहं जातः, एकक एव
परिष्यामि च ननु-સસહાયો જાતઃ મરિष્યામિવા, एवं-મમ નાનાવિધાઽઽધિ-

જ્ઞાતા, પુત્ર, પૌત્ર યા પ્રપૌત્ર બન જાના છે ।

ચૌરાસી લાખ યોનિયોં વાલે હસ સંસાર મેં રાગ દ્વેષ ઓર મોહ
સે ગ્રસ્ત પ્રાણી સ્પર્શ રસ આદિ વિષયોં કે ભોગ કી તૃષ્ણા મેં પંસ
કર પરસ્પર એક દુસરે કા મક્ષણ કરતે હૈં તથા હનન, તાડન, બન્ધન,
મર્સન ઓર આક્રોશ આદિ સે ઉત્પન્ન અત્યન્ત તીવ્ર દુઃખોં કો પ્રાપ્ત
હોતે હૈં । હસ પ્રકાર યહ સંસાર અતીવ કષ્ટમય છે ।

એસા ચિન્તન કરને વાલે, જન્મ જરા મરણ કે મય સે ઉદ્વિગ્ન,
વિવેકી પુરુષ કો વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન હોતા છે ઓર વિરક્ત હો કર વહ
સાંસારિક દુઃખોં સે બચને કે લિએ સંસાર કે પરિત્યાગ કા પ્રયત્ન
કરતા છે ઓર ઉસકે લિએ ચેષ્ટા બી કરતા છે । યહ સંસારાનુપ્રેક્ષા છે ।

(૪) એકત્વાનુપ્રેક્ષા—એકત્વ કા પુનઃ-પુનઃ ચિન્તન કરના એક-
ત્વભાવના છે । યથા-मैं अकेला ही जनमा था और अकेला ही मरुंगा ।

ભવમાં જાતા, પુત્ર, પૌત્ર અથવા પ્રપૌત્ર બની બચ છે

ચોરાસી લાખ જીવજોનિઓવાળાં આ સંસારમાં રાગદ્વેષ અને મોહથી
પીડાતાં પ્રાણી સ્પર્શ, રસ, આદિ વિષયોના ભોગની તૃષ્ણામાં ફસાઈને
પરસ્પર એકબીજાનું ભક્ષણ કરે છે; તથા હનન, તાડન, બન્ધન, ભર્સન
અને આક્રોશ આદિથી ઉત્પન્ન અત્યન્ત તીવ્ર દુઃખોને પ્રાપ્ત થાય છે. આમ
આ સંસાર ઘણો જ દુઃખદાયક છે.

આવું ચિન્તન કરવાવાળા જન્મ-જરા મૃત્યુના ભયથી ઉદ્વિગ્ન વિવેકી
પુરુષને વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન થાય છે અને તે વિરક્ત થઈ સાંસારિક દુઃખોથી
બચવા માટે સંસારનો પરિત્યાગ કરવાનો પ્રયત્ન કરે છે અને તે માટેની
ચેષ્ટા પણ કરે છે. આ જ સંસારાનુપ્રેક્ષા છે.

(૪) એકત્વાનુપ્રેક્ષા—એકત્વનું વારંવાર ચિન્તન કરવું એકત્વભાવના
છે જેમ કે-હું એકલો જ જન્મ્યો હતો અને એકલો મરીશ. જ્યારે હું

व्याधि जन्मजरामरणादि जन्यदुःखानि कदाचिदपि कश्चिद् नापहरति-अंशहारको वा दुःखानां न कश्चिद्भवति, न वा-मदीयदुःखानुभवे कश्चित् सहायो भवति, अन्ततः सहजन्मानः सहमरणाश्च निगोदजीवा अपि 'एकक एवाहं जाये-म्रियेच' इत्येवं नियमं नोल्लङ्घयन्ति एकक एवाहं स्वकृत कर्मफलमनुभवामि' इत्येवं भावयतः स्वजनेषु स्नेहानुरागबन्धो न भवति न वा-परजनेषु द्वेषानुबन्धो भवति ततश्च-निस्सङ्गतां प्रतिगतो मोक्षायैव यतते इत्येकत्वानुप्रेक्षा ४ अथा-ऽन्यत्वानु- चिन्तनरूपा-ऽन्यत्वानुप्रेक्षा-यथा औदारिकादि शरीरात्-पौद्गलिकाद्-ऐन्द्रिय-

जब मैं विविध प्रकार की आधि, व्याधि एवं जन्म-जरामरण के दुःखों से पीड़ित होता हूँ तो अकेले ही उन्हें भोगन पड़ता है। न तो कोई उन दुःखों को ले सकता है और न उनमें हिस्सा बंट सकता है। मेरी दुःखानुभूति में कोई सहायक नहीं होता। औरों की तो कथा ही क्या, साथ-साथ जन्मने वाले और साथ-साथ मरने वाले निगोद के जीव भी अकेले-अकेले ही अपने जन्म-मरण के दुःख का अनुभव करते हैं। इस नियम का उल्लंघन वे भी नहीं कर सकते।

जब मनुष्य यह सोचता है कि-मैं अकेला ही अपने किये कर्म का फल भोगा करता हूँ, तो स्वजन कहलानेवालों के प्रति उसके चित्त में अनुराग-बन्ध नहीं रह जाता और पर कहलानेवाले जीवों के प्रति द्वेषानुबन्ध नहीं होता। ऐसी अवस्था में निःसंगता की स्थिति में पहुँचा हुआ जीव मोक्ष के लिए ही प्रयत्न करता है। यह एकत्वानुप्रेक्षा है।

विविध प्रकारना आधि, व्याधि અને જન્મ-જરા મૃત્યુના દુઃખોથી રીખાઉ છું ત્યારે મારે એકલાને જ તે ભોગવવા પડે છે. ન તો તે દુઃખોને કોઈ લઈ શકે છે અથવા તેના અમુક ભાગ પણ કોઈને વહેંચી શકાતો નથી. મારી દુઃખની અનુભૂતિમાં કોઈ સહાયક થતું નથી. બીજાઓની તો વાત જ ક્યાં કરવાની રહી ! સાથે-સાથે મરનાર નિગોદનાં જીવો પણ એકલા-એકલા જ પોતાના જન્મ-મરણના દુઃખોનો અનુભવ કરે છે. આ નિયમનું ઉલ્લંઘન તેઓ પણ કરી શકતાં નથી.

જ્યારે મનુષ્ય એ વિચારે છે કે-હું એકલો જ મારા કરેલા કર્મોના ફળ ભોગવું છું ત્યારે સ્વજન કહેવડાવનારા પ્રતિ તેના ચિત્તમાં અનુરાગ-બન્ધ રહી જતો નથી અને પર કહેવાતાં જીવો તરફ દ્વેષાનુબન્ધ થતો નથી. આવા સંજોગોમાં નિઃસંગતાની સ્થિતિમાં પહોંચેલો જીવ મોક્ષના માર્ગે જ પ્રયત્ન કરે છે. આ એકતાનુપ્રેક્ષા છે.

કાચ્છા-ડનિત્યાચ્છા-ડહં સ્વલુ ચેતનો નિત્યોડપૌદ્ગલિકો-ડતીન્દ્રિયગ્રાહ્યોડસ્મિઃ
'શરીરં સ્વલુ-ચક્ષુરાદીન્દ્રિયગ્રાહ્યં ભવતિ' અહનવાત્મા જીવો ન ચક્ષુરા-
દીન્દ્રિયગ્રાહ્યોડસ્મિ શરીરસ્યેન્દ્રિયગ્રાહ્યત્વાત્-આત્મનઃ ઇન્દ્રિયગ્રાહ્યત્વાડભાવાત્,
ઇતં સ્વલુ શરીરમનિત્યમ્-અહનતુ-નિત્યઃ, શરીરમમ્-અહં પુનર્જોડસ્મિ, શરીરં
વિનશ્વરં-સાદિનિધનમ્, અહનતુ-અનાદિનિધનો-જન્મમરણરહિતોડસ્મિ, શરીર-
સ્યોત્પાદવિનાશિત્વાત્, આત્મનસ્યોત્પાદવિનાશરહિત્વાત્, વહુનિ મે સંસારે પરિ-
ભ્રમતઃ શરીરાણિ વ્યતીતાનિ, નહિ પ્રાક્તનજન્મશરીરાણિ-અધુનાતનજન્મશરીરાણિ
સમ્ભવન્તિ-અસમ્ભવાત્ । અહનતુ-સ એવાડસ્મિ યેન પ્રાક્તનજન્મશરીરાણિ પૂર્વ-

(૫) અન્યત્વાનુપેક્ષા--અન્યત્વ અર્થાત્ ભિન્નતા કા વિચાર કરના
અન્યત્વાનુપેક્ષા છે । યથા- ઔદારિક આદિ પાંચો શરીર પુદ્ગલ કે
પિંડ છે, જડ છે, અનિત્ય છે, મૈં ચૈતન્યસ્વરૂપ, નિત્ય, અપૌદ્ગલિક
ઔર અતીન્દ્રિય હું । યહ ઔદારિક શરીર ચક્ષુરિન્દ્રિય આદિ સે ગ્રાહ્ય
છે કિન્તુ મૈં-આત્મા-જીવ, ઇન્દ્રિયોં સે અગોચર હું । શરીર ઇન્દ્રિય-
ગોચર છે, આત્મા ઇન્દ્રિયઅગોચર છે । ફિર યહ શરીર અનિત્ય છે, મૈં
નિત્ય હું । શરીર અજ્ઞ છે, મૈં જ્ઞ હું । શરીર સાદિનિધન છે-તસકી
આદિ ઔર અન્ત છે, મૈં અનાદિ નિધન હું, જન્મ-મરણ સે અતીત હું,
શરીર ઉત્પાદ-વિનાશશીલ છે, મૈં ઉત્પાદ ઔર વિનાશ સે રહિત
હું । ઇસ સંસાર મૈં અનાદિ કાલ સે ભ્રમણ કરતે હુએ મૈંને અનન્ત-
અનન્ત શરીર ગ્રહણ કિયે ઔર ત્યાગે છે । પૂર્વજન્મ કે શરીર ઇસ
જન્મ કે શરીર નહીં બનતે-એસા હોના સંભવ નહીં કિ પૂર્વજન્મ કા

(૫) અન્યત્વાનુપેક્ષા-અન્યત્વ અથવા ભિન્નતાનો વિચાર કરવો અન્ય-
ત્વાનુપેક્ષા છે જેમ કે-ઔદારિક વગેરે પાંચે શરીર પુદ્ગલના પિંડ છે; જડ
છે અને અનિત્ય છે, હું ચૈતન્યસ્વરૂપ, નિત્ય અપૌદ્ગલિક અને અતીન્દ્રિય
હું. આ ઔદારિક શરીર ચક્ષુરિન્દ્રિય આદિથી ગ્રાહ્ય છે પરંતુ હું-આત્મા-
જીવ, ઇન્દ્રિયથી અગોચર છે. વળી આ શરીર અનિત્ય છે, હું નિત્ય છું.
શરીર અજ્ઞ છે. હું જ્ઞ છું. શરીર સાદિનિધન છે-તેના આદિ અને અન્તવાળું
છે, હું અનાદિનિધન છું, જન્મ-મરણથી અતીત છું, શરીર ઉત્પાદ-વિનાશ-
શીલ છે, હું ઉત્પાદ અને વિનાશથી રહિત છું. આ સંસારમાં અનાદિકાળથી
ભ્રમણ કરતા મેં અનન્ત-અનન્ત શરીર ધારણ કર્યાં અને ત્યાગ્યાં છે.
પૂર્વજન્મનું શરીર આ જન્મનું શરીર બનતું નથી. એવું બનવું સંભવિત
પણ નથી કે પૂર્વજન્મનું શરીર આ જન્મમાં કામ આવી શકે પરંતુ હું તે

मुपभुक्तानि सन्ति, तस्मात्-शरीरेभ्यः खलु-औदारिकादिभ्यः पौद्गलिकेभ्यो-
भिन्नोऽस्म्यहम्, इत्येवं विभावयतः शरीरममत्वराहित्यं भवति विच्छिन्न
शरीरममत्वश्च निःश्रेयसायैव यततेऽनिशम् इति अन्यत्वानुप्रेक्षा ५ अथा-ऽशुचि-
त्वानुचिन्तनरूपाऽशुचित्वानुप्रेक्षा, यथा-शरीरमिदमत्यन्तमशुचिवर्तते-अत्यन्ता-
शुचिमलमूत्राण्ययुक्तत्वात्, शरीरस्य मूलकारणीभूताऽत्यन्ताशुचि शुक्रशोणित-
रहितत्वात्, मातृकुक्षौ-उत्पद्यमानो जीव स्तेजस-कर्मणशरीरी सन् प्रथमं शुक्र-
शोणितं खलु-औदारिकशरीरतया परिणमयति, ततश्च-कलल-बुद्बुद्-पेशी-धन-

शरीर इस जन्म में काम आ लूके । किन्तु मैं तो वही का वही हूं
जिसने पूर्व जन्मों में उन शरीरों का उपयोग किया है । अतएव
में पौद्गलिक औदारिक आदि शरीरों से भिन्न हूं । जो ऐसा विचार
करता है वह शरीर की ममता से रहित हो जाता है और शारीरिक
ममता से रहित होकर मुक्ति के लिए ही निरन्तर प्रयत्नशील बनता
है । यह अन्यत्वानुप्रेक्षा है ।

(६) अशुचित्वभावना-अशुचिता (अपवित्रता) चिन्तन करना
अशुचित्वानुप्रेक्षा है । यथा-यह शरीर अत्यन्त अशुचि है, क्योंकि
अत्यन्त अशुचि मूल मूत्र आदि की थैली है और शुक्र शोणित जैसे
अत्यन्त अशुचि पदार्थ इसके मूल कारण हैं । जब यह जीव माता की
कुक्षि में जन्म लेता है तो तेजस और कर्मण शरीर के साथ उत्पन्न
होता है । उस समय यह सर्वप्रथम शुक्र और शोणित को ही औदा-
रिकशरीर का निर्माण करने के लिए ग्रहण करता है । उनको कलल;

त्याને त्याં જ છું જેણે પૂર્વજન્મોમાં તે શરીરોનો ઉપલોગ કર્યો છે. જે
આવો વિચાર કરે છે તે શરીરની મમતાથી પર થઈ જાય છે અને શારીરિક
મમતાથી રહિત થઈને મુક્તિને માટે જ નિરન્તર પ્રયત્નશીલ રહે છે.
આ અન્યત્વાનુપ્રેક્ષા છે.

(૬) અશુચિત્વભાવના-અશુચિતા (અપવિત્રતા)નું ચિંતન કરવું અશુ-
ચિત્વાનુપ્રેક્ષા છે. જેમ કે-આ શરીર અત્યન્ત અપવિત્ર છે કારણ કે અત્યન્ત
અશુચિ મળ-મૂત્ર આદિની કોથળી છે અને શુક્ર-શોણિત જેવાં અત્યન્ત
અશુચિ પદાર્થો એના મૂળ કારણ છે. જ્યારે આ જીવ માતાની કુખે જન્મ
લે છે ત્યારે તેજસ અને કાર્મણ શરીર સાથે ઉત્પન્ન થાય છે. તે સમયે આ
સર્વપ્રથમ શુક્ર અને શોણિતને જ ઔદારિક શરીરનું નિર્માણ કરવા માટે ધારણ
કરે છે. તેમને કલલ, બુદ્બુદ પેશી, ધનડાથ, પગ વગેરે અંગોપાંગ શોણિત,

હસ્તપાદાઘ્નોપાઙ્ગ શોણિતમાંસાસ્થિયજ્જાકેશમશ્રુનલ્લશિરાધમનીરોમાદિના પરિ-
ણમયતિ માતૃમંક્ષિતાદારરસથ રસહારિણ્યા પરરપરમતિવદ્ધનાલિકયા (નાડયા)
ઽશ્વયવહરતિ, इत्येवं रीत्या मूलकारणो-त्तरकारणयोरशुचित्वात्-अशुभपरिणामः
पाकानुबन्धाच्चाऽत्यन्तमशुचि खलु शरीरं भवति । तद्यथा-भुक्तः-आहारोहि
श्लेष्मानयमासाद्य श्लेष्मणा स्निग्धीकृतः सन्नत्यन्ताऽशुचिर्भवति, ततश्च-पित्ता-
शयं प्राप्य पच्यमानो मलत्वमापन्नोऽशुचिरेव भवति, ततो वाताशयं प्राप्य वातेन
विभज्यमानः खलरसरूपेण परिणतो भवति, तत्र खलांशाद् मूत्रपुरीषदूषिका
सिंघाणस्वेदलालादयो मलाः प्रादुर्भवन्ति । ते चा-ऽशुचिभूतैव, रसांशाच्च-

બુદ્ધબુદ્ધ, પેચી, ધન, હાથ, પૈર આદિ અંગોપાંગ, શોણિત, માંસ, અસ્થિ,
મજ્જા, કેશ, શ્મશ્રુ, નલ્લ, શિરા, ધમની, રોમ આદિ કે રૂપ મેં પરિણત
કરતા હૈ । માતા દ્વારા ખાઈ હુઈ આહાર કે રસ કો દોનોં કે સાથ
જુડી હુઈ રસહારિણી નાડી કે દ્વારા આહાર કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર
શરીર કા મૂલ કારણ ઔર ઉત્તર કારણ દોનોં હી અશુચિ હૈ ।
અશુચિ રૂપ મેં હી ઉનકા પરિણમન હોતા હૈ, અતઃપ્રત્યેવ યહ શરીર
અશુચિ હૈ । ઇસ શરીર કે અંદર ગયા હુઆ ઉત્તમ સે ઉત્તમ આહાર
મી કફાશય મેં પહુંચ કર ઔર શ્લેષ્મ સે ચિકના હોકર અત્યન્ત
ગંદા બન જાતા હૈ । તત્પશ્ચાત્ પિત્તાશય મેં પહુંચ કર વહાં પચતા હૈ
ઔર મલ રૂપ મેં પરિણત હોકર અશુચિ બન જાતા હૈ । ઉસકે બાદ
વાતાશય મેં પ્રાપ્ત હોકર વાયુ સે વિભક્ત હોકર ખલ ભાગ ઔર રસ-
ભાગ કે રૂપ મેં પરિણત હોતા હૈ । ઉસ ખલ ભાગ સે મૂત્ર, મલ,
દૂષિકા રેટ, પસીના ઇવં લીંટ આદિ મલોં કા પ્રાયુર્ભાવ હોતા હૈ । યે

માંસ, અસ્થિ, મજ્જા, કેશ, નળ, શિરા, ધમણી વગેરેના રૂપમાં પરિણત
કરે છે. માતા દ્વારા ખાધેલા આહારના રસને બંનેની સાથે જોડાયેલી રસ-
હારિણી નાડી દ્વારા આહાર કરે છે. આ રીતે શરીરનું મૂળ કારણ તેમજ
ઉત્તર કારણ બંને જ અશુચિ છે અશુચિ રૂપમાં જ તેનું પરિણમન થાય છે.
આથી આ શરીર અશુચિ છે આ શરીરની અંદર ગયેલો ઉત્તમમાં ઉત્તમ
આહાર પણ કફાશયમાં પહોંચીને અને ગળકાથી ચિકણો થઈને અત્યન્ત
ગંદો થઈ જાય છે ત્યારબાદ પિત્તાશયમાં જઈને ત્યાં પરિપકવ થાય છે અને
મળ રૂપે પરિણત થઈને અશુચિ બની જાય છે. ત્યાર પછી વાતાશયમાં
પ્રાપ્ત થઈને વાયુથી વિભક્ત થઈને ખલભાગ અને રસભાગના રૂપમાં પરિણત
થાય છે. તે ખલભાગથી મૂત્ર, મળ, દૂષિકા, લીંટ, પરસેવો તથા લાળ
વગેરે મળેલા પ્રાદુર્ભાવ થાય છે આ તમામ અશુચિ જ છે. રસભાગથી

शोणितमांसमज्जामेदोऽस्थिशुक्राणि संजायन्ते सर्वश्चेतत्-कफादिशुक्रान्तमशुचि-
भूतमेव वर्तते, एवमशुचि मलमूत्रकफपित्तादीनामाश्रयत्वादपि शरीरमशुचिवर्तते,
इत्येवं भावयतः शरीरे निर्दो जायते, निर्विण्णश्च-शारीरिकजन्मप्रहाणाय प्रवर्तते
इत्यशुचित्वानुप्रेक्षा ६ अथास्रवानुचिन्तनरूपा-आस्रवानुप्रेक्षा, यथा-इन्द्रियकषा-
यादीन् आस्रवान् अशुषपापरूपाकुशलकर्मागमद्वारपुण्यरूपदशविधधर्मनिर्गम-
द्वारभूतान् बहुविधदोषयुक्तान् अत्यन्ततीव्रवेगशालियो जीवस्याऽवघकारकान्
अनुचिन्तयेत् । तत्र स्पर्शनेन्द्रियवशीकृता बहवो जीवाः परस्त्रीलम्पटाः सन्तः

सब अशुचि ही हैं । रस भोग से रुधिर, मांस, मज्जा, मेद, अस्थि
और शुक्र (वीर्य) की उत्पत्ति होती है । इस प्रकार कफ से लगाकर
शुक्र पर्यन्त सब अशुचि ही हैं । इन अशुचि मल मूत्र कफ पित्त
आदि का आधार होने से भी शरीर अशुचि है ।

इस प्रकार विचार करने से शरीर के प्रति विरक्ति भाव की उत्पत्ति
होती है और शरीर के प्रति विरक्ति होने पर मनुष्य शरीर की उत्पत्ति
को ही रोक देने में प्रवृत्त होता है अर्थात् सदा के लिए अशरीर (युक्त)
बनने का प्रयत्न करता है । यह अशुचित्व अनुप्रेक्षा है ।

(७) आस्रवानुप्रेक्षा-आस्रव का चिन्तन करना आस्रवानुप्रेक्षा है ।

यथा-ये इन्द्रिय और कषाय आदि आस्रव पाप रूप अकुशल
कर्मों के आगमन के द्वार हैं । ये अनेक प्रकार के दोषों से
युक्त हैं, इस प्रकार का विचार करना चाहिए । स्पर्शनेन्द्रिय के वशी-

लोढी, मांस, मज्जा, मेद, अस्थि अने शुक्र (वीर्य)ની ઉત્પત્તિ થાય છે.
આમ કદથી માંડીને શુક્ર સુધી બધું અશુચિ જ છે. આ અશુચિ મળ, મૂત્ર,
કફ, પિત્ત આદિનો આધાર હોવાથી પણ શરીર અશુચિ છે.

આ રીતે વિચારવાથી શરીર પ્રતિ વિરક્તિની ઉત્પત્તિ થાય છે અને
શરીર પરત્વે વિરક્તિભાવ જાગવાથી મનુષ્ય શરીરની ઉત્પત્તિને જ અટકાવી
દેવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે અર્થાત્ સદા માટે અશરીર (યુક્ત) બનવાનો પ્રયત્ન
કરે છે. આ અશુચિત્વ અનુપ્રેક્ષા છે.

(૭) આસ્રવાનુપ્રેક્ષા-આસ્રવનું ચિન્તન કરવું આસ્રવાનુપ્રેક્ષા છે.
યથા-આ ઇન્દ્રિય અને કષાય આદિ આસ્રવ પાપ રૂપ અકુશળ કર્મોના
આગમનના દ્વાર છે. તેઓ અનેક પ્રકારના દોષોથી યુક્ત છે અને અત્યંત
તીવ્ર વેગશાલી બનને પાપ ઉત્પન્ન કરનારા છે, એ જાતનો વિચાર કરવો

સ્વજીવનમપિ વિનાશયન્તિ, एवं-मदोन्मत्ता दिग्गजा अपि स्पर्शनेन्द्रियवशीभूताः
एवं निगृहीता भवन्ति, एवं-रसनेन्द्रियवशीभूताः प्राणिनो वडिशाऽऽगत मांस-
लोभग्रस्तमत्स्यादिवत् म्रियन्ते, घ्राणेन्द्रियवशीभूताः प्राणिनः पङ्कजकिञ्जल्क-
कोलुपभ्रमरादिवत् बद्धा भवन्ति प्राणैर्वियुक्ताश्च भवन्ति, चक्षुरिन्द्रियवशीभूता
जीवाः स्त्रीरूपादि दर्शनाभिलाषिणो दीपालोकन लोलुपपतङ्गादिवत् विनाशं प्राप्नु-
वन्ति श्रोत्रेन्द्रियमसक्ताः खलु जीवा मृगवत् संगीतकादि शब्दश्रवणलोलुपाः
सन्तो बध्यन्ते-म्रियन्ते च, एवं-कषायादीनां क्रोधमानमायालोभानां भावनेन,

મૂત હુણ બહુતેરે જીવ પરસ્ત્રીલમ્પટ હોકર અપને જીવન કો મી
વિનષ્ટ કર દેતે હૈં । મદોન્મત્ત હાથી મી સ્પર્શનેન્દ્રિય કે અધીન હોકર
કૈદ મેં પડતે હૈં । જો લોગ રસનેન્દ્રિય કે વશીભૂત હો જાતે હૈં વે
વડિશામછલી પકડને કે સાધનવિશેષ-મેં લગે હુણ માંસ કે લોભ મેં
પડે હુણ મત્સ્ય આદિ કે સમાન મૃત્યુ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં । ઘ્રાણેન્દ્રિય કે
વશીભૂત હુણ પ્રાણી કમલ કે કિંજલ્ક કે લોભી ભ્રમર આદિ કે
સમાન બન્ધન કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં ઓર પ્રાણોં સે હાથ ધો વૈઠતે હૈં ।
ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કે વશ મેં પડે હુણ પ્રાણી સ્ત્રી કે રૂપ કે દર્શન કે અભિ-
લાષી હોકર, દીપક કો દેખને કે લોલુપ પતંગ આદિ કે સમાન વિનાશ
કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં । શ્રોત્રેન્દ્રિય કે વિષય મેં આસક્ત જીવ સંગીત
આદિ કે મધુર શબ્દોં કે શ્રવણ મેં લોલુપ હોકર સૃગ કી માંતિ
બન્ધન ઓર વધ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં ।

इसी प्रकार क्रोध, मान, माया और लोभ रूप कषायों द्वारा होने

જેઈએ. સ્પર્શનેન્દ્રિયને ત.એ થયેલા ઘણા બધાં જીવ પરસ્ત્રીલમ્પટ થઈને
પોતાના જીવનનો પણ નાશ કરી દે છે. મદોન્મત્ત હાથી પણ સ્પર્શનેન્દ્રિયને
આધીન થઈને કેદમાં પડે છે. જે લોકો રસનેન્દ્રિયને વશીભૂત થઈ જાય છે
તેઓ વડિશા-માછલી પકડવાના સાધનવિશેષ-માં લગાડેલા માંસના લોભમાં
પડેલાં મત્સ્ય વગેરેની જેમ મરણને શરણ થાય છે. ઘ્રાણેન્દ્રિયને વશીભૂત
થયેલા પ્રાણિ કમળના કિંજલ્કના લોભી ભ્રમર આદિની માફક બન્ધનને
પ્રાપ્ત થાય છે અને પોતાના પ્રાણો ગુમાવી બેસે છે. ચક્ષુ ઇન્દ્રિયના વશમાં
પડેલાં પ્રાણી સ્ત્રીના રૂપના દર્શનના અભિલાષી થઈને, દીવાને જોવા માટે
લાલચુ પતંગીયા વગેરેની માફક, વિનાશને નોતરે છે. શ્રોત્રેન્દ્રિયના વિષયમાં
આસક્ત જીવ સંગીત આદિના મધુર શબ્દોના શ્રવણમાં લોલુપ થઈને હર-
ણની જેમ બન્ધન અને વધને પ્રાપ્ત થાય છે.

આવી જ રીતે ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ રૂપ કષાયો દ્વારા થનારાં

इत्येवं भावयतः कर्मास्त्रनिरोधाय प्रवृत्ति भवति इत्यासन्नानुप्रेक्षा ७ संवरानु-
चिन्तनरूपा-संवरानुप्रेक्षा, यथा-कर्मास्त्रद्वाराणां पिधानम्-आस्रवदोषपरिवर्जनं-
च संवरं गुणत उपकारकतया समिति-गुप्तिधर्मानुप्रेक्षा परीषदादिपरिपालनद्वारा-
ऽनुचिन्तयेत् सर्वे खलु पूर्वोक्तास्त्रवदोषाः संवृतात्मनो न भवन्ति, एवं-भावयतः
खलु संवरायैव भावना जागर्ति इति संवरानुप्रेक्षा ८ अथ निर्जरानुचिन्तनरूपा-
निर्जरानुप्रेक्षा, यथा-कर्मपुद्गलानामुदयावल्लिका प्रवेशेनाऽनुभूतरसानामुत्तरकाले-
परीषहसनरूपा कर्मनिर्जराकृतकर्मफलविपाको भवति, स च विपाको द्विविधः
अबुद्धिपूर्वः-कुशलमूलश्च । तत्र-नरकादिषु कृतकर्मफलभोगरूपो विपाकोदयोऽ-
वाले अपायो का चिन्तन करना चाहिए । ऐसा चिन्तन करने से कर्मों
के आस्रव का निरोध करने में प्रवृत्ति होती है । यह आस्रवभावना
का स्वरूप है ।

(८) संवरानुप्रेक्षा—संवर का विचार करना संवरानुप्रेक्षा है । जैसे
-कर्म के आस्रवधारों को ढंकना-आस्रवदोषों से बचना संवर है ।
समिति, गुप्ति, धर्म, अनुप्रेक्षा, परीषह जय और चारित्र का पालन
करने से संवर होता है । जो संवृतात्मा होते हैं, उनमें आस्रवदोष
नहीं होते । ऐसी भावना करने से संवर के लिए ही प्रयत्न होता है ।
यह संवर भावना है ।

(९) निर्जरानुप्रेक्षा—निर्जरा का चिन्तन करना निर्जरानुप्रेक्षा है ।
यथा-कर्मपुद्गल जब उदयावल्लिका में प्रवेश करते हैं और उनके रस
का अनुभव जीव कर लेता है तो उसके पश्चात् वे झड़ जाते हैं ।
कर्म विपाक दो प्रकार का है-अबुद्धिपूर्व और कुशलमूल । नरक

अपायानुं चिन्तन करवुं लेछे. आ प्रकारनुं चिन्तन करवाथी कर्मना
आस्रवना निरोध करवामां प्रवृत्ति थाय छे. आ आस्रव लावनानुं स्वश्य छे.

(८) संवरानुप्रेक्षा-संवरना विचार करवो संवरानुप्रेक्षा छे. जेम के
कर्मना आस्रव द्वारेने ढांकवा-आस्रव दोषाथी अयवुं संवर छे. समिति,
गुप्ति, धर्म, अनुप्रेक्षा परीषहजय अने चारित्रनुं पालन करवाथी संवर
थाय छे. जेओ संवृतात्मा होय छे, तेमनामां आस्रव दोष होतां नथी,
जेवी लावना करवाथी संवर माटे ज प्रयत्न थाय छे. आ संवर लावना छे.

(९) निर्जरानुप्रेक्षा-निर्जरानुं चिन्तन करवुं निर्जरानुप्रेक्षा छे. यथा-
कर्मपुद्गल न्यारे उदयावलिनामां प्रवेश करे छे अने तेमना रसनो अनुभव
जव करी ले छे, तयार आठ ते ओंटी जय छे कर्मविपाक जे प्रकारना छे.
अबुद्धिपूर्व अकुशलमूल नरक-आदि गतिओमां-करेदां कर्मो लागववां

હુદિપૂર્વકઃ ૧ અકુશલાનુબન્ધશ્ચ વર્તતે ૨ इत्येवमवचं भावयतः परिचिन्तयेत् ॥
 कुशलमूलो विपाकश्च तपसा द्वादशविधेन परीषदजयेन वा कृतो वर्तते शुभानु-
 बन्धो-निरनुबन्धो वा सकलकर्मक्षयलक्षणः साक्षात् मोक्षायैव हेतुर्भवतीति
 गुणभावेन परिचिन्तयेत्, तथा भावयतः खलु कर्मनिर्जरायै-एव मतिः प्रवर्तते
 इति निर्जराभुप्रेक्षा-९ अथ लोकानुचिन्तनरूपा-लोकानुप्रेक्षा, यथा-पञ्चास्ति-
 कायात्मको धर्माऽधर्माऽऽकाश-पुद्गल-जीवरूपो विविधपरिणामयुक्तः उत्पत्ति-

આદિ ગતિયોં મેં કૃત કર્મ કે ફલ કા જો ભોગ હોતા હૈ, વહ અબુદ્ધિ-
 પૂર્વ વિપાકોદય હૈ, વહ અકુશલાનુબન્ધ હૈ, એસા અવચરુપ સે ચિન્તન
 કરના યાહિયે । કુશલ મૂલ વિપાક ચારહ પ્રકાર કી તપશ્ચર્યા કરને
 સે ઓર પરીષદોં કો જીતને સે હોતા હૈ । વહ શુભાનુબન્ધ વાલા યા
 અનુબન્ધ સે રહિત હોતા હૈ, સકલ કર્મોં કા ક્ષય ઉસકા લક્ષણ હૈ ।
 વહ મોક્ષ કા કારણ હૈ, હસ પ્રકાર ગુણ રુપ સે ઉસકા ચિન્તન કરના
 યાહિયે । એસા ચિન્તન કરને સે કર્મોં કી નિર્જરા કે લિયે હી મતિ
 ઉત્પન્ન હોતી હૈ । યહ નિર્જરાભાવના હૈ ।

(૧૦) લોકાનુપ્રેક્ષા-લોક કૈ રુપ કા વિચાર કરના લોકાનુપ્રેક્ષા
 હૈ, યથા-યહ લોક પંચાસ્તિકાયમય હૈ અર્થાત્ ધર્માસ્તિકાય, અધર્મા-
 સ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય ઓર જીવાસ્તિકાય રુપ
 હૈ । યહ લોક વિવિધ પ્રકાર કે પરિણામોં સે યુક્ત હૈ, ઉત્પાદ, વિનાશ
 ઓર ધ્રોવ્યરુપ હૈ, વિચિત્ર સ્વભાવ વાલા હૈ । હસ પ્રકાર લોક કા

મઠેં છે તે અબુદ્ધિપૂર્વ વિપાકોદય છે, તે અકુશલાનુબન્ધ છે એવું અવચ રૂપથી
 ચિન્તન કરવું જોઈએ કુશલમૂલ વિપાક બાર પ્રકારની તપશ્ચર્યા કરવાથી
 તથા પરીષદો ઉપર વિજય મેળવવાથી થાય છે. તે શુભાનુબન્ધવાળો અથવા
 અનુબન્ધથી રહિત હોય છે. સકળ કર્મોની ક્ષય તેનું લક્ષણ છે તે મોક્ષનું
 કારણ છે, આ રીતે ગુણ રૂપથી તેનું ચિન્તન કરવું જોઈએ. આવું ચિન્તન
 કરવાથી કર્મોની નિર્જરા માટે જ મતિ ઉત્પન્ન થાય છે. આ નિર્જરાભાવના છે.

(૧૦) લોકાનુપ્રેક્ષા-લોકના સ્વરૂપનો વિચાર કરવો લોકાનુપ્રેક્ષા છે
 યથા-આ લોક પંચાસ્તિકાયમય છે અર્થાત્ ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય,
 આકાશાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય અને જીવાસ્તિકાય રૂપ છે. આ લોક વિવિધ
 પ્રકારના પરિણામોથી રૂક્ત છે, ઉત્પાદ, વિનાશ અને ધ્રોવ્ય રૂપ છે, વિચિત્ર

સ્થિતિ-વિનાશયુક્તો વિચિત્રસ્વભાવો વર્તતે इत्येवं लोकं परिचिन्तयतः तत्त्व-
ज्ञानात्मविशुद्धि भवतीति लोकानुप्रेक्षा-१० अथ बोधिदुर्लभत्वस्यानुचिन्तन
रूपा-बोधिदुर्लभत्वानुप्रेक्षा, यथा-अनादौ खलु संसारे नरक-तिर्यङ्मनुष्यदेव
भवंग्रहणेषु पौनः पुन्येन चक्रवत् परिभ्रमती जीवस्य नानाप्रकारक शारीरिक-
मानस-दुःखरूपाप्तस्य तत्त्वार्थाऽश्रद्धानांऽविरति-प्रमाद कषाय प्रभृति दोषो-
पहतबुद्धेः ज्ञानावरणादि घातिकर्मचतुष्टयाऽभिभूतस्य सम्यग् दर्शनादि
विशुद्धो बोधिदुर्लभो भवतीति चिन्तयतो बोधि प्राप्या प्रमादो न भवति बोधि
दुर्लभत्वानुप्रेक्षा बोध्या-११ अथ-धर्मदेशकार्हत्वानुचिन्तनरूपांऽनुप्रेक्षा, यथा
चिन्तन करने वाले जीव का तत्त्वज्ञान और आत्मा विशुद्ध होता है,
यह लोकानुप्रेक्षा है।

(११) बोधिदुर्लभत्वानुप्रेक्षा--बोधि अर्थात् सम्यक्त्व की दुर्लभता
का विचार करना बोधिदुर्लभत्वानुप्रेक्षा है। जैसे-इस अनादि संसारे
में नरक, तिर्यच मनुष्य और देव गतियों में बार-बार चक्र की भांति
घूमने वाले, नाना प्रकार के शारीरिक और मानसिक दुःखों से युक्त,
तत्त्वार्थ के अश्रद्धान अविरति प्रमाद एवं कषाय आदि दोषों के कारण
उपहत बुद्धि वाले तथा ज्ञानावरणीय आदि चार घातिया कर्मों से
पीडित जीव को सम्यग्दर्शन से शुद्ध बोधि की प्राप्ति होना बहुत
कठिन है। जो ऐसा विचार करता है वह बोधि प्राप्ति करके उसमें
प्रमाद नहीं करता। यह बोधिदुर्लभत्वानुप्रेक्षा है।

(१२) धर्मदेशकार्हत्वानुप्रेक्षा--धर्मदेशकार्हत्व का चिन्तन करना,
સ્વભાવવાળો છે. આમ લોકનું ચિન્તન કરનાર જીવનું તત્ત્વજ્ઞાન અને આત્મા
વિશુદ્ધ હોય છે, આ લોકાનુપ્રેક્ષા છે.

(૧૧) બોધિદુર્લભતાનુપ્રેક્ષા-બોધિ અર્થાત્ સમ્યક્ત્વની દુર્લભતાનો
વિચાર કરવો. બોધિદુર્લભતાનુપ્રેક્ષા છે જેમ કે-આ અનાદિ સંસારમાં નરક,
તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવ ગતિઓમાં વારંવાર ચક્રની જેમ ફરનારો, જુદા
જુદા પ્રકારના શારીરિક અને માનસિક દુઃખોથી યુક્ત તત્ત્વાર્થના અશ્રદ્ધાન,
અવિરતિ પ્રમાદ અને કષાય આદિ દોષોના કારણે ઉપહત બુદ્ધિવાળા તથા
જ્ઞાનાવરણીય આદિ ચાર ઘાતી કર્મોથી પીડિત જીવને સમ્યક્દર્શનથી શુદ્ધ
બોધિની પ્રાપ્તિ થવી અતિ મુશ્કેલ છે. જે આવો વિચાર કરે છે. તે બોધિ
પ્રાપ્ત કરીને તેમાં પ્રમાદ કરતો નથી આ બોધિદુર્લભતાનુપ્રેક્ષા છે.

(૧૨) ધર્મદેશકાર્હતાનુપ્રેક્ષા-ધર્મદેશકાર્હત્વનું ચિન્તન કરવું જેમ કે-

નાતિ સંજોગા-અન્નો અહમંસિ' इति, अन्ये खलु ज्ञातिसंयोगाः-अन्योऽह-
मस्मीति, सूत्रकृताङ्गे प्रथमश्रुतस्कंधे द्वितीयाध्ययने प्रथमगाथायाश्चोक्तम्-
'बोधिदुर्लभाणुपेहा-११

‘સંવુજ્જહ કિં ન વુજ્જહ સંબોહી खलु पेच्च दुल्लहा ।

णो हूवणमंति राहओ-नो सुलभं पुणराविजीवियं ॥१॥ इति,

‘સંવુધ્યસ્વ કિં ન વુધ્યસ્વ-સંબોધિઃ खलु प्रेत्य दुर्लभा ।

नो हु उपनयन्ति रात्रयः-नो सुलभं पुनरपि जीवितम् ॥१॥ इति ॥६॥

મૂલમ્—સંવર મગગચ્ચવણ ણિજ્જરટ્ટં પરિસોઢઠ્ઠા પરીસહા ॥૭॥

છાયા—સંવર માર્ગાઽચ્યવન-નિર્જરાર્થ પરિષોઢઠ્ઠાઃ પરીષહાઃ ॥૭

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ તાવદ્ આસ્રવનિરોધલક્ષણસંવરહેતુતયા સમિતિ-
ગુપ્તિ-ધર્માનુપ્રેક્ષા-પરીષહજય=ચારિત્રાણિ પ્રતિષાદિતાનિ, તેષુ ચ-સમિતિ-

સૂત્ર મેં કહા હૈ—‘જ્ઞાતિ સંબંધી સંયોગ ભિન્ન હૈ ઓર મેં ભિન્ન હૂં’ ।
સૂત્રકૃતાંગ કે પ્રથમ શ્રુતસ્કંધ કે દ્વિતીય અધ્યયન કી પ્રથમ ગાથા મેં
કહા હૈ—‘બોધિદુર્લભાનુપ્રેક્ષા । સમજો-બૂઝો, અરે સમજતે વયોં નહોં
હો ! પરભવ મેં બોધિ દુર્લભ હૈ । વ્યતીત હુમા સમય વાપિસ નહોં
લોટતા ઓર પુનઃ માનવજીવન મિલના સુલભ નહોં હૈ, અતઃપ્ર
સમજો-બોધ કરો ॥૬॥

‘સંવરમગગચ્ચવણ’ इत्यादि ।

સંવર કે માર્ગ સે ચ્યુત ન હોને કે લિપ ઓર નિર્જરા કે લિપ
પરીષહોં કો સહન કરના ચાહિપ ॥૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે કહા ગયા થા કિ સમિતિ, ગુપ્તિ, ધર્મ,
અનુપ્રેક્ષા પરીષહ જય ઓર ચારિત્ર, યે આસ્રવનિરોધ લક્ષણ વાલે સંવર

કહ્યું છે—જ્ઞાતિ સંબંધી સંયોગ ભિન્ન છે અને હું ભિન્ન છું. સૂત્રકૃતાંગના
પ્રથમ શ્રુતસ્કંધના દ્વિતીય અધ્યયનની પ્રથમ ગાથામાં કહ્યું છે—બોધિદુર્લભાનુ-
પ્રેક્ષા સમજો-બૂઝો, અરે, કેમ સમજતા નથી ? પરભવમાં બોધિ દુર્લભ છે.
વીતી ગયેલો સમય કય રે પણ પાછો આવતો નથી અને ફરીવાર અનુપ્રેક્ષા
મળવો સહેલો નથી આથી સમજો-બોધ કરો. ॥૬॥

‘સંવરમગગચ્ચવણણિજ્જરટ્ટં’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—સંવરના માર્ગથી ચ્યુત ન હોવા માટે તથા નિર્જરાને માટે
પરિષદોને સહન કરવા ભેદ છે. ॥૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા કહેવામાં આવ્યું કે સમિતિ, ગુપ્તિ, ધર્મ,
અનુપ્રેક્ષા, પરીષદજય અને ચારિત્ર-આ આસ્રવનિરોધ લક્ષણવાળા સંવરના

શુષ્કિધર્માનુપ્રેક્ષાઃ સ્વરૂપતો-વિભાગતો-લક્ષણતથ્થ યથાક્રમં પ્રરૂપિતાઃ, સમ્પત્તિ-
ક્રમપ્રાપ્તસ્ય પરીપહજયસ્ય પ્રરૂપણં કર્તુમાહ-'સંવરમગ્ગ-' इत्यादि संवर
માર્ગાચ્ચવન નિર્જરાર્થમ્-સંવરમાર્ગાચ્ચવનાર્થ-નિર્જરાર્થશ્ચ વક્ષ્યમાણાઃ શુષ્કિપા
સાદયો દ્વાવિંશતિઃ પરીપહાઃ શુધાદિવેદનોત્પત્તૌ સત્યાં પૂર્વોપાર્જિતકર્મનિર્જર-
ણાર્થં પરિતઃ-સમન્તાત્ સહનરૂપાઃ શુષ્કિપાસાદયઃ પરીપહાઃ પરિપોઢવ્યા ભવન્તિ
શુષ્કિપાસાદીનાં સહનં કર્તવ્યમ્। તત્ર કર્માસ્રવનિરોધલક્ષણસ્ય જિનોપદિષ્ટાત્-
માર્ગાત્ સમ્યગ્દર્શનાદે મોક્ષ માર્ગાત્ અચ્ચવનાર્થમ્-અપરિશ્રંશાર્થમ્, તતોડપનયનાર્થ
તસ્ય નિશ્ચલતાર્થમિતિભાવઃ, કૃતકર્મણો નિર્જરાશ્ચ આત્મનઃ પૃથગ્માત્રેન પરિશટ-

કે કારણ હૈં । હનમેં સે સમિતિ, ગુપ્તિ, ધર્મ ઓર અનુપ્રેક્ષા કા સ્વરૂપ,
એદ ઓર લક્ષણ અનુક્રમ સે કહ ચુકે હૈં । અવ ક્રમપ્રાપ્ત પરીપહ જય
કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં-

સંવર-માર્ગ સે ચ્યુત ન હોને કે લિષ્ઠ ઓર નિર્જરા કે લિષ્ઠ આગે
કહે જાને વાલી શુધા પિપાસા આદિ વાઈસ પરીપહ સહના ચાહિષ્ઠ ।
શુધા આદિ કી વેદના ઉત્પન્ન હોને પર પૂર્વોપાર્જિત કર્મો કી નિર્જરા
કરને કે લિષ્ઠ 'પરિત' અર્થાત્ સવ પ્રકાર સે જિન્હે સહન કિયા જાય,
ઉન શુધા પિપાસા આદિ કો પરીપહ કહતે હૈં ।

તાત્પર્ય યહ હૈં કિ કર્મો કે આસ્રવ કે નિરોધ રૂપ સંવર કે
જિનોપદિષ્ટ માર્ગ સે-અર્થાત્ સમ્યગ્દર્શનાદિ મોક્ષમાર્ગ સે, ચ્યુત ન
હોને કે લિષ્ઠ યા ઉસમેં નિશ્ચલતા ઉત્પન્ન કરને કે લિષ્ઠ તથા કૃત
કર્મ કી નિર્જરા કે લિષ્ઠ અર્થાત્ ઉન્હે આત્મા સે પૃથક્ કરને કે લિષ્ઠ

કારણ છે. આમાંથી સમિતિ, ગુપ્તિ, ધર્મ અને અનુપ્રેક્ષાનું સ્વરૂપ ભેદ અને
લક્ષણ અનુક્રમથી કહેવામાં આવ્યા છે હવે ક્રમપ્રાપ્ત પરીપહજયની પ્રરૂપણા
કરીએ છીએ—

સંવર-માર્ગથી ચ્યુત ન થવાય તે માટે અને નિર્જરા માટે હવે પછી
કહેવામાં આવનારા શુધા-પિપાસા આદિ બાવીશ પરીપહ સહન કરવા જોઈએ.
શુધા આદિની વેદના થવા પર પૂર્વોપાર્જિત કર્મોની નિર્જરા કરવા માટે
'પરિતઃ' અર્થાત્ બધી રીતે જેને સહન કરી શકાય, તે શુધા પિપાસા
આદિને પરીપહ કહે છે.

તાત્પર્ય એ છે કે કર્મોના આસ્રવના નિરોધ રૂપ સંવરના જિનોપદિષ્ટ
માર્ગથી-અર્થાત્ સમ્યગ્દર્શનાદિ મોક્ષ માર્ગથી ચ્યુત ન થવા માટે અથવા
તેમાં નિશ્ચલતા ઉત્પન્ન કરવા માટે તથા કરેલાં કર્મોની નિર્જરા માટે અર્થાત્

नार्थश्चेति यावत् क्षुत्पिपासादीनां परीषहाणां सहनं कर्तव्यमिति भावः जिनोपदिष्ट कर्मागमनिरोधमार्गात्-सम्यग्दर्शनरूपादच्यवसानाः सन्त स्तन्मार्गपरिक्रमण-परिचयेन कर्मागमरूपास्तद्वारं संवृण्वन्-औपक्रमिकं कर्मफलमनुभवन्तः क्रमेण निर्जीर्गकर्मणः खड्ग मोक्षमासादयन्तीति भावः ॥७॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वसूत्रे-संवरहेतुभूतां क्रमप्राप्ता मनुपेक्षां द्वादशविधां सविशदं प्रारूपयन् सम्पत्ति-क्रमागत परीषद्भयं प्ररूपयितुमाह-'संवरमग्न चववणनिज्जतरट्टं परिसोढ्वा परीसहा' इति, संवरमार्गाच्यवननिर्जरार्थम् संवरस्य पूर्वोक्तस्वरूपस्य कर्मागमनिरोधलक्षणस्य मार्गात् तीर्थकृत्यदक्षित-

क्षुधा पिपासा आदि परीषहों को सहन करना चाहिए। अभिप्राय यह है कि जिन भगवान् द्वारा उपदिष्ट कर्मों के आगमन के निरोध के मार्ग से अर्थात् सम्यग्दर्शन आदि से जो च्युत नहीं होते हैं और उसी मार्ग पर चलते हैं, वे आस्रव द्वार का निरोध करते हुए-औप-क्रमिक कर्मफल का अनुभव करते हुए, अनुक्रम से कर्मों की निर्जरा करते हुए मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं ॥७॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पूर्व सूत्र में संवर के कारण बारह प्रकार की अनुपेक्षाओं का विशद रूप से वर्णन किया गया। अब क्रम प्राप्त परीषहजय की प्ररूपणा करते हैं-

पूर्वोक्त स्वरूप वाले अर्थात् कर्मों के आगमन के निरोध लक्षण वाले संवर के मार्ग से या सम्यग्दर्शन आदि मोक्षमार्ग से च्युत न होने के लिए तथा पूर्वोक्त कर्मों की निर्जरा के लिए अर्थात् उन्हें

तेमने आत्माथी पृथक् करवा भाटे क्षुधा पिपासा आदि परीषहोने सहने करवा लेछो. उडेवानुं ओ छे के जिनेश्वर लगवान द्वारा उपदिष्ट कर्मोना आगमनना निरोधना मार्गथी अर्थात् सम्यग्दर्शन आदिथी ने च्युत थता नथी अने ने ते ज मार्ग पर आवे छे, तेओ आस्रवद्वारने निरोध करता थकां, अनुक्रमथी कर्मोनी निर्जरा करता थकां मोक्ष प्राप्त करी ले छे. ॥७॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पूर्व सूत्रमां संवरना कारण ३५ बार प्रकारनी अनुपेक्षाओनुं विशद रूपथी वर्णन करवामां आव्युं. डवे क्रमप्राप्त परीषहजयनी प्ररूपणा करीओ छीओ-

पूर्वोक्त स्वरूपाणा अर्थात् कर्मोना आगमनना निरोध लक्षणवाणा संवरना मार्गथी अथवा सम्यग्दर्शन आदि मोक्षमार्गथी न उगवा भाटे पूर्वोक्त कर्मोनी निर्जरा भाटे अर्थात् तेमने आत्मप्रदेशोथी जुहां करवा

સમ્યગ્દર્શનાદિ મોક્ષમાર્ગાત્-અચ્યવનમ્-અપરિભ્રંશનમ્ અપરિપતનમ્, તદર્થમ્-
 નિર્જરાર્થં કૃતકર્મણો નિર્જરાણ્યર્થાઽઽપ્રદેશેભ્યઃ પૃથગ્માત્રેન પરિશટનાર્થેત્તિ
 માત્રઃ અથ શબ્દસ્યોભયમ્ સમ્બન્ધાત્ પરિપોઢવાઃ પરિતઃ-સમન્તાત્ સંઢવ્યાઃ
 વક્ષ્યમાણ દ્વાવિંશતિ ક્ષુત્પિપાસાદયઃ પરીપહાઃ વ્યપદિશ્યન્તે, ક્ષુત્તૃપાદિવેદનો-
 ત્પ્રત્યો સત્ત્વાં કૃતકર્મનિર્જરાણ્યર્થં ક્ષુત્પિપાસાદયઃ પરિતઃ સહ્યન્તે इति માત્રઃ ।
 એવંચ-ક્ષુત્તૃપાસાદિ પરીપહાધિસહને મોક્ષમાર્ગાચ્યવનં-કૃતકર્મનિર્જરાણ્યર્થયો-
 જનં વર્તતે, અતएव પરીપહજયઃ પરમાવશ્યકઃ, કદાચિત્-વિલઘ્વચિત્ઃ સ્વલુ-
 વલીબતયા ક્ષુત્પિપાસાદિસહનાસમર્થઃ સન્ મોક્ષમાર્ગાત્ સમ્યગ્દર્શનાદિતઃ
 મચ્યુતોઽપિ સ્યાત્ અતસ્તેન તત્સહને શ્રદ્ધારૂપ આદરસ્તુ કર્તવ્ય एव, તસ્ય ક્ષુત્પિ-
 પાસાદિકં સમ્પ્રણધિસહમાનસ્ય ગિરેરિવ નિશ્ચલચિત્તસ્ય નિરાકુલ ધ્યાનૈકતા-
 નસ્ય કૃતકર્મનિર્જરાણં ભવતિ । તથા ચ-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનાદિલક્ષણ સમ્યગ્દર્શ-

આત્મપ્રદેશોં સે પૃથક્ કરને કે લિપ ક્ષુધા પિપાસા આદિ આગે કહે
 જાને વાલે બાઈસ પરીપહ સહન કરના ચાહિપ । હસ પ્રકાર ક્ષુધા ઓર
 પિપાસા આદિ પરીપહોં કો સહન કરને કા પ્રયોજન હૈ મોક્ષમાર્ગ સે
 અચ્યવન ન હોના ઓર પૂર્વ વદ્ધ કર્મોં કી નિર્જરા હોના । હસ કારણ
 પરીપહોં કો જીતના પરમાવશ્યક હૈ । કદાચિત કોઈ સંકલેશયુક્ત
 ચિત્તવાલાં ટુર્બલ હોને કે કારણ ભૂલ-પ્યાસ આદિ કો સહન કરને મેં
 અસમર્થ હોકર સમ્યગ્દર્શન આદિ મોક્ષમાર્ગ સે અચ્યુત મી હો જાય,
 તો મી ઉસે ઉનેકે સહન કરને મેં શ્રદ્ધારૂપ આદર તો કરના હી
 ચાહિપ । જો ક્ષુધા પિપાસા આદિ કો સમ્યક પ્રકાર સે સહન કરતા
 હૈ, જિસકા ચિત્ત પર્વત કે જૈસા અડિગ હોતા હૈ ઓર જો નિરાકુલ
 ધ્યાન મેં મગ્ન હોતા હૈ, ઉસકે પૂર્વોપાર્જિત કર્મોં કી નિર્જરા હોતી હૈ ।

માટે ક્ષુધા પિપાસા આદિ આગળ ઉપર કહેવામાં આવનારા બાવીશ પરીપહો
 સહન કરવા જોઈએ. આ રીતે ક્ષુધા અને પિપાસા આદિ પરીપહોને સહન
 કરવાનું પ્રયોજન છે મોક્ષમાર્ગથી અચ્યવન ન થવું અને પૂર્વે બાંધેલા કર્મોની
 નિર્જરા થવી. આ કારણે પરીપહોને છતવા પરમાવશ્યક છે. કદાચિત કોઈ
 સંકલેશ યુક્ત ચિત્તવાળો, ડુર્બળ હોવાના કારણે ભૂખ-તરસ આદિને સહન
 કરવા માટે અસમર્થ થઈને સમ્યગ્દર્શન આદિ મોક્ષમાર્ગથી લપસી પણ પડે
 તો પણ તેણે આ સહન કરવામાં શ્રદ્ધારૂપ આદર તો કરવો જ જોઈએ, જે
 ક્ષુધા-પિપાસા આદિને સમ્યક પ્રકારથી સહન કરે છે, જેનું ચિત્ત પર્વતની
 જેમ અડગ હોય છે અને જે નિરાકુલ ધ્યાનમાં મગ્ન હોય છે તેના
 પૂર્વોપાર્જિત કર્મોની નિર્જરા થાય છે. આ રીતે તત્ત્વશ્રદ્ધાન આદિ લક્ષણવાળા

नादिमोक्षमार्गात्-प्रच्यवनं सा भूत्' इति भावनया क्षुत्पिपासादयः परितः
समन्ते इति परीषहाः, एवं-ज्ञानावरणीयकर्मक्षपणार्थञ्च सोढव्याः परीषहाः
सिद्धिप्राप्तिहेतुभूतसंवरविघ्नकारकाः क्षुत्पिपासादयः परिषोढव्याः परीषहा
इति व्युत्पत्तिः, परितः-समन्तात्, आपतन्तः क्षुत्पिपासादयो द्रव्य-क्षेत्र-काल
भावापेक्षया सोढव्याः ये भवन्ति ते परीषहा इति व्यपदिश्यन्ते क्षुत्पिपासादय
इति भावः कर्मणि घ प्रत्ययः बाहुलकात् पूर्वपदस्य दीर्घः । उक्तञ्चोत्तराध्ययने
अध्ययने प्रथमसूत्रे 'इह खलु बावीसं परीसहा-जे भिक्खु सोच्छा नच्छा
जिच्छा अभिभूय भिक्खायरियाए परिव्वयंतो पुटो नो विनिहन्नेज्जा'
छाया-इह खलु द्वाविंशतिः परीषहा-यान् भिक्षुः श्रुत्वा-ज्ञात्वा-जित्वा

इस प्रकार तत्त्वार्थश्रद्धान् आदि लक्षण वाले सम्यग्दर्शन आदि मोक्ष
मार्ग से च्यवन न हो जाय, इस प्रकार की भावना से जो क्षुधा
पिपासा आदि सहन किये जाते हैं, उन्हें परीषह कहते हैं । इसी प्रकार
ज्ञानावरण आदि कर्मों का क्षय करने के लिए परीषहों को सहन
करना चाहिए । मोक्ष की प्राप्ति के कारणभूत संवर में विघ्न उपस्थित
करनेवाले क्षुधा पिपासा आदि जो सहन करने योग्य हैं, वे परीषह हैं,
ऐसी परीषह शब्द की व्युत्पत्ति है । 'परितः' अर्थात् सब प्रकार से
सब तरफ से, आये हुए क्षुधा पिपासा आदि को द्रव्य क्षेत्र काल और
भाव की अपेक्षा से जो सहन करने योग्य हों वे परीषह कहलाते हैं ।
यहां कर्म में 'घ' प्रत्यय हुआ है, और बाहुलक से पूर्वपद दीर्घ हो गया है ।

उत्तराध्ययन के द्वितीय अध्ययन के प्रथम सूत्र में कहा गया है-
'इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में बाईस परीषह कहे गए हैं, जिन्हे श्रवण कर,

सम्यग्दर्शन आदि मोक्षमार्गाधी च्यवन न थछ जाय, जेवी लावनाधी जे
क्षुधा पिपासा आदि सहन करवामां आवे छे तेमने परीषह कहवामां आवे
छे. आज रीते ज्ञानावरण आदि कर्मोना क्षय करवा माटे परीषहोने सहन
करवा जेछे. मोक्षनी प्राप्ति करणभूत संवरमां विघ्न उपस्थित करवावाणा
क्षुधा पिपासा वगैरे जे सहन करवा योग्य छे, ते परीषह छे, जे प्रमाणे
परीषह शब्दनी व्युत्पत्ति छे. 'परितः' अर्थात् जधी रीते जधी आबुंधी
आवेला क्षुधा पिपासा आदिने द्रव्य क्षेत्र, काल अने लावनी अपेक्षाधी जे
सहन करवा योग्य छे ते परीषह कहवाय छे. अही कर्मोमां-घ प्रत्यय थये
छे अने बाहुलताधी पूर्वपद दीर्घ थछ गयुं छे.

उत्तराध्ययनना द्वितीय अध्ययनना प्रथम सूत्रमां कहुं छे-आ निर्ग्रन्थ
प्रवचनमां जावीस परीषह कहवामां आव्या छे, जेने सांलणीने, जणुनी, जतीने

(પાત્ર) અભિભૂત ભિક્ષાચર્યામાં પરિવ્રજન (તૈઃ) સ્પૃષ્ઠઃ નો વિનિવ્રજ્યાત્ (તૈરાહતો ન વીરેત્) इति। स्थानाङ्गे ५-स्थाने १-उद्देशके ४०९ सूत्रे चोक्तम्—‘पंचहिं ठाणेहिं’ इति। पचीसभोजसंभोजे सम्यं सहेजजा-ममं च णं समं सहमाणस्तस्य अहिंसासेषाणस्त किं मन्ये कज्जह? एगंतसो मे निज्जरा कज्जह’

જાયા—પશ્ચિમિઃ સ્થાનૈ રુદીર્ણાન્ પરીપહોપસર્ગાન્ સહેત-મમ ચ ણં સમં સહમાણસ્તસ્ય અહિંસાસેષાણસ્ત કિં મન્યે કજ્જહ? એગંતસો મે નિજ્જરા કજ્જહ’
પરિવાનસ્ય યાવત્-અધ્યવસ્યતઃ કિં મન્યે ક્રિયતે-? એકાન્તશો મે નિર્જરા સિયતે इति ॥૭॥

પૂર્વ-તે બાવીસવિહા, છુહા પિપાસાઈ મેયઓ ॥૮॥

જાયા-તે દ્વાવિંશતિવિધાઃ ક્ષુધા-પિપાસાદિ ભેદતઃ-॥૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રે-સંવરસ્ય હેતુભૂતપરીપહસ્વરૂપં પ્રકૃપિતમ્,

હાન કર, જીત કર, એવં અભિભૂત કરકે ભિક્ષાચર્યા કે લિપ્ અટન કરતા હુઆ બિહુ, ડનસે સ્પૃષ્ઠ હોકર આઘાત કો પ્રાપ્ત નહીં હોતા ।

સ્થાનાંગસૂત્ર કે પાંચવેં સ્થાન કે પ્રથમ ઉદ્દેશક કે ૪૦૯ વેં સૂત્ર મેં બી કહા હૈ—

પાંચ કારણોં સે ઉદય મેં આપ પરીપહોં ઉપસર્ગોં કો સમ્યક્ પ્રકાર સહન કરના ચાહિય—મેં અગર સમ્યક્ પ્રકાર સે સહન કરુંગા યાવત્ અધ્યાસન કરુંગા તો મુજે કિસ ફલ કી પ્રાપ્તિ હોગી ? મુજે એકાન્તતઃ નિર્જરા કી પ્રાપ્તિ હોગી ॥૭॥

‘તે બાવીસવિહા છુહા પિપાસાઈ’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—ક્ષુધા પિપાસા આદિ કે ભેદ સે પરીપહ વાઈસ હૈ ॥૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્ર મેં સંવર કે કારણભૂત પરીપહ કે સ્વરૂપ

અને અભિભૂત કરાને ભિક્ષાચર્યા માટે અટન કરતો થકો ભિક્ષુ, તેમનાથી સ્પૃષ્ઠ થઈ ને આઘાતને પ્રાપ્ત થતો નથી.

સ્થાનાંગસૂત્રના પાંચમા સ્થાનના પ્રથમ ઉદ્દેશકના ૪૦૯માં સૂત્રમાં પણ કહ્યું છે—

પાંચ કારણોથી ઉદયમાં આવેલા પરીપહો અને ઉપસર્ગોને સમ્યક્ પ્રકારથી સહન કરવા બેઠએ—હું બે સમ્યક્ પ્રકારથી સહન કરીશ, અધ્યવસાન કરીશ તો મને કયા ફળની પ્રાપ્તિ થશે ? મને એકાન્તતઃ નિર્જરાની પ્રાપ્તિ થશે. ॥૭॥

‘તે બાવીસવિહા, છુહા પિપાસા’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—ક્ષુધા પિપાસા આદિના ભેદથી પરીપહ બાવીસ છે. ॥૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ સૂત્રમાં સંવરના કારણભૂત પરીપહના સ્વરૂપનું પ્રતિ-

સમ્પ્રતિ-તસ્ય ભેદાન્ પ્રરૂપયિતુમાહ-‘તે ચાવીસવિહા’ ઇત્યાદિ, પૂર્વસૂત્રોક્તાઃ પરીવહાઃ દ્વાવિંશતિવિધાઃ સન્તિ તચથા-ક્ષુધાપરીવહઃ ૧ પિપાસાપરીવહઃ-૨ આદિના-શીતપરીવહઃ-૩ ઉષ્ણપરીવહઃ-૪ દંશમશકપરીવહઃ-૫ અચેલપરીવહઃ ૬ અરતિપરીવહઃ-૭ સ્ત્રીપરીવહઃ-૮ ચર્યાપરીવહઃ-૯ નિષઘ્નાપરીવહઃ-૧૦ શય્યાપરીવહઃ-૧૧ આક્રોશપરીવહઃ-૧૨ વધપરીવહઃ-૧૩ યાચનાપરીવહઃ-૧૪ અલાભપરીવહઃ ૧૫ રોગપરીવહઃ-૧૬ તૃણસ્પર્શપરીવહઃ-૧૭ જલ્લમલ્લપરીવહઃ-૧૮ સત્કારપુરસ્કારપરીવહઃ-૧૯ પ્રજ્ઞાપરીવહઃ-૨૦ અજ્ઞાનપરીવહઃ-૨૧ દર્શનપરીવહઃ-૨૨ ઇત્યેવં ભેદાત્-દ્વાવિંશતિવિધાઃ પરીવહા ભવન્તિ । તથા ચ-ક્ષુત્પિપાસાદીનાં દ્વાવિંશતિપરીવહાણાં સહનં મોક્ષાર્થિભિરવશ્યં કર્તવ્યમ્, તત્ર-નિરવચાકા પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા, અવ પરીવહ કે ભેદોં કી પ્રરૂપણા કરને કે લિષ્ઠ કહ્તે હૈ-

પૂર્વસૂત્ર મેં કથિત પરીવહ ચાવીસ પ્રકાર કે હૈ । વે પ્રકાર ચે હૈ- (૧) ક્ષુધા પરીવહ (૨) પિપાસા પરીવહ (૩) શીતપરીવહ (૪) ઉષ્ણ પરીવહ (૫) દંશમશકપરીવહ (૬) અચેલપરીવહ (૭) અરતિપરીવહ (૮) સ્ત્રીપરીવહ (૯) ચર્યાપરીવહ (૧૦) નિષઘ્નાપરીવહ (૧૧) શય્યાપરીવહ (૧૨) આક્રોશપરીવહ (૧૩) વધપરીવહ (૧૪) યાચનાપરીવહ (૧૫) અલાભપરીવહ (૧૬) રોગપરીવહ (૧૭) તૃણસ્પર્શપરીવહ (૧૮) જલ્લમલ્લપરીવહ (૧૯) સત્કાર પુરસ્કારપરીવહ (૨૦) પ્રજ્ઞાપરીવહ (૨૧) અજ્ઞાનપરીવહ ઓર (૨૨) દર્શનપરીવહ । મોક્ષાભિલાષી પુરુષોં કો ક્ષુધા પિપાસા આદિ ચાવીસ પરીવહોં કો અવશ્ય હી સહન કરના ચાહિષ્ । ઇન પરીવહોં કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર હૈ-

(૧) ક્ષુધાપરીવહ--જો સાધુ નિર્દોષ આહાર કી ગવેષણા કરને

પાદન કરવામાં આન્યું હવે પરીવહનાં ભેદોની પ્રરૂપણા કરવા માટે કહીએ છીએ.

પૂર્વ સૂત્રમાં કથિત પરીવહ બાવીશ પ્રકારના છે. આ પ્રમાણે છે-(૧) ક્ષુધાપરીવહ (૨) પિપાસાપરીવહ (૩) શીતપરીવહ (૪) ઉષ્ણપરીવહ (૫) દંશમશકપરીવહ (૬) અચેલપરીવહ (૭) અરતિપરીવહ (૮) સ્ત્રીપરીવહ (૯) નિષઘ્નાપરીવહ (૧૦) ચર્યાપરીવહ (૧૧) શય્યાપરીવહ (૧૨) આક્રોશપરીવહ (૧૩) વધપરીવહ (૧૪) યાચનાપરીવહ (૧૫) અલાભપરીવહ (૧૬) રોગપરીવહ (૧૭) તૃણસ્પર્શપરીવહ (૧૮) જલ્લમલ્લપરીવહ (૧૯) સત્કારપુરસ્કારપરીવહ (૨૦) પ્રજ્ઞાપરીવહ (૨૧) અજ્ઞાનપરીવહ (૨૨) દર્શનપરીવહ. મોક્ષાભિલાષી પુરુષોં કો ક્ષુધા પિપાસા આદિ બાવીશ પરીવહોંને અવશ્ય જ સહન કરવા નેહીએ. આ પરીવહોંનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે-

(૧) ક્ષુધાપરીવહ-જો સાધુ નિર્દોષ આહારની ગવેષણા કરનાર છે,

હારણવેષિણઃ શ્રમણસ્ય ઘાશુકાહારાડલાભે, કિશ્ચિન્માત્રલાભેવાડનિવૃત્તવેદનં
 ર્થેવાડકાલેડદેશે ચ શિક્ષાર્થં પ્રતિ નિરાકાઙ્ક્ષસ્ય સ્વાધ્યાય-ધ્યાનાઘાવશ્યકં
 પરિહારિણિ કિશ્ચિદપ્યસહમાનસ્ય સ્વાધ્યાય-ધ્યાનૈકતાનસ્યાડનેકવારં સ્વકૃત-
 પરકૃતાડજ્ઞાનાવમોદયસ્યાડરસવિરસાહારિણઃ સન્તપ્તપતિતકતિપયજલબિન્દુક્લે-
 સંસૈષ્ઠ પરિશુષ્કપાનશ્યોદીર્ઘાશુદ્ધેદનસ્યાપિ મિક્ષાલાભાવેક્ષયા તદલાભ-
 એવાડધિકગુણકં મન્દાનસ્ય ક્ષુત્પીડામ્પ્રતિ ચિન્તારાહિત્યં ક્ષુત્પરીપહજયો
 વ્યપદિચ્યતે-૧ જલસ્નાનપરિહારિણઃ પક્ષિવત્-અનિયતાસનાવાસસ્યાડતિક-

વાલા છે. પ્રાસુક આહાર કા લાભ ન હોને પર યા થોડા-સા લાભ
 હોને પર જિલ્લકી ભૂખ કી વેદના નહીં મિટી છે, જો અકાલ ઓર
 અદેશ મેં બિલ્લા કરને કે લિખે ઇચ્છુક નહીં છે, જો સ્વાધ્યાય ધ્યાન
 આદિ આવશ્યક ક્રિયાઓ કી તનિક બી હાનિ કો સહન નહીં કરતા,
 સ્વાધ્યાય ઓર ધ્યાન મેં લીન રહતા છે, જિલ્લને અનેક વાર અનશન
 ઓર ઉગ્રોદરી તપસ્યા કી છે, જો અરસ ઓર વિરસ આહાર કરને
 વાલા છે, ગરમ વસ્તુ પર ગિરે હુખે થોડે-સે જલ કે વૂંદોં કે સમાન
 સહસા હી જિલ્લ કા પાન (પાની) સુખ ગયા છે, જો ભૂખ સે પીડિત હો
 રહા છે ઓર જો બિલ્લા કે લાભ કી અપેક્ષા અલાભ કો અધિક ગુણ-
 કારક સમજતા છે, ઉલ્લકા ક્ષુધા કી પીડા કી ઓર સે નિશ્ચિન્ત હોના
 ક્ષુધાપરીપહ જય કહલાતા છે.

(૨) પિપાસા પરીપહ--જો જલ-સ્નાન કા ત્યાગી છે, પક્ષી કે
 જૈસે અનિયત આસન ઓર નિવાસ વાલા છે અર્થાત્ જિલ્લ કે ઠહરને

પ્રાસુક આહારનો લાભ ન થવાથી અથવા થોડો લાભ થવાથી જેની ભૂખની
 વેદના મટી નથી જે અકાળ અને અદેશમાં બિલ્લા કરવા માટે ઇચ્છુક નથી,
 જે સ્વાધ્યાય ધ્યાન આદિ આવશ્યક ક્રિયાઓની થોડી પણ હાનિને સહન
 કરતો નથી, સ્વાધ્યાય અને ધ્યાનમાં લીન રહે છે, જેમણે અનેકવાર અનશન
 અને ઉગ્રોદરી તપસ્યા કરી છે. જે અરસ અને વિરસ આહાર કરનાર છે,
 ગરમ વસ્તુ પર પડેલા પાણીના ટીપાની જેમ એકાએક જ જેનું પાણી સુકાઈ
 ગયું છે, જે ભૂખથી પીડાતો હોય અને જે બિલ્લાના લાભની અપેક્ષા અલા-
 ભને વધુ શુભકારક સમજે છે, તેનું ક્ષુધાથી નિશ્ચિન્ત થવું ક્ષુધાપરીપહજય
 કહેવાય છે.

(૨) પિપાસાપરીપહ--જે જળ-સ્નાનનો ત્યાગી છે, પક્ષીની માફક
 અનિયત આસન અને નિવાસવાળો છે અર્થાત્ જેને રોકવાનું કંઈ નિશ્ચિત

વળાઽસ્નિગ્ધ-રુક્ષ-વિરુદ્ધાહારગ્રીષ્માતપપિત્તજ્વરાઽનશનાદિભિરુદ્ધીર્ણા શરીરેન્દ્રિય-
પરિતાપિનીં વેદનાં પ્રતિ પ્રતીકારં કર્તુ મધ્યવસાયરહિતસ્ય પિપાસાવહ્નિ-
જ્વાલાં ધૈર્યકુમ્ભપૂર્ણશીલાચારસુરવિસમાધિમુસલાધારપયસા પ્રશમયતઃ પિપા-
સાસહનં પિપાસાપરીષદ્વજયઃ-૨ શીતપરીષદ્વજયઃ પુનઃ પ્રચ્છાદનવદ્ધરહિતસ્ય
વિહગાદિવત્-અનિશ્ચિતાશ્રયસ્ય તરુમૂલશિલાતલાદિષુ તુષારપાતશીતલપવન
સમીરણે સતિ તત્પ્રતીકારં કર્તુ નિરીદસ્ય પૂર્વાનુભૂતશીતપ્રતીકારદેતુભૂત વસ્તુ
સ્મરણમકુર્વતો જ્ઞાનમાવનાલયે ધૈર્યોઽણવસ્ત્રાચ્છન્નસ્ય સુખં વસતઃ શીતવેદના

કા કોઈ નિયત ઠિકાના નહીં હૈ, અત્યન્ત નમકીન, રુએ એવં વિરુદ્ધ
આહાર, ગ્રીષ્મકાલ કી ધૂપ, પિત્તજ્વર યા અનશન આદિ કારણોં સે
ઉત્પન્ન હુઈ તથા શરીર ઓર ઇન્દ્રિયોં મેં વ્યાપી હુઈ વેદના કા પ્રતીકાર
કરને કે સંકલ્પ સે જો રહિત હૈ, ઓર જો પિપાસા રૂપી અગ્નિ કી
જ્વાલા કો, ધૈર્ય રૂપી ઘડ મેં ભરે હુએ, શીલાચાર કે સૌરભ સે યુક્ત
એવં સમાધિ રૂપી સૂસલ-ધાર જલ સે શાન્ત કરતા હૈ, એસે મુનિ કા
પ્યાસ કો સહન કરના પિપાસા પરીષદ્ વજ્ય કહલાતા હૈ ।

(૩) શીતપરીષદ્--જો મુનિ પ્રચ્છાદન પર અર્થાત્ ઓઢને કે વસ્ત્ર
સે રહિત હૈ, પક્ષી કે સમાન જિસકા કોઈ નિશ્ચિત સ્થાન નહીં હૈ, જો
વૃક્ષ કે નીચે યા શિલાતલ કે ઝાડ તુષારપાત અર્થાત્ વર્ષ ગિરને સે
અથવા શીતલ પવન ચલને સે લગને વાલી ઠંડ કા પ્રતીકાર કરને
કા ઇચ્છુક નહીં હૈ, પૂર્વ અવસ્થા મેં અનુભૂત શીતનિવારણ કે કારણ-

સ્થાન નથી, અત્યન્ત નમકીન, રુક્ષ તેમજ વિરુદ્ધ આહાર, ઉનાળાનો તડકો,
પિત્તજ્વર અથવા અનશન આદિ કારણોથી ઉત્પન્ન થયેલી તથા શરીર અને
ઇન્દ્રિયોમાં વ્યાપેલી વેદનાનો પ્રતિકાર કરવાના સંકલ્પથી જે રહિત છે અને
પિપાસા રૂપી અગ્નિની જ્વાલાને ધૈર્ય રૂપી ઘડામાં ભરેલા, શીલાચારના
સૌરભથી યુક્ત અને સમાધિરૂપ ભૂશણધાર જળથી શાન્ત કરે છે, આવા
મુનિનું તરસને સહન કરવું પિપાસાપરીષદ્વજ્ય કહેવાય છે.

(૩) શીતપરીષદ્:-જે મુનિ પ્રચ્છાદનપટ અર્થાત્ ઓઢવાના વસ્ત્રથી
રહિત છે, પક્ષીની માફક જેનું કોઈ નિશ્ચિત રહેઠાણ નથી, જે વૃક્ષની નીચે
અથવા શીલાતળની ઉપર તુષારપાત અર્થાત્ હીમ પડવાથી અથવા શીતળ
પવન વાવાથી લાગનારી ટાઢનો પ્રતિકાર કરવાનો ઇચ્છુક નથી, પૂર્વ
અવસ્થામાં, અનુભૂત શીતનિવારણની કારણભૂત વસ્તુઓને જે યાદ પશુ કરતો

સહનરૂપી લોભ્ય:-૩ ઉષ્ણપરીષદ્જયથ-સમીરસંવારશૂન્યે નિર્જલે ગ્રીષ્માત્મપરિશુષ્કપતિતપન્નરહિતનિશ્ચાયવૃક્ષાટવીમધ્યે યથાક્રામચારોપાતગતસ્યાઽઽહારાઽધ્યન્તર સાધનામાવપયુક્તોત્પન્નદાહસ્ય દાવાગ્નિજ્વાલાજાલજઙ્ગાલજદિલપરુષવાતાતરનનિત્ત કઠ્ઠશોષસ્યાઽનુભૂત તત્પ્રતીકારહેતુચિન્તન મત્રિદધતઃ પ્રાણિપીડાપરિહારપરાયણસ્ય ચારિત્રરૂપોષ્ણસહનરૂપ:-૪ દંશમશકપરીષદ્જયસ્તુ દંશમશ-

મૃત વસ્તુઓં કા જો સ્મરણ મી નહીં કરતા, જો જ્ઞાન-ભાવના રૂપી બ્રહ્મલ મેં, ધૈર્ય રૂપી ગર્મ વસ્ત્રોં સે યુક્ત હોકર સુખ-પૂર્વક રહતા હૈ, એસે મુનિ કા શીતવેદન કો સહન કરના શીતપરીષદ્ જય કહલાતા હૈ।

(૪) ઉષ્ણપરીષદ્--વાયુ કે સંવાર સે શૂન્ય, જલહીન, ગ્રીષ્મકાલ કી ધૂમ સે સૂચે હુએ ઓર નીચે ગિરે હુએ પત્તોં સે રહિત, છાયાવિહીન વૃક્ષોં વાલી અટવી કે મધ્ય મેં, સ્વેષ્ટા પૂર્વક વિચરણ કરતે હુએ, આહાર રૂપ ચીતરી કારણોં કે અભાવ સે જિસે દાહ ઉત્પન્ન હુઆ હૈ, દાવાનલ કી જ્વાલાઓં કે સમૂહ સે વ્યાપ્ત નિષ્કુર પવન કે આતપ સે જિસકા કંઠ સૂચ ગયા હૈ, પૂર્વ અવસ્થા મેં ગર્મીં કે પ્રતીકાર કે જિન સાધનોં કા અનુભવ કિયા થા, ઉનકા ચિન્તન મી જો નહીં કરતા ઓર જો પ્રાણિયોં કો હોને વાલી પીડા કા પરિહાર કરને મેં તત્પર હૈ, એસા મુનિ ગર્મીં કા જો કષ્ટ સહન કરતા હૈ, ઉસે ઉષ્ણપરીષદ્ જય કહતે હૈ।

(૫) દંશમશકપરીષદ્-દંશમશક મત્કૂળ, માચી ચીંટી કીડે વૃશ્ચિક (વીંછુ) આદિ કે દ્વારા કૂન પીડાંકો વિના પ્રતિકાર સહલેના મન-

નથી, જે જ્ઞાન-ભાવના રૂપી મહેલમાં, ધૈર્ય રૂપી ગરમ વસ્ત્રોથી યુક્ત થઈને સુખશાતામાં રહે છે, એવા મુનિરાજની શીતવેદનાને સહન કરવાને શીત-પરીષદ્જય કહેવાય છે.

(૪) ઉષ્ણપરીષદ્:-વાયુના સંચારથી શૂન્ય, પાણી વગરના, ગ્રીષ્મકાળના તડકાથી સૂકાઈ ગયેલા અને નીચે પડેલા પાંદડાઓથી રહિત, છાંયડા વગરના વૃક્ષોવાળા જંગલની મધ્યમાં સ્વેષ્ટાપૂર્વકે વિચરતા થકા આહાર રૂપ આલેખાંતર કારણોના અભાવથી જેને દાહ ઉત્પન્ન થયો છે, દાવાનળની જ્વાલાઓના સમૂહથી વ્યાપ્ત નિષ્કુર પવનના આતપથી જેનું ગળું સૂકાઈ ગયું છે, પૂર્વ અવસ્થામાં ગરમીના પ્રતિકારના જે સાધનોના અનુભવ કર્યો હોતો તેનું લેશમાત્ર ચિન્તન કરતો નથી અને જે પ્રાણીઓને થનારી પીડાનો પરિહાર કરવામાં તત્પર છે, એવા મુનિ ગરમીનું જે કષ્ટ સહન કરે છે તેને ઉષ્ણપરીષદ્જય કહે છે.

(૫) દંશમશકપરીષદ્-ડાંસ, મચ્છર, માંકડ, માખ, કીડી, વીંછી વિગેરે દ્વારા કરવામાં આવેલ પીડાને કંઈ પણ પ્રતિકાર કર્યા વિના સહન કરવી. અને

कमक्षिकामत्कुणकीटपिपीलिकावृश्चिकादि कृतां प्रतीकाररहितां पीडां सहमानस्य मनोवाकायकृतां तद्वाधामकुर्वाणस्य मोक्षप्राप्तिमात्रकृतसङ्कल्पप्रावरणस्य दंशम-
शकादिवेदनासहनरूपोऽवसेयः—५ अचेलपरीषद्वज्रयस्तु—मनोविकारविरहितत्वात्
स्त्रीरूपाणि—अत्यन्ताधुचि कुणारूपेण भावयतोऽवण्डब्रह्मवर्षव्रतं धारयतोऽल्प-
वस्त्रधारणव्रतरूपोऽनवयोऽवसेयः—६ अरतिपरीषद्वज्रयस्तावत्—इन्द्रियाभीष्टविषय
प्राप्तिम्पति—अनुत्कण्ठितस्य संयतस्य गीतनृत्यादि विरहितेषु एकान्त-
ध्यानसमाधिगृहेषु स्वाध्यायध्यानभावनारतिं सेवमानस्य दृष्टश्रुत्याऽनुभूत

वचन एवं कायद्वारा उन की बाधा न पहुंचावे, एवं मोक्ष मार्ग की प्राप्ति में निश्चित बुद्धिवाले होकर दंशमशकादि द्वारा कृत वेदनाको सहलेना दंशमशकपरीषद्वज्रय कहलाता है।

(६) अचेलपरीषद्वज्रय—जो साधु मानसिक विकार से रहित है, जो स्त्री के रूप को अत्यन्त अपावन मांस के लोथड़े के समान समझता है और जो अवण्ड ब्रह्मवर्षव्रत का धारक है, ऐसे मुनि का अल्प वस्त्रों को धारण करना अचेलपरीषद्वज्रय कहा जाता है।

(७) अरतिपरीषद्वज्रय—जिस साधु के चित्त में इन्द्रियों के अभीष्ट विषयों की प्राप्ति के लिए उत्कंठा नहीं है, जो गीत नृत्य आदि से रहित एकान्त ध्यान-समाधिगृहों में स्वाध्याय, ध्यान और भावना का अभ्यास करता है, जो पहले देखी हुई, सुनी हुई या अनुभव की हुई काम-कथा का स्मरण और श्रवण नहीं करता, जिसके हृदय में काम के वाण प्रवेश नहीं करते और जिसके हृदय में सदैव दया का उदय

मन, વચન અને કાયાથી તેમને બાધા ન પહોંચાડવી તથા મોક્ષમાર્ગની પ્રાપ્તિમાં નિશ્ચલ મતિવાળા બનીને દંશમશકાદીએ કરેલ પીડાને સહન કરવી તે દંશમશકાય પરીષદ્વજ્રય કહેવાય છે.

(૬) અચેલપરીષદ્વજ્રય:—જે સાધુ માનસિક વિકારથી રહિત છે, જે સ્ત્રીના રૂપને અત્યંત અપવિત્ર માંસના લોથા જેવું સમજે છે અને જે અવણ્ડ બ્રહ્મવર્ષવ્રતનો ધારક છે, એના મુનિનું અલ્પવસ્ત્રોનું ધારણ કરવું અચેલ-પરીષદ્વજ્રય કહેવાય છે.

(૭) અરતિપરીષદ્વજ્રય:—જે સાધુના ચિત્તમાં ઇન્દ્રિયોના અનિષ્ટ વિષયોની પ્રાપ્તિ માટે ઉત્કંઠા નથી જે ગીત, નૃત્ય આદિથી રહિત એકાન્ત ધ્યાન-સમાધિગૃહોમાં સ્વાધ્યાય, ધ્યાન અને ભાવનાનો અભ્યાસ કરે છે, જે પહેલાં જોયેલી, સાંભળેલી અથવા અનુભવેલી કામ-કથાનું શ્રવણ અને સ્મરણ કરતો નથી, જેના હૃદયમાં કામના બાણ પ્રવેશ કરતા નથી, જેના હૃદયમાં સર્વદા

કમલિકામત્કુળકીટપિપીલિકાવૃશ્ચિકાદિ કૃત્તાં પ્રતીકારરહિતાં પીડાં સહમાનસ્ય
મત્રોવાકાવકૃતાં તદ્વાધામકુર્વાગસ્ય મોક્ષપ્રાપ્તિમાત્રકૃતસંકલ્પપ્રાવરણસ્ય દંશમ-
શકાદિવેદનાસહનરૂપોઽવસેયઃ—૫ અચેલપરીપહજયસ્તુ—મનોવિકારવિરહિતત્વાત્
સ્ત્રીરૂપાણિ—અત્યન્તાશુચિ કુગારૂપેગ માત્રયતોઽવળંબ્યર્થવ્રતં ધારયતોઽલ્પ-
વસ્ત્રધારણવ્રતરૂપોઽનવચોઽવસેયઃ—૬ અરતિપરીપહજયસ્તાવત્—ઇન્દ્રિયામીષ્ટવિષય-
પ્રાપ્તિમ્પતિ—અનુત્કંઠિતસ્ય સંયતસ્ય ગીતનૃત્યાદિ વિરહિતેષુ એકાન્ત-
ધ્યાનસમાધિગૃહેષુ સ્વાધ્યાયધ્યાનભાવનારતિ સૈવમાનસ્ય દૃષ્ટશ્રુતાઽનુભૂત

વચન એવં કાવ્યદ્વારા તેન કી વાધા ન પહુંચાવે, એવં મોક્ષ માર્ગ કી
પ્રાપ્તિ મેં નિશ્ચિત વુદ્ધિવાલે હોખર દંશમશકાદિ દ્વારા કૃત વેદનાકો
સહલેના દંશમશકપરીપહ જય કહલાતા હૈં ।

(૬) અચેલપરીપહ—જો સાધુ માનસિક વિકાર સે રહિત હૈં, જો
સ્ત્રી કે રૂપ કો અત્યન્ત અપાવન માંસ કે લોથડે કે સમાન સમજતા
હૈં ઓર જો અવળંબ્યર્થવ્રતન કા ધારક હૈં, એસે મુનિ કા અલ્પ
વસ્ત્રોં કો ધારણ કરના અચેલપરીપહ જય કહા જાતા હૈં ।

(૭) અરતિપરીપહ—જિસ સાધુ કે ચિત્ત મેં ઇન્દ્રિયોં કે અમીષ્ટ
વિષયોં કી પ્રાપ્તિ કે લિએ ઉત્કંઠા નહીં હૈં, જો ગીત નૃત્ય આદિ સે
રહિત એકાન્ત ધ્યાન—સમાધિગૃહોં મેં સ્વાધ્યાય, ધ્યાન ઓર ભાવના કા
અભ્યાસ કરતો હૈં, જો પહેલે દેખી હુઈ, સુની હુઈ યા અનુભવ કી હુઈ
કામ—કથા કા સ્મરણ ઓર શ્રવણ નહીં કરતા, જિસકે હૃદય મેં કામ
કે વાળ પ્રવેશ નહીં કરતે ઓર જિસકે હૃદય મેં સદૈવ દયા કા ઉદય

મન, વચન અને કાયાથી તેમને વાધા ન પડેઆકરી તથા મોક્ષમાર્ગની
પ્રાપ્તિમાં નિશ્ચલ મતિવાળા બનીને દશમશકાદીએ કરેલ પીડાને સકુન કરવી
તે દંશમશકાય પરીપહજય કહેવાય છે.

(૬) અચેલપરીપહઃ—જે સાધુ માનસિક વિકારથી રહિત છે, જે સ્ત્રીના
રૂપને અત્યન્ત અપવિત્ર માંસના લોચા જેવું સમજે છે અને જે અવળંબ્ય
પ્રહાયર્થવ્રતનો ધારક છે, એના મુનિનું અલ્પવસ્ત્રોનું ધારણ કરવું અચેલ-
પરીપહજય કહેવાય છે.

(૭) અરતિપરીપહઃ—જે સાધુના ચિત્તમાં ઇન્દ્રિયોના અનિષ્ટ વિષયોની
પ્રાપ્તિ માટે ઉત્કંઠા નથી જે ગીત, નૃત્ય આદિથી રહિત એકાન્ત ધ્યાન—
સમાધિગૃહોમાં સ્વાધ્યાય, ધ્યાન અને ભાવનાનો અભ્યાસ કરે છે, જે પહેલા
જેએલી, સાંભળેલી અથવા અનુભવેલી કામ—કથાનું શ્રવણ અને સ્મરણ કરતો
નથી, જેના હૃદયમાં કામના વાણ પ્રવેશ કરતા નથી, જેના હૃદયમાં સર્વદા

કામરતિકથા સ્મરણ શ્રવણમદનવાણમદેશચિત્તરહિતદ્વયસ્ય સદોદિતદ્ય-
 સ્યાસસતિ સહનરૂપો વોધ્ય:-૭ સ્ત્રીપરીવહનપદ્મ-રુકાન્તારામભવનાદિષુ
 જ્યયૌવનમદ વિભ્રમવિલાસ મદિરાસવસેવનોન્મત્તકલનાસુ વાયમાનાસુ સતીષ્વરિ
 કૂર્પાજ્વલ' સંશ્લેષેન્દ્રિય માનવવિકારસ્ય લલિતસ્મિતમધુરાઝાપવિલાસઃ
 કટાક્ષવીક્ષગ મહસન મદમન્દગમનકામશરવ્યાપારવિફળીકરણપમર્થસ્ય કામિની-
 વાવાસહનરૂપો વોધ્ય:-૮ ચર્યાપરીવહનપદ્મ-અધિગતવન્ધમોક્ષતત્ત્વસ્યા-
 ઇત્યન્તતીક્ષ્ણકણ્ઠક શર્કરાદિ વ્યથનક્ષતજાતપાદવ્યથસ્યાપિ પૂર્વાનુભૂતયોગ્ય-
 રૂપતા હૈ, ઉચ્ચ સાધુ કા અરતિ કો સહન કર લેના અરતિપરીવહ જય હૈ।

(૮) સ્ત્રીપરીવહ—એકાન્ત ઉદ્યાન યા ભવન આદિ સ્થાન મેં નવ
 યૌવન કે કારણ ચંચલ મનવાલી, નાના પ્રકાર કે શૃંગારિક હાવમાવ
 પ્રદર્શિત કરને વાલી એવં મદિરા કે સેવન લે ઉન્મત્ત બની હુઈ કોઈ સ્ત્રી
 સાધુ કો સંયમ લે વિચલિત કરના વાહે તો સાધુ કલુષ કે જેસા
 અપને અંગોં અર્થાત્ હન્દ્રિયોં ઓર મન કે વિકાર કો રોકે, ઓર ઉસકી
 લલિત મુસ્કરાહટ કો, મધુર આલાપ કો, વિલાસપૂર્ણ કટાક્ષયુક્ત
 અવલોકન કો, હાસ્ય કો, મદ યુક્ત મન્દ ગતિ કો એવં કામ કે વાણોં
 કે વ્યાપાર કો વિફલ કરદે। એસા કરને મેં સમર્થ મુનિ કામિની જનિત
 વાવા કો જો સહન કર લેતા હૈ, ઉસકા વહ સ્ત્રીપરીવહ જય કહલાતા હૈ।

(૯) ચર્યાપરીવહ—જિસને બન્ધ ઓર મોક્ષ તત્ત્વ કો ખલી માંતિ જાન
 લિયા હૈ, જિસકે પાંચોં મેં અત્યન્ત તીચે કાંટે યા કંકર આદિ ચુમને

દયાનો ઉદય થાય છે, તે સાધુનું અરતિને સહન કરી લેવું—અરતિપરીવહજય
 કહેવાય છે.

(૮) સ્ત્રીપરીવહઃ—એકાન્ત ઉદ્યાન અથવા ભવન આદિ સ્થાનોમાં નવ-
 યૌવનને લીધે નખરાવાળી, વિવિધ પ્રકારના શૃંગારિક હાવ ભવ પ્રદર્શિત
 કરનારી અને મદિરાના સેવનથી ઉન્મત્ત બનેલી, કોઈ સ્ત્રી, સાધુને સંયમથી
 વિચલિત કરવા ઇચ્છે ત્યારે સાધુ કાચબાની માફક પોતાના અંગો અર્થાત્
 હન્દ્રિયો તથા મનના વિકારને રોકે અને તેની લલિત મુસ્કરાહટ (હાસ્ય)ને,
 મધુર આલાપને, વિલાસપૂર્ણ કટાક્ષયુક્ત અવલોકનને, હાસ્યને, મદભરેલી
 મન્દ ચાલને અને કામખેલોના વ્યાપારોને નિષ્ક્રાં બનાવી દે. આમ કરવામાં
 સમર્થ મુનિ કામિની જનિત મુશ્કેલીને જે સહન કરી લે છે, તેનો આ
 સ્ત્રીપરીવહજય કહેવાય છે.

(૯) ચર્યાપરીવહઃ—જેણે બન્ધ અને મોક્ષતત્ત્વને સારી પેઠે જાણી લીધા
 છે, જેના પગમાં અત્યન્ત તીક્ષ્ણ કાંટા અથવા કાંકરા વગેરે વાગવાથી વ્યથા

यानवाहनघारोहणगमनरमरणमकुर्वतो यथाकालमावश्यकानि परिहाणि मविधत्त-
 र्थ्या सहनरूपोऽवगन्तव्यः-९ निषद्यापरीषहजयस्तावद्-प्रकाशितप्रदेशे कृतनिष्ठ-
 क्रियस्य मनुष्यतिर्यग्देवादिकृतेष्टानिष्टोपसर्गसहनान्मोक्षमार्गाऽच्युतस्य वीरा-
 सनाद्यविचलितशरीरस्य तत्कृतवाधासहनरूपो बोध्यः-१० शय्यापरीषहजय-
 स्तावद्-अध्वश्रमस्वाध्यायध्यानपरिश्रान्तस्य निम्नोन्नततीक्ष्णशर्करादि सङ्कु-
 ष्णतिशीतोष्णभूमितलेषु निद्रालभमानस्य कृतव्यन्तरादि विविधोपसर्गादपि
 विचलितशरीरस्याऽनियतकालिकतत्कृतवाधासहनरूपो बोध्यः-११ आक्रोश

से व्यथा उत्पन्न हो रही है और जो पूर्व मुक्त योग्य यान, वाहन पर सवार होकर गमन करने का स्मरण भी नहीं करता है, जो नियत समय पर किये जाने वाले आवश्यक आदि क्रियाकलापों की हानि को सहन नहीं करता, ऐसा मुनि चर्यापरीषह पर विजय प्राप्त करता है।

(१०) निषद्यापरीषह--प्रकाशयुक्त प्रदेश में नित्य क्रिया करने वाले, मनुष्य देव या तिर्यच के द्वारा उत्पन्न किये हुए इष्ट या अनिष्ट उपसर्गों को सहन करने से जो मोक्षमार्ग से च्युत नहीं होता, जिसका शरीर वीरासन आदि से विचलित नहीं होता, उस मुनि का निषद्या-कृत वाधा को सहन कर लेना निषद्यापरीषह जय कहलाता है।

(११) शय्यापरीषह-राह चलने के श्रम से और स्वाध्याय तथा ध्यान करने से थके हुए, नीचे, ऊंचे, तीखे कंकर आदि से युक्त अत्यन्त शीत या उष्ण भूमितल पर जिसे नींद नहीं आ रही है एवं

उत्पन्न थक रही छे अने जे पूर्वे लोगवेला योग्य यान, वाहन पर सवार थकने गमन करवानुं स्मरण पणु करतो नथी, जे नझी करेला समये करवाभां आवती आवश्यक आदि क्रियाकलापोनी शीथीलताने सहन करतो नथी, जेवा मुनि चर्यापरीषह पर विजय प्राप्त करे छे.

(१०) निषद्यापरीषह-प्रकाशयुक्त प्रदेशमां नित्यक्रिया करवावाणा, मनुष्य देव अथवा तिर्यच द्वारा उत्पन्न करवाभां आवेला छण्ट अथवा अनिष्ट उपसर्गोने सहन करवा छतां जे मोक्षमार्गथी असतो नथी, जेतुं शरीर वीरासन आदिथी विचलित थतुं नथी, ते मुनिनी निषद्याकृत मुश्केदी-ओने सहन करी लेवी निषद्यापरीषहजय कहेवाय छे.

(११) शय्यापरीषह-रक्ते यादवाना श्रमथी अने स्वाध्याय तथा ध्यान करवाथी थाकी गयेला नीची उंची तीक्ष्ण कंकरा आदिथी युक्त अत्यन्त टाढी अथवा गरम भूमि अगरे सपाटी पर जेने उंच आवती नथी तेमज व्यन्तर

અક્રોશપરીપહ જય સ્તાવદ્—મિથ્યાદર્શનોદ્ હતામર્પકઠોરાવજ્ઞા નિન્દાઽસમ્ભવચનાનિ
 ક્રોધઃપિત્ત્વાલાજટિલાનિ અહન્તુદાનિ ગૃણ્ણતોઽપિ વિવેકિન સ્તદુપેક્ષાં કુર્વતઃ
 શાપકર્મવિપાકમગિચિન્તતઃ શ્રમણસ્ય તપશ્ચરણભાવનાપરાયણસ્ય ક્રોધમાન
 લાભા લોભાદિ કપાયદિપલેશમાત્રસ્યાપિ પ્રવેશરહિતં સ્વહૃદયં વિદધતઃ—
 આક્રોશસહનસ્વપો વોદ્યઃ—૧૨ વધપરીપહ જયસ્તાવદ્—અતિતીક્ષ્ણધારસ્વજ્ઞ—
 સુદૂશર—સુદૂશરદિ પ્રહરણાઘાતતાડનપીડનાદિર્નિર્હન્યમાનશરીરસ્ય ઘાતકેઽ

તત્પરતર આદિ દેવોં દ્વારા વિવિધ પ્રકાર તે ઉપસર્ગ ઉત્પન્ન કરને પર
 સ્ત્રી જિલ્લકા શરીર વિચલિત નહીં હોતા, એસા મુનિ અનિયત કાળ
 તક ઉલ્લ ઘાતા કો જો લાઉન કરતા હૈ, વહ શર્યાપરીપહ જય કહલાતા હૈ।

(૧૨) અક્રોશપરીપહ—મિથ્યાદર્શન કે ઉદય સે મડકે હુએ ક્રોધ
 ને કારણ કઠોર, અવજ્ઞાપૂર્ણ, નિન્દામય અસમ્ભવ વચનોં કો, ક્રોધ રૂપી
 અગ્નિ કી જ્વલા સે વ્યાપ્ત વચન ઢાઢ ફટકાર કે વચનોં કો શ્રવણ
 કરકે સી જો વિવેકશીલ હોને કે કારણ ઉનકી ઉપેક્ષા કરતા હૈ,
 જો અપને પાપકર્મ કે વિપાક કા ચિન્તન કરતા હૈ, જો તપશ્ચરણ કી
 ભાવના સે પરાયણ હૈ, જો ક્રોધ માન માયા લોભ આદિ કષાયોં કે
 વિષ કે લેશ માત્ર કો સી હૃદય સે પ્રવેશ નહીં હોને દેતા, એસે મુનિ
 કા આક્રોશ-વચનોં કો સહ લેના આક્રોશપરીપહ જય કહલાતા હૈ।

(૧૩) વધપરીપહ—અત્યન્ત તીક્ષ્ણ ધાર વાલી તલવાર મૂસલ યા
 સુદૂશર આદિ શસ્ત્રોં કે આઘાત, તાડન, પીડન આદિ કે દ્વારા જિલ્લકા

આદિ દેવોં દ્વારા વિવિધ પ્રકારના ઉપસર્ગ ઉત્પન્ન કરવામાં આવ્યા છતાં
 પણ જેનું શરીર વિચલિત થતું નથી, એવા મુનિરાજ અનિયત કાળ સુધી
 તે વિપત્તિને જે સહન કરે છે, તે શર્યાપરીપહજય કહેવાય છે.

(૧૨) આક્રોશપરીપહ—મિથ્યાદર્શનના ઉદયથી અગ્નિ જેવા ક્રોધના
 કારણે કઠોર, અવજ્ઞાપૂર્ણ, નિન્દામય અસમ્ભવ વચનોને, ક્રોધ રૂપી અગ્નિની
 જ્વલાઓથી વ્યાપ્ત ધાકધમકીના વચનોને સાંભળવા છતાં પણ જે વિવેકશીલ
 હોવાથી તેમની ઉપેક્ષા કરે છે, જે પોતાના પાપકર્મના ફળનું ચિન્તન કરે
 છે, જે તપશ્ચર્યાની ભાવનામાં પ્રવૃત્ત છે, જે ક્રોધ, માન માયા લોભ આદિ
 કષાયોના વિષને લેશમાત્ર પણ હૃદયમાં પ્રવેશવા દેતા નથી, એવા મુનિરાજના
 આક્રોશ-વચનોને સહન કરી લેવાની વૃત્તિને આક્રોશપરીપહજય કહેવાય છે.

(૧૩) વધપરીપહ—અત્યન્ત તીક્ષ્ણ-ધારવાળી તલવાર, મુશળ અથવા
 સુદૂશર વગેરે શસ્ત્રોના આઘાત, તાડન, પીડન આદિના વડે જેનું શરીરની સાથે

किञ्चिदपि मनोविकारम कुर्वतः 'पुराकृत दुष्कर्मफलमिदं वर्तते' नत्वेतेषां
बराकाणां कश्चिदोषः, जलबुदबुदवत् क्षगमङ्गुरं सम्यग् ज्ञानदर्शनचारित्र्याणि
मम न केनचिदुपहन्तुं शक्यन्ते इति भावयतोवाऽसीताक्ष्ण चन्दनानुलेपनसम-
र्पिणो वधपीडासहनरूपो बोध्यः-१३ याचना परीषहजयस्तावद्-बाह्याभ्यन्तर
तपोऽनुष्ठानपरायणस्य त्वगस्थितिराधमनीजालमात्रशरीरयन्त्रस्य प्राणविरहे
सत्यपि आहारवसति मभृतीनि दीनाभिधानमुखवैवर्ण्याऽऽदिरयाचयानस्य

शरीर आहत हो रहा है, जो घातक पुरुष के प्रति किञ्चित् भी मनो-
विकार उत्पन्न नहीं होने देता, और जो ऐसा सोचता है कि-यह सब
मेरे पूर्वकृत दुष्कर्मों का फल है, इन बेचारों का दोष नहीं है, शरीर
जल के बुलबुले के समान क्षणबिम्ब है और मेरे सम्यग् ज्ञान,
दर्शन और चारित्र का कोई घात नहीं कर सकता' तथा जो बल्ले
के द्वारा चमड़ी के छीले जाने को और चन्दन के लेपन को समान
समझता है, उस मुनि का वध जनित पीडा को सहन कर लेना वध-
परीषह जय कहलाता है।

(१४) याचनापरीषह जो बाह्य और आभ्यन्तर तपस्या के अनुष्ठान
में तत्पर है, तीव्र तपश्चरण के कारण जिस के शरीर का समस्त रुधिर
और मांस शुष्क हो गया है, केवल त्वचा, हड्डी, शिरा, धमनी मात्र ही
शेष रह गए हैं, प्राणों के चले जाने पर भी जो आहार, उपाश्रय आदि
की दीनतापूर्ण शब्दों द्वारा या चेहरे पर दीनता धारण करके याचना

पीडाई रह्यु' છે જે ઘાતક પુરૂષની પ્રત્યે કિંચિત્ પણ મનોવિકાર ઉત્પન્ન થવા
દેતા નથી અને જે એવું વિચારે છે કે-આ બધું મારા પૂર્વકૃત દુષ્કર્મોનું
ફળ છે, આ બિચારાઓનો કોઈ દોષ નથી, શરીર પાણીના પરપોટાની માફક
'ક્ષણભંગુર' છે અને મારા સમ્યક્દર્શન, સમ્યક્જ્ઞાન, અને ચારિત્રનું કોઈ જ
હનન કરી શકતું નથી તથા જે વાંસલા વડે ચામડીને છોલવાને અને ચંદન-
લેપન બંનેને સરખાં ગણે છે, તે મુનિરાજની વધજનિત પીડાને સહન
કરવાની ક્ષમતાને વધપરીષહજય કહે છે

(૧૪) યાચનાપરીષહ-જે બાહ્ય અને આભ્યંતર તપસ્યાના અનુષ્ઠાનમાં
તત્પર છે, તીવ્ર તપશ્ચર્યાના કારણે જેના શરીરનું સમસ્ત લોહી અને માંસ
સુકાઈ ગયું છે, માત્ર ચામડી, હાડકાં, શિરા, ધમણી માત્ર બાકી રહી ગયા
છે, પ્રાણોના અભ્યા જવા છતાં પણ જે આહાર ઉપાશ્રય માટે લાચારી-
પૂર્વકના શબ્દો દ્વારા અથવા ચેહરા ઉપર દીનતા પ્રકટ કરીને યાચના કરતા

શિક્ષાકાલેऽપિ ઉપસ્થિતેऽન્યરિમન્ મિધુકે સ્વસ્વ કૃતિત્યક્ષયશરીરસ્ય તનોઽ-
પ્રશરણલક્ષણો યાચનાસહનરૂપેઽમન્તવ્યઃ-૧૪ અભામપરીપદજય સ્તાવદ્-
વાયુચત્-અસદ્માદ્-અનેકદેશસંચરણશીલસ્ય વાચંમસ્ય વદુર્યસ્યેષુ મિધુ-
મનવાપ્પાઽપિ અસંવિલઘ્નિચિત્તસ્ય દાતૃવિશેષપરીક્ષાનિસ્તુકસ્ય લાભાદપિ
અભાસં પરમં તપો મન્યમાનસ્ય સન્તુષ્ટસ્ય-અભામસહનરૂપો બોધ્યઃ-૧૫ રોગ-
પરીપદજયસ્તુ-શરીરે સર્વાશુચિનિધાનત્વા દાદરસંસ્કારાસ્યા રહિતસ્યાઽન્ત-
માન્તતુચ્છાઽરસ-વિરસાઘાહારશ્ચ્યુપગચ્છતો યુગપદેકઘ્યાધિપ્રકોપે સત્યપિ

જાતીં કરતા ઔર મિધુકા કે સ્વસ્વ અનર દુમરા કોઈ મિધુક ઉપસ્થિત
દિલ્લાઈ દે તો વહાં સે રુટ જાતા યા અદૃશ્ય હો જાતા હૈ, એસે મુનિ કા
યાચના કો સહન કર લેના યાચના પરીપદ જય કહલાતા હૈ ।

(૧૫) અભામપરીપદ—વાયુ કે સમાન નિસ્સંગ હોને કે કારણ જો
અનેક દેશ-દેશાન્તરોં હેં વિચરણ કરતા હૈ, મૌન વ્રતી હૈ, યદુત સે
સ્થાનોં હેં જાને પર ઔ મિધુકા કા લાભ ન હોને પર ઔ જિસકે ચિત્ત
મેં સંકલ્પેશ ઉત્પન્ન નહીં હોતા, જો દાતાવિશેષ કી પરીક્ષા કરને મેં
ઉત્સુક નહીં હૈ, જો અભામ કો લાભ સે ઔ અચ્છા સમક્ષતા હૈ ઔર
જો સન્તોષશીલ હોતા હૈ, એસા સાધુ અભામપરીપદ જય કરતા હૈ ।

(૧૬) રોગપરીપદ—સઘ પ્રકાર કી અશુચિ કા અંદાર હોને કે કારણ
શરીર કે પ્રતિ જો આદર, ૦ સંસ્કાર યા આસ્થા સે રહિત હૈ, જો અન્ત,
પ્રાન્ત, તુચ્છ, અરસ ઔર વિરસ આહાર કા સ્વીકાર કરતા હૈ, એક,

નથી અને શિક્ષાદેખાએ બે બીજે કોઈ શિક્ષક હાજર દેખાય તો તે
સ્થળેથી ચાલ્યો જાય છે, એવી મુનિરાજની યાચનાને સહન કરી લેવાની વૃત્તિ
યાચનાપરીપદજય કહેવાય છે.

(૧૫) અભામપરીપદ—વાયુની સાક્ષ નિઃસંગ હોવાના કારણે જે અનેક
દેશ-દેશાન્તરોમાં વિચરણ કરે છે, મૌનવૃત્તિમાં વિચરે છે, ઘણા સ્થાનોમાં જવા
છતાંપણુ—શિક્ષાનો લાભ ન થવા છતાંપણુ જેના ચિત્તમાં ઉદ્વેગ ઉત્પન્ન થતો
નથી જે દાતાવિશેષની પ્રતીક્ષા કરવામાં પણુ ઉત્સુક નથી જે અભામને લાભ
કરતાં પણુ સાક્ષ સમજે છે અને જે સંતોષશીલ હોય છે, એવા સાધુ
અભામપરીપદજય કરે છે.

(૧૬) રોગપરીપદ—અધાં પ્રકારની અશુચિનેા અંદાર હોવાના કારણે
શરીર પત્તે જે આદર, સંસ્કાર અથવા આસ્થાથી રહિત છે, જે અન્ત,
પ્રાન્ત, તુચ્છ, અરસ અને વિરસ આહારનો સ્વીકાર કરે છે, એકી સાથે એક

तदधीनतां परित्यजतः तयो विशेषद्वियोगे सत्यपि शरीरनिःस्पृहत्वात्
तत्प्रतीकारम् कुर्वतो रोगसहनरूपो बोध्यः—१६ तृणस्पर्शपरीषहस्तावत्-शुष्क
तृणकंठोरतरशर्करामस्तखण्डकण्टक शूलादि व्यघनकृतक्षतशरीराघातवेदना
प्राप्तौ सत्यामपि तत्र प्राणिहितचित्तस्य चर्या शय्यानिषद्यासु प्राणि
बाधापरिहारे सततं दत्तचित्तस्य तृणादिस्पर्शसहनरूपो बोध्यः—१७ जल्ल
मलपरीषहजयस्तावद्-अप्लाय प्राणिपीडापरिहाराय मरणपर्यन्तं स्नानवर्जन-
व्रतधारिणः श्रमणस्य तीव्र रत्रिकिरणप्रतापजनितप्रस्वेदार्द्रपवनानीत धूलि-

साथ एक के साथ एक (अनेक) व्याधियों का प्रकोप होने पर भी जो
उनके अधीन नहीं होता, विशिष्ट ऋद्धि प्राप्त होने पर भी जो शरीर के
प्रति निस्पृह होने के कारण जो व्याधि का प्रतीकार नहीं करता, ऐसे
मुनि का समभाव पूर्वक रोगों को सहलेना रोगपरीषह जय कहलाता है।

(१७) तृणस्पर्शपरीषह—सूखे घास, अत्यन्त कठोर कंकर, पाषाण
खण्ड, कंटक-शूल आदि चुमने से उत्पन्न होने वाले शरीरघात की
वेदना उत्पन्न होने पर भी उसका विचार न करने वाले, एवं चर्या,
शय्या और निषद्या में प्राणियों की बाधा का परिहार करने में सदैव
दत्तचित्त साधु का तृणस्पर्शपरीषह का सहन कहलाता है।

(१८) जल्लमलपरीषह—जल्ल मल अर्थात् पसीने से जमा हुआ
मैल को दूर करने के लिये परिहार करने के लिए अजीवन स्नान-
त्यागव्रत को धारण करने वाले, सूर्य की तीव्र किरणों के प्रताप से
उत्पन्न हुए पसीने से शरीर गीला हो जाने के कारण पवन से उड़ाई

એક (અનેક) વ્યાધિઓનો હુમલો થવા છતાં પણ જે તેમને તાબે થતો નથી,
વિશિષ્ટ ઋદ્ધિ પ્રાપ્ત થવા છતાં પણ જે શરીરની પ્રત્યે નિસ્પૃહ હોવાના
કારણે જે વ્યાધિઓની પ્રતીકાર કરતા નથી, એવા મુનિરાજનું સમભાવપૂર્વક
રોગોને સહન કરી લેવું-રોગપરીષદજય કહેવાય છે.

(૧૭) તૃણસ્પર્શપરીષદ-સૂકું ઘાસ. અત્યન્ત કઠોર કાંકરા પથ્થરના ટુકડા,
કાંટા-શૂલ વગેરે વાગવાથી ઉત્પન્ન થનારી શારીરાઘાતની વેદના ઉત્પન્ન થવા
છતાં પણ તેનો વિચાર નહીં કરનારા અને ચર્યા, શય્યા અને નિષદામાં
પ્રાણીઓની મુશ્કેલીઓને દૂર કરવામાં હમેશાં દત્તચિત્ત સાધુનું તૃણસ્પર્શ
પરીષદનું સહન કરવું એમ કહેવાય છે.

(૧૮) જલ્લમલપરીષદ-જલ્લમલ અર્થાત્ પરસેવાથી જામેલા મેલને દૂર
કરવા માટે આજીવન સ્નાનત્યાગવ્રતને ધારણ કરનાર, સૂર્યના પ્રચંડ કિર-
ણોના પ્રતાપથી ઉત્પન્ન થયેલા પરસેવાથી શરીર ભીનું થઈ જવાના કારણે

निषयस्य दहृ-कच्छ-खर्ज् दीर्णकण्ट्यां समुत्पन्नायामपि कण्ट्यन-विमर्दन-
संघटनाऽव्याकुलीकृतचित्तस्य रवशरीरवृत्तिमलोपचयः परशरीरवृत्ति नैर्मल्ययोः
सङ्कलपरहितमानसस्य सम्यग्ज्ञानदर्शनचारित्ररूप विमलजलप्रक्षालनेन कर्म-
मलपङ्कचयापसारणाय सततोद्यतबुद्धेः—खलु मलसहनरूपोऽवगन्तव्यः—१८
सत्कारपुरस्कारपरीषदजयवतावत्-प्रशंसात्मकसत्कारे क्रियारम्भादिषु सर्वा-
पेक्षयाऽग्रतः करणरूपे, आमन्त्रणेवा-पुरस्कारेचाऽनादरो मम विधीयते । चिर-
कालक्षेत्रितब्रह्मचर्यस्य महातपस्विनो मम प्रणाम-भक्ति सम्भ्रमा-सन प्रदा-
नादीनि न कोपि विदधाति, मिथ्यादृष्टयः खलु-अतीव भक्तिमन्तो न किञ्चि

हुई रेत-धूल से जिसका शरीर व्याप्त हो गया है, दाद, खाज और कच्छ पैदा हो जाने के कारण खुजली उत्पन्न होने पर भी खुजलाने, मर्दन करने या रगड़ने के लिए जिसका चित्त व्याकुल नहीं है, अपने शरीर पर जमे हुए मैल और परकीय शरीर की निर्मलता का संकल्प भी जिसके मानस में उत्पन्न नहीं होता, जो सम्यग् ज्ञान-दर्शन-चारित्र रूपी निर्मल सलिल से प्रक्षालन करके कर्म-मल रूपी कीचड़ के समूह को हटाने में ही सदा उद्यत रहता है, वह साधु जलमल-परीषह का विजेता कहलाता है ।

(१९) सत्कार पुरस्कारपरीषह—‘ये लोग मेरा प्रशंसात्मक सत्कार नहीं करते । काम-काज में मुझे सब से आगे नहीं करते । आमन्त्रण एवं पुरस्कार नहीं करते । मैं चिरकाल से ब्रह्मचर्य का पालन कर रहा हूँ, घोर तपस्वी हूँ, फिर भी कोई मुझे प्रणाम नहीं करता । मेरी

પવનથી ઉઠેલી રેતીના-રજકણોથી જેનું શરીર વ્યાપ્ત થઈ ગયું છે, દાદર, ખસ અને કચ્છ ઉત્પન્ન થવાના કારણે ખજવાળ ઉત્પન્ન થવા છતાં પણ ખજવાળવા, મર્દન કરવા અથવા સરુળવા માટે જેનું ચિત્ત વ્યાકુળ નથી, પોતાના શરીર પર બમેલા મેલ અને પારકાના શરીરની નિર્મળતાનો સંકલ્પ પણ જેના માનસમાં ઉત્પન્ન થતો નથી, જે સમ્યક્જ્ઞાન-દર્શન-ચારિત્રરૂપી નિર્મળ પાણીથી પ્રક્ષાલન કરીને કર્મ-મળ રૂપી કાદવના સમૂહને હડસેલવામાં જ સદા તત્પર રહે છે, તે સાધુ જલમલપરીષદના વિજેતા કહેવાય છે.

(૧૯) સત્કારપુરસ્કારપરીષદ-આ લોકો મારો પ્રશંસાત્મક સત્કાર કરતાં નથી । કામ-કાજમાં મને બધાથી આગળ કરતાં નથી । આમંત્રણ અને પુરસ્કાર જેવું પણ કંઈ ગોઠવતાં નથી । હું ચિરકાળથી બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરી રહ્યો છું, ઉચ્ચ તપસ્વી છું તો પણ કોઈ મને પ્રણામ કરતું નથી । મારી ભક્તિ

અજ્ઞાનન્તમપિ સર્વજ્ઞસમ્માવનયા સંમાન્ય સ્વસમયપ્રમાવનાં કુર્વન્તિ, કથમન્યથા તથાવિધાનામસ્માદશામપિ સેવાં નાચરન્તિ, इत्येवं दुष्प्रणिधानवर्जितचित्तस्य सत्कारपुरस्कार सहनरूपो बोधः - १९ प्रज्ञापरीपहजयस्तावत्-मम चतुर्दश पूर्वधरस्य तथाऽऽचाराङ्गाद्यङ्गोपाङ्गविशारदस्याऽग्रे खल्वन्ये रविप्रभाभिभूत खद्योतोद्द्योतवत्' प्रतिभाविहीनाः प्रतिभासन्ते, इत्येवं विज्ञानमदस्य तथा- स्वस्य मति-बुद्ध्यल्पत्वे सति परं कश्चिद् बुद्धिमन्तं दृष्ट्वा मानसखिन्नतायाश्च र्जनरूपोऽवगन्तव्यः- २० अज्ञानपरीपहजयस्तु-'अज्ञोऽयं खलु पशु सदृशो

ભક્તિ નહીં કરતા ! સત્કાર ઓર આસન-પ્રદાન નહીં કરતા ! એ ભક્ત કરને વાલે લોગ મિથ્યાદષ્ટિ છે । જિસસે જો કુછ બી નહીં જાનતા, ઉસે સર્વજ્ઞ માનકર અપને શાસન કી પ્રભાવના કરતે હૈ । એ મિથ્યાદષ્ટિ-મૂઢ ન હોતે તો મેરે જૈસોં કી સેવા ક્યોં ન કરતે ?' હસ પ્રકાર કા અપ્રશસ્ત વિચાર જિસકે ચિત્ત મેં પ્રવેશ બી નહીં કરતા વહ સત્કાર પુરસ્કાર પરીપહ કા વિજેતા કહલાતા હૈ ।

(૨૦) પ્રજ્ઞાપરીપહ--'મેં ચૌદહ પૂર્વોં કા ધારક હૂં, આચાર આદિ અંગોં ઓર ઉપાંગોં કા જ્ઞાતા હૂં, મેરે સામને દૂસરે લોગ ઉસી પ્રકાર પ્રતિભાવિહીન હૈ જૈસે સૂર્ય કી પ્રભાકે સામને જુગનૂ નિષ્પ્રભ હોતા હૈ, હસ પ્રકાર અપની પ્રજ્ઞા કે અભિમાન કો ત્યાગના ઓર અપને આપકો અલ્પબુદ્ધિ સમજ કર તથા દૂસરે કો બુદ્ધિ શાલી દેખ કર મન મેં ખિન્નતા ન લાના પ્રજ્ઞાપરીપહ જય કહલાતા હૈ ।

(૨૧) અજ્ઞાનપરીપહ-'યહ અનજાન હૈ, જાનવર કે સમાન હૈ, કુછ

કરતું નથી ! સત્કાર અને આસન પ્રદાન કરતા નથી, આ ભક્તિ કરનારાઓ મિથ્યાદષ્ટિ છે જે કશું પણ બાણુતો નથી તેને સર્વજ્ઞ માનીને પોતાના શાસનની પ્રભાવના કરે છે. આ મિથ્યાદષ્ટિ-મૂઢ ન હોત તો મારા જેવા-ઓની સેવા કેમ ન કરત ? આ પ્રકારનો અપ્રશસ્ત વિચાર જેના મનમાં પ્રવેશ પણ કરતો નથી, તે સાધુ સત્કારપુરસ્કારપરીપહને વિજેતી કહેવાય છે.

(૨૦) પ્રજ્ઞાપરીપહ-હું ચૌદ પૂર્વોના ધારક છું, આચાર આદિ અંગો અને ઉપાંગોને જ્ઞાતા છું, મારી આગળ બીજા લોકો એવી રીતે પ્રતિભાવિહીન છે જેમ સૂર્યની પ્રભા આગળ આગીયો નિસ્તેજ થઈ જાય છે, આ રીતે પોતાની પ્રજ્ઞાના અભિમાનને ત્યાગ કરવો અને પોતાને અલ્પબુદ્ધિ સમજને તથા બીજાને બુદ્ધિશાળી જોઈને મનમાં ખિન્નતા ન લાવવી પ્રજ્ઞાપરીપહજય કહેવાય છે.

(૨૧) અજ્ઞાનપરીપહ-'આ અજ્ઞાની છે, જનાવર જેવો છે, કશું જ

ન કિંચિદપિ જાનાતિ' इत्येवं स्वस्मृति प्रोच्यमानमधिक्षेपवचनं सहमानस्य सदा प्रमादरहितचेतसः परमदुश्चरतपोऽनुष्ठानं विदधतो मे नाद्यापि विज्ञानातिशयः ससुत्पद्यते' इत्येवमभिसन्धानमकुर्वतः खलु-अज्ञानसहनरूपोऽवस्थेयः-२१ दर्शनपरीषहजयः-दर्शनस्य सम्यक्त्वस्य परिरक्षणे यः परीषहः क्लेशो जायते तस्य जयः, यथा-विदितसकलपदार्थतत्त्वस्य परमनिर्वेदभावनाविशुद्धचेतसः खलु चिरकाल प्रव्रजितस्यापि मम नाद्यापि ज्ञानातिशयः ससुत्पद्यते' सर्वोपधाभाचनुष्ठानवतां प्रातिहार्यविशेषाः प्रादुर्भूताः इतितु मलापमात्रं वचः निष्फलं खलु व्रतपरिपालनम् विफलेयं प्रव्रज्या, अतो दर्शनसिद्धं मम परंमारायैव,

भी नहीं समझता' इस प्रकार के अपने लिए कहे जाने वाले आक्षेप वचनों को जो सहन कर लेना है, जिसका चित्त सदैव प्रमाद से रहित होता है जो अत्यन्त दुश्चर तप करता है, 'अब तक भी मुझे ज्ञान का अतिशय प्राप्त नहीं हो रहा है' इस प्रकार का विचार जो नहीं करता, ऐसे पुरुष का अपने अज्ञान को समभाव से सहन करलेना अज्ञान-परीषह जय कहलाता है ।

(२२) दर्शनपरीषह--सम्यग्दर्शन की रक्षा करने में जो कष्ट उत्पन्न होता है, उसे समतापूर्वक सहलेना दर्शनपरीषह जय कहलाता है । जैसे-'मैंने समस्त पदार्थों' के मर्म को समझ लिया है, मेरा चित्त उत्कृष्ट वैराग्यभावना से विशुद्ध है, और मैं दीर्घकाल से दीक्षा का पालन कर रहा हूँ, फिर भी मुझे ज्ञानातिशय (विशिष्ट ज्ञान) का लाभ नहीं हो रहा है ! लोग कहते हैं और पोथियों में लिखा है कि महान्

સમજતો નથી' એવી ભતના પોતાના માટે કહેવામાં આવેલા આક્ષેપવચનોને જે સહન કરી લે છે, જેનું ચિત્ત સદા પ્રમાદથી રહિત હોય છે, જે અત્યન્ત દુષ્કર તપશ્ચર્યા કરે છે, હજી સુધી પણ મને જ્ઞાનની વિપુલતા પ્રાપ્ત થતી નથી, એ ભતનો વિચાર જે કરતો નથી, એવા પુરૂષનું અજ્ઞાનને સમભાવથી સહન કરી લેવું અજ્ઞાનપરીષહજય કહેવાય છે.

(૨૨) દર્શનપરીષહ--સમ્યગ્દર્શનની રક્ષા કરવામાં જે કષ્ટ ઉત્પન્ન થાય છે તેને સમતાપૂર્વક સહન કરી લેવા દર્શનપરીષહજય કહેવાય છે જેમ કે-મેં બધાં પદાર્થોના મર્મને સમજી લીધો છે, મારું ચિત્ત ઉત્કૃષ્ટ વૈરાગ્ય-ભાવનાથી વિશુદ્ધ છે અને હું દીર્ઘકાળથી દીક્ષાનું પાલન કરી રહ્યો છું, તો પણ મને જ્ઞાનાતિશય (વિશિષ્ટજ્ઞાન)નો લાભ થતો નથી ! લોકવાયકા છે અને શાસ્ત્રોમાં લખેલું છે કે મહાન્ ઉપવાસ આદિ અનુષ્ઠાન કરનારાઓને

કિન્તુ-નાત્મનસ્ત્રાણાય મવતી ત્યેવં સન્દેહસ્ય જયરૂપો વોધ્યઃ યદ્વા-સાધો દર્શન સન્દેહ સમયે દર્શનાચ્છવાવધિતું કોઽપિ દેવ સ્તદ્વસ્તુ ષ્ઠદર્શ્ય પ્રલોભયતિ તત્પ્રલો-
ભ ડનાદરણે યત્પ્રાનતઃ શારીરિકથ પરીષદો મવતિ તસ્ય જયરૂપો વોધ્યઃ ॥૨૨॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ--પૂર્વ તાદત્ત કર્માસ્ત્રાનિરોધલક્ષણસંસ્કરહેતુતયા પ્રતિ-
જ્ઞાદિતાનાં સમિતિગુપ્તિધર્માડનુપ્રેક્ષાપરીષદ્વારિત્રાણાં મધ્યે ક્રમ પ્રાપ્ત
પરીષદ્સ્વરૂપં નિરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ-તેષાં ભેદાન્ પ્રરૂપયિતુમાહ-'તે ચાવીસવિદ્યા
પરીસદા-હુદા-પિવાસાહ ભેદઓ' ઇતિ, દ્વાવિંશતિ વિધાઃ પરીષદા અવગન્તવ્યા
હુત્પિપાસાદિભેદતઃ હુત્પરીષદઃ-૧ પિપાસાપરીષદઃ-૨ આદિના-શીતપરીષદઃ-૩

અપવાસ આદિ અનુષ્ઠાન કરને ચાલોં કો વિશિષ્ટ પ્રકાર કે પ્રાતિહાર્ય
પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં, મગર યહ કદના પ્રલાપમાત્ર હૈં । ત્રનોં કા પાલન
કરના નિષ્ફલ હૈં । યહ દીક્ષા ઓ નિરર્થક હૈં । અતઃ યહ દર્શન મેરે
લિપ ખારસ્વરૂપ હૈં । હસસે આત્મા કા વ્રાણ નહીં હોતા, હસ પ્રકાર
કે સન્દેહ પર વિજય પ્રાપ્ત કરના દર્શનપરીષદ્જય હૈં । અથવા સાધુ
કે દર્શન સંબંધી સન્દેહ કે સમય કોઈ દેવ કિસી વસ્તુ કો દિલ્લાકર
લુભાવે તો ડસ લોભ કા અનાદર કરને સેં જો માનસિક ઓર શારીરિક
પરીષદ્ ઉત્પન્ન હોના હૈં, ડસે જીતના દર્શનપરીષદ્ જય કહા જાતા હૈં ॥૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ--પહેલે પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા થા કિ સમિતિ,
ગુપ્તે, ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા, પરીષદ્જય ઓર ચારિત્ર આસવનિરોધ રૂપ
સંસ્કર કે કારણ હૈં । હનમેં સે ક્રમપ્રાપ્ત પરીષદ્ કે સ્વરૂપ કા નિરૂપણ
ક્રિયા ગયા હૈં, અવ ડનકે ભેદોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં-

વિશિષ્ટ પ્રકારના પ્રાતિહાર્ય પ્રાપ્ત થઈ જાય છે, પણ આવું કહેવું પ્રલાપ
માત્ર છે. ત્રતાવું પાલન કરવું નિષ્ફળ છે । આ દીક્ષા પણ નિરર્થક છે ।
આથી આ દર્શન મારા માટે ભારસ્વરૂપ છે. આનાથી આત્માનું રક્ષણ થઈ
શકે નહીં" આ પ્રકારની શંકા પર વિજય પ્રાપ્ત કરવો દર્શનપરીષદ્જય છે
અથવા સાધુના દર્શન સંબંધી સન્દેહના સમયે કોઈ દેવ કોઈ વસ્તુને
પ્રતાવીને લોભાવે તો તે લોભનો અનાદર કરવા માટે જે માનસિક અને
શારીરિક પરીષદ્ ઉત્પન્ન થાય છે તેને હુતવું, દર્શનપરીષદ્જય કહેવાય છે. ॥૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ--પહેલાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હતું કે સમિતિ,
ગુપ્તિ, ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા, પરીષદ્જય અને ચારિત્ર આસવનિરોધ રૂપ સંસ્કરના
કારણો છે. આ પૈકી ક્રમ પ્રાપ્ત પરીષદ્ના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું
હવે તેના ભેદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ-

ઉષ્ણપરીષદ-૪ દંશમશક્રપરીષદ-૫ અચેલપરીષદ-૬ અરતિપરીષદ-૭
 શ્લીપરીષદ-૮ ચર્યાપરીષદ-૯ નિષઘ્નાપરીષદ-૧૦ શય્યાપરીષદ-૧૧ આક્રોશ
 પરીષદ-૧૨ વધપરીષદ-૧૩ યાચનાપરીષદ-૧૪ અલામપરીષદ-૧૫
 રોગપરીષદ-૧૬ તૃણસ્પર્શપરીષદ-૧૭ જલ્લમલારીષદ-૧૮ સત્કારપુરસ્કાર
 પરીષદ-૧૯ પ્રજ્ઞાપરીષદ-૨૦ અજ્ઞાનપરીષદ-૨૧ દર્શનપરીષદ-૨૨ इत्येवं
 દર્શિતવિધિ પરીષદા ભવન્તિ । તત્રાડિશાયિ સમુદીર્ઘશુદ્ધેદનાસહનં
 સ્વચ્છકૃતયા હૃવતો લાઠરાઽન્નવિદાહિનીં શુધા માગમોક્તવિધિના સહમાનસ્યા-
 નેષણીયઝાઽહારાદિકં પરિહરતઃ સ્વલ્લ શ્રમણસ્ય શુધાપરીષદજયો ભવતિ ।
 અનેષણીયાહારાદિગ્રહણેતુ-શુધાપરીષદજયો ન સમ્ભવતિ, તસ્માત્-એષણીયાહારાદિ

શુધા પિપાસા આદિ કે ભેદ છે પરીષદ વાઈસ છે । વે इस प्रकार
 है-(१) शुधापरीषद (२) पिपासापरीषद (३) शीतपरीषद (४) उष्ण-
 परीषद (५) दंशमशकपरीषद (६) अचेलपरीषद (७) अरतिपरीषद (८)
 श्लीपरीषद (९) चर्यापरीषद (१०) निषघ्नापरीषद (११) शय्यापरीषद
 (१२) आक्रोशपरीषद (१३) वधपरीषद (१४) याचनापरीषद (१५)
 अलामपरीषद (१६) रोगपरीषद (१७) तृणस्पर्शपरीषद (१८) जल्ल-
 मलपरीषद (१९) सत्कार पुरस्कारपरीषद (२०) प्रज्ञापरीषद (२१)
 अज्ञानपरीषद और (२२) दर्शनपरीषद ।

(૧) જો શ્રમણ તીવ્ર ભૂખ કી વેદના કો સહન કરતા છે, ઉદર
 કી આંતો કો જલ્લાને વાલી શુધા કો આગમોક્ત વિધિ કે અનુસાર
 સહતા છે ઓર અનેષણીય આહાર આદિ કા પરિહાર કરતા છે, વહ
 શુધાપરીષદ કા વિજેતા કહલાતા છે । અનેષણીય આહાર આદિ કો

શુધા-પિપાસા આદિના ભેદથી પરીષદ બાવીસ છે. તે આ પ્રકારે છે-
 (૧) શુધાપરીષદ (૨) પિપાસાપરીષદ (૩) શીતપરીષદ (૪) ઉષ્ણપરીષદ
 (૫) દંશમશકપરીષદ (૬) અચેલપરીષદ (૭) અરતિપરીષદ (૮) શ્લીપરીષદ
 (૯) ચર્યાપરીષદ (૧૦) નિષઘ્નાપરીષદ (૧૧) શય્યાપરીષદ (૧૨) આક્રોશપરી-
 ષદ (૧૩) વધપરીષદ (૧૪) યાચનાપરીષદ (૧૫) અલાલપરીષદ (૧૬) રોગ-
 પરીષદ (૧૭) તૃણસ્પર્શપરીષદ (૧૮) જલ્લમલપરીષદ (૧૯) સત્કાર પુરસ્કાર
 પરીષદ (૨૦) પ્રજ્ઞાપરીષદ (૨૧) અજ્ઞાનપરીષદ અને (૨૨) દર્શનપરીષદ.

(૧) જે શ્રમણ તીવ્ર ભૂખની વેદનાને સહન કરે છે, પેટના આંતરડાને
 અળગાવે એવી શુધાને આગમોક્ત વિધિ અનુસાર સહન કરે છે અને અનેષ-
 ણીય આહાર આદિનો ત્યાગ કરે છે, તે શુધાપરીષદનો વિજેતા કહેવાય છે.

संक्रावे खलु प्राणिदया भावनया समस्त मनेषणीयं परिहरन् शरीरनिर्वाहं
कुर्यात्-१ एवं-पिपासापरीषदजयोऽपि, उक्तरीत्यैवाऽवगन्तव्यः-२ शीतपरीषद-
जयस्तावत्-अत्यधिकेऽपि शीते पतति सति तथा विधिशीतनाणाय ना-ऽकल्प्यानि-
वस्त्राणि गृह्णाति, अपितु-जीर्णवसनमेव दधानः शीतपरित्रणव्यापारवर्जित
एव तिष्ठति, आगमोक्तविधिना-एषणीयस्यैव पञ्चदशार्णदस्त्रादेर्गवेषणं
कुर्यात् परिभुञ्जीत वा, नापि शीतार्तः सन् स्वयं वह्निं प्रज्वालयेत्-अन्य प्रज्वालित
स्य वा वह्नेः सेवनं कुर्यात् इत्येव मनुतिष्ठन् शीतपरीषदं जयति इति शीतबाधा-
सहनरूपः शीतपरीषदजयोऽवगन्तव्यः-३ एवमेव-उष्णजायसन्तप्तापि श्रमणः

ग्रहण करने पर क्षुधापरीषद का जय संभव नहीं है। अतएव सब
प्रकार के अनेषणीय आहार का त्याग करते हुए शरीर का निर्वाह
करना चाहिए।

(२) पिपासापरीषदजय भी पूर्वोक्त प्रकार से ही समझ
लेना चाहिए।

(३) बहुत तीव्र सर्दी पड़ने पर भी उसके निवारण के लिए
अकल्पनीय वस्त्रों को ग्रहण न करना, किन्तु जीर्ण वस्त्रों को ही
धारण करते हुए शीत से बचने के लिए कोई प्रयत्न न करना, आगम-
प्रतिपादित विधि के अनुसार ही पहनने-ओढ़ने के वस्त्र आदि की
गवेषण करना और उसका परिभोग करना, शीत से पीड़ित होकर
स्वयं अग्नि न जलाना, दूसरे द्वारा जलाई हुई अग्नि का सेवन न
करना, यह सब शीतलपरीषद को जीतना कहलाता है। इस प्रकार
शीत की बाधा को ग्रहण करना शीतपरीषदजय है।

अनेषणीय आहार वगैरेने अहण्य कश्चाथी क्षुधापरीषदो विजय शक्य नथी
आथी अथा प्रकारना अनेषणीय आहारो त्याग करता थका शरीरतुं निर्वाह
कश्चुं नोभये.

(२) पिपासापरीषदजय पणु पूर्वोक्त प्रकारथी न समज्यो घटे.

(३) धणु सभत ठंडी पडवा छतां पणु तेना निवारणना भाटे
अकल्पनीय वस्त्रोने अहण्य न करवा परन्तु अणुवस्त्रोने न धरण्य करीने
ठंडीथी अथवा भाटे कांछ प्रयत्न न करवो, आगमप्रतिपादित विधि अनुसार
न पहरेवा-ओढवाना वस्त्र आदिनी गवेषणा करी अने तेना परिलोण
कवो, ठंडीथी पीडित थछने जाने अग्नि न चेटाववो, अन्य द्वारा चेटा-
ववांमां आवेली अग्निनी आतापना न लेवी, आ अणु शीतपरीषदने अत्या
अम कहेवाय आ प्रकारे ठंडीथी पडती मुश्कलीने सहन करवी शीतपरीषदजय छे.

સ્નાન-ઘ્યજન પવનાદિકં ન સેવયતે નાપિ કેનચિદ્ધર્મિધારિતઞ્ચાયાદિકં વા નિષેવતે । અપિતુ-સમાપતિન્મુષ્ણં સમ્યક્તયા પરિપહતે, ન હિ સ્વલુ ઉષ્ણતા નિવારણાય છત્રાદિકં મૃત્તાતિ ઇત્યેવ મુષ્ણતા સહનેન-ઉષ્ણપરીપહજયો ભવતિ=૪ :
 एवं-દંશમશકમત્કુળ વૃશ્ચિકાદિભિર્દંશ્યમાનોપિ સ્વાધિષ્ઠિત સ્થાનાન્ન વિચલેત્-
 તતોऽપગચ્છેદ્ વા, નાપિ હસ્તાદિના-ધૂમાદિના વા તદપનયનં કુર્યાત્, નો વા-
 વ્યજનાદિના તન્નિવારણં વિદધ્યાત્ ઇત્યેવં રીત્યા કરणेન દંશમશકપરીપહજયો-
 ભવતિ-૫ એવ મ્હાગમોક્તવિધિના શરીરનિર્વાહાર્થમલ્પવસ્ત્રાદિગ્રહणेના-ઽચેલ-

(૨) ગર્ભી કે તાપ સે સ્નન્તપ્ત હોકર મ્હો શ્રમણ સ્નાન નહીં કરતા, પંખા નહીં ચલાતા ઓર ન કિસી કે દ્વારા અભિ ધારિત છાયા આદિ કા સેવન કરતા હૈ. અપિતુ પડતી હુઈ ગર્ભી કો સમ્યક્ પ્રકાર સે સહન કરતા હૈ । ગર્ભી કા નિવારણ કરને કે લિએ છત્ર આદિ ગ્રહણ નહીં કરતા । હસ પ્રકાર ઉષ્ણતા કો સહન કરને સે ઉષ્ણ-પરીપહ જય હોતા હૈ ।

(૫) હસી પ્રકાર ડાંસ, મચ્છર, સ્વટમલ ઓર વિચ્છ્ર આદિ કે હંસને પર મ્હો, જિહ્વ સ્થાન પર ઓસીન હો વહાં સે ચલાયમાન ન હો, અન્ય સ્થાન પર ન જાવે, હાથ આદિ સે વા ધુંઆ આદિ કરકે ઉનકો ન હટાવે, ન પંખા આદિ કે દ્વારા ઉન્હે હટાવે । એલા કરને સે દંશમ-શકપરીપહ જય હોતા હૈ ।

(૬) આગમોક્તવિધિ કે અનુસાર શરીર કે નિર્વાહ કે લિએ અલ્પ વસ્ત્ર આદિ ગ્રહણ કરને સે અચેલપરીપહ જય હોતા હૈ । દિગમ્બરોં કે

(૪) ગર્ભીના તાપથી અકળાઈને પણ શ્રમણ સ્નાન કરતો નથી, પંખો હલાવતો નથી અથવા કોઈ દ્વારા છાંયડો કરાવર વી તેનું સેવન કરતો નથી, પરંતુ પડતી ગર્ભને સમ્યક્ પ્રકારથી સહન કરે છે. ગર્ભીનું નિવારણ કરવા માટે છત્રી વગેરે ધારણ કરતો નથી. આ રીતે તો ઉષ્ણતાને સહન કરવાથી ઉષ્ણપરીપહજય થાય છે.

(૫) આવી જ રીતે ડાંસ, મચ્છર માંકણ અને વીંછી વગેરેના કરડવા છતાં પણ, જે સ્થાને ખેડો હોય ત્યાંથી ચલાયમાન ન થાય, બીજા સ્થાને ન જાય હાથ વગેરેથી અથવા ધુમાડો વગેરે કરીને તેમને ભગાડે નહીં, અથવા પંખા વગેરે દ્વારા તેમને ભગાડે નહીં. આ પ્રમાણે કરવાથી દંશમશક-પરીપહજય થાય છે.

(૬) આગમોક્ત વિધિ અનુસાર શરીરના નિર્વાહ માટે અલ્પવસ્ત્ર આદિ ગ્રહણ કરવાથી અચેલપરીપહજય થાય છે. દિગમ્બરોના કથન અનુસાર

परीषहजयो भवति, ननु-दिगम्बरोक्तरीत्या सर्वथा प्रावरणादि रहितत्वमचे-
त्वम्, आगमे खलु-द्विनिधः कल्पः प्रज्ञप्तः, जिनकल्पः-स्थविरकल्पश्च-। तत्र-
स्थविरकल्पे परिनिष्पन्नः क्रमेण धर्म श्रवणानन्तरं प्रव्रज्यां प्रतिपद्यते, ततो द्वादश
वर्षाणि सूत्रग्रहणम्, ततो द्वादश वर्षाणि-अर्थग्रहणं करोति, ततश्च-द्वादश
वर्षाणि-अनियतरूपेण वसन् देशदर्शनं करोति, देशदर्शनश्च कुर्वन्नेव शिष्यान्
निष्पादयति, शिष्यनिष्पन्नानन्तरश्चाऽभ्युद्यतविहारं प्रतिपद्यते । जिनकल्पस्तु-
त्रिविधः प्रकल्पितः शुद्धपरिहार-यथालन्दभेदात्, तत्र-जिनप्रतिपत्तियोग्यश्च
जिनकल्पं प्रतिष्ठुमिच्छन् प्रथमं तावत्-तपः सत्त्वादिभावनाशिरात्मानं भावयति,

कथनानुसार वस्त्रों से सर्वथा रहित होना अचेतत्व नहीं है । आगम में
दो प्रकार के कल्प बतलाये गये हैं-जिनकल्प और स्थविरकल्प । स्थ-
विर कल्प में परिनिष्पन्न पुरुष क्रम से धर्मश्रवण करने के पश्चात्
मुनिदीक्षा अंगीकार करता है । तत्पश्चात् बारह वर्षों तक सूत्रों का
अध्ययन करता है, फिर बारह वर्षों तक सूत्रों का अर्थ सीखता है,
तदनन्तर बारह वर्ष तक अनियत रूप से निवास करता हुआ अनेक
देशों का दर्शन करता है अर्थात् देश देशान्तर में परिभ्रमण करता
है, देशाटन करता हुआ शिष्य बनाता है और शिष्य बनाने के बाद
अभ्युद्यत विहार करता है । जिनकल्प तीन प्रकार का है-प्रकल्पित,
शुद्धपरिहार और यथालन्द । जो जिनकल्प को ग्रहण करने के
योग्य है और जिनकल्प को अंगीकार करना चाहता है वह पहले
-पहल तप-सत्त्व आदि की भावना से अपनी आत्मा को भावित
करता है और आत्मा, को भावित कर चुकने के पश्चात् दो प्रकार के

पञ्चोत्थी सर्वथा हत यत्तु अचेतत्व नहीं । आगममां में प्रकारना कल्प
कहेवांमां आग्या छे-जिनकल्प अने स्थविरकल्प स्थविरकल्पमां परिनिष्पन्न
पुरुष कथ्यी ध वत्तु कथां आह मुनि दीक्षा अंगिकार करे छे, तयार आह
आर वर्षों सुधी सूत्रानुं अध्ययन करे छे, पछी आर वर्ष सुधी सूत्राना अर्थ
शीजे छे, तयारआह आर वर्ष सुधी अनियत रूपती निवास करतो थके
अनेक देशानुं दर्शन करे छे अर्थात् देशदेशान्तरमां परिभ्रमण करे छे,
देशाटन करतो कन्तो शिष्य बनावे छे अने शिष्य बनाव्या आह अभ्युद्यत
विहार करे छे । जिनकल्प त्रय प्रकारना छे-प्रकल्पित, शुद्ध परिहार अने
यथालन्द ! जे जिनकल्पने धारण करवा भाटे योग्य छे अने जिनकल्पने
अंगिकार करवा छुछे छे ते पहेलांमां पहेलुं तप-सत्त्व आदिनी भावनाथी
पाताना आत्माने भावित करे छे अने आत्माने भावित करी दीधा पछी जे

પ્રત્યક્ષસંસ્થાનમધુરાલાપ કલિતલલિતસ્મિતવિભ્રમવિલાસાદિ હાવમાવચેષ્ટાં ન કદાચિદપિ ચિન્તયેત્ નાપિ મોક્ષમાર્ગસ્યાઽર્ગલાસુ તાસુ કામધિયા નયત્રો-પનિપાતં કુર્યાત્ તથા કરણે સતિ સ્ત્રીપરીપહજયો મવતિ-૮ એવં-નિરલસો ભૂત્વા નગરગ્રામકુલાદિષુ મમત્વ રાહિત્યેનાઽનિયતરૂપેણ કૃતવસતિઃ શ્રમણઃ પ્રતિમાસં વિચરણરૂપાં ચર્ચાં માતિષ્ઠેત્ તથાકૃતે સતિ ચર્ચાપરીપહજયઃ સમ્ભવતિ-૯ એવં-નિપત્ત્યા તાવત્-નિષીદન્ત્યસ્યામિતિ વ્યુત્પત્ત્યા-સંજ્ઞાયાં સમજ નિપત નિષદ-ઇતિ સૂત્રેનાઽધિકરણે વ્યવન્તેન નિપાતિતેન નિષદ્યા શબ્દેન પીઠફલ-કાદિ સ્થાનમુચ્યતે, તત્ર ચલુ-સ્ત્રી પશુપંડકઋચિવર્જિતે સ્થાને ઇષ્ટાનિષ્ઠોપસર્ગ-

(૮) કામિનિયો' કે સુખ આદિ અંગોપાંગો કી બનાવટ કા, મધુર આલાપસહિત મુસ્કરાહટ કા, વિભ્રમ-વિલાસ, હાવ-ભાવ સે યુક્ત ચેષ્ટાઓ' કા કદાપિ ચિન્તન ન કરે । ડન્હે' મોક્ષ માર્ગ મેં બાધક સમજી કર કામબુદ્ધિ સે ડનકી ઓર દૃષ્ટિ નિપાત મી ન કરે । એસા કરને પર સ્ત્રીપરીપહ જય હોતા હૈ ।

(૯) આલમ્બરહિત હોકર નગર ગ્રામ ગૃહ આદિ મેં મમત્વ સે રહિત હોકર અનિયત રૂપ સે નિવાસ કરને વાલા શ્રમણ પ્રતિમાસ વિહાર-ચર્ચા કરે । એસા કરને સે ચર્ચાપરીપહ જય હોતા હૈ ।

(૧૦) પીઠ ફલક આદિ બેઠને કે સ્થાન કો નિષદ્યા કહતે હૈ । જિસમેં નિષીદન દિયા જાય વહ નિષદ્યા । 'સંજ્ઞાયાં સમજ નિપત-નિષદ' -હસ સૂત્ર સે અધિકરણ અર્થ મેં વ્યવન્તનિપાત હો કર નિષદ્યા શબ્દ બનતા હૈ । નિષદ્યા મેં અર્થાત્ સ્ત્રી પશુ ઓર પંડક (હીજડે)

(૮) સ્ત્રીઓના મુખ આદિ અંગોપાંગોની બનાવટને, મધુર આલાપ સહિત મુસ્કરાહટને, વિભ્રમ-વિલાસ, હાવ ભાવપૂર્ણ ચેષ્ટાઓનો કદાપી વિચાર ન કરે. આ સધળાને મોક્ષમાર્ગ માટે અવરોધરૂપ સમજીને કામબુદ્ધિથી તેમની તરફ દૃષ્ટિપાત પણ ન કરે, આમ કરવાથી સ્ત્રીપરીપહજય થાય છે.

(૯) આળસ ખંખેરી નાખીને નગર, ગામ ઘર આદિમાં મમત્વથી રહિત ધર્મને અનિયત રૂપથી નિવાસ કરનાર શ્રમણ પ્રતિમાસ વિહાર-ચર્ચા કરે આમ કરવાથી ચર્ચાપરીપહજય થાય છે.

(૧૦) પીઠ ફલક વગેરે બેસવાના સાધનને નિષદ્યા કહે છે. જેમાં નિષીદન કરવામાં આવે તે નિષદ્યા સંજ્ઞાયાં સમજનિપત-નિષદ-આ સૂત્રથી અધિકરણ અર્થમાં નિપાત થઈને નિષદ્યા શબ્દ બને છે. નિષદ્યામાં અર્થાત્ સ્ત્રી, પશુ તથા પંડક (બ્યંઢગ) વગરના સ્થાનમાં અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ

જયં કુર્વન્ અનુદ્વિગ્નઃ સન્ તિષ્ઠન્ નિષધાપરીપહજયં કર્તું શક્નોતિ-૧૦ એવં-
શય્યા તાવત્-સંસારઃ, પીઠ-ફલકાદિર્વા, કઠોર-કોમલાદિભેદેન ઉચ્ચાવચો
નિમ્નોક્તઃ-પ્રતિશ્રયોવા, ધૂલિપુન્નધૂસરિતો બહુપ્રકારકો વા-ઉચ્યતે, તત્ર-
તિષ્ઠન્ ન કદાચિદ્ ઉદ્વિગ્નો भवेत्, इत्येवं रीत्याऽनुद्वेगे सति शय्यापरीपहजयः
सम्भवति-११ आक्रोश रता द्-अप्रियवचनम्-अनिष्टवचनं वा, उच्यते तत्खल्व-
अप्रियवचनं सत्यं वर्तते तदा-तत्र क्रोधकरणं नोचितम्, अयं खल्वप्रियं ब्रुवन्-मां
शिक्षयति नातः परस्वहमेवं करिष्यामि' इत्येवं प्रतिजानीत, यदितु-तद्वचन
सत्यमेव वर्तते तर्हि तत्र वचने वक्तुरिवा सुतरां क्रोधो न कर्तव्यः यद्ययं सत्यमेव-

સે રહિત સ્થાન મેં અનુકૂલ ઔર પ્રતિકૂલ ઉપદ્યગોં કો જીતને મેં જો
ઘવરાતા નહીં હૈ, વહ નિષધાપરીપહ જય કરને મેં સમર્થ હોતા હૈ ।

(૧૧) શય્યા અર્થાત્ વિસ્તર અથવા પીઠ-ફલક આદિ યા કોમલ
તથા કઠોર હોને મે અચ્છા-બુરા, ઊંચા-નીચા ઉપાશ્રય (સ્થાનક)
જિસમેં ધૂલ કે પટલ કે પટલ જમે હોં ऐसी शय्या में ठहरा हुआ मुनि
કદાપિ ઉદ્વિગ્ન ન હો इस प्रकार उद्वेग न होने पर शय्यापरीपह-
विजय होता है ।

(૧૨) આક્રોશ કા અર્થ હૈ અપ્રિયવચન, અનિષ્ટ વચન, ડાટ-ફટ-
કાર સે ભરે હુએ વચન । વહ અપ્રિય વચન અગર સત્ય હોં તો उन्हें
સુનકર ક્રોધ કરના ઉચિત નહીં, ડલટા ऐसा सोचना चाहिए कि
અપ્રિય વચન તહ કર યહ સુજે શિક્ષા દે રહા હૈ, 'इसके बाद मैं ऐसा
नहीं करूँगा।' ઔર यदि उसका वचन असत्य हो तो भी उस वचन पर
या वचना पर क्रोध करना ही नहीं चाहिए । સોચના યાહિએ કિ અગર

ઉપદ્યગોને ઊતવા માટે જે ગભરાતો નથી, તેજ નિષધાપરીપહજય પ્રાપ્ત કરવા
માટે સમર્થ થાય છે.

(૧૧) શય્યા અર્થાત્ પથારી અથવા પીઠ-ફલક આદિ અથવા કુમળા
તથા ખરખરડાં હોવાથી સારા-નરસા, ઉચા-નીચા સ્થાનક (ઉપાશ્રય) જેમાં
ધૂળના ઘરના થર ખાજેશાં હોય એવી પથારીમાં સૂતેલાં મુનિએ કદાપિ ઉદ્વિગ્ન
થાવું નહી. આ પ્રકારે ઉદ્વેગ ન થવાથી શય્યાપરીપહવિજય થાય છે.

(૧૨) આક્રોશનો અર્થ છે અપ્રિયવચન, અનિષ્ટવચન, ધાક-ધમકીથી
ભરેલાં વચન તે અપ્રિય વચન જે સત્ય હોય તો તેને સાંભળીને ક્રોધ કરવો
વાજબી નથી ખલકે એવું વિચારવું જોઈએ કે અપ્રિય વચન કહીને આ મને
ઉપદેશ આપી રહ્યો છે. 'આ પછી હું આવું કરીશ નહીં.' અને જે તેવું
વચન અસત્ય હોય તો પણ તે વચન ઉપર અથવા વક્તા ઉપર ક્રોધ કરવો જ

वक्ति-तत्र कोऽस्य दोषः इत्येवं रीत्याऽऽक्रोशपरीषद्भेदजयः सम्भवति-१२ एवं-वध-
स्तावत्-ताडनम्, हस्त-पाद-लगुड-कशादिमिरावातरूपम् तदपि-शरीरस्य
विशरारुतां मत्वा सम्प्रकृतया सोढव्यम् पुद्गलसंघातरूपं खलु शरीरमिदम्
आत्मनो मिश्रमेव वर्तते । आत्मा पुनर्नित्योऽस्ति न कदाचिद् विध्वस्तो भवति
तस्मात्-स्वकृतकर्मणः फलमिदं मुपनतं समाहितं, इत्येवं रीत्यां ताडनादिकं
सहमानस्य श्रमणस्य वधपरीषद्भेदजयो भवति-१३ एवं-याचनं तावद् वस्त्रपात्रा-
न्न-पान-प्रतिश्रयादेः प्रार्थनम्, श्रमणस्य परतो लब्धव्यमेव सर्वं भवति, किन्तु
श्रमणानां सङ्कोचतया याचनां प्रतिनाऽऽदरो भवति श्रमणैः खलु प्रागल्भ्यवद्भि-
रवश्यमेव याचनं कर्तव्यम्, इत्येवं याचनापरीषद्भेदजयो विधातव्यः-१४ अलम्भस्तु-

यह असत्य भाषण करता है तो मुझे क्रोध करने की क्या आवश्यकता
है ! ऐसा विचार करने से आक्रोशपरीषद्भेद जय होता है ।

(१३) ताड़न करना अर्थात् हाथ, पैर, लाठी या चाबुक आदि से
आघात करना । शरीर को नाशशील समझ कर उसे समभाव से
सहन करना चाहिए । यह शरीर पुद्गलों का पिण्ड है और आत्मा से
भिन्न ही है । आत्मा नित्य है, उसका कभी विध्वंस नहीं होता ।
अतएव यह मेरे किये कर्म का ही फल प्राप्त हुआ है । ऐसा सोच कर
ताड़न आदि सहन करने वाला साधु वधपरीषद्भेद का विजेता होता है ।

(१४) वस्त्र, पात्र, अन्न, पान, उपाश्रय आदि की प्रार्थना को
याचना कहते हैं । श्रमण को सभी कुछ दूसरों से ही प्राप्त करना
पडता है । संकोचशील होने के कारण श्रमण याचना में आदरशील-

पणુ જોઇએ. વિચારવું જોઇએ કે જો આ અસત્ય ભાષણ કરે છે તો મારે ક્રોધ
કરવાની શી જરૂર છે ? આવો વિચાર કરવાથી આક્રોશપરીષદ્ભેદજય થાય છે.

(૧૩) માર મારવો અર્થાત્ હાથ, પગ, લાકડી અથવા ચાબુક વગેરેથી
આઘાત કરવો. શરીરને નાશવંત સમજીને તેને સમભાવથી સહન કરવું જ
જોઇએ આ શરીર પુદ્ગલોનું પિંડ છે. અને આત્માથી ભિન્ન જ
છે. આત્મા નિત્ય છે, તેનો કદી નાશ થતો નથી. આથી આ મારા કરેલા
કર્મોનું જ ફળ પ્રાપ્ત થયું છે. એવું વિચારીને તાડન વગેરે સહન કરનાર
સાધુ વધપરીષદ્ભેદનો વિજેતા બને છે.

(૧૪) વસ્ત્ર પાત્ર, અન્ન, પાન, ઉપાશ્રય આદિની પ્રાર્થનાને યાચના
કહે છે. શ્રમણે બધું જ બીજાઓ પાસેથી જ મેળવવું પડે છે. સંકોચશીલ
હોવાના કારણે શ્રમણ, યાચનામાં આદરવાનું હોતા નથી પ્રગલ્ભ (નિઃસંકોચ)
શ્રમણોએ અવશ્ય જ યાચના કરવી જોઇએ. આ રીતે કરવાથી યાચના
પરીષદ્ભેદજય થાય છે.

याचने कृतेपि विद्यमानस्याऽविद्यमानस्य वा वस्तुनोऽदानम्, तत्र-यस्य खल्वे
तद्धनं वर्तते स तदधिकारित्वाद् दातुमदातुंवा समर्थोऽस्ति अतएव-कदाचिददाति
कदाचिच्च नापि ददाति । तत्रा-ऽदाने न कोऽप्यपरितोषः कर्तव्यः । उक्तञ्चोत्तरा-
ऽध्ययने द्वितीयाध्ययने—

परेषु घासमेहेजा, भोजने परिनिष्ठिण ।

लद्धे णिडे अलद्धेवा, नाणु तप्पेज्ज पण्डिए ॥३०॥

परेषु ग्रासमेषये भोजने परिनिष्ठिते ।

लब्धे पिण्डे-ऽलब्धेवा, नाऽनुतप्पेत पण्डितः ॥

इति छाया, पुनरप्युक्तं दशवैकालिकसूत्रे-पञ्च नाऽध्ययनस्य द्वितीयोद्देशके-

वहं परघडे अत्थि विचिहं स्वाहम स्वाहमं ।

न तत्थ पण्डिभो कुप्पे, इच्छा दिज्ज परो नवा-॥२९॥

वान् नहीं होते । प्रगल्भ (निः संकोच) भ्रमणों को अवश्य ही याचना
करना चाहिए । इस प्रकार याचनापरीषद जय होता है ।

(१५) याचना करने पर भी, किसी वस्तु का मौजूद रहने या
मौजूद न होने से प्राप्त न होना अलाभ कहलाता है । जिसकी वह
वस्तु है वह उसका अधिकारी (स्वामी) है, देने या न देने के लिए
स्वतंत्र है । वह कदाचित् देता है, कदाचित् नहीं भी देता । अगर न दे
तो असन्तोष नहीं मानना चाहिए । उत्तराध्ययन में कहा भी है-साधु
का कर्त्तव्य है कि गृहस्थों ने अपने लिए जो भोजन बनाया हो उसी
में से अपने लिये गवेषणा करे, मगर विवेकशील साधु भोजन के लाभ
-अलाभ के कारण सन्तोष न करे, अर्थात् चाहे प्राप्ति हो या न हो
समभाव धारण करे । दशवैकालिक सूत्र में भी कहा है-गृहस्थ के घर
में नाना प्रकार का ग्राह्य स्वाद्य आदि आहार मौजूद है और वह प्रचुर

(१५) याचना करवा छतां पणु केअ वस्तु हाअर होय अथवा हाअर
न होवाथी भणी न शेके ते अलाल कडेवाय छे जेनी वस्तु छे ते तेनो अधि-
कारी (स्वामी) छे, आपवी अगर न आपवी ते माटे ते स्वतंत्र छे. ते
कदाचित् आपे अथवा न पणु आपे जे न आपे तो असन्तोष न मानवे।
जेठ अ उत्तराध्ययनमां कहुं पणु छे-साधुनं कर्त्तव्य छे के गृहस्थोअ
पोताना माटे जे भोजन तैयार कयुं होय तेमांथी पोताना माटे गवेषणा
करै, परन्तु विवेकशील साधु भोजनना लाल-अलालना कारणे सन्तोष करै
नहीं अर्थात् भणे अथवा न भणे समभाव धारण करै दशवैकालिकसूत्रमां
पणु कहुं छे-गृहस्थना घरमां जुहा जुहा प्रकारनी आद्य स्वादीष्ट भोजन वगैरे

બહુ પરગૃહેઽસ્ત વિવિધં સ્વાચ સ્વાધમ્ ।

ન તત્ર પણ્ડિતઃ કુપ્યેત્, ઇચ્છા દદ્યાત્ પરી ન વા ॥ ઇતિ ।

છાયા—તદલાભેઽપ્યવિકૃતચેતસૈવ શ્રમણેન ભવિતવ્યમ્ इत्यલાભપરીષદજયઃ
સમ્ભવતિ-૧૫ એવમ્ ઉવરાઽતિસાર-કાસ-શ્વાસાદિ રોગસ્ય સત્યપિ પ્રાદુર્ભાવે
ગચ્છનિર્ગતાઃ જિનકલ્પિકાદયઃ શ્રમણા સ્તત્તત્ત્વિકિત્સાર્યાં ન પવર્તન્તે ગચ્છવાસિ
નસ્તુ-અસ્પૃશ્યવદ્વત્કલ્પના તથાવિધ રોગ વેદનાં સમ્યક્તયા સહનંતે આગમોક્ત-
વિધિના વા તત્પ્રતિક્રિયાં સમાચરન્તિ, इत्यેવં રોગપરીષદજયઃ સમ્ભવતિ ૧૬ એવમ્-
ગચ્છવાસિનાં ગચ્છનિર્ગતાનાશ્ચ શ્રમણાનાં કૃતેઽશુપિરત્વગસ્ય દર્માદેઃ પરિમોગો

માત્રા મેં છે, કિન્તુ દેના યા ન દેના ડસકી ઇચ્છા પર નિર્ભર છે । અગર
ન હે તો વિવેકી સાધુ કો ક્રોધ નહીં કરના ચાહિયે । (પંચમ અધ્યયન,
દ્વિતીય ઉદ્દેશક, ગાથા ૨૯) હસ પ્રકાર આહાર આદિ કા લાભ ન હોને
પર મી સાધુ કે ચિત્ત મેં વિકાર ઉત્પન્ન નહીં હોના ચાહિયે । યહ
આલાભપરીષદ વિજય છે ।

(૧૬) ઉવર, અતિસાર, શ્વાસ આદિ રોગ ઉત્પન્ન હોને પર
મી ગચ્છ સે બાહર નિકલે હુય જિનકલ્પી આદિ સાધુ ડસકી ચિકિત્સા
કરાને મેં પ્રવૃત્ત નહીં હોતે । ગચ્છવાસી સાધુ અલ્પત્વ બહુત્વ કી આલો-
ચના કરકે રોગ કી વેદના કો સમ્યક્ પ્રકાર સે સહન કરતે હૈં યા આગ-
મોક્ત વિધિ કે અનુસાર ડસકી ચિકિત્સા કરવાતે હૈં । હસ પ્રકાર
રોગ ઉત્પન્ન હોને પર સમભાવ ધારણ કરને સે રોગપરીષદ જય હોતા છે ।

(૧૭) ગચ્છવાસી ઓર ગચ્છનિર્ગત સાધુઓં કે લિયે ચિના છિદ્ર

હાજર છે અને તે સારા એવા જથ્થામાં છે. પરંતુ આપણું ન આપણું એ
સ્વામીની ઇચ્છા પર આધારીત છે. જો ન આપે તો વિવેકી સાધુએ ક્રોધ
કરવો ન કદ્યે. (પંચમ અધ્યયન, દ્વિતીય ઉદ્દેશક ગાથા ૨૯) આ રીતે.
આહાર વગેરેનો લાભ ન થવાથી સાધુના ચિત્તમાં વિકાર ઉદ્ભવવો ન
જોઈએ. આ અલાભપરીષદવિજય છે.

(૧૬) લાવ, અતિસાર, ઉધસ, શ્વાસ આદિ રોગો ઉત્પન્ન થવા છતાં
પણ ગચ્છથી બહાર નિકળેલા જિનકલ્પી આદિ સાધુ તેની સારવાર કરાવવા
માટે પ્રવૃત્ત થતાં નથી. ગચ્છવાસી સાધુ અલ્પ-બહુત્વની આલોચના કરીને
રોગની વેદનાને સમ્યક્ પ્રકારથી સહન કરે છે અથવા આગમોક્ત વિધિ
અનુસાર તેની સારવાર કરાવે છે આવી રીતે રોગ ઉત્પન્ન થવા પર સમભવ
ધારણ કરવાથી રોગપરીષદજય થાય છે.

(૧૭) ગચ્છવાસી અને ગચ્છનિર્ગત સાધુઓ માટે છિદ્રવગરના ઘાસ

આગમેऽનુજ્ઞાતો વર્તતે, તત્ર-યેષાં શયન મનુજ્ઞાતમ્ તે સ્વલુ રાત્રૌ તાન્દર્માન્
 ભૂમાવાસ્તીર્ય સંસ્તારકોત્તરપટ્ટકૌચ દર્મોપરિ કૃત્વા શેરતે, સ્તેનાપટ્ટોપકરણઃ
 સ્વલ્પસંસ્તારકપટ્ટકો વા ડત્યન્તજીર્ણત્વાત્ તં કઠોરદર્માદિ તૃણસ્પર્શ-યઃ શ્રમણઃ
 સમ્યક્તયાઽધિસહતે તસ્ય તૃણસ્પર્શ પરીવહજયો ભવતિ-૧૭ એવમ્ રજોધૂલિકમ-
 પરાગરૂપમલઃ પ્રસ્વેદજલસમ્પર્કજન્યધનીભૂતઃ શરીરે સ્થૈર્ય માપન્નો ગ્રીષ્મો-
 ધ્મ-સંપ્પાતજનિત ઘર્ષજલાદ્રેતાં ગતોઽત્યન્તોદ્વેગં જનયતિ, કિન્તુ-ન તદપનોદાય-
 કદાચિદપિ સ્નાનાભિલાષં વિદધાદિ-इत्येवं मलपरीवहजयो भवति-१८ परतो-

કે ઘાસ ઢાંખ આદિ કે ઉપયોગ કી આગમ મેં અનુમતિ દી ગઈ હૈ।
 જિન સાધુઓં કો શયન કી અનુજ્ઞા દી ગઈ હૈ, વે રાત્રિ મેં ઉસ ઘાસ-
 ઢાંખ કો ભૂમિ પર પિછા કર ઔર ઉસકે ઉપર સંસ્તારક યા ઉત્તર-
 પટ્ટક કરકે સોતે હૈં। અગર કિસી સાધુ કે ઉપકરણ ચોર ચુરા લે જાય
 યા કિસી કે પાસ વિછાને કા વસ્ત્ર સ્વલ્પ હો તો અત્યન્ત જીર્ણ હોને કે
 કારણ ઉસ કઠોર દર્મ આદિ કે સ્પર્શ કો જો સાધુ સમ્યક્ પ્રકાર-સે
 સંહતા હૈ, વહ તૃણસ્પર્શપરીવહ કા વિજેતા કહલાતા હૈ।

(૧૮) રેત ઔર ધૂલ કે કળ પસીના આને કે કારણ શરીર કે
 સાથ ચિપટ ગય હોં ઔર શરીર મેં સ્થિર હો ગય હોં। વહ મલ ગ્રીષ્મ-
 ક્રતુ કી ગર્મી પડને કે કારણ ઉત્પન્ન હોને વાલે પસીને સે ગીલા હો
 ગયા હો જાતા હૈ ઔર ચિત્ત મેં ઉદ્વેગ ઉત્પન્ન ફરતા હૈ મગર ઉસ
 ઉદ્વેગ કો દૂર કરને કે લિયે સાધુ સ્નાન કી કદાપિ અભિલાષા નહીં
 કરતા। ઇસ પ્રકાર મલપરીવહ જીતા જાતા હૈ।

ઇકો આદિના ઉપયોગની આગમમાં અનુમતિ આપવામાં આવી છે. જે
 સાધુઓને શયનની રજા આપવામાં આવી છે તેઓ રાત્રે તે ઘાસ-ઢાંખને
 જમીન ઉપર પાથરીને તેની ઉપર સંસ્તારક અથવા ઉત્તરપટ્ટક કરીને મુવે
 છે. જે કોઈ સાધુના ઉપકરણ ચોર ચોરી જાય અથવા કોઈની પાસે પાથર-
 વાના વસ્ત્ર અલ્પ હોય તો અત્યન્ત જીર્ણ હોવાને લીધે તે કઠોર દર્મ
 આદિના સ્પર્શને જે સાધુ સમ્યક્ પ્રકારથી સહન કરે છે, તે તૃણસ્પર્શપરી-
 વહનો વિજેતા કહેવાય છે.

(૧૮) રેતી ધૂળના કણો પરસેવાના કારણે શરીર સાથે ચોંટી ગયા
 હોય અને શરીર ઉપર જામી ગયા હોય આ થર ગ્રીષ્મક્રતુની ગર્મી પડ-
 વાના કારણે ઉત્પન્ન થતા પરસેવાથી બીનું થઈ ગયું હોય અથવા પ્રાયઃ અને
 મનમાં ઉદ્વેગ ઉત્પન્ન કરે છે પરંતુ તે ઉદ્વેગને દૂર કરવા માટે સાધુ
 સ્નાનની કદાપિ અભિલાષા રાખતો નથી. આવી રીતે મલપરીવહ જીતી શકાય છે.

भक्तपानवस्त्रपानादिना सहकारः खलु सत्कारः, पुरस्कारस्तु-सद्भूतगुणोत्कीर्तनम् वन्दनाऽभ्युत्थानाऽऽसन प्रदानादि सद्भावश्चेत्यते, तत्रा-सत्कृतपुरस्कृतौ वा न द्वेषं करोति, नापि-परं दूषयति नाऽऽप्यात्मानं मनोविकारेण इत्येवं रीत्या सत्कारपरीषहजयो भवति-१९ अतिशयबुद्धिरूपप्रज्ञायां प्राप्त्यामपि गर्वाभावादर-णमेव प्रज्ञापरीषहजयो भवति-२० तथाविध प्रज्ञा-विपर्ययेणाऽज्ञानपरीषहो भवति तत्राहं न किञ्चिज्जाने सर्वथा मूर्खोऽस्म्यह इत्येवं परितापं कुर्वतो ऽज्ञानपरीषहो भवति किन्तु-तदंकरणात् कर्मफलविपाकोऽयं वर्तते, इत्येवं परिचिन्तयतो ऽज्ञानपरीषहजयो भवति २१ चतुर्दशपूर्वाणि द्वादशाङ्गानि ज्ञानमुच्यते, एवं-

(१९) आहार, पानी, वस्त्र, पात्र आदि का दिया जाना सत्कार कहलाता है और सद्भूत गुणों का कीर्तन, वन्दन, उत्थान, आसन-प्रदान आदि सद्भाव पुरस्कार कहलाता है। यह सत्कार अथवा पुरस्कार न पाकर द्वेष न करे, दूसरे को दोष न दे और न मन में विकार लाकर आत्मा को दूषित बनावे। ऐसा करने से सत्कार-पुरस्कार परीषह जीता जाता है।

(२०) अतिशय बुद्धि वैभव रूप प्रज्ञा के प्राप्त होने पर भी गर्व न करना प्रज्ञा-परीषहजय है।

(२१) पूर्वोक्त प्रज्ञा की विपरीतता से अज्ञान परीषह होता है। मैं कुछ भी नहीं जानता, मैं सर्वथा मूर्ख हूँ इस प्रकार परिताप करने वाले को अज्ञान का परीषह होता है किन्तु ऐसा परिताप न करके 'यह मेरे पूर्वकृत कर्म का विपाक है इस प्रकार सोचने वाला अज्ञान-परीषहजय करता है।

(१९) आहार, पानी, वस्त्र, पात्र आदिनुं प्रदान सत्कार कहेवाय छे अने सद्भूत गुणानुं कीर्तन, वन्दन, उत्थान, प्रदान आदि सद्भाव पुरस्कार कहेवाय छे. आ सत्कार अथवा पुरस्कार न भणे तो द्वेष न करे, भीषणने दोष न दे, तेमज मनमां विकार लावीने आत्माने दूषित न बनावे आ प्रमाणे करवायी सत्कार-पुरस्कारपरीषह जती शक्य छे.

(२०) अतिशय बुद्धिवैभव रूप प्रज्ञा प्राप्ति थवा छता पणु अलिमान न करबुं प्रज्ञापरीषहजय छे.

(२१) पूर्वोक्त प्रज्ञानी विपरीतताथी अज्ञानपरीषह थाय छे. 'हुं कथुं' न जणुतो नधी, हुं सर्वथा मूर्ख छु' आ रीते परिताप करनारने अज्ञाननो परीषह थाय छे परन्तु आवो परिताप नही करता आ भारा पूर्वकृत कर्मनुं इण छे अम विचारनार साधु अज्ञानपरीषहजय प्राप्ति करे छे.

જ્ઞાનવિરોધિનાઽપિ-અજ્ઞાનેનાઽઽગમરાહિત્યેન પરીપદો ભવતિ, જ્ઞાનાવરણક્ષયો
 પશ્ચમોદયચિલસિતમેત્-ઇતિ સ્વકૃતકર્મફલપરિમોગા દ્વિધ્વંસમેતિ તપોઽનુ-
 ણ્ઠાનેન ચ્યેત્યેવ વિચારયતાઽજ્ઞાનપરીપદજયો ભવતિ-૨૧ દર્શનપરીપદહતુ-
 સર્વાઽવધ્યસ્થાનેભ્યો ચિરતઃ પ્રકૃત તપોઽનુઠ ન કર્તા નિઃસંજ્ઞાશ્વાદમસ્મિ, કિન્તુ
 તથાસત્ત્વેઽપિ ધર્માઽઅધર્માઽઽત્મ-દેવ-નારકાદિ ભાવાન્ ન પ્રેક્ષે, । તસ્માત્-સમસ્ત
 મૈતન્મૃણા, અતો દર્શનમિદં માત્મનઃ કેવલં ભારુદ્યમેવ નતુ-તત્ ત્રાણાય ભવતીતિ
 દર્શનભ્રંશરૂપઃ પરીપદો बोध्यः । તત્રૈવમાલોચયેત્-ધર્માઽઅધર્મો પુણ્યપાપાત્મકો
 આત્માચ્ઽરૂપી તતો નૈતે દૃષ્ટિગોચરા ભવિતુ મર્હન્તિ દેવાશ્ચા-ઽત્યન્તરતિસુખા
 સત્કત્વાત્-દુષ્પમાઽનુભાવાચ્ચ નાગચ્છન્તિ નારકાઃ પુનસ્તીવ્રવેદનાર્તાઃ પૂર્વકૃત

ચોદહ પૂર્વો સહિત દ્વાદશાંગ કો જ્ઞાન કહેતે હૈં । इस प्रकार ज्ञान
 के विरोधी अज्ञान से-आगम की रहितता से परीपह होता है । यह
 तो ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम और उदय का फल है, अपने किये
 कर्म का फल तप से भोगने से उसका विनाश होता है, इस प्रकार
 विचार करने से अज्ञान परीपहजय होता है ।

(૨૨) 'મૈં સમસ્ત પાપસ્થાનોં સે નિવૃત્ત હો ચુકા હું', તપસ્યા કા
 અનુણાન કરતા હુંં ઓર નિઃસંગ હુંં, ફિર મી ધર્મ, અધર્મ, આત્મા,
 દેવ, નારક આદિ ભાવોં કા સાક્ષાત્કાર નહીં કર સકતા, અતઃૈવ યહ
 સઘ મિથ્યા હૈં । યહ દર્શન આત્મા કે લિઁ ભારુદ્ય હૈં, યહ ત્રાણ કારક
 નહીં હૈં' ઈસા સોચના દર્શનભ્રંશ પરીપહ હૈં । સોચના યોં ચાહિઁ-ધર્મ
 ઓર અધર્મ દ્રવ્ય અરૂપી હૈં, આત્મા મી અરૂપી હૈં, હસ કારણ યે ચક્ષુ-
 ગોચર નહીં હો સકતે । દેવ અત્યન્ત રતિ-સુખ સે આસક્ત રહેને કે

ચોદ પૂર્વો સહિત બાર અંગોને જ્ઞાન કહે છે આ રીતે જ્ઞાનના
 વિરોધી અજ્ઞાનથી-આગમની રહિતતાથી પરીપદ થાય છે આ તો જ્ઞાના-
 વરણ કર્મના ક્ષયોપશમ તથા ઉદયનું ક્ષણ છે, પોતાના કરેલા કર્મના ક્ષણ તપથી
 ભોગવવાથી તેનો વિનાશ થાય છે એમ વિચારવાથી અજ્ઞાનપરીપદજય થાય છે.

(૨૨) 'હું સમસ્ત પાપસ્થાનોથી નિવૃત્ત થઈ ચૂક્યે છું' તો પણ ધર્મ,
 અધર્મ, આત્મા દેવ નારક આદિ ભવોને સાક્ષાત્કાર કરી શકતો
 નથી આથી આ બધું મિથ્યા છે । આ દર્શન આત્માને માટે ભારુદ્ય છે,
 આ ત્રાણકારક નથી' એમ વિચારવું દર્શનભ્રંશપરીપદ છે. ખરી રીતે તો
 આ પ્રમાણે વિચારવું જોઈએ-ધર્મ અને અધર્મ દ્રવ્ય અરૂપી છે, આત્મા
 પણ અરૂપી છે એ કારણે તેઓ દૃષ્ટિગોચર થઈ શકતાં નથી. દેવ અત્યન્ત

કર્મોદયા નિગડબન્ધનવશીકૃતત્વાત્ પરતન્ત્રાઃ મન્તો નૈવા ગચ્છન્તીતિ પર્યા
 લોચનતો દર્શન પરીવહજયો ભવતિ । અથવા-તત્રૈવ માલોચયેત્ પુણ્ય-પાપાત્મકો
 સ્વલ્લ ધર્માધર્મો યદિ કર્મરૂપો-પુદ્ગલાત્મકો વર્તેતે તદા-તયોઃ કાર્ય દર્શના-
 દનુમાતવ્યત્વં વર્તેતે, યદિ પુનઃ ક્ષમા ક્રોધાદિકો ધર્માધર્મોસ્તઃ તદા-સ્વાનુ-
 ભવત્વાત્ આત્મપરિણતિ સ્વરૂપત્વાત્ પ્રત્યક્ષવિરોધઃ, દેવશ્ચાત્યન્તરતિસુખાસક્ત
 ત્વાત્-દુષ્પ્રમાનુમાવાન્ન ચ દૃષ્ટિગોચરા ભવન્તિ નારકાઃ પુન સ્તીવ્ર વેદનાતીઃ
 પૂર્વકૃતકર્મોદયનિગડબન્ધનવશીકૃતત્વાત્ પરતન્ત્રાઃ મન્તો નૈવા ગમિષ્યન્તીતિ

કારણ તથા દુષ્પ્રમાન કાલ કે પ્રભાવ કે કારણ યહાં આતે નહીં હૈં । નારક
 જીવ તીવ્ર વેદના સે પીડિત રહતે હૈં, પૂર્વકૃત કર્મ રૂપી વેડી કે બન્ધન
 મેં પડે હોને કે કારણ પરાધીન હૈં, હસ કારણ વે યહાં આ નહીં સકતે
 હસ પ્રકાર કા વિચાર કરને સે દર્શનપરીવહજય હોતા હૈં ।

અથવા એસા વિચાર કરના ચાહિયે-પુણ્ય ઓર પાપ રૂપ ધર્મ ઓર
 અધર્મ જબ કર્મ રૂપ હૈં-પુદ્ગલાત્મક હૈં, તો ડનકે કાર્ય કા દર્શન
 હોતા હૈં, અતઃવ ડનકા અનુમાન કિયા જા સકતા હૈં । અગર ધર્મ ઓર
 અધર્મ કા અભિપ્રાય ક્ષમા ઓર ક્રોધ આદિ માના જાય તો સ્વાનુભવ
 હોને સે, આત્મ પરિણતિ રૂપ હોને સે પ્રત્યક્ષવિરોધ હૈં । દેવ રતિ-સુખ
 મેં અત્યન્ત લીન રહને સે તથા દુષ્પ્રમાન કાલ કે પ્રભાવ સે દૃષ્ટિગોચર નહીં
 હોતે, નારક જીવ તીવ્ર વેદના સે પીડિત રહતે હૈં, વે પૂર્વકૃત કર્મ રૂપી
 વેડી કે બન્ધન મેં પડે રહને કે કારણ પરતન્ત્ર હૈં, હસ કારણ વે યહાં આ

રતિ-સુખમાં - આસક્ત રહેવાના કારણે તથા દુષ્પ્રમાણના પ્રભાવથી અહીં
 આવતા નથી. નારકીના જીવો તીવ્ર વેદનાથી પીડિત રહે છે, પૂર્વકૃત કર્મરૂપી
 બંધનના બન્ધનમાં બંધાયેલા હોવાને લીધે પરાધીન છે, આ કારણથી અહીં
 આવી શકતા નથી આ પ્રકારનો વિચાર કરવાથી દર્શનપરીવહજય થાય છે.

અથવા આ પ્રમાણે વિચારવું જોઈ એ-પુણ્ય અને પાપ રૂપ ધર્મ અને
 અધર્મ જ્યારે કર્મરૂપ છે-પુદ્ગલાત્મક છે-ત્યારે તેમના કાર્યનું દર્શન થાય
 છે આથી તેમનું અનુમાન કરી શકાય છે. જો ધર્મ અને અધર્મનો અર્થ
 ક્ષમા અને ક્રોધ વગેરે માનવામાં આવે તો સ્વાનુભવ હોવાથી, આત્મપરિણતિ
 રૂપ હોવાથી પ્રત્યક્ષ વિરોધ છે ! દેવ રતિ-સુખમાં અત્યન્ત લીન રહેવાથી
 તથા દુષ્પ્રમાણના પ્રભાવથી દૃષ્ટિગોચર થતાં નથી, નારકજીવો તીવ્ર વેદનાથી
 પીડિત હોય છે, તેઓ પૂર્વકૃત કર્મ રૂપી બેડીના બન્ધનમાં પડ્યા હોવાથી

સમાલોચયતઃ સ્વલ્પ દર્શનપરીષદજયો ભવતિ । इति, तथा चैतान् द्वाविंशति
विधान-परीषदान् सहमानस्याऽसंविद्धचित्तस्य रागादि परिणामास्रवनिरो-
धात् संवरो भवतीति भावः ॥८॥

મૂઝમ્-તત્થ ચઉદસ પરિસહા સુહુમસંપરાય છઉમસ્થઃ
વીતરાગાણં ॥૯॥

છાયા-તત્ત્વ ચતુર્દશપરીષદાઃ સૂક્ષ્મસમ્પરાય-છન્નસ્થવીતરાગયોઃ-॥૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રે-શુત્પિપાસાદયો દ્વાવિંશતિઃ પરીષદાઃ પ્રરૂપિતાઃ,
સમ્પ્રતિ-તેષુ કેષાં જીવાનાં ક્રિયન્તઃ પરીષદાઃ સમ્ભવન્તીતિ પ્રરૂપયિતુમાહ-‘તત્થ
ચઉદસ પરીસહા-’ इत्यादि, तत्र-पूर्वोक्तस्वरूपेषु द्वाविंशति विधेषु श्रुतिपा-

નહીં સકતે, એમા વિચાર કરનેવાલા દર્શનપરીષદ વિજય કરતા હૈ ।

इस प्रकार जो चाईस परीषहों को सहन करता है, जिसके चित्त
में संकलेश नहीं होता, वह रागादि परिणाम रूप आस्रव का निरोध
करके संवर प्राप्त करता है ॥८॥

‘तत्थ चउदसपरीसहा’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—પૂર્વોક્ત ચાઈસ પરીષહોં મેં સે સૂક્ષ્મસમ્પરાય ઓર છન્ન
સ્થવીતરાગ ઓ ચૌદહ પરીષદ હોતે હૈ ॥૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ સૂત્ર મેં શુધા પિપાસા આદિ ચાઈસ પરીષહોં
કો પ્રરૂપણા કી ગઈ, અર્થ ગ્રહ પ્રરૂપણા કરતે હૈ કિ उनमें से किन
जीवों को कितने परीषद होते हैं—

जिनका स्वरूप पहले कहा जा चुका है, उन श्रुतिपा-

મરતંત્ર છે, આ કારણે તેઓ અત્રે આવી શકતાં નથી, આ પ્રમાણે વિચાર
કરનાર દર્શનપરીષદ વિજય પ્રાપ્ત કરે છે.

આવી રીતે જે બાવીસ પરીષદોને સહન કરે છે, જેના ચિત્તમાં
સંકલેશ થતો નથી, તે રાગાદિપરિણામ રૂપ આસ્રવનો નિરોધ કરીને સંવર
પ્રાપ્ત કરે છે. ॥૮॥

‘તત્થ ચઉદસપરીસહા’ ઈત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—પૂર્વોક્ત બાવીસ પરીષદોમાંથી સૂક્ષ્મસમ્પરાય અને છન્નસ્થ
વીતરાગને ચૌદ પરીષદ હોય છે. ॥૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં શુધા પિપાસા વગેરે બાવીસ પરીષદોની
અરૂપણા કરવામાં આવી હવે એ અરૂપણા કરીએ છીએ કે તેમાંથી કયા છવોને
કેટલાં પરીષદ હોય છે—

જેમનું સ્વરૂપ અગાઉ કહેવામાં આવી ગયું છે તે શુધા પિપાસા આદિ

સાદિ પરીષદેષુ ચતુર્દશમકારાઃ પરીષદાઃ સૂક્ષ્મસમ્પ્રદાયછદ્મસ્થવીતરાગયોઃ
સંભવન્તિ । સૂક્ષ્મસમ્પ્રદાયો લોભાભયઃ કષાયો યસ્યઃ । સૂક્ષ્મસમ્પ્રદાયઃ
સૂક્ષ્મલોભપરમાણુમદ્માવાત્ ન-વીતરાગત્વં પ્રાપ્તો દશમગુણસ્થાનવર્તી શમકઃ
ક્ષપકોવા સંયતો મૂલોત્તરગુણસમ્પન્નઃ સૂક્ષ્મસમ્પ્રદાયઃ, છદ્મનિ-જ્ઞાનાવરણીયાદિ
ઘાતિ કર્મચતુષ્ટયે તિષ્ઠતિતી છદ્મસ્થઃ સચાસી વીતરાગથેતિ છદ્મસ્થવીતરાગઃ,
અન્તર્મુહર્તેન સમુત્પચ્ચમાનકેવલજ્ઞાનઃ ક્ષીણકષાયઃ-ક્રમેણ-एकादशे-द्वादशे गुण-
स्थाने वर्तमानः ध्रमणः छद्मस्ववीतरागो व्यपदिश्यते । तथा च-सूक्ष्मसम्प-
रायस्य शमकस्य-क्षपकस्य वा द्विविधस्यैकादश-द्वादशगुणस्थानवर्तिनः छद्मस्व

વાઈસ પરીષદોં મેં સે ચૌદહ પરીષદ સૂક્ષ્મસમ્પ્રદાય ઓર છદ્મસ્થવીત-
રાગ મેં પાયે જાતે હેં । જિસ જીવ મેં સમ્પ્રદાય અર્થાત્ લોભ કષાય કો
સૂક્ષ્મ અંશ હી રોષ રહ જાતા હૈ, વહ દશમ ગુણસ્થાનવર્તી ઉપશમક
અથવા ક્ષપક મુનિ સૂક્ષ્મ સમ્પ્રદાય કહલાતા હૈ । જો છદ્મ મેં અર્થાત્
જ્ઞાનાવરણીય આદિ ચાર ઘાતિક કર્મોં મેં સ્થિત હો, વહ છદ્મસ્થ
કહલાતા હૈ । છદ્મસ્થ હોતે હુએ ઓ જો વીતરાગ હો ચુકા હો અર્થાત્
ચાર ઘાતિક કર્મોં મેં સે મોહનીય કર્મ કા જિસને પૂર્ણરૂપ સે ઉપશમ
અથવા ક્ષય કર દિયા હો, વહ છદ્મસ્થવીતરાગ કહલાતા હૈ । તાત્પર્ય-
યહ હૈ કિ ગ્યારહવેં ઓર બારહ વેં ગુણસ્થાન વાલે મુનિ કો છદ્મસ્થ-
વીતરાગ કહતે હેં । ગ્યારહવેં ગુણસ્થાન મેં ઉપશમશ્રેણી કરને વાલા
હી જાતા હૈ । મોહનીય કર્મ કા પૂર્ણ ઉપશમ હો જાને સે, લેશ માત્ર
બી ઉદય ન રહને સે, વહ ઉપશાન્ત મોહ વીતરાગ કહલાતા હૈ । ક્ષપક

બાવીસ પરીષદોમાંથી ચૌદ પરીષદ સૂક્ષ્મસમ્પ્રદાય અને છદ્મસ્થ વીતરાગમાં
જેવા મળે છે. જે બેમાં સમ્પ્રદાય અર્થાત્ લોભકષાયનો સૂક્ષ્મ અંશ જ-
માં રહી જાય છે, તે દશમાનુગુસ્થાનવર્તી ઉપશમક અથવા ક્ષપક મુનિ
સૂક્ષ્મસમ્પ્રદાય કહેવાય છે. જે છદ્મમાં અર્થાત્ જ્ઞાનાવરણીય આદિ ચાર ઘાતી
કર્મોમાં સ્થિત છે તે છદ્મસ્થ કહેવાય છે છદ્મસ્થ હોવા છતાં પણ જે વીત-
રાગ થઈ ચૂકયો હોય અર્થાત્ ચાર ઘાતી કર્મોમાંથી મોહનીય કર્મનો જેણે
પૂર્ણ રૂપથી ઉપશમ અથવા ક્ષય કર્યો હોય, તે છદ્મસ્થ વીતરાગ કહેવાય
છે. તાત્પર્ય એ છે કે અગીયારમાં અને બારમાં ગુણસ્થાનવાળા મુનિને
છદ્મસ્થ વીતરાગ કહે છે. અગીયારમાં ગુણસ્થાનમાં ઉપશમ શ્રેણી કરનાર
જો જાય છે. મોહનીય કર્મનો પૂર્ણ ઉપશમ થઈ જવાથી, લેશમાત્ર પિણ્ડ
ઉદય ન રહેવાથી, તે ઉપશાન્ત મોહ વીતરાગ કહેવાય છે. ક્ષપકશ્રેણી

વીતરાગસ્ય ચ ક્ષુત્પિપાસાશીતોષ્ણદશમશકચર્યા પ્રજ્ઞાઽજ્ઞાના-ઽલાભઃ શય્યા વધ
રોગ તૃણસ્પર્શ મલરૂપા શ્વતુર્દશપરીપહાઃ સમ્ભવન્તિ । અથ-હ્રદમસ્થ વીતરાગસ્ય
મોહનીયાભાવેના-ઽચેલરતિ સ્ત્રી નિષઘ્નાઽક્રોશયાચનાસત્કારપુરસ્કાર દર્શન
રૂપાઘટ પરીપહાભાવાત્ ઉપર્યુક્ત ચતુર્દશ પરીપહનિયમવચનસ્ય સદ્ભાવેઽપિ
સૂક્ષ્મમામ્પરાયિકસ્ય મોહનીયસદ્ભાવા દ્વેષાદિ પરીપહાણામપિ સમ્ભવેન ચતુર્દશે
તિનિયમો નોપપદ્યતે ।તિત્ત્વેત-? અત્રોચ્યતે-સૂક્ષ્મમામ્પરાયે કેવલભોમસંજ્વલન

એળી ચાલા જીવ દસવેં ગુણસ્થાન સે સીધા ચારહ વેં ગુણસ્થાન મેં
પહુંચતા હૈ, ડસ સમય મોહ કા સર્વથા ક્ષય હો જાને સે વહ ક્ષીણ-
કપાય વીતરાગ હોતા હૈ । મગર इन दोनों ગુણસ્થાનો મેં જ્ઞાનાવરણ
આદિ ત્રીન ઘાતિક કર્મ વિદ્યમાન રહતે હૈં, અતપવ કેવલ જ્ઞાનદર્શન
કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી, ઇસ કારણ વહ હ્રદમસ્થ કહલાતા હૈ ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જો મહામુનિ દસવેં, ગ્યારહવેં ઓર ચારહવે
ગુણસ્થાન મેં વિદ્યમાન હોતે હૈં, ડનકો ચૌદહ પરીપહ હો સકતે હૈં ।
વે ચૌદહ પરીપહ યે હૈં-(૧) ક્ષુધા (૨) પિપાસા (૩) શીત (૪) ઉષ્ણ
(૫) દંશમશક (૬) ચર્યા (૭) પ્રજ્ઞા (૮) અજ્ઞાન (૯) અલાભ (૧૦)
શય્યા (૧૧) વધ (૧૨) રોગ (૧૩) તૃણસ્પર્શ (૧૪) મલ ।

શંકા-હ્રદમસ્થવીતરાગ મેં મોહનીય કર્મ કા અભાવ હોને સે
અચેલ, અરતિ, સ્ત્રી, નિષઘ્ના, આક્રોશ, યાચના, સત્કાર પુરસ્કાર ઓર
દર્શન પરીપહ યે આઠ પરીપહ નહીં હોતે, ઇસ કારણ ચૌદહ પરીપહોં

હવ દશમાં ગુણસ્થાનથી સીધો બરમા ગુણસ્થાનમાં પહોંચે છે, તે સમયે
મોહનો સર્વથા ક્ષય થઈ જવાથી તે ક્ષીણકપાય વીતરાગ હોય છે, પરંતુ
આ બંને ગુણસ્થાનોમાં જ્ઞાનાવરણ આદિ ત્રણ ઘનઘાતિકર્મ વિદ્યમાન રહે
છે આથી કેવળદર્શનની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એ કારણે તે હ્રદમસ્થ કહેવાય છે.

તાત્પર્ય એ છે કે જે મહામુનિ દસમાં, ગ્યારમાં અને ચારમાં
ગુણસ્થાનમાં વિદ્યમાન હોય છે, તેમને ચૌદ પરીપહ હોઈ શકે છે. આ ચૌદ
પરીપહ આ પ્રમાણે છે-(૧) ક્ષુધા (૨) પિપાસા (૩) ટાઢ (૪) તડકા
(૫) દંશમશક (૬) ચર્યા (૭) પ્રજ્ઞા (૮) અજ્ઞાન (૯) અલાભ (૧૦) શય્યા
(૧૧) વધ (૧૨) રોગ (૧૩) તૃણસ્પર્શ (૧૪) મલ

શંકા-હ્રદમસ્થ વીતરાગમાં મોહનીય કર્મનો અભાવ હોવાથી અચેલ,
અરતિ સ્ત્રી, નિષઘ્ના, આક્રોશ, યાચના, સત્કાર પુરસ્કાર અને દર્શનપરીપહ એ
આઠ પરીપહ હોતા નથી એ કારણે ચૌદ પરીપહો હોવાનો નિયમ બરાબર

કષાયોદયસ્યાઽતિસૂક્ષ્મસ્ય સન્દાત્રત્વાત્-તસ્યાપિ વીતરાગ છદ્મસ્થ તુલ્યત્વાત્
ઉપર્યુક્ત ચતુર્દશ પરીષદ સ્તત્રાપિ સન્તીતિ 'ચતુર્દશ' इति नियमस्तत्राप्युपपद्यते ।
अथैवमपि-मोहोदयसहायामावात्-मन्दोदयत्वाच्च क्षुत्पिपासादि वेदनाभावात्
तत्सहनकृतपरीषद व्यपदेशो न युज्यते इति चेन्मैवम्-३ सर्वार्थसिद्ध देवस्याऽधः

કે હોને કા નિયમ ઠીક છે, કિન્તુ સૂક્ષ્મ સમ્પરાય મેં મોહનીય કર્મ કા
સદ્ભાવ રહતા છે, અતઃ ઉસમેં અચેલ આદિ પરીષદ કા મી સંભવ છે ।
ऐसी स्थिति में वहां चौदह होने का नियम किस प्रकार बन सकता है ?

समाधान—सूक्ष्मसम्पराय में केवल संज्वलनलोभ कषाय का ही
सद्भाव रहता है और वह भी अत्यन्त सूक्ष्म होता है, इस कारण
वह भी वीतरागछद्मस्थ के ही समान है । अभिप्राय यह है कि पूर्वोक्त
अचेल आदि आठ परीषद मोहनीय कर्म के उदय से होते हैं, यह
सत्य है और यह भी सत्य है कि दसवें गुणस्थान में मोहनीय कर्म का
उदय रहता है, मगर स्मरण रखना चाहिए कि वहां उदित रहने वाला
मोह अत्यन्त सूक्ष्म होता है और सूक्ष्म होने के कारण इतना असमर्थ
हो जाता है कि परीषदों को उत्पन्न करने में वह समर्थ नहीं रह जाता ।
इस कारण वहां चौदह परीषदों का जो विधान किया गया है,
वह उचित ही है ।

છે, પરન્તુ સૂક્ષ્મસમ્પરાયમાં મોહનીય કર્મનો સદ્ભાવ હોય છે, આથી તેમાં
અચેલ આદિ પરીષદ પણ સંભવીત છે. આવી સ્થિતિમાં ત્યાં ચૌદ પરીષદ
હોવાનો નિયમ કઈ રીતે હોઈ શકે ?

સમાધાન—સૂક્ષ્મસમ્પરાયમાં કેવળ સંજ્વલન લોભ કષાયનો જ સદ્ભાવ
રહે છે અને તે પણ અત્યન્ત સૂક્ષ્મ હોય છે, આથી તે પણ વીતરાગ
છદ્મસ્થની સમાન જ છે. સારાંશ એ છે કે પૂર્વોક્ત અચેલ આદિ આઠ
પરીષદ મોહનીય કર્મના ઉદયથી થાય છે. આ સત્ય છે અને એ પણ એટલું
જ સત્ય છે કે દશમાં ગુણસ્થાનમાં મોહનીય કર્મનો ઉદય રહે છે, પરન્તુ
યાદ રાખવું ઘટે કે ત્યાં ઉદિત રહેતો મોહ અત્યન્ત સૂક્ષ્મ હોય છે અને
સૂક્ષ્મ હોવાના કારણે એટલો અસમર્થ ઘઈ જાય છે કે પરીષદોને ઉત્પન્ન
કરવામાં તેની શક્તિ રહેતી નથી આથી ત્યાં ચૌદ પરીષદોનું જે વિધાન
કરવામાં આવ્યું છે તે યથાર્થ જ છે.

શંકા-આ સ્વીકારી લઈએ તો પણ મોહ કર્મના ઉદયની સહાયતા ન
મળવાથી અને મન્દ ઉદય હોવાના કારણે ક્ષુધા-પિપાસા આદિની વેદના ન

सप्तमपृथिवीगमनसामर्थ्यव्यपदेशवत् छद्मस्य वीतरागादीनामपि क्षुत्पिपासाभेद-
सहनशक्तिमात्रस्य प्रदर्शितत्वादिति दिक् ॥९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः--पूर्वं तावत्=संवरहेतुतया प्रतिपादितानां परीषदाणां
क्षुत्पिपासादीनां स्वरूपं-भेदाश्च प्ररूपिताः, सम्प्रति-कः खलु परीषदः ? कस्य केषु
च गुणस्थानेषु सम्भवतीति क्रमशः प्ररूपयितुमाह-'तत्थ चउदस परीसहा
सुद्धमसंपराय छउमत्थ वीतरागाणां-' इति, तत्र-पूर्वोक्त स्वरूपेषु-क्षुत्पिपा-
सादिषु द्वाविंशति प्रकारेषु परीषदेषु मध्ये चतुर्दशपरीषदाः क्षुत्पिपासा शीतोष्ण
दंशमशक चर्याप्रज्ञाऽपज्ञालाभश्चयावधरोगवृणस्पर्शमलरूपाः सुद्धमसाम्पराय-

शंका—यह मान लिया जाय तो भी मोह कर्म के उदय की सहा-
यता न मिलने के कारण और मन्द उदय होने के कारण क्षुधा पिपासा
आदि की वेदना न होने से क्षुधा पिपासा आदि से होने वाले परीषद
कैसे कहे जा सकते हैं ?

समाधान—ऐसा न कहो, जैसे सर्वार्थसिद्ध विमान के देव में
सप्तम पृथ्वी तक गमन करने का सामर्थ्य कहा जाता है, उसी प्रकार
छद्मस्थवीतराग आदि में क्षुधा-पिपासा आदि के उत्पन्न होने की
शक्ति मात्र प्रदर्शित की गई है ॥९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले परीषदजय को संवर का हेतु बतलाया
गया था, अतएव क्षुधा पिपासा आदि परीषदों के स्वरूप और उनके
भेदों का निरूपण किया गया। अब अनुक्रम से यह प्रतिपादन करते
हैं कि कौनसा परीषद, किन गुणस्थानों में किस जीव को होना है ?

पूर्वोक्त क्षुधा पिपासा आदि चारों परीषदों में से चौदह परीषद
अर्थात् (१) क्षुधा (२) पिपासा (३) शीत (४) उष्ण (५) दंशमशक

पेडावाथी क्षुधा पिपासा आदिथी थनारा परीषद कछ रीते छडी -शकाय ।

समाधान—आम कडेपुं ठीक नथी, जेम सर्वार्थ सिद्ध विमानना देवमां
सातमी पृथ्वी सुधी गमन करवानुं सामर्थ्य कडेवाभा आवे छे, ते नरीते क्षुधा-
पिपासा आदिना उत्पन्न थवानी शक्ति मात्र प्रदर्शित करवाभा आवी छे ॥९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—आ पडेला परीषदजयने संवरनुं काख्य अताववाभां
आव्युं हेतुं आथी क्षुधा पिपासा आदि परीषदोना स्वश्य तथा तेना
लोडोनुं प्रइपण्य करवाभां आव्युं, हवे अनुकमथी ओ प्रतिपादन करीओ छीओ
के कया परीषद, कया गुणस्थानभां, कया लवने थाय छे ?

पूर्वोक्त क्षुधा पिपासा आदि पावीस परीषदोभांथी चौद परीषद अर्थात्

(१) क्षुधा (२) पिपासा (३) टाढ (४) तडके (५) दंशमशक (६) चर्या
(७) प्रज्ञा (८) अज्ञान (९) अलाभ (१०) शय्या (११) वध (१२) दंश

છદ્મસ્થ વીતરાગયોઃ સમ્ભવન્તિ । તત્ર-ક્ષુત્પિપાસાદીનાં ચતુર્દશાનામપિ પરીપહાણાં હેતુભૂતસ્ય લોભાશય કષાયરૂપસમ્પરાયસ્ય વાદરાણિ સ્વખંડાનિ નવમે ગુણસ્થાને પરિશાટિતાનિ ભવન્તિ । કિન્તુ-દશમે ગુણસ્થાને તદ્દેતુભૂત-સૂક્ષ્મલોભકષાયપરમાણવો વેચન્તે તસ્માત્-સૂક્ષ્મસમ્પરાયસંયતે, છદ્મસ્થવીત-રાગાસંયતે ચોપયુક્તાશ્ચતુર્દશપરીપહા ભવન્તિ । તત્ર-સૂક્ષ્મસમ્પરાયો લોભ-કષાયો यस્ય-સ સૂક્ષ્મસમ્પરાયઃ, જ્ઞાનાવરણીયાદિ ઘાતિકર્મચતુષ્ટયરૂપમ્, તસ્મિન્ સ્થિતઃ છદ્મસ્યઃ વીતો-વ્યપગતો રાગો દર્શન-મોહ, ચારિત્ર-મોહરૂપ

(૬) ચર્ચા (૭) પ્રજ્ઞા (૮) અજ્ઞાન (૯) અલાભ (૧૦) શય્યા (૧૧) વધ (૧૨) રોગ (૧૩) તૃણસ્પર્શ ઓર મલ પરીપહ સૂક્ષ્મસામ્પરાય ઓર છદ્મસ્થવીતરાગ મેં હોતે હેં । ક્ષુધા પિપાસા આદિ ચૌદહ પરીપહોં કા કારણ મોહનીય કર્મ હૈ । મોહનીય કર્મ કા અનુક્રમ સે ક્ષય યા ઉપશમ કરતા હુમા જીવ જબ નૌવે અનિવૃત્તિકરણ નામક ગુણસ્થાન મેં પહું-ચતા હૈ તો વહાં શેષ રહે હુએ સંજ્વલન કષાય કે લોભ રૂપ મોહનીય કર્મ કે વાદરાં સ્વંડોં કા ક્ષય યા ઉપશમ કર દેતા હૈ । દશમ ગુણસ્થાન મેં સૂક્ષ્મ-લોભ કષાય માત્ર કા હી વેદન હોતા હૈ । એસી સ્થિતિ મેં મોહનીય કર્મ કે દ્વારા ઉત્પન્ન હોને વાલે આઠ પરીપહ વહીં સંભવ નહીં હોતે, અતઃ સૂક્ષ્મસામ્પરાય નામક દસવેં ગુણસ્થાન મેં પૂર્વોક્ત ચૌદહ પરીપહ હી હોતે હેં ।

જિસ જીવ મેં યા જીવ કી જિસ અવસ્થા મેં સૂક્ષ્મ હી સમ્પરાય અર્થાત્ કષાય શેષ રહ જાતા હૈ, ઉસે સૂક્ષ્મસમ્પરાય કહતે હેં । જ્ઞાના

(૧૩) તૃણસ્પર્શ અને (૧૪) મલપરીપહ સૂક્ષ્મસામ્પરાય અને છદ્મસ્થ વીત-રાગમાં હોય છે. ક્ષુધા-પિપાસા આદિ ચૌદ પરીપહોં કારણ મોહનીય કર્મ છે. મોહનીય કર્મના અનુક્રમથી ક્ષય અથવા ઉપશમ કરતો થકો જીવ જ્યારે નવમાં અનિવૃત્તિકરણ નામના ગુણસ્થાનમાં પહોંચે છે તો ત્યાં બાકી રહેલા સંજ્વલન કષાયના લેાલ રૂપ મોહનીય કર્મના બાદર બહોળો ક્ષય અથવા ઉપશમ કરી નાખે છે. દશમા ગુણસ્થાનમાં સૂક્ષ્ણ લેાલકષાય માત્રનું જ વેદન થાય છે. આવી સ્થિતિમાં મોહનીય કર્મ દ્વારા ઉત્પન્ન થનારા આઠ પરીપહ ત્યાં સંભવી શકતા નથી આથી સૂક્ષ્મસામ્પરાય નામના દશમાં ગુણસ્થાનમાં અને છદ્મસ્થ વીતરાગ નામના અગીયારમાં ગુણસ્થાનમાં પૂર્વોક્ત ચૌદ પરીપહ જ હોય છે.

જે જીવમાં અથવા જીવની જે અવસ્થામાં સૂક્ષ્મ જ સમ્પરાય અર્થાત્ કષાય શેષ રહી જાય છે. તેને સૂક્ષ્મસમ્પરાય કહે છે તે જ્ઞાનાવરણ આદિ

સકલમોહોપશમાત તથાવિધ સમસ્તમોહસયાચ્ચ यस્ય સ વીતરાગઃ ક્રમશઃ
 પચાદશગુણસ્થાનવર્તી દ્વાદશસ્થાનવર્તી ચ સંતઃ શ્રમણઃ પરિગ્રાહઃ, છદ્મસ્થ
 શ્રાડસૌ વીતરાગથેતિ છદ્મસ્થવીતરાગઃ તયોઃ સ્વલુ-સૂક્ષ્મસમ્પરાય ચ્છદ્મસ્થવીત-
 રાગયોઃ શ્રમણયો રુપયુક્તાઃ ક્ષુત્તિપાસાદય ચતુર્દશ પરીપદાઃ સમ્ભવન્તિ નત્વ
 ચેત્તરતિ સ્ત્રીનિષદ્યાડક્રોશ યાચનાસત્કારપુરસ્કારદર્શનરૂપા અષ્ટૌ પરીપદાઃ,
 છદ્મસ્થવીતરાગસ્ય મોહનીયાભાવાત્-સૂક્ષ્મસામ્પરાયમોહોદય સદ્ભાવેડપિ કેવલં
 લોભસંજ્વલનકપાયોદયસ્યાડતિ સૂક્ષ્મસ્યૈવ સત્ત્વેન તસ્યાપિ છદ્મસ્થવીતરાગ
 તુલ્યત્વાત્ । પરમાર્થનસ્તુ-તદુભયોરેવ ક્ષુત્તિપાસાદિ ચતુર્દશ પરીપદસહનશક્તિ

વરણ આદિ કર્મ 'છદ્મ' કહલાતે હૈં, ઉનમેં જો સ્થિત હો વહ 'છદ્મસ્થ'
 કહા જાતા હૈં । જિસકા રાગ અર્થાત્ દર્શનમોહ ઓર ચારિત્રમોહ રૂપ
 મોહ-ઉપશાન્ત યા ક્ષીણ હો ચુકા હો-વીત ગયા હો, વહ વીતરાગ કહ-
 લાતા હૈં । ગ્યારહવેં ઓર ચારહવેં ગુણસ્થાન મેં સ્થિત શ્રમણ છદ્મસ્થ-
 વીતરાગ કહલાતા હૈં, ક્યોંકિ જ્ઞાનાવરણીય આદિ ત્રીન ઘાતિ કર્મ ઉસકે
 વિદ્યમાન હોતે હૈં, અતઃ વહ છદ્મસ્થ હૈં ઓર મોહનીય કર્મ કા ઉદય
 ન હોને સે વીતરાગ કહલાતા હૈં । ઇન સૂક્ષ્મસમ્પરાય ઓર છદ્મસ્થ
 વીતરાગ મુનિયોં મેં ક્ષુધા પિપાસા આદિ ચૌદહ પરીપદ કા સંભવ હોતે
 હૈં । ઇનમેં અચેલ, અરતિ, સ્ત્રી, નિષદ્યા, આક્રોશ, યાચના, સત્કાર
 પુરસ્કાર ઓર દર્શન, યે આઠ પરીપદ નહીં હોતે, ક્યોંકિ છદ્મસ્થ
 વીતરાગ જીવ મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે રહિત હોતા હૈં ઓર સૂક્ષ્મ-
 સમ્પરાય મેં યદ્યપિ મોહ કા ઉદય રહતા હૈં કિન્તુ કેવલ સૂક્ષ્મ સંજ્વલન

કર્મ 'છદ્મ' કહેવાય છે, તેમાં જે સ્થિત છે તે છદ્મસ્થ કહેવાય છે. જેના રાગ
 અર્થાત્ દર્શનમોહ અને ચારિત્રમોહ રૂપ મોહ ઉપશાન્ત અથવા ક્ષીણ થઈ
 ગયા હોય-વીતી ગયા હોય તે વીતરાગ કહેવાય છે. અગીયારમાં અને બારમાં
 ગુણસ્થાનમાં સ્થિત શ્રમણ છદ્મસ્થ વીતરાગ કહેવાય છે કારણ કે જ્ઞાનાવરણીય
 આદિ ત્રણ ઘાતિ કર્મ તેના વિદ્યમાન હોય છે આથી તે છદ્મસ્થ છે અને
 મોહનીય કર્મના ઉદય ન થવાથી વીતરાગ કહેવાય છે. આ સૂક્ષ્મસમ્પરાય
 અને છદ્મસ્થ વીતરાગ મુનિયોમાં ક્ષુધા પિપાસા આદિ ચૌદ પરીપદ હોઈ
 શકે છે. આમાં અચેલ, અરતિ, સ્ત્રી, નિષદ્યા આક્રોશ, યાચના, સત્કાર-
 પુરસ્કાર અને દર્શન એ આઠ પરીપદ હોતાં નથી કારણ કે છદ્મસ્થ વીતરાગ
 જીવ મોહનીય કર્મના ઉદયથી રહિત થાય છે અને સૂક્ષ્મસમ્પરાયમાં જે કે
 મોહનો ઉદય રહે છે આથી તે પરીપદોને ઉત્પન્ન કરવામાં સમર્થ થતું
 નથી આથી સૂક્ષ્મસમ્પરાય જીવ પણ છદ્મસ્થ વીતરાગ જેવો જ ગણાય.

માત્રસ્યૈવ પ્રદર્શને તાત્પર્યં વર્તતે, નતુ તથાવિત્રપરીષહસહને સર્વાર્થસિદ્ધિદેવસ્યાધર્મઃ
સમ્પદપૃથિવીગમનસામર્થ્યવર્ણનવત્, इतिभावः । उक्तञ्च व्याख्याप्रज्ञप्तौ भगवद्भी
सूत्रे ट-शतके ८-उद्देशके ३४३ सूत्रे-‘एकविह बंधगस्स णं भंते ! वीयरग
छद्मस्थस्स कतिपरीसहा पणत्ता ? गोयमा ! चोद्म परीसहा
पणत्ता-’ इति एकविधबन्धकस्य खलु भदन्त ! वीतराग छद्मस्थस्य कति-
परीषहाः प्रज्ञप्ताः ? गौतम ! चतुर्दश परीषहाः प्रज्ञप्ताः इति ॥९॥

મૂઝમ્—અરિહંતે એગારસ પરીસહા ॥૧૦॥

હાયા—‘અર્હતિ-एकादश परीषहाः—॥१०

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रे सूक्ष्मसम्परायस्य शमकस्य-क्षपकस्य वा संपत्

લોભ કા હી ઉદય રહતા હૈ, અતઃવ વહ પરીષદોં કો ઉત્પન્ન કરને મેં
સમર્થ નહીં હોતા । હસ કારણ સૂક્ષ્મસમ્પરાય જીવ બી છદ્મસ્થવીતરાગ
કે હી સમાન હૈ ।

તથા તો યહ હૈ કી સૂક્ષ્મસમ્પરાય-ઑર છદ્મસ્થવીતરાગ મુનિ મેં
જો ચૌદહ પરીષદોં કા સદ્ભાવ કહા ગયા હૈ, વહ યોગ્યતા માત્ર કી
અપેક્ષા સે હી સમજના ચાહિય, જૈસે સર્વાર્થસિદ્ધિ વિમાન કે દેવ મેં
નીચે સાતવીં પૃથ્વી તરુ ગમન કરને કી યોગ્યતા કા વર્ણન કિયા
જાતા હૈ । વ્યાખ્યા પ્રજ્ઞાસિમુત્ર કે આઠવેં શતક કે આઠવેં ઉદ્દેશક મેં
કહા હૈ-‘એક પ્રકાર કી કર્મ-પ્રકૃતિ કા અર્થાત્ સિર્ફ વેદનીય કર્મ કા
બંધ કરને વાલે મેં, ભગવન્ ! કિતને પરીષદ હોતે હૈં ?

ઉત્તર-હે ગૌતમ ! ચૌદહ પરીષદ કહે ગયે હૈં ॥૯॥

‘અરિહંતે એગારસપરીસહા ।’

સૂત્રાર્થ — અર્હન્ત મેં એગારહ પરીષદ હોતે હૈં ॥૧૦॥

સત્ય તો એ છે કે સૂક્ષ્મસમ્પરાય અને છદ્મસ્થ વીતરાગ મુનિમાં જે
ચૌદ પરીષદોનો સદ્ભાવ કહેવામાં આવ્યો છે, તે યોગ્યતા માત્રની અપે-
ક્ષાએ જ સમજવું બેઠું એ, જેવી રીતે સર્વાર્થ સિદ્ધિ વિમાનના દેવમાં નીચે
સાતમી પૃથ્વી સુધી ગમન કરવાની યોગ્યતાનું વર્ણન કરવામાં આવે છે.
વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞાસિમુત્રના આઠમાં શતકના આઠમાં ઉદ્દેશકમાં કહ્યું છે-એક પ્રકારની
કર્મપ્રકૃતિનું અર્થાત્ માત્ર વેદનીય કર્મનું બંધ કરનારામાં, ભગવન્ કેટલા
પરીષદ હોય છે ? ઉત્તર-હે ગૌતમ ! ચૌદ પરીષદ કહેવામાં આવ્યા છે ॥૯॥

‘અરિહંતે એગારસપરીસહા’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—અર્હન્તમાં અગીયાર પરીષદ હોય છે. ॥૧૦॥

છદ્મસ્થવીરાગસ્ય ચ સંયતસ્ય ક્ષુત્પિપાસાદયઃ શ્વતુર્દશપરીપહાઃ સમ્ભવન્તીતિ પ્રરૂપિતમ્; સમ્પ્રતિ-ભગવતોઽર્હતો જિનસ્ય એકાદશ પરીપહા ભવન્તીતિ પ્રરૂપિત-
તુમાહ-અરિહંતે એગારસ પરીસહા-ઇતિ, અર્હતિ ભગવતિ જિનેશ્વરે ચીતરાગે
નિરસ્તધાતિકર્મચતુષ્ટયે કેવલજ્ઞાનિનિ વેદનીયકર્મસદ્ભાવાત્ તદાશ્રવાઃ
ક્ષુત્પિપાસાશીતોષ્ણદંશમશકચર્યાશય્યાવધરોગતૃણસ્પર્શ મલરૂપા એકાદશ પરી-
પહાઃ સમ્ભવન્તિ । તથા ચ-ભવસ્થકેવલિનઃ કેવલં વેદનીયકર્મ સદ્ભાવાત્-
શેષકર્મકારણાભાવાચ્ચ વેદનીયકર્મ મૂલકા એવોપયુક્તાઃ ક્ષુત્પિપાસાદયો
એકાદશ પરીપહા ભવન્તિ ત્રયોદશ-ચતુર્દશગુણ સ્થાનયોરેવ જિનત્વ સમ્ભવાત્ ॥૧૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—ઉપશમશ્રેણી વાલે ઓર ક્ષવકશ્રેણીવાલે સૂક્ષ્મ-
સમ્પ્રાય સંયત મેં તથા છદ્મસ્થવીતરાગ સંયત મેં ચૌદહ પરીપહ શો-
સકતે હેં, યહ પહેલે કહા જા ચુકા હૈ, અથ અર્હન્ અર્થાત્ જિન ભગવાન
મેં ગ્યારહ પરીપહ હોતે હેં, યહ પ્રરૂપા કરતે હેં-

સમસ્ત ઘાતિ કર્મોં કા ક્ષય કર દેને વાલે, કેવલજ્ઞાની અર્હન્ત
ભગવાન જિનેશ્વર મેં વેદનીય કર્મ કા સદ્ભાવ હોને સે તત્ત્વજનિત
ગ્યારહ પરીપહ હોતે હેં, જો હસ પ્રકાર હેં-(૧) ક્ષુધા (૨) પિપાસા (૩)
શીત (૪) ઉષ્ણ (૫) દંશમશક (૬) ચર્યા (૭) શય્યા (૮) વધ (૯) રોગ
(૧૦) તૃણસ્પર્શ ઓર (૧૧) મલ ।

હસ પ્રકાર ભવસ્થ કેવલી મેં વેદનીય કર્મ કા સદ્ભાવ હોને સે
ઓર પરીપહજનક શેષ કર્મ વિદ્યામાન ન હોને સે, વેદનીય કર્મજનિત

તત્ત્વાર્થદીપિકા—ઉપશમશ્રેણીવાળા અને ક્ષવકશ્રેણીવાળા સૂક્ષ્મસમ્પ-
્રાય સંયતમાં તથા છદ્મસ્થ વીતરાગ સંયતમાં ચૌદ પરીપહ હોઈ શકે છે
એ પહેલા કહેવાઈ ગયું છે હવે અર્હન્ અર્થાત્ જિન ભગવાનમાં અગીયાર
પરીપહ હોય છે, અને પ્રરૂપણ કરીએ છીએ--

સમસ્ત ઘાતિ કર્મોંના ક્ષય કરવાવાળા, કેવળજ્ઞાની અર્હન્ત ભગવાન
જિનેશ્વરમાં વેદનીય કર્મોંના સદ્ભાવ હોવાથી તત્ત્વજનિત અગીયાર પરીપહ હોય
છે એ આ મુજબ છે-(૧) ક્ષુધા (૨) પિપાસા (૩) શીત (૪) ઉષ્ણ (૫) દંશમશક
(૬) ચર્યા (૭) શય્યા (૮) વધ (૯) રોગ (૧૦) તૃણસ્પર્શ અને (૧૧) મલ-

આ રીતે ભવસ્થ કેવળીમાં વેદનીય કર્મોંના સદ્ભાવ હોવાથી અને
પરીપહજનક શેષ કર્મ વિદ્યામાન ન હોવાથી, વેદનીય કર્મ જનિત અગીયાર
પરીપહ જ હોઈ શકે છે. તેમાં અને ચૌદમાં ગુણસ્થાનવર્તી સર્વશ
સર્વદશા અને અનન્ત-ચતુષ્ઠી સમ્પન્ન અર્હન્ત જ હકીકતમાં જિન છે. ॥૧૦॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तावत् संवरहेतुतया प्रतिपादितेषु क्षुत्पिपासादि
द्वाविंशति विधेषु परीषहेषु सूक्ष्म साम्परायस्य शमक-क्षपका-ऽन्यतरं संयतस्य,
छद्मस्थवीतरागसंयतस्य च क्षुत्पिपासादयश्चतुर्दश परीषदाः सम्प्रति प्ररूपिताः—
भगवतोऽर्हतो जिनेन्द्रस्य एकादशपरीषदाः सम्भवन्तीति प्ररूपयितुमाह—‘अरि-
हन्ते एगारस परीसहा’ इति, अर्हति-भगवति-तीर्थकृति-भवस्थकेवलनि-
वेदनीय कर्मसद्भावात् तन्निमित्ताः क्षुत्पिपासा शीतोष्णदंशमशकचर्वाशय्या
बध रोग तृणस्पर्श मलरूपा एकादशविधाः परीषदाः सम्भवन्ति । पूर्वोक्तेषु चतु-
र्दशविधेषु प्रज्ञाऽज्ञानऽलाभरूपान् त्रीन् परीषदान् विहाय क्षुत्पिपासादय एकादश
परीषदा भवन्तीतिभावः । ज्ञानावरण-दर्शनावरण-मोहनीयान्तरायेष्वात्यन्तिकं

ग्यारह परीषह ही हो सकते हैं । तेरहवें और चौदहवें गुणस्थानवर्ती
सर्वज्ञ सर्वदर्शी एवं अनन्त चतुष्टय से सम्पन्न अर्हन्त ही
वस्तुतः जिन हैं ॥१०॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले क्षुधा-पिपासा आदि चाईस परीषहों
के जय को संवर का कारण प्रतिपादन किया गया था । अतः उप-
शमक एवं क्षपक सूक्ष्मसम्पराय संयत के तथा छद्मस्थ वीतराग संयत
के क्षुधा पिपासा आदि चौदह परीषहों का सद्भाव बतलाया गया ।
अब यह प्ररूपण करते हैं कि अर्हन्त भगवान् जिन में ग्यारह
परीषहों की सत्ता होती है—

भवस्थकेवली भगवान् अर्हन्त में वेदनीय कर्म का सद्भाव होने
से उसके निमित्त से उत्पन्न होने वाले ग्यारह परीषह हो सकते हैं ।
पहले जो चौदह परीषहों के नामों का उल्लेख किया गया है, उनमें
से प्रज्ञा, अज्ञान और अलाभ, इन तीन परीषहों को छोड़कर क्षुधा
पिपासा आदि ग्यारह परीषह होते हैं ।

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पड़ेला क्षुधा-पिपासा आदि आवीस परीषहोंना
विन्यने संवरना कारण तरीके प्रतिपादित करवामा आवेलुं छे आथी उपशमके
अने क्षपके सूक्ष्मसम्पराय संयतना तथा छद्मस्थ वीतराग संयतना
क्षुधा पिपासा आदि चौद परीषहोंने सद्भाव बताववामा आयेला हवे
ये प्ररूपणा करीये छीये के अर्हन्त भगवान् जिनेश्वरमा अगीयार
परीषहोनी सत्ता डाय छे—

भवस्थ केवली भगवान् अर्हन्तमा वेदनीय कर्मना सद्भाव होवाथी,
तेना निमित्तथी उत्पन्न थनारा अगीयार परीषहु डोछ शके छे. पड़ेला ये चौद
परीषहोना नामेने छेलेथ करवामा आये छे, तेमांथी प्रज्ञा, अज्ञान-अने
अलाभ, आ त्रय परीषहोने छोडीने, क्षुधा पिपासा आदि अगीयार
परीषहु डाय छे.

ક્ષયમુગ્ધાતેષુ ધાતિકર્મસુ સમુત્પન્ન સકલજ્ઞેયપદાર્થાભાસિ કેવલજ્ઞાનાતિશયો
 જિનઃ સ્વલુ કેવલીતિવ્યપદિશ્યતે તથા ચ ત્રયોદશ ચતુર્દશ ગુણસ્થાનયોઃ
 સ્વલુ જિનસ્વમુપપદ્યતે । ઉક્તશ્ચ, વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તૌ ભગવતીસૂત્રે ૮-શ્લોકે
 ૮-ઉદ્દેશકે ૩૪૩ સૂત્રે-‘અગવિહવંધગસ્સ પં ભંતે ! સયોગિ ભવસ્થકેવલિ-
 સ્સ કતિ પરીસહા પળ્લન્તા ? ગોયમા ! એકારસ પરીસહા પળ્લન્તા, નવ
 પુળવેદેહ, સેસં જહા છન્વિહવંધગસ્સ, અયંધગસ્સ પં ભંતે ! અયોગિ
 ભવસ્થ કેવલિસ્સ કતિ પરીસહા પળ્લન્તા ? ગોયમા ! એકારસ પરીસહા
 પળ્લન્તા, નવ પુળ વેદેહ, જં સમયં સીયપરીસહં વેદેહ નો તં સમયં
 ઉસિણપરીસહં વેદેહ, રેવાદો નો તં સમયં સીયપરીસહં વેદેહ, જં સમયં
 ચરિયાપરીસહં વેદેહ નો તં સમયં સેજ્જા પરિસહં વેદેહ જં સમયં સેજ્જા
 પરિસહં વેદેહ નો તં સમયં ચરિયાપરીસહં વેદેહ-’ ઇતિ એકવિધ વન્ધકસ્ય
 સ્વલુ મદન્ત-! સયોગિ ભવસ્થકેવલિનઃ વતિ પરીપદાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, ગૌતમ ! એકા-
 દશપરીપદાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ નવ પુનર્વેદયતિ શેપં યથા પઠ્ઠવિધવન્ધકસ્ય, અવન્ધકસ્ય
 સ્વલુ મદન્ત-! અયોગિ ભવસ્થકેવલિનઃ કતિ પરીપદાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ-? ગૌતમ ! એકા-

જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ, મોહનીય ઓર અન્તરાય, હન ચાર
 ધાતિયા કર્મોં કા ક્ષય હો જાને પર જિસે સમસ્ત પદાર્થોં કો જાનને
 વાલે કેવલજ્ઞાન કા અતિશય પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ, વહ જિન કેવલી કહ-
 લાતા હૈ । તેરહવે ઓર ચૌદહવેં ગુણસ્થાનવર્તીં હી કેવલી જિન કહ-
 લાતે હૈ । ભગવતીસૂત્ર શતક ૮, ઉદ્દેશક ૮ મેં કહા હૈ-

‘ભગવન્ ! સયોગી ભવસ્થકેવલી કો કિતને પરીપદ કહે હૈ ?

‘ગૌતમ ! ગ્યારહ પરીપદ કહે હૈ, ડનમેં સે નૌ કા વેદન હોતા હૈ,
 શેષ કથન ડમી પ્રકાર સમજના ચાહિયે જૈસે છહ પ્રકાર કા કર્મ
 બંધને વાલે કો વિષય મેં કહા હૈ.’

જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ, મોહનીય અને અન્તરાય, એ ચાર ધાતિ
 કર્મોંના ક્ષય થઈ જવાથી, જેને સમસ્ત પદાર્થોંને જાણનાર એવા કેવલજ્ઞાનને
 અતિશય પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. તે જિન-કેવળી કહેવાય છે. તેરમાં અને
 ચૌદમાં ગુણસ્થાનવર્તીં જ કેવળી જિન કહેવાય છે. ભગવતીસૂત્ર શતક ૮,
 ઉદ્દેશક ૮માં કહ્યું છે-

‘ભગવન્ ! સયોગી ભવસ્થ કેવળીના કેટલા પરીપદ કહ્યાં છે ?

‘ગૌતમ ! અગીયાર પરીપદ કહેવામાં આવ્યા છે એમાંથી નવનું વેદન
 થાય છે, શેષ કથન તે જ રીતે સમજવાનું છે, જે છ પ્રકારનાં કર્મોં અથ-
 વાનાંના વિષયમાં કહેવામાં આવ્યું છે’

દીપિકા-નિર્યુક્તિ ટીકા અ. ૭ હ. ૧૧ બાદરસંપરાયે સર્વપરીષદસદ્ભાવઃ ૨૨૫

દશ પરીષદાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, નવ પુનર્વેદયતિ ચં સમયં શીતપરીષદં વેદયતિ નો ત સમયમ્
ઉષ્ણપરીષદં વેદયતિ, ચં સમયં ઉષ્ણપરીષદં વેદયતિ નો તં સમયં શીતપરીષદં
વેદયતિ, ચં સમયં ચર્યા પરીષદં વેદયતિ નો તં સમયં શય્યા પરીષદં વેદયતિ, ચં
સમયં શય્યા પરીષદ વેદયતિ, નો તં સમયં ચર્યાપરીષદં વેદયતિ इति ॥૧૦॥

મૂલમ્—સઘ્વે પરીસહા બાદરસંપરાય ॥૧૧॥

છાયા—‘સર્વે પરીષદાઃ બાદર સમ્પરાયે ॥૧૧॥

‘ભગવન્ ! કર્મ બંધ છે રહિત અયોગી અવસ્થાકેવલી કો કિતને
પરીષદ કહે ગયે છે ?’

‘ગૌતમ ! ગ્યારહ પરીષદ કહે ગયે છે, અને તે એક સાથ નો કા
વેદન કરતા હૈ, કયો કિ જિસ સમય શીત કી વેદના હોતી હૈ उस
સમય ઉષ્ણવેદના નહીં હોતી જિસ સમય ઉષ્ણવેદના હોતી હૈ उस
સમય શીતવેદના નહીં હો સકતી । इसी प्रकार जिस समय चर्या पारी-
षद का वेदन करता है उस समय शय्यापरीषद का वेदन नहीं करता
और जिस समय शय्या पारीषद का वेदन करता है उस समय चर्या
परीषद का नहीं करता ।

इस प्रकार ग्यारह पारीषदों में से, एक ही समय में एक साथ नौ
पारीषदों का ही वेदन हो सकता है ॥१०॥

‘સઘ્વે પરીસહાબાદર’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—બાદર સામ્પરાય કો સઘી પરીષદ હોતો હૈ ॥૧૧॥

‘ભગવન્ ! કર્મબંધનથી રહિત અયોગી અવસ્થા કેવળીને—કેટલા પરીષદ
કહેવામાં આવ્યા છે ?

‘ગૌતમ ! અગીયાર પરીષદ કહેવામાં આવ્યા છે, તેમાંથી એકી સાથે
નવનું વેદન થાય છે. કારણ કે જ્યારે ઠંડીની વેદના થાય છે ત્યારે ઉષ્ણ-
વેદના થતી નથી, જ્યારે ઉષ્ણવેદના થાય છે ત્યારે શીતવેદના થઈ શકતી
નથી. એવી જ રીતે જ્યારે ચર્યા પરીષદની વેદના અનુભવે છે તે સમયે
શય્યા પરીષદનું વેદન થતું નથી અને જ્યારે શય્યા પરીષદનું વેદન કરે છે
ત્યારે ચર્યાપરીષદ હોતો નથી.

આ રીતે અગીયાર પરીષદોમાંથી, એક જ સમયમાં એકી સાથે નવ
પરીષદોનું જ વેદન થઈ શકે છે ॥૧૦॥

‘સઘ્વે પરીસહા બાદરસંપરાય ।

સૂત્રાર્થ—બાદર સામ્પરાયને બધાં પરીષદ હોય છે. ॥૧૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા=પૂર્વસૂત્રે-તીર્થદ્વારે ભવસ્યકેવલજ્ઞાનિનિ જ્ઞાનાવરણદર્શના-
 વરણ-મોહનીયા-અન્તરાયરૂપઘાતિકર્મચતુષ્ટયસ્ય નિરસ્તૃતયા કેવલં વેદનીયકર્મ-
 સદ્ભાવાત્ તન્નિમિત્તકા ક્ષુત્પિપાસાદયઃ એકાદશ પરીપહાઃ પ્રરૂપિતાઃ, એવં-સૂક્ષ્મ-
 સામ્પરાયાદિષુ વ્યસ્તરૂપેણ ક્ષુત્પિપાસાદયઃ પરીપહાઃ યથાયથં ક્વચિચ્ચતુર્દશક્વ-
 ચિદેકાદશ, इत्येवं રીત્યા પ્રરૂપિતાશ્ચ સમ્પ્રતિ-સમસ્તરૂપેણ તાન દ્વાવિંશતિ વિધાન્
 પરીપહાન્ એકત્રૈવ વર્તમાનાન્ પ્રરૂપયિતુમાદ-‘સર્વે પરીપહા સંપરાયે-’ ઇતિ ।
 વાદરસમ્પરાયે-વાદરઃ-સ્થૂલઃ, સમ્પરાયઃ-કષાયઃ ક્રોધ માન માયા લોમાદિરૂપો
 યસ્મિન્ ગુણસ્થાને તદ્-વાદર સમ્પરાયમ્, તદ્ધોગાત્-શ્રમણોઽપિ વાદરસમ્પરાય
 શબ્દેન વ્યપદિશ્યતે, તસ્મિન્ સ્થૂલ વાદરસમ્પરાયે સ્થૂલ ક્રોધાદિકષાયસહિતે
 સંયતે મુનો સર્વે-સમસ્તઃ ક્ષુત્પિપાસાદયો દ્વાવિંશતિ સંખ્યકાઃ પરીપહા ભવન્તિ ।

તત્ત્વાર્થદીપિકા—ભવસ્ય કેવલ જ્ઞાની અર્હન્ત ભગવાન્ મેં જ્ઞાના-
 વરણ, દર્શનાવરણ, મોહનીય ઓર અન્તરાય, હન ચાર ઘાતિક કર્મો
 કા અભાવ હો જાને કે કારણ સિર્ફ વેદનીય કર્મ કે નિમિત્ત સે ઉત્પન્ન
 હોને વાલે ક્ષુધા પિપાસા આદિ ગ્યારહ પરીપહ હી હોતે હૈં । इसी प्रकार
 सूक्ष्मसाम्पराय आदि पृथक्-पृथक् रूप से क्षुधा पिपासा आदि परीपह
 यथायोग्य कहीं चौदह और कहीं ग्यारह होते हैं, यह पूर्वसूत्रों में
 प्रतिपादन किया जा चुका है, अब वादर कषायवाले श्रमणों में सभी
 परीपह हो सकते हैं, यह प्रतिपादन करते हैं-

जिसमें वादर कषाय विद्यमान हो उसे वादरसम्पराय कहते हैं ।
 इस प्रकार जिन श्रमणों में स्थूल क्रोध आदि कषाय विद्यमान हैं, ऐसे
 संयतों को क्षुधा पिपासा आदि सभी अर्थात् चाईस ही परीपह हो
 सकते हैं । यहां ‘वादरसम्पराय’ शब्द से केवल नौ वे गुणस्थान का

तत्त્વાર્थદીપિકા—ભવસ્ય કેવળજ્ઞાની અર્હન્ત ભગવાન્માં જ્ઞાનાવરણ,
 દર્શનાવરણ મોહનીય અને અન્તરાય, એ ચાર ઘાતિક કર્મોના અભાવ થઈ
 જવાના કારણે માત્ર વેદનીય કર્મના નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થનારા ક્ષુધા-પિપાસા
 આદિ અગીયાર પરીપહ જ હોય છે એવી જ રીતે સૂક્ષ્મસામ્પરાય આદિમાં
 પૃથક્-પૃથક્ રૂપથી ક્ષુધા પિપાસા આદિ પરીપહ યથાયોગ્ય કોઈ ઠેકાણે ચૌદ
 તે કોઈ ઠેકાણે-અગીયાર હોય છે એવી અરૂણા પૂર્વસૂત્રમાં થઈ ગઈ છે.
 હવે વાદર કષાયવાળા શ્રમણોમાં બધાં પરીપહો હોઈ શકે છે એવું
 પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

જેમાં વાદર કષાય વિદ્યમાન છે, તેને વાદર સમ્પરાય કહે છે આ રીતે
 જે શ્રમણોમાં સ્થૂળ ક્રોધ આદિ કષાય વિદ્યમાન છે એવા સંયતોને ક્ષુધા
 પિપાસા આદિ બધાં જ અર્થાત્ બાવીસે બાવીસ પરીપહ હોઈ શકે છે. અહીં
 ‘વાદરસમ્પરાય’ શબ્દથી કેવળ નવમાં ગુણસ્થાનને જ શરૂ કરવું જોઈએ

तत्र-बादरसम्परायग्रहणेन न केवलं नवममेव गुणस्थानं ग्रहीतव्यम्, अपितु-
अर्थनिर्देशसामर्थ्यात् प्रमत्तसंयताऽप्रमत्तसंयतापूर्वकरणाऽनिवृत्तिकरणगुणस्थान-
चतुष्टयं संग्राह्यम् । तथा च-प्रमत्तसंयतादिषु अजीर्ण क्रोधादि कषाय
दोषत्वात् क्षुत्पिपासादयः सर्वे परीषहाः सम्भवन्ति । एवञ्च-सामायिक छेदो-
पस्थापनीयपरिहारविशुद्धि संयमेषु खलु चारित्र्यलक्षणेषु प्रत्येकं सर्वेषामपि
क्षुत् पिपासादीनां सम्भवोऽवगन्तव्यः ॥११॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वं तावत्-यथायथं सूक्ष्मसाम्परायेषु व्यस्ताः क्षुत्पि
पासादयः परीषहाः प्रतिपादिताः सम्पत्ति-बादरसम्परायेषु स्थूल क्रोधादि
कषाययुक्तेषु प्रमत्तसंयतादिषु एकत्रैव समस्तरूपेण द्वाविंशतिविधानं तान्
परीषदान् प्ररूपयितुमाह-‘सर्वे परीषहा बादरसंपराए’ इति । बादरसम्पराये
बादरः-स्थूलः सम्परायः क्रोधमानमायादि कषायोदयो यस्य तस्मिन्-बादर

ही ग्रहण नहीं करना चाहिए किन्तु अर्थ निर्देश के अनुसार प्रमत्त-
संयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्व करण और अनिवृत्तिकरण नामक चार
गुणस्थान वाले संयतों का ग्रहण करना चाहिए । इन चारों गुणस्थानों
में बादर संज्वलन कषाय का सद्भाव रहता है । अतएव उनको क्षुधा
पिपासा आदि सभी परीषह हो सकते हैं । इस प्रकार सामायिक,
छेदोपस्थापन और परिहार विशुद्धि चारित्र्य वालों में सभी परीषहों
का सद्भाव समझना चाहिए ॥११॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पहले सूक्ष्मसम्पराय आदि में क्षुधा पिपासा
आदि असमस्त परीषहों का प्रतिपादन किया गया, अब बादर सम्प-
राय अर्थात् स्थूल क्रोध आदि कषायों से युक्त प्रमत्तसंयत आदि में
सभी-बाईसों-परीषहों का विधान करते हैं-

नहीं परन्तु अर्थनिर्देश अनुसार प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्वकरण-
अने अनिवृत्तिकरण नामका चार गुणस्थानवाला संयतों अङ्ग करवुं
लोछो. आ आदि गुणस्थानोंमां बादर संज्वलन-कषयनो सद्भाव रहे छे
आथी तेमने क्षुधा पिपासा आदि जधां ज परीषह थछे शके छे. आथी
सामायिक छेदोपस्थापन अने परिहार विशुद्धि चारित्र्यवालाओंमां जधां
परीषहोना सद्भाव समजवे. ॥११॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पडेलासूक्ष्मसम्पराय आदिमां क्षुधा पिपासा आदि
असमस्त परीषहोनुं प्रतिपादन करवामां आओयुं, हवे बादर सम्पराय
अर्थात् स्थूल क्रोध आदि कषायोथी युक्त प्रमत्तसंयत आदिमां जधां जानीस
परीषहोनुं विधान करीओ छीओ॥

સમ્પરાયે ન કેવલ નવયગુણસ્થાનકે, અપિતુ પ્રમત્તસંયતા-ડમત્તસંયતા-
 ડપૂર્વકરણા-ડનિવૃત્તિકરણગુણસ્થાનચરુદૃષ્ટ્યવર્તિનિ સ્થૂલક્રોધાદિકષાયયુક્તે
 મુનો-અક્ષીણકષાયદોષત્વાત્ સર્વે ક્ષુત્પિપાસા શીતોષ્ણદંશમશકાઞ્ચેલાડરતિ
 સ્ત્રીચર્ચા નિષઘ્ના શય્યા-ડક્રોશ વધ યાચનાડલાભ રોગ-તૃણ સ્પર્શમલસત્કાર
 પુરસ્કારપ્રજ્ઞા-ડજ્ઞાનદર્શનરૂપા દ્વાવિંશતિપરીપહાઃ સમ્મચન્તિ । તત્ર-વાદર
 સમ્પરાયઃ સ્વલુ સ્થૂલક્રોધાદિકષાયસહિતઃ કચિત્ સંયતો મોહનીયકર્મ પ્રકૃતી
 રૂપશમયતીતિ ઉપશમકો ભવતિ, પુનઃચ કચિત્ તથાવિધ મોહપ્રકૃતીઃ ક્ષપયતીતિ
 ક્ષપકો ભવતિ, તેષુ સ્વલુ વાદરસમ્પરાયેષુ પ્રમત્તસંયતાદિષુ સર્વેષામેવ પરીપહ-

જિજ્ઞસે વાદર સમ્પરાય અર્થાત્ સ્થૂલ કષાય વિદ્યમાન હૈ, ઉસકો
 સમી પરીપહ હોતે હૈ । યદાં 'વાદર સમ્પરાય' શબ્દ સે નૌ વાંગુણસ્થાન
 હી અમીષ્ટ નહીં હૈ કિન્તુ પ્રમત્તસંયત, અપૂર્વ-કરણ ઓર અનિવૃત્તિ-
 કરણ નામક ચાર ગુણસ્થાનવાલે મુનિ યદૃણ ક્રિયે ગયે હૈ, કયોં કિ
 ઉન સમી મેં વાદર સંજ્વલન કષાય વિદ્યમાન નહતા હૈ । ઇન મુનિયોં
 કે વાદર કષાય કા ક્ષય યા ઉપશમ ન હોને સે સમી-ક્ષુધા, પિપાસા,
 શીત, ઉષ્ણ, દંશમશક, અચેલ, અરતિ, ત્રી, ચર્ચા, નિષઘ્ના, શય્યા,
 આક્રોશ, વધ, યાચના, અલાભ, રોગ, તૃણસ્પર્શ, મલ, સત્કાર પુરસ્કાર,
 પ્રજ્ઞા, અજ્ઞાન ઓર દર્શન, પરીપહ હો સકતે હૈ । વાદર કષાય વાલા કોઈ
 સંયત મોહનીય કર્મ કી પ્રવૃત્તિયોં કા ઉપશમ કરતા હૈ । વહ ઉપશમક
 કહલાતા હૈ । કોઈ સંયત ઉન મોહનીય પ્રવૃત્તિયોં કા ક્ષય કરતા હૈ ।
 ઉસે ક્ષપક કહતે હૈ । ઇન પ્રમત્તસંયત આદિ વાદર કષાય વાલોં મેં

જેમાં વાદર સમ્પરાય અર્થાત્ સ્થૂળ કષાય વિદ્યમાન છે, તેને બધાં જ
 પરીપહ હોય છે. અહીં 'વાદરસમ્પરાય' શબ્દથી નવમું ગુણસ્થાન જ
 અભિપ્રેત નથી, પરન્તુ પ્રમત્તસંયત, અપ્રમત્તસંયત, અપૂર્વકરણ અને અનિ-
 વૃત્તિકરણ નામના ચાર ગુણસ્થાનવાળા મુનિ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે, કારણ
 કે તે બધામાં બદર સંજ્વલન કષાય વિદ્યમાન ગહે છે. આ મુનિઓના બાદર
 કષાયના ક્ષય અથવા ઉપશમ ન હોવાથી બધા-ક્ષુધા, પિપાસા, શીત, ઉષ્ણ,
 દંશમશક, અચેલ, અરતિ, સ્ત્રી, ચર્ચા, નિષઘ્ના, શય્યા, આક્રોશ, વધ, યાચના,
 અલાભ, રોગ, તૃણસ્પર્શ, મલ, સત્કાર-પુરસ્કાર, પ્રજ્ઞા, અજ્ઞાન અને દર્શન
 પરીપહ હોઈ શકે છે. વાદર કષાયવાળો કોઈ સંયત મોહનીય કર્મની પ્રવૃત્તિઓના
 ઉપશમ કરે છે તે ઉપશમક કહેવાય છે. કોઈ સંયત તે મોહનીય પ્રવૃત્તિ-
 ઓના ક્ષય કરે છે તેને ક્ષપક કહે છે આ પ્રમત્ત સંયત વગેરે વાદર કષાય-

कारणानां ज्ञानावरणाद्यन्तरायपर्यन्तकर्मणाम्-उदय सम्भवात् तेषु प्रत्येकं सर्वेषां द्वाविंशति क्षुत्पिपासादि परीषहाणां सद्भावसंभावना बोध्याः ।

उक्तञ्च व्याख्याप्रज्ञप्तौ भगवतीसूत्रे ८-शतके ८-उद्देशके ३४३-सूत्रे 'सत्तविह्वंधगस्स भंते । कति परीसहा पणत्ता-'गोयमा-। बावीसं परीसहा पणत्ता' ! बीसं पुण वेदेह, जं समयं सीय-परीसहं वेदेह-णो तं समयं उस्सिणपरीसहं वेदेह, जं समयं उस्सिणपरीसहं वेदेह-णो तं समयं सीय परीसहं वेदेह, जं समयं चरिया परीसहं वेदेह-णो तं समयं निसीहिया परीसहं वेदेह, जं समयं निसीहिया परीसहं वेदेह-णो तं समयं चरिया परीसहं वेदेह, अट्ठविध बंधगस्स णं भंते । कति परीसहा पणत्ता-'गोयमा-'बावीसं परीसहा पणत्ता' सप्तविध बन्धकस्य खलु भदन्त-। कति परीषहाः प्रज्ञप्ता ? गौतम ! द्वाविंशतिः परीषहाः प्रज्ञप्ताः त्रिंशतिं पुनर्वेदयति, यं समयम् शीतपरीषहं वेदयति-णो तं समयम् उष्णपरीषहं वेदयति, यं समयम् उष्णपरीषहं वेदयति-णो तं समयं शीतपरीषहं वेदयति यं समयं चर्यापरीषहं वेदयति-णो तं समयं

ज्ञानावरण से लेकर अंतरायकर्म तक सभी परीषहों के कारण विद्यमान होते हैं, अतएव उनमें से प्रत्येक के बाईसों परीषह हो सकते हैं ।

भगवतीसूत्र के शतक ८, उद्देश ८, में कहा है-'भगवन् ! सात कर्मप्रकृतियों का बन्ध करने वाले को कितने परीषह कहे गए हैं ?'

'गौतम ! बाईस परीषह कहे गए हैं । उनमें से एक साथ बीस का वेदन हो सकता है, क्योंकि जिस समय शीतपरीषह वेदा जाता है, उस समय उष्णपरीषह नहीं वेदा जा सकता और जिस समय उष्णपरीषह वेदा जाता है उस समय शीतपरीषह नहीं वेदा जा सकता । इसी प्रकार जिस समय चर्या परीषह का वेदन होता है उस

वाणाओंमां, ज्ञानावरणुथी लधने अन्तराय कर्म सुधी अधा परीषडोना कारणु डावर डोय छे आथी तेमनामांथी प्रत्येकना आवीस परीषडो डोय शके छे,

भगवतीसूत्रना शतक ८, उद्देशक ८, मां डलुं छे-भगवन् ! सात कर्मप्रकृतिओ आंधनाराना डेटला परीषड कडेवामां आन्या छे ? उत्तर- "गौतम ! आवीस परीषड कडेवामां आन्या छे-तेमांथी ओकी साथे बीसनु' वेदन थड शके छे, कारणु के जे समये शीतपरीषड अनुलवाय छे ते समये उष्णपरीषड अनुलवी शकाते नथी अने ज्यारे उष्णपरीषड अनुलवाय छे त्यारे शीतपरीषड अनुलवी शकाते नथी, आवी ज रीते ज्यारे चर्यापरीषड

નિષઘ્નાપરીષદં વેદયતિ, યં સમયં નિષઘ્ના પરીષદં વેદયતિ—નો તં સમયં ચર્યા પરીષદં વેદયતિ, ગૌતમ ! દ્વાવિંશતિ પરીષદાઃ પ્રજ્ઞાઃ ? ॥૧૧॥

મૂલમ્—જ્ઞાનાવરણિજ્ઞોદય પળના અળનાળ પરીસહા ॥૧૨॥

છાયા-જ્ઞાનાવરણીયોદયે પ્રજ્ઞા-જ્ઞાનપરીષદો—' ॥૧૨

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ તાવત્-વાદરસમ્પરાયે સ્થૂલક્રોધાદિકપાયયુક્તે પ્રમત્તસંયતાદૌ સ્વલુ ક્ષુત્પિપાસાદયો દ્વાવિંશતિઃ પરીષદા ભવન્તીતિ પ્રતિપાદિતમ્ સમ્પત્તિ-જ્ઞાનાવરણયુક્તે સંયતે પ્રજ્ઞાપરીષદા-જ્ઞાનપરીષદો ભવત્ इति પ્રતિપાદ-

સમય નિષઘ્ના પરીષદ્ કા વેદન નહીં હો સકતા ઓર જિસ સમય નિષઘ્નાપરીષદ્ કા વેદન હોતા હૈ ઉસ સમય ચર્યાપરીષદ્ કા વેદન નહીં હો સકતા ।

‘ભગવન્ ! આઠો કર્મપ્રકૃતિયો’ કા ચન્ધ્ર કરને વાલે કો કિતને પરીષદ્ કહે ગયે હૈ ?’ ‘ગૌતમ ! વાર્દસ પરીષદ્ કહે ગયે હૈ’ ॥૧૧॥

‘જ્ઞાનાવરણિજ્ઞોદય પળના’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે હોને પર પ્રજ્ઞા ઓર અજ્ઞાન પરીષદ્ હોતે હૈ ॥૧૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે યતલાયા જા ચુકા હૈ કિ ષાદર કપાયવાલે પ્રમત્તસંયત આદિ મેં ક્ષુધા પિપાસા આદિ વાર્દસોં પરીષદ્ હોતે હૈ । અથ કૌન સા પરીષદ્ કિસ કર્મ કે નિમિત્ત સે હોના હૈ, યહ પ્રતિ-

હોય ત્યારે નિષઘ્નાપરીષદ્ હોઈ શકે નહીં એવી જ રીતે નિષઘ્નાપરીષદ્ અનુભવાય ત્યારે ચર્યાપરીષદ્ની ગેરહાજરી હોય છે.

‘લગવન્ ! આઠે કર્મપ્રકૃતિઓ બાંધનારને કેટલા પરીષદ્ કહેવામાં આવ્યા છે ?’ ગૌતમ ! બારીસ પરીષદ્ કહેવામાં આવ્યા છે ॥૧૧॥

‘જ્ઞાનાવરણિજ્ઞોદય’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—જ્ઞાનાવરણ કર્મ હોય ત્યારે પ્રજ્ઞા અને અજ્ઞાનપરીષદ્ હોય છે ॥૧૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—આની અગાઉ કહેવાઈ ગયું છે કે બાદર કપાયવાળા પ્રમત્તસંયત આદિમાં ક્ષુધા પિપાસા વગેરે બાવીસે—બારીસ પરીષદ્ હોય છે. હવે કયો પરીષદ્ કયા કર્મના નિમિત્તથી થાય છે, એ પ્રતિપાદન કરીતા થકા સર્વપ્રથમ જ્ઞાનાવરણ કર્મના નિમિત્તથી થનારા પરીષદોનું વર્ણન કરીએ છીએ—

यितुमाह—‘णाणावरणिज्जोदए पण्णा-अण्णाण परीसहा-’ इति, ज्ञानावरणीयोदये ज्ञानावरणीये कर्मणि सति मुनेः प्रज्ञाऽज्ञानपरीषद्वौ भवतः ॥१२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं खलु-स्थूल क्रोधादिकषाययुक्ते बादरसम्पराये प्रमत्तसंयतादौ क्षुत्पिपासादयो द्वाविंशतिः परीषदा भवन्तीति प्रतिपादितम्, सम्प्रति-ज्ञानावरणविशिष्टे मुनौ प्रज्ञा-ऽज्ञानपरीषद्वौ भवत इति प्रतिपादयितुमाह—‘णाणावरणिज्जोदए पण्णा-अण्णाण परीसहा-’ इति, ज्ञानावरणीयोदये-ज्ञानस्या-ऽऽवरणं ज्ञानावरणम् तस्योदये ज्ञानावरणीये कर्मणि सति प्रज्ञाऽज्ञानपरीषद्वौ, प्रज्ञापरीषद्वो-ऽज्ञान परीषद्वश्च सम्भवतः एवञ्च-ज्ञानावरणीय कर्मोदये सति प्रज्ञाऽज्ञानपरीषद्वौ भवतः । तथा चोक्तम्—व्याख्याप्रज्ञप्तौ श्री-

पादन करते हुए सर्व प्रथम ज्ञानावरण कर्म के निमित्त से होने वाले परीषद्वों का वर्णन करते हैं—

ज्ञानावरणीय कर्म के निमित्त से प्रज्ञा और अज्ञान परीषद्व उत्पन्न होते हैं अर्थात् ज्ञानावरण कर्म की सत्ता होने पर मुनि को उक्त दो परीषद्व होते हैं ॥१२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले यह प्रतिपादन किया गया है कि बादर सम्पराय अर्थात् स्थूल कषायवाले प्रमत्तसंयत आदि में क्षुधा पिपासा आदि चाईस परीषद्व होते हैं, अब किस कर्म के निमित्त से कौन-कौन से परीषद्व होते हैं, यह बतलाते हैं और अनुक्रम में सर्व प्रथम ज्ञानावरण कर्म जनित परीषद्वों का उल्लेख करते हैं—

ज्ञानावरणीय कर्म के निमित्त से प्रज्ञा और अज्ञान परीषद्व उत्पन्न होते हैं । ज्ञान के आवरण को ज्ञानावरण कहते हैं, उस की विद्यमानता में अर्थात् ज्ञानावरण के होने पर प्रज्ञा और अज्ञान परी-

ज्ञानावरणीय कर्मना निमित्तथी प्रज्ञा अने अज्ञानपरीषद्व उत्पन्न थाय्ये, अर्थात् ज्ञानावरण कर्मना प्रभाव डोवाथी मुनिने उक्त ये परीषद्व डोय्ये ॥१२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले ये प्रतिपादन करवाभां आठ्युं के बादर सम्पराय अर्थात् स्थूल कषायवाणा प्रमत्तसंयत वगेरेभां क्षुधा पिपासा वगेरे आवीस परीषद्व डोय्ये, हवे क्या कर्मना निमित्तथी क्या-क्या परीषद्व थाय्ये ये बतावीये छीये अने अनुक्रमभां सर्वप्रथम ज्ञानावरण कर्म जनित परीषद्वोने उल्लेख करीये छीये—

ज्ञानावरणीय कर्मना निमित्तथी प्रज्ञा अने अज्ञान परीषद्व उत्पन्न थाय्ये, ज्ञानना आवरणने ज्ञानावरण कहे छे, तेनी विद्यमानताभां अर्थात्

મગવતીસૂત્રે ૮=શતકે ૮-ઉદ્દેશકે-‘નાનાવરણિજ્જે પં ભંતે ? વ.મ્મે કહ-
પરિસહા સમોચરંતિ-? ગોદમા-! દો પરીસહા સમોચરંતિ, તં જહા-
પજ્ઞાપરીસહે નાનપરીસહે ય’-इति. જ્ઞાનાવરણીયે સ્વલુ મદન્ત-! કર્મણિ કતિ
પરીપહાઃ સમુદીર્યન્તે-? ગૌતમ-! દ્વૌ પરીપદૌ સમુદીર્યન્તે, તચ્ચથા-પ્રજ્ઞાપરીપદો-
જ્ઞાનપરીપદથેતિ । અયમેનાજ્ઞાનપરીપદત્વેન સર્વત્ર વ્યવહિયતે ॥૧૨॥

મૂલમ્-દંસણમોહણિજ્જાલાભંતરાણસુ દંસણાલાભા પરીસહા ॥૧૩॥

છાયા-દર્શન મોહનીયલાભાન્તરાયયો દર્શનાલાભૌ પરીપદૌ ॥૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્રે જ્ઞાનાવરણયુક્તે મુનૌ પ્રજ્ઞાજ્ઞાનપરીપદૌ પ્રરૂપિતૌ
સમ્પ્રતિ-દર્શનમોહનીયાન્તરાયવતિ સંયતે શ્રમણે-દર્શનાલાભપરીપદૌ પ્રરૂપયિતુ-
માહ-‘દંસણમોહણિજ્જ લાભંતરાણસુ દંસણાલાભપરીસહા-’इति, દર્શન
મોહનીય લાભાન્તરાયયોઃ-દર્શનમોહનીય કર્મણિ. લાભાન્તરાયકર્મણિ ચ યથા

પદ્ધ હોતે હૈં । શ્રીમગવતીસૂત્ર કે આઠવેં શતક કે ઉદ્દેશક આઠવેં
મેં કહા હૈ-

પ્રશ્ન-મગવન્ ! જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે હોને પર-કિતને પરીપદ્ધ હોતે હૈં ?

ઉત્તર-ગૌતમ ! દો પરીપદ્ધ હોતે હૈં-પ્રજ્ઞાપરીપદ્ધ ઓર જ્ઞાનપરીપદ્ધ ।

પદ્ધ જ્ઞાનપરીપદ્ધ હી અન્યત્ર અજ્ઞાનપરીપદ્ધ કહલાતા હૈ ॥૧૨॥

‘દંસણ મોહણિજ્જ’ ઇત્યાદિ ।

દર્શન મોહનીય ઓર લાભાન્તરાય કર્મ કે નિમિત્ત સે દર્શન
પરીપદ્ધ ઓર અલાભ પરીપદ્ધ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ॥૧૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા--પૂર્વ સૂત્ર મેં જ્ઞાનાવરણ કે ઉદય સે સંયમી મુનિ
મેં પ્રજ્ઞા ઓર અજ્ઞાન નામક દો પરીપદ્ધોં કા પ્રરૂપણ ક્રિયા ગયા, અબ
દર્શનમોહ ઓર અન્તરાય કર્મ કે ઉદય સે શ્રમણ મેં દર્શન ઓર

જ્ઞાનાવરણ હોવાથી પ્રજ્ઞા અને અજ્ઞાનપરીપદ્ધ થાય છે. મગવતીસૂત્રના આઠમાં
શતકના આઠમાં ઉદ્દેશકમાં કહેવામાં આવ્યું છે-

પ્રશ્ન-મગવન્ ! જ્ઞાનાવરણ કર્મ હોય ત્યારે કેટલા પરીપદ્ધ હોય છે ?

ઉત્તર-બે પરીપદ્ધ હોય છે પ્રજ્ઞાપરીપદ્ધ અને જ્ઞાનપરીપદ્ધ આ જ્ઞાન-
પરીપદ્ધ જ અન્યત્ર અજ્ઞાનપરીપદ્ધ કહેવાય છે. ॥૧૨॥

‘દંસણ મોહણિજ્જા’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-દર્શનમોહનીય અને લાભાન્તરાય કર્મના નિમિત્તથી દર્શન
પરીપદ્ધ અને અજ્ઞાનપરીપદ્ધ ઉત્પન્ન થાય છે. ॥૧૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્રમાં જ્ઞાનાવરણના ઉદયથી સંયમી મુનિમાં
પ્રજ્ઞા અને અજ્ઞાન નામના બે પરીપદ્ધોનું પ્રરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે
દર્શનમોહ અને અન્તરાય કર્મના ઉદયથી શ્રમણમાં દર્શન તેમજ અજ્ઞાન

સંખ્યં દર્શનાલાભપરીષદી દર્શનપરીષદઃ—અલાભપરીષદશ્ચ અવતઃ । તત્ર-દર્શનમોહનીયકર્મવતિ સંયતે મુતૌ દર્શનપરીષદઃ સોઢવ્યો અવતિ । એવશ્ચ-દર્શનમોહનીય કર્મપ્રકૃતેઃ—લાભાન્તરાય કર્મપ્રકૃતેશ્ચ, ક્રમશઃ દર્શનપરીષદઃ અલાભપરીષદશ્ચ કાર્યોઽવગમન્તવ્યઃ । એતાવતા-દર્શનમોહનીય કર્મણા દર્શનપરીષદઃ, લાભાન્તરાય કર્મણાચાલાભપરીષદો જન્યતે इति ફલિતમ્ ॥૧૩॥

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિ—પૂર્વે તાત્પર્ય-જ્ઞાનાવરણીયકર્મણા પ્રજ્ઞાઽજ્ઞાનપરીષદ દ્વયં જન્યતે, इति પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પ્રતિ દર્શનમોહનીય કર્મણા લાભાન્તરાયકર્મણા

અલાભ પરીષદોં કે હોને કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—

દર્શનમોહનીય ઔર લાભાન્તરાય કર્મ કે નિમિત્ત સે દર્શન ઔર અલાભ પરીષદ હોતે હૈં અર્થાત્ દર્શનમોહનીય કર્મ ઔર અન્તરાય કર્મ કે હોને પર યથાક્રમ દર્શન ઔર અલાભ પરીષદ હોતે હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ દર્શનમોહનીય કર્મ વાલે સંયત કો દર્શનપરીષદ ઔર લાભાન્તરાયકર્મવાલે શ્રમણ કો અલાભપરીષદ હોતા હૈ । હસ પ્રકાર દર્શનપરીષદ દર્શનમોહનીય કા કાર્ય હૈ ઔર અલાભપરીષદ લાભાન્તરાય કા કાર્ય હૈ । ફલિતાર્થ યહ હૈ કિ દર્શનમોહ કર્મ સે દર્શનપરીષદ ઔર લાભાન્તરાય કર્મ સે અલાભ પરીષદ કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ ॥૧૩॥

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિ--પહલે પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા હૈ કિ જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે નિમિત્ત સે પ્રજ્ઞા ઔર અજ્ઞાન પરીષદોં કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ, અથ દર્શનમોહનીય કર્મ સે ઔર લાભાન્તરાય કર્મ સે ક્રમશઃ દર્શનપરીષદ ઔર અલાભપરીષદ ઉત્પન્ન હોતે હૈ, યહ પ્રતિપાદન કરતે હૈ—

પરીષદો હોવાનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ—

દર્શનમોહનીય અને લાભાન્તરાય કર્મના નિમિત્તથી દર્શન અને અલાભપરીષદ થાય છે અર્થાત્ દર્શનમોહનીય કર્મ અને અન્તરાય કર્મની હાજરી હોવાથી યથાક્રમ દર્શન અને અલાભ પરીષદ હોય છે તાત્પર્ય એ છે કે દર્શનમોહનીય કર્મવાળા સંયતને દર્શન પરીષદ અને લાભાન્તરાય કર્મવાળા શ્રમણને અલાભ પરીષદ હોય છે. આ રીતે દર્શનપરીષદ દર્શન મોહનીયનું કાર્ય છે અને અલાભપરીષદ લાભાન્તરાયનું કાર્ય છે. સારાંશ એ છે કે દર્શનમોહ કર્મથી દર્શનપરીષદ અને લાભાન્તરાય કર્મથી અલાભપરીષદની ઉત્પત્તિ થાય છે. ॥૧૩॥

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિ—અગાઉ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું કે જ્ઞાનાવરણ કર્મના નિમિત્તથી પ્રજ્ઞા અને અજ્ઞાનપરીષદોની ઉત્પત્તિ થાય છે, હવે દર્શનમોહનીય કર્મથી અને લાભાન્તરાય કર્મથી ક્રમશઃ દર્શનપરીષદ અને અલાભપરીષદ ઉત્પન્ન થાય છે—એ પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

ચ ક્રમશઃ-દર્શનપરીપહોડલાભપરીપદ્ધત્ય જન્મ્યતે ઇતિ પ્રતિપાદયિતુમાહ-‘દંસણ મોહનિજ્જ લાભંતરાણ્ણુ દંસણોલાભા પરીસહા’ ઇતિ દર્શનમોહનીય-લાન્તરાયયો દર્શનમોહનીય કર્મણિ લામાન્તરાયકર્મણિ ચ યથાક્રમં-દર્શનપરી-પહોડલાભપરીપદ્ધત્ય સંજાયતે । તથા ચ-દર્શનમોહનીયકર્મોદયે સતિ દર્શન પરીપહો ભવતિ, લામાન્તરાયકર્મોદયે ચાડલાભપરીપહો ભવતીતિ ભાવઃ । ઉક્તશ્ચ વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞાશ્રી શ્રીભગવતી સુત્રે ૮-શતકે ૮-ઉદ્દેશકે-‘દંસણ મોહનિજ્જેણં ભંતે । કમ્મે કહ પરીસહા સમોયરંતિ-? ગોયમા-! એગે દંસણપરીસહે સમોયરહ, અંતરાણ્ણં ભંતે ! કમ્મે કહ પરીસહા સમોયરંતિ-૩ ગોયમા-! એગે અલાભપરીસહે સમોયરહ’ ઇતિ । દર્શનમોહનીય ખલુ ભદન્ત ! કર્મણિકતિ પરીપદ્ધાઃ સમુદીર્યન્તે ? ગૌતમ-! એકો દર્શનપરીપદ્ધઃ સમુદીર્યતે, અન્તરાયે ખલુ ભદન્ત ! કતિ પરીપદ્ધાઃ સમુદીર્યન્તે ? ગૌતમ ! એકોડલાભપરીપદ્ધઃ સમુદીર્યતે, ઇતિ । એવશ્ચ-દર્શનમોહનીય કર્મવતિ સંયતે મુનોં દર્શનપરીપદ્ધઃ સોઢવ્યો ભવતિ, લાન્તરાયકર્મવતિ ચ સંયતેડલાભપરીપદ્ધઃ સોઢવ્યઃ ॥૧૩॥

દર્શનમોહનીય કર્મ ઓર લામાન્તરાય કર્મ કે હોને પર અનુક્રમ સે દર્શનપરીપદ્ધ ઓર અલાભપરીપદ્ધ હોતે હૈં, ઇમ પ્રકાર દર્શનમોહ-નીય કર્મ કા ઉદય હોને પર દર્શનપરીપદ્ધ હોતા હૈ ઓર લામાન્તરાય કર્મ કા ઉદય હોને પર અલાભપરીપદ્ધ હોતા હૈ । શ્રી ભગવતીસૂત્ર કે આઠવેં શતક કે આઠવેં ઉદ્દેશક મેં કહા હૈ-

પ્રશ્ન—દર્શનમોહનીય કર્મ કે હોને પર ભગવન્ ! કિતને પરી-પદ્ધ હોતે હૈં ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! એક દર્શનપરીપદ્ધ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ।

પ્રશ્ન—ભગવન્ ! અન્તરાય કર્મ કે હોને પર કિતને પરીપદ્ધ હોતે હૈં ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! એક અલાભપરીપદ્ધ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ।

દર્શનમોહનીય કર્મ અને લામાન્તરાય કર્મ હોય, ત્યારે અનુક્રમથી દર્શનપરીપદ્ધ અને અલાભપરીપદ્ધ થાય છે, આવી રીતે દર્શનમોહનીય કર્મનો ઉદય થવાથી અલાભપરીપદ્ધ થાય છે. શ્રી ભગવતીસૂત્રના આઠમાં શતકના આઠમાં ઉદ્દેશકમાં કહ્યું છે—

પ્રશ્ન—દર્શનમોહનીય કર્મ હોવાથી, ભગવન્ ! કેટલા પરીપદ્ધ હોય છે ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! એક દર્શનપરીપદ્ધ ઉત્પન્ન થાય છે.

પ્રશ્ન—ભગવન્ ! અન્તરાય કર્મ હોય ત્યારે કેટલા પરીપદ્ધ હોય છે ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! એક અલાભપરીપદ્ધ ઉત્પન્ન થાય છે.

મૂલ્કમ્—ચરિત્તમોહણિજ્જે સત્ત પરીસહા, અચેલ અરહઆહ
મેયઓ ॥૧૪॥

છાયા—ચારિત્રમોહનીયે સત્પરીષદ્ઃ, અચેલા રત્તગદિ મેદતઃ ॥૧૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—‘દર્શનમોહનીયકર્મણિ લાભન્તરાયકર્મણિ ચ ક્રમશો
દર્શનપરીષદ્ઃ, અલાભપરીષદ્ઃ પ્રરૂપિતઃ સમ્પત્તિ—ચારિત્રમોહનીય કર્મણિ-અચેલા
રત્તગદિન્’ સત્પરીષદ્ઃ પ્રરૂપયિતુમાહ—‘ચરિત્તમોહણિજ્જે સત્ત પરીસહા
અચેલ-અરહઆહ મેયઓ’ इति चारित्रमोहनीये कर्मणि=चारित्रमोहनीय
कर्मादये सप्त संख्यकाः परीषदा भवन्ति, तद्यथा—अचेलअरत्यादि भेदतः अचेलः
अरतिः—२ आदिना—स्त्री- ३ निषद्या—४ आक्रोशः—५ याचना ६ सत्कार पुरस्कार

इस प्रकार दर्शनमोह कर्म से युक्त मुनि को दर्शनपरीषद और
लाभान्तराय कर्म वाले मुनि को अलाभ परीषद सहना पड़ता है ॥१३॥

‘चरित्तमोहणिज्जे’ इत्यादि

सूत्रार्थ—चारित्रमोहनीय कर्म के उदय से अचेल, अरति आदि
सात परीषद उत्पन्न होता है ॥१४॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्व सूत्र में प्रतिपादन किया गया है कि दर्शन-
मोहनीय और लाभान्तराय कर्म के निमित्त से दर्शन परीषद और
अलाभपरीषद उत्पन्न होते हैं, अब चारित्रमोहनीय कर्म के निमित्त
से होनेवाले अचेल, अरति आदि सात परीषदों की प्ररूपणा करते हैं—

चारित्रमोहनीय कर्म के उदय से अचेल अरति आदि सात
परीषद होते हैं, जो इस प्रकार हैं—(१) अचेल (२) अरति (३) स्त्री

આ રીતે દર્શનમોહ કર્મથી યુક્ત મુનિને દર્શનપરીષદ અને લાભાન્ત-
રાય કર્મવાળા મુનિને અલાભપરીષદ સહન કરવો પડે છે. ॥૧૩॥

‘ચરિત્તમોહણિજ્જે સત્તપરીસહા’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—ચારિત્ર મોહનીય કર્મના ઉદયથી અચેલ, અરતિ આદિ સાત
પરીષદ ઉત્પન્ન થાય છે. ॥૧૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું કે દર્શન
મોહનીય અને લાભાન્તરાય કર્મના નિમિત્તથી દર્શનપરીષદ અને અલાભપરીષદ
ઉત્પન્ન થાય છે, હવે ચારિત્ર મોહનીય કર્મના નિમિત્તથી થનારા અચેલ,
અરતિ આદિ સાત પરીષદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ—

ચારિત્ર મોહનીય કર્મના ઉદયથી અચેલ, અરતિ આદિ સાત પરીષદ
થાય છે જે આ પ્રમાણે છે—(૧) અચેલ (૨) અરતિ (૩) સ્ત્રી (૪) નિષદ્યા

અ ૭ ત્યેવં સપ્તપરીપદા અવગન્તવ્યા તથા ચ-ચરિત્રમોહનીયકર્મોદયેન અચેલપરી-
પદઃ અરતિપરીપદઃ સ્ત્રીપરીપદઃ, નિષદ્યાપરીપદઃ આક્રોશપરીપદઃ યાચનાપરિ-
પદઃ સત્કારપુરસ્કારપરીપદશ્ચ સંજાયતે અથ પુંવેદોદયાદિहेतुकत्वात् અચેલાડર-
તિસ્ત્યાક્રોશ યાચના સત્કાર પુરસ્કારાણાં મોહોદય हेतुकत्वेऽपि નિષદ્યાયાઃ કથં
મોહોદય हेतुकत्वमिति चेत्-? અત્રોચ્યતે-ચારિત્રમોહોદયે સતિ પ્રાણિપીડા પરિ-
ણામસ્ય સંજાયમાનતયા પ્રાણિપીડા પરિહાર્યત્વેન નિષદ્યાયાઃ અપિ મોહનીય
નિમિત્તકત્વં સમ્ભવતિ । તથા ચ-નિષીદન્તિ-ઉપવિશન્તિ યસ્યાં સા નિષદ્યા-
ઉપવેશનાદિભૂમિ રિતિ રીત્યા ચારિત્રમોહનીય કર્મોદયે સતિ ભયોદયાત્તસ્થાના
સેવિત્વરૂપો નિષદ્યાપરીપદો ભવતિ ॥૧૪॥

(૪) નિષદ્યા (૫) આક્રોશ (૬) યાચના (૭) સત્કાર પુરસ્કાર । હસ પ્રકાર
ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે ઉદય સે અચેલપરીપદ, અરતિપરીપદ, સ્ત્રી
પરીપદ, નિષદ્યાપરીપદ, આક્રોશપરીપદ, યાચનાપરીપદ, ઓર સત્કાર
પુરસ્કારપરીપદ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ।

શંકા-અચેલ, અરતિ, સ્ત્રી, આક્રોશ, યાચના ઓર સત્કાર પુરસ્કાર
પુરુષવેદ આદિ કે ઉદય સે હોતે હૈં, હસ કારણ ઝઢેં મોહોદય હેતુક
કહા જા સકતા હૈ, મગર નિષદ્યાપરીપદ કો મોહોદય હેતુક કૈસે
કહ સકતે હૈં ?

સમાધાન-ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે ઉદય સે પ્રાણિયોં કો પીડા
પહુંચાને કા પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર નિષદ્યા પ્રાણિપીડા કા પરિ-
હાર કરને કે લિપ હૈ, અન્નપ્ચ ઝસે મોહનિમિત્તક કહ સહતે હૈં । જિસમેં
નિષીદન-ઉપવેશન અર્થાત્ ઠહરલો-બૈઠના આદિ કિયા જાય વહ
નિષદ્યા કહલાતી હૈ । ચારિત્રમોહનીય કર્મ કા ઉદય હોને પર ભય કે

(૫) આક્રોશ (૬) યાચના (૭) સત્કાર પુરસ્કાર આ નીતે ચારિત્ર મોહનીય
કર્મના ઉદયથી અચેલપરીપદ, અરતિપરીપદ, સ્ત્રીપરીપદ નિષદ્યાપરીપદ,
આક્રોશપરીપદ, યાચનાપરીપદ અને સત્કાર પુરસ્કાર પરીપદ ઉત્પન્ન થાય છે.

શંકા-અચેલ, અરતિ, સ્ત્રી, આક્રોશ, યાચના અને સત્કાર પુરસ્કાર
પુરુષવેદ આદિના ઉદયથી થાય છે આથી તેમને મોહોદય હેતુક કહી શકાય
છે, પરન્તુ નિષદ્યાપરીપદને મોહોદયહેતુક કેવી રીતે કહી શકાય ?

સમાધાન-ચારિત્ર મોહનીય કર્મના ઉદયથી પ્રાણિઓને દુઃખ પહોંચા-
ઠવાનું પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે અને નિષદ્યા પ્રાણિપીડાનો પરિહાર કરવા
માટે છે, આથી તેને મોહ નિમિત્તક કહી શકીએ છીએ. જેમાં નિષીદન-
ઉપવેશન અર્થાત્ શેકાવું બેસવું વગેરે કરવામાં આવે તે નિષદ્યા કહેવાય

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિઃ-પૂર્વે તાવદ્-દર્શનમોહનીય લામાન્તરાયે કર્મણિ ચ
 ઉદિતે સતિ ક્રમશઃ દર્શનપરીષદઃ, અલામપરીષદશ્ચ ભવતીતિ પ્રતિપાદિતમ્,
 સમ્પતિ-ચારિત્રમોહનીયકર્મોદયે સતિ સપ્તપરીષદા ભવન્તીતિ તાન પરીષદાન
 પ્રતિપાદયિતુમાહ-‘ચરિત્તમોહણિજ્જે સત્ત પરીસદા અચેલારહયાહ
 મેયઓ-’ઇતિ, ચારિત્રમોહનીયે ચારિત્રમોહનીયકર્મોદયે સતિ સપ્તપરીષદા
 ભવન્તિ । તચ્ચથા અચેકારત્યાદિમેદતઃ-અચેલો-૧ ડરતિ-૨ આદિના-સ્ત્રી-૩
 નિષદ્યા-૪ ડડકોશો-૫ યાચના-૬ સત્કારપુરસ્કારશ્ચે-૭ ત્યેતે સપ્તપરીષદા
 ભવન્તિ । તત્ર-દર્શનમોહનીયમિન્નં ચારિત્રમોહનીયં કર્મ, ચારિત્રં તાવદ મૂલો-
 ત્તરગુણસમ્પન્નત્વમ્ તસ્ય મોહનાત્-પરાઙ્મુખત્વાત્ ચારિત્રમોહનીયમુચ્યતે,
 તથાવિધ ચારિત્રમોહનીયોદયે સતિ-અસ્ત્યાદયઃ સપ્તપરીષદા ભવન્તિ । તત્ર જુગુ-
 હદય સે ઉસ સ્થાન કા સેવન ક્રિયા જાના હૈ, અતએવ નિષદ્યાપરી-
 ષદ મોહહેતુક હૈ ॥૧૪॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ-પહેલે બનલાયા ગયા હૈ કિ દર્શનમોહનીય ઓર
 લામાન્તરાય કર્મ કા ઉદય હોને પર ક્રમ સે દર્શનપરીષદ ઓર અલામ-
 પરીષદ હોતે હૈ, અત્ર ચારિત્ર મોહનીય કર્મ સે સાત પરીષદ હોતે હૈ,
 અતએવ ડનકા પ્રતિપાદન કરને કે લિએ કહતે હૈ-

ચારિત્રમોહનીય કર્મ કા ઉદય હોને પર સાત પરીષદ હોતે હૈ । વે
 હસ પ્રકાર હૈ-(૧) અચેલ (૨) અરતિ (૩) સ્ત્રી (૪) નિષદ્યા (૫) આક્રોશ
 (૬) યાચના ઓર (૭) સત્કાર પુરસ્કાર । ચારિત્રમોહનીયકર્મ દર્શન-
 મોહનીય સે ભિન્ન હૈ । સૂત્રગુણો ઓર ઉત્તરગુણો સે સમન્નતા હોના
 ચારિત્ર કહલાતા હૈ, ડસકા નિરોધ કરને વાલા કર્મ ચારિત્રમોહનીય-

છે. ચારિત્ર મોહનીય કર્મના-ઉદય થવાથી લપના ઉદયથી તે સ્થાનનું સેવન
 કરવામાં આવે છે આથી નિષદ્યાપરીષદ મોહહેતુક છે ॥૧૪॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ-પહેલા બતાવવામાં આવ્યું છે કે દર્શનમોહનીય
 અને લામાન્તરાય કર્મના ઉદય થવાથી કર્મથી દર્શનપરીષદ અને અલામ-
 પરીષદો થાય છે હવે ચારિત્ર મોહનીય કર્મના ઉદયથી સાત પરીષદ થાય
 છે, આથી તેમનું પ્રતિપાદન કરવા માટે કહીએ છીએ-

ચારિત્ર મોહનીય કર્મના ઉદય થવાથી સાત પરીષદ થાય છે તે આ પ્રમાણે
 છે:-(૧) અચેલ (૨) અરતિ (૩) સ્ત્રી (૪) નિષદ્યા (૫) આક્રોશ (૬) યાચના
 (૭) સત્કારપુરસ્કાર ચારિત્રમોહનીય કર્મ દર્શનમોહનીયથી ભિન્ન છે મૂળગુણો
 અને ઉત્તરગુણોથી સમન્નતા હોવી ચારિત્ર કહેવાય છે, તેના નિરોધ-
 કરનાર કર્મ ચારિત્રમોહનીય છે. આ ચારિત્રમોહનીય કર્મના ઉદય થવાથી

મોદયાદચેરુપીપહઃ, અરત્યુદયાદરતિપરીપહઃ ઉચ્યતે, સ્ત્રીવેદોદયાત્-સ્ત્રીપરીપહઃ
 ભયોદયાત્સ્થાનાડસેવિત્વલક્ષણો નિષદ્યાપરીપહઃ ક્રોધોદયાત્-આક્રોશપરીપહઃ,
 માનોદયાત્-યાચ્નાપરીપહઃ લોભોદયાત્-સત્કારપુરપરીપહઃ સમ્ભવતિ । તથાચોક્તં
 વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તૌ ભગવતીસૂત્રે ૮-શતકે ૮-ઉદ્દેશકે-‘ચરિત્ત મોહણિજ્જેણં મંતે ।
 કમ્મે કહં પરિસહા સમોયરંતિ ? ગોયમા ! સત્તપરીસહા સમોયરંતિ
 તં જહા-અરતી અચેલ હત્થી નિસીહિયા જાંયણા ય અકોસે સકાર
 પુરકારે ચરિત્તમોહંમિ સત્તેતે’ ॥૧॥ इति, ચારિત્રમોહનીયે સ્વલુ મદન્તં !
 કર્મણિ કતિ પરીપહાઃ સમવતરન્તિ ? ગૌતમ ! સપ્તપરીપહાઃ સમવતરન્તિ, તથા-
 ‘અરતિ, રચેલઃ સ્ત્રી, નિષદ્યા, યાચના, ચ-આક્રોશઃ સત્કાર પુરસ્કાર
 ચારિત્રમોહે સપ્તેતે । ૧॥ इति ॥૧૪॥

હૈ । इस चारित्रमोहनीय कर्म के उदय से अरति आदि सात परीषह होते हैं । जुगुप्सा मोह कर्म के उदय से अचेल परीषह होता है, अरति कर्म के उदय से अरतिपरीषह होता है, पुरुषवेद के उदय से स्त्रीपरीषह होता है, भय के उदय से स्थान का सेवन रूप निषद्यापरीषह होता है, क्रोध के उदय से आक्रोशपरीषह होता है, मान के उदय से याचनापरीषह होता है और लोभ के उदय से सत्कार पुरस्कार परीषह उत्पन्न होता है ।

ભગવતીસૂત્ર કે શતક ૮ કે ઉદ્દેશક ૮ મેં કહા હૈ-‘ભગવન્ !
 ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે ઉદય સે કિતને પરીષહ હોતે હૈ ?

ઉત્તર-હે ગૌતમ ! સાત પરીષહ ઉત્પન્ન હોતે હૈ, વે યહ હૈ-
 (૧) અરતિ, અચેલ, સ્ત્રી, નિષદ્યા, યાચના ઓર આક્રોશ । ચારિત્રમોહ-
 નીય કર્મ કે હોને પર યે સાત પરીષહ હોતે હૈ ॥૧૪॥

અરતિ વગેરે સાત પરીષહ થાય છે. જુગુપ્સા મોહ કર્મના ઉદયથી અચેલ પરીષહ થાય છે, અરતિકર્મના ઉદયથી અરતિપરીષહ થાય છે, પુરુષવેદના ઉદયથી સ્ત્રીપરીષહ થાય છે, ક્રોધના ઉદયથી આક્રોશપરીષહ થાય છે, માનના ઉદયથી યાચનાપરીષહ થાય છે અને લોભના ઉદયથી સત્કારપુરસ્કારપરીષહ ઉત્પન્ન થાય છે.

ભગવતીસૂત્રના શતક ૮ના ઉદ્દેશક ૮માં કહ્યું છે-‘ભગવન્ ! ચારિત્ર-મોહનીય કર્મના ઉદયથી કેટલા પરીષહ હોય છે ?

ઉત્તર-‘ગૌતમ ! સાત પરીષહ ઉત્પન્ન થાય છે, તે આ રીતે-(૧) અરતિ (૨) અચેલ, (૩) સ્ત્રી (૪) નિષદ્યા (૫) યાચના (૬) આક્રોશ અને (૭) સત્કાર પુરસ્કાર ચારિત્ર મોહનીય કર્મના ઉદય થવાથી આ સાત પરીષહ થાય છે. ॥૧૪॥

मूलम्—वेयणिज्जे सेसा एकारस परीसहा ॥१५॥

छाया—‘वेदनीये शेषा एकादश परीषहाः—’ ॥१५॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्व सूत्रे—चारित्रमोहनीय कर्मोदयेनाऽचेल ऽरतिस्त्री-
निषद्यादि सप्तपरीषहा भवन्तीति प्ररूपितम्, सम्प्रति—वेदनीयकर्मोदयेन शेषा-
एकादश परीषहा भवन्तीति प्ररूपयितुमाह—‘वेयणिज्जे सेसा एकारस परीसहा’
इति । वेदनीये वेदनीयकर्मोदये सति शेषा एकादश परीषहा भवन्ति, आनुपूर्व्या
क्षुत्पिपासा शीतोष्णदंशमशक परीषहाः चर्याशय्यावधोरोगस्तृणस्पर्शो मल इत्येवं
षट्, संकलनया—एकादशपरीषहा भवन्ति । तथा च वेदनीयकर्मोदयेन क्षुत्पि-
पासा—शीतोष्णदंशमशकचर्या—शय्या वध—रोगतृण—स्पर्श—मलपरीषहाः
सम्भवन्तीति भावः ॥१५॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्व तावद्—ज्ञानावरणीय दर्शनमोहनीयचारित्रमोह-
नीयकर्मोदयेन क्रमशः—मज्ञाऽज्ञानद्वयम्, दर्शनालाम्बद्वयम्, अचेलारत्यादयः

‘वेयणिज्जे सेसा एकारस’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—शेष ग्यारह परीषह वेदनीयकर्म के उदय से होते हैं ॥१५॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्र में प्रतिपादन किया गया है कि चारित्र
मोहनीय कर्म के उदय से अचे ३, अरति, स्त्री, निषद्या आदि सात
परीषह होते हैं अब वेदनीय कर्म के उदय से होने वाले ग्यारह परी-
षहों का प्रतिपादन करते हैं—

शेष ग्यारह परीषह वेदनीय कर्म का उदय होने पर उत्पन्न होते
हैं । वे इस प्रकार हैं—(१) क्षुधा (२) पिपासा (३) शीत (४) उष्ण (५)
दंशमशक (६) चर्या (७) शय्या (८) वध (९) रोग (१०) तृणस्पर्श
और मल परीषह ॥१५॥

‘वेयणिज्जे सेसा एकारसपरीसहा’

सूत्रार्थ—शेष अगीयार वेदनीय कर्मना उदयथी थाय छे. ॥१५॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रमां प्रतिपादन करवामां आओयुं छे के
चारित्र मोहनीय कर्मना उदयथी अचेल, अरति, स्त्री, निषद्या आदि सात
परीषहु थाय छे, हुवे वेदनीय कर्मना उदयथी थनारा अगीयार परीषडोनुं
प्रतिपादन करीये छीये—

शेष अगीयार परीषहु वेदनीय कर्मना उदय थवाथी उत्पन्न थाय छे.
ते आ प्रमाणे छे—(१) क्षुधा (२) पिपासा (३) शीत (४) उष्ण (५)
(५) दंशमशक (६) चर्या (७) शय्या (८) वध (९) रोग (१०) तृणस्पर्श अने
११) मलपरीषहु. ॥१५॥

સપ્તચેત્યેકાદશ પરીપહાઃ પ્રરૂપિતાઃ સમ્પતિ-વેદનીયકર્મોદયેન પ્રજ્ઞાઽજ્ઞાના-
દ્યેકાદશપરીપહા અવશિષ્ટાઃ તાનેકાદશ ક્ષુત્પિપાસાદીન્ પરીપહાન્ પ્રરૂપયિતુ-
માહ-‘વેથણિજ્જે સેસા ઇકારસપરીમહા-’ ઇતિ, વેદનીયે-વેદનીયકર્મોદયે
સતિ શેષા એકાદશ પરીપહાઃ ભવન્તિ, તથા-આનુપૂર્વ્યા-ક્ષુત્પિપાસા-શીતોષ્ણ
દંશમશકારુ (ઃ પશ્ચપરીપહાઃ, ચર્યા-શય્યા-વધ-રોગ-તૃણસ્પર્શમલાચ્યાઃ પદ,
इत्येवं रीत्या-एकदशपरीपहा भवन्ति । एवञ्च-पूर्वोक्तेभ्यः प्रज्ञाऽज्ञानदर्शना-
ऽलामाऽचेलाऽरति स्त्रीनिषद्याऽऽक्रोश-याचना-सत्कार पुरस्कारेभ्य एकादश
परीपहेभ्योऽवशिष्टाः क्षुत्पिपासा-शीतोष्ण-दंशमशक-चर्या-शय्या-वध रोग-

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલે જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનમોહનીય, ચારિત્ર-
મોહનીય ઓર અન્તરાય કર્મ કે નિમિત્ત સે હોને વાલે પ્રજ્ઞા, અજ્ઞાન,
દર્શન, અલાભ, અચેલ, અરતિ આદિ ગ્યારહ પરીપહ કહે ગયે હૈં, અથ
વેદનીય કર્મ કે ઉદય સે હોને વાલે અવશિષ્ટ ક્ષુધા પિપાસા આદિ
પરીપહોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—

વેદનીય કર્મ કા ઉદય હોને પર શેષ ગ્યારહ પરીપહ હોતે હૈં । એ
અનુક્રમ સે હસ પ્રકાર હૈં-ક્ષુધા, પિપાસા, શીત, ઉષ્ણ, દંશમશક, એ
પાંચ તથા ચર્યા, શય્યા, વધ, રોગ, તૃણસ્પર્શ ઓર મલ, એ છહ, હસ
પ્રકાર ગ્યારહ પરીપહ હોતે હૈં । હસ પ્રકાર પૂર્વોક્ત પ્રજ્ઞા, અજ્ઞાન,
દર્શન, અલાભ, અચેલ, અરતિ, સ્ત્રી, નિષદ્યા, આક્રોશ, યાચના ઓર
સત્કાર પુરસ્કાર, હન ગ્યારહ પરીપહોં સે શેષ બચે હુયે ક્ષુધા, પિપાસા,
શીત, ઉષ્ણ, દંશમશક, ચર્યા, શય્યા, વધ, રોગ, તૃણસ્પર્શ

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલા જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનમોહનીય, ચારિત્રમોહ-
નીય અને અન્તરાય કર્મના નિમિત્તથી થનારા પ્રજ્ઞા, અજ્ઞાન, દર્શન અલાભ,
અચેલ, અરતિ આદિ અગીયાર પરીપહોનું વિવેચન કરવામાં આવ્યું છે હવે
વેદનીય કર્મના ઉદયથી થનારા અવશિષ્ટ ક્ષુધા પિપાસા આદિ પરીપહોની
પ્રરૂપણા કરીએ છીએ—

વેદનીય કર્મના ઉદય થવાથી બાકીના અગીયાર પરીપહ થાય છે તે
આ પ્રમાણે છે-અનુક્રમથી ક્ષુધા, પિપાસા, શીત, ઉષ્ણ, દંશમશક એ પાંચ,
તથા ચર્યા, શય્યા, વધ, રોગ, તૃણસ્પર્શ અને મલ એ છ.—આ પ્રમાણે
અગીયાર પરીપહ થાય છે આ રીતે પૂર્વોક્ત પ્રજ્ઞા, અજ્ઞાન, દર્શન અલાભ,
અચેલ, અરતિ, સ્ત્રી, નિષદ્યા, આક્રોશ, યાચના અને સત્કારપુરસ્કાર આ
અગીયાર પરીપહોમાંથી બાકી રહી ગયેલા-ક્ષુધા, પિપાસા, શીત, ઉષ્ણ,

તૃણસ્પર્શમલરૂપા एकादशपरीपहाः वेदनीयकर्मोदयेन सम्भवन्ति । एत एव क्षुत्पिपासादय एकादश परीषहा भगवति-तीर्थकृति-केवलिन्यपि सम्भवन्ति तस्य खलु जिनस्य घातिर्मचतुष्टयविनाशे केवलं वेदनीयकर्मोदयरवैव सम्भवात् इति पूर्वं निरूपितम् । तथा च-वेदनीयकर्मोदये सति क्षुत्पिपासादय एकादश परीषहा भवन्ति । उक्तञ्च व्याख्यामञ्जरी भगवतीसूत्रे ८-शतके ८ उद्देशके-‘वैद्य-णिज्जे णं भंते । कस्मे कइ परीसहा समोयरंति ? गोयजा । एकारस परीसहा समोयरंति तं जहा ‘पंचेव आणुपुण्डी, चरिया सेज्जा जहेय रोगेय । तजफाल जल्ल जेवय, एकारस वेदणिज्जंमि’ ॥१॥ इति वेदनीये खलु भवन्त ! कर्मणि कति परीषहाः समवतरन्ति ? गौतम ! एकादश परीषहाः समवतरन्ति, तद्यथा-पञ्चैवाऽऽनुपूर्व्या, चर्या-शय्या-वधश्च रोगश्च । तृणस्पर्शो

और मल, ये ग्यारह परीषह वेदनीय कर्म के उदय से होते हैं । यही ग्यारह परीषह तीर्थकर भगवान् केदली में भी होते हैं, क्योंकि कि केदली भगवान् में चार घातिक कर्मों की सत्ता नहीं रहती, सिर्फ चार अघातिक कर्म ही रहते हैं । उनमें वेदनीय कर्म के उदय से उक्त ग्यारह परीषह होते हैं, यह पहले कहा जा चुका है । इस प्रकार वेदनीय कर्म का उदय होने पर ग्यारह परीषह होते हैं । भगवतीसूत्र के शतक ८, उद्देशक ८ में कहा है-

प्रश्न--भगवन् ! वेदनीय कर्म के उदय से कितने परीषह होते हैं ?

उत्तर--हे गौतम ! ग्यारह परीषह उत्पन्न होते हैं, वे इस प्रकार हैं-पांच अनुक्रम से प्रारंभ के तथा चर्या, शय्या, वध, रोग, तृणस्पर्श, और मल परीषह, ये छह मिलकर ग्यारह परीषह वेदनीय कर्म के उदय से उत्पन्न होते हैं ।

દંશમશક, ચર્યા, શય્યા, વધ, રોગ, તૃણસ્પર્શ અને મલ આ અગીયાર પરીષહ વેદનીય કર્મના ઉદયથી થાય છે. આ જ અગીયાર પરીષહ તીર્થકર ભગવાન કેવળીમાં પણ હોય છે, કારણ કે કેવળી ભગવાનમાં ચાર ઘાતિ કર્મોના પ્રભાવ રહેતો નથી, ફક્ત ચાર અઘાતિ કર્મ જ રહે છે. તેમાંથી વેદનીય કર્મના ઉદયથી ઉક્ત અગીયાર પરીષહ થાય છે એ તો અગાઉ કહેવામાં આવ્યું છે. આ રીતે વેદનીય કર્મના ઉદય થવાથી અગીયાર પરીષહ હોય છે. ભગવતીસૂત્રમાં શતક ૮ ઉદ્દેશક ૮માં કહ્યું છે-

પ્રશ્ન-ભગવન્ ! વેદનીય કર્મના ઉદયથી કેટલા પરીષહ થાય છે ?

ઉત્તર-ગૌતમ ! અગીયાર પરીષહ ઉત્પન્ન થાય છે. તે આ રીતે પાંચ અનુક્રમથી શરૂઆતના તથા ચર્યા, શય્યા, વધ, રોગ, તૃણસ્પર્શ અને મલ પરીષહ એ બધાં મળીને અગીયાર પરીષહ વેદનીય કર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થાય છે.

મલ એવચ, એકાદશ વેદનીયે—' ઇતિ ॥૧॥ એવચ્ચ-જ્ઞાનાવરણીયદર્શનમોહનીય ચારિત્રમોહનીરૂપ ઘાતિવર્મચતુષ્ટયોદયે પ્રજ્ઞાઽજ્ઞાનાદય એકાદશપરીપહા, ભવન્તિ, વેદનીયકર્મોદયેતુ ક્ષુત્પિપાસાદય એકાદશ પરીપહા અવગન્તવ્યાઃ ॥૧૫॥

મૂલમ્—એકસ્મિ જીવ જુગવં એગાદિ જાવ એગૂળવીસા પરીસહા ॥૧૬॥

છાયા—'એકસ્મિન્ જીવે યુગપત્ એકાદિયાવદેકોનવિંશતિઃ પરીપહાઃ ॥૧૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ તાવદ્-વ્યસ્તસમસ્તરૂપેણ ક્ષુત્પિપાસાદયો દ્વાવિંશતિઃ પરીપહા યથાયોગ્યં ક્વચિચ્ચતુર્દશ ક્વચિદેકાદશ, ક્વચિદ્ દ્વૌ, ક્વચિત્સપ્ત, ક્વચિત્તુ-દ્વાવિંશતિરપિ, પરીપહા ભવન્તીતિ પ્રરૂપિતમ્, સમ્પ્રત્યેકાત્મનિ યુગપત્

હસ પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનમોહનીય, ચારિત્રમોહનીય ઓર અન્તરાય રૂપ ચાર ઘાતિ કર્મો' કે ઉદય સે પ્રજ્ઞા, અજ્ઞાન આદિ ગ્યારહ પરીપહ હોતે હૈં ઓર વેદનીય કર્મ કે ઉદય સે ક્ષુધા પિપાસા આદિ ગ્યારહ પરીપહ હોતે હૈં ॥૧૫॥

‘એકસ્મિ જીવ જુગવં એગાદિ’ હત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—એક જીવ મેં એક સાથ, એક સે લેકર ઉઠ્ઠીસ પરીપહ તક હો સકતે હૈં ॥૧૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે પ્રતિપાદન કિયા ગયા હૈં કિ વ્યસ્ત ઓર સમસ્ત રૂપ સે ક્ષુધા પિપાસા આદિ વાઈસ પરીપહ યથાયોગ્ય કહીં ચૌદહ, કહીં ગ્યારહ, કહીં દો, કહીં સાત ઓર કહીં વાઈસોં હોતે હૈં, અબ યહ પ્રતિપાદન કરતે હૈં કિ એક જીવ સે, એક હી કાલ મેં, એક સે લેકર ઉઠ્ઠીસ પરીપહ તક હો સકતે હૈં—

આ રીતે જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનમોહનીય, ચારિત્રમોહનીય અને અન્તરાય રૂપ ચાર ઘન ઘાતી કર્મોના ઉદયથી પ્રજ્ઞા, અજ્ઞાન, આદિ અગીયાર પરીપહ થાય છે અને વેદનીય કર્મોના ઉદયથી ક્ષુધા પિપાસા આદિ અગીયાર પરીપહ થાય છે. ॥૧૫॥

‘એકસ્મિ જીવ જુગવં એગાદિ’ હત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—એક જીવમાં, એકી સાથે, એકથી લઈ ને ઓગણીસ પરીપહ સુધી હોઈ શકે છે. ॥૧૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું કે વ્યસ્ત અને સમસ્ત રૂપથી ક્ષુધા પિપાસા વગેરે બાવીસ પરીપહ યથાયોગ્ય કોઈ સ્થળે ચૌદ કોઈ જગાએ અગીયાર ક્યાંક સાત અને કોઈ સ્થળે બાવીસે-બાવીસ હોય છે, હવે એ પ્રતિપાદન કરીએ છીએ કે એક જીવમાં એક જ સમયે, એકથી માંડીને ઓગણીસ પરીપહ હોઈ શકે છે—

खलु एकत आरभ्य एकोनविंशतिपर्यन्तं परीषहाः सम्भवन्तीति प्ररूपयितुमाह—
‘एकस्मिन् जीवे जुगवं’ इत्यादि । एकस्मिन् जीवे युगपत्—एकदा एकादियावदे-
कोनविंशतिः कदाचित्—क्षुत्पिपासादिषु कश्चिदेकः, कदाचिद् द्वौ, कदाचित् त्रयः,
इत्येवं रीत्या—कदाचित् क्वचिद् एकोनविंशतिः परीषहाः सम्भवन्ति किन्तु—
शीतोष्णपरीषहयोः परस्परविरुद्धत्वात् एकदैकात्मनि कश्चिदेक एव परीषहो
भवेत्, एवं शय्या, निषद्या, चर्याणां मध्येऽपि एक एव परीषहः एकदैकात्मनि-
स्यात् तासामपि तिसृणां परस्परं विरुद्धत्वाद् । तथाचैतेषु पञ्चसु द्वयोरेव कयो-
श्चिदेकात्मनि एकदा सम्भवेन तदन्येषां सप्तदशानां च क्षुत्पिपासादीनां मेकनेन

एक जीव में एक साथ एक से लेकर अधिक से अधिक उन्नीस परीषह तक हो सकते हैं । कदाचित् क्षुधा पिपासा आदि में से कोई एक ही होता है, कभी दो उत्पन्न हो जाते हैं, कभी तीन, इस प्रकार कभी अधिक से अधिक उन्नीस तक हो सकते हैं । एक साथ चाईसों परीषह किसी में नहीं हो सकते, क्यों कि परस्पर विरोधी परीषहों का एक साथ होना संभव नहीं है । जैसे—शीत और उष्ण परीषह परस्पर विरुद्ध हैं—जब शीतवेदना होती है तब उष्णवेदना नहीं हो सकती और जब उष्णवेदना होती है तो शीतवेदना नहीं हो सकती । इन दोनों में से कोई एक ही परीषह होता है ।

इसी प्रकार शय्या, निषद्या और चर्या, इन तीन में से एक ही परीषह हो सकता है, क्यों कि ये भी परस्पर विरोधी हैं । इस प्रकार इन पांच परीषहों में से एक आत्मा में एक साथ कोई दो परीषह ही होते हैं । इन दोनों में शेष सत्तर परीषह मिला देने से अधिक से

એક જીવમાં એકી સાથે એકથી લઈને વધુમાં વધુ ઓગણીસ પરીષહ સુધી હોઈ શકે છે. કદાચિત્ ક્ષુધા પિપાસા આદિમાંથી કોઈ એક જ હોય છે, ક્યારેક બે ઉત્પન્ન થાય છે તો ક્યારેક ત્રણ, આવી રીતે ક્યારેક વધુમાં વધુ ઓગણીસ સુધી હોઈ શકે છે. એકી સાથે બાવીસે-બાવીસ પરીષહ કોઈમાં પણ હોઈ શકતાં નથી કેમકે વિરોધી પરીષહોનું એકી સાથે રહેવું શક્ય નથી—જ્યારે શીતવેદના થાય છે. ત્યારે ઉષ્ણવેદના થઈ શકે નહીં આ બંનેમાંથી કોઈ એક જ પરીષહ હોય છે.

આવી જ રીતે શય્યા નિષદ્યા અને ચર્યા આ ત્રણમાંથી એક જ પરીષહ હોઈ શકે છે કારણ કે આ ત્રણ પરસ્પર વિરોધી છે. આ રીતે આ પાંચ પરીષહોમાંથી એક આત્મામાં એકી સાથે કોઈ બે પરીષહ જ હોય છે. આ બંનેમાં શેષ સત્તર પરીષહો ઉમેરી દેવાથી વધુમાં વધુ ઓગણીસ પરીષહ

एकादित एकोनविंशति पर्यन्तम् एकात्मनि एकदा परीषदाः सम्भवन्तीति एकोन विंशतिः क्षुत्पिपासादीनां परीषदाणां विकल्पा अवगन्तव्याः । शीतोष्णपरीषदयोरेकस्य शय्या निषद्या चर्या परीषदाणाञ्च मध्ये द्वयो व्यपगमेन मिश्रित्वा त्रयाणां परीषदाणामेकदा एकात्मनि व्यपगमात् । अथैवम् प्रज्ञाऽज्ञान परीषदयोरपि परस्परविरुद्धत्वा त्तयोरेकस्यैव परीषदस्य एकात्मनि एकदा सम्भवः इति चेत् ३ अत्रोच्यते श्रुतज्ञानाऽपेक्षया प्रज्ञापरीषदस्य, अवधिज्ञानाऽपेक्षयाऽज्ञानपरीषदस्य चेकदैकात्मनि सम्भवेन तयोः परस्परविरुद्धत्वाभावात् विरोधो नास्तीति भावः । १८।

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ--પૂર્વે તાત્રત્-ક્ષુત્પિપાસાદીનાં દ્વાવિંશતિ પરીષદાનાં મધ્યે સૂક્ષ્મસમ્પરાય છઠ્ઠસ્થ વીતરાગયો અતુર્દશપરીષદાઃ, મળવતિ જિને-પ્રકાદશપરીષદાઃ : ઇત્યાદિ, એવં રીત્યા વ્યસ્તસમસ્તરૂપેણ યથાયથં પ્રતિપાદિતમ્,

અધિક બન્નીસ પરીષદ એક સાથ એક આત્મા મેં હોતે હેં-અર્થાત્ કિસી કો એક, કિસી કો દો, કિસી કો ત્રીન, હસ પ્રકાર ઉન્નીસ પરીષદ તક હોના સંભવ હૈ ।

શંકા—પ્રજ્ઞા ઔર અજ્ઞાન પરીષદ બી પરસ્પર વિરોધી હૈ, અતઃવ હન દોનોં મેં સે બી એક સાથ એક આત્મા મેં એક હી હોના चाहिए ।

સમાધાન--પ્રજ્ઞાપરીષદ શ્રુતજ્ઞાન કી અપેક્ષા ઔર અજ્ઞાન પરીષદ અવધિજ્ઞાન કી અપેક્ષા સે સમજના चाहिए । યે દોનોં પરીષદ એક આત્મા મેં એક સાથ હો સકતે હૈ, અતઃ પરસ્પર વિરોધ નહોં હૈ ॥૧૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-ક્ષુધા પિપાસા આદિ વાઈસ પરીષદ મેં સે સૂક્ષ્મ-સામ્પરાય ઔર છઠ્ઠસ્થવીતરાગ મેં ચૌદહ પરીષદ હોતે હૈ, કેવલી અર્હન્ત અગવાન મેં ગધારહ પરીષદ પાથે જા સકતે હૈ, ઇત્યાદિ વ્યસ્ત ઔર સમસ્ત રૂપ મેં પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા હૈ, અવ યહ પ્રતિપાદન કરતે

એક સાથે એક આત્મામાં હોય છે-અર્થાત્ કોઈને એક, કોઈને બે, કોઈને ત્રણ, એ રીતે આગળીશ પરીષદ સુધી હોયું સંભવિત છે.

શંકા-પ્રજ્ઞા અને અજ્ઞાન પરીષદ પણ પરસ્પર વિરોધી છે, આથી આ બંનેમાંથી એકી સાથે એક આત્મામાં એક જ હોયું નેઈ એ ?

સમાધાન-પ્રજ્ઞાપરીષદ શ્રુતજ્ઞાનની અપેક્ષા અને અજ્ઞાનપરીષદ અવધિજ્ઞાનની અપેક્ષાથી સમજવાના છે. આ બંને પરીષદ એક આત્મામાં એક સમયે હોઈ શકે છે આથી પરસ્પર વિરોધી નથી. ॥૧૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-ક્ષુધા પિપાસા આદિ બાવીસ પરીષદોમાંથી સૂક્ષ્મ-સમ્પરાય અને છઠ્ઠસ્થ વીતરાગમાં ચૌદ પરીષદ હોય છે. કેવળી અર્હન્ત ભગવાનમાં અગીયાર પરીષદ બેવામાં આવે છે ઇત્યાદિ વ્યસ્ત અને સમસ્ત રૂપમાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે હવે એ પ્રતિપાદન કરીએ છીએ કે

सम्प्रति-एकात्मन्यैकदैकत आरभ्य एकोनविंशति पर्यन्तं परीषहाः सम्भवन्तीति प्रतिपादयितुमाह-‘एकस्मिन् जीवे जुगवं एणादि जाव एगूणवीसा परीसहा’ इति । एकस्मिन् कस्मिंश्चिज्जीवे युगपत् एकदा एकादि यावत् एकोनविंशतिः, तत्र -कदाचित्कश्चिदेकात्मनि एकदा क्षुत्पिपासादिषु कश्चिदेकः परीषहः, कदाचिदेकदा क्वचिदेकात्मनि द्वौ परीषहौ, कदाचित्कश्चिदेकात्मनि त्रयः परीषहा, इत्येवं रीत्या यावत् कदाचित्कश्चिदेकदैकात्मन्यैकोनविंशतिः परीषहाः सम्भवन्तीति भावः किन्तु एकदैकानि क्षीतोष्णपरीषहौ समकं न सम्भवतः, तयो परस्परमन्यन्तविरुद्धत्वात् एवं चर्या शय्या निषद्यासु द्वौ परीषहौ, अवशिष्टाः सप्तदश

हैं कि एक आत्मा में, एक ही काल में एक से लेकर अधिक से अधिक उन्नीस परीषह तक पाये जा सकते हैं-

एक जीव में एक साथ एक से लेकर उन्नीस परीषह तक हो सकते हैं । अर्थात् किसी आत्मा में किसी समय क्षुधा आदि बाईस परीषहों में से कोई एक ही परीषह होता है, कदाचित् दो परीषह होते हैं, कदाचित् तीन एक साथ हो जाते हैं, इसी प्रकार कभी कहीं किसी आत्मा में अधिक से अधिक उन्नीस परीषह तक होना संभव है ।

एक ही काल में एक ही जीव में शीत और उष्ण दोनों परीषह साथ-साथ नहीं होते, क्योंकि ये दोनों परस्पर में अत्यन्त विरोधी हैं । इसी प्रकार चर्या, शय्या और निषद्या परीषहों में से भी कोई एक परीषह का ही संभव है, तीनों का संभव नहीं, हैं क्योंकि ये भी परस्पर विरोधी हैं । इस प्रकार शीत और उष्ण में से कोई एक तथा चर्या,

એક આત્મામાં, એક જ સમયમાં, એકથી લઈને વધારેમાં વધારે ૧૯ ઓગણીસ પરિપહ સુધી ભોવામાં આવે છે. એક જીવમાં એક સાથે એકથી લઈએ ઓગણીસ પરિપહ સુધી હોઈ શકે છે અર્થાત્ કોઈ આત્મામાં કોઈ સમયે ક્ષુધા આદિ બાવીસ પરિપહોમાંથી કોઈ એક જ પરિપહ હોય છે, કદાચિત્ એ પરિપહ હોય છે, કદાચિત્ ત્રણ એક સાથે થઈ જાય છે, આવી રીતે ક્યારેક કોઈ આત્મામાં અધિકથી અધિક ઓગણીસ પરિપહ સુધી હોઈ શકે છે.

એક જ કાળમાં, એક જ જીવમાં શીત અને ઉષ્ણ બંને પરિપહ સાથે-સાથે હોતાં નથી, કારણ કે એ બંને પરસ્પરમાં અત્યન્ત વિરોધી છે. આવી જ રીતે ચર્યા, શય્યા અને નિષદ્યા પરિપહોમાંથી કોઈ એક પરિપહ જ હોઈ શકે છે, ત્રણે નહીં, કારણ કે એ ત્રણ પરસ્પર વિરોધી છે. આ રીતે શીત અને ઉષ્ણમાંથી કોઈ એક તથા ચર્યા નિષદ્યા અને શય્યા પરિપહમાંથી કોઈ

પરીપહાશ્ચ ક્ષુત્પિષાસાદય એકદા એકાત્મનિ સમ્ભવન્તીતિ એકત આરભ્યેકોન-
 વિંશતિ પર્યન્તં વિકલ્પાઃ સમ્ભવન્તિ । તત્ર-કસ્યચિદાત્મન એકદા કશ્ચિદેકઃ
 પરીપહઃ, કસ્યચિદાત્મન એકદા દ્વૌ પરીપહૌ, કર્યાચિદાત્મન એકદા ત્રયઃ પરીપહાઃ,
 કસ્યચિદાત્મનઃ એકચત્વારઃ, इत्येवं तावत्-યાવદેકોનવિંશતિઃ પરીપહાઃ કસ્ય
 ચિદાત્મન એકદાઽવિરોધાત્ સંજાયન્ને । શીતોષ્ણપરીપહયોઃ શય્યા નિષઘ્ના ચર્યા
 પરીપહાણાશ્ચ પરસ્પરિરુદ્ધત્વાત્ નૈકદૈકાત્મનો વિંશતિઃ એકવિંશતિઃ દ્વાવિંશતિ-
 ર્વાપરીપહાઃ સમ્ભવન્તિ । તત્ર શીતોષ્ણયોરસહાઽવસ્થાનલક્ષણો વિરોધઃ પરસ્પર-
 પરિહારેણૈવ તયોઃ સ્થિતિઃ સમ્ભવતિ, એવમ્ શય્યા નિષઘ્ના ચર્યાણામેકસ્ય પરી-

નિષઘ્ના ઔર શય્યા પરીપહ મેં સે કોઈ એક પરીપહ હોતા હૈ । શેષ
 જો સત્તરહ પરીપહ હૈં વે સભી એક જીવ મેં એક સાથ હો સકતે હૈં । હસ
 પ્રકાર કુલ ડન્નીસ પરીપહ એક સાથ એક જીવ મેં હોના સંભવ હૈં ।

કિસી આત્મા મેં કિસી સમય એક હી પરીપહ પાયા જાતા હૈ,
 કિસી મેં એક સાથ દો હો સકતે હૈ, કિસી મેં ત્રીન ઔર કિસી મેં
 ચાર કા સંભવ હૈં । હસ પ્રકાર ડન્નીસ પરીપહ તક એક સાથ એક આત્મા
 મેં હો સકતે હૈં । વીસ, ઇક્કીસ યા વાઈસો પરીપહ કિસી આત્મા મેં
 એક સાથ નહીં હો સકતે । હસકા કરણ પહેલે હી વતલાયા જા ચુકા
 હૈ કિ શીત ઔર ઉષ્ણ મેં સે એક તથા શય્યા નિષઘ્ના ઔર ચર્યા મેં સે
 કોઈ એક હી પરીપહ હોના હૈ । હસ પ્રકાર વાઈસ મેં સે ત્રીન પરીપહ કમ
 હો જાતે હૈં । શીત ઔર ઉષ્ણ મેં સહાનવસ્થાન કા (એક સાથ ન રહ
 સકના) વિરોધ હૈ । વે એક દુસરે કા પરિહાર કરકે હી રહ સકતે હૈં ।

એક જીવમાં એક સાથે થઈ શકે છે બાકીના જે સત્તર પરીપહો છે તે બધા જ
 એક જીવમાં એકી સાથે હોઈ શકે છે. આ રીતે કુલ બોગણીસ પરીપહ
 એકી સાથે, એક જીવમાં સંભવી શકે છે.

કોઈ આત્મામાં કોઈ સમયે એક જ પરીપહ જોવામાં આવે છે,
 કોઈમાં એકી સાથે જ હોઈ શકે છે, કોઈમાં ત્રણ અને કોઈમાં ચાર સંભવી
 શકે છે. આ રીતે બોગણીસ પરીપહ સુધી એકી સાથે એક આત્મામાં હોઈ
 શકે છે. વીસ, એકવીસ અગર બાવીસ-બાવીસ પરીપહ કોઈ આત્મામાં એકી
 સાથે હોઈ શકતાં નથી, એનું કારણ પહેલાં જ બતાવી દેવામાં આવ્યું છે
 કે શીત અને ઉષ્ણમાંથી એક તથા શય્યા, નિષઘ્ના અને ચર્યામાંથી કોઈ
 એક જ પરીપહ હોય છે. આ રીતે બાવીસમાંથી ત્રણ પરીપહ એ છાં થઈ
 જાય છે. શીત ઉષ્ણમાં સહાનવસ્થાન (એકી સાથે ન રહી શકવું) વિરોધ છે.
 તેઓ એકબીજાનો પરિહાર કરીને જ રહી શકે છે.

पहस्य सम्भवे द्वयोरभावः शय्यापरीषहे सति निषद्या चर्यापरीषहयोरसद्भावः, निषद्यापरीषहे सति शय्या चर्या परीषहयोरभावः, चर्यापरीषहे सति तु शय्या निषद्यापरीषहयोरसद्भाव एव तिष्ठति, अतएव त्रयाणां वर्जनं कृतम् । अथैव प्रज्ञाऽज्ञानपरीषहयोरपि सहाऽनवस्थानलक्षणविरोधात् तयोरेकस्यैव परीषहस्य एकात्मनि एकदा सम्भव इति चेत् ३ उच्यते श्रुतज्ञानाऽपेक्षया प्रज्ञापरीषहस्या, स्वधिज्ञानाऽपेक्षया चाऽज्ञानपरीषहस्य एकदैकात्मनि सम्भवेन विरोधो नास्ति । तथा च क्षुत्पिपासादीनां द्वाविंशतिपरीषदाणां मध्ये एकादयो यावद् आ एकोन-विंशतिः परीषदा युगपदेकात्मनि भजनीयाः, नतु कदाचिद् एकात्मनि विंशतिः एकविंशतिः द्वाविंशतिर्वा, उक्तयुक्तेः ॥१६॥

इसी प्रकार शय्या, निषद्या और चर्या में से किसी एक का सद्भाव होने पर दो का अभाव होता है । अगर शय्यापरीषह होगा तो निषद्या और चर्या परीषह नहीं होंगे, निषद्या परीषह के होने पर शय्या और चर्या परीषह नहीं हो सकते और चर्या परीषह के होने पर शय्या और निषद्या परीषह नहीं हो सकते ।

शंका-प्रज्ञा और अज्ञान परीषह में भी सहाऽनवस्थान का विरोध है, अतएव इन दोनों में से भी एक आत्मा में एक साथ एक ही परीषह होना चाहिए ।

समाधान--प्रज्ञापरीषह श्रुतज्ञान की अपेक्षा से है और अज्ञान परीषह अवधिज्ञान की अपेक्षा से । अतएव इन दोनों में पारस्परिक विरोध नहीं है और जब विरोध नहीं है तो दोनों एक साथ हो सकते हैं ।

इस प्रकार चाईस परीषहों में से एक से लेकर उन्नीस परीषह

આ રીતે શય્યા, નિષદ્યા અને ચર્યામાંથી કોઈ એકનો સદ્ભાવ હોવાથી બંનેનો અભાવ થઈ જાય છે. અગર શય્યા પરીષદ હશે તો નિષદ્યા અને ચર્યા પરીષદ હોઈ શકે નહીં અને જ્યારે ચર્યાપરીષદ હોય ત્યારે શય્યા અને નિષદ્યા પરીષદ હોઈ શકતા નથી.

શંકા-પ્રજ્ઞા અને અજ્ઞાન પરીષદમાં સહાનવસ્થાન નો વિરોધ છે આથી બંનેમાંથી પણ એક આત્મામાં એકી સાથે એક જ પરીષદ હોવો જોઈએ.

સમાધાન-પ્રજ્ઞાપરીષદ શ્રુતજ્ઞાનની અપેક્ષાથી છે અને અજ્ઞાનપરીષદ અવધિજ્ઞાનની અપેક્ષાથી આથી આ બંનેમાં પારસ્પરિક વિરોધ નથી અને જો વિરોધ નથી તો બંને એકી સાથે હોઈ શકે છે.

આ રીતે બાવીસ પરીષદોમાંથી એકથી લઈને ઓગણીસ પરીષદ સુધી

પૂર્વમહારમ્મ મહાપરિગ્રહાયો નારક તિર્યક્મનુષ્યાયુપા આસ્રવઃ પ્રતિપાદિતઃ
તન્ન-સ્વભાવમાર્દત્વેન મનુષ્યાયુપ આસ્રવો ભવતીતિ તદાસ્રવનિવારણાર્થં વ્રતાદિ
પરિપાલનીયમ્ યદ્વા એતે દ્વાવિંશતિઃ પરીપદા વ્રતેશ્ચેવ ભવન્તીત્યતોઽન્ન વ્રતાધિ-
કારમાહ વ્રતશ્ચ સમ્યક્ત્વ મન્તરેણ ન સમ્ભવતીતિ પૂર્વં સમ્યક્ત્વસ્વરૂપમાહ—

મૂલમ્—જિણ વચ્ચણસદ્દહર્ણ ॥૧૭॥

છાયા—જિનવચનશ્રદ્ધાનં—સમ્યક્ત્વમ્ । ૧૭

મૂલમ્—હિંસાઈહિંતો દિરઈવચં ॥૧૮॥

તક એક આત્મા મેં એક સાથે મજનીય હૈં । એક હી આત્મા મેં એક હી
કાલ મેં થીસ, હકીસ અથવા બાઈસ પરીપદ સંભવ નહીં હૈ । હસ
વિષય મેં યુક્તિ પહેલે કહી જા ચુકી હૈ ॥૧૬॥

પહેલે મહારંભ મહાપરિગ્રહ આદિ નરકાયુ, તિર્યચાયુ ઓર મનુ-
ષ્યાયુ કે કારણોંં કા પ્રતિપાદન કિવા ગયા થા, વહાં યહ નિરૂપણ
કિયા ગયા થા કિ સ્વભાવ કી મૃદુતા સે મનુષ્યાયુ કા આસ્રવ હોતા
હૈ । इन आयुओं के आस्रव को रोकने के लिये व्रतों का पालन करना
चाहिये । अथवा व्रतों के सद्भाव में ही यह परीपद होते हैं । अतएव
व्रतों का अधिकार कहते हैं । किन्तु सम्यक्त्व के व्रत नहीं हो सकते
हस कारण सर्वप्रथम સાસ્વાદન કા સ્વરૂપ વતલાતે હૈં—

‘જિણવચ્ચણ સદ્દહર્ણ સમ્મત્તં’ ॥૧૭॥

સૂત્રાર્થ—જિન વચનોંં કા શ્રદ્ધાન્ (શ્રદ્ધાકરના) સમ્યક્ત્વ હૈ ॥૧૭॥

એક આત્મામાં એકી સાથે હોઈ શકે છે એક જ આત્મામાં, એક જ
કાળમાં વીસ, એકવીસ અથવા બાવીસ પરીપદ હોઈ શરતાં નથી આ વિષ-
યમાં યુક્તિ અગાઉ કહેવામાં આવી ગઈ છે. ॥૧૬॥

આ પહેલાં મહારંભ, મહાપરિગ્રહ આદિ નરકાયુ, તિર્યચાયુ અને
મનુષ્યાયુના કારણોંં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હતું, ત્યાં એ પણ નિરૂપણ
કરવામાં આવ્યું હતું કે સ્વભાવની મૃદુતાથી મનુષ્યાયુનો આસ્રવ થાય છે.
આ આયુષોના આસ્રવને રોકવા માટે વ્રતોનું અનુષ્ઠાન કરવું જોઈએ અથવા
વ્રતોના સદ્ભાવમાં જ આ પરીપદ હોય છે આથી વ્રતોનો અધિકાર મહીએ
છીએ પરંતુ સમ્યક્ત્વ વગર વ્રત થઈ શકે નહીં આથી સર્વપ્રથમ સમ્યક્ત્વનું
સ્વરૂપ બતાવીએ છીએ—

મૂલમ્—જિણવચ્ચણસદ્દહર્ણ સમ્મત્તં ॥૧૭॥

સૂત્રાર્થ—જિનવચનોમાં શ્રદ્ધા રાખવી સમ્યક્ત્વ છે. ॥૧૭॥

છાયા—હિસાદિભ્યો વિરતિ વ્રતમ્ ॥૧૮॥

મૂલમ્—તં સવ્વઓ દેસઓ મહં-અણૂય ॥૧૯॥

છાયા—તત્ સર્વતો દેશતો, મહદ-ણુ ચ ॥૧૯॥

મૂલમ્—સવ્વઓ અણગારસ્સ, તે પંચ દેસઓ અગારિસ્સ તે વારસ ॥૨૦॥

છાયા—સર્વતોઽનગારસ્સ, તાનિ પચ્ચ, દેશતોઽગારિણઃ વાત્તિ દ્વાદશ ॥૨૦॥

મૂલમ્—તાઈં વારસ, અણુવ્વય-ગુણવ્વય-સિલ્લાવય એવા ॥૨૧॥

છાયા—તાનિ દ્વાદશ 'વ્રતનિ' અણુવ્રત ગુણવ્રત-શિક્ષાવ્રત એવત્તેષાં ॥૨૧॥

‘હિસાઈ હિતો વિરઈ વય’ ॥૧૮॥

સૂત્રાર્થ—હિસા આદિ પાપો લે નિવૃત્ત થેના જત અરહત ॥૧૮॥

‘તં સવ્વઓ દેસઓ મહં-અણૂય’ ॥૧૯॥

સૂત્રાર્થ—વિરતિ લો વ્રતાર ક્ષી-તે-સર્વ વિરતિ એવે દેશવિરતિ ॥૧૯॥

સર્વવિરતિ લો અહોવ્રત કરતે હૈ, દેશવિરતિ લો અણુવ્રત કરતે હૈ ॥૧૯॥

‘સવ્વઓ અણગારસ્સ, તે પંચ, દેસઓ અગારિસ્સ, તે વારસ’ ॥૨૦॥

સૂત્રાર્થ—સર્વવિરતિ અનગાર-સાધુ લો હોતે હૈ તે વ્રત સર્વ હૈ ॥૨૦॥

દેશવિરતિ રૂપ વ્રત ગૃહસ્થ આવક લે હોતે હૈ ॥ તે વારસ હૈ ॥૨૦॥

‘તાઈં વારસ અણુવ્વય, ગુણવ્વય-સિલ્લાવય એવા’ ॥૨૧॥

સૂત્રાર્થ—અણુવ્રત, ગુણવ્રત ઓર શિક્ષાવ્રત લે એક સે આવક લે વ્રત વારસ પ્રકાર લે ॥૨૧॥

મૂલમ્—હિસાઈહિતો વિરઈ વય ૧૮

સૂત્રાર્થ—હિસા આદિ પાપોથી નિવૃત્ત થવું વ્રત કહેવાય છે ॥૧૮॥

મૂલમ્—તં સવ્વઓ દેસઓ મહં-અણૂય ૧૯

સૂત્રાર્થ—વિરતિ એ પ્રકારની છે-સર્વ વિરતિ અને દેશવિરતિ સર્વ વિરતિને

મહોવ્રત કહે છે, દેશવિરતિને અણુવ્રત કહે છે. ॥૧૯॥

મૂલમ્—સવ્વઓ અણગારસ્સ, તે પંચ, દેસઓ અગારિસ્સ તે વારસ ॥૨૦॥

સૂત્રાર્થ—સર્વવિરતિ અણુગાર સાધુને હોય છે તે પાંચ છે-દેશવિરતિ

વ્રત ગૃહસ્થ આવકને હોય છે તે વાર હોય છે. ॥૨૦॥

મૂલમ્—તાઈં વારસ, અણુવ્વય, ગુણવ્વ-સિલ્લાવય એવા ॥૨૧॥

સૂત્રાર્થ—અણુવ્રત, ગુણવ્રત અને શિક્ષાવ્રતના લેહથી આવકના વ્રત બાર

પ્રકારના છે. ॥૨૧॥

મૂલમ્-તત્થ અણુવ્વયાઈં પંચ, થૂલ-હિંસા-મુસાવાય-
તેણિક્ક-મેહુણ-પરિગ્ગહવિરમણમેયા ॥૨૨॥

છાયા-તત્રાણુવ્રતાનિ પચ્ચ, સ્થૂલહિંસા મૃષાવાદ-સ્તૈન્ય મૈથુન-પરિગ્ગહવિર-
મણમેદાત્ ॥૨૨॥

મૂલમ્-ગુણવ્વયાઈં તિન્નિ, દિસિવ્વય-ઉવભોગપરિભોગ-
પરિમાણ અણદ્ડદંડવિરમણમેયા ॥૨૩॥

છાયા-ગુણવ્રતાનિ ત્રીણિ, દિગ્ગતો-પ્રભોગપરિભોગપરિમાણાનર્થદણ્ડવિરમણ-
મેદાત્ ॥૨૩॥

મૂલમ્-સિલ્લવાવયાઈં ચત્તારિ, સામાઙ્ગિક-દેસાવગાસિય-
પોસહોવવાસ-અતિહિસંવિભાગમેયા ॥૨૪॥

‘તત્થ અણુવ્વયાઈં પંચ થૂલ હિંસા મુસાવાય-તેણિક્ક મેહુણ-પરિ-
ગ્ગહવિરમણમેયા’ ॥૨૨॥

સૂત્રાર્થ-અણુવ્રત પાંચ હૈં-(૧) સ્થૂલ હિંસાવિરમણ (૨) સ્થૂલ મૃષા-
વાદવિરમણ (૩) સ્થૂલ સ્તેયવિરમણ (૪) સ્થૂલ મૈથુન વિરમણ ઓર સ્થૂલ
પરિગ્રહ વિરમણ ॥૨૨॥

‘ગુણવ્વયાઈં તિન્નિ, દિસિવ્વય ઉવભોગપરિભોગપરિમાણઅણદ્ડ
દંડવિરમણમેયા ॥૨૩॥

સૂત્રાર્થ-ગુણવ્રત ત્રીણ હૈં-દિશાવ્રત, ઉપભોગ પરિભોગ પરિમાણ
ઓર અનર્થદણ્ડ વિરમણ ॥૨૩॥

‘સિલ્લવાવયાઈં ચત્તારિ, સામાઙ્ગિક-દેસાવગાસિય-પોસહોવવાસ
અતિહિસંવિભાગમેયા ॥૨૪॥

મૂલમ્-તત્થ અણુવ્વયાઈં પંચ થૂલ-હિંસા-મુસાવાય-તેણિક્ક-મેહુણ-
પરિગ્ગહવિરમણમેયા ॥૨૨॥

સૂત્રાર્થ-અણુવ્રત પાંચ છે-(૧) સ્થૂળહિંસા વિરમણ (૨) સ્થૂળમૃષાવાદ
વિરમણ (૩) સ્થૂળસ્તેય વિરમણ (૪) સ્થૂળમૈથુન વિરમણ અને (૫) સ્થૂળ-
પરિગ્રહ વિરમણ. ॥૨૨॥

મૂલમ્-ગુણવ્વયાઈં તિન્નિ, દિસિવ્વય-ઉવભોગ પરિભોગ પરિમાણ અણદ્ડદંડ
વિરમણમેયા ૨૩

સૂત્રાર્થ-ગુણવ્રત ત્રણ છે-દિશાવ્રત, ઉપભોગ પરિભોગ પરિમાણ અને
અનર્થદંડ વિરમણ. ॥૨૩॥

મૂલમ્-સિલ્લવાવયાઈં ચત્તારી, સામાઙ્ગિક-દેસાવગાસિય-પોસહોવવાસઅતિ-
હિસંવિભાગમેયા ૨૪

છાયા-શિક્ષાત્રતાનિ ચત્વારિ, સામાયિક-દેશાવકાશિક-પૌષધોપવાસા-તિથિ સંવિભાગભેદાત્ ॥૨૪

મૂલમ્-પ્રમત્તજોગા પાણાહવાયો હિંસા ॥૨૫॥

છાયા-પ્રમત્તયોગાત્-પ્રાણાતિપાતો હિંસા ૨૬

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વં તાવત્-મહારમ્મ મહાપરિગ્રહાદયો નારક-તિર્યક-મનુષ્યાયુષા માસ્રવો ભવતીતિ પ્રતિપાદિતમ્, તત્ર-મહારમ્મ મહાપરિગ્રહાદો હિંસા-સ્વરૂપં ભાવિનીતિ હિંસાસ્વરૂપમાહ-'પ્રમત્તજોગા' इत्यादि। પ્રમત્તયોગાત્પ્રાણાતિ-પાતોહિંસા, તત્ર પ્રમત્તયોગાત્ પ્રમાદ્યતિ, इति પ્રમત્તઃ પ્રમાદપરિણત આત્મા, પ્રમાદશ્ચ -કષાયનિમિત્તક આત્મપરિણામઃ । કષાયત્વં વા પ્રમાદઃ કષાયાણાં પ્રમાદહેતુત્વાત્

સૂત્રાર્થ-શિક્ષાત્રત્તચાર હૈં-સામાયિક, દેશાવકાશિક પૌષધોપ-વાસ ઓર અતિથિસંવિભાગ ॥૨૪॥

'પ્રમત્તજોગા પાણાહવાયા હિંસા' ॥૨૫॥

સૂત્રાર્થ-પ્રમાદ યુક્ત યોગ સે પ્રાણોં કા અતિપાત કરના હિંસા હૈ ॥૨૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલે પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા થા કિ મહારંભ ઓર મહાપરિગ્રહ આદિ નરકાયુ, તિર્યચાયુ ઓર મનુષ્યાયુ કે આસ્રવ હૈં । મહારંભ ઓર મહાપરિગ્રહ આદિ મૈં હિંસા અવશ્ય હોતી હૈ, અતઃપ્રવ હિંસા કા સ્વરૂપ કહતે હૈં-

પ્રમત્ત યોગ સે પ્રાણોં કા અતિપાત કરના હિંસા હૈ । પ્રમાદ સે યુક્ત આત્મા પ્રમત્ત કહલાતા હૈ । કષાય કે નિમિત્ત સે હોને વાલા આત્મા કા પરિણામવિશેષ પ્રમાદ કહા જાતા હૈ । અથવા કષાય હી

સૂત્રાર્થ-શિક્ષાત્રત ચાર છે-સામાયિક, દેશાવકાશિક, પૌષધોપવાસ અને અતિથિસંવિભાગ. ॥૨૪॥

મૂલમ્-પ્રમત્તજોગા પાણાહવાયા હિંસા ॥૨૫॥

સૂત્રાર્થ-પ્રમાદયુક્ત યોગથી પ્રાણોને અતિપાત કરવો હિંસા છે. ॥૨૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલા પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હતું કે મહારંભ અને મહાપરિગ્રહ આદિ નરકાયુ તિર્યચાયુ અને મનુષ્યાયુના આસ્રવ છે. મહારંભ અને મહાપરિગ્રહ આદિમાં હિંસા અવશ્ય હોય છે આથી અમે હિંસાનું સ્વરૂપ કહીએ છીએ-

પ્રમત્ત યોગથી પ્રાણોને અતિપાત કરવો હિંસા છે. પ્રમાદથી યુક્ત આત્મા પ્રમત્ત કહેવાય છે. કષાયના નિમિત્તથી થનારા આત્માના પરિણામ વિશેષને પ્રમાદ કહેવામાં આવે છે, અથવા કષાય જ પ્રમાદ છે કારણ કે તે

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वसूत्रे, महारम्भमहापरिग्रहादौ नारक-तिर्यङ्मनुष्या-
युषामासौ भवतीति प्रतिपादितम्, महारम्भ महापरिग्रहादौ हिंसाऽवश्यम्भावितीति
हिंसास्वरूपमाह—‘प्रमत्त जीवा पाणाहवायो हिंसा’ इति । प्रमत्तयोगात् मद्य-
विषयादिभिः पञ्चभिः प्रमादैः प्रमाद्यतीति प्रमत्तः आत्मा, तत्र-प्रमादाः पञ्च, यथा—

‘मज्जं विस्रयकसाया निद्राविकथाय पञ्चमी भणिथा ।

एए पंच पयाया जीवं पाडेति संसारे ॥१॥

‘मद्यं विषयकषाया निद्रा विकथा च पञ्चमी भणिता ।

एते पञ्च प्रमादा जीवं पातयन्ति संसारे ॥१॥ इति,

तत्र मद्यं शीघ्रादिकं प्रसिद्धं तच्च-प्रमादहेतुत्वान्मद्यं प्रमादः १ विषयाः पञ्च
स्पर्शनादि पञ्चन्द्रियजन्यत्वात् २ कषाया क्रोधादयश्चत्वारः ३ निद्रा, निद्रा निद्रादि-

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पूर्व सूत्र में बतलाया गया था कि महारंभ, महा-
परिग्रह आदि शब्द से पञ्चेन्द्रिय बध, मद्यमांस का सेवन करना नारक,
तिर्यच और मनुष्यगति आदि के कारण हैं, महारंभ और महापरिग्रह
आदि में हिंसा का होना अनिवार्य है, इस कारण यहां हिंसा का
स्वरूप कहते हैं—

प्रमत्तयोग से प्राणों का अतिपात करना हिंसा है । प्रमत्तयोग
अर्थात् मद्य विषय आदि पांच प्रमादों से युक्त आत्मा के व्यापार से
प्राणों का जो वियोग होता है, उसे हिंसा कहते हैं । प्रमाद पांच हैं, यथा
‘मद्य, विषय, कषाय, निद्रा और विकथा, ये पांच प्रमाद जीव को
संसार में परिभ्रमण कराते हैं ॥१॥

सीधु आदि मदिरा को मद्य कहते हैं । वह लोक में प्रसिद्ध है । मद्य

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पूर्वसूत्रमां गताववांमां आण्युं डतुं के महारंभ,
महापरिग्रह आदि शब्दों से पञ्चेन्द्रियबध, दाइ मांसनुं सेवन करवुं—नारक,
तिर्यच अने मनुष्यगति आदिनां कारण छे । महारंभ अने महापरिग्रह
आदिमां हिंसातुं डेवुं अनिवार्य छे, आधी अही हिंसातुं स्वइपकडीअछीअ-

प्रमत्त योगशी प्राणोना वियोग करवो हिंसा छे । प्रमत्तयोग अर्थात्
दाइ विषय आदि पांच प्रमादोशी युक्त आत्मानो व्यापारशी प्राणोना के
वियोग थाय छे तेने हिंसा कहे छे । प्रमाद पांच छे जेवां के—

‘मद्य विषय, कषाय, निद्रा अने विकथा, आ पांच प्रमाद जेवने
संसारमां परिभ्रमण करवनास छे ॥१॥

सीधु आदि दाइने मद्य कहे छे जे लोकमां प्रसिद्ध कहेल छे । स्पर्शन,

ભેદાત્પશ્ચવિધા ૫ વિકથા સ્ત્રી, મક્ત, દેશ, રાજભેદાચ્ચતુર્વિધા ૪ इत्येवमेकोन-
 વિશતિભેદમિન્નાઃ પ્રમાદાઃ પશ્ચ, તદ્વારકી રાગદ્વેષા તત્પરિણત આત્મા પ્રમત્ત
 ઉચ્યતે, પ્રમત્તસ્ય યોગો વ્યાપારશ્ચેષ્ટા, પ્રમત્તસ્યાત્મનઃ કપાયાદિચેષ્ટા, તસ્માત્
 પ્રમત્તયોગાત્ પ્રમત્તવ્યાપારેણ પ્રાણાતિપાતઃ પ્રાણવ્યપરોપણં હિંસા પ્રમત્તયોગ-
 માસાઘ પ્રાણાતિપાતં કુર્વન્નાત્મા હિંસાં નિષ્ણાદયતિ । પ્રાણાઃ પશ્ચેન્દ્રિયાણિ મનો-
 વાકાયાઃ પ્રાણાપાન માયુશ્ચેતિ દશવિધાઃ દ્રવ્યપરિણામલક્ષણઃ પૃથિવ્યાદિ-

કો પ્રમાદ કા કારણ હોને સે પ્રમાદ કહા હૈ । સ્પર્શન, રસના, ઘ્રાણ, ચક્ષુ ઓર શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયોં કે વિષય સ્પર્શ આદિ પાંચ હૈ । ક્રોધ આદિ કષાય ચાર હૈ । નિદ્રા પાંચ પ્રકાર કી હૈ-નિદ્રા, નિદ્રા-નિદ્રા, પ્રચલા, પ્રચલાપ્રચલા ઓર સ્થાનધિ । સ્ત્રી કથા મક્તકથા, । (ભોજનકથા) દેશકથા ઓર રાજકથા કે ભેદ સે વિકથા કે ચાર ભેદ હૈ । હસ પ્રકાર પ્રમાદ કે ઊભીસ ભેદ હૈ । હનકે કારણ આત્મા મેં રાગ-દ્વેષ કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ ।

જો આત્મા પ્રમાદ યુક્ત હોતા હૈ વહ પ્રમત્ત કહલાતા હૈ । પ્રમત્ત કે યોગ અર્થાત્ વ્યાપાર યા ચેષ્ટા કો પ્રમત્તયોગ કહતે હૈ । પ્રમત્ત આત્મા કી ચેષ્ટા સે પ્રાણોં કા વિયોગ હોના હિંસા હૈ । પ્રમત્તયોગ કો પ્રાપ્ત હોકર પ્રાણાતિપાત કરતા હુઆ આત્મા હિંસા કો ઉત્પન્ન કરતા હૈ ।

પ્રાણ દસ હૈ-પાંચ ઇન્દ્રિયાં, મન, વચન, કાયા પ્રાણાપાન ઓર આયુ, ચે દ્રવ્ય પ્રાણ કહલાતે હૈ ઓર પૃથ્વીકાયા આદિ મેં યથા યોગ્ય રુપ સે પાયે જાતે હૈ, અર્થાત્ એકેન્દ્રિયોં મેં ચાર, દ્વીન્દ્રિય મેં છહ,

રસના ઘ્રાણ, ચક્ષુ અને શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયોના વિષય સ્પર્શ આદિ પાંચ છે. ક્રોધ આદિ કષાય ચાર છે. નિદ્રા પાંચ પ્રકારની છે-નિદ્રા, નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલા, પ્રચલાપ્રચલા અને સ્થાનધિ સ્ત્રીકથા, ભક્તકથા (ભોજન સંબંધી કથા) દેશકથા અને રાજકથાના ભેદથી વિકથાના ચાર ભેદ છે. આ રીતે પ્રમાદના ઓગણીસ ભેદ છે. આના કારણે આત્મામાં રાગદ્વેષની ઉત્પત્તિ થાય છે.

જે આત્મા પ્રમાદયુક્ત હોય છે તે પ્રમત્ત કહેવાય છે. પ્રમત્તના યોગ અર્થાત્ વ્યાપાર અથવા ચેષ્ટાને પ્રમત્તયોગ કહે છે. પ્રમત્ત આત્માની ચેષ્ટાથી પ્રાણોના વિયોગ થવો હિંસા છે. પ્રમત્તયોગને પ્રાપ્ત થઈને પ્રાણાતિપાત કરતો થકો આત્મા હિંસાને ઉત્પન્ન કરે છે.

પ્રાણ દસ છે-પાંચ ઇન્દ્રિયો, મન, વચન, કાયા, પ્રાણાપાન અને આયુ આ દ્રવ્યપ્રાણ કહેવાય છે અને પૃથ્વીકાયા આદિમાં યથાયોગ રૂપથી જોવામાં

कायेषु यथायोग्य मवस्थिता स्तेषा मतिपातो व्यपरोपणम् अपनयन मात्मनो वियोजनं पृथकरणं हिंसा । उक्तञ्च—

‘पञ्चेन्द्रियाणि ५ त्रिविधं बलञ्च ३ उच्छ्वास निश्वास १ मथान्यदायुः । प्राणदशैते भगवद्भिरुक्ता स्तेषां वियोगीकरणन्तु हिंसा ॥१॥

अथवा—ययाऽऽत्मपरिणतिक्रियया प्राणव्यपरोपणं भवति, सा क्रिया वर्तु समवेता हिंसा उच्यते, तत्र—प्रमत्त एव हिंसको भवति नाऽप्रमत्तः । स खलु—प्रमत्त आप्त पुरुषोक्तागमनिरपेक्षो दूरीकृताऽऽर्षसूत्रोपदेशः स्वच्छन्दतया प्रभावित कायादिवृत्तिः अज्ञानपूर्णः प्राणिप्राणाऽपहरणमवश्यङ्करोति । सा खलु हिंसा

त्रीन्द्रिय में सात, चतुरिन्द्रिय में आठ, असंज्ञी पंचेन्द्रिय में नौ और संज्ञी पंचेन्द्रिय में दस प्राण होते हैं । कहा भी है—

‘पांच इन्द्रियां तीन बल (मनोबल, वचनबल, कायबल), उच्छ्वास निश्वास और आयु, ये दस प्राण भगवान् ने कहे हैं । इनमें से किसी का भी वियोग करना हिंसा है’ ॥१॥

अथवा आत्मा के जिस परिणाम (अध्यवसाय) से प्राणों का व्यपरोपण होता है, उसे हिंसा कहते हैं । यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि प्रमत्त जीव ही हिंसक होता है, जो प्रमाद से रहित है वह हिंसक नहीं होता । प्रमादी पुरुष आप्त जनों द्वारा प्रणीत आगम की परवाह नहीं करता, ऋषि प्रणीत आगम से प्रतिकूल व्यवहार करता है, काय आदि का स्वच्छन्द रूप से व्यापार करता है एवं अज्ञान से परिपूर्ण होता है । वह अवश्य ही प्राणियों के प्राणों का प्रणाश करता है ।

આવે છે, અર્થાત્ એકેન્દ્રિયેમાં ચાર, દ્વીન્દ્રિયેમાં છ, તેષાંન્દ્રિયમાં સાત ચતુરિન્દ્રિયમાં આઠ, અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિયમાં નવ અને સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિયમાં દશ પ્રાણ હોય છે કહ્યું પણ છે—

પાંચ ઇન્દ્રિયો, ત્રણ બળ (મનોબલ, વચન બળ કાયબલ) ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસ અને આયુ આ દસ પ્રાણ, ભગવાને કહ્યા છે. આમાંથી કોઈનો પણ વિયોગ કરવો હિંસા છે. ॥૧॥

અથવા આત્માના જે પરિણામ (અધ્યવસાય)થી પ્રાણોનો નાશ થાય છે તેને હિંસા કહે છે. એ વાત ધ્યાનમાં રાખવા યોગ્ય છે તે પ્રમત્ત જીવ જ હિંસક હોય છે, જે પ્રમાદથી રહિત છે તે હિંસક હોતો નથી. પ્રમાદી પુરુષ આપ્તજનો દ્વારા પ્રણીત આગમની પરવા કરતો નથી, ઋષિપ્રણીત આગમથી પ્રતિકૂળ વ્યવહાર કરે છે, કાયા આદિનો સ્વચ્છન્દ રૂપથી વ્યાપાર કરે છે અને અજ્ઞાનથી પરિપૂર્ણ હોય છે, તે ખમિત પ્રાણીઓના પ્રાણોના વિનાશ કરે છે.

દ્વિવિધા, દ્રવ્યભાવભેદાત્ । તત્ર દ્રવ્યતઃ પ્રાણિનાં પ્રાણવ્યપરોપણં ભાવત આત્મનો
મલિન પરિણામઃ । તત્ર પ્રાણાતિપાતવિસ્તસ્ય સોપયોગં વિઠરતો મુનેર્યા પાદન્યા-
સેન્ન પ્રાણિરક્ષા પ્રવૃત્તરથાપિ કથચ્ચેત પ્રાણિપ્રાણવ્યપરોપણરૂપા હિંસા ભવેત સા
ભાવહિંસા, તથાહિ-ક્રોધાદિ કષાયાદિ પ્રમાદાધીનસ્ય વ્યાધરચાક્રુષ્ટચાપસ્ય
દ્રવ્યહિંસા, ન તુ ભાવતઃ ક્ષતિ । યત્પુનઃ ભાવતઃ પ્રાણાતિપાતો ભવતિ સા
ભાવહિંસા, તથાહિ-ક્રોધાદિ કષાયાદિ પ્રમાદાધીનસ્ય વ્યાધરચાક્રુષ્ટચાપસ્ય
વાણવિષયવર્તિનં હરિણ મુદ્દિશ્ય પ્રક્ષિપ્તવાણસ્ય વાણપતનકાલાત્પ્રાગેવ તદ્દેશા
દપસૃતે હરિણેઽશુદ્ધચિત્તત્વાદેવ પ્રાણાતિપાતાઽકરણેઽપિ દ્રવ્યતોઽપિ નષ્ટેપિ

હિંસા દો પ્રકારની છે-દ્રવ્યહિંસા અને ભાવહિંસા । પ્રાણી કે
પ્રાણોં કા વિયોગ કરના દ્રવ્યહિંસા છે અને આત્મા કા મલિન પરિણામ
હોના ભાવહિંસા છે । જો મુનિ પ્રાણાતિપાત સે નિવૃત્ત હો ચુકા છે,
યતના પૂર્વક વિચરણ કર રહ્યા છે અને જીવોં કી રક્ષા મેં સાવધાની
વર્ત્ત રહ્યા છે, ઉલ્લે પાંચ રચને સે થદિ કિસી જીવ કા ઘાત હો જાય
તો વહ કેવલ દ્રવ્યહિંસા છે, ભાવહિંસા નહીં । અધ્યવસાયપૂર્વક જો
પ્રાણાતિપાત ક્રિયા જાતા છે, વહ ભાવહિંસા છે । કોઈ વ્યાધ ક્રોધ
આદિ કષાય કે અધીન હો રહ્યા છે, ઉલ્લે હરિણ કો ઘારને કે લિં
વાણ સ્વીચા અને ઉલ્લે છોડા, સંગર હસ લીચ હરિણ એક સ્થાન સે
દૂસરે સ્થાન પર ચલા જયા અને ઉલ્લે વાંળ નહીં લગ પાયો । હસ પ્રકાર
પ્રાણાતિપાત તો નહીં હુઆ-દ્રવ્યપ્રાણોં કા વ્યપરોપણ નહીં હુઆ, અને
હસ કારણ દ્રવ્યહિંસા નહીં છુદે, ફિર ઓ વ્યાધ કા ચિત્ત અશુદ્ધ

હિંસા બે પ્રકારની છે-દ્રવ્યહિંસા અને ભાવહિંસા । પ્રાણિનાં પ્રાણોંનો
વિયોગ કરવો દ્રવ્યહિંસા છે અને આત્માનું મલિન પરિણામ હોવું ભાવ-
હિંસા છે । જો મુનિ પ્રાણાતિપાતથી નિવૃત્ત થઈ ગયા છે, યતનાપૂર્વક વિચરણ
કરી રહ્યા હોય અને જીવોની રક્ષામાં સાવધાનીવાળા રહે છે, તેમના પરિણામ
મુકવાથી જો કોઈ જીવનો ઘાત થઈ જાય તો તે કેવળ દ્રવ્યહિંસા છે,
ભાવહિંસા નહીં । અધ્યવસાયપૂર્વક જો પ્રાણાતિપાત કરવામાં આવે છે તે
ભાવહિંસા છે । કોઈ શિકારી ક્રોધ આદિ કષાયને તાબે થઈ રહ્યો હોય, તેણે
હરિણને મારવા માટે શરસંધાન ધ્યુ હોય અને બાણ છોડ્યું હોય પરંતુ આ
હરમ્યાન હરણ એક જગાએથી અન્ય સ્થળે દોડી ગયું અને પેલા બાણ
તેને વાળ્યું નહોય તો પણ આ રીતે પ્રાણાતિપાત ન થયો । દ્રવ્યપ્રાણોંનું
વ્યપરોપણ થયું નહીં અને આથી દ્રવ્યહિંસા થઈ નહીં । તેમ છતાં શિકાર-
રીતું ચિત્ત અશુદ્ધ અર્થાત્ હિંસામય હોવાથી તેને હિંસાનું પાપ તો

પ્રાણિનિ લગત્યેવ હિંસા વાણવિક્ષેપકસ્ય, હિંસાસ્વરૂપેણાડમપરિણતિસસ્વાત્
સ્વકૃત સુકૃતિ દદા યુગ્મકર્મશેષાત્ મૃગસ્ય તત્પ્રાણાત્પલાઘ્ને, સ્વપ્રયાસે વિફ-
લોડપિ હન્તુશ્ચિત્તં વાંતકમેવ ભવતિ, મનસઃ ક્લિષ્ટત્વાત્ । एवं तस्याऽविशुद्धभावस्य
जिघांसोरुक्तान्त प्राणिप्राणसमुदायस्थले भावतो हिंसा, यद्येतादृश परिस्थितौ
मृगो म्रियते तदा तत्रोभाभ्यां द्वाभ्यामपि द्रव्यभावाभ्यां समुदिताभ्यां भवेत् ।
ततस्तस्य प्रमत्तयोगात् प्राणातिपातरूपा हिंसा भवतीतिभावः ॥२५॥

મૂલમ્—અસત્ત્વાભિહાણં મુસાવાઓ ॥૨૬॥

છાયા—‘અસત્યાડમિધાન મૃણાવાદઃ ॥૨૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ તાવત્ પ્રમત્તયોગા ત્પ્રાણાતિપાતલક્ષણં હિંસા સ્વરૂપં
પ્રાણાતિપાતાદિવિનિવૃત્તિ લક્ષણત્રયત્રિવિરોધિતયા પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પતિ-તદ્વિરો-

અર્થાત્ હિંસામય હોને સે ઉસે હિંસા કા પાપ લગતા હી હૈ । વ્યાધ કી
આત્મા કી પરિણતિ હિંસારૂપ હૈ, અતએવ આયુ કા પ્રગાઠ બન્ધ હોને
સે હિરણ ઉસ જગહ સે ભગ ગયા ઓર વ્યાધ કા પ્રયાસ સફલ નહીં
હુઆ, ફિર ખી ઉસકા ચિત્ત તો હિંસક હી હૈ । કદાચિત્ વ્યાધ કે
દ્વારા છોડા હુઆ વાગ લક્ષ્ય પર લગ જાય ઓર મૃગ કા વધ હો જાય
તો એસી પરિસ્થિતિ મેં દ્રવ્ય ઓર ભાવ- દોનો પ્રકાર કી હિંસા હોતી
હૈ । ઇસ પ્રકાર પ્રમત્તયોગ સે ઉસ વ્યાધ કો પ્રાણાતિપાત રૂપ હિંસા
હોતી હૈ ॥૨૫॥

‘અસત્ત્વાભિહાણં મુસાવાઓ ।’

સૂત્રાર્થ—અસત્ય કહના મૃણાવાદ હૈ ॥૨૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે પ્રમત્તયોગ સે પ્રાણો કા અતિપાત કરના
હિંસા હૈ, ઇસ પ્રકાર હિંસા કે સ્વરૂપ કા પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા હૈ, જો

લાગે જ છે. શિકારીના આત્માની પરિણતિ હિંસા રૂપ છે, આથી આયુષ્યનું
પ્રગાઠ બન્ધન હોવાથી હરણુ તે સ્થળેથી નાસી ગયું અને શિકારીનો પ્રયત્ન
સફળ થયો નહીં તો પણ તેનું ચિત્ત તો હિંસક જ છે. કદાચિત્ શિકારી
દ્વારા છોડાયેલું તીર લક્ષ્ય પર વાગી જાય અને હરણુનો વધ થઈ જાય—આવી
પરિસ્થિતિમાં દ્રવ્ય અને ભાવ—બંને પ્રકારની હિંસા થાય છે. આ રીતે
પ્રમત્ત યોગથી તે શિકારીની પ્રાણાતિપાત રૂપ હિંસા હોય છે. ॥૨૫॥

‘અસત્ત્વાભિહાણં મુસાવાઓ ।’

સૂત્રાર્થ—અસત્ય કહેવું મૃણાવાદ છે ॥૨૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—આ પહેલા પ્રમત્ત યોગથી પ્રાણોનો અતિપાત કરવો
હિંસા છે, આ રીતે હિંસાના સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરવામાં આયુષ્ય, જે

પ્રથમ તથા ક્રમપ્રાપ્તસ્ય દ્વિતીયસ્ય મૃષાવાદસ્યાઽનૃતસ્ય સ્વરૂપં નિરૂપયિતુમાદ= 'અસત્ત્વાચ્છિદ્ધાણં સુસાવાઓ' इति । असत्याऽभिधानम्-सच्छब्दस्य प्रशंसारूपोऽर्थः न सद्-असद् अप्रशस्तम्, असद्युक्तम् असत्यम् अनृतम्, ऋतं सत्यम्, न ऋतम् अनृतम् प्रशस्त्यरहितं प्रमत्तयोगाद् यदभिधानं वचनं स मृषावाद उच्यते । तथा च-अमतोऽप्रशस्तस्य विद्यमानार्थस्याऽविद्यमानस्य वा प्राणिपीडाकारकस्य वचनस्य यदभिधानं-कथनं तदनृतरूपो मृषावादः, प्रमत्तयोगाच्चदुच्यते तद् नृतं भवति । एवञ्च-यद् हिंसात्मकं वचनं तदनृतमिति बोध्यम् यद्-वचनं कर्णकर्कशं कर्णशूल प्रायं हृदयनिष्ठुरं मनः पीडाकरं विप्रलापप्रायं विरुद्धप्रलाप-फलं विरुद्धवचनं प्राणिवध बन्धनादि जनकं वैरकारकं कलहादिकरम् उत्त्रास-

પ્રાણાતિપાત વિરમણ વ્રતનું કા વિરોધી છે, અત્ર દુનરે વ્રતવિરોધી મૃષાવાદ રૂપ અસત્યના સ્વરૂપ કહીને છે-

અસત્ય ભાષણ કરના મૃષાવાદ કહીને છે । 'સત્' શબ્દના પ્રશંસા રૂપ અર્થ છે । જો 'સત્' ન હોય તો 'અસત્' અર્થાત્ અપ્રશસ્ત । 'અસત્' જે જો યુક્ત હોય તેને અસત્ય કહીને છે અર્થાત્ અનૃત । ઋતના અર્થ છે સત્ય, જો ઋત ન હોય તો અનૃત અર્થાત્ પ્રશસ્તતાથી રહિત । પ્રમત્તયોગથી અસત્ય કહીને મૃષાવાદ છે । હવે પ્રકાર અપ્રશસ્ત વચનના તથા વિદ્યમાનાર્થક તથા અવિદ્યમાનાર્થક પીડાકારી વચનના કથન કરના મૃષાવાદ છે । તાત્પર્ય એ છે કે જો વચન હિંસાત્મક છે તો અસત્ય છે । જો વચન કાનો કો કઠોર લગતો છે, કાનો મેં કાંટેની તરફ ઘુમતો છે, હૃદયને નિષ્ઠુર પ્રતીતિ હોતો છે, મનમાં પીડા ઉપજાતો છે જો વિલાપ જેવો છે-વિરુદ્ધ પ્રલાપ જેવો છે, વિરુદ્ધ છે, પ્રાણી

પ્રાણાતિપાત વિરમણવ્રતનું વિરોધી છે હવે બીજા વ્રતવિરોધી મૃષાવાદ રૂપ અસત્યનું સ્વરૂપ કહીને છીએ-

અસત્ય ભાષણ કરવું મૃષાવાદ કહેવાય છે. 'સત્' શબ્દનો પ્રશંસા રૂપ અર્થ છે. જે 'સત્' ન હોય તે 'અસત્' અર્થાત્ અપ્રશસ્ત 'અસત્'થી જે યુક્ત હોય તેને અસત્ય કહે છે અર્થાત્ અનૃત ઋતનો અર્થ છે સત્ય, ઋત ન હોય તે અનૃત અર્થાત્ પ્રશસ્તતાથી રહિત પ્રમત્ત યોગથી અસત્ય કહેવું મૃષાવાદ છે. આ રીતે અપ્રશસ્ત વચનનું કથન કરવું મૃષાવાદ છે. તાત્પર્ય એ છે કે જે વચન હિંસાત્મક છે તે અસત્ય છે. જે વચન કાનોને કર્કશ લાગે છે, મનમાં કાંટાની જેમ ખુંચે છે, હૃદયને નિષ્ઠુર બાંધે છે, મનમાં દુઃખ ઉપજાવે છે, જે વિલાપ જેવું છે-વિરુદ્ધ પ્રલાપ જેવું છે, વિરુદ્ધ છે, પ્રાણીના વધ અથવા બંધનનો પિતા છે, વૈરવૃત્તિવાળું છે, કલહ

કરમ્ આચાર્યોપધ્યાય ગુર્વાધિવજ્ઞાકરં ભવતિ, તત્સર્વમનૃત મુચ્યતે । અનૃતસ્ય વિવક્ષાઽપિ અનૃતવચનોપાયચિન્તનમપિ પ્રમત્તયોગાદનૃતં વોદ્યમ્ ॥૨૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વમૂત્રે-હિંસાદિ વિરતિલક્ષણવ્રતઘટકતયોપાત્તાનાં હિંસાઽનૃતસ્તેયમૈથુનપરિગ્રહાણાં મધ્યે પ્રયમં હિંસાયાઃ સ્વરૂપં નિરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ-ક્રમપ્રાપ્તસ્ય દ્વિતીયસ્ય મૃણાવાદસ્ય સ્વરૂપં નિરૂપયિતુમાહ-‘અસત્ત્વા-મિહાણં મુસાવાઓ’ इति । असत्याऽभिधानम्-प्रमत्तयोगात् असदभिधानम्, सच्छब्दः प्रशंसावाची सतः प्रशस्तस्य भावः सत्यम् न सत्यम्-असत्यम्, अप्रश-स्तम् अभिधानं-वचनं मृषावाद उच्यते, अभिधानशब्दो भावसाधनः-करणसाध-नो वा बोध्यः । तथा च प्रमत्तः कायवाङ्मनोयोगैर्यदसदभिधानं प्रयुङ्क्ते, तदनृत-

કે વધ યા બંધન કા જનક હૈ, વૈર કારક હૈ, કલહ આદિ કો ઉત્પન્ન કરતા હૈ, ત્રસોત્પાદક હૈ, આચાર્ય ઉપાધ્યાય અથવા ગુરુ આદિ કી અવજ્ઞા કરને વાલા હોના હૈ, વહ સબ અનૃત કહલાતા હૈ । અનૃત ભાષણ કી હચ્છા કરના ઓર અનૃત બોલને કા ઉપાય સોચના મી પ્રમત્તયોગ કે કારણ અનૃત હી હૈ, એસા સમજના ચાહિય ॥૨૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ--હિંસા વિરતિ આદિ વ્રતો કે વિરોધી હિંસા, અસત્ય, સ્તેય, મૈથુન ઓર પરિગ્રહ મેં સે હિંસા કા સ્વરૂપ પહેલે કહા જા ચુકા હૈ । અવ ક્રમ પ્રાપ્ત દૂસરે મૃણાવાદ કા સ્વરૂપ કહતે હૈ-

પ્રમાદ કે યોગ સે અસત્ય ભાષણ કરના મૃણાવાદ હૈ । સત્ શબ્દ પ્રશંસાવાચક હૈ । સત્ અર્થાત્ પ્રશસ્ત કા આવ સત્ય કહલાતા હૈ । જો સત્ય ન હો વહ અસત્ય યા અપ્રશસ્ત, એસા વચન મૃણાવાદ હૈ ।

‘અભિધાન’ શબ્દ આવસાધન અથવા કરણસાધન સમજના

વગેરેને ઉત્પન્ન કરે છે, ત્રાસોત્પાદક છે, આચાર્ય ઉપાધ્યાય અથવા ગુરુ વગેરેની અવજ્ઞા કરનાર હોય છે. આ બધું અનૃત કહેવાય છે. અનૃત ભાષણની ઇચ્છા કરવી તેમજ અનૃત બોલવાનો ઉપાય શોધવો એ પણ પ્રમત્ત યોગના કારણે અનૃત જ છે, એમ સમજવું જોઈએ ॥૨૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ--હિંસાવિરતિ આદિ વ્રતોના વિરોધી હિંસા, અસત્ય, સ્તેય, મૈથુન પરિગ્રહમાંથી હિંસાનું સ્વરૂપ પહેલા કહેવાઈ થયું છે હવે ક્રમપ્રાપ્ત બીજા મૃણાવાદનું સ્વરૂપ કહીએ છીએ-

પ્રમાદના યોગથી અસત્ય ભાષણ કરવું મૃણાવાદ છે. સત્ શબ્દ પ્રશંસાવાચક છે. સત્ અર્થાત્ પ્રશસ્તનો ભાવ સત્ય કહેવાય છે જે સત્ય નથી તે અસત્ય અથવા અપ્રશસ્ત, આવું વચન મૃણાવાદી છે.

‘અભિધાન’ શબ્દ ભાવસાધન અથવા કરણસાધન સમજવો જોઈએ.

હુચ્યતે, તદેવાઽનૃતં મૃષાવાદ ઓચ્યતે, મૃષાવદનં-મૃષાવાદઃ, અભિધાનં વચનં વાગ્યોગ
 વિષયઃ, અભિનિવિષ્ટચેતપઃ પ્રવત્તસ્યાત્મનઃ કર્તુરભિપ્રેતપ્રતિપાદને સાધકતમત્વાત્,
 કાયેન કર-ચરણનયનોઽઘાયચક્રિયામિરલીકાભિઃ પરં પ્રતારયતિ વાચાઽપ્ય સદ્
 વ્રતીતિ મનસાઽપિ પરિચિન્તયતિ યદ્ એવં સ્વલુ પરં વશ્વનીયઃ ઇતિ । તથા ચાઽસપુરુષ
 ધર્મીતાગર્થે નિન્દિતં નિષિદ્ધંવા યદભિધાનં તત્-અસદભિધાનં સ્વલુ-મૃષાવાદ ઇતિ
 ફલિતમ્ । તત્ત્વાઽમૃત્યામિધાનં દ્વિવિધમ્, ભૂતનિહ્નવઃ અભૂતોદ્ભાવનશ્ચ । તન્ન
 ભૂતસ્ય વિદ્યમાનસ્ય વસ્તુનો નિહ્નવોઽપલાપો ભૂતનિહ્નવઃ, યથા-‘નાસ્તિ આત્મા’
 ‘નાસ્તિ પરલોકઃ’ ઇત્યાદિ । અત્ર વિદ્યમાનસ્યેવાત્મનઃ શુભાઽશુભકર્મણાં ફલ-

વાહિએ અભિપ્રાય યહ હૈ કિ પ્રમાદયુક્ત પુરુષ કાયયોગ વચનયોગ ઓર
 મનોયોગ સે જો અસત્ વચનોં કા પ્રયોગ કરતા હૈ, વહ અનૃત કહ-
 લાતા હૈ । અનૃત કો મૃષાવાદ ભી કહતે હૈ । જિસ કે ચિત્ત મેં આવેશ
 ઉત્પન્ન હુઆ હૈ એસા પ્રમાદી પુરુષ અપને હૃષ્ટ અભિપ્રાય કો વ્યક્ત કરને
 કે લિએ અગર હાથોં પૈરોં નેત્રોં એવં હોઠોં આદિ અવયવોં કી મિથ્યા
 ષેષ્ટાઓં દ્વારા દૂસરે કો ઠગતા હૈ, વચન સે અસત્ય ભાષણ કરતા
 હૈ, મન સે ભી એસા હી સોચતા હૈ કિ દૂસરે કો કેસે ઠગા જાય, યહ
 સ્વ અસત્ય હૈ । ફલિત યહ હુઆ કિ નિન્દિત યા નિષિદ્ધ વચન
 અસદભિધાન યા મૃષાવાદ કહલાતા હૈ ।

મૃષાવાદ દો પ્રકાર કા હૈ-ભૂતનિહ્નવ ઓર અભૂતોદ્ભાવન । જો
 વસ્તુ વિદ્યમાન હૈ ઉસકા અપલાપ કરના ભૂતનિહ્નવ હૈ, જૈસે-આત્મા
 નહીં હૈ, પરલોક નહીં હૈ, ઇત્યાદિ કહના । કોઈ-કોઈ શુભ ઓર અશુભ

સારાશ એ છે કે પ્રમાદયુક્ત પુરુષ કાયયોગ વચનયોગ અને મનોયોગથી જે
 અસત્ વચનોથી પ્રયોગ કરે છે તે અનૃત કહેવાય છે. અનૃતને મૃષાવાદ પણ
 કહે છે. જેના ચિત્તમા આવેશ ઉત્પન્ન થયો હોય એવો પ્રમાદી પુરુષ
 પોતાને ગમતા અભિપ્રાયને વ્યક્ત કરવા માટે અથવા હાથ, પગ, આંખો
 અને હોઠ આદિ અવયવોની મિથ્યા ષેષ્ટાઓ દ્વારા બીજાને છેતરે છે,
 વચનથી અસત્ય ભાષણ કરે છે, મનથી પણ એવું જ વિચારે છે કે બીજાને
 કેવી રીતે છેતરી શકાય, આ બધું અસત્ય છે. ફલિત એ થયું કે નિન્દિત
 અથવા નિષિદ્ધ વચન અસદભિધાન અથવા મૃષાવાદ કહેવાય છે.

મૃષાવાદ બે પ્રકારના છે-ભૂતનિહ્નવ અને અભૂતોદ્ભાવન જે વસ્તુ
 વિદ્યમાન છે તેને અપલાપ કરવો ભૂતનિહ્નવ છે, જેમ કે- આત્મા નથી,
 પરલોક નથી વગેરે કહેવું. કોઈ કોઈ શુભ અને અશુભ કર્મોના ફળ ભોગ.

भोक्तुः अनुभवितुः स्पर्शकर्तुश्च नास्तित्वं केचनाऽज्ञानमोहमुग्धाः जनाः कल्पयन्ति । एवं जीवानां स्व-स्वकृत कर्मानुमारेण सुखदुःखनियामकतया पुण्य पापरूपधर्माऽधर्मयोरपि आप्तागमप्रमाणसिद्धमस्तित्वं केचन नास्तिका मोहान्नाऽनुमन्यन्ते । एवम् अभूतस्य सदसद्भावप्रतिषेधस्योद्भावनं मभूतोद्भावनं बोध्यम् अभूतस्याऽविद्यमानस्य वा असद्वस्तु स्वरूपस्योद्भावनम् अभूतोद्भावनं मृच्यते । तथाहि-यथाऽवस्थिताऽऽत्मसद्भावनम् असंख्येय प्रदेशपरिमाणम् पुद्गल चयोपचयतारतम्य प्रयुक्तशरीर विशेषाश्रयवशात् संकोचविकासशालिनं रूप-रसगन्धस्पर्शरहितम् अनेकविधक्रियायुक्तं तिरस्कृत्याऽभूतमेवास्मि तत्र

कर्मों का फल भोगने वाले और स्मरण करने वाले आत्मा का, जो वास्तव में विद्यमान है, निषेध करते हैं । ऐसे लोग अज्ञान और मोह के कारण मूढ़ हैं । जीवों को अपने-अपने किये कर्म के अनुसार जो सुख या दुःख प्राप्त होता है, उसके नियामक धर्म-अधर्म हैं जिन्हें पुण्य और पाप कहते हैं । ये दोनों तत्त्व आपन प्रणीत आगम से सिद्ध हैं । फिर भी कोई-कोई नास्तिक अज्ञान के कारण उनका अस्तित्व स्वीकार नहीं करते । यह भूत निहूनव असत्य है ।

इसी प्रकार जो वस्तु नहीं है, उसका सद्भाव कहना अभूतोद्भावन असत्य समझना चाहिए । अभूत अर्थात् अविद्यमान वस्तु को भूत या विद्यमान कहना अभूतोद्भावन है । जैसे कोई-कोई अज्ञानी असंख्यातप्रदेशी, पुद्गलों के चय-उपचय की तरतमता के अनुसार निर्मित शरीर में रहने के कारण संकोच विकासशील, रूप-रस-गंध

वनारा અને સ્મરણ કરનારા આત્મા નો જે હકીકતમાં વિદ્યમાન છે, નિષેધ કરે છે. આવા લોકો અજ્ઞાન અને મેહના કારણે મૂઢ છે. એવાને પોતપોતાના કરેલા કર્મ અનુસાર જે સુખ અથવા દુઃખ પ્રાપ્ત થાય છે તેના નિયામક ધર્મ-અધર્મ છે જેમને પુણ્ય અને પાપ કહે છે આ બંને તત્ત્વ આપ્રણીત આગમથી પ્રામાણિત છે તેમ છતાં કોઈ-કોઈ નાસ્તિક અજ્ઞાનના કારણે તેમનું અસ્તિત્વ સ્વીકારતા નથી. આ ભૂતનિહૂવ અસત્ય છે.

આવી જ રીતે જે વસ્તુ છે જ નહીં તેના સદ્ભાવ કહેવો એ અભૂતોદ્ભાવન અસત્ય સમજવું જોઈએ. અભૂત અર્થાત્ અવિદ્યમાન વસ્તુને ભૂત અથવા વિદ્યમાન કહેવું અભૂતોદ્ભાવન છે જેવી રીતે કોઈ-કોઈ અજ્ઞાની અસંખ્યાતપ્રદેશી, પુદ્ગલોના ચય-ઉપચયની તરતમતા અનુસાર નિર્મિત શરીરમાં રહેવાના કારણે સંકોચ વિકાસશીલ રૂપ-રસ-ગંધ-સ્પર્શ રહિત

સમુદ્ધાન્યન્તિ કેચન જ્ઞાનિનઃ યથા ક્વમાકૃત્તણ્ડુક પ્રમાણમાત્રોડયમાત્મા વર્તેતે
અંગુઠ પર્વમાત્રોડયમાત્મા, સૂર્યસદ્વર્ણઃ, નિષ્ક્રિય કૃત્વાદિ । નિષ્ક્રિયસ્વચ્ચા-
ડડમનઃ સર્વગતત્વેન ત્રિભુત્વાત્ ગમનાડગમનવીક્ષણભોજનાદિ ક્રિયાયાઃ કાય-
વાહુનતઃ કર્ણજનિતાયા અભાવમવગતત્વમ્, તદપ્યસદ્ દર્શનમ્ આત્મનો વિભૂત્વે
પ્રમાણાભાવેન સર્વગતત્વાડમસ્મદાત્ સર્વગતસ્વાત્મનઃ સર્વત્ર સર્વોપલબ્ધિમસન્નશ્ચ
અથ અત્રૈવોપભોગોપલબ્ધિપ્રાપ્તાનં શરીરં તિથ્યતે તત્રૈવોપલબ્ધિઃ સ્યાન્નાડન્યત્ર

સ્પર્શ સે રહિત ઓર અનેક પ્રકાર કી ક્રિયાઓ સે યુક્ત આત્મા કો
સ્વીકાર ન કરતે અમૂત આત્મતત્વ કા વધન કરતે હૈ । જિસે-કોઈ
કહતે હૈ તિ આત્મા ક્વમાકૃ (મામા) કે ચાવલ કે ઘાવર હૈ, કોઈ
કહતે હૈ અંગુઠે કે પર્વ કે ઘરાવર હૈ, સૂર્ય કે સમાન વર્ણવાલા હૈ, ક્રિયા-
હીન હૈ । ક્રિયાહીન હોને કા કારણ આત્મા કી વિભુતા અર્થાત્ વ્યાપ-
કતા હૈ । વ્યાપક હોને કે કારણ આત્મા મેં ગમન, આગમન, અવલોકન,
ઓજન આદિ ક્રિયાઓ કા-જો મન વચન ઓર કાય સે ઉત્પન્ન હોતી
હૈ, અભાવ હૈ । એવા કહના સત્ય નહીં હૈ, વધોં કિ આત્મા કે વ્યાપક
હોને મેં કોઈ પ્રમાણ નહીં હૈ, અતઃપ્ર ઉસકા વ્યાપક હોના અસંભવ
હૈ । અગર આત્મા સર્વવ્યાપક હોતી તો ઉસકી સર્વત્ર ઉપલબ્ધિ હોતી
ચાહિય । અગર કહા જાય તિ સુખ દુઃખ કે ઉપભોગ કો આયતન
શરીર જહાં તિથમાન હોતી હૈ, વહીં આત્મા કી ઉપલબ્ધિ હોતી હૈ, જહાં
શરીર નહીં હોતો વહાં આત્મા કી ઓ ઉપલબ્ધિ નહીં હોતી ઇસકા

અને અનેક પ્રકારની ક્રિયાઓથી યુક્ત આત્માનો સ્વીકાર નહી કરીને અમૂત
આત્મતત્ત્વનું કથન કરે છે. જેમ કે-કોઈ કહે છે કે આત્મા ક્વમાકૃ (મામા)ના
ચોખ્ખા જેવો છે, કોઈ કહે છે-અગૂઠાના ટોચ ઘરાવર છે, સૂર્યના જેવા
વર્ણવાળો છે, ક્રિયાહીન છે. ક્રિયાહીન હોવાનું કારણ આત્માની વિભુતા
અર્થાત્ વ્યાપકતા છે. વ્યાપક હોવાને લીધે, આત્મામાં ગમન, આગમન,
અવલોકન, ભોજન આદિ ક્રિયાઓનો જે મન વચન અને કાયાથી ઉત્પન્ન
થાય છે-અભાવ છે એ પ્રમાણે કહેવું સત્ય નથી કારણ કે આત્માના વ્યાપક
હોવા માટેનું કોઈ પ્રમાણ નથી માટે તેનું વ્યાપક હોવું શક્ય નથી. જો
આત્મા સર્વવ્યાપી હોત તો ખરે જ તેની ઉપલબ્ધિ પણ હોવી જોઈ એ
અગર જેમ કહી શકાય કે સુખદુઃખના ઉપભોગનું આયતન શરીર જ્યાં
વિદ્યમાન હોય છે ત્યાં જ આત્માની ઉપલબ્ધિ હોય છે. જ્યાં શરીર ન
હોય ત્યાં આત્મા પણ ન હોઈ શકે. આનુ સમાધાન એ છે કે અન્યત્ર પણ

तदभावात् । इति चेत् ! अत्रोच्यते अन्यत्रापि बहूनां शरीराणां सम्भवात् । अथ स्वधर्माऽधर्मरूपाऽदृष्टोत्पादितशरीरावच्छेदेनैवोपभोगोपलब्धिः स्यात् न तथाविधाऽन्यशरीरावच्छेदेनेति चे ! नैवम्, आत्मनो निष्क्रियात्वेन तथाविध कल्पनाऽसम्भवात् । निष्क्रियस्यात्मनस्तादेव धर्माऽधर्मैर्निर्जा वर्तेते इति वक्तुमशक्यत्वात्, निष्क्रियस्य संसारमुक्तिरित्याग प्राप्त्युपायाऽनुष्ठाना सम्भवात् निष्क्रियत्वमात्मनो न कथमपि युक्तं सम्भवति एवमात्मनः क्षणविनश्यत्त्वविज्ञानमात्रतोद्भावनं रूपादि पञ्चस्कन्धमात्रतोद्भावनमनिर्वचनीयत्वोद्भावनञ्च सर्वमनुमम्, एवमर्थान्तरं च गात्रोऽश्वं व्रीति 'अश्वश्च गां व्रीति' अचौरश्च

समाधान यह है कि अन्यत्र भी बहुत-से शरीर संभव हैं । कदाचित् कहो कि अपने ही धर्म-अधर्म रूप अदृष्ट से उत्पन्न हुए शरीर के अन्दर ही सुख-दुःख का उपभोग होता है, दूसरे के शरीर में दूसरी आत्मा उपभोग नहीं करती, किन्तु ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, क्यों कि निष्क्रिय होने के कारण आत्मा में उपभोग किया घटित नहीं हो सकती । इसके अतिरिक्त आत्मा जब व्यापक है तो अमुक धर्म-अधर्म निजी हैं, अमुक नहीं, इस प्रकार का व्यवहार हो ही नहीं सकता । क्रियाशून्य आत्मा मुक्ति की प्राप्ति आदि के लिए अनुष्ठान भी नहीं कर सकती । इस प्रकार आत्मा को निष्क्रिय मानना किसी भी प्रकार संगत नहीं है ।

इसी प्रकार आत्मा को क्षण विनश्यद मानना, विज्ञान मात्र कहना अथवा रूप आदि पांच स्कन्ध रूप कहना या एकान्ततः अनिर्वचनीय मानना, यह सब असत्य है । इसी प्रकार अन्य वस्तुओं के विषय में

धन्या शरीर होई शक्ये कदाचित् कही शक्य के पोताना न धर्म-अधर्म रूप अदृष्टी उत्पन्न थयेला शरीरनी अन्दर न सुखदुःखनो उपभोग थाय छे भीजना शरीरमां भीजे आत्मा उपभोग करतो नथी परन्तु आस कडेवुं पण योग्य नथी कारण के निष्कीय होवाना कारणे आत्मांमां उपभोग किया घटित थई शकती नथी. आ सिवाय आत्मा ने व्यापक छे तो अमुक धर्म-अधर्म पोताना छे, अमुक नहीं, ओ जतने व्यवहार थई शकतो न नथी. क्रियाशून्य आत्मा मुक्तिनी प्राप्ति आदि माटे अनुष्ठान पण करी शकतो नथी. आवी रीते आत्माने निष्कीय मानवो कोई पण रीते संगत नथी.

आवी न रीते आत्माने क्षणलेशुर मानवो, विज्ञान मात्र कडेवो, अथवा रूप आदि पांच स्कन्ध रूप कडेवो अथवा एकान्ततः अनिर्वचनीय मानवो, आ अधुं असत्य छे. आ न रीते अन्यत्र वस्तुओंना विषयमां

ચૌરં વ્રતીતિ, एवं हिंसायुक्तं पारुष्य पैशुन्य शठय दम्भच्छलकपटादियुक्तञ्च वचनं सत्यमपि गर्हितमेव, साऽऽद्यत्वात्, उक्तं दशवैकालिके ७ अध्ययने २ उद्देशके—

‘जा य सच्चवा अवक्तव्या-सच्चवा मोसाय जा मुसा ।

‘जा य बुद्धेहिं णाइण्णा-ण तं भादिउत्त पण्णवं ॥१॥ इति ।

‘याच सत्था अवक्तव्या सत्था मृषा च या मृषा ।

या च बुद्धैरनाचीर्णा नैनां भापेऽ मज्ञावान् ॥१॥ इति

અન્યદયુક્તમ્—‘યદ્રાગરોગદ્દ્રાવ્યં તત્ત્વાદન્યત્ર વર્તતે ।

સાવચં વાપિ યત્સત્યં તત્સર્વમનૃનં વિદુઃ ॥૧॥

एवमन्यत्राऽयुक्तम् अनृतमसद्वचनं स्थाच्चतुर्विधमसच्च जिनवरैर्दृष्टम् ।

सद्भूत प्रतिषेधोऽसद्भूतोद्भावनं च तथा ॥१॥ इति

અસત્ય સમજા હેના વાહિય, જૈસે-ગાય કો અશ્વ કહના, અશ્વ કો ગાય કહના, અચૌર કો ચોર કહના આદિ । હસી મકાર જો વચન હિંસા સે યુક્ત હૈ, કઠોર હૈ, પૈશુન્ય, શઠતા, દંભ, છલ કપટ આદિ સે યુક્ત હૈ, વહ સત્ય હોને પર મી ગર્હિત હૈ, ક્યોં કિ વહ સાવચ હૈ । દશવૈકાલિક સૂત્ર કે સાત વેં અધ્યયન મેં કહા હૈં-‘વિવેકવાન્ શ્રમણ એસી ભાષા કા પ્રયોગ ન કરે જો સત્ય હોને પર મી બોલને કે યોગ્ય ન હો, જો સત્યમૃષા (સચ્ચી-જૂઠીમિશ્ર ભાષા) હો, મૃષા હો યા જ્ઞાની જનોં ને જિસકા આચરણ ન કિયા હો ॥૧॥

અન્યત્ર મી મી કહા હૈ-‘જો વચન રાગરૂપી રોગ સે યુક્ત હો, જો તત્ત્વ સે દૂર અર્થાત્ વાસ્તવિકતા સે રહિત હો અથવા સાવચ હો ડસ સબ કો જ્ઞાની પુરુષ અસત્ય કહતે હૈ ॥૧॥

અસત્ય સમજા લેવું જોઈએ જેમ કે ગાયને ઘોડો કહેવો, ઘોડાને ગાય કહેવી, ચેર ન હોય તેને ચોર કહેવો વગેરે આવી જ રીતે જે વચન હિંસાથી યુક્ત છે, કઠોર છે, પૈશુન્ય, શઠતા, દંભ છજ-કપટથી ભરેલું છે તે વચન સત્ય હોવા છતાં પણ વર્જ્ય છે કારણ કે તે સાવધ છે. દશવૈકાલિક સૂત્રના સાતમાં અધ્યયનમાં કહ્યું છે-

વિવેકવાન્ શ્રમણ એવી ભાષાનો પ્રયોગ ન કરે જે સત્ય હોય તો પણ જોડવા મટે યોગ્ય ન હોય, જે સત્યામૃષા (સાચી-જુઠી મિશ્રભાષા) હોય, મૃષા હોય અથવા જ્ઞાનીપુરૂષોએ જેનું આચરણ ન કર્યું હોય. ॥૧॥

અન્યત્ર પણ કહ્યું છે-‘જે વચન રાગરૂપી રોગથી યુક્ત હોય, જે તત્ત્વથી દૂર અર્થાત્ વાસ્તવિકતા વાગરનું હોય અથવા સાવધ હોય તે બધાને જ્ઞાની અસત્ય કહે છે.’ ॥૧॥

યથા 'નાસ્તિ ઘટઃ' इति, 'શાશ્વત્કાલમસ્તિ' इति, ગર્હિતવચનમ્ અસત્ સતો-
ડધિવાડન્યથાવાચનં ચત્સાત્, ગર્હિતમુખઘાતાદિ, અન્યચ્ચ-ગૌરવ્ય इति વચનં
ચેતિ, સર્વમનૃતવચનમ્, તસ્માત્ પ્રમત્તયોગાદાદમિથ્યનં પુરાતાદ इति વ્યવસ્થિ-
તમ્ । તચ્ચાડવશમિથ્યનરૂપમનૃતં સંક્ષેપેણ ચતુઃ સ્થાનસંગ્રહીતં સર્વં દ્રવ્યવિષય
મત્સેયમ્, દ્રવ્યાણિ ચ લોકાલોકાવચ્છિન્નાનિ બોધ્યાનિ, કાલઃ સ્વલુ-રાત્રિન્દિવ
લક્ષણઃ, ભાવતો રાગ-દ્વેષ-મોહપરિણત આત્મા યતિ ॥૨૩॥ ૨૬

મૂલમ્—અદિષ્ણાદાણં તેણિક્કં ॥૨૭॥

છાયા—'અદત્તાદાનં સ્તેયમ્ ૨૭ ।

દસરે સ્થલ મેં ખી કહા હૈ—'અસત્ વચન અનૃત કહલાતા હૈ ।
જિનેન્દ્ર ભગવાન્ ને અસત્ વચન ચાર પ્રકાર કે કહે હૈં, જિન મેં સે
સદ્ભૂત કા પ્રતિષેધ ઔર અસદ્ભૂત કા ઉદ્ભાવન ખી હૈ ॥૧॥ જૈસે
ઘટ નહીં હૈ સ્વરગોશ કા સીંગ હૈ આદિ । ગર્હિત વચન અસત્ હોતા હૈ
અથવા સત્ કો ખી અન્યથા કહના ગર્હિત હૈ । હસ પ્રકાર કે સવ
વચન અનૃત હૈં । હસસે યહ સિદ્ધ હુઆ કિ પ્રમત્તયોગ સે અસત્ ભાષણ
કરના મૃણાવાદ કહલાતા હૈ । અસત્યભાષણ સંક્ષેપ સે ચાર પ્રકાર કા
હૈ ઔર સખી દ્રવ્ય ઉસકે વિષય હોતે હૈં । દ્રવ્ય લોકાલોકાવચ્છિન્ન
હૈં, કાલ રાત્રિ-દિવસ રૂપ હૈ, રાગ, દ્વેષ ઔર મોહરૂપ મેં પરિણત
આત્મા સમજનાં ચાહિય ॥૨૬॥

'અદિષ્ણાદાણં તેણિક્કં' ।

સુત્રાર્થ—અદત્તાદાન સ્તેય કહલાતા હૈ ॥૨૭॥

ખીજે પણ આલું જ કહું છે.—અસત્ વચન અનૃત કહેવાય છે જિનેન્દ્ર
ભગવાને અસત્ વચન ચાર પ્રકારના કહેલા છે, જેમાંથી સદ્ભૂતનો પ્રતિષેધ
અને અસત્ભૂતનું ઉદ્ભાવન પણ છે. ॥૧॥ માત્ર ઘટો નથી, સસલાનું
શીંગડું છે. વગેરે ગર્હિત વચન અસત્ કહેવાય છે અથવા સત્ને પણ અન્યથા
કહેવું વર્જ્ય છે આ પ્રકારના બધાં વચન અનૃત છે. આ ઉપરથી એ
સાબિત થવું કે પ્રમત્તયોગથી અસત્ ભાષણ કવું મૃણાવાદ કહેવાય છે.
અસત્ય ભાષણ સંક્ષેપથી ચાર પ્રકારના છે અને બધા જ દ્રવ્ય એના વિષય
હોય છે દ્રવ્ય લોકાલોકાવચ્છિન્ન છે. કાલરાત્રિ-દિવસ રૂપ છે, ભાવથી
રાગદ્વેષ અને મોહ રૂપમાં પરિણત આત્મા સમજવો જોઈ એ. ॥૨૬॥

'અદિષ્ણાદાણં તેણિક્કં'

સુત્રાર્થ—અદત્તાદાન સ્તેય કહેવાય છે. ॥૨૭॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्व तावत् प्राणातिपाताऽनृतरतेयमैथुनपरिग्रहेषु पञ्च
अव्रतेषु प्राणातिपाताऽनृत्स्वरूपं सविशदं निरूपितम् सम्प्रति क्रमप्राप्तं स्तेयं
प्रतिपादयितुमाह—‘आदिष्णादाणं लेणिकं’ इति । अदत्तादानम् अदत्तस्य
वस्तु स्वामिनाऽपमर्षितस्य वस्तुनः आदानं प्रमत्तयोगाद् ग्रहणं स्तेयं—चौर्यं मुच्यते ।
तथाच—यल्लोकैः स्वीकृतं सर्वलोकप्रवृत्तिगोचरं यद्वस्तु स्वामिनाऽदत्तं तस्य
वस्तुनो ग्रहणं प्रमत्तयोगाद् जिघृक्षाया, ग्रहणोपाय परिचिन्तनं वा स्तेयं मुच्यते
तेन—कर्म नो कर्म ग्रहणस्याऽन्येनाऽदत्तस्याऽपि स्तेयत्वं न भवति तद्ग्रहणे आत्म-
परिणामादन्यस्य दायकस्याऽभावाद् त्रिभुवनमृतं तद्योग्याणुवर्गानामस्वामि-
कत्वात् तत्र—स्तेयव्यवहारो न भवति । तथा च—दानादाने यत्र सम्भवतः सत्रैव

तत्त्वार्थदीपिका—हिंसा, असत्य, स्तेय, मैथुन और परिग्रह, इन
पाँच अव्रतों में से प्राणातिपात और अनृतन का विशद स्वरूप बतलाया
जा चुका है । अब क्रमप्राप्त स्तेय का स्वरूप कहते हैं—

प्रमाद के योग से स्वामी के द्वारा अप्रदत्त वस्तु को ग्रहण करना
स्तेय कहलाता है । इसी को अदत्तादान या चौर्य कहते हैं । जो लोगों
द्वारा स्वीकृत हो, सब की प्रवृत्ति का गोचर हो किन्तु जिसे उसके
स्वामीने प्रदान न किया हो, उस वस्तु को प्रमादयोग से ग्रहण करना,
ग्रहण करने की इच्छा करना अथवा ग्रहण करने के उपाय का चिन्तन
करना स्तेय कहलाता है । अतएव दूसरे के द्वारा अदत्त होने पर भी
कर्मों और नो कर्मों का ग्रहण करना स्तेय नहीं कहलाता, क्योंकि
आत्मा के परिणाम के सिवाय उनका कोई दाता नहीं है । तीन लोक
में भरी हुई अणुओंकी वर्गणाओं का कोई स्वामी नहीं है, अतः उनके

तत्त्वार्थदीपिका—हिंसा, असत्य, स्तेय, मैथुन અને પરિગ્રહ આ
પાંચ અવ્રતોમાંથી પ્રાણાતિપાત અને અનનુ' વિશદ સ્વરૂપ બતાવવામાં
આવ્યું છે હવે ક્રમપ્રાપ્ત સ્તેયનું સ્વરૂપ કહીએ છીએ—

‘પ્રમાદના યોગથી સ્વામી દ્વારા નહીં આપવામાં આવેલી વસ્તુને ગ્રહણ
કરવી સ્તેય કહેવાય છે. અને જ અદત્તાદાન અથવા ચૌર્ય કહે છે. જે
લોકો દ્વારા સ્વીકૃત હોય, બધાની પ્રવૃત્તિનું ગોચર હોય પરંતુ જેને તેના
માલિકે આપેલું ન હોય, તે વસ્તુનો પ્રમાદયોગથી સ્વીકાર કરવો, સ્વીકાર-
વાની ઇચ્છા કરવી અથવા સ્વીકારવાનો ઉપાય વિચારવો સ્તેય કહેવાય છે
આથી બીજા વડે અદત્ત હોવા છતાં પણ કર્મો અને અકર્મોનું ગ્રહણ કરવું
સ્તેય કહેવાતું નથી કારણ કે આત્માના પરિણામ સિવાય તેમનો કોઈ દાતા
નથી. ત્રણ લોકમાં ભરેલા અણુઓની વર્ગણાઓનો કોઈ માલિક નથી આથી

સ્તેયવ્યવહારો ભવતિ, અદત્તપદોપાદાનસામર્થ્યાત્ અથૈવમપિ-શ્રમણસ્ય મિક્ષોગ્રામ નગરાદિષુ ગોચરીગ્રહણાર્થં શ્રમણકાલે રથયાદ્વારાદિ પ્રવેશાદદત્તાદાન પ્રસક્તિરિતિ ચેત્ ! અત્રોચ્યતે-સામાન્યેનોદ્ઘાટિતત્વાત્ તન્ન પ્રવેશોઽપ્યદત્તાદાનપ્રસક્તો ન ભવતિ તથાહિ-અયં મિક્ષુઃ પિહિતદ્વારાદિષુ ન પ્રવિશતિ, અનુદ્ઘાટિતત્વાત્ । યદ્વા-પ્રમત્ત યોગાદિત્યસ્યઃઽત્રાપિ સમ્બન્ધાત્ પ્રમત્તયોગા દ્વદત્તાઽઽદાનસ્યૈવ સ્તેયત્વં ભવતિ કેવલં રથયાદ્વારાદિષુ પ્રવિશતો મિક્ષોઃ પ્રમત્તયોગાભાવેનાઽદત્તાદાનપ્રસક્તો ન ગ્રહણ મેં ચોરી કા વ્યવહાર નહીં હોતા । જહાં દેને ઓર લેને કા વ્યવહાર સંભવ હો વહીં સ્તેય કા વ્યવહાર હોતા હૈ, કયોં કિ સૂત્ર મેં ‘અદત્ત’ પદ કા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ ।

શંકા--અનગાર મિક્ષુ મિક્ષા કે લિપ્ત ગ્રામ, નગર આદિ મેં શ્રમણ કરતા હૈ તથ વહ માર્ગ મેં તથા દ્વાર આદિ મેં પ્રવેશ કરતા હૈ । ઉસે મી અદત્તાદાન કા દોષ હોના ચાહિપ્ત ।

સમાધાન--માર્ગ ઓર દ્વાર સભી કે લિપ્ત ખુલે રહતે હૈ, અતઃ ઉનકા ઉપયોગ કરને મેં અદત્તાદાન કા પ્રસંગ નહીં હોતા । હાં, સાધુ બન્દ દ્વાર કો ખોલ કર ઉસકે મીતર પ્રવેશ નહીં કરતા, કયોં કિ વહ ઉઘાડા નહીં હોતા અથવા ‘પ્રમત્તયોગાત્’ અર્થાત્ ‘પ્રમાદ યુક્ત પુરુષ કે યોગ સે’ ઇસ પદ કા યહાં મી અધ્યાહાર હોતા હૈ । ઇસકા તાત્પર્ય યહ હુઆ કિ પ્રમત્તયોગ સે અદત્ત કા આદાન હી સ્તેય હૈ, કેવલ ગલી યા દ્વાર મેં પ્રવેશ કરને વાલા મિક્ષુ પ્રમત્તયોગ વાલા નહીં હોતા, અતઃ

તેમને ગ્રહણ કરવામાં ચોરીનો વ્યવહાર થતો નથી, જ્યાં આપ-લે નો વ્યવહાર સંભવ હોય ત્યાં જ સ્તેયનો વ્યવહાર થાય છે કારણ કે સૂત્રમાં ‘અદત્ત’ પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે.

શંકા--અણુગાર લિક્ષા અર્થે ગામ, નગર આદિમાં શ્રમણ કરે છે ત્યારે તે રસ્તામાં તથા દ્વાર આદિમાં પ્રવેશ કરે છે તેને પણ અદત્તદાનનો દોષ લાગવો જોઈ એ.

સમાધાન-રસ્તો તથા દ્વાર બંધાને માટે ખુલ્લા હોય છે, આથી તેમનો ઉપયોગ કરવામાં અદત્તાદાનનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થતો નથી. એટલું ખડું કે સાધુ બંધ દ્વારને ઉઘાડીને તેની અંદર પ્રવેશ કરતા નથી, કારણ કે તે ઉઘાડું હોતું નથી. અથવા ‘પ્રમત્તયોગાત્’ અર્થાત્ પ્રમાદ યુક્ત પુરુષના યોગથી ‘આ પદનો અહીં પણ અધ્યાહાર હોય છે. આનું તાત્પર્ય એ થયું કે પ્રમત્તયોગથી અદત્તનું આદાન એ જ સ્તેય છે, માત્ર ગલી અથવા દ્વારમાં પ્રવેશ કરનારો લિક્ષુ પ્રમત્તયોગવાળો હોતો નથી, આથી તેને અદત્તા-

સમ્ભવતિ, તથા ચ-યત્નાઽસ્તનઃ સંકલેશ પરિણામેનાઽદત્તગ્રહણાર્થ પ્રવૃત્તિ રતત્રૈવ
વાહ્યવસ્તુનો ગ્રહણેઽગ્રવજે તા સ્તેયં ભવતીતિ શાઙ્ગઃ । અદત્તઞ્ચ-યત્રત્રિયં ભવતિ,
દેવાદત્તમ્ ૧ ગુરુદત્તમ્ ૨ રાજાદત્તમ્ ૩ ગાથાપત્યદત્તમ્ ૪ સાધર્મ્યદત્તમ્ ૫ ॥૨૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્ગુહિતઃ—પૂર્વમૂત્રે-દિસાદિ લક્ષ્ય પશ્ચાત્રતેષુ દિસાસ્વરૂપ નિરૂપ
ણાનન્તરં મૃપાવાદસ્વરૂપનિરૂપણં કૃતમ્, સમ્પત્તિદિ યથાક્રમં સ્તેયસ્વરૂપં નિરૂ-
પયિતુમાહ-‘અદિપ્તમાદાણં તેજિજ્ઞકં’ ડત્તિ । અદત્તાદાનમ્-અદત્તસ્ય સ્વામિના
ઽવિતીર્ણસ્ય વસ્તુન આદાનં-પ્રમત્તયોગાદુગ્રહણં સ્તેય મુચ્યતે । તથા ચ-દીયતેસ્મ-
યત્ તદત્તમ્, કર્મણિ ક્તઃ, કર્મ ચ ચેત્નાઽચેત્નં વસ્તુ કર્તુતીપ્સિતતમં ભવતિ,

एव उसे अदत्तादान का प्रसंग भी नहीं होता । आशय यह है कि
जहां आत्मा की संकलेश भाव से अदत्त को ग्रहण करने में प्रवृत्ति
होती है, वही वाह्य वस्तु का ग्रहण हो या न हो, फिर भी स्तेय कह-
लाता है । अदत्त पांच प्रकार का है-(१) देवादत्त (२) गुरुभदत्त (३)
राजादत्त (४) गाथापति-अदत्त और (५) साधर्मिक अदत्त ॥२७॥

તત્ત્વાર્થનિર્ગુહિતઃ--દિસા આદિ પાંચ અવતોમાં મેં સે પહેલે દિસા કે
સ્વરૂપ કા નિરૂપણ ક્રિયા ગયા, તદનન્તર મૃપાવાદ કે સ્વરૂપ કા કથન
મી ક્રિયા ગયા, અવ ક્રમપ્રાપ્ત સ્તેય કે સ્વરૂપ કા નિરૂપણ કરને
કે લિપ કહતે હૈં-

સ્વામી કે દ્વારા અપ્રદત્ત વસ્તુ કા પ્રમત્તયોગ સે ગ્રહણ કરના
અદત્તાદાન યા સ્તેય કહલાતા હૈ । જો દિયા ગયા હો વહ ‘દત્ત’ કહ-
લાતા હૈ । યહાં કર્મ કે અર્થ મેં ‘ક્ત’ પ્રત્યય છુટા હૈ । કર્તા કો જો

દાનને પ્રસંગ પણ આવતો નથી. કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે જ્યાં આગળ
આત્માની સંકલેશભાવથી મ લિફે નહીં આપેલી વસ્તુ સ્વીકારવામાં પ્રવૃત્તિ
હોય છે તે જ બાહ્ય વસ્તુનું ગ્રહણ થાય કે ન થાય તો પણ સ્તેય કહેવાય
છે. અદત્ત પાંચ પ્રકારના છે-(૧) દેવાદત્ત (૨) ગુરુઅદત્ત (૩) રાજાદત્ત (૪)
ગાથાપતિ-અદત્ત અને (૫) સાધર્મિક અદત્ત ॥૨૭॥

તત્ત્વાર્થનિર્ગુહિતઃ—દિસા આદિ પાંચ અવતોમાંથી પહેલા દિસાના
સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, ત્યારબાદ મૃપાવાદના સ્વરૂપનું કથન પણ
કરવામાં આવ્યું. હવે કેમપ્રાપ્ત સ્તેયના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવા માટે કહીએ છીએ-

માલિક દ્વારા અપ્રદત્ત વસ્તુનું પ્રમત્ત યોગથી ગ્રહણ કરવું અદત્તાદાન,
અથવા સ્તેય કહેવાય છે જે આપવામાં આવ્યું હોય તે ‘દત્ત’ કહેવાય છે.
અહીં કર્મના અર્થમાં ‘ક્ત’ પ્રત્યય થયો છે, કર્તાને જે કરવા માટે પ્રિય હોય

મમેદ મિત્યેવં પરિગૃહીતં વસ્તુ પશ્ચદ્દિશદિશિ યરમૈ-કસ્મૈચિત્ યદીયને તદ્દત્ત-
મિશ્યુચ્યતે । ચત્પુનર્વસ્તુદેવેન્દ્રાદિશિઃ પરિગૃહીતમેવ નતુ-દત્તમ્, તસ્યાઽઽદાનં
ગ્રહણં સ્વેચ્છયા ધારણં હઠેન-વલાત્કારેણ વા, સમક્ષમેવ-ચૌર્યેણ વા, તત્-સ્તેયમ્ ।
યચપિ-દેવેન્દ્રાશિઃ પરિગૃહીતમિર્દીયમાનમપિ કિશ્ચિત્-શય્યાહારપાનપાત્ર-સ્ત્રો-
પધિપુ-અનેષણીયાદિકં તીર્થકૃતા નાઽનુજાત માગમે, તદપિ-સ્તેયમેવાઽવશેયમ્ ।
એવઞ્ચાઽનેષણીયાદેઃ પરિગૃહીતસ્યાપિ પરૈર્દાનેપિ તદ્ગ્રહણેઽદત્તાદાનબિરહેઽપિ સ્તેયં
ભવત્યેવ, શાસ્ત્રેણાઽનેષણીયાદેઃ પ્રતિષિદ્ધત્વેન શાસ્ત્રપ્રતિષેધસ્ય લલ્પત્વાદ્ તત્પ્ર-

કરને કે લિખે હજી હો વહ કર્મ કહલાતા હૈ । ‘યહ મેરી હૈ’ હસ રૂપ
મેં ગ્રહણ કી હુઈ વસ્તુ દેવ આદિ પાંચ મેં સે કિસી કે દ્વારા જિસ
કિસી કો દી જાતી હૈ વહ દત્ત કહલાતી હૈ । કિન્તુ જો વસ્તુ દેવેન્દ્ર
આદિ કે દ્વારા પરિગૃહીત હૈ મગર દત્ત નહીં હૈ, ઉસકો ગ્રહણ કરના,
સ્વેચ્છા સે ધારણ કરના, હઠ સે યા બલાત્કાર સે ઉસકે સામને યા
ચોરી સે છે છેના સ્તેય હૈ । દેવેન્દ્ર આદિ કે દ્વારા પરિગૃહીત ઓર દી
જાને વાલી મી કોઈ શય્યા, આહાર, પાની, પાત્ર વસ્ત્ર આદિ ઉપધિ
અનેષણીય હો ઓર તીર્થકર અગવાન્ ને આગમ મેં ઉસકી અનુમતિ
ન દી હો તો ઉસે ગ્રહણ કરના મી સ્તેય હૈ । હસ પ્રકાર દૂસરે કે દ્વારા
પરિગૃહીત મી અનેષણીય વસ્તુ અગર વહ દેતા હો તો અદત્તાદાન ન
હોને પર મી ઉસે ગ્રહણ કરના સ્તેય હી સમજના ચાહિય । ક્યોં કિ
શાસ્ત્ર મેં અનેષણીય આદિ કો ગ્રહણ કરને કા નિષેધ કિયા ગયા હૈ,

તે કર્મ કહેવાય છે. ‘આ મારી છે’ આ સ્વરૂપે ગ્રહણ કરવામાં આવેલી
વસ્તુ દેવ આદિ પાંચમાંથી કોઈ વડે જે કોઈને આપવામાં આવે છે તે દત્ત
કહેવાય છે. પરંતુ જે વસ્તુ દેવેન્દ્ર આદિ દ્વારા પરિગૃહીત છે પણ દત્ત
નથી, તેનો હવાડો લેવો, સ્વેચ્છાથી ધારણ કરવું, દૂરાગ્રહ અથવા બળા-
ત્કારથી તેની સામે અથવા ચોરીથી લઈ લેવું એ સ્તેય છે. દેવેન્દ્ર આદિ
દ્વારા પરિગૃહીત અને આપવામાં આવતી હોય તેવી શય્યા ભોજન, પાણી,
પાત્ર, વસ્ત્ર આદિ ઉપધિ અનેષણીય છે અને તીર્થકર લગવાને આગમમાં
તેની આજ્ઞા ન આપી હોય તો તેને ગ્રહણ કરવું એ પણ સ્તેય છે. આ
રીને બીજાના દ્વારા પરિગૃહીત પણ અનેષણીય વસ્તુ જો તે આપતો હોય
તો-અદત્તાદાન ન હોવા છતાં પણ તેને ગ્રહણ કરવું સ્તેય જ ગણાય કારણ
કે શાસ્ત્રમાં અનેષણીય આદિનું ગ્રહણ કરવાનો નિષેધ કરવામાં આવ્યો છે.
શાસ્ત્રનો તે પ્રતિષેધ બળવાન છે, આથી જે શાસ્ત્રનિષિદ્ધ છે તેનું ગ્રહણ

તિપિદ્ધમ્ ગ્રહણે સ્તેયં મદત્યેવેતિ ભાવઃ । શાસ્ત્રમપિ જ્ઞાનાત્મકમ્-આત્મનઃ
પરિણામવિશેષ એવ, સોઽપિ-શાસ્ત્રરૂપા જ્ઞાનપરિણામવિશેષઃ પરિણામિનિ-આત્મનિ
અભેદનોપવર્ચમાણઃ પરશ્વદેન ગ્રહીતું શક્યો ભવતિ તેન ચ શાસ્ત્રરૂપેણ પરેણાત્મના-
ઽદત્તત્વાદ્ તદ્ગ્રહણેઽદત્તાદાનં મદત્યેવેતિ ભાવઃ । એવ મન્યક્ષણે પ્રદત્તવાતિ કર્મણો
મગચત્ત ઉપદેશાત્ સજ્ઞાત્ માત્રશ્રુતપરિણામા ગણધરપ્રત્યેકબુદ્ધસ્થવિરા અપિ અનેષ-
ણીયાદિકં પ્રતિષેધયન્તિ, તત્ત્વાઽદત્તાદાનં ચતુર્વિધમ્. દ્રવ્યક્ષેત્રકાલ-માત્રભેદાત્ ।
તત્ર-યદા તૃણાદેરપિ દ્રવ્યસ્ય પરૈઃ પરિગૃહીતસ્યાઽપરિગૃહીસ્ય વાઽદત્તાદાનં સ્તેયં
મવતિ, તદા કિમુનામ વક્તવ્યં સુવર્ણ-રત્નમરકતપદ્મરાગ મળ્યાદેઃ આદાનન્તુ-ગૃહ્ય-

શાસ્ત્ર કા બહ પ્રતિષેધ ચલવાન્ હૈ, અતએવ શાસ્ત્રનિપિદ્ધ કે ગ્રહણ મેં
સ્તેય હોતા હૈ । શાસ્ત્ર ખી જ્ઞાનાત્મક હૈ આત્માકા પરિણામવિશેષ હી
હૈ । શાસ્ત્રરૂપ જ્ઞાનપરિણામ કા પરિણામી આત્મા સે અભેદ કા ઉપચાર
ક્રિયા જાતા હૈ, અતએવ 'પર' શબ્દ સે ઉત્તકા ગ્રહણ ક્રિયા જાના શક્ય
હૈ । આશય ગ્રહ હુઆ કિ શાસ્ત્રરૂપ પર-આત્મા કે દ્વારા અદત્ત કો
ગ્રહણ કરના અદત્તાદાન હી હૈ । ઘાતિયા કર્મો' કા ક્ષય કર દેને વાલે
મગચાન્ કે ઉપદેશ સે આવશ્રુત રૂપ પરિણામ જિનમેં ઉત્પન્ન હુઆ
હૈ, એસે ગણધર તથા પ્રત્યેક બુદ્ધ સ્થવિર ખી અનેષણીય આદિ કા
નિષેધ કરતે હૈ ॥

અદત્તાદાન દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર કાલઔર માત્ર કે ભેદ સે ચાર પ્રકારકા
હૈ । જય તૃણ આદિ જૈસે દ્રવ્યોં કા ખી જિન્હેં દુસરોં ને ગ્રહણ કર રહ્યા
હો ધાન કર રહ્યા હો ઢિના દિયે ગ્રહણ કરના સ્તેય હૈ, તો સ્વર્ણરત્ન,
મરકત ઔર પદ્મરાગ મળિ આદિ કા તો કહના હી ક્યા હૈ, ગ્રહ્યમાણ

કરવું સ્તેય છે. શાસ્ત્ર પણ જ્ઞાનાત્મક છે. આત્માનું પરિણામ વિશેષ જ છે.
તે શાસ્ત્ર રૂપ જ્ઞાનપરિણામનું પરિણામી આત્માથી અભેદનો ઉપચાર કરવામાં
આવે છે આથી 'પર' શબ્દથી તેનું ગ્રહણ કરવું શક્ય છે આશય-સારાંશ
એ થયો કે શાસ્ત્ર રૂપ પર-આત્મા દ્વારા અદત્તને ગ્રહણ કરવું અદત્તાદાન
જ છે. ધનધાનિ કર્મોનો ક્ષય કરી નાખનારા ભગવાનના ઉપદેશથી ભાવશ્રુત
રૂપ પરિણામ જેનામાં ઉત્પન્ન થયું છે, એવા ગણધર તથા પ્રત્યેક બુદ્ધ
સ્થવિર પણ અનેષણીય આદિનો નિષેધ કરમાવે છે.

અદત્ત દાન દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ તથા ભાવના ભેદથી ચાર પ્રકારના છે.
જ્યારે તણખડા જેવા દ્રવ્યોનો પણ કે જેનો ખીજાઓએ ગ્રહણ કરી રાખ્યા
હોય અથવા ગ્રહણ કરી રાખ્યા ન હોય, વગર આપે ગ્રહણ કરવા-સ્તેય છે
તો પછી સુવર્ણરત્નમણિ અને પદ્મરાગ મણિ વગેરેની તો વાત જ શું કરવી ?

માણ, ધાર્યમાણ દ્રવ્ય વિષયત્વાત્ દ્રવ્યેકદેશવિષયમવસેયમ્, નતુ સમસ્તદ્રવ્યવિષયમ્ ।
ગ્રહણધારણે પુનઃ સાક્ષાત્ પુદ્ગલ દ્રવ્યસ્ય શરીરાણાશ્ચ, જીવાનાન્તુ-પુદ્ગલ દ્રવ્ય-
દ્વારેણૈવ ગ્રહણધારણે અવગન્તવ્યે, નતુ-સાક્ષાદિતિભાવઃ ઉક્તશ્ચ પ્રશ્નવ્યાકરણે
૩ આસ્રવે-‘અદત્તં તેણિક્કો’ इति, અદત્તં સ્તૈનકમ્ । ઉક્તશ્ચાઽન્યત્રાઽપિ—

પરૈરનતિસૃષ્ટં યત્ યચ્ચ શાસ્ત્રે વિગર્હિતમ્ ।

તત્સર્વં ન ગ્રહીતવ્યં દન્તવિસ્ફાટનાદ્યપિ ॥૧૪॥ इति ॥૨૭॥

મૂલમ્—અવંભચેરં—મેહુણં ॥૨૮॥

છાયા--અબ્રહ્મચર્યં—મૈથુનમ્—’ ॥૧૫ ॥૨૮

તત્ત્વાર્થદીપિકા--પૂર્વસૂત્રે-હિંસાદિલક્ષણેષ્વત્રેષુ યથાક્રમં હિંસામૃષાવાદ

ઔર ધાર્યમાણ દ્રવ્યો’ કા હી આદાન હોતા હૈ, અતઃપ્ચ ઉસે દ્રવ્ય કે
એકદેશવિષયક હી સમજના ચાહિએ, સમસ્ત દ્રવ્યવિષયક નહીં સમ-
જના ચાહિએ । ભાવ યહ હૈ કિ ગ્રહણ ઔર ધારણ સાક્ષાત્ રૂપ સે
પુદ્ગલદ્રવ્ય ઔર શરીરોં કા હોતા હૈ, જીવોં કા જો ગ્રહણ હોના હૈ વહ
પુદ્ગલદ્રવ્ય કે દ્વારા હી હોતા હૈ, સાક્ષાત્ રૂપ સે નહીં । પ્રશ્નવ્યાકરણ-
સૂત્ર કે તીસરે આસ્રવદ્વાર મેં કહા હૈ-અદત્ત કા અર્થ સ્તૈય હૈ ।

અન્યત્ર ખી કહા હૈ-જો વસ્તુ દૂસરોં દ્વારા પ્રદાન ન કી ગઈ
હો ઔર જો શાસ્ત્ર મેં વિગર્હિત (નિષિદ્ધ) હો, ઉસે ગ્રહણ નહીં કરના
ચાહિએ, યાહે વહ દાંત યુજલાને કા તિનકા હી કયોં ન હો ॥૨૭॥

‘અવંભચેરં મેહુણં’ ॥૨૮॥

સૂત્રાર્થ—બ્રહ્મચર્યં કા પાલન ન કરના મૈથુન હૈ ॥૨૮॥

ગ્રહમાણ અને ધાર્યમાણ દ્રવ્યો જ આપી શકાય છે આથી તેને દ્રવ્યના
એક દેશવિષયક જ સમજવા ભોગ્યે સમસ્ત દ્રવ્ય વિષયક સમજવા ભોગ્યે
નહીં. ભાવાર્થ એ છે કે ગ્રહણ અને ધારણ સક્ષાત્ રૂપથી પુદ્ગલ દ્રવ્ય
અને શરીરોનું હોય છે, જીવોનું જ ગ્રહણ થાય છે તે પુદ્ગલ દ્રવ્ય દ્વારા
જ થાય છે, સાક્ષાત્ રૂપથી નહીં. પ્રશ્ન વ્યાકરણ સૂત્રના ત્રીજા આસ્રવદ્વારમાં
કહ્યું છે-‘અદત્તનો અર્થ સ્તૈય થાય છે.’

અન્યત્ર પણ કહ્યું છે-‘જો વસ્તુ બીજા દ્વારા આપવામાં આવેલી ન હોય
તેમજ શાસ્ત્રમાં જેનો નિષેધ કર્યો હોય, તેનું ગ્રહણ કરવું ભોગ્યે નહીં,
પછી ભલે તે દાંત ખોતવાની સળી જ કેમ ન હોય.’ ॥૨૭॥

‘અવંભચેરં મેહુણં’ ॥૨૮॥

સૂત્રાર્થ—બ્રહ્મચર્યંનું પાલન ન કરવું મૈથુન છે. ॥૨૮॥

નિરૂપણાનન્તરં સ્તેયસ્વરૂપં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પતિ-ક્રમપ્રાપ્તં ચતુર્થં મૈથુનસ્વરૂપમ્ત્રતં પ્રરૂપયિતુમાહ-‘અર્ચંચચેરં મેહુણં’ ઇતિ । અબ્રહ્મચર્યમ્-બ્રહ્મચર્યમ્નઃ અહિંસા-દયો ધર્મો યસ્મિન્ પરિપાલ્યમાને સતિ વૃદ્ધિન્તિ-વૃદ્ધિં પ્રાપ્નુન્તિ તદ્બ્રહ્મ, તદ્બ્રહ્મ ચર્યતે સેવ્યતે એન તદ્બ્રહ્મચર્યમ્, ન બ્રહ્મચર્યમ્ યસ્મિન્ તદ્-અબ્રહ્મચર્યં મૈથુનં વ્યપદિશ્યતે ॥૧૫॥ ॥૨૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ--પૂર્વં તાવત્-પ્રાણાતિપાતાદિલક્ષણેષુ પશ્ચાત્રતેષુ ક્રમશઃ પ્રાણાતિપાત-મૃગાવાદ સ્તેય સ્વરૂપાણિ નિરૂપિતાનિ, સમ્પતિ ક્રમપ્રાપ્તં મૈથુનસ્વરૂપ પ્રરૂપયિતુમાહ-‘અર્ચંચચેરં મેહુણં’ ઇતિ । અબ્રહ્મચર્યમ્ બ્રહ્મચર્યાઽભાવઃ, અવિદ્યમાનં બ્રહ્મચર્યં યત્ર તદ્બ્રહ્મચર્યમ્ । તત્રાઽસંરુચ્યેયલોકાકાશ પ્રદેશ

તત્ત્વાર્થદીપિકા--હિંસા આદિ જે સે પૂર્વસૂત્રોં મેં અનુક્રમ સે હિંસા ઔર મૃષાવાદ કે નિરૂપણ કે પશ્ચાત્ સ્તેય કે સ્વરૂપ કા નિરૂપણ કિયા ગયા, અવ ચૌથે મૈથુન અવ્રત કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં-

જિહ્વકા પાલન કરને પર અહિંસા આદિ ધર્મ વૃદ્ધિ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં, વહ બ્રહ્મ કહલાતા હૈ । જિહ્વકે દ્વારા બ્રહ્મ કા આચરણ કિયા જાય વહ બ્રહ્મચર્ય । જિહ્વકે બ્રહ્મચર્ય ન હો વહ અબ્રહ્મચર્ય અર્થાત્ મૈથુન કહા જાના હૈ ॥૨૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ--પહેલે પ્રાણાતિપાત આદિ અવ્રતોં મેં સે ક્રમ સે હિંસા, મૃષાવાદ ઔર સ્તેય કે સ્વરૂપ કા નિરૂપણ કિયા ગયા, અવ ક્રમ પ્રાપ્ત મૈથુન કે સ્વરૂપ કા પ્રરૂપણ કરતે હૈં--

બ્રહ્મચર્ય કે અભાવ કો અબ્રહ્મચર્ય કહતે હૈં । આત્મા લોકાકાશ કે અસંરૂપાન પ્રદેશોં કે બરાબર હોને સે વૃહત્-વડા હૈ, અતઃવ ઉસે

તત્ત્વાર્થદીપિકા--હિંસા આદિ અવ્રતોમાંથી પૂર્વસૂત્રોમાં અનુક્રમથી હિંસા, અને મૃષાવાદના નિરૂપણ પછી સ્તેયના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું. હવે ચોથા મૈથુન અવ્રતની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ-

જેનું પાલન કરવાથી અહિંસા આદિ ધર્મ વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય છે તે બ્રહ્મ કહેવાય છે જેના વડે બ્રહ્મનું આચરણ કરવામાં આવે તે બ્રહ્મચર્ય જેમાં બ્રહ્મચર્ય ન હોય તે અબ્રહ્મચર્ય અર્થાત્ મૈથુન કહેવાય છે ॥૨૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ--પહેલા પ્રાણાતિપાત આદિ પચ્ચ અવ્રતોમાંથી ક્રમથી હિંસા, મૃષાવાદ અને સ્તેયના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે ક્રમપ્રાપ્ત મૈથુનના સ્વરૂપનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ-

બ્રહ્મચર્યના અભાવને અબ્રહ્મચર્ય કહે છે. આત્મા લોકાકાશના અસં-ખ્યાત પ્રદેશોની બરાબર હોવાથી બૃહત્-વિશાળ છે, આથી તેને બ્રહ્મ કહે

परिमाणं बृहत्त्वादात्मा ब्रह्म, स एव चरणं चर्यं ब्रह्म न आत्मनः सेवनम्, आत्मनि मरणपर्यन्तं न स्त्र्यादि विषयम्, बहिर्मुखचित्तवृत्तित्वं ब्रह्मचर्यं मुच्यते । तस्मात्-कृतकारिताऽनुपतिसहितैः कायशङ्कनयोगैः सर्वथा कामिनी विषयैः परिहारो ब्रह्मचर्यम् । संवृतेन्द्रियद्वारत्वात्-आत्मन्येव वृत्तित्वात्-प्रतिष्ठितत्वाच्च, तद्विपरीतमब्रह्मचर्यम् । तच्च विवेकिनो विवेकबलदुपशान्तरागादि रजोमलाः सर्वथा खलु परित्यजन्तीति भावः । उक्तञ्च प्रश्नव्याकरणे ४ आस्रवद्वारे 'अबंभं मेहुणं' इति, अब्रह्म मैथुनमिति ॥१५॥ ॥२८॥

मूळम्—मुच्छापरिग्रहो ॥२९॥

छाया—'मूर्च्छा परिग्रहः ॥२९॥

ब्रह्म कहते हैं, उसका चरण अर्थात् सेवन करना ब्रह्मचर्य है । मृत्यु-पर्यन्त स्त्री आदि का सेवन न करना, चित्त की बहिर्मुख वृत्ति न होना ब्रह्मचर्य है । अतएव कृत, कारित और अनुमोदन, इन तीनों करणों सहित मन चचन काययोग से कामिनीविषय का त्याग करना ब्रह्मचर्य कहलाता है । उससे इन्द्रिय द्वार का संवरण आत्मा में ही वृत्ति होनी है और प्रतिष्ठित होता है । जो ब्रह्मचर्य से विपरीत हो वह अब्रह्मचर्य । जो पुरुष विवेकशाली हैं और विवेक के बल से जिनके राग आदि विकार उपशान्त हो चुके हैं, वे अब्रह्मचर्य का सर्वथा ही त्याग कर देते हैं । प्रश्नव्याकरणसूत्र के चौथे आस्रव द्वार में कहा है—अब्रह्मचर्यं मैथुन कहलाना है ॥२८॥

'मुच्छा परिग्रहो' ॥२९॥

सूत्रार्थ—मूर्च्छाभाव परिग्रह है ॥२९॥

छे, तेनुं ચરણ અર્થાત્ સેવન કરવું બ્રહ્મચર્ય છે. મૃત્યુ સુધી સ્ત્રી આદિનું સેવન ન કરવું, ચિત્તની બહિર્મુખ વૃત્તિ ન હોવી બ્રહ્મચર્ય છે, આથી કૃત, કારિત અને અનુમોદન એ ત્રણ કારણો સહિત મન, વચન અને કાયાના યોગથી—કામિની વિષયનો ત્યાગ કરવો બ્રહ્મચર્ય કહેવાય છે. એનાથી ઇન્દ્રિય-દ્વારનું સંવર થાય છે, આત્મામાં જ વૃત્તિ થાય છે, તેમજ પ્રતિષ્ઠિત થાય છે. જે બ્રહ્મચર્યથી વિપરીત છે તે અબ્રહ્મચર્ય જે પુરુષ વિવેકશાળી છે અને વિવેકના બળથી જેના રાગ વગેરે વિકાર શાન્ત થઈ ગયા છે, તે અબ્રહ્મચર્યનો સર્વથા જ ત્યાગ કરી દે છે પ્રશ્નવ્યાકરણ સૂત્રના ચોથા આસ્રવ-દ્વારમાં કહ્યું છે—અબ્રહ્મચર્યં મૈથુન કહેવાય છે. ॥૨૮॥

'મુચ્છા પરિગ્રહો' ॥૨૯॥

સૂત્રર્થ—મૂર્છાભાવ પરિગ્રહ છે. ॥૨૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વમુત્રે હિંસાદિલક્ષણપશ્ચદિધાત્રતેષુ યથાક્રમં હિંસાઽગ્રતઃ-
સ્તૈયમૈથુનસ્વરૂપં નિરૂપિતમ્, સમ્પતિ પશ્ચમં પરિગ્રહસ્વરૂપમગ્રતં પ્રરૂપયિતુમાહ-
'સૂચ્છા પરિગ્રહો' ઇતિ મમેદમિતિ મમતાલક્ષણા રાગાદિ મનોઽભિલાષરૂપા-
વાધાનાં શોભદિષગજાઽશ્વમણિરત્નાદીનાં ચેનાઽચેતનાનાં રાગાદીનામ્ ઉપધી-
નાશ્ચ સંરક્ષણાઽર્જનસંસ્ક્રાદિલક્ષણા મમત્વરૂપાઽઽપ્રક્રિયઃ અભિગ્વક્તઃ પરિગ્રહ
ઉચ્યતૈ । તથા ચ શાસ્ત્રમર્યાદોક્ત ધર્મોપકરણાઽતિરિક્ત વસ્તુનિ મમત્વમપિ મૂર્છા
રૂપઃ પરિગ્રહઃ । ઉક્તશ્ચ

વાહ્ય ગ્રન્થ વિહીના-દરિદ્રમનુજાઃ સ્વપાપતઃ સન્તિ ।

પુનરભ્યન્તર સજ્જ ત્યાગી લોકેષુ દુર્લભો જીવઃ । ૧૧ ॥ ઇતિ

તત્ત્વાર્થદીપિકા—હિંસા આદિ પાંચ અત્રતોં મેં સે પહેલે
અનુક્રમ સે હિંસા, અસત્ય, સ્તેય ઓર મૈથુન કે સ્વરૂપ કા નિરૂપણ
ક્રિયા ગયા, અથ પાંચવેં અત્રત પરિગ્રહ કે સ્વરૂપ કા પ્રરૂપણ કરતે હૈં—

મૂર્છા પરિગ્રહ હૈ, અર્થાત્ 'યહ મેરા હૈ' હસ પ્રકાર મમતા જિસકા
લક્ષણ હૈ, જો મન કી અભિલાષા રૂપ હૈ, ગાય, ભેંસ, બકરી, અશ્વ
મણિ ઓર રત્ન આદિ ચેતન એવં અચેતન પદાર્થોં કા, રાગાદિ કા તથા
ઉપધિયોં કા સંરક્ષણ, અર્જન ઓર સંસ્કાર આદિ જિસકા લક્ષણ હૈ,
એસી મમતા રૂપ આસક્તિ યા વૃદ્ધિ કો પરિગ્રહ કહતે હૈં, હસ
પ્રકાર શાસ્ત્રોક્ત ધર્મોપકરણોં કે સિવાય દૂસરી વસ્તુઓં કા સંગ્રહ
કરના મૂર્છા હૈ । શાસ્ત્રોક્ત વસ્તુઓં મેં ભી યદિ મમત્વ હો તો વહ
ભી મૂર્છા પરિગ્રહ હૈ । કહા ભી હૈ—

અપને પૂર્વોપાર્જિત પાપકર્મ કે ઉદય સે વાહ્ય પરિગ્રહ સે વિહીન

તત્ત્વાર્થદીપિકા—હિંસા આદિ પાંચ અત્રતોમાંથી પહેલા અનુક્રમથી
હિંસા, અસત્ય, સ્તેય અને મૈથુનના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું હોય-
પાંચમાં અત્રત પરિગ્રહના સ્વરૂપનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ-

મૂર્છા પરિગ્રહ છે અર્થાત્ 'આ મારું છે' એ રીતે મમતા જેનું લક્ષણ
છે, જે મનની અભિલાષા રૂપ છે, ગાય, ભેંસ, બકરી, ઘોડો, મણિ અને
રત્ન આદિ ચેતન અને અચેતન પદાર્થોના, રાગાદિના તથા ઉપધિઓનું
સંરક્ષણ, અર્જન અને સંસ્કાર વગેરે જેના લક્ષણ છે. એવી મમતાએ
આસક્તિ અથવા લોભને પરિગ્રહ કહે છે. આ રીતે શાસ્ત્રોક્ત ધર્મોપકરણો-
સિવાય બીજી વસ્તુઓનો સંગ્રહ કરવો મૂર્છા છે-શાસ્ત્રોક્ત વસ્તુઓમાં પશુ
જો મમત્વ હોય તો તે પણ મૂર્છાએ પરિગ્રહ છે. કહ્યું પણ છે—

પોતાના પૂર્વોપાર્જિત પાપકર્મના ઉદયથી વાહ્ય પરિગ્રહથી વિહીન

તથા ચ મોહસામાન્યાર્થક મૂર્છાઘાતોઃ પ્રકૃતેઽભિષ્વજ્ઞાત્મક મમત્વરૂપ વિશેષાર્થો ગૃહ્યતે, પરિગ્રહપ્રકરણવશાત્ । અથૈવન્તર્હિં બાહ્યસ્ય પરિગ્રહત્વં ન સ્યાત્ આધ્યાત્મિકસ્યૈવ પરિગ્રહસ્યોક્તરીત્યા સંગ્રહણાદિતિ ચેત્, ? સત્યમ્ પ્રધાનત્વાદભ્યન્તરસ્યૈવ પરિગ્રહસ્ય સંજિઘૃક્ષિતત્વાત્ બાહ્યે પરિગ્રહેઽસત્યપિ મમેદ મિત્યેવં સંકલ્પવાન્ સપરિગ્રહો ભવતીતિ ભાવઃ, અથૈવં તર્હિં બાહ્યઃ પરિગ્રહો ન ભવત્યેવેનિ ચેત્, ? મૈત્રમ્, મૂર્છાલક્ષણ મમત્વહેતુતયા બાહ્યસ્યાઽપિ પરિગ્રહત્વસ્ય સદ્ભાવાત્ અથ યદિ મમેદમિતિ સંકલ્પઃ પરિગ્રહ સ્તદા જ્ઞાનાદ્યપિ પરિગ્રહઃ સ્યાત્, તદપિ-

દરિદ્ર જનલોક મેં બહુતેરે હૈં મગર આભ્યન્તર પરિગ્રહ અર્થાત્ મમત્વ કા ત્યાગી જીવ દુર્લભ હૈં ॥૧॥

મોહ કે સમાનાર્થક 'મૂર્છ' ધાતુ સે હસ પ્રકરણ મેં અભિષ્વંગરૂપ મમત્વ અર્થ લિયા જાતા હૈ, ક્યોંકિ પરિગ્રહ કા પ્રકરણ હૈ । આશંકા હો સકતી હૈ કિ એસા અર્થ કરને સે તો બાહ્ય વસ્તુ પરિગ્રહ હી નહીં કહલાયગી, ઉક્ત પ્રકાર સે આભ્યન્તર પરિગ્રહ કા હી ગ્રહણ હો સકતા હૈ । હસકા સમાધાન યહ હૈ કિ આભ્યન્તર પરિગ્રહ હી પ્રધાન હૈ ઓરે ઉસી કો યહાં મુલ્ય રૂપ સે ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । બાહ્ય વસ્તુ કે ન હોને પરં ભી કિસી મેં મમતા ભાવ વિદ્યમાન હૈ તો વહ પરિગ્રહી હી હૈ ।

શંકા-તો કયા બાહ્ય પરિગ્રહ નહીં હૈ ?

સમાધાન-એસા મત કહો । મમતા કા કારણ હોને સે બાહ્ય વસ્તુ મી પરિગ્રહ હી હૈ ।

દરિદ્ર માણસો આ લોકમાં ઘણી સંખ્યામાં છે, પરંતુ, આભ્યન્તર પરિગ્રહ અર્થાત્ મમત્વના ત્યાગી જીવ દુર્લભ છે. ॥૧॥

મોહના સમાનાર્થક 'મૂર્છ' ધાતુથી આ પ્રકરણમાં અભિષ્વંગ રૂપ મમત્વ અર્થ દેવામાં આવ્યો છે કારણ કે 'પરિગ્રહનું' પ્રકરણ છે. આશંકા થઈ શકે કે આવો અર્થ કરવાથી તો બાહ્ય વસ્તુ પરિગ્રહ જ કહેવાશે નહીં, ઉપર જણાવેલા પ્રકારથી આભ્યન્તર પરિગ્રહનું જ ગ્રહણ થઈ શકે છે. આનું સમાધાન એ છે કે આભ્યન્તર પરિગ્રહ જ મુખ્ય છે અને તેને જ અહીં મુખ્ય રૂપથી ગ્રહણ કરવામાં આવે છે. બાહ્ય વસ્તુનું ન હોવા છતાં પણ જો કોઈનામાં મમતાભાવ વિદ્યમાન છે તો તે પરિગ્રહી જ છે.

શંકા-તો શું બાહ્ય પરિગ્રહ એ પરિગ્રહ નથી ?

સમાધાન-આમ કહેવું ઠીક નથી. મમતાનું કારણ હોવાથી બાહ્ય વસ્તુ પરિગ્રહ જ છે.

રાગાદિ પરિણામવત્ મમેદયિતિ સદ્બલ્પ્યતે इति चेत्. ? उच्यते, अत्रापि प्रमत्तयोगात्' इत्यनुवृत्त्या दोषाभावात् । तथा च ज्ञानदर्शन चारित्रवतोऽप्रमत्तस्य मोहाभावान्मूर्च्छा नास्तीति निष्परिग्रहत्वं सिद्धम् । अपि च तेषां ज्ञानदर्शन चारित्राणा महेयत्वादात्म स्वभावत्वादपरिग्रहत्वं बोध्यम् । रागादयस्तु कर्मोदय षरतःत्रतयाऽऽत्मस्वभावत्वाभावाद् हेया भवंति, तस्मात् रागादिषु सद्बल्यः परिग्रहः उच्यते, ममत्वलक्षणपरिग्रहमूलकाः खलु सर्वे दोषा भवन्ति । तथाहि ममेद-

શંકા-અગર 'યહ મેરા હૈ' હસ પ્રકાર કે સંકલ્પ કો પરિગ્રહ કહા જાય તો જ્ઞાન આદિ બી પરિગ્રહ કહલાવેંગે કયોં કિ રાગાદિ પરિણામ કે સમાન બન સેં બી 'યહ મેરા હૈ' એસા સંકલ્પ કિયા જાતા હૈ ।

સમાધાન-યહાં બી 'પ્રમત્તયોગાત્' (પ્રમત્તયોગ સે) હસ પદ કી અનુવૃત્તિ હૈ, અતઃ દોષ નહીં આતા ।

હસ પ્રકાર જ્ઞાન, દર્શન ઔર ચારિત્ર સે સમ્પન્ન અપ્રમાદી મુનિ મેં મોહ કા અભાવ હોને સે મૂર્છા નહીં હોતી, અતઃ ઉત્તરી નિષ્પરિગ્રહતા સિદ્ધ હૈ । હસકે અતિરિક્ત જ્ઞાન, દર્શન ઔર ચારિત્ર હેય નહીં હૈ, વે આત્મા કે સ્વભાવ હૈ, હસ કારણ પરિગ્રહ નહીં હૈ । હસકે વિપરીત રાગાદિ કર્મ કે ઉદય કે અધીન હૈ, વે આત્મા કે સ્વભાવ નહીં હૈ, અતઃ દોષ હેય હૈ । હસ કારણ રાગાદિ મેં જો સંકલ્પ હૈ વહ પરિગ્રહ કહલાતા હૈ ।

સમસ્ત દોષોં કા મૂલ મમત્વ રૂપ પરિગ્રહ હી હૈ । 'યહ મેરા હૈ' હસ પ્રકાર સંકલ્પ જન્મ ઉત્પન્ન હોતા હૈ તવ બન વસ્તુઓં કા સંરક્ષણ,

શંકા-જો 'આ માફ' છે' એ બાનના સંકલ્પને પરિગ્રહ કહેવામાં આવે તો જ્ઞાન આદિ પણ પરિગ્રહ કહેવાશે કારણ કે રાગાદિ પરિણામની જેમ તેમનામાં પણ 'આ માફ' છે' એવો સંકલ્પ કરવામાં આવે છે.

સમાધાન-અહીં પણ 'પ્રમત્તયોગાત્' (પ્રમત્તયોગથી) આ પદની અનુવૃત્તિ છે આથી દોષ આવતો નથી.

આ રીતે જ્ઞાન, દર્શન તેમજ ચારિત્રથી સમ્પન્ન અપ્રમાદી મુનિમાં મોહનો અભાવ હોવાથી મૂર્છા હોતી નથી આથી તેની નિષ્પરિગ્રહતા સિદ્ધ છે. આ સિવાય જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રહેય નથી તેઓ આત્માના સ્વભાવ છે આથી પરિગ્રહ નથી આનાથી ઉદ્દુઃ, રાગાદિ કર્મના ઉદયને અધીન છે, તેઓ આત્માના સ્વભાવ નથી આથી હેય છે. આથી રાગાદિમાં જે સંકલ્પ છે તે પરિગ્રહ કહેવાય છે.

સમસ્ત દોષોનું મૂળ મમત્વરૂપ પરિગ્રહ જ છે. 'આ માફ' છે' એ બાનનો સંકલ્પ જ્યારે ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે તે વસ્તુઓનું સંરક્ષણ, ઉપા-

भिति सङ्कल्पे सति संस्कारार्जनसंस्कारादयो जायन्ते तत्र वाऽवश्यमेव हिंसा भवे-
द्भवति भविष्यति च, तदर्थं मृषा वदति स्तेयं समाचरति, मैथुने कर्मणि च
प्रयतते तदुद्भवः खलु नरकादिषु दुःखपरम्परा भवतीति भावः ॥२९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तावत् अव्रतेषु हिंसादिलक्षणेषु यथाक्रमं हिंसा मृषा-
वादस्वरूपं प्ररूपेतम्, सम्प्रति पञ्चमं परिग्रहरूपमव्रतं प्ररूपयितुमाह—‘मूच्छापरि-
ग्रहो’ इति मूच्छाप्रमत्तयोगात् मूर्च्छते आत्माऽनयेति मूच्छा, लोभपरिणतिरूप-
ममत्वबुद्धिः अभिष्वङ्गलक्षण असक्तिः परिग्रहः तथा खलु लोभपरिणतिरूपया मूच्छ-
याऽऽत्मा मोहमुपनीयते विवेकात्प्रच्युतश्चात्मा प्रातिविशि-
ष्टलोभकषायोपरागा अनुचितप्रवृत्तिप्रवणस्सन् कर्तव्यमकर्तव्यं वा किम्पि न चेत्

उपार्जन या संस्कार आदि किया जाता है और ऐसा करने में अवश्य ही
हिंसा होती है और होगी भी। उनके लिए मनुष्य मृषा भ्रमण करता है,
चोरी करता है और मैथुनक्रिया में प्रवृत्ति करता है और फिर इन पापों
के फलस्वरूप नरक आदि में दुःखों की परम्परा उत्पन्न होती है ॥२९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—हिंसा आदि अव्रतों में से क्रमानुसार हिंसा,
मृषावाद, स्तेय, और मैथुनके स्वरूपकी प्ररूपणा पहले की जा चुकी
हैं। अब पांचवें अव्रत परिग्रह की प्ररूपणा करते हैं—

मूर्छा परिग्रह है। प्रमाद के योग से जिसके कारण आत्मा मूर्छित
हो जाय वह मूर्छा। उसे लोभ की परिणति, ममत्व बुद्धि, अभिष्वंग,
आसक्ति आदि कहते हैं। इस लोभपरिणति रूप मूर्छा से आत्मा मूढ बन
जाता है, विवेक से भ्रष्ट हो जाता है। विवेक से भ्रष्ट आत्मा विशिष्ट

जर्न અથવા સંસ્કાર આદિ કરવામાં આવે છે અને એમ કરવાથી અવશ્ય
જ હિંસા થાય છે અને થશે પણ આ માટે માણસ મૃષા ભ્રમણ કરે છે,
ચોરી કરે છે અને મૈથુન ક્રિયામાં પ્રવૃત્તિ કરે છે અને પછી એ પાપોના
ફળ સ્વરૂપ નરક આદિમાં દુખોની હારમાળા ઉત્પન્ન થાય છે. ॥૨૯॥

તત્ત્વર્થનિર્યુક્તિ—હિંસા આદિ અવ્રતોમાંથી ક્રમાનુસાર હિંસા, મૃષાવદ,
સ્તેય, અને મૈથુનના સ્વરૂપની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી ગઈ હોયે પાંચમાં
અવ્રત પરિગ્રહની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ—

મૂર્છા પરિગ્રહ છે. પ્રમાદના યોગથી જેના કારણે આત્મા મૂર્છિત થઈ
જાય તે મૂર્છા તેને લોભની પરિણતિ, મમત્વબુદ્ધિ, અભિષ્વંગ, આસક્તિ
વગેરે કહે છે. આ લોભ પરિણતિ રૂપ મૂર્છાથી આત્મા મૂઢ બની જાય
છે, વિવેકથી ભ્રષ્ટ થઈ જાય છે વિવેકભ્રષ્ટ આત્મા વિશિષ્ટ લોભને વશીભૂત

યતે, મૂઢધીશ્ચ તૃષ્ણાવશીકૃત ચિત્તવૃત્તિરનાલોચિત ગુણદોષોઽન્ધ વધિરાદિરિવ ચેષ્ટેતે કરોતિ । યદ્વા-મૂર્છા મોહ સમુચ્છાયયો રિત્યનુશાસનાત્ સમુચ્છાયરૂપા-મૂર્છા, તથા ચ સમુચ્છીયતેઽનુક્ષણ મુપચીયતે હિંસાદિ દોષૈર્લોભોપરાગવલાનુરક્ષિતોઽય-માત્મેતિ સમુચ્છાયઃ-સકલદોષાગ્રણીલોભઃ, દુઃસ્વશ્ચ-લોભાઽભિભૂતો જનો હિંસાઽ નૃપત્તેયાદિષુ નિશ્શક્લં પ્રવર્તેતે । લોભવશીભૂતઃ સન્ પુત્રઃ પિતરમપિ, હન્તિ, સોદરં સોદરો ભ્રાતાપિતાસ્વ તનયં પતિમ્, પત્ની પતિર્હિન સ્ત્યેવ મેયસીમપિર્કિં બ્રુવે ॥૧॥

લોભ કે વશીભૂત होकर अनुचित प्रवृत्ति करने लगता है और कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य के विचार से रहित हो जाता है । उसकी बुद्धि मूढ़ बन जानी है, चित्तवृत्ति तृष्णा के वशीभूत हो जाती है । वह गुण अवगुण का विचार नहीं करता और अंधे एवं यहरे के समान चेष्टा करता है ।

अथवा-‘मूच्छा मोहसमुच्छाययोः’ इस व्याकरण के विधान के अनुसार मूच्छा का अर्थ समुच्छाय है, जिसका आशय यह है कि लोभ के वशीभूत हुआ आत्मा जिसके कारण हिंसा आदि दोषों का समूह बन जाता है, वह मूच्छा है । लोभ सब दोषों में प्रधान है । लोभी अनुष्य हिंसा, झूठ, चोरी आदि सभी पापों में निःशंक होकर प्रवृत्ति करता है । लोभ के अधीन होकर पुत्र पिता का भी घान कर डालता है, भाई भाई का खून कर देता है, पिता पुत्र के प्राण हरण कर लेता है, पत्नी पति के प्राणों के ग्राहक बन जाती है और पति पत्नी की जान ले लेता है अधिक क्या कहा जाय ?

થડને અનુચિત પ્રવૃત્તિ કરવા માટે છે અને કર્તવ્ય-અકર્તવ્યના વિચારથી શૂન્ય થઈ જાય છે. તેની બુદ્ધિ ખડેર બની જાય છે, ચિત્તવૃત્તિ તૃષ્ણાને તબે થઈ જાય છે. તે ગુણ-અવગુણના વિચાર કરતો નથી અને આંધળા તથા ખડેશના જેવી ચેષ્ટા કરે છે

અથવા-‘મૂચ્છા મોહસમુચ્છાયયોઃ’ વ્યાકરણના આ વિધાન અનુસાર મૂચ્છાનો અર્થ સમુચ્છાય છે જેનો આશય એ છે કે લોભને વશીભૂત થયેલો આત્મા જેના કારણે-હિંસા વગેરે દોષોનો સમૂહ બની જાય છે, તે મૂચ્છા છે. બધાં દોષોમાં લોભ મુખ્ય છે. લોભી માણસ હિંસા, અસત્ય, ચોરી વગેરે સઘળાં પાપોમાં નિઃશંક થઈને પ્રવૃત્તિ કરે છે લોભને તાબે થઈને દિવરો ખાયનો પણ વધ કરી નાખે છે, સગો ભાઈ, ભાઈનું પુત્ર કરી નાખે છે, પિતા પુત્રના પ્રાણ હરે છે, પત્ની પતિના પ્રાણ હરી લે છે અને પતિ પત્નીનો જીવ લઈ લે છે, વિશેષ શું કહી શકાય ?

एवम्—जननी—स्वसृ प्रभृतयोऽपि लोभाभिभूतत्वाद् महान्त मनर्थं मावहन्ति—
कुर्वन्ति, लोभाऽभिभूतत्वादेव—कुटसाक्षित्वदायीन उत्कोचं गृहीत्वा बहूनृतभाषणं
कुरुते, लोमबलपकर्षादेव—मार्गे लुण्टकः पथिकान् लुण्टति, स्तेनश्च—राजप्राकारः
कुड्यादिकमपि खनित्वा लोभादेव सर्वमप्यपहरति, सर्वथा खलु न वञ्चन तथाविधो
भावो बहिरन्तः स्थितो वा निकटस्थे दूरस्थो वा प्रियदर्शनो वर्तते यमयं लुब्धो
भावतः परित्यजेत्, लोमभुजङ्गश्च मानवानां मचुरतरानिष्टं सट्पादनेन बहूनि-
दुश्चरितानि उपनयति, किं बहूना 'पतङ्ग-मातङ्ग-कुरङ्ग-भृङ्ग मीनारित्यश्च एते-
ऽपि लोभाभिभूतत्वादेव एकैक चक्षुः स्पर्शन-श्रोत्र घ्राण-रसनेन्द्रिय करण-

इसी प्रकार माता, भगिनी आदि भी लोभ से अभिभूत होकर
घोर अनर्थ कर डालती हैं। लोभग्रस्त होकर लोग झूठी साक्षी देते
हैं, घूस लेकर मिथ्या भाषण करते हैं। लोभ के आधिक्य से ही
लुटेरे मार्ग में पथिकों को लूट लेते हैं चोर राजप्रासाद, प्राकार,
दिवार आदि खोद कर सर्वस्व हरण करते हैं। ऐसा कोई बाहर या
भीतर स्थित, निकटवर्ती दूर वर्गी या प्रियदर्शन भाव नहीं है, जिसे
लोभी मनुष्य स्वेच्छापूर्वक छोड़ दे !

लोभ भुजंग के समान है। इसकी बढौलत मनुष्यों को अत्यन्त
अनिष्ट की प्राप्ति होती है। यह अनेक प्रकार के दुराचारों में फंसाना
है अधिक तो क्या कहा जाय, पतंग, मातंग (हाथी), कुरंग (हिरण)
भृंग (अमर) और मीन तिर्यच हैं, किंतु ये भी लोभ से ग्रस्त होकर
एक एक चक्षुः, स्पर्शन, श्रोत्र, घ्राण और रसना इन्द्रिय की प्रचलता के

એવી જ રીતે માતા, ખંહેન વગેરે પણ લોભને વશ થઈને ઘોર અનર્થ
કરી એસે છે. લોભગ્રસ્ત થઈને લોકો ખોટી સાક્ષી આપે છે. લોભને લઈને
મિથ્યા ભાષણ કરે છે લોભની વિશેષતા ના કારણે જ લુંટારા માર્ગમાં પથિકોને
લૂંટી લે છે ચોર લોકો રાજાનો મહેલ, પ્રાકાર, દિવાલ વગેરે ખોદીને બધું
જ-લૂંટી બાય છે. સંસારમાં એવો કોઈ ભાવ, બહાર કે અંદર રહેલો,
કે નજીક હોય, દૂર હોય અથવા પ્રિયદર્શન, ભાવ નથી કે જેને લોભી માણસ
સ્વેચ્છાપૂર્વક છોડી દે !

લોભ સર્પ જેવો છે. આનાથી મનુષ્યોને અત્યન્ત અનિષ્ટની પ્રાપ્તિ
થાય છે. તે અनेક પ્રકારના દુરાચારોમાં ફસાય છે. વધુ તો શું કહી શકાય ?
પતંગીયું, હાથી, હરણ, ભમરો અને માછલી તિર્યચ આ બધાં
પણ લોભથી ગ્રસ્ત થઈને એક એક ચક્ષુ, સ્પર્શન, શ્રોત્ર, ગ્રંથ અને રસની

પાવલ્યેન રૂપ રંગ-ગંધ-ગન્ધ-રસલોભ તૃણયા વધ્યન્તે મ્રિયન્તે ચ, પશ્ચન્દ્રિયૈઃ
પશ્ચવિષયોપયોગિનાં માનવાનાન્તુ લોભાભિભૂતાનાં વન્ધનાદૌ કથેવકા ? ।
તથા ચોક્તમ્-

‘પતંગ-માતંગ-કુરંગ-ભૃંગ-મીનાહતાઃ પશ્ચમિરેવ પશ્ચ ।

एकः प्रमादी स कथं न हन्यते-यः सेव्यते पश्चमिरेव पश्च । १ । इति

एवञ्च-विषयग्राध्यैव विवेकिनोऽपि सन्मार्गात्परिस्खलन्ति, इत्यहो विचित्रतां
लोभस्य इति लोभलक्षणमूच्छीपरिग्रहो व्यपदिश्यते । सा खलु-लोभरूपा-
मूच्छी-आन्तरविषयालम्बना वहिर्विषयालम्बना च भवति । तत्राभ्यन्तरो विषय-
श्चतुर्दशविधो वर्तते राग द्वेष-क्रोध-मान-माया-लोभ मिथ्यादर्शनहास्यरत्यरति-

કારણ રૂપ, સ્પર્શ, શબ્દ, ગંધ ઓર રસ થી તૃણા સે પીડિતી હોકર
વન્ધન કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં ઓર મારે જાતે હૈં । જય એક-એક ઇન્દ્રિય કે
વશીભૂત હોને વાલોં કી યહ દશા હોતી હૈં તો પાંચોં ઇન્દ્રિયોં કે ભોગ
ભોગને વાલે લોભગ્રસ્ત મનુષ્યોં કા કયા કહના હૈં । કહા મી હૈ-

પતંગ, માતંગ, કુરંગ, ભૃંગ ઓર મીન યે પાંચોં પ્રકાર કે જીવ એક-
એક ઇન્દ્રિય કે વિષય કે કારણ મારે જાતે હૈં, તો જો પ્રમાદી પુરુષ
પાંચોં ઇન્દ્રિયોં કે અધીન હો જાતા હૈ, ડમકા હનન કૈસે નહીં હોગા । ૧ ।

इस प्रकार विषयों में गृह्य होकर विवेकवान् जन भी सन्मार्ग से
च्युत हो जाते हैं, यह लोभ की विचित्रता है । यह लोभ रूप मूच्छी
ही परिग्रह कइलाती है । मूच्छी दो प्रकार की होती है-आभ्यन्तर
विषयों में तथा बाह्य विषयों में आभ्यन्तर विषय चौदह प्रकार का है-
राग-द्वेष-क्रोध-मान-माया-लोभ-मिथ्यादर्शन, हास्य, रति, अरति,

તૃણાથી દુખી થઈને બન્ધનને પ્રાપ્ત થાય છે અને માર્યા જાય છે, જે
એક-એક ઇન્દ્રિયને વશ થનારાની આવી દશા થાય છે તો પાંચે ઇન્દ્રિયોને
ભોગ ભોગવનારા લોભગ્રસ્ત મનુષ્યોનું શું કહેવું ? કહ્યું પણ છે-

પતંગ (પતંગીયું) માતંગ (હાથી) કુરંગ (હરણ) ભૃંગ (ભમરો)
અને મીન (માછલી) આ પાંચે પ્રકારના જીવ એક-એક ઇન્દ્રિયના વિષયના
કારણે માર્યા જાય છે તો જે પ્રમાદી પુરુષ પાંચે ઇન્દ્રિયોને વશ થઈ જાય
છે તેનો નાશ કેમ નહીં થાય ? ॥૧॥

આ રીતે વિષયોમાં લલચઈને વિવેકી પુરુષો પણ સન્માર્ગથી ભ્રષ્ટ
થઈ જાય છે એ લોભની વિચિત્રતા છે. ‘આ લોભરૂપ મૂછી જ પરિગ્રહ
કહેવાય છે. મૂછી બે પ્રકારની હોય છે-આભ્યન્તર વિષયોમાં તથા બાહ્ય
વિષયોમાં આભ્યન્તર વિષય ચૌદ પ્રકારના છે.-રાગ-દ્વેષ-ક્રોધ, માન-માયા-
લોભ-મિથ્યા દર્શન-હાસ્ય-રતિ-અરતિ-ભય-શોક જુજુપ્સા અને વેદ આવી

મયશોક જુગુપ્સાવેદભેદાત્ । તત્રાભ્યન્તર પરિગ્રહશ્ચતુર્દશવિધઃ ફલિતઃ, બાહ્ય-
વિષયશ્ચ વાસ્તુ-ક્ષેત્રધનધાન્યશય્યાઽઽમતયાનકુપ્યદ્વિત્રિચતુષ્પદ ભાણ્ડભેદાદનેક-
વિધો ભવતિ, ચેતઃ પરિણામરૂપાયા મૂર્છાયા એતાવાન્ સ્વલુ વિષયો વર્તતે, એતે
સ્વલુ રાગદ્વેષાદયોઽઽભ્યન્તરવિષયાઃ પરિગ્રહનિમિત્તત્વાત્ મૂર્છાત્વેન વ્યપદિશ્યન્તે ।
વાસ્તુ ક્ષેત્રાદયશ્ચ બાહ્યવિષયા ‘મમેવે’ ત્યેવમજ્ઞાનાદ્ મમતાવિષયો કૃતાઃ સન્તઃ
કાલુષ્યવતા ચેતસાઽઽત્પ્રનો નાનાવિધ જન્મગ્રન્થિપરમ્પરા દૃઢીકરણાયાઽનાલો-
ચિતપૂર્વાપરભાવેન પરિગ્રહત્વેન વ્યવહિયન્તે, પરિગૃહ્યતે લોભાનુરક્તચિત્તવૃત્ત્યા-
ઽભ્યુપગમ્યતે-સ્વીક્રિયતે इति પરિગ્રહઃ, લોભ-કપાયરૂપાત્મપરિણામવિશેષઃ,
સા ચોક્તરૂપા મૂર્છા પરિગ્રહ મદ્ભાવ પરિણામાદાત્મનઃ પ્રાણાતિપાતવત્ પ્રમત્તયો-

ભય, શોક, જુગુપ્સા ઓર વેદ । હમ પ્રકાર આશ્વન્તર પરિગ્રહ મી
ચોદહ પ્રકાર કા ફલિત હોતા હૈ । બાહ્યવિષય અનેક પ્રકાર કા હૈ જૈસે
વાસ્તુ (મકાન ટુકાન) આદિ, ક્ષેત્ર (ચેત), ધન, ધાન્ય, શય્યા, આસન,
યાન, કુપ્ય, દ્વિપદ, ત્રિપદ, ચતુષ્પદ ભાણ્ડ આદિ । યે સ્વ ચિત્ત કે
પરિણમન રૂપ મૂર્છા કે વિષય હૈ । ઝાર રાગ દ્વેષ આદિ જો આશ્વન્તર
વિષય કહે ગયે હૈ, વે પરિગ્રહ કે કારણ હોને સે મૂર્છા કહલાતે હૈ । વાસ્તુ
ક્ષેત્ર આદિ જો બાહ્ય વિષય હૈ, અજ્ઞાન કે કારણ ઝનમે મમત્વભાવ
ધારણ કિયા જાતા હૈ, અન્યથાવે કલુષિત ચિત્ત આત્મા કી જન્મ-મરણ
પરમ્પરા કો સુદઢ કરતે હૈ । હમ કારણ ઝનહે મી પરિગ્રહ કહા ગયા હૈ ।

લોભયુક્ત ચિત્તવૃત્તિ શ્લે ત્રિસ્રકા પરિગ્રહ કિયા જાય-સ્વીકાર
કિયા જાય વહ પરિગ્રહ । વાસ્તવ મે વહ આત્મા કા લોભ કપાયરૂપ
પરિણામ હૈ । જૈસે હિંસા પ્રમત્તયોગ કે સદ્ભાવ કે કારણ આત્મા મે

રીતે આશ્વન્તર પરિગ્રહ યણ ચોદ પ્રકારનો સાબિત થાય છે. બાહ્ય વિષય
અનેક પ્રકારના છે-જેમ કે, વાસ્તુ (મકાન, ટુકાન આદિ.) ક્ષેત્ર (ચેતર), ધન,
ધાન્ય, શય્યા, આસન, યાન, કુપ્ય જેવગા ત્રણપગા, ચારપગા, વાસણ
વગેરે આ બધા ચિત્તના પરિણમન રૂપ મૂર્છાના વિષય છે. ઉપર રાગ દ્વેષ
આદિ જે આશ્વન્તર વિષય કહેવામાં આવ્યા છે તે પરિગ્રહના કારણે હોવાથી
મૂર્છા કહેવાય છે. વાસ્તુ ક્ષેત્ર આદિ જે બાહ્ય વિષય છે અજ્ઞાનના કારણે
તેમનામાં મમત્વભાવ ધારણ કરવામાં આવે છે આથી તેઓ કલુષિત ચિત્ત
આત્માની જન્મ-મરણની પરંપરાને સુદઢ કરે છે. આથી તેમને પરિગ્રહકહેલાં છે.

લોભયુક્ત ચિત્તવૃત્તિ જેનું પરિગ્રહણ કરવામાં આવે સ્વીકાર કરવામાં
આવે તે પરિગ્રહ હકીકતમાં તે આત્માનું લોભ કપાય રૂપ પરિણામ છે.
જેવી રીતે હિંસા પ્રમત્તયોગના સદ્ભાવના કારણે આત્મામાં રાગ-દ્વેષ મોહ

જાતુવૃત્તિ સામર્થ્યાત્ અન્તતો રાગ-દ્વેષ-મોહમૂઢા મવતિ । પરિગ્રહ પરિણામવિરહિ-
તસ્ય પુનરપ્રમત્તકાયવાહ્મનોવ્યાપારસ્ય સંયમોપકારકેષુ વસ્ત્રાદ્યુપધિશય્યાહાર
શરીરાદિષુ-આગમાનુજ્ઞાતેષુ સૂચ્છા ન સમ્મવતિ તથાચોક્તં દશવૈકાલિકે ૬
અધ્યયને ૧૮ સૂત્રે—

‘જં પિ વસ્થં વા પાત્રં વા-કંચલં પાદપુંછણં ।

તં પિ સંજમલજ્ઞાત્વા ધારંતિ પરિહરંતિ ચ ॥૧॥

‘યદપિ વસ્ત્રં વા પાત્રં વા-કંચલં પાદપ્રોચ્છનમ્ ।

તદપિ સંયમલજ્ઞાર્થ-ધારયન્તિ પરિહરન્તિ ચ ॥૧॥

તથા ચ-યોગ્યોપકરણકલાપં વિના-ઉદ્દેશ્ય સિદ્ધિર્ન મદતીતિ નિર્ગ્રન્થાનામપિ
સંયમોપકારિતયા વસ્ત્રપાત્રાદ્યુપકરણ કચ્ચાદેઃ આગમાનુજ્ઞાતસ્ય ગ્રંથે પરિગ્રહદોષો

રાગ-દ્વેષ મોહ ઉત્પન્ન કરતી છે, उसी प्रकार मूर्छा भी राग-द्वेष-मोह का
कारण बनती है । किन्तु जो पुरुष परिग्रह की भावना से सर्वथा रहित
हो चुका है, और जिसके मन वचन काय का व्यापार प्रमाद से रहित
है, उसे संयम के उपकारक वस्त्र आदि उपधि, शय्या, आहार,
शरीर आदि में जिनकी अनुमति आगम में दी गई है, मूर्छा नहीं होती
दशवैकालिक सूत्र के छठे अध्ययन अठारहवीं गाथा में कहा है—

साधुजन जो भी वस्त्र पात्र, कंचल और पादप्रोच्छन धारण करते
या काम में लेते-परिहार करते हैं, सब संयम एवं लज्जा के लिए ही
समझना चाहिए ॥१॥

योग्य उपकरणों के अभाव में उद्देश्य सिद्ध नहीं होता, अतएव
निर्ग्रन्थ भी यदि शास्त्र विहित संयम के उपकारक वस्त्र पात्र आदि

ઉત્પન્ન કરે છે તેવી જ રીતે મૂર્છા પણ રાગ-દ્વેષ મોહના કારણે ઉત્પન્ન
થાય છે પરંતુ જે પુરુષ પરિગ્રહની ભાવનાથી સદા રહિત થઈ ચૂક્યો છે
તેમજ જેના મન વચન કાયાનો વ્યાપાર પ્રમાદ વગરનો છે તેને સંયમના
ઉપકારક વસ્ત્ર આદિ ઉપધિ, શય્યા, આહાર, શરીર આદિમાં જેની અનુમતિ
આગમમાં આપવામાં આવી છે, મૂર્છા થતી નથી. દશવૈકાલિકસૂત્રના છઠા
અધ્યયનની અઠારમી ગાથામાં કહ્યું છે—

સાધુજન જે પણ વસ્ત્ર, પાત્ર, કામળો અને પગલુંછણીયા ધારણ કરે
છે, અથવા કામમાં લે છે, તે બધાં સંયમ તથા લજ્જાના હેતુસર જ
સમજવા ભેઈએ. ॥૧॥

યોગ્ય ઉપકરણોની અનુપસ્થિતિમાં ઉદ્દેશ્ય સિદ્ધ થતો નથી, આથી
નિર્ગ્રન્થ પણ જે શાસ્ત્રવિહિત, સંયમના ઉપકારક વસ્ત્ર પાત્ર આદિ ઉપકરણ

न भवति । एवञ्च-येऽपि केचनाऽविवेकिन आगमाद्भुजातमपि वस्त्रपात्राद्युपकरणे मोक्षसाधनमहिंसादिप्रतपरिपालनसमर्थञ्च न परिगृह्णन्ति किन्तु तेऽपि आहारशरीरशिष्यादींश्च तु गृह्णन्त्येव । एतान् ते किं मन्यन्ते किं एते न परिग्रहाः सन्ति ? तेषां मान्यताऽनुसारेण तु तेऽपि परिग्रहा एव सन्ति । अथाऽल्पबहुत्वकृतो विशेषः परिग्रहे सम्भवतीति चेत् अत्रोन्यते, तथा सति-दरिद्रस्याऽल्पं धनं, महर्द्धिकस्य च श्रेष्ठिनः पुष्कलं द्रविणं भवतीति नैतादृताऽपरिग्रह एव दरिद्रः । महर्द्धिकश्च सपरिग्रहो व्यपदिश्यते, तस्मात्-मूर्च्छा लक्षण एव परिग्रहः सर्वैरकामेनाऽपि प्रतिपत्तव्यः । स च मूर्च्छालक्षणः परिग्रहः खलु चेतनेषु-एकद्वित्रि-

उपकरण तथा शय्या आदि का ग्रहण करते हैं तो परिग्रह का दोष नहीं होता । वस्त्र पात्र आदि उपकरण मोक्ष के साधन हैं, अहिंसा आदि प्रतों का पालन करने में समर्थ हैं, आगम में उनकी आज्ञा दी गई है, फिर भी जो विवेकहीन जन उनको ग्रहण नहीं करते किन्तु वे भी आहार शरीर और शिष्य आदि को ग्रहण तो करते ही हैं । उन्हें वे क्या मानते हैं ? क्या ये परिग्रहण नहीं हैं ? उनकी मान्यता के अनुसार ये भी परिग्रह ही हैं ।

शंका-क्या परिग्रह में अल्प-बहुत्वकृत विशेषता का संभव है ?

समाधान-ऐसा माना जाय तो दरिद्र के पास अल्प धन होता है और महान् सम्पत्तिशाली सेठ के पास बहुत धन होता है, इतने मात्र से दरिद्र को अपरिग्रही और महान् सम्पत्तिशाली को परिग्रही नहीं कह सकते । अतएव इच्छा न होने पर भी सब को यही स्वीकार करना

तथा शय्या आदि ग्रहण करे तो तेषां परिग्रहणे दोष लागतो नथी. वस्त्र पात्र आदि उपकरणे मोक्षनां साधनं छे, अहिंसा आदि प्रतानुं पालनं करवाभां समर्थं छे, आगमभां तेमनी आज्ञा इरभाववाभां आवेली छे तो पणु विवेकहीन माणुसो तेमनुं ग्रहण करतां नथी परन्तु तेणो पणु आहार, शरीर अने शिष्य वगेरेनुं ग्रहण तो करे न छे तेमने तेणो शुं माने छे ? शुं ओ परिग्रहण नथी ? तेमनी मान्यता अनुसार तेणो पणु परिग्रही छे.

शंका-शुं परिग्रहभां अल्प-बहुत्वकृत विशेषता संलपित छे ?

समाधान-એવું માની લઈએ તો દરિદ્રની પાસે થોડું ધન હોય છે અને મહાન સમ્પત્તિશાળી શેઠની પાસે અઢળક દ્રવ્ય હોય છે, આથી દરિદ્રને અપરિગ્રહી અને મહાન સમ્પત્તિશાળીને પરિગ્રહી કહી શકાય નહીં. આથી ઇચ્છા ન હોવા છતાં પણ બધાંએ એવું જ સ્વીકારવું જોઈએ કે

ચતુઃ પાંચેન્દ્રિયેષુ, અચેતનેષુ ચ વાસ્તુહરિણ્યાદિષુ રાગાદિષુ ચાઽઽસ્ત્મપરિણામેષુ
 બાહ્યાભ્યન્તરેષુ દ્રવ્યેષુપજાયતે, તત્ત્વ દ્રવ્યં ક્વચિત્ કેવલં પુદ્ગલદ્રવ્યમેવ ભવતિ ।
 ક્વચિત્ આત્મપ્રદેશસંયુક્તં ભવતિ । સ ચ-પરિગ્રહો દ્રવ્ય ગ્રહણાચ્ચતુર્વિધો ભવતિ,
 દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવભેદાત્ । તત્ર-દ્રવ્યતો વાસ્તુ ક્ષેત્રાદિ વિષયઃ ક્ષેત્રતસ્તુ-ગ્રામ નગ
 રાચ્ચન્દ્રિજ્ઞ દ્રવ્યવિષયઃ કાલતઃ પુના રાત્રિદિવસચ્છિન્ન દ્રવ્યવિષયઃ, ભાવતસ્તુ
 પ્રતિવિશિષ્ટ વસ્તુપદ્મભને-ઉત્કૃષ્ટે સતિ ઉત્કૃષ્ટા મૂર્છા સંજાયેત, તથાવિધવસ્તુ
 પદ્મભને મધ્યમે સતિ મધ્યમા, । જયન્યેતુ-જયન્યા મૂર્છા ભવતીતિ ભાવઃ, સા
 खल मूर्च्छा-इच्छा-प्रार्थना-कामोऽभिलाषः कांक्षा-गार्ह्य-लोभः, इत्यादि-
 पर्यायान्तरैरभिधीयते । तत्रेच्छा-यथा-

આહિંષે કિ મૂર્છા હી પરિગ્રહ હૈ । વહ મૂર્છા હપ પરિગ્રહ ચેતન એકેન્દ્રિય
 દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય ઔર પંચેન્દ્રિય પદાર્થો મેં અચેતન વાસ્તુ
 તથા હિરણ્ય આદિ મેં રાગ આદિ આત્મિક પરિણામોં તથા બાહ્ય ઔર
 આભ્યન્તર દ્રવ્યોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ । વહ દ્રવ્ય કહીં કેવલ પુદ્ગલ દ્રવ્ય
 હી હોતા હૈ ઔર કહીં આત્મ પ્રદેશોં સે યુક્ત હોતા હૈ । દ્રવ્ય કે
 ગ્રહણ સે વહ પરિગ્રહ ચાર પ્રકાર કા હૈ-દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઔર ભાવ
 કે ભેદ સે । દ્રવ્ય સે વાસ્તુ-ક્ષેત્ર આદિ વિષયક હોતા હૈ, ક્ષેત્ર સે ગ્રામ-
 નગર આદિ સે અવચ્છિન્ન દ્રવ્ય વિષયક હોતા હૈ, કાલ સે રાત્રિ-દિવસ
 આદિ સે વ્યવચ્છિન્ન દ્રવ્યવિષયક હોતા હૈ ઔર ભાવ સે વિશિષ્ટ વસ્તુ
 કી ઉપલબ્ધિ મેં હોતા હૈ । અગર ઉત્કૃષ્ટ ઉપલંબન હો તો ઉત્કૃષ્ટ મૂર્છા
 હોતી હૈ, તથાવિધ વસ્તુ કા ઉપલંબન યદિ મધ્યમ હો મધ્યમ મૂર્છા
 હોતી હૈ ઔર જયન્ય મેં જયન્ય મૂર્છા હોતી હૈ । હસ મૂર્છા કે અનેક
 પર્યાયવાચક નામ હૈ, જૈસે-ઇચ્છા, પ્રાર્થના, કામ, અભિલાષા, કાંક્ષા,

મૂર્છા જ પરિગ્રહ છે. તે મૂર્છાંરૂપ પરિગ્રહ ચેતન એકેન્દ્રિય, બેન્દ્રિય, ત્રેન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પંચેન્દ્રિય પદાર્થોમાં, અચેતન વાસ્તુ તથા હીરા-
 અવેરાતમાં, રાગ વગેરે આત્મિક પરિણામો તથા બાહ્ય અને આભ્યન્તર
 દ્રવ્યોમાં ઉત્પન્ન થાય છે આ દ્રવ્ય કોઈ જગાએ માત્ર પુદ્ગલ દ્રવ્ય જ
 હોય છે જગાએ ક્યાંક આત્મપ્રદેશોથી યુક્ત હોય છે. દ્રવ્યના ગ્રહણથી તે
 પરિગ્રહ ચાર પ્રકારનો છે-દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવના ભેદથી દ્રવ્યથી
 વાસ્તુ-ક્ષેત્ર આદિ વિષયક થાય છે, ક્ષેત્રથી ગ્રામ નગર વગેરેથી અવચ્છિન્ન
 દ્રવ્ય વિષયક થાય છે, કાલથી રાત્રિ-દિવસ આદિથી વ્યવચ્છિન્ન દ્રવ્ય વિષયક
 થાય છે અને વિશિષ્ટ વસ્તુની ઉપલબ્ધિમાં થાય છે. જો ઉત્કૃષ્ટ ઉપલંબન
 હોય તો ઉત્કૃષ્ટ મૂર્છા થાય છે, તથાવિધ વસ્તુનું ઉપલંબન જો મધ્યમ
 હોય તો મધ્યમ મૂર્છા થાય છે અને જયન્યમાં જયન્ય મૂર્છા થાય છે. આ

‘નિઃસ્વોવષ્ટિ શતં, શતી દશશતં લક્ષં સહસ્રાધિપો
લક્ષેશઃ ક્ષિતિપાલતાં, ક્ષિતિપતિશ્ચક્રેશતાં વાઙ્મતિ ।
ચક્રેશઃ સુરરાજતાં, સુરપતિર્બ્રહ્માસ્પદં વાઙ્મતિ
બ્રહ્માવિષ્ણુપદં, હરિઃ શિવપદં, તૃષ્ણાઽવધિ કો ગતઃ ॥૧॥

इति, उक्तं च दशवैकालिके ६-अध्ययने २१ गाथायां सूच्छा ‘परिग्रहो
वृत्तो’ इति ॥२९॥

मूलम्-एएहितो देसओ वेरमणं पंच अणुव्वया ॥३०॥

छाया-‘एतेभ्यो देशतो विरमणं पञ्चाणुव्रतानि ॥३०॥

गार्ध्य लोभ आदि । इनमें से इच्छा का स्वरूप यह है-‘निर्धन पुरुष सौ
की कामना करता है, जिसके पास सौ हैं उसे दस सौ-हजार की
इच्छा होती है, हजार पति लाख की अभिलाषा करता है, लक्षाधिपति
राजा बनना चाहता है, राजा चक्रवर्ती होने का मनोरथ रखना
है, चक्रवर्ती इन्द्र पद पाने की कामना करता है, इन्द्र ब्रह्मलोक प्राप्त
करने की आकांक्षा करता है, ब्रह्मा विष्णु का पद पाना चाहना है, विष्णु
शिव-महादेव बनना चाहता है । इस तृष्णा का कहीं अन्त नहीं ॥१॥

दशवैकालिकसूत्र के छठे अध्ययन की २१ वीं गाथा में कहा है-

‘मूर्छा को परिग्रह कहा’ है ॥२९॥

‘एएहितो देसओ’ इत्यादि ।

इन हिंसा आदि अव्रतों से एकदेश से निवृत्त होना पांच अणु
व्रत है ॥३०॥

મૂર્છાના અનેક પર્યાયવાચક નામ છે જેમ કે-ઈચ્છા, આર્થના, કામ, અભિ-
લાષા, કાક્ષા, ગાદ્યા, દોલ વગેરે આમાંથી ઈચ્છાનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે-
‘નિર્ધન પુરુષ સો રૂપીઆની કામના કરે છે, જેની પાસે સો છે તેને હજાર-
હજારપતિ લાખની અભિલાષા કરે છે, લક્ષાધિપતિ રાજા બનવા યાહે છે,
રાજા ચક્રવર્તી બનવાના મનોરથ સેવે છે, ચક્રવર્તી ઇન્દ્રપદ પામવાની કામના
રાખે છે, ઇન્દ્ર બ્રહ્મલોક પ્રાપ્ત કરવાની આકાક્ષા સેવે છે, બ્રહ્મા વિષ્ણુનું પદ
મળે એવું ઇચ્છે છે તો વિષ્ણુ શિવ-મહાદેવ બનવાનો મનસુખો સેવે છે. આ
તૃષ્ણાનો કોઈ છેડો જ નથી.’ ॥૧॥

दशवैकालिकसूत्रना छठा अध्ययननी २१मी गाथाમાં कह्युं छे-‘मूर्छाने
परिग्रह कहेल छे’ ॥२९॥

‘एएहितो देसओ’ इत्यादि

सूत्रार्थ-आ हिंसा आदि अव्रतोथी एकदेशथी निवृत्त २.पुं पांच
अणुव्रत छे. ॥३०॥

મૂલમ્—દિસિં મજ્જાયકરણં દિસિવચં ॥૩૧॥

છાયા—‘દિઙ્મર્યાદાકરણં દિગ્વ્રતમ્ ॥૩૧॥

મૂલમ્—ઉવભોગપરિભોગપરિમાણકરણં ઉવભોગપરિભોગ-
પરિમાણવચં ॥૩૨॥

છાયા—ઉપભોગપરિભોગપરિમાણકરણમ્—ઉપભોગપરિભોગપરિમાણવ્રતમ્ ॥૩૨॥

મૂલમ્—ળીહેઝય પાણિપીડા કરણઓ વેરમણં અળટ્ટુદંડ-
વેરમણં ॥૩૩॥

છાયા—નિર્ઠેઠક પ્રાણિપીડાકરણતો વિરમણમ્—અનર્થદળ્ડવિરમણમ્ ॥૩૩॥

મૂલમ્—સઠ્વજીવેસુ સમભાવો સામાઙ્યં ॥૩૪॥

છાયા—સર્વજીવેષુ સમભાવઃ સામાયિકમ્ ॥૩૪॥

‘દિસિમજ્જાયકરણં દિસિવચં’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—દિશાઓં કી મર્યાદા કરના દિગ્વ્રત હૈ ॥૩૧॥

‘ઉવભોગ પરિભોગ’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—ઉપભોગ ઓર પરિભોગ કી વસ્તુઓં કા પરિમાણ કરના
ઉપભોગ પરિભોગપરિમાણવ્રત કહલાતા હૈ ॥૩૨॥

‘ળીહેઝય પાણિ પીડા’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—નિર્ઠેઠક પ્રાણી-પીડા ઉત્પન્ન કરને સે વિરત હો જાના
અનર્થદળ્ડવિરમણવ્રત કહલાતા હૈ ॥૩૩॥

‘સઠ્વજીવેસુ સમ ભાવો સામાઙ્યં’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—સઘ જીવોં પર સમભાવ રાખના સામાયિકવ્રત હૈ ॥૩૪॥

‘દિસિમજ્જાયકરણં દિસિવચં’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—દિશાઓની મર્યાદા કરવી દિગ્વ્રત છે. ॥૩૧॥

‘ઉવભોગપરિભોગ’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—ઉપભોગ અને પરિભોગની વસ્તુઓનું પરિમાણ કરવું ઉપભોગ
પરિભોગ પરિમાણવ્રત કહેવાય છે. ॥૩૨॥

‘ળીહેઝય પાણિપીડા’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—નિર્ઠેઠક પ્રાણી-પીડા ઉત્પન્ન કરવામાં વિરત થઈ જવું અનર્થ-
દળ્ડવિરમણ વ્રત કહેવાય છે. ॥૩૩॥

‘સઠ્વજીવેસુ સમભાવો સામાઙ્યં’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—અધાં શ્રવે ઉપર સમભાવ રાખવો સામાયિક વ્રત છે. ॥૩૪॥

मूलम्—दिसिवयसंकोओ देसावगासियं ॥३५॥

छाया—दिशव्रतसंकोचो देशावकाशिकम् ॥३५॥

मूलम्—धम्मपुट्टीए वसणं पोसहोववासो ॥३६॥

छाया—धर्मपुष्टयै वसनं पौषधोपवासः ॥३६॥

मूलम्—समणाणं एसणिज्जाहार समप्पणं अतिहिसंविभागो ॥३७॥

छाया—श्रमणेभ्य एषणीयाहारसमर्पणम्—अतिथिसंविभागः ॥३७॥

मूलम्—मारणंतिय संलेहणा जोसिओय ॥३८॥

‘दिसिवय संकोओ देसावगासियं’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—दिशाव्रत को (परिमित समय के लिए) संकुचित करना देशावकाशिकव्रत कहलाता है ॥३५॥

‘धम्मपुट्टीए वसणं पोसहोववासो’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—धर्म की पुष्टि के लिए वास करना पौषधोपवास है ॥३६॥

‘समणाणं एसणिज्जा’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—साधुओं को एषणीय आहार का दान करना अतिथि संविभागव्रत है ॥३७॥

‘मारणंतिय संलेहणा जोसिओय’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—व्रती पुरुष मारणान्तिक संलेखना का भी सेवी होता है ॥३८॥

‘दिसिवयसंकोओ देसावगासियं’ इत्यादि

सूत्रार्थ—दिशाव्रतने (परिमित समय भाटे) संकुचित करवुं देशावकाशिक-व्रत कहेवाय छे. ॥३५॥

‘धम्मपुट्टीए वसणं पोसहोववासो’ इत्यादि

सूत्रार्थ—धर्मनी पुष्टिने भाटे वास करवे। पौषधोपवास छे. ॥३६॥

‘समणाणं एसणिज्जा’ इत्यादि

सूत्रार्थ—साधुओने एषणीय आहारनुं दान आपवुं अतिथिसंविभाग-व्रत छे. ॥३७॥

‘मारणंतिय संलेहणा जोसिओय’ इत्यादि

सूत्रार्थ—व्रती पुरुष मारणान्तिक संलेखनानुं पावुं सेवन करे छे. ॥३८॥

છાયા-મરણાન્તિક સંલેખનાજોપિતશ્ચ ॥૩૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રેઽગારીશ્રાવકો દ્વાદશવ્રત વિશિષ્ટવ્રતીભવતીત્યુક્તમ્, સમ્પત્તિ-સંલેખ વ્રતી શ્રાવકો મારણાન્તિક સંલેખનાયા આરાધકશ્ચાઽપિ ભવતીતિ પ્રતિપાદયિતુમાહ-‘મારણાન્તિક સંલેખનાજોપિતશ્ચ’ એવું સંલેખ વ્રતી-અગારી પ્રજ્ઞાણુવ્રતવિશિષ્ટશ્રાવક, ત્રિગુણવ્રત-ચતુઃશિક્ષાવ્રતરૂપં સપ્તવ્રતવિશિષ્ટત્વાચ્ચ મારણાન્તિકસંલેખનાજોપિતઃ ભવચ્છેદકર-કાય કષાય કૃશીકરણરૂપ સંલેખનાઽઽરાધકશ્ચ ભવતિ। તત્ર-સ્થાત્મપરિણામોપાતાના માયુરિન્દ્રિયવલ્લાનાં સંક્ષયો મરણમ્ તદેવાન્તો મારણાન્તઃ સ પ્રયોજનમસ્યા એતિ મારણાન્તિકી, સા ચાસૌ

તત્ત્વાર્થદીપિકા—ગૃહસ્થ શ્રાવક ચારહ વ્રતોં સે સમ્પન્ન હોને કે કારણ દેશ વ્રતી કહલાતા હૈ, યહ વાત પૂર્વસૂત્ર મેં કહી જા ચુકી હૈ। અથ યહ પ્રતિપાદન કરતે હૈં કિ વહ વ્રતી શ્રાવક મારણાન્તિક સંલેખના કા બી આરાધક હોતા હૈ—

દેશવ્રતી શ્રાવક પાંચ અણુવ્રતોં, ત્રીન ગુણવ્રતોં ઓર ચાર શિક્ષાવ્રતોં સે સમ્પન્ન હોને કે કારણ મારણાન્તિક સંલેખના કા બી આરાધક હોતા હૈ અર્થાત્ ભવ કા અન્ત કરને વાલી, કાય તથા કષાય કો કૃશ કરને રૂપ સંલેખના કા સેવન કરતા હૈ।

અપની આત્મા કે પરિણામ કે અનુસાર ઉપાર્જિત આયુ, ઇન્દ્રિયોં એવં ચલોં કા ક્ષય હોના મરણ કહલાતા હૈ। મરણ રૂપ અન્ત કો મરણાન્ત કહતે હૈં। મરણાન્ત જિસકા પ્રયોજન હો ઉસે મારણાન્તિકી કહતે હૈં, એસી સંલેખના મારણાન્તિક સંલેખના હૈ। સમ્ અર્થાત્ સમ્યક્ પ્રકાર સે લેખના અર્થાત્

તત્ત્વાર્થદીપિકા—ગૃહસ્થ શ્રાવક આરવ્રતોથી સમ્પન્ન હોવાના કારણે દેશવ્રતી કહેવાય છે એ હકીકત પૂર્વસૂત્રમાં કહેવામાં આવી છે. હવે એ પ્રતિપાદન કરીએ છીએ કે તે વ્રતી શ્રાવક મારણાન્તિક સંલેખનાનો પણ આરાધક હોય છે—

દેશવ્રતી શ્રાવક પાંચ અણુવ્રતો, ત્રણ ગુણવ્રતો અને ચાર શિક્ષાવ્રતોથી સમ્પન્ન હોવાના કારણે મારણાન્તિક સંલેખનાનો પણ આરાધક હોય છે. અર્થાત્ ભવનો અન્ત કરનાર, કાય તથા કષાયને કૃશ કરવા રૂપ સંલેખનાનું સેવન કરે છે.

પોતાના આત્માના પરિણામ અનુસાર ઉપાર્જિત આયુ, ઇન્દ્રિયો અને બળોનો ક્ષય થવો મરણ કહેવાય છે. મરણ રૂપ અન્તને મરણાન્ત કહે છે. મરણાન્ત જેનું પ્રયોજન છે તેને મારણાન્તિકી કહે છે, આવી સંલેખના

संलेखना चेति मारणान्तिक संलेखना सं-सम्यक् लेखना-कृशीकरणं संलेखना । तत्र-कायस्योपवासादिना कृशीकरणं बाह्य संलेखना १ क्रोधादिकषायाणाञ्च-तपः संयमादिन तनूकरण मन्तरसंलेखना २ तथा च कायस्य कषायाणाञ्च सम्यक् लेखना कृशीकरणं-तनूकरणं संलेखना तस्याः खलु-मारणान्तिकसंलेखनाया-जोषितः प्रीत्यासेविता च पुमान् व्रती-अगारी । चकारात्-मारणान्तिकसंलेखना-जोषिता चाऽपि भवतीति बोध्यम् । अत्राऽन्तग्रहणेन तद्व्यवमरणं परिगृह्यते, अथैवं तर्हि-मारणान्तिक संलेखनासेवितुः अगारिणः आत्मवधदोषापत्तिः स्यात् स्वाऽभिसन्धिपूर्वकमेव तस्य स्वाऽऽयुरिन्द्रियवत्संक्षयाय कायादि संशोषणादौ

कृश करना संलेखना है । उपवास आदि के द्वारा काया कृश करना बाह्य संलेखना है और तप एवं संयम के द्वारा क्रोध आदि कषायों को कृश करना आन्तरिक संलेखना है । इस प्रकार काय और कषायों को सम्यक् प्रकार से लेखन करना अर्थात् कृश करना संलेखना है । व्रती श्रावक इस मारणान्तिक संलेखना का भी प्रीति पूर्वक सेवन करता है । सूत्र में प्रयुक्त 'च' शब्द से ऐसा समझना चाहिए कि वह मारणान्तिक संलेखना का भी आराधक होता है यहां 'अन्त' शब्द के ग्रहण से तद्व्यवमरण ग्रहण किया जाता है ।

शंका-मारणान्तिक संलेखना का सेवन करने वाला गृहस्थ आत्म-हत्या के दोष का भागी होना चाहिए, क्योंकि वह स्वेच्छा पूर्वक ही अपनी आयु, इन्द्रिय और बल का विनाश करने के लिए काय आदि का शोषण करने में प्रवृत्त होता है ।

मारणान्तिक संलेखना छे. भूम अर्थात् सम्यक् प्रकारથી લેહન કરવું અથવા કૃશ કરવું' સંલેહના છે. ઉપાસ વગેરે દ્વારા કાયાને કૃશ કરવી બાહ્ય સંલેહના છે અને તપ તથા સંયમ દ્વારા ક્રોધ આદિ કષાયોને પાતળા પાડવા આન્તરિક સંલેહના છે. આ રીતે કાયા તથા કષયોનો સમ્યક્ પ્રકારે લેહન કરવું અથવા કૃશ કરવું સંલેહના છે. વ્રતી શ્રાવક આ મારણાન્તિક સંલેહનાનું પણ પ્રેમપૂર્વક સેવન કરે છે સૂત્રમાં પ્રયુક્ત 'ચ' શબ્દથી એમ સમજવાનું છે કે તે મારણાન્તિક સંલેહનાના પણ આરાધક હોય છે. અહીં 'અન્ત' શબ્દ । ગ્રહણથી તદ્વ્યવમરણ ગ્રહણ કરવામાં આવે છે.

શંકા-મારણાન્તિક સંલેહનાનું સેવન કરનાર ગૃહસ્થ આત્મહત્યાના દોષનો ભાગી હોવો જોઈએ, કારણ કે તે સ્વેચ્છાપૂર્વક જ પોતાના આયુષ્ય, ઇન્દ્રિય તેમજ બળનો વિનાશ કરવા માટે કાયા વગેરેનું શોષણ કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે.

પ્રવૃત્તિશ્ચ-इति चेन्न-? अमारिणो व्रतिनोऽप्रवृत्तत्वेन कायादि कृशादिकरणे प्रवृत्तत्वेऽपि आत्मघातकृत्यदोषाऽभावात्, प्रमत्तयोगाद् प्राणव्यपरोपणस्यैव हिंसा-पदार्थत्वात् अस्य खलु व्रतिनोऽमारिणो रागद्वेषमोहामिनिवेशाऽभावेन प्रमाद-योगाऽभावात् । यस्तु पुरुषो रागद्वेषमोहादिभिराविष्टः सन् विषयसङ्गलपाशाऽ-ग्निप्रवेश कूप तडागादि निमज्ज भृगुपात रसना खण्डनादि प्रयोगेणाऽऽत्मानं हिनस्ति स आत्मघातो भवति, तस्मात् संलेखनां प्रतिपन्नस्य व्रतिनो राग-द्वेषाद्यभावेनाऽऽत्मघातप.प न भवति । उक्तञ्च—

‘रागादीण अणुप्पाये अहिंसक इति भाषितं समये ।
તૈર્હિં ચેદુપ્પત્તી હિંસેતિ જિણેહિં જિહિદ્ધા ॥૧॥ इति,
રાગાદીનામહુત્પાદે અહિંસકઠિતિ ભાષિતં સમયે ।
તેષાંચેદુત્પત્તિ-હિંસેતિ જિનૈર્નિર્દિષ્ટા ॥૧॥ इति,

સમાધાન-ऐसा नहीं है । व्रती गृहस्थ अप्रमत्त होने के कारण काय आदि को कृश करने में प्रवृत्त होने पर भी आत्मघात के पाप का भागी नहीं होता । हिंसापद का अर्थ प्रमत्त योग से प्राणों का व्यप-रोपण करना है, किन्तु व्रतवान् श्रावक राग द्वेष और मोह के अभि-निवेश से रहित होता है, अतएव उस में प्रमाद का योग नहीं होता । जो पुरुष राग, द्वेष और मोह से आविष्ट होकर विष, शस्त्र, फाँसी, अग्नि प्रवेश कूपपात, तडाग निमज्जन, भृगुपात, रसना खण्डन आदि का प्रयोग करके आत्मघात करता है, वही घातक होता है । इस प्रकार संलेखना को अंगीकार करने वाले व्रती पुरुष को, राग-द्वेष आदि का अभाव नहीं होने के कारण आत्मघात का पाप नहीं लगना । कहा भी है-

‘जिसके रागादि की उत्पत्ति नहीं होती, वह आगम में अहिंसक

સમાધાન-આ પ્રમાણે નથી. વ્રતી ગૃહસ્થ અપ્રમત્ત હોવાના કારણે કાયા વગેરેને કૃશ કરવામાં પ્રવૃત્ત હોવા છતાં પણ આત્મઘાતના પાપને ભાગીદાર થતો નથી. હિંસાપદનો અર્થ પ્રમત્તયોગથી પ્રાણોને નાશ કરવો એમ થાય છે, પરંતુ વ્રતધારી શ્રાવક રાગ દ્વેષ અને મોહના અભિનિવેશથી રહિત હોય છે, આથી તેનામાં પ્રમાદનો યોગ થતો નથી. જે પુરૂષ રાગ, દ્વેષ અને મોહથી આવિષ્ટ થઈને ઝેર, શસ્ત્ર, ફાંસો, અગ્નિસ્નાન, કૂવામાં પડવું, તળાવમાં ડૂબી જઈને જીલ કચરીને-એવા પ્રયોગો કરીને આત્મહત્યા કરે છે તે જ આત્મઘાતક કહેવાય છે. આવી રીતે સંલેખણને અંગીકાર કરનારા વ્રતી પુરૂષને રાગ-દ્વેષ આદિનો અભાવ નહીં હોવાના કારણે આત્મઘાતનું પાપ લાગતું નથી. કહ્યું પણ છે-

‘જેને રાગાદિની ઉત્પત્તિ થતી નથી તેને આગમમાં અહિંસક-કહેવામાં

अपिचाऽग्निदाहादिना बहुमूल्य रत्नादिविशिष्टनाशे समुपस्थिते तदुपशमाय कृतयत्नोऽपि—असफलश्चेद् अन्ततोरत्नादिकं संरक्षितुं पुरुषो यतते । एवं—युगपत् कायविनाशे समुपस्थिते व्रती श्रावको व्रत-शीलादिगुणानां संरक्षणार्थं यतमानो नाऽऽत्मघातकः सम्भवतीति भावः ॥३८॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तावद्—द्वादशव्रतधरोऽगारी श्रावकः शीलसम्पदा विशिष्टो भवतीत्युक्तम्, सम्पत्ति-तथाविधः रत्न श्रावको भवच्छेदकरकायकषाय संलेखनाऽऽराधको भवतीति प्रतिपादयितुमाह—‘मारणांतिय संलेखणाजोसि-

कहा गया है । रागादि की उत्पत्ति ही हिंसा है, ऐसा जिनेन्द्र भगवान् ने कहा है ।’

घर में आग लगने पर जब सर्व स्व के विनाश का अवसर उपस्थित होता है तब मनुष्य उस आग बुझाने का प्रयत्न करता है । किन्तु जब उसे बुझाने में सफल नहीं होता तो अन्ततः रत्न आदि मूल्यवान् पदार्थों की ही रक्षा करने का प्रयत्न करता है, इसी प्रकार एक साध काय का विनाश उपस्थित होने पर व्रती श्रावक व्रत शील आदि गुणों की रक्षा करना हुआ आत्मघातक नहीं कहा जा सकता ॥३८॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले कहा गया है कि द्वादश व्रतधारी गृहस्थ श्रावक शील सम्पदा से सम्पन्न होता है, अब यह प्रतिपादन करते हैं कि पूर्वोक्त श्रावक अवका अन्त करने वाली काय-कषाय संलेखना का भी आराधक होता है ।

आन्धो छे. रागादिनी उत्पत्ति ज हिंसा छे जेस जिनेन्द्र भगवाने बाणेलुं छे.’

घरमां आग लागवाधी ज्यारे सर्वस्वना विनाशने। अवसर उपस्थित थाय छे, त्यारे ते घरने। भातिक ते आगने ओलववाने। प्रयत्न करे छे, परन्तु ज्यारे तेने ओलववामां ते सक्ष्ण थतो नथी, त्यारे रत्न आदि भूख्यवान् पदार्थोनी ज रक्षा करवाने। प्रयत्न करे छे, जेवी ज रीने जेही साथे कायाने। विनाश उपस्थित थवाथी व्रती श्रावक व्रत शील आदि गुणोनु रक्षणु करतो थके। आत्मघातक उही शकतो नथी. ॥३८॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहला कहेवामां आन्धुं के जार व्रतधारी गृहस्थ श्रावक शील संपत्तिथी सम्पन्न होय छे छे जे जे प्रतिपादन करीजे छीजे के पूर्वोक्त श्रावक अवका अन्त करनारी काय-कषाय संलेखनाने। ए आराधक होय छे—

ઓ ચ'—ઇતિ, સ તાવત્—પૂર્વોક્ત દ્વાદશવ્રતવિશિષ્ટોઽપારી મારણાન્તિક સંલેખના-
જોષિતા મવચ્છેદકરકાયકપાયકૃશીકરણરૂપસંલેખનાયાઃ પ્રીત્યાસેવિતાઽઽ-
રાત્રકથાઽપિ સ્વતિ । ચકારેગ—દ્વાદશવ્રતસમ્પન્નથઃઽપિ મારણાન્તિક સંલેખના
જોષિતા મવતીતિ વોધ્યમ્ । અત્ર મરણં તાવત્—મર્વાયુપઃ ક્ષયરૂપં વોધ્યમ્, નતુ
પ્રતિક્ષણમાત્રીચિકમરણં ગ્રાહ્યમ્, મરણમેવ મરણાન્તઃ—મરણકાલઃ, પ્રત્યાસન્નં તન્મ-
રણમિત્યર્થઃ અન્તપદેત—તદ્ભવમરણસ્ય ગ્રહણાત્ તથા ચ—તદ્ભવમરણરૂપો મર-
ણાન્તઃ પ્રયોજનમસ્યા ઇતિ મારણાન્તિકી સા ચાઽસી સંલેખના ચેતિ મારણાન્તિક

યહ પૂર્વોક્ત બારહ વ્રતોં કા ધારક ગૃહસ્થ મારણાન્તિક સંલેખના
કા ઓ પ્રીતિ પૂર્વક સેવન કરને ચાલા હોતા હૈ । 'ચ' શબ્દ કે પ્રયોગ
સે એલા સમજના ચાહિયે કિ દ્વાદશ વ્રતોં સે સમ્પન્ન હોને પર ઓ
શ્રાવક મારણાન્તિક સંલેખના કા આરાધક હોતા હૈ ।

યહાં મરણ કા અર્થ હૈ—સમ્પૂર્ણ આયુ કા ક્ષય હોના । યહાં ક્ષણ-
ક્ષણ સેં હોનેવાલે અવીચિમરણ કો ગ્રહણ નહીં કરના ચાહિયે । 'અન્ત
પદ સે તદ્ભવમરણ સમજના ચાહિયે । મરણ કો હી મરણાન્ત કહતે
હૈં અર્થાત્ મરણકાલ યા મૃત્યુ કા નિકટ આના । હસ પ્રકાર તદ્ભવરૂપ
મરણાન્ત જિસકા પ્રયોજન હો ઉસે મારણાન્તિક કહતે હૈં । એસી સંલે-
ખના મારણાન્તિક સંલેખના હૈ । જિસકે દ્વારા કાય ઓર કષાય આદિ
કા સંલેખન ક્રિયા જાય-કૃશ ક્રિયા જાય ઉસે સંલેખના કહતે હૈં ।
તાત્પર્ય યહ હૈ કિ કાય ઓર કષાય કો કૃશ કરનેચાલા તપશ્ચરણ

આ પૂર્વોક્ત બાર વ્રતધારી ગૃહસ્થ મારણાન્તિક સંલેખણાનુ' પણ
પ્રીતિપૂર્વક સેવન કરનારો હોય છે. 'ચ' શબ્દના પ્રયોગથી એવું સમજવું
જોઈએ કે બારવ્રતોથી સમ્પન્ન હોવા છતાં પણ શ્રાવક મારણાન્તિક
સંલેખણનો આરાધક હોય છે.

અહીં મરણનો અર્થ છે—સમ્પૂર્ણ આયુનો ક્ષય થવો. અહીં ક્ષણ—ક્ષણ
થનારા આવીચિમરણને ગ્રહણ કરવું જોઈએ નહીં. 'અન્ત' પદથી તદ્ભ-
વમરણ સમજવું ઘટે. મરણને જ મરણાન્ત કહે છે, અર્થાત્ મૃત્યુકાળ અથવા
મોતનું પાસે આવવું. આવી રીતે તદ્ભવ રૂપ મરણાન્તિક સંલેખના છે.
જેના વડે કાય તથા કષાય વગેરેનું સંલેખન કરાય-કૃશ કરાય તેને સંલેખણ
કહે છે. તાત્પર્ય એ છે કે કાય તથા કષાયને ખાતળા પાઠનાત તપશ્ચર્યા
સંલેખણ કહેવાય છે. આમાં પણ કાયને કૃશ કરનારી તપશ્ચર્યા બાહ્ય

સંલેખના, સંલેખ્યતે-કૃત્રીક્રિયતે કાયકપાયાદિક મનયા-ઈતિ સંલેખના કાય
કાયતનૂકરણતપો વિશેષરૂપા । તત્ર-કાયકૃશકરણતપો વિશેષેભ્યો ઽભ્યન્તર
સંલેખના-૨ તથાચોક્તમ્—

ચત્તારિ વિચિત્તાઈ-વિગઈ નિજ્જૂ હિતાઈ ચત્તારિ ।

एकान्तरमायामं-अविगिष्ट विगिष्ट कोटिक ॥१॥

इति चत्वारि (वर्षाणि) विचित्राणि (तपांसि) विकृतिनिर्युटानि चत्वारि ।
एकान्तरमाचाम्लम् (द्वे) अविकृष्टम् (एकम्) विकृष्टम् एकम् कोट्या-(एकम्)
इति । संलेखनाकालश्च उत्कृष्टेन द्वादश वर्षाणि, तदनु पुनः स्वशक्त्यपेक्षया मासार्ध
मासपरिमाणतया, आगमोक्त्या द्वादशवर्ष व्यवस्थयैव संलेखना कालोऽवगन्तव्यः
सा चेयं संलेखनाऽवश्यमेव समाधि मरणपर्यन्तं श्रमण-श्रावकाभ्यां कतव्या ।
तथा च-दुष्पमारुपकालदोषात्-वज्रभनारावादि संहनन दौर्बल्यदोषात् दिव्य-
संलेखना कहलता है । इस में भी काय को कृश करने वाला तपश्चरण
याह्य संलेखना है क्रोध आदि कषायों को कृश करने वाला तप
आभ्यन्तर संखना है । कहा भी है—

चार वर्ष तक विचित्र तप करे, चार वर्ष तक विगयों का त्याग कर
के तप करे, दो वर्ष तक एकान्तर आश्रित करे, एक वर्ष अविकृष्ट
और एक वर्ष तक विकृष्ट तप करे । इस प्रकार संलेखना का उत्कृष्ट
काल बारह वर्ष का कहा गया है । तपश्चात् अपनी शक्ति के अनुसार
मास या अर्धमास परिमाण वाली, आगमोक्त बारह वर्ष की व्यवस्था
से ही संलेखना काल समझना चाहिए ।

साधु और श्रावक को यह संलेखना मरणपर्यन्त अवश्य ही करना
चाहिए । इस दुष्पम काल के दोष से, संहनन की दुर्बलता के दोष से

સંલેહણા છે જ્યારે ક્રોધ વગેરે કષાયોને કૃશ કરનારનું તપ આભ્યન્તર
સંલેહણા છે. કહ્યું પણ છે—

ચાર વર્ષ સુધી વિચિત્ર તપ કરે. ચાર વર્ષ સુધી વિગાયનો ત્યાગ
કરીને તપ કરે, બે વર્ષ સુધી એકાંતર આશ્રિત કરે, એક વર્ષ અવિકૃષ્ટ
અને એક વર્ષ સુધી વિકૃષ્ટ તપ કરે આ રીતે સંલેહણાનો ઉત્કૃષ્ટ કાળ
બાર વર્ષનો કહેવામાં આવ્યો છે ત્યાર પછી પોતાની શક્તિ મુજબ માસ
અથવા અડધા માસ પરિમાણવાળી આગમોક્ત બાર વર્ષની વ્યવસ્થાથી જ
સંલેહણાનો કાળ સમજવાનો છે.

સાધુ તથા શ્રાવકે આ સંલેહણા મરણપર્યન્ત અવશ્ય જ કરવી જોઈએ.
આ દુષ્પમકાળના દોષથી, સંહનનની દુર્બળતાના દોષથી તથા દેવતા મનુષ્યો

मानुष तिर्यक्कृताऽऽत्म समुत्थोपसर्गदोषात् तथा दशविधधर्म विषयक श्रमणाऽऽ-
 श्रयक कर्तव्य प्रत्युपेक्षणादिकस्य परिहाणिम्-अगारिणश्च-श्रमणवैयावृत्यपौषधो
 पवासप्रतिपत्त्यादिकस्य परिहाणिश्च विज्ञायाऽगारीव्रती मरणं वा प्रत्यासन्नमव-
 बुध्य कुक्कुटाण्डकप्रमाणद्वान्विशतकदलाहार उदनाकरणरूपाऽवमौढ्यं चतुर्थं पट्टा-
 ऽष्टमशक्ताऽर्धमास क्षपणादिभि र्नात्मानं संलिरूप-कृशीकृत्य विरुक्ष्य रुधिरमेदो-
 मांसाद्यपचयं त्रिधाय क्रोधादिकषायांश्च निरस्य सर्वसावद्ययोगविरतिलक्षणं
 पञ्च महाव्रतञ्च प्रतिपद्य महाव्रतसम्पन्नो भूत्वा चतुर्दिग्धमशनपान-खाद्य-स्वाद्य-
 रूपमाहारं मनना-वचना-कायेन त्रिविधेन योगेन प्रत्याख्याय यथा समाधि-
 यावज्जीवं भावानुपेक्षातत्परः प्रतिज्ञात महाव्रतादि स्मृतिसमाधिवहुलः सन्

तथा देवो मनुष्यो एवं तिर्यचो द्वारा जनित और अपने आपसे उत्पन्न
 होने वाले उपसर्गों के दोष से तथा दसप्रकार के धर्मविषयक श्रमण
 के आवश्यक कर्तव्य एवं प्रत्युपेक्षण आदि की हानि को देखकर और
 श्रमणों की वैयावृत्य एवं पौषधोपवास आदि गृहस्थ के कर्तव्यों की
 हानि देखकर व्रती गृहस्थ मृत्यु को सन्निकट आया जानकर मुर्गी के
 अंडे के बराबर बत्तीस कदल के आहार में कमी करने रूप अव-
 मौढ्य, उपवास, वेला, तैला, अर्धमासखमण आदि से शरीर को कुश-
 लकरके रुधिर-मांस आदि का अपचय करके, क्रोध आदि कषायों को
 दूर करके, सर्वसावद्यविरति रूप पांच महाव्रतों को अंगीकार करके,
 महाव्रतों से सम्पन्न होकर, अशन पान, खादिस और स्वादिस आहार
 को मन वचन काय रूप तीनों योगों से त्याग करके, समाधि के अनु-
 सार जीवनपर्यन्त भावानुपेक्षा में तत्पर रहकर, अंगीकार किये हुए

तथा तिर्य्यो द्वारा जनित तथा पोत नार्थी ज उत्पन्न यनारा उपसर्गेना
 दोषथी तथा दश प्रकारना धर्मविषयक श्रमणना आवश्यक कर्तव्य अने प्रत्यु-
 पेक्षाणु वगेरेना ह्रासने जेई ने अने श्रमणोनी वैयावग्या अने पौषधोपवास
 वगेरे गृहस्थना कर्तव्योनी ओट जेई ने, व्रती गृहस्थ मृत्युने दुःखुं आवेलुं
 जण्णीने, मरघीना छडा पराणर गत्रीस टाणीयाना आहारमां क्यारेक करवा
 योग्य अवमौढ्य, उपवास, छठ, अष्टम, अर्धमास अणु आदिथी शरीरने
 कुश करीने, ढोही-मांस आदिने अपचय करीने क्रोध आदि कषायेने देश-
 पटो आपीने, सर्वसावद्यविरति रूप पांच महाव्रतोने अंगीकार करीने, महा-
 व्रतोथी सम्पन्न थछने अनदान, अशनपान, आद्य तथा स्वादिष्ट आहारने
 भन, वचन काया रूप त्रिणे योगथी त्याग करीने, समाधि अनुसार
 जीवनपर्यन्त भावानुपेक्षां तत्पर रहीने, अंगिकार करेला महाव्रत आदिनी

આર્તરોદ્રધ્યાનરહિતો મારણાન્તિસંલેખનાસેવિતા પરમ્પુરુષાર્થરૂપસ્ય મોક્ષરૂપા-
 ઽઽરાધકો ભવતિ । અથૈવં તર્હિ-મારણાન્તિકસંલેખના કર્તા રવામિ સન્ધિ પૂર્વ-
 કાઽઽયુગાદિ વિનાશકતયાઽઽત્મઘાત દોષયુક્તઃ સ્યાત્વ્વિતિ ચેન્ન અસ્ય સંલેખકસ્યા
 ઽમમત્તત્ત્વેનાઽઽત્મઘાતદોષાભાવાત્, પ્રમત્તયોગાત્રાણવ્યપરોપમસ્ય હિંસાત્વાત્
 અસ્ય પ્રમાદયોગાઽમાવો વર્તતે, રાગદ્વેષમોહાભિનિવેશરહિતત્વાત્, વ્રતાદિ
 ગુણાનાં સંરક્ષણાર્થમેવ તથા કર્તું પ્રવૃત્તત્વાત્ । ઉક્તેશ્ચૌપપાતિકે-૫૭ સૂત્રે ‘અપ-
 ચ્છિમા મરણાન્તિયા સંલેખના જૂસણા આરાહણા’ ઇતિ અપચ્છિમા મારણાન્તિકી
 સંલેખના જોષણાઽઽરાધના ઇતિ । ૩૮॥

મહાવ્રત આદિ કી સ્મૃતિ સમાધિ કી બહુલતા બાલા હોકર, આર્તધ્યાન
 ઓર રોદ્રધ્યાન સે યુક્ત-રહિત હોકર જો મારણાન્તિક સંલેખના કા
 સેવન કરતા હૈ, વહ પરમ પુરુષાર્થ મોક્ષ કા આરાધક હોતા હૈ ।

શંકા-અગર એસા હૈ તો મારણાન્તિક સંલેખના કરને ચાલા અપની
 ઇચ્છા સે હી અપની આયુ આદિ કા વિનાશ કરતા હૈ, ઇસ કારણ
 આત્મઘાત કે પાપ કે ભાગી હોના ચાહિયે ।

સમાધાન-સંલેખન કર્તા પ્રમાદહીન હોને કે કારણ આત્મઘાત કે
 પાપ કા ભાગી નહીં હોતા । રાગ દ્વેષ ઓર મોહ કે અભિનિવેશ સે
 રહિત હોને કે કારણ ઉત્તર મેં પ્રમાદ કે યોગ કા અભાવ હૈ । વહ તો
 વ્રતાદિ ગુણો કી રક્ષા કરને કે લિયે હી વૈસા કરતા હૈ । ઔપપાતિક
 સૂત્ર કે ૫૭ વેં સૂત્ર મેં કહા હૈ-‘અપચ્છિમા મારણાન્તિક સંલેખનાજોષણ
 આરાહણા ॥૩૮॥

સ્મૃતિ ૩૫ સમાધિની બહુલતાવાળો થઇને આર્તધ્યાન અને રોદ્રધ્યાનથી
 મુક્ત થઇને જેઓ મારણાન્તિક સંલેખનાનું સેવન કરે છે, તે પરમ પુરુષાર્થ
 મોક્ષનો આરાધક હોય છે.

શંકા-જો આ પ્રમાણે જ હોય તો મારણાન્તિક સંલેખના કરનાર
 પોતાની રાજ્યપુશીથી જ પોતાના આયુષ્ય વગેરેનો વિનાશ કરે છે અથવા
 આત્મહત્યાના પાપનો ભાગીદાર બન્યાનો જોઈએ.

સમાધાન-સંલેખના કરનાર પ્રમાદહીન હોવાના કારણે આત્મઘાતના
 પાપનો ભાગી થતો નથી રાજ્યદ્વેષ તથા મોહના અભિનિવેશથી મુક્ત હોવાના
 કારણે તેનામાં પ્રમાદના યોગનો અભાવ છે તે તો વ્રતાદિ ગુણોના રક્ષણ
 કાળે જ આ પ્રમાણેનું અનુષ્ઠાન કરે છે ઔપપાતિકસૂત્રના ૫૭માં સૂત્રમાં
 કહ્યું-‘અપચ્છિમા મારણાન્તિક સંલેખનાજોષણા-આરાહણા’ ॥૩૮॥

મૂલમ્—ચારસત્ત્વર્હ—અગારી ॥૩૯॥

છાયા—દ્વાદશત્રી અગારી ॥૩૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વોક્ત સમ્યક્ત્વસહિતદ્વાદશત્રાયુક્તાઽગારી શ્રાવકો
યત્તિ નાઽવ્યઃ ॥૩૯॥

મૂલમ્—સંમત્તસ્સ સંકાહયા પંચ અહ્યારા ॥૪૦॥

છાયા—સમ્યક્ત્વસ્ય શક્લાદિકાઃ પચ્ચાતિચારાઃ ॥૪૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાન્દ દ્વાદશ ત્રયધાર્યગારી શ્રાવકો ભવતિ, શ્રાવ-
કત્વસ્ય ત્રતત્રિશિષ્ટત્વાત્, તત્ર-યો ત્રતી સોઽવશ્યેવ સમ્યગ્દર્શનત્રિશિષ્ટો ભવતિ
શક્લાદિ દોષદૂષિનમનસો મૂલોત્તરગુણાધારત્ત્વશ્રદ્ધાનમ્ય નિયમત્ત પત્ર ત્રતિત્વં
ન સમ્પન્નતિ, ત્રતિત્વસ્ય સમ્યગ્દર્શનમૂલત્વાત્, ત્રતી સ્વલુ-નિયમં સમ્યક્ત્વવાન

‘ચારસત્ત્વર્હ આગારી’ હત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—ગૃહસ્થ ચારહ ત્રનોં કા ધારક હોતા હેં । તાત્પર્ય યહ હે
કિ પૂર્વોક્ત સમ્યક્ત્વ સહિત ચારહ ત્રનોં સે જો યુક્ત હોતા હે વહી
ગૃહસ્થ શ્રાવક કહલાતા હે, ॥૩૯॥

‘સંમત્તસ્સ સંકાહયા’ હત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—સમ્યક્ત્વ કે શંકા આદિ અતિચાર હેં ॥૪૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે બતાયા ગયા હેં કિ ચારહ ત્રનોં કા ધારક
ગૃહસ્થ શ્રાવક કહલાતા હે, વયોં કિ શ્રાવકત્વ ત્રતસમ્પન્નતા સે
હી હોતા હેં ઓર જો ત્રતી હોતા હેં વહ સમ્યગ્દર્શન સે
સમ્પન્ન અવશ્ય હોતા હેં । મૂળ ઓર ઉત્તરગુણોં કે આધારભૂત તત્ર
શ્રદ્ધાન કે અભાવ મેં જિસકા મન શંકા આદિ દોષોં સે દૂષિત હેં,

સૂત્રાર્થ—ગૃહસ્થ બ.રત્રનોનો ધારક હોય છે. તાત્પર્ય એ છે કે પૂર્વોક્ત
સમ્યક્ત્વસહિત બાર ત્રનોથી જે યુક્ત હોય છે તે જ ગૃહસ્થ ‘શ્રાવક’
કહેવાય છે. ॥૩૯॥

‘સમ્પન્નત્તસ્સ સંકાહયા પંચઅહ્યારા’ હત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—સમ્યક્ત્વના શંકા વગેરે પાંચ અતિચાર છે. ॥૪૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા બતાવવામાં આવ્યું કે બાર ત્રનોનો ધારક
ગૃહસ્થ શ્રાવક કહેવાય છે કારણ કે શ્રાવકત્વ ત્રતસમ્પન્નતાથી જ થાય છે
અને જે ત્રતી હોય છે તે અવશ્ય સમ્યક્દર્શનથી સમ્પન્ન હોય છે મૂળ
તથા ઉત્તરગુણોના આધારભૂત તત્રશ્રદ્ધાનના અભાવમાં જેનું મન શંકા
વગેરે દોષોથી દૂષિત છે, તે ચોક્કસપણે ત્રતધારી થઈ શકતો નથી, ત્રતપણું

भवति सम्यक्त्वे शुद्धेव व्रतशुद्धिर्भवति, सम्यक्त्वे निरतिचारे सत्येव व्रतीभवतीति सम्यक्त्वस्याऽतिचारान् प्रतिपादयितुमाह-‘संयत्तहस्य संकाश्या पंच अङ्गारा’ इति, सम्यक्त्वस्य-सम्यग्दर्शनस्य शङ्कादिकाः-शङ्का, ऽऽदिपदेन कांक्षा विचिकित्सापरपाषण्डप्रशंसापरपाषण्डसंस्तवश्चेत्येते पञ्चाऽतिचाराः मोहनीयकर्मणो वैचित्र्या दात्मनः परिणतिविशेषा मालिन्यतारूपा दोषा भवन्ति । तथा च-निःशङ्कितत्वादिभिः सम्यग्दर्शनविशुद्धिर्भवति, शङ्काकांक्षा विचिकित्सादिभिश्च सम्यग्दर्शनस्याऽविशुद्धिः । तत्र-शङ्का अर्हदुपदिष्टेषु तत्त्वेषु सर्वतो देशतो वात्सल्यतया संशयकरणम्, सम्यक्त्वेहि कांचिदपि शङ्का न कृत्वा निःशंकतया तद्रक्षणीयम् । काङ्क्षा-सर्वतो देशतश्च मिथ्यादर्शनस्याऽभिलाषः ।

है, वह निश्चय ही व्रती नहीं हो सकता व्रतीपन सम्यग्दर्शन मूलक है । व्रती निश्चितरूप से सम्यक्त्ववान् ही होता है । सम्यक्त्व के शुद्ध होने पर ही व्रतों की शुद्धि होनी है । निरतिचार सम्यक्त्व के होने पर ही व्रती होता है, अतएव सम्यक्त्व के अतिचारों का प्रतिपादन करते हैं-

सम्यक्त्व के शंका आदि पांच अतिचार हैं ‘आदि’ पद से कांक्षा विचिकित्सा, परपाषण्ड प्रशंसा और परपाषण्ड संस्तव अतिचारों का ग्रहण होता है । मोहनीय कर्म की विचित्रता से आत्मपरिणति विशेष मलीनता रूप दोष होते हैं, अतः निःशंकितत्व आदि से सम्यग्दर्शन की विशुद्धि होती है और शंका, कांक्षा, विचिकित्सा आदि सम्यग्दर्शन की अशुद्धि होती है ।

अर्हन्त भगवान् द्वारा उपदिष्ट तत्त्वों में सर्वदेश से या एकदेश से संशय करना शंका है । सम्यक्त्व में कुछ भी शंका न करके, निः-

सम्यग्दर्शन भूषण - छे व्रती निश्चितपण्णे श्रद्धावान् न होय छे. सम्यक्त्व शुद्धि होय तो न व्रतीनी शुद्धि थाय छे निरतिचार सम्यक्त्व होय त्वादे न व्रती थछ शक्य छे आथी सम्यक्त्वना अतिचारानुं प्रतिपादन करीअे छीअे-

सम्यक्त्वना शंका वगेरे पांच अतिचार छे. ‘आदि’ पदथी कांक्षा, विचिकित्सा, परपाषण्ड प्रशंसा अने परपाषण्ड संस्तव अतिचारानु श्रद्धा थाय छे. मोहनीय कर्मनी विचित्रताथी आत्मपरिणति विशेष मलीनता रूप दोष उत्पन्न थाय छे आथी नि शंकितत्व आदिथी सम्यग्दर्शननी विशुद्धि थाय छे अने शंका कांक्षा विचिकित्सा वगेरेथी सम्यग्दर्शननी अशुद्धि थाय छे

अर्हन्त भगवान् द्वारा उपदिष्ट तत्त्वों में सर्वदेशथी अथवा अेक देशथी संशय करवो अे शंका कहवाय छे, सम्यक्त्वमां कछ पण् प्रकारनी

વિચિકિત્સાતુ અસ્ય મહત્સ્તપોદાનાદિપ્રયાસસ્ય ફલં મવિષ્યતિ- ન વા ? इत्यादिरूप
 संशयकरणम् । परपाषण्डप्रशंसातु सर्वज्ञऽनुपदिष्टस्य धर्मस्य गुणोद्भावनरूपा ।
 परपाषण्डसंस्तवः-सर्वज्ञऽनुपदिष्टस्य धर्मस्य-मिथ्यादृष्टेर्भी परिचयः । पुनस्तयो
 भूताभूतगुणोद्भावनवचनरूपो वा । इत्युत्तरतु-सम्यग्दृष्टेऽष्टौ-अतिचाराः सन्ति
 तत्र-त्रयाणामतिचाराणां परपाषण्डप्रशंसा-संस्तवयोरेवान्तर्भावित्वात् पञ्चैवाऽती-
 चाराः सम्यग्दृष्टेरित्युक्तम् । तत्र ते खलु त्रयोऽन्येऽतिचाराः दोषाऽनुपगूहनाऽ-
 स्थिरीकरणऽनात्सल्यरूपाऽद्वेषाः । तेषां खलु-प्रशंसासंस्तवयोरन्तर्भावः, यथा

શંકા હોકર સમ્યક્ત્વ કી રક્ષા કરની યાહિય । એકદેશ સે મિથ્યાદર્શન
 કી અભિલાષા કરના કાંક્ષા દોષ હૈ । હસ મહાન્ તપશ્ચરણ એવં દાન
 આદિ કા કુછ ફલ હોગા કિ નહીં, હસ પ્રકાર ધર્મક્રિયા કે ફલ મેં
 સંશય કરના વિચિકિત્સા હૈ । જો ધર્મ સર્વજ્ઞ કે દ્વારા ઉપદિષ્ટ નહીં
 હૈ, ઉસ મેં ગુણોં કો પ્રકટ કરના પરપાષણ્ડ પ્રશંસા હૈ । સર્વજ્ઞ દ્વારા
 અનુપદિષ્ટ ધર્મ કા યા મિથ્યાદૃષ્ટિ કા પરિચય કરના પરપાષણ્ડ સંસ્તવ
 હૈ યા ઉનકે સદ્ભૂત એવં અસદ્ભૂત ગુણોં કો પ્રકટ કરને વાલા વચન
 પરપાષણ્ડ સંસ્તવ હૈ ।

વાસ્તવ મેં તો સમ્યક્દર્શન કે અતિચાર આઠ હૈ, કિન્તુ ત્રણ અતિ-
 ચારોં કા પરપાષણ્ડ પ્રશંસા ઓર પરપાષણ્ડ સંસ્તવ મેં હી સમાવેશ હો
 જાતા હૈ, હસ કારણ સમ્યક્ત્વ કે પાંચ અતિચાર કહે ગયે હૈ । इन में
 अन्तर्गत होने वाले तीन अतिचार ये हैं-दोषानुपगूहना, अस्थिरीकरण

શંકા નહીં કરતા, નિઃશંક થઈને સમ્યક્ત્વની રક્ષા કરવી જોઈએ. એકદેશથી
 અથવા સર્વદેશથી મિથ્યાદર્શનની અભિલાષા કરવી કાંક્ષા દોષ છે. આ
 મહાન્ તપશ્ચર્યા તથા દાન વગેરેનું કોઈ ફળ મળશે કે નહીં, એ રીતે
 ધર્મકરણીના ફળનો સંશય કરવો વિચિકિત્સા છે, જે ધર્મ સર્વજ્ઞ દ્વારા
 ઉપદિષ્ટ નથી તેમાં ગુણોનું આરોપણ કરવું પરપાષણ્ડ પ્રશંસા છે. સર્વજ્ઞ
 દ્વારા અનુપદિષ્ટ ધર્મનો અથવા મિથ્યાદૃષ્ટિનો પરિચય કરવો પરપાષણ્ડ-
 સંસ્તવ છે અથવા તેમનો સદ્ભૂત અને અસદ્ભૂત ગુણોને પ્રકટ કરનાર
 વચન પરપાષણ્ડસંસ્તવ છે.

વાસ્તવમાં તો સમ્યક્દર્શનમાં અતિચાર આઠ છે, પરંતુ ત્રણ અતિ-
 ચારોનો પરપાષણ્ડ, પ્રશંસા અને પરપાષણ્ડ સંસ્તવમાં જ સમાવેશ થઈ જાય
 છે, આથી સમ્યક્ત્વના પાંચ અતિચાર કહેવામાં આવ્યા છે. આમાં સમાયેલા
 ત્રણ અતિચાર આ પ્રમાણે છે-દોષાનુપગૂહના, અસ્થિરીકરણ અને અવતસદ્ય

यः पुरुषो मिथ्यादृष्टीनां मनसा प्रशंसां करोति स तावन्मूढमतिः सम्यग्ज्ञान दर्शनचारित्रतपोरूप रत्नचतुष्टयभूषितानां प्रमादाज्ञानकारणोद्भवं दोषं नो पगूहति, तेषां सम्यग्दर्शनादौ स्थिरीकरणञ्च न विदधाति वात्सल्यं पुनर्दूरे आस्ताम् स शासनप्रभावनामपि कथं कुर्यात् ? तस्मात्-परपाषण्डप्रशंसासंस्तवयो र्मध्येऽनुपगूहनादयो दोषाः अन्तर्भूता भवन्ति । व्रतानां चाग्रे पञ्च-पञ्चातिचारा वक्ष्यन्ते तदनुरोधेनापि प्रशंसा-संस्तवयोरितरन् त्रीनतिचारान् अन्तर्भाव्य पञ्चैवातिचाराः प्रतिपादिताः ॥४०॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः--पूर्वं खलु-द्वादशव्रतधारीऽगारी व्रती भवती त्युक्तम्, तत्र मिथ्यादर्शनस्य शल्यतया सम्यग्दृष्टिरेव व्रती-अगारी भवति । तत्र कस्य-

अवात्सल्य इनका प्रशंसा और संस्तव में समावेश हो जाता है । जो पुरुष मन से मिथ्यादृष्टियों की प्रशंसा करता है, वह मूढमति सम्यग्ज्ञान-दर्शन-चारित्र्य एवं तप रूप रत्नचतुष्टय से विभूषित पुरुषों के प्रमाद तथा अज्ञान से उत्पन्न होने वाले दोष का उपगूहन नहीं करता उसे ठंकना नहीं है, सम्यग्दर्शन आदि में उनका स्थिरिकरण नहीं करता, वात्सल्य तो दूर रहा वह शासन की प्रभावना भी कैसे करेगा इस प्रकार परपाषण्ड प्रशंसा और परपाषण्ड संस्तव में अनुपगूहन आदि दोष अंतर्गत हो जाते हैं । आगे व्रतों के पाँच पाँच अतिचार कहे जाएंगे, इस अनुशेष से भी प्रशंसा और संस्तव में ही तीन अतिचारों को अंतर्गत करके सम्यक्त्व के पाँच अतिचार ही कहे हैं ॥४०॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति--पहले कहा गया था कि बारह व्रतों का धारक

आमनो प्रशंसा अने संस्तवमां समावेश थछ नय छे. जे पुरुष मनथी मिथ्यादृष्टिओनी प्रशंसा करे छे ते मूढमति सम्यग्ज्ञान-दर्शन-चारित्र तथा तप रूप रत्नचतुष्टयथी विभूषित पुरुषोना प्रमाद तथा अज्ञानथी उत्पन्न थनारा दोषोनुं उपगूहन करतो नथी-तेना उपर ठाँक-पीछोडो करतो नथी, सम्यग्दर्शन वगेरेमां तेमनुं स्थिरीकरछु करतो नथी, वात्सल्य तो ओछ आनुओ नछु; ते शासननी प्रभावना पछु केवी रीते करशे ? आवी रीते-परपाषण्डप्रशंसा अने परपाषण्ड संस्तवमां अनुपगूहन वगेरे दोषो अन्तर्गत थछ नय छे. आगण उपर व्रतानां पांच-पांच अतिचार कहेवामां आवशे, ओवा अनुशेषथी पछु प्रशंसा अने संस्तवमां ज व्रत अतिचारोना समावेश करीने सम्यक्त्वना पांच अतिचार ज कहेवामां आओ छे ॥४०॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति--पहला कहेवामां आओ छतुं के बार व्रतोना धारक

ચિન્મોહનીયાવસ્થાવિશેષાત્ સમ્યગ્દૃષ્ટેઃ પञ्चातिचारान् प्रतिपादयितुमाह—
‘સંયત્સસ્ય સંજાહયા પંચ અહચારા’ ઇતિ । સમ્યક્ત્વસ્ય સમ્યદર્શનસ્ય શંકા-
દયઃ શંકા આદિપદેન કાંક્ષા વિચિકિત્સા પરપાપણ્ડપ્રશંસા-પરપાપણ્ડસંસ્તવશ્ચે-
ત્યેતે પञ्चातिचारा भवन्तीति, तत्र ऽतिचारो व्यतीक्रमः, मोहनीयकर्मणो वैचि-
त्र्यात् आत्मनः परिणतिविशेषरूपो बोधयः । तथा च शंका कान्क्षा विचि-
कित्सापरपापण्डप्रशंसा-परपापण्डसंस्तवः इत्येते पञ्च सમ્યग् દૃષ્ટેરતિચારા
भवन्ति । तत्र शंका तावद् आगमगम्येषु तीर्थकृते भोक्तेषु जीवादिषु-अर्थव-
त्पन्त सूक्ष्मेषु अतीन्द्रिये च परमाण्वादेषु अधिगतजीवाजीवादि तत्त्वस्य भगवतः

ગૃહસ્થ હી શ્રાવક-વ્રતી હોતા હૈ । મિથ્યદર્શન શલ્ય હૈ, હસ કારણ
સમ્યગ્દૃષ્ટિ હી વ્રતી ગૃહસ્થ હોતા હૈ । કિસી કો મોહનીય કર્મ કી
વિશિષ્ટ અવસ્થા સે સમ્યક્ત્વ મેં પાંચ અતિચાર હોતે હૈ, ઉનકી
પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

સમ્યક્ત્વ કે શંકા આદિ પાંચ અતિચાર હોતે હૈ । ‘આદિ’
શબ્દ સે કાંક્ષા, વિચિકિત્સા, પરપાપણ્ડ પ્રશંસા ઓર પરપાપણ્ડસંસ્તવ
નામક અતિચારોં કો ગ્રહણ કરના યાહિયે ।

અતિચાર કા અર્થ હૈ ઉલ્લંઘન-મર્યાદા ભંગ । મોહનીય કર્મ કી
વિચિત્રતા સે ઉત્પન્ન હોને વાલી આત્મા કી પરિણતિ અતિચાર કહલાતી
હૈ । હસ પ્રકાર સમ્યગ્દર્શન કે પાંચ અતિચાર હૈ—શંકા, કાંક્ષા, વિચિ-
કિત્સા, પરપાપણ્ડ પ્રશંસા ઓર પરપાપણ્ડ સંસ્તવ । આગમ મેં પ્રતિ-
પાદિત, તીર્થંકર ભગવાન કે દ્વારા કથિત જીવાદિ તત્ત્વોં મેં, અત્યન્ત
સૂક્ષ્મ, અતીન્દ્રિય પરમાણુ આદિ પદાર્થોં મેં, જીવ-અજીવ આદિ તત્ત્વોં

ગૃહસ્થ જ શ્રાવકવ્રતી હોય છે. મિથ્યાદર્શન શલ્ય છે આ કારણે સમ્યગ્દૃષ્ટિ
જ વ્રતી ગૃહસ્થ હોય છે. કોઈને મોહનીય કર્મની વિશિષ્ટ અવસ્થાથી સમ્ય-
ક્ત્વમાં પાંચ અતિચાર હોય છે તેમની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ—

સમ્યક્ત્વના શંકા વગેરે પાંચ અતિચાર હોય છે. ‘આદિ’ શબ્દથી કાંક્ષા,
વિચિકિત્સા, પરપાપણ્ડપ્રશંસા અને પરપાપણ્ડસંસ્તવ નામના અતિચારોને
ગ્રહણ કરવા જોઈએ.

અતિચારનો અર્થ છે—ઉલ્લંઘન—મર્યાદાભંગ મોહનીય કર્મની વિચિત્રતાથી
ઉત્પન્ન થનાર આત્માની પરિણતિ અતિચાર કહેવાય છે. આ રીતે સમ્યક્-
દર્શનના પાંચ અતિચાર છે—શંકા, કાંક્ષા, વિચિકિત્સા, પરપાપણ્ડપ્રશંસા અને
પરપાપણ્ડસંસ્તવ, આગમમાં પ્રતિપાદિત, તીર્થંકર ભગવાન દ્વારા કથિત
જીવાદિ તત્ત્વોમાં, જીવ-અજીવ આદિ તત્ત્વોના જ્ઞાતા, ભાવપૂર્વક ભગવાનના

शासनं भावतः प्रतिपन्नस्याऽपि-अर्हत्तणीततत्तद्वत्तस्य सम्यग्दृष्टेः एवं स्याद्-
संख्येयप्रदेश आत्मा, अथ निष्प्रदेशो निरवयवत्वान्नैवं स्यात्' इत्यादि
रूपः संशय उच्यते । तथावोक्तमावश्यकं 'संशयकरणं शंका' संशयकरणं
शंकेति । कांक्षा-परदर्शनवाञ्छा २ विचिकित्सा-फलं प्रतिसन्देहः ३ मिथ्यादर्शनं
त्रिविधं भवति अभिगृहीता १ अनभिगृहीता २ संशय ३ भेदात् । उक्तञ्च---

‘पयमन्त्रस्वरं च एकं पि-जो नरो एति सुत्तनिदिद्धं ।

सेसं रोयंतो वि-ह्व मिच्छद्दिद्वी सुणेयव्वो । १॥

‘पदमक्षरं चैकमपि-यो न रोचते सूत्रनिर्दिष्टम् ।

शेषं रोचमानोऽपि-खलु मिथ्यादृष्टिर्ज्ञातव्यः ॥१॥ इति

के ज्ञाता, भाव पूर्वक भगवान् के शासन को अंगीकार करने वाले,
अर्हन्त-कथित तत्त्व के श्रद्धायुक्त सम्यग्दृष्टि को भी ऐसा संशय उत्पन्न
हो जाता है कि-‘आत्मा असंख्यातप्रदेशी है अथवा निरवयव होने से
अप्रदेशी है ।’ यह शंका अतिचार है । आवश्यक में कहा है-‘संशय
करना शंका है ।’ परकीय दर्शन की इच्छा करना कांक्षा अतिचार है ।
धर्मक्रिया के फल में सन्देह करना विचिकित्सा अतिचार है ।

मिथ्यादर्शन तीन प्रकार का है-अभिगृहीत, अनभिगृहीत और
संशय मिथ्यादर्शन । कहा भी है-

जो जीव सूत्रोक्त एक पद या अक्षर पर भी अरुचि करता है, वह
भले ही शेष सब पर रुचि रखता हो, फिर भी उसे मिथ्यादृष्टि ही
समझनी चाहिए ॥१॥

इसी प्रकार-सूत्र में कहे हुए एक अक्षर पर भी अरुचि करने

शासनने अंगीकार करनासे, अर्हन्त कथित तत्त्वમાં શ્રદ્ધાળુ સમ્યક્દૃષ્ટિને
પણ એવો સંશય કિરન થઈ જાય છે કે-‘આત્મા, અસંખ્યાતપ્રદેશી છે
અથવા નિરવયવ હોવાથી અપ્રદેશી છે !’ આ શંકા અતિચાર છે. આવશ્યકમાં
કહ્યું છે-‘સંશય કરવો શંકા છે’ પરકીય દર્શનની ઇચ્છા કરવી કાંક્ષા અતિ-
ચાર છે. ધર્મ ક્રિયાના ફળમાં સંદેહ રાખવો વિચિકિત્સા અતિચાર છે.

મિથ્યાદર્શન ત્રણ પ્રકારનું છે-અભિગૃહીત, અનભિગૃહીત અને સંશય
મિથ્યાદર્શન કહ્યું પણ છે-

જે જીવ સૂત્રોક્ત એક પદ અથવા અક્ષર પ્રત્યે પણ અરૂચિ કરે છે,
તે ભલે બાકીના બધાં ઉપર રૂચિ રાખતો હોય, તો પણ તેને મિથ્યાદૃષ્ટિ
જ ગણવો જોઈએ ॥૧॥

એવી જ રીતે-સૂત્રમાં કહેલાં એક અક્ષર પર પણ અરૂચિ રાખવાથી

‘અવમ્’-સૂત્રોક્તસ્યૈકસ્યા-અપ્યરોચનાદક્ષરસ્ય ભવતિ નરઃ ।

મિથ્યાદૃષ્ટિઃ સૂત્રંહિ-ન પ્રમાણં જિનાજ્ઞાચ ॥૧॥

અસંદિગ્ધપર્યે-અસંદિગ્ધે પ્રત્યયોઽર્હતિ હિ નટ્ટઃ ।

મિથ્યૈવ દર્શન તત્ત્વ-સચાદિદેતુ ભવગતીનામ્ ॥૨॥ ઇતિ,

તરમાનુમુક્તિના જનેન શક્યારહિતેન જિનવચનં સર્વથા સત્યમેવ પ્રતિપત્તવ્યમ્, સર્વજ્ઞવીતરાગાભિહિતત્વાત્ । ઉક્તઞ્ચ-‘તમેવ મચ્ચ નીસંકં, જં જિણેહિં પવે હયં’ તદેવ સત્યં નિશ્ચક્કં યજ્જિનૈઃ પ્રવેદિતમ્, ઇતિ છાયા । જ્ઞાનદોર્બલ્યેન્દ્રિયા પાટવાદિ દોષાત્સલ્લ સાકલ્યેન હૃદયસ્થસ્ય સકલપદાર્થસ્વરૂપાઽવધારણાયા અસમ્ભવાત્ । કાંક્ષાપદાર્થસ્તુ-એત્લોકિક-પારલોકિકવિષયેષુ શબ્દાદિષ્વાશંસા-

એ મનુષ્ય મિથ્યાદૃષ્ટિ હો જાતા હૈ । સૂત્ર ઓર જિનાજ્ઞા પ્રમાણ નહીં હૈ, એસા વહ સમજના હૈ ॥૧॥

અક ખી પદાર્થ મેં સન્દેહ હો તો અર્હન્ત ભગવાન કે પ્રતિ વિશ્વાસ કા વિનાશ હો જાતા હૈ, અતએવ સન્દેહ કરને વાલા પુરુષ મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ । વહ અવ ભવગતિયોં કા આદિ હેતુ હૈ । ૨॥

અતએવ અનુમુક્તિ જન કો શંકા સે રહિત હોકર જિનવચન સર્વથા સત્ય હી હૈ, એસા સમજના ચાહિએ, વયોં કિ વહ સર્વજ્ઞ ઓર વીતરાગ કે દ્વારા કથિત હૈ । કહા હૈ-‘વહી સત્ય ઓર અસંદિગ્ધ હૈ જો જિનેન્દ્રોં ને કહા હૈ ।’ હૃદયસ્થ જીવ કા જ્ઞાન દુર્બલ હોતા હૈ, ઉસકી ઇન્દ્રિયાં કુશલ નહીં હોતીં, इन दोषों के कारण वह समस्त पदार्थों के स्वरूप का निश्चय नहीं कर सकता ।

હસ લોક ઓર પરલોક સંબંધો શબ્દ આદિ વિષયોં કી ઇચ્છા

મનુષ્ય મિથ્યાદૃષ્ટિ થઈ બળ છે સૂત્ર તેમજ જિનાજ્ઞા પ્રમાણ નથી એવું તે સમજે છે. ॥૧॥

એક પણ પદાર્થમાં સંદેહ હોય તો અર્હન્ત ભગવાન તરફ વિશ્વાસનો વિનાશ થઈ બળ છે, આથી શકશીલ પુરુષ મિથ્યાદૃષ્ટિ છે. તે ભવગતિ-ઓનો મૂળ હેતુ છે ॥૨॥

આથી અનુમુક્તિ પુરુષે શંકારહિત થઈને જિનવચન સર્વથા સત્ય જ છે એવું સમજવું બેઠાએ કારણ કે તે સર્વજ્ઞ અને વીતરાગ દ્વારા કહેવાયું છે. કહ્યું પણ છે-‘તે જ સત્ય અને અસંદિગ્ધ છે જે જિનેન્દ્રોએ કહ્યું છે. હૃદયસ્થ હૃદયનું જ્ઞાન નબળું હોય છે, તેની ઇન્દ્રિયો સતેજ હોતી નથી આ દોષોને લીધે તે બધાં પદાર્થોના સ્વરૂપ નો નિશ્ચય કરી શકતો નથી.

આ લોક તેમજ પરલોક સંબંધી શબ્દ આદિ વિષયોની ઇચ્છા કરવી

રૂપ: પ્રીતિપર્યાયોઽભિલાષ: યથા-‘સુગતોહિ મિશ્નુ ગાં-સ્નાનાઽન્નપાનાઽઽચ્છાદન-શયનીયાદિ સુખાઽનુભવદ્વારા કલેશરહિત ધર્મપુપદિષ્ટવાન્ એવ મન્યેઽપિ-સાંસારિકવિષયભોગસુખાર્થમેવ ધર્મોપદેશં કૃતવન્તઃ, એવમ્-સ્વર્ગરાજ્યસુખપ્રાપ્ત્યર્થં દિવ્ય-રૂપરસગન્ધશબ્દસ્પર્શાદિ વિષયકોપદેશં દત્તવન્તઃ । એવમ્-એઢલૌકિક-પારલૌકિક શબ્દાદીનાં પ્રાપ્ત્યભિલાષરૂપા કાંક્ષા સમ્યગ્દષ્ટેઽતિચારો ભવતિ । વસ્તુતસ્તુ-અન્ય શાસનદર્શનતત્ત્વાભિલાષ: કાઙ્ક્ષા, તાદૃશા કાંક્ષાવાન્ સ્વસ્વવિચારિતગુણદોષ: સાંસારિકસુખમભિલષતિ એઢલૌકિકં પારલૌકિકં વા વિનશ્વરમવસાનકટુકં દુઃખ સંમિશ્રિતં સર્વં ચૈત્દ્ ઉદ્ઘૃતકપાયઃકલુષિતત્વાત્

કરના કાંક્ષા પદ કા અર્થ હૈ । જૈણે-બુદ્ધ ને મિશ્નુઓં કો સ્નાન, અન્ન, પાન, આચ્છાદન એવં શયના આદિ કા સુખ ભોગતે હુએ કલેશ રહિત ધર્મ કા ઉપદેશ દિયા હૈ । દૂસરોં ને ઓ સાંસારિક વિષય ભોગોં સંબંધી સુખ કે લિએ હી ધર્મ કા ઉપદેશ દિયા હૈ તથા સ્વર્ગ એવં રાજ્ય-સુખ કી પ્રાપ્તિ કે લિએ દિવ્ય રૂપ, રસ, ગંધ, શબ્દ ઓર સ્પર્શ આદિ વિષયક ઉપદેશ દિયા હૈ । કયોં ન બુદ્ધશાસન કો અંગીકાર કર લિયા જાય ! હસ પ્રકાર હહ-પરલોક સંબંધી શબ્દ આદિ વિષયોં કી પ્રાપ્તિ કી અભિલાષા કરના કાંક્ષા અતિચાર હૈ ।

વાસ્તવ મેં તો અન્ય શાસન, દર્શન એવં તત્ત્વ કી ઇચ્છા કરના કાંક્ષા હૈ । જો એસી આકાંક્ષા કરતા હૈ સહ ગુણ-દોષોં કા વિચાર કિયે વિના હી સાંસારિક સુખ કી અભિલાષા કરતા હૈ । કિન્તુ એહ લૌકિક ઓર પારલૌકિક સુખ વિનાશશીલ હૈ, ડમ્મકા અન્ન કટુક

કાંક્ષા પદનો અર્થ થાય છે જેમ કે-બુદ્ધે મિશ્નુઓને સ્નાન, અન્નાન્ન, પાણી, આચ્છાદન તથા શયના વગેરેનું સુખ ભોગવતા થકા કલેશરહિત ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો છે. બીજાઓએ પણ સાંસારિક વિષયભોગો સંબંધી સુખ કાળે જ ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો છે તથા સ્વર્ગ અને રાજ્ય સુખની પ્રાપ્તિ અર્થે દિવ્યરૂપ, રસ, ગંધ, શબ્દ અને સ્પર્શ આદિ વિષયક ઉપદેશ આપ્યો છે તથા ત્યારે બુદ્ધશાસનનો જ સ્વીકાર કરી લઈએ ! આ રીતે આ લોક અથવા પરલોક સંબંધી શબ્દ આદિ વિષયોની પ્રાપ્તિની અભિલાષા કરવી કાંક્ષા અતિચાર છે.

વાસ્તવમાં તો અન્ય શાસન, દર્શન તથા તત્ત્વની ઇચ્છા કરવી કાંક્ષા છે, જે આવી આકાંક્ષા કરે છે તે ગુણ-દોષોનો વિચાર કર્યા વગર જ સાંસારિક સુખની અભિલાષા કરે છે. પરંતુ આ લોક સંબંધી અથવા પારલૌકિક સુખ નાશવત છે. તેનો અન્ત કંઈ છે, તે દુઃખોથી મિશ્રિત હોય છે, આથી

સંસારાનુવંધિત્વાच्च भगवतोर्हता प्रतिषिद्धम् प्रतिषिद्धानुष्ठानं च भावतः
सम्यक्त्वं दूषयति सिद्धान्तोल्लंघनात् । उक्तञ्च-‘कंखा अपणपण दंसणग्गाहो’
कांक्षाऽन्याऽन्यदर्शनग्राहः, इति । आर्हतसिद्धान्तस्तु-दशवैकालिके नवमेऽध्ययने
चतुर्थोद्देशके ‘णो इहलोयाए’ इत्यादिना कथितः नेहलोकार्थम्, अपितु-केवलं
कर्मनिर्जराणायैव धर्माद्युपदेशादौ प्रवृत्तिः । तस्मात् खलु-ऐकान्तिकाऽऽत्यन्ति-
काऽव्यावाधिसुखहेतुः, एतावान् प्रयासः इत्यन्यदर्शनादौ निराकाङ्क्षेण श्रमणेन

હૈ, વહ દુઃખોં સે મિશ્રિત હોતા હૈ, હસ કારણ કષાયોં સે કલુષિત
હોને કે કારણ તથા અવપરમ્પરા કા વર્ધક હોને કે કારણ અર્હન્ત
ભગવાન ને ઉલ્લંઘના નિષેધ ક્રિયા હૈ । નિષિદ્ધ અનુષ્ઠાન યદિ ભાવપૂર્વક
ક્રિયા જાય તો વહ સિદ્ધાન્ત કે ઉલ્લંઘન કે કારણ સમ્યક્ત્વ કો
દૂષિત કરતા હૈ । કહાં મી હૈ-‘અન્ય-અન્ય દર્શન કો ગ્રહણ કરના
કાંક્ષા હૈ ।’ અર્હન્ત ભગવાન કે સિદ્ધાન્ત કા તો દશવૈકાલિકસૂત્ર કે
નો વે’ અધ્યયન કે ચૌથે ઉદ્દેશક મેં પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા હૈ-‘નો
ઇહલોયટ્ટ્યાએ’ હત્યાદિ વાક્યોં મેં કહાં હૈ, જિસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ
સ્વાધ્યાયતપશ્ચરણ આદિ કોઈ મી ધર્માનુષ્ઠાન હસ લોક સંબંધી લાભ
કે લિએ ન કરે, પારલૌકિક લાભ (સ્વર્ગ પ્રાપ્તિ આદિ) કે લિએ ન કરે
ઔર યશ-કીર્તિ આદિ કે લિએ મી ન કરે, કેવલ કર્મક્ષય કે હી
ઉદ્દેશ્ય સે કરે । કર્મનિર્જરા કે અતિરિક્ત અન્ય કિસી મી લાભ કે
લિએ ધર્માચરણ નહીં કરનાં ચાહિએ, તમી એકાન્તિક, આત્યન્તિક

કયાયોથી કલુષિત હોવાના કારણે તથા ભવપરમ્પરાને-વધારનાર હોવાથી
અર્હન્ત ભગવાને તેની મનાઈ કરમાવેલ છે નિષિદ્ધ અનુષ્ઠાનને ભાવપૂર્વક
કરવામાં આવે તો તે-સિદ્ધાંતના ઉલ્લંઘનના કારણે સમ્યક્ત્વને દૂષિત કરે
છે, કહ્યું પણ છે-‘અન્ય-અન્ય દર્શનોનું ગ્રહણ કરવું કાંક્ષા છે’ અર્હન્ત ભગ-
વાનના સિદ્ધાંતને તો દશવૈકાલિકસૂત્રના નવમાં અધ્યયનના ચોથા ઉદ્દેશકમાં
પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે-‘નો ઇહલોયટ્ટ્યાએ’ વગેરે વાક્યોમાં
હયું છે, જેનો સારાંશ એ છે કે સ્વાધ્યાય, તપશ્ચર્યા વગેરે કેઈ પણ ધર્મા-
નુષ્ઠાન આ લોક સંબંધી લાભ ખાતર કરવા ન જોઈએ, પારલૌકિક લાભ
(સ્વર્ગ પ્રાપ્તિ આદિ) માટે ન કરવા તેમજ યશ-કીર્તિ વગેરે મેળવવા માટે
પણ ન કરવા, માત્ર કર્મોને અપાવવાના હેતુથી કરવા જોઈએ. કર્મનિર્જરા
શિવાય અન્ય કોઈ પણ લાભની આશાથી ધર્માચરણ કરવું જોઈએ નહીં, જે
લાભ થાય તો જ એકાન્તિક, આત્યન્તિક અને અવ્યાયાધ સુખની પ્રાપ્તિ

भवितव्यमिति भावः । विचिकित्सा तावद्-मतिविभ्रमरूपाऽवसेया, तथाहि युक्ता-
गमोपपन्नेऽप्यर्थे मतिभ्राम्यति यथा-बद्धतः खल्वस्य तपः क्लेशस्य सिकताकण
कवलवन्निःस्वादस्य-लोचादेश्वाऽऽयत्यां का फल सम्पदमवित्री ? अथ च-क्लेश
मात्रमेवेदं निर्जराफलविकलम् ३ इति । उभयथा खलु लोके क्रिया दृश्यन्ते,
फलवत्यो निष्फलाश्च कृपकाणां कर्पणादिक्रिया कदाचित्फलवती कदाचिन्निष्फला
चेति । तस्मात्-‘इदमप्यस्ति इदमप्यस्ति’ इति क्रियासामान्यस्यो-भयथा-
दृष्टत्वान्मतिविभ्रमो जायते, अथ शङ्कारूपैव विचिकित्सा न ततोऽतिरिक्तैति

तभी एकान्तिक आत्यन्तिक और अन्यायाध सुख की प्राप्ति होती है
ऐसा विचार कर साधु या श्रावक को अन्यदर्शन की आकांक्षा
नहीं करनी चाहिए ।

विचिकित्सा एक प्रकार का मतिविभ्रम है । कभी-कभी युक्ति-
आगम संगत अर्थ में भी बुद्धि भ्रान्त हो जाती है, जैसे-घालू के कवल
के समान निःस्वाद इस तपश्चरण का तथा लोच आदि का न जाने
भविष्य में कुछ फल प्राप्त होगा या नहीं ? यह कहीं कौरा कण्ट ही
तो नहीं है, जिससे निर्जरा-फल की प्राप्ति न हो ! संसार में दोनों
प्रकार की क्रियाएं देखी जाती हैं-कोई सफल होती है, कोई निष्फल ।
किसान खेती करता है तो कभी वह सफल होता है, कभी निष्फल
होता है । इस प्रकार सामान्य रूप से दोनों प्रकार की क्रियाएं देखी
जाती हैं, अतः बुद्धि में भ्रमणा उत्पन्न हो जाती है ।

यहां ऐसी अज्ञांका नहीं करनी चाहिए कि विचिकित्सा भी एक

थाय છે. આવું વિચારીને સાધુ અથવા શ્રાવકે અન્ય દર્શનની આકાંક્ષા
કરવી જોઈએ નહીં.

વિચિકિત્સા એક પ્રકારનો મતિવિભ્રમ છે. કોઈ-કોઈ યુક્તિ આગમ-
સંગત અર્થમાં પણ બુદ્ધિ ભ્રાન્ત થઈ જાય છે. જેમ કે-રેતીના કોળીયા
જેવું સ્વાદ વગરનું આ તપશ્ચર્યાનું તથા લોચ આદિનું ન જાણે ભવિષ્યમાં
કોઈ ફળ પ્રાપ્ત થશે કે કેમ ! આ માત્ર નિષ્ફળ કણ્ટ તો નથી જેનાથી
નિર્જરા-ફળની પ્રાપ્તિ ન થાય સંસારમાં બંને પ્રકારની ક્રિયાઓ જોવામાં આવે
છે-કોઈ સફળ થાય છે, કોઈ નિષ્ફળ ખેડૂન ખેતી કરે છે તો કદી તે સફળ થાય
છે, ક્યારે નિષ્ફળ પણ નીવડે છે. આ રીતે સામાન્ય રૂપથી બંને પ્રકારની
ક્રિયાઓ જોવામાં આવે છે આથી બુદ્ધિમાં ભ્રમણા ઉત્પન્ન થઈ જાય છે.

નાશકનીયમ્ ? શક્ત્યાઃ સકલાઽસકલપદાર્થભાવતેન દ્રવ્યગુણવિષયત્વાત્
 વિચિકિત્સાયાશ્ચ ફલસન્દેહવિષયત્વાત્, इत्थं परस्पर मुमयोभिन्नत्वमिति ।
 તથાહિ-વિચિકિત્સાયાં સત્યાં મતિ મિથ્યાત્વપુદ્ગલાનુવિદ્ધા સતી ભ્રમતિ સર્વ
 પ્રવચનેઽનવતિષ્ઠમાનાઽનસ્થિતા મવતિ । તથા-સર્વે સ્વલ્વેતે શક્ત્યા કાંક્ષા વિચિ-
 કિત્સાદયો મિથ્યાદર્શનભેદાઃ કેનચિદ્દિશેષેણ જાયમાનાઃ સમ્યક્ત્વસ્યાઽતિ-
 ચારતાં પ્રતિપચન્તે । પરપાષંડપ્રશંસા-સંસ્તવૌ તાવદ્ અર્હંચ્છાસનવ્યતિરિક્તયા-
 ઽભિગૃહીતાઽનભિગૃહીતભેદેન દ્વિવિધયા મિથ્યાદૃષ્ટ્યા યુક્તાનાં ક્રિયાવાદિનામ્-
 અક્રિયાવાદિનામ્, અજ્ઞાનિકવાદિનામ્-વૈનયિકવાદિનાં ચ તત્ત્વરૂપ પ્રશંસન-

પ્રકાર કી શંકા હી હૈ, શંકા સે અલગ નહીં હૈ, । ક્યોં કિ શંકા ઓર
 વિચિકિત્સા કે વિષય અલગ-અલગ હોતે હૈ । શંકા સમ્પૂર્ણ યા કિસી
 એક પદાર્થ સે હોતી હૈ, અતએવ ઉલ્લેખા વિષય દ્રવ્ય-ગુણ હૈ, વિચિકિત્સા
 ફલ સે સન્દેહ કરને સે હોતી હૈ । હસ કારણ દોનોં સે ભેદ હૈ ।
 વિચિકિત્સા હોને પર મિથ્યાત્વ કે પુદ્ગલોં સે અનુવિદ્ધ મતિ ભ્રમણ
 કરતી હૈ-સર્વ પ્રવચન સે સ્થિર ન હોકર અસ્થિર હો જાતી હૈ ।

હસ પ્રકાર યે શંકા, કાંક્ષા, વિચિકિત્સા આદિ મિથ્યાદર્શન કે હી
 રૂપ હૈ ફિર ખી હન સે કુછ-કુછ પાર્થક્ય હૈ । હસી સે યે સવ સમ્ય-
 ક્ત્વ કે અતિચાર કહે ગયે હૈ ।

પરપાષંડ પ્રશંસા ઓર પરપાષંડ સંસ્તવ અર્હંત ભગવાન્ કે
 શાસન સે ભિન્ન, અભિગૃહીત ઓર અનભિગૃહીત કે ભેદ સે દો પ્રકાર
 કી મિથ્યાદૃષ્ટિ સે યુક્ત ક્રિયાવાદિર્થા, અક્રિયાવાદિર્થો, અજ્ઞાનવાદિર્થો

અત્રે એવી આશંકા ન દેખી જોઈએ કે વિચિકિત્સા પણ એક પ્રકારની
 શંકા જ છે, શંકાથી બુદ્ધિ નથી. કારણ કે શંકા અને વિચિકિત્સાના વિષય
 બુદ્ધિ બુદ્ધિ હોય છે. શંકા સમ્પૂર્ણ અથવા કોઈ એક પદાર્થમાં થાય છે આથી
 તેનો વિષય દ્રવ્ય-ગુણ છે, વિચિકિત્સા ફળમાં સન્દેહ કરવાથી થાય છે આ
 કારણે બંનેમાં ભેદ છે. વિચિકિત્સા થવાથી મિથ્યાત્વના પુદ્ગલોથી અનુવિદ્ધ
 મતિ ભ્રમણ કરે છે-સર્વપ્રવચનમાં સ્થિર ન હોઈને અસ્થિર થઈ જાય છે.

આ રીતે આ શંકા, કાંક્ષા, વિચિકિત્સા આદિ મિથ્યાદર્શનના જ રૂપ
 છે તો પણ આમાંથી કોઈ-કોઈ પાર્થક્ય છે. આથી જ આ બધાં સમ્યક્ત્વના
 અતિચાર કહેવાયા છે.

પરપાષંડપ્રશંસા અને પરપાષંડસંસ્તવ, અર્હંત ભગવાન્ના શાસનથી
 ભિન્ન, અભિગૃહીત અને અનભિગૃહીતના ભેદથી બે પ્રકરના મિથ્યાદૃષ્ટિથી
 યુક્ત ક્રિયાવાદિઓ, અક્રિયાવાદિઓ, અજ્ઞાનવાદિઓ અને વિનયવાદિઓની

પરિચયાત્મકો વૌધ્યો, તાવપિ સમ્યક્દષ્ટેરત્તિચારો ભવતઃ તત્ર-ભાવતોઽન્યાત્મગુણ-પ્રકર્ષોદ્ભાવનરૂપા પ્રશંસા સોપધિકનિરૂપધિકં ચ ગુણવચનં સંસ્તવઃ । અભિ-ગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિસ્તાવત્ અભિમુખં ગૃહીતાઽભિગૃહીતાદૃષ્ટિઃ, યથા-‘હદમેવ તત્ત્વમ્’ इति सौगतदिवचनम्, અનેકાપિ-અભિમુખ્યેન ગૃહીતાદૃષ્ટિઃ સર્વ પ્રવચનણ્ણેવ સ સમીચીનદૃષ્ટિઃ અનભિગૃહીત મિથ્યાદૃષ્ટિ રુચ્યતે, મિથ્યાદર્શનં સ્વસ્થ નાનાપ્રકારકં સજ્ઞાયતે, મોહનીયકર્મવૈચિત્ર્યાત્ નયાના-માનન્ત્યાત્ । તત્ર-કેચિત્ ક્રિયાવાદિનઃ સન્તિ, ક્રિયા કર્ત્રધીના કર્તારં વિના નોપપચતે, इत्यात्मा-धिष्ठितशरीरसमवायि क्रियावादिन आत्माऽरितत्वादि प्रतिपत्तारहतेऽशीत्यधिक-

और विनयवादियों की प्रशंसा रूप और परिचय रूप हैं अर्थात् मिथ्यादृष्टियों की प्रशंसा करना परपाषण्ड प्रशंसा और उनके साथ परिचय करना परपाषण्ड संस्तव है । ये दोनों भी सम्यग्दर्शन के अतिचार हैं । भावपूर्वक दूसरे के अथवा अपने गुणों का प्रकर्ष प्रकट करना प्रशंसा कहलाता है और सोपधिक या निरूपधिक गुणवचन को संस्तव कहते हैं । अभिमुख गृहीत दृष्टि अभिगृहीता दृष्टि है, जैसे यही तत्त्व है ।’ इस प्रकार सौगत आदि के वचन सभी प्रवचनों को समीचीन समझना अभिगृहीत मिथ्यादृष्टि कहलाती है ।

मोहनीय कर्म की विचित्रता के कारण तथा नयों अनन्त होने के कारण मिथ्यादर्शन अनेक प्रकार का होता है । कोई कोई क्रियावादी होते हैं । क्रिया कर्त्ता के अधीन है, कर्त्ता के बिना वह हो नहीं सकती । इस प्रकार आत्मा से अविच्छिन्न शरीर में लसदाय संबंध से क्रिया रहती

પ્રશંસા રૂપ અને પરિચય રૂપ છે, અર્થાત્ મિથ્યાદૃષ્ટિઓની પ્રશંસા કરવી પરપાષંડપ્રશંસા છે અને તેમની સાથે પરિચય કરવો પરપાષંડસંસ્તવ છે. આ બંને પણ સમ્યક્દર્શનના અતિચાર છે. ભાવપૂર્વક બીજાના અથવા પોતાના ગુણોનો પ્રકર્ષ પ્રકટ કરવાને-પ્રશંસા કહે છે અને સોપધિક અથવા નિરૂપધિક ગુણવચનને સંસ્તવ કહે છે. અભિમુખગૃહીત દૃષ્ટિ અભિગૃહીતા દૃષ્ટિ છે જેમ કે-‘આ જ તત્ત્વ છે’ એ બતાવના સૌગત આદિના વચન બધા પ્રવચનોને સમીચીન સમજવું અનભિગૃહીત મિથ્યાદૃષ્ટિ કહેવાય છે.

મોહનીયકર્મની વિચિત્રતાના કારણે તથા નયો અનન્ત હોવાથી મિથ્યાદર્શન અनेक प्रकारના હોય છે. કેઈ-કેઈ ક્રિયાવાદી હોય છે ક્રિયા કર્તાને અધીન છે, કર્તા વગર તે થઈ શકતી નથી. આ રીતે આત્માથી અધિષ્ઠિત શરીરમાં

શતસંખ્યકા વૌધ્યાઃ । તથથા-જીવાઽજીવબન્ધપુણ્ય પાપાઽસ્રવ-સંવર નિર્જરા-
મોક્ષરૂપ નવપદાર્થાનાં મધ્યે એકૈકં પ્રતિ 'અસ્તિ જીવઃ સ્વતઃ નિત્યઃ કાલતઃ'
ઇત્યાદિરીત્યા લઘ્યાનાં વિંશતિ વિકલ્પાનાં નવમિર્ગુણનેઽશીત્યધિકશતસંખ્યા
લભ્યન્ત ઇતિ શ્રાવઃ । એવં-ચતુરશીતિર્વિકલ્પાઃ પ્રત્યેકં નાસ્તિકાનામિત્યાદિ-
રીત્યાંઽભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટીનાં સર્વં સંખ્યયા ત્રિષષ્ટ્યધિકાનિ ત્રીણિ શતાનિ-
અવગન્તવ્યાનિ । તત્રાત્મક્રિયાસ્તિત્વવાદિનોઽશીત્યધિકશતસંખ્યકાઃ, આત્મ-
નાસ્તિત્વાક્રિયાવાદિનશ્ચતુરશીતિ સંખ્યકાઃ, અજ્ઞાનિકવાદિનઃ સપ્તષષ્ટિસંખ્યકાઃ,
વૈનાયિકવાદિનો દ્વાત્રિંશતસંખ્યકાઃ સન્તિ । તત્રાઽઽત્મનાસ્તિત્વવાદિમતે વિકલ્પા
સ્તાવદ્ 'નાસ્તિ જીવઃ સ્વતઃ કાલતઃ' એવમ્-'નાસ્તિ જીવઃ પરતઃ કાલતઃ'

હૈ, એસા સ્વીકાર કરનેવાલે ઔર આત્મા કા અસ્તિત્વ સ્વીકાર કરને
વાલે વાદી ક્રિયા વાદી કહલાતે હૈ । ઉનકે એક સૌ અસ્સી
(૧૮૦) ભેદ હૈ । યે ભેદ હસ પ્રકાર નિષ્પન્ન હોતે હૈ-(૧) જીવ (૨)
અજીવ (૩) બન્ધ (૪) પુણ્ય (૫) પાપ (૬) આસ્રવ (૭) સંવર (૮) નિર્જરા
(૯) મોક્ષ, હન નૌ પદાર્થોં મેં સે પ્રત્યેક કૈ સાથ 'જીવ હૈ, સ્વતઃ નિત્ય
કાલ સે' ઇત્યાદિ રૂપ સે બનને વાલે વીસ ભેદોં કા નૌ પદાર્થોં કૈ
સાથ ગુણાકાર કરને સે એક સૌ અસ્સી સંખ્યા હો જાતી હૈ । અક્રિયા-
વાદી નાસ્તિકોં કૈ અસ્સી (૮૦) ભેદ હૈ । ઇત્યાદિ ચારોં કૈ મિલાકર
અભિગૃહીત મિથ્યાદૃષ્ટિયોં કૈ કુલ ત્રીસ સૌ ત્રેસઠ (૩૬૩) ભેદ
હોતે હૈ । હન મેં આત્મા કા અસ્તિત્વ નહીં સ્વીકાર કરને વાલે
અક્રિયાવાદી અસ્સી હૈ, અજ્ઞાનવાદિયોં કૈ સડસઠ (૬૭) ભેદ હૈ
ઔર વૈનયિકોં કૈ બત્તીસ ભેદ હૈ । અક્રિયાવાદિયોં કૈ ભેદ

સમવાય સંબંધથી ક્રિયા રહે છે. એવું સ્વીકારનાર અને આત્માના અસ્તિત્વનો
સ્વીકાર કરનારા ક્રિયાવાદી કહેવાય છે. તેમના એકસો એ'શી (૧૮૦) ભેદ
છે. આ ભેદ આ રીતે નિષ્પન્ન થાય છે-(૧) જીવ (૨) અજીવ (૩) બન્ધ
(૪) પુણ્ય (૫) પાપ (૬) આસ્રવ (૭) સંવર (૮) નિર્જરા (૯) મોક્ષ આ
નવ પદાર્થોમાંથી પ્રત્યેકની સાથે જીવ છે, સ્વતઃ નિત્યકાળથી ઇત્યાદિ રૂપથી
બનનારા વીસ ભેદોનો નવ પદાર્થની સાથે ગુણાકાર કરવાથી એકસો એ'શીની
સંખ્યા થઈ જાય છે. અક્રિયાવાદિ નાસ્તિકોના એ'શી ભેદ છે. ઇત્યાદિ આદે
મળીને અભિગૃહીત મિથ્યાદૃષ્ટિઓના કુલ ત્રણસો ત્રેસઠ (૩૬૩) ભેદ હોય
છે. આમાં આત્માનું અસ્તિત્વ નહીં સ્વીકારનારા અક્રિયાવાદી એ'શી (૮૦)
છે, અજ્ઞાનવાદિઓના સડસઠ (૬૭) ભેદ છે અને વૈનયિકોના બત્તીસ ભેદ છે.

इत्येवंरूपभेदेन द्वादश विकल्पा जीवं प्रति भवन्ति । एवम्-अजीवादिष्वपि पदसु प्रत्येकं द्वादश-द्वादश विकल्पा भवन्ति । तेषां मते-पुण्यपापयोरसद्भावेन सत्ता-नामेव जीवानामेकैकं प्रति द्वादश द्वादश भेदेन चतुरशीति भेदा भवन्ति । आत्मा-ऽस्तित्ववादिनां मते तु-पुण्यपापसाहचरानां नवतत्त्वानां सद्भावेनैकैकं प्रति निम्न-रीत्या विंशति विकल्पसत्त्वेनाऽशीत्याधिकशतभेदा भवन्ति । तथाहि-‘जीवोऽस्ति स्वतो नित्यः कालतः’ । कालवादिनः खलु ‘विद्यतेऽयं सात्मा स्वेन रूपेण नित्यश्चेति’ । एवम्-ईश्वरवादिनोऽपि द्वितीयो विकल्पः । आत्मवादिनः तृतीयो विकल्पस्तु-‘पुरुष एवेदं सर्वम्’ इत्यादि । नियतिरूपाऽदृष्टवादिनश्चतुर्थो विकल्पः

इस प्रकार होते हैं-‘जीव नहीं है स्वतः काल से और ‘जीव नहीं है, परतः काल से इस प्रकार जीव को लेकर बारह भेद होते हैं । इसी प्रकार अजीव आदि छह पदार्थों के भी बारह-बारह भेद समझ लेना चाहिए उनके मत में पुण्य और पाप का सद्भाव नहीं है, अतएव सात पदार्थों के ही बारह-बारह भेद होने से चौरासी भेद हो जाते हैं । किन्तु जो आत्मा का अस्तित्व मानते हैं उनके मत में पुण्य और पाप की भी सत्ता होने से नौ पदार्थ हैं और प्रत्येक को लेकर बीस-बीस भेद होते हैं, अतः उनके एक सौ अस्सी भेद हैं, जैसे-जीव है स्वतः नित्य काल से । कालवादियों का कथन है कि-आत्मा स्वरूप से नित्य है काल से । इसी भाँति ईश्वरवादियों का दूसरा विकल्प समझ लेना चाहिए । तीसरा विकल्प आत्मवादियों का है । उनका कथन है कि ‘यह सब जो जगत् में दृष्टिगोचर होता है, पुरुषस्वरूप ही है ।

अक्रियावादियोना लेह आ रीते थाय छे-‘अव नथी स्वतः काणथी’ अने ‘अव नथी परतः काणथी’ आ रीते अवने लधने भार लेह थाय छे. आ रीते अव अव आदि छ पदार्थोना पणु भार-भार लेह समअ लेवा नेधअ. तेमना मते पुण्य अने पापना सद्भाव नय; आथी सात पदार्थोना न भार-भार लेह होवाथी चौरासी (८४) लेह थध जय छे. परन्तु जेओ आत्मानुं अस्तित्व स्वीकारे छे. तेमना मते पुण्य अने पापनी पणु सत्ता होवाथी नव पदार्थ छे अने प्रत्येकने लधने बीस-बीस लेह थाय छे आथी, तेमना ओकसो ओशी लेह छे जेम के-‘अव स्वतः नित्यकाणथी’ कालवादियोना कडेवुं छे के आत्मा स्वरूपथी नित्य छे काणथी नही. ओवी न रीते ईश्वर-वादियोना भीले विकल्प समअ लेवा नेधअ. त्रीले विकल्प आत्मवादियोना छे. तेमनुं कथन छे के ‘आ जधु’, जे जगतमां दृष्टिगोचर थाय छे, पुण्य-

સ્વભાવવાદિનઃ પશ્ચમવિકલ્પઃ સ્વતઃ, इत्येवं स्वत इत्यनेन पञ्चविकल्पाः ।
 परत इत्यनेनाऽपि पञ्चविकल्पा भवन्ति, नित्यत्वसहितेन दशविकल्पाः, अनित्यत्व-
 सहितेन च दशविकल्पा भवन्ति, इत्येवं त्रिंशति विकल्पा जीवतत्त्वेन सह भवन्ति ।
 एवं—शेषैरजीवादिभिरष्टतन्त्रैरपि प्रत्येकं त्रिंशति त्रिंशति भेदेनाऽशीत्यधिक शत
 संख्यका विकल्पा भवन्ति । अज्ञानिकानां पुनरचिन्त्य कृतकर्मबन्धवैफल्यवादिनां
 मतं—जीवादीनि नवतत्त्वानि संस्थाप्य—सत्त्व-१ असत्त्व-२ सदसत्त्व-३ मवाच्यत्व-४
 सदवाच्यत्वम् ५ असदवाच्यत्वं ६ सदसदवाच्यत्वम् ७ इत्येवमेकैकस्य जीवादेः
 सप्त-सप्त विकल्पा भवन्ति, एते नव सप्तका स्त्रिपष्टिः । उत्पत्तेर्थाऽऽद्याश्चत्वारो

નિયતિ કો ધ્યાનને વાલોં કા ચૌથા વિકલ્પ હૈ । પાંચવેં સ્વભાવવાદિ હૈ ।
 હસ પ્રકાર 'સ્વતઃ' શબ્દ સે પાંચ વિકલ્પ હોતે હૈ । 'પરતઃ' શબ્દ સે
 બી યહી પાંચ ભેદ હોતે હૈ । હન દસોં કી 'નિત્ય' ઔર 'અનિત્ય' કે
 સાથ યોજના કરને પર જીવ તત્ત્વ કો લેકર વીસ ભેદ નિષ્પન્ન હોતે હૈ ।
 હસી પ્રકાર શેષ અજીવ આદિ આઠ પદાર્થોં કો લેકર વીસ-વીસ ભેદ
 હોને સે સત્ત્વ ધિલાકર એક સૌ અસત્ત્વી ભેદ હો જાતે હૈ ।

વિના સોચે સમગ્રે કૃત કર્મબન્ધ કો નિષ્ફલ માનને વાલે અજ્ઞાન-
 વાદિયોં કે મત મેં, જીવ આદિ નૌ તત્ત્વોં કો અનુક્રમ સે સ્થાપિત
 કિયા જાતા હૈ ઔર પ્રત્યેક કે નીચે (૧) સત્ત્વ, (૨) અસત્ત્વ (૩) સદ-
 સત્ત્વ (૪) અવાચ્યત્વ (૫) સદવાચ્યત્વ (૬) અસદવાચ્યત્વ ઔર (૭)
 સદસદવાચ્યત્વ, યે સાત ભંગ સ્થાપિત કિયે જાતે હૈ । હસ પ્રકાર એક
 એક તત્ત્વ કો લેકર સાત-સાત વિકલ્પ હોને સે $9 \times 7 = 63$ વિકલ્પ સિદ્ધ

સ્વરૂપ જ છે. નિયતિને માનનારાઓના ચેથો વિકલ્પ છે. પાંચમા સ્વભાવ-
 વાદિ છે. આ રીતે 'સ્વતઃ' શબ્દથી પાંચ વિકલ્પ થાય છે. 'પરતઃ' શબ્દથી
 પણ આ જ પાંચ ભેદ થાય છે. આ દશેની 'નિત્ય' અને 'અનિત્ય'ની સાથે
 યોજના કરવાથી જીવ તત્ત્વને લઈને વીસ ભેદ નિષ્પન્ન થાય છે. એવી જ
 રીતે શેષ અજીવ આદિ આઠ પદાર્થોને લઈને વીસ-વીસ ભેદ હોવાથી બધાં
 મળીને એકસો એંશી ભેદ થઈ જાય છે.

વગર વિચારે અને સમજીને કરેલા કર્મબન્ધને નિષ્ફળ માનનારા
 અજ્ઞાનવાદિઓના મતે, જીવ આદિ નવ તત્ત્વોને અનુક્રમથી સ્થાપિત કરવામાં
 આવે છે અને પ્રત્યેકની નીચે (૧) સત્ત્વ (૨) અસત્ત્વ (૩) સદસત્ત્વ (૪)
 અવાચ્યત્વ (૫) સદવાચ્યત્વ (૬) અસદવાચ્યત્વ (૭) સદસદવાચ્યત્વ એ સાત
 ભંગ સ્થાપિત કરવામાં આવે છે આ રીતે એક-એક તત્ત્વને લઈને સાત-
 સાત વિકલ્પ હોવાથી $63 \times 7 = 441$ વિકલ્પ સિદ્ધ થાય છે. આ ત્રેસઠ વિકલ્પોમાં

વિકલ્પા ભવન્તિ, તથથા સત્ત્વમ્ ૧ અસત્ત્વમ્ ૨ સદસત્ત્વમ્ ૩ અવાચ્યત્વં ચેતિ, ઇતિ રીત્યા સપ્તષ્ટિર્વિકલ્પા ભવન્તિ। તથથા-‘જીવઃ સ્વન્નિતિકો જાનિતિ ? એવમ-જીવોઽસ્વન્નિત્યપિ કો જાનાતિ’ ઇત્યાદિ। એવમ્-સતઃ ૧ અસતઃ-૨ સદસતો૩ ઽવાચ્યસ્ય૪ વા કિમ્ ઉત્પત્તિર્મનતીતિ કો જાનાતિ, ઇત્યાદિ વૈનયિકાનાં મતે દ્વાત્રિંશદ્વિકલ્પાઃ, યથા-‘કાયેન-વચસા-મનસા-દાનેન ચેત્યેભિ શ્વતુર્મિઃ પ્રકારૈઃ સુર-૧ નૃપતિ ૨ મુનિ-૩ જ્ઞાનિ ૪ સ્થવિરા ૫ ઽધમ ૬. માતૃ ૭ પિતૃષુ ૮ અષ્ટસુ વિનય વૈયાવૃત્યમધાનાઃ સન્તો વૈનયિકાઃ તેષાં સપર્યાં કુર્વન્તિ, ઇત્યેવ મપ્દાનાં ચતુર્મિર્ગુણિતત્ત્વે દ્વાત્રિંશદ્ભેદા ભવન્તિ અનભિગૃહીતાઃ પુનઃ સાંસારિક વૈશયિકભોગસુખવરાણાં પુરુષાણાં નિઃશ્રેયસસુખં વ્યર્થમ્, પ્રકૃષ્ટૈશ્વર્ય સમ્પત્તિ-

હોતે હિં। હન ત્રેસઠ વિકલ્પો હેં ઉત્પત્તિ કે ચાર વિકલ્પ સત્ત્વ, અસત્ત્વ, સદસત્ત્વ ઓર અવાચ્યત્વ-ઓર જોડ દેને હે સડસઠ ભેદ હો જાતે હેં। જૈસે-જીવ સત્ત્ હૈ, યહ કૌન જાનતા હૈ ? જીવ અસત્ત્ હૈ, યહ કૌન જાને ? ઇત્યાદિ। હસી પ્રકાર કૌન જાનતા હૈ કિ સત્ત્ કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ, અસત્ત્ કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ, સદસત્ત્ કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ અથવા અવાચ્ય કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ ?

વૈનયિકોં કે વત્તીસ ભેદ હેં। ઉનકી માન્યતા હૈ કિ કાય સે, વચન સે, મન સે ઓર દાન સે, હસ પ્રકાર ચાર પ્રકાર સે (૧) સુર (૨) નૃપતિ (૩) મુનિ (૪) જ્ઞાનિ (૫) સ્થવિર-વૃદ્ધ (૬) અધમ (૭) માતા ઓર (૮) પિતા, હન આઠ કા વિનય-વૈયાવૃત્ય કરના ચાહિયે। વે લોગ હનકી પૂજા કરતે હેં। હસ પ્રકાર આઠ કા ચાર કે સાથ ગુણાકાર કરને પર (૩૨) વત્તીસ ભેદ હોતે હેં।

ઉત્પત્તિના ચાર વિકલ્પ સત્ત્વ, અસત્ત્વ, સદસત્ત્વ અને અવાચ્યત્વને ઉમેરી દેવાથી સડસઠ ભેદ થઈ જાય છે જેમ કે-જીવ સત્ત્ છે એ કોણ જાણે છે, જીવ અસત્ત્ છે કોણ જાણે છે ! વગેરે એવી જ રીતે કોણ જાણે છે કે સત્ત્ની ઉત્પત્તિ થાય છે, અસત્ત્ની ઉત્પત્તિ થાય છે, સદસત્ત્ની ઉત્પત્તિ થાય છે અથવા અવાચ્યની ઉત્પત્તિ થાય છે ?

વૈનયિકોના બત્રીસ ભેદ છે. તેમની માન્યતા એવી છે કે કાયાથી, વચનથી, મનથી અને દાનથી એ રીતે ચાર પ્રકારથી (૧) સુર (૨) નૃપતિ (૩) મુનિ (૪) જ્ઞાનિ (૫) સ્થવિર-વૃદ્ધ (૬) અધમ (૭) માતા અને (૮) પિતા આ આઠની વિનયવૈયાવૃત્ય કરવા જોઈએ. તે લોકો એમની પૂજા કરે છે. આ રીતે આઠનો ચાર સાથે ગુણાકાર કરવાથી (૩૨) બત્રીસ ભેદ થાય છે.

પરિપૂર્ણાઽભિજનાદિપુ-આરોગ્યતાયુક્તં જન્મસમ્પન્નમિત્યેવં પર્યાપ્તમ્, इति भावनया सर्वं देवतासु-सर्वपाखण्डिपु च तुर्यत्व-मुदासीनत्वं च भावयति इत्येवं रूपो बोध्यः । एतेषाञ्चाऽऽत्माऽस्तित्वक्रियावादिनाऽस्तित्वाऽक्रियावादिना माज्ञानिकानाञ्च प्रशंसा, यथा=पुण्यशालिनः खल्वेते सत्यसन्धानाः सन्मार्गदर्शन निपुणाः सन्ति, यथा-‘एतेषां जन्मसफलम्’ इत्यादि । संस्तवश्च-तैः सहैकत्र वा सात परस्परऽऽलाप संलापादिजातः परिचयः, एकत्र संवासे तेषां प्रक्रियाश्रवणात् क्रियादिदर्शनाच्चाऽमंहार्यमतेरपि जनस्य दृष्टिर्विचारभेदो भवति ।

અનભિગૃહીત મિથ્યાદૃષ્ટિ એસી ભાવના કરતે હૈં કિ-સંસાર સમ્બન્ધી વિષય ભોગ કે સુખ મેં તત્પર પુરુષોં કે લિખે મોક્ષ કા સુખ વ્યર્થ હૈ । ઉત્તમ એશ્વર્ય એવં સમ્પત્તિ સે પરિપૂર્ણ અભિજનોં મેં આરોગ્યતા સે યુક્ત જન્મ મિલ જાના હી પર્યાપ્ત હૈ । હસ પ્રકાર કી ભાવના કે કારણ વે સભી દેવતાઓં ઓર સભી વ્રતધારિયોં મેં સમાન ભાવ એવં ઉદાસીનતા રાખતે હૈં ।

હસ પ્રકાર આત્મા કા અસ્તિત્વ માનને વાલે ક્રિયાવાદિયોં કી, આત્મા કા અસ્તિત્વ નહીં માનને વાલે અક્રિયાવાદિયોં કી તથા અજ્ઞાન વાદિયોં કી પ્રશંસા કરના પરપાષણ્ડ પ્રશંસા હૈ, જૈસે-‘યે પુણ્યશાલી હૈ, યે સત્યપ્રતિજ્ઞ હૈ, યે સન્માર્ગ દિશવાને મેં નિપુણ હૈ, હનકા જન્મ સાર્થક હૈ, इत्यादि ।

उनके साथ-साथ एक स्थान पर निवास करने से तथा परस्पर में वार्त्तालाप करने से होने वाला परिचय संस्तव कहलाता है । एक साथ

અનભિગૃહીત મિથ્યાદૃષ્ટિ એવી ભાવના ભાવે છે કે-સંસાર સમ્બન્ધી વિષયભોગના સુખમાં રચ્યાપચ્યા રહેનાર પુરુષો માટે મોક્ષનું સુખ વ્યર્થ છે. ઉત્તમ એશ્વર્ય અને સમ્પત્તિથી પરિપૂર્ણ અભિજનોમાં આરોગ્યતાથી યુક્ત જન્મ પ્રાપ્ત થાય એટલું જ પુરતું છે. આ પ્રકારની ભાવનાના કારણો તે સઘળાં દેવતાઓ અને બધાં વ્રતધારીઓમાં સમાન ભાવ અને ઉદાસીનતા રાખે છે.

આવી રીતે આત્માનું અસ્તિત્વ માનનારા ક્રિયાવાદિઓની આત્માનું અસ્તિત્વ નહીં માનનારા અક્રિયાદિઓની તથા અજ્ઞાનવાદિઓની પ્રશંસા કરવી પરપાષંડપ્રશંસા છે, જેમ કે-‘આ પુણ્યશાળી છે, આ સત્યપ્રતિજ્ઞ છે આ સન્માર્ગ બતાવવામાં પ્રવીણ છે, એમનો જન્મ સાર્થક છે’ વગેરે.

તેમની સાથે-સાથે એક સ્થાને નિવાસ કરવાથી તથા પરસ્પરમાં વાર્તાલાપ કરવાથી થનારો પરિચય સંસ્તવ કહેવાય છે. એક સાથે નિવાસ કરવાથી

संहार्यमतेस्तु कथैवका ? तस्मात् तीर्थकृद्भिर्भगवद्भिः पार्श्वस्थादि यथाछन्दि-
कैरपि सह सहवासो निषिद्धः, तैः सहैकरात्रमप्येकत्र वासेन सम्यग्दृष्टेः परि-
त्यागो भवति, अतएव-कुतीर्थिकानां प्रशंसा-संस्तवौ सम्यग्दृष्टेर्मालिन्यहेतु
त्वात्-भ्रंशहेतुत्वाद्वाऽतिचारौ बोधौ । उक्तश्चोपासकदशाङ्गे-१ अध्ययने-
'सम्मत्तस्स पंच अइयारा पेयाला जणियव्वा न समायरियव्वा' तं जहा-
संका-कंखा-चित्तिगिच्छा, परपासंडपसंसा, परपासंडसंस्तवो' इति ।
सम्यक्त्वस्य पञ्चातिचाराः प्रधाना ज्ञ तव्याः न समाचरिष्यन्त्याः, तद्यथा-शङ्का-
काङ्क्षा-२ विचिकित्सा-३ परपाषण्डप्रशंसा४ परपाषण्डसंस्तवः५ इति ॥४०॥

निवास करने से, उनकी प्रक्रिया को सुनने से और क्रिया को देखने
से अविचल बुद्धि वाले जन को दृष्टि और विचार में भेद उत्पन्न हो
जाता है । जिनकी बुद्धि अस्थिर है उनका तो कहना ही क्या है ? इसी
कारण भगवान् तीर्थंकर ने पार्श्वस्थो (शिथिलाचारियों) और स्वच्छन्दा
चारियों के साथ सहवास का निषेध किया है । ऐसों के साथ एक
रात्रि भी निवास करने से सम्यग्दृष्टि का परित्याग हो जाता है ।
अतएव कुतीर्थिकों की प्रशंसा करना और उनके साथ परिचय करना
सम्यग्दर्शन की मलीनता का कारण है-भ्रष्टता का कारण है, इसी से
इन दोनों को अतिचार कहा है । उपासकदशांग सूत्र में प्रथम अध्य-
यन में कहा है-'सम्यक्त्व के पांच प्रधान अतिचार जानने चाहिए
किन्तु उनका आचरण नहीं करना चाहिए । वे यों हैं शंका, कांक्षा,
विचिकित्सा, परपाषण्ड प्रशंसा और परपाषण्ड संस्तव ॥४०॥

तथा परस्परमां वार्तालाप करवाथी थनारे परिचय संस्तव कडेवाय छे. ओक
साथे निवास करवाथी, तेमनी प्रक्रियओने सांलणवाथी अने क्रियाओने
जेवाथी अविचल बुद्धिवाणा पुइषनी दृष्टि तेमज विचारमां लेद उत्पन्न थछ
जय छे. जेमनी बुद्धि अस्थिर छे तेमनुं तो कडेबुं जशुं ? आ कारणे ज
भगवान् तीर्थंकरे पार्श्वस्थो (शिथिलाचारियो) तेमज स्वच्छन्दाचारियोनी
साथेना सहवासने निषेध कयो छे. जेवानी साथे ओक रात्रि पण सहवास
करवाथी सम्यग्दृष्टि यावी जय छे आथी कुतीर्थिकोनी प्रशंसा करवी अने
तेमनी साथे परिचय करवे। सम्यग्दर्शननी मलीनतानु कारण छे-भ्रष्टतानुं
कारण छे आ माटे ज ओ जनेने अतिचार कडेवामां आया छे उपासक-
दशांगसूत्रना प्रथम अध्ययनमां कहुं छे-'सम्यक्त्वना पांच मुख्य अतिचार
जणवा जेछओ. ते आ मुख्य छे-शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, परपाषण्डप्रशंसा
अने परपाषण्डसंस्तव. ॥४०॥

મૂલમ્—પદમસ્સ અણુવ્વયસ્સ વંધ-વદ્-છવિચ્છેયાહયા પંચ
અહયારા ॥૪૧॥

છાયા—પ્રથમસ્યાડણુવ્રતસ્ય વન્ધ વધ- છવિચ્છેદાદિકાઃ પશ્ચાત્તિચારાઃ ॥૪૧॥
તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાવત્ સમ્યક્ત્વસ્ય શંકા-કાંક્ષા-વિચિકિત્સા-પર-
પાષણ્ડપ્રશંસા સંસ્તવ રૂપ પશ્ચાત્તિચારસ્વરૂપં નિરૂપિતમ્, સમ્પત્તિ-અતિચાર-
મસ્તાવાત્ પશ્ચાણુવ્રતનાં દિગ્વ્રતનાં ચાડતિચારાન્ ક્રમશઃ પશ્ચ-પ ઞ્ચ પ્રરૂપયિતુ-
માદ્-‘પદમસ્સ’ ૦’ इत्यादि । प्रथमस्या-हिंसा लक्षणस्याऽणुव्रतस्य शतः स्थूल
प्राणातिपातविरमणरूपस्य वन्ध-वध छविच्छेदादिकाः तत्र-वन्धः स्वाभिमत-
देशगतिनिरोधरूपः गाढबन्धनं वा ? वधः-कशादण्डवेत्रादिभिः प्राणिनामभिघात

‘પદમસ્સ અણુવ્વયસ્સ’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—પ્રથમ અણુવ્રત કે વંધ, વધ, છવિચ્છેદ આદિ પાંચ
અતિચાર છે ॥૪૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે મેં સમ્યક્ત્વ કે શંકા, કાંક્ષા, વિચિકિત્સા,
પરપાષણ્ડપ્રશંસા ઓર પરપાષણ્ડસંસ્તવ, इन पांच अनिचारों का स्वरूप
निरूपण किया गया अतिचार का प्रकरण होने से पांच अणुव्रतों
तथा दिग्व्रत आदि सात शिक्षव्रतों के पांच-पांच अतिचारों का
क्रमशः प्ररूपण करते हैं—

અહિંસા जिसका लक्षण है और स्थूल प्राणातिपात विरमण
जिसका स्वरूप है, ऐसे प्रथम व्रत के पांच अतिचार हैं—वन्ध, वध,
छविच्छेद आदि । दृष्ट देश में गमन का निरोध या गाढा बन्धन बन्ध
कहलाना है । कोड़ा, दंड, वेत आदि से प्राणियों को आघात करना

‘પદમસ્સ અણુવ્વયસ્સ વંધ-વદ્-છવિચ્છેયાહયા પંચ અહયારા’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—પ્રથમ આણુવ્રતના વંધ, વધ, છવિચ્છેદ આદિ પાંચ
અતિચાર છે. ॥૪૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં સમ્યક્ત્વના શંકા, કાંક્ષા, વિચિકિત્સા,
પરપાષણ્ડપ્રશંસા અને પરપાષણ્ડસંસ્તવ એ પાંચ અતિચારોના સ્વરૂપનું નિરૂ-
પણ કરવામાં આવ્યું હવે અતિચારનું પ્રકરણ હોવાથી પાંચ આણુવ્રતો તથા
દિગ્વ્રતો આદિ ૭ (સાત) શિક્ષાવ્રતોનાં પાંચ-પાંચ અતિચારોનું ક્રમશઃ
પ્રરૂપણ કરીએ છીએ—

અહિંસા જેનું લક્ષણ છે અને સ્થૂળપ્રાણાતિપાત વિરમણ જેનું સ્વરૂપ
છે એવા પ્રથમ વ્રતના પાંચ અતિચાર છે—વન્ધ, વધ, છવિચ્છેદ આદિ દ્રષ્ટ
દેશમાં ગમનનો નિરોધ અથવા ગાઢ બન્ધન ‘બન્ધ’ કહેવાય છે આળૂક,
લાડી, સેંટી વગેરેથી પ્રાણીઓને આઘાત કરવો વધ છે—પ્રાણીનો નાશ નહીં,

रूपः, नतु-प्राणव्यपरोपणम्, तस्मात् पूर्वमेवाऽणुव्रतिनो निवृत्तत्वात् २ । छवि-
च्छेदः-नासिकाग्र-कर्णाग्रादिरूपावयवानां छेदनेन शरीरसौन्दर्यविशेषापनयन
रूपः-३ आदिपदेनाऽतिभारः ४ भक्त पानव्यच्छेदः-५ अनयोर्ग्रहणम्, तत्रा-
तिभारः न्यायोचितवाहनवहनयोग्यभारातिरिक्त भारारोपणरूपः (४) भक्त पान
व्यवच्छेदश्च-गोमहिषादि पशुप्रभृति प्राणिनां क्षुत्पिपासा जन्यवाधा सम्पादनरूपः
(५) इत्येते पञ्चातिचारा अहिंसा लक्षण प्रथमाणुव्रतस्य भ्रंशहेतवो भवन्ति ॥४१॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वसूत्रे खलु-शङ्का कांक्षा विचिकित्सा परपापण्डप्रशंसा
संस्तवरूपाः पञ्च सम्यक्त्वस्याऽतिचाराः प्रदर्शिताः, सम्प्रति तावत् अतिचार
वध है-प्राणों का नाश करना नहीं, क्यों कि अणुव्रती उससे पहले
ही निवृत्त हो जाता है । (प्राणातिपात से व्रत का सर्वथा भंग हो जाता
है और सर्वथा भंग हो जाना अतिचार नहीं किन्तु अनाचार है ।)
नाक या कान का अग्रभाग या अन्य किसी अवयव का छेदन करके
शरीर की सुन्दरता नष्ट करना छविच्छेद है । 'आदि' शब्द से अति-
भारारोपण और भक्तपानव्यवच्छेद ग्रहण करना चाहिए । जो जितना
भार वहन करने में समर्थ है, उस पर उससे अधिक भार लाद देना
अतिभारारोपण कहलाता है । गाय, भैंस आदि प्राणियों को यथो-
चित अन्न-पानी न दे कर उन्हें भूख-प्यास का कष्ट पहुँचाना भक्त-
पानव्यवच्छेद कहलाता है । यह अहिंसा लक्षण प्रथम अणुव्रत के पांच
अतिचार हैं । इनके सेवन से अहिंसाणुव्रत आंशिक रूप से खंडित
हो जाता है ॥४१॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पूर्वसूत्र में सम्यक्त्व के शंका, कांक्षा, विचि-

कारण के अणुव्रती आनी पहुँचा न निवृत्त થઈ જાય છે (પ્રાણાતિપાતથી
વ્રતનો સર્વથા ભંગ થઈ જાય છે અને સર્વથા ભંગ થઈ જવો અતિચાર
નહીં પણ અનાચાર છે) નાક અથવા કાનનો અગ્રભાગ અથવા અન્ય કોઈ
અવયવનું છેદન કરીને શરીરના સૌન્દર્યને નષ્ટ કરવું છવિચ્છેદ છે. 'આદિ'
શબ્દથી અતિભારારોપણ અને ભક્તપાનવ્યવચ્છેદ ગ્રહણ કરવા જોઈએ. જે
જેટલો ભાર વહન કરવા માટે સમર્થ છે તેમની ઉપર તેથી અધિક ભાર
લાદી દેવો અતિભારારોપણ કહેવાય છે. ગાય, ભેંસ આદિ પ્રાણિઓને યોગ્ય
પ્રમાણમાં અનાજ પાણી નહીં આપીને તેમને ભૂખ-તરસનું કષ્ટ પહોંચાડવું
ભક્તપાનવ્યવચ્છેદ કહેવાય છે. આ અહિંસા લક્ષણ પ્રથમ અણુવ્રતનાં પાંચ અતિ-
ચાર છે. એમના સેવનથી અહિંસાણુવ્રત આંશિકરૂપથી ખંડિત થઈ જાય છે. ॥૪૧॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પૂર્વસૂત્રમાં સમ્યક્ત્વના શંકા, કાંક્ષા, વિચિકિત્સા,

પ્રસ્તાવાત્ સ્થૂલ પ્રાણાતિપાતાદિ વિરમણલક્ષણપશ્ચાન્નુવ્રતેષુ—દિગ્વ્રતાદિલક્ષણસપ્ત-
શિક્ષાવ્રતેષુ ચ પશ્ચ-પશ્ચાતિચારાન્ ક્રમશઃ પ્રરૂપયિતું પ્રથમં દેશતો હિંસાલક્ષણસ્ય
પ્રથમસ્યા ડણુવ્રતસ્ય પશ્ચાતિચારાન્ પ્રરૂપયતિ—‘પઠમસ્સ અણુવ્વયસ્સ વંધ વહ
છવિચ્છેદ્યાદ્યા પંચ અહચારા’ इति । પ્રથમસ્ય સ્થૂલ પ્રાણાતિપાતવિરમણ
લક્ષણસ્યા ડણુવ્રતસ્ય વન્ધ વધ છવિચ્છેદાદિકાઃ તત્ર—વન્ધઃ રજ્જુપ્રમૃતિર્ભિર્વન્ધનમ્,
વધઃ—કશાયષ્ટિપ્રમૃતિર્ભિરભિઘાત સ્તાડનમ્, છવિચ્છેદઃ—છવેઃ શરીરકાન્તિ
સૌદર્યનાશાર્થ નાસિકા કર્ણાદીનાં શરીરાવયવાનાં છેદનમ્, આદિના ડતિમારારોપણં
મક્તપાનવ્યવચ્છેદશ્ચ પરિગૃહ્યતે, इत्येते पञ्च स्थूलप्राणातिपातविरमणलक्षणस्य
प्रथमाणुव्रतस्याऽतिचारा अंशहेतवो भवन्तीति बोध्यम् । उक्तञ्चोपासकदशज्ञै
प्रथमाऽध्ययनै—‘स्थूलस्स प्राणाहवायवेरमणस्स समणोवासएणं पंच अह-

કિરણા, પરપાષણ્ડપ્રશંસા ઓર પરપાષણ્ડસંસ્તવ અતિચાર પ્રતિપાદન
ક્રિયે ગયે હિં । અતિચાર કા પ્રકરણ હોને સે અવ સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત
આદિ કે તથા દિગ્વ્રત આદિ કે પાંચ-પાંચ અતિચારોં કી પ્રરૂપણા
કરતે હિં । સર્વ પ્રથમ એકદેશ અહિંસાહ્ય પ્રથમ અણુવ્રત કે પાંચ
અતિચાર કહેતે હિં—

પ્રથમ અણુવ્રત કે વંધ, વધ, છવિચ્છેદ આદિ પાંચ અતિચાર હિં ।
उनमें से रहसी आदि से बांधना बन्ध कहलाता है । चातुर्ग, लकड़ी
आदि से पीटता वध कहलाता है और शरीर की सुन्दरता को नष्ट
करने के लिए नाक कान आदि शरीर के अवयवों का छेदन करना
छविच्छेद कहलाता है । ‘आदि’ शब्द से अतिभारारोपण और भक्त-
पानव्यवच्छेद का ग्रहण होता है । ये पांच स्थूल प्राणातिपात विरमण
नामक प्रथम अणुव्रत के अतिचार हैं और उसके एक देश भंग
के कारण होते हैं ।

પરપાષંડપ્રશંસા અને પરપાષંડ સંસ્તવ અતિચાર પ્રતિપાદિત કરવામાં આવ્યા.
અતિચારનું આ પ્રકરણ હોવાથી હવે સ્થૂળપ્રાણાતિપાત વગેરેના તથા દિગ્-
વ્રત આદિના પચ-પાંચ અતિચારોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ. સર્વપ્રથમ એક
દેશ અહિંસારૂપ પ્રથમ આણુવ્રતના પાંચ અતિચાર કહીએ છીએ—

પ્રથમ આણુવ્રતના બધ, વધ, છવિચ્છેદ આદિ પાંચ અતિચાર છે. તેમાંથી
દોરડા વગેરેથી બધવું બન્ધ કહેવાય છે ચાળૂક, લાકડી વગેરેથી મારવું
વધ કહેવાય છે અને શરીરની સુંદરતાને નાશ કરવા માટે નાક કાન આદિ
શરીરના અવયવોનું છેદન કરવું છવિચ્છેદ કહેવાય છે. ‘આદિ’ શબ્દથી
અતિભારારોપણ અને ભક્તપાનવ્યવચ્છેદનું ગ્રહણ થાય છે. આ પાંચ સ્થૂળ-
પ્રાણાતિપાત વિરમણ નામના પ્રથમ આણુવ્રતના અતિચાર છે અને તેના એક
દેશભંગના કારણ હોય છે.

यारा पेयाला जाणिघव्वा न समायरियव्वा तं जंहा-बंध-वहेच्छविच्छेए
अहभारे भक्तपानवोच्छेए' इति स्थूलस्य प्राणातिपातविरमणस्य श्रमणो-
पासकेन पञ्चातिचाराः प्रधानाः ज्ञातव्याः, तद्यथा-बन्धोवध छविच्छेदः अति
भारः, भक्तपानव्युच्छेदः इति ॥४१॥

मूलम्-वीयस्स अणुव्वयस्स सहस्रम्भक्खाणाइया पंच अइयारा ॥४२॥

छाया-द्वितीयस्याऽणुव्रतस्य सहस्राभ्याख्यानादिकाः पञ्चातिचाराः ॥४२॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वसूत्रे-स्थूलप्राणातिपातविरतिलक्षणं प्रथमाणुव्रतस्य
बन्ध वधच्छविच्छेदातिभारभक्तपानव्युच्छेदरूपाः पञ्चातिचाराः प्ररूपिताः,

उपासकदशांग के प्रथम अध्ययन में कहा है-श्रमणोपासक को
स्थूल प्राणातिपात विरमणव्रत के पांच प्रधान अतिचार जानने चाहिए,
किन्तु उनका आचरण नहीं करना चाहिए । वे अतिचार ये हैं-बन्ध,
वध, छविच्छेद, अतिभार और भक्तपान विच्छेद । किसी के ऊपर
उसकी शक्ति से अधिक भार लाद देना अतिभार या अति भारा-
रोपण नामक अतिचार है और अपने अधीन जीव को समय
पर भोजन-पानी न देना भक्तपानविच्छेद अतिचार है ॥४१॥

‘वीयस्स अणुव्वयस्स’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ-दूसरे अणुव्रत के सहस्राभ्याख्यान आदि पांच अतिचार हैं ॥४२॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वसूत्र में स्थूल प्राणातिपातविरतिरूप प्रथम
अणुव्रत के बन्ध, वध, छविच्छेद, अतिभार और भक्तपान विच्छेद,
ये पांच अतिचार प्रतिपादन किये गए, अब दूसरे अणुव्रत के सहस्रा-

उपासकदशांगना प्रथम अध्ययनમાં કહ્યું છે-શ્રમણોપાસકે સ્થૂળપ્રાણાતિ-
પાત વિરમણના પાંચ મુખ્ય અતિચાર જાણવા જોઈ એ પરંતુ તેનું આચરણ કરવું
જોઈ એ નહીં. આ અતિચાર આ પ્રમાણે છે-બન્ધ, વધ, છવિચ્છેદ, અતિભાર
અને ભક્તપાનવિચ્છેદ કોઈની ઉપર તેની શક્તિથી વધારે બોલે લાદવો અતિભાર
અથવા અતિભારારોપણ નામક અતિચાર છે અને પોત ના તાબા હેઠળના જીવને
વખત થયે ભોજન-પાણી ન આપવા ભક્તપાનવિચ્છેદ અતિચાર છે. ॥૪૧॥

‘વીયરસ અણુવ્વયસ્સ સહસ્સમ્ભક્ખાણાઇયા પંચ અઇયારા’ ઇત્યદિ

સૂત્રર્થ-બીજા અણુવ્રતના સહસ્રાભ્યાખ્યાન આદિ પાંચ અતિચાર છે ॥૪૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્રમાં સ્થૂળપ્રાણાતિપાત વિરતિ રૂપ અણુવ્રતના
બન્ધ, વધ, છવિચ્છેદ, અતિભાર અને ભક્તપાનવિચ્છેદ, એ પાંચ અતિચારોનું

સમ્પત્તિ—દ્વિતીયસ્યા ડણુત્રત્ત્વસ્ય સહસાભ્યાખ્યાનાદિ પશ્ચાત્તિચારાન્ પ્રતિપાદયિતુ
માહ—‘વીયસ્ક અણુવ્યયસ્સ સહસમ્ભવજ્ઞાનાદ્યા પંચ અધ્યારા’ इति । द्वितीयस्या-
ડणुत्रत્ત્વस्य सहसाभ्याख्यानादिकाः पश्चात्तिचाराः—स्थूलमृषावादविरतिलक्षणस्य
द्वितीयाणुत्रत્त्वस्य सहसाभ्याख्यानादिकाः पश्चात्तिचारा भवन्ति, आदिशब्देन-
रहस्याभ्यान-स्वदारमन्त्रभेद-मृषोपदेश-कूटलेखकरणानां ग्रहणं भवति । तत्र-
सहसाभ्याख्यानम्-अटित्यावेशवशाद्विचारमकृत्वा—कस्यचिदुपरि मिथ्यादोषारोप-
णम्, यथा—‘त्वं चौरः— इयं डाकिनी’ इत्यादिरूपकम्—१ रहस्याभ्याख्यानम्-
रइसि—एकान्तं भवं रहस्यं तस्मिन्नाभ्याख्यानं—मिथ्याभियोगो रहस्याभ्याख्यानम्
—२ स्वदारमन्त्रभेदः—स्वस्य दाराः पत्नीस्वदारास्तेषां मन्त्रो विसृज्यमापणं तस्य
भेदः परस्मै कथनम् ३ मृषोपदेशः—मृषा—मिथ्यात्वस्य य उपदेशः ऐहिकामुष्मिका-

અભ્યાખ્યાન આદિ પાંચ અતિચારો’ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—સ્થૂલમૃષાવાદ
વિરમણ નામક દૂનરે અણુત્રત્ત્વ કે સહસાભ્યાખ્યાન આદિ પાંચ અતિચાર
હોતે હૈં । ‘આદિ’ શબ્દ સે રહસ્યાભ્યાખ્યાન, સ્વદારમંત્રભેદ, મૃષોપદેશ
ઔર કૂટલેખકરણ નામક અતિચારો’ કો ગ્રહણ કરના યાહિયે ।

આવેશ કે વશીભૂત હોકર વિચાર કિયે વિના હી જાટપટ કિસી
કે ઉપર મિથ્યાદોષારોપણ કર દેના સહસાભ્યાખ્યાન કહ-
લાતા હૈ, જૈસે-તૂ ચોર હૈ, યહ ડાકિની હૈ, इत्यादि । रहस्य अर्थात्
एकान्त यें जो हो वह रहस्य कहलाता है । उसमें मिथ्या अभियोग
करना रहस्याभ्याख्यान है । अपनी पत्नी ने विश्वास करके जो कहा
हो उसे दूसरे पर प्रष्ट कर देना स्वदारमन्त्र भेद है । मिथ्या उपदेश

અણુત્રત્ત્વ કરવામાં આવ્યું, હવે બીજા અણુત્રત્ત્વના સહસાભ્યાખ્યાન આદિ પાંચ
અતિચારોની પ્રરૂપણા કરીએ છું.એ—

સ્થૂળમૃષાવાદ વિરમણ નામક બીજા અણુત્રત્ત્વના સહસાભ્યાખ્યાન આદિ
પાંચ અતિચાર હોય છે ‘આદિ’ શબ્દથી રહસ્ય અભ્યાખ્યાન, સ્વદારમંત્રભેદ,
મૃષોપદેશ અને કૂટલેખકરણ નામના અતિચારોનું અહીં કરવું જોઈએ.

આવેશને વશીભૂત થઈને વગર વિચાર કયે જ એકદમ કોઈની ઉપર
મિથ્યાદોષારોપણ કરી નાખવું સહસાભ્યાખ્યાન કહેવાય છે જેમ કે-તૂ ચોર
છે, આ ડાકણ છે વગેરે રહસ્ય અર્થાત્ એકાન્તમાં જે થાય તે રહસ્ય કહેવાય
છે તેમાં મિથ્યા અભિયોગ કરવો રહસ્યાભ્યાખ્યાન છે. પોતાની પત્નીએ
વિશ્વાસ રાખીને જે કહ્યું હોય તે અન્ય પસે જાહેર કરી દેવું સ્વદાર-
મંત્રભેદ કહેવાય છે મિથ્યાઉપદેશ આપવો મૃષોપદેશ છે અર્થાત્ આ લોક

अभ्युदयनिःश्रेयसविषये सन्दिहानजनपृष्ठेन तत्त्वार्थमजानतार्हिवादिसम्पृक्तम्, विपरीतोपदेशदानं-मृषोपदेशः ४ कूटलेखकरणम् कूटम्-असद्भूतं वस्तु तस्य लेखः तद्रूपा क्रिया कूटलेखक्रिया-परवञ्चनार्थं मन्यदीयमुद्राङ्कित लिपेः कुकृत्यलेखनम् ५ न्यासापहारलेखनं च । इत्येते सहस्राभ्याख्यानादिकाः पञ्च स्थूल मृषावाद-विरमणलक्षण द्वितीयाणुव्रतस्याऽतिचारा ज्ञातव्या न समाचरितव्याः ॥४२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वं तावद्-देशतोऽहिंसा लक्षणमथमाणुव्रतस्य बन्धवधा-दयः पञ्चातिचाराः प्ररूपिताः, सम्प्रति-क्रमप्राप्तस्य स्थूलमृषावादविरमण लक्षण द्वितीयाणुव्रतस्य सहस्राभ्याख्यानादीन् पञ्चातिचारान् प्ररूपयितुमाह-

देना मृषोपदेश है अर्थात् इस लोक संबंधी अभ्युदय या परलोक संबंधी मोक्ष आदि के विषय में सन्देहशील किसी पुरुष के पूछने पर, तत्त्वार्थ को जानते हुए भी हिंसायुक्त विपरीत उपदेश देना मृषोपदेश है । असद्भूत तथ्य का लेखन करना अर्थात् दूसरों को धोखा देने के लिए अन्य मोहर आदि से युक्त लीपिका अनुकरण करना या झूठे दस्तावेज वहीखाते आदि लिखना कूट लेखकरण कह लाता है । किसी की धरोहर का अपहरण कर लेना न्यासापहार है । यह सहस्राभ्याख्यान आदि स्थूल मृषावाद विरमणव्रत के पांच अति-चार जानने चाहिए पर इनका आचरण नहीं करना चाहिए ॥४२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—एकदेश हिंसात्याग रूप प्रथम अणुव्रत के पांच अतिचारों का प्ररूपण पहले किया गया है । अब क्रम प्राप्त स्थूल मृषावाद विरमण नामक दूसरे अणुव्रत के सहस्राभ्याख्यान आदि

संबंधी अभ्युदय अथवा परलोक संबंधी मोक्ष वगैरेना विषयमां शकाशील कोष्ठ पुरुषना पूछनाथी, तत्त्वार्थने न जानुना देवा छतां पणु हिंसायुक्त विपरीत उपदेश आपदे ओ मृषोपदेश छे. असद्भूत सत्यनुं लेखन करवुं अर्थात् भीजने छेतरवा मटे भीजनी मोहर वगैरेथी युक्त लीपितुं अनुकरण करवुं अथवा जोटा दस्तावेज आतावडी वगैरे लेखना कूटलेखकरण कडेवाय छे कोठनी थापणु जोणवपी न्यासापहार छे. सहस्राभ्याख्यान आदि स्थूल मृषावाद विरमण व्रतना आ पांच अतिचार जानुव येज्य छे परन्तु आचरवा येज्य नथी. ॥४२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—एकदेश हिंसात्याग रूप प्रथम अणुव्रतना पांच अतिचारानुं प्ररूपण पहले करवामां आयुं छे. छेवे क्रम प्राप्त स्थूलमृषावाद विरमण नामना भीज अणुव्रतना सहस्राभ्याख्यान आदि पांच अनिचारानी

‘ધીયસ્ય અણુવચસ્ય સહસ્રાભ્યાખ્યાનાશ્ચ પાંચ અટ્યારા’ ઇતિ । દ્વિતી-
યસ્ય મૃગાવાદવિરતિલક્ષણસ્યાઽણુવચસ્ય સહસ્રાભ્યાખ્યાનાદિકાઃ-મૃગોપદેશો-
ઽમદુપદેશઃ પરેણાન્યસ્ય છલનમ્, સ્વયં વાઽન્યસ્ય છલનમ્, અતિસન્ધાનમ્. તતો
વિરતિ લક્ષણાણુવચસ્ય સહસ્રાભ્યાખ્યાનમ્, વિચારમકુર્વાણઃ સહસ્રાવેશવશાત્સ્ય
ચિદુપરે મિથ્યાદોષારોપણમ્ ? આદિના-રહસ્યાભ્યાખ્યાનમ્, રહસ્યેકાન્તે
ભવં રહસ્યમ્-તસ્યાભ્યાખ્યાનમ્ અપિતઃ પ્રકાશનમ્, રહસ્યેવાઽભ્યાખ્યાનમ્,
અમદધ્યારોપણમ્ ? સ્વદારમન્ત્રભેદઃ સ્વસ્ય દારાઃ પત્ની તેષાં મન્ત્રો વિશ્રમ્ભાલાપઃ
તસ્ય ભેદઃ પરસ્મૈ કથનમ્ ૨ મૃગોપદેશશ્ચ-નાનાવિધઃ સમ્ભવતિ, યથા-મમત્તસ્ય
પરપીડાજનનચ્ચનમ્, વાહ્યન્તાં સ્વરોષ્ટ્રાઃ, હન્યન્તાં દમ્યુર્ચીરાઃ ઇત્યાદિ, અયથાર્થો
પદેગચ્ચનમ્-યથા-સન્દેહાપન્નેન કેનચિત્-જીવાદિતત્ત્વસ્વરૂપં પાટઃ સન્

પાંચ અતિચારોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

દૂસરે અણુવચન કે સહસ્રાભ્યાખ્યાન આદિ પાંચ અતિચાર હૈ ।
મૃગોપદેશ અર્થાત્ અસત્ય ઉપદેશ, પર કે દ્વારા દૂસરે કો છલના યા
સ્વયં દૂસરોં કો છલના । મૃગોપદેશ સે વિરત હોના જિસકા લક્ષણ હૈ,
એસે દ્વિતીય અણુવચન કે સહસ્રાભ્યાખ્યાન આદિ પાંચ અતિચાર હૈ ।

વિચાર કિયે વિના હી, આવેશ કે અધીન હોકર ઇકદમ કિસી
પર મિથ્યાદોષારોપણ કર દેના સહસ્રાભ્યાખ્યાન કહલાતા હૈ । કિસી
કે રહસ્ય કો અર્થાત્ ગુપ્ત વાત કો પ્રકાશિત કર દેના રહસ્યાભ્યા-
ખ્યાન હૈ । અપની પત્ની કી વિશ્વાસ પૂર્વક કહી દુર્દ ગુપ્ત વાત કો
દૂસરોં કો જાહિર કર દેના સ્વદારમન્ત્ર ભેદ હૈ । મૃગોપદેશ અનેક
પ્રકાર કા હો સકના હૈ, જૈસે-કિસી ને સંદેહ કે વશીભૂત હોકર

પ્રરૂપણા કરીએ છીએ—

બીજા અણુવચનના સહસ્રાભ્યાખ્યાન આદિ પાંચ અતિચાર છે. મૃગોપદેશ
અર્થાત્ અસત્ય ઉપદેશ બીજા દ્વારા દેાઇને છેતરવો અથવા બોલે જ બીજાને
છેતરવો. મૃગોપદેશથી વિરત થવું જેવું લક્ષણ છે એવા બીજા અણુવચનના
સહસ્રાભ્યાખ્યાન આદિ પાંચ અતિચાર છે.

વિચાર કર્યા વગર જ, આવેશને તાણે થઇને એકદમ કોઈ ઉપર
મિથ્યાદોષારોપણ કરી નાખવું સહસ્રાભ્યાખ્યાન કહેવાય છે કે ઇતિ. રહસ્યને
અર્થાત્ છાની વાતને બહાર કરી દેવું રહસ્યાભ્યાખ્યાન છે. પોતાની પત્નીની
વિશ્વાસપૂર્વક કહેવામાં આવેલી ગુપ્ત વાતને બીજા આગળ બહાર કરી દેવી
સ્વદારમન્ત્રભેદ કહેવાય છે. મૃગોપદેશ અનેક પ્રકારના હોઇ શકે છે જેમ કે-
કોઈએ સંદેહને વશીભૂત થઇને કોઈ જીવાદિના વિષયમાં પ્રશ્ન કર્યો, પરંતુ

કશ્ચિન્નયથાર્થતયા પ્રતિપાદયતિ, અપિતુ-અયથાર્થતયૈવૈતિ તદ્વચનમપિ મૃષો-
પદેશઃ ૧ એવં-વિવાદરૂપકલહે સતિ તત્રાઽન્યત્રાઽન્યતરસ્ય છલનોપદેશવચનં
મૃષોપદેશઃ ૧ એવં-દ્યુતાદિ વિષયકચ્છલનવચનાદ્યપિ મૃષોપદેશગ્રહણેન પ્રદીત-
વ્યમ્ ૪ કૂટલેખકરણમ્-કૂટલેખક્રિયા કૂટસ્યાઽસદ્ભૂતરય લેખકરણમ્ અન્ય
મુદ્રાક્ષરાકારસ્વરૂપલેખકરણમ્ ન્યાસાપહારલેખનં ચ, તત્ર-ન્યાસાપહારઃ ન્યસ્યતે
-સ્થાપ્યતે પુનર્ગ્રહણાયેતિ ન્યાસઃ સ્થાપિતરૂપ્યકથનાદિઃ તસ્ય પુનરાદાનાય સ્થાપિ-
તસ્ય રૂપ્યકાદેરપલાપકં વચનં ન્યાસાપહારઃ યેન વચનેન કરણભૂતેન ન્યાસોઽપહિ-
યતેઽપલપ્યતે તદ્વચનં ન્યાસાપહાર इत्यर्थः अधिकतया स्थापितद्रव्यस्य न्यूनतया

કિસી સે જીવાદિ કે વિષય મેં પ્રશ્ન ક્રિયા, યગર વહ યથાર્થ ઉત્તર
નહીં હોતા, વરન્ અયથાર્થ ઉત્તર દેના હૈ તો ઉભયકા વચન મૃષોપદેશ
હૈ । હસી પ્રકાર વિવાદ રૂપ કલહ હોને પર વહીં યા અન્યત્ર, કિસી
એક કો છલને કા ઉપદેશ મૃષોપદેશ હૈ । હસી પ્રકાર જુઆ આદિ
સંબંધી છલના કે વચન મૃષોપદેશ મેં અન્તર્ગત હોતે હૈ ।

ઝૂઠા લેખ લિખના કૂટલેખક્રિયા હૈ । દુસરે કો મુદ્રા અથવા
હસ્તાક્ષર સ્વરૂપ લેખ લિખ લેના, ઝૂઠા દસ્તાવેજ યા વહીં લખાતા લિખના
આદિ સબ કૂટલેખક્રિયા મેં અન્તર્ગત હૈ ।

ધાપિસ લેને કે લિખ જો ધરોહર રક્ષી જાતી હૈ, ઉસે ન્યાસ કહતે
હૈ । ધરોહર કે રૂપ મેં રક્ષે હુએ ધન યા રૂપયા આદિ કા અપલાપ
કરના-ઉસસે મુકર જાના ન્યાસાપહાર હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જિસ
વચન કે દ્વારા ન્યાસ-ધરોહર-કા અગ્રહણ ક્રિયા જારા હૈ વહ વચન

તેનો યથાર્થ ઉત્તર આપનો નથી પરન્તુ અયથાર્થ ઉત્તર આપે છે તો તેનું
વચન મૃષોપદેશ છે. એવી જ રીતે વિવાદરૂપ કલહ હોવાથી ત્યાં જ અથર્થ
અન્યત્ર કેાઈ એકને છેતરવાનો ઉપદેશ આપવો એ પણ મૃષોપદેશ છે. આવી
રીતે ભુગાર આદિ સંબંધી કપટ યુક્ત વચન પણ મૃષોપદેશમાં સમાવિષ્ટ થાય છે

ખોટો લેખ લખવો કૂટલેખક્રિયા છે. ખીજની મુદ્રા અથવા હસ્તાક્ષર સ્વરૂપ
લેખ લખી લેવો, ખોટો દસ્તાવેજ અથવા ખાતાવહી લખવા વગેરે બધાનો
કૂટલેખન ક્રિયામાં સમાવેશ થઈ જાય છે

પાછી લેવા માટે જે ધાપણ રાખવામાં આવે છે, તેને ન્યાસ કહે છે.
ધાપણરૂપે રાખવા આવેલા ધન અથવા રોકડ આદિ છીનવી લેવા-તે આપવામાં
ઠંકાર કરવો ન્યાસાપહાર છે તાત્પર્ય એ છે કે જે વચન દ્વારા ન્યાસ-
ધાપણ-નું અપહરણ કરવામાં આવે છે તે વચન ન્યાસાપહાર કહેવાય છે. વધારે
રાખેલી ધાપણને ઓછા સ્વરૂપે પરત કરવા સંબંધીનું વચન ન્યાસાપહાર

પ્રત્યર્પણવચનં ન્યાસાપહારઃ ૫ તથાચૈ-તૈ સહસ્રાભ્યાશ્યાનાદયઃ સ્થૂલ મૃપાવાદ-
વિરમણઃ ક્ષણસ્ય ગુણતર્યાડિચારા આત્મનઃ પરિણતિ વિશેષા ભવન્તિ । एतेऽति-
ચારા જ્ઞાતવ્યા એવં કિન્તુ વ્રતભંગહેતુકત્વેન ન સમાચરણીયા 'પાંચ અદ્યારા જાણે-
ચન્વા-ન સ્વમાચરેચન્વા' इति भगवदाज्ञा सद्भावात् । इत्थं મત્ર સંગ્રહગાથાઃ-

અત્ર ચ પશ્ચાત્તિચારા ઉચ્યન્તે લક્ષ્ય લક્ષણોપેતાઃ ।

સહસ્રાભ્યાશ્યાનં તથા, અશ્યાશ્યાનં રહસ્યસ્ય ॥૧॥

'નિજદારમન્ત્રભેદો મૃષોપદેશઃ કૂટલેખઃ ।

एतेषां पश्चानां क्रमशो रूपं क्षण्यतेऽग्रे ॥૨॥

'અતિચારં યો મિથ્યા દોષારોપઃ પાત્ર ત્વં ચૌરઃ ।

ત્વં નીચ હત્યેવં સહસ્રાશ્યાશ્યાન ધાગમે ઉક્તમ્ ॥૩॥

ન્યાસાપહાર કહલાતા હૈ । અધિક રક્ષી હુઈ ધરોહર કો અત્પ રૂપ મૈ
વાપિસ લૌટાને કા વચન ન્યાસાપહાર હૈ । इस प्रकार से सहस्राभ्या-
શ્યાન આદિ સ્થૂલ મૃપાવાદ વિરમણ વ્રત કે અતિચાર હૈ જો આત્મા
કા વિશિષ્ટ પરિણતિરૂપ હૈ ।

ये पांच अतिचार सिर्फ जानने योग्य हैं किन्तु व्रतभंग के कारण
होने से आचरणीय नहीं हैं, क्योंकि भगवान् की ऐसी आज्ञा है-
कि-‘पांच अतिचार जानने चाहिए, उनका आचरण नहीं करना चाहिए ।

यहां यह संग्रह गाथा है । यहां लक्ष्य और लक्षण से युक्त पांच
अतिचार कहे जाते हैं—

‘सहस्राभ्याश्यान, रहस्याभ्याश्यान, स्वदारमन्त्र भेद, मृषोपदेश
और कूटलेख, ये पांच अतिचारों के नाम हैं । इन पांचों का स्वरूप
आगे कहा जाता है—

છે આવી રીતે સહસ્રાભ્યાશ્યાન આદિ સ્થૂળમૃપાવાદ વિરમણ વ્રતના અતિચાર
છે. જે આત્માની વિશિષ્ટ પરિણતિ રૂપ છે.

આ પાંચ અતિચાર માત્ર જાણવા યોગ્ય છે પરંતુ વ્રતભંગના કારણ
હોવાથી આચરણીય નથી. કારણ કે ભગવાનની એવી આજ્ઞા છે કે-‘પાંચ
અતિચાર જાણવા જોઈએ, તેમનું આચરણ કરવું જોઈએ નહીં.’

અહીં આ સંગ્રહગાથા છે. અત્રે લક્ષ્ય અને લક્ષણથી યુક્ત પાંચ
અતિચાર કહેવામાં આવે છે—

‘સહસ્રાભ્યાશ્યાન, રહસ્યાભ્યાશ્યાન, સ્વદારમન્ત્રભેદ, મૃષોપદેશ અને
કૂટલેખ, આ પાંચ અતિચારોના નામ છે.’ આ પાંચેનું સ્વરૂપ હવે પછી
કહેવામાં આવે છે—

‘एकान्ते मित्रं गुह्यं’, यत्किमपि मन्त्रयत्सु
 मिथ्यादोषारोपोऽभ्याख्यानं रहस्यमाख्यातम् ॥४॥
 ‘निजस्त्रीमित्रादीनां संभेदो गुह्यमन्त्रप्रभृतेः
 निजदारमन्त्रभेदो ज्ञातव्योऽथ मृषोपदेशः सः ॥५॥
 यदभ्युदये निःश्रेयसे च सन्देहग्रस्तचित्तेन ।
 पृष्ठो मिथ्योपदिशति तत्त्वार्थस्यापरिज्ञानात् ॥६॥
 हस्तादि कौशलेनाऽनुकरणं यत्पराक्षरादीनाम् ।
 परवञ्चनबुद्ध्या विज्ञेया कूटलेखक्रिया सा ॥७॥ इति

(१) विचार किये बिना ही दूसरे पर मिथ्या दोषारोपण करना सहसाभ्याख्यान अतिचार है, जैसे-तू चोर है, तू नीच है इत्यादि ।

(२) एकान्त में मित्रों ने कुछ गुप्त मन्त्रणा की है, ऐसा मिथ्या-दोषारोप करना रहस्याभ्याख्यान कहलाता है ।

(३) अपनी स्त्री या मित्र आदि की गुप्त बात को प्रकाशित कर देना स्वदारमन्त्र भेद है ।

(४) अभ्युदय या निश्रेयस के विषय में सन्देहवान् किसी पुरुष के द्वारा प्रश्न करने पर, वास्तविक बात को नहीं जानते हुए मिथ्या उत्तर देना मिथ्योपदेश कहलाता है ।

(५) दूसरे को ठगने के अभिप्राय से, हाथ, की सफाई से दूसरे के हस्ताक्षरों की नकल करना कूटलेखक्रिया है ॥१-७॥

(१) विचार કર્યા વગર જ બીજા પર મિથ્યાદોષારોપણ કરવું સહસા-
 બ્યાખ્યાન અતિચાર આગમમાં કહેલ છે, જેમ કે-તું ચોર છું, તું નીચ છું વગેરે.

(૨) એકાન્તમાં મિત્રોએ કોઈ ગુપ્ત મંત્રણા કરી છે, એવું મિથ્યાદોષા-
 રોપણ કરવું રહસ્યાબ્યાખ્યાન કહેવાય છે.

(૩) પોતાની સ્ત્રી અથવા મિત્ર વગેરેની છાની વાતને બહાર કરવી
 સ્વદારમંત્રભેદ છે.

(૪) અભ્યુદય અથવા નિશ્રેયસના વિષયમાં શંકાશીલ કોઈ પુરૂષ
 દ્વારા પ્રશ્ન પૂછવાથી, વાસ્તવિક સત્યને ન બહુતા છતાં મિથ્યા ઉત્તર
 આપવો મિથ્યોપદેશ કહેવાય છે.

(૫) બીજાને છેતરવાના આશયથી, હાથચાલાકીથી, બીજાના હસ્તાક્ષરોની
 નકલ કરવી કૂટલેખક્રિયા છે. ॥૧-૭॥

ઉક્તશ્લોપાસકદશાંગે ૧ અધ્યાયે-‘સ્થૂલ મુસાવાયવેરમણસ્ય પંચ અદ્યારા જાણિયવ્યા, ન સમાચરિયવ્યા, તં જહા સહસ્રભ્યાખ્યાણે-રહસ્યાભ્યાખ્યાણે-સ્વદારમંત્રભેદ-મૃષોપદેશ-કૂટલેખકરણે’ ઇતિ । સ્થૂલમૃષાવાદ વિરમણસ્ય પશ્ચાત્તિચારા જ્ઞાતવ્યાઃ, ન સમાચરિતવ્યાઃ, તદ્યથા સહસ્રાભ્યાખ્યાનમ્-સ્વદારમંત્રભેદઃ મૃષોપદેશઃ-કૂટલેખકરણં ચ-’ ઇતિ ॥૪૨॥

મૂલ્ય-તદ્યસ્ય તેડાહડાહ્યા પંચ અદ્યારા ॥૪૩॥

છાયા-—તૃતીયસ્ય સ્તેનાહનાદિકાઃ પશ્ચાત્તિચારાઃ ॥૪૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્રે-ક્રમપ્રાપ્તસ્ય સ્થૂલ મૃષાવાદવિરમણસ્ય દ્વિતીયાણુવ્રતસ્ય સહસ્રાભ્યાખ્યાનાદિકાઃ પશ્ચાત્તિચારાઃ પ્રરૂપિતાઃ, સમ્પત્તિ સ્તેનાહનાદિકાન્ પશ્ચાત્તિચારાન્ પ્રરૂપયિતુમાહ-‘તદ્યસ્ય તેડાહડાહ્યા પંચ અદ્યારા’ ઇતિ । તૃતીયસ્ય સ્થૂલાદિજ્ઞાનવિરતિલક્ષણસ્યાણુવ્રતસ્ય સ્તેનાહનાદિકાઃ આદિના-તસ્ક

ઉપાસકદશાંગ કે પ્રથમ અધ્યયન મેં કહા હૈ-સ્થૂલમૃષાવાદ-વિરમણવ્રત કે પાંચ અતિચાર જાનના ચાહિયે કિન્તુ ઉનકા આચરણ નહીં કરના ચાહિયે । વે અતિચાર યોં હૈ-સહસ્રાભ્યાખ્યાન, રહસ્યાભ્યાખ્યાન, સ્વદારમંત્રભેદ, મૃષોપદેશ ઓર કૂટલેખકરણ ॥૪૨॥

‘તદ્યસ્ય તેડાહડાહ્યા’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ-સ્તેનાહન આદિ ત્રીસરે અણુવ્રત કે અતિચાર હૈ ॥૪૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્ર મેં ક્રમપ્રાપ્ત સ્થૂલમૃષાવાદ વિરમણ નામક દૂસરે અણુવ્રત કે સહસ્રાભ્યાખ્યાન આદિ અતિચાર ચતલાયે ગયે, અવ ક્રમપ્રાપ્ત સ્થૂલ સ્તૈય વિરમણ નામક ત્રીસરે અણુવ્રત કે સ્તેનાહન આદિ પાંચ અતિચારોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

ઉપાસકદશાંગના પ્રથમ અધ્યયનમાં કહ્યું છે-સ્થૂલમૃષાવાદ વિરમણ વ્રતના પાંચ અતિચાર જાણવા યોગ્ય જરૂર છે પરંતુ આચરવા યોગ્ય નથી આ અતિચાર આ પ્રમાણે છે-સહસ્રાભ્યાખ્યાન, રહસ્યાભ્યાખ્યાન, સ્વદારમંત્રભેદ, મૃષોપદેશ અને કૂટલેખકરણ ॥૪૨॥

‘તદ્યસ્ય તેડાહડાહ્યા પંચ અદ્યારા’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-સ્તેનાહન વગેરે ત્રીજા અણુવ્રતના અતિચાર છે. ॥૪૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્રમાં ક્રમપ્રાપ્ત સ્થૂલમૃષાવાદ વિરમણ વ્રત નામના ત્રીજા અણુવ્રતના સહસ્રાભ્યાખ્યાન આદિ પાંચ અતિચાર બતાવવામાં આવ્યા હવે ક્રમપ્રાપ્ત સ્થૂલસ્તૈય વિરમણ નામના ત્રીજા અણુવ્રતના સ્તેનાહન આદિ પાંચ અતિચારોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ-

प्रयोग-२ विरुद्धराज्यातिक्रम ३ कूटतुलाकूटमान ४ तत्प्रतिरूपक व्यवहारश्चे
५ त्येते पञ्चातिचारा आत्मनो मालिन्योत्पादकाः परिणतिविशेषा भवन्ति । तत्र-
स्तेनाहतं-स्तेन श्रौरा चौर्यवृत्त्या समानीतहिरण्यादेः चोरितस्य वस्तुनो लोभ
पारवश्यादलामूल्यव्ययेन ग्रहणम् १ तस्करप्रयोगः तस्कराणां-चौराणां प्रयोगः
'हरत यूयं परधनादिकम्' इत्यादिवाक्यैः प्रेरणं चौर्यार्थं चौरायेत्साह
प्रदानम् २ विरुद्धराज्यातिक्रमश्च उचितन्यायात्मकारान्तरेण दानं-ग्रहणं मात
क्रमः, राज्ञा अज्ञादि स्वीकरणम्-अविरुद्धं कर्म राज्यं मुच्यते, विरुद्धश्च तद्राज्य-

तीसरे स्थूल अदत्तादान विरमण नामक अणुव्रत के पांच अतिचार
हैं-(१) स्तेनाहत (२) तस्कर प्रयोग (३) विरुद्ध राज्यातिक्रम (४)
कूटतुलाकूटमान और (५) तत्प्रतिरूपक व्यवहार । ये पांच अतिचार
आत्मा में मलिनता उत्पन्न करने वाले आत्मा के परिणाम विशेष हैं ।
इनका स्वरूप इस प्रकार है—

(१) स्तेन का अर्थ चोर है । चोरों द्वारा चोरी करके लये हुए
सोने-चांदी आदि द्रव्य को लोभ के वश होकर अल्प मूल्य में खरीद
लेना स्तेनाहत अतिचार है ।

(२) तस्करों अर्थात् चोरों को प्रेरणा देना, जैसे-‘तुम पराये धन
का हरण करो’ इत्यादि कहकर उन्हें उत्साहित करना चोरी के लिए
प्रेरित करना स्तेनप्रयोग है ।

(३) उचित या न्यायसंगत तरीके से विपरीत किसी अन्य प्रकार
से ग्रहण करना अतिक्रम कहलाता है । राजा की आज्ञा आदि को

श्रील स्थूल अदत्तादान विरमण नामका अणुव्रतना पांच अतिचार छे-
(१) स्तेनाहत (२) तस्करप्रयोग (३) विरुद्धराज्यातिक्रम (४) कूटतुलाकूटमान
अने (५) तत्प्रतिरूपक व्यवहार आ पांच अतिचार आत्मा में मलिनता उत्पन्न
करना आत्माना परिणाम विशेष छे. अमनुं स्वयं नीचे मुज्य छे-

(१) स्तेनना अर्थ चोर छे. चोर द्वारा चोरी करीने लवायेला सोना
चांदी वगैरे द्रव्यने ले लने वश थछने ओछा किमते थरीही लेवुं स्तेनाहत
अतिचार छे.

(२) तस्करा अर्थात् चोराने प्रेरणा आपनी, जेम के-‘तमे पारका
धननुं हरथु करे वगैरे कहीने तेमने उत्साहित करवा, चोरी भाटे प्रेरित
करवा स्तेनप्रयोग छे.

(३) योग्य अथवा न्यायसंगतथी विपरीत कोई अन्य प्रकारथी अहणु
करवुं अतिक्रम कहेवाय छे. राजनी आज्ञा वगैरेना स्वीकार करवे, तेनाथी

એતિ વિરુદ્ધરાજ્યં તદ્દિમન્ રાજ્યેઽતિક્રમો વિરુદ્ધરાજ્યાતિક્રમઃ મિત્રરાષ્ટ્રાપમાના-
 નુવપ્રસાધી પરરાષ્ટ્રોપકારક વ્યવહારો યથાતથા વોદ્યઃ ૩ કૂટતુલા-કૂટમાન-
 કરણસૂ-શેટકાદિ-પ્રસ્થાદિકં કાષ્ઠાદિરચિતપાત્રવિશેષો માનં તુલાદિક મુન્માનશ્ચ
 एतेन न्युनेने-तरेभ्यो धान्य-सुवर्णादिकं दातव्यम्, एतेनाऽधिकेन चात्मनः स्वार्थं
 ग्राह्य मित्येवं प्रकृति कूटमयोगरूपमवसेयम् ४ तत्प्रेतिरूपक व्यवहारश्च-प्रति
 रूपकैः कृत्रिमैर्द्विरण्यसदृशै स्ताम्र रूप्यरचितैर्द्रुमैर्वञ्चना पूर्वकः क्रयविक्रयरूपो
 व्यवहारोऽयमन्तव्यः । तथा च ताम्रेण घटिताः रूप्येण-सुवर्णेन च घटिताः, ताम्र
 रूप्याभ्याश्च घटिता द्रुम्मा द्विरण्य सदृशा भवन्ति. तादृशा द्रुम्माः केनचिःपुरुषेण
 स्वीकार करना, उससे विरुद्ध कार्य न करना अविरुद्ध राज्य में अति-
 क्रम करना विरुद्ध राज्यातिक्रम कहलाता है । तात्पर्य यह है कि मित्र
 राज्य का अपमान करनेवाला एवं परराष्ट्र के लिए उपकारक व्यवहार
 विरुद्ध राज्यातिक्रम है ।

(૪) ધાન્ય આદિ નાપને કા લકડીઆદિ કા બના હુઆ નાપ માન
 કહલાતા છે । તરાજૂ આદિ કો ઉન્માન કહેતે હૈં છોટે માન-ઉન્માન
 સે દૂધરોં કો ધાન્ય યા સુવર્ણ આદિ દેના ઓર વહે સે અપને લિએ
 લેના, હસ પ્રકાર કા વ્યવહાર કૂટતુલાકૂટમાન કહલાતા છે ।

(૫) અસલી વસ્તુ મેં નકલી चीज मिलाकर उसे असली के रूप में
 વેચના તત્પ્રતિરૂપક વ્યવહાર કહલાતા છે । જૈસે-બનાવટી, ચાંદી જૈસે,
 તામ્ર એવં રૂપ્ય સે નિર્મિત સિક્કોં સે ઠગાર્ઠ કરને કે લિએ ક્રય-વિક્રય

વિરુદ્ધ કાર્ય ન કરવું. વિરુદ્ધ રાજ્યમાં અતિક્રમ કરવું વિરુદ્ધ રાજ્યાતિક્રમ
 કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે મિત્ર રાજ્યનું અપમાન કરનાર અને પર રાષ્ટ્રના
 માટે ઉપકારક વ્યવહાર, વિરુદ્ધ રાજ્યાતિક્રમ છે.

(૪) અનાજ વગેરે ભેખવાનું લાઠા વગેરેથી બનેલું માપ-માન કહે-
 વાય છે. ત્રાજવા આદિને ઉન્માન કહે છે. નાના-ઉન્માનથી ખીબને અનાજ
 અથવા સુવર્ણ વગેરે આપવું અને મોટા વહે પોતાના માટે લેવું, આ ભતનો
 વ્યવહાર કૂટતુલાકૂટમાન કહેવાય છે.

(૫) અસલી વસ્તુમાં બનાવટી ચીજ ભેળવી દઈ ને તેને મૂળ વસ્તુના
 રૂપમાં વેચી તત્પ્રતિરૂપક વ્યવહાર કહેવાય છે. જેમ કે બનાવટી ચાંદી જેવા
 તાંબા અને રૂપાથી બનાવવામાં આવેલા સિક્કાઓથી ઠગાર્ઠ કરવા માટે ક્રય-
 વિક્રય વ્યવહાર કરવો. તાંબાથી બનાવેલા, ચાંદી-સોનાથી બનાવેલા અને
 તાંબા તથા રૂપાથી બનાવેલા સિક્કા દ્વિરણ્ય જેવા હોય છે. આવા સિક્કા

लोकवचनार्थं रचिताः भवन्ति, त एव द्रव्यमाः प्रतिरूपका वदपदिश्यन्ते, तै स्तू
प्रतिरूपकैः क्रयविक्रयव्यवहारः प्रतिरूपकव्यवहार उच्यते, एते तस्करप्रयो-
गादयः पंच तावत् स्थूल स्तेय विरतिलक्षणतृतीयाणुव्रतस्याऽतिचारा भवन्ति ।
तस्मात् स्थूलादत्तादानविरतिलक्षणं तृतीयाणुव्रतं तस्कर प्रयोगं हि पञ्चाऽतिचार
वर्जनपूर्वकं परिपालनीयम् ॥४३॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः--पूर्वं तावद् द्वितीयाणुव्रतस्य स्थूलमृषावादविरति
लक्षणस्य मृषोपदेशादयः पञ्चातिचाराः प्ररूपिताः, सम्प्रति क्रमप्राप्तस्य स्थूल
स्तेयविरतिलक्षण तृतीयाणुव्रतस्य स्तेनाहवादिकान् पञ्चातिचारान् प्ररूपयितु-

व्यवहार करना । तांचे से बने हुए, चांदी से बने हुए एवं तांचे तथा
रूप्यसे बने हुए द्रव्य हिरण्य जैसे होते हैं । ऐसे द्रव्य (सिक्के) कोई-
कोई पुरुष लोगों को ठगने के लिए बनाते हैं । उन्हीं द्रव्यों को प्रति-
रूपक कहते हैं । उन प्रतिरूपकों से क्रय-विक्रय व्यवहार करना
प्रतिरूपक कहलाता है ।

तस्करप्रयोग आदि ये पांचों स्थूल स्तेय विरमण नामक तीसरे
अणुव्रत के अतिचार हैं । अतएव स्थूल अदत्तादान विरति नामक तीसरे
अणुव्रत का, तस्करप्रयोग आदि पांच अतिचारों से बचते हुए पालन
करना चाहिए ॥४३॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति--पहले स्थूलमृषावाद विरति नामक दूसरे अणु-
व्रत के मृषोपदेश आदि पांच अतिचारों का प्ररूपण किया गया,
अब क्रमप्राप्त स्थूलस्तेय विरमण नामक तीसरे अणुव्रत के स्तेनाहन
आदि पांच अतिचारों की प्ररूपणा करने के लिए सूत्रकार कहते हैं--

कौष्ठ-कौष्ठ पुरुष, ढोकेने छेतरवा भाटे बनावे छे. तेज सिष्ठायेने प्रति-
रूपक (नकली) कहे छे. ते प्रतिरूपकौथी कय-विकय व्यवहार करवे। प्रतिरूप-
व्यवहार कहेवाय छे.

तस्करप्रयोग आदि ये पांचे स्थूलस्तेय विरमण नामका त्रीज अणुव्र-
तना अतिचार छे. अथी स्थूलअदत्तादान विरति नामका त्रीज अणुव्रतना,
तस्करप्रयोग आदि पांच अतिचारेथी अथीने तेमनुं पालन क-पुं जेय छे. ॥४३॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पहले स्थूलमृषावाद विरति नामका भीज अणु-
व्रतना मृषोपदेश आदि पांच अतिचारोनुं प्ररूपण करवा। आप्युं छेवे
क्रमप्राप्त स्थूलस्तेय विरमण नामक त्रीज अणुव्रतना स्तेन हन आदि पांच
अतिचारेनी प्ररूपण करवा भाटे सूत्रकार कहे छे-

માહ-તદ્વ્યસ્ત્વ સ્તેનાહતાદ્યા પંચ અદ્યારા' इति । तृतीयस्य स्थूलादत्तादान
विरिक्तिलक्षणानुव्रस्य स्तेनाहतादिकाः आदिना-तस्करप्रयोगविरुद्धराज्यातिक्रम
कूटतुलाकूटमानप्रतिरूपकव्यवहारश्चेत्येते पञ्चातिचाराः आत्मनो मलीमसता-
ऽऽपादकाः परिणतिविशेषा भवन्ति । तत्र-स्तेनाहतादयस्तु-स्तेनैस्त्वरकरैराहतस्या-
ऽऽनीतव्य सुवर्णवस्त्रादेरादानम्-मूल्यं विनैव, स्वल्पातिस्वल्पमूल्येन वा ग्रहणम्
तच्चाऽनेक प्रत्ययाययुक्तं भवति, तस्मात्-तत्परिहर्तव्यम्-१ तस्करप्रयोगस्तावत्
द्रव्यादिकं मुष्णन्तं तस्करं प्रयुङ्क्ते 'स्वं द्रव्यादिकं मुष्णण' इत्येवमपहरणक्रियायां
प्रेरण-सम्यग्नुज्ञानं वा प्रयोगः तस्करप्रयोग उच्यते । यद्वा-परद्रव्यापहरणोपकर-

સ્તેનાહન આદિ પાંચ અતિચાર ત્રીસરે અણુવન-કે હૈં । આદિ
શબ્દ સે તસ્કરપ્રયોગ, વિરુદ્ધરાજ્યાતિક્રમ, કૂટતુલા કૂટમાન ઓર તત્પ્રતિ
રૂપક વ્યવહાર કા ગ્રહણ હોતા હૈ । હમ પ્રકાર યે પાંચ અતિચાર આત્મા
મેં મલીનતા ઉત્પન્ન કરને વાલે પરિણામવિશેષ હૈં । इनका स्वरूप इस
प्रकार है ।--

(૧) સ્તેનો' અર્થાત્ ચોરોં દ્વારા ચુરાકર લાવે હુણ સ્વર્ણ-વસ્ત્ર
આદિ પદાર્થોં કો મૂલ્ય ચુકાવે વિના હી અથવા કમ સે કમ મૂલ્ય
દેકર લે લેના સ્તેનાહનાદાન અતિચાર હૈ । એસા કરને મેં અનેક સ્વતરે
હોતે હૈં, અતએવ હસકા પરિહાર હી કરના ચાહિય ।

(૨) ચોરી કરતે હુણ ચોર કો પ્રેરણા કરના તસ્કર પ્રયોગ હૈં,
જૈસે-તુ દ્રવ્ય આદિ ચુરા લે, હસ પ્રકાર ચોરી કે લિય પ્રેરણા દેના યા
ચોરી કી આજ્ઞા દેના તસ્કર પ્રયોગ હૈ । અથવા પરકીય દ્રવ્ય કે

સ્તેન હુન આદિ પાંચ અતિચાર ત્રીણ અણુવનના છે 'આદિ' શબ્દથી
તસ્કરપ્રયોગ, વિરુદ્ધ રાજ્યાતિક્રમ, કૂટતુલાકૂટમાન અને તત્પ્રતિરૂપક વ્યવહારનું
અહણુ થાય છે. આ રીતે આ પાંચ અતિચાર આત્મામાં મલીનતા ઉત્પન્ન
કરનાર પરિણામ વિશેષ છે. એમનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે--

(૧) સ્તેનો અર્થાત્ ચોરો દ્વારા ચોરીને લાવેલા સુવર્ણ-વસ્ત્ર આદિ
પદાર્થોને કીમત ચૂકવ્યા વગર જ અથવા ઓછામાં ઓછી કીમતમાં લઈ
લેવા સ્તેન હુનાદાન અતિચાર છે આ પ્રમાણે કરવામાં અનેક જોખમો હોય
છે આથી તેમનો ત્યાગ કરવામાં જ શ્રેય છે.

(૨) ચોરી કરતા ચોરને પ્રેરણા કરવી તસ્કરપ્રયોગ છે જેમ કે તૂં દ્રવ્ય
આદિ ચોરી લે, આ રીતે ચોરી કરવા માટે પ્રેરણા આપવી અથવા ચોરીની
આજ્ઞા આપવી તસ્કરપ્રયોગ છે અથવા પરકીય દ્રવ્યના અપહરણના ઉપકરણ-

णानां कर्तरिकादीनां प्रयोगस्तत्स्करप्रयोगो बोध्यः । एवविधमुपकरणं नाणुर-
तिना सम्पादनीयं, नवा-विक्रेतव्यम् २ विरुद्धराज्यातिक्रमश्च-परस्परं विरुद्धयोः
राज्ञोः राज्याऽतिक्रमणम्-उल्लङ्घनम् एकतरराज्यवासिनो लोभाद् द्वेषाद्वाऽन्यस्य
राज्ये वस्तूनि व्यवहरन्ति अन्यराज्यनिवासिनो वा तदितर राज्यं विनाज्ञां
गच्छन्ति इत्येवं विरुद्धराज्यातिक्रमो बोध्यः परस्परं विरुद्धराज्य कृत व्यवस्थो-
ल्लङ्घनात्मकं सर्वमपिदानाऽऽदानादिक स्तेय युक्तम् तस्मात्-खलु विरुद्धराज्या-
तिक्रमो न कर्तव्यः ३ कूटगुला कूटस्नानकरणम् शेटकादि प्रस्थादिकं काष्ठादिर-
चितपात्रविशेषो वा मानं तुलादिकमुन्मानश्च :यूनेनैतेनेतरेभ्यो धान्यसुवर्णादिकं

अपहरण के उपकरण कनरनी आदि के प्रयोग को तत्स्कर प्रयोग कहते
हैं । अणुव्रती को ऐसे उपकरण न बनाना चाहिए और न वेचना चाहिए

(३) परस्पर विरोधी दो राजाओं का राज्यातिक्रम-उल्लंघन करना
विरुद्ध राज्यातिक्रम हैं । किसी एक राज्य के निवासी लोभ या द्वेष
के कारण दूसरे राज्य में वस्तुओं का क्रय-विक्रय करते हैं, या अन्य
राज्य के निवासी दूसरे राज्य में बिना आज्ञा के चले जाते हैं । इस
प्रकार विरुद्ध राज्यातिक्रम समझना चाहिए । तात्पर्य यह कि परस्पर
विरोधी राज्यों द्वारा की गई व्यवस्था का उल्लंघन करके दान-आदान
आदि करना स्तेय (चोरी) है अतः ऐसा नहीं करना चाहिए ।

(४) सेर मन आदि तथा लकड़ी आदि के बने हुए नाप मान
कहलाते हैं और तराजू आदि उन्माद कहलाते हैं । छोटे मान
उन्मान से दूसरे को धान्य या स्वर्ण आदि देना और बड़े से अपने

कातरपुं वगेरेना प्रयोगने तत्स्करप्रयोग कडे छे अणुव्रतीये आवा उपकरण
न तो बनाववा लेईये अथवा न वेचना लेईये.

(३) परस्पर विरोधी ये राज्योंनुं राज्यातिक्रम उल्लंघन करपुं
विरुद्ध राज्यातिक्रम छे. कौंछेक राज्यना निवासी लोभ अथवा दुष्ण्याना
कारणे भीलना राज्यमां वस्तुओंनो क्रय-विक्रय करे छे अथवा अन्य राज्यना
निवासी भीलना राज्यमां वगर र्णये आद्या जय छे. आ रीते विरुद्ध
राज्यातिक्रम समजपुं लेईये. तात्पर्य ये छे के परस्पर विरोधी राज्यों
द्वारा करवामां आवेली व्यवस्थानो अनादर करीने दान-आदान वगेरे करवा
स्तेय (चोरी) छे आथी आ प्रमाणे न करपुं लेईये.

(४) सेर, भाणु आदि तथा लाकड़ी वगेरेना बनावेला भाप, मान
कडेवाय छे अने नापवा वगेरे उन्मान कडेवाय छे. नाना मान-उन्मानथी

દાંતિષ્યમ્, एतेनाऽधिकेन चात्मनः स्वार्थप्राप्तमित्येवं प्रकृति कूटप्रयोगरूपमसे
 यम्-४ कूटतुलाकूटमानाभ्यां वञ्चनादियुक्तः क्रयो-विक्रयश्च न कर्त्तव्यः ।
 प्रतिरूपक व्यवहारः पुनः-सुवर्णरूप्यादीनां द्रव्याणां प्रतिरूपकक्रियात्मको बोध्यः ।
 तद्यथा-सुवर्णस्य प्रतिरूपक्रिया तावत् यादृशं सुवर्णं भवति, तादृशमेवाऽन्य द्रव्य-
 प्रयोगविशेषाद् वर्णगुरुत्वादિगुणयुक्तं निष्पादयति, एवम्-रूप्यादिकमपि यादृशं
 भवति-तादृशमेव रत्नादि द्रव्यं निष्पादयति, एव मन्यदपि-प्रतिरूपकमवगन्तव्यम्
 यथाऽन्यैरपहृतानां गवादीनां व्याजीकरणानि सशृङ्गाणां गवादीनां शृङ्गाणि-अग्नि-
 पक्वानि=अधोमुखानि प्रगुणानि तिर्यक्कलितानि वा यथेच्छं कर्तुं शक्यन्ते. येना-
 लिए लेना, यह कूटतुलाकूटमान कहलाना है । ठगार्ई की बुद्धि से झूठा
 तोलना या नापना उचित नहीं है ।

(૫) સોને-ચાંદી આદિ મેં उसी के सदृश किसी दूसरी धातु का
 सम्मिश्रण करके सोने-चांदी के रूप में बेचना अथवा किसी भी वस्तु
 में मिलावट करके बेचना तत्प्रतिरूपक व्यवहार कहलाता है । सुवर्ण
 का जैसा वर्ण आदि होता है उसी प्रकार का अन्य द्रव्यों के प्रयोग
 विशेष से वर्ण, वजन आदि से युक्त द्रव्य तैयार करना सुवर्ण की
 प्रतिरूपक क्रिया है । इसी प्रकार चांदी बनावटी तैयार कर लेना भी
 तत्प्रतिरूपकक्रिया कहलाती है । इसी तरह अन्य वस्तुओं के विषय
 में समझ लेना चाहिए, यथा-सींग सहित गाय आदि के सींग अग्नि-
 पक्व, अधोमुख, सीधे या तिछे इच्छानुसार किये जा सकते हैं, जिस

ખીજાને અનાજ અથવા સુવર્ણ વગેરે આપવા અને પોતાના માટે મોટાનો
 ઉપયોગ કરવો, આ કૂટતુલાકૂટમાન કહેવાય છે. છેતરવાના આશયથી ખોટું
 ભેખવું અથવા માપવું યોગ્ય નથી.

(૫) સોના-ચાંદી વગેરેમાં તેના જ જેવી અન્ય કોઈ ધાતુનું સમ્મિશ્રણ
 કરીને સોના-ચાંદીના રૂપમાં વેચાણ કરવું અથવા કોઈ પણ વસ્તુમાં મિશ્રણ
 કરીને વેચવું તત્પ્રતિરૂપક વ્યવહાર કહેવાય છે. સુવર્ણ જેવો વર્ણ વગેરે હોય
 છે. તે જ પ્રકારના અન્ય દ્રવ્યોને પ્રયોગ વિશેષથી વર્ણ, વજન આદિથી
 યુક્ત દ્રવ્ય તૈયાર કરવા સુવર્ણની પ્રતિરૂપક ક્રિયા છે. એવી જ રીતે ચાંદી
 બનાવટી તૈયાર કરી લેવી એ પણ તત્પ્રતિરૂપકક્રિયા કહેવાય છે. આ પ્રમાણે
 જ અન્ય વસ્તુઓના વિષયમાં સમજી લેવું ભેખ-ભેમ કે શીંગડા સહિત
 ગાય આદિના શીંગડાં, અગ્નિપક્વ, અધોમુખ, સીધા અથવા વાંકા, ધાર્યા
 સુખખના કરી શકાય છે કે જેથી તે ગાય વગેરે કંઈ જુદાં જ લાભે ।
 શીંગડા વગેરે આ પ્રમાણે કરી દેવાથી સરળતાથી તે ગાય ઓળખી શકાતી

અન્યત્વમિવગવાદયઃ પ્રાતેષ્ઠેરન્ શુદ્ધાદીનાં તથાકરણે સતિ ન સુખેનાઽવધાર્યન્તે, અન્યહસ્તે વા વિક્રીયન્તે इति વ્યાજઃ છદ્માત્-છદ્મરૂપાયાં છદ્મરૂપત્વાપાદનરૂપં વ્યાજીકરણં, તદ્વપ્પણુવ્રતિના ન કર્તવ્યમ્ । તથાચૈ-તે સ્તેનાહતાદયઃ પશ્ચમ-સ્થૂલ સ્તેયવિરમણલક્ષણાઽણુવ્રતસ્યાઽતિચારા ભવન્તિ, તસ્માદણુવ્રતીના સ્તેનાહતા-દયઃ પશ્ચાત્તિચારાઃ પરિત્યક્તવ્યાઃ । તેષામતીચારાણાં પરિત્યાગપૂર્વકં સ્થૂલ સ્તેય-વિરમણરૂપં તૃતીયાણુવ્રતં સમ્યક્તયા પરિપાલનીયમ્ । ઉક્તશ્ચોપાસકદશાંગે પ્રથમે-અધ્યયને-‘સ્થૂલગદસ્તાદાનવિરમણસ્સ પંચ અહ્યારા જાણિયવ્વા ન સમાયરિયવ્વા તં જહા-તેનાહટે, તસ્કરપ્રયોગે, વિરુદ્ધ રજ્જાહકમ્મે, કૂટ-તુલકૂટમાણે તત્પ્પહિરુવગવહારે’ इति સ્થૂળાદત્તાદાનવિરમણસ્ય પશ્ચાત્તિચારા જ્ઞાતવ્યાઃ ન સમાચરિતવ્યા, તચ્ચથા-સ્તેનાહનમ્, તસ્કરપ્રયોગઃ, વિરુદ્ધરાજ્યાતિક્રમઃ, કૂટતુલાકૂટમાનમ્, તત્પ્રતિરૂપકવ્યવહારથેતિ ॥૪૩॥

સે કિ વહ ગાય આદિ ભિન્ન હી બાલૂમ પડને લગે ! સીંગ આદિ એસે કર દેને પર સરલતા સે વહ પહચાની નહીં જા સકતી ઔર દૂસરે કો બેચી જા સકતી હૈં । છદ્મરૂપતા ઉત્પન્ન કરદેના વ્યાજીકરણ કહલાતા હૈ અણુવ્રતી કો એસા નહીં કરના चाहिए ।

इस प्रकार स्तेनाहृत आदि पांच स्थूलस्तेय विरमण अणुव्रत के अतिचार हैं । अणुव्रती को इन पांचों अतिचारों का परित्याग कर देना चाहिए । इन अतिचारों का परित्याग करके स्थूलस्तेय विरमण रूप तीसरे अणुव्रत का समीचीनरूप से पालन करना चाहिए । उपासक-दशांग के प्रथम अध्ययन में कहा है-‘स्थूल अदस्तादानविरमण व्रत के पांच अतिचार जानने चाहिए, मगर उनका आचरण नहीं करना चाहिए । वे अतिचार ये हैं-स्तेनाहृत, तस्कर प्रयोग, विरुद्धराज्यातिक्रम कूटतुलाकूटमान, तत्प्रतिरूपकव्यवहार ॥४३॥

નથી અને બીજાને વેચી શકાય છે. છદ્મરૂપતા ઉત્પન્ન કરવી વ્યાજીકરણ કહેવાય છે. આણુવ્રતધારીએ આ પ્રમાણે કરવું જોઈએ નહીં.

આવી રીતે સ્તેનાહૃત આદિ પાંચ સ્થૂળસ્તેય વિરમણ આણુવ્રતના અતિ-ચાર છે. આણુવ્રતીએ આ પાંચે અતિચારોને વળ્યું ગણવા જોઈએ. આ અતિચારોને પરિત્યાગ કરીને સ્થૂળસ્તેય વિરમણ રૂપ ત્રીજા આણુવ્રતનું સમીચીન રૂપથી પાલન કરવું જોઈએ. ઉપાસક દશાંગના પ્રથમ અધ્યયનમાં કહ્યું છે-‘સ્થૂળ અદસ્તાદાન વિરમણ વ્રતના પાંચ અતિચાર જાણવા જોઈ છે પરંતુ આચરવા યોગ્ય નથી. આ અતિચારો આ પ્રમાણે છે-સ્તેનાહૃત, તસ્કરપ્રયોગ વિરુદ્ધ રાજ્યાતિક્રમ કૂટતુલાકૂટમાન, તત્પ્રતિ રૂપક વ્યવહાર. ॥૪૩॥

मूलम्—चउत्थस्स इत्तरिया परिग्गहियागमणाइया पंच
अइयारा ॥४४॥

छाया—‘चतुर्थस्येत्वरिका परिगृहीतागमनादिकाः पञ्चातिचाराः ॥४४॥
तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावत् क्रमप्राप्तस्य तृतीयाणुव्रतस्य स्थूलस्तेय
विरतिलक्षणस्य तस्करप्रयोगादयः पञ्चातिचाराः प्ररूपिताः सम्प्रति क्रमप्राप्तस्यैव
चतुर्थस्य स्थूल मैथुनविरमणलक्षणस्याऽणुव्रतस्य इत्वरिका परिगृहीतागमनादि-
कान् पञ्चातिचारान् प्ररूपयितुमाह—‘चउत्थस्स इत्तरियापरिग्गहियागमणा-
इया पंच अइयारा’ इति, चतुर्थस्याणुव्रतस्य स्थूल मैथुनविरमणलक्षणस्य
इत्वरिकापरिगृहीतागमनादिकाः पञ्चातिचारा आत्मनो मलीनता सम्पादकाः
परिणतिविशेषा अवगन्तव्याः तद्यथा—इत्वरिकापरिगृहीतागमनम् १ अपरि-

‘चउत्थस्स इत्तरिया परिग्गहिया’ ॥४४॥

सूत्रार्थ—इत्वरिका परिगृहीतागमन आदि चतुर्थ अणुव्रत के
पांच अतिचार हैं ॥४४॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले क्रमप्राप्त तीसरे अणुव्रत स्थूलस्तेय विरमण
व्रत के तस्कर प्रयोग आदि पांच अतिचार प्ररूपण किये गये हैं, अब
क्रम प्राप्त चोरी स्थूल मैथुन विरमणव्रत के इत्वरिका परिगृहीतागमन
आदि पांच अतिचारों का कथन करते हैं—

स्थूलमैथुनविरमण रूप चौथे अणुव्रत के इत्वरिकापरिगृहीतागमन
आदि पांच अतिचार जानना चाहिए वे आत्मा में मलीनता उत्पन्न
करने वाले परिणामविशेष हैं। वे पांच अतिचार इस प्रकार हैं—(१)
इत्वरिका परिगृहीतागमन (२) अपरिगृहीतागमन (३) अनंगक्रीडा

‘चउत्थस्स इत्तरिया परिग्गहिया’ धत्थादि

सूत्रार्थ—धत्वरिकापरिगृहीतागमन आदि अतुर्थ अणुव्रतनां पांच
अतिचार छे. ॥४४॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहला क्रमप्राप्त तीसरे अणुव्रत स्थूलस्तेय विरमण
व्रतना तस्करप्रयोग आदि पांच अतिचार प्ररूपित करवाओं आल्या डवे
क्रमप्राप्त चौथा स्थूल मैथुन विरमण व्रतना धत्वरिकापरिगृहीतागमन आदि
पांच अतिचारों का कथन करीये छीये—

स्थूलमैथुन विरमण रूप चौथा अणुव्रतना धत्वरिका परिगृहीतागमन
विशेष पांच अतिचार नष्टवा नोछीये. आ अतिचारों आत्मा में मलीनता
उत्पन्न करवावाला परिणाम विशेष छे. आ पांच अतिचार आ मुख्य छे—
(१) धत्वरिकापरिगृहीतागमन (२) अपरिगृहीतागमन (३) अनंगक्रीडा (४) पर-

ગૃહીતાગમનમ્ ૨ અનગ્નક્રીડા ૩ પરવિવાહકરણમ્ ૪ કામભોગતીત્રાશિલાષઃ ૫
 इति, तत्रे-इत्वरिका इत्वरिकालिकी-अल्पवयस्का सावधपि परिगृहीता विवाहेन
 परिग्रहे नीता तथापि-दारकर्मणि सर्वथाऽसमर्था तस्यां गमनम् इत्वरिकागमनम्
 १ अपरिगृहीता गमनञ्च-वाचादत्ताऽपि परिग्रहे नीता न, अविवाहितेत्यर्थः तस्यां
 गमनं वाङ्मात्रेणैव दत्तायां गमनमिति यावत् २ अनग्नक्रीडा-अग्नं भोगाद्गम, ततोऽ-
 न्यत्र क्रीडाऽनग्नक्रीडोच्यते ३ विवाहः-परिणयनम् परस्य स्वापत्यभिन्नस्य विवाहः
 तस्य करणं विधानं परविवाहकरणम् ४ कामभोगतीत्राशिलापश्च-कामभोगेषु

(૪) પરવિવાહ કરણ ઓર (૫) કામભોગતીત્રાશિલાષ । इन पांचों
 अतिचारों का स्वरूप निम्नलिखित है-

(૧) इत्वरिका अर्थात् अल्पवयस्का या छोटी उम्र की । यद्यपि
 वह परिगृहीता हो चुकी है अर्थात् विवाहित होने से किसी की पत्नी
 बन चुकी है, तथापि दारकर्म में सर्वथा असमर्थ है । उसके साथ गमन
 करना इत्वरिकापरिगृहीतागमन है ।

(૨) जिसका वाग्दान हो चुका है मगर जो विवाहित नहीं है, वह
 अपरिगृहीता कहलाती है । उसके साथ गमन करना अपरिगृहीतागमन
 कहलाता है ।

(૩) સંભોગ કે અંગો કે અતિરિક્ત અન્ય અંગો સે ક્રીડા કરના
 અનંગક્રીડા અતિચાર હૈ ।

(૪) अपनी सन्तान के अतिरिक्त दूसरे का विवाह करना पर-
 विवाहकरण कहलाता है ।

વિવાહકરણ અને (૫) કામભોગતીત્રાશિલાષ આ પાંચે અતિચારોનું સ્વરૂપ
 નિમ્નલિખિત છે.

(૧) ઇત્વરિકા અર્થાત્ અલ્પવયસ્કા અથવા નાની (કાચી) વયની
 જે કે તેનું વેવીશાળ થઈ ગયું છે અથવા વિવાહિત થવાથી કોઈની
 પત્ની થઈ ચૂકી છે તો પણ દારકર્મ માટે સર્વથા અસમર્થ છે. તેની સાથે
 ગમન કરવું ઇત્વરિકાપરિગૃહીતાગમન છે.

(૨) જે વાગ્દત્તા છે પરંતુ જે વિવાહિત નથી તે અપરિગૃહીતા કહે-
 વાય છે. તેની સાથે ગમન કરવું અપરિગૃહીતાગમન કહેવાય છે.

(૩) સંભોગના અંગો સિવાયના અન્ય અંગેથી ક્રીડા કરવી
 અનંગક્રીડા કહેવાય છે.

(૪) પોતાના સન્તાન સિવાયના બીજાઓનો વિવાહ કરાવવો
 પરવિવાહકરણ કહેવાય છે.

શબ્દદિવિષયેષુ તીવ્ર ડ્યુત્કટોઽભિલાષ इच्छा, અર્થં हि स्वदारेष्वपि निरन्तर भोगेच्छारूपः कामोत्तेजक वाजीकरणादि प्रयोगेषु पामायाः खर्जनमिव भृशं कामभोगशक्तिसंपादनं कामभोगेच्छावर्द्धन मित्यर्थः, अयमात्मनो मनोमालिन्य कारकमादतिचारः । तथाचैवे परविवाहकरणादयः पञ्च स्वदारसन्तोषरूपस्य स्थूलमैथुनविरतिलक्षणस्य चतुर्थाऽणुव्रतस्याऽतिचारा भवन्ति, तस्मात्-चतुर्थाऽणुव्रतेना परविवाहकरणादि पञ्चातिचारवर्जनपूर्वकं स्वदारसन्तोषव्रतं सम्भक्त्वा परिपालनीयम् । अन्यथा-एतेषां परविवाहकरणादीनां पञ्चातिचाराणां करणे सति चतुर्थाऽणुव्रतस्य भङ्गः प्रसज्येत । उक्तञ्च भगवताऽतिचार-

(૬) કામભોગ કી ઉત્કટ અભિલાષા હોના કામભોગતીવ્રાભિલાષ અતિચાર હૈ । અપની પત્ની કે સાથ અત્યધિક કામ સેવન કી इच्छा रखने से भी यह अतिचार होता है । कामोत्तेजक वाजीकरण आदि-प्रयोग करके, खाज को खुजलाने के जैसे खूब कामभोग की शक्तिसम्प्रादित करके कामभोग का इच्छा को बढाका भी कामभोगतीव્રा-भिलाष है । आत्मा और मन में मलीनता उत्पन्न करने के कारण यह अतिचार है ।

इस प्रकार ये परविवाहकरण आदि स्वदार सन्तोषरूप स्थूल-मैथुनविरति लक्षण वाले चौथे अणुव्रत के अतिचार हैं । इस कारण चतुर्थ अणुव्रत के धारी को परविवाहकरण आदि पांचों अतिचारों का वर्जन करके स्वदारसन्तोषव्रतका सम्भक् प्रकार से पालन करना चाहिए । अन्यथा परविवाहकरण आदि पांच अतिचारों का सेवन करने

(૫) કામભોગની ઉત્કટ અભિલાષા થવી કામભોગતીવ્રાભિલાષ અતિચાર છે. પોતાની પત્ની સાથે વધારે કામસેવનની ઇચ્છા રાખવાથી પણ આ અતિચાર લાગે છે. કામોત્તેજક વાજીકરણ આદિ પ્રયોગ કરીને, ખરબચવાને ખજવાળવાની રીતે, કામભોગની ઘણી શક્તિ સંપાદન કરીને કામભોગની ઇચ્છાને વધારવી એ પણ કામભોગતીવ્રાભિલાષ છે. આત્મા તેમજ મનમાં મલીનતા ઉત્પન્ન કરવાના કારણે-આ અતિચાર છે.

આ રીતે આ પરવિવાહકરણ આદિ સ્વદારસન્તોષ રૂપ રથૂ મૈથુન વિરતિ લક્ષણવાળા ચોથા અણુવ્રતના અતિચાર છે. આ કારણે ચોથા અણુવ્રતના ધારકે પરવિવાહકરણ આદિ પાંચે અતિચારોનો પરિહાર કરીને સ્વદારસન્તોષ વ્રતનું સમ્યક્ પ્રકારથી પાલન કરવું જોઈએ. અન્યથા પરવિવાહકરણ આદિ પાંચ અતિચારોનું સેવન કરવાથી ચોથું અણુવ્રત ખંડિત (દ્વિષ્ટ) થઈ જાય છે.

विषये 'पंच अहयारा जाणैयन्वा-न समायेयवा' इति एते पञ्चातिचारा ज्ञातव्याः किन्तु-न समाचरितव्याः इति ॥४४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वसूत्रे क्रमप्राप्तस्याणुव्रतस्य स्थूल स्तैय विरमणस्य तस्करप्रयोगादयः पञ्चातिचाराः प्ररूपिताः सम्प्रति-क्रमप्राप्तस्य स्थूल मैथुनविरमणस्य स्वदारसन्तोषात्मकस्य चतुर्थाऽणुव्रतस्य इत्वरिकापरिगृहीतागमनादिकान् पञ्चातिचारान् प्ररूपयितुमाह—'चउत्थस्स इत्तरिया परिगहिया गमणाहया पंच अहयारा' चतुर्थस्य स्वदारसन्तोषरूपस्य स्थूल मैथुनविरमणस्य ऽणुव्रतस्य इत्वरिकापरिगृहीतागमनम् १ आदिना-अपरिगृहीतागमनम् २ अनङ्गक्रीडा ३ परदिवाहकरणम् ४ कामभोगतीव्रामिलापश्च ५ इत्येते पञ्चातिचारा आत्मनो मलीनता-

पर शोधा अणुव्रत भंग (दूषित) हो जाता हैं। भगवान् ने ये अतिचार के विषय में कहा है—'अतिचार जानने योग्य हैं मगर आचरण करने योग्य नहीं हैं ॥४४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पूर्वसूत्र में क्रमप्राप्त तीसरे अणुव्रत स्थूलस्तैयविरमण व्रत के तस्कर प्रयोग आदि पांच अतिचारों का प्ररूपण किया गया, अब क्रमप्राप्त स्थूलमैथुनविरमण जो स्वदारसन्तोषात्मक है, उस चौथे अणुव्रत के इत्वरिका परिगृहीतागमन आदि पांच अतिचारों की प्ररूपणा करते हैं—

चौथे स्वदारसन्तोषरूप स्थूलमैथुनविरमण के इत्वरिका परिगृहीता गमन आदि पांच अतिचार जानना चाहिए।

१ इत्वरिकापरिगृहीतागमन अपरिगृहीतागमन ३ अनङ्गक्रीडा ४ पर-विवाहकरण और ५ कामभोगतीव्रामिलाप ये पांच अतिचार आत्मा

भगवाने अतिचारना विषयमां कह्युं छे—'अतिचार न्णुवा योग्य न्णर छे पणु आचरणमां भूक्वा योग्य नथी' ॥४४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पूर्वसूत्रमां क्रमप्राप्त त्रीण अणुव्रत स्थूलस्तैय विरमण व्रतना तस्करप्रयोग आदि पांच अतिचारोनुं प्ररूपण करमां आण्युं, हवे क्रमप्राप्त, स्थूलमैथुन विरमण, जे स्वदारसन्तोषात्मक छे, ते योथा अणुव्रतना इत्वरिकापरिगृहीतागमन आदि पांच अतिचारोनी प्ररूपणा करीअे छीअे—

योथा स्वदारसन्तोष ३५ स्थूलमैथुन विरमण व्रतना इत्वरिका परिगृहीतागमन आदि पांच अतिचार न्णुवा योग्य छे—(१) इत्वरिकापरिगृहीतागमन (२) अपरिगृहीतागमन (३) अनङ्गक्रीडा (४) परविवाहकरण अने (५) कामभोगतीव्रामिलाप आ पांच अतिचार आत्माने मलीन करनारां दुष्परिणाम

કારકા દુષ્પરિણતિવિશેષા ભવન્તિ । તથાચે-ત્વરિકાપરિગૃહીતા ગમનાદયઃ પશ્ચાદ્ધૂલ-
મૈથુનવિરમણસ્ય સ્વદારસન્તોષાત્મકસ્યાઽતિચારા ભવન્તિ તત્રેત્વરિકા પરિગૃહીતા-
ગમનશ્ચ-ઇત્વરિકા ઇત્વરકાલિકી-અલ્પવયસ્કા સા પરિગૃહીતા વિવાહે ન પરિગ્રહે
લીતા, एतादृश्यां गमनम् १ अपरिगृहीता गमनम् अपरिगृहीता वाचादत्ता किन्तु-
परिग्रहे लीता न, अविवाहितेत्यर्थः तस्यां गमनं वाग्दत्तायां गमनमिति निष्कर्षः-२
अनङ्गक्रीडा तान्त्र-अङ्गं भोगाङ्गम् ततोऽन्यत्र क्रीडाऽनङ्गक्रीडा-३ उच्यते तथा
विवाहः परिणयनम् परस्य-स्वापत्यभिन्नस्य विवाहस्तस्य करणं परविवाह
करणम् ४ कामभोगतीव्रामिलाषश्च-कामभोगेषु शब्दादिविषयेषु तीव्राऽन्युत्कटाः,

કો અલીન કરને વાલે દુષ્પરિણામ હૈં । इनका स्वरूप ईस प्रकार है-
(१) इत्वरिका अर्थात् अल्पवयस्क या छोटी उम्र की स्त्री । वह परि-
ग्रहीता अर्थात् विवाहित हो चुकी हो फिर भी उसके साथ गमन
करना इत्वरिकापरिग्रहीतागमन कहलाता है ।

(२) जिसका वाग्दान हो चुका हो वह अपरिग्रहीता कहलाती है,
अर्थात् जिसके साथ सगाई हो चुकी हो किन्तु विवाह न हुआ हो ऐसी
સ્ત્રી કે સાથ ગમન કરના અપરિગ્રહીતાગમન હૈ ।

(૩) કામભોગ કે અંગોં કે સિવાય અન્ય અંગોં સે ક્રીડા કરના
અનંગક્રીડા અતિચાર હૈ ।

(૪) અપની સન્તાન કે સિવાય દુસરે કા વિવાહ સે સંબંધ જોડના
પરવિવાહકરણ કહલાતા હૈ ।

(૫) શબ્દ આદિ કામભોગોં કી તીવ્ર અભિલાષા રાખના કામભોગ
તીવાભિલાષ અતિચાર હૈ અપની પત્ની કે સાથ નિરન્તર ભોગ કી

છે: એમનું સ્વરૂપ આ પ્રકારનું છે-

(૧) ઇત્વરિકા અર્થાત્ અલ્પવયસ્ક અથવા કાચી વયવાળી સ્ત્રી તે
પરિગૃહીતા અર્થાત્ વિવાહિત થઈ ચૂકી હોય તો પણ તેની સાથે ગમન
કરવું ઇત્વરિકાપરિગૃહીતા કહેવાય છે. (૨) જેનું વાગ્દાન થઈ ગયું હોય તે
અપરિગૃહીતા કહેવાય છે, અર્થાત્ જેની સાથે સગપણ થઈ ગયું છે પરંતુ લગ્ન
ન થયું હોય એવી સ્ત્રીની સાથે ગમન કરવું અપરિગૃહીતાગમન છે. (૩)
કામભોગના અંગો સિવાયના અન્ય અંગોથી ક્રીડા કરવી અનંગક્રીડા અતિચાર છે.

(૪) પોતાના સન્તાન સિવાય બીજાને વિવાહ સંબંધ બેઠવો
પરવિવાહકરણ કહેવાય છે.

(૫) શબ્દ આદિ કામભોગોની તીવ્ર અભિલાષા રાખવી કામભોગતીવ્ર-
અભિલાષ અતિચાર છે. પોતાની પત્ની સાથે નિરન્તર ભોગ ભોગવવાની ઇચ્છા

अभिलाषः ५ अयं हि स्वदारेष्वपि निरन्तरभोगेच्छारूपः, कामोत्तेजक वाजीकरणादि प्रयोगेण पाप्मायाः स्वर्जनमिदं भृशं कामभोगशक्ति संवादानेन कामभोगेच्छावर्द्धनमित्यर्थः । अथस्वदारेणोपात्मकमणुव्रतं सम्यक्तया परिपालनीयमिति श्रावः । उक्तश्चोपासकदशाङ्गे मथसाध्ययने-‘स्वदारसंतोषिणं पञ्च अहयारा जाणि-यवदा न स्वमापरियवदा, तं जहा-हत्तरिधपरिगगहियागमणे, अपरिगगहियागमणे, अनंगक्रीडा, परविवाहकरणे, कामभोगेषु तिब्बाभिलासो’ इति स्वदारसन्तोषे पञ्चातिचारा ज्ञातव्याः न समाचरितव्याः, तद्यथा-इत्वरिका परिगृहीतागमनम् १ अपरिगृहीतागमनम् २ अनङ्गक्रीडा ३ परविवाहकरणम्-४ कामभोगेषु तीव्राभिलाषः-५ इति ॥४४॥

कामना करने से भी अतिचार लगता है । कामोत्तेजक वाजीकरण आदि का प्रयोग करके स्वाज खुजलाने के समान अतिशय कामभोग शक्ति सम्पादन करना इसी अतिचार के अंतर्गत हैं । आत्मा में मलीनता उत्पन्न करने के कारण यह अतिचार कहलाता है ।

स्थूलमैथुनविरमण अणुव्रती श्रावक को इत्वरिकापरिग्रहीतागमन आदि पांचों अतिचारों का वर्जन करते हुए स्वदार सन्तोष नामक अणुव्रत का सम्यक् प्रकार से पालन करना चाहिए । उपासकदशांग के प्रथम अध्ययन में कहा है स्वदारसन्तोषव्रत के पांच अतिचार ये हैं- इत्वरिकापरिग्रहीता गमन अपरिग्रहीतागमन, अनंगक्रीडा, परविवाहकरण और कामभोगतीव्राभिलाष ॥४४॥

રાખવાથી પણ આ અતિચાર લાગે છે. કામોત્તેજક વાજીકરણ આદિનો પ્રયોગ કરીને ખરજબું ખજવાળવાની માફક અતિશય કામભોગની શક્તિ સમ્પાદિત કરવી એ પણ આ અતિચારનો લાગ ગણાય છે. આત્મામાં મલીનતા ઉત્પન્ન કરવાના કારણે આ અતિચાર કહેવાય છે.

સ્થૂળમૈથુન વિરમણ-અણુવ્રતી શ્રાવકે ઇત્વરિકા પરિગૃહીતાગમન આદિ પાંચ અતિચારોનો ત્યાગ કરીને સ્વદારસંતોષ નામક અણુવ્રતનું સમ્યક્ પ્રકારથી પાલન કરવું જોઈએ ઉપાસકદશાંગના પ્રથમ અધ્યયનમાં કહ્યું છે-‘સ્વદારસંતોષ વ્રતના પાંચ અતિચાર જાણવા જોઈએ પરંતુ તેમનું આચરણ કરવું જોઈએ નહીં. આ પાંચ અતિચારો આ પ્રમાણે છે-ઇત્વરિકા-પરિગૃહીતાગમન અપરિગૃહીતાગમન, અનંગક્રીડા પરવિવાહકરણ અને કામભોગતીવ્રાભિલાષ- ॥૪૪॥

मूलम्—पञ्चमस्त खित्तवत्थप्पमाणाइक्कमाइया पंच अइयारा ॥४५॥

छाया—‘पंचमस्य क्षेत्र वास्तु प्रमाणातिक्रमादिकाः पञ्चातिचाराः ॥४५॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रे क्रमप्राप्तस्य चतुर्थाणुव्रतस्य स्थूलमैथुननिवृत्ति-
रूपस्य स्वदारसन्तोषात्मकस्य इत्वरिकापरिगृहीतागमनादिकाः पञ्चातिचारा
प्ररूपिताः, समग्र-क्रमागतस्य पञ्चमाणुव्रतस्य स्थूल परिग्रहविरमणकक्षणस्य
क्षेत्र वास्तु प्रमाणातिक्रमादीन् पञ्चातिचारान् प्ररूपयितुमाह—‘पंचमस्त’ इत्यादि
पञ्चमस्य स्थूल परिग्रहविरतिलक्षणाऽणुव्रतस्य क्षेत्र वास्तु प्रमाणातिक्रमादिकाः,
क्षेत्र वास्तु प्रमाणातिक्रमः १ आदिना—हिरण्य सुवर्णप्रमाणातिक्रमः २ धनधान्य
प्रमाणातिक्रमः ३ द्विपदचतुष्पदप्रमाणातिक्रमः ४ कुप्य प्रमाणातिक्रमश्च ५ इत्येते

‘पंचमस्त खित्त’ ॥४५॥

सूत्रार्थ—पांचवे परिग्रह परिमाणव्रत के क्षेत्र वास्तु प्रमाणाति-
क्रम आदि पांच अतिचार हैं ॥४५॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्व सूत्र में क्रम प्राप्त चौथे अणुव्रत स्थूल मैथुन
निवृत्ति रूप तथा स्वदार सन्तोषात्मक के इत्वारिका परिगृहीतागमन
आदि पांच अतिचारों का प्ररूपण किया गया, अब क्रमागत स्थूलपरि-
ग्रह विरमण रूप पांचवे अणुव्रत के क्षेत्र वास्तु प्रमाणातिक्रम आदि
पांच अतिचारों का प्रतिपादन करते हैं—

पांचवे स्थूलपरिग्रह विरति नामक अणुव्रत के पांच अतिचार हैं,
यथा—(१) क्षेत्र वास्तु प्रमाणातिक्रम (२) हिरण्य सुवर्ण प्रमाणातिक्रम
(३) धन धान्य प्रमाणातिक्रम (४) द्विपदचतुष्पदप्रमाणातिक्रम और (५)

‘पंचमस्त खित्तवत्थप्पमाणाइक्कमाइया’ इत्यादि

सूत्रार्थ—पांचवा परिग्रहपरिमाणव्रतना क्षेत्रवास्तु प्रमाणातिक्रम आदि
पांच अतिचार छे. ॥४५॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रमां क्रमप्राप्त चौथा अणुव्रत स्थूलमैथुन
निवृत्ति रूप तथा स्वदारसन्तोषात्मक इत्वरिकापरिगृहीतागमन आदि पांच
अतिचाराहुं प्ररूपण करवाभां आणुं, अबे क्रमप्राप्त स्थूलपरिग्रहविरमण रूप
पांचमां अणुव्रतना क्षेत्रवास्तुप्रमाणातिक्रम आदि पांच अतिचाराहुं प्रति-
पादन करीअे छीअे—

पांचमां स्थूलपरिग्रहविरति नामक अणुव्रतनां पांच अतिचार छे जेवा
छे—(१) क्षेत्रवास्तुप्रमाणातिक्रम (२) हिरण्यसुवर्ण प्रमाणातिक्रम (३) धन-
धान्यप्रमाणातिक्रम (४) द्विपदचतुष्पदप्रमाणातिक्रम अने (५) कुप्यप्रमाणा-

पञ्चातिचारा आत्मनो मालिन्यकारका दुष्परिणतिविशेषा भवन्ति । तत्र-
क्षेत्रं सस्योत्पत्ति भूमिः १ वास्तु-आवासगृहम् १ हिरण्यरूप्यादि व्यवहारहेतु-
भूतरजतादि धातुविशेषः, सुवर्णं-काञ्चनम् २ धनं गोमहिषहस्त्यश्वादि, धान्यं
शालित्रीह्यादि-३ द्विपदो दासीदासादिकम् चतुष्पदो गोमहिष्यादिकः ४ कुप्यम्-
ताम्रलोहकांस्यसीसकादि ५ क्षेत्रञ्च वास्तु चेति क्षेत्रवास्तु, धनञ्च धान्यञ्चेति
धनधान्यम्, हिरण्यञ्च सुवर्णञ्चेति हिरण्यसुवर्णम्, द्विपदञ्च चतुष्पदञ्चेति द्विपद-
चतुष्पदम्, एतेषाञ्च-क्षेत्रवास्तु धनधान्यहिरण्यसुवर्णद्विपदचतुष्पद कुप्यानाम्

कुप्यप्रमाणातिक्रम । ये अतिचार आत्मा सै मलीनता उत्पन्न करने वाले
दुष्परिणाम हैं । इनका स्वरूप इस प्रकार है-(१) क्षेत्र अर्थात् खेत
जहाँ धान्य की उपज होती है, वास्तु अर्थात् निवास करने का भूकान
अभिप्राय यह है कि खुली भूमि क्षेत्र कहलाती है और आच्छादित
भूमि को वास्तु कहते हैं ।

(२) चांदी आदि धातुएं, जिनसे लेने-देने का व्यवहार होता है,
हिरण्य कहलाती हैं और स्वर्ण का अर्थ कंचन है, जिसे सोना कहते हैं ।

(३) गाय, भैंस, हाथी, अश्व आदि धन कहलाता है और शालि-
त्रीहि अर्थात् चावल आदि को धान्य कहते हैं ।

(४) दासी दास आदि को द्विपद तथा गाय भैंस आदि को
चतुष्पद कहते हैं ।

(५) ताम्र, लोहा, कांसा, शीशा आदि कुप्य कहलाता है । इन
क्षेत्र, वास्तु, हिरण्य, स्वर्ण, धन, धान्य द्विपद, चतुष्पद और कुप्य के
प्रमाण का अत्यन्त लोभ के बशीभूत होकर उल्लंघन करना पांचवें

तिक्रम आ अतिचार आ त्मासां मलीनता उत्पन्न કરવાવાળા દુષ્પરિણામ છે.
એમનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે છે-(૧) ક્ષેત્ર અર્થાત્ ખેતર જ્યાં ધાન્યની ઉપજ
થાય છે, વસ્તુ અર્થાત્ નિવાસ કરવાનું મકાન આશય એ છે કે ઉઘાડી
જમીન ખેતર કહેવાય છે અને ઝાંઘેલી જમીનને વસ્તુ કહે છે.

(૨) ચાંદી વગેરે ધાતુઓ, જેનાથી લેવડ-દેવડનો વ્યવહાર થાય છે,
હિરણ્ય કહેવાય છે અને સુવર્ણનો અર્થ કંચન છે, જેને સોનું કહે છે.

(૩) ગાય, ભેંસ, હાથી, ઘોડા વગેરે ધન કહેવાય છે અને ડાંગર
ત્રીહિ અર્થાત્ ચોખા વગેરેને ધાન્ય કહે છે.

(૪) દાસી, દાસ વગેરેને દ્વિપદ તથા ગાય ભેંસ આદિને-ચતુષ્પદ કહે છે.

(૫) તાંબુ, લોહ, કાંસુ વગેરે કુપ્ય કહેવાય છે. આ ક્ષેત્ર, વાસ્તુ,
હિરણ્ય, સુવર્ણ, ધન, ધાન્ય, દ્વિપદ, ચતુષ્પદ અને કુપ્યના પ્રમાણના

અતિલોભવશાત્ પ્રમાણસ્યાઽતિક્રમઃ પ્રમાણાદધિક્ગ્રહણમ્ પનાદાનેવ મમ પરિગ્રહો વર્તતે નાઽતોઽધિકઃ' इत्येवं परिच्छिन्नाद् क्षेत्रवास्तु धनधान्यादि-विषयात्ममाणातिरेकेण ग्रहणम् पञ्चमाणव्रतधारिणा प्रत्याख्यायते, तस्मात्-क्षेत्रवास्तु प्रमाणातिक्रमादयः पञ्च स्थूल परिग्रहपरिमाणव्रतस्याऽतिचारा अव-गन्तव्याः । अतः स्थूल परिग्रहविरमणरूप पञ्चमाणव्रती श्रावकः प्रमाणातिरिक्त क्षेत्रवास्तु धनधान्यहिरण्यसुवर्णादीनां प्रत्याख्यानपूर्वकं पञ्चमाणव्रतं सम्यक्तया परिपालयेत् । तत्र धान्यञ्च-त्रीहादि अष्टादशविधं बोध्यम् । उदुक्तम् 'गोधूम-शालि यवसर्षप माष मुद्गाः श्यामाक कङ्गतिल क्रौद्रव राजमाषाः की नाश

વ્રત કે અતિચાર હૈં । 'મૈં હતના હી પરિગ્રહ રવસ્તૂંગા, હસ્તે અધિક નહીં' હસ પ્રકાર મર્યાદિત ક્ષેત્ર, વાસ્તુ, ધન, ધાન્ય આદિ સંબંધી પ્રમાણ સે અધિક કા ગ્રહણ કરના પાંચવેં અણુવ્રતધારી શ્રાવક કે દ્વારા ત્યાગ ક્રિયા જાતા હૈ । અતઃ ઉલ નિયત પ્રમાણ સે અધિક ક્ષેત્ર-વાસ્તુ આદિ કા ગ્રહણ કરના અતિચાર હૈ । હસ સ્થૂળપરિગ્રહવિરમણ નામક પાંચવેં અણુવ્રત કા ધારક શ્રાવક પ્રમાણ સે અતિરિક્ત ક્ષેત્ર, વાસ્તુ, ધન, ધાન્ય હિરણ્ય ઔર સ્વર્ણ કા પરિત્યાગ કરતા હુઆ પાંચવેં અણુ-વ્રત કા સમ્યક્ પ્રકાર સે પાલક કરે ।

इनमें त्रीहि आदि धान्य अठारह प्रकार का होता है । कहा भी है-
१ गोधूम (गेहूं), २ शालि (चावल), ३ यव (जौ), ४ सर्षप (सरसौं)
५ माष (उड़द), ६ मुद्ग (मूंग), ७ श्यामाक (सांवा), ८ कंगु, ९ तिल,
१० क्रौद्रव (कोदों), ११ राजमाष, १२ कीनाश, १३ नाल, १४ मठ,

અત્યન્ત લોભને વશીભૂત થઈ ને ઉલ્લાંઘન કરવું પાંચમા વ્રતના અતિચાર છે 'હું' આટલો જ પરિગ્રહ રાખીશ, આથી વિશેષ નહીં,' આવી રીતે મર્યાદિત ક્ષેત્ર, વાસ્તુ, ધન, ધાન્ય આદિ સંબંધી પ્રમાણથી વધારે ગ્રહણ કરવું પાંચમાં અણુવ્રતધારી શ્રાવક દ્વારા ત્યાગ કરવામાં આવે છે આથી તે નિયત પ્રમાણથી અધિક ક્ષેત્ર-વાસ્તુ આદિનું ગ્રહણ કરવું અતિચાર છે આ કારણે સ્થૂળપરિગ્રહ વિરમણ નામક પાંચમા અણુવ્રતના ધારક શ્રાવકે પ્રમાણથી વધારે ક્ષેત્ર, વાસ્તુ ધન, ધાન્ય, હિરણ્ય અને સુવર્ણનો પરિત્યાગ કરતો થકો પાંચમા અણુવ્રતનું સમ્યક્ પ્રકારે પાલન કરે.

આમાં ત્રીહિ આદિ ધાન્ય અઠાર પ્રકારના હોય છે કહ્યું પણ છે-
(૧) ગોધૂમ (ઘઉં), (૨) શાલિ (ચોખા) (૩) યવ (જવ) (૪) સર્ષપ (સરસવ)
(૫) માષ (અડદ) (૬) મુદ્ગ (મગ) (૭) શ્યામાક (સાંભો) (૮) કંચુ (દ) તિલ (તલ) (૧૦) ક્રૌદ્રવ (કોદરા) (૧૧) રાજમાષ (૧૨) કીનાશ, (૧૩) નાલ

नाल मठ वैणव नाढकीच सिम्बा कुलथ चणकादिषु बीजधान्यम्' ॥
इति, तत्र कीनाशो लाङ्गलास्त्रिपुटः, नालं-मकुष्ठा, मठवैणवं-छारि, आढकी-
तुवरी, इति । तुवर्गश्चणका माष मुद्गगोधूमशालयः । यवाश्च मिश्रिताः सप्त धान्य
माहुर्मनीषिणः ॥१ तिलशालियवाश्च-त्रिधान्य मुच्यते ॥४५॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वं तावत्-चतुर्थस्य स्थूल मैथुन विरतिलक्षणाऽणुव्रतस्य
इत्वरिका परिगृहीता गमनादयः पञ्चातिचाराः प्ररूपिताः सम्प्रति क्रमप्राप्तस्य
पञ्चमस्य स्थूलपरिग्रह विरमणलक्षणाणुव्रतस्य इच्छापरिमाणव्रतरूपस्य प्रमाणा-
तिरेकेण क्षेत्रवास्तु धनधान्यादीनां परिग्रहरूपपञ्चातिचारान् प्ररूपयितुमाह-'पञ्च
मसस खिलवत्पुष्पमाणाऽकमाहया पञ्च अहयारा' इति पञ्चमस्य इच्छा
परिमाणव्रतरूपस्य स्थूलपरिग्रहविरमणलक्षणस्याऽणुव्रतस्य क्षेत्रवास्तु प्रमाणा-
तिक्रमादिकाः क्षेत्रवास्तुप्रमाणातिक्रमः १ आदिना हिरण्य-सुवर्ण प्रमाणाति-

(१५) वैणव, १६ आढकी, १७ सिम्बा, १८ कुलथ और १९ चना आदि
ये अठारह धान्य हैं ॥१॥ इनमें से कीनाश का अर्थ है लांगल त्रिपुट,
नाल मकुष्ठ को कहते हैं, मठ वैणव छारि को कहते हैं और आढकी
का अर्थ तुवरी है । 'तुवर, चना, उडद, मूंग, गेहूं, चावल और जौ,
इन को बुद्धिमान लोग सप्त धान्य कहते हैं । तिल, शालि और यव
को त्रिधान्य कहते हैं ॥४५॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-इससे पहले स्थूल मैथुनविरति नामक चौथे
अणुव्रत के इत्वरिका परिगृहीतागमन आदि पांच अतिचार कहे गए
हैं । अब क्रमप्राप्त स्थूलपरिग्रह विरमण नामक पांचवें अणुव्रत के,
जिसे इच्छापरिमाण भी कहते हैं, पांच अतिचारों का प्ररूपण करते हैं-

(१४) मठ (१५) वैणव (१६) आढकी (१७) सिम्बा (१८) कुलथी (यण्वा)
वगेरे ये अठार धान्य छे. ॥१॥ आमांथी कीनाशनो अर्थ थाय छे लांगल
त्रिपुट, नाल मकुष्ठने कडे छे, मठ वैणव छारिने कडे छे अने माढकीने अर्थ
तुवेर छे. 'तुवर, यण्वा, अडद, मग, धड', योआ अने जव आने बुद्धिमान
लोके सप्तधान्य कडे छे. तल, शालि अने जवने त्रिधान्य कडे छे. ॥४५॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-आनी पड़ेला योथा स्थूलमैथुन विरति नामक
योथा अणुव्रतना इत्वरिकापरिगृहीतागमन आदि पांच अतिचार कडेवां
आन्या छे उवे क्रमप्राप्त स्थूलपरिग्रह परिमाणनामक पांचमां अणुव्रतना जेने
इच्छा परिमाण पणु कडे छे. पांच अतिचारोनुं प्ररूपण करीये छीये-

ક્રમઃ ૨ ધનધાન્યપ્રમાણાતિક્રમઃ ૩ દાસીદાસ દ્વિપદ ચતુષ્પદ પ્રમાણાતિક્રમઃ ૪ કુપ્યપ્રમાણાતિક્રમશ્ચ ૫ દ્વિત્યેતે પંચાતિચારા આત્મનો મનોમાલિન્યકારકા દુષ્પરિણતિવિગેષા ભવન્તિ, તત્ર-ક્ષેત્રવાસ્ત્વાદીનાં કુપ્યાન્તાનામ્-એતાવાન મમ પરિગ્રહો વર્તતે ન તત્તોઽધિકઃ' इत्येवं प्रत्याख्यानं पूर्वं कृत्वा यानि प्रमाणानि परिगृहीतानि तेषामतिक्रमः समुल्लंघनं कृतपूर्वप्रत्याख्यानप्रमाणाधिक्येन परिग्रहणं प्रमाणातिक्रमो व्यपदिष्यते । तत्र क्षेत्रं तावत् सस्योत्पत्ति भूमिः, तच्च क्षेत्रं द्विविधम्, सेतुक्षेत्र-केतुक्षेत्रञ्च । वास्तु-आवासगृहम्, तत् त्रिविधम् खातो

પાંચથે' હચ્છાપરિમાણ યા સ્થૂળપરિગ્રહ વિરમણ વ્રત કે પાંચ અતિ-
ચાર હૈં-(૧) ક્ષેત્ર વાસ્તુ પ્રમાણાતિક્રમ (૨) હિરણ્ય સુવર્ણ પ્રમાણાતિ-
ક્રમ (૩) ધન ધાન્યપ્રમાણાતિક્રમ (૪) દાસીદાસદ્વિપદ ચતુષ્પદ પ્રમા-
ણાતિક્રમ ઓર કુપ્ય પ્રમાણાતિક્રમ । યે પાંચ અતિચાર આત્મા મેં મલી-
નતા ઉત્પન્ન કરને વાલે દુષ્પરિણતિ રૂપ હૈં ।

ક્ષેત્ર-વાસ્તુ સે લેકર કુપ્ય પર્યન્ત કા 'હતના હી પરિગ્રહ મુજે
કલ્પતા હૈ, હસસે અધિક નહીં' હસ પ્રકાર પહેલે પ્રત્યાખ્યાન કરકે
જો મી પ્રમાણ રક્ષા હૈ, ઉસકા ઉલ્લંઘન કરના અર્થાત્ પહેલે સ્વીકૃત
પ્રમાણ સે અધિક ડન વસ્તુઓં કો ગ્રહણ કરના પ્રમાણાતિક્રમ કહ-
લાતા હૈ । ઇનમેં સે ક્ષેત્ર કા અર્થ હૈ-ધાન્ય કી ઉત્પત્તિ કી ભૂમિ અર્થાત્
ખેત । ખેત દો પ્રકાર કે હોતે હૈં-સેતુ ક્ષેત્ર ઓર કેતુ ક્ષેત્ર । નિવાસ
કરને કી આચ્છાદિત ભૂમિ વાસ્તુ કહલાતી હૈ । ઉસકે ત્રીન ભેદ હૈં-

પાંચમા ઇચ્છાપરિમાણ અથવા સ્થૂળપરિગૃહ વિરમણ વ્રતના પાંચ
અતિચાર છે-(૧) ક્ષેત્રવાસ્તુપ્રમાણાતિક્રમ (૨) હિરણ્યસુવર્ણપ્રમાણાતિક્રમ (૩)
ધનધાન્યપ્રમાણાતિક્રમ (૪) દાસીદાસદ્વિપદ ચતુષ્પદપ્રમાણાતિક્રમ અને (૫)
કુપ્યપ્રમાણાતિક્રમ આ પાંચ અતિચાર આત્મામાં મલીનતા ઉત્પન્ન કરનારા
દુષ્પરિણતિ રૂપ છે.

ક્ષેત્ર-વાસ્તુથી લઈને કુપ્ય પર્યન્તનો 'આટલો જ પરિગ્રહ મને કલ્પે
છે, એથી વિશેષ નહીં' એ રીતે પહેલા પચ્ચક્રખાણ કરીને જે પણ પ્રમાણ
રાખ્યું છે, તેનું ઉલ્લંઘન કરવું અર્થાત્ પહેલા સ્વીકારેલા પ્રમાણથી તે
વસ્તુઓ વધુ પ્રમાણમાં ગ્રહણ કરવી પ્રમાણાતિક્રમ કહેવાય છે. આમાંથી
ક્ષેત્રનો અર્થ છે-ધાન્યની ઉત્પત્તિની ભૂમિ અર્થાત્ ખેતર, ખેતર બે પ્રકારના
હોય છે સેતુક્ષેત્ર અને કેતુક્ષેત્ર નિવાસ કરવા માટેની ઢાંકેલી જમીન વાસ્તુ
કહેવાય છે. તેના ત્રણ ભેદ છે-ખાત, ઉચ્ચિત તેમજ ઉભયરૂપ જમીન ઉપર

ચિહ્ન-તદુભયભેદાત્, તત્ર-સ્વાતં ભૂમિગૃહાદિ, ઉચ્છિન્નં પ્રાસાદ-હર્યાદિ, સ્વાતો-
ચ્છિન્નં તુ-ભૂમિગૃહસ્યોપરિચિતપ્રાસાદાદિ સન્નિવેશઃ તેષાં ક્ષેત્રવાસ્તુનાં પ્રમાણં
તાવત્ પ્રત્યક્ષપ્રાપ્તિપ્રતિજ્ઞાતયુગ્મયત્પરિમિતાનિ ક્ષેત્રાનિ વાસ્તુનાં ચ મયા
પરિગૃહ્યન્તે તદતિરિક્તસ્ય ચ પ્રત્યાખ્યાનં ક્રિયતે આજીવનં આસંવત્સરંવા-આચતુ-
ર્માસિ વા, इत्येवं रीत्या सङ्कल्पितक्षेत्रवास्तुप्रमाणातिरेकेण कालावध्यभ्यन्तरे-
एव क्षेत्रवास्तु ग्रहणं स्थूल परिग्रहविरमणलक्षणाऽणुव्रतस्य इच्छापरिमाणव्रत-
रूपस्याऽतिचारो भवति । एवं-धनं गो मद्भिष हस्त्यश्वाऽजाऽऽविकखरोऽट्ट प्रभृति
चतुष्पदवर्गाः, धान्यं-गोधूम शालियव्व्रीहि मुद्ग मापतिलरकोद्रक प्रभृति, सर्वमेत
दुभयं श्रावकेण पंचमाऽणुव्रतधारिणा परिमितमेव ग्रहीतव्यम् । प्रमाणातिरेकेण

સ્વાત, ઉચ્છિન્ન અને ઉભયરૂપ । તલઘર આદિ કો સ્વાત-વાસ્તુ કહતે
હैं, महल-मकान आदि उच्छिन्न कहलाते हैं और तलघर के ऊपर बने
हुए महल-मकान आदि उभयरूप कहलाते हैं । प्रत्याख्यान करते
समय क्षेत्र-वास्तु का परिमाण किया कि-‘इतनेही क्षेत्र और वास्तु मैं
रखूंगा, इससे अधिक का प्रत्याख्यान करता हूं जीवनपर्यन्त, एक
वर्ष तक अथवा चार मास तक’ इस प्रकार प्रतिज्ञात क्षेत्र और वास्तु
के प्रमाण से अधिक उसी अवधि में ग्रहण कर लेना स्थूलपरिग्रह विर-
मण या इच्छापरिमाणरूप व्रत का अतिचार है ।

ધન કા અભિપ્રાય હૈ ગાય, ભૈંસ, હાથી ઘોડા બકરી, મેડ, ગધા,
ઝંટ આદિ ચૌપાયે અને ધાન્ય કા અર્થ હૈ ગેહૂં, શાલિ, જૌ, વ્રીહિ,
મૂંગ, ઉડદ, તિલ, કોદોં આદિ । પંચમ અણુવ્રત કે ધારક શ્રાવક
કો યે દોનોં પરિમિત હી રહના ચાહિયે । પ્રમાણ સે અધિક ધન-

આધારિત આદિને ખાત-વાસ્તુ કહે છે, મહેલ મકાન વગેરે ઉચ્છિન્ન કહેવાય
છે અને તલઘરની ઉપર બનાવેલા મહેલ-મકાન આદિ ઉભયરૂપ કહેવાય છે.
પચ્ચખાણ કરવાના સમયે ક્ષેત્ર-વાસ્તુનું પરિમાણ કર્યું કે-‘આટલા ખેતર
અને મકાન હું રાખીશ, આનાથી વધારે ન રાખવાના હું’ પચ્ચખાણ ધારણ
કરે છું-જીવું ત્યાં સુધી, એક વર્ષ સુધી અથવા ચાર મ.સ સુધી આ રીતે
પચ્ચખાણ કરેલાં ક્ષેત્ર અને વાસ્તુના પ્રમાણથી અધિક, તેજ મર્યાદામાં
અહણ કરવા, સ્થૂળપરિગ્રહ વિરમણ અથવા ઇચ્છાપરિમાણ રૂપ વ્રતના અતિચાર છે.

ધનનો આશય છે, ગાય, ભેંસ, હાથી, ઘોડા, બકરાં, ઝંટ,
ગધેડા વગેરે ચોપગા અને ધાન્યનો અર્થ છે ઘઉં, ડાંગર, જવ, ચોખા,
મગ, અડદ, તલ, કોદરા વગેરે પાંચમા અણુવ્રતના ધારક શ્રાવકે આ બં

ધનધાન્યગ્રહણં સ્થૂળપરિગ્રહચિરતિરૂપાણુવ્રતસ્યાઽતિચારો ભવતિ । એવં-હિરણ્યં રજતાદિ ધાતુવિશેષઃ તદ્વદિત મનેકપકારકં પાત્રાદિકમ્, સુવર્ણં કાશ્ચનમ્, ઉપલક્ષણત્વાત્-ઇન્દ્રનીલમણિમરકતપદ્મરાગમણિરત્નાદિકમપિ વોદ્યમ્, એતેષાં સ્વલ્લ હિરણ્યસુવર્ણાદીનાં પ્રતિજ્ઞાતપ્રમાણાતિરેકેણ ગ્રહણેઽપિ પશ્ચાણુવ્રતે- ઽતિચારો ભવતિ । એવં-દાસીદાસ પ્રમૃતિ દ્વિપદાનાં ગોમદિષ્યાદિ ચતુષ્પદા- નાશ્ચ પૂર્વકૃતાભિગ્રહપ્રમાણાતિરેકેણ ગ્રહણેઽપિ પશ્ચમાણુવ્રતેઽતિચારો ભવતિ, એવં-કુપ્યાનાં કાંસ્યતામ્રલોહલીસકત્રપુ મૃદ્ધાણ્ડાદીનાં પૂર્વાભિગૃહીત પ્રમાણાતિરે- કેણ ગ્રહણેઽપિ પશ્ચમાણુવ્રતે સ્થૂળપરિગ્રહચિરતિલક્ષણેઽતિચારો ભવતિ તસ્માત્- ધાન્ય કા ગ્રહણ સ્થૂળપરિગ્રહચિરતિ અણુવ્રત કા અતિચાર હૈ ।

હિરણ્ય રજત આદિ ધાતુઓં કો કહતે હૈં । ઉનસે વને હુએ તરહ- તરહ કે પાત્ર આદિ બી હિરણ્ય હી કહલાતે હૈં । સ્વર્ણ કા મતલબ કાંચન હૈ । ઉપલક્ષણ સે ઇન્દ્રનીલમણિ, મરકત મણિ, પદ્મરાગ મણિ એવં રત્ન આદિ બી સમજ્ઞ લેનાં ચાહિએ । ઇન હિરણ્ય, સુવર્ણ આદિ કા જો પ્રમાણ અંગીકાર કિયા હૈ, ઉસસે અધિક ઉનકા ગ્રહણ કરને સે પાંચવેં અણુવ્રત કા અતિચાર હો જાતા હૈ ।

હસી પ્રકાર દાસી દાસ આદિ દ્વિપદોં ઔર ગાય મૈસ આદિ ચતુષ્પદોં કે પૂર્વકૃત પરિમાણ સે અધિક ઉનકો ગ્રહણ કરનાં બી પાંચવેં અણુવ્રત કા અતિચાર હૈ ।

હસી પ્રકાર કાંસા, તાંવા, લોહા, શીશા, રાંગા, ઘિટ્ટી આદિ કે પાત્રોં કા જો પરિમાણ કિયા હો, ઉસસે અધિક ગ્રહણ કરને પર પાંચવેં વ્રત

મર્યાદિત જ રખવા જોઈએ. પ્રમાણથી અધિક ધન-ધાન્યનું ગ્રહણ સ્થૂળ-પરિગ્રહચિરતિ અણુવ્રતના અતિચાર છે.

હિરણ્ય, રજત આદિ ધાતુઓને કહેવામાં આવે છે. તેનાથી બનેલા બાતબાતના પાત્ર વગેરે પણ હિરણ્ય જ કહેવાય છે. સુવર્ણનો અર્થ કાંચન છે. ઉપલક્ષણથી ઇન્દ્રનીલમણિ, મરકતમણિ, પદ્મરાગમણિ તથા રત્ન વગેરે પણ સમજી લેવા જોઈએ આ હિરણ્ય, સુવર્ણ વગેરેનું જે પ્રમાણ અંગીકાર કરેલ છે, તેથી વધારે તેમનું ગ્રહણ કરવાથી પાંચમા અણુવ્રતના અતિચાર થઈ જાય છે.

આવી જ રીતે દાસી દાસ આદિ દ્વિપદ તથા ગાય ભેંસ આદિ ચોપગાનું પૂર્વકૃત પરિમાણથી અધિક તેમનું ગ્રહણ કરવું એ પણ પાંચમાં અણુવ્રતના અતિચાર છે.

એ જ પ્રમાણે કાંસુ, તાંબુ, લોહું, સીસુ, રંગા, માટી આદીના પાત્રોનું જે પરિમાણ કયું હોય, તેનાથી વધુ ગ્રહણ કરવાથી પાંચમાં વ્રતના અતિચાર

पञ्चमाणुव्रतधारिणा क्षेत्रवास्तु प्रमाणातिक्रमादयः पञ्चातिचाराः परिहर्तव्याः । अन्यथा-एतेषां क्षेत्रवास्तवादीनां प्रमाणाधिक्येन ग्रहणे इच्छापरिमाणव्रतस्य परिपालनं न स्यात् । उक्तञ्चो-पासकदशाङ्गे प्रथमाध्ययने-इच्छापरिमाणव्ययस्स समणोवास्त्रणं पञ्च अह्यारा जाणियव्वा, न समाधरियव्वा, तं जहा-धण धन्नप्पमाणाइक्कमे वेत्तवत्थुप्पमाणाइक्कमे, हिरण्यसुवर्णपरिणामा-इक्कमे, दुप्पयच्चउप्पयपरिमाणाइक्कमे कुवियपमाणाइक्कमे' इति, इच्छापरिमाणव्रतस्य श्रमणोपासकैः पञ्चातिचारा ज्ञातव्याः, न समाचरितव्याः तद्यथा-धनधान्यप्रमाणातिक्रमः, क्षेत्र वास्तु प्रमाणातिक्रमः हिरण्य सुवर्ण परिमाणातिक्रमः, द्विपदचतुष्पदपरिमाणातिक्रमः, कुप्यप्रमाणातिक्रमः इति ॥४५॥

दिसिन्वयस्स उडुदिसि परिमाणाइक्कमाइया पञ्च अइयारा ॥४६॥

छाया-दिग्रन्थस्य ऊर्ध्वदिक् प्रमाणातिक्रमादिकाः पञ्चातिचाराः-॥४६॥

का अतिचार होता है । इस कारण पंचम अणुव्रत के धारक को क्षेत्र वास्तुप्रमाणातिक्रम आदि पांचों अतिचारों का परित्याग करना चाहिए । अन्यथा क्षेत्र-वास्तु आदि को प्रमाण से अधिक ग्रहण करने पर इच्छापरिमाणव्रत का परिपालन नहीं होता । उपासकदशांग के प्रथम अध्ययन में कहा है-श्रमणोपासक को इच्छापरिमाणव्रत के पांच अतिचार जानना चाहिए, किन्तु उनका आचरण नहीं करना चाहिए । वे पांच अतिचार इस प्रकार हैं-(१) धन-धान्य प्रमाणातिक्रम (२) क्षेत्र-वास्तु प्रमाणातिक्रम (३) हिरण्य-स्वर्ण प्रमाणातिक्रम (४) द्विपद-चतुष्पद प्रमाणातिक्रम और कुप्यप्रमाणातिक्रम ॥४५॥

‘दिसिन्वयस्स उडुदिसि’ इत्यादि

लागे छे. आथी पांचमा अणुव्रतना धारके क्षेत्रवास्तुप्रमाणातिक्रम आदि पांचे अतिचारोने। परित्याग करवे। नोछे। अन्यथा क्षेत्र-वास्तु वगेरेने प्रमाणाती अधिक ग्रहण करवाथी इच्छापरिमाणव्रतनुं पालन थसे नहीं. उपासकदशांगना प्रथमं अध्ययनमां कडेवामां आन्थुं छे-श्रमणोपासके इच्छापरिमाणव्रतना पांच अतिचार जानवा नोछे। परन्तु तेमनुं आचरण करवुं नोछे। आ पांच अतिचार आ प्रमाणे छे-(१) धन-धान्य प्रमाणातिक्रम (२) क्षेत्र-वास्तुप्रमाणातिक्रम (३) हिरण्य-स्वर्णप्रमाणातिक्रम (४) द्विपद-चतुष्पद-प्रमाणातिक्रम आने कुप्यप्रमाणातिक्रम. ॥४५॥

‘दिसिन्वयस्स उडुदिसि’ इत्यादि

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ તાવત્-સ્થૂળપ્રાણાતિપાતાદિ વિરમણલક્ષણ પञ्ચાણુ-
વ્રતાનાં પ્રત્યેકં ક્રમશઃ પञ્ચ-પञ્ચાતિચારાઃ પ્રતિપાદિતાઃ સમ્પતિ-દિગ્વિ-
રત્યાદિ સસ્રશિક્ષાવ્રતાનાં પ્રત્યેકં ક્રમશઃ પञ્ચપञ્ચાતિચારાન્ પ્રતિપાદયિતું
પ્રથમં દિગ્વિરતિલક્ષણશિક્ષાવ્રતસ્ય પञ્ચાતિચારાન્ પ્રરૂપયતિ—‘દિસિવ્વયસ્સ
ઉદુદિસિ પરિમાણાહક્કમાહયા પંચ અહયારા—’ઇતિ, દિગ્વ્રતસ્ય પૂર્વોક્તસ્ય
દિગ્વિરતિલક્ષણગુણવ્રતરૂપશિક્ષાવ્રતસ્ય ऊर्ध्वदिक्प्रमाणातिक्रमादिकाः ऊर्ध्वदिक्
प्रमाणातिक्रमः—१ आदिना—अधोदिक्प्रमाणातिक्रमः—२ तिर्यग्दिक्प्रमाणाति-
क्रमः—३ क्षेत्रवृद्धिः—४ स्मृत्यन्तर्धानञ्च ५ इत्येते पञ्चातिचारा आत्मनो मालिन्य
कारका दुष्परिणतिविशेषा भवन्ति । तत्र—पूर्वादिदिक्षु गमनादौ—अभिग्रहा-

સૂત્રાર્થ—દિશાવ્રત કે ઉર્ધ્વદિશા પ્રમાણાતિક્રમ આદિ પાંચ અતિ-
ચાર જાનના યાહિયે ॥૪૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—હસસે પહેલે સ્થૂળપ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ
પાંચ અણુવ્રતોં કે ક્રમ સે પાંચ-પાંચ અતિચારોં કા પ્રતિપાદન કિયા
ગયા હૈ, અવ દિગ્વ્રત આદિ સાત શિક્ષા વ્રતોં મેં સે પ્રત્યેક કે પાંચ-
અતિચારોં કા નિરૂપણ કરને કે લિયે સર્વ પ્રથમ પહેલે દિગ્વ્રત નામક
શિક્ષાવ્રત કે પાંચ અતિચારોં કા કથન કરતે હૈ—

દિગ્વિરતિ નામક ગુણવ્રતરૂપ શિક્ષાવ્રત કે પાંચ અતિચાર હૈ—(૧)
ऊर्ध्वदिशा—प्रमाणातिक्रम (२) अधोदिशाप्रमाणातिक्रम (३) तिर्यग्-
दिशाप्रमाणातिक्रम (४) क्षेत्रवृद्धि और (५) स्मृति—अन्तर्धान । ये पांच
अतिचार आत्मा को मलीन बनाने वाले दुष्परिणाम हैं ।

સૂત્રાર્થ—દિશાવ્રતના ઉર્ધ્વદિશાપ્રમાણાતિક્રમ આદિ પાંચ અતિચાર
જાણવા જોઈએ. ॥૪૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—આનાથી પહેલા સ્થૂળપ્રાણાતિપાતવિરમણ આદિ પાંચ
અણુવ્રતોના ક્રમથી પાંચ-પાંચ અતિચારોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે,
હવે દિગ્વ્રત આદિ સાત ગુણવ્રત તથા શિક્ષાવ્રતોમાંથી પ્રત્યેકના પાંચ-પાંચ
અતિચારોનું નિરૂપણ કરવા માટે સર્વપ્રથમ પહેલા દિગ્વ્રત નામક ગુણવ્રતના
પાંચ અતિચાર કહીએ છીએ—

દિગ્વિરતિ નામક ગુણવ્રતરૂપ શિક્ષાવ્રતના પાંચ અતિચાર છે—(૧)
ऊर्ध्वदिशा—प्रमाणातिक्रम (२) अधोदिशाप्रमाणातिक्रम (३) तिर्यग्दिशाप्रमाणा-
तिक्रम (४) क्षेत्रवृद्धि અને (५) स्मृति—अन्तर्धान આ પાંચ અતિચાર
આત્માને મલીન બનાવનારા દુષ્પરિણામ છે.

दिना परिमितस्य दिग्वधेरतिलङ्घनं दिगतिक्रम उच्यते, स च त्रिविधः—
ऊर्ध्वदिगतिक्रमाऽधोदिगतिक्रम तिर्यग्दिगतिक्रम भेदात्, तत्र—पर्वतादावारोह-
णात्—ऊर्ध्वदिगतिक्रमो भवति—१ कूपावतरणादेरधोदिगतिक्रमः—२ कन्दरादि
प्रवेशादे स्तिर्यग्दिगतिक्रमः—३ एवम्—अभिग्रहादिना परिगृहीतस्य दिग्वधे
र्लोभादिकरणवशादाधिक्याभिसन्धिः। क्षेत्रवृद्धिः—यथा—मान्यखेटावस्थितेन केन-
चिदगारिणाऽभिग्रहेण परिमाणं कृतम् यद-अमुक नगरीलङ्घनं नाहङ्करिष्यामीति,
पश्चादन्यस्यां नगर्यां खल्वन्येन भाण्डादिना महान् लाभो भविष्यतीति बुद्ध्या

इनमें से पूर्व आदि दिशाओं में गमन आदि करने का जो परि-
णाम किया है, उस परिणाम का अर्थात् मर्यादा का उल्लंघन करना
दिगतिक्रम कहलाता है। दिगतिक्रम तीन प्रकार का है—ऊर्ध्वदिगतिक्रम,
अधोदिगतिक्रम और तिर्यग्दिगतिक्रम। पर्वत आदि के ऊपर मर्यादा
से बाहर चढ़ने पर ऊर्ध्वदिशा के प्रमाण का उल्लंघन होता है। कूप
आदि में नीचे उतरने से अधोदिशा के प्रमाण का उल्लंघन होता है।
कन्दरा आदि में प्रवेश करने से तिर्छी दिशा के प्रमाण का उल्लंघन
होता है। इसी प्रकार अभिग्रह आदि करके दिशा की जो मर्यादा की
हो उसको लोभ आदि किसी कारण से बढा लेना क्षेत्रवृद्धि है। जैसे—
मान्यखेट—नगर में स्थित किसी श्रावक ने अभिग्रह करके परिमाण कर
लिया कि मैं अमुक नगरी का उल्लंघन नहीं करूंगा। बाद में उसे मालूम
हुआ कि उस नगरी को उल्लंघन करके आगे जाने पर व्यापार में बहुत

आभांથી પૂર્વ આદિ દિશાઓમાં ગમન વગેરે કરવાની જે મર્યાદા
બાંધી છે, તે મર્યાદા અર્થાત્ પરિમાણનું ઉલ્લંઘન કરવું દિગતિક્રમ કહેવાય
છે. દિગતિક્રમ ત્રણ પ્રકારનું છે. ઉર્ધ્વદિગતિક્રમ અધોદિગતિક્રમ અને તિર્ય-
ગ્દિગતિક્રમ. પર્વત આદિની ઉપર મર્યાદાથી બહાર બઢવાથી ઉર્ધ્વદિશાના
પ્રમાણનું ઉલ્લંઘન થાય છે. કૂપા વગેરેમાં નીચે ઉતરવાથી અધોદિશાના
પ્રમાણનું ઉલ્લંઘન થાય છે. ગૂફા આદિમાં પ્રવેશ કરવાથી તિર્છીદિશાના
પ્રમાણનું ઉલ્લંઘન થાય છે. આવી જ રીતે અભિગ્રહ આદિ કરીને દિશાની
જે મર્યાદા બાંધી હોય તેને લોભ વગેરે કોઈ કારણોસર વધારી દેવી. ક્ષેત્ર-
વૃદ્ધિ છે જેમ કે—માન્યખેટ નગરમાં સ્થિત કોઈ શ્રાવકે અભિગ્રહ કરીને
પરિમાણ કરી લીધું કે હું અમુક નગરીનું ઉલ્લંઘન કરીશ નહીં. પાછળથી
તેને ખબર પડી કે તે નગરીનું ઉલ્લંઘન કરીને આગળ જવાથી વેપારમાં
ધણી લાભ થશે એવું બાણીને ત્યાં જવાની ઇચ્છા કરવી અને કોઈ અન્ય

તપ ગમનાકાઢ્ઢા, ગમનશ્ચ-ક્ષેત્રવૃદ્ધિરિતિભાવઃ, ત સ્વલુ-પ્પાડતિક્રમઃ
 પ્રમાદાન્મોહાદાસજ્ઞાદા ભવતીતિ બોધ્યમ્ । એવમ્-અભિગૃહીતદિગવચેરનનુસ્મરણં
 સ્મૃત્યન્તરાધાન મુચ્યતે इत्येतै पञ्च दिग्विरतिव्रतस्याऽतिचारा अवगन्तव्याः ।
 एतांश्च पञ्चातिचारान् वर्जयित्वा दिग्विरतिलक्षणशिक्षाव्रतधारिणाऽगारिणा
 सम्यक्तया परिपालनीयमिति भावः ॥४६॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ-પૂર્વોક્તરીત્યા પ્રાણાતિપાતાદિવિરતિરૂપપશ્ચાણુવ્રતાનાં
 પ્રત્યેકં પશ્ચ પશ્ચાતિચારાન્ ક્રમશઃ પ્રતિપાદ્ય સમ્પતિ-દિગ્વિરત્યાદિ પૂર્વોક્ત
 સાતશિક્ષાવ્રતાનાં પ્રત્યેકં પશ્ચપશ્ચાતીચારાન્ ક્રમશઃ પ્રતિપાદયિતું પ્રથમં
 દિગ્વિરતિરૂપગુણવ્રતલક્ષણશિક્ષાવ્રતસ્ય પશ્ચાતિચારાદ્ પ્રરૂપયતિ-‘દિસિન્વ-

લાઅ હોના । એસા જાન કર વહાં જાને કી ઇચ્છા કરના એવં । કિસી
 દુક્કરી દિશા કે પરિમાણ મેં કમી કરકે) જસ ઓર કે ક્ષેત્ર કો થઢા
 કર જાના ક્ષેત્રવૃદ્ધિ હૈ । યહ અતિક્રમ પ્રમાદ સે, મોહ સે યા અસંગ
 સે હોતા હૈ, એસા સમજના યાહિયે । ઇસી પ્રકાર ગ્રહણ કી હુઈ દિશા
 -મર્યાદા કો ભૂલ જાના સ્મૃત્યન્તરધાન કહલાતા હૈ । યહ પાંચ દિશા-
 વ્રત કે અતિચાર હૈ । इन पांचों अतिचारों से बच कर दिग्व्रतधारी
 श्रावक को सम्यक् प्रकार से दिग्व्रत का पालन करना चाहिए ॥४६॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે પ્રાણાતિપાતચિરતિ આદિ પાંચ
 અણુવ્રતોં મેં સે પ્રત્યેક કે પાંચ-પાંચ અતિચારોં કા ક્રમ સે પ્રતિપાદન
 કિયા, અવ દિશાવ્રત આદિ સાત શિક્ષાવ્રતોં કે પાંચ-પાંચ અતિચારોં
 ક અનુક્રમ સે પ્રતિપાદન કરને કે લિયે સર્વપ્રથમ દિશાવ્રત રૂપ શિક્ષા-
 વ્રત કે પાંચ અતિચારોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ-

દિશાની મર્યાદામાં થયેલો કરીને તે બાજુના ક્ષેત્રની મર્યાદામાં વધારો કરી
 તે તરફ જવું ક્ષેત્રવૃદ્ધિ છે. આ અતિક્રમ પ્રમાદથી, મોહથી અથવા અસંગથી
 થાય છે એવું સમજવું ભેદજ્ઞે, એવી જ રીતે થયેલું કરેલી દિશા મર્યાદાને
 ભૂલી જવું સ્મૃત્યન્તરધાન કહેવાય છે. આ પાંચ દિશાવ્રતના અતિચાર છે.
 આ પાંચ અતિચારથી બચીને દિગ્વ્રતધારી શ્રાવકે સમ્યક્ પ્રકારથી
 દિગ્વ્રતનું પાલન કરવું ભેદજ્ઞે. ॥૪૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પૂર્વોક્ત પ્રકારથી પ્રાણાતિપાત વિરતિ આદિ પાંચ
 અણુવ્રતોમાંથી પ્રત્યેકના પાંચ-પાંચ અતિચારોનું ક્રમથી પ્રતિપાદન કર્યું, હવે
 દિશાવ્રત આદિ સાત શિક્ષાવ્રતોના પાંચ-પાંચ અતિચારોનું અનુક્રમથી પ્રતિ-
 પાદન કરવા માટે સર્વપ્રથમ દિશાવ્રત રૂપ શિક્ષાવ્રતના પાંચ અતિચારોની
 પ્રરૂપણા કરીએ છીએ-

यस्स' इत्यादि । दिग्ब्रतस्य दिग्विरतिरूपस्य प्रथमस्य गुणव्रतस्य द्वादशव्रतेषु च षष्ठस्य व्रतस्य-ऊर्ध्वदिक्प्रमाणातिक्रमः-आदिना-अधोदिक् प्रमाणातिक्रमः-२ तिर्यग्दिक् प्रमाणातिक्रमः-३ क्षेत्रवृद्धिः-४ स्मृत्यन्तर्धानचे-५ त्येते पञ्चाऽतिचारा आत्मनो मालिन्यताऽऽपादका दुष्परिणतिविशेषा भवन्ति । तत्र-दिक्षु-गमनाय पूर्वमभिग्रहादिना परिगृहीतस्य (नियमितस्य) दिक्परिमाणस्याऽतिक्रमः उल्लङ्घनम्, स च-दिक्प्रमाणातिक्रम स्त्रिविधो भवति ऊर्ध्वदिक् परिमाणातिक्रमः अधोदिक् प्रमाणातिक्रमः-२ तिर्यग्दिक् प्रमाणातिक्रमश्चे-३ ति । तत्रोर्ध्वपूर्वमभिगृहीतदिक्प्रमाणातिरिक्ततया पर्वत-वृक्षशिखरारोहणादिकम् ऊर्ध्वदिक् प्रमाणातिक्रमः, एवमथ स्तावत्-पूर्वमभिगृहीताऽधोदिक् प्रमाणातिरिक्ततया कूप-

वारह व्रतो' में छठे, गुणव्रतो' में पहले दिग्विरतिस्वरूप दिशाव्रत के ऊर्ध्वदिक्प्रमाणातिक्रम आदि पांच अतिचार हैं । वे इस प्रकार हैं-(१) ऊर्ध्वदिक्प्रमाणातिक्रम (२) अधोदिक्प्रमाणातिक्रम (३) तिर्यग्दिक्प्रमाणातिक्रम (४) क्षेत्रवृद्धि और (५) स्मृत्यन्तर्धान । ये पांचों अतिचार आत्मा में मलीनता उत्पन्न करते हैं और एक प्रकार के दुष्परिणाम हैं ।

दिशाओं में गमन करने के लिए पहले जो अभिग्रह धारण किया हो अर्थात् जो अर्यादा निश्चिन की हो, उसका उल्लंघन करना दिशा-प्रमाणातिक्रम कहलाता है । दिशा प्रमाणातिक्रम तीन प्रकार का है-ऊर्ध्वदिशाप्रमाणातिक्रम, अधोदिशा प्रमाणातिक्रम और तिर्यग्दिशा-प्रमाणातिक्रम । ऊर्ध्वदिशा में, पर्वत, वृक्ष आदि के ऊपर चढ़ने के किये हुए प्रमाण का उल्लंघन करना ऊर्ध्वदिक्प्रमाणातिक्रम कहलाता

आर व्रतोमां छठां, गुणव्रतमां पडेला, दिग्विरति स्वरूप दिशाव्रतना ऊर्ध्वदिक्प्रमाणातिक्रम आदि पांच अतिचार छे. ते आ प्रमाणे छे-(१) ऊर्ध्वदिक्प्रमाणातिक्रम (२) अधोदिक्प्रमाणातिक्रम (३) तिर्यग्दिक्प्रमाणातिक्रम (४) क्षेत्रवृद्धि અને (५) स्मृत्यन्तर्धान आ पांचे अतिचार आत्माમાં मलीनता उत्पन्न કરે છે અને એક પ્રકારના દુષ્પરિણામ છે.

દિશાઓમાં ગમન કરવા માટે પડેલા જે અભિગ્રહ ધારણ કરેલ હોય અર્થાત્ જે અર્યાદા નક્કી કરી હોય, તેનું ઉલ્લંઘન કરવું દિશાપ્રમાણાતિક્રમ કહેવાય છે. દિશાપ્રમાણાતિક્રમ ત્રણ પ્રકારના છે-ઉર્ધ્વદિશાપ્રમાણાતિક્રમ, અધોદિશા પ્રમાણાતિક્રમ અને તિર્યગ્દિશા પ્રમાણાતિક્રમ ઉર્ધ્વદિશામાં પર્વત, વૃક્ષ આદિ ઉપર ચઢવા માટે કરેલી અર્યાદાનું ઉલ્લંઘન કરવું ઉર્ધ્વદિક્પ્રમાણાતિક્રમ કહેવાય છે. પૂર્વકૃત અધોદિશાના પ્રમાણથી આગળ ફેરવા,

ભૂમિગૃહાદ્યવતરણાદિક્રમ-અધોદિક્ પ્રમાણાતિક્રમઃ । एवं-तिर्यग्गपि पूर्वाभि-
 गृहीतयोजन प्रमाणातिरिक्ततया योजनाधिकगमनं-तिर्यक्-दिक् प्रमाणातिक्रमः ।
 क्षेत्रवृद्धि स्तावत्-एकस्यां दिशि-अभिग्रहादिना योजनशतपरिमाणं क्षेत्रं परिगृहीतम्
 अपरस्यां दशयोजनक्षेत्रपरिमाणमभिगृहीतम्, अथ कदाचित्तस्यां दिशि प्रयोजने
 समुपस्थिते सति योजनशतमध्यादन्यानि दशयोजनानि-अपनीय तत्रैवामे
 स्वबुद्ध्याऽन्यानि दशयोजनानि प्रक्षिपति-अन्यस्यां स वर्धयति-इत्येवं क्षेत्रवृद्धि
 रवगन्तव्या-४ स्मृत्यन्तर्धानञ्च-स्मृतेर्भ्रंशरूपम् अन्तर्धानमवसेयम् गृहीताया
 दिङ्मर्यादया विस्मरण मित्यर्थः ५ इत्येव मूर्ध्वदિક् प्रमाणातिक्रमादयः पञ्चदिग्बि-
 रतिलक्षणस्य प्रथमदिग्ब्रतस्याऽतिचारा अगन्तव्याः । तस्मादगारिणा-ऊर्ध्वदिक्

है । पूर्वकृत अधોदिशा के प्रमाण से आगे कूप, भूगृह आदि में उतरना
 अधोदिक्प्रमाणातिक्रम कहलाता है । इसी प्रकार तिर्छी दिशा में जाने
 की जो मर्यादा पहले नियत की हो, उसका उल्लंघन करके आगे जाना
 तिर्यक्दिक्प्रमाणातिक्रम है ।

एक दिशा में सौ योजन तक जाने की मर्यादा की हो और दूसरी
 किसी दिशा में दस योजन तक जाने की मर्यादा की हो, कदाचित्
 उस दूसरी दिशा में दश योजन से आगे जाने का प्रयोजन आ पड़े
 तो पूर्वोक्त सौ योजन से से दशयोजन कम करके उस दिशा में बढ़ा
 लेना अर्थात् दूसरी दिशा में दस के बदले बीस योजन तक जाना
 क्षेत्रवृद्धि अतिचार है ।

किये हुए परिमाण को स्मरण न रखना-भूल जाना स्मृत्यन्तर्धान है ।

इस प्रकार दिग्बिरतिरूप प्रथम दिग्ब्रत के पांच अतिचार जानने

વાવ આદિમા ઉતરવું અધોદિક્ પ્રમાણાતિક્રમ કહેવાય છે. એવી જ રીતે
 તિર્છીદિશામાં જવાની જે મર્યાદા પહેલા નક્કી કરી હોય તેનું ઉલ્લંઘન
 કરીને આગળ વધવું તિર્યક્દિક્ પ્રમાણાતિક્રમ છે.

એક દિશામાં સો યોજન સુધી જવાની મર્યાદા કરી હોય અને
 બીજી કોઈ દિશામાં દશ યોજન સુધી જવાની મર્યાદા કરી હોય-કદાચિત્ તે
 બીજી દિશામાં દશ યોજનની આગળ જવાનું પ્રયોજન આવી પડે તો
 પૂર્વોક્ત સો યોજનમાંથી દશ યોજન ઓછી કરી તે દિશામાં વધારો કરવો
 અર્થાત્ બીજી દિશામાં દશને બદલે વીસ યોજન સુધી જવું ક્ષેત્રવૃદ્ધિ અતિચાર છે.

બાંધેલી મર્યાદાનું સ્મરણ ન રહેવું, ભૂલી જવું સ્મૃત્યન્તર્ધાન છે.

આ રીતે દિગ્બિરતિરૂપ પ્રથમ દિગ્બ્રતના પાંચ અતિચાર બાણવા

प्रमाणातिक्रमादीन् पञ्चातिचारान् दर्जयित्वा दिग्विरतिलक्षणं प्रथमं गुणव्रतं सम्यक्तयाऽनुपालनीयम्-उक्तञ्चोपासकदशाङ्गे प्रथमेऽध्ययने-'दिस्त्रिव्यस्य पञ्च अङ्गारा जाणियन्वा, न समाचरियन्वा, तं जहा-उडुदिसिपरिमाणाहकमे, अहोदिसि परिमाणाहकमे, तिरियदिसि परिमाणाहकमे, खेत्त-वुडुस्सुह अंतरडुहा' । दिग्ब्रतस्य पञ्चातिचारा ज्ञातव्या, न समाचरितव्याः तद्यथा-ऊर्ध्वदिक्परिमाणातिक्रमः-अधोदिक् परिमाणातिक्रमः-तिर्यग्दिक् प्रमाणातिक्रमः-क्षेत्रवृद्धिः-स्मृत्यन्तर्धानम्-इति ॥४६॥

मूलम्-उपभोगपरिभोगपरिमाणस्स सच्चित्ताहाराइया पञ्च अङ्गारा ॥४७॥

छाया-उपभोगपरिभोगपरिमाणस्य सच्चित्ताहारादिकाः पञ्चातिचाराः ॥४७॥
तरवार्थदीपिका-पूर्वसूत्रे दिग्ब्रतस्य-ऊर्ध्वदिक् प्रमाणातिक्रमादिकाः

चाहिए । गृहस्थ श्रावक को ऊर्ध्वदिक्प्रमाणातिक्रम आदि पांचों अतिचारों से बच कर दिशाविरतिरूप प्रथम गुणव्रत का सम्यक् प्रकार से पालन करना चाहिए । उपासकदशांग के प्रथम अध्ययन में कहा है-दिशाव्रत के पांच अतिचार जानने योग्य हैं, आचरण करने योग्य नहीं हैं । वे इस प्रकार हैं-ऊर्ध्वदिक्प्रमाणातिक्रम अधोदिक्प्रमाणातिक्रम, तिर्यग्दिक्प्रमाणातिक्रम, क्षेत्र वृद्धि और स्मृत्यन्तर्धान ॥४६॥

‘उपभोगपरिभोग’ इत्यादि

उपभोगपरिभोगपरिमाणव्रत के सच्चित्ताहार आदि पांच अतिचार हैं ॥४७॥

तरवार्थदीपिका-पूर्व सूत्र में दिग्ब्रत के ऊर्ध्वदिक् प्रमाणातिक्रम

જોઈએ. ગૃહસ્થ શ્રાવકે ઉર્ધ્વદિક્ પ્રમાણાતિક્રમ આદિ પાંચે અતિચારથી બચીને દિશાવિરતિ રૂપ પ્રથમ ગુણવ્રતનું સમ્યક્ પ્રકારથી પાલન કરવું જોઈએ. ઉપાસકદશાંગના પ્રથમ અધ્યયનમાં કહ્યું છે-દિશાવ્રતના પાંચ અતિચાર જાણવા યોગ્ય છે, આચરણ કરવા યોગ્ય નથી તે આ પ્રમાણે છે-ઉર્ધ્વદિક્ પ્રમાણાતિક્રમ, અધોદિક્ પ્રમાણાતિક્રમ, તિર્યગ્દિક્ પ્રમાણાતિક્રમ ક્ષેત્રવૃદ્ધિ અને સ્મૃત્યન્તર્ધાન. ॥૪૬॥

‘ઉપભોગપરિભોગપરિમાણસ્સ’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-ઉપભોગપરિભોગ પરિમાણ વ્રતના સચ્ચિત્તાહાર આદિ પાંચ અતિચાર છે. ॥૪૭॥

તરવર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્રમાં દિગ્બ્રતના ઉર્ધ્વદિક્ પ્રમાણાતિક્રમ આદિ

પશ્ચાત્તિચારાઃ પ્રરૂપિતાઃ સમ્પ્રતિ-યથાક્રમપ્રાપ્તસ્ય દ્વાદશવ્રતાપેક્ષયા સપ્તમસ્ય
 ગુણવ્રતાપેક્ષયા દ્વિતીયસ્યોપભોગપરિભોગપરિમાણવ્રતસ્ય સચિત્તાહારાદિકાન્
 પશ્ચાત્તિચારાન્ પ્રરૂપયિતુમાહ-‘ઉપભોગપરિભોગપરિમાણસ્ય સચિત્તાહારા-
 દ્યયા પંચ અદ્યારા’ ઇતિ, ઉપભોગપરિભોગસ્ય, તત્ર-ઉપભોગઃ-વસ્તુનઃ સકૃદ્
 વ્યવહારઃ-અશનપાનસ્ત્રક્ષ્ચન્દનાદિભોગરૂપઃ । પરિભોગો-વસ્તુનઃ પુનઃ પુન-
 વ્યવહારઃ વસ્ત્રાભૂષણાદિભોગઃ તયોઃ-પરિમાણકરણમ્ ઉપભોગપરિભોગપરિ-
 માણમ્ ઉપભોગપરિભોગો દ્વિવિધઃ, ભોજનતઃ-કર્મતઃ, -ભોજનતઃ ઉપભોગ
 પરિભોગસ્યાઽશનપાનસ્વાદિમસ્વાદિમસ્ત્રાલંકારાદિકસ્ય પરિમાણકરણરૂપસ્ય
 સપ્તમવ્રતસ્ય સચિત્તાહારાદિકાઃ-સચિત્તાહારઃ-૧ આદિના-સચિત્ત પ્રતિવદ્ધાહારઃ
 ૨ અપવૃત્તૌષધિમક્ષણમ્-૩ દુષ્પવૃત્તૌષધિમક્ષણમ્-૪ તુચ્છૌષધિમક્ષણમ્-૫ इत्येते

આદિ પાંચ અતિચાર ઘટલાઈ ગઈ હૈં, અથ ક્રમપ્રાપ્ત, વારહ વ્રતોં કી
 અપેક્ષા દૂસરે ઉપભોગપરિમાણવ્રત કે સચિત્તાહાર આદિ પાંચ અતિચારોં
 કા કથન કરતે હૈં-

ઉપભોગપરિભોગપરિમાણવ્રત કે પાંચ અતિચાર હૈં । જો વસ્તુ એક
 વાર ભોગી જાય વહ ઉપભોગ કહલાતી હૈ, જૈસે અશન, પાન, માલા,
 ચન્દન આદિ ઓર જો વસ્તુ વાર-વાર ભોગી જાય ઉસે પરિભોગ
 કહતે હૈં, જૈસે-વસ્ત્ર, આભૂષણ આદિ । इन दोनों का परिमाण करना
 ઉપભોગપરિભોગપરિમાણ કહલાતા હૈ । ઉપભોગપરિભોગ દો પ્રકાર કા
 હૈ-ભોજન સે ઓર કર્મ સે । इनमें से भोजन से जो उपभोग परिभोग
 હૈ ઓર અશન, પાન, સ્વાદિમ, સ્વાદિમ, વસ્ત્ર, અલંકાર આદિ કા પરિ-
 માણ કરના જિસકા લક્ષણ હૈ, ઉસ સાતવેં વ્રત કે પાંચ અતિચાર
 હૈં-(૧) સચિત્તાહાર (૨) સચિત્તપ્રતિવદ્ધાહાર (૩) અપવૃત્તૌષધિ મક્ષણ

પાંચ અતિચાર ઘટાવવામાં આવ્યા છે હવે ક્રમપ્રાપ્ત, ઓર વ્રતોની અપેક્ષા
 સાતમાં અને ગુણવ્રતોની અપેક્ષા બીજા ઉપભોગપરિભોગપરિમાણ વ્રતના
 સચિત્તાહાર આદિ પાંચ અતિચારોનું કથન કરીએ છીએ-

ઉપભોગપરિભોગ પરિમાણ વ્રતના પાંચ અતિચાર છે જે વસ્તુ એકવાર
 ભોગવી શકાય તે ઉપભોગ કહેવાય છે જેમ કે અનાજ, પાણી, માખા,
 ચન્દન વગેરે જે વસ્તુ વારંવાર ભોગવી શકાય તેને પરિભોગ કહે છે. જેમ
 કે-વસ્ત્ર-આભૂષણ આદિ આ બંનેની મર્યાદા બાંધવી ઉપભોગપરિભોગ પરિમાણ
 કહેવાય છે. ઉપભોગપરિભોગ બે પ્રકારના છે-ભોજનથી અને કર્મથી-આમાંથી
 ભોજનથી જે ઉપભોગ પરિભોગ છે અને અશન, પાન, આદિમ, સ્વાદિમ,
 વસ્ત્ર, અલંકાર વગેરેનું પરિમાણ કરવું જેનું લક્ષણ છે તે સાતમાં વ્રતના
 પાંચ અતિચાર છે-(૧) સચિત્તાહાર (૨) સચિત્તપ્રતિવદ્ધાહાર (૩) અપવૃત્ત

પશ્ચાત્તિચારા આત્મનો માલિન્યતાઽઽવાદકા દુષ્પરિણતિવિશેષાઃ ભવન્તિ તત્ર—
સહચિત્તેન વર્તતે इति સચિત્તમ્ ચેતનાદ્રવ્યમ્ તસ્યાઽઽહારઃ સચિત્તાહારઃ ઉપ-
ભોગપરિમાણવ્રતસ્ય પ્રથમોઽતિચારોઽવસેયઃ । સચિત્તેન પ્રતિવદ્ધઃ—ઉપશ્લિષ્ઠઃ
સ્પૃષ્ટોવા ચ આહારઃ સ સચિત્તપ્રતિદ્વાહારઃ ઉપભોગપરિમાણવ્રતસ્ય દ્વિતીયોઽતિ-
ચારો બોધ્યઃ—૨ પક્વમ્—અપક્વૌષધિમક્ષણમ્, પાકતાં ન માણો ય ઔષધિઃ શાલિ
ત્રાહ્યાઘન્નજાતમ્ તસ્ય મક્ષણમ્ અયં તૃતીયોઽતિચારઃ—૩ દુષ્પક્વૌષધિમક્ષણમ્—
દુર્-દુઃખેનાઽતિક્ષ્ણેન યઃ પચ્યતે સ દુષ્પક્વઃ, ચિરાઽગ્નિતાપપરિષાક સાધિતઃ
ઔષધિઃ માપચળકાઽન્નજાતમ્ અલાઝૂચવલ્લફલી પ્રભૃતિશ્ચ યત્પાકે—પક્વાઽપક્વ

(૪) દુષ્પક્વૌષધિમક્ષણ (૫) તુચ્છૌષધિમક્ષણ । એ પાંચ અતિચાર
આત્મા સે મલીનતા ઉત્પન્ન કરતેવાળે દુષ્પરિણામ છે । इनका अर्थ
इस प्रकार है—

(૧) જો ચિત્ત સહિત હો વહ સચિત્ત કહલાતા હૈ અર્થાત્ ચેતના-
વાન્ દ્રવ્ય । उसका आहार करना सचित्ताहार नामक उपभोगपरिभोग
परिमाणव्रत का प्रथम अतिचार है ।

(૨) સચિત્ત સે બિલા હુઆ યા હુઆ હુઆ આહાર સચિત્ત પ્રતિ-
વદ્ધ આહાર કહલાતા હૈ । यह उपभोगपरिभोगपरिमाण व्रत का
दूसरा अतिचार है ।

(૩) જો શાલિ વ્રીહિ આદિ અન્ન પકા ન હો, વહ અપક્વ કહલાતા
હૈ, उसका भक्षण करना अपक्वौषधिभक्षण नामक तीसरा अतिचार है ।

(૪) જો બહુત કઠિનાઈ સે પકે વહ દુષ્પક્વ અર્થાત્ બહુત દેર તક
अग्नि जलाने पर पकने वाली वस्तु । जैसे उडद, चना आदि अन्न,

वौषधिलक्षण (૪) દુષ્પક્વૌષધિમક્ષણ (૫) તુચ્છૌષધિલક્ષણ આ પાંચ અતિચાર
આત્મામાં મલીનતા ઉત્પન્ન કરનારા દુષ્પરિણામ છે. એમનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—

(૧) જે ચિત્ત સહિત હોય તે સચિત્ત કહેવાય છે અથવા ચેતનાવાન્
દ્રવ્ય તેનો આહાર કરવો. સચિત્તાહાર નામક ઉપભોગપરિભોગ પરિમાણ
વ્રતનો પ્રથમ અતિચાર છે.

(૨) સચિત્તથી મળેલું અથવા અડકેલો આહાર સચિત્તપ્રતિબદ્ધ આહાર
કહેવાય છે. આ ઉપભોગ પરિભોગ પરિમાણ વ્રતનો બીજો અતિચાર છે.

(૩) જે ડાંગર—ચોખા વગેરે અનાજ પાક્યું ન હોય, તે અપક્વ
કહેવાય છે તેનું ભક્ષણ કરવું અપક્વૌષધિલક્ષણ નામક ત્રીજો અતિચાર છે.

(૪) જે ઘણી મુશ્કેલીથી પાકે (રંધાય) તે દુષ્પક્વ અર્થાત્ ઘણા સમય
સુધી અગ્નિ બાળવાથી રંધાતી વસ્તુ જેમ કે—અડદ, ચણા વગેરે અનાજ,

વિષયિणीશક્તિ જાયતે તાદૃશસ્ય દુષ્પક્વૌષધેર્મક્ષણં દુષ્પક્વૌષધિમક્ષણમ્, અસ્યા-
 ડડરમ્ વાહુત્યાન્મિશ્રત્વસન્દેહાચ્ચાઽતિચારત્વમ્ અયં ચતુર્થોઽતિચારઃ ૪ ।
 તુચ્છૌષધિમક્ષણમ્, તુચ્છો વિરાધનાવહુલોઽલ્પતૃપ્તિકારક ઔષધિવિશેષઃ મૂશ્નિ-
 સ્વી-સીતાફલાદિરતસ્ય મક્ષણં તુચ્છૌષધિમક્ષણમ્ અસ્ય યથાવત્પરિપક્વસ્યાપિ-
 યોજનજાતસ્યાઽલ્પત્વાત્-ત્યાજ્યભાગસ્ય વહુલ્લત્વાદતિચારત્વમ્ । અયં પશ્ચમોઽ-
 તિચારઃ ૫ કર્મત ઉપભોગપરિભોગઃ-પશ્ચદશ કર્માદાનરૂપઃ । પશ્ચદશ
 કર્માદાનાનિ-યથા અંગારકર્મ ૧ વનકર્મ ૨ શાકટિકકર્મ ૩ ભાટી કર્મ ૪

છોફી તથા ચંબલા આદિ કી ફલી, જિસકે પકને પર યહ શંકા ઉત્પન્ન
 હોતી હૈ કિ યહ પકી હૈ અથવા નહીં ? ऐसी दुष्पक्व औषधि का
 भक्षण करना दुष्पक्वौषधिभक्षण नामक अतिचार है । इसमें आरंभ
 की अधिकता होती है और मिश्र होने का सन्देह बना रहता है, इस
 कारण इसे अतिचार गिना गया है । यह चौथा अतिचार है ।

(૫) જો તુચ્છ હો અર્થાત્ જિસમેં વિરાધના ઘટ્ટ હો ઓર જિસસે
 તૃપ્તિ અલ્પ હોતી હો ऐसी मौसवी सीताफल आदि को तुच्छौषधि
 कहते हैं । उसका भक्षण करना तुच्छौषधिभक्षण है । तुच्छौषधि को
 ठीक प्रकार पका भी लिया जाय तो भी उसमें खाद्य अंश कम होता है
 ओर फेंकने योग्य भाग अधिक होता है, अतएव इसे अतिचार कहा है ।
 કર્મ સે ઉપભોગપરિભોગ પન્દ્રહ કર્માદાન હૈ । ઉનકે નામ યે હૈ-(૧)
 અંગાર કર્મ (૨) વનકર્મ (૩) શાકટિકકર્મ (૪) ભાટીકર્મ (૫) સ્ફોટી-

શુવાર અથવા ચોળા વગેરેની સીંગ જેના રંધાવાથી એવી શંકા ઉત્પન્ન
 થાય છે કે આ પાકી હશે કે કેમ ? આવી દુષ્પક્વ ઔષધિનું ભક્ષણ કરવું
 દુષ્પક્વૌષધિ ભક્ષણ નામક અતિચાર છે. આમા આરંભની અધિકતા હોય છે
 અને મિશ્ર હોવાની શંકા થતી રહે છે આથી એની અતિચારમાં ગણતરી
 કરવામાં આવી છે આ ચોથો અતિચાર છે.

(૫) જે તુચ્છ હોય અર્થાત્ જેમાં વિરાધના ઘણી હોય અને જેનાથી
 તૃપ્તિ અલ્પ થતી હોય એવા મોસંબી, સીતાફળ આદિને તુચ્છૌષધિ કહે
 છે. તેનું ભક્ષણ કરવું તે તુચ્છૌષધિ ભક્ષણ છે. તુચ્છૌષધિને સારી પેઠે રાંધી
 પણ લેવાય તો પણ તેમાં ખાદ્ય અંશ ઓછો હોય છે અને ફેંકી દેવા લાયક
 ભાગ વધુ હોય છે આથી એને અતિચાર કહેલ છે.

કર્મથી ઉપભોગ પરિભોગ પંદર કર્માદાન છે. તેમના નામ આ
 પ્રમાણે છે-(૧) અંગારકર્મ (૨) વનકર્મ (૩) શાકટિકર્મ (૪) ભાટીકર્મ

સ્ફોટીકર્મ-૫ દન્તવાણિજ્યમ્ ૬ લાક્ષાવાણિજ્યમ્ ૭ રસવાણિજ્યમ્ ૮ વિષવા-
ણિજ્યમ્ ૯ કૈશવાણિજ્યમ્ ૧૦ યન્ત્રપીડનકર્મ ૧૧ નિર્લીઘનકર્મ ૧૨ દવાગ્નિ-
દાપનમ્ ૧૩ સરોહદતટાગશોષણમ્ ૧૪ અસતીજનપોષણં ૧૫ ચેતિ, एतानि
पञ्चदश कर्मादानपदवाच्यानि, तथाहि-कर्माणि कठोराणि आदीयन्ते गृह्यन्ते,
यद्वा-कठोराणां कर्मणा मादानं-ग्रहणं यैर्भवति तानिति व्युत्पत्तेः, एतानि पञ्च-
दशकर्मादानानि श्रमणोपासका न स्वयं कुर्वन्ति नाऽन्येन करयन्ति, कुर्वन्तं वाऽ-
न्यंनाऽनुमोदन्ते । एते पञ्चदशकर्मतः-उपभोगपरिभोगपरिमाणव्रतस्याऽतिचारा
अवसेयाः एषामग्र्यारम्भवनच्छेदादिना षट्कायोपमर्दनादिसदभावादनर्थबहु-
लत्वादतिचारत्वम् । एषां सविस्तरं व्याख्या-उपासकदशाङ्गसूत्रे मत्कृताया
मगारधर्मसंजीविनीव्याख्याया मानन्दस्य व्रतस्वीकारप्रकरणे एकपञ्चाशत्तम
सूत्रे-विलोकनीयेति ॥४७॥

કર્મ (૬) દન્તવાણિજ્ય (૭) લાક્ષા વાણિજ્ય (૮) રસ વાણિજ્ય (૯)
વિષવાણિજ્ય (૧૦) કૈશ વાણિજ્ય (૧૧) યંત્રપીડનકર્મ (૧૨) નિર્લીઘન-
કર્મ (૧૩) દવાગ્નિદાપન (૧૪) સરોહદતટાગશોષણ ઓર (૧૫) અસતી-
જનપોષણ । યહ પન્દ્રહ કર્માદાન કહલાતે હૈં । જિનસે કઠિન કર્મોં કા
આદાન-ગ્રહણ-હોતા હૈં ઉન્હેં કર્માદાન કહતે હૈં । શ્રમણોપાસક હન
પન્દ્રહ કર્માદાનોં કો ન સ્વયં કરતે હૈં, ન દૂસરે સે કરવાતે હૈં ઓર ન
કરને વાલે કી અનુમોદના કરતે હૈં । કર્મતઃ ઉપભોગપરિભોગ પરિમાણ
વ્રત કે યે પન્દ્રહ અતિચાર હૈં । હનમેં અગ્નિ કા આરંભ વહુત હોતા હૈં,
જંગલ કટવાયે જાતે હૈં ઓર ષટ્કાય કા વિનાશ હોતા હૈં ઓર અનર્થોં
કી બહુલતા હોતી હૈં, હસ કારણ યે અતિચાર કહે ગયે હૈં । હનકી
વિસ્તાર યુક્ત વ્યાખ્યા ઉપાસકદશાંગ સૂત્ર મેં મેરી ચનાઈ હુઈ 'અગાર

(૫) સ્ફોટીકર્મ (૬) દન્તવાણિજ્ય (૭) લાક્ષાવાણિજ્ય (૮) રસવાણિજ્ય (૯)
વિષવાણિજ્ય (૧૦) કૈશવાણિજ્ય (૧૧) યંત્રપીડનકર્મ (૧૨) નિર્લીઘનકર્મ
(૧૩) દવાગ્નિદાપન (૧૪) સરોહદતટાગશોષણ અને (૧૫) અસતીજનપોષણ
આ પંદર કર્માદાન કહેવાય છે જેનાથી ભારે કર્મોનું આદાન-ગ્રહણ થાય છે
તેમને કર્માદાન કહેવાય છે. શ્રમણોપાસક આ પંદર કર્માદાનોને સ્વયં ગ્રહણ
કરતાં નથી, બીજા પાસે તે કરાવતાં નથી અને કરનારાઓને અનુમોદન આપતા
નથી કર્મતઃ ઉપભોગ પરિભોગપરિમાણ વ્રતના આ પંદર અતિચાર છે. આમાં
અગ્નિનો આરંભ થયો થાય છે, જંગલ કપાવાય છે અને છકાયના શ્વેતી
હિંસા થાય છે અને અનર્થોની પરંપરા ઉત્પન્ન થાય છે આથી એમને
અતિચાર કહેવામાં આવ્યા છે. એની વિસ્તારયુક્ત વ્યાખ્યા ઉપાસકદશાંગ-

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—एतत्सूत्रस्य तत्त्वार्थनिर्युक्तिवक्तव्यता—एतत्सूत्रस्य
तत्त्वार्थदीपिका टीकायामेव गातार्थाऽतस्तत् एव दिवेवनीया ॥४७॥

મૂલ્ય—અણદ્વાદંડ વેરમળઠ્ઠવચસ્સ કંદર્પકુચકુચ્યાદ્યા પંચ
અદ્યારા ॥૪૮॥

છાયા—અનર્થદણ્ડવિરમણવ્રતસ્ય કન્દર્પ કૌકુચ્યાદિકાઃ પશ્ચાત્તિચારાઃ ॥૪૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રે—ઉપભોગપરિભોગવિરમણલક્ષણસ્ય સપ્તમવ્રત-
સ્ય સચિત્તાઽઽહારાદિકાઃ પશ્ચાત્તિચારાઃ પ્રતિપાદિતાઃ, સમ્પત્તિ—ક્રમપ્રાપ્તસ્યા-
ઽનર્થદણ્ડવિરમણલક્ષણસ્યાઽઽષ્ટમવ્રતસ્ય પશ્ચાત્તિચારાન્ પ્રતિપાદયિતુમાહ ‘અણદ્વા-

ધર્મ સંજીવિની’ નામક ટીકા મેં, અનન્દ શ્રાવક કે વ્રત ગ્રહણ પ્રકરણ
મેં ક્યાવનવેં સૂત્ર મેં દેખ લેના चाहिए ॥૪૭॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—નિર્ધારિત ક્રમ કે અનુસાર હસ સૂત્ર કી તત્ત્વાર્થ-
નિર્યુક્તિ કહના चाहिए, મગર બહુ તત્ત્વાર્થદીપિકા ટીકા મેં હી અન્તર્ગત
હો જાતી હૈ, અતઃ ડસી સે સમજ લેના चाहिए ॥૪૭॥

‘અણદ્વાદંડ વેરમણ’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—કન્દર્પ કૌકુચ્ય આદિ અનર્થદણ્ડવિરમણવ્રત કે પાંચ
અતિચાર હૈ ॥૪૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્ર મેં ઉપભોગપરિભોગવિરમણ નામક
સાતવેં વ્રત કે સચિત્તાહાર આદિ પાંચ અતિચારોં કા પ્રતિપાદન કિયે
ગયે હૈ, અવ ક્રમ પ્રાપ્ત અનર્થદણ્ડવિરમણ નામક આઠવેં વ્રત કે પાંચ
અતિચારોં કા પ્રતિપાદન કરતે હૈ—

સૂત્રમાં, મારા વડે રચિત ‘અગારધર્મસંજીવિની’ નામની ટીકામાં, આનંદ-
શ્રાવકના વ્રતગ્રહણ પ્રકરણમાં, એકાવનમાં સૂત્રમાં જોઈ જવા લાગામણ છે. ॥૪૭॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—નિર્ધારિતક્રમ અનુસાર આ સૂત્રની તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ
કહેવી જોઈએ, પરંતુ તે તત્ત્વાર્થદીપિકા ટીકામાં જ સમાવિષ્ટ થઈ ગય છે
આથી તેમાં જ સમજ લેવી જોઈએ ॥૪૭॥

‘અણદ્વાદંડ વેરમણઠ્ઠવચસ્સ’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—કન્દર્પકૌકુચ્ય આદિ અનર્થદણ્ડ વિરમણવ્રતના પાંચ અતિ-
ચાર છે. ॥૪૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં ઉપભોગ પરિભોગ વિરમણ નામક સાતમાં
વ્રતના સચિત્તાહાર આદિ પાંચ અતિચાર પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યા છે;
હવે ક્રમપ્રાપ્ત અનર્થદણ્ડ વિરમણ નામના આઠમાં વ્રતના પાંચ અતિચારોનું
પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

દંડવેરમણવચસસ કંદપ્પ કુવકુહ્યાહ્યા પંચ અહ્યારા'—इति, अनर्थदण्ड-
विरमणव्रतस्याऽष्टमव्रतस्य तृतीयगुणव्रतरूपस्य कन्दर्पकौकुच्यादिकाः—कन्दर्पः १
कौकुच्यम् २ आदिना—मौख्यम् ३ संयुक्ताधिकरणम् ४ उपभोगाऽतिरिक्तम् ५
इत्येते पञ्चातिचारा आत्मनो मालिन्याऽऽपादका दुष्परिणतिविशेषा भवन्ति ।
तत्र—रागोद्दीपकात्कामोद्दीपकः महासयुक्तोऽसभ्याऽश्लीलवाकप्रयोगः कन्दर्प
इति व्यवह्रियते १ एतदेव वाग् व्यापारणं—हसनश्च मोहनीयकर्मोदयसमावेशाद्
दुष्कायकर्मप्रयुक्तं वाग् व्यापारोपसर्जनकायव्यापारप्रधानं कौकुच्य मुच्यते, कुकु-
चस्य कुत्सितसंकोचनादि क्रियायुक्तस्य भावः कौकुच्यम्, भाण्डचेष्टितवत्—
मुख-नासा-भ्रू-नेत्रादीनां वैरूप्यकरणेन हास्योत्पादनमित्यवस्यैयः २ धाष्ट्यं.

અનર્થદણ્ડવિરમણવ્રત કે પાંચ અતિચાર હૈં—(૧) કન્દર્પ (૨) કૌકુ-
ચ્ય (૩) મૌખ્ય (૪) સંયુક્તાધિકરણ ઓર (૫) ઉપભોગાતિરિક્ત । इन
अतिचारों का स्वरूप इस प्रकार है—

(૧) રાગભાવ કે ઉદ્રેક સે કામોદ્દીપક, હાસ્યયુક્ત, અસભ્ય, एवं
अश्लील વચનોં કા પ્રયોગ કરના કન્દર્પ કહલાતા હૈ ।

(૨) યહી વચનવ્યાપાર ઓર હંસી-મજાક મોહનીયકર્મ કે ઉદય
કે આવેશ સે જવ કાયિક કુચેષ્ટાઓં સે યુક્ત હોતા હૈ, जिसमें वचन
કા વ્યાપાર ગૌણ ઓર કાય કા વ્યાપાર પ્રધાન હોતા હૈ તવ કૌકુચ્ય
કહલાતા હૈ । कुकुच अर्थात् कुत्सित संकोचन आदि क्रिया से युक्त
પુરુષ કા ભાવ કૌકુચ્ય કહલાતા હૈ । भाण्डों की सी चेष्टाओं
કે સમાન મુખ, નાક, મોંહ, નેત્ર આદિ કો વિરૂપ બના કર દૂસરોં
કો હંસાના કૌકુચ્ય કા આશય હૈ ।

અનર્થદણ્ડ વિરમણ વ્રતના પાંચ અતિચાર છે—(૧) કન્દર્પ (૨) કૌકુચ્ય
(૩) મૌખ્ય (૪) સંયુક્તાધિકરણ અને (૫) ઉપભોગાતિરિક્ત આ અતિ-
ચારોનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—

(૧) રાગભાવના ઉદ્રેકથી કામોદ્દીપક, હાસ્યયુક્ત, અસભ્ય અને અશ્લીલ
વચનોના પ્રયોગ કરવો કન્દર્પ કહેવાય છે.

આ જ વચનવ્યાપાર અને ઠટ્ટા-મજકરી મોહનીય કર્મના ઉદયના
આવેશથી જ્યારે શારીરિક કુચેષ્ટાઓથી યુક્ત હોય છે. જેમાં વચનનો
વ્યાપાર ગૌણ અને કાયાનો વ્યાપાર મુખ્ય હોય છે ત્યારે કૌકુચ્ય અર્થાત્
કુત્સિત સંકોચન આદિ ક્રિયાથી યુક્ત પુરુષનો ભાવ કૌકુચ્ય કહેવાય છે.
વિદૂષક જેવી ચેષ્ટાઓની માફક મુખ, નાક, બ્રમર, નેત્ર આદિને કુરૂપ
બનાવીને ખીજાઓને હસાવવા કૌકુચ્યનો આશય છે.

વહુલમ્-અનર્ગલં ચત્કિશ્ચિત્-અનર્થકમ્ વહુપલપનં મૌલ્યં મુચ્યતે ૩ સંયુક્તા-
ધિકરણમ્-અધિક્રિયતે સમ્વધ્યતે દુર્ગતિષ્વાત્માઽનેનેત્વધિકરણમ્, ઉદ્ઘલ-
મુસલ-ચરટ્-વાસી-કુઠારાદિ શસ્ત્રમ્, સંયુક્તઞ્ચ તદધિકરણ-સંયુક્તાધિકરણમ્
ઉદ્ઘલાદિકં નૈકકં કિશ્ચિદપિ કાર્યં કર્તું ક્ષમમ્, અપિતુ-મુમલાદિના પરસ્પર-
સંયોગેનૈવ, એવમ્-વાસ્યાદિકમપિ દણ્ડાદિ સંયોગેનૈવ છેદનાદિકાર્યં સમ્પાદયિતું
સમર્થં ભવતિ નતુ-એકકમિતિ-ઉદ્ઘલાદીનાં મુસલાદિના સંયોજનં, સંયુક્તા-
ધિકરણ મિતિભાવઃ । સંયુક્તાધિકરણસ્ય હિંસા હેતુત્વાદતિચારત્વમવગ-
ન્તવ્યમ્ ૪ । ઉપભોગપરિભોગયોગ્યા દધિકસ્થાઽર્થસ્ય ગ્રહણમ્ ઉપભોગ-

(૩) ધૃષ્ટના સ્ત્રે પરિપૂર્ણ, અનર્ગલ, નિર્થક અંટસંટ ચડચડાના મૌલ્ય કહલાતા હૈ ।

(૪) જિલ્લકે કારણ આત્મા દુર્ગતિકા અધિકારી બનાયા જાય વહ અધિકરણ કહલાતા હૈ અર્થાત્ ઝલ્લ, મૂસલ, ચકી, વસૂલા, કુલ્હાડા આદિ શસ્ત્ર । इनको जोड़ कर कार्य करने योग्य बनाना संयुक्ताधि-
करण है । ઝલ્લ આદિ અકેલા-અકેલા કોઈ કાર્ય નહીં કર સકતા, કિન્તુ મૂસલ કે સંયોગ સે હી કરતા હૈ इसी प्रकार वसूला आदि भी हत्ये का संयोग होने पर ही अपना कार्य करने में समर्थ होता है, बिना हत्ये के नहीं । इस कारण ઝલ્લ આદિ કો મૂસલ આદિ સે સંયુક્ત કરના સંયુક્તાધિકરણ સમજના ચાહિયે । સંયુક્તાધિકરણ હિંસા કા હેતુ હોને સે અતિચાર હૈ ।

(૫) ઉપભોગ ઔર પરિભોગ કે યોગ્ય સે અધિક વસ્તુ કો ગ્રહણ

(૩) ધૃષ્ટતાથી પરિપૂર્ણ, અનર્ગલ, નિર્થક, એલદેલ બખડવું મૌખ્ય કહેવાય છે.

(૪) જેના કારણે આત્માને દુર્ગતિનો અધિકારી બનાવવામાં આવે તે અધિકરણ કહેવાય છે અર્થાત્ ઉખલ, મૂશળ, ઘંટી, વાંસલો, કુહાડો વગેરે શસ્ત્રો એમને લેગા કરીને કાર્ય કરવા યોગ્ય બનાવવું સંયુક્તાધિકરણ છે. સાંખેલું વગેરે સ્વતંત્રપણે કોઈ કાર્ય કરી શકતું નથી પરંતુ મૂશળના સંયોગથી જ કરી શકે છે એવી જ રીતે વાંસલો વગેરે પણ હાથાનો સંયોગ હોવાથી જ પોતાનું કાર્ય કરવામાં સમર્થ થાય છે, હાથા વગર નહીં. આ કારણે સાંખેલા આદિને મૂશળ આદિથી સંયુક્ત કરવા સંયુક્તાધિકરણ સમજવા જોઈએ. સંયુક્તાધિકરણ હિંસાનો હેતુ હોવાથી અતિચાર છે.

(૫) ઉપભોગ અને પરિભોગના યોગ્યથી અધિક વસ્તુને ગ્રહણ કરવું

પરિભોગાઽતિરિક્ત મવસેયમ્, તન્ન-ઉપભોગઃ સકૃદ્ભોગયોગ્યમન્નપાન સ્વક
ચન્દનાદિકમ્, પરિભોગં-પુનઃ પુન ભોગયોગ્યં ભવનાઽઽસનાદિકં તયોરતિ-
રિક્તમ્-આધિવચમ્ ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્તમ્ । તથા ચૈતે પશ્ચ કન્દર્પાદયોઽનર્થ-
દણ્ડવિરતિલક્ષણતૃતીયગુણવ્રતસ્યાઽતિચારા ભવન્તિ, તસ્માદ્-વ્રતધારિણા કન્દ-
ર્પાદિ પરિવર્જનપૂર્વકમનર્થદણ્ડવિરતિવ્રત મનુષ્યાલનીયમ્ ॥૪૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વે તાવત્-ક્રમપ્રાપ્તસ્ય દ્વિતીયાણુવ્રતસ્ય-ઉપભોગપરિ-
ભોગપરિમાણલક્ષણસ્ય સચિત્તાહારાદયઃ પશ્ચાત્તિચારાઃ પ્રરૂપિતાઃ સમ્પ્રતિ=
ક્રમાગતસ્યાઽનર્થદણ્ડવિરતિલક્ષણ તૃતીયગુણવ્રતસ્ય પશ્ચાત્તિચારાન્ કન્દર્પાદીન્
પ્રરૂપયિતુમાહ-‘અણદ્વંડવેરમણઽવચસ્સ કદ્દપ્પકુક્કુહયાહયા પંચ
અહચારા-’ઇતિ, પૂર્વોક્તસ્વરૂપસ્યાઽનર્થ દણ્ડવિરમણવ્રતસ્ય કન્દર્પકૌકુચ્યાદિકાઃ

કરના ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્ત અતિચાર હૈ । એક વાર ભોગને કી
વસ્તુ ઉપભોગ કહલાતી હૈ ઓર વાર-વાર ભોગને યોગ્ય વસ્તુ કો
પરિભોગ કહતે હૈ । इनकी अधिकता उपभोगपरिभोगाति-
रिक्त अतिचार है ।

ये पांचो कन्दर्प आदि अनर्थदण्डविरमणव्रत के अतिचार हैं ।
अतएव व्रतधारी को कन्दर्प आदि से बच कर अनर्थदण्डविरमणव्रत
का पालन करना चाहिए ॥४८॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति--पहले क्रमप्राप्त द्वितीय गुणव्रत-उपभोगपरिभोग
परिमाण के सचिन्ताहार आदि पांच अतिचारों का प्ररूपण किया गया,
अब क्रमागत अनर्थदण्डविरमणव्रत नामक तीसरे गुणव्रत के
पांच अतिचारों का कथन करते हैं-

ઉપભોગ પરિભોગાતિરિક્ત અતિચાર છે. એકવાર ભોગવવાની વસ્તુ ઉપભોગ
કહેવાય છે અને વારંવાર ભોગવવા યોગ્ય વસ્તુને પરિભોગ કહે છે. એમની
વિપૂલતા ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્ત અતિચાર છે.

આ પાંચે કન્દર્પ આદિ અનર્થદણ્ડ વિરમણ વ્રતના અતિચાર છે આથી
વ્રતધારીએ કન્દર્પ આદિથી બચીને અનર્થદંડ વિરમણવ્રતનું પાલન કરવું
જોઈએ. ॥૪૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલા ક્રમપ્રાપ્ત દ્વિતીય ગુણવ્રત-ઉપભોગપરિભોગ
પરિમાણના સચિન્તાહાર, આદિ પાંચ અતિચારોનું પ્રરૂપણ કરવામા આવ્યું,
હવે ક્રમાગત અનર્થદણ્ડ વિરમણ વ્રત નામક ત્રીજા ગુણવ્રતના પાંચ અતિ-
ચારોનું કથન કરીએ છીએ-

અનર્થદંડ વિરમણ વ્રતના પાંચ અતિચાર છે-(૧) કન્દર્પ (૨) કૌકુચ્ય

—કન્દર્પઃ ૧ કૌકુચ્યમ્ ૨ આદિના-મૌલ્યમ્ ૩ સંયુક્તાધિકરણમ્ ૪ ઉપભોગ-
પરિભોગાતિરિક્તમ્ ૫ इत्येते पञ्चातिचारा आत्मनो मालिन्याऽऽपादका
दुष्परिणतिविशेषा भवन्ति । तत्र कन्दर्पः—कापरतद्वेतुभूतोऽङ्गलील वाक्प्रयोगोऽपि
कन्दर्पपदेनो-पचर्यते, तथा च—महासमिश्रोऽसभ्याऽऽशिष्टवाक्प्रयोगः कन्दर्पः १
भू-नेत्रोष्ठ-वदनादिविकारपूर्वकः परिहासादिजनको भाण्डचारणस्यैव कायिको
व्यापारः । कौकुच्यम्—कुत्सितनासिका-नयनोष्ठादि संकोचनादि युक्तस्य
कुक्कुचस्य भावः कौकुच्यमिति व्युत्पत्तेः, तच्च—कौकुच्य मनेकविधम्भवति
भाण्डचारणादिविडम्बन क्रियासदृशक्रियारूपत्वात् । यद्वा—कुत्सितः कुचः—भू-
नेत्र-नासिकादिसंकोचनादि क्रियायुक्तः कुक्कुचस्तस्य भावः कौकुच्य इत्येद-

અનર્થદંડચિરમણવ્રત કે પાંચ અતિચાર હૈં—(૧) કન્દર્પ (૨) કૌકુચ્ય
(૩) મૌલ્ય (૪) સંયુક્તાધિકરણ ઓર (૫) ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્ત ।
યે પાંચો અતિચાર આત્મા મેં યલીનતા ઉત્પન્ન કરને વાલે દુષ્પરિણામ-
રૂપ હૈં । इनका स्वरूप हल प्रकार है—

(૧) કન્દર્પ અર્થાત્ કામ । જો વચન કન્દર્પ કા કારણ હોતા હૈ
વહ બી કન્દર્પ કહલાતા હૈ । तात्पर्य यह है कि हंसी-मजाक से युक्त
असभ्य और अशिष्ट वचन प्रयोग करना कन्दर्प नामक अनिचार है ।

(૨) મૌહ, નેત્ર હોઠ ઓર મુઘ આદિ કો વિકૃત કરકે, દૂસરોં કો
હંસાને કે લિષ્ ભાંડ કે સમાન જો શારીરિક ચેષ્ટા કી જાતી હૈ, ઉસે
કૌકુચ્ય કહતે હૈં । કૌકુચ્ય કઈ પ્રકાર સે કિયા જા સકતા હૈ, ક્યો
કિ વહ ભાંડોં ઇવં ચારણોં કી વિડમ્બના-ક્રિયા કે સમાન હોતા હૈ ।
અથવા કુત્સિત કુચ અર્થાત્ મૌહ, નેત્ર, નાસિકા ઓદિ કે સંકોચન
કી ક્રિયા સે યુક્ત, ઉસકા ભાવ કૌકુચ્ય કહલાતા હૈ ।

(૩) મૌખ્ય (૪) સંયુક્તાધિકરણ અને (૫) ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્ત આ
પાંચે અતિચાર આત્મામાં મલીનતા ઉત્પન્ન કરનારા દુષ્પરિણામરૂપ છે.
એમનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—

(૧) કન્દર્પ અર્થાત્ કામ જે વચન કન્દર્પનું કારણ હોય છે તે પણ
કન્દર્પ કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે ઠકા-મશકરીથી યુક્ત અસભ્ય અને
અશિષ્ટ વચનપ્રયોગ કરવા કન્દર્પ અતિચાર છે. (૨) બ્રમર, નેત્ર, હોઠ,
અને મુખ વગેરેને વિકૃત કરીને, ખીળને હસાવવા કાજે વિદૂષકની માફક જે
જે શારીરિક ચેષ્ટા કરવામાં આવે છે તેને કૌકુચ્ય કહે છે. કૌકુચ્ય ઘણી
રીતે કરી શકાય છે કારણ કે તે ભાટ અને ચારણોની વિડમ્બના-ક્રિયાની
જેવું હોય છે અન્યથા કુત્સિત કુચ અર્થાત્ બ્રમર, નેત્ર, નાસિકા, આદિના
સંકોચનની ક્રિયાથી યુક્ત, તેનો ભાવ કૌકુચ્ય કહેવાય છે. (૩) મુખરને

ધ્રેયમ્ ૨ મૌલ્યમ્ તાવદ્ મુલરસ્ય ભાવો મૌલ્યમ્-ચાપલ્યમ્-ધાઢ્યમ્ બહુલમ્
સભ્યાઽનર્ગલાઽસસ્વદ્દ બહુમલાપિત્વરૂપ મલમન્તવ્યમ્ ૩ સંયુક્તાધિકરણં તાવત્-
પ્રયોજનમનાલોચ્યાઽધિકરણસ્ય સંયોજનમ્, મુલ્લ-દાન-શિલા પુત્રક શસ્ત્ર
ગોધૂમ યન્ત્રશિલાદીનામ્ ઉદ્યલદણ્ડાદિના સંયોજનમવસેયમ્ ૪ એવમ્-ઉપ-
ભોગપરિભોગાઽતિરિક્તત્વં વક્ષ્યનાણસ્વરૂપં વોધ્યમ્, તત્રો-પ્રભોગોઽશન-પાન-
સ્રક્ચન્દન-કુંકુમ-કસ્તૂરિકાવિલેપન પ્રમૃતિરૂપઃ-પરિભોગશ્ચ-વસ્ત્રાઽઽભરણાદિ-
લક્ષણઃ તસ્માદ્-અતિરિક્તમ્ ઉપભોગપરિભોગયોગ્યવસ્તુનાં નિયમિત્તપરિમાણા
દાધિક્યેન વ્રણમ્ ૫ । તથા ચ-કન્દર્પઃ ૧ કૌકુચમ્ ૨ મૌલ્યમ્ ૩ સંયુક્તાધિ-

(૩) સુલ્લર કા ભાવ મૌલ્યમ્ કહલાતા હૈ । ચપલતા, ધૃષ્ટતા સે
યુક્ત અસભ્ય, અનર્ગલ ઔર અસસ્વદ્દ પ્રલાપ આદિ હસકે રૂપ હૈ ।

(૪) પ્રયોજન કા વિચાર કિયે વિના હી અધિકરણ કા સંયોજન
કરના અર્થાત્ મૂલ્લ, દાંતલા, લોઢા, શસ્ત્ર, ચક્રી, શિલા, ઝલ્લ, ડંડા
(હસ્થા) આદિ કે દ્વારા સંયોજન કરના હન્હે પરસ્પર યથા યોગ્ય સંયુક્ત
કરકે કામ કરને યોગ્ય બનાવો ।

(૫) જો વસ્તુ ઇક વાર કામ મેં લાઈ જાય વહ ઉપભોગ કહલાતી
હૈ, જૈસે-અન્નામ, પાન, માલા, ચન્દન, કુંકુમ, કસ્તૂરી આદિ । જો
પદાર્થ પુનઃ-પુનઃ કામ મેં લાયે જાતે હૈ, ડન વસ્ત્ર, આભૂષણ આદિ કો
પરિભોગ કહતે હૈ । હન ઉપભોગ-પરિભોગ કે યોગ્ય વસ્તુઓ કો
નિરર્થક હકદ્વા ફર રલ્લના ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્તત્વ અતિચાર હૈ ।

હસ પ્રકાર (૧) કન્દર્પ (૨) કૌકુચ (૩) મૌલ્ય (૪) સંયુક્તાધિ-
ભાવ મૌલ્યમ્ કહેવાય છે. ચપલતા, ધૃષ્ટતાથી યુક્ત અસભ્ય, અનર્ગલ અને
અસસ્વદ્દ પ્રલાપ આદિ એના રૂપ છે. (૪) પ્રયોજનનો વિચાર કર્યા વગર
જ અધિકરણનું સંયોજન કરવું અર્થાત્ મૂલ્લ, દાંતરડું, લોહું, શસ્ત્ર, ઘંટી,
શિલા, ઝલ્લ, ડાડો (હાથો) આદિ દ્વારા સંયોજન કરવું-આમને પરસ્પર યથા-
યોગ્ય સંયુક્ત કરીને કામ કરવા યોગ્ય બનાવવું (૫) જે વસ્તુ એકવાર કામમાં
લગાડવામાં આવે તે ઉપલોગ કહેવાય છે જેમ કે-અશન, પાન, માળો, ચન્દન
કુંકુમ, કસ્તૂરી વગેરે જે પદાર્થ ફરી-ફરી કામમાં લગાડાય તે વસ્ત્ર, આભૂ-
ષણ આદિને પરિભોગ કહે છે. આ ઉપલોગ પરિભોગને યોગ્ય વસ્તુઓને
અર્થ વગર વધારે લેગા કરી રાખવું ઉપલોગપરિભોગાતિરિક્ત અતિચાર છે.

આવી રીતે (૧) કન્દર્પ (૨) કૌકુચ (૩) મૌલ્ય (૪) સંયુક્તાધિકરણ

કરણમ્ ૪ ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્તં ૫ ચેત્યેવે પશ્ચાન્નર્થદંડવિરતિવ્રતલક્ષણ
તૃતીયગુણવ્રતસ્યાઽતિચારા ભવન્તિ । તત્ર કામાનુષંગિરાગયુક્તાઽસમ્ભ્યાઽશ્લીલવાક્-
પ્રયોગઃ કન્દર્પઃ ૧ અસ્પષ્ટવર્ણશ્રવણરૂપહાસ્યં ચ કૌકુચ્યમ્ એતદુભયમેવ મોહનીય
કર્મોદયાદ્ દુષ્ટકાયવ્યાપારપ્રધાનં વાગ્વ્યાપારોપસર્જનમ્ ૨ પૂર્વાપરસમ્બન્ધરહિતા
નર્ગલવહુલાપિત્વં ધૌસ્વર્યમ્ સ્વાર્થસાધનં દિનેત્ર ચત્કિશ્ચિદસમ્બદ્ધ વહુ પ્રજલ્પન-
રૂપમ્ ૩ । સંયુક્તાઽધિકરણન્તુ-અધિક્રિયતે સમ્બધ્યતે નરકાદિદુર્ગતિષુ આત્માઽનેને
ત્યધિકરણમ્ ઉદૂલ્લ મુસલવરદ્વાસી કુઠારાદિશસ્ત્રમ્, સંયુક્તશ્ચ તદધિકરણં
સંયુક્તાધિકરણમ્, ઉદૂલ્લાદિકં નૈકકં કિમપિ કાર્યં વર્તુ સમર્થં ભવતિ-અપિતુ-
કરણ ઓર (૫) ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્ત, એ પાંચ અનર્થદંડવિરતિ
નામક ત્રીસરે ગુણવ્રત કે અતિચાર હૈં ।

કામ વાસના સે પ્રેરિત, રાગયુક્ત, અસમ્ભ્ય ઓર અશ્લીલ વચનો
કા પ્રયોગ કરના કન્દર્પ નામક અતિચાર હૈં । અસ્પષ્ટ વર્ણ જિસમેં સુને
જાણે હાસ્ય કૌકુચ્ય કહલાતા હૈં । યહ દોનો મોહનીય કર્મ કે ઉદય
સે હોતે હૈં । इनमें काय के दुष्ट व्यापार की प्रधानता होती है और
वचनप्रयोग गौण होता है । પૂર્વાપર સંબંધ સે રહિત અનર્ગલ વકવાસ
મૌસ્વર્ય કહલાતા હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈં કિ કોઈ પ્રયોજન ન હોને પર મી
અંદસંદ પ્રલાપ કરના-વહુત બોલના મૌસ્વર્ય હૈં । જિનકે કારણ આત્મા
નરક આદિ દુર્ગતિ કા અધિકારી બનતા હૈં ઉસે અધિકરણ કહતે હૈં ।
ઝલ્લ, મૂસલ, ચક્કી, વસૂલા, કુલહાડા, આદિ શસ્ત્ર અધિકરણ હૈં ।
ઝલ્લ આદિ અકેલા કુછ મી કાર્ય કરને મેં સમર્થ નહીં હોતા, બલ્કિ

અને (૫) ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્ત, આ પાંચ અનર્થદંડ વિરતિ નામક ત્રીસ
ગુણવ્રતનાં અતિચાર છે.

કામવાસનાથી પ્રેરિત, રાગયુક્ત, અસમ્ભ્ય અને અશ્લીલ વચનોનો પ્રયોગ
કરવો કન્દર્પ નામક અતિચાર છે. અસ્પષ્ટ વર્ણ જેમાં સંભળાય એવા હાસ્ય
કૌકુચ્ય કહેવાય છે. આ બંને મોહનીય કર્મના ઉદયથી થાય છે. તેમાં કામના
દુષ્ટ વ્યાપારની પ્રધાનતા હોય છે અને વ્યવપ્રયોગ ગૌણ હોય છે. પૂર્વાપર
સંબંધથી રહિત અનર્ગલ બકવાટ મોખર્ય કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે
કોઈ પ્રયોજન ન હોવા છતાં પણ ગડગડગોટાળા ભર્યો પ્રલાપ કરવો-વધારે
પડતું બોલવું મોખર્ય છે. જેના કારણે આત્મા નરક આદિ દુર્ગતિનો
અધિકારી બને છે તેને અધિકરણ કહે છે ઉખલ, મૂસલ, ઘાંટિ, વાંસલો,
કુહાડો વિગેરે શસ્ત્ર અધિકરણ છે. ઉખલ વગેરે એકલું કોઈ પણ કાર્ય
કરવા માટે સમર્થ હોતું નથી પરંતુ મૂશળ આદિની સાથે યથોચિત સંયોગ

મુસલાદિના મિથઃ સંયોગેનૈવ એવં-વાસ્યાદિકમપિ બંશદંડાદિસંયોગેનૈવ છેદનાદિ
કાર્યં સમ્પાદયતિ-નતુ-એકકમ્, અતએવ-ઉલ્લલાદીનાં મુસલાદિના સંયોજનં
સંયુક્તાધિકરણમુચ્યતે ૪ ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્તત્વશ્ચ-અશનપાનાદિકમ્, અલ-
ઙ્કારદસ્ટ્રાદિકશ્ચ યાદદુપમુજ્યતે સ્વાત્મન સ્તાવત એવ ગ્રહણમુપભોગપરિભોગપરિ-
માણં ભવતિ તદપેક્ષયાઽધિકસ્ય ગ્રહણમ્ ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્તત્વભવસેયમ્ ।
તસ્માત્-અનર્થદંડવિરતિવ્રતધારિણાઽગારિણા કન્દર્પાદિ પશ્ચાતિચારવર્જનપૂર્વકં
સમ્યક્તયા તૃતીયગુણવ્રતરૂપમનર્થદંડવિરતિવ્રતમનુપાલનીયમ્ । ઉક્તશ્ચોપાસક-
દશાંગે પ્રથમાધ્યયને-‘અણદ્વાદંડ વૈરમણસ્ત સમ્મણોવાસણં પંચ અહ્યારા
જાણિયન્વા, ન સમ્માયરિયન્વા તં જહા-કંદપ્પે કુક્કુહા-મોહરિ-

મુસલ આદિ કે સાથ ચથોચિન સંયોગ હોને પર હી વહ અપના કાર્ય
કર સક્તા હૈ । હસી પ્રકાર બમ્લા આદિ સી દંડ (હત્થે) કે સંયોગ સે
હી છેદન આદિ ક્રિયા કર સક્તા હૈ, અકેલા નહીં । અતએવ ઉલ્લ
આદિ કા મુસલ આદિ કે સાથ સંયોગ કરના સંયુક્તાધિકરણ કહ-
લાતા હૈ । અશન પાન આદિ ઉપભોગ ઓર અલંકાર વસ્ત્ર આદિ પરિ-
ભોગ કહલાતે હૈ । જિતને ઉપભોગપરિભોગ કે યોગ્ય પદાર્થોં કી અપને
લિએ આવશ્યકતા હો, ઉસસે અધિક કા ગ્રહણ કરના ઉપભોગપરિ-
ભોગાતિરિક્તત્વ અતિચાર સમજના ચાહિએ ।

અનર્થદંડવિરતિ નામક વ્રત કે ધારક શ્રાવક કો કન્દર્પ આદિ
પાંચોં અતિચારોં સે વચતે હુએ સમ્યક્ પ્રકાર સે તીસરે ગુણવ્રતરૂપ
અનર્થદંડવિરતિવ્રત કા પાલન કરના ચાહિએ । ઉપાસકદશાંગ કે પ્રથમ
અધ્યયન મેં કહા હૈ-‘શ્રમણોપાસક કો અનર્થદંડવિરમણવ્રત કે પાંચ

થવાથી જ તે પોતાનું કાર્ય કરી શકે છે. એવી જ રીતે વાંસલો વગેરે પણ
દંડ (હાથો)ના સંયોગથી જ છેદન આદિ ક્રિયા કરી શકે છે, એકલું નહીં.
આથી ઉપલ વગેરેનો મૂશળ આદિની સાથે સંયોગ કરવો સંયુક્તાધિકરણ
કહેવાય છે. અનાજ, પાણી આદિ ઉપલોગ અને અલંકાર વસ્ત્ર આદિ
પરિભોગ કહેવાય છે. જેટલા ઉપલોગ પરિભોગને યોગ્ય પદાર્થોની પોતાને
માટે જરૂરીયાત હોય, તેથી અધિકતું ગ્રહણ કરવું ઉપલોગ પરિભોગાતિરિક્ત
અતિચાર સમજવા ભેદ છે.

અનર્થદંડ વિરતિ નામક વ્રતના ધારક શ્રાવકે કન્દર્પ આદિ પાંચે
અતિચારોથી બચતા થકા સમ્યક્ પ્રકારે ત્રીજા ગુણવ્રતરૂપ અનર્થદંડ વિરતિ
વ્રતનું પાલન કરવું ભેદ છે ઉપાસકદશાંગ સૂત્રનાં પ્રથમ અધ્યયનમાં કહ્યું છે-
શ્રમણોપાસકે અનર્થદંડ વિરમણ વ્રતના પાંચ અતિચાર બાણવા ભેદ છે પરન્તુ

સંયુક્તાહિગરણે, ઉપભોગપરિભોગાદિરિત્તે' इति, अनर्थदण्डविरमणस्य श्रमणो-
पासकेन पञ्चातिचारा ज्ञातव्याः, न समाचरितव्याः, तद्यथा-कन्दर्पः-कौकुच्यम्-
मौख्यम्-संयुक्ताधिकरणम्-उपभोगपरिभोगादतिरिक्तत्वम्, इति ॥४८॥

મૂલમ્-સામાહ્યસ્સ મળદુપ્પણિહાણાદ્યા પંચઅહ્યારા ॥૪૯॥

છાયા-સામાયિકસ્ય મનોદુષ્પ્રણિધાનાદિકાઃ પञ्चातिचाराः ॥૪૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વમૂત્રે યથાક્રમાગતસ્યાડનર્થદણ્ડવિરતિલક્ષણ દ્વિતીય-
ગુણવ્રતસ્ય કન્દર્પાદયઃ પञ्चातिचाराः પ્રરૂપિતાઃ, સમ્પત્તિ-સામાયિક વ્રતસ્ય
પ્રથમશિક્ષાવ્રતસ્ય દ્વાદશવ્રતેષુ નવમસ્ય મનોદુષ્પ્રણિધાનાદિકાન્ પञ्चातिचारान्
પ્રતિપાદયિતુમાહ-'સામાહ્યસ્સ મળદુપ્પણિહાણાદ્યા પંચ અહ્યારા' इति,
સામાયિકસ્ય પૂર્વોક્ત સામાયિકવ્રતરૂપપ્રથમશિક્ષાવ્રતસ્ય મનોદુષ્પ્રણિધાનાદિકાઃ
-મનોદુષ્પ્રણિધાનમ્ ૧ આદિના-વચોદુષ્પ્રણિધાનમ્ ૨ કાયદુષ્પ્રણિધાનમ્ ૩

અતિચાર જાનના યાદિયે પરન્તુ ડનકા આચરણ નહીં કરના યાદિયે ।
વે અતિચાર હસ પ્રકાર હૈ-કન્દર્પ, કૌકુચ્ય, મૌખ્ય, સંયુક્તાધિકરણ
ઔર ઉપભોગપરિભોગાતિરિક્તત્વ ॥૪૮॥

‘સામાહ્યસ્સ મળદુપ્પ’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ-સામાયિકવ્રત કે મનઃદુષ્પ્રણિધાન આદિ પાંચ અતિચાર હૈ ॥૪૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્ર મેં ક્રમાગત અનર્થદણ્ડવિરમણવ્રત કે કન્દર્પ
આદિ પાંચ અતિચારોં કા પ્રતિપાદન કિયા ગયા, અબ પ્રથમ શિક્ષાવ્રત
અં વારહ વ્રતોં મેં સે નવ મેં સામાયિકવ્રત કે મનો દુષ્પ્રણિધાન આદિ
પાંચ અતિચારોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ-

પૂર્વ કથિત પહેલે શિક્ષાવ્રત સામાયિક કે પાંચ અતિચાર હૈ-(૧)
મનો દુષ્પ્રણિધાન (૨) વચનદુષ્પ્રણિધાન (૩) કાયદુષ્પ્રણિધાન (૪)

તેમનું આચરણ કરવું બેઈએ નહીં આ અતિચાર આ પ્રકારે છે-કન્દર્પ,
કૌકુચ્ય, મૌખ્ય, સંયુક્તાધિકરણ અને ઉપભોગ પરિભોગાતિરિક્તત્વ. ॥૪૮॥

‘સામાહ્યસ્સ મળદુપ્પણિહાણાદ્યા’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ-સામાયિક વ્રતનાં મનઃદુષ્પ્રણિધાન આદિ પાંચ અતિચાર છે. ॥૪૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વ સૂત્રમાં ક્રમાગત અનર્થદણ્ડ વિરમણ વ્રતના
કન્દર્પ આદિ પાંચ અતિચારોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું, હવે પ્રથમ
શિક્ષાવ્રત અને બાર વ્રતો પૈકીના નવમાં સામાયિક વ્રતના મનોદુષ્પ્રણિધાન
આદિ પાંચ અતિચારોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ-

પૂર્વકથિત પહેલા શિક્ષાવ્રત સામાયિકના પાંચ અતિચાર છે-(૧) મનો-
દુષ્પ્રણિધાન (૨) વચનદુષ્પ્રણિધાન (૩) કાયદુષ્પ્રણિધાન (૪) સામાયિકનું

સામાયિકસ્ય સ્મૃત્યકરણમ્ ૪ સામાયિકસ્યાઽનવસ્થિતસ્ય કરણમ્ ૫ इत्येते पञ्चा-
ऽतिचारा आत्मनो मालिन्याऽऽपादका दुष्परिणतिविशेषा भवन्ति । तत्र-त्रिविध-
स्तावद् योगः पूर्वं मानसिक-वाचिक-कायिक भेदात् प्रतिपादितः, तस्य दुष्प्र-
णिधानम्, दुष्टं प्रणिधानं सामायिकलक्षणध्यानविशेषावसरे मनोवाक्कायानां
क्रोधमानमायालोभसहिता दुष्टप्रवृत्तयः-मनोदुष्प्रणिधानम् १ वचोदुष्प्रणिधानम् २
कायदुष्प्रणिधानं ३ चो-च्यते । तत्र-मनोदुष्प्रणिधानम्-सामायिकाऽनुष्ठान-
समये गृहसम्बन्धि सुकृतदुष्कृतपरिचिन्तनमित्यर्थः १ एवं-वचोदुष्प्रणिधानम्
-वचसो दुष्प्रणिधानम्, सामायिकसमये निष्ठुरसावद्यभाषासमुदीरणम् २
एवम्-कायस्य शरीरस्य दुष्प्रणिधानं दुष्टं-सावद्यं प्रणिधानं=प्रवर्तनं कायदुष्प्रणि-
धानम्, अप्रमार्जिताऽनिरीक्षितभूमौ हस्तपादादि प्रसारणम् इत्यर्थः ३ एवं-
सामायिक का स्मरण न रहना और (५) अनवस्थित रूप से सामायिक
करना । ये पांच अतिचार आत्मा से मलीनता उत्पन्न करने
वाले दुष्परिणाम हैं ।

પહેલે મનોયોગ, વચનયોગ ઓર કાયયોગ કે ભેદ સે ત્રીન પ્રકાર
કો યોગ કહા ગયા હૈ, ઉસકા દુષ્ટ પ્રણિધાન કરના અર્થાત્ સામા-
યિક રૂપ ધ્યાન કે અવસર પર મન વચન કાય કો ક્રોધ માન માયા
લોભ સહિત પ્રવર્તના મનોદુષ્પ્રણિધાન, વચનદુષ્પ્રણિધાન ઓર કાય
દુષ્પ્રણિધાન કહલાતા હૈ । સામાયિક કરતે સમય ઘર સંબંધી અછે-
વુરે કામોં કા વિચાર કરના મનો દુષ્પ્રણિધાન હૈ । સામાયિક કે સમય
નિષ્ઠુર એવં સાવધ બાષા કા પ્રયોગ કરના વચન દુષ્પ્રણિધાન હૈ । હસી
પ્રકાર શરીર સે દુષ્ટ અર્થાત્ સાવધ વ્યાપાર કરના કાયદુષ્પ્રણિધાન હૈ,
જૈસે અપ્રમાર્જિત ઓર અપ્રતિલેખિત ભૂમિ પર હાથ-પૈર આદિ ફેલાના ।

સ્મરણ ન રહેવું અને (૫) અનવસ્થિત રૂપથી સામાયિક કરવી. આ પાંચ
અતિચાર આત્મામાં મલીનતા ઉત્પન્ન કરનારાં દુષ્પરિણામ છે.

પહેલા મનોયોગ, વચનયોગ અને કાયયોગના લેહથી ત્રણ પ્રકારના
યોગ કહેવામાં આવ્યા છે, તેનું દુષ્ટ પ્રણિધાન કરવું અર્થાત્ સામાયિક રૂપ
ધ્યાનના અવસર પર મન વચન કાયને ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ
સહિત પ્રવર્તાવવા મનોદુષ્પ્રણિધાન વચનદુષ્પ્રણિધાન અને કાયદુષ્પ્રણિધાન
છે. સામાયિક લીધી હોય ત્યારે નિષ્ઠુર તેમજ સાવધભાષાનો પ્રયોગ કરવો
વચનદુષ્પ્રણિધાન છે. એવી જ રીતે શરીરથી દુષ્ટ અર્થાત્ સાવધ વ્યાપાર કરવો
કાયદુષ્પ્રણિધાન છે જેમ કે-અપ્રમાર્જિત અને અપ્રતિલેખિત ભૂમિ પર હાથ-

સામાયિકસ્ય સ્મૃત્યકરણમ્, સામાયિકસમ્વન્ધિની યા સ્મૃતિઃ-સ્મરણં, તસ્યા અકરણમ્ 'અમુકસમયે મયા સામાયિકં કૃતં-કર્તવ્યં-કરિષ્યામિ વા' इत्येवं निश्चितं सामायिकसमयस्य विस्मरणमित्यर्थः ४ एवं-सामायिकस्याऽनवस्थितस्य-करणम्, सामायिकस्य कदाचिदाचरणं-कदाचिदनाचरणं-कदाचित्तु समयमपरि-समाप्यैवोत्थानमित्यर्थः ५ तत्र-शरीरावयवानाम् अनिभृतत्वरूपा कायस्या-ऽन्यथा प्रवृत्तिलक्षणा दुष्प्रवृत्तिः १ संस्कारहितार्थागमवर्णपदप्रयोगरूपा वचोऽन्य-थाप्रवृत्तिलक्षणा दुष्टप्रवृत्तिः २ उदासीनत्वरूपाच मनोऽन्यथा प्रवृत्तिलक्षणा दुष्ट

ચૌથા અતિચાર હૈ સામાયિક કી સ્મૃતિ ન રહના અર્થાત્ 'અમુક સમય સે મેંને સામાયિક કી જા અમુક સમય પર મુજે સામાયિક કરના હૈ થા કરુંગા' इस प्रकार सामायिक के समय को भूल जाना । पांच वां अतिचार है-सामायिक अनवस्थितरूप से करना अर्थात् कभी सामायिक करना, कभी न करना, कभी सामायिक का समय पूर्ण होने से पहले ही उठ जाना । इस प्रकार सामायिक के पांच अतिचार फलित होते हैं-

(१) शरीर के अवयवों की अर्थात् काय की अन्यथा प्रवृत्तिरूप दुष्प्रवृत्ति करना ।

(२) संस्कारहीन, आगम, वर्ण, पद का प्रयोग रूप वचन की दुष्प्रवृत्ति करना ।

(३) मन की उदासीनतारूप अन्यथा प्रवृत्ति करना । यह तीन

પગ વગેરે પ્રસારવા થોથો અતિચાર છે સામાયિકની સ્મૃતિ ન રહેવી અર્થાત્ અમુક સમયની અંદર મેં સામાયિક કરી અથવા અમુક સમયે મારે સામાયિક કરવી છે અથવા કરીશ આ રીતે સામાયિકના સમયને વિસરી જવો. પાંચમે અતિચાર છે-સામાયિક અનવસ્થિત રૂપથી કરવી અર્થાત્ ક્યારેક સામાયિક કરવી, ક્યારેક ન કરવી, ક્યારેક સામાયિકનો સમય પૂરો થતાં અગાઉ જ સામાયિકવાળી લેવી આ રીતે સામાયિકના પાંચ અતિચાર ફલિત થાય છે-

(૧) શરીરના અવયવોની અર્થાત્ કાયાની અન્યથા પ્રવૃત્તિરૂપ દુષ્ટ પ્રવૃત્તિ કરવી.

(૨) સંસ્કારહીન, આગમ, વર્ણ પદના પ્રયોગ રૂપ વચનની દુષ્ટ પ્રવૃત્તિ કરવી.

(૩) મનની ઉદાસીનતા રૂપ અન્યથા પ્રવૃત્તિ કરવી. આ ત્રણ પ્રકારનાં

प्रवृत्तिः ३ इत्येवं त्रिविधं योगदुष्प्रणिधानम् । सामायिक स्मृत्यकरणम्, अनेकाग्रत्वं स्मृत्यनुपस्थानम् न ज्ञायते 'किं यथा पठितं-किंवा न पठितम्' इत्येकमेकाग्रतारहितत्वं स्मृत्यकरणमवगन्तव्यम् ४ सामायिकस्याऽनवस्थितस्य करणम्, अव्यवस्थितं सामायिकस्य करणम् ५ । तथा च-मनोयोगदुष्प्रणिधानादयः पञ्च-ध्यानविशेषरूप सामायिकस्याऽतिचाराः ॥४९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तावद् यथाक्रमं तृतीयगुणव्रतस्याऽनर्थदण्डविरतिलक्षणस्य कन्दर्पादयः पञ्चातिचाराः प्रतिपादिताः, सम्पत्ति-क्रमाग्रास्य द्वादशव्रतेषु नवमलक्षणस्य प्रथमशिक्षाव्रतस्य सामायिकव्रतस्य मनोयोगदुष्प्रणिधानादीन् पञ्चातिचारान् प्ररूपयितुमाह-‘स्वाप्नोद्वेगस्त्यजणदुष्प्रणिधानाहया पञ्च अट्टिचारा’ इति, सामायिकस्य प्रथमशिक्षाव्रतविशेषरूपसामायिकव्रतस्य मनोयोग-

प्रकार का योगदुष्प्रणिधान है ।

(४) सामायिक का स्मरण न करना, एकाग्रता न रहना, यह भी मालुम न रहता कि मैंने क्या पढ़ा है और क्या नहीं पढ़ा है । इस प्रकार मन का एकाग्र न रहना स्मृत्यकरण समझना चाहिए ।

(५) सामायिक अनवस्थित करना अर्थात् व्यवस्थितरूप से न करना ।

इस प्रकार मनोदुष्प्रणिधान आदि ध्यानविशेषरूप सामायिकव्रत के पांच अतिचार हैं ॥४९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले क्रम के अनुसार अनर्थदण्डविरति नामक तीसरे गुणव्रत के कन्दर्प आदि पांच अतिचार प्रतिपादन किये गये हैं । अब क्रमप्राप्त वारह व्रतों में से नौवें और शिक्षाव्रतों में पहले सामायिकव्रत के मनोदुष्प्रणिधान आदि पांच अतिचारों की प्ररूपणा करते हैं—सामायिकव्रत के योग दुष्प्रणिधान आदि पांच अतिचार हैं

योगदुष्प्रणिधान छे.

(४) सामायिकनुं स्मरणु न करवुं, ओकाग्रता न रहेवी, ओ पणु अग्र न पडे के मे' शुं वांयुं' छे अने शुं नथी वांयुं ? आ रीते मननी ओकाग्रताने। अभाव स्मृत्यकरणु समजवुं धटे.

(५) सामायिक अनवस्थित करवी अर्थात् व्यवस्थित रूपे न करवी.

आ रीते मनोदुष्प्रणिधान आदि ध्यानविशेष रूप सामायिक व्रतना पांच अतिचार छे. ॥४९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पड़ेला कमना अनुसार अनर्थदण्डविरति नामक तीसरे गुणव्रतना कन्दर्प आदि पांच अतिचार प्रतिपादन करवाभां आया छे। कमप्राप्त आर व्रतो पैकी नवमां अने शिक्षाव्रतोमाना पड़ेला सामायिक व्रतना मनोदुष्प्रणिधान आदि पांच अतिचारोनी प्ररूपणा करीओ छीओ—

દુષ્પ્રણિધાનાદયઃ-મનોયોગદુષ્પ્રણિધાનમ્ ૧ વચ્ચોયોગદુષ્પ્રણિધાનમ્ ૨ કાયયોગ
 દુષ્પ્રણિધાનમ્ ૩ સામાયિકસ્ય સ્મૃત્યકરણમ્ ૪ સામાયિકસ્યાઽનવસ્થિતસ્ય કર-
 ણમ્ ૫ ચૈત્યેતે પશ્ચાત્તિચારા આત્મનો માલિન્યતાપાદકા દુષ્પ્રણિતિવિશેષા
 મયન્તિ । પ્રણિધાનપ્રયોગઃ, દુષ્ટં પ્રણિધાનં દુષ્પ્રણિધાનમ્, તન્નિવિધં મનોદુષ્પ્ર-
 ણિધાન-વચોદુષ્પ્રણિધાન-કાયદુષ્પ્રણિધાનમેદાત્ । તત્ર-ક્રોધમાનમાયાલોભ
 દ્રોહૈર્ધ્યાદિના ચિત્તસંભ્રમઃ-ગૃહસંબન્ધિ સુકૃતદુષ્કૃતચિન્તનં ચ મનોદુષ્પ્રણિ-
 ધાનમ્ ૧ નિષ્ઠુરસાવચબાષોદીરણં વચોદુષ્પ્રણિધાનમ્ ૨ દસ્તપાદાદિ શરીરાવય

(૧) મનોયોગદુષ્પ્રણિધાન (૨) વચનયોગ દુષ્પ્રણિધાન (૩) કાયયોગ
 દુષ્પ્રણિધાન (૪) સામાયિક કી સ્મૃતિ ન રચના ઓર (૫) અનવસ્થિત
 રૂપ સે સામાયિક કરના । યે પાંચો અતિચાર આત્મા મેં મલીનતા
 ઉત્પન્ન કરને વાલે દુષ્પ્રણિધાન હૈ ।

પ્રણિધાન કા અર્થ હૈ-પ્રયોગ-વ્યાપાર । દુષ્ટ પ્રણિધાન દુષ્પ્રણિ-
 ધાન કહલાતા હૈ । વહ ત્રીન પ્રકાર કા હૈ-મનોદુષ્પ્રણિધાન, વચન
 દુષ્પ્રણિધાન ઓર કાયદુષ્પ્રણિધાન । ઇન્કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર હૈ-

(૧) ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, દ્રોહ, ઈર્ષ્યા આદિ કે કારણ ચિત્ત
 મેં સંભ્રમ હોના ઓર ઘર સંબંધી સુકૃત એવં દુષ્કૃત કા વિચાર કરના
 મનોદુષ્પ્રણિધાન હૈ ।

(૨) નિષ્ઠુર ઓર પાપયુક્ત ભાષા કા પ્રયોગ કરના વચન
 દુષ્પ્રણિધાન હૈ ।

સામાયિક્ પ્રતના યોગદુષ્પ્રણિધાન આદિ પાંચ અતિચાર છે-(૧) મનો-
 યોગદુષ્પ્રણિધાન (૨) વચનયોગદુષ્પ્રણિધાન (૩) કાયયોગદુષ્પ્રણિધાન (૪)
 સામાયિકની સ્મૃતિ ન રાખવી અને (૫) અનવસ્થિતપણે સામાયિક કરવી. આ
 પાંચે અતિચાર આત્મામાં મલીનતા ઉત્પન્ન કરનારા દુષ્પ્રણિધાન છે.

પ્રણિધાનનો અર્થ છે-પ્રયોગ-વ્યાપાર દુષ્ટ પ્રણિધાન દુષ્પ્રણિધાન
 કહેવાય છે તે ત્રણ પ્રકારના છે-મનોદુષ્પ્રણિધાન, વચનદુષ્પ્રણિધાન અને
 કાયદુષ્પ્રણિધાન એમનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે-

(૧) ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, દ્રોહ, ઈર્ષ્યા વગેરેના કારણે ચિત્તમાં
 ભ્રમણ થવી અને ઘર સંબંધી સુકૃત તથા તથા દુષ્કૃતનો વિચાર કરવો
 મનોદુષ્પ્રણિધાન છે.

(૨) નિષ્ઠુર અને પાપયુક્ત ભાષાનો પ્રયોગ કરવો વચનદુષ્પ્રણિધાન છે.

વાનામપ્રમાર્જિતાઽપતિલેખિતભૂમાવસ્થાપનં કાયયોગદુષ્પ્રણિધાનમ્ ૩ કદાચિત્કરણં
કદાચિદકરણં-સમયમસમાપ્યૈવોત્થાનં વા, તદ્વિસ્મરણં ચ સામાયિકસ્ય સ્મૃત્ય-
કરણમ્ અનેકાગ્રતા-સામાયિક વિષયકસ્મરણાઽભાવઃ સામાયિકં મયા વિધેયં
ન વા વિધેયમ્, કૃતં ન વા-કૃતમ્ इत्येवमवधारणं स्मृतिभ्रंश इति भावः, मोक्ष-
साधनाऽनुष्ठानस्य स्मरणमूलकत्वात् ४ प्रतिनियतसमये સામાયિકસ્યાઽકરણં
સામાયિકસ્યાઽનવસ્થિતસ્ય કરણમ્ ૫ इत्येते पञ्चप्रथमशिक्षाव्रतरूपसामायिक-
व्रतस्याऽतिचारा अवगन्तव्याः। तरमात्-व्रतधारिणाऽगारिणा मनोदुष्प्रणिधानादि
पञ्चाऽतिचारवर्जनपूर्वकं સામાયિકવ્રતમનુપાલનીયમ્। ઉક્તશ્લોકાસકદશાજ્ઞે પ્રથમે

(૩) ધિના પૂંજી ઓર ધિના દેહી ભૂમિ પર હાથ-પૈર આદિ શરીર
કે અવયવોં કે સ્થાપિત કરના કાયદુષ્પ્રણિધાન હૈ ।

(૪) સામાયિક કબી કરના, કબી ન કરના, સમય પૂર્ણ હોને સે
પહેલે હી ઝઠ બેઠના, સામાયિક કરના ભૂલ જાના, इत्यादि સામાયિક
કા સ્મૃત્યકરણ કહલાતા હૈ । ચિત્ત કા એકાગ્ર ન રહના, સામાયિક
સંબંધી સ્મરણ ન રહના, છુડે સામાયિક કરની હૈ યા નહીં કરની હૈ,
કી હૈ અથવા નહીં કી હૈ, यह सब स्मरण न रखना स्मृत्यकरण
કહલાતા હૈ । મોક્ષ કા સાધનભૂત અનુષ્ઠાન સ્મૃતિમૂલક હી હોતા હૈ ।

(૫) નિયત સમય પર સામાયિક ન કરના અનવસ્થિત સામાયિક
કરના કહલાતા હૈ ।

યે પ્રથમ શિક્ષાવ્રત સામાયિક કે પાંચ અતિચાર હૈં । અતઃપ્રવ્રત-
ધારી શ્રાવક કો મનોદુષ્પ્રણિધાન આદિ પાંચ અતિચારોં કા પરિત્યાગ

(૩) વગર પૂંજી અને વગર ભેખેલી જમીન પર હાથ-પગ આદિ
શરીરના અવયવોને સ્થાપિત કરવા કાયદુષ્પ્રણિધાન છે.

(૪) સામાયિક ક્યારેક કરવી, ક્યારેક ન કરવી સમય પૂરો થતા અગાઉ
જ સામાયિક પાળી લેવી, સામાયિક જ ભૂલી જવી ઇત્યાદિ સામાયિકનું
સ્મૃત્યકરણ કહેવાય છે. ચિત્તની એકાગ્રતા ન રહેવી, સામાયિક સંબંધી
સ્મરણ ન રહેવું, મારે સામાયિક કરવી છે કે નથી કરવી, મેં સામાયિક
કરી કે નહીં, આ બધું સ્મરણ ન રાખવું સ્મૃત્યકરણ કહેવાય છે. મોક્ષના
સાધનભૂત અનુષ્ઠાન સ્મૃતિસારક જ હોય છે.

(૫) નિયત સમયે સામાયિક ન કરવી અનવસ્થિત સામાયિક કરી
એમ કહેવાય છે.

આ પ્રથમ શિક્ષાવ્રત સામાયિકના પાંચ અતિચાર છે આથી વ્રતધારી
શ્રાવકે મનોદુષ્પ્રણિધાન આદિ પાંચ અતિચારોના પરિત્યાગ કરતા થકા

અધ્યયને—‘સામાહ્યસ્સ પંચ અહ્યારા સમણોવાસણં જાણિયવ્વા, ન સમાચરિયવ્વા, તં જહા—મણદુપ્પણિહાણે, વણ દુપ્પણિહાણે, કાયદુપ્પણિહાણે, સામાહ્યસ્સ સંતિ અકરણયાણ, સામાહ્યસ્સ અણવટ્ઠિયસ્સ કરણયા’ इति । सामायिकस्य—पञ्चाऽतिचाराः श्रमणोपासकेन ज्ञातव्याः न समाचरितव्याः, तद्यथा—मनोदुष्प्रणिधानम् १ वचोदुष्प्रणिधानम् २ कायदुष्प्रणिधानम् ३ सामयिकस्य सत्याकरणता, सामायिकस्याऽनवस्थितकरणता इति ॥४९॥

મૂલમ્—દેસાવગાસિયસ્સ આણવણપયોગાદ્યા પંચઅહ્યારા ॥૫૦॥

છાયા—દેશાવકાશિકસ્યાઽઙ્ગાપનપયોગાદિકાઃ પન્ચાતિચારાઃ ॥૫૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રે સામાયિકસ્ય પ્રથમશિક્ષાવ્રતસ્ય મનોદુષ્પ્રણિધાનાદયઃ પન્ચાતિચારાઃ પ્રરૂપિતાઃ સમ્પ્રતિ-ક્રમપ્રાપ્તસ્ય દ્વિતીયસ્ય શિક્ષાવ્રતસ્ય કરતે હુણ સામાયિક વ્રત કા પાલન કરના ચાહિયે । ઉપાસકદશાંગ સૂત્ર કે પ્રથમ અધ્યયન મેં કહ્યા હૈ—શ્રમણોપાસક કો સામાયિક કે પાંચ અતિચાર જાનના ચાહિયે કિન્તુ ડનકા આચરણ નહીં કરના ચાહિયે । વે પાંચ અતિચાર હસ પ્રકાર હૈ—(૧) મનોદુષ્પ્રણિધાન (૨) વચનદુષ્પ્રણિધાન (૩) કાયદુષ્પ્રણિધાન (૪) સામાયિક કી સ્મૃતિ ન કરના ઓર (૫) અનવસ્થિત રૂપ સે સામાયિક કરના ॥૪૯॥

‘દેસાવગાસિયસ્સ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—દેશાવકાશિકવ્રત કે આનયનપ્રયોગ આદિ પાંચ અતિચાર હૈ ॥૫૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ સૂત્ર મેં સામાયિક નામક પ્રથમશિક્ષાવ્રત કે મનોદુષ્પ્રણિધાન આદિ આંચ અતિચાર કહે ગયે હૈ । અવ ક્રમપ્રાપ્ત

સામાયિકવ્રતનું પાલન કરવું જોઈએ. ઉપાસકદશાંગસૂત્રના પ્રથમ અધ્યયનમાં કહ્યું છે—શ્રમણોપાસકે સામાયિકના પાંચ અતિચાર જાણવા જોઈએ પરંતુ તેમનું આચરણ કરવું જોઈએ નહીં. આ પાંચ અતિચાર આ મુજબ છે—(૧) મનોદુષ્પ્રણિધાન (૨) વચનદુષ્પ્રણિધાન (૩) કાયદુષ્પ્રણિધાન (૪) સામાયિકની સ્મૃતિ ન રાખવી અને (૫) અનવસ્થિતપણે સામાયિક કરવી ॥૪૯॥

‘દેસાવગાસિયસ્સ’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—દેશાવકાશિક વ્રતના આનયન પ્રયોગ આદિ પાંચ અતિચાર છે. ॥૫૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં સામાયિક નામક પ્રથમ શિક્ષાવ્રતના મનોદુષ્પ્રણિધાન આદિ પાંચ અતિચાર કહેવામાં આવ્યા છે. હવે ક્રમપ્રાપ્ત દ્વિતીય શિક્ષાવ્રતના, ઓર વ્રતોમાના દશમા દેશાવકાશિક વ્રતના આનયનપ્રયોગ

દ્વાદશવ્રતેષુ દશમસ્ય દેશાવકાશિકવ્રતસ્યાઽઽનાયનપ્રયોગાદિકાન્ પञ्चाતિચારાન્ પ્રરૂપયિતુમાહ-‘દેસાવગાસિયસ્સ આણવણપ્પયોગાહયા પંચ અહચારા’ इति । देशावकाशिकव्रतस्य पूर्वोक्तदेशविरतिलक्षण द्वितीयशिक्षाव्रतस्याऽऽनायन-प्रयोगादिकाः-आनयनप्रयोगः १ आदिना प्रेषणप्रयोगः २ शब्दानुपातः ३ रूपानुपातः ४ बहिः पुद्गलक्षेपश्च ५ इत्येते पञ्चातिचारा आत्मनो मालिन्याऽऽपादका दुष्परिणतिविशेषा भवन्ति । तत्र-पूर्वमात्मनाऽभिगृहीते देशे स्थितस्य प्रयोजनवशात्-अभीष्टं यत् किञ्चिद् ‘आनय’ इत्येव मानयनम्, तस्य प्रयोगः, आत्मसंकल्पिते देशे स्थितोऽपि प्रतिषिद्धाऽनभिगृहीतदेशस्थितानि वस्तूनि कार्य-वशात् तद्वस्त्वधिकारिणं निवेद्य निजदेशमध्ये-आनाय्य क्रयविक्रयादिकरणम्-

द्वितीय शिक्षाव્રત, के चारह व्रतों में दूसरे देशावकाशिकव्रत के आन-यनप्रयोग आदि पांच अतिचारों की प्ररूपणा करते हैं-

देशावकाशिकव्रत के, जो शिक्षाव्रतों में दूसरा है, आनयनप्रयोग आदि पांच अतिचार हैं । वे ये हैं-(१) आनयनप्रयोग (२) प्रेषणप्रयोग (३) शब्दानुपात (४) रूपानुपात और (५) बहिः पुद्गलक्षेप । ये पांच अतिचार आत्मा में मलीनता उत्पन्न करने वाले दुष्परिणामरूप हैं । इनका स्वरूप इस प्रकार है-

(१) पहले जिस देश की मर्यादा की है उसमें स्थित मनुष्य^१ ती पुरुष को कोई प्रयोजन उपस्थित हो जाय तब वह बारह प्रदेश से किसी वस्तु को ‘ले आओ’ इस प्रकार कह कर मंगवाता है तो आनयन-प्रयोग अतिचार होता है । तात्पर्य यह है कि अपने मर्यादित क्षेत्र में स्थित रहते हुए मर्यादा के बाहर के निषिद्ध क्षेत्र में स्थित वस्तुओं को

આદિ પાંચ અતિચારોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ-

દેશાવકાશિક વ્રતના, જે શિક્ષાવ્રતોમાં બીજું છે, આનયનપ્રયોગ આદિ પાંચ અતિચાર છે. તે આ પ્રમાણે છે-(૧) આનયનપ્રયોગ (૨) પ્રેષણપ્રયોગ (૩) શબ્દાનુપાત (૪) રૂપાનુપાત અને (૫) બહિઃપુદ્ગલક્ષેપ આ પાંચ અતિચાર આત્મામાં મલીનતા ઉત્પન્ન કરનારા દુષ્પરિણામ રૂપ છે એમનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે છે-(૧) પહેલા જે દેશની મર્યાદા કરેલી છે તેમાં રહેલા કોઈ વતી પુરૂષને કોઈ પ્રયોજન ઉપસ્થિત થઈ જાય ત્યાં તે બહારના પ્રદેશથી કોઈ વસ્તુને ‘લઈ આવો’ એ પ્રમાણે કહીને મંગાવે છે ત્યાં આનયન પ્રયોગ અતિચાર લાગે છે. તાત્પર્ય એ છે કે પોતાના મર્યાદિત ક્ષેત્રમાં સ્થિત રહીને મર્યાદા બહારના નિષિદ્ધ ક્ષેત્રમાં રહેલી વસ્તુઓને

આનાયનપ્રયોગ इतिभावः ? एवम्-प्रतिपिद्धाऽनभिगृहीतदेशेऽभिप्रेतव्यापार
साधनार्थे भृतस्य प्रेषणं तस्य-‘एवं विधेहि’ इति प्रयोगः प्रेषणप्रयोग उच्यते २
शब्दमनुपततीति शब्दानुपातः शब्दोच्चारणं तादृकरोति येनोच्चरितशब्दः
परस्य श्रोत्रविवरं प्राप्नोति इति स शब्दाऽनुपात उच्यते, छिकोत्कासितादिकशब्देन,
लोकप्रसिद्ध ‘टेलिफोन’ ‘टेलिग्राफ’ इत्यादियन्त्रेण च प्रतिवेशिकादिं प्रतिबोध्य
कार्यसम्पादनचेष्टितम् ३ रूपानुपातस्तावत्-शब्दमनुच्चारयन्नेव प्रयोजनवशात्
स्वशरीरं हस्तादिरूपं परेषां दर्शयति, तद्दर्शनाच्च मर्यादितक्षेत्राद्वहिः स्थिता
द्रष्टाः पुरुषा स्तत्समीपमागच्छन्ति, इतिरूपानुपातः ४ एवं-वहिः पुद्गलपक्षेपः-

कार्यवशात् उसके अधिकारी को निवेदन करके अपने मर्यादित क्षेत्र
में लाना क्रय-विक्रय आदि मंगवाना आनयन प्रयोग कहलाता है ।

(૨) વ્રત મેં જિતને દેશ કી મર્યાદા કી હો ઉસસે બાહર કે પ્રદેશ
મેં કિસી કાર્ય કી સિદ્ધિ કે લિએ ભૃત્ય કો મેજના ઓર કહના કિ-
‘તુમ જાકર એસા કરો યહ પ્રેષણપ્રયોગ કહલાતા હૈ ।

(૩) હસ પ્રકાર શબ્દ કા ઉચ્ચારણ કરના કિ જિસસે વહ દૂસરે
કો સુનાઈ પડે, વહ શબ્દાનુપાત કહલાતા હૈ । છીંક કર યા ઝાંસ કર
અથવા લોક મેં પ્રસિદ્ધ ટેલીફોન યા ટેલીગ્રાફ આદિ યંત્રો દ્વારા
પડોસી આદિ કો સમજાકર કાર્યસમ્પાદન કરને કે લિએ ચેષ્ટા કરના
શબ્દાનુપાત અતિચાર હૈ ।

(૪) શબ્દ કા ઉચ્ચારણ કિયે વિના હી, પ્રયોજનવશાત્ અપના
હાથ આદિ દિખલાના જિસસે કિ મર્યાદિત ક્ષેત્ર સે બાહર કે લોક

સંલગવશાત્ તેના અધિકારીને નિવેદન કરીને પોતાના મર્યાદિત ક્ષેત્રમાં લાવવા,
મંગાવવા આનયનપ્રયોગ કહેવાય છે.

(૨) વ્રતમાં જેટલા દેશની મર્યાદા કરી હોય તેનાથી બહારના પ્રદેશમાં
કોઈ કાર્યની સિદ્ધિ માટે નોકરને મોકલવો અને તેને કહેવું-‘તું જા અને
આ પ્રમાણે કર આ પ્રેષણપ્રયોગ કહેવાય છે.’

(૩) એવી રીતે શબ્દનું ઉચ્ચારણ કરવું કે જેથી બીજાને સંલગાય તે
શબ્દાનુપાત કહેવાય છે. છીંક ખાઈને અથવા ઉધરસ ખાઈને અથવા લોકમાં
પ્રસિદ્ધ ટેલીફોન અથવા ટેલીગ્રાફ આદિ-યંત્રો દ્વારા પાડોશી વગેરેને
સમજાવીને કાર્ય સમ્પાદન કરવા માટેની ચેષ્ટા કરવી શબ્દાનુપાત અતિચાર છે.

(૪) શબ્દનું ઉચ્ચારણ કર્યા વગર જ, પ્રયોજનવશાત્ પોતાનો હાથ
વગેરે બતાવવો કે જેથી મર્યાદિત ક્ષેત્રથી બહારના લોકો તેની નજીકમાં

પુદ્ગલાનાં પરમાણુદ્વચણુકાદિ સ્કન્ધ સૂક્ષ્મસ્થૂલભેદાનાં મધ્યે વાદરાકારપરિણત લોષ્ટેષ્ટકાકાષ્ટપ્રભૃતીનાં મર્યાદિતક્ષેત્રાવ્દહિઃ પ્રક્ષેપઃ, પ્રયોજનવશાત્ કાર્યાર્થાં પુરુષો વિશિષ્ટદેશાભિગ્રહે સતિ પરસ્મિન્ દેશે ગમનાડસમ્ભવાત્ પરેષાં પ્રતિવોધનાય લોષ્ટાદિ પુદ્ગલાન્ પ્રક્ષિપતિ લોષ્ટાદિનિપાતાનન્તરં ચ પરે જનાસ્તત્સમીપમાગ-
ચ્છન્તીતિ પુદ્ગલ ક્ષેપશબ્દાર્થોડવગન્તવ્યઃ ૫ એતે પશ્ચાડનાયન પ્રયોગાદયો દેશ-
વકાશિકલક્ષણ દ્વિતીયશિક્ષાવ્રતસ્યાડતિચારા અવગન્તવ્યાઃ ॥૫૦॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વસૂત્રે સામાયિકસ્ય પ્રથમશિક્ષાવ્રતસ્ય મનોદુષ્પ્રણિ-
ધાનાદયઃ પશ્ચાતિચારાઃ પ્રરૂપિતાઃ, સમ્પતિ-ક્રમપ્રાપ્તસ્ય દ્વિતીયસ્ય શિક્ષાવ્રતસ્ય
દ્વાદશવ્રતેષુ દશમસ્ય દેશાવકાશિક વ્રતસ્યાડનાયન પ્રયોગાદિકાન્ પશ્ચાતિચારાન્

ઉસકે સમીપ આજાએ, યદ્દ રૂપાનુપાત અતિચાર હૈ ।

(૫) મિટ્ટી કા ઢેલા, ઈંટ, લકડી કા ટુકડા આદિ પુદ્ગલોં કો મર્યાદિત ક્ષેત્ર સે વાહર ફેંકના બહિઃ પુદ્ગલપ્રક્ષેપ કહલાતા હૈ । કિસી ને અમુક દેશ પર્યન્ત હી જાને કી મર્યાદા કી હો, મગર વાહર કા કામ આ પડે તવ વહ સ્વયં વાહર જાને સેં વ્રત કા અંગ સમજ્જકર દૂસરે કો સમજ્જાને-ચેતાને કે લિએ પથ્થર આદિ ફેંકને સે લોગ ઉસકે પાસ આ જાતે હૈ, યહ પુદ્ગલપ્રક્ષેપ અતિચાર હૈ ।

યે આનયન પ્રયોગ આદિ પાંચ દ્વિતીય શિક્ષાવ્રત દેશાવકાશિક વ્રત કે અતિચાર હૈ ॥૫૦॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વ સૂત્ર મેં પ્રથમ શિક્ષાવ્રત સામાયિક કે મનો-
દુષ્પ્રણિધાન આદિ પાંચ અતિચારોં કા પ્રરૂપણ કિયા ગયા હૈ, અવ

આવી જાય, આ રૂપાનુપાત અતિચાર છે.

(૫) માટીનું ઢેકું, ઇંટ, લાકડાનો કકડો આદિ પુદ્ગલોને મર્યાદિત ક્ષેત્રથી બહાર ફેંકવા બહિઃ પુદ્ગલપ્રક્ષેપ કહેવાય છે. કોઈ એ અમુક દેશ સુધી જ જવાની મર્યાદા કરી હોય પરંતુ તેની બહારનું કામ આવી પડે ત્યારે તે જાતે બહાર જવામાં જતનો ભંગ થશે એમ સમજીને બીજાને સમજાવવા-સાવચેત કરવા માટે પથ્થર આદિ ફેંકે છે અને પથ્થર વગેરે ફેંકવાથી લોકો તેની પાસે આવી જાય છે. આ પુદ્ગલપ્રક્ષેપ અતિચાર છે.

આ આનયનપ્રયોગ આદિ પાંચ બીજા શિક્ષાવ્રત, દેશાવકાશિક વ્રતના અતિચાર છે. ॥૫૦॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વસૂત્રમાં પ્રથમ શિક્ષાવ્રત સામાયિકના મનોદુષ્પ્ર-
ણિધાન આદિ પાંચ અતિચારોનું પ્રરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. હવે ક્રમપ્રાપ્ત

પ્રરૂપયિતુમાહ-‘દેશાવકાશિકવ્રતસ્ય આણવળપયોગાદ્યા પંચ અદ્યારા’
 હતિ, દેશાવકાશિકવ્રતસ્યાઽઽનાયનપ્રયોગાદિકાઃ-આનાયનપ્રયોગઃ ૧ આદિના-
 પ્રેષણપ્રયોગઃ ૨ શબ્દાનુપાતઃ ૩ રૂપાનુપાતઃ ૪ પુદ્ગલક્ષેપશ્ચ ૫ इत्येते पञ्चाति-
 चारा आत्मनः कालुष्याऽऽपादका दुष्परिणतिविशेषा भवन्ति । तत्र-दिग्विरति-
 व्रतगृहीताऽभिग्रहस्य करणमेव देशावकाशिकव्रतम् । यत्खलु-अभिगृहीतदेशा-
 द्बहिः स्थितस्य द्रव्यादेरानयनाय-‘त्वमिदमानय’ इत्येवं सन्देशपदानादिना
 परानाययते-द्रव्याद्यानेतुं प्रेर्यते स-आनायनप्रयोगो व्यपदिश्यते, इठात्-
 विनियोज्यप्रेषणं प्रेषणप्रयोगोऽभिधीयते, यत्राभिगृहीत देशातिक्रमभयाद-अभि-
 क्रमपास द्वितीय शिक्षाव्रत, जो बारह व्रतों में दसवां है और जिसका
 नाम देशावकाशिक है, उसके आनायनप्रयोग आदि पांच अतिचारों
 की प्ररूपणा करते हैं-

દેશાવકાશિકવ્રત કે પાંચ અતિચાર હૈં-(૧) આનાયનપ્રયોગ (૨)
 પ્રેષણપ્રયોગ (૩) શબ્દાનુપાત (૪) રૂપાનુપાત ઓર (૫) પુદ્ગલ ક્ષેપ । ये
 पांच अतिचार आत्मा में भलीनता उत्पन्न करते हैं और एक प्रकार
 के दुष्परिणमन हैं ।

દિશાવ્રત મેં બાંધી હુઈ મર્યાદા કો સીમિત સમય કે લિે સંક્ષિપ્ત
 કરના હી દેશાવકાશિકવ્રત હૈ । દેશાવકાશિકવ્રત મેં દેશ કી જો
 મર્યાદા નિશ્ચિન કી હો, ડસસે બાહર કી વસ્તુ મંગવાને કે લિે ‘તુમ
 યહ લે આઓ’ હસ પ્રકાર સન્દેશ આદિ દેકર દૂસરે કો વસ્તુ લાને કી
 પ્રેરણા કરના આનાયનપ્રયોગ કહલાતા હૈ । किसी को जबर्दस्ती भेजना

દ્વિતીય શિક્ષાવ્રત, જે બાર વ્રતોમાં દશમું છે અને જેનું નામ દેશાવકાશિક
 છે તેના આનાયનપ્રયોગ આદિ પાંચ અતિચારોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ-

દેશાવકાશિક વ્રતના પાંચ અતિચાર છે-(૧) આનાયનપ્રયોગ (૨)
 પ્રેષણપ્રયોગ (૩) શબ્દાનુપાત (૪) રૂપાનુપાત અને (૫) પુદ્ગલપ્રક્ષેપ આ
 પાંચ અતિચાર આત્મામાં મલીનતા ઉત્પન્ન કરનારા હોવાથી એક પ્રકારના
 દુષ્પરિણમન છે.

દિશાવ્રતમાં બાંધેલી મર્યાદાને સીમિત સમય માટે પણ ઓછી કરવી
 એ જ દેશાવકાશિક વ્રત છે. દેશાવકાશિક વ્રતમાં દેશની જે મર્યાદા નક્કી
 કરવામાં આવી હોય તેનાથી બહારની વસ્તુ મંગાવવા માટે ‘તમે આ લઈ
 આવો’ એ બીજાને સંદેશ વગેરે આપીને બીજાને વસ્તુ લાવવાની પ્રેરણા
 કરવી આનાયનપ્રયોગ કહેવાય છે. કોઈને પસારે મોકલવો પ્રેષણપ્રયોગ

मत्प्रयोजनवशात् त्वमयश्यमेव तत्र गत्वा ममाऽभीष्टं गन्नादिकमानय 'इदं वा ममादिष्टं कुरु' इत्येवमुक्त्वा भृत्यस्य प्रेषणं प्रेषणप्रयोगः २ एव-मभिगृहीत भूप्रदेशतो वहिः प्रदेशे समुत्पन्ने प्रयोजनेऽभिग्रहव्यतिक्रमभयात् स्वयं गन्तु मसमर्थत्वात् छिकोत्कासादि शब्दकरणेन वहिः-प्रदेशवर्तिनः पुरुषान् प्रतिबोधयति, ते च पुरुषास्तच्छब्दश्रवणाऽनन्तरं झटित्येव तत्समीपमागच्छन्ति' इत्येवं शब्दाऽनुपतनशीलत्वात्-'शब्दानुपात' इति व्यवहियते ३ एवं-रूपानुपातः-तावत्-शब्दमनुच्चारयन्नेव प्रयोजनवशात् स्वशरीरावयवभूतं हस्ताङ्गुल्यादिकं परेभ्यो दर्शयति तद्वर्शनाच्च परे द्रष्टारोऽपि तत्प्रत्यासन्ना भवन्ति, इत्येवं रीत्या

प्रेषणप्रयोग कहलाता है। मर्यादित क्षेत्र का उल्लंघन करने से व्रत का भंग हो जाएगा, ऐसा भय हो और मर्यादित क्षेत्र से बाहर कोई प्रयोजन हो तब ऐसा कहना कि-'तुम अवश्य वहां जाकर मेरी अभीष्ट गाय आदि ले आओ' अथवा 'मेरा अमुक कार्य कर दो' इस प्रकार कह कर भृत्य को भेजना प्रेषणप्रयोग है।

इसी प्रकार मर्यादित प्रदेश से बाहर किसी प्रयोजन के उत्पन्न होने पर व्रतभंग के भय से स्वयं न जा सकता हो, तब छींक कर अथवा खांस कर मर्यादा से बाहर के पुरुषों को चेतावनी देता है। वे पुरुष उसका शब्द सुनकर झट-से उसके समीप आ जाते हैं, ऐसा करना शब्दानुपात नामक अतिचार है।

शब्द का उच्चारण किये बिना ही प्रयोजनवशात् अपने शरीर के अवयव हाथ या उंगली आदि दूसरे को दिखलाता है और उन्हें

કહેવાય છે. મર્યાદિત ક્ષેત્રનું ઉલ્લંઘન કરવાથી વ્રતનો ભંગ થઈ જશે, એવો ભય લાગે અને મર્યાદિત ક્ષેત્રથી બહાર કોઈ કારણે આવી પડે ત્યારે આ પ્રમાણે કહેવું કે-'તમે અવશ્ય ત્યાં જઈને મારી ગાય વગેરે લઈ આવો' અથવા 'મારું અમુક કાર્ય' કરી આપો' આવું કહીને નોકરને મોકલવો પ્રેષણપ્રયોગ છે.

આવી જ રીતે મર્યાદિત પ્રદેશથી બહાર કોઈ પ્રયોજન આવી પડવાથી વ્રતખંડનના ભયથી સ્વયં જઈ શકે તેમ ન હોય ત્યારે છીંક ખાઈને અથવા ઉધરસ ખાઈને મર્યાદા બહાર રહેલા પુરુષોને ઇશારો કરે છે. તે લોકો તેનો શબ્દ સાંભળીને એકદમ તેની પાસે આવી જાય છે. આમ કરવું શબ્દાનુપાત નામક અતિચાર છે.

શબ્દનું ઉચ્ચારણ કર્યા વગર જ પ્રયોજનવશાત્ પોતાના શરીરના અવયવ હાથ અગર આંગળી વગેરે બીજાને બતાવે છે અને તે બોધને લોકો

રૂપાનુપતનશીલત્વાદ્ રૂપાનુપાતો વ્યપદિશ્યતે ૪ एवं वहिः पुद्गलप्रक्षेपस्तावत्-
 पुद्गलाः परमाणुद्वयणुकस्कन्धादयः सूक्ष्मस्थूलभेदादनेकविधः तत्र-बादराकार-
 स्थूलपरिणतानां लोप्टेष्टका-पाषाणखण्डादीनां पुद्गलानां प्रक्षेपः, अभिगृहीतभू-
 मदेशाद् वहिः प्रदेशे प्रक्षेपणम्-वहिः पुद्गलक्षेप उच्यते । प्रयोजनवशात् कार्यार्थी
 खलु पुरुषमतिविशिष्टदेशाभिग्रहे कृते सति ततो वहिः प्रदेशेऽभिग्रहभङ्गभयेन-
 गमनाऽप्रवृत्तत्वात् परस्मिन् देशे स्थितानां पुरुषाणां प्रतिबोधनार्थं लोप्टादीन्
 प्रक्षिपति लोप्टादिनि पातानन्तरमेव ते पुरुषास्तत्समीपमागच्छन्ति, इत्येवं रीत्या
 पुद्गलक्षेपो व्यवहियते ५ इत्येते पञ्चदेशावकाशिकव्रतस्य द्वितीयशिक्षाव्रतस्या-

देखकर लोग उसके पास आ जाते हैं, इस प्रकार रूपानुपतनशील होने से यह अतिचार रूपानुपात कहलाता है ।

પરમાણુ, દ્વયણુક સ્કંધ આદિ પુદ્ગલ સૂક્ષ્મ ઓર સ્થૂલ કે ભેદ સે અનેક પ્રકાર કે હૈં । उनमें से बादराकार स्थूल रूप में परिणत मिट्टी के ढेले, ईंट, टुकड़े आदि पुद्गलों को फेंकना पुद्गलक्षेप कहलाता है । मर्यादितक्षेत्र से बाहर के प्रदेश में पुद्गलों को फेंकना वहिः पुद्गलक्षेप कहलाता है । तात्पर्य यह है कि किसी श्रावक ने देशावकाशिक-व्रत में अमुक भूभाग तक ही जाने को मर्यादा की, तत्पश्चात् उसे भूभाग से बाहर का कोई प्रयोजन उपस्थित हो गया, व्रतभंग के भय से वह स्वयं वहां जा नहीं सकता, तब उस बाह्य प्रदेश के लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए वह कंकर-पत्थर आदि फेंकना है,

તેની પાસે આવી જાય છે, આ રીતે રૂપાનુપતનશીલ હોવાથી આ અતિચાર રૂપાનુપાત કહેવાય છે.

પરમાણુ, દ્વયણુકસ્કંધ આદિ પુદ્ગલ સૂક્ષ્મ અને સ્થૂળના ભેદથી અનેક પ્રકારના છે તેમાંથી બાદરાકર સ્થૂળરૂપમાં પરિણત માટીના ઢેલ, ઇંટ, પથ્થરના ટુકડા આદિ પુદ્ગલોને ફેંકવા પુદ્ગલપ્રક્ષેપ કહેવાય છે. મર્યાદિત ક્ષેત્રથી બહારના પ્રદેશમાં પુદ્ગલોને ફેંકવા અહિંપુદ્ગલપ્રક્ષેપ કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે કોઈ શ્રાવકે દેશાવકાશિક વ્રતના અમુક પ્રદેશ સુધી જ જવાની મર્યાદા બાંધી ત્યાર બાદ તેને નિશ્ચિન પ્રદેશથી બહાર જવાનું કોઈ પ્રયોજન ઉપસ્થિત થઈ ગયું. વ્રતભંગના ભયથી તે જાતે ત્યાં જઈ શકે નથી ત્યારે તે બાહ્યપ્રદેશના લોકોનું ધ્યાન ખેંચવા માટે તે કાંકરી-પથ્થર વગેરે ફેંકે છે કે જેનાથી તે લોકો તેના સંકેતને સમજીને

ऽतिचारा अवगन्तव्याः । एते एव देशावकाशिकव्रतस्याऽतिचारा भवन्तीति भावः । उक्तश्लोकासकदशाज्ञे प्रथमाऽध्ययने-‘देशावकाशियव्यवस्रस समणो-वासणं पंच अह्यारा जाणियव्वा, न समायरियव्वा, तं जहा-आण-वणपओणे, पेसवणपओणे, सदाणुवाए, रुवाणुवाए, वहियापोग्गल-परिक्खिदे’ इति । देशावकाशिकव्रतस्य श्रमणोपासकेन पञ्चातिचारा ज्ञातव्याः, न समाचरितव्याः, तद्यथा-आनायनप्रयोगः १ प्रेषणप्रयोगः २ शब्दानुपातः ३ रूपानुपातः ४ वहिः पुद्गलप्रक्षेपः, इति । ५०॥

मूल-‘पोसहोववासस्रस अप्पडिलेहिय-दुप्पडिलेहिय-सिजा-संस्तारादिका पंच अह्यारा ॥५१॥

छाया-पौषधोपवासस्याऽप्रतिलेखित दुष्प्रतिलेखित-शय्या-संस्तारादिकाः पञ्चातिचाराः । ५१॥

जिससे वे उसके संकेत को नम्र कर उसके पास आ जाएं ऐसा करना देशावकाशिकव्रत का वहिःपुद्गलप्रक्षेप नामक अतिचार है ।

ये पांच द्वितीय शिक्षाव्रत, देशावकाशिकव्रत के अतिचार हैं । भावार्थ यह है कि ये पांच देशावकाशिकव्रत के अतिचार हैं । उपासक दशान के प्रथम अध्ययन में कहा है-

‘श्रमणोपासक को देशावकाशिकव्रत के पांच अतिचार जानने चाहिए किन्तु उनका आचरण नहीं करना चाहिए । वे अतिचार ये हैं-आनायन प्रयोग, प्रेषणप्रयोग, शब्दानुपात, रूपानुपात और वहिः पुद्गलप्रक्षेप । ५०।

‘पोसहोववासस्रस’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ--अप्रतिलेखित-दुष्प्रतिलेखित शय्यासंस्तारक आदि पौषधोपवास के पांच अतिचार हैं ॥५१॥

तेनी पासे आवी लय आ प्रमाणे करुणं देशावकाशिकव्रतनो अहिःपुद्गल-प्रक्षेप नामक अतिचार छे.

आ पांच द्वितीय शिक्षाव्रत, देशावकाशिक व्रतना अतिचार लणुवा लेधये परन्तु तेमनुं आचरण करुणं लेधये नहीं. आ अतिचार आ प्रमाणे छे-आनायनप्रयोग, प्रेषणप्रयोग, शब्दानुपात, रूपानुपात अने अहिःपुद्गल-प्रक्षेप. ॥५०॥

‘पोसहोववासस्रस अप्पडिलेहिय’ इत्यादि

सूत्रार्थ--अप्रतिलेखित-दुष्प्रतिलेखित शय्या संस्तारक आदि पौषधोप-वासना पांच अतिचार छे.

शय्या संस्तारकाणां न सर्वथा प्रतिलेखनम्-अन्यमनस्कतया प्रतिलेखनं च प्रथमोऽतिचारः १ तेषामेव शय्या संस्तारकाणां सर्वथा प्रमार्जनाऽभावोऽन्यमनस्कतया प्रमार्जनश्च द्वितीयः २ एवमेवोच्चारप्रस्रवणभूमौ क्रमेण प्रकारद्वये तृतीय-चतुर्थौ ३-४ प्रवचनोक्तविध्यनुसारेण पौषधोपवासव्रतस्य सम्यगनुपालनाऽभावः, व्रतसमये-आहारशरीरसस्कारमैथुनादिविविधव्यापाराणामनुचिन्तनश्च पञ्चमः ५ इति । तत्र संस्तारादी जन्तवः सन्ति-न वा सन्ति-इत्येवं चक्षुर्व्यापाररूपं प्रत्यवेक्षणं-प्रतिलेखनम्, तदेव प्रतिलेखितमुच्यते । न प्रतिलेखितम्-अप्रतिलेखितम्,

इनमें से (१) शय्या और संस्तारक का प्रतिलेखन न करना अथवा अन्य मनस्कभाव से प्रतिलेखन करना प्रथम अतिचार है । (२) शय्या और संस्तारक का बिलकुल ही प्रमार्जन न करना या अन्यमनस्क होकर प्रमार्जन करना दूसरा अतिचार है । (३) इसी प्रकार उच्चार प्रस्रवणभूमि का प्रतिलेखन-प्रमार्जन न करना अथवा अन्य मनस्क होकर प्रतिलेखन-प्रमार्जन करना तीसरा और चौथा अतिचार है । (५) आगमोक्तविधि के अनुसार पौषधोपवास का समीचीनरूप से पालन न करना अर्थात् व्रत के समय में आहार का, शरीरशृंगार का, मैथुन आदि विविध प्रकार के व्यापारों का विचार करना पांचवां अतिचार है ।

संस्तारक आदि में जीव-जन्तु हैं या नहीं हैं, इस प्रकार चक्षु का व्यापाररूप जो अवलोकन है, उसे प्रतिलेखन कहते हैं । प्रतिलेखन ही प्रतिलेखित कहलाता है । जो प्रतिलेखित न हो अर्थात् देखा न गया

आमांथी (१) पथारी અને સંથારાનું પડિલેહન ન કરવું, અથવા અન્યમનસ્કભાવથી પડિલેહન કરવું પ્રથમ અતિચાર છે. (૨) પથારી અને સંથારાનું બિલકુલ જ પ્રમાર્જન ન કરવું અથવા અન્યમનસ્ક થઈને પ્રમાર્જન કરવું બીજો અતિચાર છે. (૩-૪) આવી જ રીતે ઉચ્ચારપ્રસ્રવણ-ભૂમિનું પડિલેહન-પ્રમાર્જન ન કરવું અથવા અન્યમનસ્ક થઈને પ્રતિલેખન-પ્રમાર્જન કરવું એ ત્રીજા તથા ચોથા અતિચાર છે. (૫) આગમોક્ત વિધિ અનુસાર પૌષધવ્રતનું યોગ્ય રૂપથી પાલન ન કરવું અર્થાત્ વ્રતના સમયમાં આહારનું, શરીરસુશોભનનું, મૈથુન આદિ વિવિધ પ્રકારના વ્યાપારોનો વિચાર-ચિન્તવન કરવું પાંચમો અતિચાર છે.

સાથરા વગેરેમાં જીવ જન્તુ છે કે નહીં આ રીતે આંખના વ્યાપાર રૂપ જે અવલોકન છે તેને પ્રતિલેખન કહે છે. પ્રતિલેખન જ પ્રતિલેખિત

અપ્રત્યક્ષેષિતિત્યર્થઃ । મૃદુના-કોમલેન પ્રમાર્જનીદમૃત્યુપકરણેન ક્રિયમાણં સંશો-
ધનાદિકં પ્રમાર્જિત મુચ્યતે, ન પ્રમાર્જિત-મપ્રમાર્જિતિત્યર્થઃ, એતે પૂર્વોક્તાઃ પૌષ-
ધોપવાસવ્રતસ્ય તૃતીયશિક્ષાવ્રતસ્યાઽતિચારાઃ અવગન્તવ્યાઃ । તસ્માદ્-વ્રતધારિણા
પૌષધોપવાસસ્ય પચ્ચાઽતિચારવર્જનપૂર્વકં પૌષધોપવાસવ્રતમનુપાલનીયમ્ ॥૫૧॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વં તાવત્-યથાક્રમં પ્રાપ્તસ્ય દેશાવકાશિકવ્રતરૂપ
દ્વિતીય શિક્ષાવ્રતસ્યાઽનાયનપયોગાદિકાઃ પચ્ચાતિચારાઃ પ્રરૂપિતાઃ । સમ્પ્રતિ-
ક્રંસાગતસ્ય પૌષધોપવાસવ્રતરૂપતૃતીયશિક્ષાવ્રતસ્યાઽપ્રતિલેખિત-દુષ્પ્રતિલેખિત-
શય્યાસંસ્તારકાદિકાન પચ્ચાતિચારાન્ પ્રરૂપયિતુમાદ-‘પોસહોવવાસસ્સ
અપ્પહિલેહિય-દુપ્પહિલેહિય-સિજ્ઞા સંધારાહ્યા પંચ અહચારા’ इति ।
પૌષધોપવાસસ્યાઽપ્રતિલેખિત-દુષ્પ્રતિલેખિતશય્યાસંસ્તારાદિકાઃ - તત્રાઽપ્રતિલે-
ખિતશય્યાસંસ્તારકઃ ૧ અપ્રમાર્જિત-દુષ્પ્રમાર્જિતશય્યાસંસ્તારકઃ ૨ અપ્રતિલે-

હો વહ અપ્રતિલેખિત હૈ । નરમ પૂંજની આદિ ઉપકરણ કે દ્વારા ક્રિયા
જાને વાલા સંશોધન આદિ પ્રમાર્જિત વાદ્લાતા હૈ । પ્રમાર્જિત કા
અભાવ અપ્રમાર્જિત હૈ । યે પાંચ પૂર્વોક્ત ત્રીસરે શિક્ષાવ્રત પૌષધોપવાસ
વ્રત કે અતિચાર હૈ । હસ કારણ વ્રત કા અનુષ્ઠાન કરને વાલે શ્રાવક
કો અતિચારો સે વચતે છુએ પૌષધોપવાસવ્રત કા સમ્યક્ પ્રકાર સે
પાલન કરના યાદિ ॥૫૧॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલે દ્વિતીય શિક્ષાવ્રત દેશાવકાશિક કે આન-
યનપ્રયોગ આદિ પાંચ અતિચારો કી પ્રરૂપણા કી ગઈ હૈ । અવ પૌષ-
ધોપવાસનામક ત્રીસરે શિક્ષાવ્રત કે અતિચારો વા કથન કરતે હૈ—

પૌષધોપવાસ કે પાંચ અતિચાર હૈ—(૧) અપ્રતિલેખિતદુષ્પ્રતિલે-

કહેવાય છે. જે પ્રતિલેખિત ન હોય અર્થાત્ જોવામાં ન આવ્યું હોય તે
અપ્રતિલેખિત છે. સુંવાળી પૂંજણી આદિ ઉપકરણ દ્વારા કરવામાં આવનાર
સંશોધન આદિ પ્રમાર્જિત કહેવાય છે. પ્રમાર્જિતનો અભાવ અપ્રમાર્જિત
છે. આ પાંચ પૂર્વોક્ત ત્રીજા શિક્ષાવ્રત પૌષધોપવાસ વ્રતના અતિચાર છે. આ
કારણે વ્રતનું અનુષ્ઠાન કરનાર શ્રાવકે અતિચારોથી બચતા થકા પૌષધોપવાસ
વ્રતનું સમ્યક્ પ્રકારે પાલન કરવું જોઈએ. ॥૫૧॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલા દ્વિતીય શિક્ષાવ્રત દેશાવકાશિકના આનયન-
પ્રયોગ આદિ પાંચ અતિચારોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે. હવે પૌષધો-
પવાસ નામક ત્રીજા શિક્ષાવ્રતના અતિચારોનું કથન કરીએ છીએ—

પૌષધોપવાસના પાંચ અતિચાર છે—(૧) અપ્રતિલેખિત દુષ્પ્રતિલેખિત શય્યા-
સંસ્તારક (૨) અપ્રમાર્જિત-દુષ્પ્રમાર્જિત શય્યાસંસ્તારક (૩) અપ્રતિલેખિત-

खितोच्चारप्रस्रवणभूमिः ३ अप्रमार्जित-दुष्प्रमार्जितोच्चारप्रस्रवणभूमिः ४ पौष-
धोपवास व्रतस्य सम्यग्मनुपालनञ्चेति ५ पञ्चातिचाराः । तत्र-शय्यासंस्तार-
काणां न सर्वथा प्रतिलेखनञ्च प्रथमः १ तेषां शय्यासंस्तारकाणां न सर्वथा प्रमा-
र्जनम् अन्यमनस्कतया प्रमार्जनं च द्वितीयः २ एवमेवोच्चारप्रस्रवणभूमौ क्रमेण
प्रकारद्वये तृतीय-चतुर्थौ ३-४ प्रवचनोक्तविध्यनुसारेण पौषधोपवासव्रतस्य
सम्यग्मनुपालनाऽभावः, व्रतसमये-आहारशरीरसत्कार मैथुनादि विविधव्यापारा-
णामनुचिन्तनञ्च पञ्चमः ५ इति, तत्र-प्रतिलेखनं सचित्ताऽचित्तमिश्र स्थावरव्रस-
जन्तु शून्यत्वेन शय्यादेश्वक्षुषा निरीक्षणम्, प्रमार्जनन्तु-रजोहरणादिना सम्मा-

खित शय्यासंस्तारक (२) अप्रमार्जित-दुष्प्रमार्जितशय्यासंस्तारक (३)
अप्रतिलेखित-दुष्प्रतिलेखित-उच्चारप्रस्रवणभूमि (४) अप्रमार्जित-
दुष्प्रमार्जित-उच्चारप्रस्रवणभूमि और (५) पौषधव्रत का
सम्यक् अननुपालन ।

(१) शय्या और संस्तारे का सर्वथा ही प्रतिलेखन न करना अथवा
असावधानी से प्रतिलेखन करना प्रथम अतिचार है । (२) शय्या और
संस्तारक का बिलकुल प्रमार्जन न करना अथवा अन्यमनस्क भाव से
प्रमार्जन करना दूसरा अतिचार है । (३-४) इसी प्रकार उच्चार भूमि
और प्रस्रवणभूमि का प्रतिलेखन और प्रमार्जन न करना या सम्यक्
प्रकार से प्रतिलेखन प्रमार्जन न करना तीसरा और चौथा अतिचार
है । (५) आगमोक्त विधि के अनुसार पौषधव्रत का सम्यक् प्रकार से
पालन न करना, यह पौषधव्रत का पांचवां अतिचार है ।

शय्या और संस्तार में ब्रह्म या स्थावर जीव तो नहीं हैं, यह

दुष्प्रतिलेखित-उच्चारप्रस्रवणभूमि (४) अप्रमार्जित-दुष्प्रमार्जित-उच्चार-
प्रस्रवणभूमि अने (५) पौषधव्रतनुं सम्यक् अननुपालन. (१) शय्या अने
संस्तारानुं सर्वथा न प्रतिलेखन न करवुं अथवा असावधानीથી प्रतिलेखन
करवुं प्रथम अतिचार छे. (२) शय्या अने संस्तारकनुं बिलकुल प्रमार्जन न
करवुं अथवा अन्यमनस्कभावથી प्रमार्जन करवुं भीले अतिचार छे. (३-४)
आवी न हीते उच्चारभूमि अने प्रस्रवणभूमिनुं प्रतिलेखन अने प्रमार्जन न
करवुं अथवा सम्यक् प्रकारથી प्रतिलेखन प्रमार्जन न करवुं त्रीला अने
चौथा अतिचार छे. (५) आगमोक्त विधिना अनुसार पौषधव्रतनुं सम्यक्-
प्रकारથી पालन न करवुं, ओ पौषधव्रतने पांचवो अतिचार छे.

शय्या अने संस्तारमां ब्रह्म अथवा स्थावर एव तो नहीं ओ ओई

ર્જનમ્, ન પ્રતિલેખિતમ્ અપ્રતિલેખિતમ્, एवं न प्रमार्जितम्-अप्रमार्जितम् । एवं-પૌષ્ઠોપવાસ વ્રતધારિણાઽગારિણાઽપત્યવેક્ષિત દુષ્પ્રતિલેખિત શય્યાસંસ્તારાદિ પશ્ચાત્તિચારવર્જનપૂર્વકમેવ પૌષ્ઠોપવાસવ્રતં પાલનીયમ્ । ઉક્તશ્ચોપાસકદશાંગે પ્રથમે-ઽધ્યયને 'પોષ્ઠોપવાસસસ સમ્મણોપાસણં પંચ અહ્યારા જાણિયન્ના, ન સમાયરિયન્ના, તં જહા-અપ્પડિલેહિય દુપ્પડિલેહિય મિજ્જા સંથારે, અપ્પમજ્જિય-દુપ્પમજ્જિયસિજ્જા સંથારે, અપ્પડિલેહિય-દુપ્પડિલેહિય ઉચ્ચાર પાસવણભૂમી, અપ્પમજ્જિય-દુપ્પમજ્જિય ઉચ્ચારપાસવણ-ભૂમી, પોષ્ઠોપવાસસસ સમ્મં અણ્ણપાલળયા' इति पौषधोपवासस्य श्रम-णोपासकेन पश्चात्तिचारा ज्ञातव्याः, न समाचरितव्याः, तद्यथा-अप्रतिलेखित दुष्प्रतिलेखितशय्यासंस्तारकः १ अप्रमार्जितदुष्प्रमार्जितशय्यासंस्तारकः २ अप्रतिलेखित दुष्प्रतिलेखितोच्चारप्रस्रवणभूमिः ३ अप्रमार्जितदुष्प्रमार्जितोच्चार-प्रस्रवणभूमिः ४ पौषधोपवासस्य सम्यगननुपालनता इति ॥५१॥

દેશના પ્રતિલેખન કહલાતા હૈ । રજોહરણ આદિ કે દ્વારા પૂજના પ્રમા-ર્જન કહલાતા હૈ । પૌષ્ઠોપવાસવ્રત કે ધારક શ્રાવક કો અપ્રતિલેખિત -દુષ્પ્રતિલેખિત શય્યાસંસ્તારક આદિ પાંચ અતિચારોં સે વચતે હુએ પૌષ્ઠોપવાસવ્રત કા પાલન કરના યાહિએ । ઉપાસકદશાંગ સૂત્ર કે પ્રથમ અધ્યયન મેં કહા હૈ-‘પૌષ્ઠોપવાસવ્રત કે શ્રમણોપાસક કો પાંચ અતિચાર જાનને યાહિએ કિન્તુ ઉનકા આચરણ નહોં કરના યાહિએ । બે અતિચાર યે હૈં-(૧) અપ્રતિલેખિત-દુષ્પ્રતિલેખિત શય્યાસંસ્તાર (૨) અપ્રમાર્જિત દુષ્પ્રમાર્જિત શય્યાસંસ્તાર (૩) અપ્રતિલેખિત-દુષ્પ્રતિલેખિત ઉચ્ચારપ્રસ્રવણભૂમિ ઓર પૌષ્ઠોપવાસ કા સમ્યક્ અનનુપાલન ॥૫૧॥

તેવું પ્રતિક્ષેપન કહેવાય છે. રજોહરણ વગેરેની મદદથી પૂજવું પ્રમાર્જન કહેવાય છે. પૌષ્ઠોપવાસ વ્રતના ધારક શ્રાવકે અપ્રતિલેખિત-દુષ્પ્રતિક્ષેપિત શય્યાસંસ્તારક આદિ પાંચ અતિચારોથી બચતા થકા પૌષ્ઠોપવાસવ્રતનું પાલન કરવું જોઈએ. ઉપાસકદશાંગસૂત્રના પ્રથમ અધ્યયનમાં કહ્યું છે- ‘પૌષ્ઠોપવાસ વ્રતના શ્રમણોપાસકે પાંચ અતિચાર બાજુવા જોઈએ પરંતુ તેમનું આચરણ કરવું જોઈએ નહીં આ અતિચાર છે. (૧) અપ્રતિલેખિત-દુષ્પ્રતિક્ષેપિત શય્યાસંસ્તાર (૨) અપ્રમાર્જિત-દુષ્પ્રમાર્જિત શય્યાસંસ્તાર (૩) અપ્રતિલેખિત-દુષ્પ્રતિક્ષેપિત ઉચ્ચારપ્રસ્રવણભૂમિ અને (૪) પૌષ્ઠોપવાસનું સમ્યક્-અનનુપાલન. ॥૫૧॥

મૂલમ્-અતિહિસંવિભાગસ્સ સચિત્તણિક્ષેવણાઙ્ગ્યા પંચ-
અઙ્ગારા ॥૫૨॥

છાયા—અતિથિસંવિભાગસ્ય સચિત્તનિક્ષેપણાદિકા પञ્ચાતિચારાઃ ॥૫૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રે-પૌષ્ઠોપવાસવ્રતસ્યાઽપ્રતિલેખિત-દુષ્પ્રતિલેખિત-
શય્યાસંસ્તારાદિકાઃ પञ્ચાતિચારા પ્રદર્શિતાઃ સમ્પ્રતિ દ્વાદશવ્રતે દ્વાદશસ્ય નિક્ષે-
પણાદિકાન્ પञ્ચાતિચારાન્ પ્રરૂપયિતુમાહ-‘અતિહિસંવિભાગસ્સ’ इत्यादि-

અતિથિસંવિભાગસ્ય-પૂર્વોક્તાન્તિમશિક્ષાવ્રતસ્યાઽતિથિસંવિભાગવ્રતસ્ય સચિ-
ત્તનિક્ષેપણાદિકાઃ-સચિત્તનિક્ષેપણમ્ ૧ આદિના-સચિત્તપિધાનમ્ ૨ કાલા-
તિક્રમઃ ૩ પરવ્યપદેશઃ ૪ માત્મર્યમ્ ૫ इत्येते पञ्चातचारा आत्मनो मालिन्या-
पादका दुष्परिणतिविशेषाः भवन्ति । तत्र-सचित्तनिक्षेपणं तावत् अदानबुद्ध्या

‘અતિહિસંવિભાગસ્સ’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—અતિથિસંવિભાગવ્રત કે સચિત્તનિક્ષેપ આદિ પાંચ
અતિચાર હૈં ॥૫૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ સૂત્ર મેં પૌષ્ઠોપવાસવ્રત કે અપ્રતિલેખિત-
દુષ્પ્રતિલેખિતશય્યા સંસ્તારક આદિ પાંચ અતિચારોં કી પ્રરૂપણા કી
ગઈ, અવ શ્રાવક કે વારહવાં અતિથિ સંવિભાગ કે પાંચ અતિચારોં કી
પ્રરૂપણા કરતે હૈં-

પૂર્વોક્ત અન્તિમ શિક્ષાવ્રત અતિથિસંવિભાગ કે સચિત્ત નિક્ષેપણ આદિ
પાંચ અતિચાર હૈં, વે યે હૈં-(૧) સચિત્તનિક્ષેપણ (૨) સચિત્તપિધાન (૩)
કાલાતિક્રમ (૪) પરવ્યપદેશ ઓર (૫) માત્મર્ય । યે પાંચ અતિચાર આત્મા
કે મલીન બનાવેવાલે દુષ્પરિણમન હૈં । इनका अर्थ इस प्रकार है-

‘અતિહિસંવિભાગસ્સ સચિત્તણિક્ષેવણાઙ્ગ્યા પંચ અઙ્ગારા’ ॥૫૨॥

સૂત્રાર્થ—અતિથિસંવિભાગવ્રતના સચિત્તનિક્ષેપ વગેરે પાંચ અતિચાર છે. ॥૫૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં પૌષ્ઠોપવાસ વ્રતના અપ્રતિલેખિત-દુષ્પ્રતિ-
લેખિત શય્યાસંસ્તારક આદિ પાંચ અતિચારોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી હોવે શ્રાવ-
કના બારમાં અતિથિસંવિભાગ વ્રતના પાંચ અતિચારોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ-

પૂર્વોક્ત અન્તિમ શિક્ષાવ્રત અતિથિસંવિભાગ વ્રતના સચિત્ત નિક્ષેપણ
આદિ પાંચ અતિચાર છે, તે આ પ્રમાણે છે-(૧) સચિત્ત નિક્ષેપણ (૨)
સચિત્તપિધાન (૩) કાલાતિક્રમ (૪) પરવ્યપદેશ અને (૫) માત્મર્ય આ
પાંચ અતિચાર આત્મને મલીન બનાવનારા દુષ્પરિણમન છે તેનો અર્થ
આ પ્રમાણે થાય છે-

સચિત્તે કમલપત્રાદૌ નિક્ષેપણમ્ અશનાદીનાં સ્થાપનમ્, યદ્વા-સચિત્તસ્ય ધાન્યાદિ પાત્રાદૌ સચિત્તા હારાદૌ સ્થાપનમ્, યદ્વા-ડહાનબુદ્ધ્યાઽચિત્તસ્ય સચિત્તેન સચિત્ત-સ્યાઽચિત્તેન વા સમ્મેલનમ્ ? સચિત્તનિક્ષેપણમ્ । એવમ્-સચિત્તેન પદ્મપત્ર-સચિત્ત જલપાત્રાદિના, અથવા-ડચિત્તેનાઽશનાદિના સચિત્તહરિતાદેઃ પિધાનમ્ આચ્છા-દનમ્ સચિત્તપિધાનમ્ ૨ એવં કાલાતિક્રમઃ સાધોર્મિક્ષા કાલસ્યાઽતિક્રમણમ્, અથવા યોગ્યકાલે દાનાદ્યાવનાકરણમિત્યર્થઃ, યદ્વા-સાધુઃ સત્કૃતોઽપિ ભવેત્-અશનાદૈર્વ્યયોઽપિ ન ભવેત્ ૩ પરવ્યપદેશસ્તુ-અશનાદૌ પરસ્યાઽસરોપણમ્, યદ્વા-પરક્રિયમિદમશનાદિકં-ન યસ્ય' ઇત્યાદિ સાધુમર્મપે સાપણં પરવ્યપદેશઃ ।

(૧) અશન આદિ આહાર કો ન દેને કી બુદ્ધિ સે સચિત્ત કમલ-પત્ર આદિ પર રચના સચિત્તનિક્ષેપણ છે । જા સચિત્ત ધાન્યપાત્ર આદિ કો અચિત્ત આહાર આદિ પર રચના અથવા ન દેને કી ભાવના સે અચિત્ત કો સચિત્ત કે સાથ થા બુદ્ધિ સે અચિત્ત કો સાથ મિલા દેના સચિત્તનિક્ષેપણ છે ।

(૨) સચિત્ત કમલપત્ર યા જલપાત્ર આદિ સે અથવા સચિત્ત અશન આદિ સે અચિત્ત આહાર આદિ કો ઢંકુ દેના સચિત્તપિધાન છે ।

(૩) સાધુ કે ભિક્ષા કે સમય કા ઉત્તલંચન કરના । સાધુ કો અસમય મેં દાન દેને કા ઉપક્રમ કરના જિતસે સાધુ કા જત્કાર મી હો જાય ઔર અશનાદિ મી રચ જાય । યહ કાલાતિક્રમ અતિચાર છે ।

(૪) અપને અશન આદિ કો પરાયાં ચતલાના, પરવ્યપદેશ અતિ-ચાર છે, જૈસે સાધુ સે કહના કિ યહ અશન આદિ મેરા નહીં છે, દુસરે કા છે ।

(૧) અશન આદિ આહારને નહીં આપવાની બુદ્ધિથી સચેત કમળપત્ર વગેરે પર રાખવો સચિત્ત નિક્ષેપણ છે અથવા સચેત ધાન્યપાત્ર વગેરેને અચેત આહાર વગેરે પર રાખવા અથવા ન આપવાની ભાવનાથી અચેતને સચેતની સાથે અથવા સચેતને અચેતની સાથે ભેળવી દેવું સચિત્તનિક્ષેપણ છે.

(૨) સચેત કમળપત્ર અથવા જળપાત્ર વગેરેથી અથવા સચેત અશન આદિથી અચેત આહાર વગેરેને ઢાંકી દેવું સચિત્ત પિધાન છે.

(૩) ગોચરીમાં-સાધુના સમયનું ઉદલંચન કરવું. સાધુને કસમયે દાન આપવાનો ઉપક્રમ કરવો કે જેથી સાધુનો સત્કાર પણ થઇ જાય અને અશનાદિ પણ ખચી જાય આ કાલ તિક્રમ અતિચાર છે.

(૪) પોતાના અશન વગેરેને પારકું બનાવવું, પરવ્યપદેશ અતિચાર છે, જેમ કે સાધુને કહેવું કે આ ભોજન વગેરે મારું નથી, બીજાનું છે.

यद्वा-स्वयं सुस्थितो-दातुं शुद्धोऽपि परस्मै दातुं कथनम्, यथा-‘अहङ्कार्यान्तर-
संलग्नोऽस्मि त्वन्देहि’ इति व्यपदेशः परव्यपदेशः ४ अन्यस्य दातुर्गुणाऽसहनं
मात्सर्यम् ५ उक्तश्रौपासकदश ज्ञे मथमाऽध्ययने-‘तथाप्यन्तरं च णं अहा-
संविभागस्य श्रमणोपासकणं पञ्च अह्वारा जाणिमव्वा, न समायरि-
यव्वा, तं जहा-सचित्तनिक्षेपणया १ सचित्तपेहणया २ कालाहकमे ३
परव्यपणये ४ मच्छरिया ५ ।’

छाया-तदन्तरं यथा संविभागस्य श्रमणोपासकेन पञ्चाऽतिचारा ज्ञातव्याः
तद्यथा-सचित्तनिक्षेपणता-सचित्तपिधानता-कालातिक्रमः-परव्यपदेशः मत्स-
रिता इति ॥५२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तावत् पञ्चाणुव्रत-त्रिगुणव्रत-शिक्षाप्रतत्रयाणां
यथाक्रमं पञ्च-पञ्चाऽतिचाराः मरूपिताः, सम्प्रति-चतुर्थस्याऽतिथिसंविभागव्रत-
रूपान्तिमशिक्षाव्रतरथ सचित्तनिक्षेपणादिकान् पञ्चातिचारान् प्ररूपयितुमाह-

(५) अन्य दाता के गुणों को सहन न करना मात्सर्य नामक
अतिचार है ।

उपासकदर्शांग सूत्र के प्रथम अध्ययन में कहा है-श्रमणोपासक
को अतिथिसंविभागव्रत के पांच अतिचार जानना चाहिए परन्तु उनका
आचरण नहीं करना चाहिए । वे पांच अतिचार इस प्रकार हैं-(१)
सचित्तनिक्षेपणता (२) सचित्तपिधानता (३) कालातिक्रम (४) परव्यप-
देश और (५) मत्सरिता ॥५२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले पांच अणुव्रतों के, तीन गुणव्रतों के तथा
चार में से तीन शिक्षाव्रतों के पांच-पांच अतिचारों का कथन किया
जा चुका है । अब चौथे शिक्षाव्रत अतिथिसंविभाग के सचित्तनिक्षेप
आदि पांच अतिचारों का प्ररूपण करते हैं-

(५) अन्य दाताना शुण्णे सहुन न करवा मात्सर्य नामक अतिचार छे.

उपासकदर्शांग सूत्रना प्रथम अध्ययनमां कहुं छे-श्रमणोपासके अतिथि-
संविभाग व्रतना पांच अतिचार जणुवा लेधये आ पांच अतिचार आ
प्रमाणे छे-(१) सचित्त निक्षेपणता (२) सचित्त पिधानता (३) कालातिक्रम
(४) परव्यपदेश अने (५) मत्सरिता. ॥५२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—अनी पडेला, पांच अणुव्रताना, त्रणु शुणुव्रताना
तथा ४ आरमांथी त्रणु शिक्षाव्रताना पांच-पांच अतिचारानुं कथन करवामां
आणुं छे हुवे योथा शिक्षाव्रत अतिथिसंविभागना सचित्तनिक्षेप आदि पांच
अतिचारानुं प्ररूपण करीये छीये-

‘अतिहिसंविभागस्तु’ इत्यादि । अतिथिसंविभागस्य-पूर्वोक्तस्याऽतिथि संविभागव्रतस्याऽन्तिम शिक्षाव्रतरूपस्य सचित्तनिक्षेपणादिकाः-सचित्तनिक्षेपणम् १ आदिना-सचित्तपिधानम् २ कालातिक्रमः ३ परव्यपदेशः ४ मात्सर्यम् ५ चेत्येते पञ्चातिचारा आत्मनो मालिन्यापादका दुष्परिणतिविशेषा भवन्ति । तत्र सचित्त-निक्षेपणं तावत्-अशनपानखादिमरचादिमरूपचतुर्विधाऽऽहारस्य सचित्तेषु कमल-कदलीपत्रादिषु व्रीहियवगोधूम शाल्यादि सस्येषु निक्षेपणम्, अदानबुद्ध्या स्थापनम्, इत्येवं सचित्तनिक्षेपणयत्तस्यैवम् १ अन्नादिक मोदनखाद्यादि सचित्ते निक्षिप्तं सत् श्रमणाः खलु न गृह्णन्ति इत्यतो मया देयमशनादिक मुपस्थाप्यते, किन्तु-साधवो नाऽऽददत इति मम लाभोऽयं भविष्यतीति जानात्यसावितिभावः ।

अन्तिम शिक्षाव्रत अतिथिसंविभाग के पांच अतिचार हैं-(१) सचित्तनिक्षेपण (२) सचित्तपिधान (३) कालातिक्रम (४) परव्यपदेश और (५) मात्सर्य । ये पांच अतिचार आत्मा में मलीनता उत्पन्न करने वाले दुष्परिणमनरूप हैं । इनका अर्थ इस प्रकार है-

(१) सचित्तनिक्षेपण-अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप चारों प्रकार के आहार को कमल या केले के सचित्त पत्ते आदि के ऊपर या व्रीहि, यव, गेहूं, शालि आदि धान्य के ऊपर, न देने की बुद्धि से, रख देना ।

अन्न आदि ओदन तथा खाय आदि जो सचित्त के ऊपर रक्खा हुआ होता है, उसे साधु ग्रहण नहीं करते, अतएव मैं तो अशनादि उनके समक्ष उपस्थित करूंगा मगर वे लेगे नहीं, इससे मुझे लाभ ही होगा, ऐसा जानकर गृहस्थ सचित्तनिक्षेपण करे तो अतिचार होता है ।

अन्तिम शिक्षाव्रत अतिथिसंविभागना पांच अतिचार छे-(१) सचित्त-निक्षेपण (२) सचित्तपिधान (३) कालातिक्रम (४) परव्यपदेश अने (५) मात्सर्य आ पांच अतिचार आत्मा में मलीनता उत्पन्न करवावणा दुष्परिणमन रूप छे. तेमनो अर्थ आ प्रभाणु थाय छे-

(१) सचित्तनिक्षेपण-अशन, पान, खाद्य अने स्वाद्य रूप चारो प्रकारना आहारने कमल अथवा केलना सचेत पांढां आदिनी उपर अथवा चोभा, जव, धेनु, डांगर वगेरे धान्यनी उपर, न आपवानी बुद्धिथी राणी देवा.

(१) अन्न आदि चोभा (लात) तथा खाद्य आदि ने सचेतनी उपर राखेला होय छे, तेने साधु ग्रहण करता नथी आथी हुं तो अशनादि तेमनी समक्ष उपस्थित करीश पणु तेओ स्वीकारशे. नही, आथी मने तो दाब न थशे, आम जगुनीने गृहस्थ सचित्तनिक्षेपण करे तो अतिचार लागे छे.

एवं-सचित्तपिधानम्, सचित्तेन सूरणकन्दपत्रपुष्पादिनाऽशनपानादि चतुर्विधाहार-
स्य पिधानम् अदानबुद्ध्याऽऽच्छादनम्, सचित्तपिधानम्, अशनादिकं सचित्तेना-
ऽऽच्छादितं सत् साधुषो न गृह्णन्तीति बुद्ध्या सचित्तेन स्थगयतीति भावः २ काला-
तिक्रमस्तु-श्रमणानामुचितां भिक्षावेलासतिक्रम्य उल्लंघ्य भोजनम्, यद्वा-साधूनां
भिक्षार्थं मागमनकालात् प्रागेव भोजनम्-कालातिक्रमः उच्यते । स चाऽयं
कालातिक्रमो भिक्षाग्रहीतुः श्रमणस्याऽपीतिकारको भवति-अदानश्चेति भावः ३
परव्यपदेशस्तु-चतुर्थ-षष्ठाऽष्टम भक्तादि पौषधोपवासव्रतपाशनावेलायां भिक्षार्थं
समागतं स्पष्टतयाऽऽनादिकं पश्यन्तमपि श्रमणं प्रति परस्येदमन्नादिकं वर्तते-
न ममेति, तस्मात्-न दातुमर्हामि-इत्येवमपरमार्थतः कथनं परव्यपदेशः, परमार्थ-

(२) सचित्तपिधान-सचित्त सूरण कन्द, पत्र, पुष्प आदि से अशन पान आदि चार प्रकार के आहार को ढंरु देना अर्थात् साधु को न देने की भावना से आच्छादित करदेना सचित्तपिधान अतिचार है । क्यों कि सचित्त वस्तु से आच्छादित आहार को साधु ग्रहण नहीं करते हैं ।

(३) कालातिक्रम-साधुओं के भिक्षाकाल को टाल कर भोजन कर लेना, वा यद्यपि साधु का भिक्षा काल दिन का ही है, अतः दान न देने की इच्छा से रात्रि भोजन करना इत्यादि यह कालातिक्रम भिक्षा ग्रहण करने वाले श्रमण के लिए अप्रीतिकर होता है और इससे दान का अभाव भी होता है ।

(४) परव्यपदेश-उपवास, वेला, तैला आदि की तपस्या करने वाले या नित्य भोजी श्रमण के भिक्षार्थ उपस्थित होने पर सामने

(२) सचित्तपिधान-सचेत सूरणकन्दमूल, पत्र, पुष्प आदिसे अशनपान आदि चार प्रकारका आहारने ढांकी देवे। अर्थात् साधुने न बहोराववानी लावनाथी ढांकी देवुं सचित्तपिधान अतिचार छे कारणु के सचेत वस्तुथी आच्छादित आहारने। साधु ग्रहण करता नथी।

(३) कालातिक्रम-साधुओंना भिक्षाकाणने टालीने, अर्थात् साधुने। भिक्षाकाण द्विसने। न होय आथी दान न आपवानी छच्छाथी रात्रिलोजन करवुं वगेरे-आ कालातिक्रम भिक्षा ग्रहण करनारा श्रमण भाटे अप्रीतिकर होय छे अने आथी दानने। अभाव पणु थाय छे।

(४) परव्यपदेश-उपवास, छट्ठ अठम वगेरेनी तपस्या करनारा अथवा नित्य लोजन देनार श्रमणवुं भिक्षार्थ उपस्थित थवा पर नजर सामे

તસ્તુ-તદીયયેવ તદન્નાદિકં વર્તેતે, યદ્વા-પરસ્ય-અન્યજનસ્યેદમન્નાદિકં વર્તેતે
 ઇતિ તત્ર તં ગત્વા યૂયં મિશ્નધ્વમ્ હત્યેવં પરવ્યપદેશઃ ૪ । એવમ્-માત્સર્યં તાવત્-
 યત્સરતા, યઃ શ્રાવકો મિશ્નાદિકં શ્રમણેન મિશ્નિતઃ સન્ ક્રુધ્યતિ અનાદરં વા
 કરોત્તિ, યાચિતોઽપિ ન દદાતિ સ મત્સર ઉચ્યતે, તસ્ય માત્સર્યમ્, પરગુણો-
 વ્ત્કર્ષાઽસહિષ્ણુત્વં વા, માત્સર્યમ્ । યદ્વા-સ સ્વલુ દ્રમકો દત્તવાન્ કિમહં તતોઽપિ
 વ્યૂનોઽસ્મીત્યેવં માત્સર્યાત્-દાને માત્સર્યં વ્યપદિશ્યતે, અથવા-કષાય કલુષિતેન
 ચિત્તેન શ્રમણેભ્યો દદતઃ શ્રાવકસ્ય માત્સર્યમુચ્યતે ૫ તથાચૈતે પશ્ચાઽતિથિસંવિ-
 ભાગસ્યાઽતિચારા ભવન્તિ । ઉક્તશ્ચોપાસકદશાંગે પ્રથમેઽધ્યયને-‘અહા સંવિ-
 ભાગસ્સ પંચ અહયારા જાણિયવ્વા, ન સમાચરિયવ્વા, તં જહા-સચિત્ત-
 નિક્સેવણયા, સચિત્તપેહણયા, કાલાહકમદાણે, પરોવણ્ણે મચ્છારિયા’

સ્પષ્ટ દિશ્વલાઈ દેને વાળે અન્ન-પાન આદિ આહાર કે વિષય મેં એસા
 કહના કિ-‘યહ અન્ન-પાન પરાયા હૈ, મેરા નહીં હૈ, અતઃ એવ દેને કે
 લિયે મેં અસમર્થ હું જવ કિ વહ આહાર વાસ્તવ મેં ઉસી ગૃહસ્થ કા
 હો, દૂસરે કા ન હો ।

(૫) માત્સર્ય શ્રમણ દ્વારા ભિક્ષા કી યાચના કરને પર જો શ્રાવક
 ક્રુદ્ધ હો જાતા હૈ, શ્રમણ કા અનાદર કરતા હૈ અથવા યાચના કરને
 પર ભી દેતા નહીં હૈ, વહ મત્સર કહલાતા હૈ । મત્સર કા ભાવ માત્સર્ય
 હૈ । અથવા દૂસરે કે ગુણ કો સહન ન કરના માત્સર્ય હૈ । અથવા ઉસ
 દરિદ્ર ને દાન દિયા હૈ તો વ્યા મેં ઉલ્લેસે ભી ગયા વીત્તા હું, હસ પ્રકાર
 કે માત્સર્ય ભાવ સે દાન દેના ભી માત્સર્ય કહલાતા હૈ । અથવા કષાય
 સે કલુષિત ચિત્ત સે શ્રમણો કો દાન દેના માત્સર્ય હૈ ।

યે પાંચ અતિથિસંવિભાગવ્રત કે અતિચાર હૈ । ઉપાસકદશાંગ

સ્પષ્ટ દેખાતાં અન્ન-પાણી આદિ આહારના વિષયમા આ પ્રમાણે કહેવું કે-‘આ
 અનાજ-પાણી, બીજાનાં છે, મારા નથી એ આપવા માટે હું લાચાર છું.
 આ પરવ્યપદેશ નામક અતિચાર છે. હકીકતમાં તો તે આહાર ઈન્કાર કરનાર
 પેલા ગૃહસ્થનો જ છે, બીજાનો નથી.

(૫) માત્સર્ય-શ્રમણ દ્વારા ભિક્ષાની યાચના કરવામાં આવે ત્યારે જે
 શ્રાવક ગુસ્સે થઈ જાય છે, શ્રમણનો અનાદર કરે છે અથવા યાચના કરવા
 છતાં પણ આપતો નથી તે મત્સર કહેવાય છે. મત્સરનો ભાવ માત્સર્ય છે
 અથવા બીજાના ગુણો સહન ન કરવા માત્સર્ય છે અથવા પેલા દરિદ્રે દાન
 આપ્યું છે તો શું હું તેનાથી ઉતરતી કક્ષાનો છું ? એ પ્રકારના માત્સર્ય
 ભાવથી દાન આપવું પણ માત્સર્ય કહેવાય છે અથવા કષાયથી કલુષિત
 ચિત્તથી શ્રમણને દાન આપવું માત્સર્ય છે.

આ પાંચ અતિથિસંવિભાગ વ્રતના અતિચાર છે. ઉપાસકદશાંગસૂત્રના

इति । यथा संविभागस्य पञ्चातिचारा ज्ञातव्याः, न समाचरितव्याः, तद्यथा—
सचित्तनिक्षेपणम् १ सचित्तपिधानम् २ कालातिक्रमदानम् ३ परव्यपदेशः ४
मत्सरता ५ इति ॥५२॥

मूलम्—मारणंतिय संलेहणाजोषणाए इहलोकासंसप्प-
ओगाइया पंच अइयारा ॥५३॥

छाया—मारणान्तिकसंलेखनाया जोषणा इहलोकाऽऽशंसा प्रयोगादिकाः
पञ्चातिचाराः ॥५३॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रेऽतिथिसंविभागवतरूपस्या—ऽन्तिमशिक्षाव्रतस्य
द्वादशसु द्वादशस्य सचित्तनिक्षेपणादिकाः पञ्चातिचाराः प्ररूपिताः, द्वादशव्रत
पालनानन्तर-मासन्नमरणं सम्भाव्य यथाऽवसरं श्रावकैः संलेखनाऽद्वयं कर्तव्या

सूत्र के प्रथम अध्ययन में कहा है—यथासंविभागव्रत के पांच अतिचार
जानना चाहिए मगर उनका आचरण नहीं करना चाहिए । वे अतिचार
यों हैं—(१) सचित्तनिक्षेपणता (२) सचित्तपिधानता (३) कालातिक्रम-
दान (४) परव्यपदेश और (५) मत्सरता ॥५२॥

‘मारणंतिय संलेहणा’ इत्यादि ।

मारणान्तिकसंलेखना जोषणा के इहलोकाशंसा प्रयोग आदि
पांच अतिचार हैं ॥५३॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्र में अन्तिम शिक्षाव्रत, बारह व्रतों में
बारह वें अतिथिसंविभाग के सचित्तनिक्षेपण आदि पांच अतिचारों
का प्ररूपण किया गया है । बारह व्रतों का पालन करते हुए श्रावक
को जब अपना मरण सन्निकट प्रतीत हो तब अवसर आने पर संले-
खना अवश्य करना चाहिए । संलेखना का आशय है—कषाय और

प्रथम अध्ययनમાં કહ્યું છે—અતિથિસંવિભાગ વ્રતના પાંચ અતિચાર જાણવા
જોઈએ પરંતુ તેમનું આચરણ કરવું જોઈએ નહીં. આ અતિચાર આ છે—
(૧) સચિત્તનિક્ષેપણતા (૨) સચિત્તપિધાનતા (૩) કાલાતિક્રમદાન (૪) પર-
વ્યપદેશ અને મત્સરતા. ॥૫૨॥

‘મારણંતિય સંલેહણાજોષણા’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—મારણાન્તિકસંલેખનાજોષણના ઇહલોકાશંસાપ્રયોગ આદિ પાંચ
અતિચાર છે. ॥૫૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં અન્તિમ શિક્ષાવ્રત, બાર વ્રતોમાં બારમા
અતિથિસંવિભાગના સચિત્તનિક્ષેપણ આદિ પાંચ અતિચારોનું પ્રરૂપણ કરવામાં
આવ્યું છે. બારવ્રતોનું પાલન કરતા થકા શ્રાવકને જ્યારે પોતાનું મરણ સમીપ
છે તેવી ખાત્રી થાય ત્યારે અવસર આવવા પર સંલેખના અવશ્ય કરવી જોઈએ,

સા ચ સંલેખના કષાયકાયકૃશીકરણમ્, તત્તોડસ્યા મારણાન્તિકસંલેખનાયા
જીવિતાશંસાદિકાન્ પશ્ચાડતિચારાન્ પ્રરૂપયિતુમ્—‘મારણંતિયસંલેહના
જોષ્ણાએ’ इत्यादि। મારણાન્તિકસંલેખનાજોષ્ણાયાઃ પૂર્વોક્તસ્વરૂપાયાઃ
સંયમ-તપોઽર્થાં કાયકષાયકૃશીકરણલક્ષણાયા ઇહલોકાશંસાપ્રયોગાદિકાઃ—
ઇહલોકાશંસાપ્રયોગઃ ૧ આદિના-પરલોકાશંસાપ્રયોગઃ ૨ જીવિતાશંસાપ્રયોગઃ ૩
મરણાશંસાપ્રયોગઃ ૪ કામભોગાશંસાપ્રયોગઃ ૫ તત્ર-સંસ્તારગ્રહણોત્તરમ્-ઇહલોકે-
મનુષ્યલોકે આશંસાપ્રયોગઃ, ‘મૃત્વા ચક્રવર્તી’ વા-રાજા વા-તન્મન્ત્રી વા
શૂયાસ’ મિત્યાદિકરૂપાભિલાષકરણમ્ ૧ એવં-પરલોકાડડશંસાપ્રયોગઃ ‘દેવો-
શૂયાસં’ इत्यादिरૂપાભિલાષકરણમ્ ૨ સમ્માનાદિ લોભેન જીવિતસ્ય-માણધારણ

કાય કો કૃશ કરના । અતએવ હસ મારણાન્તિક સંલેખના કે જીવિતા
શંસા આદિ પાંચ અતિચારોં કા પ્રરૂપણ કરતે હેં

જિસકા સ્વરૂપ પહેલે કહા જા ચુકા હૈ ઓર તપ એવં સંયમ કે
દ્વારા કાય તથા કષાય કો કૃશ (દુર્બલ) કરના જિસકા લક્ષણ હૈ, ઉસ
મારણાન્તિક સંલેખના જોષ્ણા કે પાંચ આતિચાર હૈ । વે હસ પ્રકાર
હેં-(૧) ઇહલોકાશંસા પ્રયોગ (૨) પરલોકાશંસાપ્રયોગ (૩) જીવિતા-
શંસાપ્રયોગ (૪) મરણાશંસાપ્રયોગ ઓર (૫) કામભોગાશંમાપ્રયોગ ।
इनका स्वरूप निम्नलिखित है—

(૧) ઇહલોકાશંસાપ્રયોગ-સંધારા ગ્રહણ કરને કે પશ્ચાત્ હસ લોક
સંબંધી ઇચ્છા કરના, જૈસે-મરને કે અનન્તર મેં ચક્રવર્તી, રાજા યા
ઉસકા મંત્રી બન જાઁ, હસ પ્રકાર કી અભિલાષા કરના ।

(૨) પરલોકાશંસાપ્રયોગ-મૃત્યુ કે પશ્ચાત્ ઇન્દ્ર યા દેવ હોને

સંલેખનાનો આશય છે-કષાય તથા કાયને પાતળા પાડવાં આથી આ મારણા-
ન્તિકસંલેખનાના જીવિતાશંસા આદિ પાંચ અતિચારોનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ—

જેનું સ્વરૂપ પહેલા કહેવામાં આવી ગયું છે અને તપ તથા સંયમ
દ્વારા કાય તથા કષાયને પાતળા પાડવા જેનું લક્ષણ છે તે મારણાન્તિક-
સંલેખના જોષ્ણાના પાંચ અતિચારો આ પ્રમાણે છે—(૧) ઇહલોકાશંસાપ્રયોગ
(૨) પરલોકાશંસાપ્રયોગ (૩) જીવિતાશંસાપ્રયોગ અને (૫) કામભોગાશંસા-
પ્રયોગ તેમનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—

(૧) ઇહલોકાશંસાપ્રયોગ-સંધારો ધારણ કર્યા બાદ આ લોક વિશે
ઇચ્છા કરવી જેમ કે-મરણ પછી હું ચક્રવર્તી, રાજા અથવા તેનો મંત્રી
બની જઈ, એ બાતની અભિલાષા કરવી.

(૨) પરલોકાશંસાપ્રયોગ-મૃત્યુ બાદ ઇન્દ્ર અથવા દેવ થવાની

स्या-ऽऽशंसाप्रयोगः-अभिलाषकरणं जीविताऽऽशंसाप्रयोगः ३ वर्कक्षेत्रादि-
निवासप्रयुक्त क्षुदाद्युपहततया सम्मानाद्यभावेन-‘कदाऽहं श्रियेष’ इत्यादिरूपं
मरणस्याऽभिलाषकरणं मरणाशंसाप्रयोगः ४ कासी-शब्दरूपे, भोगाः-गन्धरस-
स्पर्शा स्तत्राऽऽशंसाप्रयोगः-अभिलाषकरणं कामभोगाऽऽशंसाप्रयोगः, रुचिर-
स्पृहयालुतेत्यर्थः ५ । ५३॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः--पूर्वं तावदनुक्रमेण पञ्चाणुव्रतानां त्रयाणां गुणव्रतानां
चतुर्णां शिक्षाव्रतानाञ्च पञ्च-पञ्चातिचाराः प्ररूपिताः, सम्प्रति-मारणान्तिक
संलेखना जोषणायाः पञ्चातिचारान् प्ररूपयितुमाह-‘मरणान्तिकसंलेखना-

की अभिलाषा करना ।

(३) जीविताशंसाप्रयोग--आदर-सन्मान, भक्ति आदि के लोभ
से जीवित रहने की इच्छा करना ।

(४) मरणाशंसाप्रयोग--फटोर भूमि में निवास करने से, भूख आदि
की पीडा के कारण या सन्मान आदि न होने के कारण ‘मैं कब मर
जाऊँ’ इस प्रकार मरण की कामना करना ।

(५) कामभोगाशंसाप्रयोग--काम अर्थात् शब्द और रूप तथा
भोग अर्थात् गंध, रस और स्पर्श की कामना करना कामभोगाशंसा
प्रयोग नामक अतिचार है ॥५३॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति--इससे पहले पांच अणुव्रतों के, तीन गुणव्रतों
के और चार शिक्षाव्रतों के पांच पांच अतिचारों का प्ररूपण किया

अभिलाषा करवी

(३) जीविताशंसाप्रयोग-आदर-सन्मान, भक्ति आदिना दीप्त
उपता रहेवानी छुछा करवी.

(४) मरणाशंसाप्रयोग-अरण्यडी जमीन पर निवास-करवाथी, भूख
वगेरेनी पीडाका कारणे अथवा मान-सन्मान न भणवाथी ‘हुं क्यारे मरी
जाउं’ ओ प्रकारे मरणुनी कामना करवी.

(५) कामभोगाशंसाप्रयोग-काम अर्थात् शब्द अने रूप तथा भोग
अर्थात् गंध, रस अने स्पर्शनी कामना करवी कामभोगाशंसाप्रयोग नामक
अतिचार छे ॥५३॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-अ नी पड़ेला पांच अणुव्रताना, त्रण गुणव्रताना अने
चार शिक्षाव्रतानां पांच-पांच अतिचारानुं प्ररूपण करवाभां आण्युं छे हुवे

જોષણાં ઇહલોકાશંસાપ્રયોગાદિકા પંચ અધ્યારા' इति । મારણાન્તિક સંલેખનાયાઃ સંયમ-તપશ્ચર્યાદિના કાયકષાય કૃશીકરણલક્ષણમારણાન્તિક સંલેખના જોષણાયા ઇહલોકાશંસાપ્રયોગાદિકા.-ઇહલોકાશંસાપ્રયોગઃ ૧ આદિના-પરલોકાશંસાપ્રયોગઃ ૨ જીવિતાશંસાપ્રયોગઃ ૩ મરણાશંસાપ્રયોગઃ ૪ કામભોગાશંસાપ્રયોગઃ ૫ તત્ર તાવત્-સંસ્તારગ્રહણોત્તરમ્ ઇહલોકે-મનુષ્યલોકે મનિષ્યજ્ઞન્મનિ-આશંસાપ્રયોગઃ, 'મૃત્વા ચક્રવર્તી વા-રાજા વા-તન્મન્ત્રી વા ભૂયાસ' મિત્યાદિરૂપાભિલાષકરણમ્ ૧ એવં-પરલોકાશંસાપ્રયોગઃ 'દેવોભૂયાસમ્' इत्या-મયા है, અથ મારણાન્તિક સંલેખના-જોષણા કે પાંચ અતિચારોંની પ્રરૂપણા કરતે હૈં-

તપ ઓર સંયમ કે દ્વારા કાય એવં કષાય કો કૃશ કરના જિસ કા લક્ષણ હૈ, ઉસ મારણાન્તિક સંલેખના જોષણા કે ઇસ લોકાશંસાપ્રયોગ આદિ પાંચ અતિચાર ચે હૈં-(૧) ઇહલોકાશંસાપ્રયોગ (૨) પરલોકાશંસાપ્રયોગ (૩) જીવિતાશંસાપ્રયોગ (૪) મરણાશંસાપ્રયોગ ઓર (૫) કામભોગાશંસાપ્રયોગ । इनका स्वरूप इस प्रकार है-

(૧) સંથારા ગ્રહણ કરને કે પશ્ચત્, આગામી જન્મ મેં મનુષ્યલોક સંબંધી અભિલાષા કરના, જેસે મેં ચક્રવર્તી વા રાજા વા રાજમંત્રી હો જાઁ, હૃત્યાદિ । यह लोकाशंसाप्रयोग है ।

(૨) હસી પ્રકાર મેં ઇન્દ્ર વા દેવ હો જાઁ, ऐसी कामना करना परलोकाशंसाप्रयोग है ।

આ મારણાન્તિક સંલેખના-જોષણાના પાંચ અતિચારોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ.

તપ અને સંયમ દ્વારા કાય તથા કષાયોને પાતળા પાડવા જેનું લક્ષણ છે, તે મારણાન્તિકસંલેખના-જોષણાના ઇહલોકાશંસાપ્રયોગ આદિ પાંચ અતિચાર છે, આ પ્રમાણે-(૧) ઇહલોકાશંસાપ્રયોગ (૨) પરલોકાશંસાપ્રયોગ (૩) જીવિતાશંસાપ્રયોગ (૪) મરણાશંસાપ્રયોગ અને (૫) કામભોગાશંસાપ્રયોગ તેમનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે-

(૧) સંથારો ધારણ કર્યા બાદ, આવતા જન્મમાં મનુષ્યલોક સંબંધી અભિલાષા કરવી જેમ કે-હું ચક્રવર્તી રાજા અથવા રાજમંત્રી થઈ જાઉં, વગેરે આ ઇહલોકાશંસાપ્રયોગ છે. (૨) એવી જ રીતે હું ઇન્દ્ર અથવા દેવ થઈ જાઉં એવી કામના કરવી પરલોકાશંસાપ્રયોગ છે. (૩) સંથારો દરમિયાન મારી પૂજા તથા મહિમા ઘણો વધી નહોતો છે આથી મારો સંથારો લાંબા સમય સુધી ખેંચાય તો સાડાં એ રીતે સંથારામાં વધારે જીવવાની ઇચ્છા કરવી જીવિતાશંસાપ્રયોગ છે.

दिरूपाभिलाषकरणम् २ जीविताशंसाप्रयोगश्च-संस्तारके मदीयमहिमा पूजा
असीमरूपेण भवति । अतो मदीयसंस्तारकः दीर्घसमयं यावत् प्रचलेत् तु वरम् ।
अमुना प्रकारेण संस्तारके अधिकजीवनेच्छाकरणं जीविताशंसाप्रयोगः । एवंविध
जीविताशंसा विपरीता खलु मरणाशंसाऽवसेया-तथाहि-नहि तथाविधं प्रति-
पन्नाऽनशनं मां कश्चिद्वेषयति, न वा-कश्चित् पूजते माम्, नाऽप्याद्रियते, नो वा-
कश्चित् श्लाघते' इत्येवं भावनया तस्य चेतसि परिणामो जायते 'यदिह झटित्ये-
ऽहं म्रियेय पापकर्मतिरूपा मरणाशंसा दोषधाः ३ कर्कशक्षेत्रादि निवासप्रयुक्त
क्षुदाद्युपहततया समानाद्यभावेन 'कदाहं म्रियेय' इत्यादिरूपं मरणस्याभिलाष-
करणं-मरणाशंसाप्रयोगः ४ कानौ शब्दरूपे, भोगाः-गन्धरसस्पर्श स्तत्राशंसा-

संस्थारे में मेरी कहिमा पूजा खूब हो रही है । इसलिये मेरा
संस्थारा लम्बे समय तक चले तो अच्छा है, इस प्रकार संस्थारे में
अधिक जीनेकी इच्छा करना जीविताशंसा प्रयोग है ।

(४) जीविताशंसाप्रयोग से विपरीत मरणाशंसाप्रयोग समझना
चाहिए । यथा-मैंने आजीवन अनशन अंगीकार कर लिया है फिर भी
कोई मुझे पूछता नहीं है, कोई मेरी पूजा नहीं करता, कोई आदर नहीं
करता, कोई प्रशंसा नहीं करता, इस प्रकार की भावना से चित्त में
ऐसा विचार उत्पन्न होना कि-'मैं शीघ्र ही मर जाऊं तो अच्छा !' यह
मरणाशंसाप्रयोग है । इसी प्रकार कर्कश भूभाग में निवास करने के
कारण कष्ट हो या क्षुधा आदि वेदना पीडित कर रही हो, रोगजनित
कष्ट हो तब 'हाय, मैं कब मर जाऊं शीघ्र मर जाऊं तो अच्छा' इस
प्रकार सोचना भी मरणाशंसाप्रयोग है ।

(५) श्रोत्र और चक्षु इन्द्रियों के विषय अर्थात् शब्द और रूप

(४) जीविताशंसाप्रयोगથી વિપરીત મરણાશંસાપ્રયોગ સમજવો જેમ
કે-મેં આજીવન અનશન અંગીકાર કરી લીધું છે તો પણ કોઈ મારો ભાવ
પૂછતા નથી, કોઈ મારી પૂજા કરતું નથી, કોઈ આદર કરતું નથી, કોઈ
તેના વખાણ કરતા નથી આ જાતની ભાવનાથી ચિત્તમાં એવો વિચાર ઉદ્-
ભવે છે 'હું વહેલો મરી જાઉં તો સારું' આ મરણાશંસાપ્રયોગ છે. એવી
જ રીતે કર્કશ જમીન પર રહેવાના કારણે કષ્ટ થાય અથવા ક્ષુધા આદિની
વેદના દુઃખ આપી રહી હોય, રોગજનિત કષ્ટ થાય તેવા સંજોગોમાં, 'હાય
હાય ! ક્યારે મરી જાઉં, જલદીથી મરી જાઉં તો સારું' આ રીતે વિચારવું
એ પણ મરણાશંસાપ્રયોગ છે.

(૫) શ્રોત્ર અને ચક્ષુ ઇન્દ્રિયોના વિષય અર્થાત્ શબ્દ અને રૂપ કામ

પ્રયોગો-ડમિલાપકરણં કામભોગાશંસાપ્રયોગઃ, કચિરવિષયસ્પૃહયાલુતૈત્યર્થઃ ૫
 હૃત્યેતે પશ્ચજીવિતાશંસાદયો મારણાન્તિકસંલેખના જોષણાયા અતિચારા બોધ્યાઃ।
 એવશ્ચ-પશ્ચાણુવ્રતેષુ ત્રિગુણવ્રતેષુ ચતુઃશિક્ષાવ્રતેષુ મારણાન્તિકસંલેખનાજોષણાસુ
 ચ સર્વ સમ્મિલિતત્રયોદશવ્રતેષુ પ્રત્યેકં પશ્ચ-પશ્ચાતિચારૈઃ પશ્ચપષ્ટિરતિચારાઃ
 પૂર્વોક્તરીત્યા પ્રરૂપિતાઃ, તે ચ-સર્વેડતિચારાઃ સર્વથાડણુવ્રતશીલવ્રતધારિભિઃ
 પરિહર્તવ્યાઃ। યદ્યપિ-સમ્યક્ત્વસ્યાડપ્યતિચાર પશ્ચકસ્ય સદ્ભાવેન સમ્પતિ સંખ્યકાઃ
 સર્વેડતિચારા ભવન્તિ, ન તુ-પશ્ચપષ્ટિ સંખ્યકા એવ, -તથાપિ-મૂઢપ્રાસાદ પીઠ
 રચનાવત્ સમ્યક્ત્વવ્રતમ્ અણુવ્રતાદીનામાધારો વર્તતે, તસ્માત્-તસ્યા-ડધારત્વા-
 દૂવ્રતશીલેષુ ન તદતિચારગ્રહણં ભવતિ। એવશ્ચ-ઉક્તરીત્યા વહ્નપાયદર્શનાત્-

કામ કહલાતે હૈં ઓર સ્પર્શન, રસના તથા ઘ્રાણ ઇન્દ્રિયોં કે વિષય
 અર્થાત્ ગંધ, રસ ઓર સ્પર્શ ભોગ કહલાતે હૈં। इन काम और भोग
 की इच्छा करना कामभोगाशंसाप्रयोग है। तात्पर्य यह है कि मनोज्ञ
 विषयों की कामना करना कामभोगाशंसाप्रयोग है।

इस प्रकार पांच अणुव्रतों के, तीन गुणव्रतों के चार शिक्षाव्रतों
 के तथा मारणान्तिकसंलेखनाजोषणा के, सब मिलकर तेरह व्रतों के
 पांच-पांच अतिचार होने से $13 \times 5 = 65$ अतिचार हुए। इन सब का
 प्ररूपण किया जा चुका। इन सब का अणुव्रतधारी एवं सप्त शील-
 धारी श्रावक को परिहार करना चाहिए। यद्यपि सम्यक्त्व के भी पांच
 अतिचार हैं, इस कारण अतिचारों की संख्या पैसठ नहीं सत्तर होती
 है, तथापि सम्यक्त्व, महल की नींव की तरह सब व्रतों का आधार
 है। अतएव व्रतों के अतिचारों के साथ उसके अतिचारों की गणना

કહેવાય છે અને સ્પર્શન, રસના (જીભ) તથા ઘ્રાણ ઇન્દ્રિયોના વિષય અર્થાત્
 ગંધ, રસ અને સ્પર્શ ભોગ કહેવાય છે. આ કામ અને ભોગની ઇચ્છા કરવી
 કામભોગાશંસાપ્રયોગ છે. તાત્પર્ય એ છે કે મનોજ્ઞ વિષયોની કામના કરવી
 કામભોગાશંસાપ્રયોગ છે.

‘આ રીતે પાંચ અણુવ્રતોના ત્રણ ગુણવ્રતોના, ચાર શિક્ષાવ્રતોના તથા
 મારણાન્તિકસંલેખના જોષણાના,’ બધાં મળીને તેર વ્રતોના પાંચ-પાંચ અતિચાર
 હોવાથી $13 \times 5 = 65$ અતિચાર થયા આ બધાનું પ્રરૂપણ કરવામાં આંચું
 આ બધાને અણુવ્રતધારી અને સપ્તશીલધારી શ્રાવકે ત્યાગ કરવો જોઈએ.
 જો કે-સમ્યક્ત્વનાં પણ પાંચ અતિચાર છે આથી અતિચારોની સંખ્યા
 પાંસઠ નહીં સીત્તેર થાય છે, તો પણ સમ્યક્ત્વ, મહેલના પાયાની જેમ બધા
 વ્રતોનો આધાર છે. આથી વ્રતોના અતિચારોની સાથે તેના અતિચારોની

एतेषु सम्यक्त्वव्रतशीलव्यतिक्रमस्थानेषु पञ्चषष्ठ्यतिचारस्थानेषु व्रतशीलैः श्रावकैः प्रमादो न कर्तव्यः, अपितु अप्रमादो न्यायः ॥५३॥

मूलम्—एएसिं विप्पजहणाओ वयसुद्धी ॥५४॥

छाया—एतेषां विप्रहाणाद्व्रतशुद्धिः ॥५४॥

मूलम्—पाणाइवायाइहिंतो सव्वओ वेरमणं पंच महवया ॥५५॥

छाया—प्राणातिपातादिभ्यः सर्वतो विरमणं पञ्चमहाव्रतानि ॥५५॥

तत्त्वार्थदीपिका—तदेव मुक्तान्यगारिणो द्वादशव्रतानि सातिचाराणि अतिचारवर्जनाद् व्रतशुद्धिरित्यप्युक्तम्, सम्प्रति—पूर्वं यदुक्तं—‘सव्वओ महं’ सर्वतोमह-

नहीं की गई है। इस प्रकार अनेक प्रकार की हानियां होने से सम्यक्त्व के तथा व्रतों और शीलों के पैसठ अतिचारों के विषय में श्रावकों को प्रमाद नहीं करना चाहिए, बल्कि अप्रमाद ही न्यायसंगत है ॥५३॥

‘एएसिं विप्पजहणाओ’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—इन पूर्वोक्त अतिचारों का त्याग करने से व्रत की शुद्धि होती है ॥५४॥

‘पाणाइवायाइहिंतो’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—प्राणातिपात आदि से सर्वथा विरत होना पांच महाव्रत हैं ॥५५॥

तत्त्वार्थदीपिका—इस प्रकार गृहस्थ के बारह व्रतों का अतिचार कथन किया गया और यह भी बतला दिया गया कि अतिचारों का

गणतरी करवाभां आवी नथी. आ रीते अनेक प्रकारनी क्षतिओ होवाथी सम्यक्त्वनो तथा व्रतो अने शीलोनो पांसठ अतिचारोनो विषयभां श्रावके प्रमाद करवो जेधओ नही, बल्कि अप्रमाद न न्यायसंगत छे. ॥५३॥

‘एएसिं विप्पजहणाओ वयसुद्धी’ इत्यादि

सूत्रार्थ—आ पूर्वोक्त अतिचारोनो त्याग करवाथी व्रतनी शुद्धि थाय छे. ॥५४॥

‘पाणाइवायाइहिंतो सव्वओ वेरमणं’ इत्यादि

सूत्रार्थ—प्राणातिपात आदिथी सर्वथा विरत थपुं पांच महाव्रत छे. ॥५५॥

तत्त्वार्थदीपिका—आ रीते ग्रहस्थना आर व्रतानुं अतिचार सहित कथन करवाभां आवुं अने ओ पणु अतावी देवाभां आवुं के अतिचारोनो

દિતિ, સર્વતો યત્ર વિરતિર્ભવતિ—તાનિ મહાવ્રતાનિ કથ્યન્તે’ इत्यत्र पञ्चमहाव्रतानि प्रदर्शयन्ते—‘पाणाहवायाहर्हितो’ इत्यादि । प्राणातिपातादिभ्यः सर्वतो विरमणं महाव्रतानि, तानि पञ्च, प्राणातिपातः १ आदिशब्देन—मृषावादा २ अदत्तादाना ३ अब्रह्मचर्य ४ परिग्रहाणां ५ ग्रहणं भवति तेभ्यः सर्वतो विरमणं महाव्रतानि—उच्यन्ते । तानि पञ्च, तत्र—प्राणातिपातः प्राणिवधः, मृषावादोऽसत्यभाषणम्, अदत्तादानं—स्तेयम्, अब्रह्मचर्यं मैथुनम्, परिग्रहो मूर्च्छा, एतेभ्यः सर्वतः सर्व-प्रकारेण त्रिकरण—त्रियोगैर्विरमणं—विरतिर्निवृत्तिरिति भावः ॥५५॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિઃ—પૂર્વ દ્વાદશવ્રતાનિ સાતિચારાણિ પ્રદર્શિતાનિ, દ્વાદશ વ્રતીચ તદનન્તરં પશ્ચ મહાવ્રતીભવિતુ મર્હતીતિ તત્પ્રસ્તાવાત્—મોક્ષહેતુભૂતાનિ

ત્યાગ કરને સે હી વ્રત કી શુદ્ધિ હોતી હૈ । અવ પહેલે જો કહા થા—‘સવ્વઓ મહં’ અર્થાત્ હિંસા આદિ કા પૂર્ણ રૂપેણ જો ત્યાગ કિયા જાતા હૈ ઉસે મહાવ્રત કહતે હૈ, સૌ અવ મહાવ્રતોં કા કથન કિયા જાતા હૈ

પ્રાણાતિપાત આદિ સે પૂર્ણ રૂપ સે નિવૃત્તિ હોના મહાવ્રત હૈ । મહા-વ્રત પાંચ હૈ—(૧) પ્રાણાતિપાત (૨) મૃષાવાદ (૩) અદત્તાદાન (૪) અબ્રહ્મચર્ય ઓર (૫) પરિગ્રહસે સર્વથા વિરત હોના । પ્રાણાતિપાત કા અર્થ પ્રાણી કી હિંસા, મૃષાવાદ કા અર્થ મૈથુન ઓર પરિગ્રહ કા અર્થ મૂર્છા હૈ । इनसे सर्वथा अर्थात् तीन करण और तीन योग से विरत होना महाव्रत कहलाता है ॥५५॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ—इस पूर्व अतिचारों सहित चारह व्रतों का निरूपण किया गया । चारहव्रतों का धारक श्रावक भी बाद में महा-

ત્યાગ કરવાથી જ વ્રતની શુદ્ધિ થાય છે. હવે પહેલા જે કહ્યું હતું—‘સવ્વઓ મહં’ અર્થાત્ હિંસા આદિને પૂર્ણ રૂપથી જે ત્યાગ કરવામાં આવે છે તેને મહાવ્રત કહે છે જેથી હવે મહાવ્રતોનું કથન કરવામાં આવે છે—

પ્રાણાતિપાત આદિથી પૂર્ણ રૂપથી નિવૃત્તિ થઈ જવું મહાવ્રત છે. મહાવ્રત પાંચ છે—(૧) પ્રાણાતિપાત (૨) મૃષાવાદ (૩) અદત્તાદાન (૪) અબ્રહ્મચર્ય અને (૫) પરિગ્રહથી સર્વથા વિરત થવું. પ્રાણાતિપાતનો અર્થ પ્રાણીની હિંસા મૃષાવાદનો અર્થ અસત્ય ભાષણ, અદત્તાદાનનો અર્થ ચોરી, અબ્રહ્મચર્યનો અર્થ મૈથુન અને પરિગ્રહનો અર્થ મૂર્છા છે. આ બધાંથી સર્વથા અર્થાત્ ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી વિરત થવું મહાવ્રત કહેવાય છે. ॥૫૫॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ—આની અગાઉ અતિચારો સહિત ચાર વ્રતોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું. ચારવ્રતોનો ધારક શ્રાવક પણ પાછળથી મહાવ્રતી

पञ्च महाव्रतान्याह—‘पाणाइवाद्याहर्हितो सव्वओ वेरमण महव्वया, ते पंच’ इति । प्राणातिपातः १ आदिशब्देन—मृषावादा २ ऽदत्तादाना ३ ऽब्रह्मचर्य ४ परिग्रहाः ५ गृह्यन्ते, तेभ्यः सर्वतः—सर्वांशेन द्रव्य—क्षेत्र—काल—भावेन त्रिकरणैस्त्रियोगैः सर्वथा विरति—निवृत्तिः पञ्च महाव्रतान्युच्यन्ते । तत्र—प्राणातिपातः कषायादि प्रमादपरिणाम परिणतेना—ऽऽत्मना कर्त्ता मनोवाकायादिरूपयोग-व्यापारात् करणकारणाऽनुमोदन रूप कायव्यापारेण द्रव्य—भावभेदेन द्विविधेन प्राणिप्राणव्यपरोपणरूपः १ मृषावादस्तावत्—असत्यभाषणम् अनृतवचनम्—अली-काभिभाषणम् २ अदत्तादानञ्च—अदत्तस्य स्व—स्वत्वनिवृत्ति पूर्वक मन्त्रितीर्णस्या व्रती हो सकता है, इस संबंध से मोक्ष के कारणभूत पांच महाव्रतों का कथन किया जाता है—

प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, अब्रह्मचर्य और परिग्रह से सर्वांश से—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से, तीनों करणों और तीनों योगों से सर्वथा निवृत्त होना महाव्रत हैं ।

कषाय आदि प्रमाद रूप परिणाम से युक्त कर्त्ता आत्मा के द्वारा, मन वचन और काय आदि योग के व्यापार से, द्रव्य एवं भाव दोनों प्रकार से करण (स्वयं करना), कारण (करवाना) और अनुमोदन रूप कायव्यापार से प्राणी के प्राणों का व्यपरोपण करना प्राणातिपात है । असत्य भाषण करना, अनृत वचन बोलना, अलीक भाषण करना मृषावाद कहलाता है । दत्त का अर्थ है स्वामी का अपने स्वत्व को हटा लेना । जो दत्त न हो वह अदत्त कहलाता है । उस अदत्त को

થઈ શકે છે આ સંબંધથી મોક્ષના કારણભૂત પાંચ મહાવ્રતોનું કથન કરવામાં આવે છે—

પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, અબ્રહ્મચર્ય અને પરિગ્રહથી સર્વાંશે—દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવથી, ત્રણે કરણો અને ત્રણે યોગોથી સર્વથા નિવૃત્ત થવું મહાવ્રત છે.

કષાય આદિ પ્રમાદરૂપ પરિણામથી યુક્ત કર્તા આત્માદ્વારા, મન વચન અને કાયા વગેરે યોગના વ્યાપારથી દ્રવ્ય અને ભાવ બંને પ્રકારના કરણ (બંને કરવું), કારણ (કરાવવું) અને અનુમોદન રૂપ કાયવ્યાપારથી પ્રાણીનાં પ્રાણોની હિંસા કરવી પ્રાણાતિપાત છે. અસત્ય ભાષણ કરવું, અનૃત (જુઠું) વચન બોલવું, અલીક ભાષણ કરવું મૃષાવાદ કહેવાય છે. દત્તનો અર્થ થાય છે માલિકનું—પોતાનું આધિપત્ય જતું કરવું. જે દત્ત ન હોય તે અદત્ત કહેવાય છે. તે અદત્તને ગ્રહણ કરવું અદત્તાદાન કહેવાય છે. સ્ત્રીસંયોગ

સ્થિતિક તપસ્જાવત્-સ્થાનં કાયોત્સર્ગઃ તેન-કાયોત્સર્ગેણ સર્વદા સ્થિતિર્યસ્ય સ
સ્થાનસ્થિતિકઃ ઉચ્યતે, તદ્રૂપં તપઃ સ્થાનસ્થિતિક તપો ભવતિ, ધર્મધર્મિણોરભેદ
વિવક્ષણાત્ ૧ ઉત્કુટુકાસનિક તપસ્તુ-ભૂમૌ-અસંલગ્નપુટેન વદ્ધાઞ્જલિપુટેન ભૂમૌ
ચરણમારોપ્યો-પવેશનમ્ ઉત્કુટુક મુચ્યતે તદાસનમસ્યાસ્તીતિ ઉત્કુટુકાઽસનિક
ઉચ્યતે, તદ્રૂપં તપ ઉત્કુટુકાસનિક તપો ભવતિ ૨ પ્રતિમા સ્થાયિતપસ્તુ-પ્રતિમાઃ-
માસિકયાદિ દ્વાદશાભિગ્રહવિશેષાઃ ઉચ્યન્તે તાભિર્માસિકયાદિ પ્રતિમાભિસ્તઠતિ
તચ્છીઢઃ પ્રતિમાસ્થાયી વ્યપદિશ્યતે તદ્રૂપં તપઃ પ્રતિમાસ્થાયિ તપો ભવતિ ૩ વીરાસ
નિક તપસ્તુ-સિંહાસનોપરિ સમુપવિષ્ટસ્ય ભૂમિસ્થિતપાદસ્ય સિંહાસનાઽપનયને કૃતે
સતિ સિંહાસનોપવિષ્ટવદ્ અસ્થાનં વીરાસન મુચ્યતે તદસ્ત્ય સ્યેતિ વીરાસનિકઃ,
પરિકર્મ વિભૂષા વિપ્રસુક્ત । હસ પ્રકાર કાયક્લેશ તપ અનેક પ્રકાર કા
હૈ । હનકા સ્વરૂપ હસ તરહ હૈ-

(૧) કાયોત્સર્ગ કરકે સ્થિત રહેને ચાલા સ્થાનસ્થિતિક કહલાતા હૈ ।
યહાં ધર્મ ઓર ધર્મીં કૈ અભેદકી વિવક્ષા કી ગઈ હૈ । અતઃૈવ
હસી કો સ્થાનસ્થિતિક તપ કહતે હૈ । (૨) જમીનપર પુટ્ટે વિના
લગાઈ, હાથ જોડકર, ધરતી પર પાંવ રાખ કર બૈઠના ઉત્કુટુક આસન
કહલાતા હૈ । ઇસે આસન વાલે કો ઉત્કુટુકાસનિક કહતે હૈ । હસ
પ્રકાર કી તપસ્યા ઉત્કુટુકાસનિક તપ હૈ । (૩) માસિકી આદિ બારહ
પ્રકાર કૈ અભિગ્રહોં કો પ્રતિમા કરતેહૈ । ઉન્હેં ગ્રહણ કરકે સ્થિત હોને
ચાલા પ્રતિમાસ્થાયી કહલાતા હૈ । ઇસા તપ પ્રતિમા સ્થાયી તપ હૈ । (૪)
કોઈ પુરુષ પૃથ્વી પર પૈર જમા કર સિંહાસન પર બૈઠા હો, ફિર પીછે સે
સિંહાસન યિસકો લિયા જાય ઓર વહ પુરુષ ડયોં કા ત્યોં બના રહે,

અને (૧૨) સર્વગાત્રપરિ કર્મ વિભૂષા વિપ્રસુક્ત આ રીતે કાયક્લેશ તપ
અનેક પ્રકારના છે. એમનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે--

(૧) કાયોત્સર્ગ કરીને સ્થિત રહેનાર સ્થાનસ્થિતિક કહેવાય છે.
અહીં ધર્મ અને ધર્મીના અભેદની વિવક્ષા કરવામાં આવી છે આથી
આને જ સ્થાનસ્થિતિક તપ કહે છે. (૨) જમીન ઉપર ટેકો દીધા
વગર, હાથ બેડીને, ધરતી પર પગ રાખીને બેસવાને ઉત્કુટુક આસન
કહે છે. આવા પ્રકારની તપસ્યા ઉત્કુટુકાસનિક તપ છે. (૩) માસિકી આદિ
બાર પ્રકારના અભિગ્રહોને પ્રતિમા કહે છે તેમને ગ્રહણ કરીને સ્થિર થનાર
પ્રતિમાસ્થાયી કહી શકાય છે. આવું તપ પ્રતિમાસ્થાયી તપ છે.
(૪) કોઈ પુરુષ પૃથ્વી ઉપર પગ રાખીને સિંહાસન પર બેઠો હોય, પછી
પાછળથી સિંહાસન ખસેડી લેવામાં આવે અને પેલો પુરુષ જેમ હોતો તેમ

તદ્રૂપં તપો વીરાસનિક તપો ભવતિ ૪ નૈષધિક તપસ્તુ-નિષઘા તાવત્-પુતામ્યાં
ભૂમાવુપવેશન મુચ્યતે તથાનિષઘા નિષઘયા ચરતીતિ નૈષધિકઃ ઉચ્યતે તદ્રૂપં તપો
નૈષધિક તપો ભવતિ ૫ દણ્ડાયતિક તપસ્તુ-દણ્ડસ્યેવાયતમ્ આયામોઽસ્યાસ્તીતિ
દણ્ડાયતિકઃ, તદ્રૂપં તપો દાણ્ડાયતિક તપો ભવતિ ૬ લકુટશાયી તપસ્તુ-લકુટો
વક્રકાઠં તદિવશેતે તચ્છીલો લકુટશાયી ઉત્તાનશાયી ભૂત્વા પાર્ણિકદ્વયં શિરશ્ચ
ભૂમૌ સ્થાપયિત્વા શયનશીલો લકુટશાયી ઇત્યુચ્યતે તદ્રૂપં તપો લકુટશાયી તપો
ભવતિ ૭ આતાપક તપસ્તુ-આતાપયતિ શીતોષ્ણાદિભઃ શરીરં સન્તાપયતિ-
ક્લેશયતિ ઇત્યાતાપક ઉચ્યતે આતાપનારૂપ સુર્વાતપાદિ સહનશીલ ઇત્યર્થઃ તદ્રૂપં
તપો આતાપક તપો ભવતિ ૮ અપ્રાવૃતક તપઃ પુનઃ-શીતકાલે ધાવરણરહિતઃ
સદોરકમુખવસ્ત્રિકા ચોલપટ્ટાતિરિક્તવસ્ત્ર-ર્જિતઃ સ્વલ્લ અપ્રાવૃતક ઉચ્યતે તદ્રૂપં

ઉસ સમય ઉસકા જો આસન હોતા હૈ વહ વીરાસન કહલાતા હૈ ।
વીરાસન કરને વાલા વીરાસનિક કહલાતા હૈ । (૫) પુટ્ટો સે જમીન પર
બૈઠના નિષઘા હૈ, જો નિષઘા કરે વહ નૈષધિક, હસ પ્રકાર કા તપ
નૈષધિક તપ હૈ । (૬) દંડ કે સમાન લમ્બે લેટના રૂપ જો તપ કરે વહ
દણ્ડાયતિક કહલાતા હૈ । (૭) લકુટશાયી-યહાં લકુટ કા અર્થ હૈ
વક્ર કાઠ અર્થાત્ ટેઠા કાઠ, ઉસકે સમાન સોના ઓર પૈરોં કી દોનો
પડિયાં ઓર સિર ધરતી પર ટેકુ કર મધ્ય શરીર કો અધર રચના
લકુટશાયી તપ કહલાતા હૈ (૮) સર્દી ઓર ધૂપ મેં સ્થિત હોકર શરીર
કો સંતાપના આતાપક તપ કહલાતા હૈ । (૯) શીતકાલ મેં વસ્ત્ર વર્જિત
હોકર રહના અર્થાત્ ઢોરા રહિત મુખવસ્ત્રિકા ઓર ચોલપટ્ટ કે સિવાય
અન્ય કોઈ વસ્ત્ર ન રચના અપ્રાવૃતક તપ કહલાતા હૈ । (૧૦) અકળ્પ્યક

જ રહે' આ વખતે તેનું જે આસન હોય છે તે વીરાસન કહેવાય છે. વીરા-
સન કરનાર વીરાસનિક કહેવાય છે. અઢલીને પૂઠેથી જમીન પર બેસવાની
મનાઈ છે, જે નિષઘા કરે તે નૈષધિક આ પ્રકારનું તપ નૈષધિક તપ છે.
(૬) દંડની જેમ લાંબા સુધી જઈને જે તપ કરે તે દણ્ડાયતિક કહેવાય છે.
(૭) લકુટશાયી-અહીં લકુટનો અર્થ છે વક્રકાઠ અર્થાત્ વાંકુ લાકડું. તેની
જેમ સુબું અર્થાત્ પગની બંને એડીઓ અને માથું ધરતી પર ટેકવીને
વચ્ચેના શરીરને અધધર રાખવું લકુટશાયી તપ કહેવાય છે (૮) ઠંડી અથવા
તડકામાં સ્થિત થઈને શરીરને તપાવવું આતાપક તપ કહેવાય છે. (૯) શિયાળાની
ઋતુમાં વસ્ત્રવિહિન થઈને રહેવું અર્થાત્ ઢોરાસહિત મુખવસ્ત્રિકા અને ચોળપટ્ટ
સિવાય અન્ય કોઈ વસ્ત્ર ન રાખવું અપ્રાવૃતક તપ કહેવાય છે (૧૦) અકળ્પ્યક

તપોઽપ્રાવૃત્તક તપો ભવતિ ૯ અકળ્પ્યક તપસ્તુ-કળ્પ્યનં ગાત્રઘર્ષણં તદ્રહિતોઽકળ્પ્ય-
 ચકઃ તદ્રૂપં તપો-ઽકળ્પ્યક તપો ભવતિ ૧૦ અનિષ્ઠીચક તપસ્તુ-નિષ્ઠીચનં-
 ધૂત્કરણં તદ્રહિતોઽનિષ્ઠીચકઃ તદ્રૂપં તપોઽનિષ્ઠીચક તપઃ ઉચ્યતે ૧૧ સર્વગાત્ર
 પરિકર્મ વિભૂષા વિપ્રમુક્ત તપઃ પુનઃ-સર્વસ્ય ગાત્રસ્ય પરિકર્મ-પરિમાર્જનં પ્રક્ષાલનં
 વિભૂષણશ્ચ તાભ્યાં વિપ્રમુક્તો રહિતઃ પરિત્યક્તસર્વગાત્રસંમાર્જનવિભૂષણઃ, તદ્રૂપં
 તપઃ સર્વગાત્રપરિકર્મવિભૂષાવિપ્રમુક્ત તપો ભવતિ, इत्येवं बहुविधं कायकलेश
 तपो भवतीति भावः ॥ ૧૭ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ--પૂર્વં खलु-चतुर्थं रसपरित्यागरूपं बाह्यं तपः सविस्तरं
 प्ररूपितम्, सम्प्रति-क्रमागतं पञ्चमं कायकलेशरूपं बाह्यं तपः प्ररूपितुमाह-
 'कायकलेशे तवे अपेगविहे, ठाणठिहयाह भेदभो' इति कायकलेश तपः
 खलु कायस्य कलेशो यस्य स कायकलेशः तद्रूपं तपः कायकलेश तपः धर्मधर्मिणो-
 रभेदोपचारात्, एवमग्रेऽपि बोध्यम्। तच्चा-ऽनेकविधं भवति, तद्यथा-स्थान स्थिति-

तप-खुजली आने पर भी शरीर को न खुजलाना (११) अनिष्ठीचक तप-
 थूकने का त्याग कर देना (१२) समस्त शरीर को धोना, पोंछना, सजाना
 आदि क्रियाओं का त्याग करना सर्वगात्रपरिकर्मविभूषा विप्रमुक्त तप
 कहा जाता है। इस प्रकार कायकलेश तप के अनेक भेद हैं ॥ १७ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-ચૌથે રસપરિત્યાગ બાહ્ય તપ કા સવિસ્તર વર્ણન ક્રિયા
 જા ચુકા, અવ ક્રમાગત પાંચવેં કાયકલેશ તપ વી પ્રરૂપણા કરતે હૈં-

जिस तपस्या में विशेषतः काय को कलेश पहुँचाया जाता है,
 वह कायकलेश तप कहलाता है। इस तप के जो भेद बतलाए गए हैं
 वे खास तौर से तपस्या करने वालों के भेद हैं, मगर धर्म और धर्मी
 में अर्थात् तप और तपस्वी में कथंचित् अभेद होता है अतः तपस्वी

तप-ખજળી આવવા છતાંપણ શરીરને ન ખજવાળવું (૧૧) અનિષ્ઠીચક તપ-
 થૂકવાનું બંધ કરી દેવું (૧૨) આખા શરીરને ધોવું, લૂછવું સળવટ આદિ
 ક્રિયાઓનો ત્યાગ કરવો સર્વગાત્રપરિકર્મ વિભૂષાવિપ્રમુક્ત તપ કહેવાય છે.
 આવી રીતે કાયકલેશ તપના અનેક ભેદ છે. ॥ ૧૭ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-ચૌથા રસપરિત્યાગ બાહ્ય તપનું સવિસ્તર વર્ણન
 કરવામાં આવ્યું હવે ક્રમાગત પાંચમાં કાયકલેશ તપની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ
 જે તપસ્યામાં વિશેષતઃકાયને કલેશ પહોંચાડવામાં આવે છે તે કાયકલેશ
 તપ કહેવર્થ છે આ તપના જે ભેદ બતાવવામાં આવ્યા છે તે ખાસ પ્રકારે
 તપસ્યા કરનારના ભેદ છે પરંતુ ધર્મ અને ધર્મીમાં અર્થાત્ તપ અને તપ-
 સ્વીમાં કથંચિત્ અભેદ હોય છે. આથી તપસ્વીના ભેદ તપના પણ ભેદ કહી

कादि भेदतः, स्थानं कायोत्सर्गः तेन खलु कायोत्सर्गरूपेण स्थानेन सर्वथा स्थिति-
र्यस्य स स्थानस्थितिकः, तद्रूपं स्थानस्थितिक तपो भवति १ आदिना-उत्कुटुकास-
निकः २ प्रतिमास्थायी ३ वीरासनिकः ४ नैषधिकः ५ दण्डायतिकः ६ लकुटशायी
७ आतापकः ८ अप्रावृतकः ९ अकण्डूयकः १० अनिष्टीवकः ११ सर्वगात्रपरिकर्म
विभूषा विप्रमुक्तः १२ इत्येवं खलु-अनेकविधं कायक्लेश तपो भवति । तत्रोत्कु-
टुकासनिक स्तपस्तथास्त-उत्कुटुकम् भूमौ असंलग्नपुतेन-बद्धाञ्जलि पुटेन भूतले
पादतलमारोप्यो-पवेशन मुच्यते, तदासन मस्त्यस्येति उत्कुटुकासनिकः तद्रूपं
तपः उत्कुटुकासनिक तपो भवति २ प्रतिमास्थायि तपस्तु-प्रतिमाः मासिक्यादयो
द्वादशनियमविशेषाः, तामिः-नासिदयादि प्रतिमाभिस्तिष्ठतीति तच्छीलः
प्रतिमा-स्थायी तद्रूपं तपः प्रतिमास्थायितप उच्यते ३ वीरासनिकतपस्तु-

के भेद तप के भी भेद कहे जा सकते हैं । इसी दृष्टिकोण को सम्मुख
रखकर यहां व्याख्या की जानी है । आगे भी इसी प्रकार
समझना चाहिए ।

कायक्लेश तप अनेक प्रकार का है, यथा (१) स्थानस्थितिक (२)
उत्कुटुकासनिक (३) प्रतिमास्थायी (४) वीरासनिक (५) नैषधिक
(६) दण्डायतिक (७) लकुटशायी (८) आतापक (९) अप्रावृतक (१०)
अकण्डूयक (११) अनिष्टीवक (१२) सर्वगात्रपरिकर्मविभूषाविप्रमुक्त ।
(१) कायोत्सर्ग करके स्थान रहना स्थानस्थितिक तप है (१) भूमि पर
पुटे विना टेके, हाथ जोड़कर और दोनों पैर जमीन पर लगाकर बैठना
उत्कुटुकासनिक तप कहलाता है । (३) मासिकी आदि बारह प्रकार
की प्रतिमाओं (नियमविशेषों) को वहन करना प्रतिमास्थायी तप कह-
लाना है । (४) दोनों पांव जमीन पर टेक कर सिंहासन के उपर बैठे

शक्य છે આજ દ્રષ્ટિકોણને સન્મુખ રાખીને અહીં વ્યાખ્યા કરવામાં આવે
છે. આગળ પણ આ પ્રમાણે સમજવું જોઈએ

કાયક્લેશ તપ અનેક પ્રકારના છે જેવાકે— (૧) સ્થાનસ્થિતિક (૨)
ઉત્કુટુકાસનિક (૩) પ્રતિમાસ્થાયી (૪) વીરાસનિક (૫) નૈષધિક (૬) દણ્ડાયતિક
(૭) લકુટશાયી (૮) આતાપક (૯) અપ્રાવૃતક (૧૦) અકણ્ડૂયક (૧૧) અનિ-
ષ્ટીવક (૧૨) સર્વગાત્રપરિકર્મવિભૂષાવિપ્રમુક્ત (૧) કાયોત્સર્ગ કરીને સ્થિત
રહેવું સ્થાનસ્થિતિક તપ છે. (૨) ભૂમિ ઉપર પૂંઠ ટેકવ્યા સિવાય, હાથ જોડી
ને અને બંને પગ જમીન ઉપર ટેકવીને બેસવું ઉત્કુટુકાસનિક તપ કહેવાય
છે. (૩) માસિકી આદિ બાર પ્રકારની પડિમાઓ (નિયમ વિશેષો) નું વહન
કરવું પ્રતિમાસ્થાયી તપ કહેવાય છે. (૪) બંને પગ જમીન પર ટેકવીને

સિંહાસનોપરિ સમુપરિષ્ઠસ્ય ભૂમિસ્થિતચરણસ્ય સિંહાસનાઽપનયને કૃતેઽપિ સિંહાસનોપવિષ્ટવદેવાઽવસ્થાનં વીરાસન મુચ્યતે તદસ્ત્યસ્યેતિ વીરાસનિક સ્તદ્રૂપં તપો વીરાસનિક તપ ઉચ્યતે ૪ નૈષધિકતપસ્તુ-પુતામ્યાં ભૂમાવુપવેશનં નિષઞ્ચા, તથા ચરતિ નૈષધિકઃ તદ્રૂપં તપો નૈષધિક તપો ભવતિ ૫ દણ્ડાયતિક તપસ્તુ-દણ્ડમ્યેવાઽઽયતં, આયામોઽસ્યારતીતિ દણ્ડાયતિકઃ તદ્રૂપં તપો દણ્ડાયતિક તપ ઉચ્યતે ૬ લકુટશાયિતપસ્તુ-લકુટો વક્રકાઠું તદિવ શયનશીલો લકુટશાયી-ઉત્તાનશાયી ભૂત્વા પાર્ણિક દ્વયં-શિરશ્ચ ભૂમૌ સંસ્થાપ્ય શયનશીલ ઉચ્યતે તદ્રૂપં તપો લકુટશાયિ તપો ભવતિ ૭ આતાપકતપસ્તુ-આતાપયતિ શીતોષ્ણાદિભિઃ શરીરં સંતાપયતિ-ક્લેશયતીતિ આતાપકઃ તદ્રૂપં તપ આતાપકતપઃ આતાપના તાવત્= સૂર્યાતપાદિ સહનરૂપા બોધ્યા ૮ અપ્રાવૃતક તપઃ-પુનઃ શીતલકાલે સદોરકમુખ-વસ્ત્રિકા-ચોલપટ્ટાતિરિક્ત વસ્ત્રરૂપપ્રાચરણરક્તિઃ અપ્રાવૃતકઃ તદ્રૂપં તપોઽપ્રાવૃતક

હુપ પુરુષ કે નીચે સે અગર સિંહાસન હટા લિધા જાય તો ઉસકા જો આસન હોતા હૈ, વહ વીરાસન કહલાતા હૈ । વીરાસન સે સ્થિત હોના વીરાસનિક તપ હૈ । (૫) પુઢે જમાકર ભૂમિ પર વૈઠના નૈષધિક તપ કહલા હૈ । (૬) દણ્ડાયતિક-દંડ કી તરહ લંબા લેટે રહના । (૭) જૈસે વક્ર કાઠ કે દોનોં સિરે જમીન કો છૂતે હૈં ઓર મધ્ય કા ભાગ અધર રહતા હૈ ઉસી પ્રકાર દોનોં પાંવ ઓર મસ્તક ધરતી પર ટેક કર શેષ શરીર કો અધર રખના લકુટશાયી તપ કહલાતા હૈ । (૮) સૂર્ય કી ધૂપ યા શીતકાલ કી સર્દી કો વિશેષ રૂપ સે સહન કરના આતાપના કહલાતા હૈ । આતાપના દ્વારા શરીર કો તપાનાક્લેશ પહંચાના આતાપક તપ કહલાતા હૈ । (૯) શીતકાલ મેં ડોરા સહિત મુખવાસ્ત્રિકા

સિંહાસન ઉપર બેસેલા પુરુષની નીચેથી જો સિંહાસન ખસેડી લેવામાં આવે તે વખતે તેનું જે આસન હોય છે તે વીરાસન કહેવાય છે. વીરાસનથી સ્થિત થવું વીરાસનિક તપ કહેવાય છે. (૫) પગાંઠી જમાવીને ભૂમિ પર બેસવું નૈષધિક તપ કહેવાય છે (૬) દણ્ડાયતિક દણ્ડની માફક લાંબા થઈ સુધ રહેવું (૭) જેમ વાંકા લાકડાના બંને છેડા જમીનને સ્પર્શ કરે છે અને મધ્યનો ભાગ અધર રહે છે તેવીજ રીતે બંને પગ અને મસ્તક ધરતી પર ટેકવીને બાકીના શરીરને ઉંચું રાખવું લકુટશાયી તપ કહેવાય છે (૮) સૂર્ય નો તાપ અથવા શિયાળાની ઠંડીને વિશેષ રૂપથી સહન કરવા આતાપના કહેવાય છે. આતાપના દ્વારા શરીરને કષ્ટ આપવું આતાપક તપ કહેવાય છે. (૯) શિયાળામાં દોરા સહિતની મુખવસ્ત્રિકા તથા પહેરવાના વસ્ત્ર સિવાય

તપો ભવતિ ૯ અકણ્ડ્યક તપસ્તુ-ગાત્રઘર્ષણરૂપં કણ્ડ્યનવર્જિતોડક-
 ણ્ડ્યક ઉચ્યતે તદ્રૂપં તપોડકણ્ડ્યક તપઃ ૧૦ અનિષ્ઠીવક તપસ્તુ-નિષ્ઠીવન
 રહિતોડનિષ્ઠીવક સ્તદ્રૂપં તપોડનિષ્ઠીવકતપઃ ૧૧ સર્વગાત્રપરિકર્મવિભૂષા
 વિપ્રમુક્ત તપઃ પુનઃ-સર્વસ્ય-ગાત્રસ્ય પરિકર્મ માર્જનં વિભૂષણશ્ચ તાભ્યાં વિપ્રમુક્તો
 વર્જિતઃ પરિત્યક્તસર્વગાત્ર સમ્માર્જનવિભૂષણઃ તદ્રૂપં તપઃ સર્વગાત્રપરિકર્મ વિભૂષા
 વિપ્રમુક્ત ઉચ્યતે ૧૦ इत्येवं रीत्या कायकलेश तपोऽनेकविधं भवति, इतिभावः ।
 ઉક્તશ્રૌષપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘લે કિં તં કાયકલેસે, કાયકલેસે અણેગવિહે
 પળ્લન્તે તં જહાઠાણદ્વિહ ૧ ઉત્કુટુકાસણિ ૨ પડિમદ્વાઈ ૩ વીરાસણિ ૪
 નૈષધિજ ૫ દંડાયતિ ૬ લકુટશાઈ ૭ આનાપક ૮ અપ્રાવૃતક ૯ અક-
 ણ્ડ્યક ૧૦ અણિટ્ટક ૧૧ સર્વગાય પરિકર્મવિભૂષવિપ્રમુક્તકે-૧૨
 સે સં કાયકલેસે’ ઇતિ । અથ કોડસી કાયકલેશઃ ૩ કાયકલેશોડનેકવિધઃ
 પ્રજ્ઞસઃ, તથા-સ્થાનસ્થિતિકઃ ૧ ઉત્કુટુકાસનિકઃ ૨ પ્રતિમાસ્થાયી ૩ વીરા-

તથા ચોલપટ્ટ કે અતિરિક્ત સમસ્ત વસ્ત્રોં કો ત્યાગકર અપ્રાવરણ
 સ્થિતિ મેં રહના અપ્રાવૃતક તપ કહલાતા હૈ । (૧૦) खुजली आने पर
 મી શરીર કો નહીં खुजलाना अकण्ड्यक तप है । (११) थूकने का
 ત્યાગ કર દેના અનિષ્ઠીવક તપ હૈ । (૧૨) सारे शरीर को धोने पोंछने
 ઓર सजाने का त्याग कर देना सर्वगात्रपरिकर्म विभूषा विप्रमुक्त तप
 હૈ । इस प्रकार कायकलेश तप अनेक प्रकार का है । औपपातिक सूत्र
 મેં કહા ગયા હૈ--

પ્રશ્ન-કાયકલેશ તપ કિતને પ્રકાર કા હૈ ?

ઉત્તર--કાયકલેશ કે અનેક ભેદ હૈ, યથા-સ્થાનસ્થિતિક (૨)
 ઉત્કુટુકાસનિક (૩) પ્રતિમાસ્થાયી (૪) વીરાસનિક (૫) નૈષધિક (૬)
 દંડાયતિક (૭) લકુટશાયી (૮) આનાપક (૯) અપ્રાવૃતક (૧૦) અક

આકીના સઘળા વસ્ત્રોના ત્યાગ કરીને અપાવરણ સ્થિતિમાં રહેવું અપ્રાવૃતક
 તપ કહેવાય છે (૧૦) ખજવાળ આવવા છતાંપણ શરીરને ખજવાળવું નહીં
 તે અકણ્ડ્યક તપ છે (૧૧) થૂંકવાનો ત્યાગ કરી દેવો અનિષ્ઠીવક તપ છે
 (૧૨) આખા શરીરને ધોવા લુછવા તથા સજાવટનો ત્યાગ કરી દેવો સર્વગાત્ર
 પરિકર્મવિભૂષા વિપ્રમુક્ત તપ છે. આવી રીતે કાયકલેશ તપ અનેક પ્રકારના છે.
 ઔપપાતિક સૂત્રમાં કહ્યું છે

પ્રશ્ન-કાયકલેશ તપ કેટલા પ્રકારના છે ?

ઉત્તર-કાયકલેશના અનેક ભેદ છે જેવાકે-(૧) સ્થાનસ્થિતિક (૨) ઉત્કુટુ-
 કાસનિક (૩) પ્રતિમાસ્થાયી (૪) વીરાસનિક (૫) નૈષધિક (૬) અકણ્ડ્યક

સનિકઃ ૪ નૈષધિકઃ ૫ દળ્ડાયતિકઃ ૬ લકુટશાયી ૭ આતાપકઃ ૮ અપ્રાવૃતકઃ ૯
અકળ્ડયકઃ ૧૦ અનિષ્ઠીવકઃ ૧૧ સર્વગાત્ર પરિકર્મવિભૂષાવિપ્રમુક્તઃ ૧૨ ॥૧૭॥

મૂલમ્—પડિસંલીળયા તવે ચઙવિહે, ઇંદિયપડિસંલીળયાઙ
ભેયઓ ॥૧૮॥

છાયા—પ્રતિસંલીનતા તપ ચતુર્વિધમ્, ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતાદિ ભેદતઃ ॥૧૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—‘પૂર્વે તાવત્—ક્રમપ્રાપ્તં વાહ્યં પશ્ચમં કાયકલેશરૂપં તપઃ
સવિસ્તરં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ—ક્રમાગતં ષષ્ઠં તપઃ પ્રતિસંલીનતારૂપં પ્રતિપાદયિતુ-
માહ—‘પડિસંલીળયા તવે’ इत्यादि । પ્રતિસંલીનતાતપઃ—ઇન્દ્રિય ક્રોધકષાયાદિ
નિરોધકરણશીલતારૂપં તપઃ સ્વલ્પ ચતુર્વિધં ભવતિ, તદ્વથા—ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીન-
તાદિ ભેદતઃ, ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા ૧ કષાયપ્રતિસંલીનતા ૨ યોગપ્રતિસંલી-
નતા ૩ વિવિક્તશય્યાસન-સેવનતા ૪ ચેત્યેવં ચતુર્વિધં તાવત્=પ્રતિસંલીનતાતપો

પઙ્કયક (૧૧) અનિષ્ઠીવક ઓર (૧૨) સર્વગાત્રપરિકર્મવિભૂષાવિપ્ર-
મુક્ત । યહ સવ કાયકલેશ તપ હૈ ॥૧૭॥

‘પડિસંલીળયા તવે ચઙવિહે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા, કષાયપ્રતિસંલીનતા યોગપ્રતિસંલીતા
ઓર વિવિક્ત શય્યાસનસેવનતા કે ભેદ સે પ્રતિસંલીનતા તપ ચાર
પ્રકાર કા હૈ ॥૧૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે કાયકલેશ તપ કા વર્ણન કિયા ગયા અવ
ક્રમાગત પ્રતિસંલીનતા કા નિરૂપણ કિયા જાતા હૈ—

ઇન્દ્રિયો ઓર કષાયો આદિ કા નિગ્રહ કરના પ્રતિસંલીનતા તપ
કહલાતા હૈ । ડસકે ચાર ભેદ હૈ—(૧) ઇન્દ્રિય પ્રતિસંલીનતા (૨) કષાય
પ્રતિસંલીનતા (૩) યોગપ્રતિસંલીનતા ઓર (૪) વિવિક્તશય્યાસન સે-
વનતા । ઓત્ર આદિ ઇન્દ્રિયો કા ગોપન—નિગ્રહ કરના અર્થાત્ ઇન્દ્રિયો

(૮) આતાપક (૯) અપ્રાવૃતક (૧૦) અકળ્ડયક (૧૧) અનિષ્ઠીવક અને (૧૨)
સર્વગાત્રપરિકર્મવિભૂષાવિપ્રમુક્ત આ સઘળા કાયકલેશ તપ છે ॥ ૧૭ ॥

‘પડિસંલીળયા તવે ચઙવિહે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા, કષાયપ્રતિસંલીનતા, યોગપ્રતિસંલીનતા
અને વિવિક્તશય્યાસન સેવિતાના ભેદથી પ્રતિસંલીનતા તપ ચાર પ્રકારના છે ॥૧૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલાં કાયકલેશ તપનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું, હવે
ક્રમાગત પ્રતિસંલીનતાનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે

ઇન્દ્રિયો અને કષાયો આદિનો નિગ્રહ કરવો પ્રતિસંલીનતા તપ કહેવાય
છે. તેના ચાર ભેદ છે—(૧) ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા (૨) કષાયપ્રતિસંલીનતા (૩)
યોગપ્રતિસંલીનતા અને (૪) વિવિક્તશય્યાસન સેવનતા ઓત્ર આદિ ઇન્દ્રિયોનું

भवति । तत्रेन्द्रिय प्रतिसंलीनतातप स्तावत्-इन्द्रियाणां श्रोत्रादीनां प्रतिसंलीनता निरोधकरणशीलता, गोपनशीलता, तद्रूपं तप इन्द्रियप्रतिसंलीनता तपो भवति १ एवं-कषाय प्रतिसंलीनतातप स्तावत्=क्रोधादिकाषायाणां प्रतिसंलीनता=गोपन शीलता निरोधकरणशीलता तद्रूपं तपः कषायप्रतिसंलीनता तपो भवति २ एवं-योग प्रतिसंलीनता तपस्तावद्-योगानां मनोवचन-काय व्यापाराणां प्रतिसंलीनता गोपनशीलता तद्रूपं तपो योगप्रतिसंलीनता तपो भवति ३ एवं विविक्त शय्यासनसेवनता विविक्तेषु स्त्री पशुपण्डकरहितस्थानेषु शय्यासनकरणशीलता तद्रूपं तपो विविक्तशय्यासनसेवनता तपो भवतीति भावः ॥१८॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं खलु कायकलेशरूपं पञ्चमं बाह्यं तपः सविस्तरं प्ररूपितम् सम्प्रति क्रमप्राप्तं षष्ठं बाह्यं तपः प्रतिसंलीनतारूपं चातुर्विध्येन प्ररूपयितुमाह—‘पडिसंलीणया तवे च उव्विहे, इंदिव पडिसंलीणयाह भेयओ’ इति । प्रति संलीनतातपः—प्रतिसंलीनस्य स्वान्तर्लीनस्य भावः प्रतिसंलीनता-इन्द्रियकषायादीनां गोपनशीलता निरोधकरणशीलता तद्रूपं तपः प्रतिसंलीनता

को मनोज्ञ-अमनोज्ञ विषयों में समभावधारण करना इन्द्रियप्रतिसंलीनता तप है (२) क्रोध आदि कषायों का निरोध करना कषायप्रतिसंलीनता है (३) योगों का अर्थात् मन वचन काय के व्यापारों का निरोध करना योगप्रतिसंलीनता है और (४) स्त्री, पशु, एवं नपुंसक से रहित स्थान में शयन-आसन करना विविक्त शयनासनसेवनता तप है ॥१८॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पहले पांचवें बाह्य तप कायकलेशका विस्तार पूर्वक निरूपण किया गया, अब क्रमप्राप्त छठे तप प्रतिसंलीनता के चार भेदों का निरूपण करते हैं—

इन्द्रियों और कषायों आदिका गोपन-निरोध करना प्रतिसंलीनता

गोपन-निग्रह करवो अर्थात् इन्द्रियोना मनोज्ञ अमनोज्ञ विषयोभां समभाव धारणु करवो इन्द्रियप्रतिसंलीनता तप छे. (२) क्रोध आदि कषायोना निरोध करवो कषायप्रतिसंलीनता छे. (३) योगोना अर्थात् मन, वचन आयाना व्यापारोना निरोध करवो योगप्रतिसंलीनता छे अने (४) स्त्री, पशु तथा नपुंसक वगैरना स्थानभां शयन आसन करवुं विविक्तशयनासन सेवनता तप छे. ॥८॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—आनी पहिला पांचवां बाह्य तप कायकलेशनुं विस्तारपूर्वक निरूपण करवाभां आव्युं, डवे क्रमप्राप्त छठे तप प्रतिसंलीनताना आरे लेहेनुं निरूपण करीअे छीअे

इन्द्रियो अने कषायो वगैरेनुं गोपन-निरोध करवो प्रतिसंलीनता तप

તપ ઉચ્યતે । તત્ત્વતુર્વિધમ્, તથા—ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતાદિ ભેદતઃ, ઇન્દ્રિય પ્રતિસંલીનતા ૧ આદિના—કષાય પ્રતિસંલીનતા ૨ યોગપ્રતિસંલીનતા ૩ વિવિક્તશયનાસન સેવનતા ૪ ચેત્યેવં ચતુર્વિધં સ્વદ્ પ્રતિસંલીનતા તપો ભવતીતિ ભાવઃ । તત્ર—ઇન્દ્રિય પ્રતિસંલીનતા—ઇન્દ્રિયાણાં શ્રોત્રાદીનાં પ્રતિસંલીનતા તદ્ રૂપં તપ ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા તપ ઉચ્યતે ૧ એવં—કષાયપ્રતિસંલીનતાતપ સ્તાવત્—કષાયાણાં ક્રોધાદિ કષાયાણાં પ્રતિસંલીનતા—ગોપનશીલતા તદ્ રૂપં તપઃ કષાયપ્રતિસંલીનતા તપ ઉચ્યતે ૨ એવં—યોગપ્રતિસંલીનતા તપ સ્તાવત્—યોગાનાં મનોવાક્ કાયવ્યાપારવિશેષાણાં પ્રતિસંલીનતા—ગોપનશીલતા તદ્ રૂપં તપો યોગપ્રતિસંલીનતા તપ ઉચ્યતે ૩ એવં—વિવિક્તશયનાસનસેવનતા તપસ્તાવત્—વિવિક્તેષુ સ્ત્રી-પશુ-પાણ્ડક રહિતસ્થાનેષુ શયનાસનકરણશીલતા તદ્ રૂપં તપો વિવિક્તશયનાસનસેવનતા તપ ઉચ્યતે ૪ । ઉક્તશ્ચૌ-પપાતિકે ૩૦ સૂત્રે—‘સ્તે કિં તં પઙ્કિસંલીનયા ? પઙ્કિસંલીનયા ચતુર્વિધા પપ્પન્ના, તં જહા—ઇન્દ્રિયપઙ્કિસંલીનયા ૧ કસાયપઙ્કિસંલીનયા ૨ જોગપઙ્કિસંલીનયા ૩ વિવિક્તશયનાસનસેવનયા ૪ ઇતિ । અથ કાસૌ પ્રતિસંલીનતા ? પ્રતિસંલીનતા ચતુર્વિધા પ્રજ્ઞતા, તથા—ઇન્દ્રિય

તપ હૈ । इसके चार प्रकार हैं—(१) इन्द्रियप्रतिसंलीनता (२) कषायप्रतिसंलीनता (३) योगप्रतिसंलीनता और (४) विविक्तशयनासनसेवनता

क्षेत्र आदि इन्द्रियों का गोपन करना अर्थात् इन्द्रियों के विषय हैं राग-द्वेष नहीं उत्पन्न होने देना इन्द्रिय प्रतिसंलीनता है । क्रोध आदि कषायों का निरोध करना कषायप्रतिसंलीनता है । मन वचन और काय की प्रवृत्ति का संवरण करना योग प्रतिसंलीनता है । स्त्री, पशु और पाण्डक से रहित स्थान में शयन-आसन करना विविक्तशयनासनसेवनता तप है । औपपातिकसूत्र में कहा है—

प्रश्न-प्रतिसंलीनता तप कितने प्रकार का है ?

छे. એના ચાર પ્રકાર છે (૧) ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા (૨) કષાયપ્રતિસંલીનતા (૩) યોગપ્રતિસંલીનતા અને (૪) વિવિક્તશયનાસન સેવનતા

શ્રોત્ર આદિ ઇન્દ્રિયોનું ગોપન કરવું અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં રાગ દ્વેષ ન ઉત્પન્ન થવા દેવા ઇન્દ્રિય પ્રતિસંલીનતા છે. ક્રોધ આદિ કષાયોનો નિરોધ કરવો કષાયપ્રતિસંલીનતા છે. મન વચન અને કાયાની પ્રવૃત્તિનું સંવરણ કરવું યોગપ્રતિસંલીનતા છે. સ્ત્રી પશુ અને નયુસકથી રહિત સ્થાનમાં શયનઆસન કરવા વિવિક્તશયનાસનસેવનતા તપ છે. ઔપપાતિક સૂત્રમાં કહ્યું છે—

પ્રશ્ન—પ્રતિસંલીનતા તપ કેટલા પ્રકારના છે ?

प्रतिसंलीनता १ कषायप्रतिसंलीनता २ योगप्रतिसंलीनता ३ विविक्तशयनासनप्रतिसंलीनता ४ इति ॥१८॥

मूलम्—इंद्रिय पडिसंलीणया तवे पंचविहे, सोइंद्रियाइ भेयओ ॥१९॥

छाया—‘इन्द्रियप्रतिसंलीनता तपः पञ्चविधम्, श्रोत्रेन्द्रियादि भेदतः ॥१९॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावत् क्रमान्तरस्य षष्ठस्य बाह्यतपसः प्रतिसंलीनता रूपस्य प्ररूपणं कृतम्, सम्प्रति-चतुर्विधेषु प्रतिसंलीनतारूपेषु प्रथमोपात्तस्य इन्द्रियप्रतिसंलीनता तपसः स्वरूपं प्ररूपयितुम्याह—‘इंद्रियपडिसंलीणया’ इत्यादि । इन्द्रियप्रतिसंलीनता तपः इन्द्रियाणां श्रोत्रादीनां प्रतिसंलीनता, इन्द्रिय-प्रतिसंलीनता तद्रूपं तप इन्द्रिय प्रतिसंलीनता तपः तत् खल्वपञ्चविधं भवति, तद्यथा—श्रोत्रेन्द्रियप्रतिसंलीनता १ आदिना-चक्षुरिन्द्रियप्रतिसंलीनता २ घ्राण-

उत्तर—प्रतिसंलीनता तप चार प्रकार का है—(१) इन्द्रियप्रतिसंलीनता (२) कषायप्रतिसंलीनता (३) योगप्रतिसंलीनता और (४) विविक्तशयनासनसेवनता ॥१८॥

‘इंद्रियपडिसंलीणया तवे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—श्रोत्र आदि पांच इन्द्रियों के भेद से इन्द्रियप्रतिसंलीनता तप भी पांच प्रकार का है ॥१९॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले छठे बाह्यतप प्रतिसंलीनता का निरूपण किया गया, अब उसके चार भेदों में से प्रथम भेद इन्द्रिय प्रतिसंलीनता के भेदों की प्ररूपणा करते हैं—

श्रोत्र आदि इन्द्रियों का गोपन करना इन्द्रिय प्रतिसंलीनता तप है । वह पांच प्रकार का है—(१) श्रोत्रेन्द्रिय प्रतिसंलीनता चक्षुरिन्द्रिय-प्रतिसंलीनता (२) घ्राणेन्द्रिय प्रतिसंलीनता (४) रसनेन्द्रिय प्रतिसंलीनता

उत्तर—प्रतिसंलीनता तप चार प्रकारना छे—(१) इन्द्रियप्रतिसंलीनता (२) कषायप्रतिसंलीनता (३) योगप्रतिसंलीनता अने (४) विविक्तशयनासनसेवनता ॥ १८ ॥

‘इंद्रियपडिसंलीणया तवे पंचविहे’ इत्यादि

सूत्रार्थ—श्रोत्र आदि पांच इन्द्रियोना लेहथी इन्द्रियप्रतिसंलीनता तप पणु पांच प्रकारना छे. ॥ १९ ॥

तत्त्वार्थदीपिका—पडेवा छट्ठा बाह्यतप प्रतिसंलीनतानुं निरूपण करवाभां आणुं डवे ओना चार लेहोमांथी प्रथम इन्द्रियप्रतिसंलीनताना लेहोनी प्ररूपण करीओ छीओ

श्रोत्र आदि इन्द्रियोनुं गोपन करवुं इन्द्रियप्रतिसंलीनता तप छे. ते पांच प्रकारना छे—(१) श्रोत्रेन्द्रियप्रतिसंलीनता (२) चक्षुरिन्द्रियप्रतिसंलीनता

ન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા-૩ જિહ્વેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા ૪ ર્પર્શેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા ૫
 ચેત્યેનં પञ्चविधं तावद् इन्द्रियप्रतिसंलीनता तपो भवतीति भावः । तत्र-श्रोत्रे-
 न्द्रियविषयप्रचारनिरोधः, श्रोत्रेन्द्रियविषयप्राप्तेष्वर्थेषु राग-द्वेषनिग्रहो वा
 श्रोत्रेन्द्रियप्रतिसंलीनता तपो भवति । तथा च-संयमशीलता विघातकः शब्दो न
 श्रोतव्यः मधुर मृदङ्गादि शब्देष्वनुगमो न वर्तव्यः, आक्रोशादि शब्देष्वमीति
 लक्षणश्चित्तविकारात्मको द्वेषो न विधेयः-१ एवं चक्षुरिन्द्रियप्रतिसंलीनता
 तपस्तु-चक्षुरिन्द्रियविषयप्रचारनिरोधरूपं चक्षुरिन्द्रियविषयप्राप्तेष्वर्थेषु-
 रागद्वेषनिग्रहरूपं वा बोध्यम् २ एवं-घ्राणेन्द्रियप्रतिसंलीनता तपस्तु-घ्राणे-
 न्द्रियविषयप्रचारनिरोधरूपं घ्राणेन्द्रियविषयप्राप्तपञ्चेषु राग-द्वेष निग्रहरूपं
 वाऽवसेयम् ३ एवं-जिह्वेन्द्रियप्रतिसंलीनता तपस्तु-जिह्वेन्द्रियविषयप्रचार

और (५) र्पर्शेन्द्रियप्रतिसंलीनता । श्रोत्रेन्द्रिय को उसके विषय ग्रहण
 में प्रवृत्त न होने देना अथवा प्राप्त विषय में अर्थात् इष्ट अनिष्ट शब्द
 में राग-द्वेष न उत्पन्न देना श्रोत्रेन्द्रिय प्रतिसंलीनता है । अतएव संयम
 विघातक शब्द सुनना नहीं चाहिए, मृदंग आदि से मनोहर शब्दों में
 राग और आक्रोश आदि के शब्दों में द्वेष नहीं करना चाहिए । इसी
 प्रकार चक्षु इन्द्रिय के व्यापार का निरोध कर देना अथवा चक्षु
 के द्वारा दिखाई देने वाले रूपों में राग द्वेषन करना चक्षुरिन्द्रिय प्रतिसं
 लीनता है । घ्राणेन्द्रिय को अपने विषय में प्रवृत्त न होने देना अथवा
 इष्ट-अनिष्ट गंध की प्राप्ति होने पर राग-द्वेष न करना घ्राणेन्द्रिय प्रति
 संलीनता तप है । इसी प्रकार जिह्वा को रस में प्रवृत्त न करना अथवा

(૩) ઘ્રાણેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા (૪) રસનેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા (અને) (૫) ર્પર્શેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા શ્રોત્રેન્દ્રિયને તેના વિષયગ્રહણમાં પ્રવૃત્ત ન થવા દેવી અથવા પાપ્ત વિષયમાં અર્થાત્ ઇષ્ટ અનિષ્ટ શબ્દમાં રાગ દ્વેષ ઉત્પન્ન ન થવા દેવા શ્રોત્રેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા છે આથી સંયમ વિઘાતક શબ્દ સાંભળવો ન જોઈએ, મૃદંગ આદિના મનોહર શબ્દોમાં રાગ અને આક્રોશ આદિના શબ્દોમાં દ્વેષ ન કરવો જોઈએ એવી જ રીતે ચક્ષુ ઇન્દ્રિયના વ્યાપારનો નિરોધ કરી દેવો અથવા ચક્ષુ દ્વારા જોવામાં આવતા રૂપોમાં રાગ દ્વેષ ન કરવો ચક્ષુન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા છે. ઘ્રાણેન્દ્રિયને તેના વિષયમાં પ્રવૃત્ત ન થવા દેવી અથવા ઇષ્ટ અનિષ્ટ ગંધની પ્રાપ્તિ થવા પર રાગ દ્વેષ ન કરવો ઘ્રાણેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા તપ છે, એવી જ રીતે જીભને રસમાં પ્રવૃત્ત ન કરવી

निरोधरूपं जिह्वेन्द्रिय प्राप्तेष्वर्थेषु राग-द्वेषनिग्रहरूपं वा बोध्यम् ४ एवं-
स्पर्शनेन्द्रियप्रतिसंलीनता तपरतु स्पर्शनेन्द्रियविषयप्रचारनिरोधरूपं स्पर्शनेन्द्रिय-
विषयप्राप्तेष्वर्थेषु राग-द्वेषनिग्रहरूपं वाऽवगन्तव्यम् ५ तथा च नेत्रस्य विषये रूपे
प्रवृत्तिनिरोधः कर्तव्यः, मनोज्ञाऽमनोज्ञरूपेणानुरागस्य-द्वेषस्य च निग्रहः कार्यः,
एवं-घ्राणजिह्वा स्पर्शनेन्द्रियाणां गन्धरसस्पर्शनात्मक विषयेषु प्रवृत्तिनिरोधो
विधातव्यः, मनोज्ञाऽमनोज्ञगन्धरसस्पर्शेषु रागद्वेषनिग्रहः कर्तव्यः॥ १९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वं तावद्-पष्ठं तपः प्रतिसंलीनत्वरूपं चतुर्विधं प्रतिपा-
दितम्, तत्र-सम्पत्ति-इन्द्रियप्रतिसंलीनता तपः पञ्चविधत्वेन प्रतिपादयितुमाह-

प्राप्त मनोज्ञ और अमनोज्ञ रसों में राग-द्वेष उत्पन्न न होने देना रसने-
न्द्रिय प्रतिसंलीनता है। इसी भाँति स्पर्शान् इन्द्रिय को स्पर्श विषय में
प्रवृत्त न होने देना अथवा प्राप्त स्पर्श में राग द्वेष धारण न करना
स्पर्शनेन्द्रिय प्रतिसंलीनता तप है। ऐसा ही नेत्र के विषय रूप में चक्षु
की प्रवृत्ति नहीं होने देना चाहिए और यदि प्रवृत्ति हो जाय तो उसमें
राग द्वेष नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार घ्राण, रसना और स्पर्शनेन्द्रिय
को अपने-अपने विषय में प्रथम तो प्रवृत्त ही नहीं होने देना चाहिए
और कदाचित् प्रवृत्ति हो जाय, क्योंकि प्राप्त विषय को इन्द्रिय ग्रहण
किये बिना रहती नहीं, तो उन विषयों को मनोज्ञ या अमनोज्ञ मानकर
राग-द्वेष नहीं करना चाहिए ॥१९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पहले छठे तप प्रतिसंलीनता का निरूपण किया
गया और उसके चार भेदों का निर्देश भी किया गया, अब उनमें से

प्राप्त मनोज्ञ अमनोज्ञ रसोर्मा राग द्वेष उत्पन्न न थवा देवा रसने-
न्द्रियप्रतिसंलीनता छे. जेवी न रीते स्पर्शान्द्रियने स्पर्शविषयमां प्रवृत्त
न थवा देवी अथवा प्राप्त स्पर्शमां राग द्वेष धारण न करवा स्पर्शनेन्द्रिय
प्रतिसंलीनता तप छे. आवीन रीते नेत्रना विषय रूपमां चक्षुनी प्रवृत्ति थवा देवी
न जेधये अने कहाय प्रवृत्ति थध जय तो तेमां राग द्वेष तो धारण न न
करवा धटे जेवी न रीते घ्राण, अम तेमन स्पर्शनेन्द्रियने पोत पोताना
विषयमां प्रथम तो प्रवृत्त न थवा देवा जेधये अने कहायित प्रवृत्ति थध
जय, कारणके प्राप्त विषये इन्द्रिय ग्रहण कर्मा वगर रहेती नथी. त्यारे ते
विषयेने मनोज्ञ अथवा अमनोज्ञ जाणीने राग द्वेष न राखवा जेधये। १९।

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पहले छठे तप प्रतिसंलीनतानुं निरूपण करवामां
आव्युं अने तेना चार लेहोने निर्देश पण करवामां आव्यो हवे ते पैडी

‘इन्द्रिय षड्संलीणया तवे पंचविहे, सोऽइन्द्रियाहभेयओ’ इति । इन्द्रिय प्रतिसंलीनतातपः-इन्द्रियाणां प्रतिसंलीनता संगोपनशीलता इन्द्रियप्रतिसंलीनता तद्रूपंतपः पञ्चविधं भवति तद्यथा-श्रोत्रेन्द्रियादि भेदतः । तथा च-श्रोत्रेन्द्रिय प्रतिसंलीनता १ चक्षुरिन्द्रियप्रतिसंलीनता २ घ्राणेन्द्रियप्रतिसंलीनता ३ जिह्वेन्द्रिय प्रतिसंलीनता ४ स्पर्शनेन्द्रियप्रतिसंलीनता च ५ इत्येवं पञ्चविधं प्रतिसंलीनता तपो भवतीति भावः । तत्र-श्रोत्रेन्द्रियप्रतिसंलीनता तपस्तावत्-श्रोत्रेन्द्रियविषयप्रचार निरोधरूपं श्रोत्रेन्द्रियविषयेष्वर्थेषु रागद्वेषनिग्रह रूपं वा १ चक्षुरिन्द्रियप्रतिसंलीनता तपस्तावत्-चक्षुरिन्द्रियविषयप्रचारनिरोधरूपं चक्षुरिन्द्रियप्राप्तेष्वर्थेषु रागद्वेष निग्रह रूपं वा बोध्यम् २ एवं घ्राणेन्द्रियविषयप्राप्तेष्वर्थेषु रागद्वेषनिग्रहरूपं भवति ३ एवं जिह्वेन्द्रियप्रतिसंलीनता तपस्तु-जिह्वेन्द्रियविषयप्रचारनिरोधरूपम्, जिह्वेन्द्रिय-

इन्द्रिय પ્રતિસંલીનતા તપ કે પાંચ ભેદો का निरूपण करते हैं-

इन्द्रियां पांच हैं, अतएव इन्द्रिय प्रतिसंलीनता तप भी पांच प्रकार का है, यथा-(१) श्रोत्रेन्द्रिय प्रतिसंलीनता (२) चक्षुरिन्द्रिय प्रतिसंलीनता (३) घ्राणेन्द्रिय प्रतिसंलीनता (४) रसनेन्द्रिय प्रतिसंलीनता और (५) स्पर्शनेन्द्रिय प्रतिसंलीनता । श्रोत्रेन्द्रिय को अपने विषय में प्रवृत्त न होने देना अथवा उसके विषय में राग द्वेष उत्पन्न न होने देना श्रोत्रेन्द्रिय प्रतिसंलीनता नामक तप कहलाता है । इसी प्रकार चक्षुरिन्द्रिय को अपने विषय में प्रवृत्त न होने देना अथवा प्रवृत्त होने पर भी उसमें राग द्वेष न करना चक्षुरिन्द्रिय प्रतिसंलीनता तप है । घ्राणेन्द्रिय का निग्रह करना घ्राणेन्द्रिय प्रतिसंलीनता है । जिह्वा को वचन प्रयोग से विरत कर देना या प्राप्त विषय में राग-द्वेष न उत्पन्न होने

ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા તપના પાંચ ભેદોનું નિરૂપણ કરીએ છીએ

ઇન્દ્રિયો પાંચ છે આથી ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા તપ પણ પાંચ પ્રકારના છે એવાકે -(૧) શ્રોત્રેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા (૨) ચક્ષુન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા (૩) ઘ્રાણેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા (૪) રસનેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા અને (૫) સ્પર્શનેન્દ્રિય પ્રતિસંલીનતા. શ્રોત્રેન્દ્રિયને તેના વિષયમાં પ્રવૃત્ત ન થવા દેવી અથવા તેના વિષયમાં રાગ દ્વેષ ઉત્પન્ન ન થવા દેવા શ્રોત્રેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા નામક તપ કહેવાય છે. એવી જ રીતે ચક્ષુરિન્દ્રિયને પોતાના વિષયમાં પ્રવૃત્ત ન થવા દેવી અથવા પ્રવૃત્ત થવા છતાં પણ તેમાં રાગ દ્વેષ ન કરવો ચક્ષુરિન્દ્રિય પ્રતિસંલીનતા તપ છે ઘ્રાણેન્દ્રિયનો નિગ્રહ કરવો ઘ્રાણેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા છે. જીભને વચન પ્રયોગથી વિરક્ત કરી દેવી અથવા પ્રાપ્ત વિષયમાં રાગ દ્વેષ

વિષયપ્રાપ્તેષુ-અર્થેષુ રાગદ્વેષનિગ્રહાત્મકં વાઽવસેયમ્ ૪ એવં-સ્પર્શનેન્દ્રિય પ્રતિસંલી
નતા તપસ્તાવત્-સ્પર્શનેન્દ્રિયવિષયપ્રચારનિરોધરૂપં, સ્પર્શનેન્દ્રિયવિષયપ્રાપ્તેષ્વર્થેષુ
રાગદ્વેષનિગ્રહરૂપં વાઽવગન્તવ્યમ્ ૫ ઉક્તઔપપાતિકે ૩૦ સૂત્રો-‘સે કિં તં
ઈન્દિય પડિસંલીનયા ? ઈન્દિયપડિસંલીનયા પંચવિદ્યા પળ્લત્તા, તં
જહા સોઈન્દિયવિસયપ્પયારનિરોહો વા, સોઈન્દિયવિસયપ્તેસુ અત્થેસુ
રાગદોસનિગ્ગહો વા ૧ ચક્કિંલ્લદિયવિસયપ્પયારનિગ્ગહો વા, ચક્કિંલ્લ-
દિયસયપ્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા ૨ ઘાળિંદિયવિસય-
પ્પયારનિગ્ગહો વા, ઘાળિંદિયવિસયપ્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો
વા ૩ જિલ્લિંદિય વિસયપ્પયારનિરોહો વા જિલ્લિંદિયાવિસયપ્તેસુ
અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા ૪ ફાલ્લિંદિયવિસયપ્પયારનિરોહો વા-
ફાલ્લિંદિયવિસયપ્તેસુ અત્થેસુ રાગદોસનિગ્ગહો વા ૫ સે સં ઈન્દિય-
પડિસંલીનયા’ ઇતિ, અથ કા સ્મા ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા ૩ ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા
પશ્ચવિદ્યા પ્રજ્ઞપ્તા, તચ્ચથા-શ્રોત્રેન્દ્રિયવિષયપ્રચારનિરોધો વા શ્રોત્રેન્દ્રિયવિષય
પ્રાપ્તેષ્વર્થેષુ રાગદ્વેષનિગ્રહો વા ૧ ચક્ષુરિન્દ્રિયવિષયપ્રચારનિરોધો વા ચક્ષુ-
રિન્દ્રિયવિષયપ્રાપ્તેષ્વર્થેષુ રાગદ્વેષનિગ્રહો વા ૨ ઘ્રાણેન્દ્રિયવિષયપ્રચારનિરોધો
વા ઘ્રાણેન્દ્રિયવિષયપ્રાપ્તેષ્વર્થેષુ રાગદ્વેષનિગ્રહો વા ૩ જિહ્વેન્દ્રિયવિષય-

દેના જિહ્વેન્દ્રિય પ્રતિસંલીનતા હૈ । સ્પર્શન ઇન્દ્રિયાં કો વિષય સે વિરત
કરના એવં મનોજ્ઞ-અમનોજ્ઞ સ્પર્શ મેં રાગ-દ્વેષ ન કરના સ્પર્શનેન્દ્રિય
પ્રતિસંલીનતા તપ હૈ । ઔપપાતિક સૂત્ર કે ત્રીસવેં સૂત્ર મેં કહા હૈ-

પ્રશ્ન-ઈન્દ્રિય પ્રતિસંલીનતા કે કિતને ભેદ હૈં ?

ઉત્તર-ઈન્દ્રિય પ્રતિસંલીનતા કે પાંચ ભેદ હૈં । વે હસ પ્રકાર હૈં-
(૧) શ્રોત્રેન્દ્રિય કે વિષય પ્રચાર કા નિરોધ કરના યા શ્રોત્રેન્દ્રિય કે
વિષય મૂળ પદાર્થોં મેં રાગ દ્વેષ કા નિગ્રહ કરના (૨) ચક્ષુરિન્દ્રિય કે
વિષય પ્રચાર કા નિરોધ કરના યા ગ્રાસ વિષય મેં રાગ-દ્વેષ ન કરના

ન ઉત્પન્ન થવા દેવા જિહ્વેન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા છે. સ્પર્શન ઇન્દ્રિયને વિષયથી
વિરક્ત કરવી અને મનોજ્ઞ અમનોજ્ઞ સ્પર્શમાં રાગ દ્વેષ ન કરવા સ્પર્શને-
ન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા તપ છે ઔપપાતિક સૂત્રના ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહ્યું છે

પ્રશ્ન-ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતાના કેટલા ભેદ છે ?

ઉત્તર-ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતાના પાંચ ભેદ છે તે આ પ્રમાણે (૧) શ્રોત્રે-
ન્દ્રિયના વિષયભૂત પદાર્થોમાં રાગદ્વેષનો નિરોધ કરવો અથવા શ્રોત્રેન્દ્રિયના
વિષયભૂત પદાર્થોમાં રાગ દ્વેષનો નિગ્રહ કરવો (૨) ચક્ષુરિન્દ્રિયના વિષય-

પ્રચારનિરોધો વા, જિહ્વેન્દ્રિયવિષયપ્રાપ્તેષ્વર્થેષુ રાગદ્વેષનિગ્રહો વા ૪
સ્પર્શનેન્દ્રિયવિષયપ્રચારનિરોધો વા સ્પર્શનેન્દ્રિયપ્રાપ્તેષ્વર્થેષુ રાગદ્વેષનિગ્રહો
વા ૫ ઇતિ, एषा-इन्द्रियप्रतिसंलीनता, इत्येवं प्रतिसंलीनता बोध्या ॥૧૯॥

મૂલમ્—કસાયપડિસંલીનયા તવે ચઽવિવે, કોહપડિસંલી-
નયાહભેયઓ ॥૨૦॥

છાયા—કષાયપ્રતિસંલીનતા તપશ્ચતુર્વિધમ્, ક્રોધપ્રતિસંલીનતાદિ ભેદતઃ ૨૦

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાત્ત્વ ચતુર્વિધેષુ પ્રતિસંલીનતા તાઃસુ ‘પ્રથમોપાત્તમ્
ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા તપઃ’ પશ્ચવિધત્વેન સવિસ્તરં પ્રરૂપિતમ્ સમ્પત્તિ-ક્રમપ્રાપ્તં
દ્વિતીયં કષાયપ્રતિસંલીનતા તપશ્ચતુર્વિધત્વેન પ્રરૂપયિતુમાહ—‘કસાયપડિસંલી-
નયા ચઽવિવે કોહપડિસંલીનયાહ ભેયઓ’ ઇતિ । કષાયપ્રતિસંલીનતા
તપઃ કષાયાણાં ક્રોધાદીનાં પ્રતિસંલીનતા-સંગોપનશીલતા કષાય-
પ્રતિસંલીનતા તદ્રૂપં તપઃ સ્વચ્છ ચતુર્વિધં ભવતિ, તથા—ક્રોધપ્રતિસં-

(૩) ઘ્રાણેન્દ્રિય કે વિષય પ્રચાર કો નિરોધ કરના અથવા ઘ્રાણેન્દ્રિય
કે વિષય (ગંધ) મેં રાગ દ્વેષ ન કરના (૪) જિહ્વેન્દ્રિય કે વિષય પ્રચાર
કો નિગ્રહ કરના અથવા ઉસકે વિષય મેં રાગ દ્વેષ ઉત્પન્ન ન હોને દેના
ઔર (૫) સ્પર્શનેન્દ્રિય કે વિષય પ્રચાર કો નિરોધ કરના યા ઉસકે પ્રાપ્ત
વિષય મેં રાગ દ્વેષ ન કરના । યહ હન્દ્રિય પ્રતિસંલીનતા તપ હૈ ॥૧૯॥

‘કસાયપડિસંલીનયા તવે’ હત્યાદિ સૂ. ૨૦

સૂત્રાર્થ—પ્રતિસંલીનતા તપ કે ચાર ભેદો મેં દે ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા
તપ કે પાંચ ભેદો કો વિસ્તાર સહિત નિરૂપણ ક્રિયા ગયા, અબ ક્રમપ્રાપ્ત
કષાય પ્રતિસંલીનતા તપ કે ચાર ભેદો કો પ્રરૂપણ કરતે હૈ ॥૨૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—ક્રોધ આદિ કષાયો કો ગોપન કરના કષાયપ્ર-
તિસંલીનતા તપ કહલાતા હૈ । ઉસકે ચાર ભેદ હૈ—(૧) ક્રોધપ્રતિસંલી-

પ્રચારનો નિરોધ કરવો (૩) ઘ્રાણેન્દ્રિયના વિષય (ગંધ)માં રાગદ્વેષ ન રાખવો.
(૪) જિહ્વેન્દ્રિયના વિષયપ્રચારનો નિગ્રહ કરવો અથવા તેના વિષયમાં રાગ
દ્વેષ ઉત્પન્ન ન થવો દેવો અને (૫) સ્પર્શનેન્દ્રિયના વિષયપ્રચારનો નિરોધ
કરવો અથવા તેના પ્રાપ્ત વિષયમાં રાગ દ્વેષ ન કરવો. આ બધાં ઇન્દ્રિ-
યપ્રતિસંલીનતા તપના ભેદ છે. ॥ ૧૯ ॥

‘કસાયપડિસંલીનયા તવે ચઽવિવે’ હત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—પ્રતિસંલીનતા તપના ચાર ભેદોમાંથી ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા
તપના પાંચ ભેદોનું સવિસ્તર વર્ણન કરવામાં આવ્યું, હવે ક્રમપ્રાપ્ત કષાય
પ્રતિસંલીનતા તપના ચાર ભેદોનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ ॥ ૨૦ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—ક્રોધ આદિ કષાયોનું ગોપન કરવું કષાયપ્રતિસંલીનતા
તપ કહેવાય છે તેના ચાર ભેદ છે—(૧) ક્રોધપ્રતિસંલીનતા (૨) માનપ્રતિસં-

लीनतादि भेदतः । तथा च-क्रोधप्रतिसंलीनता १ आदिना-मानप्रतिसंलीनता २ मायाप्रतिसंलीनता ३ लोभप्रतिसंलीनता ४ चेत्येवं चतुर्विधं तावत्-कषाय प्रतिसंलीनता तपो भवति । तत्र-क्रोधप्रतिसंलीनता तप स्तावत्-क्रोधस्योदय निरोधरूपम्, उदयप्राप्तस्य क्रोधस्य विफलीकरणम् अन्तः संगोपनरूपं-विलीन-करणं वा क्रोधप्रतिसंलीनता तप उच्यते यथा क्रोधो नोदयेत तथा यतितव्यम्, यदि कदाचित्क्रोध उदितः स्यात् तदा तस्य विफलतां कुर्यात्-इति भावः १ एवं मानप्रतिसंलीनता तप स्तावत्-मानस्योदयनिरोधरूपम्, उदयप्राप्तस्य मानस्य विफलीकरण मन्तःसंगोपनविलीनीकरणरूपं वा मानप्रतिसंलीनता तपो भवति, यथाऽभिमानरूपमानस्योदय एव न स्थात्तथायत्नः कर्तव्यः, यदि कदाचित्-मान उदितः स्यात् तदा तं विफलं कुर्यात् । २ एवं-मायाप्रतिसंलीनता तपस्तावत् मायायाः उदयनिरोधरूपम्, उदयप्राप्ताया मायाया विफलीकरणम्-अन्तः संगो पनं वा मायाप्रतिसंलीनता तप उच्यते, यथा-परवश्वनारूपा माया नोदयेत तथा

नता (२) मानप्रतिसंलीनता (३) मायाप्रतिसंलीनता (४) लोभप्रतिसं-
लीनता । क्रोध को उत्पन्न न होने देना या उदित हुए क्रोध को विफल
करना-उसे अन्दर ही दबा देना क्रोध प्रतिसंलीनता तप है । तात्पर्य
यह है कि प्रयत्न ऐसा करना चाहिए कि क्रोध की उत्पत्ति ही न होने
पाए, कदाचित् क्रोध उत्पन्न भी हो जाय तो उसे निष्फल बना देना
चाहिए । इसी प्रकार मान को उत्पन्न न होने देना अथवा उत्पन्न मान
को निष्फल कर देना मानप्रतिसंलीनता तप है, अर्थात् प्रयत्न ऐसा
करना कि मान कषाय की उत्पत्ति ही न हो, फिर भी कभी उत्पन्न हो
जाय तो उसे विफल कर देना चाहिए । इसी तरह माया को उत्पन्न
न होने देना और उदित हुई माया को निष्फल कर देना मायाप्रतिसं-

लीनता (३) मायाप्रतिसंलीनता (४) लोभप्रतिसंलीनता. क्रोधने उत्पन्न न थवा
देवो अथवा उदित थयेला क्रोधने विद्मण अनाववो तेने अंदरथी न शमावी
देवो क्रोधप्रतिसंलीनता तप छे. तात्पर्य अे छे के प्रयत्न अेवो करवो लोभअे
के क्रोधनी उत्पत्ति न न थाय कदाचित क्रोध उत्पन्न थई पणु ज्ञय तो तेने
निरंकुश अनाववी देवो लोभअे अेवो न रीते मानने उत्पन्न न थवा देवुं
अथवा उत्पन्न थनेला मानने निष्कण करी देवुं मानप्रतिसंलीनता तप छे
अर्थात् प्रयत्न अेवो करवो के मानकषायने उद्भव न न थाय तेम छतां
कदाच उत्पन्न थई ज्ञय तो तेने निष्कण करी देवुं लोभअे आ प्रमाणे मायाने
उत्पन्न थवा न देवी अने उदित थयेली मायाने णिन असरकारक अनाववी

यत्तितव्यम्, कथञ्चिदुदितायाः कपटरूपाया मायायाः विफलतां कुर्यात् ३ एवं लोभप्रतिसंलीनता तपः स्तान्-लोभस्योदयनिरोधरूपम्, उदयप्राप्तस्य लोभस्य विफलीकरणम् अन्तः संगोपनरूपं वा लोभप्रतिसंलीनता तप उच्यते, यथा-परस्व ग्रहणलालसारूपो लोभो-न उदयेत तथा-यत्नं कुर्यात्, यदि कथञ्चित्-कस्मिञ्चित्-वस्तुनि लोभ उदितः स्यात् तदा-तं विफलं विदध्यात्-४ इति भावः ॥२०॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं खलु-प्रतिसंलीनता तपश्चतुर्विधत्वेन प्ररूपितम्, तत्र-प्रथमस्येन्द्रियप्रतिसंलीनता तपः पञ्चविधत्वेन सविशदं निरूपणं कृतम्, सम्प्रति-क्रमप्राप्तस्य कषायप्रतिसंलीनतारूप तपसः खलु चतुर्विधत्वेन प्ररूपणं कर्तुमाह-‘कषाय पडिसंलीणया तवे चउच्चिहे कोहपडिसंलीणयाहमेयओ इति । कषायप्रतिसंलीनता तपः-कषायाणां क्रोधादीनां प्रतिसंलीनता संगोपनशीलता कषायप्रतिसंलीनता, तद्रूपं तपः खलु चतुर्विधं भवति तद्यथा-क्रोधप्रतिसं-

लीता है । इसी प्रकार लोभ को उत्पन्न न होने देना और उत्पन्न हुए लोभ को विफल कर देना लोभप्रतिसंलीनता तप कहलाता है । ऐसा यत्न करना चाहिए कि परकीय वस्तु को ग्रहण करने की लालसा रूप लोभ उत्पन्न ही न हो, फिर भी किसी प्रकार किसी वस्तु का लोभ उत्पन्न हो जाय तो उसे निष्फल करना चाहिए ॥२०॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पहले प्रतिसंलीनता तप के चार भेदों का कथन किया गया था । उनमें से प्रथम इन्द्रियप्रतिसंलीनता तप के चार भेदों का विशद प्ररूपण किया जा चुका, अब क्रमप्राप्त कषाय प्रतिसंलीनता तप के चार भेदों का निरूपण करते हैं—

कषायप्रतिसंलीनता तप के चार भेद है, जो इस प्रकार हैं—(१)

देवी मायाप्रतिसंलीनता छे. जेवी ज रीते दोलने उत्पन्न न थवा देवी अने उत्पन्न थयेला दोलने विष्णु करी देवी दोलप्रतिसंलीनता तप छे. जेवी प्रयत्न करवे जेधजे के पारकी वस्तुने ग्रहणु करवान्नी लालसा रुप दोल उत्पन्न ज न थाय, आम छतां संजोगवशात् कोर्ध वस्तुने दोल उत्पन्न थछ जय तो तेने निष्ण जनाववे जेधजे ॥ २० ॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पडेला प्रतिसंलीनता तपना आर लेहोनुं कथन करवामां आंयु डतुं तेसाथी प्रथम इन्द्रियप्रतिसंलीनता तपना पांय लेहोनुं विस्तारपूर्वक प्रश्नणु करवामां आवी गयुं, डवे क्रमप्राप्त कषाय प्रतिसंलीनता तपना आर लेहोनुं प्रश्नणु करीजे छीजे—

कषायप्रतिसंलीनता तपना आर लेह आ प्रमाणे छे—(१) क्रोधप्रति-

लीनतादि भेदतः । तथा च क्रोधप्रतिसंलीनता १ आदिना-मानप्रतिसंलीनता-२ मायाप्रतिसंलीनता-३ लोभप्रतिसंलीनता-४ चेत्येवं चतुर्विधं तावत्-कषाय प्रति-संलीनता तपो भवति । तत्र क्रोधप्रतिसंलीनता तपः खलु-क्रोधस्योदय निरोधरूपम्, उदितस्य क्रोधस्य विफलीकरण मन्तः संगोपनरूपं वा क्रोध प्रति-संलीनता, तप उच्यते प्रथमं तु-क्रोधस्योदय एव यथा न स्यात् तथा यतितव्यम्, यदितु कदाचित् क्रोध उदयं प्राप्नुयात् तदा तं विफलं कुर्यात् इति भावः १ एवं-मानप्रतिसंलीनता तप रतावद् अभिमानरूपस्य मानस्योदयनिरोधरूपम् उदय प्राप्तस्य मानस्य विफलीकरण मन्तः संगोपनं वा मानप्रतिसंलीनता तप उच्यते प्रथमतस्तु-मानस्योदय एव यथा न स्यात् तथा यतितव्यम्-यदि कथंचित्-उदितः स्यान्मानः तदा तं विफलं विदध्यादिति भावः २ एवं मायाप्रतिसंलीनता तपस्तावद् मायायाः परवञ्चनारूपायाः कष्टरूपाया वा उदयनिरोधरूपम्, उदय प्राप्ताया

क्रोधप्रतिसंलीनता (२) मानप्रतिसंलीनता (३) मायाप्रतिसंलीनता और (४) लोभप्रतिसंलीनता । क्रोध की उत्पत्ति न होने देना अथवा उत्पन्न क्रोध को विफल कर देना क्रोधप्रतिसंलीनता तप कहलाता है । भाव यह है कि प्रथम तो ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि क्रोध उत्पन्न ही न होने पाए, कदाचित् उत्पन्न हो जाय तो उसे निष्फल बना दे ।

इसी प्रकार मानकषाय को उत्पन्न न होने देना और उत्पन्न हुए मान कषाय को निष्फल कर देना मानप्रतिसंलीनता तप है । तत्पर्य यह है कि प्रथम तो ऐसा यत्न करना चाहिए जिससे मान उत्पन्न ही न हो, कदाचित् उत्पन्न हो जाय तो उसे विफल कर देना चाहिए । इसी भांति परवञ्चना रूप माया को उत्पन्न न होने देना और उत्पन्न

संलीनता (२) मानप्रतिसंलीनता (३) मायाप्रतिसंलीनता (४) लोभप्रतिसंलीनता । क्रोधनी उत्पत्ति न थवा देवी अथवा उत्पन्न क्रोधनुंशमन करी देवुं क्रोधप्रतिसंलीनता तप कडेवाय छे. सारांश अे छे के प्रथमतो अेवो प्रयत्न करवो जेधअे के क्रोध उद्भूतवे न नही. कदाय उद्भूतवे तो तेने निष्कृणयनावी दे आवी न रीते मानकषायने उत्पन्न न थवा देवो अने उत्पन्न थयेदा मान-कषायने निष्प्रभावित करी देवो मानप्रतिसंलीनता तप छे. तात्पर्य अे छे के प्रथम तो अेवो प्रयत्न करवो जेधअे के जेथी मान उत्पन्न न न थाय, कदाचित् जे उत्पन्न थई जय तो तेने निष्कृणयनावुं जेधअे

आज प्रमाणे परवञ्चना रूप माया ने उत्पन्न न थवा देवी अने उत्पन्न थयेदी मायाने विष्णु करी देवी अंदरने अंदर न शमन करी देवी

માયાયા વિફલીકરણ મન્તઃ સંગોપનં વા, માયાપ્રતિસંલીનતા તપો મન્વતિ, યથા પરવશ્ચનારૂપા-કપટરૂપા વા માયા નોદિતાસ્યાતથા યતિતત્ત્વમ્, યદિ કથશ્ચિદ્ માયા-ઉદિતાસ્યાત્તદા તાં વિફલતાં કુર્યાદિતિમાદઃ ૩ એવં પ્રતિસંલીનતા તપસ્તાવદ્ લોભસ્ય પરસ્વગ્રહણલાલસારૂપસ્યોદયનિરોધરૂપં મન્વતિ ઉદય-પ્રાપ્તસ્ય લોભસ્ય વિફલીકરણમન્તઃસંગોપનરૂપં વા લોભપ્રતિસંલીનતાતપ ઉચ્યતે, પ્રથમતસ્તુ લોભએવ પરસ્વગ્રહણલાલસારૂપો યથા નોદિતઃ સ્યાત્તથા યતિ તત્ત્વમ્, યદિતુ કથશ્ચિત્કર્મિશ્ચિ દસ્તુનિ લોભ ઉદિતઃ સ્યાત્તદા તં વિફલં કુર્યા-દિતિ માદઃ ૪ ઉક્તશ્ચૌપપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘સે કિં તં કલાયપડિસંલીનયા? કલાયપડિસંલીનયા ચઽન્વિદ્યા પળ્લન્તા તં જહા-ક્રોહસ્તુદયનિરોહો વા, ઉદયપત્તસ્સ વા-ક્રોહસ્સ વિફલીકરણં ૧ માળસ્તુદયનિરોહો વા, ઉદય પત્તસ્સ વા માળસ્સ વિફલીકરણં ૨ માય ઉદયનિરોહો વા, ઉદય-પત્તાએ વા માયાએ વિફલીકરણં ૩ લોહસ્તુદયનિરોહો વા, ઉદયપત્તસ્સ લોહસ્સ વિફલીકરણં ૪ સે તં કલાયપડિસંલીનયા’ ઇતિ. અથ કા સા કલાય પ્રતિસંલીનતા કલાયપ્રતિસંલીનતા ચતુર્વિધા પ્રજ્ઞપ્તા, તદ્યથા-ક્રોધસ્યોદયનિરોધો

હુઈ માયા કો વિફલ કર દેના-મીતર હી દવા દેના માયા પ્રતિસંલી નતા તપ કહલાતા હૈ । આત્મક યહ હૈ કિ કપટરૂપ માયા ઉત્પન્ન ન હો એસા યત્ન કરના યાહિએ । કદાચિત્ ઉત્પન્ન હો જાય નો ઉસે નિષ્ફલ કરદેના યાહિએ ।

પરકીય વસ્તુ કો ગ્રહણ કરને કી લાલસા રૂપ લોભ કો ઉત્પન્ન ન હોને દેના ઔર ઉત્પન્ન હુએ લોભ કો વિફલ કર દેના લોભપ્રતિસં લીનતા નામક તપ કહલાતા હૈ । પ્રથમ તો યહી પ્રયત્ન કરના યાહિએ કિ લોભ કા ઉદય હી ન હોસકે કદાચિત્ ઉદિત હો જાય તો ઉસે વિફલ કર દેના યાહિએ । ઔપપાતિકસૂત્ર કે ત્રીસવે સૂત્ર મેં કહા મી હૈ—

માયાપ્રતિસંલીનતા તપ કહેવાય છે. આશય એ છે કે કપટ રૂપ માયા ઉત્પન્ન ન થાય એ દિશામાં પ્રયત્ન કરવો. જોઈએ, કદાચિત્ ઉત્પન્ન થઈ પણ જાય તો તેને નિષ્ફળ કરી દેવી જોઈએ.

પરમાલિંગીની વસ્તુને ગ્રહણ કરવાની લાલસા રૂપ લોભને ઉત્પન્ન ન થવા દેવો અને ઉત્પન્ન થયેલ લોભને વિષ્ણ કરી દેવો. લોભપ્રતિસંલીનતા નામક તપ કહેવાય છે પ્રથમ તો લોભ ઉદ્ભવે જ નહીં એ માટે પ્રયત્નશીલ રહેવું જોઈએ. કદાચિત્ ઉદિત થઈ જાય તો તેને નિષ્ફળ કરી દેવો જા-ઈએ ઔપપાતિક સૂત્રના ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહ્યું પણ છે—

वाउदय प्राप्तस्य वा क्रोधस्य विफलीकरणम् १ मानस्योदयनिरोधो वा उदयप्राप्तस्य वा, मानस्य विफलीकरणम् २ मायाया उदयनिरोधो वा, उदय प्राप्ताया मायाया विफलीकरणम् ३ लोभस्योदयनिरोधो वा, उदयप्राप्तस्य लोभस्य विफलीकरणम् ४ ॥२०॥

यूलम्—जोगपडिसंलीणया तवे तिविहे, मणजोगपडिसंलीणयाह भेयओ ॥२१॥

छाया—‘योगप्रतिसंलीनता तपस्त्रिविधम्, मनोयोगप्रतिसंलीनतादि भेदतः ॥२१॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावत्-चतुर्विधं प्रतिसंलीनता तपः प्रतिपादितम्, तत्र-यथाक्रममिन्द्रियप्रतिसंलीनता कषायप्रतिसंलीनता तपः प्ररूपितम्, सम्प्रति

प्रश्न—कषायप्रतिसंलीनता तप के कितने भेद हैं ?

उत्तर—कषायप्रतिसंलीनता तप चार प्रकार का है—(१) क्रोध के उदय का निरोध करना और उदित हुए क्रोध को विफल करना (२) मान को उत्पन्न न होने देना और उत्पन्न मान को विफल करना (३) माया के उदय को रोकना और उदित माया को विफल करना (४) लोभ के उदय को रोकना और उदित लोभ को विफल करना ॥२०॥

‘जोगपडिसंलीणया तवे तिविहे’

सूत्रार्थ—मनोयोगप्रतिसंलीनता आदि भेद से योगसंलीनता तप तीन प्रकार का है ॥२१॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले प्रतिसंलीनता तप के चार भेदों का निर्देश किया गया था, उनसे ले क्रम के अनुसार इन्द्रियप्रतिसंलीनता और

प्रश्न—कषायप्रतिसंलीनता तपना કેટલા ભેદ છે. ?

ઉત્તર—કષાયપ્રતિસંલીનતા તપ ચાર પ્રકારના છે—(૧) ક્રોધના ઉદયને નિરોધ કરવો અને ઉદિત થયેલા ક્રોધને ખૂણવો. (૨) માનને ઉત્પન્ન ન થવા દેવું અને ઉત્પન્ન માનને નિષ્ફળ બનાવવું (૩) માયાના ઉદયને રોકવો અને ઉદય પામેલી માયાને વિષ્ણુ બનાવવી. (૪) લોભના ઉદયને રોકવો અને ઉદિત લોભને વિષ્ણુ બનાવવો ॥ ૨૦ ॥

‘જોગપડિસલીણયા તવે તિવિહે’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—મનોયોગપ્રતિસંલીનતા આદિના ભેદથી યોગપ્રતિસંલીનતા તપ ત્રણ પ્રકારના છે ॥ ૨૧ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—અગાઉ પ્રતિસંલીનતા તપના ચાર ભેદોનો નિર્દેશ કરવામાં આવ્યો હતો, તેમાંથી ક્રમાનુસાર ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા અને કષાય-

क्रमप्राप्तं तृतीयं योगप्रतिसंलीनतातपः प्ररूपयितुमाह—‘जोगप्रतिसंलीन-
 यातवे’ इत्यादि । योगप्रतिसंलीनता तपः—योगानां मनोवचःकायव्यापार
 विशेषाणां प्रतिसंलीनता संगोपनशीलता—योगप्रतिसंलीनता तद्रूपं तपस्त्रिविधं
 भवति, तद्यथा, मनोयोगप्रतिसंलीनतादि भेदतः । तथा च—मनोयोगप्रतिसंली-
 नता १ आदिना—वचोयोगप्रतिसंलीनता २ काययोगप्रतिसंलीनता ३ चेत्येवं
 त्रिविधं खलु योगप्रतिसंलीनता तपो भवति । तत्र मनोयोगप्रतिसंलीनता तप
 स्तावद् अकुशलमनोनिरोधरूपम्, कुशलमनस उदीरणं वा—उच्यते तथा च—शुभ
 मनसः प्रवर्तनरूपं वचोयोगप्रतिसंलीनता तपस्तावद् अकुशलवचोनिरोधरूपं
 वा वचोयोगप्रतिसंलीनता तप उच्यते । एवं काययोगप्रतिसंलीनतातप स्तावत्
 कूर्मवत् संहतकरचरणगुप्तेन्द्रियसर्वगात्रप्रतिसंलीनारूपं सर्वसाध्याऽनुष्ठान-
 वर्जनात्मकं काययोगप्रतिसंलीनता तप उच्यते इति भावः ॥२१॥

कायप्रतिसंलीनता तप का निरूपण क्रिया जा चुका अब क्रमागत
 तीसरे योगप्रतिसंलीनता तप का निरूपण करते हैं—

मन वचन और काय के व्यापार का गोपन करना योगप्रतिसं-
 लीनता तप है । उसके तीन भेद हैं—मनोयोग प्रतिसंलीनता, वचनयोग
 प्रतिसंलीनता और काययोग प्रतिसंलीनता । मन के अप्रशस्त व्यापार
 को रोकना एवं प्रशस्त व्यापार की उदीरणा करना मनोयोगप्रतिसं-
 लीनता तप है । इसी प्रकार अप्रशस्त वचनों का निरोध करना और
 प्रशस्त वचनों की उदीरणा करना (अथवा मौन धारण करना) वचन-
 योग प्रतिसंलीनता तप है । कर्ष की तरह हाथों पैरों एवं सम्पूर्ण शरीर
 का संगोपन करना—खव प्रकार के कायिक साधन अनुष्ठान का त्याग
 करना काययोग प्रतिसंलीनता तप कहलाता है ॥२१॥

प्रतिसंलीनता तपनुं निश्पद्युं कर्वाभां आवी गयुं हवे कमागत त्रीन् योग
 प्रतिसंलीनता तपनुं निश्पद्युं करीजे छीजे—

मन वचन अने कायाना व्यापारनुं गोपन करवुं योगप्रतिसंलीनता तप
 छे तेना त्रयु लेह छे—मनोयोगप्रतिसंलीनता वचनयोगप्रतिसंलीनता अने
 काययोगप्रतिसंलीनता. मनना अप्रशस्त व्यापारने रोकवो अने प्रशस्त
 व्यापारनी उदीरणा करवी मनोयोगप्रतिसंलीनता तप छे. ओवीज रीते
 अप्रशस्त वचननो निरोध करवो अने प्रशस्त वचनोनी उदीरणा करवी
 (अथवा मौन धारण करवुं) वचनयोगप्रतिसंलीनता तप छे कायभानी भाइक
 हाथ पग अने सम्पूर्ण शरीरनुं संकथन करवुं यथा प्रकारना ‘कायिक
 साधन अनुष्ठाननो त्याग करवो काययोगप्रतिसंलीनता तप कहवाय छे ॥ २१॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं खलु-चतुर्विधबाह्यप्रतिसंलीनतातपसां यथा-
क्रम मिन्द्रियप्रतिसंलीनता-कषायप्रतिसंलीनता तपः सविशदं प्ररूपितम्,
सम्प्रति-क्रमप्राप्तं तृतीयं प्रतिसंलीनता तपो योगप्रतिसंलीनतारूपं प्ररूपयितु-
माह—“जोगपडिसंलीनया तवे तिविहे, मणजोगपडिसंलीनयाइ
मेयओ—” इति । योगप्रतिसंलीनतातपः—योगानां मनोवचःकायव्यापार
विशेषाणां प्रतिसंलीनता-संनोपनशीलता योगप्रतिसंलीनता तद्रूपं तपः खलु
त्रिविधं भवति, तद्यथा मनोयोगप्रतिसंलीनतादि भेदतः । तथा च मनोयोगप्रति-
संलीनता १ आदिना वचोयोगप्रतिसंलीनता २ काययोगप्रतिसंलीनता ३ चेत्येवं
त्रिविधं खलु योगप्रतिसंलीनतातप उच्यते । तत्र मनोयोगप्रतिसंलीनता तप
स्तावद् अकुशलमनोनिरोधरूपं कुशलमनउदीरणं वा मनोयोगप्रतिसंलीनता तप
उच्यते, तच्च शुद्धमनसः प्रवर्तनरूपं बोध्यम् । एव वचोयोगप्रतिसंलीनता तप

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—चार प्रकार के प्रतिसंलीनता तप में से पहले
इन्द्रिय प्रतिसंलीनता और कषाय प्रतिसंलीनता तप का विशद रूपसे
प्ररूपण किया गया, अब क्रमप्राप्त तीसरे योग प्रतिसंलीनता तप का
निरूपण करते हैं—

मन, वचन और काय के योग-व्यापार का निरोध करना योग
प्रतिसंलीनता तप कहलाता है । इसके तीन भेद हैं—(१) मनोयोग प्रति
संलीनता (२) वचनयोग प्रतिसंलीनता और काययोग प्रतिसंलीनता ।
अकुशल मन का अर्थात् अप्रशस्त मनोव्यापार की उदीरणा करना
मनोयोग प्रतिसंलीनता तप है । अकुशल वचन का निरोध करना और
कुशल वचन की उदीरणा करना या वचनयोग की प्रवृत्ति को पूरी
तरह रोक देना वचनयोग प्रतिसंलीनता तप है । कूर्म की भांति हाथों,

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—चार प्रकारना प्रतिसंलीनता तपसांथी पडेला इन्द्रिय-
प्रतिसंलीनता अने कषायप्रतिसंलीनता तपनुं विशद रूपथी प्ररूपण करवामां
आव्युं, डवे डमप्राप्त त्रीण योगप्रतिसंलीनता तपनुं निरूपण करीये छीये

मन, वचन अने कायाना योगव्यापारनो निरोध करवो योगप्रतिसंलीनता
तप डडेवाय छे. आना त्रण लेद छे—(१) मनोयोगप्रतिसंलीनता (२) वचन
योगप्रतिसंलीनता अने (३) काययोगप्रतिसंलीनता अकुशल मननो अर्थात्
अप्रशस्त मनोव्यापारनो निरोध करवो अने प्रशस्त मनोव्यापारनी उदीरण
करवी मनोयोगप्रतिसंलीनता तप छे. अकुशल वचननो निरोध करवो अने
कुशल वचननी उदीरण करवी वचनयोगप्रतिसंलीनता तप छे. कायआनी जेम

સ્તાવત્ અકુશલ વચો નિરોધરૂપં, કુશલવચ ઉદીરણરૂપં યા વચોયોગપ્રતિસંલીનતા તપ ઉચ્યતે । एवं काययोग प्रतिसंलीनता तप स्तावत् कर्मवत् संहतहस्तपाद गुप्तेन्द्रियसर्वगात्रप्रतिसंलीनतारूपं खलु तपो भवति कायिक सावद्य सर्वाऽ-
नुष्ठानपरिवर्जन मुच्यते । तथा च कच्छप इव सुसमाहित पाणिपादो गुप्ते-
न्द्रियः सर्वगात्र प्रतिसंलीनस्तिष्ठति । तथा च गुप्तेन्द्रियमुसंयत हस्तपाद सर्व-
गात्रप्रतिसंलीनतातपो भवति । उक्तश्चૐપપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘સે કિં તં જોગપડિ-
સંલીનયા-? જોગપડિસંલીનયા તિવિહા પળપ્તા, તં જહા—
મળજોગપડિસંલીનયા-૧ વયજોગ પડિસંલીનયા-૨ કાયજોગ-
પડિસંલીનયા-૩ સે કિં તં મળજોગ પડિસંલીનયા-? મળજોગ-
પડિસંલીનયા-અકુસલમળનિરોહો, કુસલમળઉદીરણંવા, સે તં
મળજોગપડિસંલીનયા, સે કિં તં વયજોગપડિસંલીનયા-? વયજોગ
પડિસંલીનયા-અકુસલવયનિરોહોવા, કુસલવયઉદીરણંવા, સે તં વય
જોગપડિસંલીનયા, સે કિં તં કાયજોગપડિસંલીનયા?—કાયજોગ
પડિસંલીનયા-જં તં સુસમાહિય પાણિ પાદે કુમ્મો હવ ગુત્તિંદિય, સન્વ-
ગાય પડિસંલીને ચિદ્દહ, સે તં કાયજોગપડિસંલીનયા, । અથ કા સા યોગ-
પ્રતિસંલીનતા ૩ યોગ પ્રતિસંલીનતા ત્રિવિદ્યા મજ્જતા, તથયા મનોયોગપ્રતિસંલી-
પૈરોં, ઇન્દ્રિયોં एवं સમ્પૂર્ણ શરીર का गोपन करना काययोग प्रतिसंली-
नता तप है । शरीर संबंधी लायद्य अनुष्ठानों को त्याग देना, कष्ट
की तरह समस्त इन्द्रियों का गोपन करना काययोग प्रतिसंलीनता
तप है । औपपातिक सूत्र के तीसवें सूत्र में कहा है—

प्रश्न-योग प्रतिसंलीनता के कितने भेद हैं ?

उत्तर-योग प्रतिसंलीनता के तीन भेद हैं—मनोयोग प्रतिसंलीनता
वचनयोग प्रतिसंलीनता और काययोग प्रतिसंलीनता ।

હાથ, પગ, ઇન્દ્રિયો અને સંપૂર્ણ શરીરને સમેટી લેવું કાયયોગપ્રતિસંલીનતા તપ છે. ઔપપાતિકસૂત્રના ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહ્યું છે—

પ્રશ્ન-યોગપ્રતિસંલીનતાના કેટલા ભેદ છે ?

ઉત્તર-યોગપ્રતિસંલીનતાના ત્રણ ભેદ છે. મનોયોગપ્રતિસંલીનતા, વચન યોગપ્રતિસંલીનતા અને કાયયોગપ્રતિસંલીનતા.

પ્રશ્ન-મનોયોગપ્રતિસંલીનતા કેને કહે છે ?

ઉત્તર-અકુશળ મનોવ્યાપારનો નિરોધ કરવો અને કુશળમનની પ્રવૃત્તિ કરવી મનોયોગપ્રતિસંલીનતા છે.

નતા ૧ વચોયોગપ્રતિસંલીનતા ૨ કાયયોગપ્રતિસંલીનતા ૩ અથ કા સા મનોયોગ-
પ્રતિસંલીનતા મનોયોગપ્રતિસંલીનતા અકુશલમનોરોધો વા, કુશલ મન ઉદીરણં
વા, સા एषा મનોયોગપ્રતિસંલીનતા ? અથ કા સા વચોયોગપ્રતિસંલીનતા ?
વચોયોગપ્રતિસંલીનતા અકુશલવચો નિરોધો વા, કુશલ વચ ઉદીરણં વા
સા एषा વચોયોગપ્રતિસંલીનતા, અથ કા સા કાયયોગ પ્રતિસંલીનતા ?
કાયયોગ પ્રતિસંલીનતા યત્ત્વં ક્ષલુ સુસમાહિતપાણિપાદ કૂર્મ ઇવ ગુપ્તેન્દ્રિયઃ
સર્વગાત્રપ્રતિસંલીનાસ્તિષ્ઠતિ સા एषા કાયયોગપ્રતિસંલીનતા ઇતિ ॥૨૧॥

શૂલમ્—વિવિક્ત સયનાસનસેવણયા તથે અળેગવિહે, ઇત્થી-
આઙિવિરહિયા—અળેગટાળણિવાસભેયઓ ॥૨૨॥

પ્રશ્ન—મનોયોગ પ્રતિસંલીનતા કિસે કહતે હૈં ?

ઉત્તર—અકુશલ મનોવ્યાપાર કા નિરોધ કરના ઓર કુશલ મન
કી પ્રવૃત્તિ કરના મનોયોગ પ્રતિસંલીનતા હૈ ।

પ્રશ્ન—વચનયોગપ્રતિસંલીનતા કિસે કહતે હૈં ?

ઉત્તર—અકુશલ વચનો કા નિરોધ કરના ઓર કુશલ વચનો
કી ઉદીરણા કરના વચનયોગપ્રતિસંલીનતા તપ હૈ ।

પ્રશ્ન—કાયયોગપ્રતિસંલીનતા કિસે કહતે હૈં ?

ઉત્તર—હાથો-પૈરોં કા સંગોપન કરના ઇન્દ્રિયોં કા ગોપન કરના
ઓર સમ્પૂર્ણ શરીરકા ગોપન કરના અર્થાત્ કાયિક વ્યાપાર કા નિરોધ
કર દેના કાયપ્રતિસંલીનતા તપ હૈ ॥૨૧॥

‘વિવિક્તસયનાસન’ ઇત્યાદિ સૂ. ૨૨

સૂત્રાર્થ—વિવિક્ત શયનાસન સેવનતા તપ કે અનેક ભેદ હૈં,
જૈસે-સ્ત્રી આદિ સૈ રહિત અનેક સ્થાનોં સૈ નિવાસ કરના આદિ ॥૨૨॥

પ્રશ્ન—વચનયોગપ્રતિસંલીનતા કેને કહે છે. ?

ઉત્તર—અકુશલ વચનોનો નિરોધ કરવો અને કુશલ વચનોની ઉદીરણા
કરવી વચનયોગપ્રતિસંલીનતા તપ છે.

પ્રશ્ન—કાયયોગપ્રતિસંલીનતા કેને કહે છે ?

ઉત્તર—હાથ પગોતું સંગોપન કરવું ઇન્દ્રિયોને ગોપવી અને સંપૂર્ણ
‘શરીરતું’ ગોપન કરવું અર્થાત્ કાયિક વ્યાપારનો નિરોધ કરી દેવો કાયપ્રતિ
સંલીનતા તપ છે ॥ ૨૧ ॥

‘વિવિક્તસયનાસનસેવણયા’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—વિવિક્ત શયનાસનસેવનતા તપના અનેક ભેદ છે જેવા કે—સ્ત્રી
આદિથી રહિત અનેક સ્થાનોમાં નિવાસ કરવા વગેરે— ॥ ૨૨ ॥

छाया—विविक्तशयनासनसेवनता तपो-ऽनेकविधं, स्थादिविरहिताऽनेक-स्थाननिवायभेदतः—'

तत्त्वार्थटीपिका—पूर्वतावत्-चतुर्विधप्रतिसंलीनतातपःसु यथाक्रममिन्द्रिय कषाययोगप्रतिसंलीनतातपस्रयं प्ररूपितम् सम्प्रति क्रममाप्तं चतुर्थं विविक्तशयना-सनसेवनतारूपं प्रतिसंलीनतातपः प्ररूपायतुमाह—'विविक्तशयनास्रण' इत्यादि । विविक्तशयनासनतपः—विविक्तानि दोषवर्जितानि यानि शयनासनानि, तेषां सेवनता—सेवनम्, तद्रूपं प्रतिसंलीनतातपोऽनेकविधं भवति । तद्यथा—स्थादिवि-रहिताऽनेक स्थाननिवासभेदतः, स्त्री-पशु-पण्डक-रहितेष्वनेकस्थानेषु-आरामो-घानादिषु प्रासुकैषणाय पीठ-फलक-शय्या संस्तारकमुपसंपद्य श्रमणो निवसति । अतएव-धर्मधर्मिणारभेदाद् विविक्तशयनासनसेवनतातपो भवति, तथाच-यत्किञ्च श्रमणोऽनगारः स्त्री-पशु-पण्डक संसर्गविरहितेष्वारामेषु कृत्रिमवनेषु-उद्यानेषु कुसुनकाननेषु यक्षकुलेषु, एव-स्त्री-पशु पण्डक वर्जितेषु स्थानेषु, स्थादिसं-सर्गरहितेषु सामान्यगृहगृहेषु चेत्येवमनेकस्थानेषु प्रासुकैषणीयं-प्रगता असवः असुमन्तः प्राणिनो यस्मात् तत् प्रासुकम्, अचित्तम् एकेन्द्रियादिजीववर्जितेषु, अतएव-एषणीयं निरवयं पीठ-फलक-शय्या-संस्तारक मुपसंपद्य तिष्ठतीति विविक्तशयनासनसेवनतातपो भवति ॥२२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—चार प्रकार के प्रतिसंलीनता तप में से पहले हन्द्रिय प्रतिसंलीनता कषायप्रतिसंलीनता का निरूपण किया गया, अब क्रमप्राप्त विविक्तशयनासनसेवनता नामक चौथे प्रतिसंलीनता तप का निरूपण करते हैं—

विविक्त अर्थात् दोषों से रहित शयन आसन का सेवन करना रूप तप विविक्त शयनासन सेवनता तप है । उसके अनेक भेद हैं, यथा-स्त्री, पशु और पण्डक से रहित अनेक स्थानों में अर्थात् बाग-बगीचा आदिमें प्रासुक एवं एषणीय पीठ, पाद, शय्या, संस्तारा आदि

तत्त्वार्थटीपिका—चार प्रकारना प्रतिसंलीनता तपमाथी पहले हन्द्रिय प्रतिसंलीनता, कषायप्रतिसंलीनता अने योगप्रतिसंलीनतानुं निरूपण करवाभां आठ्युं हुवे क्रमप्राप्त विविक्त शयनासनसेवनता नामक चौथा प्रतिसंलीनता तपनुं निरूपण करीश छीये—

विविक्त अर्थात् दोषाथी रहित शयन आसननुं सेवन करवा रूप तप विविक्त शयनासनसेवनता तप छे तेना अनेक लेह छे जेवाके स्त्री, पशु अने व्यंढण रहित अनेक स्थानोभां अर्थात् बागबगीचा बगेरेभां प्रासुक

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ:-પૂર્વે સ્તુ-ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા-કષાયપ્રતિસંલીનતાયોગ પ્રતિસંલીનતાતપસ્વયં પ્રરૂપિતમ્. સમ્પતિ-વિવિક્તશયનાસનસેવનતારૂપં ચતુર્થ પ્રતિસંલીનતાતપઃ પ્રરૂપયિતુમાહ-‘વિવિક્તસયનાસનસેવનયા તવે અખે-ગવિદે, રૂઢીઆહિરહિયા ખેગઢાણનિવાસમેદઝી’ રૂિતિ । વિવિક્તશયના-સનસેવનતાતપઃ--વિવિક્તાનિ દોષવર્જિતાનિ યાનિ શયનાસનાનિ, તેણાં સેવનતા-સેવનં, તપ્ત્વં પ્રતિસંલીનતાતપઃ સ્તુ અનેકવિધં મત્તિ । તત્ત્થા-૨૨પાદિવિરહિતા-ડનેકસ્થાનનિવાસમેદતઃ, તથા ચ-સ્ત્રીપશુપણ્ડકસંસર્ગવિરહિનેષ્વારામોદાનદેવકુલ પ્રપાપ્ત્યશાલાદિષુ અનેકસ્થાનેષુ નિવાસો મત્તિ શ્રમણાનાં પ્રાસુકૈષ્ણીયં પીઠફલ કશય્યાસંસ્તારકાડમ્યુપગમપૂર્વકમ્ અતઃ-ધર્મધર્મિણોરમેદવિવિક્ષયા વિવિક્ત-શયનાસનસેવનતારૂપં તપો મત્તિ, યતઃ કિલ શ્રમણોડનગારઃ સ્ત્રી પશુ પણ્ડકવર્જિ-

પ્રાપ્ત કરકે સાધુ નિવાસ કરતા હૈ, અતઃવ યહ તપ વિવિક્તશયનાસન સેવનતા કહલાતા હૈ ॥૨૨॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલે ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા કષાયપ્રતિસંલીનતા ઓર યોગપ્રતિસંલીનતા નામક ત્રીન સંલીનતા તપોં કા નિરૂપણ કિયા ગયા, અબ વિવિક્તશય્યાસનસેવનતા નામક ચોથે ભેદ કો કથન કરતે હૈ--

વિવિક્ત અર્થાત્ દોષવર્જિત શયન-આસન કા સેવન કરના વિવિક્તશયનાસનસેવનતા તપ કહલાતા હૈ । યહ તપ અનેક પ્રકાર કા હૈ, જૈસે-સ્ત્રી, પશુ ઓર પણ્ડક સે રહિત આરામ, ઉદ્યાન પ્રણ (પ્યાઝ) પળ્યશાલા આદિ અનેક સ્થાનોં સે શ્રમણ પ્રાસુક ઇવં ઇષ્ણીય પીઠ, ફલક, શય્યા ઓર સંસ્તારક આદિ પ્રાપ્ત કરકે નિવાસ કરતે હૈ । ડનકા હસ પ્રકાર નિવાસ કરના વિવિક્ત શયનાસનસેવનતા

અને ઇષ્ણીય પીઠ પાટ, શય્યા, સંધારો વગેરે પ્રાપ્ત કરીને સાધુ નિવાસ કરે છે આથી આ તપ વિવિક્ત શયનાસનસેવનતા તપ કહેવાય છે ॥૨૨॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ--પહેલા ઇન્દ્રિયપ્રતિસંલીનતા, કષાયપ્રતિસંલીનતા અને યોગપ્રતિસંલીનતા નામક ત્રણ સંલીનતા તપોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું હવે વિવિક્તશય્યાસનસેવનતા નામક ચોથા ભેદનું કથન કરીએ છીએ

વિવિક્ત અર્થાત્ દોષવર્જિત શયન આસનનું સેવન કરવું વિવિક્તશય નાસનસેવનતા તપ કહેવાય છે. આ તપ અનેક પ્રકારના છે જેમકે સ્ત્રી, પશુ અને નપુંસક વગરના આરામ ઉદ્યાન પરણ, ધર્મશાળા આદિ અનેક સ્થાનોમાં શ્રમણ પ્રાસુક અને ઇષ્ણીય પીઠ, ફલક શય્યા અને સંધારો આદિ પ્રાપ્ત કરીને નિવાસ કરે છે તેમનું આ પ્રમાણેનું નિવાસ કરવું વિવિક્તશય નાસનસેવનતા તપ કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે અનગાર શ્રમણ સ્ત્રી પશુ અને

તેજ્વારામોઘાનેષુ યક્ષકુલરૂપેષુ દેવકુલેષુ સ્ત્રીપશુપ્તકસમ્પર્કવર્જિતાસુ મમાસુ, પાનીયશાલારૂપાસુ પ્રપાસુ, વ્યવહારિકજનાધિષ્ઠિતેષુ પપ્પગૃહેષુ વહુદાયક ગ્રાહકજનયોગ્યારઘ્યાદિ સંસર્ગરહિતેષુ સામાન્યગૃહિગૃહેષુ દલતિરૂપેષુ ચેત્યેવં વિધાનેકસ્થાનેષુ પ્રાસુકમચિત્તમ્, ઇષ્ણીયં-નિરવચન પીઠ=ફલક-શય્યા-સંસ્તારકમ્-અશ્યુપગમ્ય તિષ્ઠતિ, તસ્માત્-શ્રમણાનાં વિવિક્તશયનાસનસેવનતા તપો-ભવતીતિમાવઃ । ઉક્તશ્રૌણપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘સે કિં તં વિવિક્તશયનાસનસેવનયા-? વિવિક્તશયનાસનસેવનયા-જં ણં આરામેસુ ઉચ્ચાનેસુ દેવ-કુલેસુ સહાસુ પવાસુ પ્પણિયગિહેસુ પ્પણિયલાલાસુ ફાસુ=પટ-પંડગસં-સત્તવિરહિયાસુ વસહીસુ ફાસુ=પ્પણીજતં પીઠ ફલક સેવજાસંધારગં ઉચ્ચંપજિજ્ઞાણં વિહરહ, સે તં વિવિક્તશયનાસનસેવનયા સે તં પઢિ સંલીળયા, સે તં વાહિરે તવે’ અથ કા મા વિવિક્તશયનાસનસેવનતા-? વિવિક્તશયનાસનસેવનતા-યત્ સ્વલ્પ આરામેષુ ઉચ્ચાનેષુ દેવકુલેષુ સહાસુ પ્રપાસુ પ્પણિતગૃહેષુ પ્પણિતશાલાસુ સ્ત્રીપશુપ્તકસંસક્તવિરહિતાસુ વસતિષુ પ્રાસુકૈષ્ણીયમ્

તપ કહલાતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ અનગાર શ્રમણ સ્ત્રી, પશુ ઓર નપુંસક કા સંસર્ગ ન હો એસે આરામોં ઓર ઉચ્ચાનોં તેં યક્ષાયતન રૂપ સમાસ્થલોં મેં પ્યાઝ મેં, દુકાન મેં તથા ગૃહસ્થ કે સામાન્ય સકાન મેં પ્રાસુક અર્થાત્ અચિત્ત ઓર ઇષ્ણીય અર્થાત્ નિર્દોષ પીઠ (પીઠા) ફલક (પાટ) શય્યા સૌર સંધારા ગ્રહણ કરકે રહતા હૈ । એના કરને સે વિવિક્તશયનાસનસેવનતા નામક તપ હોતા હૈ । ઔપપાતિક સૂત્ર મેં કહા હૈ—

પ્રશ્ન—વિવિક્તશયનાસનસેવનતા તપ કિસે કહતે હૈ ?

ઉત્તર—શ્રમણ આરામોં મેં, ઉચ્ચાનોં મેં, સભાઓં મેં પ્રપોઓં મેં, પ્રણિતશાલાઓં-ઇત્યાદિ મેં સ્ત્રી, પશુ ઓર પ્પણક સે રહિત સ્થાનોં મેં

નપુસકનો ન્યાં સંસર્ગ ન હોય એવા વિશ્રાન્તિગૃહો અને ઉદ્યાનોમા યક્ષા-યતન રૂપ સભાસ્થળોમા પરબમાં દુકાનમાં તથા ગૃહસ્થના સામાન્ય સકાનમાં પ્રાસુક અર્થાત્ અચિત્ત અને ઇષ્ણીય અર્થાત્ નિર્દોષ પીઠ (પીઠા) ફલક (પાટ) શય્યા અને સંધારો ગ્રહણ કરીને રહે છે. આ પ્રમાણે કરવાથી વિવિક્ત શય્યાસવસેવનતા નામક તપ થાય છે ઔપપાતિકસૂત્રમાં કહેલ છે—

પ્રશ્ન—વિવિક્ત શયનાસનસેવનતા તપ કેને કહે છે ?

ઉત્તર—શ્રમણ આરામોમાં, ઉદ્યાનોમાં, સભાઓમાં, પરબમાં, પ્રણિતશાળાઓ ઇત્યાદિમાં સ્ત્રી, પશુ અને પંડક (નપુંસક) રહિત સ્થાનોમાં

स्तद्रूपं तपो दर्शन-विनयतपः तद् द्विविधमस्मनति । तद्यथा-शुश्रूषणाविनयः १
अनत्याशातना विनयश्चेति, तत्र-विधिस्तु (पूर्वकं) सामीप्येन गुर्वादीनां सेवनं
शुश्रूषा तद्रूपं तपः शुश्रूषणा विनयतपः खलु-उच्यते, अनत्याशातना तपस्तावत्
अति-अतीव-आयः सम्यक्त्वादि लाभः इत्यतिशब्दार्थः तस्य आ-आसमन्तात्
शातना-ध्वंसना अत्याशातना । यद्वा-अति-अतीव आयः सम्यक्त्वादिलाभः
अत्यायः तस्य शातना 'पृषोदरादित्वाद् य लोपे' अत्याशातना तदभावो विनयो-
ऽनत्याशातनाविनयः तद्रूपं तपोऽनत्याशातना विनय तप उच्यते, गुर्वादेरवर्णवा-
दादि निवारणरूपमित्येवं द्विविधं खलु दर्शनविनयतपो भवतीति भावः ॥२४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वं खलु-सप्तविधेषु विनयतपःसु प्रथमोपात्तं ज्ञानविनय
तपः पञ्चविधत्वेन प्ररूपितम्, आमिनिबोधिक ज्ञानविनयादि भेदात्, सम्प्रति-

दर्शन संबंधी विनय को दर्शनविनय कहते हैं । इसके दो भेद हैं-
शुश्रूषाविनय और अनत्याशातना विनय । यथोचित विधि के अनुसार
गुरु आदि की सेवा करना शुश्रूषा विनय तप कहलाता है ।

अति सम्यक्त्व आदि का लाभ होना 'अति' कहलाता है । 'आ'
उपसर्ग का आशय है-खूब या पूरी तरह और 'शातना' अर्थात्
नष्ट करना । 'अन्' निषेध का सूचक है । इस प्रकार अनत्याशातना
का अर्थ हुआ सम्यक्त्व आदि के लाभ को नष्ट न करना अर्थात् सम्य-
क्त्व आदि का विनाश करने वाला कोई कार्य न करना । यही अनत्या-
शातना तप कहलाता है, जैसे गुरु आदि का अवर्णवाद न करना आदि ।
इस प्रकार दर्शन विनय के दो भेद होते हैं ॥२४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पूर्वोक्त विनय तप के सात भेदों में से ज्ञान
विनय तप के पांच भेदों का निरूपण किया गया, अब दर्शन विनय

ने दर्शन विनय कहे छे अेना जे लेह छे-शुश्रूषाविनय अने अनत्याशातना
विनय योग्यविधि अनुसार गु३ आदिनी सेवा करवी शुश्रूषाविनय तप कहेवाय छे

अति सम्यक्त्व आदिने लाल थवे 'अति' कहेवाय छे. 'आ' उपसर्गने
आशय छे-घाणु अथवा संपूर्ण रीते शातना अर्थात् नाश करवुं 'अन्'
निषेधनुं सूचक छे आ रीते अनत्याशातनाने अर्थ थये सम्यक्त्व वगेरेना
लालने नष्ट न करवा अर्थात् सम्यक्त्व आदिने विनाश करनाइं कोह कृत्य
न करवुं आ अनत्याशातना विनय तप कहेवाय छे जेवी रीते गु३ वगेरेने
अवर्णवाद न करवे वगेरे. आवी रीते दर्शन विनय तपना जे लेह होय छे ॥२४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वोक्त विनयतपना सात भेदोभांशी ज्ञानविनय
तपना पांच भेदोनुं निरूपय करवामां आण्युं, हवे दर्शन विनय तपना जे

દ્વિતીયં દર્શનવિનયતપો દ્વિન્ધ્યેન પ્રરૂપણિતુમાહ—‘દંમળાવિણયતવે દૃવિહે’
 સુસ્ત્વ મળાવિણય અણચ્ચાત્માયનાવિણય ચ’ ઇતિ । દર્શનવિનયતપઃ—દર્શન-
 મોહનીયક્ષયાદિ જનિતસ્તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ આત્મપરિણતિવિશેષો દર્શનમ્ તત્સ-
 મ્બન્ધી વિનયો દર્શનવિનયો પૃષોદરાદિત્વાસિદ્ધિ સ્તદ્રૂપં તપો દર્શનવિનયતપઃ
 સ્વલુ દ્વિવિધ મયતિ । તત્રથા—શુશ્રૂષણા વિનયતપઃ ૧ અનત્યાશાતના વિનયતપઃ ૨
 ચેત્યેવં તાવદ્ દ્વિવિધં દર્શનવિનયતપો મયતિ । તત્ર—વિધિપૂર્વકં સામીપ્યેના
 ડડચાર્યોપાધ્યાયાદિગુર્યાદેઃ સેવનરૂપા શુશ્રૂષણા તદ્રૂપો વિનયઃ શુશ્રૂષણા વિનયઃ
 તત્સ્વરૂપં તપઃ શુશ્રૂષણાવિનય તપ ઉચ્યતે । અત્યાશાતના તન્નિષેધરૂપો વિનયઃ
 અનત્યાશાતનાવિનયઃ ગુર્વાદેરર્ણવાદાદિ નિવારણરૂપઃ, તત્સ્વરૂપં તપોડનત્યાશાતના
 તપ ઉચ્યતે । અથવા—અતિશયેનાડડયઃ સમ્યક્ત્વાદિ લાભોડત્યાયઃ તસ્ય શાતના-
 ધ્વંસનાડન્યાશાતના તન્નિષેધરૂપો વિનયોડનત્યાશાતનાવિનયઃ, તદ્રૂપં તપોડનત્યા-

તપ કે દો મેદોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

દર્શન મોહનીય કર્મ કે ક્ષય, ઉપશમ યા ક્ષયોપશમ કા ઉત્પન્ન
 તત્ત્વાર્થ શ્રદ્ધાન રૂપ આત્મ પરિણામ દર્શન કહલાતા હૈ । દર્શન કા વિનય
 દર્શન વિનય તપ હૈ । દર્શન વિનય તપ દો પ્રકાર કા હૈ—શુશ્રૂષણા
 દર્શન વિનય તપ ઓર અનત્યાશાતના દર્શન વિનય તપ । વિધિપૂર્વક,
 સમીપ રહકર આચાર્ય, ઉપાધ્યાય એવં ગુરુ આદિ કી સેવા કરના શુશ્રૂષણા
 વિનય હૈ, ફસી કો શુશ્રૂષણા વિનય તપ કહતે હૈ । ગુરુ આદિ કા અવર્ણ-
 વાદ ન કરના અનત્યાશાતનાવિનય અથવા અનત્યાશાતના તપ કહલાતા
 હૈ । અથવા સમ્યક્ત્વ આદિ કે અતિશય આય (લાભ) કો ‘અત્યાય’
 કહતે હૈ । ફસ ‘અત્યાય’ કી શાતના અર્થાત્ ધ્વંસના (વિનાશ) કરના
 અત્યાશાતના હૈ । ‘અત્યાશાતના’ કા નિષેધ ‘અનત્યાશાતના’ તપ કહ-

લેદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ—

દર્શનોહનીય કર્મના ક્ષય, ઉપશમ અથવા ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન તત્ત્વાર્થ
 શ્રદ્ધાન રૂપ આત્મપરિણામ દર્શન કહેવાય છે. દર્શનનો વિનય દર્શનવિનયતપ
 છે. દર્શનવિનય તપ બે પ્રકારના છે—શુશ્રૂષણાદર્શનવિનય તપ અને અનત્યા-
 શાતના દર્શનવિનય તપ વિધિપૂર્વક સાન્નિધ્યમાં રહીને આચાર્ય, ઉપાધ્યાય અને
 ગુરુ આદિની સેવા કરવી શુશ્રૂષણાવિનય છે અને જ શુશ્રૂષણાવિનય તપ કહે છે.
 ગુરુ વગેરેનો અવર્ણવાદ ન કરવો અનત્યાશાતના વિનય અથવા અનત્યાશાતના
 તપ કહેવાય છે અથવા સમ્યક્ત્વ આદિનો અતિશય આય (લાભ) ને અત્યાય
 કહે છે. આ ‘અત્યાય’ની શાતના અર્થાત્ ધ્વંસના (વિનાશ) કરવો અત્યાશાતના
 છે. ‘અત્યાશાતના’ નો નિષેધ ‘અનત્યાશાતના’ તપ કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે

શાતના તપો ભવતિ ॥ ઉક્તશ્ચૌપપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘સે કિં તં દંસણવિણે ? દંસણવિણે દુવિહે પળ્લણ્ણે, તં જહા-સુસ્સુસણા વિણે અણચ્ચાસા-યણાવિણે ૨’ इति । अथ कोऽसौ दर्शनविनयः ३ दर्शनविनयो द्विविधः प्रज्ञप्तः तद्यथा-शुश्रूषणाविनयः १ अनत्याशातनाविनयः २ इति ॥२४॥

મૂલમ્-સુસ્સુસણાવિણયતવે અળેગવિહે, અભ્યુદ્ધાણાઈ મેયઓ ॥૨૫॥

છાયા-શુશ્રૂષણાવિનયતપોઽનેકચ્છિદ્રમ્, અભ્યુત્થાનાદિ ભેદતઃ ॥૨૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વ તાવદ્-દ્વિવિધં દર્શનવિનયતપો સ્વતીત્યુક્તમ્, શુશ્રૂષણાવિનયાઽનત્યાશાતના વિનયભેદાત્, સમ્પતિ-તત્ર પ્રથમોપાત્તં શુશ્રૂષણા વિનય-તપઃ પ્રરૂપયિતુમાહ-‘સુસ્સુસણાવિણયતવે’ इत्यादि । शुश्रूषणाविनयतपः-विधि

લાતા હૈ । तात्पर्य यह है कि कोई कार्य न करना जिससे सम्पत्त-चारित्र आदि गुणों का नाश हो, वह अनत्याशातना विनय है । औपपातिक सूत्र में कहा भि है-

પ્રશ્ન-દર્શન વિનય કે કિતને ભેદ હૈં ?

ઉત્તર-દર્શન વિનય તપ કે દો ભેદ હૈં- શુશ્રૂષણાવિનય ઔર અનત્યાશાતના વિનય ॥૨૪॥

‘સુસ્સુસણાવિણય તવે અળેગવિહે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ--અભ્યુત્થાન આદિ કે ભેદ સે શુશ્રૂષણા વિનય અનેક પ્રકાર કા હૈ ॥૨૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા--પહેલે કહા ગયા થા કિ દર્શન વિનય તપ દો પ્રકાર કા હૈ-શુશ્રૂષણા વિનય ઔર અનત્યાશાતના વિનય, અવ્ હનમેં સે પહેલે શુશ્રૂષણા વિનય તપ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ--

કે એવુ કોઈ કાર્ય ન કરવું જોઈએ કે જેથી સમ્પત્ત-ચારિત્ર આદિ ગુણોનો નાશ થાય અને આજ અનત્યાશાતનાવિનય છે. ઔપપાતિક સૂત્રમાં કહ્યું છે.

પ્રશ્ન-દર્શનવિનયના કેટલા ભેદ છે ?

ઉત્તર-દર્શનવિનય તપના બે ભેદ છે-શુશ્રૂષણાવિનય અને અનત્યાશાતનાવિનય ॥ ૨૪ ॥

‘સુસ્સુસણાવિણયતવે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ--અભ્યુત્થાન આદિના ભેદથી શુશ્રૂષણાવિનય અનેક પ્રકારના છે ॥૨૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલા કહેવામાં આવ્યું. કે દર્શનવિનય તપ બે પ્રકારના છે શુશ્રૂષણાવિનય અને અનત્યાશાતનાવિનય, હવે એ બંનેમાંથી પહેલા શુશ્રૂષણાવિનય તપની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ.

પૂર્વકં ગુર્હાદેઃ સેવનરૂપા શુશ્રૂષણા તદ્રૂપં તપઃ શુશ્રૂષણા વિનયતપ ઉચ્યતે, તત્ત્વા-
 ડનેકવિધમ્ । તથા—અભ્યુત્થાનાદિભેદતઃ, તથાચાઽભ્યુત્થાનવિનયતપઃ ૧
 આદિના—આસનાઽભિગ્રહવિનયતપઃ ૨ આસનપ્રદાનવિનયતપઃ ૩ સત્કારવિનય
 તપઃ ૪ સન્માનવિનયતપઃ ૫ કૃતિકર્મવિનયતપઃ ૬ અંજલિપ્રગ્રહવિનયતપઃ ૭
 આગચ્છતોઽનુગમનતારૂપતપઃ ૮ સ્થિતસ્ય પર્યુપાસના વિનયતપઃ ૯ ગચ્છતઃ
 પશ્ચાદનુગમણીલતા રૂપતપઃ ગચ્છતઃ પ્રતિસંસાધનતાતપ ઉચ્યતે-૧૦ इत्येवं रीत्या-
 ડનેકવિધં સ્વલુ શુશ્રૂષણાવિનયતપો ભવતીતિ ભાવઃ । તન્નાઽઽચાર્યાદે રાગત-
 સ્યાઽભિમુખમ્ ઉત્પાનમ્ વિનયાર્હસ્યાઽઽચાર્યાદે દર્શનાદેવાઽસનત્યાગો ભવતિ,
 તથાવિધાઽભ્યુ-થાનરૂપો વિનયઃ અભ્યુત્થાનવિનયઃ તદ્રૂપં તપોઽભ્યુત્થાનવિનયતપો
 ભવતીતિભાવઃ । एवम्—આસનાઽભિગ્રહવિનયતપસ્તુ—આચાર્ય—ગુર્હાદિર્યત્ર યત્રોપ—

વિધિપૂર્વક ગુરુ આદિ કી સેવા કરના શુશ્રૂષણા વિનય કહલાતા
 હૈ । उसके अनेक भेद हैं, यथा—(१) अभ्युत्थानविनय तप (२) आसना-
 भिग्रह विनय तप (३) आसन प्रदान विनय तप (४) सत्कारविनय तप
 (५) सन्मान विनय तप (६) कृतिकर्म विनय तप (७) अंजलिप्रग्रहविनय
 तप (८) गुरु आदि बडे आते हुए के सम्मुख जाना रूप विनय तप (९)
 स्थित की उपासना रूप विनय तप (१०) जाते हुए के पीछे जाना रूप
 तप, इस प्रकार शुश्रूषणा विनय तप अनेक प्रकार का है । इनका
 स्वरूप यह है—

(१) आचार्य आदि पर दृष्टि पडते ही आसन त्याग देना, उनकी
 ओर मुख करके खडा हो जाना अभ्युत्थान विनय कहलाता है । (२)
 आचार्य या गुरु आदि जहां—कहीं बैठने की इच्छा करें वहीं आसन

વિધિપૂર્વક ગુરુ આદિની સેવા કરવી શુશ્રૂષણાવિનય કહેવાય છે તેના
 અનેક ભેદ છે જેમકે—(૧) અભ્યુત્થાનવિનય તપ (૨) આસનાભિગ્રહવિનય તપ
 (૩) આસનપ્રદાનવિનયતપ (૪) સત્કારવિનયતપ (૫) સન્માનવિનયતપ (૬)
 કૃતિકર્મવિનયતપ (૭) અંજલિપ્રગ્રહવિનયતપ (૮) ગુરુ વગેરે વડીલ આવતા
 હોય ત્યારે તેમની સન્મુખ જવું, (૯) સ્થિતની ઉપાસના રૂપ તપ (૧૦)
 જનારાની પાછળ જવા રૂપ તપ, આ રીતે શુશ્રૂષણાવિનય તપ અનેક પ્રકાર
 છે. એનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—

(૧) આચાર્ય આદિ પર દ્રષ્ટિ પડતા જ આસન છોડી દેવું તેમની
 સન્મુખ ઉભા થઈ જવું અભ્યુત્થાનવિનય તપ કહેવાય છે. (૨) આચાર્ય
 અથવા ગુરુ આદિ જ્યાં કોઈ સ્થળે બેસવાની ઇચ્છા પ્રદર્શિત કરે ત્યાં જ

पीठ फलकशय्यासंस्तारकमुपसंग्रह्य खलु विहरति, सा-एषा विविक्तशयनासन-
सेवनता, सा-एषा प्रतिसंलीनता, तदेतद् बाह्यं तपः ॥२२॥

मूलम्—छविहेसु अविभक्ततरतवेसु जाणविणयतवे पंचविहे,
आभिणिबोहिय जाणविणयाइ भेयओ ॥२३॥

छाया—‘पञ्चविधेषु-आभ्यन्तरतपःसु ज्ञानविनयतपः पञ्चविधम्, आभिनि-
बोधिकज्ञानविनयादि भेदतः ॥२३॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावत् कर्मनिर्जराहेतुभूतं षड्विधमपि बाह्यं तपः
सविस्तरं प्ररूपितम्—तस्मिन् कर्मनिर्जरा हेतुभूतषड्विधाभ्यन्तरतपःसु प्रथमो-
पात्तप्रायश्चित्ततपसः पूर्वं प्ररूपणं कृतम्, सम्प्रति-क्रमप्राप्तद्वितीयाभ्यन्तर-
तपोविशेषसप्तविधदिनयेषु प्रथमं ज्ञानविनयतपः प्ररूपयितुमाह—‘छविहेसु’
इत्यादि । पूर्वोक्तेषु षड्विधेषु प्रायश्चित्ताद्याभ्यन्तरतपःसु द्वितीयस्य सप्तविध
विनयतपसः प्रथमं तावद् ज्ञानविनयतपः पञ्चविधं भवति । तद्यथा—आभिनि-

निवास करता है, यह विविक्त शयनासनसेवनता तप है । यहाँ प्रति-
संलीनता तप और बाह्य तपो का प्ररूपण पूर्ण हुआ ॥२२॥

‘छविहेसु अविभक्ततरतवेसु’—इत्यादि सू० २३

सूत्रार्थ—छह प्रकार के आभ्यन्तर तपो में ज्ञानविनयतप के पांच भेद
हैं, आभिनिबोधिकज्ञानविनय आदि ॥२३॥

तत्त्वार्थदीपिका—कर्मनिर्जरा के हेतु छह प्रकार के बाह्य तप का
विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया, अब कर्मनिर्जरा के हेतु छह प्रकार
के आभ्यन्तर तप में सर्वप्रथम गिने जाने वाले प्रायश्चित्त तप का
पहले निरूपण हो चुका है, अतः क्रमप्राप्त दूसरे विनयतप में सर्वप्रथम
ज्ञानविनय तप की प्ररूपणा करते हैं—

निवास કરે છે. આ વિવિક્તશયનાસનસેવનતા તપ છે અને પ્રતિસંલીનતા
તપ અને બાહ્ય તપોનું પ્રરૂપણ સમાપ્ત થયું. ॥ ૨૨ ॥

‘છવિહેસુ અવિભક્તરતવેસુ’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—છ પ્રકારના આભ્યન્તર તપોમાં જ્ઞાનવિનય તપના પાંચ ભેદ
છે, આભિનિબોધિકજ્ઞાનવિનય આદિ ॥ ૨૩ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—કર્મનિર્જરાના હેતુ છ પ્રકારના બાહ્ય તપનું વિસ્તાર
પૂર્વક વર્ણન કરવામાં આવ્યું, હવે કર્મનિર્જરાના હેતુ છ પ્રકારના આભ્ય
ન્તર તપમાં સર્વપ્રથમ ગણવામાં આવતા પ્રાયશ્ચિત્ત તપનું પહેલા નિરૂપણ
થઈ ગયું છે આથી ક્રમપ્રાપ્ત બીજા વિનય તપમાં સર્વપ્રથમ જ્ઞાનવિનય તપ
ની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ

બોધિકજ્ઞાનવિનયાદિ ભેદતઃ, તથા ચ-આભિનિબોધિકજ્ઞાનવિનયઃ ૧ આદિના શ્રુતજ્ઞાનવિનયઃ ૨ અવધિજ્ઞાનવિનયઃ ૩ મનઃપર્યવજ્ઞાનવિનયઃ ૪ કેવલજ્ઞાનવિનયશ્ચ ૫ इत्येवं पञ्चविधं खलु ज्ञानविनयतपो भवतीति बोध्यम् । तत्राऽऽभिनिबोधिकज्ञानं मतिज्ञानरूपम् तस्य विनयः विनयति-अपनयति ज्ञानाद्यावरणाद्यष्टविधं कर्माणीति विनयः अभ्युत्थान-वन्दन-शुश्रूषा भक्त्यादिरूपः आभिनिबोधिक ज्ञानविनयः तद्रूपं तप आभिनिबोधिकज्ञानविनय तप उच्यते । एवं श्रुतज्ञानविनयतपः अवधिज्ञानविनयतपः, मनःपर्यवज्ञानविनयतपः, केवलज्ञानविनय तपश्चापि बोध्यम् ॥२३॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિઃ-પૂર્વં તાવન્નિર્જરાહેતુત્વેનોક્તેષુ પ્રાયશ્ચિત્તાદિ પદ્ધતિવા-
ખ્યન્તરતપઃસુ પ્રાયશ્ચિત્તં તપઃ પૂર્વં પ્રરુપિતમ્, સપ્તવિધં વિનયતપશ્ચ પ્રરુપિતમ્,
સમ્પ્રતિ તેષુ સપ્તવિધેષુ વિનયતપઃસુ પ્રથમં જ્ઞાનવિનયતપઃ પ્રરુપયિતુમાદ-‘છવિ-

સાત પ્રકાર કે વિનયતપ મેં જ્ઞાનવિનય તપ પાંચ પ્રકાર કા હૈ ।
(૧) આભિનિબોધિકજ્ઞાનવિનય (૨) શ્રુતજ્ઞાનવિનય (૩) અવધિજ્ઞાન-
વિનય (૪) મનઃપર્યવજ્ઞાનવિનય ઓર (૫) કેવલજ્ઞાનવિનય । આભિ-
નિબોધિકજ્ઞાન કા અર્થ મતિજ્ઞાન હૈ । જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠોં કર્મ
જિસસે હટતે હૈં ઉસે વિનય કહતે હૈ । અભ્યુત્થાન, વન્દન શુશ્રૂષા,
ભક્તિ આદિ વિનય કે અન્તર્ગત હૈં । આભિનિબોધિકજ્ઞાન એવં જ્ઞાન
વાન્ કે પ્રતિ યથાયોગ્ય આદરભાવ હોના આભિનિબોધક જ્ઞાન
વિનય હૈ, હસી પ્રકાર શ્રુતજ્ઞાનવિનય અવધિજ્ઞાનવિનય મનઃ
પર્યવજ્ઞાનવિનય ઓર કેવલજ્ઞાનવિનય બી સમજા લેના ચાહિયે ૨૪

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ--નિર્જરા કે કારણ કહે ગયે પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ છહ
આખ્યન્તર તપોં મેં સે પહેલે પ્રાયશ્ચિત્ત તપ કા પ્રરુપણ ક્રિયા જા ચુકા,

સાત પ્રકારના વિનયતપમાં જ્ઞાન વિનય તપ પાંચ પ્રકારના છે-(૧)
આભિનિબોધિકજ્ઞાનવિનય (૨) શ્રુતજ્ઞાનવિનય (૩) અવધિજ્ઞાનવિનય (૪) મનઃ
પર્યવજ્ઞાનવિનય અને (૫) કેવળજ્ઞાનવિનય. આભિનિબોધિકજ્ઞાનનો અર્થ મતિ
જ્ઞાન છે. જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠે કર્મો બેનાથી દૂર થાય છે તેને વિનય કહે
છે અભ્યુત્થાન, વન્દન, શુશ્રૂષા, ભક્તિ આદિ વિનયના અન્તર્ગત છે આભિનિ
બોધિક જ્ઞાન અને જ્ઞાનવાન્ પ્રત્યે યથાયોગ્ય આદર ભાવ હોવો આભિનિબોધિક
જ્ઞાનવિનય છે. એવી જ રીતે શ્રુતજ્ઞાનવિનય, અવધિજ્ઞાનવિનય, મનઃપર્યવ-
જ્ઞાનવિનય અને કેવળજ્ઞાનવિનય પણ સમજી લેવા જોઈએ ॥ ૨૪ ॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ-નિર્જરાના કારણ તરીકે કહેવામાં આવેલા પ્રાયશ્ચિત્ત
આદિ છ આખ્યન્તર તપોમાંથી પહેલા પ્રાયશ્ચિત્ત તપનું પ્રરૂપણ કરવામાં

હેસુ અભિનિવોદિતવેસુ જ્ઞાનવિનયતપસે પંચવિદે, આભિનિવોદિતવેસુ
વિનયતપસે-” ઇતિ । પદ્ધતિવેસુ પૂર્વોક્તેષુ આભ્યન્તરતપસુ પ્રથમોપાત્તં
જ્ઞાનવિનયતપસઃ પંચવિદં ભવતિ । તથા-આભિનિવોદિકજ્ઞાનવિનયાદિ
ભેદતઃ, તથા ચ-વિનયતપસિ અપનયતિ જ્ઞાનવિનયાદિવિધકર્માણીતિ વિનયઃ, તદ્વપ્તં
તપ આભિનિવોદિકજ્ઞાનવિનય તપ ઉચ્યતે આભિનિવોદિકજ્ઞાનમેવ મતિજ્ઞાન
મુચ્યતે ૧ આદિના-શ્રુતજ્ઞાનવિનયઃ ૨ અવધિજ્ઞાનવિનયઃ ૩ મનઃપર્યવજ્ઞાનવિનયઃ ૪
કેવલ જ્ઞાનવિનયશ્ચેત્યે ૫ વં પંચવિદં સ્વલ્પ આભ્યન્તરજ્ઞાનવિનયતપો ભવતિ ॥
ઉક્તશ્ચોપપાતિકે-૩૦ સૂત્રે-‘સે કિં તં જ્ઞાનવિનય-? જ્ઞાનવિનય પંચવિદે
પણ્ણત્તે, તં જહા-આભિનિવોદિતવેસુ જ્ઞાનવિનય-૧ સુવજ્ઞાનવિનય-૨
ઓહિજ્ઞાનવિનય-૩ મળપજ્ઞાનવિનય-૪ કેવલજ્ઞાનવિનય-૫
ઇતિ । અથ કઃ સ જ્ઞાનવિનયઃ ? જ્ઞાનવિનયઃ પંચવિદઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા-આભિનિ-

જ્ઞાનવિનય તપના પાંચ ભેદ છે-(૧) આભિનિવોદિક જ્ઞાનવિનય તપ (૨) શ્રુતજ્ઞાનવિનય તપ (૩) અવધિ જ્ઞાનવિનય તપ (૪) મનઃ પર્યાય જ્ઞાનવિનય તપ (૫) કેવલજ્ઞાનવિનય તપ । જો જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોં કો દૂર કરતા હોય, તેને વિનય કહેવાય છે । આભિનિવોદિક જ્ઞાનનો અર્થ મતિજ્ઞાન છે । આ પ્રકારના જ્ઞાનના પાંચ ભેદ હોવાથી જ્ઞાનવિનયના પાંચ ભેદ છે, ઔપપાતિક સૂત્રના ૩૦માં સૂત્રમાં કહેવાય છે-

પ્રશ્ન-જ્ઞાનવિનયના કેટલા ભેદ છે ?

ઉત્તર-પાંચ ભેદ છે-(૧) આભિનિવોદિક જ્ઞાનવિનય (૨) શ્રુતજ્ઞાન-

આભિનિવોદિક જ્ઞાનવિનય તપના પાંચ ભેદ છે-(૧) આભિનિવોદિકજ્ઞાનવિનય તપ (૨) શ્રુતજ્ઞાનવિનય તપ (૩) અવધિજ્ઞાનવિનય તપ (૪) મનઃપર્યાયજ્ઞાનવિનય તપ (૫) કેવલજ્ઞાનવિનય તપ જે જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોંને દૂર કરે છે તેને વિનય કહેવાય છે । આભિનિવોદિક જ્ઞાનનો અર્થ મતિજ્ઞાન છે । આ પ્રકારના જ્ઞાનના પાંચ ભેદ હોવાથી જ્ઞાનવિનયના પાંચ ભેદ છે । ઔપપાતિક સૂત્રના ૩૦માં સૂત્રમાં કહેવાય છે-

પ્રશ્ન-જ્ઞાનવિનયના કેટલા ભેદ છે ?

ઉત્તર-પાંચ ભેદ છે-(૧) આભિનિવોદિકજ્ઞાનવિનય (૨) શ્રુતજ્ઞાનવિનય

बोधिकज्ञानविनयः, श्रुतज्ञानविनयः अवधिज्ञानविनयः, मनःपर्यवज्ञानविनयः, केवलज्ञानविनयश्चेति ॥२३॥

मूलम्—दंसणविणयतवे दुविहे, सुस्सूसणाविणए, अणच्चा-
सायणाविणए य ॥२४॥

छाया—दर्शनविनयतपो द्विविधम्, शुश्रूषणाविनयः—अनत्याशातनाविनयश्च ॥२४॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावत् विनयतपः सप्तविधं प्रतिपादितम्, ज्ञान विनय—दर्शनविनयादि भेदात् तत्र—प्रथमोपात्तं ज्ञानविनयतपः पञ्चविधत्वेन प्ररूपितम्, सम्प्रति—दर्शनविनयतपो द्वैविध्येन प्ररूपयितुमाह—‘दंसणविणय तवे’ इत्यादि । दर्शनविनयतपः—तत्र—दर्शनम् दर्शनमोहनीय क्षयादि जनित स्तत्त्वार्थश्रद्धानरूपआत्मपरिणतिविशेष स्तत्सम्बन्धी विनयो दर्शनविनय विनय (३) अवधि ज्ञानविनय (४) मनःपर्यव ज्ञानविनय (५) केवल ज्ञानविनय ॥२३॥

‘दंसणविणयतवे दुविहे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—दर्शन विनय दो प्रकार का है—शुश्रूषा विनय और अनत्याशातना विनय ॥२४॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले विनय तप सात प्रकार का बतलाया गया था, जैसे ज्ञानविनय, दर्शनविनय आदि । इनमें से प्रथम ज्ञानविनय के पांच भेदों का कथन किया जा चुका, अब दर्शनविनय तप के दो भेदों की प्ररूपणा करते हैं—

दर्शन मोहनीय कर्म के क्षय, उपशम अथवा क्षयोपशम से उत्पन्न होने वाला तत्त्वार्थ श्रद्धान रूप आत्म परिणाम दर्शन कहलाता है ।

(३) अवधिज्ञानविनय (४) मनःपर्यवज्ञानविनय (५) केवलज्ञानविनय ॥ २३ ॥

‘दंसणविणयतवे दुविहे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—दर्शनविनय के प्रकारना छे—शुश्रूषाविनय अने अनत्या शातना विनय ॥ २४ ॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहिला विनयतप सात प्रकारना बताववामां आब्या छे जेवाके ज्ञानविनय, दर्शनविनय आदि आमांथी प्रथम ज्ञानविनयना पांच लेहो। तुं कथन करवामां आब्युं छेवे दर्शन विनय तपना के लेहानी प्ररूपणा करीये छीये—

दर्शनमोहनीय कर्मना क्षय उपशम अथवा क्षयोपशमथी उत्पन्न थनारा तत्त्वार्थश्रद्धान रूप आत्म परिणाम दर्शन कहैवाय छे, दर्शन सम्बन्धी विनय

वेष्टुमिच्छति तत्र-तत्राऽऽसनस्थापनम्-आसनाभिग्रहविनयतपो भवति । आसन प्रदानविनयस्तु-अचार्यादि गुरुषु समागतेषु सत्सु आसनदानम्भवति तद्रूपो विनयस्तदात्मकं तप आसनविनयतपो भवति । विनयार्हस्याऽऽचार्यादे र्वन्दना-दिनाऽऽदरं सत्कार उच्यते तद्रूपो विनयः सत्कारविनयः तद्रूपं तपः सत्कार विनयतपो व्यपदिश्यते ? एवं-गुर्वादीना आहारवस्त्रादि प्रशस्तवस्तुभिः सम्माननं सम्मान स्तद्रूपो विनयः सम्मानविनय रत्तदात्मकं तपः सम्मानविनयतप उच्यते । एवं-गुर्वादीनां यथाविधि वन्दनं कृतिकर्म तद्रूपं विनयतपः कृतिकर्म विनयतप उच्यते । एवं-गुरुसम्मुखेऽञ्जलीकरणम्-अञ्जलिप्रग्रहः तद्रूपं विनयतपोऽञ्जलिप्रग्रह विनयतप उच्यते । एवम्-आगच्छतं गुर्वादिकं प्रति सम्मुखे गमनम् आगच्छतो-ऽनुगमनता तद्रूपं विनयतपः आगच्छतोऽनुगमनता विनयतप उच्यते । एवम्-उपविष्टस्याऽऽचार्यादेरिच्छाऽनुकूलसेवा स्थितस्य पर्युपासनताः तद्रूपं विनयतपः स्थितस्य पर्युपासनता विनयतप उच्यते । एवम्-गच्छत आचार्यादेः पश्चादनुसरण-

विच्छा देना आसनाभिग्रह तप कहलाता है। (३) आचार्य, गुरु आदि का आगमन होने पर आसन प्रदान करना आसन प्रदान विनय कहलाता है। (४) विनय के योग्य आचार्य आदि का वन्दना आदि द्वारा आदर करना सत्कार विनय कहलाता है। (५) गुरु आदि का आहार वस्त्र आदि प्रशस्त वस्तुओं द्वारा सम्मानकरना सम्मान विनय तप कहलाता है। (६) गुरु आदि की विधि के अनुसार वन्दन करना कृतिकर्म विनय है। (७) गुरु के सामने हाथ जोड़ना अंजलिप्रग्रह विनय है। (८) आते हुए गुरु आदि के सम्मुख जाना भी एक प्रकार का विनय है। (९) आचार्य आदि की इच्छा के अनुसार सेवा करना, बैठे की उपासना करना पर्युपासनता विनय है। (१०) इसी प्रकार आचार्य आदि जाने

आसन पाथरी देवुं आसनाभिग्रहतप कहेवाय छे. (३) आचार्य, गुरु आदि ना आगमन प्रसंगे आसन प्रदान करवुं आसनप्रदानविनय तप कहेवाय छे. (४) विनयने योग्य आचार्य आदिने वंदना द्वारा आदर करवे। सत्कार विनय कहेवाय छे. (५) गुरु आदिनुं आहार-वस्त्र आदि प्रशस्त वस्तुओं द्वारा सम्मान करवुं सम्मानविनय तप कहेवाय छे. (६) गुरु आदिने विधि अनुसार वंदन करवुं कृतिकर्मविनय छे. (७) गुरुनी सामे हाथ जोडवा अंजलिप्रग्रहविनय छे. (८) आगमन करतां गुरु आदिनी सामा जवुं यष्टु ओक प्रकारने विनय छे (९) आचार्य आदिनी इच्छा अनुसार सेवा करवी, ओसेवा होय ओनी उपासना करवी पर्युपासनता विनय छे. ओवी न रीते

શીલતા તદ્વૃપં વિનયતપો ગચ્છતોઽનુગમનતા વિનયતપ ઉચ્યતે, इत्येवमनेकविधं तावत्-शुश्रूषा विनयतपो भवति ॥२५॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિઃ—પૂર્વં સ્વલ્પ દ્વિવિધં દર્શન-વિનયતપઃ પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પ્રતિ તત્ર પ્રથમોપાત્તં શુશ્રૂષણા વિનયતપઃ પ્રરૂપયિતુમાહ—‘સુસ્સૃષ્ટણા વિનય તવે અણેગદિહે, અન્સુદ્ધાણાહ એયમ્’ इति शुश्रूषणा विनयतपः—વિધિપૂર્વકં સામીપ્યેનાઽઽચાર્યાદીનાં સેવનં શુશ્રૂષણા તદ્વૃપં વિનયતપઃ સ્વલ્પ-અનેકવિધં ભવતિ અભ્યુત્થાનાદિ રોદતઃ । તથા ચાઽભ્યુત્થાનવિનયતપઃ ૧ આદિનાઽઽસનાભિગ્રહ વિનયતપઃ ૨ આસનપ્રદાનવિનયતપઃ ૩ સત્કારવિનય તપઃ ૪ સન્માનવિનયતપઃ કૃતિકર્મવિનયતપઃ ૬ અંજલિપ્રગ્રહવિનયતપઃ ૭ અનુગમનતા વિનયતપઃ ૮ પર્યુપાસના વિનયતપઃ ૯ પ્રતિસન્ધાનતા વિનયતપશ્ચે ૧૦ તિ રીત્યા શુશ્રૂષણા-

लगे तो उनके पीछे-पीछे जाना गच्छतो अनुगमनता विनय कहलाता है । इसी प्रकार शुश्रूषणता विनय तप के अनेक भेद हैं ॥२५॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિઃ—પહેલે દર્શન વિનય તપ કે દો ભેદોં કા પ્રતિપા-
દન કિયા ગયા, અજ પહેલે શુશ્રૂષણાવિનય તપ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

વિધિપૂર્વક, સમીપ રહકર આચાર્ય આદિ કી શુશ્રૂષા કરના શુશ્રૂષણા વિનય તપ કહલાતા હૈ । યહ તપ અભ્યુત્થાન આદિ કે ભેદ સે અનેક પ્રકાર કા હૈ । યથા—(૧) અભ્યુત્થાન વિનય તપ (૨) આસના-
ભિગ્રહ તપ (૩) આસન પ્રદાન વિનય તપ (૪) સત્કાર વિનય તપ (૫) સન્માન વિનય તપ (૬) કૃતિ કર્મ વિનય તપ (૭) અંજલીપ્રગ્રહ વિનય તપ (૮) અનુગમનતા વિનય તપ (૯) પર્યુપાસના વિનય તપ ઓર (૧૦) પ્રતિસન્ધાનતા વિનય તપ ।

આચાર્ય આદિ જવાની તૈયારી કરતા હોય ત્યારે તેમની પાછળ પાછળ જવું, ગચ્છતો અનુગમનતાવિનય કહેવાય છે આવી રીતે શુશ્રૂષણતાવિનય તપના અનેક ભેદ છે ॥ ૨૫ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિ—પહેલા દર્શનવિનય તપના બે ભેદોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હવે પહેલા શુશ્રૂષાવિનય તપની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ

વિધિપૂર્વક, પાંસે રહીને આચાર્ય આદિની શુશ્રૂષણા કરવી શુશ્રૂષણાતપ કહેવાય છે આ તપ અભ્યુત્થાન આદિના ભેદથી અનેક પ્રકારના છે. જેવાકે (૧) અભ્યુત્થાનવિનયતપ (૨) આસનાભિગ્રહવિનયતપ (૩) આસનપ્રદાનવિનય તપ (૪) સત્કારવિનયતપ (૫) સન્માનવિનયતપ (૬) કૃતિકર્મવિનયતપ (૭) અંજલિપ્રગ્રહવિનયતપ (૮) અનુગમનતાવિનયતપ (૯) પર્યુપાસનાવિનયતપ અને (૧૦) પ્રતિસન્ધાનતાવિનય તપ.

વિનયતપોઽનેકવિધં ભવતિ । તત્રાઽઽગતાના યાચાર્ય્યાદીનામભિયુક્તં મુત્યાનમ્-
અભ્યુત્યાનમ્, વિનયાર્હસ્ય ગુરૌદેર્દર્શનાદેવાઽઽસનપરિત્યાગઃ તદ્રૂપં વિનયતપો-
ઽભ્યુત્યાનવિનયતપો ભવતિ ૧ એવમ્-આચાર્ય્યાદિર્થસ્મિન્ યસ્મિન્ સ્થાને-ઉપવેષ્ટુ-
મિચ્છતિ તસ્મિન્-તસ્મિન્ સ્થાને તદર્થં આસનપ્રાપ્તમ્ આસનાભિગ્રહ સ્તદ્રૂપં
વિનયતપ આસનાભિગ્રહ વિનયતપો ભવતિ ૨ એવમ્-આચાર્ય સમાગતે સતિ-આસન
દાનં સ્વલુ-આસનપ્રદાનમુચ્યતે, તદ્રૂપં વિનયતપ આસનપ્રદાનવિનયતપો
ભવતિ ૩ એવમ્-વિનયયોગ્યાઽઽચાર્ય્યાદોનાં વન્દનાદિના-ઽઽદરકરણં-સત્કાર
સ્તદ્રૂપં વિનયતપઃ સદ્ કારવિનયતપો ભવતિ ૪ એવમ્-આચાર્ય્યાદેઃ સ્વલુ આહાર-
વસ્ત્રાદિ પ્રશસ્ત વસ્તુના સન્માનં-સન્માન સ્તદ્રૂપં વિનયતપઃ સન્માનવિનયતપો
ભવતિ ૫ એવમ્-ગુરૌદોનાં સરત્નાધિકાનાં ક્રમેણ સાંવધિ વન્દનાકરણં કૃતિકર્મે
તદ્રૂપં વિનયતપઃ કૃતિકર્મ વિનયતપો ભવતિ ૬ એવમ્-ગુરૌદે સમ્પ્રુત્વાઽઽંજલિકરણમ્
અંજલિપ્રગ્રહ ઉચ્યતે, તદ્રૂપં વિનયતપો-ઽંજલિપ્રગ્રહવિનયતપો ભવતિ ૭ એવમ્-
આચાર્યં ગુરૌદિકં પ્રતિ-અભિયુક્તે ગમનમ્ આગચ્છતોઽનુગમનતોચ્યતે તદ્રૂપં

(૧) આતે હુણ આચાર્ય આદિ કે સામને સ્થા હોના, વિનય કે
યોગ્ય આચાર્ય આદિ પર દૃષ્ટિ પડતે હી આસનત્યાગ દેના અભ્યુત્યાન
વિનય તપ કહલાતા હૈ (૨) આચાર્ય્યાદિ જહાં કહીં બેઠને કૌ હચ્છા કરે
ઉત્તી-ઉત્તી સ્થાન પર અનેકે લિય આસન બિછા દેના આસનાભિગ્રહ
વિનય તપ કહલાતા હૈ । (૩) આચાર્ય કે આને પર આસન દેના આસન-
પ્રદાન વિનય તપ હૈ । (૪) વિનય કે યોગ્ય આચાર્ય આદિ કો વન્દના
આદિ કરના સત્કાર વિનય કહલાતા હૈ । (૫) આચાર્ય આદિ કા આહાર
વસ્ત્ર આદિ પ્રશસ્ત વસ્તુઓ દ્વારા આદર કરના સન્માન વિનય તપ હૈ ।
(૬) રત્નાધિક આચાર્ય આદિ કો વિધિ પૂર્વક વન્દના કરના કૃતિકર્મ
વિનય કહલાતા હૈ । (૭) ગુરુ આદિ કે સામને અંજલિ કરના અંજલિ-

(૧) આવી રહેલા આચાર્ય આદિની સામે ઉભા થઇ જવું, વિનયને
યોગ્ય આચાર્ય આદિ પર નજર પડતાની સાથે જ આસન છોડી દેવું અભ્યુ-
ત્યાનવિનય તપ કહેવાય છે (૨) આચાર્ય આદિ જ્યાં પણ બેસવાની ઇચ્છા
કરે તે જ સ્થાને તેમના માટે આસન પાથરી દેવું આસનાભિગ્રહવિનય તપ
કહેવાય છે. (૩) આચાર્યના આગમન પ્રસંગે આસન આપવું આસનપ્રદાન
વિનય તપ છે (૪) વિનયને યોગ્ય આચાર્ય આદિનો વંદન વગેરેથી આદર
કરવો સત્કારવિનય કહેવાય છે (૫) આચાર્ય આદિનો આહાર વસ્ત્ર આદિ
અથવા વસ્તુઓ દ્વારા આદર કરવો સન્માનવિનય તપ છે (૬) રત્નાધિક આચાર્ય
આદિને વિધિપૂર્વક વંદણા કરવી કૃતિકર્મવિનય કહેવાય છે (૭) ગુરુ આદિની

વિનયતપોઽનુગમનતા વિનયતપો ભવતિ ૮ એવમ્-ઉપવિષ્ટાના માચાર્યાદીના મિચ્છાઽનુકૂલા સેવા, સ્થિતસ્ય પર્યુપાસનતા વિનયતપો-ભવતિ ૯ એવમ્-ગચ્છતા માચાર્યાદીનાં પશ્ચાદ્ગમનશીલતા ગચ્છતઃ પ્રતિસંસાધનતોચ્યતે તદ્રૂપં વિનયતપઃ પ્રતિસંસાધનતા વિનયતપો ભવતિ । ઉક્તશ્ચૌપપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘સે કિં તં સુસ્ત્ર-સજ્ઞાવિજ્ઞા ? સુસ્ત્રસજ્ઞાવિજ્ઞા અજ્ઞેગવિદ્ધે પળ્લસે, તં જહા-અભ્યુ-દ્ધાણેહવા ૧ આસજ્ઞાભિગ્રહે હવા ૨ આસજ્ઞપ્રદાણે હવા ૩ સત્કારેહ વા ૪ સમ્માણે હવા ૫ ક્રિયકર્મ્મેહવા ૬ અંજલિપ્રગ્રહેહ વા ૭ એતદ્સ અણુગચ્છ-ગયા ૮ ઠિયસ્ત પજ્જુવાસજ્ઞયા ૯ ગચ્છંતસ્ત પઠિસંસાધનયા ૧૦ સેતં સુસ્ત્રસજ્ઞાવિજ્ઞા’ ઇતિ । અથ કોઽસૌ શુશ્રૂષણા વિનયઃ ? શુશ્રૂષણાવિનયોઽનેક-વિધઃ પ્રગ્રહઃ તથથા-અભ્યુત્થાનમિતિવાઽસનાભિગ્રહ ઇતિ વાઽસન પ્રદાનમિતિ-વા સત્કાર ઇતિ વા સમ્માન ઇતિ વા કૃતિકર્મ ઇતિ વાઽજ્જલિ પ્રગ્રહ ઇતિ વાઽગ-ચ્છતોઽનુગમનતા-સ્થિતસ્ય પર્યુપાસનતા-ગચ્છતઃ પ્રતિસંસાધનતા, એવ શુશ્રૂષણા-વિનય ઇતિ ॥૨૫॥

પ્રગ્રહ તપ કહલાતા હૈ । (૮) જાતે હુએ ગુરુ આદિ કે સામને જાના અનુગમનતા તપ હૈ । (૯) ગુરુ કે વૈઠને પર દચ્છાનુકૂલ સેવા કરના પર્યુપાસના વિનય તપ હૈ । (૧૦) ગુરુ, આચાર્ય આદિ કે જાને પર પીછે-પીછે જાના પ્રતિસંધાન તપ કહલાતા હૈ । ઔપપાતિક સૂત્ર કે ૩૦ વે સૂત્ર મેં કહા હૈ-

પ્રશ્ન-શુશ્રૂષાવિનય કિતને પ્રકાર કા હૈ ?

શુશ્રૂષાવિનય અનેક પ્રકાર કા હૈ, થથા-અભ્યુત્થાન, આસનાભિ-ગ્રહ, આસનપ્રદાન, સત્કાર, સમ્માન, કૃતિકર્મ, અંજલિપ્રગ્રહ, અનુગમ-નતા, સ્થિત કી પર્યુપાસના, જાતે કા અનુસરણ કરના, યહ સબ શુશ્રૂષાવિનય હૈ ॥૨૫॥

સામે હાથ ભેડના અંજલિપ્રગ્રહ તપ કહેવાય છે (૮) આવી રહેલા ગુરુ આદિ ની સામે જવું અનુગમનતા વિનય તપ છે (૯) ગુરુના બેઠા પછી ધચ્છાનુકૂળ સેવા કરવી પર્યુપાસના વિનય તપ છે. (૧૦) ગુરુ, આચાર્ય આદિના પ્રસ્થાન પ્રસંગે પાછળ-પાછળ જવું પ્રતિસંધાનતા તપ કહેવાય છે. ઔપપાતિક સૂત્રના ૩૦માં સૂત્રમાં કહ્યું છે-

પ્રશ્ન-શુશ્રૂષાવિનય કેટલા પ્રકારના છે ?

ઉત્તર-શુશ્રૂષાવિનય અનેક પ્રકારના છે જેવાકે અભ્યુત્થાન, આસનાભિગ્રહ આસનપ્રદાન, સત્કાર, સમ્માન, કૃતિકર્મ, અંજલિપ્રગ્રહ, અનુગમનતા સ્થિતની પર્યુપાસના જનારાનું અનુસરણ કરવું, આ બધાં શુશ્રૂષા વિનયના ભેદ છે ॥૨૫॥

मूलम्—अणच्छासायणा विणयतवे पणयालीसविहे, अर-
हंताइ भेयओ ॥२६॥

छाया—‘अनत्याशातनाविनयतपः पञ्चचत्वारिंशद्विविधम्, अर्हदादि भेदतः । २६।

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावद्—दर्शनविनयतपसः प्रथमभेदः शुश्रूषणा
विनयतपः प्ररूपितम्, सम्प्रति—अनत्याशातना विनयतपः स्वरूपं द्वितीयभेदं
पञ्चचत्वारिंशद् विधत्वेन प्ररूपयितुमाह—‘अणच्छासायणा’ इत्यादि अनत्या-
शातनाविनयतपः—शुर्वादेखवर्णवादादि रूपात्याशातनानिवारणरूपं तावत् पञ्च-
चत्वारिंशद्विधं भवति, अर्हदादि भेदतः । तथा चाऽर्हता मनत्याशातना १
आदिनाऽर्हत्प्रज्ञप्तस्य धर्मस्याऽनत्याशातना आचार्याणामनत्याशातना ३ उपा-
ध्यायाना—मनत्याशातना ४ स्थविराणा मनत्याशातना ५ कुलस्याऽनत्याशातना ६

‘अणच्छासायणा विणयतवे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—अर्हन्त आदि के भेद से अनत्याशातना विनय तप पैता
लीस प्रकार का है ॥२६॥

तत्त्वार्थदीपिका—दर्शन विनय तप के प्रथम भेद शुश्रूषणाविनय
तप का निरूपण किया जा चुका, अब उसके दूसरे भेद अनत्याशातना
विनय तप के पैतालीस भेदों की प्ररूपणा करते हैं—

गुरु आदि की आशातना—अवर्णवाद न करना अनत्याशातनाविनय
तप कहलाता है । अर्हन्त आदि के भेद से वह पैतालीस प्रकार का है—
(१) अर्हन्त की आशातना न करना (२) अर्हत्प्रणीत धर्म की आशा-
तना न करना (३) आचार्य की आशातना न करना (४) उपा-
ध्याय की आशातना न करना (५) स्थावरों की आशातना न
करना (६) कुल की आशातना न करना (७) गण की आशा-

‘अणच्छासायणाविणयतवे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—अर्हन्त आदिना लेदथी अनत्याशातना विनय तप ४५
प्रकारना छे. ॥ २६ ॥

तत्त्वार्थदीपिका—दर्शनविनयतपना प्रथम लेद शुश्रूषणाविनय तपनुं
निश्पणु करवाभां आण्युं हवे तेना भीण लेद अनत्याशातना विनय तपना
पिस्ताणीश लेदोनी प्रश्पणु करीअे छीअे—

शुद्ध आदिनी आशातना अवर्णवाद न करवी अनत्याशातनाविनय तप
कहेवाय छे. अर्हन्त आदिना लेदथी ते पिस्ताणीश प्रकारना छे—(१) अर्हन्तनी
आशातना न करवी (२) अर्हन्त प्रणीत धर्मनी आशातना न करवी (३)

गणस्याऽनत्याशातना ७ संघस्याऽनत्याशातना ८ क्रियाणां मनत्याशातना ९
 सन्धोर्गस्याऽनत्याशातना १० आभिनिबोधिकज्ञानस्याऽनत्याशातना ११
 श्रुतज्ञानस्याऽनत्याशातना अवधिज्ञानस्याऽनत्याशातना १२ मनःपर्यवज्ञानस्याऽनत्याशातना १४
 केवलज्ञानस्याऽनत्याशातना १५ इत्येवं पञ्चदशार्हदादिविनया
 भवन्ति पञ्चदशार्हदादीनां भक्तिबहुमानपदमाश्रित्य भवन्ति १५ पञ्च-
 दशचार्हदादीनां सद्गुणोत्कीर्तनतारुणा वर्ण संज्वलनता तामाश्रित्य भवन्ति १५
 इत्येवं सर्वं सम्मेलनेनाऽनत्याशातना विनयतपः पञ्चचत्वारिंशद्विधं भवती-
 ति भावः ॥२६॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं खलु भूभूषणाविनयतपोरूपं प्रथमं दर्शनविनयतपः

तना न करना (८) संघ की आशातना न करना (९) क्रियाओं की
 आशातना न करना (१०) सांयोगिक साधु की आशातना न करना
 (११) आभिनिबोधिक (मतिज्ञान) ज्ञान की आशातना न करना (१२)
 श्रुतज्ञान की आशातना न करना (१३) अवधिज्ञान की आशातना न
 करना (१४) मनः पर्यवज्ञान की आशातना न करना (१५) केवलज्ञान
 की आशातना न करना । ये अर्हन्त आदि के विनय के पन्द्रह भेद
 हैं । भक्ति-बहुमान पद को लेकर और सद्गुणोत्कीर्तन रूप वर्णसंज्व-
 लनता को लेकर पन्द्रह-गन्द्रह भेद करने से तीस भेद और होते हैं ।
 जैसे अर्हन्त की भक्ति करना अर्हत्प्रणीत धर्म की भक्ति करना आदि
 और अर्हन्त के गुणों का कीर्तन करना अर्हत्प्रणीत धर्म के गुणों का
 कीर्तन करना आदि । इस प्रकार सब को मिलाने से अनत्याशातना
 विनय तप दो पैतालीस भेद समझने चाहिए ॥२६॥

आचार्यनी आशातना न करवी (४) उपाध्यायनी आशातना न करवी (५)
 स्थविरोनी आशातना न करवी (६) कुणनी आशातना न करवी (७) गणुनी
 आशातना न करवी (८) संधनी आशातना न करवी (९) क्रियाओंनी आशातना
 न करवी (१०) सांयोगिक साधुनी आशातना न करवी (११) आभिनिबोधिक
 मतिज्ञाननी आशातना न करवी (१२) श्रुतज्ञाननी आशातना न करवी (१३)
 अवधिज्ञाननी आशातना न करवी (१४) मनःपर्यवज्ञाननी आशातना न करवी
 (१५) केवलज्ञाननी आशातना न करवी आ अर्हन्त आदिना विनयता
 पंदर लेद छे. भक्ति-बहुमान पदने लधने सद्गुणोत्कीर्तन रूप
 वर्ण संज्वलनताने लधने पंदर-पंदर लेद करवाथी तीस लेद भील
 थाय छे जेभके अर्हन्तनी लकित करवी, अर्हत्प्रणीत धर्मनी लकित करवी.
 अर्हत्प्रणीत धर्मना गुणानुं कीर्तन करवुं आदि आवी रीते गधाने सरवाणे
 करवाथी अनत्याशातना विनय तपनां पिस्ताणीश लेद समजवा लेधये २६

प्ररूपितम्, सम्प्रति-द्वितीयमनत्याशातनारूपं दर्शनविनयतपः प्ररूपयितुमाह—
‘अणञ्चास्त्रायणाविणयतपे षण्चालीसविहै, अरहंताः भेषओ’ इति ।
अनत्याशातनाविनयतपः—अर्हतादीनामवर्णनादादि निषेधरूपं पञ्चत्वारिंशद्विधं
भवति । तद्यथा—अर्हतां तीर्थकुलाम् अनत्याशातनता १ आतिनाऽर्हत्प्रपन्नस्य धर्म-
स्याऽनत्याशातनता २ आचार्याणामनत्याशातनता ३ उपाध्यायानामनत्याशातनता ४
स्थविराणामनत्याशातनता ५ कुलस्याऽनत्याशातनता ६ गणस्याऽनत्याशातनता ७
संघस्याऽनत्याशातनता ८ क्रियाणामनत्याशातनता ९ समुदायरस्याऽनत्याशातन-
ता १० आभिनिबोधिकज्ञानस्याऽनत्याशातनता ११ श्रुतज्ञानस्याऽनत्याशातनता १२
अवधिज्ञानस्याऽनत्याशातनता १३ मनःपर्यवज्ञानस्याऽनत्याशातनता १४ केवल-

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-दृष्टसे पूर्व दर्शनविनय के प्रथम भेद शुश्रूषणा
विनय तप का निरूपण किया गया है, अब दूसरे भेद अनत्याशातना
दर्शनविनय की प्ररूपणा करते हैं—

अर्हन्त आदि का अवर्णनाद न करने आदि के भेद से अनत्या
शातना विनय तप पैंतालीस प्रकार का है—(१) अर्हन्त भगवान की
अनत्याशातना—आशातना न करना (२) अर्हत्प्रणीत धर्म की आशा-
तना न करना (३) आचार्य की आशातना न करना (४) उपाध्याय
की आशातना न करना (५) स्थविरों की आशातना न करना (६) कुल
की आशातना न करना (७) गण की आशातना न करना (८) संघ की
आशातना न करना (९) क्रिया की आशातना न करना (१०) सांभोगिक
की आशातना न करना (११) आभिनिबोधिकज्ञान की आशातना न करना
(१२) श्रुतज्ञान की आशातना न करना (१३) अवधिज्ञान की आशातना

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—आनी अगाउ दर्शनविनयना प्रथम लेह शुश्रूषणा
विनय तपनु निरूपण करवामां आओयुं हुवे भीन लेह अनत्याशातना दर्शन
विनयनी प्ररूपणा करीओ छीओ—

अर्हन्त आदिनी आशातना न करवा वगेरेना लेहथी अनत्याशातना
विनय तप पिस्ताणीश प्रकारना छे—(१) अर्हन्त भगवाननी अनत्याशातना—
आशातना न करवी (२) अर्हत्प्रणीत धर्मनी आशातना न करवी (३) आचा-
र्यनी आशातना न करवी (४) उपाध्यायनी आशातना न करवी (५) स्थवि-
रानी आशातना न करवी (६) कुलनी आशातना न करवी (७) गणनी आशातना
न करवी (८) संघनी आशातना न करवी (९) क्रियानी आशातना न करवी
(१०) सांभोगिकनी आशातना न करवी (११) आभिनिबोधि ज्ञाननी आशा-
तना न करवी (१२) श्रुतज्ञाननी आशातना न करवी (१३) अवधिज्ञाननी
आशातना न करवी (१४) मनःपर्यवज्ञाननी आशातना न करवी (१४) केवल

જ્ઞાનસ્યાઽનત્યાશાતનતા ૧૫ इत्येवं पञ्चदशाऽर्हदादि विनया भवन्ति । एवमेवाऽर्हदादीनां भक्तिबहुमानमाश्रित्य च पञ्चदश भवन्ति १५ । एवमेतेषां खलु अर्हदादीनां सद्भूतगुणोत्कीर्तनतारूपा वर्णसंज्वलनतामाश्रित्य पञ्चदश भवन्ति १५ इत्येवं सर्वमनत्याशातनऽताविनयतपः पञ्चचत्वारिंशद्विधं भवति । तत्र-कुलपदेन, एकाचार्यस्य सन्ततिरूप समानाचारश्रमणसमूहो गृह्यते, गणपदेन परस्परसापेक्षाऽनेककुलश्रमणसमुदायो-बोधयते, संघपदेन च-सम्यग्दर्शनादिव्युक्त श्रमण-श्रमणी श्रावक-श्राविकारूप चतुर्विधः संघो ग्राह्यः, क्रियापदेन चैर्थाधिक्यक्रिया ग्राह्यः सम्भोगपदेन च-एकसामाचारिकता गृह्यते, सम्-एकत्र भोगो-भोजनं सम्भोगः, समानसामाचारी तथा श्रमणानां परस्परसमुपध्यादि दानग्रहणव्यापारसंयोगः

ન કરના (૧૪) મનઃપર્યવજ્ઞાન કી આશાતના ન કરના (૧૫) કેવલજ્ઞાન કી આશાતના ન કરના, યે અર્હન્ત આદિ કે પન્દ્રહ વિનય હૈં । इन्होंने अर्हन्त आदि पन्द्रह के प्रति भक्ति-बहुमान करने से और इन्होंने पन्द्रह के सद्भूत गुणों का कीर्तन-वर्णसंज्वलनता-से भी पन्द्रह भेद होते हैं । इस प्रकार सब को सम्मिलित करने से अनत्याशातना विनय तप पैंतालीस प्रकार का है ।

યહાં કુલ કાં અર્થ હૈં એક આચાર્ય કી સન્તાન રૂપ સમાન આચાર વિચાર વાલે શ્રમણોં કા સમૂહ । गण का अर्थ है परस्पर सापेक्ष अनेक कुलों के श्रमणों का समुदाय । संघ पद से सम्यग्दर्शन आदि से युक्त साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका रूप चतुर्विध संघ समझना चाहिए । क्रिया शब्द से प्रतिष्ठेखन आदि क्रियाओं को ग्रहण करना चाहिए । सम्भोग शब्द का अभिप्राय है समान सामाचारी वाले श्रमणોં

જ્ઞાનની આશાતના ન કરવી, આ અર્હન્ત આદિના પંદર વિનય છે. આ જ અર્હન્ત આદિ પંદરના પ્રતિ ભક્તિ-બહુમાન કરવાથી અને આજ પંદર ના સમુદ્ભૂત ગુણોનું કીર્તન-વર્ણસંજ્વલનતાથી પણ બીજા પંદર ભેદ થાય છે, આ રીતે બધાને લેગા કરવાથી અનત્યાશાતના વિનય તપ પિસ્તાળીશ પ્રકારના છે.

અહીં કુળનો અર્થ છે એક આચાર્યના પરિવાર રૂપ સમાન આચાર-વિચારવાલા શ્રમણોનો સમૂહ-ગણનો અર્થ થાય છે પરસ્પર સાપેક્ષ અનેક કુળોના શ્રમણોનો સમુદાય સંઘ પદથી સમ્યક્દર્શન આદિથી યુક્ત સાધુ સાધ્વી શ્રાવક અને શ્રાવિકા રૂપ ચતુર્વિધ સંઘ સમજવો જોઈ એ ક્રિયા શબ્દ થી પ્રતિષ્ઠેખન આદિ ક્રિયાઓને ગ્રહણ કરવા જોઈએ. सम्भोग शब्दનો-भक्ति-

इति व्युत्पत्तेः । अन्यत् सर्वं स्पष्टम् ॥ उक्तश्रौपपातिके ३० सूत्रे-“से किं तं अणच्चासायणादिणए-? अणच्चासायणादिणए पणयालीसविहे पणत्ते, तं जहा--अरहंताणं अणच्चासायणया-? अरहंतपणत्त-स्स धम्मस्स अणच्चासायणया-२ आघरियाणं अणच्चासाय-णया-३ एलम्-उदज्झायाणं-४ थेराणं-५ कुलस्स-६ गणस्स -७ संघ-स्स-८ किरियाणं-९ संभोगस्स-१० आभिणिबोहियणाणस्स-११ सुय-णाणस्स १२ ओहिणाणस्स १३ मणपज्जवणाणस्स-१४ केवलणाणस्स-१५ एएस्मिं चेव भस्सिबहुमाणे-३०, एएस्मिं चेव वण्णसंजलणया-४५, से तं अणच्चासायणा विणए” इति । अथ कोऽसौ-अनत्याशातनाविनयः ? अनत्याशातनाविनयः पञ्चवत्तारिंशद्विधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-अर्हतामनत्याशात-नता १ अर्हत्प्रज्ञप्तस्य धर्मस्याऽनत्याशातनता २ आचार्याणामनत्याशातनता ३ एव-उपाध्यायानाम् ४ स्थविराणाम् ५ कुलस्य ६ गणस्य ७ संघस्य ८ क्रिया-णाम् ९ सम्भोगस्य १० आभिनिबोधिकज्ञानस्य ११ श्रुतज्ञानस्य १२ अवधि

का पारस्परिक आहार आदि व्यवहार अर्थात् आपस में उपधि आदि को लेना-देना एक साथ बैठकर भोजन करना यथोचित वन्दन आदि करना । अन्य सब स्पष्ट ही है । औपपातिकसूत्र के ३०वें सूत्र में कहा है
प्रश्न—अनत्याशातनाविनय कितने प्रकार के हैं ?

उत्तर-अनत्याशातनाविनय पैंतालीस प्रकार का है, यथा-(१) अर्हन्तो' की आशातना न करना (२) अर्हत्प्रणीत धर्म की आशातना न करना (३) आचार्यों' की आशातना न करना (४) उपाध्यायों' की आशातना न करना (५) स्थविरो' की (६) कुल की (७) गण की (८) संघ की (९) क्रियाओं' की (१०) सांभोगिकों' की (११) आभिनि-बोधिकज्ञान की (१२) श्रुतज्ञान की (१३) अवधिज्ञान की (१४)

પ્રાય છે સમાન સમાચારવાળા શ્રમણોનો પારસ્પરિક આહાર આદિ વ્યવહાર અર્થાત્ અંદરોઅંદર ઉપધિ વગેરેની લેવડદેવડ, એક સાથે બેસીને ભોજન કરવું, યથોચિત વંદણા વગેરે કરવી. બીજું બધું સ્પષ્ટ જ છે. ઔપપાતિક સૂત્રના ૩૦માં સૂત્રમાં કહ્યું છે—

પ્રશ્ન—અનત્યાશાતનાવિનય કેટલા પ્રકારનો છે ?

ઉત્તર—અનત્યાશાતનાવિનય પિસ્તાળીશ પ્રકારનો છે જેમ કે—(૧) અર્હન્તોની આશાતના ન કરવી (૨) અર્હત્પ્રણીત ધર્મની આશાતના ન કરવી (૩) આચાર્યોની આશાતના ન કરવી (૪) ઉપાધ્યાયોની આશાતના ન કરવી (૫) સ્થવિરોની (૬) કુળની (૭) ગણની (૮) સંઘની (૯) ક્રિયાઓની (૧૦) સાંભોગિકોની (૧૧) આભિનિબોધિકજ્ઞાનની (૧૨) શ્રુતજ્ઞાનની (૧૩) અવધિ

જ્ઞાનસ્ય ૧૩ મનઃપર્યવજ્ઞાનસ્ય ૧૪ કેવલજ્ઞાનસ્ય ૧૫ એતેષાં ચૈવ ભક્તિવહુમા-
નાનિ ૩૦ એતેષાં શ્રૈય વર્ણસંજ્વલનતા ૪૫ સ ઇષોઽનત્યાશાતનાવિનયઃ ઇતિ ૥૨૬૥

મૂલમૂ—ચરિત્તવિણયતવે પંચવિહે, સામાઙ્યચરિત્તવિણયાઙ
ભેયઓ ॥૨૭॥

છાયા—ચારિત્રવિનયતપઃ પશ્ચવિધઃ સામાયિકચારિત્રવિનયાદિ ભેદતઃ ॥૨૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાવત્-સપ્તવિધેષુ વિનયતપઃસુ યથાક્રમં પ્રથમં
જ્ઞાનવિનયતપઃ, દ્વિતીયં દર્શનવિનયતપશ્ચ સવિશદં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ-ક્રમપ્રાપ્તં
ચારિત્રવિનયતપઃ પ્રરૂપયિતુમાહ—‘ચરિત્તવિણયતવે પંચવિહે’ ઇત્યાદિ। ચારિત્ર-
વિનયતપઃ—અનેકજન્મસશ્ચિતાઽષ્ટવિધકર્મચયસંરક્ષયાઽયચરણં સર્વવિરતિલક્ષણં

મનઃ પર્યવજ્ઞાન કી ઓર (૧૫) કેવલજ્ઞાન કી આશાતના ન
કરના (૩૦) इन पन्द्रह की भक्ति और बहुमान करना और (४५)
इन पन्द्रह की वर्णसंज्वलनता अर्थात् विद्यमान गुणों का उत्कीर्तन
करना यह पैतालीस प्रकार का अनत्याशातना विनय है ॥२६॥

‘ચારિત્ત વિણયતવે પંચવિહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—ચારિત્ર વિનય તપ પાંચ પ્રકાર કા હૈ—સામાયિક ચારિત્ર-
વિનય તપ ઇત્યાદિ ॥૨૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—સાત પ્રકાર કે વિનયતપોં મેં સે ક્રમશઃ પહેલે
જ્ઞાનવિનય તપ કા ઓર દુસરે દર્શનવિનયતપ કા નિરૂપણ કિયા ગયા,
અવ ક્રમાગત ચારિત્રવિનયતપ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

અનેક જન્મોં મેં સંચિત આઠ પ્રકાર કે કર્મસમૂહ કા ક્ષય કરને

જ્ઞાનની (૧૪) મનઃપર્યવજ્ઞાનની અને (૧૫) કેવળજ્ઞાનની આશાતના કરવી
નહી. આ પંદરની ભક્તિ અને બહુમાન કરવા (૩૦) અને આ પંદરની વર્ણ
સંજ્વલનતા અર્થાત્ વિદ્યમાન ગુણોનું ઉત્કીર્તન કરવું આ પિસ્તાળીશ પ્રકારના
અનત્યાશાતના વિનય છે ॥૨૬॥

‘ચરિત્તવિણયતવે પંચવિહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—ચારિત્ર વિનય તપ પાંચ પ્રકારના છે—સામાયિક ચારિત્ર
વિનય તપ ઇત્યાદિ ॥૨૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—સાત પ્રકારના વિનયતપોમાંથી ક્રમશઃ પહેલા જ્ઞાનવિનય
તપનું અને બીજા દર્શન વિનય તપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે ક્રમા-
ગત ચારિત્રવિનય તપની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ—

અનેક જન્મોના સંચિત આઠ પ્રકારના કર્મ સમૂહનો ક્ષય કરવા માટે

चारित्रं, तत्सम्बन्धीविनयस्तद्रूपं तपः पञ्चविधं भवति, सामायिकादि भेदतः ।
तथा च-सामायिकचारित्रविनयतपः १ आदिना-छेदोपस्थापनीयचारित्रविनय
तपः २ परिहारविशुद्धिचारित्रविनयतपः ३ सूक्ष्मसाम्परायचारित्रविनयतपः ४
यथाख्यातचारित्रविनयतपः ५ चेति । तत्र-सर्वजीवेषु रागद्वेषरहितो भावः
समः, तस्य समस्य प्रतिक्षणपूर्वापूर्वकर्मनिर्जराहेतुभूतस्य विशुद्धिरूपस्याऽऽयो
लाभः समायः समायएव सामायिकं सावद्ययोगविरतिरूपम् सामायिकञ्च तत्
चारित्रं सामायिकचारित्रम्, तद्रूपं विनयतपः सामायिकचारित्रविनयतप
उच्यते । एवं-छेदेन पूर्वपर्यायच्छेदेन उपस्थाप्यते-आरोप्यते यन्महाव्रत-
लक्षणं चारित्रं, तच्छेदोपस्थापनीयं मुच्यते तद्रूपं चारित्रं छेदोपस्थापनीय
के लिए सर्वविरतिरूप क्रियाकलाप चारित्र कहलाता है । चारित्र संबन्धी
विनय को चारित्रविनय तप कहते हैं । यह पांच प्रकार का है- (१)
सामायिक चारित्र विनय तप (२) छेदोपस्थापनीय चारित्रविनय तप
परिहार विशुद्ध चारित्रविनय तप (४) सूक्ष्मसाम्पराय चारित्र विनय
तप और (५) यथाख्यातचारित्र विनय तप ।

समस्त जीवों पर राग-द्वेष रहित मध्यस्थभाव होना 'सम' कह-
लाता है । प्रतिक्षण अपूर्व कर्मनिर्जरा के कारणभूत एवं विशुद्धि स्वरूप
समभाव के आय अर्थात् लाभ को 'समाय' कहते हैं और समाय को
ही सामायिक कहते हैं, जिसका आशय है सावद्य योग का त्याग
करना । सामायिक रूप चरित्र सामायिक चारित्र कहलाता है और उसका
विनय सामायिक चारित्रविनय तप है । पूर्वपर्याय का छेद करके महा-
व्रत रूप चारित्र का फिर से आरोपण करना छेदोपस्थापन चारित्र है,

सर्वविरति इयं क्रियाकलाप चारित्र कहेवाय છે. ચારિત્ર સંબંધી વિનયને
ચારિત્ર વિનય તપ કહે છે, આ પાંચ પ્રકારના છે—(૧) સામાયિક ચારિત્ર
વિનય તપ (૨) છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર વિનય તપ (૩) પરિહાર વિશુદ્ધિ
ચારિત્ર વિનય તપ (૪) સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર વિનય તપ અને (૫) યથા-
ખ્યાત ચારિત્ર વિનય તપ.

સમસ્ત જીવો પ્રત્યે રાગ-દ્વેષ રહિત મધ્યસ્થ ભાવ હોવો—સમ કહેવાય છે
પ્રતિક્ષણ અપૂર્વ—અપૂર્વ કર્મનિર્જરાના કારણભૂત અને વિશુદ્ધિ સ્વરૂપ સમ
ભાવના આય અર્થાત્ લાભને સમાય કહે છે અને સમાયને જ સામાયિક
કહે છે જેનો ભાવાર્થ છે સાવધ યોગનો ત્યાગ કરવો. સામાયિકરૂપ
ચારિત્ર સામાયિક ચારિત્ર કહેવાય છે અને તેનો વિનય સામાયિક ચારિત્ર

ચારિત્રં તદાત્મકં વિનયતપ શ્લેષોપસ્થાપનીયચારિત્રવિનયતપો ભવતિ ।
 एवम्-परिहरणं परिहारस्तपो विशेष स्तेन कर्मनिर्जरारूपा विशुद्धिर्यस्मिन् चारित्रे
 તત્-પરિહારવિશુદ્ધિકં ચારિત્રં, તદ્રૂપં વિનયતપઃ પરિહારવિશુદ્ધિકચારિત્રવિનય-
 તપ ઉચ્યતે । एवं-समर्थेति संसार मनेनेति सम्परायः कषायोदयः, सूक्ष्मोकोभा-
 શાઽવશેષઃ સમ્પરાયો યત્ર તત્=સૂક્ષ્મસમ્પરાયં તદ્રૂપં યચ્ચારિત્રં તત્સમ્બન્ધિ વિનય
 તપઃ સૂક્ષ્મસમ્પરાયચારિત્રવિનયતપ ઉચ્યતે । एवं-याथातथ्येनाऽभिविधिना
 ચ યત્ રૂપાતં તીર્થકૃદ્ભિરુપદિષ્ટં કષાયરહિતં ચારિત્રં તત્ યથારૂપાતચારિત્રમ્
 તત્સમ્બન્ધિ વિનયતપો યથારૂપાતચારિત્ર વિનયતપ ઉચ્યતે ॥૨૭॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિઃ-પૂર્વં સપ્તવિધં વિનયતપઃ પ્રતિપાદિતમ્ તત્ર-જ્ઞાનવિનયતપ
 दर्शनविनयतपश्च सविशदं प्ररूपितम् सम्प्रति-तृतीयं चारित्रविनयतपः पञ्च-
 (उसका विनय श्लेषोपस्थापन चारित्र विनय तप समझना चाहिए । परि-
 हार नामक तप जिस चारित्र में विशिष्ट कर्मनिर्जरा के लिए किया
 जाता है, वह चारित्र परिहारविशुद्धि कहलाता है । उसका विनय
 परिहारविशुद्धि चारित्र विनय है । जिसमें संजवलन कषाय का सूक्ष्म
 अंश ही शेष रहजाता है वह चारित्र सूक्ष्मसाम्पराय चारित्र कहलाता
 है । उसका विनय सूक्ष्मसाम्परायचारित्र विनय है । तीर्थकर भगवान्
 द्वारा उपदिष्ट कषाय रहित चारित्र यथारूपातचारित्र कहलाता है, उसका
 विनय यथारूपातचारित्र विनय समझना चाहिए ॥२७॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ—પહેલે સાત પ્રકાર કે વિનય તપ કા નિરૂપણ
 किया गया था । उसमें से ज्ञानविनय और दर्शनविनय तप का विशद
 विवेचन किया जा चुका है । अब तीसरे चारित्र विनय तप का प्ररूपण
 करते हैं--

વિનય તપ છે, પહેલાના પચાસોનો છેદ કરીને મહાત્રતરૂપ ચારિત્રનું
 पुनः आरोपण करवुं श्लेषोपस्थापन चारित्र છે તેનો વિનય શ્લેષોપસ્થાપન ચારિત્ર
 વિનય તપ સમજવું જોઈએ પરિહાર નામક તપ જે ચારિત્રમાં વિશિષ્ટ કર્મ
 निर्जराने भाटे करवाभां आवे છે તે ચારિત્ર પરિહાર વિશુદ્ધિ ચારિત્ર કહે
 વાય છે. જેમાં સંજવલન કષાયનો સૂક્ષ્મ અંશ જ શેષ રહી જાય છે. તે ચારિત્ર
 सूक्ष्मसाम्पराय चारિત્ર કહેવાય છે. તેનો વિનય સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર વિનય
 છે. તીર્થકર ભગવાન દ્વારા ઉપદિષ્ટ કષાય રહિત ચારિત્ર યથારૂપાતચારિત્ર
 કહેવાય છે, તેનો વિનય યથારૂપાત ચારિત્રવિનય સમજવો જોઈએ ॥૨૭॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ—પહેલા સાત પ્રકારના વિનયતપનું નિરૂપણ કરવામાં
 આવ્યું છે તેમાંથી જ્ઞાનવિનય અને દર્શનવિનય તપનું વિશદ વિવેચન કરવામાં

વિંધત્વેન પ્રરૂપયિતુમાહ-‘ચરિત્તવિનયતવે પંચવિદ્ધે, સામાહ્ય-ચરિત્તવિનયાદ્ધ મેયઞ્ચો’ इति । चारित्रविनयतपः-नानाजन्म सञ्चिताऽष्टविधकर्म चय संक्षेपाय चरणं सर्वविरतिस्वरूपं चारित्रं तत्सम्बन्धी विनयः चारित्रविनय स्तरूपं तपः पञ्चविधं भवति । सामायिक-चारित्र-विनयादि भेदतः, तथा च-सामायिकचारित्रविनयः १ आदिना-छेदोपस्थापनीयचारित्रविनयः २ परिहार विशुद्धिकचारित्रविनयः ३ सूक्ष्मसम्परायचारित्रविनयः ४ यथाख्यातचारित्र-विनयः ५ चेति । तत्र सावध्ययोगविरतिरूपं सामायिकं तत्त्वक्षणं चारित्रं सामायिकचारित्रं तद्रूपं विनयतपः सामायिकचारित्रविनयतप उच्यते । एवं-पूर्वपर्यायच्छेदेनो-पस्थाप्यते-आरोप्यते यन्महात्रत्वक्षणं चारित्रं,-तत्-छेदो-पस्थापनीयचारित्रं तत्सम्बन्धिविनयतपः छेदोपस्थापनीयचारित्रविनयतप उच्यते । एवं-तपोविशेषेण परिहारेण कर्मनिर्जरारूपा विशुद्धिर्यस्मिन् चारित्रे

अनेक जन्मों में संचित आठ प्रकार के कर्म समूह का क्षय करने के लिए जो सर्वविरति रूप अनुष्ठान किया जाता है, वह चारित्र कहलाता है । चारित्र का विनय चारित्र विनय तप है । इसके भी पांच भेद हैं—(१) सामायिक चारित्र विनय (२) छेदोपस्थापनीय चारित्र विनय (३) परिहार विशुद्धि चारित्र विनय (४) सूक्ष्मसम्पराय चारित्र विनय और (५) यथाख्यात चारित्र विनय । इनमें से सावध्य योग की निवृत्ति को सामायिक चारित्र कहते हैं, उसका विनय सामायिक चारित्र विनय तप कहलाता है । जो महात्रतरूप चारित्र पूर्व पर्याय का छेदन करके आरोपित किया जाता है वह छेदोपस्थापनीय चारित्र कहलाता है उसका विनय छेदोपस्थापनीय चारित्रविनय है । जिस चारित्र में परिहार नामक

આવી ગયું. હવે ત્રીજા ચારિત્ર વિનય તપનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ—

अनेक जन्मोंमां संचित आठ प्रकारना कर्म समूहना क्षय करवाने भाटे जे सर्व विरतिरूप अनुष्ठान करवाभां आवे छे ते चारित्र कहेवाय छे. चारित्रना विनय चारित्र विनय तप छे जेना पांच लेह छे—

(१) सामायिक चारित्र विनय (२) छेदोपस्थापनीय चारित्र विनय (३) परिहार विशुद्धि चारित्र विनय (४) सूक्ष्मसम्पराय चारित्र विनय અને (५) यथाख्यात ચારિત્ર વિનય આમાંથી સવધયોગની નિવૃત્તિને સામાયિક ચારિત્ર કહે છે, તેના વિનય સામાયિક ચારિત્ર વિનય કહેવાય છે. જે મહાત્રતરૂપ ચારિત્ર પૂર્વપર્યાયનું છેદન કરીને પુનઃ આરોપિત કરવામાં આવે છે તે છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર કહેવાય છે તેના વિનય છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર

તત્પરિહારવિશુદ્ધિકં ચારિત્રં તત્સમ્બન્ધિવિનયતપઃ પરિહારવિશુદ્ધિક ચારિત્ર
વિનયતપ ઉચ્યતે । એવમ્-સમ્પર્પેતિ સંસારે પરિભ્રમતિ અનેનેતિ સમ્પરાયઃ કષા-
યાદયઃ સૂક્ષ્મો લોભાડવશેષરૂપઃ સમ્પરાયો યત્ર તત્ સૂક્ષ્મસમ્પરાયં તદ્ રૂપં યચારિત્રં
તત્સમ્બન્ધિ વિનયતપઃ સૂક્ષ્મસમ્પરાયચારિત્રવિનયતપઃ ઉચ્યતે । एवं-યાથાતથ્યેન
આ-સમન્તાત્ યત્ સ્થ્યાતં તીર્થકૃદ્ભિરુપદિષ્ટમ્ કષાયવર્જિતં ચારિત્રં તદ્ યથા-
સ્થ્યાત્ચારિત્રં તત્સમ્બન્ધિ વિનયતપો યથાસ્થ્યાત્ચારિત્રવિનયતપ ઉચ્યતે ॥ ઉક્ત-
શ્લોષપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘સ્થે કિં તં ચરિત્તવિણે ? ચરિત્તવિણે પંચવિહે
પળન્તે, તં જહા-સામાહ્યચરિત્તવિણે ? છેદોવદ્વાવણિયચરિત્તવિણે ?
પરિહારવિશુદ્ધિયચરિત્તવિણે ? સુદુમસંપરાયચરિત્તવિણે ? અહક્લા-
યચરિત્તવિણે ? સ્થેયં ચરિત્તવિણે’ इति अथ कोऽसौ चारित्रविनयः ?

તપશ્ચર્યા કે દ્વારા કર્મ નિર્જરા રૂપ વિશુદ્ધિ કી જાતી હૈ, વહ પરિહાર
વિશુદ્ધિ ચારિત્ર કહલાતા હૈ, ઉસકા વિનય પરિહારવિશુદ્ધિ ચારિત્ર
વિનય હૈ । જિનકે કારણ જીવ સંસાર મેં પરિભ્રમણ કરતા હૈ, ઉન કષાયો
કો સમ્પરાય કહતે હૈ । જિસ ચારિત્ર કી દશા મેં સમ્પરાય સૂક્ષ્મ
લોભાંશ કે રૂપ મેં શેષ રહ જાતા હૈ, ઉસ ચારિત્ર કો સૂક્ષ્મસામ્પરાય
કહતે હૈ । સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર કા વિનય સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર
વિનય કહલાતા હૈ । તીર્થંકર ભગવાન ને યથાર્થ રૂપ સે જો ચારિત્રનિષ્ક-
ષાય રૂપ કહા હૈ, વહ યથાસ્થ્યાત ચારિત્ર હૈ । ઉસકા વિનય યથાસ્થ્યાત
ચારિત્રવિનય કહલાતા હૈ । ઔપપાતિક સૂત્ર કે ત્રીસવેં સૂત્ર મેં કહા હૈ-
પ્રશ્ન-ચારિત્ર વિનય કે કિતને ભેદ હૈ ?

ઉત્તર-ચારિત્ર વિનય કે પાંચ ભેદ હૈ-(૧) સામાયિક ચારિત્ર વિનય

વિનય છે જે ચારિત્રમાં પરિહાર નામક તપશ્ચર્યા દ્વારા કર્મનિર્જરારૂપ વિશુદ્ધિ
કરવામાં આવે છે તે પરિહાર વિશુદ્ધ ચારિત્ર કહેવાય છે, તેનો વિનય પરિ-
હાર વિશુદ્ધ ચારિત્ર વિનય છે. જેના કારણે જીવ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરે છે
તે કષાયને સમ્પરાય કહે છે. જે ચારિત્રની દશામાં સમ્પરાય સૂક્ષ્મ-લોભાંશના
રૂપમાં જ શેષ રહી જાય છે તે ચારિત્રને સૂક્ષ્મસામ્પરાય કહે છે. સૂક્ષ્મ-
સામ્પરાય ચારિત્રનો વિનય સૂક્ષ્મસમ્પરાય ચારિત્ર વિનય કહેવાય છે.
તીર્થંકર ભગવાને યથાર્થ રૂપથી જે ચારિત્ર વિનય નિષ્કષાય રૂપ કહેલ છે તે
યથાખ્યાત ચારિત્ર છે. તેનો વિનય યથાખ્યાત ચારિત્ર વિનય કહેવાય છે.
ઔપપાતિકસૂત્રનાં ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહેલ છે--

પ્રશ્ન-ચારિત્ર વિનયના કેટલાં ભેદ છે ?

ઉત્તર-ચારિત્ર વિનયના પાંચ ભેદ છે-(૧) સામાયિકચારિત્ર વિનય

ચારિત્રવિનયઃ પશ્ચવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા સામાયિકચારિત્રવિનયઃ ૧ છેદોપસ્થાપ-
નીયચારિત્રવિનયઃ ૨ પરિહારવિશુદ્ધિકચારિત્રવિનયઃ ૩ સૂક્ષ્મસમ્પરાય ચારિત્ર-
વિનયઃ ૪ યથાહ્યાતચારિત્રવિનયઃ ૫ સ ષષ્ઠ ચારિત્રવિનયઃ ઇતિ ॥૨૭॥

મૂલમ્—મળવઙ્કાયવિનયતવે પચ્ચેયં દુવિહે, પસત્થાપસત્થ-
મળવઙ્કાયવિનયાઙ્ મેયઓ ॥૨૮॥

છાયા—મનોવચ્ચઃ કાયવિનયતપઃ પ્રત્યેકં દ્વિવિધમ્, પ્રશસ્તાપ્રશસ્ત મનોવચ્ચઃ
કાયવિનયાદિ ભેદતઃ ॥૨૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વં તાવત્ ક્રમાગતં ચારિત્રવિનયતપઃ પશ્ચવિધત્વેન
પરૂપિતમ્, સમ્પતિ-ક્રમપ્રાપ્તં મનોવચ્ચઃ કાયવિનયતપઃ પ્રત્યેકં દ્વિવિધ્યેન પરૂપ-
યિતુમાહ—‘મળવઙ્કાયવિનયતવે’ ઇત્યાદિ । મનોવચ્ચઃ કાયવિનયતપઃ—મનો-

(૨) છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર વિનય (૩) પરિહાર વિશુદ્ધિ ચારિત્ર વિનય
(૪) સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર વિનય ઓર (૫) યથાહ્યાત ચારિત્ર વિનય ।
યહ ચારિત્ર વિનય કે પાંચ ભેદ હૈં ॥૨૭॥

‘મળવઙ્કાયવિનયતવે’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—પ્રશસ્ત ઓર અપ્રશસ્ત મન, વચ્ચન, કાય વિનય કે ભેદ
સે મનોવિનય, વચ્ચન વિનય ઓર કાયવિનય કે દો-દો ભેદ હૈં ॥૨૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—હસસે પૂર્વ ચારિત્ર વિનય કે પાંચ ભેદોં કા નિરૂપણ
કિયા ગયા, અવ ક્રમપ્રાપ્ત મન-વચ્ચન-કાયવિનય મેં સે પ્રત્યેક કે દો-
દો ભેદોં કા પરૂપણ કરતે હૈં—

મનો વિનય તપ, વચ્ચન વિનય તપ ઓર કાય વિનય તપ મેં સે
પ્રત્યેક કે દો-દો ભેદ હૈં—પ્રશસ્ત મનો વિનય તપ ઓર અપ્રશસ્ત મનો

(૨) છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર વિનય (૩) પરિહાર વિશુદ્ધચારિત્ર વિનય (૪)
સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર વિનય અને (૫) યથાહ્યાત ચારિત્ર વિનય આ
ચારિત્ર વિનયના પાંચ ભેદ છે. ॥૨૭॥

‘મળવઙ્કાયવિનયતવે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—પ્રશસ્ત અને અપ્રશસ્ત મન વચ્ચન, કાયવિનયના ભેદથી મનો-
વિનય, વચ્ચનવિનય અને કાયવિનયના અબ્ધે ભેદ છે. ॥૨૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—આની પહેલાં ચારિત્રવિનયના પાંચ ભેદોનું નિરૂપણ
કરવામાં આવું હવે ક્રમપ્રાપ્ત મન-વચ્ચન-કાયવિનયમાંથી પ્રત્યેકના બે-બે
ભેદોનું પ્રરૂપણ કરી છીએ—

મનોવિનય તપ, વચ્ચનવિનયતપ અને કાયવિનય તપમાંથી પ્રત્યેકના બે બે
ભેદ છે—પ્રશસ્તમનોવિનયતપ અને અપ્રશસ્તમનોવિનય તપ, પ્રશસ્ત વચ્ચન વિનય

વિનયતપઃ ૧ વચોવિનયતપઃ ૨ કાયવિનયતપઃ ૩ ચ પ્રત્યેકં દ્વિવિધં ભવતિ ।
તથા—પ્રશસ્તાપ્રશસ્ત મનોવચઃ કાયવિનયાદિઃભેદતઃ, તથા ચ-પ્રશસ્તમનોવિનય-
તપઃ ૩ અપ્રશસ્ત મનોવિનયતપઃ ૨ પ્રશસ્તવચોવિનયતપઃ ૩ અપ્રશસ્તવચોવિનયતપઃ
૪ પ્રશસ્તકાયવિનયતપઃ ૫ અપ્રશસ્તકાયવિનયતપઃ ૬ ચેત્યેવં પ્રશસ્તાપ્રશસ્ત
ભેદેન પ્રત્યેકં દ્વિવિધ્યાત્ મનોવચઃકાયવિનયતપઃ પદ્ધિવિધં સમ્પદ્યતે । તત્ર—પ્રશસ્તમ્
અશ્વત્થજિતં યન્મનોઽન્તઃકરણમ્ તત્સમ્વન્ધિ વિનયતપઃ પ્રશસ્તમનોવિનયતપ
ઉચ્યતે । એશ્મ—અપ્રશસ્તં નાશ્વં—સદાપં યન્મનોઽન્તઃ—કરણં તન્મસ્વન્ધિ વિનય-
તપો—અપ્રશસ્ત મનોવિનય તપ ઉચ્યતે । એવં—પ્રશસ્તાપ્રશસ્ત વચોવિનયતપઃ, પ્રશ-
સ્તાપ્રશસ્ત કાયવિનયતપાદિ સ્વયમૂહનીયસ્ ॥૨૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વોક્તરીત્યા પશ્ચવિધં ચારિત્રવિનયતપઃ પ્રરૂપિતમ્,
સમ્પ્રતિ—ક્રમપ્રાપ્તં મનોવચઃ—કાયવિનયતપઃ પ્રત્યેકં દ્વિવિધ્યેન પ્રરૂપયિતુમાહ—
વિનય તપ, પ્રશસ્ત વચ્ચન વિનય તપ ઔર અપ્રશસ્ત વચ્ચન વિનય તપ,
પ્રશસ્ત કાય વિનય તપ ઔર અપ્રશસ્ત કાય વિનય તપ । હસ તરહ
પ્રત્યેક કે દો-દો ભેદ હોને સે તીનોં કે નિલકર છહ ભેદ હોતે હૈ । પ્રશસ્ત
મન અર્થાત્ નિર્મલ અન્તઃકરણ સંબંધી વિનય તપ કો પ્રશસ્ત મનો-
વિનય તપ કહતે હૈ । હસી પ્રકાર અપ્રશસ્ત અર્થાત્ પાપયુક્ત મન અર્થાત્
અન્તઃકરણ સંબંધી વિનય તપ કો અપ્રશસ્ત મનોવિનય તપ કહતે હૈ ।
હસી ભાંતિ પ્રશસ્ત ઔર અપ્રશસ્ત વચ્ચન ઔર કાય સંબંધી વિનયોં કા
ભી સ્વરૂપ સમજ્ઞ લેના ચાહિય ॥૨૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પાંચ પ્રકાર કે ચારિત્ર વિનય તપ કા નિરૂપણ
કિયા જા ચુકા, અજ્ઞ ક્રમપ્રાપ્ત મનોવિનય, વચ્ચન વિનય ઔર કાયવિનય
તપ કે પ્રત્યેક કે દો-દો ભેદોં કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

તપ અને અપ્રશસ્તવચ્ચન વિનય તપ, પ્રશસ્ત કાય વિનય તપ અને અપ્રશસ્ત
કાયવિનય તપ આ રીતે પ્રત્યેકના બે-બે ભેદ હોવાથી ત્રણેના મળીને
છ ભેદ થાય છે પ્રશસ્ત મન અર્થાત્ નિર્મળ અન્તઃ કરણ સંબંધી વિનય
તપ ને પ્રશસ્તમનોવિનય તપ કહે છે એવી જ રીતે અપ્રશસ્ત અર્થાત્ પાપ
યુક્ત મન અર્થાત્ અન્તઃ કરણ સંબંધી વિનય તપને અપ્રશસ્તમનો વિનય
તપ કહે છે,

તેવીજ રીતે પ્રશસ્ત અને અપ્રશસ્ત વચ્ચન અને કાયસંબંધી વિનયોનું
પણ સ્વરૂપ સમજ્ઞ લેવું જોઈએ. ॥ ૨૮ ॥

પાંચ પ્રકારના ચારિત્રવિનય તપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું. હવે ક્રમપ્રાપ્ત
મનોવિનય વચ્ચનવિનય અને કાયવિનય તપના પ્રત્યેકના બે બે ભેદોનું નિરૂપણ
કરીએ છીએ—

‘मणवह्कायविनयतवे पञ्चेयं दुविहे, पसत्थापसत्थमणवह्काय विण-
याह भेयओ’ इति । मनोवचः-कायविनयतपः-मनोविनयतपः, वचोविनयतपः,
कायविनयतपश्च प्रत्येकं द्विविधं भवति, तद्यथा-प्रशस्ताप्रशस्तमनोवचःकायविन-
यादि भेदतः । तथा च-प्रशस्तमनोविनयतपः १ अप्रशस्तमनोविनयतपः २ प्रशस्त-
वचोविनयतपः ३ अप्रशस्तवचो विनयतपः ४ प्रशस्तकायविनयतपः ५ अप्रशस्तकाय-
विनयतपः ६ चैत्येवं प्रत्येकं प्रशस्ताप्रशस्तभेदेन द्वैविध्यात् षड्विधं तावत् मनो-
वचःकायविनयतपो भवतीति भावः । तत्र प्रशस्तम्-अवद्यवर्जितं पापरहितं यन्म-
नस्तत्सम्बन्धि विनयतपः प्रशस्तमनोविनयतपः उच्यते । एवम् अप्रशस्तं सावद्यं
सपापं-प्राणातिपाताधारम्भक्रियायुक्तं कर्कशता-कटुकता, निष्ठुरता-परुषतादि
सहितञ्च यन्मनोऽन्तःकरणं तत्सम्बन्धि विनयतपोऽप्रशस्तमनोविनयतप उच्यते ।
एवम्-प्रशस्ताप्रशस्तवचोविनयतपः, प्रशस्ताऽप्रशस्तकायविनयतपश्चाऽप्युक्तरीत्या-
ऽवगन्तव्यम् ॥ उक्तश्रौपपातिके ३० सूत्रे-‘से किं तं मणविणए? मणविणए

मनो विनय तप के, वचनविनय तप के और कायविनय तप के दो
दो भेद हैं । वे इस प्रकार हैं-प्रशस्त वचन विनय तप और अप्रशस्त
मनो विनय तप, प्रशस्त मनोविनय तप और अप्रशस्त वचन विनय
तप, प्रशस्त काय विनय तप और अप्रशस्त काय विनय तप । तीनों के
दो-दो भेद होने से सब मिलकर छह भेद होते हैं । प्रशस्त अर्थात् पाप
रहित मन संबंधी विनय को प्रशस्त मनोविनय तप कहते हैं । अप्र-
शस्त अर्थात् पापयुक्त-प्राणातिपात आदि से युक्त, कर्कशता, कटुकता,
निष्ठुरता, परुषता आदि सहित जो अन्तःकरण है, उसका विनय अप्र-
शस्त मनोविनय कहलाता है । प्रशस्त और अप्रशस्त वचन विनय
तथा कायविनय भी इस प्रकार समझ लेना चाहिए । औपपातिक सूत्र
के तीसरे सूत्र में कहा है ।

मनोविनय तपना वचनविनय तपना अने कायविनय तपना भण्णे लेह
छे. ने आ. प्रमाणे छे.-प्रशस्तमनोविनय तप अने अप्रशस्तमनोविनय तप
प्रशस्तवचनविनयतप अने अप्रशस्तवचनविनय तप, प्रशस्त कायविनय तप
अने अप्रशस्त कायविनय तप. त्रिणुना भण्णे लेह होवाथी भधा भणीने ६
लेह थाय छे. प्रशस्त अर्थात् पापरहित मनसंबन्धी विनयने प्रशस्त मनोविनय
तप कहे छे. अप्रशस्त अर्थात् पापयुक्त प्राणातिपात वजरेथी युक्त, कर्कशता
कटुकता निष्ठुरता, परुषता आदि सहित ने अन्तःकरण छे. तेनो विनय अप्रशस्त
मनोविनय कहेवाय छे. प्रशस्त अने अप्रशस्त वचन विनय तथा कायविनय
पणु आ. प्रमाणे समञ्ज देवा नेह्णे. औपपातिक सूत्रना त्रीसमां सूत्रमां कहुं छे

દુવિહે પળણત્તે, તં જહા-પસત્થમણવિણે ૧ અપ્પસત્થમણવિણે ૨, સે કિં તં અપ્પસત્થમણવિણે ? અપ્પસત્થ મણવિણે-જે ય મળે સાવ-જ્જે ૧ સકિરિણે ૨ સકકસે-૩ કહુણે ૪ ણિહુરે-૫ ફરુસે-૬ અળ્હયરે-૭ છેદકરે-૮ ભેદકરે ૯ પરિતાવળકરે ૧૦ ઉદ્ધવળકરે-૧૧ ભૂઓવધાહણે-૧૨ તહપ્પગારં મળો ણો પહારેજ્ઞા, સે તં અપ્પસત્થમણવિણે, સે કિં તં પસત્થમણવિણે ? પસત્થમણવિણે તં ચેવ પસત્થં ણેયવ્વં, એવં ચેવ વહવિણઓવિણે એહિં પેહિં ચેવ ણેયવ્વો, સે તં વહવિણે, સે કિં તં કાયવિણે ? કાયવિણે દુવિહે પળણત્તે, તં જહા-પસત્થકાયવિણે ૧ અપસત્થકાયવિણે-૨ સે કિં તં અપસત્થકાયવિણે-૩ અપ્પસત્થકાયવિણે સત્તવિહે પળણત્તે તં જહા-અણાઉત્તં ગમળે-૧ અણાઉત્તં ઠાળે-૨ અણાઉત્તં નિસીયળે-૩ અણાઉત્તં તુચ્છળે-૪ અણાઉત્તં ઉલ્લંઘળે-૫ અણાઉત્તં પલ્લંઘળે-૬ અણાઉત્તં સંઘિદ્ધિકાયજોગજુંજળયા-૭ સે તં અપ્પસત્થકાયવિણે, પસત્થકાયવિણે એવં ચેવ પસત્થં ભાણિયવ્વં, સે તં પસત્થ કાયવિણે, સે તં કાયવિણે” હિતિ ।

અથકોડસી મનોવિનયઃ ૧ મનોવિનયો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ તચ્ચથા પ્રશસ્તમનોવિનયઃ અપ્રશસ્તમનોવિનયઃ ૨ અથ કોડસી અપ્રશસ્તમનોવિનયઃ ૩ અપ્રશસ્તમનોવિનયઃ-યચ્ચ મનઃ સાવધં-સક્રિયં-સ કર્કશં-કટુકં-નિષ્ઠુરં-પરુષમ્-આસ્રવકરં-

પ્રશ્ન-મનોવિનય કે કિતને ભેદ હૈં ?

ઉત્તર-મનોવિનય કે દો ભેદ હૈં-પ્રશસ્ત મનોવિનય ઓર અપ્રશસ્ત મનોવિનય ।

પ્રશ્ન-અપ્રશસ્ત મનોવિનય કિસે કહતે હૈં ?

ઉત્તર-જો મન પાપયુક્ત હૈ, ક્રિયાયુક્ત હૈ, કર્કશ હૈ, કટુક હૈ, નિષ્ઠુર હૈ, પરુષ હૈ આસ્રવજનક હૈ, છેદકારી હૈ, ભેદકારી હૈ, પરિતાપકારી હૈ,

પ્રશ્ન-મનોવિનયના કેટલા ભેદ છે ?

ઉત્તર-મનોવિનયના બે ભેદ છે. પ્રશસ્ત મનોવિનય અને અપ્રશસ્ત મનોવિનય

પ્રશ્ન-પ્રશસ્ત મનોવિનય કેને કહે છે ?

ઉત્તર-જે મન પાપયુક્ત છે, ક્રિયાયુક્ત છે, કર્કશ છે, કટુક છે, નિષ્ઠુર છે, પરુષ છે, આસ્રવજનક છે, છેદકારી છે, ભેદકારી છે, પરિતાપકારી છે, ઉપદ્રવકારી છે,

છેદકરં-ભેદકરં-પરિતાપનકરમ્-ઉપદ્રવણકરં-ભૂતોપધાતિકમ્, તથાપ્રકારં મનો ન પ્રધારયેત્, સ एषोऽप्रशस्तमनोविनयः । अथ कोऽसौ प्रशस्तमनोविनयः ? प्रशस्त-मनोविनयः तच्चैव प्रशस्तं ज्ञातव्यम्, एवञ्चैव वचोविनयोऽपि एतैः पदैश्चैव ज्ञात-व्यः स एव वचोविनयः, अथ कोऽसौ कायविनयः ? कायविनयो द्विविधः, प्रज्ञप्तः, तद्यथा-प्रशस्तकायविनयः अप्रशस्तकायविनयः, अथ कोऽसौ अप्रशस्तकायविनयः ? अप्रशस्तकायविनयः सप्तविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-अनायुक्तं गमनम्-१ अनायुक्तं स्थानम्-२ अनायुक्तं निषदनम्-३ अनायुक्तं त्वग्र्वर्तनम्-४ अनायुक्तम् उल्लंघनम्-५ उपद्रवकारी है, भूतो का घातक है, ऐसे मन का व्यापार न होने देना अप्रशस्त मनोविनय है ।

પ્રશ્ન--પ્રશસ્તમનોવિનય કિસે કહતે હૈં ?

ઉત્તર--પૂર્વોક્ત અપ્રશસ્ત મન સે વિપરીત અર્થાત્ નિરવચ, ક્રિયા હીન આદિ મન કા વ્યાપાર હોના પ્રશસ્તમનોવિનય હૈ ।

પૂર્વોક્ત પદો' કે અનુસાર હી વચનવિનય મી સમજ લેના ચાહિયે કેવલ 'મન' કે સ્થાન પર 'વચન' શબ્દ કા પ્રયોગ કરના ચાહિયે ।

પ્રશ્ન--કાયવિનય કિસે કહતે હૈં ?

ઉત્તર--કાયવિનય દો પ્રકાર કા હૈ-પ્રશસ્તકાયવિનય ઓર અપ્ર-શસ્તકાયવિનય ।

પ્રશ્ન-અપ્રશસ્તકાયવિનય કિસે કહતે હૈં ?

ઉત્તર--અપ્રશસ્તકાયવિનય સાત પ્રકાર કા હૈ, યથા-(૧) ઉપયોગ શૂન્ય હોકર ચલના (૨) ઉપયોગહીન હોકર સ્વડા હોના (૩) ઉપયોગરહિત

પ્રાણીઓનું ઘાતક છે. એવા મનનો વ્યાપાર ન થવા દેવો અપ્રશસ્તમનોવિનય છે.

પ્રશ્ન--પ્રશસ્તમનોવિનય કેને કહે છે ?

ઉત્તર--પૂર્વોક્ત અપ્રશસ્ત મનથી વિપરીત અર્થાત્ નિરવચ, કિયારહિત આદિ મનનો વ્યાપાર હોવો પ્રશસ્તમનોવિનય છે.

પૂર્વોક્ત પદ અનુસાર જ વચનવિનય પણ સમજ લેવો જોઈએ. માત્ર મનની જગ્યાએ વચન શબ્દનો પ્રયોગ કરવો જોઈએ.

પ્રશ્ન--કાયવિનય કેને કહે છે ?

ઉત્તર--કાયવિનય બે પ્રકારના છે, પ્રશસ્તકાયવિનય અને અપ્રશસ્ત કાયવિનય

પ્રશ્ન--અપ્રશસ્તકાયવિનય કેને કહે છે ?

ઉત્તર--અપ્રશસ્તકાયવિનય સાત પ્રકારના છે. જેમકે-(૧) ઉપયોગશૂન્ય થઈને ચાલવું (૨) ઉપયોગહીન થઈને ઉભા થવું (૩) ઉપયોગરહિત બેસવું

અનાયુક્તં પ્રહૃન્નમ્ ૬ અનાયુક્તં સર્વોન્દ્રિયકાયયોગયોજનતા ૭ સ ઇપોઽપ્રશસ્ત
કાયવિનયઃ પ્રશસ્તકાયવિનયઃ એવૈવ પ્રશસ્તં માણિતવ્યમ્, સ એપ પ્રશસ્તકાય-
વિનયઃ, સ એપ કાયવિનયઃ ઇતિ ॥૨૮॥

મૂલમ્—લોગોવચારવિણયતવે સત્તવિહે, અભાસવત્તિયાઈ
મેયઓ ॥૨૯॥

છાયા—લોકોપચારવિનયતપઃ સપ્તવિધમ્, અભ્યાસવૃત્તિતાદિ ભેદતઃ ॥૨૯॥
તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વં તાવત્—સપ્તવિધેષુ વિનયતપઃસુ મનોવચઃ કાય
વિનયતપઃ સવિસ્તરં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ—લોકોપચારવિનયતપઃ સપ્તવિધત્વેન
પ્રરૂપયિતુમાહ—‘લોગોવચારવિણયતવે’ ઇત્યાદિ । લોકોપચારવિનયતપઃ—
લોકાનામુપચરણં લોકોપચાર સ્તત્સમ્બન્ધિ વિનયતપો લોકવ્યવહારસાધકવિનય

બેઠના (૪) ઉપયોગરહિત હેટના (૫) ઉપયોગરહિત હોકર ઉલ્લંઘન કરના
—એક વાર લાંઘના (૬) ઉપયોગરહિત હોકર વાર-વાર લાંઘના ધોર (૭)
ઉપયોગ રહિત હોકર સર્વ ઇન્દ્રિયોં કા કાયયોગ કા વ્યાપાર કરના, યહ
અપ્રશસ્તકાયવિનય છે । ઇસસે વિપરીત પ્રશસ્તકાયવિનય કહલાતા છે ।

‘લોગોવચારવિણયતવે સત્તવિહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—લોકોપચાર વિનય તપ સાત પ્રકાર કા છે—નિકટ મેં રહના
આદિ ॥૨૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—સાત પ્રકાર કે વિનય મેં સે મન-વચન-કાય
વિનય તપ કા વિસ્તાર પૂર્વક વિવેચન ક્રિયા જા ચુકા, અવ લોકોપચાર
વિનય તપ કે સાત ભેદોં કા પ્રતિપાદન કરતે હેં—

લોક વ્યવહાર કા સાધક વિનય લોકોપચાર વિનય કહલાતા છે ।

(૪) ઉપયોગરહિત સુવૃં (૫) ઉપયોગરહિત થઇને ઉલ્લંઘન કરવું એકવાર લાંઘવું
(૬) ઉપયોગરહિત થઇને વારંવાર લાંઘવું અને (૭) ઉપયોગરહિત થઇને અધી
ઇન્દ્રિયોના અને કાયયોગના વ્યાપાર કરવો. આ અપ્રશસ્તકાયવિનય છે, આથી
વિપરીત પ્રશસ્તકાયવિનય કહેવાય છે. ॥ ૨૮ ॥

‘લોગોવચારવિણયતવે સત્તવિહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—લોકોપચારવિનય સાત પ્રકારનો છે—નજીકમાં રહેવું વગેરે ॥૨૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—સાત પ્રકારના વિનય તપમાંથી મન-વચન-કાયવિનય
તપનું વિસ્તાર પૂર્વક વિવેચન કરવામાં આવ્યું. હવે લોકોપચાર વિનય તપના
સાત ભેદોનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

લોકવ્યવહારનો સાધક વિનય લોકોપચારવિનય તપ કહેવાય છે. તે સાત

तपः सप्तविधं भवति, अभ्यासवृत्तितादि भेदतः । तथा च-अभ्यासवृत्तिताविनय-
तपः १ आदिना परच्छन्दानुवर्तिताविनयतपः २ कार्यार्थशुश्रूषाविनयतपः ३ कृत-
प्रतिक्रियाविनयतपः ४ आर्तगवेषणताविनयतपः ५ देशकालज्ञता विनयतपः ६
सर्वाङ्गेषु-अप्रतिलोभता विनयतप ७ अति । तत्र-कलाऽऽचार्यादीनां मधुरवच-
नादिरूप अभ्यासवृत्तिता विनयतप उच्यते १ पराभिप्रायानुवर्तनशीलतारूप
परच्छन्दानुवर्तिताविनयतप उच्यते २ विद्यादि प्राप्त्यर्थं भक्तपानाद्यानयन द्वारा
शुश्रूषाकरणं कार्यहेतुशुश्रूषाविनयतप उच्यते ३ भक्तादिनोपचारे कृते सति प्रसन्नाः
सन्तो गुरवो ये श्रुतदानरूपां प्रतिक्रियां प्रत्युपकारं करिष्यन्तीति बुद्ध्या गुर्वादीनां
शुश्रूषणरूप प्रतिक्रियाविनयतप उच्यते ४ आर्तस्य-पीडितस्य गवेषणतां, औषध

वह सात प्रकार का है-(१) अभ्यासवृत्तिता (२) परच्छन्दानुवर्तिता (३)
(३) कार्यार्थशुश्रूषा (४) कृत प्रतिक्रिया (५) आर्तगवेषणता (६) देशका-
लज्ञता और (७) सर्व पदार्थों में अप्रतिलोभिता ।

इनमें से (१) ज्ञानाचार्य (ज्ञान की शिक्षा देनेवाले शिक्षक) के
प्रति मधुर वचन आदि का प्रयोग करना अभ्यासवृत्तिता विनय तप
कहलाता है । (२) दूसरे के अभिप्राय को तोड़कर तदनुसार वर्ताव
करना परच्छन्दानुवर्तिता विनय तप हैं । (३) ज्ञान आदि की
प्राप्ति के लिए आहार-पानी आदि लाकर सेवा करना कार्य हेतु
शुश्रूषाविनय तप कहलाता है । (४) आहार-पानी द्वारा सेवा करने पर
गुरु प्रसन्न होकर सुखे भुवन का दान देकर प्रत्युपकार करेंगे, ऐसे अभि-
प्राय से गुरु आदि की शुश्रूषा करना कृतप्रतिक्रिया विनय तप है । (५)
रोगी को औषध लेषण आदि देकर उसका उपकार करना आर्तगवे-

प्रकारने। छे-(१) अभ्यासवृत्तिता (२) परच्छन्दानुवृत्तिता (३) कार्यार्थशुश्रूषा (४)
कृतप्रतिक्रिया (५) आर्तगवेषणता (६) देशकालज्ञता अने (७) सर्वपदार्थोंमां
अप्रतिलोभता

आशांथी (१) ज्ञानाचार्य (ज्ञानने। ओध आपनार शिक्षक) नी प्रत्ये
मधुर वचन वगेरेने। प्रयोग करवे। अभ्यासवृत्तिता विनयतप कडेवाय छे.
(२) भीजना अभिप्रायने समजने तदनुसार वर्ताव करवे। परच्छन्दानुवृत्तिता
विनयतप छे. (३) ज्ञान वगेरेनी प्राप्तिने माटे आहारपाणी वगेरे
दावीने सेवा करवी कार्यहेतु शुश्रूषाविनय तप कडेवाय छे. (४) आहारपाणी
द्वारा सेवा करवाथी गुरु प्रसन्न थछने मने श्रुत दान दछने प्रत्युपकार करशे
ओवा आशयथी गुरु वगेरेनी शुश्रूषा करवी कृतप्रतिक्रिया विनयतप छे. (५)
रोगीने औषध लेषण वगेरे आपीने तेमने। उपकार करवे। आर्तगवेषणता

भैषज्यादिना दुःखितस्योपकाररूपा तत्करणम् आर्तगवेषणता विनयतप उच्यते ६ देशकालोचिनार्थसम्पादनरूप देशकालज्ञता विनयतप उच्यते ६ सर्वप्रयोजने-
ष्वानुकूल्यरूपं सर्वार्थेषु-अप्रतिलोभता विनयतपो भवति ७॥ ॥२९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वोक्तरीत्यासप्तविधविनयतपःसु यथाक्रमं मनोवचः काय
विनयतपः सविस्तरं प्ररूपितम्, सम्प्रति—सप्तमं लोकोपचारविनयतपः सप्तविधत्वेन
प्ररूपयितुमाह—‘लोकोपचारविणपतवे सत्ताविहे अभ्यासवृत्तियाइभे-
यओ—’ इति । लोकोपचारविनयतपः—लोकव्यवहारसाधकविनयतपः सप्तविधं
भवति, अभ्यासवृत्तितादिभेदतः । तथाच—अभ्यासवृत्तिताविनयतपः—परच्छन्दानु-
वर्तिताविनयतपः—२ कार्यभागत्यर्थं शुश्रूषादिकरणविनयतपः—३ कृतप्रतिक्रियावि-
नयतपः—४ आर्तगवेषणताविनयतपः—५ देशकालज्ञताविनयतपः—६ सर्वार्थेषु

षणता विनय तप है । (६) देश और काल के अनुरूप अर्थ सम्पादन
करना—कार्य करना देशकालज्ञता विनय तप है । (७) समस्त प्रयोजनों
में अनुकूलता अप्रतिलोभता विनय तप है ॥२९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—सात प्रकार के विनय तप में से क्रमानुसार
मन वचन-कायविनय तप का विस्तार पूर्वक निरूपण किया गया, अब
सातवें लोकोपचार विनय तप के सात भेदों का प्रतिपादन करते हैं—

लोक व्यवहार साधक तप लोकोपचार विनय तप कहलाता है ।
अभ्यास वृत्तिता आदि के भेद से उसके सात भेद हैं—(१) अभ्यास
वृत्तिता विनय तप (२) परच्छन्दानु वर्तिता विनय तप (३) शुश्रूषादि
करणविनय तप (४) कृतप्रतिक्रिया विनय तप (५) आर्तगवेषणता विनय
तप (६) देशकालज्ञता विनय तप और (७) अप्रतिलोभता विनय तप ।

विनयतप छे. (६) देश अने कालने अनुरूप अर्थ संपादन करवो—कार्य करवुं
देशकालज्ञता विनयतप छे. (७) समस्तप्रयोजनोभां अनुकूलता, अप्रतिलोभता
विनय तप छे ॥ २९ ॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—सात प्रकारता विनय तपभांती क्रमानुसार मन
वचन कायविनय तपनुं सविस्तर निरूपण करवाभां आण्युं हवे सातमा लोको-
पचार विनय तपना सात लेहोनुं प्रतिपादन करीये छीये—

लोकव्यवहार साधक तप लोकोपचारविनय तप कहलाय छे. अभ्यासवृत्तिता
आदिना लेहथी तेना सात लेह छे—(१) अभ्यासवृत्तिताविनय तप (२) परच्छन्दा-
नुवृत्तिताविनय तप (३) शुश्रूषाआदिकरणविनय तप (४) कृतप्रतिक्रियाविनय
तप (५) आर्तगवेषणताविनय तप (६) देशकालज्ञताविनय तप अने (७)

અપ્રતિલોભતાવિનયતપઃ-૭ હત્યેવં સપ્તવિધં લોકોપચારવિનયતપો ભવતીતિભાવઃ । તત્ર-લોકાનામુપચરણં લોકોપચારસ્તમ્બન્ધિવિનયતપો લોકોપચારવિનયતપો बोध्यम् । તત્ર અભ્યાસવૃત્તિતા-કલાચાર્યાદીનાં મધુરભાષણરૂપા તદ્વરૂપં વિનયતપો-અભ્યાસવૃત્તિતાવિનયતપો-૧ પરચ્છન્દાનુવર્તિતા તાવત્-પરાશિષ્યાણાનુવર્તન-શીલતા તદ્વરૂપં તપઃ પરચ્છન્દાનુવર્તિતાતપ ઉચ્યતે-૨ વિદ્યાદિપ્રાપ્તિનિમિત્તં ગુર્વા-દીનાં શુશ્રૂષાકરણમ્, કાર્યસમ્પ્રાપ્તિહેતુકશુશ્રૂષાકરણવિનયતપો ભવતિ ૩ મત્તપાના-દિનોપચારે કૃતે સતિ ગુરવઃ પ્રસન્નાઃ સન્નો મે શ્રુતદાનરૂપાં પ્રતિક્રિયાં પ્રત્યુપકારં કરિષ્યન્તીતિ બુદ્ધ્યા ગુરુણાં શુશ્રૂષાકરણરૂપં કૃતપ્રતિક્રિયાવિનયતપઃ ઉચ્યતે-૪ આર્તસ્ય-પીડિતસ્યગવેષણતા ઔષધોપચારાદિના દુઃસ્વિતસ્યોપકરણં તદ્વરૂપમ્

यह सात प्रकार का लोकोपचार विनय तप है ।

લોગોં કા ઉપચાર કરના લોકોપચાર કહલાતા હૈ । લોકોપચાર સંબંધી વિનય તપ કો લોકોપચાર વિનય તપ કહલૈ હૈ । ઉસકે ભેદોં કા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર હૈ-(૧) જ્ઞાનાચાર્ય આદિ કા મધુર ભાષણ અભ્યાસ વૃત્તિતાવિનય તપ કહલાતા હૈ । (૨) દૂસરે કૈ અભિપ્રાય કો તાડ કર તદનુસાર કાર્ય કરના પરચ્છન્દાનુવર્તિતા વિનય તપ હૈ । (૩) વિદ્યા આદિ કી પ્રાપ્તિ નિમિત્ત ગુરુ આદિ કી શુશ્રૂષા કરના કાર્યસમ્પ્રાપ્તિ હેતુક શુશ્રૂષાકરણ વિનય તપ કહલાતા હૈ । (૪) આહાર પાની આદિ કૈ દ્વારા ઉપચાર કરને સૈ પ્રસન્ન હોકર ગુરુ મુક્તે શ્રુત કા દાન રૂપ પ્રત્યુપકાર કરેંગે, એસે બુદ્ધિ સૈ ગુરુ કી શુશ્રૂષા કરના કૃતપ્રતિક્રિયા વિનય તપ કહલાતા હૈ । (૫) જો રુગ્ન હૈ ઉસકે લિપ ઔષધ ભેદજ લા દેના, દુઃસ્વી કા ઉપચાર કરના આર્તગવેષણતા વિનય તપ હૈ । (૬)

અપ્રતિલોભતાવિનય તપ આ સાત પ્રકારના લોકોપચાર વિનય તપ છે.

લોકોનો ઉપચાર કરવો લોકોપચાર કહેવાય છે. લોકોપચાર સંબંધી વિનય તપને લોકોપચાર વિનય તપ કહેવાય છે. તેના ભેદોનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે-(૧) જ્ઞાનાચાર્ય આદિના મધુરભાષણ અભ્યાસવૃત્તિતા વિનય તપ કહેવાય છે. (૨) બીજાના અભિપ્રાયને પામી જઈને તદનુસાર કર્મ કરવું પરચ્છન્દાનુવર્તિતાવિનય તપ છે (૩) વિદ્યા આદિની પ્રાપ્તિના નિમિત્તથી ગુરુ આદિની શુશ્રૂષા કરવી કાર્યસમ્પ્રાપ્તિહેતુક શુશ્રૂષાકરણવિનય તપ કહેવાય છે (૪) આહાર-પાણી વગેરે દ્વારા ઉપચાર કરવાથી પ્રસન્ન થઈને ગુરુ મને શ્રુતના દાન રૂપ પ્રત્યુપકાર કરશે એવી બુદ્ધિથી ગુરુની શુશ્રૂષા કૃતપ્રતિક્રિયા વિનય તપ કહેવાય છે. (૫) જે રોગી છે તેને માટે ઔષધ-ભેષજ લાવી આપવા દુઃખીનો

આર્તગવેષણતાવિનયતપો ભવતિ-૫ દેશકાલોચિતાર્થ સમ્પાદનરૂપ દેશકાલજ્ઞતા-
વિનયતપ ઉચ્યતે ૬ સર્વધયોજનેષુ આનુકૂલ્યં સર્વાર્થેષુ અપ્રતિલોભતાવિનયતપ-૭
ઓચ્યતે ॥ ઉક્તઔપપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-“સે કિં તં લોગોદયારવિણ-?
લોગોદયારવિણ સત્તવિહે પળન્તે, તં જહા-અભાસવર્તિયં ૧ પરચ્છં-
દાનુવર્તિયં-૨ કલ્પજહેઓ-૩ કલ્પપઢિકિરિયા-૪ અસ્તમવેસળયા-૫ દેસ-
કાલળુયા-સવ્વદ્દેસુ અપ્પઢિલોભના-૭ સે તં લોગોદયારવિણ સે તં
વિણ-” ઇતિ । અથ કોઽસૌ લોકોપચારવિનયઃ ? લોકોપચારવિનયઃ સપ્ત-
વિધઃ પ્રજ્ઞઃ-અભ્યાસવૃત્તિતા-૧ પરચ્છન્દાનુવર્તિતા ૨ કાર્યહેતુ (શુશ્રૂષા) ૩
કૃતપ્રતિક્રિયા-૪ આર્તગવેષણતા-૫ દેશકાલજ્ઞતા-૬ સર્વાર્થેષુ અપ્રતિલોભતા-૭
સ એવ લોકોપચારવિનયઃ સ એવ વિનય ઇતિ ॥૨૯॥

મૂલમ્-વિહસગ્ગે તવે હુવિહે, દવ્વભાવમેયઓ ॥૩૦॥

છાયા-“વ્યુત્સર્ગતપો દ્વિવિધમ્, દ્રવ્યભાવમેદતઃ-” । ૩૦॥

દેશ ઓર કાલ કે અનુરૂપ અર્થસમ્પાદન કરના દેશ કાલજ્ઞતા વિનય
તપ કહલાતા હૈ । (૭) સ્વ ધયોજનોં મેં અનુકૂલ હોના અપ્રતિલોભતા
વિનય તપ હૈ । ઔપપાતિક સૂત્ર કે તીસવેં સૂત્ર મેં કહા હૈ-

પ્રશ્ન-લોકોપચાર વિનય કે કિતને ભેદ હૈં ?

ઉત્તર-લોકોપચાર વિનય કે સાત ભેદ હૈં, યથા-(૧) અભ્યાસ
વૃત્તિતા (૨) પરચ્છન્દાનુવર્તિતા (૩) કાર્યહેતુશુશ્રૂષા (૪) કૃતપ્રતિક્રિયા
(૫) આર્તગવેષણતા (૬) દેશકાલજ્ઞતા ઓર (૭) સર્વાર્થેં મેં અપ્રતિલો-
ભતા । યહ સ્વ લોકોપચાર કહલાતા હૈ ॥૨૯॥

‘વિહસગ્ગે તવે હુવિહે’ ઉત્પાદિ ।

ઉપકાર કરવો આર્તગવેષણતાવિનય તપ છે. (૬) દેશ અને કાળને અનુરૂપ
અર્થ સમ્પાદન કરવું દેશકાલજ્ઞતા વિનય તપ કહેવાય છે (૭) અધા પ્રયોજનોમાં
અનુકૂળતા હોવી અપ્રતિલોભતા વિનય તપ છે. ઔપપાતિક સૂત્રના
ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહ્યું છે-

પ્રશ્ન-લોકોપચાર વિનયના કેટલા ભેદ છે?

ઉત્તર-લોકોપચાર વિનયના સાત ભેદ છે જેવાકે-(૧) અભ્યાસવૃત્તિતા
(૨) પરચ્છન્દાનુવર્તિતા (૩) કાર્યહેતુશુશ્રૂષા (૪) કૃતપ્રતિક્રિયા (૫) આર્તગ-
વેષણતા (૬) દેશકાલજ્ઞતા અને (૭) સર્વાર્થિક અપ્રતિલોભતા. આ અધાં
લોકોપચારવિનય કહેવાય છે. ॥ ૨૯ ॥

‘વિહસગ્ગે તવે હુવિહે’ ઉત્પાદિ

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्व तावद्-सप्तमाध्याये वैयावृत्य-स्वाध्यायो-ध्यानं चाऽऽभ्यन्तरतपः सविस्तरं प्ररूपितम्, साम्प्रतं षष्ठस्याभ्यन्तरतपसो व्युत्सर्गरूपस्य विशेषतः प्ररूपणं कर्तुमाह—‘विउत्सर्गो तवे दुविहे, द्रव्यभावभेदयो—’ इति । व्युत्सर्गः—वि—विशेषेण उत्पत्तकृष्टभावनया सर्गः—त्यागो व्युत्सर्गः, एतद्रूपं तपो व्युत्सर्गतप उच्यते । तद्—द्रव्यतोभावतश्चेति द्विविधम्, तत्र—द्रव्यव्युत्सर्गः—वाह्यवस्तुनां त्यागः । भावव्युत्सर्गः आभ्यन्तरवस्तुनस्त्यागः उक्तञ्चौपपातिके ३० सूत्रे—‘स्ये किं तं विउत्सर्गो ? विउत्सर्गो दुविहे पन्नत्ते, तं जहा—द्रव्यविउत्सर्गो ? आदविउत्सर्गो ? च—’ इति, अथ कोऽसौ व्युत्सर्गः ? व्युत्सर्गो द्विविधः प्रकृतः, तद्यथा—द्रव्यव्युत्सर्गः—१ भावव्युत्सर्गश्च—२ इति ॥३०॥

सूत्रार्थ—व्युत्सर्ग तप के दो भेद हैं—द्रव्यव्युत्सर्ग और भावव्युत्सर्ग ॥३०॥

तत्त्वार्थदीपिका—सातवें अध्याय में पहले वैयावृत्य, स्वाध्याय और ध्यान, इन आभ्यन्तर तपों का विस्तार पूर्वक प्ररूपण किया गया, अब छठे आभ्यन्तर तप व्युत्सर्ग की विशेषरूप से प्ररूपणा करते हैं—

‘व्युत्सर्ग’ शब्द का विश्लेषण इस प्रकार है—वि+उत्+सर्ग । ‘वि’ अर्थात् विशेष रूप से, ‘उत्’ अर्थात् उत्कृष्ट भावना से, ‘सर्ग’ अर्थात् त्याग करना व्युत्सर्ग कहलाता है । व्युत्सर्ग तप के दो भेद हैं—द्रव्यव्युत्सर्ग और भावव्युत्सर्ग । वाह्य वस्तुओं का त्याग करना द्रव्यव्युत्सर्ग तप है और आभ्यन्तर वस्तुओं का त्याग भावव्युत्सर्ग है । औपपातिक सूत्र के तीसरे सूत्र में कहा है—

प्रश्न—व्युत्सर्ग के कितने भेद हैं ?

उत्तर—व्युत्सर्ग के दो भेद हैं—द्रव्यव्युत्सर्ग और भावव्युत्सर्ग । ३।

सूत्रार्थ—व्युत्सर्ग तपना में दो भेद हैं—द्रव्यव्युत्सर्ग और भावव्युत्सर्ग । ३०।

तत्त्वार्थदीपिका—सातवा अध्यायમાં પ્રથમ વૈયાવૃત્ત્ય, સ્વાધ્યાય અને ધ્યાન—આ આભ્યન્તર તપોના વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે છઠ્ઠા આભ્યન્તર તપ વ્યુત્સર્ગની વિશેષ રૂપથી પ્રરૂપણ કરીએ છીએ

વ્યુત્સર્ગ શબ્દનું વિશ્લેષણ આ પ્રમાણે થાય છે—વિ+ઉત્+સર્ગ ‘વિ’ અર્થાત્ વિશેષ રૂપથી ઉત્ અર્થાત્ ઉત્કૃષ્ટ ભાવનાથી, ‘સર્ગ’ અર્થાત્ ત્યાગ કરવો વ્યુત્સર્ગ તપ છે જ્યારે આભ્યન્તર વસ્તુઓનો ત્યાગ ભાવવ્યુત્સર્ગ છે ઔપપાતિક સૂત્રના ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહ્યું છે

પ્રશ્ન—વ્યુત્સર્ગના કેટલા ભેદ છે

ઉત્તર—વ્યુત્સર્ગના બે ભેદ છે દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ અને ભાવવ્યુત્સર્ગ । ૩૦ ।

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—સ્પષ્ટા-દીપિકા ગમ્યાચેતિ ॥૩૦॥

મૂલમ્—દ્રવ્યવિડસસગતવે ચડવિવહે, સરીરવિડસગાઈ
ભેયઓ ॥૩૧॥

છાયા-દ્રવ્ય વ્યુત્સર્ગતપશ્ચતુર્વિધમ્, શરીરવ્યુત્સર્ગાદિભેદતઃ—” ॥૩૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાવત્-વ્યુત્સર્ગતપસો દ્વૈવિધ્યં પ્રરૂપિતમ્, તત્ર-વ્યુ-
ત્સર્ગતપસો દ્વૈવિધ્યં પ્રતિપાદયન્નાહ—“દ્રવ્યવિડસગતવે—” इत्यादि । द्रव्य व्यु-
त्सर्गतपः—द्रव्यस्य शरीरादे व्युत्सर्गः ममत्वत्यागः, तद्रूपं तप स्तावद् चतुर्विधं
भवति, । तद्यथा शरीरव्युत्सर्गादिभेदतः, तथा च—शरीरव्युत्सर्गं तपः १ आदिना—
गणव्युत्सर्गं तपः—२ उपधिव्युत्सर्गतपः—३ भक्तपानव्युत्सर्गतपञ्च—४ इत्येवं
चतुर्विधं द्रव्यव्युत्सर्गतपो भवति । तत्र शरीरस्य ममत्वत्यागः शरीरव्युत्सर्गं
तप उच्यते, विशेषेणोत्कृष्टभावनया त्यागस्यैव व्युत्सर्गपदार्थत्वात् । एवं—द्वादश

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—સ્પષ્ટ છે ઓર દીપિકા ટીકા સે સમજી જા સકતી
છે ॥૩૦॥

‘દ્રવ્ય વિડસસગતવે ચડવિવહે’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ તપ ચાર પ્રકાર કા છે—શરીર વ્યુત્સર્ગ
આદિ ॥૩૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—ઇસસે પહેલે વ્યુત્સર્ગ તપ કે દો ભેદો કા નિર્દેશ
કિયા ગયા થા, અબ ઉસકે દો ભેદો કા વ્યાખ્યાન કરતે હૈ—

શરીર આદિ દ્રવ્ય કા મમત્વ ત્યાગના દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ હૈ । ઇસકે ચાર
ભેદ હૈ—(૧) શરીરવ્યુત્સર્ગતપ (૨) ગણવ્યુત્સર્ગતપ (૩) ઉપધિવ્યુત્સર્ગ
તપ । શરીર સંબંધી મમતા કા ત્યાગ કરના અર્થાત્ અપને શરીર કો
મી અપને સે ભિન્ન માનના શરીરવ્યુત્સર્ગતપ કહલાતા હૈ । વિશેષરૂપ સે
ઔર ઉત્કૃષ્ટ ભાવના સે ત્યાગ કરના હી વ્યુત્સર્ગ શબ્દ કા અર્થ હૈ ।

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—સ્પષ્ટ છે અને દીપિકા ટીકાથી જ સમજી શકાય છે ॥૩૦॥

‘દ્રવ્યવિડસગતવે ચડવિવહે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ તપ ચાર પ્રકારના છે શરીરવ્યુત્સર્ગ આદિ ॥૩૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—આનાથી પહેલા વ્યુત્સર્ગ તપના બે ભેદોનો નિર્દેશ
કરવામાં આવ્યો હતો હવે તેના બે ભેદોનું નિરૂપણ કરીએ છીએ
શરીર આદિ દ્રવ્યનું મમત્વ છોડવું દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ છે. આના ચાર ભેદ છે (૧)
શરીરવ્યુત્સર્ગતપ (૨) ગણવ્યુત્સર્ગતપ (૩) ઉપધિવ્યુત્સર્ગ તપ અને (૪)
ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગ તપ. શરીર સંબંધી મમતાનો ત્યાગ કરવો અર્થાત્ પોતાના
શરીરને પણ પોતાનાથી ભિન્ન ગણવું શરીરવ્યુત્સર્ગ શબ્દનો અર્થ થાય છે.

પ્રતિમા આરાધનાય ગણસ્ય સાધુ સમુદાયસ્ય મનત્વત્યાગો ગણવ્યુત્સર્ગતપ ઉચ્યતે ।
 એવમ્ વસ્ત્રાદિ રૂપસ્યોપધેર્મમત્વત્યાગરૂપમ્ ઉપધિવ્યુત્સર્ગ તપ ઉચ્યતે । એવમ્
 અશનાદિ ત્યાગરૂપં ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગતપ ઉચ્યતે ॥૩૧॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વં તાવત્-પ્રાયશ્ચિત્તાદિ ષષ્ટિધા ભ્યન્તરતપઃસુ વૈયાવૃત્ય-
 સ્વાધ્યાયધ્યાનરૂપાણિ પશ્ચ તપાંસિ સવિસ્તરં પ્રરૂપિતાનિ, સમ્પ્રતિ-ષ્ઠ
 સ્ય વ્યુત્સર્ગનામકાઽભ્યન્તરતપસઃ સવિસ્તરં વિશેષં પ્રરૂપયિતુમાહ—‘દ્રવ્યવિડસર્ગ
 તવે ચઙ્ગવિદ્ધે, શરીરવિડસર્ગાહમેયમ્’—” ઇતિ । દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગતપઃ—
 દ્રવ્યસ્ય શરીરવસ્ત્રાદિ વ્યુત્સર્ગો વિશેષેણ-ઉત્કૃષ્ટભાવનાયા સર્ગો મમત્વત્યાગઃ
 દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ સ્તદ્રૂપં તપો દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ તપસ્તાવચ્ચતુર્વિધં ભવતિ, શરીરવ્યુત્સર્ગ
 દિભેદતઃ । તથા ચ-શરીરવ્યુત્સર્ગ તપઃ-૧ આદિના-ગણવ્યુત્સર્ગતપઃ-૨ ઉપધિ
 વ્યુત્સર્ગ તપઃ-૩ ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગતપઃ-૪ ત્યેવં ચતુર્વિધં દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ તપો

હસી પ્રકાર દ્વાદશ પ્રતિમાઓંની આરાધના આદિ કે લિપ ગણ અર્થાત્ સાધુ
 સમુદાય કા ત્યાગ કરના—ઁકાકી વિચરના ગણવ્યુત્સર્ગ હૈ ।
 વસ્ત્ર આદિ ઉપધિ કા ત્યાગ કર દેના ઉપધિવ્યુત્સર્ગ હૈ । હસી પ્રકાર
 અશનાદિ કા ત્યાગ કરના ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગતપ કહલાતા હૈ ॥૩૧॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહલે છહ પ્રકાર કે આભ્યન્તર તપોં મેં સે વૈયા-
 વૃત્ત્ય, સ્વાધ્યાય, ધ્યાન આદિ પાંચ કા વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપણ કિયા જા
 ચુકા, અબ છઠે આભ્યન્તરતપ વ્યુત્સર્ગ કા વિસ્તૃત ઁવં વિશેષ રૂપસે
 નિરૂપણ કિયા જાતા હૈ—

વિશેષ રૂપ સે, ઉત્કૃષ્ટ ભાવના સે, શરીર આદિ દ્રવ્યોંની મમતા
 કા ત્યાગ કરના દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ તપ કહલાતા હૈ । હસ તપ કે ચાર ભેદ હૈ—
 (૧) શરીરવ્યુત્સર્ગ તપ (૨) ગણવ્યુત્સર્ગ તપ (૩) ઉપધિવ્યુત્સર્ગતપ (૪)

એવી જ રીતે આર પડિમાઓંની આરાધના આદિને માટે ગણુ અર્થાત્ સાધુ
 સમુદાયનો ત્યાગ કરવો—એકલવિહારી વિચરણુ ગણુવ્યુત્સર્ગ છે. વસ્ત્ર આદિ
 ઉપધિને ત્યાગ કરી દેવો ઉપધિવ્યુત્સર્ગ છે એવી જ રીતે અશન આદિને
 ત્યાગ કરવો ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગ તપ કહેવાય છે. ॥ ૩૧ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલા છ પ્રકારના આભ્યન્તર તપોમાંથી વૈયાવૃત્ય
 સ્વાધ્યાય, ધ્યાન આદિ પાંચનું વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપણ કરવામાં આવ્યું. હવે
 છઠા આભ્યન્તરતપ વ્યુત્સર્ગનું વિસ્તૃત તેમજ વિશેષ નિરૂપણ કરવામાં આવે છે.

વિશેષરૂપથી ઉત્કૃષ્ટ ભાવનાથી શરીર આદિ દ્રવ્યોંની મમતાને ત્યાગ
 કરવો. દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગતપ કહેવાય છે. આ તપના ચાર ભેદ છે—(૧) શરીરવ્યુત્સર્ગ
 તપ (૨) ગણવ્યુત્સર્ગતપ (૩) ઉપધિવ્યુત્સર્ગતપ અને (૪) ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગ

મવતીતિ વોધ્યમ્ । તત્ર શરીરસ્ય ઔદારિકાદિરૂપસ્ય વ્યુત્સર્ગઃ વિશેષેણ-ઉત્કૃષ્ટ-
ભાવનયા મમત્વત્યાગઃ શરીરવ્યુત્સર્ગ સ્તદ્રૂપં તપઃ શરીરવ્યુત્સર્ગતપ ઉચ્યતે ।
એવં પ્રતિમા દ્યારાધનાય ગણસ્ય શ્રમણસમ્પ્રદાયસ્ય વ્યુત્સર્ગો વિશિષ્ટોત્કૃષ્ટ
ભાવનયા મમત્વત્યાગો ગણવ્યુત્સર્ગઃ મમત્વત્યાગઃ ઉપધિવ્યુત્સર્ગઃ તદ્રૂપં તપ ઉપ-
ધિ વ્યુત્સર્ગ તપઃ ઉચ્યતે । એવં-મક્તસ્યાઽઽહારસ્ય-પાનસ્ય જલસ્ય ચ વ્યુત્સર્ગઃ
પરિત્યાગો મક્તપાનવ્યુત્સર્ગ સ્તદ્રૂપં તપો મક્ત-પાન વ્યુત્સર્ગ તપ ઉચ્યતે ॥ ઉક્તશ્ચૌ-
પપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘સે કિં તં દ્વવિવિઝસ્રગ્ને-? દ્વવિવિઝસ્રગ્ને ચઙ્ગિવિહે
પણ્ણત્તે, તં જહા-સરીરવિઝસ્રગ્ને? ગણવિઝસ્રગ્ને? ઉવ્વહિવિઝસ્રગ્ને-૩
મક્તપાનવિઝસ્રગ્ને-૪ સે તં દ્વવિવિઝસ્રગ્ને’ ઇતિ । અથ કોઽસૌ દ્રવ્યવ્યુ-
ત્સર્ગઃ? દ્રવ્ય વ્યુત્સર્ગશ્ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્વથા શરીરવ્યુત્સર્ગઃ-૧ ગણવ્યુત્સર્ગઃ-૨
ઉપધિવ્યુત્સર્ગઃ-૩ મક્તપાનવ્યુત્સર્ગઃ-૪ સ એવ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગઃ ॥૩૧॥

મક્તપાનવ્યુત્સર્ગતપ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ કે યહ ચાર મેદ સમજને ચાહિય ।

ઔદારિક શરીર કે પ્રતિ વિશેષ રૂપ સે, ઉત્કૃષ્ટ ભાવના પૂર્વક
મમત્વ ન રચના શરીરવ્યુત્સર્ગ તપ કહલાતા હૈ । પ્રતિમા કી આરાધના
આદિ કે લિય ગચ્છ કો ત્યાગ દેના ગણવ્યુત્સર્ગ તપ હૈ । વસ્ત્ર આદિ
ઉપધિ કા ત્યાગ કર દેના ઉપધિ વ્યુત્સર્ગ તપ હૈ । આહાર ઔર પાની
કા ત્યાગ કર દેના મક્તપાનવ્યુત્સર્ગ તપ હૈ । ઔપપાતિકસૂત્ર કે ૩૦
વે સૂત્ર મેં કહા હૈ-‘શરીરવ્યુત્સર્ગ ગણવ્યુત્સર્ગ ઉપધિવ્યુત્સર્ગ ઔર
મક્તપાનવ્યુત્સર્ગ યહ ચાર પ્રકાર કા દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગતપ હૈ ॥૩૧॥

‘ભાવવિઝસ્રગ્ને તવે તિવિહે’ ઇત્યાદિ

ભાવવ્યુત્સર્ગ તપ ત્રીન પ્રકાર કા હૈ-(૧) કષાયવ્યુત્સર્ગ (૨) સંસાર

તપ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગના આ ચાર લેદ સમજવા જોઇએ.

ઔદારિક શરીરની પ્રતિ વિશેષરૂપથી ઉત્કૃષ્ટભાવના પૂર્વક મમત્વ ન રાખવું
શરીરવ્યુત્સર્ગતપ કહેવાય છે. પડીમાંની આરાધના વગેરેના કારણે ગચ્છને ત્યાગ
કરી દેવો ગણવ્યુત્સર્ગતપ છે. વસ્ત્ર આદિ ઉપધિને ત્યાગ કરવો ઉપધિવ્યુત્સર્ગ
તપ છે. આહાર અને પાણી લેવા દેવા ભક્તપાનવ્યુત્સર્ગતપ છે. ઔપપાતિક
સૂત્રના ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહ્યું છે

શરીરવ્યુત્સર્ગ, ગણવ્યુત્સર્ગ અને ભક્તપાન વ્યુત્સર્ગ આ ચાર પ્રકારના
દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ તપ છે. ॥ ૩૧ ॥

‘ભાવવિઝસ્રગ્ને તવે તિવિહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-ભાવવ્યુત્સર્ગતપ ત્રણ પ્રકારના છે-(૧) કષાયવ્યુત્સર્ગ (૨)

મૂલમ્-ભાવવિઉત્સર્ગતવે તિવિહે, કસાયલંસારકમ્મ-
વિઉત્સર્ગ મેયઓ ॥૩૨॥

છાયા-માતવ્યુત્સર્ગતપત્તિવિધં કષાયસંસાર-કર્મ વ્યુત્સર્ગમેદતઃ-” ॥૩૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાલ્લુ-દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગતપત્તિવિધં સવિસ્તરં પ્રરૂપિતમ્
સમ્પત્તિ-ભાવવ્યુત્સર્ગ તપઃ પ્રરૂપયિતુમાહ-“ભાવવિઉત્સર્ગતવે-” ઇત્યાદિ ।
ભાવવ્યુત્સર્ગ તપઃ-ભાવસ્ય કષાયાદે વ્યુત્સર્ગઃ વિશેષેણોત્કૃષ્ટભાવનયા ત્યાગો-
ભાવવ્યુત્સર્ગ સ્તદ્ધરૂપં તપો ભાવવ્યુત્સર્ગતપઃ સ્વસ્ત્રિવિધં ભવતિ । તદ્યથા-કષાય-
વ્યુત્સર્ગતપઃ ૧ સંસારવ્યુત્સર્ગતપઃ ૨ કર્મવ્યુત્સર્ગ તપશ્ચ ૩ इत्येवं त्रिविधं भावव्यु-
त्सर्ग तपो भवति । तत्र-कषायानां क्रोधादेर्भावस्य व्युत्सर्गः परित्यागः कषाय-
व्युत्सर्ग स्तद्वरूपं तपः कषायव्युत्सर्ग तप उच्यते । एवं-संसारस्य नरक-तिर्यग्-
मनुष्य-देवगतिरूपस्य व्युत्सर्गः संसारव्युत्सर्ग तप उच्यते । एवं-कर्मणां ज्ञाना-
वरणाद्यष्टविधानां व्युत्सर्गः परित्यागः कर्मव्युत्सर्ग स्तद्वरूपं तपः कर्मव्युत्सर्ग-
तप उच्यते ॥ ३२ ॥

વ્યુત્સર્ગ ઔર (૩) કર્મવ્યુત્સર્ગ ॥૩૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ કા વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપણ
કિયા ગયા, અહિ ભાવવ્યુત્સર્ગતપ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

કષાય આદિ ભાવ કા વ્યુત્સર્ગ કરના અર્થાત્ ઉત્કૃષ્ટ ભાવના સે
વિશિષ્ટ ત્યાગ કરના આવવ્યુત્સર્ગ તપ કહલાતા હૈ । સત્તપ કે ત્રીન
મેદ હૈ—કષાયવ્યુત્સર્ગતપ, સંસારવ્યુત્સર્ગ તપ ઔર કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ
ક્રોધ આદિ કષાયભાવ કા ત્યાગ કરના કષાયવ્યુત્સર્ગ તપ કહલાતા હૈ ।
નરકગતિ તિર્યંચગતિ મનુષ્યગતિ ઔર દેવગતિ રૂપ ચતુર્વિધ સંસાર કા
ત્યાગ કરના સંસારવ્યુત્સર્ગતપ કહલાતા હૈ ઔર જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ
પ્રકાર કે કર્મો કા ત્યાગ કરના કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ કહલાતા હૈ ॥૩૨॥

સંસારવ્યુત્સર્ગ (૨) અને (૩) કર્મવ્યુત્સર્ગ ॥ ૩૨ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગનું વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપણા કર્યું.
હવે ભાવવ્યુત્સર્ગતપની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ

કષાય આદિ ભાવનો વ્યુત્સર્ગ કરવો ભાવવ્યુત્સર્ગતપ કહેવાય છે આ
તપના ત્રણ ભેદ છે—કષાયવ્યુત્સર્ગતપ, સંસારવ્યુત્સર્ગતપ અને કર્મવ્યુત્સર્ગતપ
ક્રોધ આદિ કષાય ભાવનો ત્યાગ કરવો કષાયવ્યુત્સર્ગતપ કહેવાય છે. નરક
ગતિ, તિર્યંચગતિ, મનુષ્યગતિ અને દેવગતિરૂપ ચતુર્વિધ સંસારનો ત્યાગ
કરવો સંસાર વ્યુત્સર્ગતપ કહેવાય છે અને જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકારના
કર્મોનો ત્યાગ કરવો કર્મવ્યુત્સર્ગતપ કહેવાય છે. ॥ ૩૨ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—પૂર્વ તાવદ્-દ્રવ્યભાવભેદેન દ્વિવિધેષુ વ્યુત્સર્ગતપઃસુ ચતુર્વિધત્વેન દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગતપઃ પ્રરુપિતમ્, સમ્પ્રતિ-ભાવવ્યુત્સર્ગ તપસૈવિધ્યેન પ્રરુપયિતુમાહ—‘ભાવવિત્સર્ગગતવેતિવિદ્યે, કષાય-સંસારકર્મવિત્સર્ગગમેવઓ’ ઇતિ । ભાવવ્યુત્સર્ગતપઃ—ભાવસ્ય ક્રોધાદિકષાયાદેઃ સ્વલ્લુ વ્યુત્સર્ગઃ વિશેષેણોત્કૃષ્ટભાવનયા ત્યાગો ભાવવ્યુત્સર્ગ સ્તદ્રૂપં તપ સ્તાવત્ ત્રિવિધં ભવતિ, તદ્વથા—કષાયવ્યુત્સર્ગ તપઃ ૧ સંસારવ્યુત્સર્ગતપઃ ૨ કર્મવ્યુત્સર્ગતપથ્વે—૩ તિ । તત્ર—કષાયસ્ય ક્રોધાદિરૂપસ્ય ભાવસ્ય વ્યુત્સર્ગઃ વિશિષ્ટોત્કૃષ્ટભાવનયા પરિત્યાગઃ કષાયવ્યુત્સર્ગ સ્તદ્રૂપં તપઃ કષાયવ્યુત્સર્ગતપો વ્યપદિશ્યતે । એવં સંસારસ્ય નરક-તિર્યંચ-મનુષ્ય-દેવગતિ રૂપસ્ય વ્યુત્સર્ગઃ પરિત્યાગઃ સંસારવ્યુત્સર્ગ સ્તદ્રૂપં તપઃ સંસારવ્યુત્સર્ગતપો વ્યપદિશ્યતે એવં કર્મણાં જ્ઞાનાવરણાદ્યષ્ટવિધકર્મણાં વ્યુત્સર્ગઃ પરિત્યાગઃ કર્મવ્યુત્સર્ગ સ્તદ્રૂપં તપઃ કર્મવ્યુત્સર્ગ તપો વ્યપદિશ્યતે । ઉક્તશ્ચૌપપાતિકે ૩૦ સૂત્રે—‘સે કિં તં ભાવવિત્સર્ગે? ભાવવિત્સર્ગેતિવિદ્યે

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—વ્યુત્સર્ગ તપ કે દો ભેદોં મેં સે દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગતપ કે ચાર ભેદોં કો પ્રરુપણા કી ગઈ, અવ ભાવવ્યુત્સર્ગતપ કે તોન ભેદોં કા વ્યાખ્યાન કિયા જાતા હૈ—

વિશેષ રૂપ સે ઉત્કૃષ્ટ ભાવનાપૂર્વક ક્રોધાદિ કષાય-ભાવ કા ત્યાગ ભાવવ્યુત્સર્ગ કહલાતા હૈ । ડસકે તોન ભેદ હૈ—(૧) કષાયવ્યુત્સર્ગ (૨) સંસારવ્યુત્સર્ગ ઓર (૩) કર્મવ્યુત્સર્ગ । ક્રોધ આદિ કષયોં કા ત્યાગ કરના કષાયવ્યુત્સર્ગ તપ હૈ । હસી પ્રકાર નારક-તિર્યંચ-મનુષ્ય દેવગતિ રૂપ સંસાર કા પરિત્યાગ કરના સંસારવ્યુત્સર્ગતપ હૈ ઓર જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કા પરિત્યાગ કરના કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ કહલાતા હૈ । ઔપપાતિકસૂત્ર કે તોસવેં સૂત્ર મેં કહા હૈ—

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—વ્યુત્સર્ગતપનાં યે લેદોપૈકી દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગતપના ચાર લેદોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી. હવે ભાવવ્યુત્સર્ગતપના ત્રણ લેદોનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે.

વિશેષ રૂપથી, ઉત્કૃષ્ટભાવના પૂર્વક ક્રોધાદિકષાયભાવનો ત્યાગ ભાવવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે. તેના ત્રણ લેદ છે (૧) કષાયવ્યુત્સર્ગ (૨) સંસારવ્યુત્સર્ગ અને (૩) કર્મવ્યુત્સર્ગ ક્રોધ આદિ કષાયનો ત્યાગ કરવો કષાયવ્યુત્સર્ગતપ છે એવી જ રીતે નરક-તિર્યંચ-મનુષ્ય દેવગતિ રૂપ સંસારનો પરિત્યાગ કરવો સંસાર વ્યુત્સર્ગતપ છે. જ્યારે જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકારના કર્મોનો પરિત્યાગ કરવો કર્મવ્યુત્સર્ગતપ કહેવાય છે. ઔપપાતિક સૂત્રના ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહ્યું છે

પણત્તે, તં જહા કસાયવિડસ્સગ્ગે? સંસારવિડસ્સગ્ગે? કમ્મવિડસ્સગ્ગે' ઇતિ। અથ કોડસો ભાવવ્યુત્સર્ગઃ? ભાવવ્યુત્સર્ગ સ્ત્રિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તથા-કષાય-વ્યુત્સર્ગ ૧ સંસારવ્યુત્સર્ગઃ ૨ કર્મવ્યુત્સર્ગઃ ૨ ઇતિ ॥૩૨॥

મૂલમ્-કસાયવિડસ્સગ્ગતવે ચડ઼વિહે, કોહકસાયાહ વિડ-સ્સગ્ગ ભેયઓ ॥૩૩॥

છાયા-કષાયવ્યુત્સર્ગતપશ્ચતુર્વિધં, ક્રોધકષાયાદિ વ્યુત્સર્ગભેદતઃ ॥૩૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્રે-કષાયસંસારકર્મભેદેન ત્રિવિધં ભાવવ્યુત્સર્ગતપઃ પ્રરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ-તેષુ કષાયવ્યુત્સર્ગતપશ્ચાતુર્વિધ્યેન પ્રરૂપયિતુમાહ-'કસાય-વિડસ્સગ્ગતવે' ઇત્યાદિ। કષાયવ્યુત્સર્ગતપઃ સ્વલ્પ ચતુર્વિધં ભવતિ, તથા-ક્રોધ-કષાયાદિ ભેદતઃ। તથા ચ-ક્રોધકષાયવ્યુત્સર્ગતપઃ ૧ માનકષાયવ્યુત્સર્ગતપઃ

પ્રશ્ન-ભાવવ્યુત્સર્ગ કે કિતને ભેદ હૈ ?

ઉત્તર-ભાવવ્યુત્સર્ગ કે ત્રીન ભેદ હૈ-(૧) કષાયવ્યુત્સર્ગ (૨) સંસાર વ્યુત્સર્ગ ઓર (૩) કર્મવ્યુત્સર્ગ ॥૩૨॥

'કસાયવિડસ્સગ્ગ તવે' ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-ક્રોધ કષાયવ્યુત્સર્ગ આદિ કે ભેદ સે કષાયવ્યુત્સર્ગ તપ કે ચાર ભેદ હૈ ॥૩૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્ર મેં ભાવવ્યુત્સર્ગ તપ કે કષાય સંસાર ઓર કર્મ કે ભેદ સે ત્રીન ભેદોં કી પ્રરૂપણા કી ગઈ થી અવ્વ ડનમેં સે કષાયવ્યુત્સર્ગ કે ચાર ભેદોં કી વ્યાખ્યા કરતે હૈ-

કષાય વ્યુત્સર્ગ તપ ચાર પ્રકાર કા હૈ, યથા-(૧) ક્રોધ કષાયવ્યુ-ત્સર્ગ (૨) માનકષાય વ્યુત્સર્ગ (૩) માયાકષાય વ્યુત્સર્ગ ઓર (૪) લોભ

પ્રશ્ન-ભાવવ્યુત્સર્ગના કેટલા ભેદ છે ?

ઉત્તર-ભાવવ્યુત્સર્ગના ત્રણ ભેદ છે-(૧) કષાયવ્યુત્સર્ગ (૨) સંસાર વ્યુત્સર્ગ અને (૩) કર્મવ્યુત્સર્ગ. ॥ ૩૨ ॥

સૂત્રાર્થ-ક્રોધકષાયવ્યુત્સર્ગ આદિના ભેદથી કષાયવ્યુત્સર્ગતપના ચાર ભેદ છે ॥૩૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્રમાં ભાવવ્યુત્સર્ગતપના કષાય સંસાર અને કર્મના ભેદથી ત્રણ ભેદોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી. હવે તે પૈકી કષાયવ્યુત્સર્ગના ચાર ભેદોની વ્યાખ્યા કરીએ છીએ

કષાયવ્યુત્સર્ગતપ ચાર પ્રકારના છે. જેમકે-(૧) ક્રોધકષાયવ્યુત્સર્ગ (૨) માનકષાયવ્યુત્સર્ગ (૩) માયાકષાયવ્યુત્સર્ગ અને (૪) લોભકષાયવ્યુત્સર્ગ. તાત્પર્ય એ છે કે કષાયવ્યુત્સર્ગ તપના ચાર ભેદ હોય છે. ॥ ૩૩ ॥

मायाकषायव्युत्सर्गतपः ३ लोभकषायव्युत्सर्गतपश्च ४ इत्येवं चतुर्विधं तावत्
कषायव्युत्सर्गं तपो भवतीति भावः ॥३३॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तावत्-त्रिविधं भावव्युत्सर्गं तपः प्ररूपितम्,
कषायसंसार-कर्मव्युत्सर्गं भेदात्, सम्प्रति-तेषु द्व्यगोपात्तं कषायव्युत्सर्गतप-
श्चतुर्विधत्वेन प्ररूपयितुमाह—‘कसायविउस्सग्गे-अउव्विहे, कोहकसायाह
विउस्सग्गेअयेओ’ इति । कषायव्युत्सर्गतपः कषायस्य-क्रोधादिरूपस्य
व्युत्सर्गः परित्यागस्तद्वत्त्वं तपः खलु चतुर्विधं भवति तद्यथा-क्रोधकषायादि
व्युत्सर्गं भेदतः । क्रोधकषायव्युत्सर्गं तपः १ आदिना-ज्ञानकषाय व्युत्सर्गतपः २
मायाकषायव्युत्सर्गतपः ३ लोभकषाय व्युत्सर्गतपश्च ४ इत्येवं चतुर्विधं खलु-
कषायव्युत्सर्गतपो भवतीति भावः ॥ उक्तञ्चौपपातिके ३० सूत्रे—‘से किं तं
कसायविउस्सग्गे ? कसाय विउस्सग्गे अउव्विहे पणत्ते, तं जहा—
कोहकसायविउस्सग्गे ? ज्ञानकसायविउस्सग्गे २ मायाकसायविउ-
स्सग्गे ? लोहकसायविउस्सग्गे ४ से तं कसायविउस्सग्गे’ इति । अथ-
कोऽसौ कषायव्युत्सर्गः ३ कषायव्युत्सर्गं चतुर्विधः प्रवृत्तः तद्यथा-क्रोधकषाय-
कषायव्युत्सर्गं । आशय यह है कि कषाय व्युत्सर्ग तप के चार भेद
होते हैं ॥३३॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—कषाय, संसार और कर्म के भेद से भाव व्यु-
त्सर्ग के तीन भेदों का निरूपण किया गया, अब उनमें से प्रथम कषाय
व्युत्सर्ग तप के चार भेदों का कथन करते हैं—

क्रोध आदि कषायों का त्याग करना कषाय व्युत्सर्ग तप कहलाता
है । यह कषायव्युत्सर्ग तप, कषायों के चार भेद होने के कारण चार
प्रकार का है । वे चार प्रकार ये हैं—(१) क्रोध व्युत्सर्ग तप (२) ज्ञान व्यु-
त्सर्ग तप (३) माया व्युत्सर्ग तप और (४) लोभ व्युत्सर्ग तप ।
औपपानिक सूत्र के तीसरे सूत्र में कहा है—

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—कषायसंसार अने कर्मना लेहथी भावव्युत्सर्गतपना
त्रणु लेहोनुं पडेवा निउपणु करवामां आण्युं. उवे तेमाना प्रथम कषायव्युत्सर्ग
तपनां चार लेहोनुं कथन करीजे छीजे—

क्रोध आदि कषायोना त्याग करवो कषाय व्युत्सर्ग तप कहेवाय छे.
आ कषायव्युत्सर्ग तप, कषायोना चार लेह होवाना कारणे चार प्रकारनुं छे
जे आ प्रमाणे छे—(१) क्रोधव्युत्सर्ग तप (२) ज्ञानव्युत्सर्ग तप (३) माया
व्युत्सर्ग तप अने (४) लोभव्युत्सर्ग तप औपपानिकसूत्रना त्रीसमां
सूत्रमां कलुं छे—

व्युत्सर्गः मानकषायव्युत्सर्गः—मायाकषायव्युत्सर्गः लोभकषायव्युत्सर्गः स
एष कषायव्युत्सर्गः इति ॥३३॥

मूलम्—संसारविउस्सगगतवे चउव्विहे, णेरइयसंसारविउ-
सग्गाइ भेयओ ॥३४॥

छाया-संसारव्युत्सर्गतपश्चादुर्विधम्, नैरयिकसंसारव्युत्सर्गादि भेदतः ॥३४॥

तत्त्वार्थदीपिका--‘पूर्वं’ तावत्-त्रिविधस्य भावव्युत्सर्गतपसः प्रथमभेदं
कषायव्युत्सर्गं तपश्चादुर्विधेन प्ररूपितम्, सम्प्रति-द्वितीयं संसारव्युत्सर्गतपश्चादु-
र्विधेन प्ररूपयितुमाह-‘संसारविउस्सगगतवे’ इत्यादि । संसारव्युत्सर्गतपः-
संसारस्य नैरयिकादि गतिरूपस्य व्युत्सर्गः विशेषेण-उत्कृष्टतः सर्वथा परित्यागः

प्रश्न-कषाय व्युत्सर्ग के कितने भेद हैं ?

उत्तर-कषाय व्युत्सर्ग के चार भेद हैं-(१) क्रोधकषायव्युत्सर्ग
(२) मानकषायव्युत्सर्ग (३) मायाकषायव्युत्सर्ग और लोभ कषाय
व्युत्सर्ग । यह कषायव्युत्सर्ग तप का वर्णन है ॥३३॥

‘संसारविउस्सगगतवे चउव्विहे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ-संसार व्युत्सर्ग तप चार प्रकार का है-नैरयिकसंसार-
व्युत्सर्ग आदि ॥३४॥

तत्त्वार्थदीपिका-इससे पूर्व भावव्युत्सर्ग तप के प्रथम भेद कषाय
व्युत्सर्ग तप के चार भेदों का कथन किया गया, अब दूसरे संसार-
व्युत्सर्ग तप के चार भेदों का निरूपण किया जाता है-

नैरयिकगति आदि रूप संसार का विशेष रूप से उत्कृष्ट भावना

प्रश्न--कषायव्युत्सर्गना કેટલા ભેદ છે ?

ઉત્તર-કષાયવ્યુત્સર્ગના ચાર ભેદ છે-(૧) ક્રોધકષાયવ્યુત્સર્ગ (૨) માન
કષાયવ્યુત્સર્ગ (૩) માયાકષાયવ્યુત્સર્ગ અને (૪) લોભકષાયવ્યુત્સર્ગ આ રીતે
આ કષાય વ્યુત્સર્ગ તપનું વર્ણન છે ॥૩૩॥

‘સંસારવિઉસ્સગગતવે ચઉવ્વિહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-સંસારવ્યુત્સર્ગ તપ ચાર પ્રકારના છે.-નૈરયિકસંસાર વ્યુત્સર્ગ
આદિ ... ॥૩૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકાના આની પૂર્વે ભાવવ્યુત્સર્ગતપના પ્રથમ ભેદ કષાયવ્યુત્સર્ગ
તપના ચાર ભેદોનું કથન કરવામાં આવ્યું હવે બીજા સંસારવ્યુત્સર્ગ તપના
ચાર ભેદોનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે-

નૈરયિકગતિ અદિ રૂપ સંસારનો વિશેષ રૂપથી ઉત્કૃષ્ટ ભાવનાથી ત્યાગ

સંસારવ્યુત્સર્ગો સ્તદ્રૂપં તપઃ સ્વલુ ચતુર્વિધં ભવતિ । તથા-નૈરયિકસંસારવ્યુત્સર્ગોદિ
ભેદતઃ । નૈરયિકસંસારવ્યુત્સર્ગતપઃ-૧ તિર્યક્ સંસારવ્યુત્સર્ગતપઃ-૨ મનુષ્ય-
સંસારવ્યુત્સર્ગતપઃ-૩ દેવસંસારવ્યુત્સર્ગતપથ્થે ૪ ત્યેવં ચતુર્વિધં સ્વલુ સંસારવ્યુત્સર્ગ
તપો ભવતિ । તત્ર નૈરિકગતિરૂપસ્ય સંસારસ્ય વ્યુત્સર્ગઃ પરિત્યાગો નૈરયિકસંસા-
વ્યુત્સર્ગતપ ઉચ્યતે । એવં-તિર્યગ્ગતિરૂપસ્ય સંસારસ્ય વ્યુત્સર્ગઃ પરિત્યાગઃ તિર્યક્
સંસારવ્યુત્સર્ગ તપ ઉચ્યતે । એવં-મનુષ્યગતિરૂપસ્ય સંસારસ્ય વ્યુત્સર્ગઃ પરિત્યાગો
મનુષ્યસંસારવ્યુત્સર્ગતપ ઉચ્યતે । એવં-દેવગતિરૂપસ્ય સંસારસ્ય વ્યુત્સર્ગઃ
પરિત્યાગો દેવસંસારવ્યુત્સર્ગ તપ ઉચ્યતે इति, ॥૩૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ--પૂર્વં સ્વલુ ભાવવ્યુત્સર્ગતપસ્ત્રિવિધં પ્રરૂપિતમ્, તત્ર-
પ્રથમં કષાયવ્યુત્સર્ગતપો રૂપં ભાવવ્યુત્સર્ગતપશ્ચતુર્વિધત્વેન પ્રતિષાઘ સમ્પ્રતિ-
દ્વિતીયં સંસારવ્યુત્સર્ગતપઃ પ્રરૂપયિતુમાહ-"સંસારવિડસ્સગે તવે ચડ-
વિવહે, ણેરહ્યસંસારવિડસ્સગાહ એયઓ-" હતિ । સંસારવ્યુત્સર્ગતપઃ-

સે ત્યાગ કરના સંસારવ્યુત્સર્ગ તપ કહલાતા હૈ । વહ ચાર પ્રકાર કા
હૈ-(૧) નૈરયિક સંસારવ્યુત્સર્ગ તપ (૨) તિર્યક્ સંસારવ્યુત્સર્ગ તપ (૩)
મનુષ્ય સંસારવ્યુત્સર્ગતપ ઓર (૪) દેવસંસાર વ્યુત્સર્ગ તપ । ઇસ પ્રકાર
સંસારવ્યુત્સર્ગ કે ચાર ભેદ હૈ । ઇનને સે નૈરયિક ગતિ રૂપ સંસાર કા
પરિત્યાગ કરના નૈરયિક સંસારવ્યુત્સર્ગતપ કહલાતા હૈ । તિર્યચગતિ રૂપ
સંસાર કા પરિત્યાગ તિર્યક્સંસાર વ્યુત્સર્ગ તપ કહલાતા હૈ । મનુષ્ય-
ગતિરૂપ સંસાર કા પરિત્યાગ મનુષ્ય સંસારવ્યુત્સર્ગતપ કહલાતા હૈ ઓર
દેવગતિ રૂપ સંસાર કા પરિત્યાગ દેવ સંસારવ્યુત્સર્ગ કહલાતા હૈ ॥૩૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલે ભાવ વ્યુત્સર્ગ તપ કે ત્રીન ભેદ કહે ગણ
થે । ડનને સે પહેલે કષાય વ્યુત્સર્ગ તપ રૂપ ભાવ વ્યુત્સર્ગ તપ કે ચાર

કરવેા સંસારવ્યુત્સર્ગ તપ કહેવાય છે. તે ચાર પ્રકારના છે-(૧) નૈરયિકસંસાર
વ્યુત્સર્ગ તપ (૨) તિર્યચસંસાર વ્યુત્સર્ગ તપ (૩) મનુષ્યસંસારવ્યુત્સર્ગ તપ
અને (૪) દેવસંસારવ્યુત્સર્ગ તપ આવી રીતે સંસારવ્યુત્સર્ગ તપના ચાર ભેદ
છે, આમાંથી નૈરયિકગતિરૂપ સંસારનો પરિત્યાગ કરવેા નૈરયિકસંસારવ્યુત્સર્ગ
તપ કહેવાય છે. તિર્યચગતિરૂપ સંસારનો પરિત્યાગ તિર્યચ સંસારવ્યુત્સર્ગ
કહેવાય છે. મનુષ્યગતિ રૂપ સંસારનો પરિત્યાગ મનુષ્યસંસારવ્યુત્સર્ગ તપ
કહેવાય છે, અને દેવગતિરૂપ સંસારનો પરિત્યાગ દેવસંસારવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે.

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલાં ભાવવ્યુત્સર્ગ તપના ત્રણ ભેદ કહેવામાં આવ્યા
હતા તેમાંથી પ્રહેલા કષાયવ્યુત્સર્ગતપ રૂપ ભાવવ્યુત્સર્ગ તપના ચાર ભેદોનું

संसारस्य नरकादि रूपस्य व्युत्सर्गः परित्याग स्तद्रूपं तपः खलु चतुर्विधं भवति, तद्यथा-नैरयिकसंसारव्युत्सर्गादि भेदतः । नैरयिकसंसारव्युत्सर्गतपः १ आदिना-तिर्यक्संसारव्युत्सर्गतपः-मनुष्यसंसारव्युत्सर्गतपः-३ देवसंसारव्युत्सर्गतपश्च-४ इत्येवं चतुर्विधं खलु संसारव्युत्सर्गं तपो भवति । तत्र-नैरयिक गतिरूपस्य संसारस्य परित्यागरूपं तपो नैरयिकसंसार व्युत्सर्गतपो व्यपदिश्यते । एवं-तिर्यग्गति रूपस्य संसारस्य परित्यागरूपं तपो तिर्यग् संसारव्युत्सर्गं तपो व्यपदिश्यते । एवं मनुष्य गतिरूपस्य संसारस्य परित्यागरूपं तपो मनुष्यसंसारव्युत्सर्गतपो व्यपदिश्यते । एवं देवगतिरूपस्य संसारस्य परित्यागरूपं तपो देवसंसारव्युत्सर्गतपो व्यपदिश्यते ॥ उक्तश्रौषपातिके ३० सूत्रे-‘सं किं तं

भेदों का प्रतिपादन किया गया, अब दूसरे संसार व्युत्सर्ग तप की प्ररूपणा करने के लिए कहते हैं-

नरक आदि स्वरूप वाले संसार का व्युत्सर्ग अर्थात् परित्याग संसार व्युत्सर्ग कहलाता है । वह चार प्रकार का है (१) नैरयिक संसार व्युत्सर्ग (२) तिर्यक्संसार व्युत्सर्ग (३) मनुष्यसंसार व्युत्सर्ग और (४) देवसंसार व्युत्सर्ग । इनमें से नैरयिक गतिरूप संसार का परित्याग नैरयिक संसार व्युत्सर्ग तप कहलाता है । तिर्यक्गति रूप संसार का परित्याग तिर्यक्संसार व्युत्सर्ग तप कहलाता है । मनुष्य गति रूप संसार का परित्याग मनुष्य संसार व्युत्सर्ग कहलाता है । देवगति रूप संसार का परित्याग देव संसार व्युत्सर्ग कहलाता है । औपपातिक सूत्र के तीसवें सूत्र में कहा है-

प्रतिपादन करवाभां आभ्युं हवे भीज संसारव्युत्सर्गं तपनी प्रश्पणा करवा भाटे कहीअे छीअे-

नरक आदि स्वरूपवाणा संसारनो व्युत्सर्गं अर्थात् परित्याग संसार व्युत्सर्गं कहैवाय छे. ते चार प्रकारनो छे-(१) नैरयिकसंसारव्युत्सर्ग (२) तिर्यक्संसारव्युत्सर्ग (३) मनुष्यसंसारव्युत्सर्ग (४) देवसंसारव्युत्सर्ग आ भांथी नैरयिकगतिइय संसारनो परित्याग नैरयिकसंसारव्युत्सर्ग तप कहैवाय छे तिर्यक्गतिइय संसारनो परित्याग तिर्यक्संसारव्युत्सर्ग तप कहैवाय छे. मनुष्यगतिइय संसारनो परित्याग मनुष्यसंसारव्युत्सर्ग तप कहैवाय छे. देवगतिइय संसारनो परित्याग देवसंसारव्युत्सर्ग कहैवाय छे. औपपातिक सूत्रना ३०भां सूत्रभां कह्युं छे-

સંસારવિઙ્ઘસ્રગ્ગે-? સંસારવિઙ્ઘસ્રગ્ગે ચત્ત્વિઘે પળળત્તે, તં જહા-
 ણેરહયસંસારવિઙ્ઘસ્રગ્ગે-૧ તિરિયસંસારવિઙ્ઘસ્રગ્ગે-૨ મળુપ્પસંસારવિઙ્ઘ-
 સ્રગ્ગે-૩ દેવસંસારવિઙ્ઘસ્રગ્ગે-૪ સ્વે તં સંસારવિઙ્ઘસ્રગ્ગે' ઇતિ,
 અથ કોઽસી સંસારવ્યુત્સર્ગઃ-? સંસારવ્યુત્સર્ગશ્ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તચ્ચથા-
 -નૈયિકસંસારવ્યુત્સર્ગઃ, તિર્યક્સંસારવ્યુત્સર્ગઃ, મનુષ્યસંસારવ્યુત્સર્ગઃ,
 દેવસંસારવ્યુત્સર્ગઃ, સ્વ ઇષ સંસારવ્યુત્સર્ગઃ ઇતિ । ॥૩૪॥

મૂલ્ક-કમ્મવિઙ્ઘસ્રગ્ગતવે અટ્ટવિઘે, ણાણાવરણિજ્ઞાઙ્ઘ કમ્મ-
 વિઙ્ઘસ્રગ્ગમેયઓ ॥૩૫॥

છાયા-કર્મવ્યુત્સર્ગતપોઽષ્ટવિધં, જ્ઞાનાદરણીયાદિ કર્મવ્યુત્સર્ગમેદતઃ ॥૩૬॥
 તત્ત્વાર્થદીપિકા-'પૂર્વ' સ્વલુ ભાવવ્યુત્સર્ગતપો વિશેષરૂપં સંસારવ્યુત્સર્ગ-
 તપશ્ચતુર્વિધં પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પતિ-ભાવવ્યુત્સર્ગતપો વિશેષરૂપં કર્મવ્યુત્સર્ગ-
 તપોઽષ્ટવિધં પ્રતિપાદયિતુમાહ-'કમ્મ વિઙ્ઘસ્રગ્ગતવે' ઇત્યાદિ । કર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ

પ્રશ્ન-સંસારવ્યુત્સર્ગ કે કિતને ભેદ હૈં ?

ઉત્તર-સંસારવ્યુત્સર્ગતપ કે ચાર ભેદ હૈં, યથા-(૧) નૈરયિક સંસાર
 વ્યુત્સર્ગ (૨) તિર્યક્સંસારવ્યુત્સર્ગ (૩) મનુષ્ય સંસારવ્યુત્સર્ગ ઓર (૪)
 દેવસંસાર વ્યુત્સર્ગ । યહ સંસાર વ્યુત્સર્ગ તપ કા વર્ણન હુઆ ॥૩૪॥

'કમ્મવિઙ્ઘસ્રગ્ગતવે' ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ-કર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ કે આઠ ભેદ હૈં-જ્ઞાનાવરણ કર્મવ્યુત્સર્ગ
 આદિ ॥૩૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-હસસે પહલે સંસારવ્યુત્સર્ગ નામક ભાવવ્યુત્સર્ગ
 તપ વિશેષ કે ચાર પ્રકાર પ્રદર્શિત કિયે ગયે, અથ ડસી કે અન્તિમ
 ભેદ કર્મ વ્યુત્સર્ગ કે ભેદોં કા પ્રતિપાદન કરતે હૈં-

પ્રશ્ન--સંસારવ્યુત્સર્ગના કેટલા ભેદ છે ?

ઉત્તર--સંસારવ્યુત્સર્ગ તપના ચાર ભેદ, જેવાકે-(૧) નૈરયિકસંસાર-
 વ્યુત્સર્ગ (૨) તિર્યક્સંસારવ્યુત્સર્ગ (૩) મનુષ્યસંસારવ્યુત્સર્ગ અને (૪) દેવ
 સંસારવ્યુત્સર્ગ આ સંસારવ્યુત્સર્ગ તપનું વર્ણન થયું ॥૩૪॥

'કમ્મવિઙ્ઘસ્રગ્ગતવે' ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ--કર્મવ્યુત્સર્ગ તપના આઠ ભેદ છે-જ્ઞાનાવરણ કર્મવ્યુત્સર્ગ ॥૩૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-આની પહેલા સંસારવ્યુત્સર્ગ નામક ભાવવ્યુત્સર્ગ તપ
 વિશેષના ચાર પ્રકાર પ્રદર્શિત કરવામાં આવ્યા છે, તેના જ અન્તિમ ભેદ
 કર્મવ્યુત્સર્ગના ભેદોનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ-

કર્મણાં જ્ઞાનાવરણીયાદ્યદ્વિધાનાં વ્યુત્સર્ગઃ વિશેષેણોત્કૃષ્ટતયા પરિત્યાગઃ કર્મવ્યુત્સર્ગ સ્તદ્ગૂં તપઃ સ્વલક્ષણવિધિં ભવતિ । તદ્વથા-જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મવ્યુત્સર્ગભેદતઃ તથા ચ-જ્ઞાનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ ૧ આદિના-દર્શનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગ તપઃ ૨ વેદનીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ ૩ મોહનીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ આયુષ્યકર્મવ્યુત્સર્ગ તપઃ ૫ નામકર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ ૬ ગોત્રકર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ ૭ અન્તરાયકર્મવ્યુત્સર્ગ તપશ્ચ ૮ इत्येवं तावदष्टविधं કર્મવ્યુત્સર્ગતપો ભવતીતિ ભાવઃ । તત્ર=જ્ઞાનાવરણીયસ્ય કર્મણઃ પરિત્યાગરૂપં જ્ઞાનાવરણીય કર્મવ્યુત્સર્ગતપ ઉચ્યતે । દર્શનાવરણીયસ્ય કર્મણઃ પરિત્યાગરૂપં દર્શનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગ તપ ઉચ્યતે । एवं-વેદનીયસ્ય કર્મણઃ પરિત્યાગરૂપં વેદનીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપ ઉચ્યતે । एवं મોહનીયસ્ય દર્શન ચારિત્રમોહનીયરૂપસ્ય કર્મણઃ પરિત્યાગરૂપં મોહનીયકર્મવ્યુત્સર્ગ તપ

જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોનાં વ્યુત્સર્ગ અર્થાત્ વિશેષ રૂપ સે, ઉત્કૃષ્ટ ભાવના સે, પરિત્યાગ કરના કર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ કહલાતા હૈ ।

યહ તપ આઠ પ્રકાર કા હૈ, યથા-(૧) જ્ઞાનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપ (૨) દર્શનાવરણીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ (૩) વેદનીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ (૪) મોહનીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ (૫) આયુષ્ય કર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ (૬) નામકર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ (૭) ગોત્ર કર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ ઓર અન્તરાય કર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ । ઇસ તરહ કર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ આઠ પ્રકાર કા હૈ ।

જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા પરિત્યાગ કરના જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ કહલાતા હૈ । ઇસી પ્રકાર દર્શનાવરણીય કર્મ કા પરિત્યાગ દર્શનાવરણીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ, વેદનીય કર્મ કા પરિત્યાગ વેદનીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ, દર્શન-ચારિત્ર મોહનીય રૂપ મોહનીય કર્મ કા પરિત્યાગ મોહનીય કર્મ

જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોનાં વ્યુત્સર્ગ અર્થાત્ વિશેષરૂપથી ઉત્કૃષ્ટ ભાવનાથી પરિત્યાગ કરવો કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ કહેવાય છે આ તપ આઠ પ્રકારના છે, જેમ કે-(૧) જ્ઞાનાવરણીય કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ (૨) દર્શનાવરણીય કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ (૩) વેદનીયકર્મવ્યુત્સર્ગ તપ (૪) મોહનીયકર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ (૫) આયુષ્યકર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ (૬) નામકર્મવ્યુત્સર્ગ તપ (૭) ગોત્ર કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ અને (૮) અન્તરાયકર્મવ્યુત્સર્ગ તપ આ રીતે કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ આઠ પ્રકારના છે.

જ્ઞાનાવરણીયકર્મનો પરિત્યાગ કરવો જ્ઞાનાવરણીય કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ કહેવાય છે, એવી જ રીતે દર્શનાવરણીય કર્મનો પરિત્યાગ દર્શનાવરણીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ, વેદનીય કર્મનો પરિત્યાગ વેદનીયકર્મવ્યુત્સર્ગ, દર્શન-ચારિત્રમોહનીય રૂપ મોહનીયકર્મનો પરિત્યાગ મોહનીયકર્મવ્યુત્સર્ગ, આયુષ્યકર્મનો પરિત્યાગ

ઉચ્યતે । એવમ્—આયુષ્ય રૂપસ્ય કર્મણઃ પરિત્યાગરૂપમ્ આયુષ્ય કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ ઉચ્યતે । એવં નામરૂપસ્ય કર્મણઃ પરિત્યાગરૂપં નામકર્મવ્યુત્સર્ગતપ ઉચ્યતે । એવં ગોત્રરૂપસ્ય કર્મણઃ પરિત્યાગરૂપં ગોત્રકર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ ઉચ્યતે એલમ્—અન્તરાયરૂપસ્ય કર્મણઃ પરિત્યાગરૂપમ્ અન્તરાયકર્મવ્યુત્સર્ગ તપ ઉચ્યતે ॥૩૫॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિઃ—પૂર્વં તાવત્—સંસારવ્યુત્સર્ગ તપોરૂપં ભાવવ્યુત્સર્ગ તપ શ્વતુર્વિધત્વેન પ્રરૂપતમ્, સમ્પાત્—કર્મવ્યુત્સર્ગ તપોરૂપં ભાવવ્યુત્સર્ગ તપોઽષ્ટવિધત્વેન પ્રરૂપયિતુમાહ—‘કસ્મ વિત્સસ્સગ્ગતવે અટ્ટાવિહે જાણાવરણિઙ્ગાઙ્ગ કસ્મ વિત્સસ્સગ્ગમેયમ્’ इति । કર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ—કર્મણાં જ્ઞાનાવરણીયાદીનાં વ્યુત્સર્ગઃ પરિત્યાગ સ્તદ્રૂપં તપઃ સ્વલ્પઽષ્ટાવિધં ભવતિ, તથા—જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મવ્યુત્સર્ગભેદતઃ જ્ઞાનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ ૧ આદિના—દર્શનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ ૨ વેદનીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ ૩ મોહનીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ—૪

વ્યુત્સર્ગ, આયુષ્ય કર્મ કા પરિત્યાગ આયુષ્ય કર્મ વ્યુત્સર્ગ, નામકર્મ કા પરિત્યાગ નામકર્મ વ્યુત્સર્ગ, ગોત્ર કર્મ કા પરિત્યાગ ગોત્ર કર્મ વ્યુત્સર્ગ ઔર અન્તરાય કર્મ કા પરિત્યાગ અન્તરાય કર્મ વ્યુત્સર્ગ કહલાતા હૈ ॥૩૫॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—હસસે પૂર્વ સંસાર વ્યુત્સર્ગ રૂપ ભાવવ્યુત્સર્ગ તપ કે ચાર ભેદોં કા નિરૂપણ કિયા ગયા થા, જલ્લ કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ કે આઠ ભેદોં કી પ્રરૂપણા કી જાતી હૈ—

જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ કર્મોં કે પરિત્યાગ કો કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ કહતે હૈ । કર્મ કે ભેદ સે હસ તપ કે સી આઠ ભેદ હોતે હૈ, યથા—(૧) જ્ઞાનાવરણીય કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ (૨) દર્શનાવરણીય કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ (૩) વેદનીય કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ (૪) મોહનીય કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ (૫) આયુષ્ય-

આયુષ્યકર્મવ્યુત્સર્ગ, નામકર્મનો પરિત્યાગ નામ કર્મવ્યુત્સર્ગ, ગોત્રકર્મનો પરિત્યાગ ગોત્રકર્મવ્યુત્સર્ગ અને અન્તરાયકર્મનો પરિત્યાગ અન્તરાયકર્મવ્યુત્સર્ગ તપ કહેવાય છે ॥૩૫॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—આની પહેલા સંસારવ્યુત્સર્ગ ૩૫ ભાવવ્યુત્સર્ગ તપના ચાર ભેદોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે કર્મવ્યુત્સર્ગતપ ૩૫ ભાવવ્યુત્સર્ગ તપના આઠ ભેદોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે—

જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ કર્મોના પરિત્યાગને કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ કહે છે. કર્મભેદથી આ તપના પાંચ આઠ ભેદ હોય છે, જેમકે—(૧) જ્ઞાનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપ (૨) દર્શનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપ (૩) વેદનીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપ (૪) મોહનીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપ (૫) આયુષ્યકર્મવ્યુત્સર્ગતપ (૬) નામકર્મવ્યુત્સર્ગ

આયુષ્યકર્મવ્યુત્સર્ગતપઃ ૫ નામકર્મ વ્યુત્સર્ગ તપઃ ૬ ગોત્રકર્મ વ્યુત્સર્ગતપઃ ૭ અન્ત-
રાયકર્મવ્યુત્સર્ગતપશ્ચ-૮ इत्येवं खल्वष्टविधं कर्मव्युत्सर्गतपो भवतीति भावः ।
તત્ર જ્ઞાનાવરણકર્મણઃ પરિત્યાગો જ્ઞાનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપો વ્યપદિશ્યતે । દર્શ-
નાવરણીયકર્મણઃ પરિત્યાગો દર્શનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપો ભવતિ । એવં વેદ-
નીયકર્મણઃ પરિત્યાગરૂપં વેદનીયકર્મવ્યુત્સર્ગતપો ભવતિ । એવં ચારિત્રમોહનીય-
સ્ય દર્શનમોહનીયસ્ય ચ કર્મણઃ પરિત્યાગરૂપં મોહનીય કર્મવ્યુત્સર્ગતપો ભવતિ ।
એવં खलु-आयुष्यकर्मणः परित्यागरूपम् आयुष्यकर्मव्युत्सर्गं तपो भवति
એવં-નામકર્મણઃ પરિત્યાગરૂપં નામકર્મ વ્યુત્સર્ગ તપો ભવતિ । એવમ્-ગોત્રકર્મણઃ
પરિત્યાગરૂપં ગોત્રકર્મવ્યુત્સર્ગતપો ભવતિ, એવમેવાऽન્તરાયકર્મણઃ પરિત્યાગ
રૂપમ્ અન્તરાયકર્મવ્યુત્સર્ગ તપો ભવતિ । ઉક્તશ્ચ ઔપપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘સે કિં તં
કમ્મવિઉસ્સગ્ગે ? કમ્મવિઉસ્સગ્ગે અટ્ટવિહે પન્નસે, તં જહ્ઞા-જ્ઞાના-
વરણિજ્જકમ્મવિઉસ્સગ્ગે ૧ દરિસણાવરણિજ્જ કમ્મવિઉસ્સગ્ગે-૨
વેયણિજ્જ કમ્મ વિઉસ્સગ્ગે ૩ મોહણિજ્જ કમ્મ વિઉસ્સગ્ગે ૪ આઠકમ્મ

કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ (૬) નામકર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ (૭) ગોત્રકર્મવ્યુ-
ત્સર્ગ તપ ઓર (૮) અન્તરાય કર્મ વ્યુત્સર્ગ તપ । -હ આઠ પ્રકાર કા
કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ હૈ ।

જ્ઞાનાવરણ કર્મ કા પરિત્યાગ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ કહલાતા
હૈ, દર્શનાવરણ કર્મ કા પરિત્યાગ દર્શનાવરણીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ કહલાતા
હૈ, વેદનીય કર્મ કા પરિત્યાગ વેદનીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ કહલાતા હૈ, દર્શન
મોહનીય ઓર ચારિત્ર મોહનીય કર્મ કા પરિત્યાગ મોહનીય કર્મ વ્યુ-
ત્સર્ગ કહલાતા હૈ, આયુષ્ય કર્મ કા પરિત્યાગ આયુષ્ય કર્મ વ્યુત્સર્ગ
કહલાતા હૈ, ગોત્રકર્મ કા પરિત્યાગ ગોત્ર કર્મ વ્યુત્સર્ગ કહલાતા હૈ
ઓર અન્તરાય કર્મ કા પરિત્યાગ અન્તરાય કર્મ વ્યુત્સર્ગ કહલાતા હૈ ।
ઔપપાતિક સૂત્ર કે ત્રીસવે સૂત્ર મેં કહા હૈ-

તપ (૭) ગોત્રકર્મવ્યુત્સર્ગતપ અને (૮) અન્તરાયકર્મવ્યુત્સર્ગતપ આ આઠ
પ્રકારના કર્મવ્યુત્સર્ગ તપ છે.

જ્ઞાનાવરણકર્મનો પરિત્યાગ જ્ઞાનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે, દર્શના-
વરણ કર્મનો પરિત્યાગ દર્શનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે વેદનીયકર્મનો
પરિત્યાગ વેદનીયકર્મવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે દર્શનમોહનીય અને ચારિત્ર મોહનીય
કર્મનો પરિત્યાગ મોહનીયકર્મવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે. આયુષ્યકર્મનો પરિત્યાગ
આયુષ્યકર્મવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે, નામકર્મનો પરિત્યાગ નામકર્મવ્યુત્સર્ગ કહેવાય
છે, ગોત્રકર્મનો પરિત્યાગ ગોત્રકર્મવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે અને અન્તરાયકર્મનો પરિ-
ત્યાગ અન્તરાયકર્મવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે. ઔપપાતિ સૂત્રના ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહ્યું છે

વિરહસ્તમ્ભો ૬ જ્ઞાનક્રમ્ય વિરહસ્તમ્ભો ૬ તોયક્રમ્ય વિરહસ્તમ્ભો ૭ અંતરાય
ક્રમ્યવિરહસ્તમ્ભો ૮ સે તં ક્રમ્યવિરહસ્તમ્ભો, સે તં ભાવવિરહસ્તમ્ભો, इति,
અથ કોઽસૌ કર્મવ્યુત્સર્ગઃ ? કર્મવ્યુત્સર્ગોઽપ્ત્રવિધઃ પ્રજ્ઞમઃ, તથા-જ્ઞાનાવરણીય
કર્મવ્યુત્સર્ગઃ-દર્શનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગઃ વેદનીયકર્મવ્યુત્સર્ગઃ મોહનીયકર્મવ્યુ-
ત્સર્ગઃ-આયુષ્યકર્મ વ્યુત્સર્ગઃ-નામકર્મવ્યુત્સર્ગઃ ગોત્રકર્મવ્યુત્સર્ગઃ અંતરાયકર્મ-
વ્યુત્સર્ગઃ इति । एवञ्चैतद् द्विविधमपि बाह्याभ्यन्तरञ्च प्रत्येकं पञ्चविधत्वेन द्वादश
प्रकारकं तपो नूतनकर्मास्रवनिरोधहेतुत्वात् संवरकरणं भवति पूर्वोपार्जित कर्म-
पुञ्जराजोविधूतन निमित्तत्वाच्च निर्जराहेतुश्च भवतीति भावः, । एवञ्च-ज्ञानावरण-
दर्शनावरणोः क्षयाद् अनन्तज्ञान-दर्शने भवतः, वेदनीयकर्मक्षयाद् इन्द्रियजनित

પ્રજ્ઞ-કર્મ વ્યુત્સર્ગ કે કિતને એક છે ?

ઉત્તર-કર્મવ્યુત્સર્ગ કે આઠ એક છે, યથા-(૧) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ
વ્યુત્સર્ગ (૨) દર્શનાવરણીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ (૩) વેદનીય કર્મ વ્યુત્સર્ગ
(૪) મોહનીયકર્મવ્યુત્સર્ગ (૫) આયુષ્યકર્મવ્યુત્સર્ગ (૬) નામકર્મવ્યુત્સર્ગ (૭)
ગોત્રકર્મ વ્યુત્સર્ગ (૮) અંતરાય કર્મ વ્યુત્સર્ગ ।

इस प्रकार छह बाह्य और छह आभ्यन्तर तप मिलकर बारह होते
हैं । यह बारह कर्मों का तप नशील कर्मों के आस्रव के निरोध का
कारण होने से संवर का हेतु है और पूर्वसंचित कर्मों के क्षय का कारण
होने से निर्जरा का भी हेतु होता है । जब पूर्वोपार्जित कर्मों का क्षय
और नूतन कर्मों के आस्रव का निरोध हो जाता है तो आत्मा की स्व-
भाविक शक्तियाँ अभिव्यक्त हो उठती है । ज्ञानावरण के क्षय से अन-
न्त ज्ञान और दर्शनावरण के क्षय से अनन्त दर्शन की प्राप्ति होती है ।

પ્ર —કર્મવ્યુત્સર્ગના કેટલાં ભેદ છે ?

ઉત્તર-કર્મવ્યુત્સર્ગના આઠ ભેદ છે, જેમકે-(૧) જ્ઞાનાવરણીયકર્મ વ્યુ-
ત્સર્ગ (૨) દર્શનાવરણીયકર્મવ્યુત્સર્ગ (૩) વેદનીયકર્મવ્યુત્સર્ગ (૪) મોહનીય
કર્મવ્યુત્સર્ગ (૫) આયુષ્યકર્મવ્યુત્સર્ગ (૬) નામકર્મવ્યુત્સર્ગ (૭) ગોત્રકર્મ
વ્યુત્સર્ગ (૮) અંતરાયકર્મવ્યુત્સર્ગ.

આ રીતે છ બાહ્ય અને છ આભ્યન્તર તપ મળીને બાર થાય છે આ
બાર પ્રધારના તપ નવીન કર્મોના આસ્રવના નિરોધના કારણ હોવાથી સંવરના
હેતુ છે અને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોના ક્ષયના કારણ હોવાથી નિર્જરાના પણ હેતુ
છે. જ્યારે પૂર્વોપાર્જિત કર્મોના ક્ષય અને નૂતન કર્મોના આસ્રવનો નિરોધ
થઈ જાય છે ત્યારે આત્માની સ્વાભાવિક શક્તિઓ અભિવ્યક્ત થઈ જાય છે.
જ્ઞાનાવરણના ક્ષયથી અનન્તજ્ઞાન અને દર્શનાવરણના ક્ષયથી અનન્તદર્શનની

દીપિકા-નિર્યુક્તિ ટીકા અ.૮ સુ.૩૬ નિર્જરા સર્વેષાં સમાના વિશેષરૂપા વા ૭૧૩

સુખ-દુઃખક્ષયો ભવતિ, મોહનીયકર્મક્ષયાત્ અનન્તસુખં ભવતિ, આયુષ્યકર્મ-ક્ષયાત્ જન્મ-મરણક્ષયો ભવતિ, નામગોત્રક્ષયાદ અમૂર્તત્વં ભવતિ, ગોત્રકર્મક્ષયાત્ નીચોચ્ચગોત્રક્ષયો ભવતિ, અન્તરાયકર્મક્ષયાદનન્તવીર્યં ભવતિ इतिभावः ॥૩૫॥

મૂલ્ય-મિચ્છાદિદ્વિઆઈ ચતુર્દશગુણટ્ટાણદ્વિયાણં જહકમં
અસંખ્યજગુણનિર્જરા ॥૩૬॥

છાયા—મિથ્યાદૃષ્ટ્યાદિ ચતુર્દશગુણસ્થાનસ્થિતાનાં યથાક્રમમ્ અસંખ્યેય-ગુણનિર્જરા ॥૩૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાવદ્ વાહ્યાશ્વન્તરદ્વાદશ તપોમિર્દેશતઃ કર્મક્ષયલક્ષણા નિર્જરા ભવતીત્યુક્તમ્, સમ્પતિ સા સર્વેષાં મિથ્યાદૃષ્ટિમ્ભૂતીનાં કિં સમાનૈવ ભવતિ આહોસ્વિદસ્તિ કશ્ચિત્ પતિવિશેષઃ ? इति जिज्ञासायामाह-‘मिच्छादिद्वि’

વેદનીય કર્મ કે ક્ષય સે હન્દ્રિયજનિત સુખ ઓર દુઃખ કા અન્ત હો જાતા હૈ । મોહનીય કર્મ કે ક્ષય સે અનન્ત સુખ કી પ્રાપ્તી હોતી હૈ । આયુ કર્મ કે ક્ષય સે જન્મ-મરણ કા અન્ત આ જાતા હૈ । નામકર્મ કે ક્ષય સે આત્મા કા અમૂર્તત્વ ગુણ પ્રકટ હો જાતા હૈ । ગોત્રકર્મ કા ક્ષય હોને પર નીચ ઓર ઉચ્ચ ગોત્રો કા ક્ષય હો જાતા હૈ । અન્તરાય કર્મ કે ક્ષય સે અનન્ત વીર્ય પ્રકટ હોતા હૈ ॥૩૫॥

‘મિચ્છાદિદ્વિ આઈ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિ ચૌદશ ગુણસ્થાનોં મેં સ્થિત જીવોં કો અનુક્રમ સે અસંખ્યાત-અસંખ્યાત ગુણી નિર્જરા હોતી હૈ ॥૩૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે બતલાવા ગયા હૈ કિ વાહ્ય ઓર આશ્વન્તર તપ સે કર્મ કી નિર્જરા હોતી હૈ, અથ્ હસ જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કરતે

પ્રાપ્તિ થાય છે. વેદનીયકર્મના ક્ષયથી હન્દ્રિયજનિત સુખ અને દુઃખને અન્ત થઈ જાય છે. મોહનીયકર્મના ક્ષયથી અનન્ત સુખની પ્રાપ્તિ થાય છે. આયુષ્ય કર્મના ક્ષયથી જન્મ-મરણનો અન્ત આવી જાય છે. નામકર્મના ક્ષયથી આત્મા નો અમૂર્તત્વગુણ પ્રકટ થઈ જાય છે. ગોત્રકર્મના ક્ષય થવાથી નીચ અને ઉચ્ચ ગોત્રોનો ક્ષય થઈ જાય છે. અન્તરાયકર્મના ક્ષયથી અનન્તવીર્ય પ્રકટ થાય છે. ૩૫

‘મિચ્છાદિદ્વિ આઈ’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિ ચૌદ ગુણસ્થાનોમાં સ્થિત જીવોને અનુક્રમથી અસંખ્યાત-અસંખ્યાતગુણી નિર્જરા થાય છે ॥ ૩૬ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા બતાવવામાં આવ્યું કે વાહ્ય અને અશ્વન્તર તપથી કર્મની નિર્જરા થાય છે, હવે એ જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરીએ છીએ

હયાદિ । મિથ્યાદૃષ્ટેઃ પ્રથમગુણસ્થાનસ્થિતસ્ય, આદિના સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટેઃ ૨, સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટેઃ ૩, અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટેઃ ૪, વિરતાવિરતસ્ય ૫, પ્રમત્તસંયતસ્ય ૬, અપ્રમત્તસંયતસ્ય ૭, નિવૃત્તિવાદરસ્ય ૮, અનિવૃત્તિવાદરસ્ય ૯, સૂક્ષ્મસંપરાયસ્ય ૧૦, ઉપશાન્તમોહસ્ય ૧૧, ક્ષીણમોહસ્ય ૧૨, સયોગિકેવલિના ૧૩, અયોગિકેવલિનશ્ચ, ક્ષત્યેતેષાં સર્વેષાં યથાક્રમં ક્રમશઃ પૂર્વપૂર્વસ્માદુત્તરોત્તરેષામસંખ્યેયગુણા નિર્જરા ભવતીતિ સૂત્રસંક્ષેપાર્થઃ ।

અથૈકૈકણ એ તે પ્રદર્શ્યન્તે—તત્ર પ્રથમ તાવદ્ જીવઃ અનાદિકાલતો મિથ્યા-દૃષ્ટિરેવ, તત્ર યઃ પશ્ચેન્દ્રિયઃ સંજ્ઞીપર્યાપ્તકઃ પૂર્વકાલિકલઘ્ન્યાદિ સહાયઃ સ

હેં કિ વહ નિર્જરા મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિ કો સમાન હોતી હૈ યા કુછ અન્તર પડતા હૈ?—

(૧) મિથ્યાદૃષ્ટિ (૨) સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ (૩) સમ્યગ્ મિથ્યાદૃષ્ટિ (૪) અવિરત સમ્યગ્દૃષ્ટિ (૫) વિરતાવિરત (૬) પ્રમત્તસંયત (૭) અપ્રમત્ત-સંયત (૮) નિવૃત્તિવાદર (૯) અનિવૃત્તિવાદર (૧૦) સૂક્ષ્મસામ્પરાય (૧૧) ઉપશાન્ત મોહ (૧૨) ક્ષીણમોહ (૧૩) સયોગિ કેવલી ઓર (૧૪) અયોગિ કેવલી, इनमें से पहले-पहले वाले की अपेक्षा आगे-आगे वाले को असंख्यात-असंख्यात गुणी निर्जरा होती है । तात्पर्य यह है कि मिथ्या दृष्टि की अपेक्षा सास्वादन सम्यग्दृष्टि असंख्यात गुणी अधिक निर्जरा करता है, सास्वादन सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा मिथ्यादृष्टि असंख्यात गुणी निर्जरा करता है और मिथ्यादृष्टि की अपेक्षा सम्यग्दृष्टि असंख्यात गुणी निर्जरा करता है, इसी प्रकार अयोगि केवली तक समझना चाहिए ।

કે તે નિર્જરા મિથ્યાદૃષ્ટિ પગેરેની માફક હોય છે કે તેમાં કોઈ ફેર પડે છે ?

(૧) મિથ્યાદૃષ્ટિ (૨) સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ (૩) સમ્યગ્ મિથ્યાદૃષ્ટિ (૪) અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ (૫) વિરતાવિરત (૬) પ્રમત્તસંયત (૭) અપ્રમત્તસંયત (૮) નિવૃત્તિવાદર (૯) અનિવૃત્તિવાદર (૧૦) સૂક્ષ્મસામ્પરાય (૧૧) ઉપશાન્તમોહ (૧૨) ક્ષીણમોહ (૧૩) સયોગિકેવળી અને (૧૪) અયોગિકેવળી, એમાંથી પહેલા-પહેલાવાળાની અપેક્ષા પછી-પછીવાળાને અસંખ્યાત અસંખ્યાત ગુણી વધારે નિર્જરા થાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે મિથ્યાદૃષ્ટિની અપેક્ષા સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ અસંખ્યાતગણી નિર્જરા કરે છે. સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિની અપેક્ષા મિથ્યાદૃષ્ટિ અસંખ્યાતગણી નિર્જરા કરે છે અને મિથ્યાદૃષ્ટિની અપેક્ષા સમ્યગ્દૃષ્ટિ અસંખ્યાત-ગણી નિર્જરા કરે છે. એવી જ રીતે અયોગિ કેવળી પર્યન્ત સમજવું જોઈએ.

क्रमशः परिणामविशुद्ध्या वर्द्धमानपरिणामः सन् अपूर्वकरणादि सोपानपङ्क्त्या समुत्प्लवमानः कर्मनिर्जरां कर्तुं यतते ? स एव पुनः प्रथमं शुभकर्मवशात् सम्यक्त्वमाप्ति हेतुसान्निध्ये सति सम्यक्त्वमासादितुमिच्छुः सास्वादनसम्यग्दृष्टिर्भवति, सास्वादनसम्यग्दृष्टिरिति कोऽर्थः ? सह आस्वादनेन तत्त्वश्रद्धानरूपेष्वदरसास्वादरूपेण वर्तते यत्तत् सास्वादनम्, तादृशसम्यक्त्ववान् सास्वादनसम्यग्दृष्टिरुच्यते । अयं हि शुक्तक्षीराश्लेषव्यलीकचित्तः पुरुषोऽरुचिवशात्तद्वदनकालेः यादृशं क्षीराश्लेषस्यास्वादसन्तुम्भवति तथैव सम्यक्त्वस्य तथाविधमास्वादमात्रमनुभवति, अस्य काल एकसमया दारभ्योत्कृष्टतः षडावलिकापरिमितो

अब इन सब का स्वरूप प्रदर्शित करते हैं—(१) जो जीव दर्शन मोहनीय कर्म के उदय से युक्त है और इस कारण तत्त्वश्रद्धा से रहित है, वह मिथ्यादृष्टि कहलाता है ।

(१) किसी मिथ्यादृष्टि जीव ने पंचेन्द्रिय, संज्ञी और पर्याप्त अवस्था प्राप्त करके तथा अपूर्व आदि परिणामों को प्राप्त करके एवं दर्शनमोहनीय कर्म का उपशम करके सम्यग्दर्शन प्राप्त किया, किन्तु अन्तर्मुहूर्त के पश्चात् (क्योंकि औपशमिक सम्यक्त्व अन्तर्मुहूर्त तक ही रहता है) वह सम्यक्त्व से च्युत हो गया मगर मिथ्यात्व की स्थिति में नहीं पहुँचा उस समय की उसकी दशा सास्वादन सम्यग्दृष्टि अवस्था कहलाती है । जैसे कोई मनुष्य किसी प्रासाद की छत से नीचे गिरे और पृथ्वी पर न पहुँच पाए, वैसी ही दशा सास्वादन सम्यग्दृष्टि की होती है । जैसे किसी ने खीर का भोजन किया हो और वह उसका वमन करे

હવે આ બધાના સ્વરૂપ પ્રદર્શિત કરીએ છીએ—(૧) જે જીવ દર્શન મોહનીયકર્મના ઉદયથી યુક્ત છે અને આ કારણે તત્ત્વશ્રદ્ધાથી રહિત છે તે મિથ્યાદૃષ્ટિ કહેવાય છે (૨) કેઈ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવે પંચેન્દ્રિય સંજ્ઞી અને પર્યાપ્ત અવસ્થા પ્રાપ્ત કરીને તથા અપૂર્વકરણ આદિ પરિણામોને પ્રાપ્ત કરીને અને દર્શનમોહનીય કર્મનો ઉપશમ કરીને સમ્યક્દર્શન પ્રાપ્ત કર્યું પરંતુ અન્તર્મુહૂર્ત બાદ (કારણ કે ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ અન્તર્મુહૂર્ત સુધી જ રહે છે) તે સમ્યક્ત્વથી બ્રૂટ થઈ ગયો પરંતુ મિથ્યાત્વની સ્થિતિમાં પહોંચ્યો નથી. તે સમયની તેની દશા સાસ્વાદન સમ્યક્દૃષ્ટિ અવસ્થા કહેવાય છે. જેમ કેઈ મનુષ્ય કેઈ મહેલની છત પરથી નીચે પડે અને પૃથ્વી પર ન પહોંચી શકે, એવી જ દશા સાસ્વાદન સમ્યક્દૃષ્ટિની થાય છે. ધારો કે કેઈએ ખીરનું ભોજન કર્યું હોય અને તે તેનું વમન કરે ત્યારે ઉઘટીના સમયે જેવો ખીર

भवति । ततो मिथ्यादृष्टेरपेक्षयाऽयमसंख्येयगुणनिर्जरावान् भवति २ । ततः पर-
मसौ सम्यक्त्वाद्वादपभावाद् चर्द्धज्ञानपरिणामः सन् पडावलिकाकालानन्तरं
मिथ्यात्वभावमलपीकुर्वन् सम्यग्मिथ्यादृष्टिः (मिश्रदृष्टिः) भवति । सम्यक्-
समीचीना च मिथ्या च दृष्टिर्यस्याऽसौ सम्यङ्मिथ्यादृष्टिः, मिथ्यात्वपुद्गला एव
इषद् विमुद्धाः सम्यङ्मिथ्यात्वव्यपदेशभाजो भवन्ति । यदुदयवशात् जिनप्रणीतं
तो वमન કે સમય જેસે જીવેર કા સ્વાદ આતા હૈ, उसी प्रकार सास्वदन
सम्यक्त्व के समय दुस्यग्दर्शन का कुछ-कुछ आस्वादन रहता है ।
जीव की यह दशा चौदह गुणस्थानों में से द्वितीय गुणस्थान कहलाती
है । यह दशा सम्यक्त्व से गिरते समय ही होती है । इसका उत्कृष्ट
काल छह आवलिका है । मिथ्यादृष्टि की अपेक्षा सास्वादन सम्यग्दृष्टि
असंख्यात गुणी अधिक निर्जरा करता है ।

(૨) મિશ્રમોહનીય કર્મ કે ઉદય સે જીવ ન તો પૂરી તરફ તત્ત્વ
શ્રદ્ધાન કરતા હૈ ઓર ન તત્ત્વો કે પ્રતિ એકાન્ત અશ્રદ્ધા હી કરતા હૈ ।
उसके परिणाम उस समय मिले-जुले अर्थात् सम्यक्त्व-मिथ्यात्वमय
होते हैं । इस मिली-जुली अवस्था को मिश्रदृष्टि कहते हैं । जिसकी
दृष्टि अर्थात् श्रद्धा आंशिक रूप में समीचीन और आंशिक रूप में अस-
मीचीन है वह मिश्रदृष्टि बन्ध के समय मिथ्यात्व के ही पुद्गलों का
बन्ध होता है, किन्तु वे पुद्गल ही जब अर्धविशुद्ध अवस्था को प्राप्त
होते हैं तब मिश्र कहलाते हैं । उन मिश्र पुद्गलों के उदय से जीव की

સ્વાદ આવે છે તેવીજ રીતે સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વના સમયે સમ્યગ્ દર્શનનું કંઈ
કંઈ આસ્વાદન રહે છે. જીવની આ દશા ચૌદગુણસ્થાનોમાંથી દ્વિતીય ગુણસ્થાન
કહેવાય છે. આ દશા સમ્યક્ત્વથી પડતી વખતે જ થાય છે. આનો ઉત્કૃષ્ટ
કાળ છ આવલિકા છે. મિથ્યાદૃષ્ટિની અપેક્ષા સાસ્વાદન સમ્યક્દૃષ્ટિ અસંખ્યાત
ગુણી અધિક નિર્જરા કરે છે.

(૩) મિશ્રમોહનીયકર્મના ઉદયથી જીવ ન તો પૂરી રીતે તત્ત્વશ્રદ્ધાન કરે
છે અને ન તત્ત્વોની પ્રતિ એકાન્ત અશ્રદ્ધા જ કરે છે તેના પરિણામે તે
સમય સેળસેળ અર્થાત્ સમ્યક્ત્વ મિથ્યાત્વમય હોય છે. આ મિશ્ર અવસ્થાને
મિશ્રદૃષ્ટિ કહે છે જેની દૃષ્ટિ અર્થાત્ શ્રદ્ધા આંશિક રૂપમાં સમીચીન અને
આંશિક રૂપમાં અસમીચીન છે તે મિશ્રદૃષ્ટિ. બન્ધના સમયે મિથ્યાત્વના જ
પુદ્ગલો બંધાય છે પરંતુ તે પુદ્ગલ જ બધાં અર્ધવિશુદ્ધ અવસ્થાને પ્રાપ્ત
થાય છે ત્યારે 'મિશ્ર' કહેવાય છે. આ મિશ્ર પુદ્ગલોના ઉદયથી જીવની

तत्त्वं न सम्यक् श्रद्धते, नापि निन्दति, मतिर्दीर्घत्ववशात्सम्यक्सम्यग्वा' इत्येका
न्ततो निश्चयं न करोति, तद्विशिष्टदृष्टिः सम्यग्मिथ्यादृष्टिः । अग्रे सास्वादन
सम्यग्दृष्टेरपेक्षया—ऽसंख्येयगुणनिर्जरावान्मवति ३ तथा पुनः स एव सम्यक्त्वा-
वसद्भावाद् बर्धमानपरिणामः सन् अविरतसम्यग्दृष्टिर्भवति न विरतः सावध
व्यापारेभ्यो यः सोऽविरतः, स चाऽनौ सम्यग्दृष्टिः, यः परमसुनिष्णीतां सावध
योगविरतिं सिद्धिप्राप्तादपराशोधनसोपानभूतां जानन्नपि अप्रत्याख्यानकषायो-
दयविघ्नवशात् तां नाधिगच्छति, नापि तत् पालनाय प्रयतते इत्यावविरत-

बुद्धि में एक प्रकार की दुर्बलता पैदा हो जाती है जिसके कारण वह
सम्यक् और असम्यक् का विवेक नहीं कर पाता । जैसे दही और शर्करा
का मिश्रण करने पर न खट्टा रहता है, न मीठा ही, मिला-जुला स्वाद
होता है, उसी प्रकार मिश्र मोहनीय कर्म के उदय से मिश्रित परिणाम
होते हैं । सास्वादन सम्यक्त्व को स्थिति की अपेक्षा इस स्थिति में
असंख्यान गुणी निर्जरा होनी है ।

जो जीव मिथ्यात्वमोहनीय कर्म के उपशम, क्षय अथवा क्षयोपशम
से सम्यक्त्व को प्राप्त कर लेता है, वह सम्यग्दृष्टि कहलाता है किन्तु
अप्रत्याख्यान कषाय के उदय से एकदेश विरति को भी प्राप्त नहीं
कर पाने से अविरत होता है । उसकी अवस्था अविरत सम्यग्दृष्टि
गुणस्थान है । ऐसा जीव सर्वज्ञप्रणीत विरति को सिद्धि रूपी महल में
प्रवेश करने के लिए सोपान के समान समझता है, मगर अप्रत्याख्यान
कषाय के उदय रज विघ्न के कारण उसे प्राप्त नहीं कर पाता । उसका

બુદ્ધિમાં એક પ્રકારની દુર્બળતા ઉત્પન્ન થઈ જાય છે કે જેના કારણે તે સમ્યક્
તથા અસમ્યક્નો વિવેક કરી શકતો નથી. જેવી રીતે દહીં અને સાકરનું
મિશ્રણ કરવાથી ન તો ખાટો સ્વાદ રહે છે, ન મીઠો, મિશ્ર સ્વાદ હોય છે.
એવી જ રીતે મિશ્રમોહનીય કર્મના ઉદયથી મિશ્રિત પરિણામ થાય છે. સાસ્વાદન
સમ્યક્ત્વની સ્થિતિની અપેક્ષા આ સ્થિતિમાં અસંખ્યાતગણી નિર્જરા થાય છે.

(૪) જે જીવ મિથ્યાત્વ મોહનીય કર્મના ઉપશમ ક્ષય અથવા ક્ષયોપશમથી
સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી લે છે તે સમ્યક્દૃષ્ટિ કહેવાય છે. પરંતુ અપ્રત્યાખ્યાન
કષાયના ઉદયથી એકદેશવિરતીને પણ પ્રાપ્ત નહીં થવાથી અવિરત હોય છે.
તેની અવસ્થા અવિરત સમ્યક્દૃષ્ટિ ગુણસ્થાન છે. આવો જીવ સર્વજ્ઞપ્રણીત વિર-
તીને સિદ્ધિ રૂપી મહેલમાં પ્રવેશ કરવા માટેની સીડી સમાન સમજે છે. પરંતુ
અપ્રત્યાખ્યાન કષાયના ઉદયરૂપ વિઘ્નના કારણે તેને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી.
તેનું પાલન કરવા માટે પ્રયત્ન પણ નથી કરતો. તે અવિરતસમ્યક્દૃષ્ટિ કહેવાય.

સમ્યગ્દષ્ટિ રુચ્યતે । યથા કશ્ચિત્ પુરુષો ન્યાયોપાર્જિતધનધાન્યઃ પ્રચુરભોગ-
વિલાસસુખસૌન્દર્યમમુન્વદ્ધઃ સુકુલસમુત્પન્નોઽપિ દુર્મન્તશૂનાદિ વ્યસનજનિતા-
પરાધલવધરાજદણ્ડઃ સંઘણ્ડિતાભિમાનશ્રબ્દદણ્ડપાશિકૈર્ વિહમ્યમાનઃ સ્વકં-
કુત્સિતં કર્મસપ્રતિષ્ઠાપતિકૂલં જાનન્ સ્વકુલસૌન્દર્યસમ્પદામિલપન્નપિ દણ્ડ-
પાશિકસમીપે ક્ષિપાપિ વક્તું ન શક્નોતિ, તથૈવાઽયં જીવોઽવિરતિ કુત્સિતકર્મ
કલ્પાં જાનન્ સુધોપમવિરતિ સુખસૌન્દર્ય સમિલપન્નપિ દણ્ડપાશિકકલ્પા દ્વિતીયા
પ્રત્યાખ્યાનકષાયાણાં સમીપે વ્રતોત્સહપિ કર્તું ન શક્નોતિ इत्यવિરત-સમ્ય-
ગ્દષ્ટિત્વ મનુભવતિ અયં સમ્યગ્મિથ્યાદષ્ટથપેક્ષ્યાઽપ્યંચયેયગુણનિર્જરાવાન્મ-

પાલન કરને કે લિર પ્રયત્ન મી નહીં કરતા । વહ અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિ
કહલાતા હૈ । કોઈ પુરુષ ન્યાય- નીતિ લે ધન ઉપાર્જન કરતા થા, પ્રચુર
ભોગ-વિલાસ એવં સુખ-સામગ્રી મેં ઉત્પન્ન હુઆ, સુકુલ મેં જન્મ પાયા
કિન્તુ જુગારિયો કો સંઘતિ મેં પડકાર જુઆ લેલને લગા । ફલસ્વરૂપ
ઉસે રાજદણ્ડ કો પ્રાપ્તી હુઈ । ઉસકા અભિમાન સંહિત હો ગયા । દણ્ડપા-
શિક ઉસે સતાતે હૈ । વહ અપને કુકુલ્ય કો અપની પ્રતિષ્ઠા કે પ્રતિકૂલ
સમજાતા હૈ । અપને કુલ કો પ્રતિષ્ઠા કો કાયમ રાખના ચાહતા હૈ ।
જગર દણ્ડપાશિકો કે સામને ઉસકો દગ નહીં ચલતી । હસી પ્રકાર
યહ જીવ અવિરતિ કો કુકુલ્ય કે સમાન સમજાતા હૈ । વહ અમૃત કે
સમાન વિરતિ-સુખ કો અભિલાષા મી કરતા હૈ । જગર દણ્ડપાશિક
કે સમાન અપ્રત્યાખ્યાન કષાય કે ઉદય કે કારણ વિરતિ કે લિર
ઉત્સાહ મી પ્રગટ નહીં કર સકતા । એસા અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિ પુરુષ
મિશ્રદષ્ટિ કો અપેક્ષા અસંખ્યાત ગુણો કર્મનિર્જરા કરતા હૈ ।

છે. કોઈ પુરુષ ન્યાયનીતિથી ધર્મોપાર્જન કરતો હતો, પ્રચુર ભોગવિલાસ અને
સુખસામગ્રીમાં ઉત્પન્ન થયો. ઉત્તમ કુળોમાં જન્મ્યો. પરંતુ જુગારીઓની
સોખતમાં જ પડીને જુગાર રમવા લાગ્યો. પરિણામે તેને રાજદંડની પ્રાપ્તિ થઈ
તેનું અભિમાન ઓસરી ગયું. દંડપાશિક તેને સત વે છે તે પોતાના કુકુલ્યને
પોતાની પ્રતિષ્ઠાની પ્રતિકૂળ સમજે છે. પોતાના કુળની પ્રતિષ્ઠાને કાયમી
રાખવા ઇચ્છે છે પરંતુ દંડપાશિકો આગળ તેની એક પણ યુક્તિ
કારણગત નિવડતી નથી. તેવી જ રીતે આ જીવ અવિરતીને કુકુલ્યની
બરાબર સમજે છે. તે અમૃત જેવા વિરતી સુખની અંખના પણ કંદે છે
પરંતુ દંડપાશિકની જેમ અપ્રત્યાખ્યાન કષાયના ઉદયને કારણે વિરતીને માટે
ઉત્સાહ પણ પ્રગટ કરી શકતો નથી. આવો અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિ પુરુષ મિશ્ર-
દષ્ટિની અપેક્ષા અસંખ્યાતગણી કર્મનિર્જરા કરે છે.

વતિ ૪। સ એવ પુનઃચારિત્રમોહનીયકર્મવિકલ્પાઽપ્રત્યાખ્યાનાવરણક્ષયોપશમકારણ-
પરિણામપ્રાપ્તિકાલે વિશુદ્ધિ પ્રકર્ષયોગાદ વિરતાવિરતો દેશવિરતિશ્રાવકો ભવન્
વિરતાઽવિરત इति-સ્થૂલપ્રાણાતિપાતાદિ વાપેભ્યો વિરતઃ સૂક્ષ્મેભ્યોઽવિરત एता-
દશઃ સન્ પૂર્વાપેક્ષયાઽસંખ્યેયગુણનિર્જરાવાન્ ભવતિ ૫ એવમગ્રેઽપિ ચતુર્દશગુણ-
સ્થાનપર્યન્તં સ્વયમૂહનીયમ્ ૬ ॥૩૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વં સ્વલ્પ અનશનાદિ ષડ્વિધબાહ્યતર્પણોઽનુષ્ઠાના-
ત્પ્રાયશ્ચિત્તાદિ ષડ્વિધાભ્યન્તરતર્પણોઽનુષ્ઠાનાચ્ચ કર્મણઃ ફલમોગલક્ષણવિપાકાચ્ચ
દેશતઃ કર્મક્ષયલક્ષણા નિર્જરા ભવતીતિ પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પ્રતિ સા સ્વલ્પ નિર્જરા
કિં સર્વેષાં મિથ્યાદૃષ્ટિચાદીનાં સમાનૈવ ભવતિ ? આહોસ્વિત્-કશ્ચિત્પ્રતિવિશેષો-

(૫) અવિરત સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ અપ્રત્યાખ્યાન કષાય કે ક્ષય થા
ઉપશમ સે જબ કુછ વિશુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરતા હૈ ઓર દેશવિરતિ આંશિક
ચારિત્ર પરિણામ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ તબ વિરતાવિરત કહલાતા હૈ। વહ
સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત સે નિવૃત્ત હો જાતા હૈ કિન્તુ સૂક્ષ્મ પ્રાણાતિપાત સે
નિવૃત્ત નહીં હોતા। એસા જીવ શ્રાવક કહલાતા હૈ ઓર વહ અવિરત
સમ્યગ્દૃષ્ટિ કી અપેક્ષા અસંખ્યાત ગુણી કર્મનિર્જરા કા આગી હોતા હૈ।

इसी प्रकार आगे भी चौदहवें गुणस्थान पर्यन्त स्वयं ही समझ
लेना चाहिए ॥३६॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પહેલે પ્રતિપાદન કિયા ગયા થા કિ અનશન
આદિ બાહ્ય તર્પણ કે અનુષ્ઠાન સે, પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ આભ્યન્તર તર્પણ કે
અનુષ્ઠાન સે તથા કર્મ કે વિપાક સે નિર્જરા હોતી હૈ। કિન્તુ વહ નિર્જરા
મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિ સર્ખી કો સમાન હી હોતી હૈ યા ફલમે કુછ વિશેષતા

(૫) અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ અપ્રત્યાખ્યાન કષાયના ક્ષય અથવા ઉપશમથી
બ્યારે થોડી વિશુદ્ધિ સંપાદન કરે છે અને દેશવિરતી-આંશિકચારિત્ર પરિણા
મને પ્રાપ્ત કરે છે ત્યારે વીરતાવિરત કહેવાય છે તે સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત
આદિથી નિવૃત્ત થઇ જાય છે. પરંતુ સૂક્ષ્મપ્રાણાતિપાત આદિથી નિવૃત્ત થતો
નથી. આવો જીવ શ્રાવક કહેવાય છે અને તે અવિરત સમ્યગ્દૃષ્ટિની અપેક્ષા
અસંખ્યાતગણી કર્મનિર્જરતાને લાગી થાય છે.

આજ રીતે પછી પણ ચૌદમા ગુણસ્થાન પર્યંત જાને જ સમજ લેવું ઘટે. 136।

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પહેલાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું કે અનશન આદિ
બાહ્ય તપશ્ચર્યાના અનુષ્ઠાનથી પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ આભ્યન્તર તર્પણના અનુષ્ઠાનથી
તથા કર્મના વિપાકથી નિર્જરા થાય છે. પરંતુ તે નિર્જરા મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિ
બધાને સરખી જ થાય છે. કે એમાં કંઈ વિશેષતા છે એ શંકાનું નિવરણ
કરવા અર્થે ઠીઠી ધીઠી

ઽસ્તિ ? इति शङ्कानिवारणार्थमाह-‘मिथ्यादृष्टि आहचउદસગુણદ્રાણદ્રિયાણં
જહક્ષમં અસંખ્યેઽજગુણનિઝજરા’ મિથ્યાદૃષ્ટેઃ ૧ આદિના-સાસ્વાદન સમ્ય-
ગ્દૃષ્ટેઃ ૨ સમ્યગ્દૃષ્ટેઃ ૩ અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટેઃ ૪ વિરતાવિરતસ્ય ૫ પ્રમત્તસંયતસ્ય ૬
અપ્રમત્તસંયતસ્ય ૭ નિવૃત્તિવાદસ્ય ૮ અનિવૃત્તિવાદસ્ય ૯ સૂક્ષ્મસામ્પ-
રાય ૧૦ ઉપશાન્તમોહસ્ય ૧૧ સંયોગિ કેવલિન ૧૨ ચ્ચ યથાક્રમં- કદશોઽસંખ્યેયગુણનિર્જરા
ભવતિ । एते चतुर्दश क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्जरावन्तो भवन्तीति भावः । अथैकैकश
एते प्रदर्श्यन्ते-तत्र प्रथमं तावज्जीवोऽनादिकालतो मिथ्यादृष्टिरेव, तत्र-यः
पञ्चेन्द्रियः संज्ञीपर्याप्तकः पूर्वकालिक लब्ध्यादि सहायः स क्रमशः परिणाम
विशुद्धया वर्द्धमानपरिणामः सन् अपूर्वकरणेति सोपानपट्ट्या समुत्प्लवमानः
कर्मनिर्जरां कर्तुं यतते । स एव पुनः प्रथमं शुभकर्मवशात् सम्यक्त्वमाप्तिहेतु-

है, इस शंका का निवारण करने के लिए कहते हैं-

(૧) મિથ્યાદૃષ્ટિ (૨) સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ (૩) સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ
(૪) અવિરત સમ્યગ્દૃષ્ટિ (૫) વિરતાવિરત (૬) પ્રમત્તસંયત (૭) અપ્રમત્ત-
સંયત (૮) નિવૃત્તિ વાદર (૯) અનિવૃત્તિ વાદર (૧૦) સૂક્ષ્મસામ્પ-
રાય (૧૧) ઉપશાન્ત મોહ (૧૨) ક્ષીણમોહ (૧૩) સયોગિકેવલી ઓર (૧૪)
અયોગિ કેવલી કે અનુક્રમ સે અસંખ્યાત-અસંખ્યાતગુણી નિર્જરા હોતી
હૈ । અથ હનમેં સે ઇક દશ ક્રમશઃ પ્રદર્શ્યન્તે હૈ-

(૧) જિહ્વા જીવ કે દર્શન મોહનીય ઓર અનંતાનુબંધી કપાય કા
ઉદય હોતા હૈ ઓર હકી કારણ જિસમેં તત્ત્વશ્રદ્ધાન રૂપ પરિણામ ઉત્પન્ન
નહીં હોતા, વત્ત મિથ્યાદૃષ્ટિ કહેલાતા હૈ । મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ દો પ્રકાર કે
હોતે હૈ-અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ ઓર સાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ । મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ
સર્વ સે ક્રમ નિર્જરા કરતા હૈ ।

(૧) મિથ્યાદૃષ્ટિ (૨) સાસ્વાદનસમ્યગ્દૃષ્ટિ (૩) સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ (૪)
અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ (૫) વિરતાવિરત (૬) પ્રમત્તસંયત (૭) અપ્રમત્તસંયત (૮)
નિવૃત્તિવાદર (૯) અનિવૃત્તિવાદર (૧૦) સૂક્ષ્મસામ્પરાય (૧૧) ઉપશાન્તમોહ (૧૨)
ક્ષીણમોહ (૧૩) સયોગીકેવળી અને (૧૪) અયોગીકેવળીને અનુક્રમથી અસં-
ખ્યાત-અસંખ્યાતગણી નિર્જરા થાય છે. હવે એમાંથી એકએકનું સ્વરૂપ
બતાવીએ છીએ

(૧) જે જીવને દર્શનમોહનીય અને અનંતાનુબંધિકપાયનો ઉદય થાય
છે અને એ કારણે જ જેનામાં તત્ત્વશ્રદ્ધાન રૂપ પરિણામ ઉત્પન્ન થતું નથી
તે મિથ્યાદૃષ્ટિ કહેવાય છે. મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ બે પ્રકારનાં હોય છે અનાદિમિથ્યા-
દૃષ્ટિ અને સાદી મિથ્યાદૃષ્ટિ મિથ્યાદૃષ્ટિજીવ બધાંથી એાછી કર્મનિર્જરા કરે છે

સાન્નિધ્યે સતિ સમ્યક્ત્વમાસ્વાદિતુમિચ્છુઃ સાસ્વાદનસમ્યગ્દૃષ્ટિર્ભવતિ, સાસ્વાદનસમ્યગ્દૃષ્ટિરિતિકોડર્યઃ ? સહ-આસ્વાદનેન તત્ત્વશ્રદ્ધાનરૂપેષદ્ રસાસ્વાદરૂપેણ વર્તતે યત્તત્ સાસ્વાદનમ્ તાદૃશ સમ્યક્ત્વવાન્ સાસ્વાદનસમ્યગ્દૃષ્ટિરુચ્યતે । અયં હિ-મુક્તશીરાન્નવિષયવ્યલીકૃત્તત્ પુરુષોડરુચિવશાદ્વમનકાલે યાદૃશં ક્ષીરાન્નરસસ્યાડસ્વાદમનુભવતિ તથૈવ સમ્યક્ત્વસ્ય તથાવિધમાસ્વાદમાત્રમનુભવતિ, અસ્ય કાલઃ-એકસમયાદારમ્બોત્કુષ્ટતઃ પડાવલિકાપરિમિતો ભવતિ । તતો મિથ્યાદૃષ્ટેરપેક્ષ્યાડયમસંખ્યેયગુણનિર્જરાવાન્ ભવતિ ૨ તતઃ પરમસૌમ્યક્ત્વાસ્વાદપ્રભાવાદ્ વર્દમાનપરિણામઃ સન્ પડાવલિકાકાલાનન્તરં મિથ્યાત્વભાવમલ્પીકુર્વન્ સમ્યક્મિથ્યાદૃષ્ટિઃ (મિશ્રદૃષ્ટિઃ) ભવતિ । સમ્યક્ સમીચીના ચ મિથ્યા ચ

(૨) દ્વસરા ગુણસ્થાન સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે । યહ ગુણસ્થાન સમ્યક્ત્વ સે વ્યુત હોતે સમય હી હોતા છે । જીવ જય સમ્યક્ત્વ રૂપી પર્વત સે ગિર જાતા છે કિન્તુ મિથ્યાત્વ રૂપી ધરાતલ પર નહીં પહુંચતા-વમન કિયે હુએ સમ્યક્ત્વ કા કિંચિત્ આસ્વાદન હોતારહતા છે, ઉસ સમય કી સ્થિતિ સાસ્વાદન ગુણસ્થાન કહલાવી છે । હસ ગુણસ્થાન કા કાલ એક સમય સે લેકર અધિક સે અધિક હઠ આવલિકા છે । સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ કી અપેક્ષા અસંખ્યાત ગુણી કર્મનિર્જરા કરતા છે ।

(૩) મિશ્રબોહનીયકર્મ કે ઉદય સે જ એકાન્તમિથ્યાત્વરૂપ ઓર ન એકાન્ત સમ્યક્ત્વરૂપ પરિણામ હોતા છે કિન્તુ મિશ્રિતપરિણામ હોતા છે । જીવ કી વહ સ્થિતિ મિશ્રદૃષ્ટિગુણસ્થાન કહલાવી છે । મિથ્યાત્વ કે

(૨) બીજું ગુણસ્થાન સાસ્વાદનસમ્યગ્દૃષ્ટિ છે આ ગુણસ્થાન સમ્યક્ત્વથી બ્રહ્મ થતી વખતે થય છે જીવ જ્યારે સમ્યક્ત્વરૂપી પર્વત ઉપરથી પડી જાય છે, પણ મિથ્યાત્વરૂપી ધરાતલ સુધી પહોંચતો નથી-વમન કરેલા સમ્યક્ત્વનું કિચિંત આસ્વાદન થતું રહે છે તે સમયની સ્થિતિ સાસ્વાદન ગુણસ્થાન કહેવાય છે. આ ગુણસ્થાનનો કાળ એક સમયથી લઇને વધુમાં વધુ છ આવલિકાનો છે. સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ, મિથ્યાદૃષ્ટિની અપેક્ષા અસંખ્યાત ગણી કર્મનિર્જરા કરે છે.

(૩) મિશ્ર બોહનીય કર્મના ઉદયથી ન તો એકાન્ત મિથ્યાત્વરૂપ કે ન એકાન્ત સમ્યક્ત્વરૂપ પરિણામ થાય છે. પરંતુ મિશ્રિત પરિણામ થાય છે. જીવની તે સ્થિતિ મિશ્રદૃષ્ટિ ગુણસ્થાન કહેવાય છે. મિથ્યાત્વના પુદ્ગલ જ

દર્શિત્યસ્થાસૌ સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિઃ, મિથ્યાત્વપુદ્ગલા એવ ઈવદ્ વિશુદ્ધાઃ સમ્યક્-
મિથ્યાત્વવ્યપદેશમાજો ભર્વાન્ત । યદુદયવશાત્-જિનપ્રણીતં તત્ત્વં ન સમ્યક્ શ્રદ્ધતે
નાષિ નિન્દતિ યતિર્દૈર્વલ્યવશાત્-‘સમ્યગ્સમ્યગ્વા’ હત્યેકાન્તતો નિશ્ચયં ન
કરોતિ તદ્દિશિષ્ટાદૃષ્ટિઃ સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિઃ । અસૌ સાસ્વાદનસમ્યગ્દૃષ્ટેરપેક્ષ્ય-
સંખ્યેયગુણનિર્જરાવાત્ ભવતિ ૩ તથા પુનઃ સ એવ સમ્યક્ત્વાંશસદ્ભાવાદ્ વર્દમાન
પરિણામઃ સન્ સર્વથામિથ્યાત્વ મપનીય અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિર્ભવતિ ન વિરતઃ સાવધ
વ્યાપારેભ્યો યઃ સોઽવિરતઃ સ ચાસૌ સમ્યગ્દૃષ્ટિશ્ચ-ઽવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિઃ, યઃ
પરમમુનિપ્રણીતાં સાવધ યોગવિરતિં સિદ્ધિમાસાદપર્યારોહણયોપાનભૂતા જાનન્નપિ

પુદ્ગલ હી કિંચિત્ વિશુદ્ધ હોકર સમ્યક્મિથ્યાત્વ કહલાતે હૈં, જિનકો
ઉદય હોને પર જીવ ન તો જિનપ્રણીત તત્ત્વ પર શ્રદ્ધા કરતા હૈં ઓર
ન ઉનકો નિન્દા કરતા હૈં । ઉનકો યતિ હતની દુર્બલ હો જાતી હૈં
કિં વહ સમ્યક્-અસમ્યક્ કા વિવેક નહીં કર પાતા । એસી દૃષ્ટિ
સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ કહલાતી હૈં । સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સાસ્વાદનસ-
મ્યગ્દૃષ્ટિ કી અપેક્ષા અસંખ્યાતગુણી કર્મનિર્જરા કરતા હૈં ।

(૪) જો જીવ મિથ્યાત્વમોહનીય ઓર અનંતાનુબંધી કષાય કે
ક્ષય ઉપશમ અથવા ક્ષયોપશમ હોને પર મિથ્યાત્વ કો સર્વથા હટા
હટા કર શુદ્ધ તત્ત્વશ્રદ્ધાન પ્રાપ્ત કર લેતા હૈં કિન્તુ સાવધવ્યાપારોં સે
તનિક બી વિરત નહીં હોતા અર્થાત્ સ્થૂલ હિંસા આદિ કા બી ત્યાગ
નહીં કર સકતા, અવ અવિરત સમ્યગ્દૃષ્ટિ કહલાતા હૈં । અવિરતસ-
મ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ સાવધયોગવિરતિ કો મોક્ષ-મહલ મેં પ્રવેશ કરને કે
લિએ સોપાન કે સમાન સમજતા હુમા કી અપ્રત્યાખ્યાન કષાય રૂપ

કિંચિત વિશુદ્ધ થઇને સમ્યક્ મિથ્યાત્વ કહેવાય છે. જેનો ઉદય થવાથી જીવ
ન તો જીવપ્રણીત તત્ત્વ પર શ્રદ્ધા કરે છે કે નથી તેની નિન્દા કરતો. તેની
બુદ્ધિ એટલી દુર્બળ થઈ જાય છે કે તે સમ્યક્-અસમ્યક્નો વિવેક પણ કરી
શકતો નથી. આવી દૃષ્ટિ સમ્યક્ મિથ્યાદૃષ્ટિ કહેવાય છે. સમ્યક્ મિથ્યાદૃષ્ટિ
જીવ સાસ્વાદન સમ્યક્દૃષ્ટિની અપેક્ષા અસંખ્યાત ગણી કર્મ નિર્જરા કરે છે.

(૪) જે જીવ મિથ્યાત્વ મોહનીય અને અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષય ઉપ-
શમ અથવા ક્ષયોપશમ થવાથી મિથ્યાત્વને સર્વથા દૂર કરીને શુદ્ધ તત્ત્વશ્રદ્ધાન
પ્રાપ્ત કરી લે છે. પરંતુ સાવધ વ્યાપારોથી થોડો પણ વિરત થતો નથી
અર્થાત્ સ્થૂલ હિંસા વગેરેનો પણ ત્યાગ કરી શકતો નથી. તે અવિરત સમ્યક્
દૃષ્ટિ કહેવાય છે. અવિરત સમ્યક્દૃષ્ટિ જીવ સાવધયોગવિરતિને મોક્ષ મહેલ
માં પ્રવેશ કરવા માટેની સીડી માફક સમજતો થકો પણ અપ્રત્યાખ્યાન કષાય

अप्रत्याख्यानकषायोदयविघ्नः शाब्दं तां नाधिगच्छति-नाऽपि-तत् पालनाय प्रयत्ने इत्यसावविरतसम्पद्दृष्टि रूच्यते । यथा कश्चिद् पुरुषो न्यायोपार्जित-धनधान्यः प्रचुरभोगविलाससुखसौन्दर्यमुत्पन्नः सुकुलमुत्पन्नोऽपि दुरन्तद्यूतादि व्यसनजनिताऽऽराधकवराजदण्डः संवृण्डिताऽभिमानश्च दण्डपाशिकैर्विडम्ब-मानः स्वकं कुत्सितं कर्म स्वप्रतिष्ठाप्रतिकूलं जानन् स्वकुलसौन्दर्यसम्पदमि-लपन्नपि दण्डपाशिकसमीपे किमपि वक्तुं न शक्नोति, तथैवायं जीवोऽविरति कुत्सितकर्मकल्पां जानन् सुधोषमविरतिसुखसौन्दर्यमिलपन्नपि दण्ड-पाशिककल्पद्वितीयकषायाणां सकाशे व्रतोत्साहमपि कर्तुं न शक्नोति इत्यविरत-सम्पद्दृष्टित्वं अनुभवति अयं सम्पद्मिथवादृष्ट्यपेक्षयाऽसंख्येयगुणनिर्जरायावू

विघ्न के सदृभाव से उसे प्राप्त नहीं कर सकता और न उसका पालन करने का प्रयत्न ही करता है । जैसे कोई पुरुष न्यायपूर्वक धनोपा-र्जन करता था, विपुल वैभव एवं सुखसामग्री बोले उच्च परिवार में उत्पन्न हुआ, किन्तु संसर्ग दोष से जुझारी हो गया ॥ जुझा खेलने के अपराध में उसे राजदण्ड का भागी होना पड़ा । उसका अभिमान खंडित हो गया । दण्डपाशिक उसे सताते हैं । वह अपने कुकर्म को अपनी प्रतिष्ठा के प्रतिकूल समझता है और अपने कुल की प्रतिष्ठा को कायम रखने की अभिलाषा करता है, मगर दण्डपाशिकों के सामने कुछ कर नहीं सकता, उसी प्रकार यह जीव अविरति को कुकर्म के समान समझता है और सुधा के समान विरति के सुख-सौन्दर्य की अभिलाषा करता है, किन्तु दण्डपाशिक के समान द्वितीय कषाय अप्रत्याख्यानवरण के उदय के सामने उसकी कुछ भी नहीं

इय विघ्नना सदृभावथी तेने प्राप्त करी शकते नथी. तेमज तेनुं पालन करवाने पणु प्रयत्न करतो नथी. जेम कोई पुरुष न्यायपूर्वक धनोपार्जन करतो होय विपुल, वैभव तथा सुखसामग्री संपन्न उच्च परिवारमां उत्पन्न थये होय परंतु संसर्ग दोषथी जुझार रमवाना अपराध पहल तेने राजदंडना लागी थनु पड्युं होय तेथी तेनुं अभिमान अंडित थई जाय छे. दंड पाश्विक तेने सतावे छे ते पोताना कुकर्मने पोतानी प्रतिष्ठायी प्रतिकूल समझे छे तेमज पोताना कुलनी प्रतिष्ठाने कायम राखवानी अभिलाषा करे छे. परंतु दंडपाश्विके आगण ते कशुं करी शकते नथी. जराजर जेवी ज रीते आ जव अविरतिने कुकर्मनी जराजर समझे छे अने अमृत जेवी विरतिना सुखसौंदर्यनी आकांक्षा सेवे छे परंतु दंडपाश्विकनी भाइक द्वितीय कषाय अप्रत्याख्यानना उदयनी आगण तेनुं

भवति ४ स एव पुनश्चास्त्रिषोहनीयकर्मविशेषः प्रत्याख्यानाऽऽवरणक्षयोपशम
कारणपरिणामप्राप्तिकाले विशुद्धिप्रकर्षयोगात्-विस्ताविरतो देशविरतिश्चावको
भवन् विस्ताविरत इति स्थूल प्राणातिपातादि पापेभ्यो विरतः सुक्ष्मेभ्योऽविरतः
एतादृशः सन् पूर्वाऽपेक्षयाऽसंख्येयगुणनिर्जरान् भवति-५ ततश्च स एव
परिणामविशुद्ध्या प्रवर्द्धमानः सर्वविरतित्वं स्वीकुर्वन् प्रथमं प्रमत्तसंयतः किञ्चि-
त्प्रमादयुक्तः सर्वविरतो भवति । अयं विस्ताविरतापेक्षयाऽसंख्येयगुणनिर्जरा-
वान् भवति ६ स एव पुनस्तत्रापि परिणामविशुद्धिवशात् प्रमादं परित्यजन् अप्रमत्त
संयतः सर्वप्रमादरहितः सर्वसंयतो भवति पूर्वापेक्षयाऽसंख्येयगुणनिर्जरान्

चलती-वહ જન કે પ્રતિ ઉત્સાહ ઓ પ્રદર્શિત નહીં કર સકતા । હસ
કારણ અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિ કહલાતા હૈ । યહ મિશ્રદષ્ટિ કી અપેક્ષા
અસંખ્યાતગુણી નિર્જરા કરતા હૈ ।

(૫) અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિજીવ જ્ય કુછ અધિક વિશુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરતા
હૈ ઓર પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાય કા ઉપશમાદિ કરતા હૈ તવ ઉસમે
દેશવિરતિપરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । વહ સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત અદિ પાપો
સે નિવૃત્ત હો જાતા હૈ તવ વિરતાવિરત યા દેશવિરત કહલાતા હૈ । હસ
અવસ્થા મેં વહ અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિ કી અપેક્ષા અસંખ્યાતગુણી
કર્મનિર્જરા કરતા હૈ ।

(૬) તત્પશ્ચાત્ જ્ય પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાય ઓ હટ જાતા હૈ ઓર
પરિણામો મેં વિશેષ શુદ્ધિ ઉત્પન્ન હોવી હૈ તવ વહ સર્વવિરતિ કો અંગીકાર
કરતા હૈ કિન્તુ બાહ્ય ક્રિયાઓ મેં નિરત હોને સે કિંચિત્ પ્રમાદયુક્ત
હોતા હૈ । યહ વિરતાવિરત કી અપેક્ષા અસંખ્યાતગુણી નિર્જરા કરતા હૈ ।

કંઈ નિવડતું નથી. તે ત્રત પ્રત્યે ઉત્સાહ પણ પ્રદર્શિત કરી શકતો નથી.
આથી તે અવિરત સમ્યદ્દષ્ટિ કહેવાય છે. આ મિશ્રદષ્ટિની અપેક્ષા અસંખ્યાત
ગણી નિર્જરા કરે છે.

(૫) અવિરત સમ્યદ્દષ્ટિ જીવ જ્યારે થોડી વધારે વિશુદ્ધિ પ્રાપ્ત કરે છે.
અને પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાયનો ઉપશમાદિ કરે છે ત્યારે તેનામાં દેશવિરતિ
પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે. તે સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત આદિ પાપોથી મુક્ત થઈ
જાય છે. ત્યારે વિરતાવિરત અથવા દેશવિરત કહેવાય છે આ અવસ્થામાં તે
અવિરત સમ્યદ્દષ્ટિની અપેક્ષા અસંખ્યાતગણી કર્મનિર્જરા કરે છે.

(૬) ત્યારબાદ જ્યારે પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાય પણ દૂર થાય છે. અને
પરિણામોમાં વિશેષ શુદ્ધિ ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે તે સર્વવિરતિને અંગીકાર
કરે છે. પરંતુ બાહ્ય ક્રિયાઓમાં નિરત હોવાથી થોડો પ્રમાદયુક્ત હોય છે.
આ વિરતાવિરતની અપેક્ષા અસંખ્યાતગણી નિર્જરા કરે છે.

भवति ७ इत्थं परिणामविशुद्ध्या क्रमश उत्तरोत्तरं प्रवर्द्धमानो निवृत्तिवादरः, ८ अनिवृत्तिवादरः ९ सूक्ष्मसंप्रायः १० उपशान्तमोहः ११ क्षीणमोहः १२ सयोगि-
केवली-१३ भवति । एते पूर्व पूर्वस्मादुत्तरोत्तरसंख्येयासंख्येय-गुणकर्मनिर्जरा
वन्तो भवन्ति १३ ततोऽसौ सयोगिकेवलि चतुर्दश गुणस्थानमारोहन् तत्र योग-
निरोधं कृत्वा शैलेश्वरस्थां प्राप्तः सन् अयोगिकेवली भूत्वा सर्वकर्मक्षयरूपं निर्जरां
करोतीति ॥ १४ ॥ एतेषां विस्तरतो वर्णनं समवायाङ्गसूत्रस्य चतुर्दशसमवाये मत्कृ-
तायां भावबोधिनीटीकाया मयलोकनीयम् । तथाचोक्तम्-‘कम्मविसोहि

(७) प्रमत्तसंयत पुरुष जब परिणाम विशुद्धि के कारण प्रमाद का परित्याग कर देता है-आत्माभिमुख होकर बाह्यविकल्पो से शून्य होता है तब अप्रमत्तसंयत कहलाता है । यह प्रमत्तसंयत की अपेक्षा असंख्यातगुणी निर्जरा करता है ।

इस प्रकार परिणामों की शुद्धि से क्रमशः उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होकर (८) निवृत्तिवादर (९) अनिवृत्तिवादर (१०) सूक्ष्मसम्प्राय (११) उपशान्तमोह (१२) क्षीणमोह और (१३) सयोगि केवली भी असंख्यात-असंख्यातगुणी निर्जरा वाले होते हैं । सयोगि केवली जब योग का निरोध करके अयोगिकेवली अवस्था में पहुँचते हैं तो सर्व कर्मक्षय रूप निर्जरा करते हैं ।

इन सब का विशद वर्णन सप्तवायांगसूत्र की मेरे द्वारा रचित भावबोधिनी टीका के चौदहवें समवाय में देख लेना चाहिए । कहा भी है—

(७) પ્રમત્તસંયત પુરુષ ત્યારે પરિણામ વિશુદ્ધિને કારણે પ્રમાદનો પરિત્યાગ કરી દે છે આત્માભિમુખ થઈને બહુ વિકલ્પોથી શૂન્ય થાય છે ત્યારે અપ્રમત્ત સંયત કહેવાય છે. આ પ્રમત્તસંયતની અપેક્ષા અસંખ્યાતગુણી નિર્જરા કરે છે.

આ રીતે પરિણામોની શુદ્ધિથી ક્રમશઃ ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થઈને (૮) નિવૃત્તિ બાદર (૯) અનિવૃત્તિ બાદર (૧૦) સૂક્ષ્મસંપ્રાય (૧૧) ઉપશાન્ત મોહ (૧૨) ક્ષીણમોહ (૧૩) સયોગીકેવળી પણ અસંખ્યાતગુણી નિર્જરાવાળા હોય છે સયોગીકેવળી જ્યારે યોગનો નિરોધ કરીને અયોગીકેવળી અવસ્થામાં પહોંચે છે. ત્યારે સર્વકર્મક્ષયરૂપ નિર્જરા કરે છે.

આ બધાનું વિશદ વર્ણન સમવાયાંગ સૂત્રની મારી રચેલી ભાવબોધીની ટીકામાં, ચૌદમા સમવાયમાં જોવા લાગામણ છે. કહ્યું પણ છે—

મમગ્નં પદુચ્ચ ચત્તદસુજીવદ્વાણા પળગત્તા તં જહા-મિચ્છાદિટ્ટી ૧
 સાસાયણસમ્મદિટ્ટી ૨ સમ્મામિચ્છાદિટ્ટી ૩ અવિરય સમ્મદિટ્ટી ૪
 વિરયાવિરય ૫ પ્રમત્તસંયત ૬ અપ્પમત્તસંયત ૭ નિયટ્ટીવાયરે ૮ અનિ-
 ચટ્ટીવાયરે ૯ સુદ્ધમસંયત ૧૦ ઉવસામણ્ણા-લ્લવણ્ણા-ઉવસંતમોહે ૧૧
 સ્ત્રીણમોહે ૧૨ સજોગીકેવલી ૧૩ અજોગીકેવલી ૧૪ इति' કર્મવિશુદ્ધિ-
 માર્ગં પ્રતીત્ય ચતુર્દશજીવસ્થાનાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ તથા-મિથ્યાદૃષ્ટિઃ ૧ સાસ્વાદન
 સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ ૨ સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિઃ ૩ અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિઃ ૪ વિરતાવિરતઃ ૫ પ્રમત્ત
 સંયતઃ ૬ અપ્રમત્તસંયત ૭ નિયન્ત્રિતવાદરઃ ૮ અનિયન્ત્રિતવાદરઃ ૯ સૂક્ષ્મસંપરાયઃ
 ૧૦ ઉપશમકો વા-ક્ષપકો વા, ઉપશાન્તમોહઃ ૧૧ સ્ત્રીણમોહઃ ૧૨ સયોગિકેવલી
 ૧૩ અયોગિકેવલી ૧૪ इति ॥૩૬॥

મૂલ્લ-સમ્મદંસળ નાળચરિત્તાઈ તવેય મોક્ષમગ્ગો ॥૩૭॥

છાયા-સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્રાણિ તપશ્ચ મોક્ષમાર્ગઃ ॥૩૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-—‘પૂર્વ’ તાત્પર્ય-ચતુર્દશ જીવસ્થાનાન્યાશ્રિત્યોત્તરમસંલ્લેય-

‘કર્મ’ વિશુદ્ધિમાર્ગના કી અપેક્ષા ચૌદહ જીવસ્થાન કહે ગયે છે,
 વે હસ પ્રકાર છે—(૧) મિથ્યાદૃષ્ટિ (૨) સાસ્વાદનસમ્યગ્દૃષ્ટિ (૩)
 સમ્યગ્મિથ્યાદૃષ્ટિ (૪) અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ (૫) વિરતાવિરત (૬) પ્રમત્ત-
 સંયત (૭) અપ્રમત્તસંયત (૮) નિવૃત્તિવાદર (૯) અનિવૃત્તિવાદર (૧૦)
 સૂક્ષ્મસામ્પરાય (૧૧-૧૨) ઉપશમક, ક્ષપક, ઉપશાન્તમોહ, સ્ત્રીણમોહ
 (૧૩) સયોગિ કેવલી (૧૪) અયોગિ કેવલી ॥૩૬॥

‘સમ્મદંસળનાળચરિત્તાઈ’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ-સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્ર ઓર તપ મોક્ષ કા માર્ગ છે ॥૩૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-—હસસે પહેલે બતલાયા ગયા છે કિ ચૌદહ જીવ-

કર્મવિશુદ્ધિમાર્ગનાની અપેક્ષા ચૌદ જીવસ્થાન કહેવામાં આવ્યા છે તે
 આ પ્રમાણે છે—(૧) મિથ્યાદૃષ્ટિ (૨) સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ (૩) સમ્યગ્
 મિથ્યાદૃષ્ટિ (૪) અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ (૫) વિરતાવિરત (૬) પ્રમત્તસંયત (૭) અપ્ર-
 મત્તસંયત (૮) નિવૃત્તિવાદર (૯) અનિવૃત્તિવાદર (૧૦) સૂક્ષ્મસામ્પરાય (૧૧-૧૨)
 ઉપશમકક્ષપક ઉપશાન્તમોહ, સ્ત્રીણમોહ (૧૩) સયોગિકેવલી (૧૪)
 અયોગિકેવલી ॥ ૩૬ ॥

‘સમ્મદંસળનાળચરિત્તાઈ’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—સમ્યગ્દર્શન-જ્ઞાન-ચારિત્ર અને તપ મોક્ષના માર્ગ છે ॥૩૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-—આની પહેલે બતાવવામાં આવ્યું છે ચૌદ જીવસ્થાનોમાં

ગુણનિર્જરા ભવતીતિ પ્રોક્તમ્, સા ચ-સમ્યગ્દર્શનાદિરૂપમોક્ષમાર્ગશ્રયણેનૈવ ભવતીતિ મોક્ષમાર્ગસ્વરૂપં નિરૂપયિતુમાહ-‘સમ્મદંસણ’ इत्यादि । सम्यग्दर्शन-ज्ञानचारित्राणि तपश्च, सम्यग्दर्शनं-सम्यग्ज्ञानं-सम्यक् चारित्रं-तपश्चेत्येतच्च-तुष्टयं समुदितं मोक्षमार्गः मुक्तिसाधनं वर्तते, तत्रापि-सम्यग्दर्शनं मोक्षसाधनेषु प्रधानं साधन मस्तीति सूचयितुं सर्वप्रथमं सम्यग्दर्शनपदोपादनं कृतम् । एवञ्च सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रवत् तपोऽपि मोक्षसाधनं बोध्यम्, अतएव-तपोऽपि मोक्षमार्गतयोपात्तं तच्च-तपो द्वादशविधम् बाह्याभ्यन्तरभेदभिन्नं बोध्यम् । सम्यग्दर्शनं तावत्-येन रूपेणाऽनादि सिद्धाः जीवादिपदार्थाः सन्ति तेन रूपेण तीर्थकृद्भिः प्रतिपादिते तत्त्वार्थे-तदविपरीताभिनिवेशराहित्येन श्रद्धानं सम्यग्-

स्थानો में उत्तरोत्तर असंख्यातगुणी निर्जरा होती है वह निर्जरा सम्यग्दर्शन आदि मोक्ष मार्ग का अवलम्बन लेने से ही होती है, अत एव मोक्षमार्ग का निरूपण करने के लिए कहते हैं-

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र और (सम्यक्) तप, यह चारों मिलकर मोक्ष का मार्ग हैं । इन चारों में सम्यग्दर्शन प्रधान मोक्ष-साधन है, यह सूचित करने के लिए सर्वप्रथम सम्यग्दर्शन, पद का प्रयोग किया है । सम्यग्दर्शन ज्ञान और चारित्र के समान तप भी मोक्ष का मार्ग है अतएव उसका भी यहां ग्रहण किया गया है । तप के बारह भेद हैं-छह बाह्य तप और छह आभ्यन्तर तप ।

जिस रूप में अनादि सिद्ध जीवादि पदार्थ हैं, उन्ही रूप में तीर्थंकरों द्वारा प्रतिपादित तत्त्वार्थ पर श्रद्धा रखना, उनके विषयमें

ઉત્તરોત્તર અસંખ્યાત-અસંખ્યાતગુણી નિર્જરા થાય છે. તે નિર્જરા સમ્યગ્દર્શન આદિ મોક્ષમાર્ગનો આધાર હોવાથી જ થાય છે, આથી મોક્ષમાર્ગનું નિરૂપણ કરવા માટે કહીએ છીએ

સામ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન સમ્યગ્ચારિત્ર અને (સમ્યક્) તપ આ ચારે મળીને મોક્ષનો માર્ગ બને છે. આ ચારેયમાં સામ્યગ્દર્શન પ્રધાન મોક્ષ સાધન છે, એ સૂચિત કરવા માટે સર્વ પ્રથમ સમ્યગ્દર્શન પદનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. સમ્યગ્દર્શન જ્ઞાન અને ચારિત્રની માફક તપ પણ મોક્ષ નો માર્ગ છે આથી તેનું પણ અહીં ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે તપના બાર ભેદ છે છ બાહ્યતપ અને છ આભ્યન્તર તપ.

જે સ્વરૂપે અનાદિસિદ્ધ જીવાદિ પદાર્થ છે તે જ સ્વરૂપે તીર્થંકરો દ્વારા પ્રતિપાદિત તત્વાર્થ પર શ્રદ્ધા રાખવી તેમના વિષયમાં કોઈ પ્રકારનો વિપરીત

વિદ્યાસરૂપં વોધ્યમ્, તદ્ધ નિસર્ગેણ-ગુરોરભિગમેન વા ભવતિ । એવં યેન યેન પ્રકારેણ
સ્વભાવેન જીવાદિ વસ્તૂનિ સન્તિ તેન તેન પ્રકારેણ સ્વભાવેન સંશયવિપરીતા-
અનધ્યવસાયરૂપ દોષત્રયરહિતત્વેનાડવગમઃ સમ્યગ્વોધઃ સમ્યગ્જ્ઞાન મુચ્યતે ।
એવં ભ્રમણકારણભૂતકર્મણઃ સમૂલ મુન્મૂલયિતું સમુદયતસ્ય શ્રદ્ધાધાનસ્ય સંસાર-
કાન્તારમીરો ભવ્યસ્ય પ્રાણાતિપાતાદિ પચ્ચાશ્રવનિવારણકારણીભૂત પચ્ચસંવર
સમ્યગાચરણં સમ્યક્ ચારિત્ર મુચ્યતે । તથાચૈતાનિ-સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્ર-
તપાસિ કુકાલદણ્ડચક્રચીવરાદિ ન્યાયેન સઙ્ઘીભૂય મોક્ષરૂપં ફલં સાધયન્તિ ।
ન તુ-તૃણારણિવન્યાયેન પ્રત્યેકં પૃથગ્ભૂયેતિ ભાવઃ ॥૩૭॥

કિસી પ્રકાર કા વિપરીત અભિનિવેશ ધારણ ન કરના સમ્યગ્દર્શન
સમજના ઝાહિયે । સમ્યાદર્શન નિસર્ગ સે યા ગુરુ કે અભિગમ સે
ઉત્પન્ન હોતા હૈ ।

હસી પ્રકાર જીવાદિ પદાર્થ જિસ-જિસ રૂપ મેં રહે હુયે હૈ, ડસી
રૂપ મેં, સંશય વિપર્યય ઓર અનધ્યવસાય-હન ત્રીન દોષોં સે રહિત
હન્હેં સમ્યક્ પ્રકાર સે સમજના-જાનના સમ્યગ્જ્ઞાન હૈ ।

ભવભ્રમણ કે કારણભૂત કર્મોં કા ડન્મૂલન કરને કે લિયે ડયત
શ્રદ્ધાવાન્ સંસાર-કાન્તાર સે ભયમીત ભવ્યજીવ પ્રાણાતિપાત આદિ
પાંચ આસ્રવોં કા નિવારણ કરને કે કારણભૂત પાંચ સંવરોં કા
આચરણ કરતા હૈ વહ સમ્યક્ ચારિત્ર હૈ ।

યહ સમ્યગ્દર્શન, જ્ઞાન, ચારિત્ર ઓર તપ કુંમાર કે દંડ ચક્ર ઓર
ચીવર આદિ કે ન્યાય સે મિલકર મોક્ષરૂપી ફલ કો સિદ્ધ કરતે હૈ,
પૃથક્-પૃથક્ મોક્ષ કે સાધન નહીં હોતે ॥૩૭॥

અભિનિવેશ ધારણ ન કરવો. સમ્યગ્દર્શન સમજવું જોઈએ સમ્યગ્દર્શન નિસર્ગથી
અથવા ગુરુના અભિગમથી ઉદ્ભવે છે.

એવી જ રીતે જીવદિ પદાર્થ જે-જે સ્વરૂપમાં રહેલા છે તે જ રૂપે,
સંશય વિપર્યય એને અનધ્યવસાય. આ ત્રણ દોષોથી રહિત તેમને સમ્યક્
પ્રકારથી સમજવા જાણવા એ સમ્યક્જ્ઞાન છે.

ભવભ્રમણના કારણભૂત કર્મોના નાશ કરવા માટે ઉદ્યત શ્રદ્ધાવાન્ સંસાર
કાન્તારથી ભયમીત ભવ્યજીવ પ્રાણાતિપાત આદિ પાંચ આસ્રવોનું નિવારણ
કરવના કારણભૂત પાંચ સંવરોનું આચરણ કરે છે તે સમ્યક્ચારિત્ર છે.

આ સમ્યક્દર્શન જ્ઞાન ચારિત્ર અને તપ, કુંભારના દંડચક્ર અને ચીવર
વગેરેના ન્યાયથી મળીને મોક્ષરૂપી ફળને પ્રાપ્ત કરે છે, પૃથક્ પૃથક્ મોક્ષના
સાધન હોતા નથી ॥ ૩૭ ॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वं तावत्-तपो विशेषानुष्ठानादिना सकलकर्मक्षय-
लक्षणमोक्षस्य प्रतिपादितत्वात्, सम्प्रति-तस्य मोक्षस्य हेतुत्वेन सम्यग्दर्शन-
ज्ञानचरित्रतपोरत्नचतुष्टयं प्ररूपयितुमाह—‘सम्पदंक्षणनाणचरित्ताइं
तवे य मोक्खमग्गो’ इति । सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि तपश्च मोक्षमार्गो
वर्तते, तत्र-सम्यक् पदस्य द्वन्द्वादौ श्रूयमाणतया प्रत्येकपभिसम्बन्धात् सम्यग्दर्-
शनं-सम्यग्ज्ञानं-सम्यक् चारित्रं-तपश्चेत्येतच्चतुष्टयं तावत्-मोक्षसाधनं वर्तते ।
तत्र-सम्यग्दर्शनं तावत्-येन रूपेणाऽनादिसिद्धं जीवादितत्त्वमस्ति तेन रूपेण
भगवद्भिस्तीर्थङ्करैः प्रज्ञप्ते जीवादि तत्त्वार्थे विपरीताभिनिवेशराहित्येन सम्यक्

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-तपोविशेष के अनुष्ठान आदि से सकल कर्म क्षय
रूप मोक्ष का पहले प्रतिपादन किया गया है, अब यह प्रतिपादन करते
हैं कि सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र और तप, यह रत्न चतुष्टय मोक्ष का
कारण है—

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र तथा सम्यक् तप
मोक्ष का मार्ग हैं । ‘सम्यक्’ पद द्वन्द्व समास की आदि में प्रयुक्त होने
से प्रत्येक पद के साथ जुडना है, इस कारण सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान,
सम्यक्चारित्र और सम्यक् तप, यह चारों मोक्ष के साधन हैं । अनादि
सिद्ध जीवादि तत्त्व जिस रूप में हैं, उसी रूप में तीर्थंकरों द्वारा कथित
उन जीवादि तत्त्वों पर विपरीताभिनिवेश से रहित सम्यक् श्रद्धान
करना सम्यग्दर्शन कहलाता है । इसी प्रकार जीवादि पदार्थ जिस रूप
में हैं, उसी रूप में, संशय विपर्यय और अनध्यवसाय से रहित उन्हें
जानना सम्यग्ज्ञान है । कहा भी है—

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—तपोविशेषना अनुष्ठान आदिथी सकल कर्मक्षय इय
मोक्षतुं पडेला प्रतिपादन करवांमां आण्युं हवे ओ प्रतिपादन करीओ छीओ
के सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र अने तप आ रत्न चतुष्टय मोक्षना कारण छे

सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र (सम्यक्) तप मोक्षना मार्ग छे.
‘सम्यक्’ पद द्वन्द्व समासनी आदिमां वपगयेदो होवाथी प्रत्येक पदनी साथे
जेडाय छे आथी सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक् चारित्र अने सम्यक्तप ओ
आरेय मोक्षना साधन छे अनादि सिद्ध जेवादि तत्व जे इपे छे, तेज इपमां
तीर्थंकरे द्वारा कथित ते जेवादि तत्वो पर विपरीताभिनिवेशथी रहित सम्यक्
श्रद्धान करवी सम्यग्दर्शन कडेवाय छे. ओवी ज रीते जेवादि पदार्थ जे इपमा
छे तेज इपमां संशय विपर्यय अने अनध्यवसायथी रहित तेमने जेजुवा
सम्यग्ज्ञान छे कहुं पणु छे.

શ્રદ્ધાનરૂપમગન્તવ્યમ્ । एवं सम्यग् ज्ञानं खलु येन येन प्रकारेण स्वभावेन जीवा-
दयः पदार्था स्सन्ति तेन तेन प्रकारेण स्वभावेन संशयविपर्ययानध्यवसायदोष
त्रय रहितत्वेनाऽवभासात्मकं सम्यग्बोधमवसेयम् । तथाचोक्तम्

रुचिर्जिनोक्ततत्त्वेषु सम्यक् श्रद्धान् मुच्यते ।

जायतेतन्निर्गणेन गुरोरधिगमेन च ॥ १ ॥

यथाऽवस्थिततत्त्वानां संक्षेपाद् विस्तरेण वा ।

योऽबोधो स्तमत्रાહુઃ સમ્યગ્જ્ઞાનં મનીષિણઃ ॥ ૨ ॥ इति

एवं सम्यक् चारित्रं तावद् संसारंचक्रभ्रमिहेतु ज्ञानावरणादि कर्मणां सम्पूर्ण
उन्मूलनार्थमुच्यतस्य श्रद्धानशीलस्य भवाटवी भयभीतस्य भव्यस्य प्राणिप्राण-
व्यपरोपण मृषावाद स्तेयमैथुनपरिग्रहरूप पञ्चास्त्रनिवारणकारणीभूत पञ्च-

‘जिनेन्द्र भगवान् द्वारा कथित तत्त्वों पर रुची होना सम्यक् श्रद्धान
कहालाता है । वह श्रद्धान या तो નિર્ગણે સે હોતા હે या गुरु के उपदेश
से होता है ॥ १ ॥

वास्तविक तत्त्वों का विस्तार ले अथवा संक्षेप से जो ज्ञान होता है
उसे मनीषी जन सम्यग्ज्ञान कहते हैं ॥ २ ॥

भवभ्रमण के कारण ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का सूक्ष्म उन्मूलन
करने के लिए उद्यत, श्रद्धान शील और भव-भटवी से भयभीत
भव्य-प्राणी हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन और परिग्रह रूप पांच आस्त्रों
का निवारण करने वाले पांच संवरों का जो समीचीन आचरण करता
है, वह सम्यक् चारित्र कहालाता है । कहा भी है-

‘सावधयोग का सर्वथा त्याग कर देना चारित्र कहालाता है । यह
चारित्र अहिंसा आदि व्रतों के भेद से पांच प्रकार का कहा गया है । १ ।

જિનેન્દ્ર ભગવાન દ્વારા કથિત તત્ત્વો પર રૂચિ હોવી સમ્યક્શ્રદ્ધા કહેવાય છે.
આ શ્રદ્ધા કયાં તો નિર્ગર્ણી થાય છે અથવા ગુરૂના ઉપદેશથી થાય છે । ૧ ।
વાસ્તવિક તત્ત્વોનું વિસ્તારથી અથવા સંક્ષેપથી જે જ્ઞાન થાય છે,
તેને મનીષી જન સમ્યક્જ્ઞાન કહે છે ॥ ૨ ॥

ભવભ્રમણના કારણે જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સમૂળગો ક્ષય કરવા
માટે ઉદ્યત શ્રદ્ધાવાન અને ભવ અટવીથી ભયભીત ભવ્ય પ્રાણીહિંસા અસત્ય
ચોરી મૈથુન અને પરિગ્રહરૂપ પાંચ અસત્ત્વોનું નિવારણ કરનાર પાંચ સંવરોનું
જે સમીચીન આચરણ કરે છે તે સમ્યક્ચારિત્ર કહેવાય છે. કહ્યું પણ છે
સાવધયોગનેા સર્વથા ત્યાગ કરવો ચારિત્ર કહેવાય છે આ ચારિત્ર
અહિંસા, આદિ વ્રતોના ભેદથી પાંચ પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે ॥ ૧ ॥

संवर सम्यगाचरणरूपं बोध्यम् । तथाचोक्तम्—‘सर्वसाऽवचयोगानां त्यागश्चारित्र्यमुच्यते । कीर्तितं तदहिंसादि भेदेन पञ्चधा ॥१॥ अहिंसा स्मृतताऽस्तेय ब्रह्मचर्याऽपरिग्रहाः । न यत्प्रमादयोगेन जीवित व्यपरोपणम् ॥२॥ चराणां स्थावराणां च तदहिंसाव्रतं मतम् ॥३॥ प्रियं पथ्यं वचस्तथ्यं स्मृतं व्रतमुच्यते । तत्तथ्यमपि नो तथ्यमप्रियं चाऽहितं च यत् ॥४॥ अनादान मदत्तस्याऽस्तेयव्रतमुदीरितम् । बाह्याः प्राणाः नृणामर्थोहरता तं हताहिते ॥५॥ दिव्यौदारिककामानां कृतानुमतकारितैः । मनोवाक्कायतस्त्यागो ब्रह्मऽष्टादशधा मतम् ॥६॥ सर्वभावेषु मूर्च्छया स्त्यागः स्यादपरिग्रहः । यदसत्स्वपि जायेत मूर्च्छया चित्तविप्लवः ॥७॥ भावनाभिर्भाविता

‘चारित्र्य के पांच कारण ये हैं—(१) अहिंसा (२) सत्य (३) अस्तेय (४) ब्रह्मचर्य और (५) अपरिग्रह । प्रमाद के योग से व्रत और स्थावर जीवों के प्राणों का व्यपरोपण न करना अहिंसा व्रत माना गया है । जो वचन प्रिय, पथ्य और तथ्य हो वह सत्य कहा गया है । जो वचन अप्रिय और अहितकर है, वह तथ्य होने पर भी सत्य नहीं है’ ॥३॥

‘अदत्त वस्तु को ग्रहण न करना अस्तेय व्रत कहा गया है । अर्थ अर्थात् धन मनुष्यों का बाह्य प्राण कहलाता है, जो उसे हरण करता है वह मानो प्राणहरण करता है ॥४॥’

‘दिव्य और औदारिक शरीर संबंधी काययोगों का कृत, कारित और अनुमोदना से तथा मन, वचन और काय से त्याग कर देना अष्टादश-प्रकार का ब्रह्मचर्य व्रत कहलाता है ॥५॥

‘समस्त पदार्थों में समता का त्याग करना अपरिग्रह व्रत है । असत्

चारित्र्यना पांच कारणे आछे—(१) अहिंसा (२) सत्य (३) अस्तेय (४) ब्रह्मचर्य અને (५) अपરિગ્રહ. પ્રમાદના યોગથી વ્રત અને સ્થાવર જીવોના પ્રાણોની હિંસા ન કરવી અહિંસાવ્રત માનવામાં આવ્યું છે ॥ ૨ ॥ જે વચન પ્રિય, પથ્ય અને તથ્ય હોય તેને સત્ય કહેવામાં આવ્યું છે. જે વચન અપ્રિય અને અહિતકર છે તે તથ્ય હોવા છતાંપણ સત્ય નથી ॥ ૩ ॥

‘અદત્ત વસ્તુને ગ્રહણ ન કરવી અસ્તેયવ્રત કહેવામાં આવ્યું છે. અર્થ અર્થોત્ત ધન મનુષ્યોના બાહ્ય પ્રાણ કહેવાય છે. જે તેનું હરણ કરે છે તે બાણે કે પ્રાણહરણ કરે છે ’ ॥ ૪ ॥

દિવ્ય અને ઔદારિક શરીર સંબંધી કામભોગોનો કૃત, કારિત અને અનુમોદનાથી તથા મન વચન અને કાયાથી ત્યાગ કરી દેવો અઠાર પ્રકારનું બ્રહ્મચર્યવ્રત કહેવાય છે. ॥ ૫ ॥

સમસ્ત પદાર્થોની મમતાનો ત્યાગ કરવા અપરિગ્રહવ્રત છે, અસત્ પદાર્થોમાં

નિ પञ્ચમિઃ પञ્ચથા ક્રમાત્ । મહાવ્રત્તાનિ લોકસ્ય સાધયન્ત્યવ્યયં પદમ્ ॥૭૥॥ ઇતિ,
તપસ્તાવદ્-વાહ્યાભ્યન્તરભેદેન દ્વાદશવિધમ્, તથા ચ દ્વાદશવિધં સ્વલુ તપો મોક્ષસા-
ધનં વર્તતે, એવશ્ચ-સમ્યગ્દર્શનં સમ્યગ્જ્ઞાનસમ્યક્ચારિત્ર તપાંસિ ઇત્યેતચ્ચતુષ્ટયં સ્વલુ
દ્વણ્ડચક્રચીવરન્યાયેન સમ્મિલિતમેવ મોક્ષસાધનં ભવતિ નતુ-તૃણારણિમણિન્યાયેને
તિ બોધ્યમ્ । ઉક્તશ્ચોત્તરાધ્યયને ૨૮ અધ્યયને ૧=૩ ગાથાસુ-‘મોક્ષસ્વમગ્ગ-

પદાર્થો’ મેં બી સૂઝાં હોને સે ચિત્ત મેં વિકલતા ઉત્પન્ન હોતી હૈ ॥૬૥॥

‘પ્રત્યેક વ્રત કી પાંચ-પાંચ ભાવનાઓ સે ભાવિત યહ પાંચ મહાવ્રત સાધકોં કો અવ્યય પદ (મોક્ષ) પ્રદાન કરતે હૈ ॥૭૥॥

છહ બાહ્ય ઓર છહ આભ્યન્તર તપ મિલકર ચારહ હોતે હૈ । યે ચારહ તપ બી મોક્ષ કે સાધન હૈ । હસ પ્રકાર સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન, સમ્યક્ ચારિત્ર ઓર સમ્યક્ તપ, યે ચારોં દ્વણ્ડ, ચીવર કે ન્યાય સે સમ્મિલિત હોકર મોક્ષ કે સાધન હૈ, અર્થાત્ જૈસે કુમાર કા હંડા, ચાક ઓર ચીવર મિલકર હી ઘટ કે કારણ હોતે હૈ, પૃથક્-પૃથક્ નહીં, ઊસી પ્રકાર સમ્યગ્દર્શન આદિ મિલકર હી મોક્ષ કે સાધન હોતે હૈ, પૃથક્-પૃથક્ નહીં તૃણ, અરણિ ઓર મળી કી તરહ યે કારણ નહીં હૈ અર્થાત્ જૈસે અગ્નિ અકેલે ત્રીનકે સે, અકેલે અરણિ નામક કાળ્ઠ સે યા અકેલે મળી સે ઉત્પન્ન હો જાની હૈ, વૈસે અકેલે સમ્યગ્દર્શન યા જ્ઞાનાદિ સે મુક્તિ પ્રાપ્ત નહીં હો સકતી ।

પણ મૂઝાં હોવાથી ચિત્તમાં વિકલતા ઉત્પન્ન થાય છે ॥ ૬ ॥

પ્રત્યેક વ્રતની પાંચ-પાંચ ભાવનાઓથી ભાવિત આ પાંચ મહાવ્રત સાધકોને અવ્યય પદ (મોક્ષ) પ્રદાન કરે છે ॥ ૭ ॥

છ બાહ્ય અને છ આભ્યન્તર તપ મળીને બાર થાય છે આ બાર તપ પણ મોક્ષના સાધન છે. આવી રીતે સમ્યક્દર્શન સમ્યક્જ્ઞાન સમ્યક્ચારિત્ર અને સમ્યક્ તપ આ ચારેય દંઠ, ચક્ર માટીના ન્યાયથી સ્મિલિત થઈને મોક્ષના સાધન છે. અર્થાત્ જેવી રીતે કુંભારનો ડાંડો ચાક અને માટી એ ત્રણે મળીને જ ઘડાના કારણ બને છે જુદા જુદા નહીં એવી જ રીતે સમ્યક્દર્શન આદિ પણ મળીને મોક્ષના સાધન બને છે, સ્વતંત્ર સ્વતંત્ર નહીં તૃણ અગ્નિ અને મણિની માફક આ કારણ નથી અર્થાત્ જેમ અગ્નિ એકલા તણખલાથી એકલા અરણિ નામક કાળ્ઠથી અથવા એકલા મણિથી ઉત્પન્ન થઈ જાય છે એવી રીતે એકલા સમ્યક્ દર્શન અથવા જ્ઞાનાદિથી મોક્ષની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી

गङ् तच्च च सुणेह जिणभाषियं । चउकारणसंजुत्तं नाणदसणलक्खणं
॥१॥ नाणं च दंछणं चेव चरित्तं च तथो तहा । एस मग्गुत्ति पण्णत्तो
जिणेहि वरदंसिहि ॥२॥ नाणं च दंसणं चेव चरित्तं च तवो तहा एयं
मग्ग मणुप्पत्ता जीवा गच्छन्ति सोग्गहं ३ इति ॥ मोक्षमार्गगतिं तथ्यं
शृणुत जिनभाषितम् । चतुष्कारणसंयुक्तां ज्ञानदर्शन लक्षणाम् ॥१॥ ज्ञानं च दर्शनं
चैव चरित्रं च तपस्तथा । एष मार्ग इति प्रज्ञप्तो जिनेर्वरदर्शिमिः ॥२॥ ज्ञानं च
दर्शनं चैव चरित्रं च तपस्तथा । एतं मार्गं मनुपाप्ता जीवा गच्छन्ति स्वर्गतिम् ३
इति एवञ्च-सम्यग्ज्ञानदर्शनचारित्र्यवत् तपोऽपि मोक्षसाधनं वर्तते । इति
फलितम् । तत्र-तपसः सम्यग्ज्ञानादि त्रयेऽपि हेतुत्वेन प्रथमोपादानयोग्यत्वेऽपि
सम्यग्दर्शनस्य मोक्षप्रति मुख्यकारणतया प्रथमं तदुपादानमेव कृतम् । तथाचोक्तम्
'नादंसणस्स नाणं नाणेण विणा न होति चरणगुणा । अगुणस्स नत्थि
मोक्खो नत्थि अमोक्खस्स निव्वणं । १ । इति, नादर्शनिनो ज्ञानं ज्ञानेन

उत्तराध्ययन सूत्र के २८वें अध्ययन की गाथा १-३ में कहा भी है-
'जिन भगवान् द्वारा भाषित, चार कारणों से युक्त, ज्ञान-दर्शन लक्षण
वाली मोक्षमार्गगति को सुनो ॥१॥ ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप, इन
चारों को सर्वज्ञ-सर्वदर्शी जिनेन्द्र ने मोक्षमार्ग कहा है ॥२॥ ज्ञान, दर्शन,
चारित्र और तप के मार्ग को प्राप्त जीव सुगति को प्राप्त करते हैं ॥३॥

इस प्रकार यह फलित हुआ की सम्यग्ज्ञान सम्यग्दर्शन और सम्यक्
चारित्र की भांती तप भी मोक्ष का कारण है । यद्यपि सम्यग्ज्ञान आदि
तीनों में कारण होने से सर्वप्रथम स्थान देने योग्य हैं, तथापि सम्य-
ग्दर्शन मोक्ष का मुख्य कारण है, अतएव उसी को प्रथम स्थान दिया
गया है । कहा भी है-

उत्तराध्यायनसूत्रना २८मां अध्ययननी गाथा १-३मां कहुं पणु छे-
जिनेन्द्र लगवन्तो द्वारा भाषित, चार कारणोथी युक्त, ज्ञानदर्शन लक्षणवाणी
मोक्षमार्ग गतिने 'सांलणो ॥१॥ ज्ञान, दर्शन चारित्र अने तप आ आरेयने
सर्वज्ञ सर्वदर्शी जिनेन्द्रोअ मोक्षमार्ग कहेव छे. ॥ २ ॥ ज्ञान दर्शन चारित्र
अने तपना मार्गने प्राप्त एव सुगतिने प्राप्त करे छे ' ॥ ३ ॥

आ रीते अ प्रतिपत्ति थयु के सम्यग्ज्ञान सम्यग्दर्शन अने सम्यक्
चारित्रनी जेम तप पणु मोक्षना कारणभूत छे. जे के तप सम्यग्ज्ञान आदि
त्रयेमां कारण होवाथी सर्वप्रथम स्थान आपवा योग्य छे तो पणु सम्यग्दर्शन
मोक्षनुं मुख्य कारण छे आथी तेने ज प्रथम स्थान आपवामां आव्युं छे कहुं पणु छे

વિના ન શ્વન્તિ ચરણગુણાઃ । અગુણિનો નાસ્તિ મોક્ષો નાસ્ત્યમોક્ષસ્ય નિર્વાણમ્ ॥૧॥
 इति, સમ્યક્ત્વં તાવત્-ત્રિવિધં ભવતિ, દર્શનસમ્યક્ત્વમ્, જ્ઞાનસમ્યક્ત્વમ્, ચારિત્ર-
 સમ્યક્ત્વએતિ ॥ ઉક્તશ્ચ-સ્થાનાંગે ૩ સ્થાને ૪ ઉદ્દેશકે-‘તિવિહે સમ્મે પળ્લસે,
 તં જહા-નાણસમ્મે દંસણસમ્મે ચરિત્તાસમ્મે’ इति, ત્રિવિધં સમ્યક્ત્વમ્-
 પ્રજ્ઞપ્તમ્, તચ્ચથા-જ્ઞાનસમ્યક્ત્વમ્, દર્શનસમ્યક્ત્વમ્, ચારિત્રસમ્યક્ત્વમ્, इति ।
 તત્રાપિ સમ્યગ્દર્શનં દ્વિવિધમ્ભવતિ । નિસર્ગસમ્યગ્દર્શનમ્-અભિગમસમ્યગ્દર્શન-
 એતિ । તત્ર-નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શનમપિ દ્વિવિધમ્ પ્રતિપાતિ ચ-અપ્રતિપાતિ, ચેતિ ।
 एवम् अभिगमसम्यग्दर्शनमपि द्विविधम्, प्रतिपाति च अप्रतिपातिचेति । उक्तश्च
 स्थानाङ्गे २ स्थाने १ उद्देशे-‘सम्प्रदंस्सणे दुविहे पणत्ते, तं जहा-णिसग्ग

‘જો સમ્યગ્દર્શન સે રહિત હૈં ઉસે જ્ઞાન નહીં હોતા ઓર જ્ઞાન કે અભાવ મેં ચારિત્ર રૂપ ગુણ અથવા ચારિત્ર અર્થાત્ સૂચગુણ ઓર ગુણ અર્થાન્ ઉત્તરગુણ નહીં હોતે । ગુણહીન કો મોક્ષ પ્રાપ્ત નહીં હોતા ઓર મોક્ષ પ્રાપ્ત હુએ વિના નિર્વાણ પ્રાપ્ત નહીં હોતા ॥૧॥

સમ્યક્ત્વ ત્રીન પ્રકાર કા હૈ-દર્શનસમ્યક્ત્વ, જ્ઞાનસમ્યક્ત્વ, ઓર ચારિત્રસમ્યક્ત્વ । સ્થાનાંગ સૂત્ર કે ત્રીસરે સ્થાનક કે ચૌથે ઉદ્દેશક મેં કહા હૈ-‘સમ્યક્ત્વ ત્રીન પ્રકાર કા હૈ-જ્ઞાનસમ્યક્ત્વ, દર્શનસમ્યક્ત્વ ઓર ચારિત્રસમ્યક્ત્વ ।’ इसमें भी सम्यग्दर्शन दो प्रकार का है-निसर्ग सम्यग्दर्शन और अभिगम सम्यग्दर्शन । निसर्ग सम्यग्दर्शन भी प्रतिपाती और अप्रतिपाती के भेद से दो प्रकार का है । इसी प्रकार प्रतिपाती और अप्रतिपाती के भेद से अभिगम सम्यग्दर्शन भी दो प्रकार का है । स्थानांग सूत्र के दूसरे स्थान के प्रथम उद्देशक में कहा

એ સમ્યક્દર્શનથી રહિત છે તેને જ્ઞાન લાધતું નથી અને જ્ઞાનના અભાવમાં ચારિત્ર રૂપ ગુણ અથવા ચારિત્ર અર્થાત્ મૂળગુણ અને ગુણ અર્થાત્ ઉત્તરગુણ હોતાં નથી નિર્ગુણને મોક્ષ પ્રાપ્ત થતો નથી અને મોક્ષ પ્રાપ્ત થયા વગર નિર્વાણ પ્રાપ્ત થતું નથી

સમ્યક્ત્વ ત્રણ પ્રકારનું છે-દર્શનસમ્યક્ત્વ, જ્ઞાનસમ્યક્ત્વ અને ચારિત્ર-સમ્યક્ત્વ. સ્થાનાંગસૂત્રના ત્રીજા સ્થાનકના ચોથા ઉદ્દેશકમાં કહ્યું છે સમ્યક્ત્વ ત્રણ પ્રકારના છે જ્ઞાનસમ્યક્ત્વ, દર્શનસમ્યક્ત્વ અને ચારિત્રસમ્યક્ત્વ એમાં પણ સમ્યગ્દર્શન બે પ્રકારના છે-નિસર્ગસમ્યક્દર્શન અને અભિગમ સમ્યક્દર્શન નિસર્ગસમ્યક્દર્શન પણ પ્રતિપાતી અને અપ્રતિપાતીના ભેદથી બે પ્રકારના છે. એવીજ રીતે પ્રતિપાતી અને અપ્રતિપાતીના ભેદથી અભિગમ સમ્યક્દર્શન પણ બે પ્રકારનું છે. સ્થાનાંગ સૂત્રના ત્રીજા સ્થાનના પ્રથમ ઉદ્દેશકમાં કહ્યું છે સમ્યક્-

सम्मदंसणे चेव, अभिगमसम्मदंसणे चेव, अभिगमसम्मदंसणे दुविहे पणसे, तं जहा-पडिवाहचेव, अपडिवाहचेव' इति । सम्यग्दर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम् तद्यथा-निसर्गसम्यग्दर्शनम् चैव अभिगमसम्यग्दर्शनम्, चैव । निसर्गसम्यग्दर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम् तद्यथा-प्रतिपातिचैव, अप्रतिपातिचैव, अभिगमसम्यग्दर्शनं द्विविधं प्रज्ञप्तम् प्रतिपातिचैव-अप्रतिपातिचैव इति ॥३७॥

मूलम्-तत्तत्थ सद्धाणं सम्मदंसणं ॥३८॥

छाया--'तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥३८॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावत्-मोक्षसाधनत्वेन सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्रतपांसि प्ररूपितानि, तत्र-प्रथमोपात्तं सम्यग्दर्शनं विस्तररूपेण प्ररूपयितुमाह-'तत्तत्थ सद्धाणं सम्मदंसणं' इति । तत्त्वार्थश्रद्धानम्-तत्त्व शब्दो भावसामान्यवाची वर्तते, तदिति सर्वनाम्नः सामान्ये वर्तमानत्वात्, सर्वेषां यन्नाम है-निसर्ग सम्यग्दर्शन और अभिगम सम्यग्दर्शन । इन दोनों के भी प्रतिपाती और अप्रतिपाती के भेद से दो-दो भेद हैं ॥३७॥

'तत्तत्थ सद्धाणं सम्मदंसणं'

सूत्रार्थ—तत्त्वार्थ का श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है ॥३८॥

तत्त्वार्थदीपिका—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र और सम्यक् तप मोक्ष के कारण हैं, यह पहले कहा गया है, इनमें से अब सम्यग्दर्शन की विस्तारपूर्वक प्ररूपणा करते हैं-

तत्त्वार्थ का श्रद्धान सम्यग्दर्शन कहलाता है । यहाँ तत्त्व शब्द सामान्य भाव का वाचक है, क्योंकि 'तत्' यह सर्वनाम शब्द सामान्य के अर्थ में है । जो सब का नाम हो वह सर्वनाम, ऐसी उसकी अन्वर्थ

दर्शन એ પ્રકારનું છે નિસર્ગસમ્યક્દર્શન અને અભિગમ સમ્યક્દર્શન આ બંનેના પણ પ્રતિપાતી અને અપ્રતિપાતીના લેહથી બળે લેદ છે ॥ ૩૭ ॥

'તત્તથ સદ્ધાણં સમ્મદંસણં'

સૂત્રાર્થ--તત્ત્વાર્થની શ્રદ્ધા કરવી સમ્યક્દર્શન છે ॥ ૩૮ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-સમ્યક્દર્શન, સામ્યક્જ્ઞાન, સમ્યક્ચારિત્ર અને સમ્યક્ તપ મોક્ષના કારણ છે એ અગાઉ કહેવામાં આવ્યું છે, એમાંથી હવે સમ્યક્ દર્શનનું વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપણ કરીએ છીએ

તત્ત્વાર્થની શ્રદ્ધા સમ્યક્દર્શન કહેવાય છે. અત્રે 'તત્ત્વ' શબ્દ સામાન્ય ભાવનો વાચક છે કારણકે 'તત્' આ સર્વનામ શબ્દ સામાન્યના અર્થમાં છે. જે બધાનું નામ છે તે સર્વનામ એવી તેની અન્વર્થ સંજ્ઞા છે, આ રીતે

તત્ સર્વનામ હત્યન્વર્થસંજ્ઞાવલાત્, તસ્ય સામાન્યસ્ય ભાવસ્તત્ત્વમ્ । તથા ચ-યદ્વસ્તુ
 યથા વ્યવસ્થિતં વર્તતે તસ્ય વસ્તુનઃ તથાભાવો-ભવનમ્, તત્ત્વેનાર્થ સ્તત્ત્વાર્થઃ તત્ત્વ
 મેવાર્થ સ્તત્ત્વાર્થઃ, તત્ત્વાર્થસ્ય શ્રદ્ધાનં તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યગ્દર્શન મવગન્તવ્યમ્ ।
 તત્ત્વાનિ ચ પ્રથમાધ્યાયે પ્રરૂપિતાનિ નવવિધાનિ વોધ્યાનિ, સમ્યક્ત્વશ્ચ-પૂર્વો-
 ક્તાનાં જીવાદિ નવતત્તાનામ્-અર્થાનાં યથાવસ્થિતસ્ય વાસ્તવિકસ્વરૂપસ્ય તથા
 ભાવેનોપદેશો વિશ્વાસવિશેષરૂપ શ્રદ્ધાનશ્ચોચ્યતે । એવશ્ચ-જીવાદિ તત્ત્વાર્થાનાં
 જૈનાગમેષુ યેન રૂપેણ વાસ્તવિકં સ્વરૂપં પ્રતિપાદિતં તેનૈવ રૂપેણ વિજ્ઞાય તદ્ભાવે-
 નોપદેશનં શ્રદ્ધાકરણં ચ સમ્યગ્દર્શનં વોધ્યમ્ । ઉક્તશ્ચોત્તરાધ્યયને ૨૮ અધ્યયને ૧૫
 ગાથાયામ્-‘તદ્વિધાણં તુ ભાષાણં સ્વભાવે ઉવણ્ણં । ભાવેણં સદ્દહંતસસ
 સમ્મત્તં ત વિદ્યાહિયં । ૧૥ ॥’ इति, તત્ત્વયાનાન્તુ ભાવાનાં સદ્ભાવ ઉપદેશનમ્ ।
 ભાવેન શ્રદ્ધવતઃ સમ્યક્ત્વં તદ વ્યાખ્યાતમ્ ॥૧॥ इति ॥૩૮॥

સંજ્ઞા છે । હમ પ્રકાર તત્ત્વ શબ્દ કા અર્થ હુઆ-જા વસ્તુ જિસ સ્વરૂપ
 મેં છે વસકા વૈસા હી હોના, તત્ત્વાર્થ કા શ્રદ્ધાન તત્ત્વ શ્રદ્ધાન કહલાતા
 છે । યહી સમ્યગ્દર્શન છે । તત્ત્વોં કા નિર્દેશ પ્રથમ અધ્યાય મેં ક્રિયા જા
 ચુકા છે । ઉનકી સંખ્યા નૌ હૈં । હસ પ્રકાર પૂર્વોક્ત જીવ અજીવ આદિ
 તત્ત્વોં પર યથાર્થ રૂપ સે વિશ્વાસ કરના શ્રદ્ધાન કહલાતા છે । અતએ
 જૈનાગમોં મેં જીવાદિ તત્ત્વોં કા જિસ રૂપ મેં પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા છે,
 ઉન્હેં ડસી રૂપ મેં સમજી કર સહી શ્રદ્ધાન કરના સમ્યગ્દર્શન છે । ઉત્ત-
 રાધ્યયન સૂત્ર કે ૨૮ વેં અધ્યયન કી ગાથા ૨૫ વીં મેં કહા છે-‘તદ્ય
 અર્થાત્ વાસ્તવિક પદાર્થોં કા યથાર્થ કથન કરના ઔર ભાવ પૂર્વક શ્રદ્ધા
 કરના સમ્યક્ત્વ કહા ગયા છે ॥૩૮॥

તત્ત્વ શબ્દનો અર્થ થયો જે વસ્તુ જે સ્વરૂપમાં છે તેનું તેજ પ્રમાણે હોયું
 તત્ત્વાર્થની શ્રદ્ધા તત્ત્વશ્રદ્ધા કહેવાય છે, આજ સમ્યગ્દર્શન છે તત્ત્વોનો નિર્દેશ
 પ્રથમ અધ્યાયમાં કરવામાં આવ્યો છે. તેમની સંખ્યા નવ છે. આ રીતે
 પૂર્વોક્ત ૭૨ અણુવ આદિ તત્ત્વો પર યથાર્થ રૂપથી વિશ્વાસ કરવો શ્રદ્ધા
 કહેવાય છે. આથી જૈનાગમોમાં જીવાદિ તત્ત્વોનું જે સ્વરૂપે પ્રતિપાદન કરવામાં
 આવ્યું છે તેમને તે જ સ્વરૂપે સમજીને સાચી શ્રદ્ધા લાવવી સમ્યગ્દર્શન
 છે. ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના ૨૮માં અધ્યયનની ૧૫મી ગાથામાં કહ્યું છે તદ્ય
 અર્થાત્ વાસ્તવિક પદાર્થોનું યથાર્થ કથન કરવું અને ભાવપૂર્વક શ્રદ્ધા કરવી
 સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવ્યું છે ॥ ૩૮ ॥

તથ્યસ્વરૂપં યજ્ઞિનૈરુપલબ્ધમુપદિષ્ટં વા, इत्येवं रीत्या तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनं बोध्यम् । यथाऽनादि सादि पारिणामिकादि भावेन जीवपुद्गलाः, अनादिपारिणामिकेन च जीवत्वेन उपयोगस्वरूपेण भावेन, सादिपारिणामिकेन च भावेन नारकतिर्यङ्मनुष्यदेवादिना च जीवाः, पुद्गला अपि अजीवत्वेनाऽनुपयोग-स्वरूपेणाऽनादिपारिणामिकेन, सादिपरिणामिकेन च श्वेतकृष्णनीलरक्तादिना परिच्छिद्यमानत्वादर्थो उच्यन्ते । धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायाऽऽकाशास्तिकायास्तु-अनादिपारिणामिकेनैव गतिस्थित्यवगाहावस्था मत्याभुस्त्यजन्ति त्यक्ष्यन्ति वा, परतस्तु-सादिपारिणामिकेनाऽपि भावेन परिच्छिद्यन्त एव, अतएवाऽर्थो इत्युच्यन्ते । एव मन्येऽपि पदार्थो अवसेयाः, तदेवं खलु प्रथम संवेग-निर्वेदानुकम्पाऽस्तिक्यादि लक्षणं तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यक्त्वं बोध्यम् । सम्यक्त्वञ्च

पनावटी श्रद्धान नही होना चाहिए । ‘वही वस्तु सत्य है जिसे जिन भगवान् ने जाना या प्रतिपादन किया है’ इस रूप से तत्त्वार्थ श्रद्धान होना सम्यग्दर्शन है । उदाहरणार्थ जीव अनादि काल से उपयोगमय है और वह कर्मोदय के बशीभूत होकर नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवगति में परिभ्रमण करता है । पुद्गल रूपी अजीव है, अनुपयोग स्वभाव वाला है, वह काला नीला पीला लाल श्वेत आदि विभिन्न पदार्थों में परिणत होता रहता है । धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय स्वभावतः गति, स्थिति और अवगाह के कारण हैं, अरुणी है, अजीव है, ये सभी द्रव्य नित्यानित्य, सामान्य विशेषात्मक और सत्-असत् स्वरूप हैं । सभी उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य से युक्त हैं । इसी प्रकार अन्य पदार्थों का भी स्वरूप यथायोग्य समझ लेना चाहिए । इस तरह

(ढોંગી) શ્રદ્ધા હોવી જોઈએ નહીં. તે જ વસ્તુ સત્ય છે જેને જિનેશ્વર ભગવાને બાણ્યું અથવા પ્રતિપાદન કરેલ છે ‘આ રૂપથી તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધા થવી સમ્યક્દર્શન છે

ઉદાહરણાર્થ—જીવ અનાદિકાળથી ઉપયોગમય છે અને તે કર્મોદયને વશીભૂત થઈને નાન્કી, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવગતિમાં પરીભ્રમણ કરે છે. પુદ્ગલ રૂપી અજીવ છે, અનુપયોગસ્વભાવ વાળો છે, તે કાળા, ભૂરા, પીળા, લાલ, સફેદ વગેરે વિલિન પર્ચાયામાં પરિણત થતો રહે છે. ધર્માસ્તિકાય અધર્માસ્તિકાય અને આકાશસ્તિકાય સ્વભાવતઃ ગતિ સ્થિતિ અને અવગાહદાનના કારણ છે, અરૂણી છે, અજીવ છે. આ બધા દ્રવ્યો નિત્યાનિત્ય સામાન્ય વિશેષાત્મક અને સત્ અસત્ સ્વરૂપ છે. બધા ઉત્પાદ વ્યય અને ધ્રૌવ્યથી યુક્ત છે. એવીજ રીતે અન્ય પદાર્થોનું પણ સ્વરૂપ યથાયોગ્ય સમજ લેવું

જીવા જીવાદિ નવતત્ત્વાર્થાનાં યથાવસ્થિતસ્વરૂપસ્ય તથાભાવેનોપદેશઃ શ્રદ્ધાનશ્ચ બોધ્યમ્ । ઉક્તશ્ચોત્તરાધ્યયને ૨૮ અધ્યયને—‘તદ્વિધ્યાણં તુ ભાવાણં સંભાવે ઉવણસણં ભાવેણં સદ્દહંતસસ સમ્મત્તં તં વિગાહિયં’ ॥૧॥ તદ્વ્યાનાન્તુ ભાવાનાં સદ્ભાવ ઉપદેશનમ્ । ભાવેન શ્રદ્ધયતઃ સમ્યક્ત્વં તદ્વ્યાખ્યાતમ્ । ૧। ૩૮

મૂલમ્—તં દુવિહં નિસર્ગ સમ્મદંસણે અભિગમસમ્મદંસણેય । ૩૯।

છાયા—તદ્ દ્વિવિધમ્, નિસર્ગસમ્યગ્દર્શનમ્—અભિગમસમ્યગ્દર્શનશ્ચ ॥૩૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ તાવત્—મોક્ષસાધકતયા પ્રતિપાદિતેષુ સમ્યગ્દર્શનાદિષુ ચતુર્ણુ પ્રથમોપાત્તસ્ય સમ્યગ્દર્શનસ્ય સ્વરૂપં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ—તદેવ સમ્યગ્દર્શનં દ્વૈવિધ્યેન પ્રરૂપયિતુમાહ—તં દુવિહં૦’ ઇત્યાદિ । તત્ત્વલુ પૂર્વસુત્રોક્ત

જિનોક્ત તત્ત્વ પર શ્રદ્ધાન કરના સમ્યગ્દર્શન હૈ જિસકે લક્ષણ પ્રશમ, સંવેગ, નિર્વેદ, અનુક્રમ્પા ઓર આસ્તિક્ય હૈ । ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર કે ૨૮ વેં અધ્યયન મેં કહા હૈ—યથાર્થ સાર્થો કે ઉપદેશ પર વાસ્તવિક રૂપ સે ભાવપૂર્વક શ્રદ્ધાન કરને વાલે કો સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, એસા તીર્થંકર ભગવાન્ ને કહા હૈ ॥૩૮॥

‘તં દુવિહં નિસર્ગ સમ્મ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—સમ્યગ્દર્શન દો પ્રકાર કા હૈ—નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન ઓર અભિગમસમ્યગ્દર્શન ॥૩૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે મોક્ષ કે ચાર સમ્યગ્દર્શન આદિ કારણોં મેં સે પ્રથમ કારણ સમ્યગ્દર્શન કે સ્વરૂપ કા પ્રતિપાદન કિયા ગયા, અવ ઉસકે દો ભેદોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

બેધબે. આ રીતે જિનોક્ત તત્ત્વપર શ્રદ્ધા કરવી સમ્યક્દર્શન છે. જેના લક્ષણ, પ્રશમ, સંવેગ, નિર્વેદ, અનુક્રંપા અને આસ્તિક્ય છે. ઉત્તરાધ્યયનસૂત્રના અઠ્યાવીસમા અધ્યયનમા કહ્યું છે યથાર્થ લાવોના (ઉદ્દેશ) ઉપદેશ પર વાસ્તવિક રૂપથી ભાવપૂર્વક શ્રદ્ધા કરનારને સમ્યક્ત્વ થાય છે. અર્થ તીર્થંકર ભગવાને કહ્યું છે ॥ ૩૮ ॥

‘તં દુવિહં નિસર્ગસમ્મદંસણે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—સમ્યક્દર્શન બે પ્રકારનું છે—નિસર્ગસમ્યક્દર્શન અને અભિગમસમ્યક્દર્શન. ॥ ૩૯ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલાં મોક્ષના ચાર સમ્યક્દર્શન વગેરે કારણોમાંથી પ્રથમ કારણ સમ્યક્દર્શનના સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હવે તેના બે ભેદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ

સ્વરૂપં સમ્યગ્દર્શનં દ્વિવિધં ભવતિ, તથા—નિસર્ગસમ્યગ્દર્શનમ્, અભિગમસમ્યગ્દર્શનં ચેતિ તત્ર—નિસર્ગતઃ પૂર્વભવસંસ્કારાદિજન્યસ્વભાવવતો જાયમાનં સમ્યગ્દર્શનમ્ નિસર્ગસમ્યગ્દર્શન મુચ્યતે । એવમ્—અભિગમાદ્ આચાર્ય ગુરુપાધ્યાયાદિ સદુપદેશાદિ રૂપાભિગમાજ્જાયમાનં સમ્યગ્દર્શનમ્, અભિગમસમ્યગ્દર્શન મુચ્યતે તથા ચ—પૂર્વજન્મ વિશિષ્ટસંસ્કારાદિ સ્વભાવાત્ સ્વયમેવાત્મનિ યત્પ્રકટી ભવતિ તદ્ નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શનં વોધ્યમ્ । એવમ્—આચાર્યાદિ સદુપદેશાત્ યજ્જાયતે તદ્—અભિગમસમ્યગ્દર્શનં જ્ઞેયમ્ ઇતિ ॥૩૯॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—‘પૂર્વસૂત્રે—સમ્યગ્દર્શનાદિ ચતુષ્ટયસ્ય મોક્ષસાધનત્વેન પ્રતિપાદિતસ્ય મધ્યે પ્રથમોપાત્તં સમ્યગ્દર્શનસ્વરૂપં પ્રતિપાદિતમ્ (પરુપિતમ્), સમ્પ્રતિ—તસ્ય સ્વરૂપ સમ્યગ્દર્શનસ્ય દ્વિવિધ્યં પ્રરૂપયિતુમાહ—‘તં દુબિહં નિસર્ગ

સમ્યગ્દર્શન કે દો ભેદ હૈં—નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન ઓર અભિગમ સમ્યગ્દર્શન । નિસર્ગ સે અર્થાત્ દૂસરે કે ઉપદેશ કે વિના હી પૂર્વ સંસ્કાર આદિ સે ઉત્પન્ન હોને વાલા સમ્યગ્દર્શન નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન કહલાતા હૈ । અભિગમ અર્થાત્ આચાર્ય, ઉપાધ્યાય, ગુરુ આદિ કે સદુપદેશ રૂપ અભિગમ સે હોને વાલા સમ્યગ્દર્શન અભિગમ સમ્યગ્દર્શન કહલાતા હૈ । અભિપ્રાય યહ હૈ કિ પૂર્વ જન્મ કે વિશિષ્ટ સંસ્કાર આદિ સ્વભાવ સે જો સમ્યગ્દર્શન સ્વતઃ આત્મા મેં પ્રકટ હો જાતા હૈ વહ નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન હૈ એવં આચાર્ય આદિ કે સદુપયોગ સે જો ઉત્પન્ન હોના હૈ વહ અભિગમ સમ્યગ્દર્શન હૈ ॥૩૯॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—સમ્યગ્દર્શનાદિ ચતુષ્ટય મોક્ષ કા સાધન હૈ, યહ પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા થા, ઉત્તમ સે સમ્યગ્દર્શન કે સ્વરૂપ કા પૂર્વસૂત્ર મેં નિરૂપણ ક્રિયા ગયા, અબ ઉત્તમે દો ભેદોં કા નિર્દેશ કરતે હૈં—

સમ્યગ્દર્શનના બે ભેદ છે નિસર્ગસમ્યગ્દર્શન અને અભિગમસમ્યગ્દર્શન નિસર્ગથી અર્થાત્ બીજાના ઉપદેશ વગરજ પૂર્વસંસ્કાર આદિથી ઉત્પન્ન થનાર સમ્યગ્દર્શન નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન કહેવાય છે. અભિગમ અર્થાત્ આચાર્ય ઉપાધ્યાય, ગુરુ, આદિના સદુપદેશ રૂપ અભિગમથી થનાર સમ્યગ્દર્શન અભિગમસમ્યગ્દર્શન કહેવાય છે. અભિપ્રાય એ છે કે પૂર્વ જન્મના વિશિષ્ટ સંસ્કાર આદિ સ્વભાવથી જે સમ્યગ્દર્શન સ્વતઃઆત્મામાં પ્રગટ થઈ જાય છે તે નિસર્ગસમ્યગ્દર્શન છે અને આચાર્ય વગેરેના સદુપદેશથી જે ઉત્પન્ન થાય છે. તે અભિગમસમ્યગ્દર્શન છે ॥ ૩૯ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—સમ્યગ્દર્શનાદિ ચતુષ્ટય મોક્ષના સાધન છે, એ

સમ્પદંસણે અભિગમસમ્પદંસણેય' इति । तत् खलु पूर्वद्वत्रपतिपादित स्वरूपं सम्यग्दर्शनं द्विविधं भवगन्तव्यम् तद्यथा-निसर्गसम्यग्दर्शनम्-अभिगम-सम्यग्दर्शनञ्च । तत्र-निसर्गः स्वभावः विशेषात्मपरिणामः अपरोपदेश उच्यते तस्माज्जायमानं सम्यग्दर्शनं निसर्गसम्यग्दर्शनं भवति । ज्ञानदर्शनोपयोगलक्षण-स्याऽऽत्मनो जीवस्य अनादौ संसारकान्तारे परिभ्रमतः स्वकृतस्य कर्मणो बन्ध-निकाचनोदयावलिका प्रवेशनिर्जरापेक्षतया नारक-तीर्थङ्गमनुष्य-देव भवग्रहणेषु नानाप्रकारकं पुण्य-पापफलं सुख-दुःखरूपमनुभवतो ज्ञानदर्शनोपयोग स्वभा-व्यात् तत्तत् परिणामाध्यवसाय स्थानान्तराणि प्राप्नुवतोऽनादि मिथ्यादर्शन-स्यापि परिणामविशेषात् तथाविधमपूर्वकरणं भवति येनाऽस्यात्मनः उपदेशं विनैव

સમ્યગ્દર્શન દો પ્રકાર કા હૈ-નિસર્ગસમ્યગ્દર્શન ઔર અભિગમ સમ્યગ્દર્શન । નિસર્ગ અર્થાત્ સ્વભાવ, આત્મા કા વિશેષ પરિણામ યા પરોપ-દેશ કા અભાવ તાત્પર્ય યહ હૈ કિ પરોપદેશ કે વિના હી જો સમ્યગ્દર્શન ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન કહલાતા હૈ । આત્મા જ્ઞાનદર્શન સ્વભાવ વાલા હૈ, અનાદિ સંસાર-ઝટકી યેં પરિભ્રમણ કર રહા હૈ, અપને કિયે કર્મ કે બન્ધ, નિકાચન, ઉદયાવલિકાપ્રવેશ ઔર નિર્જરા કી અપેક્ષા સે નારક તીર્થંચ મનુષ્ય ઔર દેવ ગતિયોં મેં પુણ્ય-પાપ કે નાના પ્રકાર કે સુખ-દુઃખ રૂપ ફલ કો ભોગ રહા હૈ, અપને જ્ઞાન-દર્શન-ઉપયોગ સ્વભાવ કે કારણ બિભિન્ન પ્રકાર અધ્યવસાય સ્થાનોં કો પ્રાપ્ત કરતા રહતા હૈ, એસા જીવ ઘડિ અનાદિ મિથ્યાદષ્ટિ હો તો બી પરિણામવિશેષ સે એસા અપૂર્વકરણ કરતા હૈ કિ ઉપદેશ કે વિના હી ઉસે સમ્યગ્દર્શન

પ્રતિપદન કરનામાં આન્યું. એમાંથી સમ્યક્દર્શનના સ્વરૂપનું પૂર્વસૂત્રમાં નિરૂપણ કરનામાં આન્યું. હવે તેના બે ભેદોનું નિર્દેશન કરીએ છીએ.

સમ્યક્દર્શન બે પ્રકારના છે નિસર્ગસમ્યક્દર્શન અને અભિગમસમ્યક્દર્શન નિસર્ગ અર્થાત્ સ્વભાવ, આત્માનું વિશેષ પરિણામ અથવા પરોપદેશ નો અભાવ, તાત્પર્ય એ છે કે પારકાના ઉપદેશ વગરજ બે સમ્યક્દર્શન ઉદ્ભવે છે તેને નિસર્ગસમ્યક્દર્શન કહેવાય છે. આત્મા, જ્ઞાનદર્શન સ્વભાવ વાળો છે, અનાદિ સંસાર ઝટકીમાં પરિભ્રમણ કરી રહ્યો છે, પોતાના કરેલા કર્મના બંધ નિકાચન ઉદયાવલિકા પ્રવેશ અને નિર્જરાની અપેક્ષાથી નારકી તીર્થંચ મનુષ્ય અને દેવગતિઓમાં પુણ્ય પાપના જુદા જુદા પ્રકારના સુખ દુઃખ રૂપ ફળને ભોગવી રહ્યો છે, પોતાના જ્ઞાનદર્શન ઉપયોગ સ્વભાવના કારણે વિભિન્ન પ્રકારના અધ્યવસાય સ્થાનોને પ્રાપ્ત કરતો રહે છે. આવો જીવ જો અનાદિ મિથ્યાદષ્ટિ હોય તો પણ પરિણામવિશેષથી એવું અપૂર્વ કરણ

સમ્યગ્દર્શનં સંજાયતે, इत्येवं निसर्गसम्यग्दर्शनमवसेषम् । एवम्-अभिगमः
 अभिगमः-श्रवणं शिक्षणम् उपदेशः तस्माद् अभिगमाद् आचार्योपाध्यायगुरुवादि
 सकाशात् उपदेशाज्जायमानं यत् तत्तार्थश्रद्धानं तदभिगमसम्यग्दर्शनमवगन्त-
 व्यम् । एवञ्च-यत्खलु अपूर्वकरणानन्तरभाव्यनिवृत्तिकरणं तत्-निसर्ग इति
 व्यपदिश्यते, तस्मात् खलु निसर्गरूपात् कारणाद् यः खलु जावादितत्त्वेषु
 रुचिरुत्पद्यते तन्निसर्गसम्यग्दर्शनं मुच्यते । या पुनर्जीवादि तत्त्वेषु आचार्याद्यु-
 पदेशादिना रुचिरुत्पद्यते तदभिगमसम्यग्दर्शनं व्यवह्रियते । उक्तञ्च स्यानाङ्के
 २-स्थाने १३ उद्देशके ७० सूत्रे-‘सम्मदंस्सणे दुविहे पणत्ते, तं जहा-
 णिस्सग्गस्सम्मदंस्सणे चेव अभिगमस्सम्मदंस्सणे चेव’ इति, सम्यग्दर्शनं
 द्विविधं प्रज्ञप्तम् तद्यथा-निसर्गसम्यग्दर्शनम् अभिगमसम्यग्दर्शनञ्चेति ॥३९॥

मूलम्-प्रमेयवावगे व्यवसायस्सभावे सम्मनाणे ॥४०॥

છાયા-‘પ્રમેયવ્યાપિ વ્યવસાયસ્વભાવં સમ્યગ્જ્ઞાનમ્ ॥૪૦॥

પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ । હસ પ્રકાર ઉત્પન્ન હોને વાલા સમ્યગ્દર્શન નિસર્ગ
 સમ્યગ્દર્શન કહલાતા હૈ । અભિગમ્ કા અર્થ હૈ શ્રવણ, શિક્ષા યા
 ઉપદેશ, આચાર્ય ઉપાધ્યાય યા ગુરુ કે ઉપદેશ સે જો તત્ત્વાર્થ શ્રદ્ધાન
 ઉત્પન્ન હોના હૈ વહ અભિગમ સમ્યગ્દર્શન કહલાતા હૈ ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ આચાર્ય આદિ કે ઉપદેશ કે વિના હી જો તત્ત્વ
 શ્રદ્ધાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શ કહલાતા હૈ ઓર આચાર્ય
 આદિ કે ઉપદેશ સે ઉત્પન્ન હોને વાલા સમ્યગ્દર્શન અભિગમ સમ્યગ્દર્શન
 કહા જાતા હૈ । સ્થાનાંગ સૂત્ર કે દૂસરે સ્થાન મેં ૭૦ વેં સૂત્ર મેં કહા હૈ-
 સમ્યગ્દર્શન દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ-નિસર્ગ સમ્યગ્દર્શન ઓર અભિ-
 ગમ સમ્યગ્દર્શન ॥૩૯॥

કરે છે કે વગર ઉપદેશે જ તેને સમ્યક્દર્શન પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. આ રીતે
 ઉત્પન્ન થનાર સમ્યક્દર્શન નિસર્ગસમ્યક્દર્શન કહેવાય છે. અભિગમનો અર્થ
 છે અભિગમ શ્રવણ, શિક્ષણ, અથવા ઉપદેશ, આચાર્ય, ઉપાધ્યાય અથવા ગુરુના
 ઉપદેશથી જ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થાય છે. તે અભિગમ સમ્યક્દર્શન કહેવાય છે

તાત્પર્ય એ છે કે આચાર્ય આદિના ઉપદેશ વગરજ જે તત્ત્વ શ્રદ્ધા
 ઉત્પન્ન થાય છે. તે નિસર્ગસમ્યક્દર્શન કહેવાય છે અને આચાર્ય આદિના
 ઉપદેશથી ઉત્પન્ન થનાર સમ્યક્દર્શન અભિગમ સમ્યક્દર્શન કહેવાય છે. સ્થાનાંગ
 સૂત્રના સમ્યક્દર્શન એ પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે નિસર્ગ સમ્યક્દર્શન અને
 અભિગમ સમ્યક્દર્શન ॥ ૩૯ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાવદ્-મોક્ષમ્પતિ સમ્યગ્દર્શન-સમ્યગ્જ્ઞાન-સમ્યક્ ચારિત્ર તપ્ત્વમ્પતિપાદનાત્ તત્ર-સમ્યગ્દર્શનસ્ય સમ્ભેદં સ્વરૂપં નિરૂપિતમ્, સમ્પતિ--સમ્યગ્જ્ઞાનસ્ય સ્વરૂપં પ્રરૂપયિતુમાહ—‘પમેય વાવગે’ इत्यादि । प्रमेयव्यापि-प्रमेयं वस्तुव्याप्तुम् अपरित्यक्तुं शीलवस्येति प्रमेयव्यापि नियतो वस्तुग्राहि नियतवस्तुसहचारि व्यवसायस्वभावम् अध्यव-सायात्मकं निश्चयात्मकं ज्ञानं सम्यग् ज्ञानं मुच्यते । तत्र प्रमेय व्यापकपदेन-विपरीतज्ञानस्य व्यावृत्तिर्भवति, व्यवसाय स्वभावपदेन-अनध्यवसायसंशयात्मकं ज्ञानं व्यावर्त्यते, । तथा च-येन येन प्रकारेण स्वभावेन जीवदयः पदार्थाः व्यव-

‘પમેયવાવગે વવસાય’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—જો પ્રમેયવ્યાપી ઓર વ્યવસાય સ્વભાવ વાળા (નિશ્ચયા-ત્મક) હો વહ સમ્યગ્જ્ઞાન કહલાતા હૈ ॥૪૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન, સમ્યક્ ચારિત્ર ઓર સમ્યક્ તપ, હસ ચતુષ્ટય કો મોક્ષ કે કારણ કહા થા, ઉસમેં સે સમ્યગ્દર્શન કા સમ્ભેદ સ્વરૂપ કહા જા ચુકા, અથ સમ્યગ્જ્ઞાન કે સ્વરૂપ કા કથન કરતે હૈ

જો પ્રમેય અર્થાત્ વસ્તુ કો પ્રાપ્ત કરે વહ પ્રમેય વ્યાપી કહલાતા હૈ જિસકા અર્થ હૈ નિયમ સે વસ્તુગ્રાહી યા નિયત વસ્તુ સહચારી । વ્યવ-સાયાત્મક ઉસે કહતે હૈ જો નિશ્ચયાત્મક હો । એસા પ્રમેયવ્યાપી ઓર વ્યવસાયાત્મક જ્ઞાન સમ્યગ્જ્ઞાન હૈ । યહાં ‘પ્રમેયવ્યાપી’ હસ પદ સે વિપ-રીત જ્ઞાન કા નિરાસ કિયા ગયા હૈ ઓર ‘વ્યવસાયાત્મક’ પદ સે અન-ધ્યવસાય તથા સંશય જ્ઞાન કા નિવારણ કિયા ગયા હૈ । તાત્પર્ય યહ

‘પમેયવાવગે વવસાય’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—જે પ્રમેયવ્યાપી અને વ્યવસાય સ્વભાવવળું નિશ્ચયાત્મક-છે તે સમ્યક્જ્ઞાન કહેવાય છે ॥ ૪૦ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા સમ્યક્દર્શન સમ્યક્જ્ઞાન સમ્યક્ચારિત્ર અને સમ્યક્તપ એ ચતુષ્ટયતપને મોક્ષના કારણ કહ્યા હતા તેમાંથી સમ્યક્દર્શનનું સંભેદ સ્વરૂપ કહેવામાં આવ્યું હવે સમ્યક્જ્ઞાનના સ્વરૂપનું કથન કરીએ છીએ જે પ્રમેય અર્થાત્ વસ્તુને વ્યાપ્ત કરે તે પ્રમેયવ્યાપી કહેવાય છે. જેનો અર્થ છે નિયમથી વસ્તુગ્રાહી અથવા નિયતવસ્તુસહચારી વ્યવસાયાત્મક તેને કહે છે જે નિશ્ચયાત્મક હોય. આવું પ્રમેયવ્યાપી અને વ્યવસાયાત્મક જ્ઞાન સમ્યક્જ્ઞાન છે. અહીં ‘પ્રમેયવ્યાપી’ એ પદથી વિપરીત જ્ઞાન અભિપ્રેત કરવામાં આવ્યું છે અને ‘વ્યવસાયાત્મક’ પદથી અનધ્યવસાય તથા સંશયજ્ઞાનનું નિવારણ

સ્થિતા સ્તેન સ્તેન પ્રકારેના ડનધ્યવસાય-સંશય-વિપર્યયભિન્ન જ્ઞાન સમ્યગ્જ્ઞાન વ્ય-
પદિશ્યતે, સમ્યક્ પદ્ધેના ડપિ-અનધ્યવસાયસંશયવિપર્યયજ્ઞાનસ્ય વ્યાવૃત્તિ ભવતિ ।
અનધ્યવસાયાદિ ત્રયસ્ય મિથ્યાજ્ઞાનરૂપત્વેન મોક્ષસાધને તેષા મનુપયુક્તત્વાત્
તન્ના ડનધ્યવસાયો મોહઃ, સંશયઃ, સંદેહઃ વિપર્યયો-વિપરીતત્વમિતિભાવઃ ॥૪૦॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-—પૂર્વ તાવમ્-સમ્યગ્દર્શન-સમ્યગ્જ્ઞાનાદિ ચતુષ્ટયસ્ય
મોક્ષસાધકત્વેન પ્રતિપાદિતવાન્ તત્ર-પ્રથમોપાત્તસ્ય સમ્યગ્દર્શનસ્ય સ્વરૂપં પ્રરૂ-
પિતમ્, સમ્પતિ ક્રમપ્રાપ્તસ્ય સમ્યગ્જ્ઞાનસ્ય સ્વરૂપં પ્રરૂપયિતુમાહ-‘પમેયવાવગે
વવસાયસ્સ ભાવે સમ્પન્નાજે’ इति । પ્રમેયવ્યાપકં પ્રમેયમ્, પ્રમાતું યોગ્યં પ્રમેયં-

નિકલા ફિ જો જીવાદિ પદાર્થ જિસ-જિસ રૂપ મેં અવસ્થિત હૈં, ઉસી-
ઉસી રૂપ મેં, જાનને વાલા અનધ્યવસાય, સંશય ઓર વિપર્યય સે ભિન્ન
જ્ઞાન સમ્યગ્જ્ઞાન કહલાતા હૈ । હસકે અતિરિક્ત સમ્યક્ પદ સે બી અન-
ધ્યવસાય, સંશય ઓર વિપર્યય રૂપ જ્ઞાન કી વ્યાવૃત્તિ હો જાતી હૈં,
કયોંકિ યે ત્રીનો મિથ્યાજ્ઞાન હૈં, અતઃ એવ મોક્ષ કે સાધન નહીં હો સકતે ।

અનધ્યવસાય કા અર્થ મોહ, સંશય કા અર્થ સન્દેહ ઓર વિપર્યય
કા અર્થ વિપરીતતા હૈ ॥૪૦॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલે સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન, સમ્યક્ચારિત્ર
ઓર સમ્યક્તપ્ત કો મોક્ષ કા સાધન કહા યા, ઉનમેં સે સમ્યગ્દર્શન
કે સ્વરૂપ કી વ્યાખ્યા કી, અવ ક્રમપ્રાપ્ત સમ્યગ્જ્ઞાન કે સ્વરૂપ કા પ્રતિ
પાદન કરતે હૈ—

જો પ્રમાણિ કે યોગ્ય અર્થાત્ જાનને કે લાયક હો વહ પ્રમેય કહ-
લાતા હૈ । પ્રમેય વસ્તુ કો વ્યાપ્ત કરના અર્થાત્ ત્યાગ ન કરના યા નિયમ

કથું છે. સાર એ નીકળ્યો કે જે જીવાદિ પદાર્થ જે જે રૂપમાં રહેલા છે તે
તે રૂપમાં જાણવાવાળા અનધ્યવસાય, સંશય અને વિપર્યયથી ભિન્નજ્ઞાન
સમ્યક્જ્ઞાન કહેવાય છે. આ સિવાય સમ્યક્પદ્ધતી પણ અનધ્યવસાય, સંશય
અને વિપર્યયરૂપ જ્ઞાનની વ્યાવૃત્તિ થઈ જાય છે કારણકે આ ત્રણે મિથ્યાજ્ઞાન
છે. જેથી મોક્ષના સાધન થઈ શકતા નથી અનધ્યવસાયનો અર્થ મોહ સંશયનો
અર્થ સંદેહ અને વિપર્યયનો અર્થ વિપરીતતા છે. ॥ ૪૦ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલાં સમ્યક્દર્શન, સમ્યક્જ્ઞાન, સમ્યક્ચારિત્ર, અને
સમ્યક્તપને મોક્ષનાં સાધન કહ્યાં હતાં. તેમાંથી સમ્યક્દર્શનનાં સ્વરૂપની
વ્યાખ્યા કરી હવે ક્રમપ્રાપ્ત સમ્યક્જ્ઞાનનાં સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ
જે પ્રતીતિને યોગ્ય અર્થાત્ જાણવાને લાયક છે તે પ્રમેય કહેવાય છે.

વસ્તુ, વ્યાપ્તુમ્=અપરિત્યક્તું નિયમતો ગ્રહીતું શીલમસ્યેતિ પ્રમેય વ્યાપકં નિયમતો વસ્તુગ્રાહિ વસ્તુનો નિયમતો ગ્રહણશીલ, વ્યવસાય સ્વભાવમ્-વ્યવસાયોઽધ્યવસાયઃ નિશ્ચયઃ=સ્વભાવઃ સ્વરૂપં यस્ય તત્ વ્યવસાયસ્વભાવમ્ અધ્યવસાયસ્વરૂપમ્, નિશ્ચયાત્મકં જ્ઞાનં સમ્યગ્જ્ઞાન મુચ્યતે । તત્ર-પ્રમેયવ્યાપકપદેન વિપર્યયજ્ઞાનમ્ વ્યાવૃત્તિઃ ક્રિયતે, તસ્ય પ્રમેયાવ્યાપકત્વાત્ અધ્યવસાયસ્વરૂપવ્યવસાયસ્વભાવ-કથનેન ચ મોહરૂપાનધ્યવસાયસ્ય સંશયસ્ય ચ વ્યાવૃત્તિ મંવતિ । એતેષાં સ્વલ્પ પ્રયાણામ્ અનધ્યવસાયસંશયવિપર્યયાણાં મિથ્યાજ્ઞાનરૂપત્વેન મોક્ષસાધનેઽનુપ-યુક્તત્વાત્, તથા ચ-યેન યેન સ્વરૂપેણ સ્વભાવેન જીવાદીનિ તત્ત્વાનિ વ્યવસ્થિતાનિ સન્તિ તેન તેન સ્વરૂપેણ સ્વભાવેન તેષાં પરિજ્ઞાનં સમ્યગ્જ્ઞાનમ્વગન્તવ્યમ્ । તત્ત્વ સમ્યગ્જ્ઞાનં દ્વિવિધં, પ્રત્યક્ષ-પરોક્ષ ભેદાત્, તત્ર-પ્રત્યક્ષમપિ દ્વિવિધં ભવતિ, સાં-

સે ગ્રહણ કરના જિસકા સ્વભાવ હો વહ વ્યવસાય સ્વભાવ કહલાતા હૈ । વ્યવસાય અર્થાત્ અધ્યવસાય યા નિશ્ચય જિસકા સ્વભાવ હો વહ વ્યવસાયસ્વભાવ । હસ પ્રકાર જો જ્ઞાન પ્રમેયવ્યાપક ઔર વ્યવસાયસ્વ-ભાવ હોતા હૈ, વહ સમ્યગ્જ્ઞાન કહલાતા હૈ ।

‘પ્રમેયવ્યાપક, પદ સે વિપર્યયજ્ઞાન કી વ્યાવૃત્તિ કી ગઈ હૈ, કયોંકિ વહ પ્રમેયવ્યાપક નહીં હોતા ઔર વ્યવસાયાત્મક પદ સે મોહ રૂપ અનધ્યવસાય કા તથા સંશયજ્ઞાન કા નિરાકરણ હો જાતા હૈ । યે તીનોં અનધ્યવસાય, સંશય ઔર વિપર્યય મિથ્યાજ્ઞાન હોને કે કારણ મોક્ષ સાધન મેં ઉપયુક્ત નહીં હૈ । અભિપ્રાય યહ હૈ કિ જો જીવાદિ પદાર્થ જિસ-જિસ રૂપ મેં સ્થિત હૈ, ઉન્હેં ઊસી રૂપ મેં જાનના સમ્યગ્જ્ઞાન હૈ ।

સમ્યગ્જ્ઞાન દો પ્રકાર કા હૈ-પ્રત્યક્ષ ઔર પરોક્ષ । હન મેં સે પ્રત્યક્ષ

પ્રમેય વસ્તુને વ્યાપ્ત કરવી અર્થાત્ ત્યાગ ન કરવે! અથવા નિયમથી ગ્રહણ કરવું જેનો સ્વભાવ છે તે ‘વ્યવસાયસ્વભાવ’ કહેવાય છે. વ્યવસાય અર્થાત્ અધ્યવસાય અથવા નિશ્ચય જેનો સ્વભાવ છે તે વ્યવસાયસ્વભાવ આ રીતે જે જ્ઞાન પ્રમેયવ્યાપક અને વ્યવસાયસ્વભાવ હોય છે તે સમ્યક્જ્ઞાન કહેવાય છે

પ્રમેયવ્યાપક પદથી વિપર્યય જ્ઞાનની વ્યાવૃત્તિ કરવામાં આવી છે કારણકે તે પ્રમેયવ્યાપક હોતું નથી અને ‘વ્યવસાયાત્મક પદથી મોહરૂપ અનધ્યવસાયનું’ તથા સંશયજ્ઞાનનું નિરાકરણ થઈ જાય છે. આ ત્રણે-અનધ્યવસાય, સંશય અને વિપર્યય મિથ્યાજ્ઞાન હોવાથી મોક્ષસાધનમાં ઉપયોગી નથી. કહેવાનું એ છે કે જે જીવાદિ પદાર્થ જે જે સ્વરૂપમાં સ્થિત છે તેમને તેજ રૂપમાં જાણવા એ સમ્યક્જ્ઞાન છે

સમ્યક્જ્ઞાન બે પ્રકારનાં છે-પ્રત્યક્ષ અને પરોક્ષ આમાંથી પ્રત્યક્ષનાં પણ

વ્યાવહારિક-પારમાર્થિકભેદાત્ । તત્ર-સાંવ્યવહારિક મપિ દ્વિવિધમ્, ઇન્દ્રિય નિવન્ધનમ્-અનિન્દ્રિય નિવન્ધનમ્-એતિ । તત્ર-ચક્ષુરાદીન્દ્રિયહેતુકં પ્રત્યક્ષમ્ અનિન્દ્રિય નિવન્ધન મુચ્યતે, મનોહેતુકં પ્રત્યક્ષમ્-અનિન્દ્રિયનિવન્ધનં વ્યપદિશ્યતે । એવમ્-પરમાર્થિકં પ્રત્યક્ષમપિ દ્વિવિધં ભવતિ, વિકલં=સકલમ્-એતિ, તત્રાસમગ્રવિષયકં વિકલં પ્રત્યક્ષમ્ મુચ્યતે સમગ્રવિષયકન્તુ-સકલં પ્રત્યક્ષં વ્યપદિશ્યતે । તત્ર-વિકલં પ્રત્યક્ષમ્ અવધિમનઃપર્યવજ્ઞાનભેદેન દ્વિવિધમવગન્તવ્યમ્, સકલપ્રત્યક્ષં પુનરેકમેવ સમસ્તાસ્મરણક્ષયહેતુકસકલદ્રવ્યપર્યાયસાક્ષાત્કારસ્વરૂપં કેવલજ્ઞાન મુચ્યતે । પરોક્ષં તાત્ત્વ-સમ્યગ્જ્ઞાનં પશ્ચવિધં ભવતિ, સ્મરણપ્રત્યભિજ્ઞાનતર્કાનુ-

કે મી દો ભેદ હૈ-સાંવ્યવહારિકપ્રત્યક્ષ ઓર પારમાર્થિકપ્રત્યક્ષ । સાંવ્ય વહારિક પ્રત્યક્ષ મી દો પ્રકાર કા હૈ-ઇન્દ્રિય નિવન્ધન ઓર અનિન્દ્રિય નિવન્ધન । ચક્ષુઆદિ ઇન્દ્રિયોં સે જો પ્રત્યક્ષ હોતા હૈ વહ ઇન્દ્રિયનિવન્ધન કહલાતા હૈ ઓર મન સે હોને વાલા પ્રત્યક્ષ અનિન્દ્રિય નિવન્ધન । પારમાર્થિકપ્રત્યક્ષ મી દો પ્રકાર કા હૈ-વિકલ ઓર સકલ । જો સમસ્ત વસ્તુઓં કો ગ્રહણ ન કરે વહ વિકલપારમાર્થિક પ્રત્યક્ષ કહલાતા હૈ ઓર સમગ્ર વસ્તુઓં કો જાનનેવાલા સકલપારમાર્થિક પ્રત્યક્ષ કહા જાતા હૈ । વિકલપારમાર્થિક પ્રત્યક્ષ કો દો ભેદ હૈ-અવધિજ્ઞાન ઓર મનઃપર્ય વજ્ઞાન । સકલ પારમાર્થિક પ્રત્યક્ષ એક હી પ્રકાર કા હૈ । વહ સમસ્ત આચરણોં કો ક્ષય સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર સમસ્ત દ્રવ્યોં ઓર પર્યાયોં કો સાક્ષાત્ કરના ઉસકા સ્વરૂપ હૈ । ઉસે કેવલજ્ઞાન કહતે હૈ ।

પરોક્ષ સમ્યગ્જ્ઞાન પાંચ પ્રકાર કા હૈ-(૧) સ્મરણ (૨) પ્રત્યભિજ્ઞાન (૩) તર્ક (૪) અનુમાન ઓર (૫) આગમ । ઉત્તરાધ્યયનસૂત્ર કો ૨૮ વે

જે લેહ છે સાંવ્યવહારિકપ્રત્યક્ષ અને પારમાર્થિકપ્રત્યક્ષ. સાંવ્યવહારિકપ્રત્યક્ષ પણ જે પ્રકારનાં છે-ઇન્દ્રિયનિબંધન અને અનિન્દ્રિયનિબંધન ચક્ષુ આદિ ઇન્દ્રિયોથી જે પ્રત્યક્ષ હોય છે તે ઇન્દ્રિયનિબંધન કહેવાય છે અને મનથી થનારા પ્રત્યક્ષ અનિન્દ્રિયનિબંધન. પારમાર્થિકપ્રત્યક્ષ પણ જે પ્રકારના છે વિકલ અને સકલ જે સમસ્ત વસ્તુઓને ગ્રહણ ન કરે તે વિકલપારમાર્થિકપ્રત્યક્ષ કહેવાય છે અને સમગ્ર વસ્તુઓને જાણનાર સકલપારમાર્થિકપ્રત્યક્ષ કહેવાય છે વિકલપારમાર્થિકપ્રત્યક્ષનાં જે લેહ છે અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યવજ્ઞાન સકલ-પારમાર્થિકપ્રત્યક્ષ એક જ પ્રકારનું છે. તે સમસ્ત દ્રવ્યો અને પર્યાયોને સાક્ષાત્ કરવા તેનું સ્વરૂપ છે. તેને કેવળજ્ઞાન કહે છે.

પરોક્ષ સમ્યક્જ્ઞાન પાંચ પ્રકારનાં છે (૧) સ્મરણ (૨) પ્રત્યભિજ્ઞાન (૩) તર્ક (૪) અનુમાન અને (૫) આગમ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના ૨૮માં અધ્યયનની

मानाऽऽगमभेदात् ॥ उक्तञ्चोत्तराध्ययने २८ अध्ययने २४ गाथायाम्—‘द्रव्याणं
सम्बन्धा, सम्बन्धप्रमाणेहिं जस्त उवलदा । सन्बन्धाहिं नयविहीहिं,
वित्ताररुत्ति नायवशो ॥१ इति द्रव्याणां सर्वभावाः सर्वप्रमाणैर्यस्योपलब्धाः ।
सर्वे नयविधिभि, विस्ताररुचिरिति ज्ञातव्यः । १॥ इति, तथा च—यस्य जीवस्य
द्रव्याणां सर्वभावाः गुणपर्यायादयः सर्वप्रमाणैः सर्वनयै श्रोपलब्धाः परिज्ञाता
भवन्ति स विस्ताररुचिरुच्यते ॥४०॥ इति

मूलम्—तं च पंचविहे, मइसुयओहिमणपज्जवकेवलनाण-
भेयओ ॥४१॥

छाया—तच्च पञ्चविधं, मतिश्रुतावधि मनःपर्यवकेवलज्ञानभेदतः ॥४१॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावद्—मोक्षसाधकतया प्रतिपादितेषु सम्यग्दर्शना
दिषु चतुर्षु सम्यग्दर्शन—सम्यग्ज्ञानञ्च प्ररूपितम्, सम्यग्मति तत्र—सम्यग्ज्ञानस्य मति
श्रुतादि पञ्चभेदान् प्ररूपयितुमाह—‘तं च पंचविहे’ इत्यादि । तच्च पूर्वोक्त स्वरूपं

अध्ययन की २४ वीं गाथा में कहा है—

‘जिसने द्रव्यों के समस्त पर्यायों को समस्त प्रमाणों से और
सब नयविधानों से जान लिया, वह विस्तार रुचि कहलाता है ॥१॥

इस प्रकार जो जीव द्रव्यों को गुण-पर्यायरूप भावों को प्रमाणों
और सब नयों से जान लेता है, वह विस्ताररुचि कहलाता है ॥४०॥

‘तं च पंचविहे मइसुय’ इत्यादि ४१

सूत्रार्थ—सम्यग्ज्ञान पांच प्रकार है—(१) मतिज्ञान (२) श्रुतज्ञान
(३) अवधिज्ञान (४) मनःपर्यवज्ञान और (५) केवलज्ञान ॥४१॥

तत्त्वार्थदीपिका—मोक्ष के साधन कहे गए सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान
आदि में से सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान की प्ररूपणा की गई, अब
सम्यग्ज्ञान के मति श्रुत अदि पांच भेदों की प्ररूपणा करते हैं—

२४ वीं गाथाમાં કહ્યું છે—જેણે દ્રવ્યોના સમસ્ત પર્યાયોને સમસ્ત પ્રમાણોથી
અને બધાં નયવિધાનોથી જાણી લીધા તે વિસ્તારરૂચિ કહેવાય છે ॥૧॥

આ રીતે જે જીવ દ્રવ્યોના સમસ્ત ગુણ-પર્યાયરૂપ ભાવોને બધાં પ્રમાણો
અને બધાં નયોથી જાણી લે છે તે વિસ્તાર રૂચિ કહેવાય છે. ॥૪૦॥

‘તં ચ પંચવિહે મइसुय’ इत्यादि

सूत्रार्थ—सम्यग्ज्ञान पांच प्रकारना छे—(१) मतिज्ञान (२) श्रुतज्ञान (३)
अवधिज्ञान (४) मनः पर्यवज्ञान અને (५) केवलज्ञान ॥४१॥

तत्त्वार्थदीपिका—मोक्षना साधन कहेवाમાં આવેલા सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान
आदिમાંથી सम्यग्दर्शन અને सम्यग्ज्ञानની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે

સમ્યગ્જ્ઞાનં પञ્ચવિધં भवति, मतिश्रुतावधिमनःपर्यवकेवलज्ञानभेदात्, तत्राऽऽ-
भिनिबोधिकज्ञानरूपं मतिज्ञानमवसेयम् । तत्र-ज्ञानाऽवरणं तावद् ज्ञानप्रति-
बन्धकं मुच्यते, तत् त्रिविधं भवति, मनोगतम्-इन्द्रियगतं-विषयगतञ्चेति । तत्र-
मात्सर्यादिकं मनोगतआवरणम् काच-कामलादिकं मिन्द्रियगतमावरणम्, (काच-
श्चाऽत्र-नेत्ररोगविशेषः काचविन्दु नाम्ना प्रसिद्धः) सूक्ष्मत्वगाढान्धकारव्याप्त-
त्वादिकं विषयगतमावरणं भवति, तस्य खलु-आवरणस्य सर्वथा नाशः क्षय
उच्यते । आवरणस्य विद्यमानत्वेऽपि-अनुद्भूतरावस्था उपशम उच्यते । तत्र
मतिज्ञानावरणक्षयोपशमे सति-इन्द्रिय मनसि पुरस्कृत्य व्यापृतः सन् यथार्थ

पूर्वોક્ત સમ્યગ્જ્ઞાન પાંચ પ્રકાર કા હૈ—(૧) મતિ (૨) શ્રુત (૩) અવધિ
(૪) મનઃપર્યવ ઓર (૫) કેવલજ્ઞાન । આભિનિબોધિકજ્ઞાન કો મતિજ્ઞાન
કહતે હૈ । જો જ્ઞાન કો આવૃત્ત-આચ્છાદિત કરે વહ જ્ઞાનાવરણ કહ-
લાતા હૈ । આવરણ ત્રીન પ્રકાર કે હોતે હૈ—મનોગત, ઇન્દ્રિયગત ઓર
વિષયગત । માત્સર્ય આદિ મનોગત આવરણ હૈ, કાચ-કામલાદિક
રોગ ઇન્દ્રિયગત આવરણ હૈ (કાચ નામક નેત્રો કા એક રોગ હોતા હૈ જો
કાચવિન્દુ નામ સે ભી પ્રસિદ્ધ હૈ) । સૂક્ષ્મતા, ગાઢ અંધકાર સે વ્યાપ્ત
હોના આદિ વિષયગત આવરણ હૈ । આવરણ કા સર્વથા નાશ હોના
ક્ષય કહલાતા હૈ આવરણ વિદ્યમાન તો હો મગર ઉદ્ભૂત (પ્રકટ) ન હો
તો એસી અવસ્થા કો ઉપશમ કહતે હૈ ।

મતિજ્ઞાનાવરણ કા ક્ષયોપશમ હોને પર ઇન્દ્રિય ઓર મન કે નિમિત્ત
સે જો યથાર્થ જ્ઞાન હોતા હૈ વહ મતિજ્ઞાન કહલાતા હૈ । તાત્પર્ય યહ

સમ્યગ્જ્ઞાનના મતિશ્રુત આદિ પંચ ભેદોની પ્રશ્નણા કરીએ છીએ—

પૂર્વોક્ત સમ્યગ્જ્ઞાન પાંચ પ્રકારનું છે—(૧) મતિ (૨) શ્રુત (૩) અવધિ
(૪) મનઃ પર્યવ અને (૫) કેવળજ્ઞાન આભિનિબોધિક ૩-જ્ઞાનને મતિજ્ઞાન-
કહે છે. જે જ્ઞાનને આવૃત્ત-આચ્છાદિત કરે તે જ્ઞાનાવરણ કહેવય છે. આવરણ
ત્રણ પ્રકારના હોય છે—મનોગત, ઇન્દ્રિયગત અને વિષયગત. માત્સર્ય આદિ
મનોગત આવરણ છે, કાચ-કામલાદિક રોગ ઇન્દ્રિયગત આવરણ છે.
(કાચ નાનો આખોનો એક રોગ હોય છે જે કાચવિન્દુ નામથી પણ પ્રસિદ્ધ
છે,) સૂક્ષ્મતા, ગાઢ અન્ધકારથી વ્યાપ્ત થવું વગેરે વિષયગત આવરણ છે.
આવરણનો સર્વથા નાશ થવો ક્ષય કહેવાય છે. આવરણ વિદ્યમાન તો હોય
પરંતુ ઉદ્ભૂદ (પ્રકટ) ન હોય તો એવી અવસ્થાને ઉપશમ કહે છે.

મતિજ્ઞાનાવરણનો ક્ષયોપશમ થવાથી ઇન્દ્રિય તેમજ મનના નિમિત્તથી
યથાર્થ જે જ્ઞાન થાય છે તે મતિજ્ઞાન કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે મતિજ્ઞાના-

મનુતે સા મતિ રુચ્યતે । તથા ચ-નન્યતે इन्द्रियमनोद्वारेण नियतं वस्तु परिच्छिद्य-
 तेऽनयेति मतिः योग्य देशावस्थितवस्तुविषयक इन्द्रिय मनोनिमित्तकज्ञानविशेषो
 मतिज्ञान मुच्यते । तथा च मतिज्ञानावरणस्य क्षयोपशમે प्रथमतो जायमानं मनना
 त्मकं ज्ञान मित्यर्थः मननान्मतिरिति व्युत्पत्तेः ततो मतिज्ञानजन्यं यत् अस्पष्टम्
 ज्ञानं तत्-श्रुतज्ञानमुच्यते इदञ्च ज्ञानद्वयं परोक्षं भवति । ततोऽऽच्छिन्नो
 मर्यादित सीमितो विषयो यस्य तादृशमिदं मीदृश मित्याकारकं ज्ञानमवधिज्ञानम् ।
 श्रूयते इति श्रुतं शब्दः तत्सम्बन्धि ज्ञानं श्रुतज्ञान मुच्यते श्रवणं वा श्रुतं शब्द
 ज्ञानविशेषः तथा च-भाषमाणस्य शब्दं शृण्वतः पुस्तकादि न्यस्तलिपिवा चक्षुषा
 पश्यतो यज्ज्ञानं तत्-श्रुतज्ञानप्रवसेयम् । इदञ्च ज्ञानद्वयं परोक्षं भवति, यद्वा-
 श्रवणं श्रुतं वाच्य वाचक भावपुरस्सरीकरणेन शब्दसम्बद्धार्थग्रहणहेतुरूपलब्धि-
 विशेषः श्रुतज्ञान मुच्यते । इदञ्च ज्ञानद्वयं परोक्षं भवति, ततोऽवच्छिन्नो मर्यादितः

है कि मतिज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम होने पर सर्वप्रथम मननात्मक
 जो ज्ञान होता है, वह मतिज्ञान कहलाता है । मतिज्ञान के पश्चात्
 वाच्य-वाचक भाव संबन्ध के आधार पर जो ज्ञान होता है, वह श्रुत
 ज्ञान कहलाता है । जो सुना जाय वह शब्द-शब्द संबन्धी ज्ञान श्रुत-
 ज्ञान है । अथवा सुनना श्रुत कहलाता है । वक्ता के द्वारा प्रयुक्त
 शब्द को श्रवण करके उसके अर्थ (वाच्य) को जानना श्रुतज्ञान कह
 लाता है । तात्पर्य यह है कि वाच्य-वाचक भाव संबन्ध के आधार पर
 शब्द के साथ सम्बद्ध अर्थ को ग्रहण करने वाला ज्ञान श्रुतज्ञान कह-
 लाता है । मतिज्ञान और श्रुतज्ञान-दोनों परोक्ष हैं ।

इन्द्रिय और मन की सहायता के बिना जिस ज्ञान के द्वारा मर्या-
 दित रूपी पदार्थों का बोध हो वह अवधिज्ञान कहलाता है । जो अवधि

વરણ કર્મનેા ક્ષયોપશમ થવ.થી સર્વપ્રથમ મનનાત્મક જે જ્ઞાન થાય છે તે
 મતિજ્ઞાન કહેવાય છે. મતિજ્ઞાન પછી જે વાચ્ય-વાચક ભાવ સંબંધના આધારે
 જે જ્ઞાન થાય છે તે શ્રુતજ્ઞાન કહેવાય છે જે સાંભળી શકાય તે શબ્દ, શબ્દ
 સંબંધી જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન છે. અથવા સાંભળવું શ્રુત કહેવાય છે વક્તા દ્વારા
 વપરાયેલા શબ્દનું શ્રવણ કરીને તેના અર્થને (વાચ્ય) જાણવો શ્રુતજ્ઞાન
 કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે વાચ્ય-વાચકભાવ સંબંધના આધારે શબ્દની
 સાથે સમ્બંધિત અર્થને ગ્રહણ કરનાર જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન કહેવાય છે. મતિજ્ઞાન અને
 શ્રુતજ્ઞાન-બંને પરોક્ષ છે.

ઇન્દ્રિય અને મનની સહાયતા વગર જે જ્ઞાન દ્વારા મર્યાદિત રૂપી પદાર્થો
 નો બોધ થાય તે અવધિજ્ઞાન કહેવાય છે જે અવધિ અર્થાત્ રૂપી દ્રવ્યોને

સીમિતો વિષયો यस્ય તાદૃશમિદ મીદૃશમિત્યાકારકં જ્ઞાનમ્ અવધિજ્ઞાન મુચ્યતે ।
 અવધીયતે દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવૈઃ પરિચ્છિદ્યતે વિષયોઽનેનેતિ વ્યુત્પત્તેઃ, યદ્વા-
 ઽધસ્તાદ્ વિષયજ્ઞાનવહુતરવિષયગ્રહણા દવધિરુચ્યતે, અવશબ્દોઽધઃ શબ્દાર્થઃ
 અવ-અધો વિસ્તૃતં વસ્તુ ધીયતે-પરિચ્છિદ્યતેઽનેનેતિ-અવધિઃ, યદ્વા-અવધિમર્યાદા
 રુપિષ્વેવ દ્રવ્યેષુ પરિચ્છેદવતયા જ્ઞાનમ્ અવધિજ્ઞાનમ્ । દેવાઃ સ્વલ્લ અવધિજ્ઞાનેન
 સપ્તમનરકપર્યન્તં પश्यન્તિ । ઉપરિ પુનરલ્પમેવ સ્વવિમાનદણ્ડપર્યન્તં પश्यન્તિ ।
 एवम्-मात्सर्यादि ज्ञावरणक्षयोपशमे सति अन्य मनोगतस्याऽर्थस्य स्फूर्तं परि-

અર્થાત્ રૂપી દ્રવ્યોં કા જાનને કી મર્યાદા સે યુક્ત હો વહ અવધિજ્ઞાન
 અથવા જો જ્ઞાન અધસ્તન અર્થાત્ નીચી દિશા મેં અધિક જાને વહ
 અવધિજ્ઞાન । યહાં 'અવ' શબ્દ અધઃ અર્થાત્ નીચે કે અર્થ મેં હૈ ।

દેવ અવધિજ્ઞાન સે સાતવેં નરક તક દેખતે હૈ મગર ડગર થોડા
 હી દેખપાતે હૈ-કેવલ અપને વિમાન કે દણ્ડ પર્યન્ત હી ।

મનઃપર્યાયજ્ઞાનાવરણ કા ક્ષયોપશમ હોને પર દૂસરે કે મનોગત
 પર્યાયોં કો સાક્ષાત્ રૂપ સે જાનને વાલા જ્ઞાન મનઃપર્યવજ્ઞાન કહલાતા
 હૈ । યહ જ્ઞાન પરમનોદ્રવ્યોં ઓર ઉનકે પર્યાયોં કો હી પ્રત્યક્ષ જાનતા
 હૈ મગર મન દ્વારા ચિન્તિત ઘટ આદિ બાહ્ય પદાર્થોં કો નહીં જાનતા ।
 ઉન્હેં અનુમાન સે હી જાનતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જવ કોઈ સંજી
 જીવ કિસી પદાર્થ કા મનન-ચિન્તન કરતા હૈ તવ ઉસ ચિન્તનીય
 પદાર્થ કે અનુરૂપ ઉસકે મન કે પર્યાય ઉત્પન્ન હોતે હૈ । મનઃપર્યવજ્ઞાન

જાણુનાની મર્યાદાથી યુક્ત હોય તે અવધિજ્ઞાન અથવા જે જ્ઞાન અધસ્તાત્ અર્થાત્
 નીચી દિશામાં અધિક જાણે તે અવધિજ્ઞાન અહીં અવશબ્દ અધઃ
 અર્થાત્ નીચેના અર્થમાં છે.

દેવ અવધિજ્ઞાનથી સાતમી નરક સુધી જાણે છે પરંતુ ઉપર તે થોડું
 જ જોઈ શકે છે- માત્ર પોતાના વિમાનના દણ્ડ પર્યન્ત જોઈ શકે છે.

મનઃ પર્યાયજ્ઞાનાવરણનો ક્ષયોપશમ થવાથી બીજાનાં મનોગત પર્યાયોને
 સાક્ષાત્ રૂપથી જાણનાર જ્ઞાન મનઃ પર્યવજ્ઞાન કહેવાય છે. આ જ્ઞાન પરમનો
 દ્રવ્યો અને તેના પર્યાયોને જ પ્રત્યક્ષ જાણે છે પરંતુ મન દ્વારા ચિન્તિત
 ઘટ આદિ પણ પદાર્થોને જાણતો નથી. તેને અનુમાનથી જ જાણે છે તાત્પર્ય
 એ છે કે જ્યારે કોઈ સંજી જીવ કોઈ પદાર્થનું મનન-ચિન્તન કરે છે ત્યારે
 તે ચિન્તનીય પદાર્થના અનુરૂપ તેના મનના પર્યાય ઉત્પન્ન થાય છે. મનઃ
 પર્યવજ્ઞાન તે પર્યાયોને સાક્ષાત્ જાણે છે અને તેના આધારે બાહ્ય પદાર્થોનું

च्छेदकं ज्ञानम्—‘इदमित्थंभूतमनवचिन्तितम्’ इत्येवंरूपं ज्ञानं मनःपर्यव-
ज्ञानमुच्यते । तपस्विनो जना यदर्थं तपः क्रियाविशेषं कुर्वन्ति तज्ज्ञानसकल-
द्रव्यपर्यायाऽवभासकम् अन्यज्ञानासंसृष्टं केवलज्ञानं व्यपदिश्यते । तच्च-
मोक्षसाधकं भवतीति ॥४१॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तावद् मोक्षसाधनत्वेन सम्यग्ज्ञानं प्रतिपादितम्,
सम्पत्तिः=तस्य मूलभेदान् प्रतिपादयितुमाह—‘तच्च पञ्चविहं, महसुयओहि
मणपज्जव केवलनाण भेयओ’ इति । तच्च पूर्वोक्तस्वरूपं सम्यग्ज्ञानं

उन पर्यायों को साक्षात् जानता है और उनके आधार पर बाह्य
पदार्थ का अनुमान करता है । जैसे सामान्य ज्ञानवान् पुरुष किसी के
चेहरे को प्रत्यक्ष देखता है और फिर चेहरे के आधार से उसके अन्तः
करण के क्रोध, करुणा, अनुराग आदि भावों का अनुमान करता है
उसी प्रकार मनःपर्यवज्ञानी दूसरे के मनोद्रव्यों को प्रत्यक्ष देखता है
और फिर मनोद्रव्यों के पर्यायों के आधार पर बाह्य पदार्थों का अनु-
मान करता है—‘जाणइ वज्जेऽणुमाणाओ’ अर्थात् बाह्य पदार्थों को
अनुमान से जानता है ।

जिस ज्ञान के लिए तपस्वी जन तपश्चरण में प्रवृत्त होते हैं, वह सभी
द्रव्यों और पर्यायों को जानने वाला एवं अन्य ज्ञानों से अछूता
ज्ञान केवलज्ञान कहलाता है । यही ज्ञान मोक्ष का साधक होना है । ४१।

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले सम्यग्ज्ञान को मोक्ष का साधन कहा है,
अब उसके मूलभेदों का प्रतिपादन करते हैं—

अभिमान करे છે. જેમ સામાન્ય જ્ઞાનવાન પુરુષ કોઈના ચહેરાને પ્રત્યક્ષ
જુએ છે અને પછી ચહેરાના અધારથી તેના અન્તઃકરણના ક્રોધ અનુરાગ
આદિ ભાવોનું અનુમાન કરે છે. તે જ રીતે મનઃપર્યવજ્ઞાની બીજાના મનો-
દ્રવ્યોને પ્રત્યક્ષ જુએ છે અને પછી મનોદ્રવ્યોના પર્યાયોના આધાર પર
બાહ્ય પદાર્થોનું અનુમાન કરે છે. કહ્યું પણ છે—‘જાણઈ વજ્જેણુમાણાઓ’
અર્થાત્ બાહ્યપદાર્થોને અનુમાનથી જાણે છે.

જે જ્ઞાનને માટે તપસ્વીજન તપશ્ચર્યામાં પ્રવૃત્ત થાય છે તે બધા દ્રવ્યો
અને બધાં પર્યાયોને જાણનાર તેમજ અન્ય જ્ઞાનોથી ન સ્પર્શીલું જ્ઞાન કેવળ
જ્ઞાન કહેવાય છે. આજ જ્ઞાન મોક્ષનું સાધક હોય છે ॥ ૪૧ ॥

તત્ત્વર્થનિર્યુક્તિ—અગાઉ સમ્યક્જ્ઞાનને મોક્ષનું સાધન કહ્યું છે હવે
તેના મૂળ ભેદોનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ

પશ્ચવિધં ભવતિ મતિશ્રુતિઽવધિ મનઃપર્યવ-કેવલજ્ઞાનભેદતઃ । તથા ચ-મતિજ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનમ્-અવધિજ્ઞાનં-મનઃપર્યવજ્ઞાનં-કેવલજ્ઞાનં એત્યેવં તાવત્-પશ્ચવિધં સમ્ય-ગ્જ્ઞાનમવસેયમ્ । અવાન્તરભેદાસ્તુ-અનેકવિધાઃ સન્તીતિ વક્ષ્યતે, તત્ર-મનનં મતિઃ પરિચ્છેદઃ, જ્ઞાપ્તિજ્ઞાનં-વસ્તુ સ્વરૂપાવધારણમ્, મતિરૂપં જ્ઞાનં-મતિજ્ઞાનમ્, હૃદમેવા-ઽઽભિનિબોધિકજ્ઞાનં મુચ્યતૈ । તત્ત્વ-શ્રોત્રેન્દ્રિય વ્યતિરિક્તચક્ષુરાદીન્દ્રિયા નક્ષરો-પલઽવિચરૂષં મતિજ્ઞાનં બોધ્યમ્, શ્રૂયતે ઇતિ શ્રુતમ્, તત્ત્વ શબ્દમાત્રં બોધ્યં, તસ્યૈવ શ્રૂયમાણત્વાત્ તત્ત્વસમ્બન્ધિજ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનં મુચ્યતે । યદ્વા-શ્રવણં શ્રુતરૂપં શ્રુતં, શબ્દ-જ્ઞાનં વિશેષ ઉચ્યતે ભાવે ક્ત પ્રત્યયઃ, તત્ત્વ શ્રુતજ્ઞાનં માપમાણસ્ય શબ્દ માકર્ણયતઃ પુસ્તકાદિન્યસ્તલ્લિપિયા-પઢ્યતો યજ્ઞજ્ઞાનં ભવતિ તત્-શ્રુતજ્ઞાનં બોધ્યમ્ । અવધિ-

પૂર્વોક્ત સમ્યગ્જ્ઞાન પાંચ પ્રકાર કા હૈ-(૧) મતિજ્ઞાન (૨) શ્રુતજ્ઞાન (૩) અવધિજ્ઞાન (૪) મનઃપર્યવજ્ઞાન (૫) કેવલજ્ઞાન । इनके अवान्तर भेद अनेक प्रकार से हैं, जिसका आगे कथन किया जाएगा ।

મનન કરના મતિ કહલાતા હૈ, જાનના અર્થાત્ વસ્તુ કે સ્વરૂપ કા અવધારણ કરના જ્ઞાન હૈ । મતિરૂપ જ્ઞાન મતિજ્ઞાન । હૈસે આભિનિબો-ધિક જ્ઞાન ભી કહતે હૈ । પાંચોં ઇન્દ્રિયોં સે ઓર મન સે જો અનક્ષરા-ત્મક બોધ હોતા હૈ, હસે મતિજ્ઞાન સમજના ચાહિય ।

જો સુના જાય સો શ્રુત । શ્રુત શબ્દ હી હૈ ક્યોંકિ શબ્દ હી સુના જાતા હૈ । શ્રુત સંબંધી જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન કહલાતા હૈ । અથવા શ્રવણ કો અર્થાત્ શબ્દજ્ઞાન વિશેષ કો શ્રુત કહતે હૈ । યહાં ભાવ મેં 'ક્ત' પ્રત્યય હુઆ હૈ । કિસી વક્તા કે દ્વારા ઉચ્ચારણ કિયે ગયે શબ્દ કો સુનને કે પશ્ચાત્

પૂર્વોક્ત સમ્યગ્જ્ઞાન પાંચ પ્રકારનું છે—(૧) મતિજ્ઞાન (૨) શ્રુતજ્ઞાન (૩) અવધિજ્ઞાન (૪) મનઃપર્યવજ્ઞાન અને (૫) કેવલજ્ઞાન એમના અવાન્તર ભેદ અનેક પ્રકારથી છે એમનું કથન હવે પછી કરવામાં આવશે.

મનન કરવું મતિ કહેવાય છે, જાણવું અર્થાત્ વસ્તુના સ્વરૂપનું અવધારણ કરવું જ્ઞાન છે. મતિરૂપ જ્ઞાન મતિજ્ઞાન અને આભિનિબોધિક જ્ઞાન પણ કહે છે. પણ ઇન્દ્રિયોથી અને મનથી જે અનક્ષરાત્મક બોધ થાય છે, તે મતિજ્ઞાન સમજવું જોઈએ.

જે સાંભળી શકાય તે શ્રુત, શ્રુત શબ્દનો જ પર્યાય છે કારણકે શબ્દ જ સાંભળી શકાય છે. શ્રુત સંબંધી જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન કહેવાય છે. અથવા શ્રવણને શબ્દજ્ઞાન વિશેષ ને શ્રુત કહે છે. અહીં ભાવમાં 'ક્ત' પ્રત્યય લાગ્યો તે, કોઈ વક્તા દ્વારા બોલાયેલા શબ્દોને સાંભળ્યા બાદ તે શબ્દના અર્થનું જે જ્ઞાન

જ્ઞાનં ત્વાવદ્-અવશબ્દશ્ચાઽયઃ શબ્દાર્થકત્વેનાઽવધાનાદવધિઃ તદ્ગુપં જ્ઞાનં પરિચ્છેદઃ
અવધિઃજ્ઞાનમ્, તત્ત્વાઽધો દિરનૃત સપ્તમનરકપર્યન્તવિષયક મનુત્તરવિમાન-
વાસિનાં દેવાનામ્ અવધિજ્ઞાન મુચ્યતૈ । ચદ્વા-અવધિ શબ્દસ્ય મર્યાદાર્થકતયા-
ઽવચ્છિન્નો મર્યાદિતઃ સીમિતો વિષયો यस્ય તાદૃશં જ્ઞાનમ્ 'હૃદમીદૃશમ્' इत्या
કારકમવધિજ્ઞાન મુચ્યતૈ । અવધીવતે દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલભાવૈઃ પરિચ્છિદ્યતૈ મર્યાદી
ક્રિયતૈ વિષયોઽનેતૈતિ વ્યુત્પત્તિઃ, તત્ત્વાઽનૂર્ત દ્રવ્યપરિહારેણ મૂર્ત દ્રવ્યનિવન્ધન-
ત્વાદેવ-સીમિતત્વેનાઽવધિજ્ઞાનપદેન વ્યવદિગ્યતૈ યચ્ચ-નરકાદિ ચતુર્ગતિષ્વપિ
વર્તમાનાનાં જીવાના ઇન્દ્રિયગતઃનિરપેક્ષં પ્રતિવિશિષ્ટભયોપશમહેતુકં પુદ્ગલ-

અવધિ શબ્દ કે અર્થ ના જો જ્ઞાન હોતા હૈ તહ શ્રુતજ્ઞાન કહલાતા હૈ । યહાં
તહ સ્મરણ રચના બાહિર કિ કાન કે દ્વારા શબ્દ કો સુનના અથવા
નેત્રો દ્વારા લિપિ-અક્ષરો કો દેખના મતિજ્ઞાન હૈ, અલોકે અનન્તર અલ
શબ્દ કે અર્થ ના વાચ્ય-વાચક સંબંધ ને આધાર પર જો બોધ હોતા
હૈ, તહ શ્રુતજ્ઞાન હૈ ।

'અવધિ' શબ્દ મેં જો 'અવ' ભાગ હૈ તહ અવઃ અર્થાત્ નીચે ના
વાચક હૈ । અવધિજ્ઞાન નીચી દિશા મેં અધિક વિસ્તૃત હોતા હૈ ।
અનુત્તર વિમાનવાસી દેવ અવધિજ્ઞાન સે સપ્તમ નરક પર્યન્ત જાનતૈ
દેખતૈ હૈ । અથવા અવધિ ના અર્થ હૈ મર્યાદા । જો જ્ઞાન મર્યાદા યુક્ત
હૈ તહ અવધિજ્ઞાન । અવધિજ્ઞાન ની મર્યાદા તહ હૈ કિ તહ જ્ઞાન અમૂર્ત
પદાર્થો કો છોડકર સિર્ષ મૂર્ત દ્રવ્યો કો હી જાનતા હૈ । હસ કારણ
તહ મર્યાદિત-સીમિત તા અવધિજ્ઞાન કહલાતા હૈ । તહ જ્ઞાન ચારો
ગતિયો કે જીર્ણો કો હી સક્તા હૈ । હસમેં ઇન્દ્રિય ઓર મન ની સહાયતા

થાય છે તે શ્રુતજ્ઞાન કહેવાય છે. અત્રે એ યાદ રાખવું નેઈએ કે કાન વડે
શ્રવણે સાંભળવો અથવા નેત્રો દ્વાર લિપિ અક્ષરોને લેવા મતિજ્ઞાન છે. આના
અનન્તર તે શબ્દના અર્થને વાચ્ય-વાચક સંબંધના આધારે જે બોધ થાય
છે. તે શ્રુતજ્ઞાન છે.

અવધિ શબ્દમાં 'અવ' ભાગ છે તે અવઃ અર્થાત્ નીચેનો વાચક છે.
અવધિજ્ઞાન નીચી દિશામાં અધિક વિસ્તૃત હોય છે. અનુત્તરવિમાનવાસી દેવ
અવધિજ્ઞાન વડે સાતમી નરક સુધી નેઈ શકે છે અથવા અવધિનો અર્થ
મર્યાદા છે. જે જ્ઞાન મર્યાદાયુક્ત છે તે અવધિજ્ઞાન અવધિજ્ઞાનની મર્યાદા એ
છે કે આ જ્ઞાન અમૂર્ત પદાર્થને બાદ કરતા માત્ર મૂર્ત દ્રવ્યોને જ જાણે
છે. આથી તે મર્યાદિત સીમિત અથવા અવધિજ્ઞાન કહેવાય છે. આ જ્ઞાન
ચારે ગતિઓના જીવોને થઈ શકે છે, એમાં ઇન્દ્રિય અને મનની સહાયતાની

પરિચ્છેદિ દેવ-મનુષ્ય-તિર્યક્-નારક રવામિકમવધિજ્ઞાનં ભવતિ । તત્ર-દેવનાર-
કાણાં ભવપ્રત્યયિકં, મનુષ્યતિરશ્ચાશ્ચ લબ્ધિ પ્રત્યયિકમવધિજ્ઞાનં ભવતીતિ વિવેકઃ
અવધિ દ્વિવિધો ભવતિ યથાર્થો વિપરીતશ્ચ । તત્ર યથાર્થોઽવધિઃ અવધિજ્ઞાનમ્
વિપરીતોઽવધિર્વિમજ્જ્ઞાનં વચ્ચતે । સમ્યદ્દષ્ટેર્જીવસ્ય અવધિજ્ઞાનં જાયતે,
મિથ્યાદ્દષ્ટેર્જીવસ્ય ચ વિમજ્જ્ઞાનં જાયતે । મનઃપર્યવજ્ઞાનવત્-મનસ્તાવદ્
દ્વિવિધસ્ય, દ્રવ્યમનો-ભાવમનશ્ચેતિ । તત્ર-મનોવર્ગણારૂપં દ્રવ્યમન ઉચ્યતે, ભાવ-
મનઃ પુનસ્તા એવ દ્રવ્યમનોવર્ગણા જીવેનોપાત્તાઃ સત્યશ્ચિન્ત્યમાના ભાવમન
ઉચ્યતે । તત્ર પ્રકૃતે-ભાવમનઃ પરિગૃહ્યતે તસ્ય ભાવમનસઃ પર્યવાણાં પર્યવેષુ વા

કી અપેક્ષા નહીં રહતી-સીધા આત્મા સે હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ । અવધિ
જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર સ્પી દ્રવ્યોં કો
હી જાનતા હૈ । દેવોં ઓર નારકોં કો ભવપ્રત્યય અવધિજ્ઞાન હોતા હૈ
તથા મનુષ્યોં ઓર તિર્યંચોં કો ગુણ પ્રત્યય અવધિજ્ઞાન હોતા હૈ ।
કોઈં ખી દેવ ઓર નારક અવધિજ્ઞાન સે રહિત નહીં હોતા જવકિ
મનુષ્યોં ઓર તિર્યંચોં મેં સે કિસી-કિસી કો હી હોતા હૈ । અવધિ દો
પ્રકાર કા હોતા હૈ । સુલટ ઓર ઉલટા । સુલટે અવધિ કો અવધિજ્ઞાન
કહતે હૈં, ઓર ઉલટે અવધિ કો વિભંગજ્ઞાન કહતે હૈં, સમદષ્ટિ જીવ કો
અવધિજ્ઞાન હોતા હૈ ઓર મિથ્યાદષ્ટિ કો વિભંગ જ્ઞાન હોતા હૈ ।

મન દો પ્રકાર કા હૈ-દ્રવ્યમન ઓર ભાવમન । દ્રવ્યમન મનોવર્ગણા કે
પુદ્ગલોં સે નિર્મિત હોતા હૈ ઓર આત્મા કા જનન કરને કી શક્તિ ભાવ-
મન કહલાતી હૈ । યહાં દ્રવ્યમન અભિપ્રેત હૈં । દ્રવ્યમન કે પર્યાયોં કા

અપેક્ષા રહેતી નથી સીધું આત્માથી જ ઉત્પન્ન થાય છે અવધિજ્ઞાનાવરણ
કર્મના ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે અને સ્પી દ્રવ્યોને જ ભણે છે. દેવો
અને નારકોના જીવોને ભવપ્રત્યય અવધિજ્ઞાન થાય છે તથા મનુષ્યો અને
તિર્યંચોને ગુણ પ્રત્યય અવધિજ્ઞાન થાય છે. કોઈ પણ દેવ અને નારક અવ-
ધિજ્ઞાનથી રહિવ હોતા નથી જ્યારે મનુષ્યો અને તિર્યંચોમાં કોઈ કોઈ ને જ
હોય છે. અવધિ બે પ્રકારના હોય છે (સીધું અને ઉંધું) સીધા અવધિને
અવધિજ્ઞાન કહે છે જ્યારે ઉંધા અવધિને વિભંગજ્ઞાન કહે છે, સમદષ્ટિજીવ
ને અવધિજ્ઞાન થાય છે અને મિથ્યાદષ્ટિને વિભંગજ્ઞાન થાય છે.

મન બે પ્રકારના છે દ્રવ્યમન અને ભાવમન દ્રવ્યમન મનોવર્ગના
પુદ્ગલોથી નિર્મિત થાય છે. અને આત્માની મનન કરવાની શક્તિ ભાવમન
કહેવાય છે. અને દ્રવ્યમન અભિપ્રેત છે. દ્રવ્યમનના પર્યાયોનું જે જ્ઞાન થાય

यद् ज्ञानं तन्मनःपर्यवज्ञानम्-भाष्यमनः पर्यवश्चैवंविधा बोधयाः । यथा-कश्चि-
ज्जीवः-एवं चिन्तयेत् किं स्वभावः खल्वात्मा वर्तते ? ज्ञान स्वभावोऽमूर्तः कर्ता
सुखादीना मनुभाविता इत्यादयो ज्ञेयविषयाऽध्यवसायाः परगता भवन्ति तानेव
मनःपर्यवान् परमार्थतः समदबुध्यते, बाह्यास्तु-मनःपर्यवान् अनुमानादेवाऽसौ
जानाति तन्मनः पर्यवज्ञानं बोध्यम् । तथा च-‘इदमित्थंभूतमनेन चिन्तितम्
इत्येवं रूपं ज्ञानं मनःपर्यवज्ञानं मुच्यते तच्च-मनःपर्यवज्ञानं सार्धद्वयद्वीप
समुद्रान्तर्वर्तिं संज्ञि मनोद्रव्यावलम्बनं भवति । केवलज्ञानन्तु-केवलपदेन सम्पूर्णं

जो ज्ञान होता है वह मनःपर्यव ज्ञान कहलाता है । तात्पर्य यह है कि-
जैसे किसी पुरुष के अन्तःकरण में प्रेम, करुणा, क्रोध आदि किसी भाव
के उदय होने पर उसके चेहरे की आकृति तदनुसार बदलती रहती है
और उसके चेहरे को देखकर उन-उन भावों को समझा जा सकता
है, इसी प्रकार जब कोई संज्ञी जीव किसी वस्तु का चिन्तन करता है
तब उस वस्तु के अनुरूप द्रव्यमन की आकृतियाँ-अवस्थाएँ भी पलटती
रहती हैं । उन आकृतियों या अवस्थाओं अथवा पर्यायों को मनःपर्यव-
ज्ञानी उसी प्रकार प्रत्यक्ष देखता है जैसे हम किसी के चेहरे को प्रत्यक्ष
देखते हैं मन के उन पर्यायों को प्रत्यक्ष देखना-जानना ही मनःपर्यव
ज्ञान है । मन के द्वारा जिन पदार्थों का चिन्तन किया जाता है उन पदार्थों
को मनःपर्यवज्ञान नहीं जानता वे पदार्थ मन के पर्यायों के आधार पर
किये जाने वाले अनुमान के द्वारा ही जाने जाते हैं, जैसे-हम पुरुषने घट
का चिन्तन किया है, यदि ऐसा न किया होता तो उसके मन के पर्याय

छे ते मनःपर्यवज्ञान कहेवाय छे. सारांश आ छे—जेम कोर पुश्चनां अन्तः
करणमां प्रेम, करुणा, क्रोध आदि कोर लावने उदय थवाथी तेना अहेरानी
आकृति तदनुसार अदलाती रहे छे अने तेना अहेरा (मुष्मद्ग) ने लेधने ते
ते लावने समञ्ज शक्य छे, ओवीज रीते न्यारे कोर संज्ञी छव कोर वस्तुनुं
चिन्तन करे छे त्यारे ते वस्तुने अनुरूप द्रव्यमननी आकृतिये अवस्थाओ
पणु अदलाती रहे छे ते आकृतियो अगर अवस्थाओ अथवा पर्यायाने
मनःपर्यवज्ञानी ते न रीते प्रत्यक्ष जुवे छे जेम आपणे कोरना अहेराने
प्रत्यक्ष लेधये छीये मनना ते पर्यायाने लेवा जाणुवा ओज मनःपर्यवज्ञान छे.
मन द्वारा जे पदार्थानुं चिन्तन करवामां आवे छे ते पदार्थाने मनःपर्यवज्ञान
जाणुतुं नथी. ते पदार्थ मनना पर्यायाना आधार पर करानार अनुमान द्वारा न
जाणी शक्य छे. जेमके-आ पुश्चे घडानुं चिन्तन क्युं छे, ले जेम न क्युं

જ્ઞેયં પરિગૃહ્યતે તસ્ય-તસ્મિન્ વા સકલજ્ઞેયે તપઃ ક્રિયાનુષ્ઠાનવિશુદ્ધ્યતિશયા-
 દિના ચદ્ જ્ઞાનં ભવતિ તત્કેવલ જ્ઞાન ગુચ્યતે । તત્ત્વ-સર્વદ્રવ્યમાનપર્યાય-
 પરિચ્છેદિ ભવતિ, યદ્વા કેવલશબ્દસ્યાઽપ્રહાયાર્થક્તયા દૈનલમ્ એકમેવ મત્યાદિ
 જ્ઞાનાસમ્બદ્ધમાત્યન્તિક જ્ઞાનાવરણક્ષયજન્યં કેવલજ્ઞાનમવિદ્યમાનસ્ત્વેદં સકલ
 પદાર્થાઽવમાસકં ભવતિ, તત્ર-મતિજ્ઞાનસ્ય પચ્ચાગ્રહાદયો ભેદાઃ, શ્રુતજ્ઞાનસ્યાઽ-
 ક્લાઽનજ્ઞ પ્રવિષ્ટાદયઃ, અવધિજ્ઞાનસ્ય ભવમત્યયાદયઃ, મનઃપર્યવજ્ઞાનસ્ય ઋજુમત્યા-
 દયો ભેદાઃ અગ્રેઽભિધાસ્યન્તે, કેવલજ્ઞાનસ્ય તુ ભેદા ન સન્હીતિ-વોધ્યમ્ ઉક્તઞ્ચ

એસે-ઘટાનુરૂપ નહીં હોતે, इत्यादि । यह मनःपर्यवज्ज्ञान अटार्द्र द्वीप
 (मनुष्यलोक) में स्थित संज्ञी जीव के मनोद्रव्यों को जानता है ।

जिस ज्ञान के द्वारा समस्त ज्ञेय पदार्थ जाने जाते हैं, वह केवल-
 ज्ञान कहलाता है । यह ज्ञान विशिष्टतर तपश्चरण एवं ध्यान आदि
 साधना से ज्ञानावरण कर्म का पूर्ण रूप से क्षय होने पर उत्पन्न होता
 है । यह समस्त द्रव्यों और समस्त पदार्थों को जानता है ।

‘केवल’ शब्द का अर्थ असहाय भी है । इस अर्थ के अनुसार जो
 ज्ञान असहाय है अर्थात् मतिज्ञान आदि किसी भी ज्ञान की अपेक्षा
 नहीं रखता-अकेला ही होता है और ज्ञानावरण कर्म के क्षय से उत्पन्न
 होता है, वह केवलज्ञान है ।

इनमें से मतिज्ञान के चार भेद हैं-अवग्रह, इन्द्र, अवाय और
 धारणा । श्रुतज्ञान के अंगप्रविष्ट, अनंगप्रविष्ट (अंगव्याप्त) आदि

હોત તો એના મનના પર્યાય આવા ઘટાનુરૂપ ન હોત, વગેરે આ મનઃપર્ય-
 વજ્ઞાન અટાર્દ્ર દ્વીપ(મનુષ્યલોક) માં સ્થિત સંજ્ઞી જીવના મનોદ્રવ્યોને જાણે છે.

જે જ્ઞાન વડે સમસ્ત જ્ઞેય પદાર્થ જાણી શકાય છે. તે કેવળજ્ઞાન કહેવાય
 છે. આ જ્ઞાન વિશિષ્ટતર તપશ્ચર્યા તેમજ ધ્યાન આદિ સાધનાથી જ્ઞાનાવરણ
 કર્મનો પૂર્ણરૂપથી ક્ષય થવાથી ઉત્પન્ન થાય છે. આ સમસ્ત દ્રવ્યો અને
 સમસ્ત પદાર્થોને જાણે છે.

કેવળ શબ્દનો અર્થ અસહાય પણ થાય છે. આ અર્થ અનુસાર જે
 જ્ઞાન અસહાય છે અર્થાત્ મતિજ્ઞાન આદિ કોઈ પણ જ્ઞાનની અપેક્ષા રાખતું નથી
 એકલું જ હોય છે અને જ્ઞાનાવરણ કર્મના ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે તે કેવળ જ્ઞાન છે.

આમાંથી મતિજ્ઞાનના ચાર ભેદ છે અવગ્રહ, ઈન્દ્રિય, અવાય અને ધારણા.
 શ્રુતજ્ઞાનના અંગપ્રવિષ્ટ અનંગપ્રવિષ્ટ (અંગવ્યાપ્ત) આદિ અવાન્તર ભેદ છે.

स्थानाङ्गे ५ स्थाने ३ उद्देशके ४६३ सूत्रे—‘पञ्चविहे णाणे पणत्ते तं जहा—
आभिणिषोहिणणाणे—सुयणाणे ओहिणाणे मणपज्जवणाणे—केवलणाणे’
इति, पञ्चविधं ज्ञानं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा=आभिनिबोधिकज्ञानम्, श्रुतज्ञानम्, अवधि-
ज्ञानम्, मनःपर्यवज्ञानम् केवलज्ञानम् इति ॥ एवमेव भगवतीसूत्रे—८ शतके २ उद्दे-
शके ३१८—सूत्रे अनुयोगद्वारसूत्रे, नन्दिनूत्रे चोक्तम् ॥४१॥

मूलम्—तत्थ महसुयनाणे परोक्खे ॥४२॥

छाया—तत्र मति—श्रुतज्ञानं परोक्षम् ॥४२॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्व सूत्रे—सम्यग्ज्ञानं पञ्चविधत्वेन प्रतिपादितम् मति-
श्रुतावधिजनपर्यवकेवलज्ञानभेदात्, तेषु च पञ्चसु प्रथमद्वयं परोक्षम्, अन्तिम-

आवांतर भेद हैं। अवधिज्ञान के अवप्रत्यय आदि भेद हैं और मनः
पर्यवज्ञान के ऋजुमति आदि भेद हैं, जिनका कथन आगे किया जाएगा।
केवलज्ञान के भेद नहीं होते हैं। स्थानांग सूत्र के पांचवें स्थानक के
तृतीय उद्देशक में कहा है—‘ज्ञान पांच प्रकार के कहे गए हैं—(१) आभि-
निबोधिक ज्ञान (२) श्रुतज्ञान (३) अवधिज्ञान (४) मनः पर्यवज्ञान (५)
और केवलज्ञान।

इसी प्रकार भगवती सूत्र में शतक ८, उद्देशक २ सूत्र ३१८ में,
अनुयोगद्वार में तथा नन्दी सूत्र में भी कहा है ॥४१॥

‘तत्थ मह सुयनाणे परोक्खे’ इत्यादि।

सूत्रार्थ—मतिज्ञान और श्रुतज्ञान परोक्ष हैं ॥४२॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्र में सम्यग्ज्ञान पांच प्रकार का प्रतिपादन
किया गया है—मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यव और केवलज्ञान। इन

अवधिज्ञानना अवप्रत्यय आदि भेद छे अने मनःपर्यवज्ञानना ऋजुमति आदि
भेद छे जेनुं कथन हुवे पछीथी करवाभां आवशे. केवलज्ञानना भेद छेता नथी
स्थानांगसूत्रना पांचमां स्थानकना त्रीण उद्देशनमां कछुं छे ज्ञान पांच प्रकारना
कहेलां छे—(१) आभिनिबोधिकज्ञान (२) श्रुतज्ञान (३) अवधिज्ञान (४) मनः-
पर्यवज्ञान अने (५) केवलज्ञान.

अेज प्रमाणे भगवतीसूत्रमां शतक ८, उद्देशक २, सूत्र १३८मां, अनु-
योगद्वार सूत्रमां तथा नन्दीसूत्रमां पण कहेवाभां आब्युं छे ॥ ४१ ॥

‘तत्थ महसुयनाणे पचक्खे’ इत्यादि

सूत्रार्थ—तज्ञान अने श्रुतज्ञान परोक्ष छे. ॥ ४२ ॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रमां सम्यग्ज्ञान पांच प्रकारना प्रतिपादन करवाभां
आब्या—मतिश्रुत अवधिमनःपर्यव अने केवलज्ञान आ पांचमांथी प्रारंभना

ત્રયસ્ત્ર પ્રત્યક્ષં વ્યપદિશ્યતે इति प्रतिपादयितुं प्रथमं मतिश्रुतज्ञानद्वयस्य परोक्षत्वं प्ररूपयति—‘तत्तथ महस्रुचनाणे परोक्षे’ इति । तत्र-तैषु खलु पूर्वोक्तेषु मत्यादि ज्ञानेषु प्रथमद्वयं मातश्रुतज्ञानं-मतिज्ञानं श्रुतज्ञानञ्च परोक्षं वर्तते, मति-ज्ञानस्य चक्षुरादीन्द्रियाऽनपेक्षतयैवोपजायमानस्मरणात्मकविषयचिन्तनरूपतया परोक्षत्वं बोध्यम् । यथा-नाटकाद्यवलोकने जवनिकाऽपसारणा-ऽव्यवहित पूर्व काले किं पात्र मागच्छतीत्यौत्सुक्येन दर्शकानां जवनिका प्रदेशे मनोव्यापार पूर्वाकादृष्टिः संलग्ना भवति तथाविध ज्ञानस्यैव मतिज्ञानपदेन व्यवह्रियमाणत्वात् श्रुतज्ञानस्य च शब्द सम्वन्धाज्जायमानतया परोक्षत्वं बोद्धव्यम् ॥४२॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિઃ-પૂર્વે તાદત્-સમ્યગ્જ્ઞાનં મોક્ષસાધનં પશ્ચવિધં પ્રરૂપિતમ્ મતિશ્રુતાર્વાધમનઃપર્યવક્ષેદત્તજ્ઞાનભેદાત્ તત્ર-પ્રથમદ્વયં-મતિશ્રુતજ્ઞાનરૂપં પરોક્ષં

પાંચ મેં સે પ્રારંભ કે દો પરોક્ષ ઔર અન્તિમ ત્રીજ પ્રત્યક્ષ હૈં । यह प्रति-पादन करने के लिए पहले मतिज्ञान और श्रुतज्ञान को परोक्ष कहते हैं-

पूर्वोक्त पांच ज्ञानों में से प्रारंभ के दो अर्थात् मतिज्ञान और श्रुत-ज्ञान परोक्ष हैं । जो ज्ञान इन्द्रिय या मन रूप पर निमित्त से उत्पन्न हो वह परोक्ष कहलाता है । मतिज्ञान इन्द्रियों की और मन की सहायता से उत्पन्न होता है, अतएव वह परोक्ष है और श्रुतज्ञान मन के निमित्त से उत्पन्न होने के कारण परोक्ष है । इसी प्रकार प्रकाश एवं परोपदेश आदि बाह्य कारणों से जनित होने के कारण भी ये दोनों ज्ञान परोक्ष कहलाते हैं ॥४२॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ--પહેલે મોક્ષ કે સાધન સમ્યગ્જ્ઞાન કે પાંચ ભેદ કહે ગયે હૈં-મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન ઔર કેવલ જ્ઞાન । इनमें से प्रारंभ के दो मतिज्ञान और श्रुतज्ञान परोक्ष हैं और

બે પરોક્ષ, બ્યારે અન્તિમ ત્રણ પ્રત્યક્ષ છે, એવું પ્રતિપાદન કરવાના અશયથી પહેલા મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનને પરોક્ષ કહીએ છીએ

पूर्वोक्त पांच ज्ञानोमां प्रारंभना ये अर्थात् मतिज्ञान અને શ્રુતજ્ઞાન પરોક્ષ છે જે જ્ઞાન ઇન્દ્રિય અથવા મન રૂપ નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થાય તે પરોક્ષ કહેવાય છે. મતિજ્ઞાન ઇન્દ્રિયોની તથા મનની સહાયતાથી ઉત્પન્ન થાય છે આથી તે પરોક્ષ છે. એવી જ રીતે પ્રકાશ તેમજ પરોપદેશ આદિ બાહ્ય કારણોથી ઉત્પન્ન થવાના કારણે પણ આ બંને જ્ઞાન પરોક્ષ કહેવાય છે । ૪૨।

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ-પહેલા મોક્ષના સાધન સમ્યગ્જ્ઞાનના પાંચ ભેદ કહેવામાં આવ્યા છે મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવલજ્ઞાન આમાંથી પ્રારંભના બે મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન પરોક્ષ છે અને

વર્તે, इति प्रतिपादयितुं प्रथमं मतिश्रुतज्ञानद्वयस्य परोक्षत्वं प्ररूपयति—‘तत्तथ महसुग्रनाणे परोक्षे’ इति तत्र-तेषु मतिश्रुतज्ञानावधिभिनःपर्यवकैवलज्ञानेषु प्रथमद्वयं मतिश्रुतज्ञानम्, मतिज्ञानं श्रुतज्ञानं च परोक्षं व्यपदिश्यते । तत्र-मतिज्ञानस्य चक्षुरादीन्द्रियानपेक्षतयैवोपजायमानस्मरणात्मकविषयचिन्तनरूपतया परोक्षत्वं बोध्यम् । स्मरणात्मकस्यैव मतिज्ञानस्य परोक्षत्वेन विवक्षितत्वात् तेन-सांवावहारिकस्य मतिज्ञानस्य प्रत्यक्षत्वेऽपि न कश्चिद् विरोधः । एवं श्रुतज्ञान-स्यापि शब्दाज्जायमानत्वेन परोक्षत्वमवगन्तव्यम् । वस्तुतस्तु-अक्षः-आत्मा तस्मात्पराणीन्द्रियाणि मनश्च प्रकाशोपदेशादि च बाह्यनिमित्तं प्रतीत्या-ऽपेक्षया तदावरणकर्मक्षयोपशमजन्यत्वात् मतिज्ञानस्य श्रुतज्ञानस्य च परोक्षत्वमवगन्तव्यम् । परैरिन्द्रियादिभि रूपेक्ष्यते-सिच्यतेऽभिमृष्टते इति परोक्षपद

अंतिम तीन अर्थात् अवधिज्ञान, मनःपर्यवજ્ઞાન और केवलज्ञान प्रत्यक्ष हैं, इस भेद का प्रतिपादन करने के लिए पहले मति-श्रुतज्ञान को परोक्ष कहलाते हैं—

मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यव और केवलज्ञान में से पहले के दो अर्थात् मतिज्ञान और श्रुतज्ञान परोक्ष कहलाते हैं । जो ज्ञान आत्मा से भिन्न किसी पर निमित्त से उत्पन्न होता है वह परोक्ष कहलाता है । मतिज्ञान पांचों इन्द्रियों से और मन से उत्पन्न होता है, अतएव वह परोक्ष है । इसी प्रकार श्रुतज्ञान भी मनोजन्य होने के कारण परोक्ष है । वास्तव में इन्द्रियां और मन आत्मा से पर-भिन्न हैं और ये दोनों ज्ञान इन परनिमित्तों से तथा प्रकाश और परोपदेश आदि बाह्य निमित्तों से उत्पन्न होते हैं, इस कारण परोक्ष हैं । परोक्ष शब्द की व्युत्पत्ति

छेલ્લા ત્રણ અર્થાત્ અવધિજ્ઞાન મનઃપર્યવજ્ઞાન તથા કેવળજ્ઞાન પ્રત્યક્ષ છે આ લેહનું પ્રતિપાદન કરવા માટે પ્રથમ મતિ શ્રુતજ્ઞાનને પરોક્ષ બતાવીએ છીએ

મતિ શ્રુત અવધિ મનઃપર્યવ અને કેવળજ્ઞાનમાંથી પહેલા બે અર્થાત્ મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન પરોક્ષ કહેવાય છે. જે જ્ઞાન આત્માથી ભિન્ન કોઈ બીજા નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થાય છે તે પરોક્ષ કહેવાય છે- મતિજ્ઞાન પાંચે ઇન્દ્રિયોથી અને મનથી ઉત્પન્ન થાય છે આથી તે પરોક્ષ છે એવી જ રીતે શ્રુતજ્ઞાન પણ મનોજન્ય હોવાથી પરોક્ષ છે. હકીકતમાં ઇન્દ્રિયો અને મન આત્માથી પર ભિન્ન છે અને આ બંને જ્ઞાન આ પર-નિમિત્તોથી તથા પ્રકાશ અને પરોપદેશ આદિ બાહ્ય નિમિત્તોથી ઉત્પન્ન થાય છે એ કારણ પરોક્ષ છે. પરોક્ષ શબ્દની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે છે પર અર્થાત્ ઇન્દ્રિય આદિથી જે જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય અથવા અક્ષ અર્થાત્ આત્માથી પર

વ્યુત્પત્તિઃ અક્ષાદાત્મનઃ પરાવૃત્તં વા પરોક્ષવિતિ વ્યુત્પત્તિઃ તથા ચ-અક્ષરયાઽઽત્મ
રૂપસ્ય પરેભ્ય ઇન્દ્રિયાદિભ્યો યદૂ જાયતે તત્પરોક્ષમ્ અપૌદ્ગલિકત્વાદરૂપી જીવો
વર્તતે, દ્રવ્યેન્દ્રિયમનાંસિતુ-પૌદ્ગલિકત્વાદ્ રૂપીણિ વર્તન્તે તત્તથ જીવાપેક્ષયા
પરાણિ-અન્ત્યાનિ દ્રવ્યેન્દ્રિયમનાંસિ તેભ્યઃ પૌદ્ગલિકેભ્યો દ્રવ્યેન્દ્રિય મનોભ્યો-
ઽક્ષસ્ય જીવસ્ય યજ્ઞજ્ઞાનમુપજાયતે તત્પરોક્ષ જ્ઞાનમ્ । તત્ત્વ દ્વિવિધં મતિજ્ઞાનરૂપં
શ્રુતજ્ઞાનશ્ચ પરોક્ષ મુચ્યતે । ઉક્તશ્ચ સ્થાનાજ્ઞાદૌ-‘દુર્લભિહે નાણે પળણસે, તં જહા-
પત્તચ્ચક્ષે ચેવ-પરોક્ષક્ષે ચેવ, પરોક્ષક્ષેનાણે દુર્લભિહે પળણસે, તં જહા-
અભિણિચોહિ ણાણે ચેવ, સુચનાણે ચેવ’ इति દ્વિવિધં જ્ઞાનં પ્રજ્ઞમ્ તથથા-
પ્રત્યક્ષશ્ચેવ પરોક્ષં ચૈવ, પરોક્ષં જ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞમ્, તથથા-આભિણિચોધિકજ્ઞાનં
ચૈવ શ્રુતજ્ઞાનંચૈવ इति ॥૪૨॥

મૂલમ્-ઓહિમણપજ્જવકેવલનાણે પત્તચ્ચક્ષે ॥૪૩॥

છાયા-‘અવધિ મનઃપર્યવકેવલજ્ઞાનં પ્રત્યક્ષમ્ ॥૪૩॥

હસ પ્રકાર હૈ-પર અર્થાત્ ઇન્દ્રિય આદિ સે જો જ્ઞાન ઉત્પન્ન હો અથવા
અક્ષ અર્થાત્ આત્મા સે પર-ઇન્દ્રિયાદિ સે જો જ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ
પરોક્ષ કહલાના હૈ । જીવ અપૌદ્ગલિક હોને સે અરૂપી હૈ ઓર ઇન્દ્રિયાં
તથા દ્રવ્યમન પૌદ્ગલિક હોને કે કારણ રૂપી હૈ । ભાવેન્દ્રિય ઓર ભાવ-
મન મો કારણ હોને કે કારણ કર્તા આત્મા સે ભિન્ન હૈ અર્થાત્ પર હૈ ।
इन पर निमित्तो' से अक्ष (आत्मा) को जो ज्ञान उत्पन्न होता है, उसे
પરોક્ષજ્ઞાન સમજના ચાહિયે । પરોક્ષ જ્ઞાન દો હૈ-મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન ।

સ્થાનાંગ સૂત્ર મેં કહા હૈ-જ્ઞાન દો પ્રકાર કા કહા હૈ-પ્રત્યક્ષ ઓર
પરોક્ષ । મો દો પ્રકાર કા હૈ-આભિણિચોધિક જ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન ॥૪૨॥

‘ઓહિમણપજ્જવ કેવલ’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ-અવધિ-મનઃપર્યવ ઓર કેવલજ્ઞાન પ્રત્યક્ષ હૈ ॥૪૩॥

ઇન્દ્રિયાદિથી જે જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તે પરોક્ષ કહેવાય છે. જીવ અપૌદ્ગલિક
હોવાથી અરૂપી છે અને દ્રવ્યેન્દ્રિયો તથા દ્રવ્યમન પૌદ્ગલિક હોવાથી રૂપી
છે. ભાવેન્દ્રિયો અને ભાવમન પણ કરણ હોવાના કારણે કર્તા આત્માથી ભિન્ન
છે અર્થાત્ પર છે. આ પરનિમિત્તોથી અક્ષ (આત્મા) ને જે જ્ઞાન ઉત્પન્ન
થાય છે તેને પરોક્ષ સમજવા બેઈએ પરોક્ષ જ્ઞાન જે છે મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન

સ્થાનાંગસૂત્રમાં કહ્યું છે- ‘જ્ઞાન બે પ્રકારના કહ્યા છે પ્રત્યક્ષ અને પરોક્ષ.
પરોક્ષ જ્ઞાન પણ બે પ્રકારના છે આભિણિચોધિકજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન ’ ॥૪૨॥

‘ઓહિમણપજ્જવકેવલ’ इत्यदि

સૂત્રાર્થ-અવધિ મનઃપર્યવ અને કેવલજ્ઞાન પ્રત્યક્ષ છે ॥ ૪૩ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે સ્વલ્પ ભોક્ષસાધકતયા પ્રતિપાદિતસ્ય સમ્યગ્જ્ઞાનસ્ય મતિશ્રુતાવધિ મનઃપર્યવકેવલજ્ઞાનભેદેન પશ્ચવિધત્વપ્રતિપાદનાત્ તત્ર પ્રથમદ્વયં મતિશ્રુતજ્ઞાનં પરોક્ષં વર્તતે इत्युक्तम् સમ્યગ્મતિ-અન્તિમત્રયસ્યાઽવધિ-મનઃપર્યવ-કેવલજ્ઞાનસ્ય પ્રત્યક્ષત્વં પ્રતિપાદયિતુમાહ—‘ઓહિમણપડજવકેવલનાળે પચ્ચ-કલ્હે’ इति । અવધિમનઃપર્યવકેવલજ્ઞાનમ્-પૂર્વોક્તસ્વરૂપમ્, અવધિજ્ઞાનં-મનઃપર્યવ-જ્ઞાનં-કેવલજ્ઞાનં ચૈત્યેતત્ ત્રિવિધં પ્રત્યક્ષમુચ્યતે । નતુ-પરોક્ષમ્ । અક્ષણોતિ-વ્યાપ્નોતિ-જ્ઞાનાતિવા इत्यક્ષ આત્મા, તમેવા-ઽશ્વમાત્માનં પ્રાપ્તક્ષયોપશમં પ્રક્ષી-

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે ભોક્ષ કે સાધક સમ્યગ્જ્ઞાન કે મતિ, શ્રુત, અવધિ, મનઃપર્યવ અને કેવલજ્ઞાન કે ભેદ સે પાંચ ભેદ પ્રતિપાદન કિયે गए, उनमें से मति और श्रुतज्ञान परोक्ष हैं, यह पहले कहा जा चुका है । अब अन्तिम अर्थात् अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान और केवलज्ञान प्रत्यक्ष हैं, ऐसा निरूपण करते हैं—

અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવલજ્ઞાન પ્રત્યક્ષ કહલાતે હૈં । અક્ષ અર્થાત્ આત્માનો, જ્ઞાનાવરણ કા ક્ષયોપશમ ક્ષય હોને પર જો પ્રતિનિયત સમ્યગ્જ્ઞાન હોતા હૈ, વહ સમ્યગ્જ્ઞાન કહલાતા હૈ । અથવા જ્ઞાનાવરણ કમં કે ક્ષયોપશમ યા ક્ષય સે ઇન્દ્રિય અને મન કી સહાયતા કે વિના, કેવલ આત્મા સે હી જો જ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ પ્રત્યક્ષ કહલાતા હૈ । વહ નિશ્ચયનય સે ત્રીન પ્રકાર કા હૈ—અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવલજ્ઞાન । इन तीनों में अवधिज्ञान और मनःपर्यवज्ञान क्षयोपशम से होते हैं एवं केवलज्ञान क्षय से होता है ।

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલાં ભોક્ષના સાધક સમ્યગ્જ્ઞાનના મતિ, શ્રુત, અવધિ મનઃપર્યવ અને કેવલજ્ઞાનના ભેદથી પાંચ ભેદ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યા. તેમાંથી મતિ અને શ્રુતજ્ઞાન પરોક્ષ છે એ પહેલા કહેવાઈ ગયું હવે અંતિમ ત્રણ અર્થાત્ અવધિજ્ઞાન મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવલજ્ઞાન પ્રત્યક્ષ છે, એવું નિરૂપણ કરીએ છીએ

અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવલજ્ઞાન પ્રત્યક્ષ કહેવાય છે. અક્ષ અર્થાત્ આત્માને, જ્ઞાનાવરણને ક્ષયોપશમ અથવા ક્ષય થવાથી પ્રતિનિયત સમ્યગ્જ્ઞાન થાય છે તે સમ્યગ્જ્ઞાન કહેવાય છે. અથવા કર્મના ક્ષયોપશમ અથવા ક્ષયથી ઇન્દ્રિય અને મનની સહાયતા વગર માત્ર આત્માથીજ જે જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તે પ્રત્યક્ષ કહેવાય છે તે નિશ્ચયનયથી ત્રણ પ્રકારનું છે અવધિજ્ઞાન મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવલજ્ઞાન આ ત્રણેયમાં અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યવજ્ઞાન ક્ષયોપશવથી થાય છે. અને કેવલજ્ઞાન ક્ષયથી થાય છે.

જાવરણં ચ પ્રતિનિયતં યત્સમ્યગ્જ્ઞાનં તત્-પ્રત્યક્ષ મુચ્ચતે । યદ્વા-પ્રાણિનાં યદ્ જ્ઞાનદર્શનાવરણયો ક્ષયોપશમાદ્-ક્ષયાચ્ચ ઇન્દ્રિયાનિન્દ્રિયનિરપેક્ષમાત્માનમેવ કેવલમાશ્રિત્યોત્પદ્યતે તત્પ્રત્યક્ષમ્ । તચ્ચ પ્રત્યક્ષં નિશ્ચયનયેન ત્રિવિધં ભવતિ અવધિમનઃપર્યવ કેવલજ્ઞાનભેદાત્ । તત્રા-ડવધિમનઃપર્યવજ્ઞાનાપેક્ષયા પરિપ્રાપ્તક્ષયો-પશમમ્ ઇત્યુક્તમ્, કેવલજ્ઞાનાડપેક્ષયાચ-પ્રક્ષીણાવરણમિત્યુક્તમ્ । યદપિ-અવધિ-દર્શનસ્ય કેવલદર્શનસ્ય વિભજ્ઞજ્ઞાનસ્ય ચાડપિ અક્ષ-માત્માનં પ્રતિનિયતત્વાત્ પ્રત્યક્ષત્વં પ્રાપ્નોતિ, તથાપિ-સમ્યગ્જ્ઞાનસ્યૈવ તથાવિધાક્ષમ્પ્રતિનિયતત્વવિશેષણેન પ્રત્યક્ષત્વ કથનાત્ અવધિદર્શનસ્ય-કેવલદર્શનસ્ય ચ સમ્યક્ત્વેડપિ જ્ઞાનત્વાડભાવાત્ ન પ્રત્યક્ષત્વં સમ્ભવતિ । વિભજ્ઞજ્ઞાનસ્ય ચ જ્ઞાનત્વેડપિ મિથ્યાજ્ઞાનત્વેન સમ્યક્ત્વા-ડભાવાત્ તસ્યાપિ ન પ્રત્યક્ષત્વમિતિ માવઃ । મતિજ્ઞાનસ્ય-શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ચ સમ્યગ્જ્ઞા-નત્વેડપિ, અક્ષાત્-આત્મનઃ પરાણીન્દ્રિયાણિ મનશ્ચ પ્રકાશોપદેશાદિ ચ વાહ્યં નિમિત્તં

યદપિ અવધિદર્શન, કેવલદર્શન ઓર વિભંગજ્ઞાન મો સિર્ફ આત્માશ્રિત હૈં, અતઃૈવ ડનઢેં મો પ્રત્યક્ષતા કા પ્રસંગ ઢોતા હૈ કિન્તુ યહાં સમ્યગ્જ્ઞાન કા પ્રકરણ હોને સે ડનકા નિરાકરણ હો જાતા હૈ । વે સમ્યગ્જ્ઞાન નહીં હૈ । અવધિદર્શન ઓર કેવલદર્શન જ્ઞાનરૂપ ન હોને કે કારણ પ્રત્યક્ષ નહીં કહલાતે । વિભંગજ્ઞાન યદપિ જ્ઞાનરૂપ હૈ કિન્તુ સમ્યક્ નહીં મિથ્યાજ્ઞાન હૈ, હસ કારણ ડસકીં મો પ્રત્યક્ષ સમ્યગ્જ્ઞાનોં મેં ગણના નહીં કી જા સકતી । હસકે અતિરિક્ત જો ડપયોગ વિશેષ કા ગ્રાહક હોતા હૈ ડસીં મેં સમ્યક્ અસમ્યક્ કા વ્યવહાર હો સકતા હૈ । દર્શનોપયોગ હિર્ફ સામાન્ય ગ્રાહક હૈ, અતઃૈવ ડસઢેં સમ્યક્-અસમ્યક્ કા વ્યવહાર હી નહીં હોતા ।

મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન યદપિ સમ્યગ્જ્ઞાન હૈં કિન્તુ આત્મા સે પર

જો કે અવધિદર્શન, કેવલદર્શન અને વિભંગજ્ઞાન પણ કેવળ આત્માશ્રિત છે. આથી તેમનામાં પણ પ્રત્યક્ષતાનો પ્રસંગ હોય છે. પરંતુ અહીં સમ્યક્ જ્ઞાનનું પ્રકરણ હોવાથી તેમનું નિરાકરણ થઈ જાય છે. તે સમ્યક્જ્ઞાન નથી અવધિદર્શન અને કેવલદર્શન જ્ઞાનરૂપ ન હોવાના કારણે પ્રત્યક્ષ કહેવાતા નથી. વિભંગજ્ઞાન જો કે જ્ઞાનરૂપ છે પરંતુ સમ્યક્ નહિ, મિથ્યાજ્ઞાન છે એ કારણે તેની પણ પ્રત્યક્ષ સમ્યક્જ્ઞાનોમાં ગણના કરી શકાય નહિ. આના સિવાય જે ઉપયોગ વિશેષનો ગ્રાહક હોય છે. તેમાંજ સમ્યક્, અસમ્યક્નો વ્યવહાર થઈ શકે છે. દર્શનોપયોગ માત્ર સામાન્ય ગ્રાહક છે. આથી તેમાં સમ્યક્ અસમ્યક્નો વ્યવહારજ હોતો નથી.

મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન જો કે સમ્યક્જ્ઞાન છે. પરંતુ આત્માથી પર

પ્રતીત્યાડપેક્ષ્ય તદાવરણકર્મક્ષયોપશમજન્યત્વાત્ તયોઃ પરોક્ષત્વમેવ સમ્ભવતિ ન
તુ પ્રત્યક્ષત્વમ્, અક્ષાત્-આત્મનઃ પરાવૃત્તત્વાદ્ વા પરીક્ષત્વં તયો રદસેયમ્ ॥૪૩॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વં તાવત્ સમ્યગ્ જ્ઞાનસ્ય મોક્ષમ્પતિ હેતુભૂતસ્ય મતિ-
શ્રુતાવિધિમનઃપર્યવકેવલજ્ઞાનભેદાત્ પશ્ચન્નિધં પ્રતિપાદિતમ્, તત્ર-પ્રથમદ્વયસ્ય
મતિશ્રુતજ્ઞાનસ્ય પરીક્ષત્વં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ-અન્તિમત્રયસ્યાડવધિમનઃપર્યવકેવલ-
જ્ઞાનસ્ય પ્રત્યક્ષત્વપ્રતિપાદયિતુમાહ-‘ઓહિ ળળપજજથ્થ કેવલનાળે પચ્ચક્કલે’
इति । अवधिमनःपर्यवकेवलज्ञानम् अवधिज्ञानं मनःपर्यवज्ञानं केवलज्ञानं चेत्येतत्
त्रितयं सम्यग्ज्ञानं प्रत्यक्षं व्यपदिश्यते । तत्र-ज्ञानावरणक्षयोपशमात् क्षयाच्च,
इन्द्रियाऽनिन्द्रियद्वारनिरपेक्षतयाऽक्षमात्मानमेव केवलमाभिमुख्येन गृह्यत् अवधि-

इन्द्रिय, मन, प्रकाश एवं उपदेश आदि बाह्य निमित्तों की अपेक्षा
रखते हैं, अतएव प्रत्यक्ष नहीं हैं। इस प्रकार प्रत्यक्ष के उक्त लक्षण में
अतिव्याप्ति दोष नहीं है ॥४३॥

तત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલે સમ્યગ્જ્ઞાન કે મોક્ષ કા કારણ કહા ગયા
ઔર उसके મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન ઔર કેવલ
જ્ઞાન, इन पांच भेदों का कथन किया गया । इन पांचों भेदों में से
मतिज्ञान और श्रुतज्ञान परोक्ष हैं, यह भी कहा जा चुका । अब अंतिम
तीन ज्ञानों की प्रत्यक्षता का प्रतिपादन करते हैं—

अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान और केवलज्ञान, ये तीनों प्रत्यक्ष हैं ।
ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम और क्षय से, इन्द्रिय और मन की अपेक्षा
न रखते, हुए केवल आत्मा से ही उत्पन्न होने के कारण ये तीनों ज्ञान
प्रत्यक्ष कहलाते हैं । अक्ष का अर्थ आत्मा है । ज्ञानावरण कर्म का क्षयो-

ઇન્દ્રિય મન પ્રકાશ અને ઉપદેશ આદિ બાહ્ય નિમિત્તોની અપેક્ષા રાખે છે.
આથી પ્રત્યક્ષ નથી. આ રીતે પ્રત્યક્ષતા ઉક્ત લક્ષણમાં અતિવ્યાપ્તિ દોષ નથી. ૧૪૩।

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલાં સમ્યક્જ્ઞાનને મોક્ષનું કારણ કહેવામાં આવ્યું.
તેમજ તેના મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવળજ્ઞાન
એ પાંચ ભેદોનું કથન કરવામાં આવ્યું. આ પાંચ ભેદોમાંથી મતિજ્ઞાન અને
શ્રુતજ્ઞાન પરીક્ષ છે. એ પણ કહેવામાં આવ્યું. હવે અંતિમ ત્રણ જ્ઞાનોની
પ્રત્યક્ષતાનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ.

અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાન અને કેવળજ્ઞાન આ ત્રણેય પ્રત્યક્ષ છે. જ્ઞાનાવરણ
કર્મના ક્ષયોપશમ અને ક્ષયથી, ઇન્દ્રિય અને મનની અપેક્ષા ન રાખતાં થકા
કેવળ આત્માથી જ ઉત્પન્ન થવાના કારણે આ ત્રણેય જ્ઞાન પ્રત્યક્ષ કહેવાય છે.
અક્ષ નો અર્થ આત્મા છે. જ્ઞાનાવરણ કર્મનો ક્ષયોપશમ અથવા ક્ષય થવાથી

જ્ઞાનમ્ મનઃપર્યવજ્ઞાનં-કેવલજ્ઞાનશ્ચ સમ્યગ્જ્ઞાનરૂપં સમુદેતિ, અતઃ પ્રત્યક્ષ મુચ્યતે ।
 એવશ્ચા-ડક્ષ્ણોતિ વ્યાપ્નોતિ જાનાતિ વેતિ-અક્ષ-આત્મા, તમેવાક્ષમાત્માનં
 પ્રાપ્તક્ષયોપશમમ્-પ્રક્ષીણાવરણં ચ પ્રતિનિયતં ચત્ સમ્યગ્જ્ઞાનં તત્ પ્રત્યક્ષં વ્યપદિ-
 શ્યતે । એવંવિધં સ્વલ્લ સમ્યગ્જ્ઞાનમ્-અવધિમનઃપર્યવકેવલજ્ઞાનમેવ ભવતિ નતુ-
 મતિજ્ઞાનં-શ્રુતજ્ઞાનં વા તયોરક્ષાત્ પરમૂતેન્દ્રિય મનઃપ્રકાશોપદેશાદિ બાહ્યનિમિત્તા-
 પેક્ષયા જાયમાનત્વાત્, અવધિદર્શનસ્ય કેવલદર્શનસ્ય બાહ્યનિમિત્તાપેક્ષયા જાયમા-
 નત્વાત્, અવધિદર્શનસ્ય કેવલદર્શનસ્ય ચ તથાવિધવાહ્યનિમિત્તાનપેક્ષતયા જાય-
 માનત્વેऽપિ જ્ઞાનત્વાભાવાદેવ પ્રત્યક્ષત્વં ન સમ્ભવતિ । વિભંગજ્ઞાનસ્ય તુ-જ્ઞાનત્વે-
 ડપિ તસ્ય મિથ્યાજ્ઞાનત્વેન સમ્યક્ત્વાભાવાત્ પ્રત્યક્ષત્વં નાપચ્યતે હિતિ સર્વ મનવ-
 ચમ્ ॥ ઉક્તશ્ચ સ્થાનાંગે ૨-સ્થાને ૧ ઉદ્દેશકે ૭૧ સૂત્રે-‘પચ્ચક્ષ્ણે નાણે દુવિહે
 પ્પણ્ણત્તે, તં જહા=કેવલનાણે ચેવ, ણો કેવલનાણે ચેવ, ણો કેવલનાણે
 દુવિહે પ્પણ્ણત્તે, તં જહા-બ્રોહિણાણે ચેવ, ન્ણપ્પજ્જવણાણે ચેવ’-ઇતિ

પશ્ય ચા ક્ષય હોને પર અક્ષ અર્થાત્ આત્મા કો જો સમ્યગ્જ્ઞાન હોતા હૈ, વહ પ્રત્યક્ષ કહલાતા હૈ । इस प्रकार प्रत्यक्ष सम्यग्ज्ञान अवधि, मनः-पर्यव और केवलज्ञान ही है, मतिज्ञान और श्रुतज्ञान नहीं, क्योंकि ये दोनों ज्ञान अक्ष से भिन्न इन्द्रिय, मन, प्रकाश एवं परोपदेश आदि बाह्य निमित्तों से उत्पन्न होते हैं । यद्यपि अवधिदर्शन और केवलदर्शन भी बाह्य निमित्तों से उत्पन्न नहीं होते तथापि ज्ञान स्वरूप न होने के कारण उन्हें प्रत्यक्ष नहीं कहा जा सकता । विभंगज्ञान ज्ञान होने पर भी सम्यक् नहीं मिथ्या है । अतएव वह भी प्रत्यक्ष सम्यग्ज्ञानों की गणना में नहीं आता । इस प्रकार पूर्वोक्त विधान निर्दोष है ।

સ્થાનાંગ સૂત્ર કે દ્વિતીય સ્થાનક, પ્રથમ ઉદ્દેશક, સૂત્ર ૭૧ મેં કહા

અક્ષ અર્થાત્ આત્માને જે સમ્યક્જ્ઞાન થાય છે તે પ્રત્યક્ષ કહેવાય છે. આ રીતનું પ્રત્યક્ષ સમ્યક્જ્ઞાન અવધિ મનઃપર્યવ અને કેવળજ્ઞાન જ છે. મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન નહિ. કારણકે એ બંને જ્ઞાન અક્ષથી જિનન ઇન્દ્રીય, મન પ્રકાશ અને પરોપદેશ આદિ બાહ્યનિમિત્તોથી ઉત્પન્ન થાય છે. જો કે અવધિદર્શન અને કેવળદર્શન પણ બાહ્યનિમિત્તોથી ઉત્પન્ન થતાં નથી. તો પણ જ્ઞાનસ્વરૂપ ન હોવાને લીધે તેમને પ્રત્યક્ષ કહેવામાં આવતા નથી. વિભંગજ્ઞાન જ્ઞાન હોવા છતાં પણ સમ્યક્ નહિ પરંતુ મિથ્યા છે. આથી તે પણ પ્રત્યક્ષ સમ્યક્જ્ઞાનોની ગણનામાં આવતું નથી આ રીતે પૂર્વોક્ત વિધાન નિર્દોષ છે.

સ્થાનાંગસૂત્રના દ્વિતીયસ્થાનકના, પ્રથમ ઉદ્દેશક. સૂત્ર ૭૧ માં કહ્યું છે—

प्रत्यक्षं ज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तम् तद्यथा-केवलज्ञानञ्चैव, नो केवलज्ञानञ्चैव, नो केवल-
ज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-अवधिज्ञानञ्चैव-मनःपर्यवज्ञानञ्चैव इति ॥४३॥

मूलम्-महनाणे दुविहे, इन्द्रियनिमित्ते-नो इन्द्रियनिमित्ते य ॥४४॥

छाया-‘सतिज्ञानं द्विविधम्, इन्द्रियनिमित्तं नो इन्द्रियनिमित्तं च ॥४४॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वं तावत्-सतिज्ञानमात्मरूपाक्षातिरिक्तमिन्द्रियं मन-
श्चाऽपेक्षयायमानत्वात् परोक्षं प्रतिपादितम् सम्प्रति तन्निमित्तद्वयभेदात्तस्य
द्वैविध्यं प्रतिपादयति-‘महनाणे दुविहे’ इत्यादि । सतिज्ञानं-पूर्वोक्तस्वरूपं
द्विविधं बोध्यम्, तद्यथा-इन्द्रियनिमित्तम् नो इन्द्रियनिमित्तञ्चेति । तत्र-इन्द्रतीति
इन्द्र आत्मा तस्यात्मन उपयोगलक्षणस्य ज्ञानदर्शनपरिणामिन स्तदावरणक्षयो-

है-‘प्रत्यक्ष ज्ञान दो प्रकार का कहा गया है, यथा-केवलज्ञान और नोके-
वलज्ञान । नोकेवलज्ञान भी दो प्रकार का है-अवधिज्ञान और मनःपर्य-
वज्ञान ॥४३॥

‘महनाणे दुविहे इन्द्रिय’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ--सतिज्ञान दो प्रकार का है-इन्द्रियनिमित्तक और नोइ-
न्द्रियनिमित्तक ॥४४॥

तत्त्वार्थदीपिका-आत्मा से भिन्न इन्द्रिय और मन के निमित्त से उत्पन्न
होने के कारण सतिज्ञान को परोक्ष कहा गया है, अब उक्त दोनों निमि-
त्तों के भेद से सतिज्ञान के दो भेद होते हैं, यह प्रतिपादन करते हैं-

पूर्वोक्त सतिज्ञान के दो भेद हैं-इन्द्रियनिमित्तक और अनिन्द्रिय
निमित्तक । इन्द्र अर्थात् आत्मा उपयोग स्वभाववाला है, ज्ञानदर्शन परि-
णाम वाला है, तथापि स्वयं ही पदार्थों को जानने में असमर्थ हो रहा है,

‘प्रत्यक्षज्ञान जे प्रकारना कडेवाभा आंव्या छे. जेभके डेवणज्ञान अने नो डेवणज्ञान
नो डेवणज्ञान पणु जे प्रकारना छे. अवधिज्ञान अने मनःपर्यवज्ञान.’ ॥४३॥

‘महनाणे दुविहे’ इत्यादि

सूत्रार्थ-सतिज्ञान जे प्रकारना छे-इन्द्रियनिमित्तक अने नोइन्द्रियनिमित्तक ॥४४॥

तत्त्वार्थदीपिका-आत्माथी लिन्न इन्द्रिय अने मननां निमित्तथी
उत्पन्न थवाना कारणे सतिज्ञानने परोक्ष कडेवाभां आंव्युं छे. डेवे डेत
अने निमित्तोनां लेदथी सतिज्ञाननां जे लेद थाय छे जे प्रतिपादन करीये छीये

पूर्वोक्त सतिज्ञाननां जे लेद छे इन्द्रियनिमित्तक अने नो अनिन्द्रियनिमित्तक
इन्द्र अर्थात् आत्मा उपयोगस्वभाव छे, ज्ञानदर्शन परिणाम वाणे छे, तो

જક્ષમે સતિ સ્થયમર્થાન્ ગ્રહીતુ મત્તમર્થસ્ય ચ્ચર્થોપલબ્ધિનિમિત્તં ભવતિ તદિન્દ્રિય-
મુચ્યતે, તન્ન ચ સ્પર્શનાદિકમવસેયમ્ । નોં ઇન્દ્રિયં મન ઉચ્યતે, તથા ચ-સ્પર્શના-
દીન્દ્રિયં નિમિત્તં ચસ્ય તદિન્દ્રિયનિમિત્તકં મતિજ્ઞાનં ભવતિ, પવં નો ઇન્દ્રિયં મનો
નિમિત્તં ચસ્ય તદ્-નો ઇન્દ્રિયનિમિત્તકં મતિજ્ઞાનં ભવતિ । એવમ્-મતિજ્ઞાનસ્ય
પચ્ચેન્દ્રિય-મનોરૂપાનીન્દ્રિયમેદેન પદ્ધત્કારણમેદાત્ પદ્ત્રિંશદધિકશતત્રયમેદા
ભવન્તિ, તચ્ચાગ્રે સ્ફુટી યશિષ્યતિ । અતએવેદં મતિજ્ઞાનમ્ ઇન્દ્રિય મનોનિમિત્તકત્વાત્
સાંવ્યવહારિકં પ્રત્યક્ષમાપ વ્યપદિશ્યતે, તથા ચ-મતિરેવ સ્મૃતિ-પ્રતિષ્ઠા-બુદ્ધિ-
મેધા-ચિન્તા-પ્રજ્ઞા શબ્દેનાપિ વ્યવહ્રિયતે ॥૪૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ:-પૂર્વં મતિજ્ઞાનસ્યેન્દ્રિયમનોનિમિત્તકત્વેન પરીક્ષત્વં

અતએવ પદાર્થોં કીં ઉપલબ્ધિ મેં જો નિમિત્ત હોતા હૈં ઉલ્લે ઇન્દ્રિય કહતે
હેં । ઇન્દ્રિયાં સ્પર્શનાદિ કે ભેદ સે પાંચ હૈં । નોંદ્રિય કા અર્થ મન હૈં ।
હસ પ્રકાર જો મતિજ્ઞાન સ્પર્શન આદિ ઇન્દ્રિયોં કે નિમિત્ત સે હોતા હૈં
વહ ઇન્દ્રિયનિમિત્તક કહલાતા હૈં ઓર જો નોંદ્રિય અર્થાત્ મન કે
નિમિત્ત સે ઉત્પન્ન હોતા હૈં વહ નોંદ્રિયનિમિત્તક કહલાતા હૈં-હસ
પ્રકાર મતિજ્ઞાન કે છહ કારણ હૈં-પાંચ ઇન્દ્રિયાં ઓર છઠા મન । હન
કારણોં સે તથા વિષયભૂત પદાર્થોં કે ભેદ સે મતિજ્ઞાન કે ૩૩૬ ભેદ
હોતે હૈં, હસકા સ્પષ્ટીકરણ આગે ક્રિયા જાણા । મતિજ્ઞાન ઇન્દ્રિયોં
ઓર મન કે દ્વારા ઉત્પન્ન હોને કે કારણ સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ મી
કહલાતા હૈં । સ્મૃતિ, પ્રતિષ્ઠા, બુદ્ધિ, મેધા, ચિન્તા ઓર પ્રજ્ઞા શબ્દોં સે
મી મતિજ્ઞાન કા વ્યવહાર હાતા હૈં ॥૪૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—ઇન્દ્રિય-મનોનિમિત્તક હોને સે મતિજ્ઞાન કો

પણુ સ્વયમ્ પદાર્થોને બાણુત્રામાં અસમર્થ રહેલો છે. આથી પદાર્થોની
ઉપલબ્ધિમાં જે નિમિત્ત બને છે તેને ઇન્દ્રિય કહે છે. ઇન્દ્રિયો સ્પર્શનાદિનાં
લેહથી પાંચ છે નોંદ્રિયનો અર્થ મન છે. આ રીતે જે મતિજ્ઞાન સ્પર્શન
વગેરે ઇન્દ્રિયોના નિમિત્તથી થાય છે તે ઇન્દ્રિયનિમિત્તક કહેવાય છે અને જે
નોંદ્રિય અર્થાત્ મનના નિમિત્તથી ઉત્પન્ન થાય છે તે નોંદ્રિયનિમિત્તક
કહેવાય છે. આ રીતે મતિજ્ઞાનનાં છ કારણ છે પાંચ ઇન્દ્રિયો અને છઠું મન
આ કારણોથી તથા વિષયભૂત પદાર્થોના લેહથી મતિજ્ઞાનનાં ૩૩૬ લેહ થાય
છે જેનું સ્પષ્ટીકરણ આગળ ઉપર કરવામાં આવશે. ઇન્દ્રિયો મતિજ્ઞાન અને
મન વડે ઉત્પન્ન થતાના કારણે સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષપણુ કહેવાય છે સ્મૃતિ, પ્રતિષ્ઠા,
બુદ્ધિ, મેધા, ચિન્તા અને પ્રજ્ઞા શબ્દોથી પણ મતિજ્ઞાનનો વહેવાર થાય છે. ૧ ૪૪ ।

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—ઇન્દ્રિય મનોનિમિત્તક હોવાથી મતિજ્ઞાનને પરીક્ષ

પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પ્રતિ-તન્નિમિત્તદ્વયમેવાત્તસ્ય દ્વૈવિધ્યં પ્રતિપાદયતિ-‘જ્ઞનાણો-
દુવિદ્ધે, ઇન્દ્રિયનિમિત્તે-નો ઇન્દ્રિયનિમિત્તેય’-ઇતિ । મતિજ્ઞાનમ્-વહિરજ્ઞ
મન્તરજ્ઞશ્ચાઽર્થ્યં યથા-ઽઽત્મા પરિસ્ફુટં મન્યતે સ્મા મતિઃ તદ્રૂપં જ્ઞાનં મતિજ્ઞાનં
દ્વિવિધં ભવતિ, તદ્વથા-ઇન્દ્રિયનિમિત્તમ્ નો ઇન્દ્રિયનિમિત્તશ્ચ । તન્ન-જ્ઞસ્વભાવસ્યા-
ત્મનઃ ઉપયોગલક્ષણસ્ય જ્ઞાનદર્શનપરિણામિનોઽર્થાન્ સ્વયં ગ્રહીતુમર્થસ્યાઽર્થો-
પલઙ્ઘિનિમિત્તં ચદ્ ભવતિ તદ્-ઇન્દ્રિય છુચ્યતે । તચ્ચ-સ્પર્શનરસનાદિકં
બોધ્યમ્. નો ઇન્દ્રિયપદેન મન ઉચ્યતે તદુભયનિમિત્તકં મતિજ્ઞાનં ભવતિ, તથાચ્ચે-
ન્દ્રિયમનોનિમિત્તકૃત્વાત્ મતિજ્ઞાનં સાંવ્યવહારિકં પ્રત્યક્ષમપિ વ્યપદિશ્યતે ।
મતિરેવ-સ્મૃતિ પ્રત્યભિજ્ઞા પ્રતિભાબુદ્ધિ મેધા પ્રજ્ઞા પ્રભૃતિ શબ્દૈરપિ વ્યવહ્રિયતે ।
ઉક્તશ્ચ-‘બુદ્ધિસ્તાત્કાલિકીજ્ઞેયા મતિરાભ્યાસિ ગોચરા । ધીર્ધારણાચતી
મેધા પ્રજ્ઞાપ્રાતીતકાલિકી ॥ બુદ્ધિ નવનવોન્મેષ શાલિની પ્રતિભાં વિદુઃ ॥’

પરોક્ષ કહા હૈ, અવ દો નિમિત્તોં કે મેદ સે ઉસકે દો મેદોં કા પ્રતિ-
પાદન કરતે હૈ--

મતિજ્ઞાન દો પ્રકાર કા હૈ-ઇન્દ્રિયનિમિત્તક ઓર અનિન્દ્રિયનિમિત્તક ।
આત્મા જ્ઞાન સ્વભાવવાલા હૈ, ઉપયોગ લક્ષણ વાલા હૈ, જ્ઞાન-દર્શનપ-
રિણામવાલા હૈ કિન્તુ પદાર્થોં કો સ્વયં ગ્રહણ કરને મેં અસમર્થ હૈ,
અતઃપવ પદાર્થોં કો ગ્રહણ કરને મેં જો નિમિત્ત હોતા હૈ, ઉસે ઇન્દ્રિય
કહતે હૈં । સ્પર્શન, રસના આદિ પાંચ ઇન્દ્રિયાં હૈ । નો ઇન્દ્રિય કા અર્થ
મન હૈ । इन दोनों कारणों से मतिज्ञान उत्पन्न होता है और इसी
कारण उसे सांख्यवहारिक प्रत्यक्ष भी कहते है । मतिज्ञान ही स्मृति,
प्रत्यभिज्ञा प्रणिभा, बुद्धि, मेधा प्रज्ञा आदि भी कहलाता है । कहा भी है-
जो वर्तमानकालविषयक हो अर्थात् जिससे वर्तमान की बात

કહ્યું છે. હવે બે નિમિત્તોનાં ભેદથી તેનાં બે ભેદતું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ.

મતિજ્ઞાન બે પ્રકારનાં છે ઇન્દ્રિયનિમિત્તક અને અનિન્દ્રિયનિમિત્તક. આત્મા
જ્ઞાન સ્વભાવવાળો છે ઉપયોગલક્ષણવાળો છે જ્ઞાન દર્શનપરિણામવાળો છે.
પરંતુ પદાર્થોને જાતે ગ્રહણ કરવા માટે અશક્ત છે. આથી પદાર્થોને ગ્રહણ
કરવામાં બે નિમિત્ત બને છે તેને ઇન્દ્રિય કહે છે સ્પર્શન રસના આદિ પાંચ
ઇન્દ્રિયો છે. નોઇન્દ્રિયનો અર્થ મન છે. આ બંને કારણોથી મતિજ્ઞાન ઉત્પન્ન
થાય છે અને એ કારણે જ તેને સાંખ્યવહારિકપ્રત્યક્ષ પણ કહેવાય છે મતિજ્ઞાન જ
સ્મૃતિ, પ્રત્યભિજ્ઞા-પ્રતિભા બુદ્ધિ, મેધા, પ્રજ્ઞા વગેરે પણ કહેવાય છે હજી પણ છે
બે વર્તમાન કાળ વિષયક હોય અર્થાત્ જેનાથી વર્તમાનની વાત જાણી
શકાય તે બુદ્ધિ કહેવાય છે. આગામી કાળથી સંબંધ રાખવાવાળી બુદ્ધિને મતિ

અતીતાર્થ ગ્રાહિણી પ્રતીતિઃ-સ્મૃતિઃ 'દૃક્ત્તાઃ તત્ત્વાદ્ગ્રાહિણી' તદેવેદસ્યૃત્યાદિ
 બુદ્ધિઃ પ્રત્યક્ષિજ્ઞા, તથાચાત્ર-ઇન્દ્રિય નિમિત્તચેકાં મતિજ્ઞાનમ્ અપર્યક્ષાનિન્દ્રિય મનો-
 નિમિત્તમ્ અન્યત્પુનરિન્દ્રિયાનિન્દ્રિયનિમિત્તચ્છેદિ । તૃતીયં મતિજ્ઞાનં સૂત્રરથ ચકારેણ
 સમુચીયતે, તત્ર-એકમિન્દ્રિયનિમિત્તં મતિજ્ઞાનમ્, યથા-પૃથિવ્યસ્તેજોવાયુવનરપતીના-
 મેકેન્દ્રિયાણાં દ્વિ-ત્રિ-ચતુરિન્દ્રિયાણાં સંજ્ઞિનાં ચ પञ્ચેન્દ્રિયાણાં મનસોઽધ્યાવાત્
 સંજાયતે । અનિન્દ્રિય મનોનિમિત્તં સ્મૃતિરુપં જ્ઞાનમ્ ઇન્દ્રિયનિરપેક્ષ મવતિ,
 તત્ર ચક્ષુરાદીન્દ્રિયવ્યાપારાધ્યાવાત્ ઇન્દ્રિયાનિન્દ્રિયનિમિત્તન્ત-જાગ્રદવસ્થાયાં
 સ્પર્શનેન મનસા ચોપયુક્તો જીવઃ કશ્ચિત્ સ્પૃશતિ-ઉષ્ણમિદં શીતચ્છેતિ । તત્રેન્દ્રિય-
 નિમિત્તં મતિજ્ઞાનં સ્પર્શનરસનઘ્રાણચક્ષુઃશ્રોત્રાણાં પશ્ચાન્નામિન્દ્રિયાણાં સ્પર્શરસ-
 ગન્ધરુપશબ્દેષુ પञ્ચમુ સ્વરૂપિયેષુ સંજાયતે અનિન્દ્રિયમનોનિમિત્તચ્છ સ્મૃતિરુપં

જાની જાય वह बुद्धि कहलाती है आगामी काल से संबन्ध रखने वाली
 बुद्धि को मति कहते हैं । धारणा वाली बुद्धि मेधा कहलाती है और
 अतीतकालीन वस्तु को विषय करने वाली प्रज्ञा कहलाती है । नई-नई
 सूझ वाली बुद्धि को प्रतिभा, पुरानी बात को याद करना स्मृति है ।
 'यह वही है' इस प्रकार भूत और वर्तमानकालिक पर्यायों की एकता
 को जानने वाली बुद्धि प्रत्यक्षिज्ञा कहलाती है । इस प्रकार एक मतिज्ञान
 इन्द्रियनिमित्तक और दूसरा मनोनिमित्तक है । कोई इन्द्रिय मनोनिमि-
 त्तक भी होती है ? मतिज्ञान के इस तीसरे भेद का सूत्र में प्रयुक्त च
 शब्द से ग्रहण होता है । केवल इन्द्रियनिमित्तक मतिज्ञान पृथ्वीकाय
 अप्रकाश, तेजस्काय, वायुकाय, और वनस्पतिकाय, इन एकेन्द्रियजीवों
 को तथा द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय चतुर्गिन्द्रिय और पंचेन्द्रियजीवों को होता है,
 क्योंकि इनमें मन का अभाव होता है । मनोनिमित्तक मतिज्ञान स्म-
 रणरूप होता है और उसमें इन्द्रियों की अपेक्षा नहीं रहती, इन्द्रियों का

કહે છે. ધારણાવાળી બુદ્ધિ મેધા કહેવાય છે અને અતીત કાલિન વસ્તુને
 વિષય કરવાવાળી પ્રજ્ઞા કહેવાય છે. નવીનવી હેયાઉત્પત્તિ વાળી બુદ્ધિને પ્રતિભા,
 જૂની વાતને સંભારવી સ્મૃતિ છે. “આ તેજ છે” એ રીતે ભૂત અને વર્ત-
 વર્તમાનકાલિક પર્યાયોની એકતાને બાજનારી બુદ્ધિ પ્રત્યક્ષિજ્ઞા કહેવાય છે. આ
 રીતે એક મતિજ્ઞાન ઇન્દ્રિય નિમિત્તક અને બીજું મનો નિમિત્તક છે. કોઈ
 ઇન્દ્રિય મનોનિમિત્તક પણ હોય છે. મતિજ્ઞાનનાં આ ત્રીણ લેહનુ સૂત્રમાં વપરા-
 ચેલ ‘ચ’ શબ્દથી ગ્રહણ થાય છે માત્ર ઇન્દ્રિયનિમિત્તક મતિજ્ઞાન પૃથ્વીકાય, અપ્રકાશ
 તેજસ્કાય વાયુકાય અને વનસ્પતિકાય, એ એકેન્દ્રિય જીવોને તથા બેઇન્દ્રિય
 તેઈન્દ્રિય, ત્રીઈન્દ્રિય, તેમજ અસંજ્ઞિ પંચેન્દ્રિય જીવોને થાય છે કારણકે
 એમનામાં મનનો અભાવ હોય છે મનોનિમિત્તક મતિજ્ઞાન સ્મરણ રૂપ હોય છે.

મતિજ્ઞાનં આવમનસૌ વિષયપરિચ્છેદકતયા પરિણતિજન્યં ભવતિ । તથા ચ-
મતિજ્ઞાનસ્ય પશ્ચેન્દ્રિય મનોરૂપાતિન્દ્રિયભેદેન ષટ્કારણભેદાત્ ષટ્ત્રિંશદધિક
શતત્રયભેદા યવન્તિ તે ચ ભેદા અગ્રેઽભિધાસ્યન્તે ॥ ઉક્તશ્ચ નન્દિસૂત્રે ૩
'સે કિં તં પચ્ચક્ષ્ણં ? પચ્ચક્ષ્ણં દુદિહં પળણત્તં, તં જહા-હંદિય પચ્ચક્ષ્ણં
નો હંદિયપચ્ચક્ષ્ણં ચ'-ઇતિ, અથ કિં તત્ પ્રત્યક્ષમ્ ? પ્રત્યક્ષં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્
તથા-ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષમ્, તો ઇન્દ્રિય પ્રત્યક્ષશ્ચ, ઇતિ । પુનસ્તત્રૈવ નન્દિ સૂત્રે ઉક્તમ્
'ઈહા અપોહીસંસા તગ્ગણાય ગવેણના । સન્ના સર્હર્હ પન્ના સવ્વં
આભિણિહોરિં ॥' ઇતિ, ઈહા અપોહો વિમર્શો માર્ગણા ચ ગવેણના । સંઘા
સ્મૃતિઃ મતિઃ પ્રજ્ઞા સર્વમાભિણિહોધિચ્છ ॥૪૪॥

વહાં વ્યાપાર જતીં હોતા । તીતરા ઇન્દ્રિયમનોનિમિત્તક મતિજ્ઞાન ઉસ
સમય હોતા હૈ જય મનુષ્ય જાગતા હો ઓર સ્પર્શન આદિકા તથા મનકા
ઉપયોગ લગાવ હો । જૈસે તોઈ કિની વસ્તુ કા સ્પર્શ કરકે સોચતા હૈ-
યહ શીત હૈ, યહ ઉષ્ણ હૈ इत्यादि । ઇન્દ્રિયનિમિત્તક મતિજ્ઞાન સ્પર્શન,
રસન, ગ્રાણ, ચક્ષુ ઓર શ્રોત્ર, इन पांच इन्द्रियों के विषय स्पर्श, रस,
गंध, वर्ण और शब्द का होता है । अनिन्द्रियनिमित्तक मतिज्ञान स्मृति
રૂપ હોતા હૈ । વહ આવમન કે વિષય પરિચ્છેદક પરિણમન સે ઉત્પન્ન
હોતા હૈ । પાંચ ઇન્દ્રિય ઓર મન, इन छह कारणों के भेद से तथा विष-
यभूत पदार्थों के भेद से मतिज्ञान के तीन सौ छत्तीस भेद होते हैं,
उनका निरूपण आगे किया जाएगा । નન્દી સૂત્ર મેં કહા હૈ—

પ્રશ્ન—પ્રત્યક્ષ કે કિતને ભેદ હૈ ?

ઉત્તર—પ્રત્યક્ષ કે દો ભેદ હૈ—ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ ઓર નોઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ ।

અને તેમાં ઇન્દ્રિયોની અપેક્ષા રહેતી નથી. ઇન્દ્રિયોનો ત્યાં વ્યાપાર હોતો
નથી. ત્રીજુ ઇન્દ્રિયમનોનિમિત્તક મતિજ્ઞાન તે સમયે થાય છે બ્યારે મનુષ્ય
જાગતો હોય અને સ્પર્શન વગેરેના તથા મનનો ઉપયોગ લગાડેલ હોય. જેમ
કોઈ વસ્તુનો સ્પર્શ કરીને વિચારે છે આ ઠંડુ છે આ ગરમ છે. વગેરે
ઇન્દ્રિયનિમિત્તક મતિજ્ઞાન સ્પર્શન રસન ગ્રાણ, ચક્ષુ અને શ્રોત્ર આ પાંચ
ઇન્દ્રિયોના વિષય સ્પર્શ, ગંધ, રસ, વર્ણ અને શબ્દનો હોય છે. અનિન્દ્રિય
નિમિત્તક મતિજ્ઞાન સ્મૃતિરૂપ હોય છે. તે લાવમનના વિષય પરિચ્છેદક પરિણ
મનથી ઉત્પન્ન થાય છે. પાંચ ઇન્દ્રિય અને મન એ છ કારણોના ભેદથી તથા
વિષયભૂત પદાર્થોના ભેદથી મતિજ્ઞાનનાં ૩૩૬ ભેદ થાય છે. તેમનું નિરૂપણ
પછીથી કરવામાં આવશે નંદીસૂત્રમાં કહ્યું છે.

પ્રશ્ન—પ્રત્યક્ષનાં કેટલા ભેદ છે ?

ઉત્તર—પ્રત્યક્ષનાં બે ભેદ છે ઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ અને અઇન્દ્રિયપ્રત્યક્ષ

મૂલમ્—તં ચ પુણ ચત્ત્વિહં, અવગ્રહૈર્હાવાયધારણા ભેદયો ॥૪૫॥

છાયા-તત્ત્વ પુનઃચતુર્વિધમ્-અવગ્રહે-હા ડવાય-ધારણા ભેદતઃ ॥૪૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વં તાવદ્ ઇન્દ્રિયનિન્દ્રિયાનિમિત્તભેદાત્ મતિજ્ઞાનસ્ય દ્વિવિધ્યં પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પ્રતિ-તસ્યૈવ મતિજ્ઞાનસ્ય ચાતુર્વિધ્યં પ્રતિપાદયિતુ-
માહ—‘તં ચ પુણચત્ત્વિહં’-ઇત્યાદિ। તત્ત્વ પુનઃ પૂર્વોક્તમ્બરૂપં મતિજ્ઞાનં
ચતુર્વિધં વોધ્યમ્, અવગ્રહેહાડવાયધારણા ભેદતઃ। તથા ચ-સાંવ્યવહારિક મતિ-
જ્ઞાનમ્, પ્રત્યાક્ષાવગ્રહરૂપમ્, ઈહારૂપમ્, અવાયરૂપમ્, ધારણારૂપશ્ચેત્યેવં ચતુર્વિધં
ભવતિ તત્ર-સામાન્યતઃ ‘અયં પુરુષ.’ ઇત્યેવં રૂપં જ્ઞાનમવગ્રહ ઉચ્યતે। તતઃ

નન્દીસૂત્ર યે હી ફિર કહા ગયા હૈ—‘ઈહા, અપોહ વિમર્શી, માર્ગણા
ગવેષણા, સંજ્ઞા, મતિ, સ્મૃતિ, ઓર પ્રજ્ઞા, યહ સવ આભિનિયોધિક
જ્ઞાન હૈ ॥૪૪॥

‘તં ચ પુણ ચત્ત્વિહં’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—મતિજ્ઞાન ચાર પ્રકાર કા હૈ—(૧) અવગ્રહ (૨) ઈહા (૩)
અવાય ઓર (૪) ધારણા ॥૪૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે ઇન્દ્રિયનિમિત્તક ઓર અનિન્દ્રિયનિમિત્તક
કે ભેદ સે મતિજ્ઞાન કે દો ભેદોં કા પ્રતિપાદન કિયા જા ચુકા હૈ, અવ
હસી કે ચાર ભેદોં કા પ્રતિપાદન કરતે હૈ—

પૂર્વોક્ત મતિજ્ઞાન ચાર પ્રકાર કા હૈ—અવગ્રહ, ઈહા, અવાય ઓર
ધારણા। પરસામાન્યગ્રાહી દર્શનોપયોગ કે પશ્ચાત્ અપરસામાન્ય કો
ગ્રહણ કરને ચાલા જ્ઞાન અવગ્રહ કહલાતા હૈ, જૈસે—‘યહ પુરુષ હૈ।’ અવ-

નન્દીસૂત્રમાં જ વળી કહેવામાં આવ્યું છે “ઇહા, અપોહ, વિમર્શી, માર્ગણા
ગવેષણા, સંજ્ઞા, મતિ, સ્મૃતિ અને પ્રજ્ઞા એ બધાં આભિનિયોધિકજ્ઞાન છે” ॥૪૪॥

‘તં ચ પુણ ચત્ત્વિહં’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—મતિજ્ઞાન ૪ પ્રકારના છે—(૧) અવગ્રહ (૨) ઈહા અવાય અને
ધારણા. ॥ ૪૫ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા ઇન્દ્રિયનિમિત્તક અને અનિન્દ્રિયનિમિત્તકના
લેહથી મતિજ્ઞાનનાં બે લેહોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. હવે તેના ચાર
લેહોનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ

પૂર્વોક્ત મતિજ્ઞાન ચાર પ્રકારનાં છે અવગ્રહ, ઈહા, અવાય અને ધારણા.
પરસામાન્યગ્રાહી દર્શનોપયોગની બહાર અપર સામાન્યને ગ્રહણ કરનાર જ્ઞાન
અવગ્રહ કહેવાય છે જેમકે “આ પુરુષ છે.” અવગ્રહની પછી “આ દક્ષિણી

કિમયં દાક્ષિણાત્યઃ' ઉતાહો-ઔદીચ્યઃ इत्येवं संशये सति 'नूनमयं दक्षि-
णात્ય' इति ज्ञानमीहा उच्यते । इदञ्चोत्प्रेक्षारूपं मतिज्ञानम् उत्कटैककोटिक
संभावनात्मकं भवति, नतु निश्चयात्मकम्, ततो भाषादि विशेषज्ञानाद् 'अयं
दाक्षिणात્ય एव' इत्येवं निश्चयात्मकं ज्ञानमवायः, ततश्च-तस्यैव दाक्षिणात्यस्य
विषयस्य यत्खलु संस्कारजनकं ज्ञानमुत्पद्यते सा धारणा व्यपदिश्यते । यया खलु
धारणया कालान्तरे तद्विषयकं स्मरणमुपजायते, तथा च-यत्क्रमेणाऽवग्रहा-
दीनामुत्पत्तिर्भवति तत्क्रमेणैव तेषां सत्रोपन्यासः कृतः प्रथमं विषयविषयि सन्नि-
पाते सति दर्शनं भवति तदनन्तरं सामान्यतो-ऽर्थस्य ग्रहणमवग्रहः । तदनन्तरं

ग्रહ के पश्चात् 'यह दक्षिणि है या उत्तरीय' इस प्रकार का संशय होने
पर 'यह दक्षिणि होना चाहिए' इस प्रकार एक ओर को झूका हुआ
जो ज्ञान होना है वह ईहाज्ञान कहलाता है । संशय में दोनों कोटियां
समान होती हैं जब कि ईहा में एक कोटि की संभावना बढी हुई होती
है, फिर भी ईहाज्ञान निश्चय की कोटि तक नहीं पहुँच पाता । तत्प-
श्चात् भाषा आदि की विशेषता से 'यह दक्षिणि ही है' ऐसा जो निश्च-
यात्मक ज्ञान होता है, वह अवाय कहलाता है । अवायज्ञान जब इतना
बढ हो जाता है कि संस्कार को उत्पन्न कर सके तब उसे धारणा के नाम
से कहते हैं । इस धारणा ज्ञान से कालान्तर में स्मृति उत्पन्न होती है ।

इस प्रकार जिस क्रम से अवग्रह आदि की उत्पत्ति होती है, उसी
क्रम से उनका सूत्र में निर्देश किया गया है । सर्वप्रथम विषय (वस्तु)
और विषयी (इन्द्रिय) के योग्य देश के संबंध होने पर दर्शन उत्पन्न

છે અથવા ઉતરીય" આ પ્રકારના સંશય થવાથી " આ દક્ષિણી હોવો જોઈએ"
એ રીતે એક તરફ નમેલું જે જ્ઞાન થાય છે તે ઇહાજ્ઞાન કહેવાય છે. સંશયમાં
બંને કોટિઓ સરખી છે. જ્યારે કે ઇહામાં એક કોટિની શક્યતા વધેલી
હોય છે. તેમ છતાં આ ઇહાજ્ઞાન નિશ્ચયની કોટિ સુધી પહોંચી શકતું નથી.
ત્યારબાદ ભાષા આદિની વિશેષતાથી " આ દક્ષિણી જ છે " એવું જે
નિશ્ચયાત્મક જ્ઞાન થાય છે તે અવાય કહેવાય છે. અવાયજ્ઞાન જ્યારે એટલું
બઢ થઈ જાય છે કે સંસ્કાર ઉત્પન્ન કરી શકે ત્યારે તેને ધારણા નામથી
ઓળખે છે. આ ધારણાજ્ઞાનથી કાલાન્તરમાં સ્મૃતિ ઉત્પન્ન થાય છે.

આ રીતે જે ક્રમથી અવગ્રહ આદિની ઉત્પત્તિ થાય છે તે ક્રમથી તેમનો
સૂત્રમાં ઉલ્લેખ કરવામાં આવ્યો છે. સર્વપ્રથમ વિષય (વસ્તુ) અને વિષયી
(ઇન્દ્રિય) નો યોગ્ય દેશમાં સંબંધ થવાથી દર્શન ઉત્પન્ન થાય છે. દર્શનની

तद्विशेषाकांक्षणीमीहा, तदन्तरम्-विशेषनिर्ज्ञानात् याथाकृत्याद्यनमोऽवायः, तदनन्तरं कालान्तरेऽविस्मरणकारणं धारणा भवति, इति बोध्यम् ॥४५॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तान्मतिज्ञानं द्विविधं भवति रपक्षनादीन्द्रिय-
निमित्तकम् अनिन्द्रियमनोनिमित्तकञ्चेति प्रतिपादितम्, सम्प्रति—तरयैव मतिज्ञान-
स्य षट्त्रिंशदधिकशतत्रयभेदान्प्रतिपादयितुं प्रथमं चतुर्भेदान् आह—‘तं च
पुनः चउव्विहं, उग्गह—ईहा—वायधारणा भेयओ’ इत्यादि । तच्च पुनः
पूर्वोक्तस्वरूपं मतिज्ञानं चतुर्विधं भवति तद्यथा—अवग्रहेहाऽवायधारणा भेदतः ।
तथा च—अवग्रहरूपम्, ईहारूपम्, अवायरूपम्, धारणारूपं चेत्येवं चतुर्विधं खलु
मतिज्ञानं भवति । तत्रा—ऽवग्रहणम् अवग्रहः सामान्यतोऽर्थपरिच्छेदः, अव्यक्तं
ज्ञानमित्यर्थः, तथा च—विषयविषयि सन्निपातानन्तरं यथायथं चक्षुरादीन्द्रियै

होता है, दर्शन के अनन्तर सामान्यरूप से अर्थ का ग्रहण होना अवग्रह है। अवग्रह के बाद विशेष धर्म को जानने की अकांक्षा ईहा कहलाती है, ईहा के पश्चात् विशेष का निश्चय होना अज्ञान है, उसके अनन्तर धारणाज्ञान होता है जो कालान्तर के स्मरण का कारण होता है ॥४५॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पहले निरूपण किया गया है कि भक्तिज्ञान दो प्रकार का है-स्पर्शनादि इन्द्रियों से उत्पन्न होने वाला और मन से उत्पन्न होने वाला अब भक्तिज्ञान के तीन सौ छत्तीस भेदों का प्रतिपादन करने के लिए सर्वप्रथम चार भेदों का कथन करते हैं-

पूर्वोक्त सतिज्ञान चार प्रकार का है—अवग्रह, ईहा, अज्ञाय और धारणा। इनमें से अवग्रहण को अर्थात् सामान्य रूप से पदार्थ के बोध को अवग्रह कहते हैं। इन्द्रिय और पदार्थ के योग्य सन्निपात के अनन्तर सर्वप्रथम दर्शनोपयोग उत्पन्न होता है। दर्शनोपयोग के पश्चात् जो

અનન્તર સામાન્ય રૂપે અર્થનું ગ્રહણ થવું અવગ્રહ કહેવાય છે. ઇહા પછી વિશેષનો નિશ્ચય થવો અવાય છે. તેના પછી ધારણાજ્ઞાન થાય છે. જે કાળા-ન્તરે સ્મરણનું કારણ બને છે. ॥ ૪૫ ॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ—પહેલાં નિરૂપણ કર્યું કે મતિજ્ઞાન બે પ્રકારનાં છે સ્પર્શનાદિ ઇન્દ્રિયોથી ઉત્પન્ન થનાર અને મનથી ઉત્પન્ન થનાર. હવે મતિજ્ઞાન નાં ૩૩૬ લેહોનું પ્રતિપાદન કરવા માટે સર્વ પ્રથમ ચાર લેહોનું કથન કરીએ છીએ.

પૂર્વોક્ત મતિજ્ઞાન ચાર પ્રકારનાં છે. અવગ્રહ, હંદા, અવાય અને ધારણા. આમાંથી અવગ્રહને અર્થાત્ સામાન્ય રૂપથી પદાર્થનાં યોગને અગ્રવહ કહે છે ઇન્દ્રિય અને પદાર્થના યોગ્ય સન્નિપાત પછી સર્વપ્રથમ દર્શનોપયોગ થાય

विषयाणां यदव्यक्तम्-अस्फुटम्-आलोचनमात्रमवधारणं भवति-सोऽवग्रहः उच्यते । ततश्च-सामान्यतोऽवग्रहेणाऽवग्रहीतस्य तस्यैव विषयस्य निश्चयविशेष जिज्ञासा विशेषा काङ्क्षा-ईहा-उच्यते, अहः-तर्कः-परीक्षा-विचारणा-ईहा-जिज्ञासा-इत्येते शब्दाः समानार्थका अवसेयाः । ततश्चा-ऽवग्रहेण गृहीतस्य ईहया गृहीतस्य तस्यैव विषयस्य सम्यगसम्यग्वे' त्येवं गुणदोष विचारणाऽवाय उच्यते । ततश्चाऽवायेनाऽवेतस्य तस्यैव विषयस्य या प्रतिपत्तिः मतिस्थिरता सा धारणा-व्यपदिश्यते । तथा च-प्रथमं चक्षुरिन्द्रियस्य शुक्लादिरूपे विषये सन्निपाते सति चक्षुषा शुक्लं रूप मित्येवं ग्रहणमवग्रहः । ततश्चावग्रहगृहीते शुक्ले रूपे विशेषा-काङ्क्षणीया । यथा-शुक्लमिदं किं बलाकारूपं किं वा-पताकारूपं स्यात् इत्येवं जिज्ञासारूपा-ईहा भवति । ततश्च-विशेष निर्ज्ञानात् याथात्मनिश्चयोऽवायः उच्यते । यथा-उत्पन्ननिपन्न पक्षविस्फुरण विक्षेपादिभिर्वलाकैवेयं, नतु-पताका

अव्यक्त-अपरिस्फुट बोध-अंश होता है वह व्यंजनावग्रह कहलाता है और व्यंजनावग्रह के पश्चात् आवान्तर सामान्य जानने वाला ज्ञान अर्थावग्रह कहा जाता है । सामान्य रूप से जाने गये उसी विषय में विशेष को जानने की जो आकांक्षा होती है या जो उपक्रम होता है उसे ईहा कहते हैं । ईहा को ऊह, तर्क परीक्षा विचारणा या जिज्ञासा भी कहते हैं । ईहा के पश्चात् पदार्थ का विशेष धर्म का निश्चय हो जाना अवाय है । अवाय के द्वारा जाने हुए विषय में जो प्रतिपत्ति या मति स्थिरता होती है, उसे धारणा कहते हैं ।

चक्षु इन्द्रिय और रूप का यथायोग्य सन्निपात होने पर 'यह रूप है' इस प्रकार सामान्य ग्रहण होना अवग्रह है । अवग्रह के द्वारा जाने हुए विषय में विशेष को जानने की आकांक्षा होना ईहाज्ञान है । ईहाज्ञान यद्यपि विशेष का निर्णय नहीं कर पाता तथापि विशेष की ओर उन्मुख हो जाता है । तत्पश्चात् जब ज्ञान विशेष निश्चय कर लेता है तब वह अवाय कहलाता है, जैसे यह बलाका (बगुला की पंक्ति) ही है,

छे. दर्शनापयोग पછી જે અવ્યક્ત, અપરિસ્ફુટ બોધ અંશ થાય છે તે વ્યંજના વગર કહેવાય છે. અને વ્યંજનાવગ્રહની પછી અવાન્તર સામાન્યને જાણનારૂ જ્ઞાન અર્થાવગ્રહ કહેવામાં આવે છે સામાન્ય રૂપથી જાણેલા તે જ વિષયમાં વિશેષ જાણવાની જે આકાંક્ષા થાય છે અથવા જે ઉપક્રમ થાય છે તેને ઈહા કહે છે. ઈહાજ્ઞાન જે કે વિશેષનો નિર્ણય કરી શકતું નથી. તે પણ વિશેષની તરફ ઉન્મુખ થઈ જાય છે. ત્યાર પછી જ્યારે જ્ઞાન વિશેષનો નિશ્ચય કરી લે છે ત્યારે તે અવાય કહેવાય છે. જેમકે આ બગલાની હાર જ છે, ધળ નથી.

इत्येवं निश्चयरूपोऽवायो भवति । ततश्चाऽवायज्ञान विपयीभूताया बलाकायाः कालान्तरेऽविस्मरणकारणं धारणा भवति, यथा-सैवेयं बलाका वर्तते यां पूर्वाह्नेऽहं अद्राक्षम् इत्येवं रूपा धारणा बोध्या । अथ कथं तावद् अवग्रहादयः क्रमेणैव भवन्ति न व्युत्क्रमेण ? येन प्रथमे क्षणे तं विषयं यथावत् परिच्छेत्तुं न पारयति परतश्च क्रमशः परिच्छेत्तुं पारयतीति चेत् अत्रोच्यते-मतिज्ञानावरणीयकर्मणस्तथाविधएव क्षयोपशमो भवति, येन-प्रथमक्षणे तं विषयं सामान्यतः परिच्छिनत्ति ईदृशा चाऽन्यादृशएव क्षयोपशनो भवति येन स्फुटं परिच्छिनत्ति, अवायेचाऽन्यादृश एव

પતાકા નહીં । અવાયજ્ઞાન નિર્ણયાત્મક હોતા હૈ । અવાયજ્ઞાન હી જબ હતના દૃઢ હો જાતા હૈ કિ યહ સંસ્કાર કો ઉત્પન્ન કર સકે ઓર કાલાન્તર મેં સ્મરણ કા કારણ બન સકે, તય ધારણા કહલાતા હૈ । જૈસે વહ બલાકા । અથવા યહ વહી બલાકા હૈ જિસે મૈને પૂર્વાહ્ન મેં દેલા થા ।

પ્રશ્ન-અવગ્રહ આદિ ક્રમ સે કયોં હોતે હૈં ? વ્યુત્ક્રમ સે કયોં નહીં હોતે ? જિસસે કિ પ્રથમ દર્શન મેં વિષય કો ય યાવત્ બોધ હોતા હૈ ?

ઉત્તર-મતિજ્ઞાનાવરણ કે ક્ષયોપશમ કે અનુસાર હી બોધવ્યાપાર હોતા હૈ ઓર વહ ક્ષયોપશમ ઉક્ત ક્રમ સે હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ । અર્થાત્ મતિજ્ઞાન કા ક્ષયોપશમ હવ્ન પ્રકાર કા હોતા હૈ કિ પ્રારંભ મેં વહ અપને વિષય કો સામાન્ય રૂપ સે જાનતા હૈ, તત્પશ્ચાત્ ઈદમતિજ્ઞાનાવરણ કા ક્ષયોપશમ હોતા હૈ જિસસે ઉપયોગ વિશેષોન્મુલ્લ હોતા હૈ, ફિર અવાયજ્ઞાનાવરણ કે ક્ષયોપશમ સે વહ વિશેષ કા નિર્ણય કરને મેં સમર્થ

અવાય જ્ઞાન નિર્ણયાત્મક હોય છે. અવાય જ્ઞાન જ જ્યારે ઓટલું દૃઢ થઈ જાય છે કે તે સંસ્કારને ઉત્પન્ન કરી શકે અને કાલાંતરમાં સ્મરણનું કારણ બની શકે, ત્યારે ધારણા કહેવાય છે. જેમકે તે બગલાંની હાર અથવા આ તે જ બગલાંની હાર છે. કે જે મેં પહેલાં પહેરમાં બેઠા હતા.

પ્રશ્ન-અવગ્રહ આદિ ક્રમથી કેમ હોય છે ? વ્યુત્ક્રમથી કેમ નહિ ? જેમ કે પ્રથમ દર્શનમાં વિષયનો યથાવત્ બોધ થતો નથી. અને પાછળથી યથાવત્ બોધ થાય છે ?

ઉત્તર-મતિજ્ઞાનાવરણના ક્ષયોપશમ મુજબ જ બોધ વ્યાપાર થાય છે. અને તે ક્ષયોપશમ ઉક્ત ક્રમથી જ ઉત્પન્ન થાય છે. અર્થાત્ મતિજ્ઞાનનો ક્ષયોપશમ આ રીતે જ હોય છે. કે પ્રારંભમાં તે પોતાના વિષયને સામાન્ય રૂપે જાણે છે. ત્યારબાદ ઈહા મતિજ્ઞાનાવરણનો ક્ષયોપશમ થાય છે. જેનાથી વિશેષોન્મુખ થાય છે. પછી અવાયજ્ઞાનાવરણનો ક્ષયોપશમ થવાથી તે ધારણ

ક્ષયોપશમો येन तमेव विषयं स्फुटतरमवच्छिनत्ति, धारणायामपि-अन्यादृशएव-
क्षयोपशमो भवति, येन ततोऽपि स्फुटतरमवधारयति । तस्मात्-क्षयोपशमस्यादौ
मलीमसत्वात् अव्यक्तमस्फुटज्ञानं भवति । अतएवाऽवग्रहादिषु उत्तरोत्तरं स्फुटता
ऽवगन्तव्येति । तत्र-बहुबहुविधा-क्षिपानिःसृताऽनुक्तध्रुवरूपाणां षड्विधानाम्
तद्विपरीतैः षड्विधैश्च-अल्पएकविधाऽक्षिप निःसृतोक्ताऽध्रुवरूपैः सहितानां द्वाद-
शविधानां प्रत्येकं भवग्रहेहावायधारणाभेदेन चतुर्भेदात् मतिज्ञानस्य षट्त्रिंशद-
धिरुशतत्रयभेदा भवन्ति । तथाहि-प्रथमं तानद् मतिज्ञानस्याऽवग्रहईहाऽवायो-
धारणाचेति चत्वारो भेदाः । ततः प्रत्येकं चतुर्णां बहुबहुविधादि द्वादशभेदात्
द्वादश-द्वादशभेदा भवन्ति तथा चाऽष्टचत्वारिंशद्भेदाः सम्पद्यन्ते । ततश्च तेषां
प्रत्येकं पञ्चेन्द्रियमनोरूप नो इन्द्रियभेदेन षट्षट् भेदा भवन्ति, इत्येवमष्टचत्वा-

हो जाता है। तत्पश्चात् धारणा मतिज्ञानावरण का क्षयोपशम होने पर
वह धारण करने में समर्थ होता है। इस प्रकार प्रारंभ में जो क्षयोप-
शम होता है वह इतना अસ્ફુટ होना है कि सिर्फ स्वाप्नान्ध को जान
पाता है, फिर क्रम से उसमें सबलता आती जाती है। यही कारण है
कि अवग्रह आदि में उत्तरोत्तर स्पष्टता होती है।

મતિજ્ઞાન કે વિષયભૂત પદાર્થ બારહ પ્રકાર કે હૈ-(૧) બહુ (૨) બહુ-
વિધ (૩) ક્ષિપ્ર (૪) અનિસૃત (૫) અનુક્ત ઓર (૬) ધ્રુવ, તથા હનસે
વિપરીત અલ્પ, એકવિધ, અક્ષિપ્ર, નિસૃત, ઉક્ત ઓર અધ્રુવ । યે બારહ
પ્રકાર કે હૈં । હન બારહ પ્રકાર કે પદાર્થોં કે અવગ્રહ, ઈહા, અવાય,
ઓર ધારણા ચારોં હોતે હૈં, અતઃ ૧૨×૪=૪૮ (અડતાલીસ) ભેદ હો
જાતે હૈં । યહ અડતાલીસ પ્રકાર કા મતિજ્ઞાન પાંચોં ઈન્દ્રિયોં સે તથા

કરવામા શક્તિમાન થાય છે. આ રીતે પ્રારંભમા જે ક્ષયોપશમ થાય છે. તે
એટલો અસ્ફુટ હોય છે કે માત્ર સામાન્યને જાણી શકે છે. પછી ક્રમથી તેનામાં
સખળતા આવી જાય છે. આજ કારણ છે કે અવગ્રહ આદિમાં ઉત્તરો-
ત્તર સ્પષ્ટતા હોય છે.

મતિજ્ઞાનના વિષયભૂત પદાર્થ બાર પ્રકારના છે (૧) બહુ (૨) બહુવિધ (૩)
ક્ષિપ્ર (૪) અનિસૃત (૫) અનુક્ત અને (૬) ધ્રુવ, તથા આનાથી વિપરીત અલ્પ
એકવિધ અક્ષિપ્ર, નિસૃત, ઉક્ત અને અધ્રુવ આ બે પ્રકારના પદાર્થો છે આ
બાર પ્રકારના પદાર્થોને અવગ્રહ ઇહા, અવાય અને ધારણા ચારેય હોય છે.
આથી ૧૨×૪=૪૮ (અડતાલીસ) ભેદ થઈ જાય છે. આ ૪૮ પ્રકારના મતિજ્ઞાન
પાંચેય ઇન્દ્રિયોથી તથા છઠા મનથી હોવાના કારણે છ થી ગુણવાથી ૨૮૮
ભેદ નિષ્પન્ન થાય છે.

રિશતઃ પદ્મિર્ગુણનેઽપ્તાશીત્યધિકશતત્રયભેદાઃ પ્રવટસ્વપ્નતિજ્ઞાનરથ સમ્પન્નાઃ, અપ્રવટસ્વપ્નતિજ્ઞાનરથ ચાઽપ્તચત્વારિશદ્ભેદાઃ સમ્પન્નન્તે इति ચર્વે સમ્પત્ય પદ્મ ત્રિશદધિકશતત્રયભેદાઃ સમ્પન્નન્તે इतिમાવઃ ॥ ઉક્તઞ્ચ ભાષ્યકારેણ-‘જં બહુવહુવિહસ્વિપ્પાઅગિસ્તિચનિચ્છિચયુદ્વેચવિચિન્ના, પુનરોગ્નાદધો તોસં છત્તીસતિસયભેદં’ इति, ચદ્વહુવહુવિધિયાનિઃસૃતનિઃસૃતધ્રુવેતર વિચિન્ના । યત્ પુનરવગ્રહાદયોઽતરતત્ પદ્મત્રિશદધિકત્રિશતમેઽસ્ય । इति । ઉક્તઞ્ચ નન્દિસૂત્રે-‘૨૭ સૂત્રે-‘તે કિં તં સુઅતિરિત્યઅં ? ચઙ્ગિત્વં વળ્લન્તં તં જહા-૧ ઉગ્રહૈ, ૨-ઈહા, ૩ અચાઓ, ૪ ધારણા’ इति, અથ કિં તત્ શ્રુતનિઃસૃતમ્ ? ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તદ્વધા-અવગ્રહઃ-ઈહાઽચાઓધારણા इति । સ્થાનાન્ને ૬ સ્થાને ૫૧૦ સૂત્રે ચોક્તમ્-‘છવિહા ઉગ્રહમતી વળ્લન્તં તં જહા છટે મન સે યોને કો કારણ છહ સે ગુણિત કરને પર દો સૌ અઠાસી ભેદ નિષ્પન્ન હોતે હૈં ।

અવગ્રહ કે દો ભેદ હૈં-વ્યંજનાવગ્રહ ઓર અર્થાવગ્રહ । વ્યંજનાવગ્રહ અવ્યક્ત હોતા હૈ ઓર અર્થાવગ્રહ વ્યક્તજ્ઞાન । ઉલ્લિખિત દો સૌ અઠાસી ભેદોં મૈં નિર્ફ અર્થાવગ્રહ કે ૭૨ ભેદોં કી ગણના કી ગઈ હૈ । વ્યંજનાવગ્રહ ચક્ષુ ઓર મન સે નહીં હોના-સિર્ફ ચાર ઇન્દ્રિયોં સે હોના ઓર પૂર્વોક્ત ચારહ પ્રકાર કે પદાર્થોં કો જાનતા હૈ, અતઃપ્ચ ઉભકે અઢતાલીસ ભેદ હી હોતે હૈ । इन अठनालीस भेदों को दो सौ अठासी भेदों में मिला देने से मतिज्ञान के सब भेद ३३६ हो जाते हैं । भाष्य-कार ने भी कहा है-‘मतिज्ञान बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनिसृत, निमृत, ध्रुव और इनसे विपरीत पदार्थों को जानता है और उसके अवग्रह आदि भेद होते हैं, इस कारण वह तीन सौ छत्तीस प्रकार का है ।’

અવગ્રહના બે ભેદ છે. વ્યંજનાવગ્રહ અને અર્થાવગ્રહ વ્યંજનાવગ્રહ અવ્યક્ત હોય છે. જ્યારે અર્થાવગ્રહ વ્યક્તજ્ઞાન. ઉપર જણાવેલ ૨૮૮ ભેદોમાં માત્ર અર્થાવગ્રહના ૭૨ ભેદોની ગણના કરવામાં આવી છે. વ્યંજનાવગ્રહ ચક્ષુ અને મનથી થતું નથી માત્ર ચાર ઇન્દ્રિયોથી થાય છે. અને પૂર્વોક્ત ચાર પ્રકારના પદાર્થોને જાણે છે. આથી તેના અઢતાળીસ ભેદ જ હોય છે. આ અઢતાળીસ ભેદોને ૨૮૮ ભેદોમાં ઉમેરી દેવાથી મતિજ્ઞાનના બધા મળીને ૩૩૬ ભેદ થઈ જાય છે. ભાષ્યકારે પણ કહ્યું છે. મતિજ્ઞાન બહુ બહુવિધ ક્ષિપ્ર, અનિસૃત, નિસૃત, ધ્રુવ અને એનાથી વિપરીત પદાર્થોને જાણે છે અને તેના અવગ્રહ આદિ ભેદ હોય છે એ કારણે તે ૩૩૬ પ્રકારનું છે

स्वप्नमोगिणह, बहुमोगिणह बहुविधमोगिणह, ध्रुवमोगिणह, अणि-
स्सियमोगिणह, असंदिग्धमोगिणह, छविहा ईहायती पणत्ता, तं जहा
स्वप्नमीहति, बहुमीहति, जाव असंदिग्धमीहति । छविहा अवाययती
पणत्ता, तं जहा-स्वप्नमवेति, जाव असंदिग्धमवेति । छविहा धारणा
पणत्ता, तं जहा-बहुंधारेह, पोरणंधारेह, दुद्धरंधारेति, अणिसृतं
धारेति असंदिग्धंधारेति' इति । षड्विधाऽवग्रहमतिः प्रज्ञप्ता तद्यथा-क्षिप
मवगृह्णाति, ध्रुवमवगृह्णाति, अनिसृतमवगृह्णाति, असंदिग्धमवगृह्णाति । षड्विधा
ईहा मतिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा-क्षिपमोहते, बहुमीहते, यावदसंदिग्धमीहते षड्विधा
ऽवायमतिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा क्षिपमवेति, यावदसंदिग्धमवेति । षड्विधा धारणा
प्रज्ञप्ता तद्यथा बहुंधारयति बहुविधंधारयति पुराणंधारयति दुद्धरंधारयति
अनिसृतंधारयति असंदिग्धंधारयति इति । ४५॥

नन्दीसूत्र में भी कहा है-प्रुननिश्चित मतिज्ञान के कितने भेद हैं ?
उसके चार भेद हैं-(१) अवग्रह (२) ईहा (३) अवाय और (४) धारणा ।

स्थानांग सूत्र के छठे स्थान के सूत्र ५१० में कहा है-अवग्रहमति
के छह भेद कहे गए हैं, यथा-क्षिप का अवग्रह, बहु का अवग्रह,
बहुविध का अवग्रह ध्रुव का अवग्रह, अनिसृत का अवग्रह, असंदिग्ध
का अवग्रह । ईहामतिज्ञान के भी छह भेद हैं-क्षिप की ईहा, यावत्
असंदिग्ध की ईहा । अवाय मतिज्ञान भी छह प्रकार का है-क्षिप का
अवाय यावत् असंदिग्ध का अवाय । धारणा के भी छह भेद हैं-बहुकी
धारणा, पुरातन की धारणा, दुर्द्ध की धारणा, असंदिग्ध की धारणा ।
इस प्रकार मतिज्ञान के तीन सौ छत्तीस भेदों का स्पष्टीकरण समझना
चाहिए ॥४५॥

नन्दीसूत्रमां पणु कहुं छे, श्रुतनिश्चित मतिज्ञानना केटला लेह छे ? तेना
चार लेह छे (१) अवग्रह (२) ईहा (३) अवाय (४) धारणा ।

स्थानांग सूत्रना ६४ स्थानना सूत्र ५१० मां कहुं छे-अवग्रहमतिना
६ लेह कडेवामां आग्या छे जेवाके क्षिप्रना अवग्रह, ञहुना अवग्रह, ञहु-
विधना अवग्रह, श्रुतना अवग्रह, अनिश्रुतना अवग्रह, असंदिग्धना अवग्रह
ईहामतिज्ञानना पणु ६ लेह छे क्षिप्रनी ईहा ञहुनी ईहा, जे रीते असंदिग्ध
नी ईहा अवायमतिज्ञान पणु ६ प्रकारनु छे, क्षिप्रना अवाय जे रीते असं-
दिग्ध ना अवाय धारणाना पणु ६ लेह छे. ञहु नी धारणा, पुरातननी
धारणा, दुर्द्धनी धारणा, अनिश्रुतनी धारणा, असंदिग्धनी धारणा आ रीते
मतिज्ञानना ३३६ लेहोनु स्पष्टीकरण समजनु जेधये ॥ ४५ ॥

મૂળમ્—અગ્રહે દુવિહે, અત્યોગ્રહે વંજણુગ્રહે ચ ॥૪૬॥

છાયા—‘અવગ્રહો દ્વિવિધઃ અર્થાવગ્રહો વ્યંજનાવગ્રહશ્ચ ॥૪૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વં તાવત્—મતિજ્ઞાનં ચતુર્વિધં મતિપાદિતમ્, અવગ્રહેષા-
ઽવાયધારણાભેદાત્ । તન્ન—મથમોષાત્તસ્યગ્રહં દ્વૈવિધ્યેન પ્રરૂપયિતુમાહ—‘અગ્રહે
દુવિહે’—ઇત્યાદિ । અવગ્રહઃ પૂર્વોક્ત સ્વરૂપો મતિજ્ઞાનવિશેષઃ દ્વિવિધો ભવતિ
તથા—અર્થાવગ્રહઃ વ્યંજનાઽવગ્રહશ્ચેતિ । તન્નાઽર્થારતાવત્—વસ્તુરૂપઃ દ્રવ્યરૂપો વા
ચક્ષુરાદીન્દ્રિયગ્રાહ્યાણાં ગ્રાહ્યો ગમ્યો ગોચરો વિષય ઉચ્યતે, તથાવિધસ્ય
ચક્ષુરાદીન્દ્રિયગ્રાહ્યસ્થાસ્થાર્યસ્ય વ્યક્તસ્વરૂપસ્યાઽવગ્રહો મતિજ્ઞાનવિશેષઃ અર્થાવગ્રહ
ઉચ્યતે । એવમ્—વ્યંજનમવ્યક્તં શબ્દરૂપરસગન્ધસ્પર્શજાતમ્ । તસ્ય ચ્ચલુ વ્યંજ-
નસ્યાઽવ્યક્તશબ્દાદેરવગ્રહો મતિજ્ઞાનવિશેષઃ વ્યંજનાઽવગ્રહ ઉચ્યતે । તથ ચાઽર્થા-

‘અગ્રહે દુવિહે’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—અવગ્રહનો પ્રકાર કા છે—અર્થાવગ્રહ અને વ્યંજનાવગ્રહ ॥૪૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—અવગ્રહ, ઈંહા, અવાય અને ધારણાના ભેદ સે
મતિજ્ઞાન ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા છે । इनमें से पहले अवग्रह के दो
भेदों की प्ररूपणा करते हैं—

પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ વાલા અવગ્રહ મતિજ્ઞાન દો પ્રકાર કા છે—અર્થાવગ્રહ
અને વ્યંજનાવગ્રહ । यहां अर्थ का आशय द्रव्य या वस्तु है । वह चक्षु
आदि इन्द्रियों का ग्राह्य, गम्य, गोचर या विषय भी कहलाता है । चक्षु
आदि इन्द्रियों द्वारा ग्राह्य व्यक्त रूप पदार्थ का अवग्रह अर्थावग्रह
कहलाता है । व्यंजन अर्थात् अव्यक्त शब्द, रस, गंध और स्पर्श का जो
अवग्रह होता है वह व्यंजनावग्रह कहलाता है । इस प्रकार अर्थावग्रह

‘અગ્રહે દુવિહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—અવગ્રહ ને પ્રકારનો છે અર્થાવગ્રહ અને વ્યંજનાવગ્રહ ॥ ૪૬ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા:—અવગ્રહ ઇંહા, અવાય અને ધારણાના ભેદથી મતિજ્ઞાન
ચાર પ્રકારનું કહેવામાં આવ્યું છે એ પૈકી પ્રથમ અવગ્રહના બે ભેદોની પ્રરૂપણા
કરીએ છીએ—પૂર્વોક્ત સ્વરૂપવાળું અવગ્રહ મતિજ્ઞાન ને પ્રકારનું છે—અર્થાવગ્રહ
અને વ્યંજનાવગ્રહ. અત્રે અર્થનો આશય દ્રવ્ય અથવા વસ્તુ છે તે ચક્ષુ
આદિ ઇન્દ્રિયોનો ગ્રાહ્ય, ગમ્ય, ગોચર અથવા વિષય પણ કહેવાય છે. ચક્ષુ
આદિ ઇન્દ્રિયો દ્વારા ગ્રાહ્ય વ્યક્ત રૂપ પદાર્થનો અવગ્રહ અર્થાવગ્રહ કહેવાય છે.
વ્યંજન અર્થાત્ અવ્યક્ત શબ્દ, રસ, ગંધ તથા સ્પર્શનો જે અવગ્રહ થાય છે
તે વ્યંજનાવગ્રહ કહેવાય છે. આ રીતે વ્યંજનાવગ્રહ અને અર્થાવગ્રહમાં અવ્ય-

વગ્રહ વ્યંજનાવગ્રહયો વ્યક્તાઽવ્યક્તકૃતો વિશેષો દ્રષ્ટવ્યઃ અભિનવશરાવાદ્રી-
કરણવત્, યથા—જલકરણેન દ્વિત્રિચારં સિક્તો નૂતનઃ શરાવો નાર્દ્રી ભવતિ કિન્તુ—
પુનઃ પુનઃ સિચ્યમાનઃ શનૈઃ શનૈરાદ્રી ભવતિ । એવં શ્રોત્રાદીન્દ્રિયેષુ શબ્દાદિરૂપેણ
પરિણતાઃ પુદ્ગલા દ્વિત્રાદિષુ સમયેષુ ગૃહ્યમાણાઃ સ્વલ્પ ન વ્યક્તી ભવન્તિ પુનઃ
પુનરવગ્રહે સતિ તુ વ્યક્તી ભવન્તિ તસ્માત્—વ્યક્તગ્રહણાત્ પૂર્વમવ્યક્તગુણરૂપો
વ્યંજનાવગ્રહો ભવતિ । તતથ વ્યક્તગ્રહણરૂપોઽર્થાવગ્રહો બોધ્યઃ । અત્તએવ—અવ્ય-
ક્તાવગ્રહણાદ્ વ્યંજનસ્યેહાદયો ન ભવન્તિ । એવં ચક્ષુષાઽન્દ્રિયેણ મનસા ચ
વ્યંજનાવગ્રહો ન ભવતિ । તયોરપ્રાપ્યકારિત્વાત્ । ચક્ષુસ્તાવત્—અપ્રાપ્તમર્થમવિ-

ઔર વ્યંજનાવગ્રહ મેં વ્યક્તતા ઔર અવ્યક્તતા કા અન્તર હૈ । જૈસે નવીન
શરાવ (સિકોરા) મેં જલ કી એક દો ત્રીન વૂંદ ડાલે જાઈ તો વહ ગીલા
નહીં હોતા, પરન્તુ વાર-વાર સીંચને સે ધીરે-ધીરે ગીલા હો જાતા હૈ,
હસી પ્રકાર શ્રોત્ર આદિ હન્દ્રિયોં મેં શબ્દાદિ રૂપ સે પરિણત પુદ્ગલ એક
દો ત્રીન આદિ સમયોં મેં જો ગ્રહણ કિયે જાતે હૈ, વે વ્યક્ત નહીં હોતે,
કિન્તુ વાર વાર ગ્રહણ હોને પર વ્યક્ત હોતે હૈ । હસ કારણ વ્યક્ત ગ્રહણ
સે પહેલે અવ્યક્ત ગ્રહણ હોતા હૈ જો વ્યંજનાવગ્રહ કહલાતા હૈ । ઉસકે
અનન્તર વ્યક્ત ગ્રહણરૂપ અર્થાવગ્રહ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । હસ પ્રકાર અવ્યક્ત
કા ગ્રહણ હોને સે વ્યંજન કે ર્હા, અવાય ઔર ધારણા નહીં હોતી ।
હસી પ્રકાર ચક્ષુરિન્દ્રિય ઔર મન સે મો વ્યંજનાવગ્રહ નહીં હોતા,
કયોંકિ વે દોનોં અપ્રાપ્યકારી હૈ અર્થાત્ ઉનકે વિષય કે સાથ ઉનકા
સંયોગ હુએ વિના હી વે અપને વિષય કો ગ્રહણ કરતે હૈ । અર્થાત્ ચક્ષુ

ક્તતા અને વ્યક્તતાનું અન્તર છે. જેવી રીતે નવા શકેરામાં પાણીના એક,
બે, ત્રણ ટીપાં નાખવામાં આવે તો તે લીનું થતું નથી પરન્તુ વારંવાર પાણી
સીંચવાથી ક્રમશઃ લીનું થઈ જાય તે. એજ રીતે શ્રોત્ર આદિ ઇન્દ્રિયોમાં
શબ્દાર્થે રૂપથી પરિણત પુદ્ગલ એક બે ત્રણ આદિસમયોમાં જે ગ્રહણ કર-
વામાં આવે છે. તે વ્યક્ત હોતાં નથી. પરન્તુ વારંવાર ગ્રહણ થવાથી વ્યક્ત
થાય છે આ કારણે વ્યક્તથી પહેલા અવ્યક્ત ગ્રહણ થાય છે જે વ્યંજનાવગ્રહ
કહેવાય છે તેની પછી વ્યક્ત ગ્રહણ રૂપ અર્થાવગ્રહ ઉત્પન્ન થાય છે. આ રીતે
અવ્યક્તનું ગ્રહણ થવાથી વ્યંજનના ઇંદા, અવાય તેમજ ધારણા હોતા નથી.
એવી જ રીતે ચક્ષુરિન્દ્રિય અને મનથી પણ વ્યંજનાવગ્રહ થતો નથી કારણ કે એ
અને અપ્રાપ્યકારી છે અર્થાત્ વિષયની સાથે તેમનો સંયોગ થયા વગર જ તેઓ
ચોતાના વિષયને ગ્રહણ કરે છે. અર્થાત્ ચક્ષુનો રૂપ સાથે સંયોગ નથી થતો, તે

દિવકં યુક્તસન્નિકર્પવિશેષેઽસ્થિતં વાહ્યપ્રકાશાભિવ્યક્તમુપલબ્ધતે । एवं मन-
 આપિ-અપ્રાપ્તમભિવ્યક્તમેવોપલબ્ધતે તત્ત્વાત્-ચક્ષુર્મનસો વ્યંજનાવગ્રહો ન
 ભવતિ, एवञ्च-ચક્ષુર્મનસો પરિત્યજ્ય શ્રોત્રરસનસ્પર્શનજિહ્વાગ્રાણેન્દ્રિયૈશ્ચતુર્મિઃ
 खलु व्यञ्जनावग्रहो भवति । अर्थावग्रहस्तु-सर्वरिन्द्रियाऽनिन्द्रियैः संजायते ।
 एवमर्थस्येहादयोऽपि संभवन्ति ॥૪૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયઃ—પૂર્વ તાવત્-અવગ્રહેહાઽવાયધારણામેદાત્ મતિજ્ઞાનસ્ય
 चातुर्विध्यं प्रतिपादितम्, સમ્પતિ-તત્ર મથમોપાત્તસ્યાઽવગ્રહસ્ય મેદદ્વયં મતિપો-
 દયિતુમાહ-‘ઉગ્રહે દુષિહે, અત્યોગ્રહે-વંજણુગ્રહેચ’ ઇતિ । અવગ્રહઃ પૂર્વોક્ત
 स्वरूपो मतिज्ञानविशेषो द्विविधो भवति, તપથા-અર્થાઽવગ્રહઃ વ્યંજનાવગ્રહશ્ચેતિ,

કા.રૂપ કે સાથ સંયોગ નહીં હોતા, ફિર સી ત્હ અસન્નિકૃષ્ટ રૂપ કો
 ग्रहण करती है। मन भी अप्राप्त और अभिव्यक्त पदार्थ कोही ग्रहण
 કરતા હૈ। इस कारण चक्षु और मन से व्यंजनावग्रह नहीं होता ।
 अतएव चक्षु और मन को छोड़कर श्रोत्र, रसना, घ्राण और स्पर्शन,
 इन चार ही इन्द्रियों से व्यंजनावग्रह होता है। अर्थावग्रह सभी इन्द्रियों
 से और मन से होता है। इसी प्रकार अर्थ के ईहा आदि भी होते हैं ॥૪૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયઃ—અવગ્રહ, ઈહા, અવાય ઓર ધારણા કે મેદ સે
 मतिज्ञान के चार भेदों का निरूपण किया जा चुका, अब इनमें सर्वप्र-
 थम निर्दिष्ट अवग्रह के दो भेदों का कथन करते हैं—

અવગ્રહ, કે જિસકા સ્વરૂપ પહેલે કહા ગયા હૈ ઓર જો એક પ્રકાર
 का मतिज्ञान है, दो भेद हैं—अर्थावग्रह और व्यंजनावग्रह । चक्षु आदि

असन्निकृष्ट रूपने ग्रहण करे छे. मन પણ अप्राप्त અને અભિવ્યક્ત પદાર્થને
 જ ગ્રહણ કરે છે આથી ચક્ષુ અને મનથી વ્યંજનાવગ્રહ થતો નથી. આથી ચક્ષુ
 અને મનને બાદ કરતાં શ્રોત્ર રસના ઘ્રાણ અને સ્પર્શન આ ચાર જ ઇન્દ્રિ-
 યોથી વ્યંજનાવગ્રહ થાય છે. અર્થાવગ્રહ બધી ઇન્દ્રિયોથી અને મનથી થાય છે.
 એજ રીતે અર્થના ઇહા આદિ પણ થાય છે. ॥ ૪૬ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયઃ—અવગ્રહ ઇહા, અવાય અને ધારણાના ભેદથી મતિ
 ज्ञानના ચાર ભેદોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું હવે એમાંથી સર્વપ્રથમ નિર્દિષ્ટ
 अवग्रहના जे ભેદોનું કથન કરીએ છીએ—

અવગ્રહ, કે જેનું સ્વરૂપ અગાઉ કહેવામાં આવ્યું તેમજ જે એક પ્રકારનું
 मतिज्ञान છે તેના जे ભેદ હોય છે—अर्थावग्रह અને व्यंजनावग्रह, ચક્ષુ આદિ

તત્ત્વાર્થસ્ય વ્યક્તસ્ય ચક્ષુરાદીન્દ્રિયગ્રહણયોગ્યસ્ય પરિસ્ફુટાર્થસ્યાવગ્રહોઽર્થાવગ્રહ
 ઉચ્યતે । एवं-વ્યંજનસ્યાઽન્ધકારાવૃત્તવટરૂપાદેરિવાઽપરિસ્ફુટશબ્દાદેરવગ્રહ વ્ય-
 ંજનાવગ્રહ ઉચ્યતે । तथा च-स्पर्शनाद्युपकरणेन्द्रिय संश्लिष्ट स्पर्शनाकार परिणत
 पुद्गलस्वरूपव्यंजनस्य सामान्यतः परिच्छेदकोऽव्यक्तावग્રहो भवति, अव-
 ग्रहस्यात्यन्तपरिच्छेदकत्वात् । किन्तु व्यंजनस્યાऽव्यक्तस्य शब्दादेः परिच्छेदिका
 ग्राहिका ईहाऽवायधारणा न भवन्ति तासां स्वांशे व्यक्तस्यैव भेदमार्गण निश्चय
 धारणाख्ये नियतत्वात् व्यक्तस्यार्थस्य ग्राहिकाः पुनश्चस्योऽपि-अवग्रहेहावायधारणा
 भवन्त्येव तथा च-प्रार्थाऽवग्रह-व्यंजनावग્રहयोः खलु व्यक्ताव्यक्तपदार्थकृतो
 विशेषोऽवगन्तव्यः । एवं-चक्षुरिन्द्रियेण नो इन्द्रियेण मनसाचापि व्यंजनावग્રहो
 न भवति, तयोः खलु-चक्षुर्मनसोरप्याप्यकारित्वात् । अपितु-श्रोत्ररसनघ्राण-

इन्द्रियों द्वारा ग्रहण करने के योग्य परिस्फुट अर्थ का जो अवग्रह होता
 है वह अर्थावग्रह कहलाता है । व्यंजना अर्थात् अव्यक्त शब्द आदि का
 जो ग्रहण होता है वह व्यंजनावग्रह कहलाता है । इस प्रकार स्पर्शन
 आदि उपकरणेन्द्रिय के साथ संयुक्त, स्पर्शाकार परिणत पुद्गल रूप से
 जानने वाला अव्यक्तावग्रह कहलाता है । मगर अव्यक्त शब्द आदि को
 ईहा, अवाय और धारणा नहीं होती, उनकी अपने अपने व्यक्त विषय
 में ही प्रवृत्ति होती है । मार्गणा करना, निश्चय करना और धारण
 करना, यह ईहा आदि का व्यापार व्यक्त विषय में ही हो सकता है ।
 इस प्रकार अर्थावग्रह और व्यंजनावग्रह में व्यक्त और अव्यक्त पदार्थ
 के कारण भेद है ।

व्यंजनावग्रह-चक्षु और मन से नहीं होता, क्योंकि ये दोनों अमा-

ઇન્દ્રિયો દ્વારા ગ્રહણ કરવાને યોગ્ય પરિસ્ફુટ અર્થનું જે અવગ્રહણ થાય છે
 તે અર્થાવગ્રહ કહેવાય છે વ્યંજન અર્થાત્ અવ્યક્ત શબ્દ આદિનું-જેમ અધિકારથી
 વ્યાપ્ત વટ આદિનું જે ગ્રહણ થાય છે, તે વ્યંજનાવગ્રહ કહેવાય છે આ રીતે
 સ્પર્શન આદિ ઉપકરણેન્દ્રિયોની સાથે મળેલ સ્પર્શાકાર પરિણત પુદ્ગલ રૂપ
 વ્યંજનને સામાન્ય રૂપથી જાણનાર અવ્યક્તાવગ્રહ કહેવાય છે. પરંતુ અવ્યક્ત
 શબ્દ આદિને જાણનારા ઇંદ્રિયા અવાય અને ધારણાનો અભાવ હોય છે. તેમની
 પોત-પોતાના વ્યક્ત વિષયમાં જ પ્રવૃત્તિ રહે છે માર્ગણા કરવી નિશ્ચય
 કરવો અને ધારણા કરવી, એ ઇંદ્રિયા આદિનો વ્યાપાર વ્યક્ત વિષયમાં જ થઈ
 શકે છે આ રીતે અર્થાવગ્રહ અને વ્યંજનાવગ્રહમાં વ્યક્ત અને અવ્યક્ત
 પદાર્થના કારણે ભેદ છે.

વ્યંજનવગ્રહ ચક્ષુ અને મનથી થતું નથી કારણને એ બંને અપ્રાપ્યકારી છે.

સ્પર્શનરૂપૈશ્વતુરિન્દ્રિયૈરેવ વ્યંજનાવગ્રહો ભવતિ । એવશ્ચ-યે સ્વલુ દૃશ્યમાના ચિન્ત્ય-
માનાશ્ચ પદાર્થવિશેષા ભવન્તિ । તે ચક્ષુરુપકરણેન્દ્રિયેણ નો ઇન્દ્રિયેણ-મનસા ચ
સહ સંશ્લેષપ્રાપ્ત્વા એવ પરિચ્છિન્નન્તે । ન તુ-સંશ્લેષં પ્રાપ્ત્વાઃ યત્તશ્ચક્ષુ સ્તાવત્
શારીરસ્થં સદૈવ યોગ્યદેવાવસ્થિતં પદાર્થં પરિચ્છિન્નન્તિ । ન તુ-વિષયદેશં ગત્વા
તત્પરિચ્છેદે વ્યાપૃયતે, નવા-વિષયમેવ મસૂર-ધાન્યાકૃતિકે ચક્ષુરિન્દ્રિયદેશે
સમાગતં પરિચ્છિન્નન્તિ । તસ્માત્-ચક્ષુરમાપ્યૈવ વિષયગ્રાહિ ભવતિ, યદિ વિષયં
પ્રાપ્યૈવ ચક્ષુઃ પરિચ્છિન્નચાત્ તદાઽગ્નિ પ્રદેશગમને ચક્ષુષો દાહોઽપિ સ્યાત્ । એવં-
સ્વસમીપવર્તિ-અંજનાદિકમપિ પરિચ્છિન્નચાત્, ન તુ-પરિચ્છિન્નન્તિ । અતએવ-

પ્રાપ્ચકારી હૈં । શ્રોત્ર, રક્ષના, ઘ્રાણ ઓર સ્પર્શન રૂપ ચાર હી ઇન્દ્રિયોં સે
વ્યંજનાવગ્રહ હોતા હૈં । જો પદાર્થ વિશેષ દૃશ્યમાન ઓર ચિન્ત્યમાન
હોતે હૈં વે ચક્ષુ ઉપકરણેન્દ્રિય ઓર મન કે સાથ સંયુક્ત હુએ વિના હી
જાને જાતે હૈં, સંયુક્ત હોકર નહીં જાને જાતે । કયોંકિ ચક્ષુ શરીર કે
અન્દર હી સ્થિત રહકર સદૈવ યોગ્ય દેશ મેં સ્થિત પદાર્થ કો દેખતી હૈં ।
વહ વિષયદેશ મેં અર્થાત્ દૃશ્ય વસ્તુ જહાં હો વહાં જાકર પદાર્થ નહીં
જાનતી હૈં ઓર ન મસૂર નામક ધાન્ય કી આકૃતિ વાલી ચક્ષુ કે પાસ
આયે હુહ ઓર ઉસસે સ્પૃષ્ટ હુએ પદાર્થ કો હી જાનતી હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈં
કિ ન તો નેત્ર પદાર્થ કે પાસ જાકર સ્પૃષ્ટ હોતા હૈં ઓર ન પદાર્થ નેત્ર
કે પાસ આકર સ્પૃષ્ટ હોતા હૈં । હસ કારણ વહ અપ્રાપ્ચકારી હૈં । યદિ
અપને વિષય કો પ્રાપ્ત કરકે ચક્ષુ જાનતી હોતી તો અગ્નિ કે સાથ સંયોગ
હોને પર ઉસકા દાહ હો જાતા ઓર અપને સાથ સંયુક્ત અંજન આદિ

શ્રોત્ર રક્ષના, ઘ્રાણ અને સ્પર્શન રૂપ ચાર જ ઇન્દ્રિયોથી વ્યંજનાવગ્રહ થાય
છે જે પદાર્થ વિશેષ દૃશ્યમાન અને ચિન્ત્યમાન હોય છે તે ચક્ષુઉપકરણેન્દ્રિય
અને મનની સાથે સંયુક્ત થયા વગરજ જાણી શકાય છે, સંયુક્ત થઈને
જાણી શકાતાં નથી કારણ કે ચક્ષુ શરીરની અંદરજ સ્થિત રહીને જ સદૈવ
યોગ્ય દેશમાં સ્થિત પદાર્થને જુએ છે. તે વિષય દેશમાં અર્થાત્ દૃશ્ય વસ્તુ
જ્યાં છે ત્યાં જઈને પદાર્થને જોતું નથી અથવા ન તો મસૂર નામક ધાન્યની
આકૃતિવાળી આંખની પાસે આવેલ અને તેનાથી સ્પૃષ્ટ થયેલા પદાર્થને જાણે
છે. તાત્પર્ય એ છે કે આંખ ન તો પદાર્થની પાસે જઈને સ્પૃષ્ટ થાય છે અથવા તેથી
વિપરીત પણ બનતું નથી. આ કારણે તે અપ્રાપ્ચકારી છે. જે પોતાના વિષય
ને પ્રાપ્ત કરીને ચક્ષુ જાણતી હે.ત તો અગ્નિની સાથે સંયોગ થવાથી તે બળી
જાત અને પોતાની સાથે જોડાયેલા અંજન આદિને પણ તે જાણી લઈ શકત

બાહ્યપ્રકાશાભિવ્યક્તમેવ પદાર્થ યોગ્યસન્નિકર્ષેઽવસ્થિતમુપલભતે ચક્ષુઃ, ન તુ-
મલીમસ તમસાવૃતમવ્યક્તં પદાર્થમ્ । તસ્માત્-ચક્ષુષા વ્યજ્જનાવગ્રહો ન ભવતિ ।
એવં-નો ઇન્દ્રિયમનોઽપિ ન ચિન્ત્યમાનં વિષયં પ્રાપ્યૈવ ચિન્તયતિ, નાપિ-કુતશ્ચિ-
દાગત્યાઽઽત્મનિ અવસ્થિતમેવ વિષયં મનઃપર્યાલોચયતિ । યદિ ચ વિષયં
સંશિલ્પ્યૈવ મનોઽપિ પરિચ્છિન્ધ્યાત્ તદા-તદપિ જ્ઞેયકૃતમનુગ્રહં વિકલેદાદિરૂપં
ભવેત્ । દાહાદિરૂપમુપઘાતં વા પ્રાપ્નુયાત્, ન તુ વિકલેદાદિ મનુભવતિ-
નવા-દાહાદિકમુપઘાતં ધાપ્નોતિ । તસ્માત્-મનોઽઽપ્યપ્રાપ્યૈવ વિષયગ્રાહિ ભવતિ
તસ્માત્-મનસાઽપિ વ્યજ્જનાવગ્રહો ન ભવતિ । શ્રોત્રરસગ્રાણસ્પર્શનરૂપાણિ ચક્ષુરિ-

કો મી વહ જાન લેતી, મગર જાનની નહીં હૈ । અતઃએવ બાહ્ય પ્રકાશ સે
પ્રકટ પદાર્થ કો હી, જો યોગ્ય દેશ મેં સ્થિત હો, ચક્ષુ દેખતી હૈ, મલીન
અન્ધકાર સે આચ્છાદિત પદાર્થ કો નહીં દેખતી । હસ કારણ ચક્ષુ દ્વારા
વ્યંજનાવગ્રહ નહીં હોતા હૈ ।

હસી પ્રકાર મન મી અપને ચિન્ત્યમાન પદાર્થ કો પ્રાપ્ત કરકે નહીં
જાનતા ઓર ન ઇસા હોતા હૈ કિ કહીં સે આકર વિષય આત્મા મેં સ્થિત
હો જાય ઓર મન ડસકા ચિન્તન કરે । અગર મન મી પ્રાપ્ત પદાર્થ કો
હી ચિન્તન કરતા હોવા તો ડસમેં જ્ઞેયકૃત નિગ્રહ-અનુગ્રહ મી હોતે ।
અગ્નિ કા ચિન્તન કરને પર દાહ રૂપ ઉપઘાત કો મી પ્રાપ્ત હોતા । અતઃ-
એવ યહી માનના ડચિત્ત હૈ કિ મન મી વિષય કે સાથ સંયુક્ત હુએ વિના
હી અપને વિષય કા ગ્રાહક હોતા હૈ । યહી કારણ હૈ કિ મન સે મી
વ્યંજનાવગ્રહ નહીં હોતા । શ્રોત્ર, રસના, ગ્રાણ ઓર સ્પર્શન ઇન્દ્રિયા

પરંતુ આમ થતું નથી. આથી બાહ્ય પ્રકાશથી પ્રકટ પદાર્થને કે જે યોગ્ય
દેશમાં સ્થિત હોય, ચક્ષુ તે જુવે છે. મલીન અન્ધકારથી આચ્છાદિત પદાર્થને
જોઈ શકતી નથી આ કારણે ચક્ષુ દ્વારા વ્યંજનાવગ્રહ થતો નથી.

એવી જ રીતે મન પણ પોતાના ચિન્ત્યમાન પદાર્થને પ્રાપ્ત કરીને જાણતું
નથી અને એવું પણ બનતું નથી કે ક્યાંયથી આવીને વિષય આત્મામાં સ્થિત
થઈ જાય અને મન તેનું ચિન્તન કરે. જે મન પણ પ્રાપ્ત પદાર્થનું જ
ચિન્તન કરતું હોત તો એનામાં જ્ઞેયકૃત નિગ્રહ અનુગ્રહ પણ હોત. અગ્નિનું
ચિન્તન કરવાથી દાહરૂપ ઉપઘાતને પણ પ્રાપ્ત થાત આથી મન પણ વિષય
ની સાથે સંયુક્ત થયા વગર જ પોતાનો વિષય ગ્રહણ કરે છે. એમ માનવું
એ જ યોગ્ય છે. મનથી પણ વ્યંજનાવગ્રહ થતો નથી તેનું કારણ પણ આ
જ છે. શ્રોત્ર રસના ગ્રાણ અને સ્પર્શન ઇન્દ્રિયો પ્રાપ્યકારી છે આથી તેઓ

દ્વિયાણિ તુ-પ્રાપ્યકારિત્વાત્ સહીમસતસસા વૃત્તમવ્યક્તમપિ પદાર્થે ક્ષિપ્તં પરિ
ચ્છિન્દન્તિ । તસ્માદ્-શ્રોત્રાદિ ચતુરિન્દ્રિયેરેવ વ્યજ્જનાવગ્રહો યવતિ । તથાચેન્દ્રિય-
નિમિત્ત નો ઇન્દ્રિયનિમિત્તભેદેન મતિજ્ઞાનં દ્વિવિધમ્, પુનરવગ્રહાદિ ભેદાત્ ચતુ-
ર્વિધમ્, સ્પર્શનાદિ મનઃપર્યન્ત્યાનવહિન્દ્રિયાણાં પ્રત્યેક્ષમર્થાવગ્રહાદયઃ સમુદિતા-
શ્ચતુર્વિધાઃ, ચક્ષુર્મનોર્માન ચતુરિન્દ્રિયાણાં વ્યજ્જનાવગ્રહચતુર્થેભઃ, તસ્યાશ્ચાષ્ટા-
વિંશતેઃ વહુવહુવિધાદિ દ્વિવિંશતિર્મુખને પદત્રિવિંશતિઃ કલ્પ્યન્તિ ૩૩૬ મતિજ્ઞાનં
સંપદ્યતે । ઉક્તશ્ચ સ્થાનાંગે દ્વિતીયસ્થાને ૧ ઉદ્દેશકે ૭૧ સૂત્રે-‘સુતનિસ્સિદ્ધ
દુષ્ટિહે પન્નત્તે, તં જદ્ધા-અત્થોરમાહે ચેવ, વંજ્જમોદગમાહે ચેવ’ ઇતિ, શ્રુતનિ-
સૃતં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ તદ્વથા-અર્થા-અવગ્રહૈવ, વ્યજ્જનાવગ્રહૈવ, ઇતિ । નન્દિમૃત્તે ૩૦

પ્રાપ્યકારી હૈં, અતઃપુ એ અપને વિષય કે સાથ સંયુક્ત હોઈને હી ઉસે
જાનતી હૈં ।

ઇસ પ્રકાર ઇન્દ્રિયનિમિત્તક ઓર અનિન્દ્રિયનિમિત્તક કે ભેદ સે
મતિજ્ઞાન દો પ્રકાર કા હૈ, ફિર અવગ્રહ આદિ કે ભેદ સે ચાર પ્રકાર કા
હૈ ઓર સ્પર્શન સે લેકર મન પર્યન્ત છઠ ઇન્દ્રિયોં સે ઉત્પન્ન હોને કે
કારણ અર્થાવગ્રહ આદિ ચારોં મિલકર ચૌવીસ ભેદ હોને હૈં । ચક્ષુ ઓર
મન કો છોડકર શેષ ચાર ઇન્દ્રિયોં સે ઉત્પન્ન હોને કે કારણ વ્યંજના
વગ્રહ કે ચાર ભેદ હૈં । બધ ધિલકર અઢાઈસ ભેદ નુપ । ફલ અઢાઈસ
ભેદોં કા બહુ, બહુવિધ આદિ બારહ પદાર્થોં કે સાથ ગુણાકાર કરને સે
મતિજ્ઞાન કે કુલ ત્રીસ સૌ છત્તીસ ભેદ હો જાતે હૈં ।

સ્થાનાંગસૂત્ર કે દ્વિતીય સ્થાન કે પ્રથમ ઉદ્દેશક કે ૭૧ વેં સૂત્ર મેં
કહા હૈ—

પોતાના વિષયની સાથે સંયુક્ત થઇને જ તેને બાણુ છે.

આમ ઇન્દ્રિયનિમિત્તક અને અનિન્દ્રિયનિમિત્તકના ભેદથી મતિજ્ઞાન બે
પ્રકારના છે, ત્યારબાદ અવગ્રહ આદિના ભેદથી ચાર પ્રકારના છે અને સ્પર્શનથી
લઇને મનપર્યન્ત છ ઇન્દ્રિયોથી ઉત્પન્ન થવાના કારણે અર્થાવગ્રહ આદિ ચારે
મળીને ચૌવીસ ભેદ થાય છે. ચક્ષુ અને મનને છોડીને શેષ ચાર ઇન્દ્રિયોથી
ઉત્પન્ન થતા હોવાથી વ્યંજનાવગ્રહના ચાર ભેદ છે. બધાં મળીને અઠ્યાવીસ
ભેદ થયા આ અઠ્યાવીસ ભેદોના બહુ, બહુવિધ આદિ બાર પદાર્થોની સાથે
ગુણાકાર કરવાથી મતિજ્ઞાનના કુલ ત્રણસોને છત્રીસ ભેદ થઇ બાય છે.

સ્થાનાંગસૂત્રના દ્વિતીય સ્થાનના પ્રથમ ઉદ્દેશકના ૭૧માં સૂત્રમાં કહ્યું છે
શ્રુતનિસૃત (મતિજ્ઞાન) બે પ્રકારનું કહેવામાં આવ્યું છે જેમકે અર્થાવગ્રહ
અને વ્યંજનાવગ્રહ

સૂત્રે ચોત્તર-‘કે કિં તં આત્યુગ્મહે-? આત્યુગ્મહે છન્દિહે પગજાતે, તં જહા સોહંદિય આત્યુગ્મહે, ચક્ષુરિન્દ્રિય આત્યુગ્મહે ધાણિન્દ્રિય આત્યુગ્મહે, જિહ્વેન્દ્રિય આત્યુગ્મહે ધાણિન્દ્રિય આત્યુગ્મહે નોહંદિય આત્યુગ્મહે’ ઇતિ । અથ કોડ-સાચર્થાવગ્રહઃ ? અર્થાવગ્રહઃ અર્થાવગ્રહઃ મજ્જાતઃ તથા-શ્રોત્રેન્દ્રિયાર્થાવગ્રહઃ ચક્ષુરિન્દ્રિયાર્થાવગ્રહઃ ધ્રાણેન્દ્રિયાર્થાવગ્રહઃ જિહ્વેન્દ્રિયાર્થાવગ્રહઃ સ્પર્શનેન્દ્રિયાર્થાવગ્રહઃ નોહંદ્રિયાર્થાવગ્રહઃ । તતઃ પૂર્વશ્ચાપિ નન્દિહ્વેન્દ્રિય-સૂત્રેચોવદ્ય-‘કે કિં તં વંજણુગ્મહે ? વંજણુગ્મહે છન્દિહ્વે પગજાતે, તં જહા-સોહંદિયવંજણુગ્મહે ધાણિન્દ્રિય વંજણુગ્મહે ધાણિન્દ્રિયવંજણુગ્મહે, ધાણિન્દ્રિયવંજણુગ્મહે કો તં વંજણુગ્મહે, ઇતિ । અથ કોડ-વંજણુગ્મહે ? વંજણુગ્મહે તથા-શ્રોત્રેન્દ્રિય વંજણુગ્મહે ધ્રાણેન્દ્રિય વંજણુગ્મહે જિહ્વેન્દ્રિય વંજણુગ્મહે સ્પર્શનેન્દ્રિય વંજણુગ્મહે તથા-નોહંદ્રિય વંજણુગ્મહે ઇતિ । ઉચ્ચ-કો-વંજણુ-ઉપસંહારરૂપે-વાચર્થાવગ્રહઃ તથા-તદુપસંહારરૂપે-વાચર્થાવગ્રહઃ તથા-સંગ્રાહઃ । ૪૬।

અતઃપર (ગતિજ્ઞાન) દે પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ, યથા-અર્થાવગ્રહ ઓર વંજણાવગ્રહ ।

નન્દીસૂત્ર કે ૨૦ વેં શુદ્ધ મેં કહા હૈ-અર્થાવગ્રહ કિતને પ્રકાર કા હૈ ? ઉત્તર-અર્થાવગ્રહ છત્ર પ્રકાર કા હૈ, યથા-શ્રોત્રેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, ચક્ષુરિન્દ્રિય-અર્થાવગ્રહ, ધ્રાણેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, જિહ્વેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, સ્પર્શનેન્દ્રિય-અર્થાવગ્રહ ઓર નોહંદ્રિય-અર્થાવગ્રહ ।

હવેલે પહેલે મી નન્દીસૂત્ર કે ૨૧ વેં શુદ્ધ મેં કહા હૈ-વંજણાવગ્રહ કે કિતને ભેદ હૈ ? વંજણાવગ્રહ કે ચાર ભેદ હૈ-શ્રોત્રેન્દ્રિય વંજણાવગ્રહ, ધ્રાણેન્દ્રિય વંજણાવગ્રહ, જિહ્વેન્દ્રિય વંજણાવગ્રહ ઓર સ્પર્શનેન્દ્રિય વંજણાવગ્રહ, ।

નન્દીસૂત્રના ૩૦માં સૂત્રમાં કહ્યું છે અર્થાવગ્રહ કેટલા પ્રકારના છે ? ઉત્તર-અવગ્રહ છ પ્રકારના છે જેમકે શ્રોત્રેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, ચક્ષુરિન્દ્રિય, અર્થાવગ્રહ, ધ્રાણેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, જિહ્વેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ સ્પર્શેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ અને આંત્રિય અર્થાવગ્રહ

આથી પહેલા નન્દીસૂત્રના ૨૮માં સૂત્રમાં કહ્યું છે વંજણાવગ્રહના કેટલા ભેદ છે ? વંજણાવગ્રહના ચાર ભેદ છે શ્રોત્રેન્દ્રિયવંજણાવગ્રહ, ધ્રાણેન્દ્રિયવંજણાવગ્રહ, જિહ્વેન્દ્રિયવંજણાવગ્રહ અને સ્પર્શેન્દ્રિયવંજણાવગ્રહ.

મૂલમ્—સુચનાણે દુવિહે, અંગપ્રવિષ્ટે—અંગબાહ્યે ॥૪૭॥

છાયા—શ્રુતજ્ઞાનં દ્વિવિધમ્ અંગપ્રવિષ્ટમ્—અંગબાહ્યન્—॥૪૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વં તાવદ્ મતિજ્ઞાનં સવિસ્તરં ભેદોપભેદપૂર્વકં પ્રતિપા-
દિતમ્, સમ્પ્રતિ શ્રુતજ્ઞાનં દ્વિવિધ્યેન પ્રરૂપયિતુમાદ—“સુચનાણે—” इत्यादि ।
શ્રુતજ્ઞાનમ્—શ્રૂયતે इति શ્રુતમ્ શબ્દસ્વરૂપમ્ તત્સમ્બન્ધિજ્ઞાનમ્ શ્રુતજ્ઞાનમ્ શ્રવણં વા-
શ્રુતિરૂપમ્ શ્રુતમ્—તદ્રૂપં જ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનં તાવદ્ દ્વિવિધં ભવતિ—। તથા—આચારાંગ-
૧ સૂત્રકૃતાંગ-૨ સ્થાનાંગ-૩ સમવાયાંગ-૪ વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તિ-૫ જ્ઞાતાધર્મ-
કથાંગ-૬ ઉપાસકદશાંગ-૭ અન્તકૃદશાંગ-૮ અનુત્તરોપપાતિક દશાંગ-૯

નન્દીસૂત્ર કે કેવલ ઉપલક્ષણ રૂપ એ હી અર્થાવગ્રહ કા કથન કિયા
ગયા હૈ, અતઃ૯વ ઈહા, અવાય ઓર ધારણા કે ભેદ બી હની પ્રકાર જાન
લેને યાહિ ॥૪૬॥

‘સુચનાણે દુવિહે’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—શ્રુતજ્ઞાન દો પ્રકાર કા હૈ—અંગપ્રવિષ્ટ ઓર અંગબાહ્ય ॥૪૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે ભેદોપભેદોં સહિત વિસ્તાર પૂર્વક મતિજ્ઞાન
કા નિરૂપણ કિયા ગયા, અય શ્રુતજ્ઞાન કે ભેદ કહતે હૈ—

જો સુના જાય સો શ્રુત અર્થાત્ શબ્દ । શબ્દ સંબંધી જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન
કહલાતા હૈ । અથવા સુનના શ્રુત કહલાતા હૈ ઓર શ્રુતરૂપજ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન
કહલાતા શ્રુતજ્ઞાન દો પ્રકાર કા હૈ—અંગપ્રવિષ્ટ ઓર અંગબાહ્ય । इनमें से
अंगप्रविष्ट श्रुत के चारह भेद हैं, यथा—(१) आचारंग (२) सूत्रकृतांग (३)
स्थानांग (४) समवायांग (५) व्याख्याप्रज्ञप्ति (६) ज्ञाताधर्मकथांग (७)

નન્દીસૂત્રમાં માત્ર ઉપસંહાર રૂપે જ અર્થાવગ્રહનું કથન કરવામાં આવ્યું
છે આથી ધડા, અવાય અને ધારણાના ભેદ પણ આ પ્રમાણે બાણી લેવા ભેદાયે ॥૪૬॥

‘સુચનાણે દુવિહે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—શ્રુતજ્ઞાન બે પ્રકારનું છે—અંગપ્રવિષ્ટ અને અંગબાહ્ય ॥૪૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા ભેદોપભેદ સહિત વિસ્તારપૂર્વક મતિજ્ઞાનનું
નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે શ્રુતજ્ઞાનના ભેદ કહીએ છીએ.

જે સંબંધાય તે શ્રુત અર્થાત્ શબ્દ. શબ્દ સંબંધી જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન કહેવાય
છે અથવા સાંભળવું શ્રુત કહેવાય છે અને શ્રુતરૂપ જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન કહેવાય છે.
શ્રુતજ્ઞાન બે પ્રકારનું છે અંગપ્રવિષ્ટ અને અંગબાહ્ય. એમાંથી અંગપ્રવિષ્ટ શ્રુતના
બાર ભેદ છે જેવાકે—(૧) આચારંગ (૨) સૂત્રકૃતાંગ (૩) સ્થાનાંગ (૪)
સમવાયાંગ (૫) વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞપ્તિ (૬) જ્ઞાતાધર્મકથાંગ (૭) ઉપાસકદશાંગ (૮)

પ્રશ્નવ્યાકરણમ્-૧૦ વિપાકશ્રુતાંગમ્-૧૧ દષ્ટિવાદાંગમ્-૧૨ इति । અંગબાહ્ય શ્રુતજ્ઞાનમનેકવિધં बोध्यम् । तद्यथा-अङ्गबोध्यं तावत्-प्रथमतो द्विविधम्, आवश्यकम्-आवश्यकव्यतिरिक्तश्चेति, तत्राऽऽवश्यकव्यतिरिक्तं द्विविधम्, कालिकम्-उत्कालिकश्चेति-तत्र कालिकमनेकविधम्, उत्तराध्ययनानि-दशा-कल्पः-व्यवहारः-निशीथम्-महानिशीथम्-जम्बुद्वीपप्रज्ञप्तिः-द्वीपसागरप्रज्ञप्तिः-चन्द्रप्रज्ञप्तिः-सूर्यप्रज्ञप्ति रित्यादि । उत्कालिकश्चाप्यनेकावधम्, दशवैकालिकम्-कल्पकाकल्पकम्-क्षुल्लकल्पश्रुतम्-महाकल्पश्रुतम्-औपपातिकम्-राजप्रसेनकम्-जीवाभिगमः-प्रज्ञापना-महाप्रज्ञापना, इत्यादि । आवश्यकं षड्विधम्, सामायिकं चतुर्विंशतिस्तवः, वन्दनकम्, प्रतिक्रमणम्, कायोत्सर्गः, प्रत्याख्यानम्, इति-। तच्च-श्रुतज्ञानं मतिज्ञानपूर्वकमेव भवति-न तु मतिज्ञानम् श्रुतज्ञानपूर्वक मित्यवधेयम् ॥४७॥

उपासकदशांग (८) अन्तकृद्दशांग (९) अनुत्तरौपपातिक दशांग (१०) प्रश्नव्याकरणांग (११) विपाकश्रुतांग और (१२) दृष्टिवादांग ।

અંગબાહ્ય શ્રુતજ્ઞાન અનેક પ્રકાર કો છે । વહ હસ પ્રકાર હૈ-આવશ્યક ઓર આવશ્યક વ્યતિરિક્ત । આવશ્યક વ્યતિરિક્ત કે મોં દો મેદ હૈ-કાલિક ઓર ઉત્કાલિક । હનમેં સે કાલિક શ્રુત અનેક પ્રકાર કા હૈ-ઉત્તરાધ્યયન, દશા, કલ્પ, વ્યવહાર, નિશીથ, મહાનિશીથ, જમ્બુદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ, દ્વીપસાગર પ્રજ્ઞપ્તિ, ચન્દ્રપ્રજ્ઞપ્તિ, સૂર્યપ્રજ્ઞપ્તિ આદિ ઉત્કાલિક શ્રુત મોં અનેક પ્રકાર કા હૈ, જૈસે-દશવૈકાલિક, કલ્પિકા-કલ્પિક, ક્ષુલ્લકલ્પશ્રુત, મહાકલ્પશ્રુત, ઔપપાતિક, રાજપ્રસેનક, જીવાભિગમ, પ્રજ્ઞાપના, મહાપ્રજ્ઞાપના इत्यादि ।

आवश्यक श्रुत के छह प्रकार है-(१) सामायिक (२) चतुर्विंशति-

अन्तकृद्दशांग (८) अनुत्तरौपपातिकदशांग (१०) प्रश्नव्याकरणंग (११) विपाक श्रुतांग અને (૧૨) દૃષ્ટિવાદાંગ

અંગબાહ્ય શ્રુતજ્ઞાન અનેક પ્રકારનું છે તે આ પ્રમાણે અંગબાહ્ય પ્રથમ તો બે પ્રકારનું છે આવશ્યક અને આવશ્યકવ્યતિરિક્ત આવશ્યક વ્યતિરિક્તના પછી બે ભેદ છે કાલિક અને ઉત્કાલિક એમાંથી કાલિકશ્રુત અનેક પ્રકારના છે ઉત્તરાધ્યયન દશા, કલ્પ, વ્યવહાર, નિશીથ, મહાનિશીથ, જમ્બુદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ, દ્વીપસાગરપ્રજ્ઞપ્તિ, ચન્દ્રપ્રજ્ઞપ્તિ, સૂર્યપ્રજ્ઞપ્તિ આદિ ઉત્કાલિક સૂત્ર પછી અનેક પ્રકારના છે. જેવાકે--દશવૈકાલિક, કલ્પિકાકલ્પિક, ક્ષુલ્લકલ્પશ્રુત, મહાકલ્પશ્રુત ઔપપાતિક, રાજપ્રસેનિક, જીવાભિગમ, પ્રજ્ઞાપના મહાપ્રજ્ઞાપના इत्यादि

आवश्यकश्रुतना छ प्रकार छे (१) सामायिक, (२)चतुर्विंशतिस्तव (३)

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—પૂર્વ તાવત્-મતિશ્રુતઅવધિમતઃપર્યવકૈવલ્યજ્ઞાનભેદાત્ સમ્યગ્જ્ઞાનં પશ્ચવિધં ષતિપાદિતમ્, તત્ર મતિશ્રુતમ્-અવગ્રહેહાવાયધારણાભેદાત્- તદવાન્તરભેદાચ્ચ ષટ્ત્રિંશદધિકશતત્રયમિતં મરુપિતમ્ સમ્પત્તિ-શ્રુતજ્ઞાનં દ્વૈવિ- ધ્યેન મરુપયિતુમાહ—“સુચનાને દુચિહે, અંગપચિદ્દે-અંગવાિરેષ—” ઇતિ-। શ્રુતજ્ઞાનમ્-શ્રવતે ઇતિ શ્રુતમ્-શ્રવમાણશબ્દસ્વરૂપં, અવર્ણ વા-શ્રુતમ્-ભાવે ક્તઃ પ્રત્યયઃ, તત્ સમ્વન્ધિ-તદ્રૂપમ્ ના શ્રુતજ્ઞાનમ્ આગમરૂપમ્ જિનવચનં તીર્થકરોપદેશઃ આત્મોપદેશઃ આત્મવચનં ચોચવતે । તત્ત્વ-શ્રુતજ્ઞાનં મતિજ્ઞાનપૂર્વકં મત્તિ, ન તુ-

સ્તવ (૩) વન્દનક (૪) પ્રતિક્ષણ (૫) કાયોત્સર્ગ અને (૬) પ્રત્યાખ્યાન ।

યહ શ્રુતજ્ઞાન મતિજ્ઞાન પૂર્વક હી હોતા હે, અગર મતિજ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન પૂર્વક નહીં હોતા ॥૪૭॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—પહેલે મતિ, શ્રુત, અવધિ, મનઃપર્યવ ધૌર કેવલ કૈભેદ સે જ્ઞાન કે પાંચ પ્રકાર પ્રદર્શિત કિયુ ગયથે । તેમં સે મતિજ્ઞાન અવગ્રહ, ઈહા, અવાય ંર ધારણા કે ભેદ સે તથા અવાન્તર ભેદો સે ત્રીન સૌ છત્રીસ પ્રકાર કા હૈ, યહ સી પ્રતિપાદન કિયા ગયા । અવ શ્રુતજ્ઞાન કે દો ભેદો કા પ્રરુપના કરતે હૈ—

જો સુના જાય સો શ્રુત અર્થોત્ શબ્દ । અથવા સુનના શ્રુત કહલાતા હૈ । યહાં ભાવ કે અર્થ ં ‘કત’ પ્રત્યય હોને લ ‘શ્રુત’ શબ્દ નિષ્પન્ન હોતા હૈ । યહ શ્રુતજ્ઞાન આગમરૂપ જિન વચન, તીર્થકરોપદેશ, આત્મોપદેશ યા આત્મવચન સી કહલાતા હૈ ।

વન્દનક (૪) પ્રતિક્ષ (૫) કાયોત્સર્ગ અને (૬) પ્રત્યાખ્યાન.

આ શ્રુતજ્ઞાન મતિજ્ઞાનપૂર્વક જ થાય છે પરન્તુ મતિજ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાનપૂર્વક થતું નથી ॥ ૪૭ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—પહેલા મતિ, શ્રુત, અવધિ, મનઃપર્યવ અને કૈવળના લેદથી જ્ઞાનના પાંચ પ્રકાર પ્રદર્શિત કરવામાં આવ્યા હતા. તે પૈકી મતિજ્ઞાન અવગ્રહ, ઈહા, અવાય અને ધારણના લેદથી તથા અવાન્તર લેદથી ત્રણસો છત્રીસ પ્રકારના છે, એવું પણ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું. હવે શ્રુતજ્ઞાનના બે લેદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ.

જે સંલગાય તે શ્રુત અર્થોત્ શબ્દ. અથવા સંલગયું શ્રુત કહેવાય છે. આહી ભાવના અર્થમાં ‘કત’ પ્રત્યય હોવાથી શ્રુત શબ્દ નિષ્પન્ન થાય છે. આ શ્રુતજ્ઞાન આગમરૂપ જિનવચન, તીર્થકરોપદેશ, આત્મોપદેશ અથવા આત્મવચન પણ કહેવાય છે.

मतिज्ञानं श्रुतज्ञानपूर्वकम्—। उक्तञ्च तन्दिस्त्रे २४ सूत्रे—‘सहस्रं जेण सुयं न मई सुयपुविचया—’ इति मतिपूर्वं येन श्रुतम्—न मतिः श्रुतपूर्विका, इति—। तत्राऽङ्गप्रविष्टं खलु श्रुतज्ञानं द्वादशविधं भवति तद्यथा—आचाराङ्गम् १ सूत्रकृताङ्गम् २ स्थानाङ्गम् ३ समवायाङ्गम् ४ व्याख्याप्रज्ञप्तिः ५ ज्ञातधर्मकथा ६ उपासकदशाङ्गम् ७ अन्तकृदशाङ्गम् ८ अनुत्तरोपपातिकदशाङ्गम् ९ प्रश्नव्याकरणम् १० विपाकश्रुताङ्गम् ११ दृष्टिवादश्च १२ अङ्गब्राह्मणश्च प्रथमं तावत् द्विविधं भवति—आवश्यकम् १ आवश्यकव्यतिरिक्तञ्च २ तत्राऽऽवश्यकं षड्विधम् चतुर्विंशतिस्तवः, वन्दनम्, प्रतिक्रमणम्, कायोत्सर्गः प्रत्याख्यानश्चैव ? आवश्यक व्यतिरिक्तं द्विविधम्, कालिकम्—उत्कालिकञ्चेति । तत्र—कालिकम्—अनेकावयवम् तद्यथा

श्रुतज्ञान मतिज्ञानपूर्वक होता है, मतिज्ञान श्रुतज्ञानपूर्वक नहीं होता । नन्दीसूत्र के २४ वें सूत्र में कहा है— श्रुतज्ञान मतिज्ञानपूर्वक होता है, मगर मतिज्ञान ज्ञानपूर्वक नहीं होता ।

अंगप्रविष्ट श्रुतज्ञान बारह प्रकार का है—आचारांग, सूत्रकृतांग, स्थानांग, समवायांग, व्याख्याप्रज्ञप्ति, ज्ञातधर्मकथा, उपासकदशांग, अनुत्तरोपपातिकदशांग, प्रश्नव्याकरण, विपाकश्रुतांग और दृष्टिवाद या दृष्टिवाद ।

अंगब्राह्मण दो प्रकार का है—आवश्यक और आवश्यक व्यतिरिक्त । आवश्यक के छह भेद हैं—(१) सामायिक (२) चतुर्विंशतिस्तव (३) वन्दनक (४) प्रतिक्रमण (५) कायोत्सर्ग और (६) प्रत्याख्यान । आवश्यक व्यतिरिक्त दो प्रकार का है—कालिक और उत्कालिक । कालिक

श्रुतज्ञान मतिज्ञानपूर्वक थाय छे मतिज्ञान श्रुतज्ञानपूर्वक थतुं नथी नन्दी सूत्रना २४वां सूत्रमां कहुं छे श्रुतज्ञान मतिज्ञानपूर्वक थाय छे, परन्तु मतिज्ञान श्रुतपूर्वक थतु नथी.

अंगप्रविष्ट श्रुतज्ञान बार प्रकारतुं छे—आचारांग, सूत्रकृतांग, स्थानांग, समवायांग, व्याख्याप्रज्ञप्ति, ज्ञातधर्मकथांग, उपासकदशांग, अनुत्तरोपपातिकदशांग, प्रश्नव्याकरण, विपाकश्रुतांग, अने दृष्टिवाद अंगर दृष्टिवाद.

अंगब्राह्मण जे प्रकारतुं छे. आवश्यक अने आवश्यकव्यतिरिक्त आवश्यकना छे लेह छे—(१) सामायिक (२) चतुर्विंशतिस्तव (३) वन्दन (४) प्रतिक्रमण (५) कायोत्सर्ग अने (६) प्रत्याख्यान. आवश्यकव्यतिरिक्त जे प्रकारना छे—कालिक अने उत्कालिक तेनां कालिक अनेक प्रकारना छे जेभे—उत्तराध्ययन दशा कदप

ઉત્તરાધ્યયનાનિ દશા-કલ્પ:-વ્યવહાર:-નિશીથમ્-મહાનિશીથમ્=જમ્બૂદ્વીપ-
પ્રજ્ઞપ્તિ:-દ્વીપસાગરપ્રજ્ઞપ્તિ:-ચન્દ્રપ્રજ્ઞપ્તિ:-સૂર્યપ્રજ્ઞપ્તિ:-શ્લુદ્રિકા-વિમાનપ્રવિભક્તિ:-
મહલ્લિકા-વિમાનપ્રવિભક્તિ:-અંગચૂલિકા-વક્રચૂલિકા-વિવાહચૂલિકા-અરુણો-
પપાતઃ વરુણોપપાતઃ-ગરુડોપપાતઃ-ધરણોપપાતઃ-વૈશ્રવણોપપાતઃ-વેલંધરોપપાતઃ
દેવેન્દ્રોપપાતઃ-ઉત્થાનસૂત્રમ્ - સમુત્થાનસૂત્રમ્-નિરયાવલિકા-કલ્પિકા-કલ્પાવ-
તંસિકા-પુષ્પિકા-પુષ્પચૂલિકા-આદિ । ઉત્કાલિકશ્ચાપિ-અનેકવિધમ્, તથા
દશવૈકાલિકમ્ - કલ્પિકાકલ્પિકમ્-શુલ્લકલ્પશ્રુતમ્-મહાકલ્પશ્રુતમ્-ઉપપાતિ-
કમ્-રાજપ્રજ્ઞનીયકમ્-જીવાભિગમઃ-પ્રજ્ઞાપના-મહાપ્રજ્ઞાપના ઇત્યાદિ । ઉક્તશ્ચ-
સ્થાનાંગે ૨ સ્થાને ૧ ઉદ્દેશકે ૭૧ સૂત્રે-‘સુચનાળે દુવિદ્યે પળ્લન્તે, તં જહા-
અંગપ્રવિદ્યે ચેવ, અંગચાહિરે ચેવ’ ઇતિ, શ્રુતજ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તથા-અંગ-

અનેક પ્રકાર કા હૈ, યથા-ઉત્તરાધ્યયન, દશા, કલ્પ, વ્યવહાર, નિશીથ, મહાનિશીથ, જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ, દ્વીપસાગર, ચન્દ્રપ્રજ્ઞપ્તિ, સૂર્યપ્રજ્ઞપ્તિ, શ્લુદ્રિકાવિમાનપ્રવિભક્તિ, મહલ્લિકાવિમાનપ્રવિભક્તિ, અંગચૂલિકા, વક્રચૂલિકા, વિવાહચૂલિકા, અરુણોપપાત, વરુણોપપાત, ગરુડોપપાત, ધરણોપપાત, વૈશ્રવણોપપાત, વેલંધરોપપાત, દેવેન્દ્રોપપાત, ઉત્થાનસૂત્ર, સમુત્થાનસૂત્ર, નિરયાવલિકા, કલ્પિકા, કલ્પાવતંસિકા, પુષ્પિકા, પુષ્પચૂલિકા ઇત્યાદિ ।

ઉત્કાલિક શ્રુત મ્હી અનેક પ્રકાર હૈ, યથા-દશવૈકાલિક, કલ્પિકા-કલ્પિક, શુલ્લકલ્પશ્રુત, મહાકલ્પશ્રુત, ઉપપાતિક, રાજપ્રજ્ઞનીય, જીવાભિ-ગમ, પ્રજ્ઞાપના, મહાપ્રજ્ઞાપના ઇત્યાદિ । સ્થાનાંગ સૂત્ર કે દ્વિતીય સ્થાન કે પ્રથમ ઉદ્દેશક કે સૂત્ર ૭૧ વેં મેં કહા હૈ-‘શ્રુતજ્ઞાનં દૌ પ્રકાર કા કહા

વ્યવહાર, નિશીથ, મહાનિશીથ, જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ દ્વીપસાગરપ્રજ્ઞપ્તિ ચન્દ્રપ્રજ્ઞપ્તિ સૂર્યપ્રજ્ઞપ્તિ, શ્લુદ્રિકાવિમાનપ્રવિભક્તિ, મહલ્લિકાવિમાનપ્રવિભક્તિ, અંગચૂલિકા, વક્રચૂલિકા વિવાહચૂલિકા. અરુણોપપાત, વરુણોપપાત, ગરુડોપપાત, ધરણોપપાત, વૈશ્રવણોપપાત વેલંધરોપપાત દેવેન્દ્રોપપાત, ઉત્થાનસૂત્ર, સમુત્થાનસૂત્ર, નિરયા-વલિકા કલ્પિકા. કલ્પાવતંસિકા, પુષ્પિકા, પુષ્પચૂલિકા ઇત્યાદિ

ઉત્કાલિક સૂત્ર પણ અનેક પ્રકારના છે જેવાકે દશવૈકાલિક, કલ્પિકા-કલ્પિક, શુલ્લકલ્પશ્રુત, મહાકલ્પશ્રુત, ઉપપાતિક, રાજપ્રજ્ઞનીય, જીવાભિગમ, પ્રજ્ઞાપના મહાપ્રજ્ઞાપના ઇત્યાદિ. સ્થાનાંગસૂત્રના દ્વિતીયસ્થાનના પ્રથમ ઉદ્દેશકના ૭૧માં સૂત્રમાં કહ્યું છે

શ્રુતજ્ઞાનં બે પ્રકારના છે જે આ પ્રમાણે છે-અંગપ્રવિષ્ટ અને અંગબાહ્ય

प्रविष्टैव, अङ्गबाह्यैव, इति । नन्दिसूत्रे-४४ सूत्रे चोक्तम्—‘से किं तं अंग-
प्रविष्टं ? दुर्बालसविहं पण्णत्तम् तं जहा-आधारो ? सुयगडेर ठाणं३
समवाओ४ विवाहपण्णत्ती५ नायाधम्मकहाओ६ उघासगदसाओ७
अंतगडदसाओ८ अणुत्तरोववाहयदसाओ९ पण्हावागरणाइं१० विवाग-
सुये११ दिट्ठिवाओ१२ इति । अथ किं तत्-अङ्गप्रविष्टम् ? द्वादशविधं
प्रज्ञप्तम् तद्यथा-आचारः-सूत्रकृतम् स्थानम् समवायः व्याख्याप्रज्ञप्तिः
ज्ञाताधर्मकथा-उपासकदशा-अन्तकृदशा-अनुत्तरोपपातिकदशा प्रश्नव्याकरणम्
विपाकश्रुतम् दृष्टिवादः इति । तदग्रे च नन्दिसूत्रे ४४ सूत्रे एवोक्तम्—‘अंगबा-
हिरं दुर्विहं पण्णत्तं, तं जहा-आवस्सयं च, आवस्सयवहरित्तं च, से
किं तं आवस्सयं ? आवस्सयं छव्विहं पण्णत्तं, तं जहा-सामाहयं-चउ-
वीसत्थवो वंदणयं पडिक्कमणं काउस्सगो पच्चक्खाणं सेत्तं आव-
स्सयं । से किं तं आवस्सयवहरित्तं ? आवस्सयवहरित्तं दुर्विहं पण्णत्तं

है, वह इस प्रकार है-अंगप्रविष्ट और अंगबाह्य ।’

नन्दी सूत्र के सूत्र ४० में कहा है-अंगप्रविष्ट श्रुत कितने प्रकार
का है ? (उत्तर-) बारह प्रकार का है, यथा-(१) आचार (२) सूत्रकृत
(३) स्थान (४) समवाय (५) व्याख्याप्रज्ञप्ति (६) ज्ञातधर्मकथा (७)
उपासकदशा (८) अन्तकृदशा (९) अनुत्तरोपपातिक (१०) प्रश्नव्याकरण
(११) विपाकश्रुत (१२) दृष्टिवाद ।

इससे आगे नन्दीसूत्र में ही सूत्र ४४ में कहा है-अंगबाह्यश्रुत दो
प्रकार का है-आवश्यक और अवश्यक व्यतिरिक्त । आवश्यक के कितने
भेद हैं ? (उत्तर-) आवश्यक के छह भेद हैं-सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव,
वन्दनक, प्रतिक्रमण, कायोत्सर्ग और प्रत्याख्यान । आवश्यक व्यतिरिक्त
के कितने भेद हैं ? (उत्तर-) आवश्यक व्यतिरिक्त के दो भेद हैं, यथा-

नन्दीसूत्रना ४० मां सूत्रमां इहं छे-अंगप्रविष्ट श्रुत केटला प्रकारना
छे ? उत्तर आर प्रकारना छे (१) आचार (२) सूत्रकृत (३) स्थान (४) सम-
वाय (५) व्याख्याप्रज्ञप्ति (६) ज्ञाताधर्मकथा (७) उपासकदशा (८) अन्तकृदशा
(९) अनुत्तरोपपातिक (१०) प्रश्नव्याकरण (११) विपाकश्रुत अने (१२) दृष्टिवाद.

आथी आगण नन्दीसूत्रमां ४४ मां सूत्रमां इहं छे-अंगबाह्य त
छे प्रकारना छे-आवश्यक अने आवश्यकव्यतिरिक्त. आवश्यकना केटला भेद छे ?

उत्तर-आवश्यकना छ भेद छे-सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव, वंदना प्रतिक्रमण
कायोत्सर्ग अने प्रत्याख्यान. आवश्यकव्यतिरिक्तना केटला भेद छे ? उत्तर-आव-

चंदपण्णत्ती खुड्डिआ विमानपविभत्ती, महल्लिया विमानपवि-
भत्ती अंगचूलिया वगचूलिया विवाहचूलिआ अरुणोववाए वरुणो
ववाए गरुडोववाए धरणोववाए वैश्रमणोववाए वेलंधरोववाए देविंदो-
ववाए उद्धानसुए नागपरिआवणिआओ, निरयाचलियाओ कप्पिआओ
कप्पवडिंसिआओ पुण्डिआओ पुष्पचूलिआओ वण्णीदसाओ एवमाह-
याइं चउरासीइं पहन्नगलहसाहं ॥४७॥

मूलम्-ओहिनाणे दुविहे, सवपच्चय खओवसमनिमित्त
भेयओ ॥४८॥

छाया-‘अवधिज्ञानं’ द्विविधम्, भवप्रत्ययक्षयोपशमनिमित्तभेदतः ॥४८॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वं तान्त् यथाक्रमं मतिज्ञानं श्रुतज्ञानञ्च सविस्तरं प्रज्ञा-
पितम्, सम्प्रति-क्रमप्राप्तमवधिज्ञानमनेकविधत्वेन प्ररूपयितुमाह-‘ओहिनाणे

भाषित, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, द्वीपसागरप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, (सूर्यप्रज्ञप्ति),
क्षुल्लिका विमानप्रविभक्ति, महाविमानप्रविभक्ति अंगचूलिका, वग-
चूलिका विवाहचूलिका, अरुणोपपात, वरुणोपपात, गरुडोपपात, धरणो-
पपात, वैश्रमणोपपात, वेलन्धरोपपात, देवेन्द्रोपपात, उत्थानश्रुत, नाग-
परियावणिआ, निरयाचलिका, कलिका, कल्पावतंसिका, पुण्डिका, पुष्प-
चूलिका, वृषणीदसा, इत्यादि चौगली हजार प्रकीर्णक होते हैं ॥४७॥

‘ओहिनाणे दुविहे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ-अवधिज्ञान दो प्रकार का है-भवप्रत्यय और क्षयोपशम-
निमित्तक ॥४८॥

तत्त्वार्थदीपिका-पहले विस्तार के साथ मतिज्ञान और श्रुतज्ञान
की प्ररूपणा की गई, अब क्रमप्राप्त अवधिज्ञान के अनेक भेदों का निरू-
पण करते हैं-

द्वीपसागरप्रज्ञप्ति चन्द्रप्रज्ञप्ति सूर्यप्रज्ञप्ति क्षुल्लिका विमान प्रविभक्ति महाविमान
प्रविभक्ति अंगचूलिका वगचूलिका, विवाहचूलिका अरुणोपपात वरुणोपपात
गरुडोपपात धरणोपपात वैश्रमणोपपात वेलंधरोपपात देवेन्द्रोपपात उद्धानसूत्र
नागपरिआवणिआ निर्यावलिआ कलिका कल्पावतंसिका पुण्डिका पुष्पचूलिका.
वृषणीदसा वगेरे चौर्याशी हजार प्रकीर्णक होय छे. ॥ ४७ ॥

‘ओहिनाणे दुविहे’ इत्यादि

सूत्रार्थ-अवधिज्ञान दो प्रकारनुं छे भावप्रत्यय अने क्षयोपशमनिमित्तक ॥४८॥

तत्त्वार्थदीपिका-पहलां सविस्तर मतिज्ञान अने श्रुतज्ञाननी प्ररूपणा
करवायां आवी. दुवे क्रमप्राप्त अवधिज्ञानना अनेक भेदोनुं निरूपण करीये छीये.

હુચિહે' इत्यादि । अवधिज्ञानम्-पूर्वोक्तस्वरूपं द्विविधं भवति तस्य खलु अवधि-
ज्ञानस्य द्विविधत्वे हेतुमाह-भवप्रत्ययक्षयोपशमनिमित्तभेदतः, भवः प्रत्ययो-
निमित्तं यस्य स भवप्रत्ययः सवहेतुकोऽवधिः । एवं क्षयश्च-उपशमश्चेति क्षयोपशमौ
तौ निमित्तं यस्य स क्षयोपशमनिमित्तः खलु अवधिरुच्यते तत्र भवस्तावत्
आयुर्नाम कर्मोदयनिमित्तक आत्मनः पर्यायः तन्निमित्तकं खल्ववधिज्ञानं भव-
प्रत्ययिकं देवानां-नारकाणाञ्च भवति । एतस्मिन्-अवधिज्ञानवरणस्य देशघातिस्पर्द्ध-
कानामुदये सति सर्वघातिस्पर्द्धकानामुदयाभावः क्षयः, तथाविधानमेव स्पर्द्धकाना-

पूर्વોક્ત સ્વરૂપ ચાલા અવધિજ્ઞાન દો પ્રકાર કા હૈ । અવધિજ્ઞાન કે દો પ્રકાર હોનેકા કારણ હૈ ભવરૂપ નિમિત્ત ઔર ક્ષયોપશમરૂપ નિમિત્ત જિસ અવધિજ્ઞાન કા કારણ ભવ હો વહ ભવપ્રત્યય ઔર જિત્તકા કારણ ક્ષયોપશમ હો વહ ક્ષયોપશમનિમિત્તક કહલાતા હૈ । આયુકર્મ કે ઉદય સે ઉત્પન્ન હોને વાલે પર્યાય કો ભવ કહતે હૈ । ભવ જિત્તમેં બાહ્ય કારણ હો વહ અવધિજ્ઞાન ભવપ્રત્યય કહલાતા હૈ । યહ દેવોં ઔર નારકોં કો હી હોતા હૈ, ક્યોંકિ દેવભવ ઔર નારકભવ કે નિમિત્ત સે ઉસકી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ । જો અવધિજ્ઞાન તપશ્ચરણ આદિ ગુણોં કે યોગ સે અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મ કા ક્ષયોપશમ હોને પર ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ ક્ષયોપશમનિમિત્તક કહલાતા હૈ । યહ અવધિજ્ઞાન મનુષ્ય ઔર પશ્ચેન્દ્રિય તિર્યંચોં કો હોતા હૈ ।

અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મ કે દેશઘાતિ સ્પર્ધકોં કા ઉદય ઉદયાગત સર્વઘાતિ સ્પર્ધકોં કા ક્ષય ઔર આગે ઉદય મેં આને વાલે સર્વઘાત

પર્વોક્ત સ્વરૂપવાળું અવધિજ્ઞાન બે પ્રકારનું છે. અવધિજ્ઞાનનાં બે પ્રકાર હોવાનું કારણ છે. ભવરૂપનિમિત્ત અને ક્ષયોપશમરૂપનિમિત્ત બે અવધિજ્ઞાનનું કારણ ભવ છે તે ભવપ્રત્યય અને જેનું કારણ ક્ષયોપશમ હોય તે ક્ષયોપશમનિમિત્તક કહેવાય છે. આયુષ્યકર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થનાર પર્યાયને ભવ કહે છે. ભવ જેમાં બાહ્ય કારણ હોય તે અવધિજ્ઞાન ભવપ્રત્યય કહેવાય છે. આ દેવો અને નારકોને જ થાય છે કારણકે દેવભવ અને નારકભવના નિમિત્તથી તેની ઉત્પત્તિ થાય છે. જે અવધિજ્ઞાન તપશ્ચર્યા આદિ ગુણોના યોગથી અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મનો ક્ષયોપશમ થવાથી ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્ષયોપશમનિમિત્તક કહેવાય છે. આ અવધિજ્ઞાન મનુષ્યો અને તિર્યંચપંચેન્દ્રિયોને થાય છે.

અવધિજ્ઞાનાવરણકર્મનાં દેશઘાતી સ્પર્ધકોનો ઉદય, ઉદયાગત સર્વઘાતી સ્પર્ધકોનો ક્ષય અને આગળ ઉપર ઉદયમાં આવનારા સર્વઘાતી સ્પર્ધકોનો

મનુદયપ્રાપ્તાનાં સદવસ્થા-ઉપશમઃ, સ્પર્દકશ્ચ-કર્મપુદ્ગલશક્તીનાં ક્રમિક વૃદ્ધિ-
 હાસરૂપમ્ તથાવિધ ક્ષયોપશમનિમિત્તક્રમવધિજ્ઞાનં ષડ્વિધં દેવનારકમિન્નાનામ્
 ઉપશાન્તક્ષીણકર્મણાં મનુષ્યપશ્ચેન્દ્રિય-તિર્યગ્ચોનિકાનાં ભવતિ તથા ચ પક્વાન્નાના
 મવધિજ્ઞાનાવરણીયકર્મણાં ક્ષયેણ વિપ્રાક્રમપ્રાપ્તાનામવધિજ્ઞાનાવરણીયકર્મણામુપશમેન
 ચોત્પચ્ચમાનમવધિજ્ઞાનં ક્ષાયોપશમિકં વ્યપદિશ્યતે । એવશ્ચ-એકં ભવપ્રત્યયિકં ૧
 ક્ષાયોપશમિકં ષડ્વિધમ્ આનુગામિકમ્ ૨ અનાનુગામિકમ્ ૩ વર્ધમાનમ્-૪
 હીયમાનમ્ ૫ પ્રતિપાતિ ૬ અપ્રતિપાતિ ચ ૭ इत्येवं सप्तविधं तावद् सर्वमवधि-
 ज्ञानमवसेयम् ॥ ४८ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયક્રિયા:-પૂર્વે સ્વલુ ક્રમપ્રાપ્ત સમ્યગ્જ્ઞાનવિશેષરૂપં મતિજ્ઞાન-શ્રુત
 જ્ઞાનશ્ચ સચિસ્તરં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ-ક્રમપ્રાપ્તમવધિજ્ઞાનં દ્વિવિધત્વેન પ્રતિપાદયિ-
 તુમાહ-‘ઓહિનાણે દુષ્કિહે, અવપચ્ચય-સ્વઓવસમનિમિત્તમેયઓ’ इति
 અવધિજ્ઞાનં તાવત્ પૂર્વોક્તસ્વરૂપં દ્વિવિધં ભવતિ તસ્ય દ્વિવિધત્વે હેતુમાહ-ભવ-
 પ્રત્ય ક્ષયોપશમનિમિત્તમેયતઃ । તન્ન-ભવઃ આયુર્નામ કર્મોદયનિમિત્તક આત્મનઃ
 પર્યાયઃ તથાવિધા ભવઃ પ્રત્યયઃ હેતુસ્ય તત્-ભવપ્રત્યયમ્ અવધિજ્ઞાનમ્ । एवं क्षयश्चो

સ્પર્દકોં કા ઉપશમ હો તથ અવધિજ્ઞાન કા ક્ષયોપશમ હોતા હૈ । ક્ષયો-
 પશમ અવધિજ્ઞાન છહ પ્રકાર કા હૈ-(૧) આનુગામિક (૨) અનાનુગામિક
 (૩) વર્ધમાન (૪) હીયમાન (૫) પ્રતિપાતિ ઓર (૬) અપ્રતિપાતી ॥ ૪૮ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયક્રિયા-પહેલે સમ્યગ્જ્ઞાન વિશેષ મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન
 કી વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપણા કી ગઈ, અવ ક્રમપ્રાપ્ત અવધિજ્ઞાન કે દો ભેદો
 કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ-

પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ વાલા અવધિજ્ઞાન દો પ્રકાર કા હૈ- ભવપ્રત્યય ઓર
 ક્ષયોપશમ પ્રત્યય । ઉસકે દો ભેદ હોને કે કારણ યહ હૈ કિ વહ ભવ
 રૂપ નિમિત્ત સે ઓર ક્ષયોપશમરૂપ નિમિત્ત સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ । આયુ-
 કર્મ કે ઉદય સે હોને વાલા આત્મા કા પર્યાય અવ કહલાતા હૈ । वह

ઉપશમ થાય ત્યારે અવધિજ્ઞાનનો ક્ષયોપશમ થાય છે. ક્ષયોપશમનિમિત્તક અવ
 ધિજ્ઞાન છ પ્રકારનું છે (૧) આનુગામિક (૨) અનાનુગામિક (૩) વર્ધમાન
 (૪) હીયમાન (૫) પ્રતિપાતી અને (૬) અપ્રતિપાતિ. ॥ ૪૮ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયક્રિયા-પહેલા સમ્યગ્જ્ઞાન વિશેષ મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનની
 વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપણા કરવામાં આવી હવે ક્રમપ્રાપ્ત અવધિજ્ઞાનનાં બે ભેદોની
 પ્રરૂપણા કરીએ છીએ પૂર્વોક્ત સ્વરૂપવાળું અવધિજ્ઞાન બે પ્રકારનું છે ભવ
 પ્રત્યય અને ક્ષયોપશમપ્રત્યય. જેના બે ભેદ હોવાનું કારણ એ છે કે ભવરૂપ
 નિમિત્તથી અને ક્ષયોપશમ રૂપનિમિત્તથી ઉત્પન્ન થાય છે. આયુષ્યકર્મના
 ઉદયથી થનારો આત્માનો પર્યાય ભવ કહેવાય છે. આ ભવ જેમાં આદ્ય કારણ

પશમથેતિ ક્ષયોપશમૌ તૌ નિમિત્તં यस્ય તત્ ક્ષયોપશમનિમિત્તસ્ય અવધિજ્ઞાનં પદ્ધિવિધં
 મેવતિ । તત્ર ક્ષયસ્તાવત્-અવધિજ્ઞાનાવરણસ્ય દેશઘાતિ સ્પર્ધકાના મુદયેસતિ સર્વ-
 ઘાતિ સ્પર્ધકાનામુદયાભાવરૂપઃ । ઉપશમસ્તુ-તથાવિધાનામેવ સ્પર્ધકાનામુદય-
 પ્રાપ્તાનાં સદવસ્થારૂપઃ । સ્પર્ધકશ્ચ કર્મપુદ્ગલશક્તીનાં ક્રમિકવૃદ્ધિહાસરૂપં
 બોધ્યમ્ તથાચૈકં ભવપ્રત્યયિકમ્ ૧ ક્ષયોપશામિકં પદ્ધિવિધમ્ । આનુગામિકમ્ ૨
 અનાનુગામિકમ્ ૩ વર્દમાનમ્ ૪ હીયમાનમ્ ૫ પ્રતિપાતિ ૬ અપ્રતિપાતિ ૭ ચેત્યેવં
 સર્વં સપ્તવિધં તાવત્ અવધિજ્ઞાનમવસેયમ્ । તત્ર-ભવપ્રત્યયિકમવધિજ્ઞાનં દેવાનાં
 નારકાણાશ્ચ મવતિ । ક્ષયોપશમનિમિત્તકશ્ચ-પદ્ધિવિધમવધિજ્ઞાનં મનુષ્યાણાં પશ્ચે-

ભવ જિસમેં બાહ્ય કરણ હો વહ અવધિજ્ઞાન અવપ્રત્યય કહલાતા હૈ ।
 જિસ અવધિજ્ઞાન મેં ક્ષયોપશમ હી પ્રધાન કારણ હો વહ ક્ષયોપશમ-
 નિમિત્તક યા ક્ષયોપશમ પ્રત્યય કહલાતા હૈ । ક્ષયોપશમનિમિત્તક અવધિ
 જ્ઞાન છહ પ્રકાર કા હૈ ।

અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મ કે દેશઘાતક સ્પર્ધકોં કા ઉદય હો, ઉદય મેં
 આયે હુહ સર્વઘાતક સ્પર્ધકોં કા ક્ષય હો ઓર આગે ઉદય મેં આને
 બાલે સ્પર્ધકોં કા ઉપશમ હો, તથ અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મ કા ક્ષયોપશમ
 હોતા હૈ ।

ક્ષયોપશમનિમિત્તક અવધિજ્ઞાન કે છહ ભેદ હૈં-(૧) આનુગામિક
 (૨) અનાનુગામિક (૩) વર્દમાન (૪) હીયમાન (૫) પ્રતિપાતિ ઓર (૬)
 અપ્રતિપાતિ । इन भेदों में यदि अवप्रत्यय को सम्मिलित कर दिया
 जाय तो सान भेद कहे जा सकते हैं ।

ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન દેવોં ઓર નારકોં કો હોતા હૈ । ક્ષયો-
 પશમનિમિત્તક ઉન સંજી મનુષ્યોં ઓર પંચેન્દ્રિય તિર્યચોં કો હોતા હૈ

હોય તે અવધિજ્ઞાન ભવ પ્રત્યય કહેવાય છે. જે અવધિજ્ઞાનમાં ક્ષયોપશમ
 ન પ્રધાન કારણ હોય તે ક્ષયોપશમનિમિત્તક અથવા ક્ષયોપશમપ્રત્યય કહેવાય
 છે. ક્ષયોપશમનિમિત્તક અવધિજ્ઞાન છ પ્રકારનાં છે.

અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મના દેશઘાતક સ્પર્ધકોના ઉદય થાય, ઉદયમાં આવેલા
 સર્વઘાતક સ્પર્ધકોના ક્ષય થાય અને આગળ ઉપર ઉદયમાં આવનારા સ્પર્ધકોના
 ઉપશમ થાય ત્યારે અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મનો ક્ષય થાય છે

ક્ષયોપશમનિમિત્તક અવધિજ્ઞાનનાં છ ભેદ છે (૧) આનુગામિક (૨)
 અનાનુગામિક (૩) વર્ધમાન (૪) હીયમાન (૫) પ્રતિપાતી અને (૬) અપ્રતિપાતી
 આ ભેદોમાં જે ભવ પ્રત્યયને મેળવી દેવામાં આવે તેો સાત ભેદ કહી શકાય.

ભવ પ્રત્યયક અવધિ જ્ઞાન દેવો અને નારકોને થાય છે ક્ષયોપશમનિમિત્તક
 તે સંજી મનુષ્યો અને તીર્થંચ પંચેન્દ્રિયોને થાય છે. કે જેઓ અવધિજ્ઞાના-

ન્દ્રિયતિર્યગ્ચોનિકાનાશ્ચોપશાન્ત ક્ષીણકર્મણાં ગત્તીતિભાવઃ । તથા ચ-૧૬૫૧-
અવધિજ્ઞાનાવરણીય કર્મણાં ક્ષયેણ, વિપાકમણાપ્તાનામ્ અવધિજ્ઞાનાવરણીય
કર્મણામુપશમેન ચોત્પચમાનમવધિજ્ઞાનં ક્ષાયોપશમિકં વ્યપદિશ્યતે । ઉક્તશ્ચ
સ્થાનાંગે ૨ સ્થાને ૧ ઉદ્દેશકે ૭૧ સૂત્રો-‘દોષહં ભવપ્રત્યયપણ્ણત્તે, તં જહા
દેવાણંચેવ, નેરઙ્ગાણં ચેવ’ ઇતિ । દ્વયોર્ભવપ્રત્યયિકઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, દેવાનાશ્ચેવ-નાર-
કાણાશ્ચૈવ, ઇતિ । નન્દીસૂત્રો ચોક્તમ્-‘સે કિં તં ભવપ્રત્યયપણ્ણત્તે ? દુષ્ણં, તં
જહા-દેવાણચ નેરઙ્ગાણચ’ ઇતિ, અથ કિં તત્ ભવપ્રત્યયિકમ્ ? દ્વયોઃ
તથા-દેવાનાશ્ચ નેરઙ્ગાણાશ્ચ ઇતિ, । પુનઃસ્થાનાંગે ૨ સ્થાને ૧ ઉદ્દેશકે
૭૧ સૂત્રો-‘દોષહં સ્વઓવસમિષ્ણે પણ્ણત્તે તં જહા-સણુસ્સાણં ચેવ પંચિન્દિ-

જિન્હોને અવધિજ્ઞાનાવરણ કર્મ કા ક્ષયોપશમ કિયા હો । યહાં યહ ધ્યાન
રચના ચાહિયે કિ ભવપ્રત્યય અવધિજ્ઞાન કે લિયે મી ક્ષયોપશમ હોના
અનિવાર્ય હૈ, કયોંકિ અવધિજ્ઞાન ક્ષયોપશમિક ભાવોં મેં પરિણત હૈ,
અતઃૈવ ક્ષયોપશમ કે વિના ઉસકી ઉત્પત્તિ નહીં હો સકતી, ફિર મી
ઉસે ભવપ્રત્યય કહને કા કારણ યહ હૈ કિ ભવ અર્થાત્ દેવભવ ઓર
નરકભવ કા નિમિત્ત પાકર અવધિજ્ઞાન કા ક્ષયોપશમ અવશ્ય હો જાતા
હૈ । ઇસ પ્રકાર બાહ્ય કારણ કી પ્રધાનતા સે ભવપ્રત્યય કહા હૈ ।

સ્થાનાંગસૂત્ર દ્વિતીય સ્થાન, પ્રથમ ઉદ્દેશક કે ૭૧ વેં સૂત્ર મેં કહા હૈ-
‘દેવ ઓર નારક ઇન દો પ્રકાર કે જીવોં કો ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન
હોતા હૈ । નન્દીસૂત્ર મેં મી કહા હૈ-‘ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન કિસે
હોતા હૈ ? દો કો હોતા હૈ-દેવોં ઓર નારકોં કો પુનઃ સ્થાનાંગસૂત્ર
કે દ્વિતીય સ્થાનક, પ્રથમ ઉદ્દેશક કે ૭૧ વેં સૂત્ર મેં કહા હૈ-દો પ્રકાર

પરણુ કર્મનો ક્ષયોપશમ કર્યો હોય અત્રે એ ધ્યાનમાં રાખવું જોઈએ કે ભવપ્રત્યય
અવધિજ્ઞાન માટે પણ ક્ષયોપશમ થવું અનિવાર્ય છે. કારણકે અવધિજ્ઞાન ક્ષયો-
પશમિક ભાવોમાં પરિણત છે. આથી ક્ષયોપશમ વગર તેની ઉત્પત્તિ થઈ
શકતી નથી, તે પણ તેને ભવપ્રત્યય કહેવાનું કારણ એ છે કે ભવ અર્થાત્
દેવભવ અને નરકભવનું નિમિત્ત પામીને અવધિજ્ઞાનનો ક્ષયોપશમ અવશ્ય જ
થઈ જાય છે. આ રીતે બાહ્ય કારણની પ્રધાનતાથી એને ભવપ્રત્યય કહેલ છે.

સ્થાનાંગસૂત્ર દ્વિતીય સ્થાન પ્રથમ ઉદ્દેશકના ૭૧માં સૂત્રમાં કહ્યું છે “દેવ
અને નારક આ બંને પ્રકારના જીવોને ભવ પ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન થાય છે” નન્દી-
સૂત્રમાં પણ કહ્યું છે ભવપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન કેને થાય છે ? દેવોને અને નારકોને
એમ બેને થાય છે. પુનઃ સ્થાનાંગ સૂત્રમાં દ્વિતીય સ્થાનક પ્રથમ ઉદ્દેશકના ૭૧ માં

યતિરિક્ત્વ જોણિયાણં ચેવ' હિતિ દ્વયોઃ ક્ષાયોપશમિકઃ પ્રજ્ઞતઃ, તદ્વથા-મનુ-
 વ્યાણાશ્ચૈવ પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોત્તિકાનાશ્ચૈવ, હિતિ । તદગ્રે ચ સ્થાનાઙ્ગે ૬ સ્થાને
 ૫૨૬ સૂત્રે ચોક્તમ્-‘છવિવદે ઓહિનાણે પળ્લન્તે તં જહા=અણુગામિ ૧
 અણુગામિ ૨ વદમાણ ૩ હીયમાણ ૪ પડિવાતી ૫ અપડિવાતી’
 હિતિ, પદ્ધવિધમવધિજ્ઞાનં પ્રજ્ઞમ્, તદ્વથા-આનુગામિકમ્ ૧ અનાનુગામિકમ્ ૨
 વર્દમાનમ્ ૩ હીયમાનમ્ ૪ પ્રતિપાતિ ૫ અપ્રતિપાતિ ૬ હિતિ । એવં નન્દિસૂત્રે
 ૮ સૂત્રે ચોક્તમ્-‘કે કિં તં સ્વાઓવસમિઅં ? સ્વાઓવસમિઅં કુળ્હં તં જહા
 =મણુસ્થાનય-પંચિન્દ્રિયનિરિક્ત્વજોણિયાણય. કો હેઝ સ્વાઓવસમિઅં ?
 સ્વાઓવસમિઅં તથાવરણિજ્ઞાણં કર્મણાં ઉદિણ્ણાણં સ્વર્ણં અણુદિણ્ણાણં
 ઉવસમેણં ઓહિનાણં રુસુપ્પજ્જહ’ હિતિ અથ કિં તત્ ક્ષાયોપશમિકમ્ ?
 ક્ષાયોપશમિકં દ્વયોઃ, તદ્વથા-મનુવ્યાણાશ્ચ પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોત્તિકાનાશ્ચ, કિં હેતુ
 ક્ષાયોપશમિકમ્ ? ક્ષાયોપશમિકં તદાવરણીયાનાં કર્મણામ્ ઉદીર્ણાનાં ક્ષયેણ,

કે જીવોં કો ક્ષયોપશમ અવધિજ્ઞાન કહા ગયા હૈ-મનુષ્યોં કો ઓર
 પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોં કો, હસસે આગે સ્થાનાંગ કે છટે સ્થાન કે ૫૨૬ સૂત્ર
 મેં કહા હૈ-‘અવધિજ્ઞાન છહ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ, યથા-(૧) આનુ-
 ગામિક (૨) અનાનુગામિક (૩) વર્દમાન (૪) હીયમાન (૫) પ્રતિપાતિ
 ઓર (૬) અપ્રતિપાતિ ।’ નન્દીસૂત્ર કે આઠવે સૂત્ર મેં કહા હૈ-‘ક્ષાયો-
 પશમ અવધિજ્ઞાન કિસે હોતા હૈ ? ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન દો કો
 હોતા હૈ-મનુષ્યોં કો ઓર પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોં કો । હસે ક્ષાયોપશમિક
 કહને કા કયા કારણ હૈ ? ઉદય મેં આયે હુણ અવધિજ્ઞાનાવરણીય
 કર્મોં કે ક્ષય સે તથા જો ઉદય મેં નહીં આયે હેં ઉન્કે ઉપશમ સે વહ
 અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ, અનણ્વ ક્ષાયોપશમિક કહા જાતા હૈ ।

સૂત્રમાં કહ્યું છે એ પ્રકારના જીવોને ક્ષયોપશમિક અવધિજ્ઞ ન કહેવામાં આવ્યું
 છે. મનુષ્યોને અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોને આથી આગળ સ્થાનાંગના ૬ઠ્ઠા સ્થાન
 ના ૫૨૬ના સૂત્રમાં કહ્યું છે અવધિજ્ઞાન ૬ પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે.
 જેવાકે (૧) આનુગામિક (૨) અનાનુગામિક (૩) વર્દમાન (૪) હીયમાન (૫)
 પ્રતિપાતી (૬) અપ્રતિપાતી નન્દીસૂત્રના ૮માં સૂત્રમાં કહ્યું છે ક્ષાયોપશમિક
 અવધિજ્ઞાન કેને થાય છે ? ક્ષાયોપશમિક અવધિજ્ઞાન બેને થાય છે. મનુષ્યોને
 અને પંચેન્દ્રીય તિર્યંચોને અને ક્ષયોપશમિક કહેવાનું કારણ શું છે ? ઉદયમાં
 આવેલા અવધિજ્ઞનાવરણીય કર્મોનાં ક્ષયથી તથા જે ઉદયમાં આવ્યા નથી.
 તેમના ઉપશમથી આ અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. આથી ક્ષાયોપશમિક કહેવાય છે.

अनुदीर्णानाम् उपशमैनाऽनधिज्ञानं समुत्पद्यते, इति प्रज्ञापनायां ३३ पदे तु-क्षायो-
पशमिकावधिज्ञानस्या-ऽवस्थिता-ऽनवस्थितभेदद्वयमपि अवधिक-मुक्तम् ॥४८॥

मूलम्-मणपज्जवनाणे दुविहे, उज्जुमईविउलमईय ॥४९॥

छाया-मनःपर्यवज्ञानं द्विविधम् ऋजुमति-विपुलमति च ॥४९॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावत्-अवधिज्ञानं सविस्तरं प्ररूपितम् सम्प्रति-मनः
पर्यवज्ञानं द्वैविध्येन प्ररूपयितुमाह-‘मणपज्जवनाणे दुविहे’ इत्यादि मनः
पर्यवज्ञानम् पूर्वोक्तस्वरूपं द्विविधं भवति, तद्यथा-ऋजुमतिः विपुलमतिश्च. तत्र
ईर्ष्यादीनां ज्ञानप्रतिबन्धकीभूतानां मनोगतानां मन्तरायाणां सम्यग्दर्शनेन सति
क्षये वोपशमे सर्वेषां मनसो परस्परं भेद प्रतिभासाभावेन परमनोगतोऽप्यर्थो येन
ज्ञायते तज्ज्ञानं मनः पर्यवज्ञानपक्षेन व्यपदिश्यते । मनःशब्देनाऽत्र मनोगतोऽर्थो

प्रज्ञापना सूत्र के ३३ वे पद में क्षायोपशमिक ज्ञान के अवस्थित
और अनवस्थित भेद कहे हैं ॥४८॥

‘मणपज्जवनाणे दुविहे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—मनःपर्यवज्ञान दो प्रकार का है-ऋजुमति और विपुल-
मति ॥४९॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले अवधिज्ञान का विस्तार सहित निरूपण
किया गया, अब मनःपर्यवज्ञान के दो भेदों की प्ररूपणा करते हैं-

मनःपर्यवज्ञान का स्वरूप पहले कहा जा चुका है । उसके दो भेद
हैं-ऋजुमति और विपुलमति । मनःपर्यवज्ञानावरण एवं वीर्यान्तराय
कर्म के क्षयोपशम से परकीय मनोगत भावों पर्यायों को प्रत्यक्ष जानने
वाला ज्ञान मनःपर्यव या मनःपर्यवज्ञान कहलाता है । यहाँ ‘मन’ शब्द

प्रज्ञापना सूत्रना ३३ भां पदभां क्षायोपशमिक ज्ञानना अवस्थित अने
अनवस्थित भेद कहे छे ॥ ४८ ॥

‘मणपज्जवनाणे दुविहे’ इत्यादि

सूत्रार्थ—मनःपर्यवज्ञान हेतला प्रकारना छे अने ऋजुमति अने विपुलमति ॥४९॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहेला अवधिज्ञाननुं सविस्तर निरूपण करवाभां आव्युं
उवे मनःपर्यवज्ञानना जे लेहोनी प्ररूपण करीअे छीअे.

मनःपर्यवज्ञाननुं स्वरूप पहेलां कहेवाछ गयुं छे तेना जे लेह छे.
ऋजुमति अने विपुलमति. मनःपर्यवज्ञानावरण अने वीर्यान्तराय कर्मना
क्षयोपशमधी परकीय मनोगत भावो पर्यायिने प्रत्यक्ष लक्षणार ज्ञान मनःपर्यव
अथवा मनःपर्यवज्ञान कहेवाय छे. अही ‘मन’ शब्दधी मनोगत पर्याय

લક્ષ્યતે, તસ્ય મનોગતસ્યાર્થસ્ય પર્યવર્ણાં મનોન્તરેષુ પરિગમનં ભવતીતિ મનઃ પર્યવઃ-મનઃપર્યયોપોચ્યતે । પરિતઃ અવનમ્ અપનં વા મનઃપર્યવઃ મનઃપર્યયોવેતિ વ્યુત્પત્તિઃ, તત્ર-ઋજુમતિર્યસ્મિન્ તત્ ઋજુમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાન મુચ્યતે । વિપુલા મતિર્યસ્મિન્ સ્તદ્ વિપુલમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાન મુચ્યતે, તત્ર ઋજુમત્યપેક્ષયા વિપુલમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાનમ્ અધિકં વિશુદ્ધં ભવતિ । અપ્રતિપાતિ ચ-ભવતિ, ચારિત્રા દપતનશીલત્વાદ્ અપ્રતિપાતિ વ્યપદિશ્યતે, અતદ્દય-ઋજુમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાનં પ્રતિપાતિ ભવતિ, ધ્રુવઃ પરિપતત્યપિ, વિપુલમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાનન્તુ ન કદાચિદપિ પ્રતિષ્ઠતીતિ શ્રાવઃ । एव अवधिज्ञानापेक्षयाऽपि मनःपर्यवज्ञानं विशुद्धतरं भवति, एवञ्च-विशुद्धिकृतः क्षेत्रकृतः स्वाधिकृतः विषयकृतश्च मनः पर्यवज्ञानस्य अवधिज्ञानापेक्षया विशेषो द्रष्टव्यः । तथा च विपुलमति मનःपर्यव-

સે મનોગત પર્યાય સ્વમજ્જના ચાહિયે । દૂસરે કે મન કે પર્યાયોં કો જો જ્ઞાન પ્રત્યક્ષ રૂપ સે જાનતા હૈ, ઉસે મનઃપર્યવજ્ઞાન કહતે હૈ । જિસમેં મતિ ઋજુ-સરલ યા સાધારણ હો વહ ઋજુમતિ ઓર જિસમેં મતિ વિપુલ હો વહ વિપુલમતિ કહલાતા હૈ । ઋજુમતિ કો અપેક્ષા વિપુલ મતિજ્ઞાન અધિક વિશુદ્ધ હોતા હૈ । ઇસકે અતિરિક્ત દોનોં મેં દૂસરા અન્તર પ્રતિપાતિ-અપ્રતિપાતિ કા હોતા હૈ । ઋજુમતિજ્ઞાન પ્રતિપાતિ હૈ અર્થાત્ ઉત્પન્ન હોકર નષ્ટ બી હો જાતા હૈ, મગર વિપુલમતિ અપ્રતિપાતિ હૈ અર્થાત્ વહ એક બાર ઉત્પન્ન હોકર કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ હોને તક નષ્ટ નહીં હોતા । ઇસ પ્રકાર ઋજુમતિ ઓર વિપુલમતિ મેં વિશુદ્ધિ ઓર અપ્રતિપાતિ સે અન્તર હૈ ।

અવધિજ્ઞાન ઓર મનઃપર્યવજ્ઞાન મેં વિશુદ્ધિ, ક્ષેત્ર, સ્વામી ઓર વિષય કી અપેક્ષા અન્તર હૈ ।

સમજવો જોઈએ બીજના મનના પર્યાયોને જે જ્ઞાન પ્રત્યક્ષ રૂપથી જાણે છે. તેને મનઃપર્યવ જ્ઞાન કહે છે. જેમાં મતિ ઋજુ સરલ અથવા સાધારણ હોય તે ઋજુમતી અને જે મતિ વિપુલ હોય તે વિપુલમતિ કહેવાય છે. ઋજુમતિની અપેક્ષા વિપુલમતિ જ્ઞાન અધિક વિશુદ્ધ હોય છે. આ સિવાય બંનેમાં બીજે તક્ષવત પ્રતિપાતિ અપ્રતિપાતીનો છે ઋજુમતિ પ્રતિપાતી અર્થાત્ ઉત્પન્ન થઈને નષ્ટ પણ થઈ જાય છે. પરંતુ વિપુલમતિ અપ્રતિપાતી છે અર્થાત્ તે એકવાર ઉત્પન્ન થઈને કેવળજ્ઞાન ઉત્પત્તિ થતા સુધી નાશ પામતું નથી આ રીતે ઋજુમતિ અને વિપુલમતિમાં વિશુદ્ધિ અને અપ્રતિપાતી તક્ષવત છે

અવધિજ્ઞાન અને મન પર્યવજ્ઞાનમાં વિશુદ્ધિ ક્ષેત્ર સ્વામી અને વિષયની અપેક્ષા અંતર છે.

જ્ઞાને પ્રાપ્તે સતિ ઉપશમશ્રેણિસદ્ધૈર્વૈવ ક્ષપકશ્રેણ્યારૂઠો ભૂત્વા ક્રમશઃ શ્વત્વારિ મોહનીય જ્ઞાનાવરણ દર્શનાવરણાન્તરાયરૂપઘાતિકર્માણિ વિનાશ્ય કેવલજ્ઞાનં પ્રાપ્ય મોક્ષમાસાદયતિ । અતएव-વિપુલ સતિ મનઃપર્યવજ્ઞાની ચારિત્રાત્ ન કદા-ચિત્ પરિભ્રંશતૈ, કિન્તુ-ઋજુમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાની અપ્રમત્તસંયતઃ કદાચિત્ ચારિત્રાત્ પરિભ્રંશતે કદાચિન્ન ન પરિભ્રંશતે યતોહિ=ઋજુમતિઃ સાર્દ્ધં દ્વયાં અંગુલપ્રમાણહીનં પશ્યતિ-જાનાતિ વિપુલપતિશ્ચ સાર્દ્ધં દ્વયાં અંગુલપ્રમાણાધિકં પશ્યતિ-જાનાતિચૈવિવેકઃ ॥૪૯॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ:-પૂર્વે તાવત્ ક્રમપ્રાપ્તઅવધિજ્ઞાનં સવિસ્તરં પ્રરૂપિતમ્ સમ્પત્તિ-ક્રમાગતં મનઃપર્યવજ્ઞાનં દ્વૈવિધ્યેન પ્રરૂપયિતુમાહ-‘અણપજ્જવનાણે દુવિહે ઉઽઽજુમ્મહ-વિપુલમ્મહય’ इति મનઃપર્યવજ્ઞાનં પૂર્વોક્તરૂપરૂપં દ્વિવિધમ્મ-

જો મુનિ વિપુલમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરતા હૈ, ત્હ ક્ષપકશ્રેણી પર આરૂઠ હોકર ક્રમશઃ મોહનીય, જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ ઓર અન્ત-રાય, इन चार घातिया कर्मों का क्षय करके नियम से केवलज्ञान का स्वामी होता है और मोक्ष प्राप्त करता है । किन्तु ऋजुमति के संबंध में यह बात नहीं, वह उत्पन्न होकर नष्ट भी हो जाता है ।

મનઃપર્યવજ્ઞાન અઢાઈ દ્વીપ મેં સ્થિત સંજી જીવોં કે મનોભાવોં કો જાનતા હૈ, કિન્તુ ઋજુમતિ, વિપુલમતિ કી અપેક્ષા અઢાઈ અંગુલ કમ જાનતા હૈ ॥૪૯॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલે ક્રમપ્રાપ્ત અવધિજ્ઞાન કા વિસ્તૃત નિરૂપણ કિયા ગયા, અથ ક્રમાગત મનઃપર્યવજ્ઞાન કે દો ભેદોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ-

જે મુનિ વિપુલમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે છે. તે ક્ષપકશ્રેણી પર ચઢીને ક્રમશઃ મોહનીય જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ અને અન્તરાય આ ચાર ઘાતિ કર્મેના ક્ષય કરીને નિયમ મુજબ કેવલજ્ઞાનનો સ્વામી બને છે અને મોક્ષ પ્રાપ્ત કરે છે. પરંતુ ઋજુમતિના સંબંધમાં આ હકીકત નથી, તે ઉત્પન્ન થઈને નષ્ટ પણ થઈ જાય છે.

મનઃપર્યવજ્ઞાન અઢીદ્વીપમાં સ્થિત સંજી જીવોના મનોભાવને જાણે છે. પરંતુ ઋજુમતિ, વિપુલમતિની અપેક્ષા અઢી આંગળ જોઈ જાણે છે. ॥૪૯॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ:-પહેલા ક્રમપ્રાપ્ત અવધિજ્ઞાનનું વિસ્તૃત નિરૂપણ કર્યું. હવે ક્રમાગત મનઃપર્યવજ્ઞાનના બે ભેદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ,

વતિ, ઋજુમતિ-વિપુલમતિચેતિ, તત્ર ઋજ્વીમતિર્યસ્મિન્ તત્ ઋજુમતિ મનઃપર્યવ-
જ્ઞાનમ્ । एवं-વિપુલા મતિર્યસ્મિન્ તત્ વિપુલમતિ-મનઃપર્યવજ્ઞાન મુચ્યતે તથાચે-
ર્ધ્યાદીનાં જ્ઞાનપ્રતિબંધકાનાં મનોગતાનામન્તરાયકર્મવિશેષાણાં સમ્યગ્દર્શનેન
ક્ષયે-ઉપશમે વા જાતે સતિ સર્વેષાં મનસાં પરસ્પરં ભેદપ્રતિભાસાયાવેન પરમનો-
ઽપ્યર્થો યેન જ્ઞાયતે તત્જ્ઞાનં મનઃપર્યયજ્ઞાનપદેનોચ્યતે । મનઃશબ્દેનાઽત્ર મનોગતો-
ઽર્થપ્રુપલક્ષ્યતે, તસ્ય સ્વલુ મનોગતસ્યાર્થસ્ય પર્યવર્ણ-પર્યયર્ણં દત્તોન્તરેષુ પરિગમનં
ભવતીતિ મનઃપર્યય ઇત્યુચ્યતે । તત્ર ઋજુમતિ પ્રતીક્ષ્યાઽપેક્ષ્ય વિપુલમતિ મનઃ-
પર્યવજ્ઞાનમધિકં વિશુદ્ધં ભવતિ । એવમ્-ઋજુગત્યપેક્ષ્યા વિપુલમતિ-અપ્રતિપાતિ
ચાપિ ભવતિ ચારિત્રાદપતનશીલત્વાત્ અપ્રતિપાતિ વ્યપદિશ્યતે । તથા ચ-

મનઃપર્યવજ્ઞાન કા સ્વરૂપ પહેલે કહાં જા ચુકા હૈ । ઉસકે દો ભેદ
હૈ-ઋજુમતિ ઔર વિપુલમતિ । જિસમેં મતિ ઋજુ અર્થાત્ સરલ હો વહ
ઋજુમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાન કહલાતા હૈ । જિસમેં મતિ વિપુલ હો વહ
વિપુલમતિ હૈ । મનઃપર્યવજ્ઞાનાવરણ એવં ધિર્યાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ
સે પરકીય મનોગત ભાવોં-પર્યાયોં કો પ્રત્યક્ષ રૂપ સે જાનને વાલા
જ્ઞાન મનઃપર્યવજ્ઞાન કહલાતા હૈ । યહાં 'મન' શબ્દ સે મનોગત 'અર્થ'
સમજના ચાહિયે । જિસ જ્ઞાન સે મનોગત અર્થ જાના જાતા હૈ, વહ
મનઃપર્યવજ્ઞાન હૈ ।

ઋજુમતિ કી અપેક્ષા વિપુલમતિજ્ઞાન અધિક વિશુદ્ધ હોતા હૈ । હસકે
અતિરિક્ત વિપુલમતિ અપ્રતિપાતિ હૈ જય કિ ઋજુમતિ પ્રતિપાતિ હૈ । જો
એક બાર ઉત્પન્ન હોકર કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ તક નષ્ટ ન હો વહ અપ્ર-
પાતી કહલાતા હૈ ઔર જો પહેલે હી નષ્ટ હો જાય વહ પ્રતિપાતિ કહલાતા

મનઃપર્યવજ્ઞાનતુ' સ્વરૂપ પહેલાં કહેવાઈ ગયું છે. તેના બે ભેદ છે.
ઋજુમતિ અને વિપુલમતિ. જેમાં મતિ, ઋજુ અર્થાત્ સરળ છે. તે ઋજુમતિ
મનઃપર્યવજ્ઞાન કહેવાય છે. જેમાં મતિ વિપુલ છે. તે વિપુલમતિ મનઃપર્યવ-
જ્ઞાનાવરણ અને વીર્યાન્તરાય કર્મોના ક્ષયોપશમથી પરકીય મનોગત ભાવો
પર્યાયોને પ્રત્યક્ષ રૂપથી જાણનાર જ્ઞાન મનઃપર્યવજ્ઞાન કહેવાય છે. અહીં
'મન' શબ્દથી મનોગત અર્થ સમજવો જોઈએ. જે જ્ઞાનથી મનોગત અર્થ
જાણી શકાય છે. તે મનઃપર્યવજ્ઞાન છે.

ઋજુમતિની અપેક્ષા વિપુલમતિ જ્ઞાન અધિક વિશુદ્ધ હોય છે. આ સિવાય
વિપુલમતિ અપ્રતિપાતી છે જ્યારે ઋજુમતિ પ્રતિપાતી છે. જે એકવાર ઉત્પન્ન
થઈને કેવલજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ સુધી નષ્ટ ન થાય તે અપ્રતિપાતી કહેવાય છે.

વાકકાય મનસ્કૃતાર્થસ્ય પરમનોગતસ્ય વિજ્ઞાનાત્ નિવર્તિતા પશ્ચાદ્ વ્યાવર્તિતા ચાલિતા વ્યાધોટિતા સતિઃ ઋજુમતિ રુચ્યતે । તથાવિધાદ્ વિજ્ઞાનાત્ ન નિવર્તિતા ન પશ્ચાદ્ વ્યાવર્તિતા ન ચાલિતા-ન વ્યાધોટિતા સતિઃ વિપુલમતિ રુચ્યતે એવશ્ચ-વિપુલમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાને પ્રાપ્તે સતિ-ઉપશમ શ્રેણીમવદ્ધૈવ ક્ષપક શ્રેણ્યા-રૂઢો ભવતિ તતશ્ચ ક્રમશઃસ્વારિ ઘાતિકર્માણિ મોહનીયજ્ઞાનં દર્શનાવરણાન્તરાય રૂપાણિ વિધ્વસ્ય મોક્ષં પ્રાપ્નોતિ । અતએવ-વિપુલમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાની ચારિત્રાન્ન કદાચિત્ પરિભ્રંશતે, ઋજુમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાનીતુ-અપમત્તસંયતઃ ચારિત્રાત્કદા-ચિત્ પરિભ્રંશતે-કદાચિન્નાપિ પરિભ્રંશતે इतिभावः । एवं મનઃપર્યવજ્ઞાનમ્-અવધિજ્ઞાનાપેક્ષયા વિશુદ્ધતરં ભવતિ તથા ચ-વિશુદ્ધિ-ક્ષેત્ર-સ્વામિ-વિષયકૃતઃ સ્વલ્પ વિશેષોઽવધિજ્ઞાનાપેક્ષયા મનઃપર્યવજ્ઞાનેઽવગત્યવ્યઃ । તથાચાઽવધિજ્ઞાનસ્ય-

है । ऋजुमति प्रतिपाती और विपुलमति अप्रतिपाती है । इस प्रकार वचन, काय और मन के द्वारा कृत, परकीय मनोगत सरल भाव को जानने वाला ऋजुमति मनःपर्यवज्ञान है और उस प्रकार के विज्ञान से जो निवर्तित न हो, पश्चात् व्यावर्तित न हो, चालित न हो, व्याधोटित न हो, वह विपुलमति ज्ञान कहलाता है ।

વિપુલમતિ મનઃપર્યવ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હોને પર મુનિ સીધા ક્ષપક શ્રેણી પર આરુઢ હોતા હૈ ઓર પહેલે મોહનીય કર્મ કો તથા અન્તર્મુ-હૂર્ત્ત કો પશ્ચાત્ એક સાથ ત્રીન શેષ ઘાતિયા કર્મો કો ક્ષય કરકે કેવલ-જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ ।

અવધિજ્ઞાન કી અપેક્ષા મનઃપર્યવજ્ઞાન અધિક વિશુદ્ધ હોતા હૈ ।
इन दोनों ज्ञानों में विशुद्धि, क्षेत्र, स्वामी और विषय से अन्तर पड़ना

અને જે પહેલાંજ નાશ પામે તે પ્રતિપાતિ કહેવાય છે. ઋજુમતિ પ્રતિપાતી અને વિપુલમતિ અપ્રતિપાતી છે. આ રીતે વચન, કાય અને મન દ્વારા શ્રુત, પરકીય મનોગત સરળભાવને બાણુનારૂં ઋજુમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાન છે અને એ પ્રકારના વિજ્ઞાનથી જે નિવર્તિત ન હોય, પશ્ચાત્ વ્યાવર્તિત ન હોય, ચાલિત ન હોય, વ્યાધોટિત ન હોય તે વિપુલમતિ જ્ઞાન કહેવાય છે.

વિપુલમતિ મનઃપર્યવજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થવાથી મુનિ સીધો ક્ષપક ક્ષેણી પર આરુઢ થાય છે. અને પહેલાના મોહનીય કર્મનો તથા અન્તર્મુહૂર્ત્ત પછી એકી સાથે ત્રણ શેષ ઘાતિ કર્મો બપાવીને કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી લે છે.

અવધિજ્ઞાનની અપેક્ષા મનઃપર્યવજ્ઞાન અધિક વિશુદ્ધ હોય છે. આ અને જ્ઞાનોમાં વિશુદ્ધિ ક્ષેત્ર સ્વામી અને વિષયથી ભેદ થાય છે. અવધિજ્ઞાનનો

ક્ષેત્ર-લોકત્રયમ્, મનઃપર્યવજ્ઞાનસ્ય ક્ષેત્રં તુ કેવલં મધ્યલોક એવ, તત્રાપિ-સાર્દ્ધદ્વીપ-
 દ્વયમ્, તત્રાપિ-યત્ર કેવલં ચતુર્થકાલઃ તત્સન્ધિ વા ભવતિ, તથાવિધ કર્મભૂમિ-
 વ્રોધ્યા । એવમધિજ્ઞાનસ્ય સ્વામી ચતસૃષ્વપિ નરક-દેવ-મનુષ્ય-તિર્યગ્ગતિષુ ભવતિ
 મનઃપર્યવજ્ઞાનસ્ય સ્વામીતુ-વિરલ એવ ભવતિ । તથાહિ-મનઃપર્યવજ્ઞાનં કેવલં
 ગર્ભજમનુષ્યાણામેવ ભવતિ તત્ર કર્મભૂમિજાતાનામેવ તત્રાપિ-સંખ્યેયવર્ષાયુષામેવ
 નાઽપ્યકર્મભૂમિજાનામ્, ન વા-ઽસંખ્યેયવર્ષાયુષામ્, તત્રાપિ પર્યાપ્તકાનામેવ-નાઽ-

હૈ । અવધિજ્ઞાન કા વિષય, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા, સમ્પૂર્ણ લોક હૈ, અર્થાત્
 લોક મેં વિદ્યમાન સમસ્ત રૂપી પદાર્થ કો વહ જાન સકતા હૈ । યહી
 નહીં, પરમાવધિજ્ઞાન મેં તો इतना साधर्थ होता है कि वह आलोक में
 लोकाकाश के बराबर-बराबर के असंख्यात खंडों को भी जान सकता
 है, मगर अलोक में रूपी पदार्थ होते नहीं हैं अतएव वह
 जानता भी नहीं है । मनःपर्यवज्ञान का क्षेत्र सिर्फ मनुष्यलोक अर्थात्
 अढाई द्वीप है ।

સ્વામી કી અપેક્ષા ચિત્તાર ક્રિયા જાય તો અવધિજ્ઞાન કે સ્વામી
 ચારોં ગતિયોં કે જીવ હોતે હિં, વહ નારકોં, દેવોં ઓર તીર્યંચોં કો
 મી હોતા હૈ । મનઃપર્યવજ્ઞાન વિરલ મનુષ્યોં કો હી હોતા હૈ, યથા-વહ
 કેવલ ગર્ભજ મનુષ્યોં કો હોતા હૈ, ઉનમેં સે મી કેવલ કર્મભૂમિજોં કો
 હી હોતા હૈ, ઉનમેં સંખ્યાત વર્ષ કી આયુ વાલોં કો હી હોતા હૈ, ન
 અકર્મભૂમિજ મનુષ્યોં કો હોતા હૈ ઓર ન અસંખ્યાત વર્ષ કી આયુ
 વાલોં કો । સંખ્યાત વર્ષ કી આયુ વાલોં મેં મી પર્યાપ્તકો કો ઓર

વિષય ક્ષેત્રની અપેક્ષા સંપૂર્ણ લોક છે. અર્થાત્ લોકમાં વિદ્યમાન સઘળા
 રૂપી પદાર્થોને તે જાણી શકે છે. એટલું જ નહિ પરમાવધિ જ્ઞાનમાં તો એટલું
 સામર્થ્ય હોય છે કે તે અલોકમાં લોકાકાશની બરાબર બરાબરના અસંખ્યાત
 ખંડોને જાણી શકે છે. પરંતુ અલોકમાં રૂપી પદાર્થ હોતા નથી
 આથી તે જાણતો પણ નથી. મનઃપર્યવ જ્ઞાનનું ક્ષેત્ર કેવળ મનુષ્યલોક અર્થાત્
 અઢીદ્વીપ છે, સ્વામીની અપેક્ષા વિચાર કરવામાં આવે તો અવધિજ્ઞાનના
 સ્વામી આર્ય ગતિઓના જીવ હોય છે. તે નારકો દેવો મનુષ્યો અને તિર્યંચોને
 પણ થાય છે. મનઃપર્યવ જ્ઞાન વિરલ મનુષ્યોને જ થાય છે. જેમકે તે કેવળ
 ગર્ભ જ મનુષ્યોને થાય છે. તેમાં પણ કેવળ કર્મભૂમિને જ થાય છે.
 તેમાંથી પણ સંખ્યાત વર્ષની આયુષ્યવાળાઓને જ થાય છે. ન તો અકર્મ
 ભૂમિ જ મનુષ્યોને થાય છે કે ન અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળાઓને
 સંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળાઓમાં પણ પર્યાપ્તને અને તેમાં પણ સમ્યક

પર્યાપ્તાનામ્, તત્રાપિ સમ્યગ્દૃષ્ટીનામેવ નાડસમ્યગ્દૃષ્ટીનામ્, તત્રાપિ ઋદ્ધિપાપ્તાના-
મેવ ભવતીતિભાવઃ ॥ એવમ્-અવધિજ્ઞાન વિષયીભૂતસ્ય રૂપિ દ્રવ્યસ્યાડનન્તે સૂક્ષ્મે
ભાગે મનઃપર્યવજ્ઞાનસ્ય વૃત્તિર્ભવતિ, તથા ચ-યદ્ દ્રવ્યં સ્વલુ અવધિજ્ઞાનં જાનાતિ
તસ્માદપિ અનન્તભાગં સૂક્ષ્મપદાર્થં મનઃપર્યવજ્ઞાનં જાનાતીતિ બોધ્યમ્ । ઉક્તશ્ચ
નન્દિસૂત્રે ૧૮ સૂત્રે ‘ઉજ્જુમર્દ્દં અણંતે અણંતપણસિણ સ્વંધે જાણહ પાસહ
તે ચેવ વિઝલમર્દ્દં અબ્ભહિયતરાણ વિઝલતરાણ વિસુદ્ધતરાણ વિતિ-
મિરતરાણ જાણહ પાસહ, સ્વેત્તબ્બોણં ઉજ્જુમર્દ્દં ય જહણ્ણેણં અંગુલસ્સ
અસંસિહ્વજ્જહભાગં, ઉક્કોસેણં અહે જાવર્દ્ધસીસે રયણપ્પમાણ પુઠ્ઠવીણ
ઉવરિમહેટ્ઠિલ્લે સુહુગપયરે ઉહૂં જાવર્દ્ધસીસે ઉવરિમનલ્લે તિરિયં
જાવર્દ્ધસીસે અહૂંજ્જેસુ દીવસસુદ્ધેસુ પળ્ણરસ્સ કમ્મભૂમીસુ
તીસાણ અકમ્મભૂમીસુ છપ્પણેણં અંતરદીવણેસુ સળ્ણીણં પંચિદિયાણં
પજ્જત્તયાણં ભાવે જાણહ-પાસહ, તં ચેવ વિઝલમર્દ્દં અહૂંજ્જેહિં અંગુલેહિં
અબ્ભહિયતરં વિઝલતરં વિસુદ્ધતરં વિતિમિરતરાણં સ્વેત્તં જાણહ-પાસહ
કાલબોણં ઉજ્જુમર્દ્દં જહણ્ણેણં પલિબોવમસ્સ અસંસિહ્વજ્જહભાગં, ઉક્કો-
સેણં વિ પલિબોવમસ્સ અસંસિહ્વજ્જહભાગં અતીયમ્મણાગયં વા કાલં જાણહ
પાસહ, તં ચેવ વિઝલમર્દ્દં અબ્ભહિયતરાણં વિસુદ્ધતરાણં વિતિમિરતરાણં
જાણહ, પાસહ, ભાવબોણં ઉજ્જુમર્દ્દં અણંતે બોવે જાણહ પાસહ, સંવ-
ભાવાણં અણંતભાગં જાણહ પાસહ મળપજ્જવણાણં પુણ જળ મળ
પરિચિત્તિ અસ્થપાગડગં માણુસસિત્તં નિવદ્ધં ગુણા પવ્વહયં ચરિત્ત-
વબો’ સે તં મળપજ્જવણાણં-હટ્ઠીપત્ત અપ્પમત્તસંજય સમ્મદિટ્ઠી પજ્જ-
ત્તગ સંસિહ્વજ્જવાસાડયકમ્મભૂમિ અગમ્મવકંતિ અમણુસસાણં મળ-
પજ્જવણાણં સમુપ્પજ્જહ, તં સમાસઓ ચઉવિવહં પળ્ણત્તં તં જહા

उनमें भी सम्यग्दृष्टियों को होता है। सम्यग्दृष्टियों में भी अप्रमत्त-
संयतो को ही होता है और उनमें से भी ऋद्धिपाप्त मुनियों को ही
होता है।

विषय की अपेक्षा से अवधिज्ञान के विषयभूत रूपी द्रव्य के अन-
न्तवे भाग में मनःपर्यवज्ञान का व्यापार होता है। इस प्रकार अवधि-
ज्ञान जिस द्रव्य को जानता है उसके अनन्तवे भाग सूक्ष्म अर्थ में

દૃષ્ટિઓને થાય છે સમ્યક્દૃષ્ટિઓમાં પણ અપ્રમત્ત સંયતોને જ થાય છે
અને તેમાં પણ ઋદ્ધિ પ્રાપ્ત મુનિઓને જ થાય છે.

વિષયની આપેક્ષાથી અવધિજ્ઞાનના વિષયભૂત રૂપી દ્રવ્યના છેવટના
ભાગમાં મનઃપર્યવજ્ઞાનનો વ્યાપાર થાય છે આ રીતે અવધિજ્ઞાન જે દ્રવ્યને
જાણે છે. તેના અનંતમાં ભાગ સૂક્ષ્મ અર્થમાં મનઃપર્યવજ્ઞાન જાણે છે. નન્દી

દબ્બઓ સ્વિત્તઓ કાલઓ ભાવઓ' इत्यादि । ऋजुमतिः खलु अनन्तान् अनन्तप्रदेशकान् स्कन्धान् जानाति पश्यति, तांश्चैव विपुलमतिः अभ्यधिकतरं विपुलतरं विशुद्धतरं वितिमिरतरं जानाति पश्यति, क्षेत्रतः खलु ऋजुमतिश्च जघन्येनाऽंगुलस्याऽसंख्येयभागान् उत्कृष्टेनाऽधो यावद् अस्या रत्नप्रभायाः पृथिव्या उपरिमाऽवस्तात् क्षुल्लकप्रतरे ऊर्ध्वं यावत् ज्योतिष्कस्योपरिमतले तिर्यग् यावत् अन्तोमनुष्यक्षेत्रे सार्द्धं तृतीययोः द्वीपसमुद्रयोः पञ्चदश कर्मभूमिषु त्रिंशदकर्मभूमिषु षट्पञ्चाशदन्तर्द्वीपेषु संज्ञीनां पञ्चेन्द्रियाणां पर्याप्तकानां मनोगतं भावं जानाति पश्यति, तश्चैव विपुलमतिः सार्द्धं तृतीयै रंगुलै रभ्यधिकतरं विपुलतरं विशुद्धतरं वितिमिरतरं क्षेत्रं जानाति पश्यति, कालतः खलु ऋजुमतिः जघन्येन पल्योपमस्याऽसंख्येयभागम् उत्कृष्टेनापि

मनःपर्यवज्ञान जानता है । नन्दिसूत्र के १८ वे' सूत्र में कहा है—'ऋजु-मति अनन्त अनन्तप्रदेशी स्कन्धों को जानता देखता है, विपुलमति उन्हीं स्कन्धों को अधिकतर, विपुलतर, विशुद्धतर और निर्मलतर जानता-देखता है । क्षेत्र की अपेक्षा ऋजुमति जघन्य अंगुल के असंख्यातवे' भाग को, उत्कृष्ट नीचे इस रत्नप्रभा पृथ्वी के उपरी-निचले क्षुद्रक प्रतर तक, उपर ज्योतिष्कों के उपरी तल तक, तिछे' मनुष्यक्षेत्र के अन्दर, अढाई द्वीप-समुद्रों में, पन्द्रह कर्मभूमियों में, तीस अकर्म-भूमियों में और छप्पन अन्तर्द्वीपों में, संज्ञी, पंचेन्द्रिय, पर्याप्त जीवों के भावों को जानता-देखता है, विपुलमति उसी को अढाई अंगुल अधिक विपुलतर, विशुद्धतर और वितिमितरतर-निर्मलतर क्षेत्र को जानता-देखता है ।

કાલ કી અપેક્ષા સે, ઋજુમતિ જઘન્ય પલ્યોપમ કે અસંખ્યાતવે'

સૂત્રના અઠારમાં સૂત્રમાં કહ્યું છે ઋજુમતિ અનંત પ્રદેશી સ્કંધોને જાણે દેખે છે. વિપુલમતિ તે જ સ્કંધોને અધિકતર વિપુલતર વિશુદ્ધતર અને નિર્મળતર જાણે જુએ છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષા ઋજુમતિ જઘન્ય આંગળના અસંખ્યાતમાં લાગને, ઉત્કૃષ્ટ રીતિએ આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીનાં ઉપલાનીચલા ક્ષુદ્રક પ્રતર સુધી ઉપર જ્યોતિષ્કાના ઉપરી સપાટી સુધી, તીરછામનુષ્યક્ષેત્રની અંદર, અઢીદ્વીપ સમુદ્રોમાં, પંદર કર્મભૂમિઓમાં, ત્રીસ અકર્મ ભૂમિઓમાં અને છપ્પન અંતર દ્વીપોમાં. સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત જીવોના ભાવોને જાણે જુએ છે. વિપુલમતિ તેને અઢી આંગળ અધિક વિપુલતર, વિશુદ્ધતર અને વિતિમિરતર નિર્મળતર ક્ષેત્રને જાણે જુએ છે.

કાળની અપેક્ષાથી ઋજુમતિ જઘન્ય પલ્યોપમનાં અસંખ્યાતમાં લાગને

પલ્લોપમસ્યાઽસંખ્યેભાગમ્ અતીતમનાગતં વા જાનાતિ પશ્યતિ, તં ચૈવ વિપુલમતિ અભ્યધિકતરં વિશુદ્ધતરં વિતિમિરતરં જાનાતિ-પશ્યતિ, આનતઃ સ્વલુ ઋજુમતિઃ અનન્તં ભાવં જાનાતિ પશ્યતિ, સર્વભાવાના અનન્તભાગં જાનાતિ પશ્યતિ તંચૈવ વિપુલમતિ સ્વલુ અભ્યધિકતરં વિપુલતરં વિશુદ્ધતરં જાનાતિ પશ્યતિ-ઋદ્ધિપ્રાપ્તા-ઽપ્રમત્તસંયત સમ્યગ્દષ્ટિપર્યાપ્તકસંખ્યેયવર્ષાયુષ્ક કર્મભૂમિજ ગર્ભવ્યુત્ ક્રાન્તિક મનુષ્યાણાં મનઃપર્યવજ્ઞાનં સમુત્પચતે। તત્ સમાસતશ્ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞસમ્, તચ્ચથા-

ભાગ કો ઔર ઉત્કૃષ્ટ સી પલ્લોપમ્ કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કો-અતીત ઔર અનાગત કાલ કો-જાનતા-દેખતા હૈ । વિપુલમતિ ડસી કો અધિકતર, વિશુદ્ધતર ઔર નિર્મલતર જાનતા-દેખતા હૈ ।

ભાવ કી અપેક્ષા સે ઋજુમતિ અનન્ત ભાવોં કો જાનતા-દેખતા હૈ । સર્વ ભાવોં કે અનન્તવેં ભાગ કો જાનતા-દેખતા હૈ, વિપુલમતિ ડસી કો અધિકતર, વિપુલતર ઔર વિશુદ્ધતર જાનતા-દેખતા હૈ । “મનઃપર્યવજ્ઞાન મનુષ્યોં કે મન દ્વારા ચિન્તિત અર્થ કો પ્રકટ કરને વાલા હૈ, વહ મનુષ્ય ક્ષેત્ર તક સીમિત હૈ, ગુણ પ્રત્યય હી હોતા હૈ અર્થાત્ તપસ્યા આદિ ગુણોં કે દ્વારા હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઔર સંયમી મુનિયોં કો હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

ઔર સી કહા હૈ-ઋદ્ધિપ્રાપ્ત, અપ્રમત્તસંયત, સમ્યગ્દષ્ટિ, પર્યાપ્ત, સંખ્યાત વર્ષ કી આયુ વાલે, કર્મભૂમિજ ઔર ગર્ભજ મનુષ્યોં કો હી મનઃપર્યવજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ ।

મનઃપર્યવજ્ઞાન સંક્ષેપ મેં ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ, યથા-(૧) દ્રવ્ય

અને ઉત્કૃષ્ટથી પણ પલ્લોપમનાં અસંખ્યાતમા ભાગને અતીત અને અનાગત કાલને બાણે જુએ છે. વિપુલમતી તેને અધિકતર વિશુદ્ધતર અને નિર્મળતર બાણે જુએ છે.

ભાવની અપેક્ષાથી ઋજુમતિ અનંત ભાવોને બાણે છે જુએ છે. સર્વ ભાવોના અનંતમા ભાગને બાણે છે જુએ છે વિપુલમતી તેને અધિકતર વિપુલતર તેમજ વિશુદ્ધતર બાણે જુએ છે. ‘મનઃ’ પર્યવજ્ઞાન મનુષ્યોના મન દ્વારા ચિન્તિત અર્થને પ્રકટ કરનાર છે, ને મનુષ્યક્ષેત્ર સુધી મર્યાદિત છે, શુણ્પ્રત્યય જ થાય છે. અર્થાત્ તપસ્યાં આદિ શુણો દ્વારા જ ઉત્પન્ન થાય છે અને સંયમી મુનિઓને જ પ્રાપ્ત થાય છે.

વળી પણ કહ્યું છે લઙ્ઘિપ્રાપ્ત, અપ્રમત્તસંયત સમ્યગ્દષ્ટિ, પર્યાપ્ત સંખ્યાત વર્ષની આયુવાળા કર્મભૂમિ જ અને ગર્ભજ મનુષ્યોને જ મનઃપર્યવજ્ઞાન થાય છે. મનઃપર્યવજ્ઞાન સંક્ષેપમાં ચાર પ્રકારનું કહેવામાં આવ્યું

દ્રવ્યતઃ ક્ષેત્રતઃ કાલતો ભાવતથેતિ । એવશ્ચ-વિષયાપેક્ષયાપિ અવધિજ્ઞાનતો મનઃ પર્યવજ્ઞાનસ્ય વિશેષોઽવગન્તવ્યઃ । एवं सर्वस्तोकाः खलु मनः पर्यवज्ञानपर्यवा भवन्ति तदपेक्षयाऽवधिज्ञानपर्यवा अनन्तगुणा अवसैयाः तथा च-मनःपर्यव-ज्ञानस्य पर्यवाः सर्वज्ञानापेक्षयास्तोका भवन्ति, तस्य सर्वज्ञानापेक्षया सूक्ष्म-पदार्थग्राहित्वात् इतिभावः ॥४९॥

મૂળમ્—મહસુચનાણે—અસઠ્વપજ્જવેસુ દઠ્વેસુ ॥૫૦॥

છાયા—‘મતિ-શ્રુતજ્ઞાનમ્—અસર્વપર્યવેષુ દ્રવ્યેષુ ॥૫૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ તાવત્—સમ્યગ્જ્ઞાનસ્ય મોક્ષમ્પતિ કારણતયા મતિશ્રુતા વધિમનઃપર્યવ કેવલજ્ઞાનરૂપસ્ય તસ્ય પ્રરૂપણં કૃતમ્, તત્રાપિ મોક્ષમ્પતિ મુખ્ય કારણતયા કેવલજ્ઞાનં પ્રથમં પ્રરૂપિતમ્ તદન્તરં મતિજ્ઞાનાદિકં ક્રમશઃ પ્રરૂપિતમ્
સે (૨) ક્ષેત્ર સે (૩) કાલ સે ઔર (૪) ભાવ સે । હસ પ્રકાર વિષય કી દૃષ્ટિ સે બી અવધિજ્ઞાન કી અપેક્ષા મનઃપર્યવજ્ઞાન કી વિશેષતા સમ-જ્ઞાના ચાહિય ।

હસ પ્રકાર મનઃપર્યવજ્ઞાન કે પર્યાય સઘ સે થોડે હૈં, ડસકી અપેક્ષા અવધિજ્ઞાન કે પર્યાય અનન્ત ગુણા હૈં ॥૪૯॥

‘મહસુચનાણે’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—મતિજ્ઞાન ઔર શ્રુતજ્ઞાન સઘ દ્રવ્યો કો જાનતે હૈં કિન્તુ ડનકે સઘ પર્યાયો કો નહીં જાનતે ॥૫૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—મોક્ષ કે કારણભૂત સમ્યગ્જ્ઞાન કે મતિ, શ્રુત, અવધિ, મનઃપર્યવ ઔર કેવલજ્ઞાન કે ભેદો કી પ્રરૂપણા કી ગર્હ, ડન-મેં બી મોક્ષ કા પ્રધાન કારણ હોને સે કેવલજ્ઞાન કી પહલે પ્રરૂપણા કી

છે. જેમકે (૧) દ્રવ્યથી (૨) ક્ષેત્રથી (૩) કાલથી અને (૪) ભાવથી એ રીતે વિષયની દૃષ્ટિએ પણ અવધિજ્ઞાનની અપેક્ષા મનઃપર્યવજ્ઞાનની વિશેષતા સમજવી જોઈએ

આ રીતે મનઃપર્યવજ્ઞાનનાં પર્યાય સૌથી થોડા છે. તેની અપેક્ષા અવ-ધિજ્ઞાનના પર્યાય અનંતગણ છે.

‘મહસુચનાણે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન બધાં દ્રવ્યોને જાણે છે. પરંતુ તેમનાં બધાં પર્યાયોને જાણતા નથી ॥ ૫૦ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—મોક્ષનાં કારણભૂત સમ્યગ્જ્ઞાનના મતિ, શ્રુત અવધિ મનઃપર્યવ અને કેવલજ્ઞાનના ભેદોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી. તેમાં પણ મોક્ષ

સમ્પ્રતિ-તેણાં પશ્ચાનાં મધ્યે, પૂર્વપૂર્વજ્ઞાનાપેક્ષયા-ઉત્તરોત્તરસ્યોત્કર્ષાદિકમ્પ્રતિ-
પદયિતું યથાસં મતિશ્રુતજ્ઞાનસ્ય વિષયં પ્રરૂપયતિ-‘સદ્સ્યુચનાણે’ इत्यादि ।
મતિશ્રુતજ્ઞાનમ્-મતિજ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનમ્ પૂર્વોત્કર્ષરૂપમ્ અસર્વપર્યવેષુ ન સર્વ દ્રવ્ય-
પર્યાયેષુ પ્રવર્તતે, અપિતુ-દ્રવ્યેષુ સર્વેષુ પ્રવર્તતે । તથા ચ-મતિશ્રુતજ્ઞાનયોર્વૃત્તિઃ
સર્વદ્રવ્યેષુ ભવતિ, ન તુ-સર્વદ્રવ્યપર્યાયેવિતિ શાબઃ । મતિજ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનમ્
સર્વાણ્યેવ દ્રવ્યાણિ વિષયતઃ-અન્યાદત્તે જાનાતિ, ન તુ-સર્વદ્રવ્યપર્યાયાન્
કિંચિદેવ દ્રવ્યપર્યાયાન્ જાનાતીતિ વૌધ્યમ્ । દ્રવ્યાણિ ચ ધર્માધર્માકાશકાલ
પુદ્ગલજીવભૂતાણિ પૂર્વોક્તાંનિ અવગન્તવ્યાનિ । તત્રાપિ દેશતઃ એવ મતિજ્ઞાનમ્,
દ્રવ્યાણિ જાનાતિ, ન તુ સર્વતઃ । શ્રુતજ્ઞાનન્તુ-સર્વતઃ એવ દ્રવ્યાણિ જાનાતિ, અતઃ
એવ-મતિજ્ઞાનાપેક્ષયા શ્રુતજ્ઞાનસ્ય વૈશિષ્ઠ્ય દત્તસેયમ્ ॥૫૦॥

गई और उससे पाइ ज्ञान है मतिज्ञान आदि का निरूपण किया गया,
अब उन पांचों ज्ञानों में पूर्व-पूर्व की अपेक्षा आगे-आगे वाले ज्ञान
का उत्कर्ष प्रतिपादन करने के लिए सर्वप्रथम मति और श्रुत ज्ञान के
विषय का कथन करते हैं ।

મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન સઘી દ્રવ્યોં કો તો જાનતે હૈં પરન્તુ સઘ
પર્યાયોં કો નહોં જાનતે । હસ પ્રકાર મતિશ્રુતજ્ઞાન કા વ્યાપાર સમસ્ત
દ્રવ્યોં મેં હોતા હૈ, મગર સમસ્ત પર્્યાયોં મેં નહોં । મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુત-
જ્ઞાન સઘ દ્રવ્યોં કો વિષય કરતે હૈં મગર સઘ પર્યાયોં કો નહોં-થોડે
પર્યાયોં કો હી જાનતે હૈં । ધર્મ, અધર્મ, આકાશ, કાલ, પુદ્ગલ ઓર
જીવ, યે છઠ દ્રવ્ય હૈં, જિનકા કથન પહેલે કિયા જા ચુકા હૈ । મતિ
જ્ઞાન દ્રવ્યોં કો દેશતઃ જાનતા હૈ, શ્રુતજ્ઞાન સર્વતઃ જાનતા હૈ, અતઃ
મતિજ્ઞાન કી અપેક્ષા શ્રુતજ્ઞાન વિશિષ્ટ હૈ ॥૫૦॥

તું પ્રધાન કારણ હોવાથી કેવળજ્ઞાનની પહેલાં પ્રરૂપણા કરી અને ત્યાર પછી
ક્રમથી મતિજ્ઞાન આદિતું નિરૂપણ કર્યું. હવે તે પાંચે જ્ઞાનોમાં પૂર્વ-પૂર્વની
અપેક્ષાએ ઉત્તર-ઉત્તરવાળા જ્ઞાનોનાં ઉત્કર્ષ પ્રતિપાદન કરવા માટે સર્વપ્રથમ
મતિ અને શ્રુતજ્ઞાનોનાં વિષયનું કથન કરીએ છીએ

મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન બંધાં દ્રવ્યોને તો જાણે છે પરંતુ બંધાં દ્રવ્યોનાં
બંધાં પર્યાયોને જાણતા નથી. આ રીતે મતિ શ્રુતજ્ઞાનોના વ્યાપાર બંધાં દ્રવ્યો
માં થાય છે પણ બંધાં પર્યાયોમાં નહીં મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન બંધાં દ્રવ્યોને
વિષય બનાવે છે. પરંતુ બંધાં પર્યાયોને નહીં થોડા પર્યાયો ને જ જાણે છે ધર્મ,
અધર્મ, આકાશ, કાલ, પુદ્ગલ અને જીવ આ છ દ્રવ્ય છે. જેમનું કથન

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિઃ—પૂર્વે લલ્લ મોક્ષસાધનત્વેન મતિશ્રુતાવધિમનઃપર્યવ-
કેવલ જ્ઞાનરૂપ સમ્યગ્જ્ઞાનં પ્રરૂપિતમ્ તત્રાપિ કેવલજ્ઞાનસ્ય મુખ્યત્વાત્ પ્રથમં
પ્રરૂપણં કૃતમ્ તદન્તરં મતિજ્ઞાનાદિકં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ તેપુ મત્યાદિ પશ્ચજ્ઞાનેષુ
પૂર્વે પૂર્વપેક્ષ્ય ઉત્તરોત્તરસ્ય વૈશિષ્ટ્યાદિકં પ્રરૂપયિતુમાદ—‘અદ્વિત્યનાળે અસવ્વ
પજ્જવેસુ દવ્વેસુ’ ઇતિ । મતિશ્રુતજ્ઞાનમ્—પૂર્વોક્ત સ્વરૂપં મતિજ્ઞાનમ્ આધિનિવો-
ધિક જ્ઞાનરૂપમ્ શ્રુતજ્ઞાનઞ્ચ—અપર્વપર્યવેષુ, ન સર્વદ્રવ્યપર્યાયેષુ ભવતિ અપિતુ-
દ્રવ્યેષુ સર્વેષુ ભવતિ । તથા ચ—મતિજ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનઞ્ચ ન સર્વદ્રવ્યપર્યાયવિષયકં
ભવતિ, અપિતુ—ધર્માધર્માકાશકાલપુદ્ગલજીવરૂપ—સર્વદ્રવ્યવિષયકં ભવતિ ।
અથ—મતિશ્રુતાભ્યાં સર્વાણિ દ્રવ્યાણિ જ્ઞાનાતિ, ન તુ—સર્વદ્રવ્યપર્યાયં ઇતિ ભાવઃ ।

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—પહેલે મતિ, શ્રુત, અવધિ, મનઃપર્યવ ઓર
કેવલજ્ઞાનરૂપ સમ્યગ્જ્ઞાન મોક્ષ કા સાધન હૈ, યહ પ્રતિપાદન કિયા
ગયા, ઉનમેં શ્રી પ્રધાન હોને લે કેવલજ્ઞાન કા પહેલે નિરૂપણ કિયા
ગયા, ઉસકે અનન્તર મતિજ્ઞાન આદિકા કથન કિયા ગયા, અવ ઉન
પાંચો જ્ઞાનોં મેં ઉત્તરોત્તર કી વિશિષ્ટતા કા પ્રતિપાદન કરને કે
લિપ કહતે હૈ—

પૂર્વોક્ત મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન કી પ્રવૃત્તિ સ્વ દ્રવ્યોં મેં હોતી હૈ
કિન્તુ સ્વ પદાર્થોં મેં નહીં હોતી । હસ કારણ મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન
સ્વ દ્રવ્ય-પર્યાય વિષયક નહીં હૈ, અપિતુ ધર્મ, અધર્મ, આકાશ,
કાલ, પુદ્ગલ ઓર જીવ રૂપ સર્વ દ્રવ્યોં કો જ્ઞાનતે હૈ । હસ પ્રકાર
મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન લે જીવ સ્વ દ્રવ્યોં કો તો જ્ઞાનતા હૈ મગર

પહેલા કરવામાં આવી ગયું. મતિજ્ઞાન દ્રવ્યને દેશતઃ જાણે છે. શ્રુતજ્ઞાન સર્વતઃ
જાણે છે. આથી મતિજ્ઞાનની અપેક્ષા શ્રુતજ્ઞાન વિશિષ્ટ છે. ॥ ૫૦ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—પહેલા મતિ, શ્રુત, અવધિ, મનઃપર્યાય અને કેવળ
જ્ઞાન રૂપ સમ્યક્જ્ઞાન મોક્ષનું સાધન છે એ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું. તેમાં
પણ પ્રધાન હોવાથી કેવળજ્ઞાનનું પ્રથમ નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું. તેના પછી
મતિજ્ઞાન આદિનું કથન કરવામાં આવ્યું. હવે તે પાંચે જ્ઞાનોમાં ઉત્તરોત્તર
વિશિષ્ટતાનું પ્રતિપાદન કરવા માટે કહીએ છીએ

પૂર્વોક્ત મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનની પ્રવૃત્તિ બધાં દ્રવ્યોમાં થાય છે પરંતુ
બધાં પર્યાયોમાં થતી નથી. આ કારણે મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન સર્વદ્રવ્ય
પર્યાય વિષયક નથી, તો પણ ધર્મ, અધર્મ, આકાશ, કાલ, પુદ્ગલ અને જીવ
રૂપ સર્વદ્રવ્યોને જાણે છે. આ રીતે મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનથી જીવ બધાં
દ્રવ્યોને તો જાણે છે પરંતુ તેના બધાં પર્યાયોને જાણતા નથી. જ્યારે મતિ-

યદા સ્વલુ-મતિજ્ઞાની શ્રુતજ્ઞાનેનોપલબ્ધેષ્વર્યુ અક્ષરપરમ્પરાપરિપાટીં વિનૈવ-
સમ્યગ્જ્ઞાનાદિ દ્રવ્યાણિ ધ્યાયતિ તદા-મતિજ્ઞાનવિષયાઃ સર્વદ્રવ્યાણિ ભવન્તિ,
ન તુ-સર્વદ્રવ્યપર્યાયાઃ અલ્પકાલત્વાત્-મનસશ્ચાઽશક્તત્વાત્ । એવમ્-શ્રુતગ્રન્થાનુ-
સારેણ સર્વાણિ ધર્માધર્માકાશકાલપુદ્ગલજીવદ્રવ્યાણિ જાનાતિ, ન તુ-તેષાં સર્વ-
પર્યાયાન્ તત્રાપિ-મતિજ્ઞાનેન દેશતણ્વ દ્રવ્યાણિ જાનાતિ, ન તુ-સર્વતઃ । શ્રુત-
જ્ઞાનેન તુ-સર્વતો દ્રવ્યાણિ જાનાતિ, સર્વદ્રવ્યપર્યાયાંસ્તુ-ન લાભ્યાં જાનાતીતિ
ફલિતમ્ । ઉક્તશ્ચ નન્દિસૂત્રે ૩૭ સૂત્રે-‘તત્થ દ્વવઓળં આભિણિબોહિયણાણી
આએસેણં સવ્વાહં દ્વવાહં જાણહ ન પાસહ, કાલઓળં આભિણિબોહિય
ણાણી આએસેણં સવ્વકાલં જાણહ ન પાસહ, આવઓળં આભિણિબોહિ-
યણાણી આએસેણં સવ્વે ભાવે જાણહ ન પાસહ’ તત્તથાગ્રે તત્ત્રીવ-૫૮ સૂત્રે
ચોક્તમ્-‘સે સમાસઓ સ્વઝિદ્દહે પળજ્ઞે તં જહા-દ્વવઓ સિત્તઓ-

સવ પર્યાયોં કો નહીં જાનતા । જવ મતિજ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાની કે દ્વારા ઉપ-
લબ્ધ પદાર્થોં કો અક્ષરપરમ્પરા કી પરિપાટી કે વિના હી દ્રવ્યોં કા
ધ્યાન કરતા હૈ તવ સભી દ્રવ્ય મતિજ્ઞાન કે વિષય હો જાતે હૈ, મગર
સવ દ્રવ્યોં કે સવ પર્યાય ઉલકે વિષય નહીં હો સકતે, ક્યોંકિ વહ
ઇન્દ્રિયોં ઓર મન સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર સવ પર્યાયોં કો જાનને
મેં અસમર્થ હૈ । હસ પ્રકાર વહ સૂત્ર-ગ્રંથ કે અનુસાર ધર્મ, અધર્મ,
આકાશ, કાલ, પુદ્ગલ ઓર જીવ દ્રવ્યોં કો જાનતા હૈ મગર ઉલકે
સવ પર્યાયોં કો નહીં જાનતા । હન સે ઓ મતિજ્ઞાન કે દ્વારા ઇકદેશ
સે હી દ્રવ્યોં કો જાનતા હૈ, સર્વ દેશ સે નહીં । શ્રુતજ્ઞાન કે દ્વારા
સર્વ દેશ સે જાનતા હૈ, મગર હન દોનોં જ્ઞાનોં સે દ્રવ્યોં કે સમસ્ત
પર્યાય નહીં જાને જાતે, યહ હસતા ફલિતાર્થ હૈ । નન્દિસૂત્ર કે ૩૭ વેં
સૂત્ર મેં કહા હૈ-‘દ્રવ્ય કી અપેક્ષા મતિજ્ઞાની સામાન્ય રુપ સે સભી

જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન દ્વારા ઉપલબ્ધ પદાર્થોંને અક્ષરપરમ્પરાની પરિપાટી વગર જ
દ્રવ્યોંનું જ્ઞાન કરે છે ત્યારે બધાં દ્રવ્ય મતિજ્ઞાનના વિષય બની જાય છે,
પરંતુ બધાં દ્રવ્યોંના બધા પર્યાય તેના વિષય થઈ શકતા નથી, કારણકે તે
ઇન્દ્રિયોં અને મનથી ઉત્પન્ન થાય છે અને બધાં પર્યાયોંને જાણવામાં અસમર્થ
છે. આ રીતે તે શ્રુતગ્રંથ અનુસાર ધર્મ, અધર્મ, આકાશ, કાલ, પુદ્ગલ અને
જીવ દ્રવ્યોંને જાણે છે પરંતુ તેના બધા પર્યાયોંને જાણતું નથી. એમાં પણ
મતિજ્ઞાન દ્વારા એક દેશથી જ દ્રવ્યોંને જાણે છે, સર્વ દેશથી નહીં. શ્રુતજ્ઞાન
દ્વારા સર્વદેશથી જાણે છે. પરંતુ આ બંને જ્ઞાનોથી દ્રવ્યોંના સમસ્ત પર્યાય
જાણી શકતા નથી, આ એનો ફલિતાર્થ છે. નન્દિસૂત્રના ૩૭માં સૂત્રમાં કહ્યું
છે દ્રવ્યની અપેક્ષા મતિજ્ઞાની સામાન્ય રૂપથી બધાં દ્રવ્યોંને જાણે છે પણ ભોલો

કાલઓ-ભાવઓ, તત્થ દ્રવ્યઓનું સુચનાળી ઉવડત્તે સવ્વદંવાહં
જાણહ પાસહ, ચિત્તઓનું સુચનાળી ઉવડત્તે સવ્વં ચેત્તં જાણહ પાસહ
કાલઓનું-સુચનાળી ઉવડત્તે સવ્વં કાલં જાણહ પાસહ ભાવઓનું
સુચનાળી ઉવડત્તે સવ્વે ભાવે જાણહ પાસહ' इति, તત્ર દ્રવ્યતઃ સ્વલ્લ આભિ-
નિવોધિકજ્ઞાની આદેશેન સર્વાણિ દ્રવ્યાણિ જાનાતિ ન પચયતિ, ક્ષેત્રતઃ સ્વલ્લ
આભિનિવોધિકજ્ઞાની આદેશેન સર્વં ક્ષેત્રં જાનાતિ ન પચયતિ, કાલતઃ સ્વલ્લ આભિ-
નિવોધિકજ્ઞાની આદેશેન સર્વં કાલં જાનાતિ ન પચયતિ, ભાવતઃ સ્વલ્લ આભિનિ-
વોધિકજ્ઞાની આદેશેન સર્વાન્ ભાવાન્ જાનાતિ ન પચયતિ । અથ સમાસતથત્વવિધઃ
પ્રજ્ઞતઃ તથથા-દ્રવ્યતઃ ક્ષેત્રતઃ કાલતો ભાવતઃ, તત્ર દ્રવ્યતઃ સ્વલ્લ શ્રુતજ્ઞાની ઉપ-
યુક્તઃ સર્વં ક્ષેત્રં જાનાતિ પચયતિ કાલતઃ સ્વલ્લ શ્રુતજ્ઞાની ઉપયુક્તઃ સર્વાન્ ભાવાન્
જાનાતિ પચયતિ इत्येतैन સ્વલ્લ આગમેન મતિજ્ઞાનાપેક્ષયા શ્રુતજ્ઞાનસ્ય વૈશિષ્ટ્યં
સ્પષ્ટં જ્ઞાયતે इति ५०॥

દ્રવ્યોં કો જાનતા હૈ, યગર દેખતા નહીં હૈ, કાલ કી અપેક્ષા મતિ-
જ્ઞાની સામાન્યરૂપ સે સર્વ કાલ કો જાનતા હૈ યગર દેખતા નહીં હૈ,
ભાવ કી અપેક્ષા મતિજ્ઞાની સામાન્યતઃ સભી ભાવોં કો જાનતા હૈ
યગર દેખતા નહીં હૈ ।' આગે વહીં ૫૮ વેં સૂત્ર મેં કહા હૈ-શ્રુતજ્ઞાન
સંક્ષેપ સે ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ-દ્રવ્યસે, ક્ષેત્ર સે, કાલ સે ઓર
ભાવ સે । દ્રવ્ય સે શ્રુતજ્ઞાની ઉપયોગ લગાડર સર્વ દ્રવ્યોં કો જાનતા-
દેખતા હૈ, ક્ષેત્ર સે શ્રુતજ્ઞાની ઉપયોગ લગાડર સર્વ ક્ષેત્ર કો જાનતા-
દેખતા હૈ, કાલ સે શ્રુતજ્ઞાની ઉપયોગ લગાડર સર્વ કાલ કો જાનતા
દેખતા હૈ, ભાવ સે શ્રુતજ્ઞાની ઉપયોગ લગાડર સર્વ ભાવોં કો જાનતા
દેખતા હૈ ।' હસ આગમ સે મતિજ્ઞાન કી અપેક્ષા શ્રુતજ્ઞાન કી વિશિ-
ષ્ટતા સ્પષ્ટ હી જ્ઞાત હોતી હૈ ॥૫૦॥

નથી, કાલની અપેક્ષા મતિજ્ઞાની સામાન્ય રૂપથી સર્વકાલને જાણે છે પરન્તુ
જોતો નથી, ભાવની અપેક્ષા મતિજ્ઞાની સામાન્યતઃ બધા ભાવોને જાણે છે પણ
જોતો નથી આગળ જતાં ત્યાં જ ૫૮માં સૂત્રમાં કહે છે શ્રુતજ્ઞાન ટુંકામાં ચાર
પ્રકારનું કહેવામાં આવ્યું છે દ્રવ્યથી ક્ષેત્રથી, કાલથી અને ભાવથી દ્રવ્યથી
શ્રુતજ્ઞાની ઉપયોગ લગાવીને સર્વદ્રવ્યોને જાણે જુએ છે, ક્ષેત્રથી શ્રુતજ્ઞાની
ઉપયોગ લગાડીને સર્વ ક્ષેત્રને જાણે જુએ છે. કાલથી શ્રુતજ્ઞાની ઉપયોગ લગાવી
ને સર્વ કાલને જાણે જુએ છે ભાવથી શ્રુતજ્ઞાની ઉપયોગ લગાવીને બધાં ભાવો
ને જાણે જુએ છે આ આગમથી મતિજ્ઞાનની અપેક્ષા શ્રુતજ્ઞાનની વિશિષ્ટતા
સ્પષ્ટપણે જ્ઞાત થાય છે ॥ ૫૦ ॥

મૂલ્ક-ઓહિનાણે સર્વરૂપિદ્રવ્યેસુ ॥૫૧॥

છાયા-અવધિજ્ઞાનં સર્વરૂપિદ્રવ્યેષુ ॥૫૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-‘પૂર્વસૂત્રો-મતિશ્રુતજ્ઞાનયો વિષયમ્પરૂપણં કૃતમ્ સમ્પ્રતિ અવધિજ્ઞાનસ્ય વિષયં પ્રરૂપયિતુમાહ-‘ઓહિનાણે સર્વરૂપિદ્રવ્યેસુ’ इति । अवधिज्ञानम्-पूर्वोक्तस्वरूपं अवप्रत्ययिकं क्षयोपशमिकश्चाऽवधिज्ञानं सर्वरूपि द्रव्येष्वेव पुद्गलद्रव्यपर्यायेषु भवति न तु सर्वरूपिपुद्गलद्रव्यपर्यायेषु नापि-अरूपिद्रव्येषु धर्माधर्माकाशाऽऽत्मद्रव्येषु, तथा चावधिज्ञानं रूपि द्रव्य-विषयकमेव भवति न तु-अरूपि द्रव्यविषयकम् नापि सर्वपर्यायविषयकम् अत्यन्त विशुद्धेनापि अवधिज्ञानेन रूपीण्येव द्रव्याणि परमावधिज्ञानी जानाति नापि द्रव्याणि, तान्यपि रूपि द्रव्याणि सर्वैः पर्यायैः अतीतानागतवर्तमानैरुत्पादव्यय द्रौव्यादिभिरनन्तैः पर्यदैर्वा न जानाति इति भावः ॥५१॥

‘ઓહિનાણે સર્વ’ इत्यादि।

સૂત્રાર્થ-અવધિજ્ઞાન સર્વ રૂપી દ્રવ્યોં કો જાનતા હૈ ॥૫૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્ર મેં મતિજ્ઞાન ઔર શ્રુતજ્ઞાન કે વિષય કા નિરૂપણ કિયા ગયા, અવ અવધિજ્ઞાન કે વિષય કા પ્રતિપાદન કરતે હૈ-પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ વાલા અવપ્રત્યયિક ઔર ક્ષયોપશમપ્રત્યયિક અવધિ-જ્ઞાન રૂપી દ્રવ્યોં અર્થાત્ પુદ્ગલોં મેં હી વ્યાપાર કરતા હૈ, કિન્તુ રૂપી દ્રવ્યોં કે સમસ્ત પર્યાયોં મેં વ્યાપાર નહીં કરતા । વહ અરૂપી દ્રવ્યોં કો મી નહીં જાનતા । સર્વ સે અધિક વિશુદ્ધ અવધિજ્ઞાન મી રૂપી દ્રવ્યોં કો હી જાનતા હૈ, કિન્તુ ઉનકે અતીત, અનાગત, વર્તમાન, ઉત્પાદ વ્યય ઔર દ્રૌવ્ય આદિ સર્વ અનન્ત પર્યાયોં કો નહીં જાનતા હૈ ॥૫૧॥

‘ઓહિનાણે સર્વ’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ-અવધિજ્ઞાન અધાં રૂપી દ્રવ્યોને જાણે છે ॥ ૫૧ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા:-પૂર્વસૂત્રમાં મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનના વિષયનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે અવધિજ્ઞાનના વિષયનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ.

પૂર્વોક્ત સ્વરૂપવાળા અવપ્રત્યયિક અને ક્ષયોપશમપ્રત્યયિક અવધિજ્ઞાન રૂપી દ્રવ્યોને અર્થાત્ પુદ્ગલમાં જ વ્યાપાર કરે છે, પરંતુ રૂપી દ્રવ્યોના સમસ્ત પર્યાયોમાં વ્યાપાર કરતું નથી તે અરૂપી દ્રવ્યોને પણ જાણતું નથી સદૃશી અધિક વિશુદ્ધ અવધિજ્ઞાન પણ રૂપી દ્રવ્યોને જ જાણે છે પરંતુ તેમનાં અતીત અનાગત, ઉત્પાદ વ્યય અને દ્રૌવ્ય આદિ અધા અનન્ત પર્યાયોને જાણતું નથી ॥ ૫૧ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિઃ—પૂર્વ તાત્ત્વ મતિજ્ઞાન—શ્રુતજ્ઞાનયો વિષયસ્ય નિરૂપણં વિહિ-
તમ્ સમ્પતિ-તદન્તરાવગતસ્યા—અવધિજ્ઞાનસ્ય વિષયં નિરૂપયિતુમાહ—‘ઓહિનાપે
સ્વદ્વરૂપિ દ્રવ્યેષુ’ इति । અવધિજ્ઞાનમ્—ભવપ્રત્યયિકં ક્ષાયોપશમનિકાશ્ચ પૂર્વોક્ત
સ્વરૂપમવધિજ્ઞાનં સર્વરૂપિદ્રવ્યેષુ—પુદ્ગલદ્રવ્યસ્વરૂપેષ્વેવ ભવતિ નત્વરૂપિ દ્રવ્યેષુ
ધર્માધર્માકાશાત્મસ્વરૂપેષુ, નવા—સર્વરૂપિ પુદ્ગલદ્રવ્યપર્યાયેષુ, તથા ચાઅવધિ-
જ્ઞાનં સર્વરૂપિ પુદ્ગલદ્રવ્યવિષયકમેવ સંભવતિ । ન તુ—અરૂપિ દ્રવ્યવિષયકમ્,
નાપિ—રૂપિ પુદ્ગલદ્રવ્યસર્વપર્યાયવિષયકમ્ પરમાવધિજ્ઞાન્યપિ સુવિશુદ્ધેનાપિ
અવધિજ્ઞાનેન રૂપીયેવ પુદ્ગલદ્રવ્યાણિ જાનાતિ, નાઅરૂપીણિ ધર્માધર્માકાશાત્મ
દ્રવ્યાણિ જાનાતિ, ન વા—જ્ઞાન્યપિરૂપિ પુદ્ગલદ્રવ્યાણિ સર્વેરતીતાનાગતવર્તમાનૈ-
રુત્પાદવ્યયગ્રીવ્યાદિભિરનન્તૈઃ પર્યાયૈઃ પારચ્છિન્નન્તિ પરમાવધિજ્ઞાની અત્યન્ત
વિશુદ્ધેનાપિ અવધિજ્ઞાનેન । ઉક્તશ્ચા—અનુયોગદ્વારે ૧૪૪ સૂત્રે—‘ઓહિ દંસણં’

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—પહેલે મતિજ્ઞાન ઓર શ્રુતજ્ઞાન કે વિષય કા
નિરૂપણ કિયા તથા, અવ ક્રમપ્રાપ્ત અવધિજ્ઞાન કે વિષય કા પ્રતિપાદન
કરતે હૈં—

અવપ્રત્યય ઓર ક્ષયોપશમનિમિત્તક અવધિજ્ઞાન પુદ્ગલ દ્રવ્ય રૂપ
સર્વ રૂપી દ્રવ્યોં મેં હી વ્યાપાર કરતા હૈં, ધર્મ, અધર્મ, આકાશ ઓર
જીવ, હન અરૂપી દ્રવ્યોં મેં હસકા વ્યાપાર નહીં હોતા । વહ રૂપી દ્રવ્યોં
કે સમસ્ત પર્યાયોં કોં ભી નહીં જાનતા હૈં । પરમાવધિ જ્ઞાની ભી અન-
ન્ત વિશુદ્ધિ અવધિજ્ઞાન કે દ્વારા રૂપી દ્રવ્યોં કોં હી જાનતા હૈં, અરૂપી
દ્રવ્ય ધર્મ, અધર્મ, આકાશ ઓર આત્મા કોં નહીં । રૂપી દ્રવ્યોં કોં ભી
સભી અતીત, અનાગત, વર્તમાન, ઉત્પાદ, વ્યય ઓર ધ્રોવ્ય આદિ અન-
ન્ત પર્યાયોં સે નહીં જાનતા ।

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ—પહેલા મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનના વિષયનું નિરૂપણ
કરવામાં આવ્યું, હવે કેમપ્રાપ્ત અવધિજ્ઞાનના વિષયનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ
ભવપ્રત્યય અને ક્ષયોપશમનિમિત્તક અવધિજ્ઞાન પુદ્ગલદ્રવ્ય રૂપ સર્વ
રૂપી દ્રવ્યોમાં જ વ્યાપાર કરે છે. ધર્મ, અધર્મ, આકાશ અને જીવ આ
અરૂપી દ્રવ્યોમાં તેનો વ્યાપાર હોતો નથી, તે રૂપી દ્રવ્યોના સમસ્ત પર્યાયોને
પણ જાણતું નથી. પરમાવધિજ્ઞાની પણ અત્યન્ત વિશુદ્ધ અવધિજ્ઞાન દ્વારા રૂપી
દ્રવ્યોને જ જાણે છે. અરૂપી દ્રવ્ય ધર્મ, અધર્મ, આકાશ અને આત્માને નહીં
રૂપી દ્રવ્યોને પણ યદાં અતીત, અનાગત, વર્તમાન, ઉત્પાદ, વ્યય અને
અને ધ્રોવ્ય આદિ અનન્ત પર્યાયોથી જાણતું નથી.

ઓહિદં સગિસ્સ સઘ્વરુચિ દઘ્વેષુ ન પુણ સઘ્વ પજ્જવેષુ' इति अवधि-
दर्शनम्-अवधिदर्शनिनः सर्वरूपि द्रव्येषु न पुनः सर्वपर्यायेषु, इति एवं नन्दिस्त्रुत्रे
१६ सूत्रे चोक्तम्-'तं सव्वात्तओ चउत्तिदहं पण्णसं, तं जहो-दव्वओ-
खेत्तओ कालओ भावओ, तस्य दव्वओ ओहिनाणी जहण्णेणं अणंताहं
रुविदव्वाहं जाणह-पासह उक्कोसेणं सव्वाहं रुविदव्वाहं जाणह पासह
खेत्तओणं ओहिनाणी जहण्णेणं अंगुलस्स असंखिज्जाहं जाणह
पासह उक्कोसेणं असंखिज्जाहं अलोग लोगपप्पाणमित्ताहं खंडाहं
जाणह-पासह कालओणं ओहिनाणी जहण्णेणं ओवलियाए असंखि
ज्जाहं भागं जाणह-पासह, उक्कोसेणं असंखिज्जाओ वरसप्पिणीओ
ओसप्पिणीओ अईयं अणाणईयं च कालं जाणह पासह भावओणं
ओहिनाणी जहण्णेणं अणंते भावे जाणह पासह उक्कोसेणं वि अणंत
भावे जाणह पासह, सव्वभावाणं अणंतभागं जाणह पासह-इति तत्
समासतश्चतुर्विधं प्रज्ञप्तम् तद्यथा-द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतः । तत्र द्रव्यतो-
ऽवधिज्ञानीजघन्येनाऽनन्तानि रूपि द्रव्याणि जानाति पश्यति, उत्कृष्टेन सर्वाणि
रूपि द्रव्याणि जानाति पश्यति, क्षेत्रतः खलु अवधिज्ञानी जघन्येनांगुलस्यासंख्येय-

अनुयोगद्वार सूत्र के १४४ वें सूत्र में कहा है-'अवधिदर्शन
वाले का समस्त रूपी द्रव्यों में व्यापार होता है, मगर उनके समस्त
पर्यायों में नहीं' ।

नन्दिस्त्रुत्र के १६ वें सूत्र में भी कहा है-अवधिज्ञान संक्षेप से चार
प्रकार का है-द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से । द्रव्य की
अपेक्षा अवधिज्ञानी जघन्य अनन्त रूपी द्रव्यों को जानता-देखता है,
उत्कृष्ट समस्त रूपी द्रव्यों को जानता और देखता है । क्षेत्र की अपेक्षा
अवधिज्ञानी जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग को जानता-देखता

अनुयोगद्वार सूत्रना १४४માં સૂત્રમાં કહ્યું છે 'અવધિદર્શન અવધિદર્શન
વાળાના સમસ્ત રૂપી દ્રવ્યોમાં વ્યાપાર હોય છે પરંતુ તેમના સમસ્ત
પર્યાયોમાં નહીં'

નન્દીસૂત્રમાં ૧૬માં સૂત્રમાં પણ કહ્યું કે અવધિજ્ઞાન સંક્ષેપમાં ચાર પ્રકાર
રતું છે દ્રવ્યથી ક્ષેત્રથી કાલથી અને ભાવથી દ્રવ્યની અપેક્ષા અવધિજ્ઞાની
જઘન્ય અનન્ત રૂપી દ્રવ્યોને જાણે જુએ છે ઉત્કૃષ્ટ સમસ્ત રૂપી દ્રવ્યોને જાણે
જુએ છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષા અવધિજ્ઞાની જઘન્ય આંગણના અસંખ્યાતમાં ભાગને
જાણે જુએ છે, ઉત્કૃષ્ટ અલોકમાં લોકપ્રમાણ અસંખ્યાત ખડોને જાણે જુએ
છે, કાલથી અવધિજ્ઞાન જઘન્ય આવલિકાની અસંખ્યાતમાં ભાગને જાણે જુએ

भागं जानाति पश्यति उत्कृष्टेनाऽसंख्येयानि अलोलोकप्रमाणमितानि खण्डानि जानाति पश्यति, कालतः खलु अवधिज्ञानी जघन्येनानलीकायाऽसंख्येयभागं जानाति पश्यति, उत्कृष्टेनाऽसंख्येयाः उत्सर्पिण्यवसर्पिणीः अतीतम्-अनागतञ्च कालं जानाति पश्यति, भावतः खलु अवधिज्ञानी जघन्येन अनन्तान् भावान् जानाति पश्यति उत्कृष्टेनापि अनन्तान् भावान् जानाति पश्यति, सर्व भावानाम् अनन्तभागं जानाति पश्यति, इति ॥५१॥

मूलम्—मणपञ्जवनानो तदनन्तभागे ॥५२॥

छाया—मनः पर्यवज्ञानं तदनन्तभागे ॥५२॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वमवधिज्ञानस्य विषयः प्ररूपितः सम्पत्ति-अवधिज्ञानापेक्षया मनःपर्यवज्ञानस्य वैशिष्ट्यं प्रतिपादयितुं तस्य विषयमाह—‘मण

है, उत्कृष्ट अलोक में लोकप्रमाण असंख्यात खंडों को जानता-देखता है। काल से अवधिज्ञानी जघन्य आदितिका के असंख्यातवे भाग को जानता-देखता है, उत्कृष्ट असंख्यात अतीत और अनागत उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी कालों को जानता-देखता है। भाव से अवधिज्ञान जघन्य अनन्त भावों को जानता देखता है—सर्व भावों के अनन्तवे भाग को जानता और देखता है” ॥५१॥

‘मणपञ्जवनानो’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—मनःपर्यवज्ञान, अवधिज्ञान के विषय के अनन्तवे भाग को जानता है ॥५२॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले अवधिज्ञान के विषय का निरूपण किया गया, अब अवधिज्ञान की अपेक्षा मनःपर्यवज्ञान की विशिष्टता का प्रतिपादन करने के लिए उसके विषय का निरूपण करते हैं—

छे, उत्कृष्ट असंख्यात अतीत अने अनागत उत्सर्पिणि अने अवसर्पिणी कालोने जणुं छे लावथी अवधिज्ञानी जघन्य अनन्त लावोने जणुं छे अने उत्कृष्ट पणुं अनन्त लावोने जणुं छे सर्व लावोना अनन्तभां लागने जणुं अने जणुं छे. ॥ ५१ ॥

‘मणपञ्जवनानो’ इत्यादि

सूत्रार्थ—मनःपर्यवज्ञान, अवधिज्ञानना विषयना अनन्तभां लागने जणुं छे. ॥ ५२ ॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहला अवधिज्ञानना विषयनुं निरूपण करुं, छे अवधिज्ञाननी अपेक्षा मनःपर्यवज्ञाननी विशिष्टतानुं प्रतिपादन करवाने भाटे तेना विषयनुं निरूपण करीये छीये

પડજવનાળે તદ્વર્તનચાર્યો' इति मनःपर्यवज्ञानम्-पूर्वोक्तस्वरूपं तदनन्तभागे तस्याऽवधिज्ञानविषयीभूतस्य रूपि पुद्गलद्रव्यस्याऽपेक्षयाऽनन्ते-सूक्ष्मे भागे भवति । तथा च-यद् द्रव्यम् अवधिज्ञानं विषयी करोति तस्यापि अनन्तभागमेकं सूक्ष्मपदार्थं मनःपर्यवज्ञानं विषयी करोति । तथा चाऽवधिज्ञानविषयाऽपेक्षया मनःपर्यवज्ञानस्याऽत्यन्तसूक्ष्मपदार्थविषयकत्वात् अवधिज्ञानापेक्षया तस्य वैशिष्ट्यं वर्तते इति शङ्का । तथा च यानि रूपिपुद्गलद्रव्याणि अवधिज्ञानी जानाति तेषामवधिज्ञानविषयी कृत रूपि पुद्गलद्रव्याणां अनन्तभागे एकस्मिन् मनःपर्यवज्ञानस्य दृष्टिर्-इति एवम् अवधिज्ञानविषयस्य सर्वरूपि पुद्गलद्रव्यस्या नन्तभागमेकं मनःपर्यवज्ञानी जानाति । अतएवाऽवधिज्ञानापेक्षया मनःपर्यवज्ञान-वैशिष्ट्यं सुत्કુટાવશ્ચ વર્તતે इत्यवसेषम् । अवधिज्ञानमविरतसम्यग्दृष्टेरपि भवति मनःपर्यवज्ञानन्तु-संयतस्याप्रमत्तस्य, ऋद्धि प्राप्तस्यैव भवतीति विशेषः ॥५२॥

તત્ત્વार्થનિર્ચુક્તિઃ-પૂર્વ સૂત્રોક્તાવધિજ્ઞાનપેક્ષ્ય મનઃપર્યવજ્ઞાનસ્ય સૂક્ષ્મ-પદાર્થ વિષયકત્વાદ અવધિજ્ઞાનપેક્ષ્ય મનઃપર્યવજ્ઞાનસ્યોત્કૃષ્ટત્વં પ્રતિપાદયિતુમાહ-

મનઃપર્યવજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન કે વિષયભૂત રૂપી પુદ્ગલ દ્રવ્ય કે અન-
ન્તવે ભાગ કો જાનતા હૈ । અતઃ અવધિજ્ઞાન જિસ દ્રવ્ય કો વિષય
કરતા હૈ, હસકે અનન્તવે ભાગ કો મન,પર્યવજ્ઞાન વિષય કરતા હૈ ।
હસ કારણ અવધિજ્ઞાન ની અપેક્ષા મનઃપર્યવજ્ઞાન અત્યન્ત સૂક્ષ્મ પદાર્થ
કો જાનને કો કારણ હસકી અપેક્ષા વિશિષ્ટ હૈ । અવધિજ્ઞાન અવિરત
સમ્યગ્દૃષ્ટિ કો ખી પ્રાપ્ત હોતા હૈ કિન્તુ મનઃપર્યવજ્ઞાન અપ્રમત્તસંયત
ઔર ઋદ્ધિપ્રાપ્ત કો હી હોતા હૈ । યહ ખી હસકી વિશેષતા હૈ ॥૫૨॥

તત્ત્વર્થનિર્ચુક્તિ-પૂર્વસૂત્રોક્ત અવધિજ્ઞાન, મનઃપર્યવજ્ઞાનની અપેક્ષા
સૂક્ષ્મ પદાર્થ મેં પ્રવૃત્ત હોને કો કારણ વિશિષ્ટ હૈ, અતઃપ્રત્ય હસકી ઉત્કૃ-
ષ્ટતા કા પ્રતિપાદન કરતે હૈ-

મનઃપર્યવજ્ઞાન અવધિજ્ઞાનના વિષયભૂત રૂપી પુદ્ગલ દ્રવ્યના અનન્તમાં
લાગને જાણે છે અર્થાત્ અવધિજ્ઞાન જે દ્રવ્યને વિષય બનાવે છે, તેના અનન્તમાં
લાગને મનઃપર્યવજ્ઞાન વિષય બનાવે છે. આ કારણે અવધિજ્ઞાનની અપેક્ષા
મન પર્યવજ્ઞાન અત્યન્ત સૂક્ષ્મ પદાર્થને જાણવાના કારણે તેની અપેક્ષા વિશિષ્ટ
છે. અવધિજ્ઞાન અવિરત સમ્યગ્દૃષ્ટિને પણ પ્રાપ્ત થાય છે પરન્તુ મનઃપર્યવ-
જ્ઞાન અપ્રમત્ત સંયત અને ઋદ્ધિપ્રાપ્તને જ થાય છે એ પણ એની
વિશેષતા છે. ॥ ૫૨ ॥

તત્ત્વર્થનિર્ચુક્તિ--પૂર્વસૂત્રોક્ત અવધિજ્ઞાન મનઃપર્યવજ્ઞાનની અપેક્ષા
સૂક્ષ્મ પદાર્થોમાં પ્રવૃત્ત થવાના કારણે વિશિષ્ટ છે. આથી તેની ઉત્કૃષ્ટતાનું
પ્રતિપાદન કરીએ છીએ

‘મનઃપર્યવજ્ઞાને તદનન્તભાગે’ इति । मनःपर्यवज्ञानम्-पूर्वोक्तस्वरूपं तदनन्त-
भागे, तस्याऽवधिज्ञानविषयीकृतस्य रूपिपुद्गलद्रव्यस्याऽनन्ते सूक्ष्मे एकस्मिन्
भागे प्रवर्तते । एवञ्च-यद् रूपि पुद्गल द्रव्यम् अवधिज्ञानं विषयी करोति तस्यापि
अनन्तभागं सूक्ष्ममेक पदार्थं मनःपर्यवज्ञानं विषयी करोति । तथा च-यानि रूपि
पुद्गलद्रव्याणि अवधिज्ञानी जानाति तेषामवधिज्ञानदृष्टरूपि पुद्गलद्रव्याणां
मनन्तभागमेकं मनःपर्यवज्ञानी जानाति । तान्यपि चाऽवधिज्ञानविषयानन्तभागव-
र्तीनि रूपि द्रव्याणि न कुड्याद्याकारव्यवस्थितानि जानाति । अपितु-मनश्चि-
न्तनविचाराऽन्वेषणविषयीभूतान्येव जानातीति तानि पुनर् सर्वलोकवर्तिनि,
अपितु मनुष्यक्षेत्रवर्तीन्येव जानातीति भावः । तानि चाऽवधिज्ञानिनः सकाशात्
विशुद्धतराणि अत्यन्त सूक्ष्मपर्यायाणि द्रव्याणि मनःपर्यवज्ञानी जानातीति

અવધિજ્ઞાન કે વિષયભૂત રૂપી પુદ્ગલદ્રવ્ય કે અનન્ત સૂક્ષ્મ એક
ભાગ મેં મનઃપર્યવજ્ઞાન કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । હસ પ્રકાર જિસ રૂપી પુદ્-
ગલ દ્રવ્ય કો અવધિજ્ઞાન જાનતા હૈ, ઉરુકે બી અનન્તભાગ સૂક્ષ્મ એક
પદાર્થ કો મનઃપર્યવજ્ઞાન જાનતા હૈ । અતઃએવ જિન રૂપી પુદ્ગલ દ્રવ્યો
કો અવધિજ્ઞાની જાનતા હૈ, ઉન અવધિજ્ઞાન કે દ્વારા દૃષ્ટ-જ્ઞાન રૂપી
પુદ્ગલ દ્રવ્યો કે અનન્ત ભાગ-એક કો મનઃપર્યવજ્ઞાની જાનતા હૈ । અવ-
ધિજ્ઞાન કે વિષય સે અનન્તવેં ભાગવર્તી રૂપી દ્રવ્યો કો કુડય (દીવાર)
આદિ આકારોં મેં વ્યવસ્થિત રૂપ સે નહીં જાનતા હૈ કિન્તુ મન દ્વારા
ચિન્તન, વિચાર એવં અન્વેષણ કે વિષયભૂત દ્રવ્યો કો હી જાનતા હૈ ।
ઉન દ્રવ્યો કો બી સમસ્ત લોક મેં નહીં જાનતા વરન્ મનુષ્ય ક્ષેત્રવર્તી
દ્રવ્યો કો હી જાનતા હૈ । અવધિજ્ઞાની કી અપેક્ષા વિશુદ્ધતર ઓર
અત્યન્ત સૂક્ષ્મ પર્યાય વાલે દ્રવ્યો કો મનઃપર્યવજ્ઞાની જાનતા હૈ ।

અવધિજ્ઞાનના વિષયભૂત રૂપી પુદ્ગલદ્રવ્યના અનન્ત સૂક્ષ્મ એક ભાગમાં
મનઃપર્યવજ્ઞાનની પ્રવૃત્તિ થાય છે. આ રીતે જે રૂપી પુદ્ગલ દ્રવ્યને અવધિજ્ઞાન
જાણે છે તેના પણ અનન્ત ભાગ સૂક્ષ્મ એક પદાર્થને મનઃપર્યવજ્ઞાન જાણે છે.
આથી જે રૂપી પુદ્ગલ દ્રવ્યોને અવધિજ્ઞાની જાણે છે, તે અવધિજ્ઞાન દ્વારા દૃષ્ટ-
જ્ઞાન રૂપી પુદ્ગલ દ્રવ્યોના અનન્ત ભાગ-એકને મનઃપર્યવજ્ઞાની જાણે છે. અવધિ-
જ્ઞાનના વિષયથી અનન્તમાં ભાગવર્તી રૂપી દ્રવ્યોને દીવાલ આદિ આકારોમાં વ્ય-
વસ્થિત રૂપથી જાણતા નથી પરન્તુ મનદ્વારા ચિન્તન, વિચાર અને અન્વેષણના
વિષયભૂત દ્રવ્યોને જ જાણે છે. તે દ્રવ્યોને પણ સમસ્ત લોકમાં જાણતો નથી
પરન્તુ મનુષ્યક્ષેત્રવર્તી દ્રવ્યોને જ જાણે છે. અવધિજ્ઞાનીની અપેક્ષા વિશુદ્ધતર
અને અત્યન્ત સૂક્ષ્મ પર્યાયવાળા દ્રવ્યોને મનઃપર્યવજ્ઞાની જાણે છે.

भावः । उक्तञ्च भगवती सूत्रे ८ शतके ३ उद्देशके ३२३ सूत्रे—‘सन्वत्थोवा मणपज्जवणाणपणजवा, ओहिणाणपज्जवा अणंतगुणा, सुयनाणप-
ज्जवा अणंतगुणा, आभिनिबोहियनाणपज्जवा अणंतगुणा केवलनाण-
पज्जवा अणंतगुणा—’ इति । सर्वस्तोकाः मनःपर्यवज्ञानपर्यवाः अवधिज्ञान-
पर्यवा अनन्तगुणाः श्रुतज्ञानपर्यवा अनन्तगुणाः, आभिनिबोधिक ज्ञानपर्यवा अन-
न्तगुणाः, केवलज्ञानपर्यवाः अनन्तगुणाः इति ॥५२॥

मूलम्—मोहणिज्जणाणदंसणावरणांतरायकख्याय केवल-
णाणं ॥५३॥

छाया—मोहनीय ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलज्ञानम् ॥५३॥

तत्त्वार्थदीपिका—‘पूर्व’ ज्ञानावरणादिकर्मणां लक्ष्ये क्षये जनिष्यमाणो मोक्षः
केवलज्ञानोत्पत्ति कारणमाह—‘मोहणिज्ज’—इत्यादि । मोहनीयज्ञानदर्शनावरणा-

भगवतीसूत्र के आठवें शतक के द्वितीय उद्देशक में सूत्र २२३ में
कहा है—‘मनःपर्यवज्ञान के पर्याय सब से कम हैं, अवधिज्ञान के पर्याय
उससे अनन्तगुणा हैं, श्रुतज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा हैं, आभिनिबो-
धिकज्ञान के पर्याय अनन्तगुणा हैं और केवलज्ञान के पर्याय अनन्त
गुणा हैं ॥५२॥

‘मोहणिज्जणाणदंसणा’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—मोहनीय, ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्म
के क्षय से केवलज्ञान की उत्पत्ति होती है ॥५३॥

तत्त्वार्थदीपिका—ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का पूर्ण रूप से क्षय
होने पर उत्पन्न होने वाला मोक्ष केवलज्ञान की उत्पत्ति के बिना संभव
नहीं है, अतएव केवलज्ञान की उत्पत्ति का कारण कहते हैं—

ભગવતીસૂત્રના આઠમાં શતકના દ્વિતીય ઉદ્દેશકના સૂત્ર ૩૨૩માં કહ્યું છે
મનઃપર્યવજ્ઞાનના પર્યાય બધાથી ઓછા છે અવધિજ્ઞાનના પર્યાય તેનાથીઅનન્ત
ગણા છે, આભિનિબોધિકજ્ઞાનના પર્યાય અનન્તગણા છે અને કેવળજ્ઞાનના
પર્યાય અનન્તગણા છે ॥ ૫૨ ॥

‘મોહણિજ્જણાણદંસણા’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—મોહનીય, જ્ઞાનાવરણ દર્શનાવરણ અને અન્તરાય કર્મના ક્ષયથી
કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થાય છે. ॥ ૫૩ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનો સંપૂર્ણપણે ક્ષય થઈ
જવાથી ઉત્પન્ન થનાર મોક્ષ કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ વગર શક્ય નથી આથી
કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિનું કારણ કહીએ છીએ

અન્તરાયક્ષયાત્—અષ્ટાવિંશતિવિધસ્ય મોહનીયકર્મણઃ ક્ષયાત્, પશ્ચવિધસ્ય જ્ઞાનાવરણીય-
કર્મણઃ ક્ષયાત્, નવવિધસ્ય—દર્શનાવરણીયકર્મણઃ ક્ષયાત્, પશ્ચવિધસ્યાઅન્તરાયકર્મણઃ
ક્ષયાત્, ચકારાત્ મનુષ્યાઽઽયુષ્યવર્જાયુષ્યત્રયસ્ય ક્ષયાત્ સાધારણાતપ પશ્ચેન્દ્રિય
ભિન્નચતુર્જાતિ નરકગતિ નરકગત્યાનુપૂર્વી સ્થાવર સૂક્ષ્મતિર્યગ્ગતિ તિર્યગ્ગત્યાનુ-
પૂર્વી—ઉદ્યોતલક્ષણત્રયોદશવિધનામકર્મણઃ ક્ષયાત્ચ ત્રિપષ્ટિ કર્મપ્રકૃતિ ક્ષયરૂપાત્
કેવલજ્ઞાન મુત્પદ્યતે इतिभावः । તત્ર—સર્વપ્રથમ મોહનીયકર્મણ એવ દર્શનીયચારિત્ર-
મોહનીયરૂપસ્ય ક્ષયપ્રતિપાદનાર્થે પ્રથમ મોહનીયપદોપાદનમવસેયમ્ ॥૫૨॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મણામન્તરાયાણાં સર્વતઃ ક્ષયે

અટ્ટાઈસ પ્રકાર કે મોહનીય કર્મ કે ક્ષય સે, પાંચ પ્રકાર કે જ્ઞાના-
વરણીય કર્મ કે ક્ષય સે નૌ પ્રકાર કે દર્શનાવરણીય કર્મ કે ક્ષય સે
ઔર પાંચ પ્રકાર કે અન્તરાય કર્મ કે ક્ષય સે તથા ‘ચ’ શબ્દ કે પ્રયોગ
સે મનુષ્યાયુ કે સિવાય ત્રીજ આયુષો કે ક્ષય સે, સાધારણ નામકર્મ
આતપ નામકર્મ, પંચેન્દ્રિય જાતિ કો છોડકર ચાર જાતિયો કે ક્ષય સે,
નરકગતિ, નરકગત્યાનુપૂર્વી, સ્થાવર, સૂક્ષ્મ, તિર્યચગતિ, તિર્યચગત્યાનુ-
પૂર્વી એવં ઉદ્યોત—હન તેરહ પ્રકાર કે નામકર્મ કે ક્ષય સે ત્રેસઠ કર્મ-
પ્રકૃતિયો કા ક્ષય હોને પર કેવલજ્ઞાન કો ઉત્પત્તિ હોતી હૈ । સર્વપ્રથમ
દર્શન—ચારિત્ર મોહનીય રૂપ મોહનીય કર્મ કા ક્ષય હોતા હૈ, યહ વત-
લાને કો લિપે સર્વપ્રથમ મોહનીય કર્મ કા ગ્રહણ કિયા હૈ, એસા સમજ
લેના ચાહિપ ॥૫૩॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મો કા સર્વથા ક્ષય હોને

અઠ્યાવીસ પ્રકારના મોહનીયકર્મના ક્ષયથી, પાંચ પ્રકારના જ્ઞાનાવરણીય
કર્મના ક્ષયથી નવ પ્રકારના દર્શનાવરણીય કર્મના ક્ષયથી અને પાંચ પ્રકારના
અન્તરાય કર્મના ક્ષયથી તથા ‘ચ’ શબ્દના પ્રયોગથી મનુષ્યાયુ સિવાયના ત્રણ
આયુષ્યોના ક્ષયથી સાધારણ નામકર્મ, આતપ નામ કર્મ, પંચેન્દ્રિય જાતિને
બાદ કરતાં ચાર જાતિઓના ક્ષયથી નરકગતિ નરકગત્યાનુપૂર્વી, સ્થાવર, સૂક્ષ્મ
તિર્યચગતિ તિર્યચગત્યાનુપૂર્વી અને ઉદ્યોત આ તેર પ્રકારના નામકર્મના ક્ષય
થી ત્રેસઠ કર્મ પ્રકૃતિઓના ક્ષય થવાથી કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થાય છે.
સર્વપ્રથમ દર્શન ચારિત્ર મોહનીય રૂપ મોહનીય કર્મનો ક્ષય થાય છે, એ
દર્શવવા માટે સર્વપ્રથમ મોહનીયકર્મ ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે, એવું
ક્ષમણ લેવાનું છે ॥ ૫૩ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સર્વથા ક્ષય થવાથી મોક્ષ

જનિબ્યમણો મોહઃ કેવલજ્ઞાનવત્તરા ન સમ્યક્વતીતિ કેવલજ્ઞાનોત્પત્તિરેતુમાહ—
'મોહણિજ્ઞાનાન્ય હંસનાચરણાંઃરાયદલયાય કેવલનાર્ણ'—ઈતિ । મોહનીય-
જ્ઞાનદર્શનાવરણીયાન્તરાયક્ષયાચ્ચ કેવલજ્ઞાનં ચલતિ, તત્રાષ્ટાધિકૃતિવિધસ્ય દર્શન-
ચારિત્રમોહનોયકર્મજઃ, પશ્ચાદિત્થસ્ય જ્ઞાનાવરણીયકર્મજઃ નવવિધસ્ય દર્શનાવરણીય
કર્મજઃ, પશ્ચાદિવદ્વદા—ન્તરાયકર્મજઃ ક્ષયાત્ ચકારાત્—મનુષ્યાબુધ્યભિન્નસ્ય નરક
તિર્યગ્દેવાબુધ્યરૂપસ્ય ત્રિવિધસ્યાઽઽબુધ્યકર્મજઃ ક્ષયાત્, સાધારણાઽઽતપ પશ્ચેન્દ્રિય
ભિન્ન ચતુર્જાતિ નરકગતિ નરકગત્યાનુપૂર્વી સ્થાવર સૂક્ષ્મતિર્યગ્ગતિ તિર્યગ્મત્યાનુ-
પૂર્વી—ઉદ્યોતલક્ષણત્રયોદશવિધનામકર્મક્ષયાચ્ચ ત્રિપષ્ટિ કર્મપ્રકૃતિભેદરૂપાત્
કેવલજ્ઞાનમુત્પત્તયેતે ઇતિભાવઃ । તત્ર—પ્રથમં તાવત્ તથોવિશેષાઽનુષ્ઠાનાદિના-ઽપ્ષ્ટા-

પર મોહ ઉત્પન્ન થોતા છે, કિન્તુ કેવલજ્ઞાન કે વિના ચહ સંભવ નહીં
હૈ, અતઃ કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ કે કારણો કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

મોહનીય, જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ ઓર અન્તરાય કર્મ કે ક્ષય
સે કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન થોતા હૈ । અઘાઈક પ્રકાર કે દર્શન-ચારિત્ર મોહ-
નીય કે, પાંચ પ્રકાર કે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે, ત્રી પ્રકાર કે દર્શનાવ-
રણીય કર્મ કે ઓર પાંચ પ્રકાર કે અન્તરાય કર્મ કે ક્ષય સે તથા 'અ'
શબ્દ કે પ્રયોગ સે મનુષ્યાયુ સે ભિન્ન શેષ ત્રીન આયુષ્ય-નરકાયુ,
તિર્યંચાયુ ઓર દેવાયુ કર્મ કે ક્ષય સે, સાધારણ, આતપ, પંચેન્દ્રિય
કી જોડ શેષ ચાર જાતિયો કે, નરકગતિ, નરકગત્યાનુપૂર્વી, સ્થાવર,
સૂક્ષ્મ, તિર્યંચગતિ, તિર્યંચગત્યાનુપૂર્વી ઓર ઉદ્યોત—ઈસ પ્રકાર તેરહ
તેરહ કે નામકર્મ કે ક્ષય સે, કુલ ત્રેલક કર્મપ્રકૃતિયો કે ક્ષય સે
કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન થોતા હૈ ।

ઉત્પન્ન થાય છે. પરંતુ કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ વગર શક્ય નથી, આથી કેવળજ્ઞાન
ની ઉત્પત્તિનું કારણ કહીએ છીએ

મોહનીય, જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ, અને અન્તરાય કર્મના ક્ષયથી કેવળ
જ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. અઠ્યાવીસ પ્રકારના દર્શનચારિત્ર મોહનીયના, પાંચ
પ્રકારના જ્ઞાનાવરણીયકર્મના, નવ પ્રકારના દર્શનાવરણીયકર્મના અને પાંચ
પ્રકારના અન્તરાયકર્મના ક્ષયથી તથા 'અ' શબ્દના પ્રયોગથી મનુષ્યાયુથી ભિન્ન
બાકીના ત્રણ આયુષ્ય નરકાયુ, તિર્યંચાયુ અને દેવાયુ કર્મના ક્ષયથી, સાધારણ
આતપ, પંચેન્દ્રિયને છોડી શેષ ચાર જાતિઓના નરકગતિ, નરકગત્યાનુપૂર્વી
સ્થાવર સૂક્ષ્મ, તિર્યંચગતિ, તિર્યંચગત્યાનુપૂર્વી અને ઉદ્યોત આ રીતે તેર
પ્રકારના નામકર્મના ક્ષયથી, કુલ તેજસઠ કર્મપ્રકૃતિઓના ક્ષયથી કેવળજ્ઞાન
ઉત્પન્ન થાય છે.

વિંશતિવિધે મોહનીયકર્મણિ ક્ષીણે સન્તિ પશ્ચવિધ જ્ઞાનાવરણ નવવિધ દર્શનાવરણ
પશ્ચવિધાન્તરાયકર્મસુ ક્ષીણેષુ મનુષ્યાયુષ્યભિન્ને ત્રિવિધાયુષ્યકર્મણિ ચ ક્ષીણે
પૂર્વોક્ત ત્રયોદશ નામકર્મસુ ચ ક્ષીણેષુ સમસ્ત દ્રવ્યપર્યાયપરિચ્છેદિ કેવલજ્ઞાન
દર્શનં ઘાતિકર્મ ચતુષ્ટયાપગમાત્ પ્રાદુર્ભવતીતિ ભાવઃ, ઉક્તશ્ચ સ્થાનાંગે ૩
સ્થાને-“સ્ત્રીગમ્મોહસ્સણં અરહઓ તઓ કમ્મંસા જુગવં સ્વિજ્જંતિ,
તં જહા-નાણાવરણિજ્જં, દંસણાવરણિજ્જં, અંતરાહયં-” इति, ક્ષીણ-
મોહસ્ય સ્વલુ અર્હતસ્ત્રયઃ કર્મણાઃ યુગપત્ ક્ષીયન્તે, તદ્યથા-જ્ઞાનાવરણીયં,
દર્શનાવરણીયમ્, આન્તરાયિકમ્, इति ॥૫૩॥

મૂલમ્—સઘ્વદઘ્વપજ્જવાભાસિણાણં કેવલં ॥૫૪॥

છાયા—સર્વ દ્રવ્ય પર્યાવાવભાસિ જ્ઞાનં કેવલમ્ ॥૫૪॥

પહેલે વિશિષ્ટ તપ કે અનુષ્ઠાન આદિ દ્વારા અઢાઈસ પ્રકાર કે મોહ-
નીય કર્મ કે ક્ષય હોને પર તથા પાંચ પ્રકાર કે જ્ઞાનાવરણ, નૌ પ્રકાર કે
દર્શનાવરણ ઔર પાંચ પ્રકાર કે અન્તરાય કર્મ કા ક્ષય હોને પર, મનુ-
ષ્યાયુ કે સિવાય ત્રીન પ્રકાર કે આયુ કર્મ કા ક્ષય હોને પર ઔર તેરહ
પ્રકાર કે નામકર્મ કા ક્ષય હોને પર સમસ્ત દ્રવ્યો ઔર પર્યાયો કો જાનને
વાલા કેવલજ્ઞાન ઔર કેવલદર્શન, ચાર ઘાતિયા કર્મો કે હટ જાને સે
પ્રકટ હોતા હૈ । સ્થાનાંગસૂત્ર કે તૌસરે સ્થાન મેં કહા હૈ-‘જિસકા મોહ-
કર્મ ક્ષીણ હો ચુકા હૈ ઝન અરિહન્ત કે ત્રીન કર્મણેક સાથ ક્ષય
કો પ્રાપ્ત હોતે હૈ, યથા-જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, ઔર અન્તરાય ॥૫૩॥

‘સઘ્વ દઘ્વ પજ્જવા’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—કેવલજ્ઞાન સમસ્ત દ્રવ્યો ઔર પર્યાયો કો જાનતા હૈ ॥૫૪॥

અગાઉ વિશિષ્ટ તપના અનુષ્ઠાન આદિ દ્વારા અઠ્યાવીસ પ્રકારના મોહનીય
કર્મનો ક્ષય થવાથી તથા પાંચપ્રકારના જ્ઞાનાવરણ નવ પ્રકારના દર્શનાવરણ
અને પાંચ પ્રકારના અન્તરાય કર્મનો ક્ષયથવાથી, મનુષ્યાયુ સિવાયના ત્રણ
આયુષ્ય કર્મનો ક્ષય થવાથી અને તેર પ્રકારના નામકર્મનો ક્ષય થવાથી સ-
મસ્ત દ્રવ્યો અને પર્યાયોને બાણનાર કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શન, ચાર ઘાતિ
કર્મોના હર થવાથી પ્રકટ થાય છે. સ્થાનાંગસૂત્રના ત્રીજા સ્થાનમાં કહ્યું છે -
જેમનું મોહકર્મ ક્ષીણ થઈ ચુક્યું છે તે અરિહન્તના ત્રણ કર્મણેક સાથે
ક્ષયને પ્રાપ્ત થાય છે જેમકે જ્ઞાનાવરણીય, અને દર્શનાવરણીય અને અન્તરાય ॥૫૩॥

‘સઘ્વદઘ્વ પજ્જવા’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—કેવળજ્ઞાન સમસ્ત દ્રવ્યો તેમજ પર્યાયોને બાણે છે. ॥૫૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વતાવત્ કેવલજ્ઞાનપૂર્વિકા મોક્ષપ્રાપ્તિર્ભવતીતિ મોક્ષ પ્રાપ્ત્યર્થે કેવલજ્ઞાનોત્પત્તિ કારણતયા જ્ઞાનાવરણ-દર્શનાવરણ-મોહનીયાન્તરાય રૂપઘાતિકર્મચતુષ્ટયસ્ય તપોઽનુષ્ઠાનાદિનાશયઃ પ્રતિપાદિતઃ સમ્પત્તિ-કેવલજ્ઞાનસ્ય લક્ષણં પ્રરૂપયિતુમાહ-‘સઽઽ દઽઽવપઽઽજઽઽદોઽઽશ્ચિણાણં કેવલં’-ઇતિ । સર્વદ્રવ્ય-પર્યાયાવમાસિ સર્વેષાં દ્રવ્યાણાં ધર્માધર્માકાશકાલપુદ્ગલજીવસ્વરૂપાણાં સર્વેષાં પર્યાવાનાઞ્ચા-ઽવમાસિ પ્રકાશનં જ્ઞાનં કેવલમુચ્યતે, તસ્ય ચ કેવલજ્ઞાનસ્ય મત્યાદિ-જ્ઞાનાન્તરા સંસૃષ્ટત્વેના-ઽસહાયત્વાત્ કેવલવ્યપદિવ્યતે । તથા ચ-સઽલદ્રવ્ય સઽલપર્યાયવિષયકં જ્ઞાનં ભવતીતિ વોધ્યમ્ । તથાચ કેવલમ્-એકમ્-અસહાયમ્, ઇન્દ્રિયાદિ સાહાય્યાનપેક્ષણાત્ । યદ્વા-કેવલં સઽલં-સઽર્પૂર્ણમ્, સઽર્પૂર્ણજ્ઞેયગ્રાહિ-

તત્ત્વાર્થદીપિકા—મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ કેવલજ્ઞાન કે હોને પર હોતી હૈ, અતएव મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ કે લિએ કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ કા કારણ જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ, મોહનીય ઓર અન્તરાય, इन चार घाति कर्मों का तपश्चरण आदि के द्वारा क्षय प्रतिपादन किया गया, अब केवलज्ञान के लक्षण का निरूपण करते हैं—

સમસ્ત દ્રવ્યોં ઓર પર્યાયોં કો જાનને ચાલા કેવલજ્ઞાન હૈ અર્થાત્ જો જ્ઞાન, ધર્મ, અધર્મ, આકાશ, કાલ, પુદ્ગલ ઓર જીવ રૂપી સમી દ્રવ્યોં કો ઓર ઉને સમસ્ત પર્યાયોં કો યુગપત્ પ્રત્યક્ષ રૂપ સે જાનતા હૈ, વહ કેવલજ્ઞાન કહલાતા હૈ । કેવલજ્ઞાન કે ઉત્પન્ન હોને પર મતિજ્ઞાન આદિ કોઈ મી અન્ય જ્ઞાન નહીં રહતા અતएव उसका कोई सहायक साथी ज्ञान न होने से वह ‘केवल’ कहलाता है । अतएव यह समझना चाहिए कि केवलज्ञान का विषय सफल द्रव्य और सफल पर्याय है ।

તત્ત્વાર્થદીપિકા—મોક્ષની પ્રાપ્તિ કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થવા થાય છે, આથી મોક્ષની પ્રાપ્તિને માટે કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિના કારણ જ્ઞાનાવરણ દર્શનાવરણ, મોહનીય અને અન્તરાય, એ ચાર ઘાતિ કર્મોનો તપશ્ચર્ય આદિ દ્વારા ક્ષયનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું, હવે કેવળજ્ઞાનના લક્ષણનું નિરૂપણ કરીએ છીએ

સમસ્ત દ્રવ્યો અને પર્યાયોને જાણનાર કેવળજ્ઞાન છે. અર્થાત્ જે જ્ઞાન ધર્મ, અધર્મ, આકાશ, કાલ, પુદ્ગલ અને જીવ રૂપ યદાં દ્રવ્યોને અને તેમના સમસ્ત પર્યાયોને યુગપત્ પ્રત્યક્ષ રૂપથી જાણે છે, તે કેવળજ્ઞાન કહેવાય છે કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થવાથી મતિજ્ઞાન આદિ કોઈ પણ અન્ય જ્ઞાન રહેતું નથી આથી તેનું કોઈ સહાયક સાથી જ્ઞાન ન હોવાથી તે કેવળ કહેવાય છે આથી એ સમજવાનું છે કે કેવળજ્ઞાનનો વિષય સફળ દ્રવ્ય અને સફળ પર્યાય છે.

ત્વાત્ ! યદ્વા-કેવલમ્-અસાધારણમ્-અનન્યસદૃશમ્, તાદૃશપરજ્ઞાનાભાવત્ ।
 યદ્વા-કેવલમ્ અનન્યમ્, અપ્રતિપાતિત્વેન પર્યાવાપરહિતત્વાત્ । જ્ઞેયાનન્તઃકાવચ-
 હસ્યેન્નમેકાદિષ્વર્થેષુ કેવલશબ્દો (અન-) વર્તતે, તદ્વૃપ્ત જ્ઞાનં-કેવલજ્ઞાન મુચ્યતે ।
 એવમ્-તોદૃશ્યે જ્ઞાનાવરણ-દર્શનાવરણા-અન્તરાયકર્મણા તત્પ્રવૃત્તિર્નાંચા-અસ્ત-
 ન્તિકનિરવશેષમ્પ્રભવં કારણત્વકલિનનિમ્નુલ સ્વચ્છચુક્તાફલામ્લાનં યથા-
 વશિષ્ઠતા-અશોષપૂત-ભવત્-માર્ગિયાસ્યમાદાવશામકં કેવલ મ્ નં મન્વીતિજ્ઞાનઃ ।
 તત્ર જીવદ્રવ્યાણિ તાવદનન્તર્યામિ વર્તન્તે, પુદ્ગલદ્રવ્યાણ્યપ્યનન્તાનિ-અણુ સ્કન્ધ-
 મેદેન મિદ્ધાનિ સન્તિ, ધર્માધર્માકાશાનિ ત્રીણી દ્રવ્યાણિ અનેક પ્રદેશન્વેઽપિ
 કેવલ અર્થાત્ એકલા યા અસહાય ધર્મોત્તિ વત્ ઇન્દ્રિય આદિ કી ત્વા-
 યતા ધી અપેક્ષા નહીં રચ્ચતા । અથવા કેવલ શબ્દ કા અર્થ હૈ-સહાય,
 સમ્પૂર્ણ, ક્યોંકિ વહ સમસ્ત જ્ઞેય પદાર્થ કો પ્રત્યક્ષ કરતા હૈ । અથવા
 કેવલ અર્થાત્ અસાધારણ, અનન્યસદૃશ, ક્યોંકિ જેવા જ્ઞાન દ્વારા
 કોઈ નહીં હૈ । અથવા કેવલ અર્થાત્ અનન્ત, ક્યોંકિ વહ અપ્રતિપાતિ
 હોને સે અન્તરહિત હૈ તથા ઉલ્લેખે જ્ઞેય ધી અનન્ત હૈ । હસ પ્રજાર યહાં
 કેવલ શબ્દ એક આદિ અર્થ વાલા હૈ ।

હસ પ્રકાર મોહ કા ક્ષય હોને પર ઔર જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ,
 તથા અન્તરાય કર્મ કા સર્વથા ક્ષય હોને પર ઉત્પન્ન હોને વાલા, હચેલી
 પર રક્ષે છુપ અતુલ અતુલ મોતી કે સમાન, અર્થાત્, સમસ્ત ભૂત વર્ત-
 માન ઔર અવિષ્ણત્કાલીન પદાર્થો કો જાનને વાલા કેવલજ્ઞાન હોના હૈ ।

હસમે સે જીવ દ્રવ્ય અનન્ત હૈ । પુદ્ગલ દ્રવ્ય ધી અનન્ત હૈ ઔર

કેવળ અર્થાત્ એકલું અથવા અસહાય, કારણ કે તે ઇન્દ્રિય આદિની સહાયતા
 ની અપેક્ષા રાખતું નથી અથવા કેવળ શબ્દનો અર્થ થાય એકળ સમ્પૂર્ણ,
 કારણ કે તે સમસ્ત જ્ઞેય પદાર્થોને ગ્રહણ કરે છે. અથવા કેવળ અર્થાત્ અસા-
 ધારણ, અનન્ય સદૃશ કેમકે એવું જ્ઞાન બીજું કોઈ જ નથી. અથવા કેવળ
 અર્થાત્ અનન્ત, કારણકે તે અપ્રતિપાતી હોવાથી અન્તરહિત છે તથા તેના ક્ષય
 પણ અનન્ત છે, આ રીતે આહીં કેવળ શબ્દ એક આદિ અર્થવાળો છે.

આ પ્રમાણે મોહનો ક્ષય થવાથી અને જ્ઞાનાવરણ દર્શનાવરણ તથા
 અન્તરાય કર્મનો સર્વથા ક્ષય થવાથી ઉત્પન્ન થનાર હથેળી પર રાખેલા અતુલ
 સ્થૂળ મોતીની સમાન યથાર્થ સમસ્ત ભૂત, વર્તમાન અને અવિષ્ણત્ કાલીન
 પદાર્થોને બાણનાર કેવળજ્ઞાન હોય છે.

આ માંથી હવદ્રવ્ય અનન્ત છે. પુદ્ગલદ્રવ્ય પણ અનન્ત છે અને તે

खण्डात्मकत्वाभावात् प्रत्येक मेकत्ववन्ति। कालद्रव्यमप्यनन्तं वर्तते, तस्याऽतीता-ऽनागतादिरुक्त्येन नातात्वं बोध्यम्। तेषां षण्णाजपि द्रव्याणां पर्यायाश्च त्रिकालभूयः प्रत्येकाननन्तानन्ता भवन्ति, तेषु द्रव्यं-पर्यायजातं वा न किञ्चिदपि केवलज्ञानस्य विषयता न निष्कामति, अपितु-सर्वमेवद्रव्यं पर्यायजातञ्च केवलज्ञानस्य विषयो भवति। अपरिमितमाहान्यं खलु केवलज्ञानं भवति येन सर्वमपि द्रव्यं पर्यायश्च विषयी करोति तच्च केवलज्ञानम् एतमेव तिष्ठति न तेन सह-इतराणि क्षायोपशमिकादीनि युगपद्वदि-ठन्ते, कदाचित्-मतिश्रुते द्वे अपि युगपत्संभवतः, कदाचित् त्रीणि मतिश्रुता-ऽवधिज्ञानानि युगपत्संभवन्ति। कदाचित्-चत्वारि

वे अणु तथा इतन्व के भेद से भिन्न हैं। धर्म, अधर्म और आकाश द्रव्य अनेकप्रदेशी होने पर भी खंडात्मक न होने के कारण एक-एक ही हैं। कालद्रव्य भी अनन्त है और अतीत तथा अनागत आदि के भेद से नाना प्रकार का है। उन छहों द्रव्यों के त्रिकालभावी पर्याय प्रत्येक के अनन्तानन्त हैं। इनमें से कोई भी द्रव्य पर्याय केवलज्ञान के विषय से पर नहीं है। बल्कि सभी द्रव्य और सभी पर्याय केवलज्ञान के विषय हैं। केवलज्ञान का साहाय्य अपरिमित है, जिससे वह सभी द्रव्यों और पर्यायों को जानता है। केवलज्ञान अकेला ही रहता है। उसके साथ कोई भी क्षायोपशमिक ज्ञान नहीं रह सकता। मतिज्ञान और श्रुतज्ञान दोनों एक साथ ही रहते हैं, कदाचित् किसी आत्मा में मति, श्रुत और अवधि अथवा मति, श्रुत और मनःपर्यव ये तीन ज्ञान एक साथ होते हैं, किसी आत्मा में मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्यव,

अणु तथा इतन्व लेखी लिखन छे. धर्म, अधर्म अने आकाश द्रव्य अनेक प्रदेशी होवा छतां पणु अणुडात्मक न होवाना कारणे ओक ओक न छे. काल द्रव्य पणु अनन्त छे अने अतीत तथा अनागत आदिना लेखी विविध प्रकारना छे. आ छये द्रव्योना त्रिकाण भावीपर्याय प्रत्येकना अनन्तानन्त छे. आभांथी कौं पणु द्रव्य अथवा पर्याय केवलज्ञानना विषयथी पर नथी अदके अर्थां द्रव्य अने अर्थां पर्याय केवलज्ञानना विषय छे. केवलज्ञाननुं भाडात्म्य अपरिमित छे जेथी ते अर्थां द्रव्यो अने पर्यायोने न्छे छे. केवलज्ञान ओकलुं न रहै छे. तेनी साथे कौं पणु क्षायोपशमिक ज्ञान रही शकतुं नथी. मति-ज्ञान अने श्रुतज्ञान अने ओक साथे न रहै छे, कदाचित् कौं आत्माभां मति श्रुत अने अवधि अथवा मति. श्रुत अने मनःपर्यव ओ त्रय ज्ञान संयुक्त

મતિશ્રુતા-અવધિ-મનઃપર્યવજ્ઞાનાનિ યુગપદ્ ભવન્તિ । કિન્તુ-ન કદાચિત્-પશ્ચા-
અપિ જ્ઞાનાનિ યુગપદ્ ભવન્તિ-કેવલજ્ઞાનસ્ય-અસહાયત્વાત્ इति भावः ॥૫૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વસૂત્રે મોક્ષપ્રાપ્તિમ્પતિ હેતુભૂતસ્ય કેવલજ્ઞાનસ્યો-
ત્પાદકારણત્વેન જ્ઞાનાઅવરણ-દર્શનાવરણ-મોહનીયાન્તરાયરૂપઘાતિકર્મચતુષ્ટનસ્ય
તપો વિશેષાનુષ્ઠાનવિપાકાદિના ક્ષયઃ મતિપ્રાદિતઃ સમ્પ્રતિ-કેવલજ્ઞાન-
સ્ય લક્ષણં પ્રરૂપયિતુમાદ-“સઽવ દ્રવ્યપજ્જવોભાસિણાણં કેવલં-” इति ।
સર્વદ્રવ્યપર્યવાવધાસિ જ્ઞાનમ્-સર્વેષાં દ્રવ્યાણાં-ધર્માસ્તિકાયાધર્માસ્તિકાયાકાશ-

યે ચારોં જ્ઞાન મી પાયે જાતે હૈં । પાંચોં જ્ઞાન એક સાથ નહીં હો સકતે ।
કિન્તુ સ્મરણ રચના ચાહિયે કિ ઉપયોગ એક સમય મેં એક હી જ્ઞાન
કા હોતા હૈ, એક હે અધિક દો, ત્રીન યા ચાર જ્ઞાનોં કા એક સાથ હોના
જો કહા ગયા હૈ, વહ સિર્ફ ક્ષયોપશમ કી અપેક્ષા સે હૈ । અર્થાત્ એક
આત્મા મેં એક સાથ ચાર જ્ઞાનોં તક કા ક્ષયોપશમ હોતા હૈ ॥૫૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વસૂત્ર મેં પ્રતિપાદન કિયા ગયા હૈ કિ
મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ મેં કારણભૂત જો જ્ઞાન હૈ, ઉસકી ઉત્પત્તિ કા કારણ
જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ, મોહનીય ઓર અન્તરાય-इन चार घातिक
કર્મોં કા ક્ષય હૈ જો કિ વિશિષ્ટ તપશ્ચરણ સે હોતા હૈ । અવ કેવલજ્ઞાન
કે લક્ષણ કા પ્રતિપાદન કરતે હૈ—

જો સમસ્ત દ્રવ્યોં ઓર સમસ્ત પર્યાયોં કો જાનતા હૈ, ઉસે કેવલ-
જ્ઞાન કહતે હૈ । ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, પુદ્-

પણે હોય છે કોઈ આત્મામાં મતિ શ્રુત અવધિ અને મનઃપર્યવ એ ચારે જ્ઞાન
પણ બેવામાં આવે છે પાંચે જ્ઞાન એકી સાથે હોઈ શકતા નથી પરંતુ યાદ
રાખવું ઘટે કે ઉપયોગ એક સમયમાં એક જ જ્ઞાનને થાય છે. એથી અધિક
એ, ત્રણ અથવા ચાર જ્ઞાનોનું એકી સાથે હોવાનું જે કહેવામાં આવ્યું છે,
તે માત્ર ક્ષયોપશમની અપેક્ષાથી છે અર્થાત્ એક આત્મામાં એક સાથે ચાર
જ્ઞાનો સુધી ક્ષયોપશમ થાય છે. ॥ ૫૪ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વસૂત્રમાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કે મોક્ષની
પ્રાપ્તિ માટે કારણભૂત જે કેવળજ્ઞાન છે તેની ઉત્પત્તિના કારણ, જ્ઞાનાવરણ
દર્શનાવરણ મોહનીય અને અન્તરાય આ ચાર ઘાતિકર્મોના ક્ષય છે કે જે
વિશિષ્ટ તપશ્ચર્યા આદિથી થાય છે. હવે કેવળજ્ઞાનના લક્ષણનું પ્રતિપાદન
કરીએ છીએ

જે સમસ્ત દ્રવ્યો અને સમસ્ત પર્યાયોને બાણે છે, તેને કેવળજ્ઞાન કહે
છે, ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય, જીવાસ્તિ

સ્તિકાયપુદ્ગલાસ્તિકાયજીવાસ્તિકાયકારૂપાણાં, સર્વેષાં પર્યવાનાશ્ચાવમાસિ
અવમાસકં પ્રકાશકં વિષયતયાઽવલમ્બિ જ્ઞાનં કેવલજ્ઞાન મુચ્યતે। તથાચ-
સકલદ્રવ્યસકલપર્યાયવિષયકં જ્ઞાનં કેવલજ્ઞાનં વ્યપદિશ્યતે। એવમ્-ધર્મા-
સ્તિકાયાદિ સકલદ્રવ્યવિષયકમ્-ઉત્પાદાદિ સકલપર્યાયવિષયકમ્ કેવલ
જ્ઞાનં ભવતિ। તત્ર-ધર્માધર્માકાશરૂપદ્રવ્યત્રયાણામ્ પરત ઉત્પાદ-વ્યયો
ભવતઃ, પુદ્ગલાનાં-જીવાનાં કાલાનાં દ્રવ્ય ત્રયાણાં સ્વતઃ-પરતશ્ચોત્પાદ-વ્યયો
ભવતઃ। યથા-પુદ્ગલસ્ય શુકલવાદિના વ્યયો ભવન્ સ નીલત્વાદિના સમુપજાય-
માનોઽપિ પુદ્ગલત્વેનાઽવતિષ્ઠતે। એવં જીવોઽપિ દેવત્વાદિનોપજાયમાનો મનુ-
ષ્યત્વાદિના વ્યેતિ જીવત્વેનચ સદાઽવતિષ્ઠતે। એવં કાલોઽપિ આવલિકાદિત્વેન

ગલાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય ઓર કાલ, હન સમી દ્રવ્યોં કો તથા
સમસ્ત પર્યાયોં કો જાનને વાલા જ્ઞાન કેવલજ્ઞાન કહલાતા હૈ। હસ
પ્રકાર સકલ દ્રવ્ય ઓર સકલ પર્યાય વિષયક કેવલજ્ઞાન કહા જાતા હૈ।
હસ તરહ જો ધર્માસ્તિકાય આદિ સ્વદ્રવ્યોં કો ઓર ઉત્પાદ આદિ
સવ પર્યાયોં કો જાનતા હૈ વહ કેવલજ્ઞાન હોતા હૈ।

ધર્મ, અધર્મ ઓર આકાશ, હન ત્રીન દ્રવ્યોં કા ઉત્પાદ ઓર વ્યય
પરતઃ હોતા હૈ તથા પુદ્ગલ જીવ ઓર કાલ, હન ત્રીન દ્રવ્યોં કા ઉત્પાદ
ઓર વ્યય સ્વતઃ ઓર પરતઃ હોતા હૈ। પુદ્ગલ દ્રવ્ય કા શુકલ પર્યાય સે
વ્યય (વિનાશ) હોતા હૈ, નીલ પર્યાય કે રૂપ સે ઉત્પાદ હોતા હૈ, ફિર
મી વહ પુદ્ગલ રૂપ સે ધ્રુવ રહતા હૈ, હસી પ્રકાર જીવ કા મી દેવ
પર્યાય સે ઉત્પાદ, મનુષ્ય પર્યાય સે વિનાશ ઓર જીવ રૂપ સે ધ્રોવ્ય
હોતા હૈ-અર્થાત્ જીવત્વ દોનોં પર્યાયોં સે કાયમ રહતા હૈ। હસી પ્રકાર
કાલ મી આવલિકા આદિ રૂપ સે નષ્ટ હોતા હૈ, સમય આદિ રૂપ સે

કાય અને કાલ, આ બધાં દ્રવ્યોને તથા બધાં પર્યાયોને બાબુનારા જ્ઞાન કેવળ
જ્ઞાન કહેવાય છે. આ રીતે સકળ દ્રવ્ય અને સકળ પર્યાય વિષયક કેવળજ્ઞાન
કહેવામાં આવે છે. આ રીતે જે ધર્માસ્તિકાય આદિ બધા દ્રવ્યોને તેમજ
ઉત્પાદ આદિ બધાં પર્યાયોને બાબુ છે તે કેવળજ્ઞાન કહેવાય છે.

ધર્મ, અધર્મ, અને આકાશ આ ત્રણ દ્રવ્યોના ઉત્પાદ અને વ્યય પરતઃ હોય
છે. પુદ્ગલદ્રવ્યનો શુકલ પર્યાયથી વ્યય (વિનાશ) થાય છે, નીલપર્યાયના રૂપ
માં ઉત્પાદ થાય છે, તે પણ તે પુદ્ગલ રૂપથી ધ્રુવ રહે છે એજ રીતે જીવ
નો પણ દેવ પર્યાયથી ઉત્પાદ, મનુષ્યપર્યાયથી વિનાશ અને જીવ રૂપથી
ધ્રોવ્ય થાય છે- અર્થાત્ જીવત્વ બંને પર્યાયોમાં કાયમ રહે છે એવી જ રીતે

વિચિત્ર સમયત્વાદિના સમુપજાયમાનોડપિ કાલત્વેન સદાવતિષ્ઠતે અવસ્થિત
 એવ મવતિ, તથા ચૈવંવિધ સકલદ્રવ્યપર્યાયાદ્યાસકં કેવલજ્ઞાનં મવતિ ॥
 અથ કથં તાવત્-કેવલજ્ઞાનસ્ય સકલદ્રવ્યાણિ સર્વપર્યાયાથ ગોચરી મવન્તિ-
 તેષામનન્તાડનન્તત્વાત્ ઇતિચેદ્વૌચ્યતે-અપરિમિતમાહાત્મ્યં સ્વલુ કેવલ-
 જ્ઞાનં મવતિ । અતएવા-અપરિચ્છિન્ન માહાત્મ્યાત્-કેવલજ્ઞાનં સર્વેષાં દ્રવ્યક્ષેત્ર-
 કાલમાત્રવિશિષ્ટાનાં પદાર્થાના સવભાષકં મવતિ, તથાચ-સમ્પૂર્ણલોકાલોક
 વિષયકં સ્વલુ કેવલજ્ઞાનં મવતિ, નાતઃ પરં કિશ્ચિદ્ જ્ઞાનમસ્તિ નાપિ-કેવલ
 જ્ઞાનવિષયાદન્યત્ કિમપિ જ્ઞેય મસ્તિ । તત્ર ધર્માધર્માસ્તિકાયદ્રવ્યદ્વયા
 વચ્છિન્નમાકાશં પુદ્ગલાસ્તિકાયજીવાસ્તિકાયથ લોકપદેનોચ્યતે । યત્ર પુનરા-
 કાશે ધર્માધર્માસ્તિકાયૌ નસ્તઃ સોડલોકો લોકમિન્નઃ ઉચ્યતે, તથાચ-યદિહ

ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર કાલત્વ કી દૃષ્ટિ સે સદા સ્થિર રહતા હૈ । ઇસ
 પ્રકાર કે સઘી દ્રવ્યોં ઓર પર્યાયોં કો કેવલજ્ઞાન જાનતા હૈ ।

પ્રશ્ન-કેવલજ્ઞાન સર્વ દ્રવ્યોં ઓર સર્વ પર્યાયોં કો કૈસે જાન સકતા
 હૈ ? કયોંકિ વહ અનન્તાનન્ત હૈ ।

ઉત્તર-કેવલજ્ઞાન કા માહાત્મ્ય અપરિમિત હૈ । અસીમ મહાત્મ્ય
 હોને કે કારણ કેવલજ્ઞાન સમસ્ત દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવસે વિશિષ્ટ
 પદાર્થોં કા બોધક હોતા હૈ । કેવલજ્ઞાન સમસ્ત લોક ઓર અલોક કો
 જાનતા હૈ । ઉસસે વઢકર અન્ય કોઈ જ્ઞાન નહીં હૈ ઓર એસા કોઈ જ્ઞેય
 નહીં હૈ જો કેવલજ્ઞાન કે વિષય સે બાહર હો । ધર્માસ્તિકાય ઓર અધ-
 ર્માસ્તિકાય સે વ્યાપ્ત આકાશ લોક કહલાતા હૈ । જિસ આકાશખંડ
 મેં ધર્માસ્તિકાય ઓર અધર્માસ્તિકાય વિદ્યમાન નહીં હૈ, વહ લોક સે

કાલ પણ આવલિકા આદિ રૂપથી નષ્ટ થાય છે, સમય આદિ રૂપથી ઉત્પન્ન
 થાય છે અને કાલત્વની દૃષ્ટિથી સદા સ્થિર રહે છે. આ પ્રકારના સઘળા-
 ંયો તેમજ પર્યાયોને કેવળજ્ઞાન જાણે છે.

પ્રશ્ન--કેવળજ્ઞાન સર્વદ્રવ્યો અને સર્વપર્યાયોને કેવી રીતે જાણ કરી શકે ?
 કારણ કે તેઓ તો અનન્તાનન્ત છે ।

ઉત્તર--કેવળજ્ઞાનનું માહાત્મ્ય અપરિમિત છે. અસીમ માહાત્મ્ય
 હોવાના કારણે કેવળજ્ઞાન સમસ્ત દ્રવ્ય, ક્ષેત્રકાલ અને ભાવથી વિશિષ્ટ પ્રકારો
 નું બોધક હોય છે કેવળજ્ઞાન સમસ્ત લોક અને અલોકને જાણે છે. તેનાથી
 વધીને અન્ય કોઈ જ્ઞાન નથી અને એવું કોઈ જ્ઞેય નથી જે કેવળજ્ઞાનના
 વિષયથી બહાર હોય. ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયથી વ્યાપ્ત આકાશ લોક
 કહેવાય છે. જે આકાશખંડમાં ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય વિદ્યમાન નથી,

लोकै-ऽलोकै वा किञ्चिदपि ज्ञेयमस्ति तद्यथा वहिः पश्यति एव मन्तरपि केवलज्ञानेन पश्यति केवली, इत्येवं सम्पूर्ण लोकालोकविषयकं खलु केवलज्ञानं भवति । अतएव केवलज्ञानं परिपूर्णं व्यपदिश्यते समग्रस्य द्रव्यभावज्ञालस्य परिच्छेदकत्वात्, । एवं समग्र, सत्यादि ज्ञानापेक्षया विशिष्टम् असाधारणं निरपेक्षं विशुद्धं सर्वभावज्ञापकं लोकलोकविषयकत्वात् अनन्तपरिणामात्मकञ्च केवलज्ञानं भवति । तच्च केवलज्ञानं नान्येन सत्यादि ज्ञानादिना सह युगपत् सम्भवति, अपितु-केवलमेकमेव तिष्ठति न खलु केवलज्ञानेन सह क्षायोपशमिकादीनि संभवन्ति । कदाचिदेकस्मिन् जीवे सत्यादि ज्ञानद्वयं-ज्ञानत्रयं-ज्ञानचतुष्टयं वा

भिन्न अलोक कहलाता है । इस प्रकार इस लोक और अलोक में जो भी ज्ञेय है, उस सब को केवली केवलज्ञान से जानते हैं-जैसे बाहर देखते हैं वैसे ही भीतर देखते हैं । इस तरह केवलज्ञान सम्पूर्ण लोक-अलोक विषयक है । इस कारण केवलज्ञान परिपूर्ण कहलाता है, क्योंकि वह समस्त द्रव्य भाव समूह का परिच्छेदक है । इस प्रकार समग्र, मति आदि ज्ञानों की अपेक्षा विशिष्ट, असाधारण, निरपेक्ष, विशुद्ध, सर्व भावों का ज्ञापक तथा लोक-अलोक विषयक होने के कारण अनन्त परिणामात्मक केवलज्ञान होता है ।

केवलज्ञान मति आदि ज्ञानों के साथ नहीं रह सकता, किन्तु अकेला ही रहता है । केवलज्ञान के साथ क्षायोपशमिक ज्ञानों का रहना संभव नहीं है । एक जीव में मतिज्ञान और श्रुतज्ञान-दो तो साथ ही होते हैं, कदाचित् अवधिज्ञान या मनःपर्यव के साथ तीन भी हो सकते

ते લોકથી ભિન્ન અલોક કહેવાય છે. આ રીતે આ લોક અને અલોકમાં જે કંઈ પણ જ્ઞેય હોય છે, તે સર્વેને કેવળી કેવળજ્ઞાન દ્વારા જાણે છે જેવી રીતે બહાર જુએ છે તેવી જ રીતે અંદર પણ જુએ છે. આ રીતે કેવળજ્ઞાન સંપૂર્ણ લોક અલોક વિષયક છે. આથી પરિપૂર્ણ કહેવાય છે, કારણકે તે સમસ્ત દ્રવ્યભાવસમૂહનો પરિચ્છેદક છે, આ પ્રકારે સમગ્ર મતિ આદિ જ્ઞાનોની અપેક્ષા વિશિષ્ટ, અસાધારણ નિરપેક્ષ વિશુદ્ધ સર્વભાવોના જ્ઞાપક તથા લોક અલોક વિષયક હોવાના કારણે અનન્ત પરિણામાત્મક કેવળજ્ઞાન હોય છે.

કેવળજ્ઞાન 'મતિ આદિ જ્ઞાનોની સાથે રહી શકતું નથી પરંતુ એકલું જ રહે છે. કેવળજ્ઞાનની સાથે ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાનોનું રહેતું, શક્ય નથી. એક જીવમાં મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાન બંને તો સાથે જ હોય છે, કદાચિત્ત અવધિજ્ઞાન અથવા મનઃપર્યવજ્ઞાન સાથે પણ ત્રણ હોઈ શકે છે અને કોઈ

યુગપત્ મત્યાદિ મનઃપર્યવજ્ઞાન પર્યન્તં સમ્ભવતિ । કિન્તુ-ન કદાચિદપિ જ્ઞાનપશ્ચકં
યુગપત્સમ્ભવતિ, કેવલજ્ઞાનઽકાલેઽન્યેષાં મત્યાદિ જ્ઞાનાનામસદ્ભાવાત્ । અતएव
જ્ઞાનાન્તરા સમ્બદ્ધત્વેનાઽસહાયત્વાત્ તસ્ય કેવલત્વવ્યવહારો ભવતિ ॥ ઉક્તશ્ચા-
ઽનુયોગદ્વારે દર્શનગુણપ્રમાણપ્રકરણે ૧૪૪ સૂત્રે-‘કેવલદંસણં કેચલદંસણિસ્સ
સ્વવ્વદવ્વેસુય-સવ્વપજ્જવેસુય’-इति, કેવલદર્શનં કેવલદર્શનિનઃ સર્વદ્રવ્યેષુ
ચ-સર્વપર્યાયેષુ ચ इति । નન્દિસૂત્રે ૨૨ સૂત્રેચોક્તમ્-‘તં સમાસઓ ચત્તવિહં
પણ્ણત્તં, તં જહા-દવ્વઓ, સ્વિત્તઓ કાલઓ, ભાવઓ, તત્થ દવ્વઓણં
કેવલનાણી સ્વવ્વ દવ્વાહં જાણહ પામહ, સ્વિત્તઓણં કેવલનાણી સવ્વં
સ્વિત્તં જાણહ પામહ, કાલઓણં કેવલનાણી સવ્વં કાલં જાણહ પામહ,
ભાવઓણં કેવલનાણી સવ્વે ભાવે જાણહ પામહ, અહન્નવ્વ દવ્વપરિણામ
ભાવ વિણ્ણત્તિ કારણસર્ણતં, સાસુયમ્પપ્પિઙ્ગઈ एगविहं કેવલં નાણં’
इति । તન્ સમાસત્ત્વ શ્વતુર્વિધમ્ પ્રજ્ઞતમ્, તથા-દ્રવ્યતઃ ક્ષેત્રતઃ કાલતો ભાવતઃ
તત્ર-દ્રવ્યતઃ સ્વલ્લુ કેવલજ્ઞાની સર્વદ્રવ્યાણિ જાનાતિ पश्यति, ક્ષેત્રતઃ સ્વલ્લુ કેવલ-

हैं और किसी आत्मा से चारों ओर पाये जा सकते हैं । मगर एक साथ
पाँचो ज्ञानो का होना संभव नहीं है । केवलज्ञान के सद्भाव में मति
आदि चार ज्ञानो का सद्भाव नहीं होता । अतएव दूसरे ज्ञानों के साथ
सम्बद्ध न होने से, असहાય होने के कारण वह ‘केवलज्ञान कहलाता है ।

अनुयोगद्वार सूत्र में दर्शनगुणप्रमाण के प्रकरण में, सूत्र १४४ में
कहा है-‘केवलदर्शन-केवलदर्शनी का सर्व द्रव्यो में और सर्वपर्यायो-’

नन्दि-सूत्र के २२ वें सूत्र में भी कहा है-‘वह-केवलज्ञान संक्षेप से
चार प्रकार का कहा गया है-द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से ।
द्रव्य से केवलज्ञानी सब द्रव्यो को जानता-देखता है, क्षेत्र से केवलज्ञानी

આત્મામાં ચારે પણ જોવા મળે છે પરન્તુ એકી સાથે પાંચ જ્ઞાનોનું હોવું
સંભવિત નથી. કેવળજ્ઞાનના સદ્ભાવમાં મતિ આદિ ચાર જ્ઞાનોનો સદ્ભાવ
હોતો નથી. આથી બીજા જ્ઞાનોની સાથે સમ્બદ્ધ ન હોવાથી અસહાય હોવાના
કારણે તે ‘કેવળ’ જ્ઞાન કહેવાય છે.

અનુયોગદ્વાર સૂત્રના દર્શનગુણ પ્રમાણના પ્રકરણના સૂત્ર ૧૪૪માં
કહ્યું છે કેવલદર્શન કેવલદર્શનીના સર્વદ્રવ્યમાં અને સર્વપર્યાયોમાં નન્દીસૂત્રના
૨૨માં સૂત્રમાં પણ કહ્યું છે કે-તે કેવળજ્ઞાન સંક્ષેપથી ચાર પ્રકારનું કહેવામાં
આવ્યું છે દ્રવ્યથી ક્ષેત્રથી કાળથી અને ભાવથી. દ્રવ્યથી કેવળજ્ઞાની બધાં
દ્રવ્યોને જાણે છે જુએ છે, ક્ષેત્રથી કેવળજ્ઞાની સર્વક્ષેત્રને જાણે છે જુએ છે,

ज्ञानी सर्वं क्षेत्रं जानति पश्यति, कालतः खलु केवलज्ञानी सर्वं कालं जानाति-
पश्यति, भावतः खलु केवलज्ञानी सर्वान् भावान् जानाति पश्यति । अथ सर्वद्रव्य-
परिणामभाव विज्ञप्ति कारण मनन्तं शाश्वतम् अप्रतिपाति एकविधं 'केवलज्ञानम्'
इति । तथा चाऽपरिमित माहात्म्यं खलु केवलज्ञानं भवतीति फलितम् ॥५४॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितललितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यानैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचियां श्री
दीपिका-निर्युक्ति व्याख्या द्वयो-
पेतस्य तत्त्वार्थसूत्रस्याष्टो-
ध्यायः समाप्तः ॥८॥

सर्व क्षेत्र को जानता-देखता है, काल से केवलज्ञानी सम्पूर्ण काल को
जानता-देखता है और भाव से केवलज्ञानी सकल भावों को जानता-
देखता है । 'केवलज्ञान सम्पूर्ण द्रव्यो, भावो और परिणामो को जानने
का कारण है, अनन्त है, शाश्वत है, अप्रतिपाती है और एक प्रकार का
है । इससे यह फलित हुआ कि केवल का माहात्म्य अपरिमित है ॥५४॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
'तत्त्वार्थसूत्र' की दीपिका-निर्युक्ति व्याख्या का
आठवां अध्याय समाप्त ॥८॥

કાળથી કેવળજ્ઞાની સમ્પૂર્ણ કાળને જાણે જુએ છે અને ભાવથી કેવળજ્ઞાની
સકળ ભાવોને જાણે જુએ છે. કેવળજ્ઞાન સમ્પૂર્ણ દ્રવ્યો, અને પરિણામોને
જાણવાનું કારણ છે, અનન્ત છે, શાશ્વત છે, અપ્રતિપાતી છે અને એક પ્રકારનું
છે. આનાથી એ ફલિત થયું કે કેવળનું મહાત્મ્ય અપરિમિત છે. ॥ ૫૪ ॥
જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત "તત્ત્વાર્થસૂત્ર"ની
દીપિકા-નિર્યુક્તિ વ્યાખ્યાનો આઠમો અધ્યાય સમાપ્તઃ ॥૮॥



॥ અથ નવમોઽધ્યાયઃ પ્રારમ્ભઃ ॥

મૂલમ્—સયલકર્મ્મક્ષણમોક્ષલે ॥૧॥

છાયા—સકલકર્મ્મક્ષયો મોક્ષઃ ॥૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ તાવત્—‘જીવાજીવાય વન્ધોય પુણ્યં પાપાસ્યયો તદ્વા । સંવરો ણિજ્જરા મોક્ષલો સંતેષ્ઠ તદ્વિદ્યા નન્ન ॥૧॥’ ઇત્યુત્તરાધ્યયનાનુસારેણા—ઘટાશ્વધ્યાયેષુ યથાક્રમમેકૈકસિદ્ધધ્યાયે જીવાદિ નિર્જરા પર્યન્તાનામષ્ટ-તત્ત્વાનાં પ્રરૂપણં કૃતમ્. સમ્પતિ—ક્રમપ્રાપ્તં નવમં મોક્ષતત્ત્વં સવિશદં પ્રરૂપયિતું નવમમધ્યાયં પ્રારમ્ભતૈ—પૂર્વ તત્ર મિથ્યાદૃષ્ટિત આરમ્ભ તથોદશગુણસ્થાન પર્યન્તં દેશતો નિર્જરા ભવતિ । તતઃ પરમયોગિકેવલિનઃ સર્વકર્મ્મણાં ક્ષયરૂપં નિર્જરણં ભવતીતિ પ્રોક્તમ્ । સમ્પતિ—સર્વકર્મ્મક્ષયે પુનઃ કિમ્ભવતીતિ પ્રરૂપયિતુમાદ—‘સયલ

નવમ અધ્યાય કા પ્રારમ્ભ

‘સયલકર્મ્મક્ષણમોક્ષલે’ ।

સૂત્રાર્થ—સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષય હો જાના મોક્ષ હૈ ॥૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—“જીવ, અજીવ, વન્ધ, પુણ્ય, પાપ, આસ્રવ, સંવર, નિર્જરા ઓર મોક્ષ, એ નૌ તત્ત્વ હૈ ।” હસ ઉત્તરાધ્યયનસૂત્ર કે અનુસાર પહેલે આઠ અધ્યાયો મેં, ક્રમ લે એક-એક અધ્યયન મેં, જીવ લે લેકર નિર્જરા પર્યન્ત આઠ તત્ત્વો કી પ્રરૂપણા કી ગઈ, અવ ક્રમપ્રાપ્ત નૌવેં મોક્ષ તત્ત્વ કી વિશદ પ્રરૂપણા કી જાતી હૈ—

પહેલે મિથ્યાદૃષ્ટિ લે લેકર તેરહવે ગુણસ્થાન તક દેશતઃ નિર્જરા હોતી હૈ’ તત્ત્વશ્ચાત્ અયોગ કેવલી કો સમસ્ત કર્મોં કી ક્ષય રૂપ નિર્જરા હોતી હૈ, યહ કહા જા ચુકા હૈ । અવ યહ વતલાતે હૈં કિ સમસ્ત કર્મોં

નવમા અધ્યાયનો પ્રારંભ—

‘સયલકર્મ્મક્ષણમોક્ષલે’

સૂત્રાર્થ—સમસ્ત કર્મોના કાય થઈ જવો મેક્ષ છે ॥ ૧ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—‘જીવ, અજીવ, વન્ધ, પુણ્ય, પાપ, આસ્રવ, સંવર, નિર્જરા અને મોક્ષ. આ નવ તત્ત્વ છે’ આ ઉત્તરાધ્યયનસૂત્રના અનુસાર પ્રથમ આઠ અધ્યાયોમાં ક્રમથી એક-એક અધ્યયનમાં જીવથી લઈને નિર્જરાપર્યન્ત આઠ તત્ત્વોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી, હવે ક્રમપ્રાપ્ત નવમાં મેક્ષતત્ત્વની વિશદ પ્રરૂપણા કરવામાં આવે છે—

પહેલા મિથ્યાદૃષ્ટિથી લઈને તેરમાં શુણસ્થાન સુધી દેશતઃ નિર્જરા થાય છે, ત્યારબાદ અયોગકેવળીને સમસ્તકર્મોના કાયરૂપ નિર્જરા થાય છે એ કહેવામાં આવી ગયું છે, હવે એ બતાવીએ છીએ કે સમસ્ત કર્મોના કાય થવાથી શું થાય છે?

कर्मवत्त्व ए मोक्षे-इति । अनशन प्रायश्चित्तादितपः संयमादिना कर्मफलभोग-
लक्षणविपाकेन च देशतः कर्मक्षयलक्षणा निर्जरा भवतीत्युक्तम् ततश्च-मिथ्यादर्श-
नादीनां बन्धहेतूनां तदावरणीयकर्मणः क्षयादभावे सति केवलज्ञान-केवलदर्शनो-
त्पादे च ज्ञानावरणाद्यन्तरायपर्यन्ताऽष्टविधकर्ममूल प्रकृतीनामष्टचत्वारिंशद-
धिकशतसंख्यकोत्तरप्रकृतीनां च क्षयात् सकलकर्मक्षयः सकलस्य-सम्पूर्णस्य
निरवशेषस्य-कृत्स्नस्य कर्मणः क्षयः, आत्मप्रदेशेभ्यः परिशाटः पृथग्भवनम्
सकलकर्मप्रध्वंसो मोक्षो व्यपदिश्यते । तथा च-ज्ञानावरण दर्शनाऽवरण मोहनी-
याऽन्तरायरूपघातिकर्मचतुष्टये सति केवलज्ञानोत्पत्त्यनन्तरं वेदनीयनामगोत्रा-
ऽऽयुष्करूप कर्म चतुष्टयस्य भवधारणीयस्यापि क्षयो भवति, इत्येवं सकल कर्म-
का क्षय होने पर क्या होता है ? -

अनशन तथा प्रायश्चित्त आदि बाह्य एवं आभ्यन्तर तप से, संयम
आदि से तथा कर्मफल के योग रूपी विपाक से एकदेश कर्मक्षय रूप
निर्जरा होती है, यह कहा गया है । तदनन्तर बन्ध के कारण मिथ्यादर्शन
आदि का अभाव हो जाने पर और केवलज्ञान तथा केवलदर्शन की
उत्पत्ति हो जाने पर ज्ञानावरण से लेकर अन्तराय कर्म पर्यन्त आठ
मूल कर्म प्रकृतियों का एवं एक सौ अड़तालीस उत्तर प्रकृतियों का
क्षय होने से समस्त कर्मों का क्षय हो जाता है, अर्थात् वे कर्म आत्मा
से पृथक् हो जाते हैं । यही मोक्ष कहलाता है ।

इस प्रकार ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय-इन
चार घातिया कर्मों का क्षय होने पर केवलज्ञान की उत्पत्ति के पश्चात्
वेदनीय, नाम, गोत्र और आयु-इन चार भवधारणीय कर्मों का भी

अनशन तथा प्रायश्चित्त आदि बाह्य तथा आभ्यन्तर तपथी, संयम
आदिथी तथा कर्मफलमा लोगइपी विपाकथी एकदेश कर्मक्षय रूप निर्जरा
थाय छे ये कडेवामां आयुं छे. तदनन्तर बन्धना कारणे मिथ्यादर्शन आदि
ना अभाव थछे जवाथी अने केवलज्ञान तथा केवलदर्शननी उत्पत्ति थछे
जवाथी ज्ञानावरणथी लधने अन्तरायकर्म पर्यन्त आठ भूण कर्मप्रकृतिओना
तथा ओकसो अडताणीश उत्तरप्रकृतिओना क्षय थवाथी सधणां कर्मोना क्षय
थछे जय छे, अर्थात् ते कर्म आत्माथी जुहां थछे जय छे आ ज मोक्ष कडेवाय छे.

आ रीते ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय अने अन्तराय ये चार
घनघाति कर्मोना क्षय थवाथी केवलज्ञाननी उत्पत्ति आह वेदनीय, नाम, गोत्र
अने आयु ये चार लवधारणीय कर्मोना यथु क्षय थछे जय छे. आ रीते

क्षय समकालमेव-औदारिकशरीरविमुक्तस्याऽस्य मनुष्यजन्मनः प्रहर्ण-सम्-
च्छेदो बन्धहेतु मिथ्यादर्शऽद्यभावाच्चोत्तर जन्मनोऽप्रादुर्भाव इत्येवं पूर्वजन्मन
उच्छेद उत्तरजन्म प्रादुर्भावश्च कृत्स्न कर्मक्षयलक्षणो मोक्षः ज्ञानदर्शनोपयोगलक्ष-
णस्या-ऽऽत्मनः स्व-स्वरूपावस्थानं भवतीति भावः । तत्राऽष्टसु ज्ञानावरण-
दर्शनावरण-मोहनीय=वेदनीयाऽऽयुर्नाम-गोत्रान्तरायेषु मूलप्रकृतिकर्मसु पञ्च-
ज्ञानावरणानि सतिज्ञानावरणादि भेदात्, नवदर्शनावरणीयानि चक्षुर्दर्शनावरणादि-
भेदात् अष्टाविंशति मोहनीयानि कर्माणि, दर्शन-मोहनीय, चारित्रमोहनीयादि
भेदात्, द्वे वेदनीयकर्मणी-सदस द्वेदनीय भेदात् । चत्वारि-आयुः कर्माणि, नरक-

क्षय हो जाता है । इस प्रकार सस्रस्त कर्मों का क्षय होते ही औदारिक
शरीर से मुक्त हुए हुए मनुष्य-जन्म का अन्त होता है और मिथ्या-
दर्शनादि का अभाव होने से अगला जन्म होता नहीं है । इस प्रकार
पूर्वजन्म का विच्छेद हो जाना और उत्तर जन्म का प्रादुर्भाव होना
मोक्ष है और सम्पूर्ण कर्मों का क्षय होना उसका लक्षण है । तात्पर्य
यह है कि ज्ञान-दर्शन उपयोग रूप आत्मा का अपने ही स्वरूप में अव-
स्थान हो जाना ही मोक्ष कहलाता है ।

कर्मकी आठ मूल प्रकृतियाँ हैं-ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय,
वेदनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय । इनमें से सतिज्ञानावरण
आदि के भेद से ज्ञानावरण के पाँच भेद हैं, चक्षुर्दर्शनावरण आदि के
भेद से दर्शनावरण के नौ भेद हैं, दर्शनमोहनीय चारित्रमोहनीय
आदि के भेद से मोहनीय कर्म के अठ्ठाईस भेद हैं, साता-असाता के
भेद से वेदनीय कर्म के दो भेद हैं, नरकायु तिर्यचायु आदि के भेद से

समस्त कर्मोना क्षय यतां न औदारिक शरीरथी मुक्त भवेत्ता आ मनुष्य
जन्मनो अन्त आवे छे अने मिथ्यादर्शनादिना अलाव यवाथी पुनजन्म यतो
नथी आसं पूर्वजन्मनो विच्छेद यछे नवे अने उत्तरजन्मनो प्रादुर्भाव न
थवे मोक्षा छे अने सम्पूर्ण कर्मोना क्षय यवे तेनु लक्षणे छे तात्पर्य
अ छे छे ज्ञान दर्शन उपयोग रूप आत्मानु पोताना न स्वर्गपमा अवस्थान
अर्थ जनु छे न मोक्षा छेवाये छे ।

कर्मनी आठ मूल प्रकृतियो छे ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय वेदनीय
आयु, नाम, गोत्र अने अन्तरोय आमाथी सतिज्ञानावरण आदिना लेदथी
ज्ञानावरणना पाय लेद छे, चक्षुर्दर्शनावरण आदिना लेदथी दर्शनावरण
आदि दर्शनावरणना नव लेद छे, दर्शनमोहनीय चारित्रमोहनीय आदिना
लेदथी मोहनीय कर्मना अठ्यावीस लेद छे, साता असाताना लेदथी वेदनीय

તિર્યંગાદિ ભેદાત્, ત્રિણવતિ નામકર્માણિ ગતિ-જાતિ-નામ ભેદાત્, દ્વે ગોત્ર કર્મણી ઉચ્ચનીચગોત્ર ભેદાત્ । પશ્ચાન્તરાયકર્માણિ દાનાન્તરાયાદિ ભેદાત્, इत्येव सक-
 कानां पञ्च-नवाष्टाविंशति द्विचतुःत्रिणवति द्विपञ्च संख्यकानां ५-९-२८-२
 ४-९३-२-५-अष्टचत्वारिंशदधिकशतं कर्मणां क्षयलक्षणो मोक्षोऽयमन्तव्यः ।
 एतेषां च कर्मणां विशेष स्वरूपाणि निर्युक्तौ प्रदर्शयिष्यन्ते । १॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ--પૂર્વે સ્વલુ-જીવાજીવબન્ધપુણ્યપાપાસ્રવસંવર નિર્જરામોક્ષ-
 રૂપનવતરત્ત્વેષુ-ઉત્તરાધ્યયનોક્તેષુ યથાક્રમં જીવાદિ નિર્જરાપર્યન્તાનામષ્ટ-
 તત્ત્વાનામષ્ટસુ અધ્યાયેષુ પ્રત્યેક ભેદેકશ્ચિન્ અધ્યાયે સંવિસ્તરં પ્રરૂપણં કૃતમ્,
 સમ્પતિ-નવમં મોક્ષતત્ત્વં પ્રરૂપયિતું નવમમધ્યાયં પ્રારભતે-‘સંયત્ કામ્મકલ્પ’

આયુકર્મ' કે ચાર ભેદ હૈ, ગતિનામ, જાતિનામ આદિ કે ભેદ સે તેરા-
 નવે નામકર્મ' કે ભેદ હૈ, ઉચ્ચ ઔર નીચ કે ભેદ સે ગોત્રકર્મ' દો પ્રકાર
 કા હૈ । દાનાન્તરાય આદિ કે ભેદ સે અન્તરાય કર્મ' કે પાંચ ભેદ હૈ ।
 इस प्रकार पांच, नौ, अट्ठाईस, दो, चार, तिराणवे, दो और पांच (५-
 ९-२८-२-४-९३-२-५) मिलकर एक सौ अडतालीस कर्म प्रकृतियों
 का क्षय हो जाना मोक्ष समझना चाहिए । इन कर्मों का विशेष स्वरूप
 निर्युक्ति में दिखलाएंगे ॥१॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—જીવ, અજીવ, બન્ધ, પુણ્ય, પાપ, આસ્રવ, સંવર,
 નિર્જરા ઔર મોક્ષ, इन उत्तराध्ययनसूत्र में प्रतिपादित नौ तत्त्वों में से
 क्रमानुसार जीव से लेकर निर्जरा पर्यन्त आठ तत्त्वों का आठ अध्यायों
 में-एक-एक का एक-एक अध्याय में विस्तारपूर्वक प्ररूपण किया गया,

કર્મના બે ભેદ છે, નરકાયુતિ' આયુ આદિના ભેદથી આયુકર્મના ચાર ભેદ છે
 ગતિનામ, જાતિનામ આદિના ભેદથી નામકર્મના ત્રણ ભેદ છે ઉચ્ચ અને
 નીચના ભેદથી ગોત્રકર્મ બે પ્રકારના છે. દાનાન્તરાય આદિના ભેદથી અન્તરાય
 કર્મના પાંચ ભેદ છે. આવી રીતે પાંચ, નવ, અઠ્યાવીસ, બે, ચાર ત્રણ બે
 અને પાંચ (૫+૯+૨૮+૨+૪+૯૩+૨+૫) મળીને એકસો અડતાલીસ (૧૪૮) કર્મ
 પ્રકૃતિઓનો ક્ષય થઈ જવો મોક્ષ સમજવો જોઈએ આ કર્મોનું વિશેષ સ્વરૂપ
 નિર્યુક્તિમાં દર્શાવીશું ॥ ૧ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ--જીવ, અજીવ, બન્ધ, પુણ્ય, પાપ, આસ્રવ, સંવર,
 નિર્જરા અને મોક્ષ આ ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રમાં પ્રતિપાદિત નવ તત્ત્વોમાંથી
 ક્રમાનુસાર જીવથી લઈને નિર્જરા પર્યન્ત આઠ તત્ત્વોનું આઠ અધ્યાયોમાં
 એક એકનું એક એક અધ્યાયમાં વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપણ કરવામાં આવ્યું હવે
 નવમા મોક્ષતત્ત્વની પ્રરૂપણા કાળે નવમો અધ્યાય પ્રારંભ કરવામાં આવે છે-

મોક્ષે' इति । सकलकर्मक्षयः—सकलानां—ज्ञानावरण-दर्शनावरणाद्यष्टविधमूल-
प्रकृतिरूपाणामष्टचत्वारिंशदधिकशतसंख्यकोत्तरप्रकृतिरूपाणाञ्च कर्मणां क्षयः
आत्मप्रदेशेभ्योऽपरिशुद्धं मोक्षः ज्ञानदर्शनोपयोग लक्षणस्याऽऽत्मनः स्व-स्वरूपा
वस्थानं भवतीति भावः । तथा च—प्रथमं तावत्—तपः संयमनिर्जरादिभिः ज्ञाना-
वरण-दर्शनावरण-मोहनीयाऽन्तरायाख्यचतुर्विधघातिकर्मसु क्षीणेषु केवल-
ज्ञानोत्पत्ति भवति, तदनन्तरं भवधारणीयानां वेदनीय-नामगोत्राऽऽयुष्करूप
चतुर्विध कर्मणाञ्च क्षयो भवति । इत्येव मुत्तरप्रकृतिसहिताऽष्ट=विधकर्मक्षयसम-
काल मेवौदारिकशरीर वियुक्तस्याऽस्य मनुष्यजन्मनः ग्रहाणम् उच्छोदो भवति ।

अथ नौवे' मोक्षतत्त्व की प्ररूपणा करने के लिए नौवे' अध्याय प्रारम्भ
किया जाता है—

सम्पूर्ण कर्मों का अर्थात् ज्ञानावरण दर्शनावरण आदि आठ मूल
कर्मप्रकृतियों का एवं एक सौ अड़तालीस उत्तरप्रकृतियों का क्षय होना
अर्थात् आत्मप्रदेशों से पृथक् होना मोक्ष है । तात्पर्य यह है कि ज्ञान-
दर्शन-उपयोग लक्षण वाले आत्मा को अपने स्वरूप में अवस्थान हो
जाता है, यही मोक्ष है ।

પહેલે તપ, સંયમ ઓર નિર્જરા આદિ દ્વારા જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ,
મોહનીય, ઓર અન્તરાય નામક ચાર ઘાતિક કર્મો' કા ક્ષય હો જાને
પર કેવલજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ હોતી છે, તત્પશ્ચાત્ ભવોપગ્રાહી વેદનીય, નામ,
ગોત્ર ઓર આયુ નામક ચાર કર્મો' કા ક્ષય હોતો છે । ઇસ પ્રકાર ઉત્તર-
પ્રકૃતિયો સહિત આઠ કર્મો' કા ક્ષય હોતે હી ઔદારિકશરીર વાલે ઇસ
મનુષ્ય જન્મ કા અન્ત હો જાતા છે ઓર વંધ કે કારણ મિથ્યાદર્શન

સમ્પૂર્ણકર્મોનો અર્થાત્ જ્ઞાનાવરણ દર્શનાવરણ આદિ આઠ મૂળ કર્મપ્રકૃતિ-
ઓનો એકસો અડતાલીસ ઉત્તરપ્રકૃતિઓનો ક્ષય થવો અર્થાત્ આત્મપ્રદેશથી
પૃથક્ થઈ જવું મોક્ષ છે. તાત્પર્ય એ છે કે જ્ઞાન-દર્શન ઉપયોગ લક્ષણવાળા
આત્માનું પોતાના સ્વરૂપમાં અવસ્થાન થઈ જવું એ જ મોક્ષ છે.

પહેલા તપ સંયમ અને નિર્જરા આદિ દ્વારા જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ,
મોહનીય અને અન્તરાય નામક ચાર ઘનઘાતિકર્મોનો ક્ષય થઈ જવાથી કેવળ-
જ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થાય છે, ત્યારબાદ ભવોપગ્રાહી વેદનીય, નામ, ગોત્ર અને
આયુષ્ય નામક ચાર કર્મોનો ક્ષય થાય છે. આ રીતે ઉત્તરપ્રકૃતિઓ સહિત
આઠકર્મોનો ક્ષય થતાંની સાથે જ ઔદારિક શરીરવાળા આ મનુષ્ય જન્મનો
અન્ત થઈ જાય છે અને બંધના કારણે મિથ્યાદર્શન આદિનો અભાવ થવાથી

मिथ्यादर्शनादीनां बन्धहेतूनामभावाच्चोत्तरजन्मनो-ऽप्रादुर्भावो भवति, एवं विधाऽपूर्वजन्मोच्छेदोत्तरजन्मा-ऽप्रादुर्भाववस्था खलु कृत्स्नकर्मक्षयलक्षणो मोक्षो व्यपदिश्यते । एवञ्च-कृत्स्नकर्मणां क्षयः आत्मप्रदेशेभ्यः पृथग्भवनरूपं परिशटनम् कर्मराशिप्रध्वंसः आत्मनः स्वस्वरूपावस्थानमेव मोक्षो भवतीति बोध्यम्, नतु-आत्मनोऽपि-अभावो मोक्षावस्थायां भवति । आत्मनो ज्ञानादि परिणामि स्वभावतया तस्य निरन्वयनाशसम्भवात्, तदानीमपि-ज्ञानादि परिणामित्वेन स्थितिसम्भवात् । तपः संयमादिना स्थगित सकलाऽऽस्रवद्वारस्य संवरसंवृतस्य परमातिशयसम्पन्नस्य सम्यक्तयाऽनुष्ठायिन इन्द्रस्थस्य सयोगिकेवलिनो निरुद्धसकलयोगस्य च मिथ्यादर्शनादीनां बन्धहेतूनामभावात् । तदावरणीयकर्म-

आदि का अभाव होने से उत्तर जन्म का प्रादुर्भाव नहीं होना है । इस प्रकार वर्तमान जन्म के उच्छेद से और अगले जन्म का प्रादुर्भाव न होने से जो समस्त कर्मों से रहित विदेहावस्था प्राप्त होती है, वही मोक्ष है । इस प्रकार समस्त कर्मों का क्षय, आत्मप्रदेशों से पृथक् होना रूप निर्जरण, कर्मसमूह का प्रध्वंस या आत्मा का स्व-स्वरूप में स्थित होना ही मोक्ष कहलाता है । मोक्ष अवस्था में आत्मा का अभाव नहीं होता है । आत्मा ज्ञानादि परिणाम स्वभाव वाला होने से समूल नष्ट नहीं होता । उस अवस्था में भी ज्ञानादि स्वभाव से उसकी सत्ता रहती है ।

तप संयम आदि के द्वारा समस्त आस्रवदारों का निरोध कर देने वाले, संवरयुक्त, परम अतिशय से सम्पन्न, क्रिया का समीचीन अनुष्ठान करने वाले छद्मस्थ, सयोग केवली और सम्पूर्ण योग का निरोध कर देने वाले को मिथ्यादर्शन आदि बन्धकारणों का अभाव हो जाने

उत्तरजन्मनो प्रादुर्भाव यतो नथी. आ रीते वर्तमान जन्मना उच्छेदयि अने पुनर्जन्मनो प्रादुर्भाव न थवाथी जे समस्त कर्मोथी रहित विदेहावस्था प्राप्त थाय छे ते ज मोक्ष छे. आस्र समस्त कर्मोना क्षय, आत्मप्रदेशोथी पृथक् थवुं इप निर्जरण, कर्म समूहनो प्रध्वंस अथवा आत्मानुं पोताना स्वइयमां स्थित थवुं अ ज मोक्ष कहैवाय छे. मोक्ष अवस्थाभां आत्मानो अभाव यतो नथी. आत्मा ज्ञानादिपरिणाम स्वभाववाणो होवाथी समूहणो नष्ट यतो नथी. ते अवस्थाभां पणु ज्ञानादि स्वभावथी तेनी सत्ता तो रहै ज छे.

तप, संयम आदि द्वारा समस्त आस्रवदारोना निरोध करनारी संवर युक्त, परम अतिशयथी सम्पन्न, क्रियानुं समीचीन अनुष्ठान करनारी छद्मस्थ सयोगकेवली अने सम्पूर्ण योगनो निरोध करनाराओने मिथ्यादर्शन आदि

ક્ષયાત્ સમ્યગ્દર્શનાદીનાઞ્ચોત્પાદાત્ અપૂર્વકર્મણો બન્ધો ન ભવતિ । પૂર્વોપાર્જિ-
તસ્ય ચ કર્મણ સ્તપોઽનુષ્ઠાનાદિભિઃ ક્ષયો ભવતિ, તત્ર-ઘાતિકર્મણો મોહનીય-
ક્ષયે જ્ઞાનાવરણા-ઽન્તરાયરૂપસ્યાઽઽત્યન્તિકઃ ક્ષયો ભવતિ । ભવધારણીયસ્ય ચ
વેદનીયનામગોત્રા-ઽઽયુગ્યરૂપસ્ય ક્ષયો ભવતિ । તત્ર-ઘાતિકર્મક્ષયાનન્તરમેવ
સમસ્તદ્રવ્યપર્યાયાવિષયં પરમેશ્વર્યસમ્પન્ન મનન્તમ્ અનુત્તરં નિર્વ્યાધાતં નિરાવ-
રણં કૃત્સંનં પ્રતિપૂર્ણં કેવલજ્ઞાનં-કેવલદર્શનં ચ લબ્ધ્વા શુદ્ધઃ પરિશદિતસકલ-
કર્મમલત્વાદ્ બુદ્ધઃ સર્વત્રઃ સર્વદર્શીજિનઃ કેવલી ભવતિ । તતઃશ્ચાઽઘાતિ પ્રતનુ
શુભવેદનીય નામગોત્રાઽઽયુઃ કર્માવશેષઃ સન્ આયુગ્યકર્મણઃ સંસ્કારવશાત્ શીત-

સે, તદાવરણીય કર્મ કે ક્ષય સે સમ્યગ્દર્શન આદિ કી ઉત્પત્તિ હો
જાને સે નવીન કર્મોં કા બન્ધ નહીં હોતા । ઓર તપ કે અનુષ્ઠાન આદિ
સે પૂર્વોપાર્જિત કર્મ કા ક્ષય હો જાતા હૈ । તબ મોહનીય કર્મ કા ક્ષય
હોને પર જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ ઓર અન્તરાય કર્મ કા આત્યન્તિક-
સદા કે લિએ ક્ષય હો જાતા હૈ । ભવધારણીય વેદનીય, નામ, ગોત્ર ઓર
આયુ કર્મ કા મી ક્ષય હો જાતા હૈ ।

ઘાતિ કર્મોં કા ક્ષય હોતે હી સમસ્ત દ્રવ્યોં ઓર પર્યાયોં કો જાનને
વાલા, પરમેશ્વર્ય સે યુક્ત, અનન્ત, અનુત્તર (સર્વોત્કૃષ્ટ) નિર્વ્યાધાત,
નિરાવરણ, સમ્પૂર્ણ, પ્રતિપૂર્ણ, કેવલદર્શન ઓર કેવલજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા
હૈ । इन्हें प्राप्त करके जीव शुद्ध हो जाता है, समस्त कर्ममल के क्षीण
होने से बुद्ध, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, जिन और केवली बन जाता है । उस
समय अत्यन्त हलके शुभ वेदनीय, नाम, गोत्र और आयु कर्म शेष

બન્ધ કારણોના અભાવ થઈ જવાથી તદાવરણીય કર્મના ક્ષયથી સમ્યગ્દર્શન-
આદિની ઉત્પત્તિ થવાથી નવીન કર્મો બધાતા નથી અને તપના અનુષ્ઠાન
આદિથી પૂર્વોપાર્જિત કર્મોના ક્ષય થઈ જાય છે ત્યારે મોહનીયકર્મોના ક્ષય થઈ
જવાથી જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ અને અન્તરાય કર્મોના આત્યન્તિક-હરમેશને
માટે ક્ષય જાય છે. ભવધારણીય વેદનીય, નામ, ગોત્ર અને આયુગ્ય કર્મોના
ક્ષય થઈ જાય છે.

ઘાતિકર્મોના ક્ષય થતાં જ સમસ્ત દ્રવ્યો અને પર્યાયોને જાણનારા, પરમે-
શ્વર્યથી યુક્ત, અનન્ત, અનુત્તર (સર્વોત્કૃષ્ટ) નિર્વ્યાધાત, નિરાવરણ, સમ્પૂર્ણ
કેવળદર્શન અને કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે. આમને પ્રાપ્ત કરીને જીવ શુદ્ધ
થઈ જાય છે. સઘળાં કર્મમાત્ર, ક્ષીણ થવાથી બુદ્ધ સર્વજ્ઞ, સર્વદર્શી, જિન
અને કેવલી બની જાય છે. આ સમયે અત્યન્ત હલકાં શુભ વેદનીય નામ, ગોત્ર

रश्मिवद् - भव्यजनकुमुदवनोद्बोधनाय भू-गगनमण्डले विहरति- ततश्चोक्त-
विधिना-ऽऽयुष्कर्मपरिसमाप्तौ सत्यां वेदनीयनामगोत्रकर्मणामपि- क्षयो
भवति, इति सकलकर्मक्षये सति स्वात्मन्यवस्थानलक्षणो मोक्षो भवतीति
भावः । तत्र-पञ्चविध ज्ञानावरणस्य नवविध दर्शनावरणस्या-ऽष्टाविंशति प्रकार
मोहनीयकर्मणो द्विविधवेदनीयस्य त्रिणवतिविधनामकर्मणश्चतुर्विधायुष्यकर्मणो
द्विविध गोत्रकर्मणः पञ्चविधान्तरायकर्मणश्च सकलकर्मरूपस्याऽष्ट- चत्वारिंशदधिकशतसंख्यकप्रकारस्य १४८ क्षयोऽवगन्तव्यः । तत्रा-ऽविरतसंख्य-
गृह्णित-देशविरति-प्रमत्ताप्रमत्तस्थानानामन्यतमगुणस्थाने सम मोहनीयकर्म-

रह जाते हैं । ऐसी स्थिति में आयुर्कर्म के संस्कारवश वह चन्द्रमा के
समान भव्यजीव रूपी कुमुदवनो को विकसित-उद्बोधित-करने के
लिए भूमण्डल में विचरते हैं । तदनन्तर उक्त विधि के अनुसार आयु
कर्म की समाप्ति होने पर साथ ही वेदनीय, नाम, और गोत्र कर्म का
भी क्षय हो जाता है । इस तरह सकल कर्मों का क्षय होने पर अपनी
आत्मा में ही अवस्थित हो जाना रूप मोक्ष होता है ।

यह पांच प्रकार के ज्ञानावरण का नौ प्रकार के दर्शनावरण का,
(१) अट्टाईस प्रकार के मोहनीय का, (२) दो प्रकार के वेदनीय का
(३) तेरानवे प्रकार के नामकर्म का (४) चार प्रकार के आयुर्कर्म का,
दो प्रकार के गोत्रकर्म का और पांच प्रकार के अन्तराय कर्म का, इस
प्रकार सब को मिलाकर एक सौ अड़तालीस (१४८) कर्मप्रकृतियों का
क्षय समझना चाहिए । इनमें से अविरत, संख्यगृह्णित, देशविरत, प्रम-

त्त-आयुष्य कर्मों शेष रही न्य छे. आभी स्थितिमा आयुष्यकर्मने संस्कार
वश ते चन्द्रमानी जेम लव्यलव इपी कुमुदवनोने विकसित उद्बोधित करवाने
भाटे भूमण्डलमा विचरे छे. तदनन्तर उक्त विधि अनुसार आयुष्यकर्मनी
समाप्ति थवानी साथे ज वेदनीय, नाम अने गोत्र कर्मोनी पण क्षय थध न्य
छे. आ. रीते सकल कर्मोनी क्षय थवोथी पोतीनु आत्माभांज अवस्थित थध
जवा इप मोक्ष थाय छे.

अही पांच प्रकारना ज्ञानावरणनु नव प्रकारनी दर्शनावरणो (१)
अठ्यावीस प्रकारना मोहनीयनो (२) दो प्रकारना वेदनीयनो (३) त्राणु प्रकारना
नामकर्मनो, चार प्रकारना आयुष्यकर्मनो—दो प्रकारना गोत्र कर्मनो अने
पांच प्रकारना अन्तराय कर्मनो ओ रीते नधा मणीने ओहसो अड़तालीस
(१४८) कर्मप्रकृतियोना क्षय समजवे. ओधये. आसांथी अविरत

પ્રકૃતય શ્વતુરનન્તાનુબન્ધિકવાયત્રિ મિથ્યાત્વસમ્યક્ત્વ-મિશ્રમોહનીયરૂપાઃ ક્ષીણા ભવન્તિ । અનિવૃત્તિગુણસ્થાને ચ વિંશતિ મોહનીયકર્મપ્રકૃતયઃ ક્ષીણા ભવન્તિ, ત્રયોદશનામકર્મપ્રકૃતયશ્ચ નરકગતિઃ, નરકગત્યાનુપૂર્વી, તિર્યગ્ગતિઃ, તિર્યગ્ગત્યાનુપૂર્વી, એક દ્વિ-ત્રિ-ચતુરિન્દ્રિયજાતયઃ, આતપમ્, ઉદ્ઘોતમ્, સ્થાવરમ્, સૂક્ષ્મમ્, સાધારણશ્ચેતિ ક્ષીણાનિ ભવન્તિ । તિસ્રો દર્શનાવરણવર્મપ્રકૃતય શ્ચ-નિદ્રાનિદ્રા-પ્રચલા પ્રચલા-સ્ત્યાનર્દિરૂપાઃ ક્ષીણા ભવન્તિ । મોહનીયેષુ ચ ક્રમેણા-૬પ્રત્યાખ્યાનાઃ ક્રોધાદય શ્વત્વારઃ, પ્રત્યાખ્યાનાવરણા ક્રોધાદયશ્વત્વારઃ ક્ષીયન્તે । તતશ્ચ-નપુંસકસ્ત્રીવેદૌ, હાસ્યરત્યરતિશોકમયજુગુપ્સાઃ પુરુષવેદશ્ચ સંજ્વલનક્રોધ-માન-માયા ઇતિ । સૂક્ષ્મસમ્પરાયગુણસ્થાને ચરમસમયે સંજ્વલન

ત્તસંયત ઓર અપ્રમત્તસંયત ગુણસ્થાનોં મેં સે કિસી ગુણસ્થાન મેં મોહ-નીય કર્મ કી સાત પ્રકૃતિયાં-ચાર અનન્તાનુબન્ધી ઓર દર્શનમોહનીય કી ત્રીન-મિથ્યાત્વ, સમ્યક્ત્વમોહ ઓર મિશ્ર-ક્ષીણ હોતી હેં । અનિ-વૃત્તિ ગુણસ્થાન મેં મોહનીય કર્મ કી વીસ પ્રકૃતિયોં કા ક્ષય હોતા હૈ ઓર નામકર્મ કી તેરહ પ્રકૃતિયોં કા ક્ષય હોતા હૈ, જો હસ પ્રકાર હેં-નરકગતિ, નરકગત્યાનુપૂર્વી, તિર્યગ્ગતિ, તિર્યગ્ગત્યાનુપૂર્વી, એકેન્દ્રિ-યજાતિ, દ્વીન્દ્રિયજાતિ, ત્રીન્દ્રિયજાતિ, ચતુરિન્દ્રિયજાતિ, આતપ, ઉદ્-ઘોત, સ્થાવર, સૂક્ષ્મ ઓર સાધારણ । નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા ઓર સ્ત્યાનર્દિ નામક દર્શનાવરણ કી ત્રીન પ્રકૃતિયોં કા ક્ષય હોતા હૈ । મોહનીય પ્રકૃતિયોં મેં સે ચાર અપ્રત્યાખ્યાની ક્રોધ આદિ, ચાર પ્રત્યા-ખ્યાની ક્રોધ આદિ કા ક્ષય હોતા હૈ । નપુંસકવેદ, સ્ત્રીવેદ, હાસ્ય, રતિ, અરતિ, શોક, મય, જુગુપ્સા પુરુષવેદ તથા સંજ્વલન ક્રોધ, માન ઓર

સમ્યકદષ્ટિ, દેશવિરત, પ્રમત્તસંયત અને અપ્રમત્તસંયત ગુણસ્થાનોમાંથી કેઈ ગુણસ્થાનમાં મોહનીય કર્મની સાત પ્રકૃતિઓ ચાર અનન્તાનુબન્ધી અને દર્શન મોહનીયની ત્રણ મિથ્યાત્વ, સમ્યક્ત્વ મોહ અને મિશ્ર ક્ષીણ થાય છે. અનિવૃત્તિ ગુણસ્થાનમાં મોહનીયકર્મની વીસ પ્રકૃતિઓને ક્ષય થાય છે અને નામકર્મની તેર પ્રકૃતિઓનો ક્ષય થાય છે જે આ પ્રમાણે છે નરકગતિ, નરકગત્યાનુપૂર્વી, તિર્યગ્ગતિ, તિર્યગ્ગત્યાનુપૂર્વી, એકેન્દ્રિયજાતિ, દ્વીન્દ્રિયજાતિ, ત્રીન્દ્રિયજાતિ ચતુરિન્દ્રિયજાતિ, આતપ, ઉદ્ઘોત, સ્થાવર સૂક્ષ્મ અને સાધારણ નિદ્રા નિદ્રા પ્રચલાપ્રચલા અને સ્ત્યાનર્દિ નામક દર્શનાવરણની ત્રણ પ્રકારની પ્રકૃતિઓનો ક્ષય થાય છે. મોહનીય પ્રકૃતિઓમાંથી ક્રમથી ચાર અપ્રત્યાખ્યાની ક્રોધ આદિ ચાર પ્રત્યાખ્યાની ક્રોધ આદિનો ક્ષય થાય છે. પછી નપુંસકવેદ, સ્ત્રીવેદ, હાસ્ય રતિ અરતિ, શોક, મય, જુગુપ્સા, પુરુષવેદ તથા સંજ્વલન ક્રોધ માન તથા

लोभः क्षीणो भवति। ततश्च-क्षीणकषायस्थाने निद्राप्रचले द्वे द्विचरम-
समये क्षीणे भवतः। चरमसमये-पुनश्चतुर्दशकर्मप्रकृतयः पञ्चज्ञानावरणरूपाणि
चतुर्दश दर्शनावरणरूपाणि च क्षीणानि भवन्ति। अयोगिकेवलिनश्च-द्विचरमसमये
पञ्चचत्वारिंशत् नामप्रकृति कर्माणि क्षीणानि भवन्ति। यथा-देवगतिः, औदा-
कारिकादि शरीरपञ्चकम्, संस्थानपट्कम्, अङ्गोपाङ्गत्रयम्, संहननषट्कम्, वर्ण-
रस-स्पर्श चतुष्कम्, मनुष्यगति देवगत्यानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघातम्, पराघातम्
उच्छ्वासः, प्रशस्त विहायो गतिः, अपर्याप्तकम्, स्थिरम्, अस्थिरम्, शुभम्, अशु-
भम्, दुर्भगम्, सुस्वरम्, दुःस्वरम्, अनादेयम्, अयशः कीर्तिः, निर्माणमिति
बाह्ये च द्वे सातासातारूपान्यतरवेदनीये नीचैर्गोत्राख्ये कर्मणि क्षीणे सति तीर्थ-
कृद्योगि केवलिनश्चरमसमये द्वादश कर्मप्रकृतयः क्षीणा भवन्ति। तद्यथा-अन्य-

माया का क्षय होता है। सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान के चरम समय में
संज्वलन लोभ का क्षय होता है। तत्पश्चात् क्षीणकषाय गुणस्थान में
निद्रा और प्रचला नामक दो प्रकृतियों का द्विचरम समय में क्षय होता
है और चरम समय में चौदह प्रकृतियों का क्षय होता है जो इस प्रकार
हैं-पांच ज्ञानावरण और नौ दर्शनावरण की। अयोगकेवली द्विचरम-
में पैंतालीस नामकर्म प्रकृतियों का क्षय करते हैं, वे इस प्रकार हैं-
देवगति, औदारिक आदि पांचशरीरनाम, छह संस्थान, तीन अंगोपांग,
छह संहनन, वर्ण, रस, गंध, स्पर्श, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, देवगत्यानुपूर्वी,
अगुरुलघु, उपघात, उच्छ्वास, प्रशस्तविहायोगति, अप्रशस्तविहायो-
गति, अपर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, सुस्वर,
दुस्वर, अनादेय, अयशः कीर्ति, और निर्माण? साता-आसाता में से

मायानो क्षय થાય છે સૂક્ષ્મસામ્પરાય ગુણસ્થાનના ચરમ સમયમાં સંજ્વલન
લોભનો ક્ષય થાય છે ત્યારબાદ ક્ષીણકષાય ગુણસ્થાનમાં નિદ્રા અને પ્રચલા
નામક બે પ્રકૃતિઓના દ્વિચરમ સમયમાં ક્ષય થાય છે અને ચરમ સમયમાં
ચૌદ પ્રકૃતિઓનો ક્ષય થાય છે જે આ પ્રમાણે છે પાંચ જ્ઞાનાવરણ અને નવ
દર્શનાવરણની અયોગકેવળી દ્વિચરમસમયમાં પૈંતાળીસ નામક પ્રકૃતિઓનો
ક્ષય કરે છે તે આ પ્રમાણે છે દેવગતિ, ઔદરિક આદિ પાંચ શરીરનામ છ
સંસ્થાન ત્રણ અંગોપાંગ, છ સંહનન. વર્ણ, રસ, ગંધ, સ્પર્શ, મનુષ્યગત્યાનુ
પૂર્વી, અશુરલઘુ, ઉપઘાત, પરાઘાત, ઉચ્છ્વાસ, પ્રશસ્તવિહાયોગતિ, અપ્રશસ્ત
વિહાયોગતિ, અપર્યાપ્ત, પ્રત્યેક, સ્થિર, અસ્થિર. શુભ, અશુભ, દુર્ભગ, સુસ્વર
દુસ્વર, અનાદેય. અયશઃકીર્તિ અને નિર્માણ સાતા અસાતામાંથી કેઇ એક

તરવેદનીયમ્, ઉચ્ચૈર્ગોત્રમ્, મનુષ્યાયુષ્કમ્, મનુષ્યગતિ પञ્ચેન્દ્રિયજાતિ ત્રસવાદર
પર્યાપ્ત સુખગાઽઽદેયયશઃ કીર્તિર્તીર્થકરનામાનિ ચેતિ । અતીર્થકૃદયોગિ કેવલિ-
નસ્તુ-ચરમસમયે एतान्येवોपर्युक्तानि તીર્થકરનામકર્મવર્જિતાનિ એકાદશકર્મપ્રકૃ-
તયઃ ક્ષીણા ભવન્તિ । આયુષ્યશ્ચૈકમેવ મનુષ્યાયુષ્કરૂપં વદ્દં નતુ-તદિતરાણિ ત્રીણિ
પૂર્વવદ્દાનિ તસ્માદેકમેવ મનુષ્યાયુષ્યકર્મક્ષીણં ભવતિ તદાનીમિતિ ભાવઃ ।
ઉક્તશ્ચ-સ્થાનાંગે ૩-સ્થાને ૪ ઉદ્દેશકે ૨૨૬ સુત્રે-સ્ત્રીણમોહસ્સ ણં અરહઓ
તઓ કસ્મંસા જુગવં સ્વિજ્જંતિ, તં જહા-નાણાવરણિજ્જંદંસણાવરણિજ્જં
અંતરાહ્ય-’-ઇતિ, ક્ષીણમોહસ્ય સ્વલુ અર્હત સ્ત્રયઃ કર્માંશાઃ યુગપત્ ક્ષીયન્તે,
તથથા-જ્ઞાનાવરણીયમ્-દર્શનાવરણીયમ્-આન્તરાયિકમ્, ઇતિ । ઉત્તરાધ્યયને ૨૯

કોઈ એક વેદનીય ઓર નીચગોત્ર કર્મના ક્ષય થવાથી તીર્થંકર અયો-
ગકેવલી ચરમસમય મેં બારહ કર્મપ્રકૃતિયોં કા ક્ષય કરતે હેં । વે હસ
પ્રકાર હેં-કોઈ એક વેદનીય, ઉચ્ચગોત્ર, મનુષ્યાયુ, મનુષ્યગતિ, પञ્ચે-
ન્દ્રિય જાતિ, ત્રસ, વાદર, પર્યાપ્ત, સુખગ, આદેય, યશઃકીર્તિ ઓર
તીર્થંકર નામકર્મ । અતીર્થંકર કેવલી ચરમ સમય મેં હન્હોં ઉપર્યુક્ત
પ્રકૃતિયોં કા ક્ષય કરતે હેં, કેવલ તીર્થંકર પ્રકૃતિ કા ક્ષય નહોં કરતે,
કયોંકિ વહ ઉનકે હોતી હી નહોં હૈ । હસ પ્રકાર વે ગ્યારહ પ્રકૃતિયોં
કા ક્ષય કરતે હેં । આયુ કેવલ એક મનુષ્યાયુ હી ઉનમેં હોની હૈ, શેષ
ત્રીણ આયુષ્ક બાંધે નહોં હોતે । અતએવ એક માત્ર મનુષ્યાયુ કર્મના કા
હી ઉસ સમય ક્ષય હોતા હૈ । સ્થાનાંગ કે ત્રીસરે સ્થાન, ચોથે ઉદ્દેશક
મેં કહા હૈ—

‘ક્ષીણ મોહનીય અરિહન્ત ભગવાન્ કે ત્રીણ કર્માંશ એક સાથ

વેદનીય અને નીચ ગોત્ર કર્મના ક્ષય થવાથી તીર્થંકર અયોગકેવલી ચરમ
સમયમાં બાર કર્મપ્રકૃતિઓના ક્ષય કરે છે તે આ પ્રમાણે છે કેાઇ એક વેદનીય
ઉચ્ચગોત્ર, મનુષ્યાયુ મનુષ્યગતિ, પञ્ચેન્દ્રિય જાતિ ત્રસ, વાદર, પર્યાપ્ત, સુખગ,
આદેય યશઃકીર્તિ અને તીર્થંકર નામકર્મ અતીર્થંકર કેવલી ચરમસમયમાં
આજ ઉપર કહેલી પ્રકૃતિઓના ક્ષય કરે છે, માત્ર તીર્થંકર પ્રકૃતિના ક્ષય કરતાં
નથી કારણ કે તેમને પ્રકૃતિઓ હોતી જ નથી. આમ તેઓ અગીયાર પ્રકૃતિ-
ઓના ક્ષય કરે છે આયુષ્ય કેવળ એક મનુષ્યાયુ જ તેમનામાં હોય છે, શેષ ત્રણ
આયુષ્ય બાંધ્યા હોતા નથી આથી એક માત્ર મનુષ્યાયુ કર્મના જ તે સમયે
ક્ષય થાય છે સ્થાનાંગના ત્રીણ સ્થાન, એથા ઉદ્દેશકમાં કહ્યું છે—

ક્ષીણમોહનીય અરિહન્ત ભગવાનના ત્રણ કર્માંશનો એકી સાથે ક્ષય થાય છે

અધ્યયને ૭૧ સૂત્રોચોક્તમ્-‘તત્પ્રથમયા-જહાણુપુઠ્વી-અઢ્વીસહવિહં
મોહણિજ્જં કમ્મં ડગ્ધા-પંચવિહં નાણાવરણિજ્જં, નવવિહં અનરાહયં
એ-તિન્નિ વિ કમ્મંસે જુગવં સ્વદેહ’ હિતિ, તત્પ્રથમતયા યથાતુપૂર્વ્યા-ડઢ્વા-
વિંશતિ વિધં મોહનીયં કર્મ સમુદ્ધાત્યતે, એશ્વવિધં જ્ઞાનાવરણીયમ્, નવવિધં
દર્શનાવરણીયમ્, એશ્વવિધમ્-અન્તરાયિકમ્, એતાનિ ત્રીનપિ કર્મીંશાન્ યુગપત્-
ક્ષપયતિ, હિતિ, પુનઃપ્રોત્તરાધ્યયને ૨૯ અધ્યયને ૭૨ સૂત્રે-ચોક્તમ્-‘અનગારે
સમુચ્છિન્નકિરિયં અનિવૃત્તિ શુક્લધ્યાણં-ધ્યાયમાણે વેયણિજ્જં
આડયં નામં ગોત્તં ચ-એ-ચત્તારિ કમ્મંસે જુગવં સ્વદેહ’ હિતિ, અનગારઃ
સમુચ્છિન્નક્રિયઃ અનિવૃત્તિ શુક્લધ્યાનં ધ્યાયન્ વેદનીયમ્ આયુષ્યં નામગોત્રં ચ,
એતાન્ ચતુરઃ કર્મીંશાન્ યુગપત્ ક્ષપયતિ’ હિતિ । તથાપ્રોત્તરાધ્યયન-સ્થાનાંગ
સૂત્રાગમપ્રામાણ્યેણ સોક્ષાવસ્થાયામ્ આત્મનઃ કૃત્સ્નકર્મક્ષયો ભવતીતિ જ્ઞાયતે,
અતઃ સકલકર્મક્ષયલક્ષણો સોક્ષો વ્યવદિશ્યતે હિતિ પ્રકૃતસૂત્રે પ્રોક્તમ્ ॥૧॥

ક્ષીણ હોતે હૈં । વે હસ પ્રકાર હૈં-જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય ઓર
અન્તરાય ।’

ઉત્તરાધ્યયન કે ૨૯ વેં અધ્યયન કે ૭૧ વેં બોલ મેં કહા હૈ-‘સર્વ-
પ્રથમ યથાક્રમ અઢાઈસ પ્રકાર કે મોહનીય કર્મ કા ક્ષય કરતે હૈ, પાંચ
પ્રકાર કે જ્ઞાનાવરણ કો, નૌ પ્રકાર કે દર્શનાવરણ કર્મ કો ઓર પાંચ
પ્રકાર કે અન્તરાય કર્મ કો, હન ત્રીનોં કર્મીંશોં કો એક સાથ ક્ષય
કરતે હૈં ।’

પુનઃ ઉત્તરાધ્યયન કે ૨૯ વેં અધ્યયન કે ૭૨ મેં બોલ મેં કહા હૈ-‘અન-
ગાર’ સમુચ્છિન્નક્રિય અનિવૃત્તિ શુક્લધ્યાન ધ્યાતા હુઆ વેદનીય, આયુ,
નામ ઓર ગોત્ર-હન ચાર કર્મીંશોં કા એક સાથ ક્ષય કરતા હૈ’

હસ પ્રકાર ઉત્તરાધ્યયન ઓર સ્થાનાંગ નામક સૂત્રાગમ કે પ્રામાણ્ય સે

તે આ પ્રમાણે છે જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય અન્તરાય

ઉત્તરાધ્યયનના ૨૯માં અધ્યયનના ૭૧ માં બોલમાં કહ્યું છે, સર્વપ્રથમ
યથાક્રમ અઠ્યાવીશ પ્રકારના મોહનીયકર્મનો ક્ષય કરે છે, પાંચ પ્રકારના જ્ઞાના-
વરણનો, નવ પ્રકારના દર્શનાવરણ કર્મનો અને પાંચ પ્રકારના અન્તરાયકર્મનો
આ ત્રણે કર્મીંશોનો એકી સાથે ક્ષય કરે છે.

પુનઃઉત્તરાધ્યયનના ૨૯માં અધ્યયનના ૭૨માં બોલમાં કહ્યું છે અનગાર
સમુચ્છિન્નક્રિય અનિવૃત્તિ શુક્લધ્યાન ધ્યાતા થકો વેદનીય, આયુ. નામ અને
ગોત્ર આ ચાર કર્મીંશોનો એકી સાથે ક્ષય કરે છે.

મૂળમ્—કેવલસમ્મત્તનાણદંસણસિદ્ધત્તં વજિત્તા ઓવસમિ-
યાઈ મવ્વત્તવ્વણં ય ॥૨॥

છાયા—‘કેવલસમ્યક્ત્વજ્ઞાનદર્શનસિદ્ધત્વં વર્જયિત્વા—ઔપશમિકાદિભવ્યત્વ-
ક્ષયશ્ચ ॥૨

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ સૂત્રે સ્વલુ સકલકર્મક્ષયલક્ષણો મોક્ષો ભવતીત્યુક્તમ્
તત્ર—આત્મનો મોક્ષાવસ્થાયાં ન કેવલં દ્રવ્યકર્મમાત્રસ્યૈવ ક્ષયો ભવતિ, અપિતુ—
ઔપશમિક—ક્ષાયોપમિકૌદયિકાદિ ભાવકર્મણામપિ ક્ષયો ભવતીતિ પ્રરૂપયિતુમાદ

જ્ઞાત હોતા હૈ કિ મોક્ષ અવસ્થા મેં સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષય હોતા હૈ । હસ
કારણ સમ્પૂર્ણ કર્મોં કા ક્ષય મોક્ષ કહલાતા હૈ, એસા પ્રકૃત સૂત્ર મેં કહા
ગયા હૈ ॥૧॥

‘કેવલ સમ્મત્તનાણદંસણ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—કેવલ સમ્યક્ત્વ, જ્ઞાન, દર્શન ઓર સિદ્ધત્વ કો છોડકર ઔપ-
શમિક આદિ ભાવોં કા તથા ભવ્યત્વ આવ કા મી ક્ષય હો જાતા હૈ ॥૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્ર મેં કહા ગયા હૈ કિ સકલ કર્મોં કા ક્ષય
હોના મોક્ષ હૈ । મોક્ષ—અવસ્થા મેં કેવલ દ્રવ્ય કર્મોં કા હી ક્ષય નહીં
હોતા વરન્ ક્ષાયોપશમિક, ઔદયિક આદિ ભાવોં કા મી ક્ષય હો જાતા
હૈ, યહ પ્રરૂપણા કરને કે લિષ કહતે હૈ—

કેવલ સમ્યક્ત્વ, જ્ઞાન, દર્શન ઓર સિદ્ધત્વ કો છોડકર ઔપશ-

આ રીતે ઉત્તરાધ્યયન અને સ્થાનાંગ નામક સૂત્રાગમના પ્રમાણથી જ્ઞાત
થાય છે કે મોક્ષ અવસ્થામાં સમસ્ત કર્મેના ક્ષય થાય છે.

આથી સમ્પૂર્ણ કર્મેના ક્ષય મોક્ષ કહેવાય છે એવું પ્રકૃતસૂત્રમાં
કહેવામાં આવ્યું છે. ॥ ૧ ॥

‘કેવલસમ્મત્તનાણદંસણ’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—કેવળસમ્યક્ત્વ, જ્ઞાન, દર્શન અને સિદ્ધત્વને બાદ કરતા ઔપ-
શમિક આદિ ભાવોનો તથા ભવ્યત્વ ભાવનો પણ ક્ષય થઈ જાય છે ॥ ૨ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં કહેવામાં આવ્યું કે સકળ કર્મેના ક્ષય થવો
મોક્ષ છે. મોક્ષ અવસ્થામાં કેવળ દ્રવ્યકર્મેના જ ક્ષય થતો નથી પરન્તુ ક્ષયો-
પશમિક, ઔદયિક આદિ ભાવોનો પણ ક્ષય થઈ જાય છે એ પ્રતિપાદન કરવા
માટે કહીએ છીએ

કેવળ સમ્યક્ત્વ, જ્ઞાન, દર્શન અને સિદ્ધત્વ સિવાય ઔપશમિક આદિ

‘કેવલ સમ્યક્ત્વ’ इत्यादि। केवल सम्यक्त्व ज्ञानदर्शनसिद्धत्वं वर्जयित्वा दर्शनं समक्षयात् क्षायिकं केवल सम्यक्त्वम्, समस्त ज्ञानावरण क्षयात् क्षायिकं केवल ज्ञानम्, सकलदर्शनावरण क्षयात् क्षायिकं केवलदर्शनम्, समस्त कर्मक्षयात् क्षायिकं सिद्धत्वञ्च विहाय तदतिरिक्ता औपशमिकादयः औपशमिकः आदिना-क्षायिकः क्षायोपशमिकः औदयिकश्च भावा गृह्यन्ते, तथाचौ-पशमिकस्य केवल सम्यक्त्वादि चतुष्टयभिन्नस्य क्षायिकस्य, क्षायोपशमिकस्य-औदयिकस्य, सेत्स्यलक्षण भव्यत्वरूपस्य पारिणामिकस्य च भावस्य क्षयश्च-आत्मप्रदेशेभ्यः पृथग्भवनलक्षणं-परिशदनं च मोक्षावस्थायां भवतीति भावः। एवञ्च-मुक्तात्मनि औपशमिक-क्षायोपशमिकौदयिका भावाः सर्वथैव न भवन्ति। किन्तु क्षायिके भावे केवलसम्यक्त्व-लक्षणं क्षायिक सम्यक्त्वम्-१ क्षायिक केवलज्ञानम् २ क्षायिककेवलदर्शनम् ३ क्षायिक सिद्धत्वञ्च ४ सम्भवति। एतच्चतुष्टयातिरिक्तः क्षायिको भावो न सम्भवति, एवम्-पारिणामिके भावे-सेत्स्यलक्षण भव्यत्वमेव केवलं पारिणामिकं

મિક આદિ ભાવોં કા તથા ભવ્યત્વ ભાવ કા મી ક્ષય હો જાતા હૈ। દર્શનમોહ કી સાત પ્રકૃતિયોં કૈ ક્ષય સે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, સમ્પૂર્ણ જ્ઞાનાવરણ કૈ ક્ષય સે ક્ષાયિક કેવલજ્ઞાન હોતા હૈ, દર્શનાવરણ કર્મ કૈ ક્ષય સે ક્ષાયિક કેવલદર્શન હોતા હૈ, સકલ કર્મોં કૈ ક્ષય સે ક્ષાયિક સિદ્ધત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈ। હન ભાવોં કૈ સિવાય જો ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર ઔદયિક ભાવ હૈં ઉનકા ક્ષય હો જાતા હૈ। ભવ્યત્વ નામક પારિણામિક ભાવ મી ક્ષીણ હો જાતા હૈ। હસ પ્રકાર મુક્તાત્મા મૈં ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક ઔર ઔદયિક ભાવ સર્વથા હી નહીં હોતે। ક્ષાયિક ભાવોં મૈં સે ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વ, ક્ષાયિક કેવલજ્ઞાન, ક્ષાયિક કેવલદર્શન, ક્ષાયિક સિદ્ધત્વ વિચ્છિન્ન રહતે હૈં। હન ચાર કૈ સિવાય અન્ય કોઈ ક્ષાયિક ભાવ નહીં રહતા। પારિણામિક ભાવોં મૈં

ભાવોના તથા ભવ્યત્વનો પણ ક્ષય થઈ જાય છે. દર્શનમોહનીય સાત પ્રકૃતિઓના ક્ષયથી ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ થાય છે. સમ્પૂર્ણ જ્ઞાનાવરણના ક્ષયથી ક્ષાયિક કેવળ જ્ઞાન થાય છે, દર્શનાવરણકર્મના ક્ષયથી ક્ષાયિક કેવળદર્શન થાય છે. સમસ્ત કર્મોના ક્ષયથી ક્ષાયિક સિદ્ધત્વ ઉત્પન્ન થાય છે. આ ભાવોના સિવાય જે ઔપશમિક, ક્ષાયોપશમિક અને ઔદયિક ભાવ છે તેમનો ક્ષય થઈ જાય છે ભવ્યત્વ નામક પારિણામિક ભાવ પણ ક્ષીણ થઈ જાય છે. આ રીતે મુક્તાત્મામાં ઔપશમિક ક્ષાયોપશમિક અને ઔદયિક ભાવ સર્વથા જ હોતા નથી ક્ષાયિક ભાવોમાંથી ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વ, ક્ષાયિક કેવળજ્ઞાન, ક્ષાયિક કેવળદર્શન ક્ષાયિક સિદ્ધત્વ વિદ્યમાન રહે છે આ ચાર સિવાય અન્ય કોઈ ક્ષાયિક ભાવ રહેતો નથી પારિણામિક ભાવોમાં ભવ્યત્વ જેના કારણે સિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરવાની થોડી થોડી સાં

મુક્તાત્મનિ ન સમ્ભવતિ, કિન્તુ-મવ્યત્વાતિરિક્તઃ સ્વઙ્ગ પારિણામિકો ભાવો જ્ઞાનદર્શનોપયોગાસ્તિત્વ-ગુણવત્વાનાદિત્વા સંસ્ક્રયેયપ્રદેશવત્વનિત્યત્વ દ્રવ્યત્વાદિ લક્ષણઃ સમ્ભવત્યેવ એતેષાં સ્વઙ્ગ સમ્યક્ત્વાદીનાં ક્ષાયિકભાવાનાં નિત્યત્વાત્-મુક્તસ્યાપિ તે ક્ષાયિકાઃ કેવલસમ્યક્ત્વાદયો ભવન્તિ इति ભાવઃ ॥૨॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ-પૂર્વંતાવદ્ મોક્ષાવસ્થાયાં જ્ઞાનાવરણાદિ સકલકર્મક્ષયો ભવતી-ત્યુક્તમ્ તત્ર ન કેવલં સકલદ્રવ્યકર્મણામેવ ક્ષયો ભવતિ-અપિતુ-આત્મનઃ સ્વતત્ત્વભૂતસ્ય ઔપશમિક-ક્ષાયિક ક્ષાયોપશમિકૌ-દાયિક-પારિણામિક ભાવસ્યાપિ ક્ષયો ભવતીતિ સાપવાદં પ્રરૂપયિતુમાહ-કેવલ સમ્મત્તનાણ-દંસણસિદ્ધત્તં વજિજ્ઞાતા ઓવસમિયાહ મવ્યત્તકલ્પય' इति । કેવલસમ્યક્ત્વ જ્ઞાનદર્શન-સિદ્ધત્વં વર્જયિત્વા દર્શનસપ્તક ક્ષયાત્ ક્ષાયિકં કેવલસમ્યક્ત્વં-ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ-

મવ્યત્વ, जिसके कारण सिद्धि प्राप्त करने की योग्यता होती है, सिद्धि प्राप्त होने के पश्चात् नहीं रहता है । किन्तु अस्तित्व, गुणत्व, अनादित्व, असंख्येयप्रदेशवत्त्व, नित्यत्व, द्रव्यत्व आदि पारिणामिक भाव रहते हैं । ये सम्यक्त्व आदि क्षायिक भाव अनन्त होने के कारण मुक्त जीव में भी रहते हैं ॥२॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલે કહા ગયા થા કિ મુક્તાવસ્થા મેં જ્ઞાનાવર-ણીય આદિ સર્વ કર્મોં કા ક્ષય હો જાતા હૈ, કિન્તુ અવ યહ નિરૂપણ કરતે હૈં કિ કેવલ કર્મોં કા હી ક્ષય નહીં હોતા કિન્તુ આત્મા કે અસા-ધારણ ભાવ ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક, ઔદયિક ઓર પારિણામિક કા મી ક્ષય હો જાતા હૈ, કિન્તુ ઇસમેં કુછ અપવાદ મી હૈ ।

દર્શનસપ્તક કે ક્ષય સે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, જ્ઞાનાવરણ કે ક્ષય સે કેવલજ્ઞાન, દર્શનાવરણ કે ક્ષય સે કેવલદર્શન ઓર સમસ્ત

છે, સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થયા બાદ રહેતું નથી. પરંતુ અસ્તિત્વ, ગુણુત્વ, અનાદિ ત્વ અસંખ્યેયપ્રદેશવત્વ, નિત્યત્વ, દ્રવ્યત્વ આદિ પારિણામિક ભાવ રહે છે. આ સમ્યક્ત્વ આદિ ક્ષાયિક ભાવ અનન્ત હોવાના કારણે મુક્ત જીવોમાં જ હોય છે ।૨।

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલા કહેવામાં આવ્યું હતું કે મુક્તાવસ્થામાં જ્ઞાનાવરણીય આદિ બધાં કર્મોના ક્ષય થઈ જાય છે, પરંતુ હવે એ નિરૂપણ કરીએ છીએ કે કેવળ કર્મોના ક્ષય થતો નથી પરંતુ આત્માના અસાધારણ ભાવ ઔપશમિક, ક્ષાયિક, ક્ષાયોપશમિક ઔદયિક અને પારિણામિકનો પણ ક્ષય થઈ જાય છે પરંતુ આમાં થોડો અપવાદ પણ છે.

દર્શનસપ્તકના ક્ષયથી ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ થાય છે, જ્ઞાનાવરણના ક્ષયથી કેવળજ્ઞાન, દર્શનાવરણના ક્ષયથી કેવળદર્શન અને સમસ્ત કર્મોના ક્ષયથી સિદ્ધત્વ

કેવલદર્શનં ક્ષાયિક સિદ્ધત્વશ્ચ સંભવતિ । એતચ્ચતુષ્ટગાઽતિરિક્તં ક્ષાયિકત્વમપિ મુક્તાત્મનિ ન સંભવતિ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વાદિ ચતુષ્કસ્ય તુ-ક્ષાયિકત્વેન નિત્યત્વાત્ મુક્તસ્યાપિ ભવત્યેવેતિ ભાવઃ । કિન્તુ પરિણામિકે ભાવે સ્વલ્લ કેવલં સેત્સ્ય-લક્ષણં ભવ્યત્વમેવ પારિણામિકભાવો મુક્તાત્મનિ ન ભવતિ, તદતિરિક્તાઃ પારિણામિકાઃ ભાવાસ્તુ-જ્ઞાનદર્શનોપયોગ-અસ્તિત્વગુણવત્ત્વાઽનાદિત્વાઽસંખ્યેય પ્રદેશવત્ત્વ-નિત્યત્વ દ્રવ્યત્વાદયો મોક્ષાવસ્થાયામપિ આત્મનિ ભવન્ત્યેવેતિભાવઃ । એવશ્ચ-મોક્ષાવસ્થાયા મૌણ્યમિક ઔદયિક ભાવાનાં સર્વથા પરિશટનં ભવતિ-આત્મપ્રદેશેભ્યઃ । એવં-કેવલસમ્યક્ત્વલક્ષણ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વ-ક્ષાયિકકેવલજ્ઞાન ક્ષાયિકકેવલદર્શન-ક્ષાયિક સિદ્ધત્વાતિરિક્તક્ષાયિકભાવાનામપિ પરિશટનં ભવતિ । ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વાદીનાં ચતુર્ણાં ક્ષાયિક ભાવાનાન્તુ-નિત્યત્વાત્ મોક્ષાવ-સ્થાયામાત્મપ્રદેશેભ્યઃ પરિશટનં ન ભવતિ । પરિણામિકભાવેતુ-કેવલં સેત્સ્ય લક્ષણભવ્યત્વરૂપ એવ પારિણામિકભાવો મુક્તાન્ત્મનિ પરિશટતિ, તદતિરિક્તાઃ પુનર્જ્ઞાનદર્શનોપયોગાદયઃ પારિણામિકભાવાઃ નાત્મપ્રદેશેભ્યઃ પરિશટન્તિ ન ક્ષીય-ન્તે, આત્મનસ્તથાવિધપરિણામસ્વભાવાત્ । ઉક્તશ્ચાઽનુયોગદ્વારે ષણ્ણામાઽધિકારે ૧૨૬ સૂત્રે-‘ક્ષીણમોહે કેવલ સમ્યક્ત્વં, કેવલજ્ઞાની, કેવલદંસળીસિદ્ધે’ ઇતિ, ક્ષીણમોહઃ કેવલસમ્યક્ત્વઃ, કેવલજ્ઞાની, કેવલદર્શનીસિદ્ધઃ’ ઇતિ પ્રજ્ઞાપના-

દર્શન, ક્ષાયિક સિદ્ધત્વ કે અતિરિક્ત અન્ય ક્ષાયિક ભાવોં કા ખી અભાવ હો જાતા હૈ । યગર ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ આદિ ચાર ક્ષાયિક ભાવ નિત્ય હોને કે કારણ મોક્ષાવસ્થા મેં આત્મપ્રદેશોં સે પૃથક્ નહીં હોતે । પારિણામિક ભાવોં મેં સે અવ્યત્વ નામક પારિણામિક મુક્તાત્મા મેં નહીં રહતા, ઉસકે અનિરિક્ત અન્ય અસ્તિત્વ આદિ પારિણામિક ભાવ બને રહતે હૈં ક્યો કિ આત્મા કા વૈસા હી પરિણામ સ્વભાવ હૈ ।

અનુયોગ દ્વાર મેં ષટ્ નામોં કે અધિકાર મેં કહા હૈ-‘ક્ષીણમોહ, કેવલસમ્યક્ત્વી, કેવલજ્ઞાની, કેવલદર્શની ઓર સિદ્ધ હોતે હૈં । પ્રજ્ઞાપના

થઈ જાય છે. એવી જ રીતે ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વ, ક્ષાયિકકેવળજ્ઞાન, ક્ષાયિકકેવળદર્શન, ક્ષાયિક સિદ્ધત્વ સિવાય અન્ય ક્ષાયિકભાવોનો પણ અભાવ થઈ જાય છે પરંતુ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વ આદિ ચાર ક્ષાયિકભાવો નિત્ય હોવાના કારણે મોક્ષાવસ્થામાં આત્મપ્રદેશોથી પૃથક્ થતાં નથી પારિણામિકભાવોમાંથી અવ્યત્વ નામક પારિણામિક મુક્તાત્મામાં રહેતો નથી એ સિવાય અન્ય અસ્તિત્વ આદિ પારિણામિક ભાવ કાયમ રહે છે કારણ કે આત્માનો એવો જ પરિણામસ્વભાવ છે.

અનુયોગદ્વાર માં ષટ્ નામોનાં અધિકારમાં કહ્યું છે ક્ષીણમોહ કેવળ-સમ્યક્ત્વી, કેવળજ્ઞાની, કેવળદર્શની અને સિદ્ધ હોય છે.

યાશ્ચ: ૧૮=૧૯ પદે ચોક્તમ્—‘નોભવસિદ્ધિર્, નો અભવસિદ્ધિર્, સિદ્ધાસ-
મ્મદિદ્ધી’ इति, નો ભવસિદ્ધિકઃ, નો અભવસિદ્ધિકઃ, સિદ્ધાસમ્યગ્દૃષ્ટયઃ, इति ॥૨॥

મૂલમ્—તઓ પચ્છા ઉઢું ગચ્છઈ જાવ લોગંતં ॥૩॥

છાયા—તતઃ પશ્ચાત્ ઝર્ધ્વં ગચ્છતિ યાવદ્ લોકાન્તય્ ॥૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાવદ્ સકલકર્મક્ષયરૂપો મોક્ષઃ પ્રતિપાદિતઃ, સ ચ
મુક્તઃ સન્ કિં તત્રૈવાવતિષ્ઠતે ઉતાન્યન્ન કુત્રચિદ્ ગચ્છતોત્યાહ—‘તઓ પચ્છા’
इत्यादि । તતઃ પશ્ચાત્ સર્વકર્મક્ષયાનન્તરમ્ ઔપશમિકાચમાવાનન્તરં ચ સ
મુક્તાત્મા ઝર્ધ્વમેવ ગચ્છતિ । કિયત્પર્યન્તં ગચ્છતિ ? इत्याह—યાવદ્ લોકાન્તમ્
લોકસ્ય અન્તઃ મસ્તકઃ, તત્પર્યન્તં ગચ્છતિ । લોકસ્તાવત્ પશ્ચાસ્તિકાય સમુ-
દાયાત્મકઃ તત્રોષતપ્રાગ્ભારા પૃથિવી દિમશ્ચકલધ્રુવલા ઉત્તાનકચ્છત્રાકૃતિર્વર્તતે ।

સૂત્ર મેં ૧૮-૧૯ વેં પદ મેં બી કહા હૈ—‘મુક્તાત્મા ન ભવ્ય કહલાતે હૈ,
ન અભવ્ય હૈ, વે સિદ્ધ હૈ, સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ’ ॥૨॥

‘તઓ પચ્છા ઉઢું’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—મુક્ત હોને કે પશ્ચાત્ આત્મા લોક કે અન્ત તક ઝર્ધ્વ-
ગમન કરતા હૈ ॥૩॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે પ્રતિપાદન કિયા ગયા હૈ કિ સમસ્ત કર્મો
કા ક્ષય હોના મોક્ષ કહલાતા હૈ, યગર મુક્ત હોકર આત્મા વહીં રહ
જાતા હૈ યા અન્યત્ર કહીં જાતા હૈ, इस प्रश्न का समाधान करते हैं—

સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષય હોને કે પશ્ચાત્ મુક્તાત્મા ઉપર ગમન કરતા
હૈ । કહાં તક જાતા હૈ ? સો કહતે હૈ—લોક કે અન્ત તક અગ્રભાગ
તક જાતા હૈ । પંચાસ્તિકાયાત્મક इस लोक के अग्रभाग में ईषत्प्रा-

પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાં ૧૮-૧૯માં પદમાં કહ્યું છે—મુક્તાત્મા ન તો ભવ્ય
કહેવાતા, નથી અભવ્ય, તેઓ સિદ્ધ છે, સમ્યકદૃષ્ટિ છે ॥ ૨ ॥

‘તઓ પચ્છા ઉઢું’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—મુક્ત થયા બાદ આત્મા લોકના અન્ત સુધી ઉર્ધ્વગમન કરે છે ॥ ૩ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું કે સમસ્ત કર્મોના
ક્ષય થવા મોક્ષ કહેવાય છે, પરન્તુ મુક્ત થઈને આત્મા ત્યાં જ રહી જાય છે
અથવા બીજે કયાંય જાય છે એ પ્રશ્નનું સમાધાન કરીએ છીએ

સમસ્ત કર્મોના ક્ષય થવા બાદ મુક્તાત્મા ઉપર ગમન કરે છે. તે કયાં
સુધી જાય છે ? તો કહે છે—લોકના અન્ત સુધી અગ્રભાગ સુધી જાય છે.
પંચાસ્તિકાયાત્મક આ લોકના અગ્રભાગમાં ઈષતપ્રાગ્ભારા નામક પૃથ્વી છે. તે

તસ્યા અપ્યુપરિ ચતુષ્ક્રોશાત્મકં યોજનમેકં યાવદ્ લોકઃ, તત્ર ચતુર્ણાં ક્રો-
શેષુ ક્રોશત્રયં દ્વિત્રયા ચતુર્થસ્ય ક્રોશસ્યોપરિતમઃ પષ્ઠોભાગઃ ત્રયસ્ત્રિંશદુત્તરધનુઃ
શતત્રયપ્રમિતો દ્વાત્રિંશદ્ અંગુલાધિકઃ, एतावत्परिमितं क्षेत्रं लोकान्तशब्देन
गृह्यते तत्र लोकान्ते गत्वा मुक्तात्मा सिद्धो भूत्वा तिष्ठतीति ॥३॥

મૂલમ્—જ તઓ પરં ધર્મસ્થિતિકાયાઽભાવા ॥૪॥

છાયા—ન તતઃ પરં ધર્માસ્થિતિકાયાઽભાવાત્ ॥૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વં તાવદ્ મોક્ષાનન્તરં મુક્તાત્મા ऊर्ध्वं लोकान्तं यावद्
गच्छतीत्युक्तं, यदि मुक्तात्मन ऊर्ध्वगमनं भवति तदा को नियमः यद् लोकान्त
पर्यन्तमेव गच्छतीति, गच्छतु स तदग्रेऽपि का बाधा तत्र ? गति निवारकस्या

ગમાર નામક પૃથ્વી છે । વહ હિમ કે સમાન ધવલ ઓર ऊर्ध्वमुख छत्र
के आकार की है । उसके भी ऊपर एक योजन अर्थात् चार कोस तक
लोक है । इन चार कोसों में से तीन कोस छोड़कर चौथे कोस का
छठा भाग तीन सौ तेतीस धनुष और बत्तीस अंगुल प्रमित क्षेत्र
लोकान्त शब्द से ग्रहण किया जाता है । उस लोकान्त में जाकर
मुक्तात्मा अर्थात् सिद्ध अवस्थित हो जाते हैं ॥३॥

‘જ તઓ પરં ધર્મસ્થિતિકાયાઽભાવા’

સૂત્રાર્થ—‘લોકાન્ત સે આગે મુક્તાત્મા નહીં જાતે, ક્યોંકિ વહાં
ધર્માસ્થિતિકાયા કા અભાવ છે ॥૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે પતલાયા ગયા છે કિ મુક્ત હોને કે અન-
ન્તર મુક્તાત્મા ઉપર લોકાન્ત તક ગમન કરતે છે । કિન્તુ પ્રશ્ન ઉપ-
સ્થિત હોતા છે કિ અગર મુક્તાત્મા કા ऊर्ध्वगमन होता है तो लोकान्त

બરફના જેવી શ્વેત તેમજ ઉર્ધ્વમુખ છત્રના આકારની છે. તેની પછી ઉપર
એક યોજન અર્થાત્ ચાર ગાઉ સુધી લોક છે. આ ચાર ગાઉમાંથી ત્રણ
ગાઉ છોડીને ચોથા ગાઉનો છઠો ભાગ ત્રણસોતેત્રીશ ધનુષ્ય અને બત્રીશ
આંગળી પ્રમિત ક્ષેત્ર લોકાન્ત શબ્દથી ગ્રહણ કરવામાં આવે છે. તે લોકાન્તમાં
જઈને મુક્તાત્મા અર્થાત્ સિદ્ધ અવસ્થિત થઈ જાય છે ॥ ૩ ॥

‘ન તઓ પરં ધર્મસ્થિતિકાયાઽભાવા’

સૂત્રાર્થ—લોકાન્તથી આગળ મુક્તાત્મા જતા નથી કારણકે ત્યાં ધર્મા
સ્થિતિકાયાનો અભાવ છે ॥ ૪ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા એતાવવામાં આવ્યું કે મુક્ત થઈ ગયા બાદ
મુક્તાત્મા ઉપર લોકાન્ત સુધી ગમન કરે છે, પરન્તુ પ્રશ્ન ઉપસ્થિત થાય છે

ભાવાત્ ? અત્રોચ્યતે=‘જ તત્રો પરં’ इत्यादि ततः परं लोकान्तादग्रे न गच्छति धर्मास्तिकायाभावात्, गतिपरिणतजीवपुद्गलानां धर्मद्रव्यसुषुप्तग्रहकारकं भवति मीनस्य यथा जलं, तच्च तदग्रे नास्ति जीवपुद्गलानां गतौ धर्मद्रव्यं कारणं भवति लोकान्तात्परमलोकः तत्र तदभावः अतो मुक्तात्मा लोकान्तादग्रे न गच्छति तत्रैव सिद्धो भवतीति भावः—उक्तंचोत्तराध्ययने षट् त्रिंशत्तमेऽध्ययने—

કહિ પડિહયા સિદ્ધાઃ કહિ સિદ્ધા પડિહયા ।

કહિ વોદિં ચઈત્તાણં કથં વા ગંતૂણં સિજ્ઞહિ ॥૫૬॥

અલોણ પડિહયા સિદ્ધા, લોયગ્ગે ચ પડિહયા ।

इह वौदिं चइत्ताणं तत्थं गंतू ण सिज्झइ ॥५७॥

તક હી જાને કા નિયમ કયોં હે ? આગે જાને સેં વાધા કયા હે ? જય કિ ગતિ કો રોકને ચાલા કોઈ કારણ નહોં હે ? હલ પ્રશ્ન કા સમાધાન કરતે હે—લોકાન્ત સે આગે મુક્તાત્મા કા ગમન નહોં હોના કયોં કિ વહાં ધર્માસ્તિકાય નહોં હે । ધર્મદ્રવ્ય ગતિપરિણત જીવોં ઓર પુદ્ગલોં કી ગતિ મેં નિમિત્ત કારણ હોતા હે, જૈસે જલ ઘછલી કી ગતિ મેં સહાયક હોતા હે । ધર્માસ્તિકાય આગે વિદ્યમાન નહોં હે, અતઃપ્ર મુક્તાત્મા આગે નહોં ગમન કરતે । લોક કે આગે અલોક હે અલોક મેં ધર્માસ્તિકાય કા અભાવ હે । યહી કારણ હે કિ સિદ્ધ જીવ લોકાન્ત મેં હી સ્થિત હો જાતે હે । ઉત્તરાધ્યયન કે છત્તીસવેં અધ્યયન મેં કહા હે

‘સિદ્ધ કહાં રુક જાતે હે ? સિદ્ધ કહાં અવસ્થિત હોતે હે ? કહાં શરીર કા પરિત્યાગ કરકે કહાં જાકર સિદ્ધ હોતે હે ? ॥૫૬॥

કે બે મુક્તાત્માનું ઉર્ધ્વગમન થાય છે તો લોકાન્ત સુધી જ જવાનો નિયમ શા માટે છે. ? આગળ જવામાં શું વાંધો છે ? આ પ્રશ્નનું સમાધાન કરીએ છીએ લોકાન્તથી આગળ મુક્તાત્માનું ગમન થતું નથી કારણકે ત્યાં ધર્માસ્તિકાય નથી ધર્મદ્રવ્ય ગતિપરિણત જીવો અને પુદ્ગલોની ગતિમાં નિમિત્ત કારણ હોય છે, જેવી રીતે જળ માછલીની ગતિમાં સહાયક થાય છે. ધર્માસ્તિકાય આગળ વિદ્યમાન નથી આથી મુક્તાત્મા આગળ ગમન કરતાં નથી. લોકાન્તની પછી અલોક છે અને અલોકમાં ધર્માસ્તિકાનો અભાવ છે. સિદ્ધ જીવ લોકાન્તમાં જ અવસ્થિત થઈ જાય છે તેનું આજ કારણ છે. ઉત્તરાધ્યયનના છત્તીસમાં અધ્યયનમાં કહ્યું છે

સિદ્ધ કયાં રોકાઈ જાય છે ? સિદ્ધ કયાં અવસ્થિત થાય છે ? શરીરનો પરિત્યાગ કયાં કરે છે ? અને કયાં જઈને સિદ્ધ થાય છે ॥ ૫૬

છાયા-કુત્ર પ્રતિહતાઃ સિદ્ધાઃ કુત્ર સિદ્ધાઃ પ્રતિષ્ઠિતાઃ ।

કુત્ર વૌર્દિ ત્યક્ત્વા કુત્ર ગત્વા સિધ્યતિ ॥

અલોકે પ્રતિહતાઃ સિદ્ધાઃ લોકાગ્રે ચ પ્રતિષ્ઠિતાઃ ।

ઇહ વૌર્દિ ત્યક્ત્વા તત્ર ગત્વા સિધ્યતિ ઇતિ । સૂ૦ ॥૪॥

મૂલમ્-નિસ્સંગઓ નિરંગણઓ ગટ્પરિણામાઓ વંધચ્છેદ્યઓ
નિરંધનઓ પુવ્વપ્પઓગાઓ ચ તત્ત્વગૃહ ॥૫॥

છાયા-નિસ્સજ્જતો નિરજ્જણતો ગતિપરિણામાત્ વંધચ્છેદાત્ ।

નિરિન્ધનતઃ પૂર્વપ્રયોગાચ્ચ તદ્ગતિ ॥૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-—‘પૂર્વ’ તાવત્ સુક્તાત્મનો ગતિરુક્તા, સા ચ કર્મસદ્ભાવા-
દેવ મવતિ, સર્વ કર્મક્ષયે મોક્ષઃ ઇતિ પૂર્વ સુક્તમેવ તત્ત્વોઽકર્મણઃ પુનઃ કથં ગતિ
સંભવઃ ? ઇત્યાહ-‘નિસ્સંગઓ’ ઇત્યાદિ । નિસ્સજ્જાત્ સર્વ કર્મક્ષયે ગતિરોધક

‘સિદ્ધ અલોક મેં રુક જાતે હૈં, લોક કે અગ્ર ભાગ મેં અવસ્થિત હોતે
હૈં, યહાં શરીર કા ત્યાગ કરકે વહાં જાકર સિદ્ધ હોતે હૈં ॥૫૭॥૪

‘નિસ્સંગઓ નિરંગણઓ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ-—નિઃસંગ હોને કે કારણ, કર્મ-લેપ કા અભાવ હોને કે
કારણ, ગતિપરિણામ કે કારણ, વંધ કા છેદ ન હો જાને કે કારણ
કર્મરૂપી ઈંધન કા અભાવ હોને કે કારણ ઓર પૂર્વ-પ્રયોગ કે કારણ
સિદ્ધોં કી ઝર્વ ગતિ હોતી હૈ ॥૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલે સુક્તાત્મા કી ગતિ કા નિરૂપણ કિયા ગયા
હૈ, કિન્તુ ગતિ તો કર્મ કે સદ્ભાવ સે હોતી હૈ ઓર યહ પહેલે હી
કહા જા ચુકા હૈ કિ સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષય હોને પર મોક્ષ હોતા હૈ ।
તો ફિર અકર્મી જીવ કી ગતિ કા કિસ પ્રકાર સંભવ હૈ ? હલ્લકા ઉત્તર

સિદ્ધ અલોકમાં રોકાઈ જાય છે, લોકના અગ્રભાગમાં અવસ્થિત થાય
છે, અહીં શરીરનો ત્યાગ કરીને ત્યાં જઈને સિદ્ધ થાય છે ॥ ૪ ॥

‘નિસ્સંગઓ નિરંગણઓ’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-—નિઃસંગ હોવાના કારણે, કર્મ લેપનો અભાવ હોવાના કારણે
ગતિપરિણામના કારણે, વંધનું છેદન થઈ જવાના કારણે કર્મ રૂપી બળતણનો
અભાવ હોવાના કારણે તેમજ પૂર્વપ્રયોગના કારણે સિદ્ધોની ઉર્ધ્વગતિ થાય છે । ૫ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલા સુક્તાત્માની ગતિનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું
છે, પરંતુ ગતિ તો કર્મના સદ્ભાવથી થાય છે, અને એ તો પહેલા જ
કહેવાઈ ગયું છે કે સમસ્ત કર્મોના ક્ષય થવાથી મોક્ષ થાય છે તો પછી
અકર્મી જીવની ગતિ કઈ રીતે શક્ય છે ? આનો જવાબ પ્રસ્તુત સૂત્રમાં

કર્મણોઽપ્યભાવસ્તતઃ કર્મ સજ્જરાહિત્યાત્ સજ્જઃ સ્વલનં, તદ્રાહિત્યાત્, નિરજ્જ-
ણાત્ મોહાપગમેન તત્રાવસ્થાનકારણભૂતરાગલેષાભાવાત્, ગતિપરિણામાત્ તથા-
વિધ ગતિપરિણામાત્, બન્ધછેદાત્ કર્મવચ્છેદાત્, નિરિન્ધનાત્-કર્મરૂપેન્ધના
ભાવાત્, તથા પૂર્વપ્રયોગાચ્ચ સ કર્માવસ્થાયાં ગતિમત્ત્વ સ્વભાવમાશ્રિત્યાપિ ગતિ
ર્ભવતિ, એવં કારણષ્ટ્કાદ્ અકર્મણોઽપિ ગતિ ર્ભવતીતિ ॥૫॥

મૂલમ્—વવગચલેવ જલદ્વિય તુંબં વિવ, વિષ્ફુડિયકોસ ઇરંડ-
વીયં વિવ, ઇંધણવિમુક્કધૂમં વિવ, ધણુવિમુક્કસાયગં વિવ ॥૬॥

છાયા-વ્યપગતલેપ જલસ્થિતતુમ્બમિવ, વિસ્ફુટિતકોશૈરંડવીજમિવ, ઇન્ધન
વિમુક્કધૂમઇવ, ધણુવિમુક્ક સાયકમિવ ॥૬॥

હસ સૂત્ર મેં દિયા જાતા હૈ—

સિદ્ધ જીવોં કી નિઃસંગ હોને કે કારણ ગતિ હોતી હૈ, અર્થાત્ ગતિ
મેં રુકાવટ ડાલને વાલે કર્મ કા બી અભાવ હો જાને સે ઉનકા ઉર્ધ્વ-
ગમન હોતા હૈ । દૂસરે, મોહ કે હટ જાને સે વહાં ઠહરને કે કારણભૂત
રાગ કા લેપન નહીં રહ જાતા , હસ કારણ બી ગતિ હોતી હૈ । તીસરે,
જીવ કા સ્વભાવ હી ઉર્ધ્વગમન કરને કા હૈ । ચૌથે, કર્મબન્ધકા વિચ્છેદ
હો જાતા હૈ । પાંચવેં, કર્મરૂપી ઈંધન કા અભાવ હો જાતા હૈ । છટે,
પૂર્વપ્રયોગ સે અર્થાત્ સકર્મ અવસ્થા મેં ગતિમત્ત્વ સ્વભાવ હોને સે
અકર્મ-અવસ્થા મેં બી ગતિ હોતી હૈ । હસ પ્રકાર છહ કારણોં સે સિદ્ધ
જીવ કી ઉર્ધ્વગતિ હોતી હૈ હૈ ॥૫॥

‘વવગચલેવ જલદ્વિય’ હત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ-લેપ કે હટ જાને પર જલ કી સતહ પર સ્થિત હોને વાલે

આપવામાં આવે છે

નિઃસંગ હોવાના કારણે સિદ્ધ જીવોની ગતિ થાય છે, અર્થાત્ ગતિમાં
અવરોધ કરનાર કર્મોનો પણ અભાવ થઈ જવાથી તેમનું ઉર્ધ્વગમન થાય છે.
બીજું મોહ દૂર થઈ જવાથી ત્યાં રોકાવાના કારણભૂત રાગનો લેપ રહેતો
નથી એ કારણે પણ ગતિ થાય છે ત્રીજું, જીવનો સ્વભાવ જ ઉર્ધ્વગમન
કરવાનો છે. ચોથું, કર્મબંધનો વિચ્છેદ થઈ જાય છે. પાંચમું, કર્મરૂપી ઈંધન
નો અભાવ થઈ જાય છે. છઠ્ઠું, પૂર્વપ્રયોગથી અર્થાત્ સકર્મ અવસ્થામાં પણ
ગતિ થાય છે. આ રીતે છ કારણોથી સિદ્ધ જીવની ઉર્ધ્વગતિ થાય છે ॥૫॥

‘વવગચલેવ જલદ્વિય’ હત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ-લેપના દૂર થવાથી પાણીની સપાટી પર સ્થિત થનાર તુંબડાની

તત્ત્વાર્થદીપિકા—‘પૂર્વ’ તાવદ્ નિસ્સદ્ગત્વાદિભિરકર્મણો મુક્તાત્મનો ગતિઃ પ્રદર્શિતા, સા ચ કેન દૃષ્ટાન્તેન ગતિર્ભવતીતિ નિરુપયિતુમાહ—‘વવગય’ इत्यादि । व्यषगतलेपजलस्थित तुम्बमिव, यथा तुम्बफलं शुष्कं निश्छिद्रं अष्टभिः कुशमृत्तिकादिलेपैः लिप्तम् आतपे दत्तं सत् शुष्कं भवति, तत् जले क्षिप्तं सत् गुरु कत्वेन जलगततलप्रतिष्ठानं भवति, तदेव क्रमशः लेपनिर्गलनात् जलगततल मतिक्रम्य स्वभावत एव सलिलतलप्रतिष्ठानं भवति तद्वद् अकर्मणो गतिर्भवति । १। एवमेव निरङ्गणत्वेन तथाविध गतिणामेन चाऽप्यकर्मणो गतिर्भवति २-३, एवं बन्धच्छेदादपि अकर्मणो गतिर्भवति—यथा एरण्डफलम् आतपे दत्तं सत् शुष्कं भवति, शुष्कस्य तस्य कोशभेदे तद्रतमेण्डबीजमुपर्युत्पतति तद्वदेवाकर्मणाऽपि तूँवे के समान, कोश के फटने पर एरंड के बीज के समान, ईंधन से विमुक्त धूम के समान और धनुष से छूटे हुए बाण के समान ॥ ६ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે નિસ્સંગતા આદિ હેતુઓં સે મુક્તાત્મા કી ગતિ કા વિધાન કિયા હૈ, હસ સૂત્રમેં દૃષ્ટાન્તાં દ્વારા ઉસે પુષ્ટ કરતે હૈ—(૧) જૈસે કોઈ સુખા તુમ્બાફલ હો, છિદ્રહોન હો ઓર મિટ્ટી કે આઠ લેપોં સે લિપ્ત કરકે ધૂપ મેં રાખકર સુખા લિયા જાય । ફિર ઉસે જલ મેં ડાલા જાય તો લેપયુક્ત હોને કે કારણ ભારી હોને સે વહ જલ કે તલભાગ મેં જાકર ઠહરતા હૈ । ફિર ધીરે-ધીરે લેપોં કે હટને પર વહ સ્વભાવતઃ જલ કે ઉપર આ જાતા હૈ, હસી પ્રકાર કર્મ-લેપ કે હટ જાને સે સિદ્ધ જીવ ભી ઉર્ધ્વગમન કરતે હૈ । (૨-૩) હસી પ્રકાર નિરંગણ હોને સે અર્થાત્ મોહ કે નષ્ટ હોને સે ભી અકર્મા જીવ કી ગતિ

જેમ, કોશના ફાટવાથી એરંડાના બીજની માફક, ઈંધણથી વિમુક્ત ધૂમાડાની સમાન અને ધનુષ્યથી છુટેલા બાણની સમાન ॥ ૬ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા નિસ્સંગતા આદિ હેતુઓથી મુક્તાત્માની ગતિનું વિધાન કર્યું, આ સૂત્રમાં દૃષ્ટાંતો દ્વારા તેની પુષ્ટિ કરીએ છીએ (૧) જેમ કોઈ સુકું તુંબડું હોય, છિદ્ર વગરનું હોય, તેને માટીના આઠ લેપોથી લીપીને તડકામાં રાખીને સુકાવી દેવામાં આવે, પછી તેને પાણીમાં નાખવામાં આવે તો લેપયુક્ત હોવાના કારણે વજનદાર હોવાથી તે જળના તળલાગમાં જઈને સ્થિર થાય છે. પછી ધીમે-ધીમે લેપોના દૂર થવાથી તે સ્વભાવતઃ પાણીની સપાટી ઉપર આવી જાય છે. આવી જ રીતે કર્મ-લેપ દૂર થવાથી સિદ્ધજીવ પણ ઉર્ધ્વગમન કરે છે. (૨-૩) આ જ પ્રમાણે નિરંગણ હોવાથી અર્થાત્ મોહના દૂર થઈ જવાથી પણ અકર્મા જીવની ગતિ થાય છે (૪) બન્ધનો

ગતિર્ભવતિ ૪ । તથા-ઇન્ધનમુક્તસ્ય ધૂમસ્ય ગતિર્ભવતિ, યથા ઇન્ધન વિમુક્તસ્ય ધૂમસ્ય સ્વભાવતઃ એવ વ્યાધાતાભાવે ઊર્ધ્વ ગતિર્ભવતિ તથૈવાકર્મણોઽપિ ગતિર્ભવતિ ૫ । પૂર્વ પ્રયોગાચ્ચાકર્મણો ગતિર્ભવતિ, યથા આકૃષ્ટકર્ણાન્તવાપઃ પુરુષો ધનુષા વાણં ક્ષિપતિ, તસ્ય વાણસ્ય ધનુર્મુક્તસ્ય પુરુષ વ્યાપારરહિતસ્યાપિ ગતિર્ભવતિ તથૈવાકર્મણોઽપિ ગતિર્ભવતિ પૂર્વં યેન કર્મણાઽસ્ય ગતિ પ્રયોગો જનિતઃ સ ક્ષીણેઽપિ કર્મણિ અધિચ્છિન્ન સંસ્કારત્વાદ્ ગતિહેતુર્ભવતિ તતસ્તત્કૃતા ગતિર્ભવતિ । એવં પૂર્વોક્તઃ પદ્ધિર્મિ દૃષ્ટાન્તૈરકર્મણોઽપિ ગતિર્ભવતીતિ ॥૬॥

હોતી છે । (૪) બન્ધ કે નષ્ટ હોને સે મી કર્મ રહિત જીવ ગતિ કરતા છે । જૈસે ઇંધન કા ફલ ધૂપ લગને સે જલ સુખ જાતા છે તો ડસકા કોશ ફટતા છે ઓર અન્દર રહા હુઓ વીજ ડપર ઉચ્છટતા છે, ડસી પ્રકાર બન્ધ હટ જાને પર અકર્મક જીવ મી ડર્ધ્વગમન કરતા છે । (૫) ઇંધન સે વિમુક્ત ધૂમ કી, વ્યાધાત કે અભાવ મેં સ્વભાવ સે હી ડર્ધ્વગતિ હોતી છે, ડસી પ્રકાર અકર્મક જીવ કી મી ડર્ધ્વગતિ હોતી છે । (૬) પૂર્વપ્રયોગ સે મી સિદ્ધ જીવ ડર્ધ્વગમન કરતે હૈં । જૈસે કાન તક ધનુષ કી ડોરી કો સીંચ કર પુરુષ વાણ છોડતા છે । વહ વાણ પુરુષ કે વ્યાપાર કે વિના મી પૂર્વ પ્રયોગ સે ગતિ કરતા છે, ડસી પ્રકાર સિદ્ધ જીવ મી પૂર્વપ્રયોગ સે ગમન કરતા છે । તાત્પર્ય વહ છે કિ જિસ કર્મ કે કારણ ડસકી પહેલે ગતિ હોતી થી, ડસકા ક્ષય હો જાને પર મી સંસ્કાર કા વિચ્છેદ ન હોને સે વહ ગતિ કા હેતુ હોતા છે । ઇસ પ્રકાર ઇન છહ દૃષ્ટાન્તોં સે અકર્મક જીવ કી ગતિ સિદ્ધ હોતી છે ॥૬॥

નાશ થવાથી પણ કર્મરહિત જીવ ગતિ કરે છે જેવી રીતે ઝેરંડાનું ફળ તેડકે લાગવાથી જ્યારે સુકાઈ જાય છે ત્યારે તેનો કેશ ફાટી જાય છે અને અંદર બીજ ઉપર ઉઘડાય છે એ જ રીતે બન્ધ દૂર થઈ જવાથી અકર્મક જીવ પણ ઉર્ધ્વગમન કરે છે. (૫) ઇંધણથી વિમુક્ત ધુમાડાની વ્યાધાતના અભાવમાં સ્વભાવથી જ ઉર્ધ્વગતિ થાય છે, તેવી જ રીતે અકર્મ જીવની પણ ઉર્ધ્વગતિ થાય છે. (૬) પૂર્વપ્રયોગથી પણ સિદ્ધ જીવ ઉર્ધ્વગમન કરે છે. જેવી રીતે કાન સુધી ધનુષ્યની દોરીને ખેંચીને પુરુષ બાણ છોડે છે. આ બાણ પુરુષના વ્યાપાર વગર પણ પૂર્વપ્રયોગથી ગતિ કરે છે તેવી જ રીતે સિદ્ધ જીવ પણ પૂર્વપ્રયોગથી ગમન કરે છે. તાત્પર્ય એ છે કે જે કર્મના કારણે તેની પહેલા ગતિ થતી તેનો ક્ષય થઈ જવા છતાં પણ સંસ્કારનો વિચ્છેદ ન થવાથી તે ગતિનો હેતુ થાય છે. આમ આ છ દૃષ્ટાન્તોથી અકર્મક જીવની ગતિ સિદ્ધ થાય છે. ॥ ૬ ॥

મૂલ્ય-સ્વેત્ત ૧ કાલ ૨ ગઈ ૩ વેય ૪ તિત્થ ૫ લિંગ ૬
ચારિત્ત ૭ બુદ્ધ ૮ નાળા ૯ ડવગહણુ ૧૦ કોલં ૧૧ તરા ૧૨
ણુસમય ૧૩ સંખ ૧૪ ડપ્પવહુત્તઓ ૧૫ સજ્ઞા ॥૭॥

છાયા-ક્ષેત્ર ૧ કાલ ૨ ગતિ ૩ વેદ ૪ તીર્થ ૫ લિંગ ૬ ચારિત્ર ૭ બુદ્ધ ૮
જ્ઞાના ૯ ડવગાહનો ૧૦ ત્કર્ષા ૧૧ ન્તરા ૧૨ નુસમય ૧૩ સંખ્યા ૧૪ ડલ્પવહુ-
ત્વતઃ ૧૫ સાધ્યાઃ ॥૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વં તાવત્ સર્વકર્મક્ષયરૂપે મોક્ષે સતિ સિદ્ધો ભવતીતિ
સિદ્ધસ્વરૂપં પચ્ચદશમિદ્વારૈર્ નિરૂપયિતુમાહ—‘સ્વેત્ત કાલ’ इत्यादि ।

અત્ર સિદ્ધાઃ સાધ્યાઃ અમુગમનીયાઃ । કથમ્ ? ક્ષેત્રાદિ પચ્ચદશમિદ્વારૈઃ ।
અત્ર સિદ્ધાનાં સ્વરૂપજ્ઞાને ક્ષેત્રાદીનિ પચ્ચદશ દ્વારાણિ સન્તિ, एतै દ્વારૈઃ સિદ્ધ-

‘સ્વેત્ત ૧ કાલ ૨ ગઈ’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—સિદ્ધ જીવ ફન પન્દ્રહ દ્વારોં સે ચિન્તનીય યા પ્રરૂપણીય
હૈં—(૧) ક્ષેત્ર (૨) કાલ (૩) ગતિ (૪) વેદ (૫) તીર્થ (૬) લિંગ (૭) ચારિત્ર
(૮) બુદ્ધ (૯) જ્ઞાન (૧૦) અવગાહના (૧૧ ઉત્કર્ષ (૧૨) અન્તર (૧૩)
અનુસમય (૧૪) સંખ્યા ઓર (૧૫) અલ્પવહુત્વ ॥૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે કહા ગયા હૈ કિ જીવ કર્મોં કા ક્ષય હોને
પર સિદ્ધ હોતા હૈ, અતઃપ્ર ચહાં પન્દ્રહ દ્વારોં સે સિદ્ધ કે સ્વરૂપ કો
નિરૂપણ કિયા જાતા હૈ—

સિદ્ધ પન્દ્રહ દ્વારોં સે સમજ્ઞને યોગ્ય હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ
સિદ્ધોં કે સ્વરૂપ કો સમજ્ઞને કે લિપ્ત પન્દ્રહ દ્વાર હૈં, ઉનસે ઉનકે

‘સ્વેત્ત ૧ કાલ ૨ ગઈ ૩’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—સિદ્ધજીવ આ પંદર દ્વારોથી ચિન્તનીય અથવા પ્રરૂપણીય છે
(૧) ક્ષેત્ર (૨) કાળ (૩) ગતિ (૪) વેદ (૫) તીર્થ (૬) લિંગ (૭) ચારિત્ર
(૮) બુદ્ધ (૯) જ્ઞાન (૧૦) અવગાહના (૧૧) ઉત્કર્ષ (૧૨) અન્તર (૧૩)
અનુસમય (૧૪) સંખ્યા અને (૧૫) અલ્પવહુત્વ ॥ ૭ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલાં કહેવામાં આવ્યું કે જીવ સમસ્ત કર્મોના ક્ષય
થયા બાદ સિદ્ધ થાય છે. આથી અહીં પંદર દ્વારોથી સિદ્ધના સ્વરૂપનું
નિરૂપણ કરવામાં આવે છે.

સિદ્ધ પંદર દ્વારોથી સમજવા યોગ્ય છે. તાત્પર્ય એ છે કે સિદ્ધોના
સ્વરૂપને સમજવા માટે પંદર દ્વાર છે તેનાથી તેમના સ્વરૂપનો વિચાર કરવો.

સ્વરૂપં ચિન્તનીયમિતિ भावः । तानि द्वाराणि यथा 'खेत्त' इत्यादि । अत्र क्षेत्रा-
चरणवहुत्वान्तामां द्वन्द्वः । ततः क्षेत्रतः कालतः इत्यादि । तत्र क्षेत्रतः कस्मिन्
क्षेत्रे सिध्यन्ति, त्रियेऽपि क्षेत्रे ऊर्ध्वस्थितिर्यग्लोकरूपे सिध्यन्ति । तत्र-ऊर्ध्व-
लोके पण्डकवनादौ, अधोलोके सलिलावती विजयाधोलौकिकेषु ग्रामेषु, तिर्यग्-
लोके मनुष्यक्षेत्रे सिध्यन्ति । तत्रापि संहारणामावेन पञ्चदशसु कर्मभूमिषु-भरत
पञ्चकैरवत पञ्चकमहाविदेहपञ्चकरूपासु सिद्धा भवन्ति संहरणमपेक्ष्य समुद्रनदी
वर्षधरपर्वतादावपि भवन्ति । तीर्थकराः पुनरधोलोकेऽधोलौकिकेषु ग्रामेषु, तिर्यग्-
लोके पञ्चदशसु कर्मभूमिषु भवन्ति न शेषेषु स्थानेषु, तत्र तेषां संहरणत एव
सद्भावाद, न तीर्थकृतां भगवतां कदाचिदपि संहरणं संभव इति । संहरणं द्विविधं

स्वरૂપ કા વિચાર કરવો જાણિયે । ઉત્તર કા નિરૂપણ હવે પ્રકાર છે—

(૧) ક્ષેત્રદ્વાર—કિસ ક્ષેત્ર મેં જીવ સિદ્ધ હોતે હૈં ? ઉત્તર યહ હૈ કિ
ઊર્ધ્વ, અધઃ ઓર તિર્યક્, ઉન ત્રીનો લોકોં મેં જીવ સિદ્ધ હોતે હૈં ।
પણ્ડકવન આદિ ઊર્ધ્વલોક મેં, સલિલાવતી વિજય કે અધોલૌકિક
ગ્રામરૂપ અધોલોક મેં મનુષ્યક્ષેત્રરૂપ તિર્થ લોક મેં સિદ્ધ હોતે હૈં ।
ઉસમેં બી સંહરણ કે અભાવ મેં પન્દરહ કર્મભૂમિયોં મેં અર્થાત્ પાંચ
ભરત, પાંચ ઇરવત ઓર પાંચ મહાવિદેહ મેં સિદ્ધ હોતે હૈ, સંહરણ કો
અપેક્ષા સમુદ્ર, નદી વર્ષધર, એવં પર્વત આદિ મેં બી સિદ્ધ હોતે હૈં ।
તીર્થકર અધોલોક મેં અધોલૌકિક ગ્રામોં મેં, તિર્યક્ લોક મેં પન્દરહ કર્મ
ભૂમિયોં મેં સિદ્ધ હોતે હૈં, શેષ સ્થાનોં મેં નહીં । શેષ સ્થાનોં મેં જો
સિદ્ધ હોતે હૈં તે સંહરણ સે હી હોતે હૈં કિન્તુ તીર્થકર ભગવાન કા

બેઠ્યો. તેનું નિરૂપણ આ પ્રમાણે છે

ક્ષેત્રદ્વાર— કયા ક્ષેત્રમાં જીવ સિદ્ધ થાય છે ? જવાબ એ છે કે ઉર્ધ્વ,
અધઃ-અને તિર્યક્, આ ત્રણે લોકોમાં સિદ્ધ થાય છે પણ્ડકવન આદિ
ઉર્ધ્વ લોકમાં સલિલાવતી વિજયના અધોલૌકિક ગ્રામરૂપ અધોલોકમાં
તથા મનુષ્યક્ષેત્ર રૂપ તિર્થલોકમાં સિદ્ધ થાય છે આમાં પણ સંહરણના
અભાવમાં પંદર કર્મભૂમિઓમાં અર્થાત્ પાંચ ભરત, પાંચ ઈરવત અને પાંચ
મહાવિદેહમાં સિદ્ધ થાય છે, સંહરણની અપેક્ષા સમુદ્ર, નદી, વર્ષધર અને
પર્વત આદિમાં પણ સિદ્ધ થાય છે. તીર્થકર અધોલોકમાં અધોલૌકિકગ્રામોમાં
તિર્યક્લોકમાં પંદર કર્મભૂમિઓમાં સિદ્ધ થાય છે, શેષ સ્થાનોમાં નહીં શેષ
સ્થાનોમાં જે સિદ્ધ થાય છે તેઓ સંહરણથી જ થાય છે પરંતુ તીર્થકર
ભગવાનનું સંહરણ કદી પણ થઈ શકતું નથી. સંહરણ બે પ્રકારના હોય છે

भवति स्वकृतं परकृतं च । तत्र स्वकृतं यत् जङ्घाचारणविद्याचारणानां स्वेच्छातो
विशिष्ट स्थानानुगमनं भवति तत् । परकृतं यत् चारणविद्याधरैर्देवैश्च वैरभावतो
ऽनुकम्पातो वा तत्र उत्क्षिप्यान्यत्र प्रक्षेपणं भवति तत् । संहरणं तु प्रमत्तसंय-
तानां देशविरतानामेव भवति न तु सर्वेषां साधूनाम् । श्रमणी, व्यपगतवेदः, परि-
हारविशुद्धिसंयतः, पुलाकः अप्रमत्तसंयतः, चतुर्दशपूर्वी, आहारकशरीरी चेत्येतेषां
सप्तानां कदाचिदपि संहरणं न भवति । तथा चोक्तम्—

“समणीमवगयवेदं, परिहार पुलागमप्पमत्तंच ।

चोदसपुर्व्वि आहा-रगंच णवि कोवि संहरइ ।” इति

छाया—श्रमणीमपगतवेदं परिहारं पुलाकमप्रमत्तं च ।

चतुर्दश पूर्व्विणं आहारकं च नापि कोऽपि संहरति ॥ इति क्षेत्रद्वारम् । १ ।

સંહરણ કમી હો નહીં સકતા । સંહરણ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ—સ્વકૃત
और परकृत । जंघाचरण मुनि अपनी इच्छा से विशिष्ट स्थानों पर
गमन करते हैं, वह स्वकृत संहरण कहलाता है । विद्याधरों अथवा देवों
द्वारा वैरभाव के कारण या अनुकंपा से प्रेरित होकर नियत स्थान से
किसी दूसरे स्थान पर ले जाना परकृत संहरण कहलाता है । यह
संहरण प्रमत्त संयतो और देशविरत श्रावकों का ही हो सकता है, सब
साधुओं का नहीं । श्रमणी, वेदरहित साधु, परिहार विशुद्धि संयत,
पुलाक, अप्रमत्तसंयत, चतुर्दशपूर्वी और आहारक शरीरी, इन सातका
संहरण कदापि नहीं होता । कहा भी है—

‘श્રમણી વેદવિહીનશ્રમણ, પરિહાર વિશુદ્ધિ સંયમવાન્ પુલાક, પ્રમત્ત
સંયત, ચૌદહપૂર્વી અને આહારક શરીરી શ્રમણ કા કદી સંહરણ નહીં
કરતા ।

સ્વકૃત અને પરકૃત જંઘાચારણ અથવા વિદ્યાચારણ મુનિ પોતાની ઇચ્છાથી
વિશિષ્ટ સ્થાનો ભણી ગમન કરે છે, તે સ્વકૃત સંહરણ કહેવાય છે. વિદ્યાધરો
અથવા દેવો દ્વારા વૈરભાવના કારણે અથવા અનુકંપાથી પ્રેરિત થઈને નિયત
સ્થાનેથી કોઈ બીજા સ્થાને લઈ જવું પરકૃત સંહરણ કહેવાય છે. આ સંહર
ણ પ્રમત્તસંયતો અને દેશવિરત શ્રાવકોને જ હોઈ શકે છે, બધાં જ સાધુઓને
નહીં. સાધવી વેદરહિત સાધુ પરિહાર વિશુદ્ધિ સંયત, પુલાક, અપ્રમત્તસંયત,
ચતુર્દશપૂર્વી અને આહારકશરીરી, આ સાતનું સંહરણ કદાપી થતું
નથી વળી કહ્યું પણ છે

શ્રમણી, વેદવિહિન શ્રમણ, પરિહાર વિશુદ્ધિ સંયમવાન પુલાક, અપ્રમ
ત્તસંયત, ચૌદપૂર્વી અને આહારક શરીરી શ્રમણનું કોઈ સંહરણ કરતું નથી

कालतः सिद्धाः कस्मिन् काले सिद्ध्यन्ति ?। सामान्यतो जन्मतोऽवसर्पिण्युत्सर्पिणीरूपेषु कालेषु सिद्ध्यन्ति। विशेषतस्तु-अवसर्पिण्यां सुषमदुष्पमा रूपे तृतीयकालभागे संख्येयेषु वर्षेषु शेषेषु जाताः सन्तः सिद्ध्यन्ति। दुष्पमसुषमायां सर्वस्यामिति चतुर्थाऽरके सर्वत्र सिद्ध्यन्ति। दुष्प-सुषमायां जाता दुष्पमा रूपे पञ्चमारके सिद्ध्यन्ति किन्तु दुष्पमायां जाता न कदाचित् सिद्ध्यन्तीतिभावः। संहरणापेक्षया तु अवसर्पिण्यादिषु सर्वेष्वपि कालेषु सिद्ध्यन्ति। यथा-अवसर्पिण्यां तृतीयचतुर्थारकयोश्चरमशरीरिणां जन्म सिद्धि गमनं तु केषाञ्चित् पञ्चमेऽप्यरके भवति यथा जम्बूस्वामिनः। केषाञ्चित् चरम-शरीरिणां उत्सर्पिण्यां दुष्पमादिषु द्वितीयतृतीयचतुर्थारकेषु जन्म, सिद्धिग-

(२) कालद्वार-काल सिद्धजीव कित्त काल में सिद्ध होते हैं ? सामान्य रूप से, जन्म की अपेक्षा अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी-सभी कालों में सिद्ध होते हैं। विशेष का विचार किया जाय तो अवसर्पिणी के सुषम दुष्पम रूप तीसरे आरे में संख्यात वर्ष शेष रहने पर जन्मे हुए सिद्ध होते हैं। दुष्पम-सुषम नामक पूरे चौथे आरे में सिद्ध होते हैं। दुष्पम सुषम आरे में जो उत्पन्न हुए हैं वे पंचम आरे में सिद्ध हो सकते हैं किन्तु दुष्पम नामक पांचवें आरे में जन्मे हुए जीव सिद्ध नहीं होते। संहरण की अपेक्षा अवसर्पिणी आदि सभी कालों में सिद्ध होते हैं। यथा-अवसर्पिणी काल में तीसरे और चौथे आरे में चरमशरीरी मनुष्यों का जन्म होता है किन्तु उनमें से कोई-कोई पांचवें आरे में भी मोक्ष जाते हैं, जैसे जम्बू स्वामी। किन्हीं-किन्हीं चरमशरीरीयों का

(२) कालद्वार-कालथी सिद्ध जेव क्या कालमां सिद्ध थाय छे ? सामान्य रूपथी, जन्मनी अपेक्षा अवसर्पिणी अने उत्सर्पिणी जधां ज कालमां सिद्ध थाय छे. विशेषतो विचार करवामां आवे तो अवसर्पिणीना सुषमदुष्पम रूप त्रीन आरामां, संख्यात वर्ष शेष रहेवा पर जन्मेला सिद्ध थाय छे. दुष्पम सुषम नामक पूरा चौथा आरामां सिद्ध थाय छे. दुष्पमसुषम आरामां जे उत्पन्न थाय छे ते पंचम आरामां सिद्ध थछे शके छे परन्तु दुष्पम नामक पांचमां आरामां जन्मेला जेव सिद्ध थतां नथी संहरणनी अपेक्षा अवसर्पिणी आदि जधां कालमां सिद्ध थाय छे जेमके-अवसर्पिणी कालमां त्रीन अने चौथा आरामां चरमशरीरी मनुष्येनो जन्म थाय छे पण तेमांथी केछ केछ पांचमां आरामां पण मोक्षे जाय छे जेम के जम्बूस्वामी केछ केछ चरमशरीरिओनो उत्सर्पिणी कालमां दुष्पम आदि त्रीन त्रीन चौथा आरामां

મનંતુ ત્રીતયચતુર્થારકયોરેવ ભવતિ ।—“દોસુ વિ સમાસુ જાયા સિઝ્ઞંતો સપ્પિણીય કાલતિગે । તીસુય જાયા ઓસપ્પિણીય સિઝ્ઞંતિ કાલદુગે ॥૧॥ ” इति द्वयोरपि समये जाताः सिद्ध्यन्ति उत्सर्पिण्यां कालत्रिके । तिसृषु च (समासु) जाता अवसर्पिण्यां सिद्ध्यन्ति कालद्विके इतिच्छाया ॥ संहरणमपेक्षयतु—उत्सर्पिण्यामवसर्पिण्यां च षट्स्यप्यरकेषु सिद्ध्यन्ति । तीर्थकृतां पुनरवसर्पिण्यामुत्सर्पिण्यां च जन्म सिद्धिगमनंतु—सुषमदुष्पमा दुष्पमसुष्पमारूपयो स्तृतीय चतुर्थांशयोरेव वेदिव्यं, न तु शेषेष्वरकेषु यथा भगवत ऋषभस्वामिनः सुषमदुष्पमारकपर्यन्तभागे जन्म, एकोननवति पक्षेषु इति साक्षादृमासाधिकेषु त्रिषु वर्षेषु शेषेषु च सिद्धिगमनम् । भगवतो वर्द्धमान-

ઉત્સર્પિણી કાલ મેં દુષ્પમ આદિ દ્વિતીય-તૃતીય ચતુર્થ આરે મેં જન્મ હોતા હૈ કિન્તુ સિદ્ધિગમન તો ત્રીસરે-ચૌથે આરે મેં હી હોતા હૈ । કહા મી હૈ—‘અવસર્પિણી કાલ કે દો આરોં મેં ઉત્પન્ન હુએ જીવ ત્રીન આરોં મેં સિદ્ધ હોતે હૈં ઓર ઉત્સર્પિણી કાલ કે ત્રીન આરોં મેં જન્મે હુએ દો આરોં મેં સિદ્ધ હોતે હૈં ’ ॥૧॥ સંહરણ કી અપેક્ષા ઉત્સર્પિણી ઓર અવસર્પિણી કાલ મેં છહોં આરોં મેં સિદ્ધ હોતે હૈં । તીર્થકરોં કા જન્મ અવસર્પિણી ઓર ઉત્સર્પિણી કાલ કે ત્રીસરે ઓર ચૌથે આરે મેં હોતા હૈ ઓર સિદ્ધિગમન મી સુષમ દુષ્પમા ઓર દુષ્પમ સુષમા કાલ મેં—ત્રીસરે ઓર ચૌથે આરે મેં હી સમજનાં ચાહિએ, અન્ય આરોં મેં નહીં । જૈસે ભગવાન્ ઋષભદેવ કા જન્મ સુષમ દુષ્પમ આરે કે પર્યન્ત ભાગ મેં હુઆ ઓર ૮૯ પક્ષ, અર્થાત્ ત્રીન વર્ષ ઓર સાઠે આઠ માસ શેષ રહેને પર મોક્ષગમન હુઆ । ભગવાન્ વર્દ્ધમાન સ્વામી કા જન્મ

જન્મ થાય છે પરંતુ સિદ્ધિગમન તો ત્રીજા ચોથા આરામાં થાય છે. કહું પણ છે અવસર્પિણી કાળના એ આરામાં ઉત્પન્ન થયેલા ૭૫ ત્રણ આરામાં સિદ્ધ થાય છે ઉત્સર્પિણી કાળના ત્રણ આરામાં જન્મેલા એ આરામાં સિદ્ધ થાય છે ॥૧॥ સંહરણની અપેક્ષા ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણી કાળમાં છ એ આરામાં સિદ્ધ થાય છે. તીર્થકરોનો જન્મ અવસર્પિણી અને ઉત્સર્પિણી કાળના ત્રીજા અને ચોથા આરામાં થાય છે અને સિદ્ધિગમન પણ સુષમદુષ્પમા અને દુષ્પમસુષમા કાળમાં ત્રીજા અને ચોથા આરામાં જ સમજવું જોઈએ, અન્ય આરાઓમાં નહીં. જેમ ભગવાન ઋષભદેવનો જન્મ સુષમદુષ્પમ આરાના છેલ્લા ભાગમાં થયો અને ૮૯ પખવાડીઆ અર્થાત્ ત્રણ વર્ષ અને સાડા આઠ માસ શેષ રહેવા પર મોક્ષગમન થયું. ભગવાન મહાવીર સ્વામીનો જન્મ દુષ્પમ-

स्वामिनस्तु दुष्पमसुषमारु पर्यन्त भागे जन्म, एकोननवति पक्षेषु शेषेषु सिद्धि, गमनमिति। इति द्वितीयं कालद्वारम् ॥२॥

गतिमाश्रित्य कस्यां गतौ सिद्धयन्ति। अत्र नयद्वयम्—अनन्तरनयः पश्चात्कृतनयश्चेति, तत्र अनन्तरनयमिति मृत्युत्पन्नभवनपधिकृत्य मनुष्यगतावेव सिद्ध्यन्ति नान्यस्यां गतौ। पश्चात्कृतनयमिति पश्चात्पत्यमनन्तरं भवनपधिकृत्य पुनः सामान्यतश्चतसृष्योऽपि गतिभ्य आगताः सिद्धयन्ति। तत्रायं विवेकः—नरकगतिमाश्रित्य चतसृष्य आद्याभ्यो नरकपृथिवीभ्य आगताः सिद्धयन्ति। तिर्यग्गतिमाश्रित्य पृथिव्यन्मनस्पति पञ्चेन्द्रियतिर्यग्गतिभ्य आगताः सिद्धयन्ति। मनुष्यगति माश्रित्य स्त्रीभ्यः पुरुषेभ्यो वा समागताः सिद्धयन्ति ३ देवगति माश्रित्य चतुर्भ्यो देवनिकायेभ्य आगताः सिद्धयन्ति ४। तीर्थकराः पुनर्देवगतेर्नरक गते-

दुष्पम सुषम नामक आरे के अन्तिम भाग में हुआ ८९ पक्ष शेष रहने पर मोक्षगमन हुआ।

(३) गतिद्वार—गति की अपेक्षा एक गति में सिद्ध होते हैं। इस विषय में दो नय हैं—अनन्तर नय और पश्चात्कृत नय। अनन्तर नय अर्थात् वर्तमान भव की अपेक्षा से मनुष्यगति में ही सिद्धि प्राप्त होती है, किसी अन्य गति में नहीं। पश्चात्कृत नय अर्थात् वर्तमान भव से पहले के भव के अपेक्षा से, सामान्य रूप से चारों ही गतियों से आये जीव सिद्ध होते हैं। इसमें विशेषता यह है—नरकगति की अपेक्षा प्रारंभ की चार पृथिवियों से आये जीव सिद्ध हो सकते हैं। तिर्यच गति की अपेक्षा पृथ्वी, जल वनस्पति और पञ्चेन्द्रिय तिर्यचों से आये जीव सिद्ध होते हैं। देवगति की अपेक्षा चारों निकायों से आये

सुषम नामक आराना अन्तिम लागमां थयो. ८६ पञ्चासीया शेष रह्या त्पारे मोक्षगमन थयुं.

(३) गतिद्वार—गतिनी अपेक्षा ओक गतिमां सिद्ध थाय छे आ विषयमां छे नय छे—अनन्तरनय अने पश्चात्कृतनय अनन्तरनय अर्थात् वर्तमान लवनी अपेक्षाथी मनुष्यगतिमां ज सिद्धि प्राप्त थाय छे, केअ अन्य गतिमां नही पश्चात्कृतनय अर्थात् वर्तमान लवना पड़ेलाना लवनी अपेक्षाथी, सामान्य रुपथी आरेय गतिओमांथी आवेला ओव सिद्ध थाय छे. आमां विशेषता आ छे नरकगतिनी अपेक्षा प्रारंभनी आर पृथ्वीओथी आवेला ओव सिद्ध थछे शके छे. तिर्यचगतिनी अपेक्षा पृथ्वी, जल वनस्पतिनी अने पञ्चेन्द्रिय तिर्गओथी आवेला ओव सिद्ध थाय छे. तीर्थकर देवगति अथवा

ર્વાડનન્તરાગતાએવ સિદ્ધયન્તિ । તત્રાપિ નરકગતિમાશ્રિત્ય તિસ્રમ્ય આઘ્યામ્ય એવ નરક પૃથિવીમ્ય આગતા સિદ્ધયન્તિ । દેવગતિ માશ્રિત્ય વૈમાનિક દેવનિકાયેમ્ય એવ આગતાઃ સિદ્ધયન્તિ । ન તુ શેષનિકાયેમ્યઃ । ઇતિ તૃતીયં ગતિદ્વારમ્ ॥૩॥

વેદતઃ-કસ્મિન્ વેદે સિદ્ધયાન્તિ? પ્રાયુત્પન્નનયમધિકૃત્ય અપગતવેદા એવ સિદ્ધયન્તિ તદ્ધવાનુભૂતપૂર્વવેદમાશ્રિત્ય તુ સર્વેષ્વાપિ વેદેષુ સ્ત્રી પું નપુંસકરૂપેષુ સિદ્ધયન્તિ । ઉક્તશ્ચ -“અવગયવેઓ સિજ્ઞહ, પચ્ચુપ્પણં નયં પહુચ્ચ । ૩। સચ્ચેહિય વેપહિય, સિજ્ઞહસમહ્યનયવાયા ॥૧॥” અપગતવેદઃ સિદ્ધયતિ, પ્રત્યુત્પન્નં નયં પ્રતિત્ય તુ । સર્વેશ્ચ વેદેશ્ચ સિદ્ધયતિ સમતીતનયવાદાત્ ઇતિ ચ્છાયા । તીર્થકૃતઃ પુનઃ સ્ત્રીવેદે વા પુરુષ વેદેવા સિદ્ધયન્તિશ તુ નપુંસક વેદે ॥ ઇતિ ચતુર્થં વેદદ્વારમ્ । ૪।

જીવ સિદ્ધ હોતે હૈં । તીર્થંકર દેવગતિ યા નરકગતિ સે અનન્તર આકર હી સિદ્ધ હોતે હૈં । નરક સે આં જો પ્રારંભ કી તીન નરક-ભૂમિયો સે આકર સિદ્ધ હોતે હૈં । દેવગતિ કી અપેક્ષા વૈમાનિકનિકાય સે સિદ્ધ હોતે હૈં, અન્ય કિસી નિકાય સે નહીં ।

(૪) વેદદ્વાર-વેદ કી અપેક્ષા કિસ વેદ સે સિદ્ધ હોતે હૈં ? પ્રત્યુત્પન્નનય અર્થાત્ વર્તમાનગ્રાહીનય કી અપેક્ષા તો વેદ રહિત જીવ હી સિદ્ધ હોતે હૈં । ઉસ ભવ મેં અનુભવ કિયે હુએ પૂર્વ વેદ કી અપેક્ષા સ્ત્રી-વેદ, પુરુષવેદ ઓર નપુંસકવેદ તીનોં સે સિદ્ધ હોતે હૈં । કહા મીં હૈં-પ્રાયુત્પન્ન નય કી અપેક્ષા સમી વેદોં સે સિદ્ધ હોતે હૈં ॥૧॥ તીર્થંકર સ્ત્રીવેદ અથવા પુરુષવેદ મેં હી સિદ્ધ હોતે હૈં, નપુંસકવેદ મેં નહીં ।

નરકગતિથી અનન્તર આવીને જ સિદ્ધ થાય છે. તીર્થંકર નરકથી આવે તો પ્રારંભની ત્રણ નરકભૂમિઓથી આવીને સિદ્ધ થાય છે. દેવગતિની અપેક્ષા વૈમાનિકનિકાયથી જ આવીને સિદ્ધ થાય છે. અન્ય કોઈ નિકાયથી નહીં.

(૪) વેદદ્વાર-વેદની અપેક્ષા કયા વેદથી સિદ્ધ થાય છે ? પ્રત્યુત્પન્ન નય અર્થાત્ વર્તમાનગ્રાહી નયની અપેક્ષા તો વેદરહિત જીવ જ સિદ્ધ થાય છે. તે ભવમાં અનુભવેલા પૂર્વવેદની અપેક્ષા સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ અને નપુંસકવેદ ત્રણેથી સિદ્ધ થાય છે કહ્યું પણ છે પ્રત્યુત્પન્ન નયની અપેક્ષા વેદથી રહિત જીવ સિદ્ધ થાય છે, પરંતુ અતીતગ્રાહી નયની, અપેક્ષા બધા વેદોથી સિદ્ધ થાય છે, ॥ ૧ ॥ તીર્થંકર સ્ત્રીવેદ અથવા પુરુષવેદમાં જ સિદ્ધ થાય છે, નપુંસકવેદમાં નહીં.

તીર્થતઃ કસ્મિન્ તીર્થે સિદ્ધચન્તિ? તીર્થકરતીર્થે ચ અતીર્થે ચ સિદ્ધ્યન્તિ ॥
ઇતિ પશ્ચમં તીર્થદ્વારમ્ ।૫।

લિંગતઃ કસ્મિન્ લિંગે સિદ્ધ્યન્તિ?, ગૃહલિંગે સ્વલિંગે ચ સિદ્ધ્યન્તિ, इदं
च सर्वं द्रव्यलिङ्गापेक्षया ज्ञातव्यम् । संयमरूपभावलिङ्गापेक्षया तु स्वलिङ्गे एव
सिद्ध्यन्ति न तु तदतिरिक्ते लिङ्गे भावलिङ्गेनैव सिद्धिः प्राप्तेः । इतिषष्ठं लिङ्गद्वारम् ।६।

ચારિત્રતઃ કસ્મિન્ ચારિત્રે સિદ્ધ્યન્તિ? પ્રત્યુત્પન્નનયમધિકત્ય યથાખ્યાત-
ચારિત્રે સિદ્ધ્યન્તિ । તદ્ભવાનુભૂતપૂર્વચારિત્રાપેક્ષયા કેચિત્ સામાયિક સૂક્ષ્મ-
સંપરાય-યથાખ્યાતેતિ ચારિત્રિણઃ ૧ કેચિત્-સામાયિક છેદોપસ્થાપનીય-સૂક્ષ્મ-

(૫) તીર્થદ્વાર-તીર્થ કી અપેક્ષા કિસ તીર્થ મેં સિદ્ધ હોતે હૈં? તીર્થકર
કે તીર્થ મેં, તીર્થકરી કે તીર્થ મેં ઓર અતીર્થ મેં બી સિદ્ધ હોતે હૈં ।

(૬) લિંગદ્વાર-લિંગ કી અપેક્ષા કિસ લિંગ મેં સિદ્ધ હોતે હૈં? અન્ય
લિંગ મેં, ગૃહસ્થલિંગ મેં ઓર સ્વલિંગ કી અપેક્ષા સમજનાં चाहिए ।
સંયમરૂપ ભાવલિંગ કી અપેક્ષા તો સ્વલિંગ મેં હી સિદ્ધિ પ્રાપ્ત હોની
હૈં ઉસકા સિવાય અન્ય ભાવલિંગ મેં નહીં ।

(૭) ચારિત્રદ્વાર-ચારિત્ર કી અપેક્ષા કિસ ચારિત્ર મેં સિદ્ધ હોતે હૈં?
પ્રત્યુત્પન્નનય કી અપેક્ષા યથાખ્યાત ચારિત્ર મેં સિદ્ધ હોતે હૈં ઉસી ભવ
મેં પહેલે અનુભવ કિયે ચારિત્ર કી અપેક્ષા કોઈ સામાયિક સૂક્ષ્મસામ્પ-
રાય ઓર યથાખ્યાત-ત્રણ ચારિત્ર વાળે હોતે હૈં, કોઈ ચાર-સામાયિક,
છેદોપસ્થાપના, સૂક્ષ્મસામ્પરાય ઓર યથાખ્યાત ચારિત્ર વાળે હોતે હૈં

(૫) તીર્થદ્વાર—તીર્થની અપેક્ષા કયા તીર્થમાં ઉત્પન્ન થાય છે ?
તીર્થકરના તીર્થમાં, તીર્થકરીના તીર્થમાં અતીર્થમાં પણ સિદ્ધ થાય છે.

(૬) લિંગદ્વાર—લિંગની અપેક્ષા કયા લિંગમાં સિદ્ધ થાય છે ?
અન્યલિંગમાં, ગૃહસ્થલિંગમાં અને સ્વલિંગમાં સિદ્ધ થાય છે આ કથન દ્રવ્ય-
લિંગની અપેક્ષા સમજવું જોઈએ સંયમરૂપ ભાવલિંગની અપેક્ષા તો સ્વલિંગમાં
જ સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે એ સિવાયના અન્ય ભાવલિંગમાં નહીં.

(૭) ચારિત્રદ્વાર—ચારિત્રની અપેક્ષા કયા ચારિત્રમાં સિદ્ધ થાય છે ?
પ્રત્યુત્પન્નનયની અપેક્ષા યથાખ્યાત ચારિત્રમાં સિદ્ધ થાય છે, તે જ ભવમાં
પહેલા અનુભવેલા ચારિત્રની અપેક્ષા કોઈ સામાયિક, સૂક્ષ્મસામ્પરાય અને
યથાખ્યાત ત્રણ ચારિત્ર વાળા હોય છે. કોઈ ચાર-સામાયિક, છેદોપસ્થાપના
સૂક્ષ્મસામ્પરાય અને યથાખ્યાત ચારિત્રવાળા હોય છે. કોઈ સામાયિક, છેદો-

સપરાય-યથાખ્યાતેતિ ચતુશ્ચારિત્રિણઃ ૨. કેચિત્-સામાયિક છેદોપસ્થાપનીય-
પરિહારવિશુદ્ધિક સૂક્ષ્મસંપરાય યથાખ્યાતે તિ પશ્ચચારિત્રિણઃ ૩, इति।

‘‘ચરણમ્મિ અહવસ્સાપ, પચ્ચુપ્પણેગ સિજ્ઞહ પાણ્ણ ।

પુઠ્ઠાણાંતર ચરણે, તિ-વડક્કમ-પંચમ-મલ્લેણ ॥૧॥ इति

છાયા-ચરણે યથાખ્યાતે, પ્રત્યુત્પન્નેન સિધ્ધ્યતિ ભયેન । પૂર્વાન્તરચરણે,
ત્રિ-ચતુષ્કક-પશ્ચક ભયેન ॥इति॥ તીર્થકરાઃ ગુનઃ સામાયિક સૂક્ષ્મસંપરાય યથા-
ખ્યાત ચારિત્રિણ એવ સિદ્ધ્યન્તિતી સપ્તમં ચારિત્રદ્વારમ્ ॥૭॥

વુદ્ધત્વમાશ્રિત્ય કીદૃશા વુદ્ધ્યા સિદ્ધ્યન્તિ ? સ્વયંબુદ્ધાઃ પ્રત્યેક
વુદ્ધાઃ વુદ્ધબોધિતાવા મિદ્ધ્યન્તી તિ તન્ન સ્વયં વુદ્ધ્યા-સ્વયંએવ આત્મનૈવ
વુદ્ધાઃ નાન્યેન બોધિતાઃ-તે ચ તીર્થકરાઃ તીર્થકરનાપબોબોદયસપ્પલા ઉચ્ચન્તે ।
પ્રત્યેક વુદ્ધાઃ-પ્રત્યેકમેવ યાત્માનં પ્રતિ કિશ્ચિન્નિમિત્તમાશ્રિત્ય સંજાત જાતિ સ્મ-

સામાયિક, છેદોપસ્થાપનીય, પરિહાર વિશુદ્ધિક સૂક્ષ્મસામ્પરાય ઓર
યથાખ્યાત હસ પ્રકાર પાંચો ચરિત્રો કો આરાધના કરકે સિદ્ધ હોતે
હૈ । કહા મી હૈ-‘પ્રત્યુત્પન્નનય કો અપેક્ષા યથાખ્યાન ચારિત્ર મે સિદ્ધ
હોતે હૈ પૂર્વાચરિત ચારિત્રો કો અપેક્ષા કોઈ તીન, કોઈ ચાર કોઈ પાંચ
ચારિત્ર સે સિદ્ધ હોતે હૈ ।’ તીર્થકર સામાયિક, સૂક્ષ્મસામ્પરાય ઓર
યથાખ્યાત ચારિત્ર કા આરાધન કરકે હી સિદ્ધ હોતે હૈ ।

(૮) બુદ્ધદ્વાર-વુદ્ધત્વ કો અપેક્ષા કિલ્લ પ્રકાર કે વુદ્ધ સિદ્ધ
હોતે હૈ ? સ્વયંબુદ્ધ-જિન્હે પરોપદેશ કે વિના સ્વયં હી બોધ પ્રાપ્ત
હુઆ હો પ્રત્યેકવુદ્ધ-જિન્હે કોઈ યાલ્લ નિમિત્ત પાકર બોધ પ્રાપ્ત
હુઆ હો ઓર વુદ્ધ બોધિક-જ્ઞાનીજનો સે ઉપદેશ પાકર જિન્હે બોધ
પ્રાપ્ત હુઆ હો. સિદ્ધ હોતે હૈ । તીર્થકર સ્વયં વુદ્ધ હી હોતે હૈ. ઉન્હે

પસ્થાનીય, પરિહાર વિશુદ્ધિક, સૂક્ષ્મસામ્પરાય અને યથાખ્યાત એ રીતે પાંચ
ચારિત્રોની આરાધના કરીને સિદ્ધ થાય છે કહ્યું પણ છે પ્રત્યુત્પન્નનયની અપેક્ષા
યથાખ્યાત ચારિત્રમા સિદ્ધ થાય છે અને પૂર્વાચરિત ચારિત્રોની અપેક્ષા કોઈ ત્રણ
કોઈ ચાર અને કોઈ પાંચ ચારિત્રોથી સિદ્ધ થાય છે. ‘તીર્થ’કર સામાયિક,
સૂક્ષ્મસામ્પરાય અને યથાખ્યાત ચારિત્રની આરાધના કરીને જે સિદ્ધ થાય છે.

(૯) બુદ્ધદ્વાર-બુદ્ધત્વની અપેક્ષા કયા પ્રકારના બુદ્ધ સિદ્ધ થાય છે ?
સ્વયંબુદ્ધ જેમને પરોપદેશ વગર સ્વયંજ બોધ પ્રાપ્ત થયો છે. પ્રત્યેક બુદ્ધ
જેમને કોઈપણ નિમિત્ત મેળવી બોધ પ્રાપ્ત થયો હોય અને બુદ્ધબોધિત જ્ઞાની
જનોથી ઉપદેશ પામીને જેમને બોધ પ્રાપ્ત થયો હોય-સિદ્ધ થાય છે તીર્થકર
સ્વયંબુદ્ધ જ હોય છે, તેમને કોઈ પાસેથી બોધ પ્રાપ્ત કરવાની જરૂર પડતી

રણા દબુદ્ધા કરકણ્ડવદિવત્ તે પ્રત્યેકબુદ્ધા ઉચ્યન્તે । બુદ્ધબોધિતાઃ-બુદ્ધેન-જ્ઞાત સિદ્ધાન્તતત્ત્વેન વિદિતસંસારસ્વભાવેન યે બોધિતાસ્તે બુદ્ધબોધિતા ઉચ્યન્તે, एते सम्भूताः सिद्ध्यन्तीति । इत्यष्टमं बुद्धद्वारम् । ८।

જ્ઞાનતઃ-કસ્મિન્ જ્ઞાને સિદ્ધ્યન્તિ ? પ્રત્યુત્પન્નનયમાશ્રિત્ય કેવલજ્ઞાને સિદ્ધ્યન્તિ । તદ્વદાલુભૂતપૂર્વાનન્તરજ્ઞાનમપેક્ષ્ય તુ કેચિત્-મતિશ્રુતજ્ઞાનિનઃ, કેચિત્ મતિશ્રુતાવધિજ્ઞાનિનઃ, કેચિત્ મતિશ્રુતમનઃપર્યાયજ્ઞાનિનઃ, કેચિત્-મતિશ્રુતાવધિમનઃપર્યાયજ્ઞાનિનઃ સિદ્ધ્યન્તિ । તીર્થકરાસ્તુ મતિશ્રુતાવધિમનઃપર્યાયજ્ઞાનિનઃ સિદ્ધ્યન્તિ તત્ર મતિશ્રુતાવધિતિજ્ઞાનત્રયચન્ત એવ પરમવતઃ સમાગચ્છન્તિ । દીક્ષા-

કિસી સે બોધ પ્રાપ્ત નહોં કરના પડતા । પ્રત્યેકબુદ્ધ બી કિસી કા ઉપદેશ પાચે બિના હી બોધ પ્રાપ્ત કરતે હૈં યગર ઉન્હેં કિસી બાહરી નિમિત્ત કી આવશ્યકતા હોતી હૈ જૈસે કરકણ્ડુ આદિ । જો સિદ્ધાન્ત કે સાર કો સમીચીનરૂપ સે જાનને બાલે જ્ઞાની પુરુષ કા ઉપદેશ પાકર બુદ્ધ હોતે હૈં, વે બુદ્ધબોધિત કહલાતે હૈં । યે તીનો પ્રકાર કે સાધકસિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરતે હૈં ।

(૧) જ્ઞાનદ્વાર-જ્ઞાન કી અપેક્ષા કિસ જ્ઞાન સે સિદ્ધ હોતે હૈં ? પ્રત્યુત્પન્ન અર્થાત્ વર્તમાનગ્રાહીનય કી અપેક્ષા કેવલજ્ઞાન મેં સિદ્ધિ હોતી હૈ । કિન્તુ ઉસી ભવ મેં પ્રાપ્ત પૂર્વકાલીન જ્ઞાનોં કા વિચાર કિયા જાય તો કોઈ મતિ-શ્રુતજ્ઞાની હોતે હૈં કોઈ મતિ, શ્રુત ઓર અવધિજ્ઞાની હોતે હૈં, કોઈ મતિ, શ્રુત મનઃપર્યાયજ્ઞાની હોતે હૈં । ઓર કોઈ મતિ, શ્રુત ઓર અવધિજ્ઞાની હોતે હૈં । તીર્થઙ્કરોં કો નિયમ સે ચારોં હી

નથી. પ્રત્યેકબુદ્ધ પણ કોઈનો ઉપદેશ પામ્યા વગર જ બોધ પ્રાપ્ત કરે છે પરંતુ તેમને કોઈ બહારના નિમિત્તની જરૂરીયાત રહે છે જેમ કે કરકણ્ડુ આદિ જે સિદ્ધાંતના સારને સમીચીન રૂપથી બાબુનાર જ્ઞાની પુરુષનો ઉપદેશ પામીને બુદ્ધ થાય છે તે બુદ્ધ બોધિત કહેવાય છે. આ ત્રણે પ્રકારના સાધક સિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરે છે.

(૯) જ્ઞાનદ્વાર-જ્ઞાનની અપેક્ષા કયા જ્ઞાનથી સિદ્ધ થાય છે ? પ્રત્યુત્પન્ન અર્થાત્ વર્તમાનગ્રાહીનયની અપેક્ષા કેવળજ્ઞાનમાં સિદ્ધ થાય છે, પરંતુ તે જ લવમાં પ્રાપ્ત પૂર્વકાલીન જ્ઞાનોનો વિચાર કરવામાં આવે તો કોઈ મતિ શ્રુતજ્ઞાની હોય છે, કોઈ મતિ, શ્રુત અને અવધિજ્ઞાની હોય છે બધારે કોઈ મતિ શ્રુત, અવધિ અને મનઃપર્યાયજ્ઞાની હોય છે. તીર્થઙ્કરોને નિયમ

કાલે ચતુર્થ મનઃપર્યવજ્ઞાનમપિ સમુત્પચ્ચતે, તતઃ કેવલં પ્રાપ્ય સિદ્ધચન્તીતિ વિવેકઃ । इति त्वमं ज्ञानद्वारम् ॥૯॥

અવગાહનાતઃ—કસ્યામવગાહનાયાં સિદ્ધચન્તિ? અવગાહના ત્રિવિધા—જઘન્યા ઉત્કૃષ્ટા, મધ્યમા ચેતિ । તત્ર જઘન્યા દ્વિરત્નિ પ્રમાણા, ઉત્કૃષ્ટા પચ્ચશતધનુઃ પ્રમાણા, મધ્યમા-સપ્તદસ્તાદિ પ્રમાણા । તત્ર જઘન્યાવગાહનયા દ્વિરત્નિ પ્રમાણા સિદ્ધાઃ વામનકૂર્મીપુત્રાદયઃ, ઉત્કૃષ્ટાવગાહનયા પચ્ચશતધનુઃપ્રમાણા સિદ્ધાઃ ભરતવાહુબલ્યાદયઃ, મધ્યમાવગાહનયા સપ્તદસ્તાદિ પ્રમાણા સિદ્ધાઃ ગૌતમાદયઃ જઘન્યોત્કૃષ્ટાવગાહનાતિરિક્તા સર્વાઽપ્યવગાહના મધ્યમૈવ જ્ઞાતવ્યેતિવિવેકઃ इति दशममवगाहनाद्वारम् ॥૧૦॥

જ્ઞાન હોતે હૈં । મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન ઓર અવધિજ્ઞાન સે યુક્ત હોકર હી પરમવ સે આતે હૈં । દીક્ષા ધારણ કરતે હી ઉન્હે મનઃપર્યવજ્ઞાન પ્રાપ્ત હો જાતા હૈં ઓર ફિર કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરકે સિદ્ધ હોતે હૈં ।

(૧૦) અવગાહનાદ્વાર—અવગાહના કી અપેક્ષા કિસ અવગાહના સે સિદ્ધ હોતે હૈં ? અવગાહના ત્રીન પ્રકાર કી હૈ—જઘન્ય, ઉત્કૃષ્ટ ઓર મધ્યમ । જઘન્ય દો હાથ કી અવગાહના સે સિદ્ધ હોતે હૈં, ઉત્કૃષ્ટ પાંચ સો ધનુષ કી અવગાહના વાલે સિદ્ધ હોતે હૈં ઓર મધ્યમ સાત હાથ આદિ કી અવગાહના વાલે સિદ્ધ હોતે હૈં જઘન્ય અવગાહના સે કૂર્મપુત્ર આદિ સિદ્ધ હુએ, ઉત્કૃષ્ટ પાંચસો ધનુષ કી અવગાહના સે ભરત બાહુબલી સિદ્ધ હુએ । ઓર મધ્યમ સાત હાથ કી અવગાહના સે ગૌતમ આદિ ને સિદ્ધ પ્રાપ્ત કી । જઘન્ય ઓર ઉત્કૃષ્ટ અવગાહના કે બીચ કી સારી અવગાહનાઈ મધ્યમ હી સમજાની વાહિએ ।

આરેય જ્ઞાન હોય છે. તેઓ મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન અને અવધિજ્ઞાનથી યુક્ત થઈને જ પરમવથી આવે છે દીક્ષા અંગીકાર કરતા જ તેમને મનઃપર્યવજ્ઞાન પ્રાપ્ત થઈ જાય છે અને પછી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને સિદ્ધ થાય છે.

(૧૦) અવગાહનાદ્વાર—અવગાહનાની અપેક્ષા કયા અવગાહનથી સિદ્ધ થાય છે ? અવગાહના ત્રણ પ્રકારની છે જઘન્ય ઉત્કૃષ્ટ અને મધ્યમ. જઘન્ય બે હાથની અવગાહનાથી સિદ્ધ થાય છે, ઉત્કૃષ્ટ પાંચસો ધનુષ્યોની અવગાહનાવાળા સિદ્ધ થાય છે અને મધ્યમ સાત આદિની અવગાહનાવાળા સિદ્ધ થાય છે જઘન્ય અવગાહનાથી કૂર્મપુત્ર આદિ સિદ્ધ થયા ઉત્કૃષ્ટ પાંચસો ધનુષ્યની અવગાહનાથી ભરત બાહુબલી આદિ સિદ્ધ થયા અને મધ્યમ સાત હાથની અવગાહનાથી ગૌતમ વગેરેએ સિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરી. જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ અવગાહના વચ્ચેની બધી અવગાહનાઓ મધ્યમ જ સમજવી જોઈએ.

સમ્યક્ત્વ પરિભ્રષ્ટા ઉત્કૃષ્ટતઃ કિયતિ કાલેઽતિક્રાન્તે સિદ્ધયન્તિ ? સમ્ય-
ક્ત્વ પરિભ્રષ્ટા ઉત્કર્ષતો દેશોનાપાર્ઘ પુદ્ગલપરાવર્ત-સંસારાતિક્રમે સતિ સિદ્ધયન્તિ
અનુત્કર્ષતસ્તુ કેચિત્ સંખ્યેયકાલાતિક્રમે, કેચિચ્ચાનન્તેન કાલેન સિદ્ધયન્તિ
તિ । इत्येकादशमुत्कृष्टद्वारम् ॥११॥

અન્ટરતઃ સિદ્ધાનાં કિયત્કાલિ હમન્તરં સ્થતિ ? અન્ટરમિતિ સિધ્યમાનાનાં
જીવાનામન્તરકાલઃ । તથાહિ-एको वर्तमानसमये सिद्धः, ततोऽन्वः कियता-
कालेन सेत्स्यतीति सिद्धेर्गमनशून्यो यः कालः स अन्तरं कथ्यते । वर्तमानकाले
एकः सिद्धः द्वितीयो जघन्येन तत् एक समयव्यवधानेन सिध्यति उत्कृष्टतः

(૧૧) ઉત્કર્ષદ્વાર-સમ્યક્ત્વ સે ચ્યુત હુએ જીવ અધિક સે અધિક
કિતના કાલ વ્યતીત હોને પર સિદ્ધ હોતે હૈં ? સમ્યક્ત્વ સે ચ્યુત જીવ
ઉત્કૃષ્ટ દેશોન અપાર્ઘ પુદ્ગલ પરાવર્તન કાલ મેં સિદ્ધ હોતે હૈં । અનુ-
ત્કર્ષ કી અપેક્ષા કોઈ સંખ્યેય કાલ વીતને પર ઓર કોઈ અનન્ત કાલ
વ્યતીત હોને પર સિદ્ધ હોતે હૈં ।

(૧૨ અન્ટરદ્વાર-સિદ્ધ જીવોં કા કિતને કાલ કા અન્ટર હોતાં હૈ ?
સિદ્ધ હોને વાલે જીવોં મેં સમય કા જો વ્યવધાન હોતા હૈ વહ અન્ટર
કહલાતા હૈ । જૈસે-एक जीव वर्तमान समय में सिद्ध हुआ, उसके
पश्चात् दूसरा जीव जितने समय के बाद सिद्ध होगा उतना बीच का
काल अन्तर कहलाता है अर्थात् सिद्धिगमन से शून्यकाल । वर्तमान
समय में एक जीव सिद्ध हुआ, दूसरा एक समय के व्यवधान से
सिद्ध होता है, इस प्रकार जघन्य अन्तर एक समय का होता है । उत्कृष्ट

(૧૧) ઉત્કર્ષદ્વાર-સમ્યક્ત્વથી બ્રષ્ટ થયેલા જીવ અધિકમાં અધિક,
કેટલો કાળ વ્યતીત થયા પછી સિદ્ધ થાય છે ? સમ્યક્ત્વથી બ્રષ્ટ જીવ ઉત્કૃષ્ટ
દેશોન અપાર્ઘ પુદ્ગલ પરાવર્તન કાળમાં સિદ્ધ થાય છે અનુત્કૃષ્ટની અપેક્ષા
કોઈ સંખ્યેય કાળ વીત્યા બાદ અને કોઈ અનન્ત કાળ વ્યતીત થવા બાદ
સિદ્ધ થાય છે.

(૧૨) અન્ટરદ્વાર-સિદ્ધ જીવોંનું કેટલા કાળનું અન્ટર હોય છે ?
સિદ્ધ થનારા જીવોમાં સમયનું જે વ્યવધાન થાય છે તે અન્ટર કહેવાય છે
જેમકે—એક જીવ વર્તમાન સમયમાં સિદ્ધ થયો ત્યાર બાદ બીજો જીવ જેટલા
સમય બાદ સિદ્ધ થશે તેટલો વચ્ચેનો કાળ અન્ટર કહેવાય છે અર્થાત્
સિદ્ધિગમનથી શૂન્યકાળ વર્તમાન સમયમાં એક જીવ સિદ્ધ થયો, બીજો એક
સમયના વ્યવધાનથી સિદ્ધ થાય છે, આ રીતે જઘન્ય અન્ટર એક સમયનો

પ્રમાસવ્યવધાનેનાન્યઃ સિદ્ધયત્યેવ । इति द्वादशमन्तरद्वारम् ॥ ૧૨ ॥

અનુસમયતો નિરન્તરત્વમનુસમયમાશ્રિત્ય કતિ સમયાન્ યાવત્ સિદ્ધ્યન્તિ નિરન્તરં નૈરન્તર્યેણ જઘન્યતો દ્વૌ સમયૌ યાવત્ સિદ્ધ્યન્તિ, ઉત્કૃષ્ટતોઽષ્ટૌ સમયાન્ યાવત્ નિરન્તરં સિદ્ધ્યન્તિ તતઃ પરં વ્યવચ્છેદઃ ।

इति त्रयोदशमनुसमयद्वारम् ॥ ૧૩ ॥

સંખ્યાતઃ-એકસ્મિન્સમયે કતિ સંખ્યકા સિદ્ધ્યન્તિ ? જઘન્યત એકસ્મિન્ સમયે એક એવ સિદ્ધ્યતિ, ઉત્કૃષ્ટતોઽષ્ટાધિકં શતં સિદ્ધ્યતિ । તત્ત્વાસ્મિન્ ભરતક્ષેત્રેઽસ્યામવસર્પિણ્યાં ભગવતઃ શ્રીઋષભદેવસ્વામિનો નિર્વાણસમયે ઉત્કૃષ્ટાવગાહ નાવતામષ્ટોત્તરશતમેકસ્મિન્ સમયે સિદ્ધમિતિ શ્રૂયતે । તત્ત્વાશ્ચર્યભૂતં કથ્યતે શાસ્ત્રે મધ્યમાવગાહનાવતામેવાષ્ટોત્તરશતસંખ્યકાનામેકસમયસિદ્ધત્વેન કથિતત્વાત્ ।

અન્તર છઠ માસ કાં હોતા હૈ ।

(૧૨) અનુસમયદ્વાર-અનુસમય અર્થાત્ વીચ મેં એક બી સમય કા અન્તર હુએ વિના લગાતાર સિદ્ધ હોં તો કિતને સમયોં તક સિદ્ધ હોતે રહતે હૈં ? નિરન્તર સિદ્ધ હોં તો લગાતાર દો સમયોં તક સિદ્ધ હોતે હૈં । ઉત્કૃષ્ટ લગાતાર આઠ સમયોં તક સિદ્ધ હોતે રહતે હૈં આઠ સમય કે પશ્ચાત્ અન્તર અવશ્ય હોતા હૈ ।

(૧૩) સંખ્યાદ્વાર-એક સમય મેં કિતને જીવ સિદ્ધ હોતે હૈં ? એક સમય મેં જઘન્ય અર્થાત્ કમ સે કમ એક જીવ સિદ્ધ હોતા હૈ । ઉત્કૃષ્ટ અર્થાત્ અધિક સે અધિક એકસમય મેં એક સૌ આઠ જીવ સિદ્ધ હોતે હૈં । હસ અવસર્પિણી કાલ મેં હસ ભરત ક્ષેત્ર મેં ભગવાન ઋષભદેવ સ્વામી કે નિર્વાણ કે સમય મેં ઉત્કૃષ્ટ અવગાહના વાલે એક સૌ આઠ જીવ એક સાથ (એક હી સમય મેં) સિદ્ધ હુએ । યહ એક અચ્છેરા

હોય છે. ઉત્કૃષ્ટ અન્તર છ માસનું હોય છે.

(૧૩) અનુસમયદ્વાર-અનુસમય અર્થાત્ વચમાં એક પણ સમયનું અન્તર પડ્યા વગર સતત સિદ્ધ થાય તો કેટલા સમયો સુધી સિદ્ધ થતાં રહે છે ? નિરન્તર સિદ્ધ હોય તો લગાતાર બે સમયો સુધી સિદ્ધ થાય છે. ઉત્કૃષ્ટ લગાતાર આઠ સમયો સુધી સિદ્ધ થતાં રહે છે. આઠ સમય પછી અન્તર અવશ્ય પડે છે.

(૧૪) સંખ્યાદ્વાર-એક સમયમાં કેટલા જીવ સિદ્ધ થાય છે ? એક સમયમાં જઘન્ય અર્થાત્ ઓછામાં ઓછો એક જીવ સિદ્ધ થાય છે ઉત્કૃષ્ટ અર્થાત્ અધિકમાં અધિક એક સમયમાં એકસો આઠ જીવ સિદ્ધ થાય છે. આ અવસર્પિણીકાળમાં આ ભરત ક્ષેત્રમાં ભગવાન ઋષભદેવ સ્વામીના નિર્વાણના

ઉક્તચોત્તરાધ્યયનસ્ય षट्त्रિंશત્તમાધ્યયને ચતુષ્પञ્ચાશત્તમગાથાયाम્-‘ઉકકોસો-ગાહનાઽય સિદ્ધિઃ’તે જુગવં દુવે । ચત્તારિય જહન્નાઽય, મજ્ઞે અદ્દુત્તરં સયં ॥૧૧॥’ હિતિ ઉત્કર્ષાવગાહનયા ચ સિદ્ધ્યતીયુગપદ્ દ્વી । ચત્તારશ્ચ જઘન્યયા, મધ્યેઽષ્ટોત્તરં શતમ્ ।હિતિ હિતિચ્છાયા ઇતિ । ચતુર્દશં સંખ્યાદ્વારમ્ ॥૧૪॥

અલ્પબહુત્વતઃ-કેભ્યઃ કેઽલ્પાઃ કે સંખ્યેયગુણા ? ઇત્યાદિ । ચિન્ત્યંતે, તત્ર સંક્ષેપાતોઽલ્પબહુત્વં યથા-સર્વસ્તોકા યુગપદ્ દ્વિત્રાદિકાઃ સિદ્ધાઃ, એકકા એકા-કિન સિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ, ઉક્તશ્ચ-‘સંખ્યાઽય જહન્નેનં, એકો ઉકકોસઽય અદ્દુત્તરં’ । સિદ્ધાઽયેના થોવા, એકકમસિદ્ધા ઓ સંખ્યગુણા ॥૧૧॥’

છાયા-સંખ્યયા જઘન્યેન એકઃ, ઉત્કર્ષેણ અષ્ટશતમ્, સિદ્ધા અનેકાઃ આશ્ચર્ય મય ઘટના-કહી જાતી હૈ, ક્યોંકિ શાસ્ત્ર મેં મધ્યમ અવગાહના વાલે એક સૌ જીવોં કા હી સિદ્ધ હોના કહા હૈ । ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર કે છત્તીસવેં અધ્યયન કી ૫૪ વીં ગાથા મેં કહા હૈ-‘ઉત્કૃષ્ટ અવગાહના વાલે એક સાથ દો જીવ સિદ્ધ હોતે હૈ’, જઘન્ય અવગાહના વાલે ચાર સિદ્ધ હોતે હૈં ઓર મધ્યમ અવગાહના વાલે એક સૌ આઠ સિદ્ધ હોતે હૈં ।’

(૧૫) અલ્પબહુત્વદ્વાર-કિનસે કૌન અલ્પ હૈ, કિનસે કૌન બહુત હૈ, હસ પ્રકાર ન્યૂનાધિકતા કા વિચાર જહાં કિયા જાતા હૈ, વહ અલ્પ-બહુત્વદ્વાર કહલાતા હૈ । સંક્ષેપ સે અલ્પબહુત્વ હસ પ્રકાર હૈ-એક સાથ દો-ત્રીન આદિ સિદ્ધ હોને વાલે સબ સે કમ હૈં, એકાકી સિદ્ધ હોને વાલે સંખ્યાતગુણા અધિક હૈં । કહા મી હૈ-સંખ્યા કી અપેક્ષા જઘન્ય

સમયે ઉત્કૃષ્ટ અવગાહના વાળા એકસો આઠ જીવ એક સાથે (એક જ સમ-યમાં) સિદ્ધ થયા આ એક અભૂતપૂર્વ આશ્ચર્યકારક બનાવ કહેવામાં આવ્યો છે કારણ કે શાસ્ત્રમાં મધ્યમ અવગાહનાવાળા એકસો આઠ જીવોનું જ સિદ્ધ હોવાનું કહેવામાં આવ્યું છે. ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના ૩૬માં અધ્યયનની ૫૪ મી ગાથામાં કહ્યું છે ઉત્કૃષ્ટ અવગાહનાવાળા એકી સાથે જીવ સિદ્ધ થાય છે, જઘન્ય અવગાહના વાળા ચાર સિદ્ધ થાય છે અને મધ્યમ અવગાહનાવાળા એકસો આઠ સિદ્ધ થાય છે.

(૧૫) અલ્પબહુત્વદ્વાર- કોનાથી કોણુ અલ્પ છે. કોનાથી કોણુ વધારે છે. એ રીતે ન્યૂનાધિકતાનો વિચાર જ્યાં કરવામાં આવે છે તે અલ્પબહુત્વદ્વાર કહેવાય છે. સંક્ષેપથી અલ્પબહુત્વ આ પ્રમાણે છે-એક સાથે જીવ ત્રણ આદિ સિદ્ધ થનારા સહુથી ઓછા છે, એકાકી સિદ્ધ થનારા સંખ્યાતગણા અધિક છે. કહ્યું પણ છે સંખ્યાની અપેક્ષા જઘન્ય એક અને ઉત્કૃષ્ટ એકસો આઠ સિદ્ધ

સ્તોકાઃ, એકક સિદ્ધાસ્તુ સંખ્યગુણાઃ ॥૧॥

અથ વિસ્તારત એતાનિ ક્ષેત્રાદીનિ ચતુર્દશદ્વારાણ્યધિકૃત્યાલ્પબહુત્વં ચિન્ત-
નીયં જન્મતઃ સંહરણતથ્ચ । તત્ર જન્મતઃ પશ્ચદશ્ચ કર્મભૂમિષુ । અકર્મભૂમય-
સ્તિશ્ચ હૈમવતાઘાઃ સન્તિ । તત્ર સંહરણં કર્મભૂમિષુ અકર્મભૂમિષુ વા ભવતિ, તત્ર
સર્વાસ્તોકાઃ સંહરણસિદ્ધાઃ, તતોઽસંખ્યેયગુણ જન્મતઃ સિદ્ધાઃ । સંહરણં સ્વ-
કૃતપરકૃતભેદેન દ્વિવિધમ્ । સ્વકૃતં ચારણાવિચાધરાણાં સ્વેચ્છયા, પરકૃતં દેવૈ-

એક ઓર ઉત્કૃષ્ટ એક સૌ આઠ સિદ્ધ હોતે હૈં । એક સાથ અનેક સિદ્ધ
હોને વાલે કમ હૈં ઓર એક-એક સિદ્ધ હોનેવાલે સંખ્યાતગુણ હૈં ॥૧॥'

અવ વિસ્તાર સે ક્ષેત્ર આદિ ચોદહ દ્વારાં કે આધાર પર અલ્પબહુત્વ
કા વિચાર ક્રિયા જાતા હૈ, જિસમેં જન્મ ઓર સંહરણ દોનોં કા
વિચાર ખી સમ્મિલિત હૈ ।

ક્ષેત્ર સે અલ્પબહુત્વ-જન્મ સે પન્દર કર્મભૂમિયોં મેં સિદ્ધ હોતે
હૈં । હૈમવત ક્ષેત્ર આદિ ત્રીસ અકર્મભૂમિયાં હૈં । સંહરણ કર્મભૂમિયોં મેં
અથવા અકર્મભૂમિયોં મેં હોતા હૈ । સંહરણ સિદ્ધ અર્થાત્ જિન્હેં કોઈ
દેવ યા વિદ્યાધર એક સ્થાન સે દૂસરે સ્થાન પર ઉઠા લે ગયા ઓર વહીં
સે જિનકો સિદ્ધિ પ્રાપ્ત હુઈ એસે જીવ સવસે કમ હૈં, જન્મ સે સિદ્ધ હોને
વાલે ઉનસે અસંખ્યાતગુણા અધિક હૈં । સંહરણ દો પ્રકાર કા હૈ-સ્વકૃત
ઓર પરકૃત । ચારણ વિદ્યાધર કા સ્વેચ્છાપૂર્વક જો સંહરણ હોતા હૈ વહ
સ્વકૃત કહલાતા હૈ । દેવોં ઓર વિદ્યાધરોં દ્વારા હોને વાલા પરકૃત

થાય છે. એક સાથે અનેક સિદ્ધ થનારાં યોછા છે અને એક એક સિદ્ધ
થનારાં અસંખ્યાતગણા છે ॥ ૧ ॥

હવે વિસ્તારથી ક્ષેત્ર આદિ ચોદ દ્વારોના આધાર પર અલ્પબહુત્વનો
વિચાર કરવામાં આવે છે જેમાં જન્મ અને સંહરણ બંનેનો વિચાર પણ
સમ્મિલિત છે.

(૧) ક્ષેત્રથી અલ્પબહુત્વ—જન્મથી પંદર કર્મભૂમિઓમાં સિદ્ધ હોય છે.
હૈમવત ક્ષેત્ર આદિ ત્રીસ અકર્મભૂમિઓ છે. સંહરણ કર્મભૂમિઓમાં અથવા
અકર્મભૂમિઓમાં થાય છે. સંહરણસિદ્ધ અર્થાત્ જેમને કોઈ દેવ અથવા
વિદ્યાધર એક સ્થાનેથી બીજા સ્થાને ઉપાડી ગયા અને ત્યાંથી જ જેમને
સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થઈ હોય એવા જ સહુથી યોછા છે. જન્મથી સિદ્ધ થનારા
તેથી અસંખ્યાતગણા અધિક છે. સંહરણ બે પ્રકારનું છે—સ્વકૃત અને પરકૃત
આરણ વિદ્યાધરોનું સ્વેચ્છાપૂર્વક જે સંહરણ થાય છે તે સ્વકૃત કહેવાય છે દેવો

શારણવિધાયરૈશ્વ જાયમાનમ્ । एषां क्षेत्राणां विभागः कर्मभूमिरकर्मभूमिः समुद्रा-
द्रीपा ऊर्ध्वमधस्तिर्यगिति लोकत्रयम् । तत्र सर्वस्तोका ऊर्ध्वलोक सिद्धाः, अधो-
लोकसिद्धाः संख्येयगुणा, तिर्यग्लोक सिद्धाः संख्येयगुणाः । सर्वस्तोका समुद्र-
सिद्धाः, द्वीपसिद्धाः संख्येयगुणाः सर्वस्तोकाः लवणसमुद्रसिद्धाः, कालोदधि
सिद्धाः संख्येयगुणाः जम्बूद्वीप सिद्धाः संख्येयगुणाः धातकीखण्डसिद्धाः
संख्येयगुणाः पुष्करार्द्धसिद्धाः संख्येयगुणाः गतं क्षेत्रतोऽल्पबहुत्वम् ॥१॥

કાલતોડલ્પવહુત્વં ચિન્ત્યતે—કાલઃ અવસર્પિણ્યુત્સર્પિણી મધ્યકાલરૂપત્તિ-
વિધઃ । તત્ર પૂર્વમવમધિકૃત્ય સર્વસ્તોકા ઉત્સર્પિણી સિદ્ધાઃ, અવસર્પિણી સિદ્ધા
વિશેષાધિકાઃ, મધ્યકાલસિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ । પ્રત્યુત્પન્નમત્રાપેક્ષયા અકાલે

સંહરણ કહલાતા હૈ । इन क्षेत्रों का विभाग कर्मभूमि, अकर्मभूमि,
समुद्र, द्वीप, ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और मध्यलोक है । इनमें से ऊर्ध्व-
लोकसिद्ध सब से कम हैं, अधोलोकसिद्ध संख्यातगुणा हैं और मध्य-
लोकसिद्ध उनसे भी संख्यातगुणा हैं । समुद्रसिद्ध सब से कम हैं, द्वीप-
सिद्ध उनसे संख्यातगुणा अधिक हैं । लवणसमुद्रसिद्ध सबसे कम हैं,
कालोदधिसमुद्रसिद्ध उनसे संख्यातगुणा अधिक हैं, जंबूद्वीपसिद्ध
संख्यातगुणा हैं, धातकीखण्डसिद्ध संख्यातगुणा हैं, पुष्करार्द्धसिद्ध
संख्यातगुणा हैं ।

૨-કાલ સે અલ્પવહુત્વ—કાલ ત્રીન પ્રકાર કા હૈ—અવસર્પિણી,
ઉત્સર્પિણી ઓર મધ્યકાલ । પૂર્વમવ કી અપેક્ષા ઉત્સર્પિણીકાલસિદ્ધ
સબ સે કમ હૈ, અવસર્પિણી કાલસિદ્ધ વિશેષાધિક હૈ ઓર મધ્યકાલ-

અને વિદ્યાધરો દ્વારા થનારું પરકૃત સંહરણ કહેવાય છે. આ ક્ષેત્રોના વિભાગ
કર્મભૂમિ, અકર્મભૂમિ, સમુદ્ર, દ્વીપ, ઉર્ધ્વલોક અધોલોક અને મધ્યલોક છે.
એમાંથી ઉર્ધ્વલોકસિદ્ધ સહુથી ઓછા છે, અધોલોકસિદ્ધ સંખ્યાતગણા છે અને
મધ્યલોકસિદ્ધ તેથી સંખ્યાતગણા છે. સમુદ્રસિદ્ધ સહુથી ઓછા છે, દ્વીપસિદ્ધ
તેથી પણ સંખ્યાતગણા અધિક છે લવણસમુદ્રસિદ્ધ સહુથી ઓછા છે, કાલોદધિ
સમુદ્રસિદ્ધ તેથી સંખ્યાતગણા અધિક છે, જંબૂદ્વીપસિદ્ધ સંખ્યાતગણા છે,
ધાતકીખણ્ડસિદ્ધિ સંખ્યાતગણા છે, પુષ્કરાર્ધ સિદ્ધ સંખ્યાતગણા છે.

(૨) કાલથી અલ્પવહુત્વ—કાલ ત્રણ પ્રકારના છે—અવસર્પિણી ઉત્સર્પિણી
અને મધ્યકાળ. પૂર્વલવની અપેક્ષા ઉત્સર્પિણીકાલસિદ્ધ સહુથી ઓછા છે.
અવસર્પિણીકાલસિદ્ધ વિશેષાધિક છે અને મધ્યમકાલસિદ્ધ સંખ્યાતગણા છે.

સિદ્ધયન્ત્યતો નાસ્ત્યલ્પબહુત્વમ્ । ગતં કાલતોઽલ્પબહુત્વમ્ ॥૨॥

ગતિમધિકૃત્યાલ્પબહુત્વં ચિન્ત્યતે—પ્રત્યુત્પન્નભાવાપેક્ષયા સિદ્ધિગતૌ સિદ્ધયન્તીતિનાસ્ત્યલ્પબહુત્વમ્ । પૂર્વભાવાપેક્ષયાઽનન્તર પશ્ચાદ્ભૂતિકો મનુષ્યગતૌ સિદ્ધયન્તીતિ નાસ્ત્યલ્પબહુત્વમ્ । પરમ્પરપશ્ચાત્કૃતિ કસ્યાનન્તરાગતિ ચિન્ત્યતે, તથાહિ—સર્વસ્તોકા મનુષ્યયોનિકાનન્તરગતિસિદ્ધાઃ, નરકયોનિકાઽનન્તરગતિ સિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ તિર્યગ્યોનિકાનન્તરગતિ સિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ, દેવયોનિકાઽનન્તરગતિ સિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણા । ઇતિ ગતં ગતિતોઽલ્પબહુત્વમ્ ॥૩॥

લિંગતોઽલ્પબહુત્વં ચિન્ત્યતે—લિંગદ્વારે વેદદ્વારમન્તર્હિતમ્ । પ્રત્યુત્પન્નભાવા-

સિદ્ધ સંખ્યાતગુણા હૈં । પ્રત્યુત્પન્ન ભવ કી અપેક્ષા અકાલ સિદ્ધ હોતે હૈં, અતઃ અલ્પબહુત્વ નહીં હૈં ।

૩-ગતિ સે અલ્પબહુત્વ—પ્રત્યુત્પન્ન નય કી અપેક્ષા સિદ્ધગતિ મેં સિદ્ધ હોતે હૈં, અતઃવ હસ અપેક્ષા સે કોઈ અલ્પબહુત્વ નહીં હૈં । અનન્તર પૂર્વભવ કી અપેક્ષા સમી મનુષ્યગતિ મેં સિદ્ધ હોતે હૈં, અતઃવ હસ અપેક્ષા સે મી અલ્પબહુત્વ નહીં હૈં । પરમ્પર પૂર્વભવ કી અપેક્ષા સે અર્થાત્ ચરમ ભવ સે પહેલે કે ભવ કી અપેક્ષા સે વિચાર કિયા જાય તો મનુષ્યગતિ સે મનુષ્યગતિ મેં આકર સિદ્ધ હોને વાલે સબ સે કમ હૈં, નરકગતિ સે આકર સિદ્ધ હોને વાલે સંખ્યાતગુણા અધિક હૈં, તિર્યંચગતિ સે આકર સિદ્ધ હોને વાલે ડનસે મી સંખ્યાતગુણા અધિક હૈં ઓર દેવગતિ સે આકર સિદ્ધ હોને વાલે ડનસે મી સંખ્યાતગુણા અધિક હૈં ।

૪-લિંગ સે અલ્પબહુત્વ—લિંગદ્વાર મેં વેદદ્વાર અન્તર્ગત હૈં । પ્રત્યુ-

પ્રત્યુત્પન્ન ભવની અપેક્ષા અકાલમાં સિદ્ધ થાય છે આથી અલ્પબહુત્વ નથી

(૩) ગતિથી અલ્પબહુત્વ—પ્રત્યુત્પન્ન નયની અપેક્ષા સિદ્ધિગતિમાં સિદ્ધ હોય છે; આથી આ અપેક્ષાથી કોઈ અલ્પબહુત્વ નથી. પૂર્વભવની અપેક્ષા અથવા મનુષ્યગતિથી સિદ્ધ થાય છે આથી આ અપેક્ષા પણ અલ્પબહુત્વ નથી. પરમ્પરા પૂર્વભવની અપેક્ષાથી અર્થાત્ ચરમ ભવથી પહેલાના ભવની અપેક્ષાથી વિચાર કરવામાં આવે તો મનુષ્યગતિથી મનુષ્યગતિમાં આવીને સિદ્ધ થનારા સહુથી ઓછા છે, નરકગતિથી આવીને સિદ્ધ થનારા સંખ્યાતગણા અધિક છે, તિર્યંચગતિથી આવીને સિદ્ધ થનારા તેથી પણ સંખ્યાતગણા અધિક છે જ્યારે દેવગતિથી આવીને સિદ્ધ થનારા તેમનાથી પણ સંખ્યાતગણા અધિક છે.

(૪) લિંગથી અલ્પબહુત્વ—લિંગદ્વારમાં વેદદ્વાર અન્તર્ગત છે. પ્રત્યુત્પન્ન

पेक्षया व्यपगतवेदः सिद्धयतीति नास्त्यल्पबहुत्वम् पूर्वभावापेक्ष्य सर्वस्तोका-
नपुंसकलिङ्गसिद्धाः, स्त्रीलिङ्गसिद्धाः संख्येयगुणाः पुल्लिङ्गसिद्धाः संख्येयगुणाः
गतं लिङ्ग वेदद्वारम् ॥४॥

तीर्थतोऽल्पबहुत्वं चिन्त्यते—सर्वस्तोकास्तीर्थकर सिद्धाः तीर्थकरतीर्थे नो तीर्थ-
कर सिद्धाः संख्येयगुणाः । तीर्थकरतीर्थसिद्धाः नपुंसकाः संख्येयगुणाः तीर्थ-
करतीर्थसिद्धाः स्त्रियः संख्येयगुणाः तीर्थकरतीर्थसिद्धाः पुमांसः संख्येयगुणाः गतं
तीर्थतोऽल्पबहुत्वम् । ५।

चारित्रतोऽल्पबहुत्वं चिन्त्यते तत्र प्रत्युत्पन्नभावापेक्षया नो चारित्रि नो
अचारित्री सिद्धयतीति नास्त्यल्पबहुत्वम् । पूर्व भावापेक्षया- सामान्यतः सर्वस्तोकाः

त्पन्न भाव की अपेक्षा वेद का क्षय करके वेदहीन हुए जीव ही सिद्ध
होते हैं, अतएव इस अपेक्षा से कोई अल्पबहुत्व नहीं है । पूर्वभाव की
अपेक्षा से नपुंसकलिङ्गसिद्ध सब से कम हैं, स्त्रीलिङ्गसिद्ध उनसे
संख्यातगुणा अधिक हैं और पुल्लिङ्गसिद्ध उनसे भी संख्यातगुणा
अधिक हैं ।

५-तीर्थ से अल्पबहुत्व—तीर्थकरसिद्ध सब से कम हैं, तीर्थकर
के तीर्थ में नो तीर्थकरसिद्ध संख्यातगुणा अधिक हैं, अथवा द्रव्यलिङ्ग
की अपेक्षा तीर्थकर तीर्थसिद्ध नपुंसक सब से थोड़े हैं, तीर्थकर तीर्थ-
सिद्ध स्त्रियां संख्यातगुणी हैं, तीर्थकर तीर्थसिद्ध पुरुष संख्यातगुणा हैं ।

६-चारित्र से अल्पबहुत्व—प्रत्युत्पन्न भाव की अपेक्षा नो चारित्रि
नो अचारित्री जीव ही सिद्ध होता हैं, अतएव कोई अल्पबहुत्व नहीं

भावनी अपेक्षा वेदना क्षय करीने वेदहीन થયેલા જીવ જ સિદ્ધ થાય છે આથી
આ અપેક્ષાથી કોઈ અલ્પબહુત્વ નથી. પૂર્વભવની અપેક્ષાથી નપુંસકલિંગસિદ્ધ
સહુથી ઓછા છે, સ્ત્રીલિંગસિદ્ધ તેથી સંખ્યાતગણા અધિક છે અને પુલ્લિંગ-
સિદ્ધ તેથી પણ સંખ્યાતગણા અધિક છે.

(૫) તીર્થથી અલ્પબહુત્વ-તીર્થકરસિદ્ધ સહુથી ઓછા છે, તીર્થકરના તીર્થમાં
અતીર્થકરસિદ્ધ સંખ્યાતગણા અધિક છે અથવા દ્રવ્યલિંગની અપેક્ષા તર્થકર
તીર્થસિદ્ધ નપુંસક સહુથી થોડાં છે. તીર્થકર તીર્થસિદ્ધ સ્ત્રિઓ સંખ્યાતગણી
છે, તીર્થકર તીર્થસિદ્ધ પુરૂષ સંખ્યાતગણા છે.

(૬) ચારિત્રથી અલ્પબહુત્વ-પ્રત્યુત્પન્ન ભાવની અપેક્ષાના ચારિત્રી અચારિત્રી
જીવ જ સિદ્ધ થાય છે આથી કોઈ અલ્પબહુત્વ નથી. પૂર્વભવની અપેક્ષાથી,

પંચચારિત્ર સિદ્ધાઃ, ચતુશ્ચારિત્રસિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ, ત્રિચારિત્રસિદ્ધાઃ ચતુશ્ચારિત્ર-
સિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ ત્રિચારિત્ર સિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ વિશેષાપેક્ષ્યા-સર્વસ્તોકાઃ
સામાયિક-છેદોપસ્થાપનીય-પરિહારવિશુદ્ધિક-સૂક્ષ્મસંપરાય-યથાખ્યાતચારિત્ર-
સિદ્ધાઃ, સામાયિક છેદોપસ્થાપનીય-સૂક્ષ્મસંપરાય-યથાખ્યાત ચારિત્રસિદ્ધાઃ
સંખ્યેયગુણાઃ ગતં । ચારિત્ર તોડ્વપવહુત્વમ્ ॥૬॥

બુદ્ધત્વતોડ્વપવહુત્વં ચિન્ત્યતે-સર્વસ્તોકાઃ પ્રત્યેકબુદ્ધ સિદ્ધાઃ, બુદ્ધબોધિત
સિદ્ધાઃ નપુંસકાઃ સંખ્યેયગુણાઃ, વદ્ધબોધિત સિદ્ધાઃ સ્ત્રિયઃ સંખ્યેયગુણાઃ, બુદ્ધ-
બોધિત સિદ્ધાઃ પુમાંસઃ સંખ્યેય ગુણાઃ ઇતિ । ગતં બુદ્ધત્વતોડ્વપવહુત્વમ્ ॥૭॥

હૈ । પૂર્વભાવ કી અપેક્ષા સે, સામાન્ય રૂપ સે પંચચારિત્રી (સામાયિક
આદિ પાંચો ચારિત્રોં કી આરાધના કરને વાલે) સિદ્ધ સઘ સે કમ હૈ, ચાર
ચારિત્રોં કી આરાધના કરકે સિદ્ધ હોને વાલે સંખ્યાતગુણા અધિક હૈ,
ત્રિચારિત્રી સંખ્યાતગુણા અધિક હૈ । વિશેષ કી અપેક્ષા સામાયિક,
છેદોપસ્થાપનીય, પરિહાર વિશુદ્ધિક, સૂક્ષ્મસામ્પરાય ઓર યથાખ્યાત,
इन पांचों चारित्रों से सिद्ध होने वाले सघ से कम हैं । सामायिक,
छेदोपस्थापनीय, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात चारित्र से सिद्ध होने
वाले संख्यातगुणहैं । सामायिक, सूक्ष्मसाम्पराय और यथाख्यात
चारित्र से सिद्ध होने वाले संख्यातगुणा अधिक हैं ।

૭-બુદ્ધત્વ સે અલ્પવહુત્વ—પ્રત્યેક બુદ્ધ સિદ્ધ સઘ સે કમ હૈ બુદ્ધ-
બોધિત સિદ્ધ નપુંસક સંખ્યાતગુણા અધિક હૈ, બુદ્ધબોધિત સિદ્ધ સ્ત્રિયાં
સંખ્યાતગુણા હૈ, બુદ્ધબોધિતસિદ્ધ પુરુષ સંખ્યાતગુણા હૈ ।

સામાન્ય રૂપથી પંચચારિત્રી (સામાયિક વગેરે પાંચે ચારિત્રોની આરાધના
કરવાવાળા) સિદ્ધ સહુથી ઓછા છે. ચાર ચારિત્રોની આરાધના કરીને સિદ્ધ
થનારા સંખ્યાતગણા અધિક છે, ત્રિચારિત્રી સંખ્યાતગણા અધિક છે વિશેષની
અપેક્ષા સામાયિક, છેદોપસ્થાપનીય; પરિહારવિશુદ્ધિક, સૂક્ષ્મસામ્પરાય અને
યથાખ્યાત, આ પાંચે ચારિત્રોથી સિદ્ધ થનારાં સહુથી ઓછા છે. સામાયિક
છેદોપસ્થાપનીય, સૂક્ષ્મસામ્પરાય અને યથાખ્યાત ચારિત્રથી સિદ્ધ થનારા સંખ્યા-
તગણા અધિક છે

(૭) બુદ્ધત્વથી અલ્પબહુત્વ—પ્રત્યેકબુદ્ધ સિદ્ધ સહુથી ઓછા છે બુદ્ધ-
બોધિતસિદ્ધ નપુંસક સંખ્યાતગણા અધિક છે. બુદ્ધબોધિતસિદ્ધ સ્ત્રિઓ સંખ્યા-
ગણી છે. બીજાં બુદ્ધિબોધિતસિદ્ધ પુરુષ સંખ્યાતગણા છે.

જ્ઞાનતોડલ્પબહુત્વં ચિન્ત્યતે-પ્રત્યુત્પન્નભાવમપેક્ષ્ય કેવલજ્ઞાની સિદ્ધચતીતિ-
નાસ્ત્યલ્પબહુત્વમ્ । પૂર્વભાવમપેક્ષ્ય સામાન્યતઃ સર્વસ્તોકા દ્વિજ્ઞાનસિદ્ધાઃ ચતુ-
ર્જ્ઞાન સિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ, ત્રિજ્ઞાનસિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ વિશેષતઃ સર્વસ્તોકા
મતિશ્રુતજ્ઞાનસિદ્ધાઃ, મતિશ્રુતાવધિમનઃપર્યવજ્ઞાનસિદ્ધા સંખ્યેયગુણા, મતિશ્રુતા-
વધિજ્ઞાનસિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણા इति । ગતં જ્ઞાનતોડલ્પબહુત્વમ્ । ૮॥

અવગાહનાતોડલ્પબહુત્વં ચિન્ત્યતે-સર્વસ્તોકા જઘન્યાવગાહનાસિદ્ધાઃ, ઉત્કૃ-
ષ્ટાવગાહનાસિદ્ધાસ્તતોડસંખ્યેયગુણા, યવમધ્યસિદ્ધા અસંખ્યેયગુણાઃ, યવમધ્યો-
પરિસિદ્ધાઃ અસંખ્યેયગુણાઃ યવમધ્યાધસ્તાત્સિદ્ધા વિશેષાધિકાઃ, સર્વે વિશેષા-

૮-જ્ઞાન સે અલ્પબહુત્વ—વર્તમાન ભાવ કી અપેક્ષા સે કેવલજ્ઞાની
કો હી સિદ્ધિપ્રાપ્ત હોતી હૈ,અતएव इस दृष्टि से कोई अल्पबहुत्व नहीं
है । पूर्वभाव की अपेक्षा से सामान्य रूप से द्विज्ञानसिद्ध अर्थात् मति-
ज्ञान और श्रुतज्ञान से सीधा केवलज्ञान प्राप्त करके सिद्ध होने वाले
सब से कम हैं, चार ज्ञान से सिद्ध होने वाले संख्यातगुणा अधिक हैं,
त्रिज्ञानसिद्ध संख्यातगुणा अधिक हैं । विशेष रूप से मति-श्रुतज्ञान
से सिद्ध होने वाले सब से कम हैं । मति, श्रुत, अवधि और मनःपर्य-
वज्ञान से सिद्ध होने वाले संख्यातगुणा अधिक हैं । मति, श्रुत और
अवधिज्ञान से सिद्ध होने वाले संख्यातगुणा हैं ।

૯-અવગાહના સે અલ્પબહુત્વ—જઘન્ય અવગાહના સે સિદ્ધ હોને
વાળે સબ સે કમ હૈં । ઉત્કૃષ્ટ અવગાહના સે સિદ્ધ હોને વાળે ઉનસે
અસંખ્યાતગુણા અધિક હૈં, યવમધ્ય સિદ્ધ અસંખ્યાતગુણા હૈં, યવમધ્ય
ઉપર વાળે સિદ્ધ અસંખ્યાતગુણા હૈં । યવમધ્ય નીચે વાળે સિદ્ધ વિશે-

(૮)જ્ઞાનથી અલ્પબહુત્વ—વર્તમાન ભાવની અપેક્ષાથી કેવલજ્ઞાનીને જ સિદ્ધિ
પ્રાપ્ત થાય છે આથી આ દૃષ્ટિએ કોઈ અલ્પબહુત્વ નથી. પૂર્વભાવની અપેક્ષા
થી સામાન્ય રૂપથી દ્વિજ્ઞાનસિદ્ધ અર્થાત્ મતિજ્ઞાન અને શ્રુતજ્ઞાનથી સીધું
કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને સિદ્ધ થનારાં સહુથી ઓછા છે, ચાર જ્ઞાનથી સિદ્ધ
થનારાં સંખ્યાતગુણા અધિક છે, ત્રિજ્ઞાનસિદ્ધ સંખ્યાતગુણા અધિક છે. વિશે-
ષરૂપથી મતિ શ્રુતજ્ઞાનથી સિદ્ધ થનારા સૌથી ઓછા છે. મતિ, શ્રુત, અવધિ
અને મનઃપર્યવજ્ઞાનથી સિદ્ધ થનારાં સંખ્યાતગુણા અધિક છે. મતિ, શ્રુત અને
અવધિજ્ઞાનથી સિદ્ધ થનારાં સંખ્યાતગુણા છે.

(૯) અવગાહનાથી અલ્પબહુત્વ—જઘન્ય અવગાહનાથી સિદ્ધ થનારાં સહુથી
ઓછા છે. ઉત્કૃષ્ટ અવગાહનાથી સિદ્ધ થનારાં તેથી અસંખ્યાતગુણા અધિક

ધિકાઃ । ગતમવગાહનાતોડલ્પવહુત્વમ્ ॥૧૦॥ ઉત્કર્ષદ્વારે નાસ્ત્યલ્પવહુત્વમ્ ॥૧૧॥

અન્તરતઃ અનુસમયત इत्यनन्तरश्चાલ્પવહુત્વં ચિન્ત્યતે—સર્વસ્તોકા અષ્ટસમયા-
નન્તરસિદ્ધાઃ, સપ્તસમયાનન્તરસિદ્ધાઃ પદ્મસમયાનન્તર સિદ્ધા इत्यारभ्य यावद् द्वि-
સમયાનન્તર સિદ્ધાઃ एते सर्वे संख्येयगुणाः । एवं तावदनन्तरेषु सान्तरेष्वपि सर्व
સ્તોકાઃ षण्मासान्तर સિદ્ધાઃ, એક સમયાનન્તરસિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ, યવમધ્યા-
નન્તરસિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ, અધસ્તાદ્ યવમધ્યાડન્તરા સિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણાઃ,

બાધિક હૈં । सब विशेषाधिक हैं ।

૧૦-અન્તર-અનન્તર સે અલ્પવહુત્વ—લગાતાર આઠ સમય તક
સિદ્ધિ હોને વાળે સબ સે કમ હૈં, ઉનકી અપેક્ષા નિરન્તર સાત સમય
તક સિદ્ધિ હોને વાળે સંખ્યાતગુણા હૈં, ઉનકી અપેક્ષા નિરન્તર છઠ્ઠ
સમય તક સિદ્ધિ હોને વાળે સંખ્યાતગુણા હૈં, ઉનસે પાંચ સમય તક
સિદ્ધિ હોને વાળે સંખ્યાતગુણા હૈં, ઉનસે લગાતાર ચાર સમય તક
સિદ્ધિ હોને વાળે સંખ્યાતગુણા હૈં, ઉનસે લગાતાર ત્રીન સમય તક
સિદ્ધિ હોને વાળે સંખ્યાતગુણા અધિક હૈં, ઔર ઉનસે દો સમય તક
નિરન્તર સિદ્ધિ હોને વાળે સંખ્યાતગુણા હૈં, મહ અનન્તર સિદ્ધિ કા અલ્પ-
વહુત્વ હૈં । સાન્તર સિદ્ધિ મેં અર્થાત્ જિનકે સમય મેં વ્યવધાન હૈં ઉનમેં
છઠ્ઠ માસ કે અન્તર સે સિદ્ધિ હોને વાળે સબ સે કમ હૈં, એક સમય કે
અન્તર સે સિદ્ધિ હોને વાળે સંખ્યાતગુણા હૈં, યવમધ્ય અન્તર સિદ્ધિ
સંખ્યાતગુણા હૈં, નીચે યવમધ્ય અન્તર સિદ્ધિ સંખ્યાતગુણા હૈં, ઉપરિ-
યવમધ્ય અન્તરસિદ્ધિ વિશેષાધિક હૈં, સબ વિશેષાધિક હૈં ।

છે, યવમધ્યસિદ્ધિ અસંખ્યાતગણા છે, યવમધ્ય ઉપરવાળા સિદ્ધિ અસંખ્યાતગણા
છે. યવમધ્ય નીચેવાળા સિદ્ધિ વિશેષાધિક છે. બધાં વિશેષાધિક છે.

(૧૦) અન્તર અનન્તરથી અલ્પબહુત્વ—લગાતાર આઠ સમય સુધી સિદ્ધિ
થનારા સહુથી ઓછા છે તેમની અપેક્ષા નિરન્તર સાત સમય સુધી સિદ્ધિ
થનારા સંખ્યાતગણા છે. તેમની અપેક્ષા નિરન્તર છ સમય સુધી સિદ્ધિ થનારા
સંખ્યાતગણા છે તેમનાથી લગાતાર ચાર સમય સુધી સિદ્ધિ થનારા સંખ્યાત
ગણા છે. તેથી લગાતાર ત્રણ સમય સુધી સિદ્ધિ થનારા સંખ્યાતગણા અધિક
છે અને તેથી બે સમય સુધી નિરન્તર સિદ્ધિ થનારા સંખ્યાતગણા છે. આ
અનન્તર સિદ્ધોત્ અલ્પબહુત્વ છે. સાન્તર સિદ્ધોમાં અર્થાત્ જેમના સમયમાં
વ્યવધાન છે તેમનામાં છ માસના અન્તરથી સિદ્ધિ થનારાં સંખ્યાતગણા છે.

ઉપરિચયમધ્યાન્તરસિદ્ધાઃ, વિશેષાધિકાઃ સર્વે વિશેષાધિકાઃ । ગતમન્તરતોડનન્તર-
તશ્ચાલ્પબહુત્વમ્ । ૧૨ । ૧૩ ॥

સંખ્યાતોડલ્પબહુત્વં ચિન્ત્યતે-સર્વસ્તોકા અષ્ટોત્તરશત્ સિદ્ધાઃ પશ્ચાન્નુપૂર્વ્યા
સપ્તોત્તરશત સિદ્ધાદારમ્બ યાવત્ પચ્ચાશત્ સિદ્ધા અનન્તગુણાઃ । એવમેવ પશ્ચાન્નુ-
પૂર્વ્યા એકોનપચ્ચાશત્સિદ્ધાદારમ્બ યાવત્ પચ્ચવિંશતિ સિદ્ધા અસંખ્યેયગુણાઃ ।
એવમેવ પશ્ચાન્નુપૂર્વ્યા ચતુર્વિંશતિ સિદ્ધાદારમ્બ યાવદ્ એક સિદ્ધાઃ, સર્વે એતે સંખ્યે-
યગુણાઃ પશ્ચાન્નુપૂર્વીહાનિઃ પ્રદર્શ્યતે-સર્વસ્તોકા અનન્તગુણહાનિ સિદ્ધાઃ, અસંખ્યે-
યગુણહાનિ સિદ્ધા અનન્તગુણાઃ, સંખ્યેયગુણહાનિસિદ્ધાઃ સંખ્યેયગુણા ઇતિ ।
ગતં સંખ્યાતોડલ્પબહુત્વમ્ । ૧૪ ॥

૧૧-સંખ્યા સે અલ્પબહુત્વ—એક સમય મેં એક સૌ આઠ સિદ્ધ
સબ સે કમ હૈં પશ્ચાન્નુપૂર્વી સે એક સૌ સાત સિદ્ધ સે લગાકર પચાસ
સિદ્ધ તક અનન્તગુણા હૈં । હસી પ્રકાર પશ્ચાન્નુપૂર્વી સે લેકર પચ્ચીસ તક
અસંખ્યાતગુણા હૈં । હસી પ્રકાર એક સાથ ચૌવીસ સિદ્ધો સે લગાકર
એક સિદ્ધ તક સંખ્યાતગુણા હૈં । અથ પશ્ચાન્નુપૂર્વીહાનિ દિશાતે હૈં—
અનન્તગુણ હાનિ સિદ્ધ સબસે કમ હૈં, અસંખ્યેયગુણહાનિ સિદ્ધ અન-
ન્તગુણા હૈં, સંખ્યેયગુણહાનિ સિદ્ધ સંખ્યાતગુણા હૈં ।

યવમધ્ય અન્તરસિદ્ધ સંખ્યાતગણા છે, નીચે યવમધ્ય અન્તરસિદ્ધ સંખ્યાત-
ગણા છે, ઉપરિચયમધ્ય અન્તર સિદ્ધ વિશેષાધિક છે, બધાં વિશેષાધિક છે.

(૧૧) સંખ્યાથી અલ્પબહુત્વ—એક સમયમાં એકસો આઠ સિદ્ધ સહુથી
ઓછા છે, પશ્ચાન્નુપૂર્વીથી એકસો સાત સિદ્ધથી લઇને પચાસ સિદ્ધ સુધી
અનન્તગણા છે. એવી જ રીતે પશ્ચાન્નુપૂર્વીથી લઇને પચ્ચીસ સુધી અસંખ્યા-
તગણા છે. એવી જ રીતે એકી સાથે ચૌવીસ સિદ્ધોથી લઇને એક સિદ્ધ
સુધી સંખ્યાતગણા છે હવે પશ્ચાન્નુપૂર્વી હાનિ બતાવીએ છીએ અનન્તગુણ
હાનિસિદ્ધ સહુથી ઓછા છે. અસંખ્યેયગુણહાનિ અનન્તગણા છે, સંખ્યેય
ગુણહાનિ સિદ્ધ સંખ્યાતગણા છે.

एतानि चतुर्दशद्वाराणि अधिकृत्याल्पबहुत्वद्वारं पञ्चदशमत्रसेयम् । एतैः पूर्वोक्तैः पञ्चदशद्वारैः साध्याः अनुगमनीयाः एतैः पूर्वोक्तैर्द्वारैः सिद्धानां स्वरूपं चिन्तनीयमिति भावः । सूत्र ७।

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितकलितकलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यानैकग्रन्थनिर्मापक,
ब्रादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजप्रदत्त-
जैनाचार्यः पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचितस्य श्री
दीपिका-निर्युक्ति व्याख्या द्वयो-
पेतस्य तत्त्वार्थसूत्रस्य नवमो-
अध्यायः समाप्तः ॥९॥

इति श्रीतत्त्वार्थसूत्रं दीपिका तोनिर्युक्तितश्च-
— समाप्तम् :—

इस प्रकार उन चौदहद्वारों से अल्पबहुत्व का विचार करने पर पन्द्रह द्वारों से सिद्धों का स्वरूप चिन्तनीय है ॥७॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजीमहाराजकृत
'तत्त्वार्थसूत्र' की दीपिका-निर्युक्ति व्याख्या का
नववां अध्याय समाप्त ॥९॥

दीपिका और निर्युक्ति के साथ तत्त्वार्थसूत्र

— समाप्त —

आरीते आ चौद द्वारेथी अल्पबहुत्वनो विचार करवाथी पंहर द्वारेनुं
निष्पल्लु सम्पुर्ण थयुं. आ पूर्वोक्त पंहर द्वारेथी सिद्धोनुं स्वरूप चिन्तनीय छे ॥७॥
जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत "तत्त्वार्थसूत्र"नी
दीपिका-निर्युक्ति व्याख्यामो नवमो अध्याय समाप्तः ॥९॥

तत्त्वार्थ सूत्र संपूर्ण



11
12
13
14

15

16

17

18

19

20

21
22

23

24
25
26
27
28
29
30
31
32
33
34
35
36
37
38
39
40
41
42
43
44
45
46
47
48
49
50
51
52
53
54
55
56
57
58
59
60
61
62
63
64
65
66
67
68
69
70
71
72
73
74
75
76
77
78
79
80
81
82
83
84
85
86
87
88
89
90
91
92
93
94
95
96
97
98
99
100

ડડશનમુચ્યતે ૩ અન્નહ્યર્ચ-સ્ત્રીસંયોગઃ, મૈથુન મિતિયાવત્ ૪ પરિગ્રહસ્તુ-મૂર્છા,
સચિત્તાડચિત્તમિશ્રેષુ શાસ્ત્રાનુમતિરહિતેષુ દ્રવ્યાદિષુ સમત્વરૂપઃ ૫ એતેભ્યઃ
પ્રાણાડતિપાતાદિભ્યઃ સર્વતઃ-સર્વૈત્મના ત્રિકરણે સ્ત્રિયોગૈર્મનોવાક્રકાયૈ વિરમણ-
નિવૃત્તિઃ પશ્ચ મહાવ્રતાન્યવસેયાનિ । પ્રાણિવધાદિતો નિવૃત્તિર્વ્રત મુચ્યતે, તત્ર
સ્થિતો હિંસાદિલક્ષણં ક્રિયાકલાપં નાડનુતિષ્ઠતિ, અપતુ-અહિંસાદિલક્ષણમેવ
ક્રિયાકલાપમનુતિષ્ઠતીતિ ફલતિ । પ્રાણાતિપાતાદિભ્યો નિવૃત્તસ્ય શાસ્ત્રવિહિત
ક્રિયાડનુષ્ઠાનાત્ સદસત્પ્રવૃત્તિનિવૃત્તિક્રિયાસાધ્યં કર્મક્ષપણં ભવતિ, કર્મક્ષપણાચ્ચ
-મોક્ષાડશાસિરિતિ શ્રાવઃ । અત્રેદં વાંધ્યમ્-પ્રાણાતિપાતસ્તાવત્-પ્રાણવિયોજનમ્,

ગ્રહણ કરના અદત્તાદાન હૈ । સ્ત્રી સંયોગ યા મૈથુન અન્નહ્યર્ચ્ય કહલાતા
હૈ । મૂર્છા અર્થાત્ શાસ્ત્ર કી અનુમતિ જિનકે લિએ નહીં હૈ એસે
સચિત્ત, અચિત્ત ઓર મિશ્ર દ્રવ્ય આદિ મૈં સમત્વધારણ કરના પરિગ્રહ હૈ ।

હન પ્રાણાતિપાત આદિ સે પૂર્ણ રૂપેણ ત્રીન કરણ ઓર ત્રીન યોગ
સે મન વચન કાય સે નિવૃત્ત હોના પાંચ મહાવ્રત હૈં । હિંસા આદિ સે
નિવૃત્ત હોના વ્રત કહલાતા હૈ, વ્રત મૈં સ્થિત પુરુષ હિંસા રૂપ ક્રિયા-
કલાપ નહીં કરતા હૈ । ઇસસે યહ ફલિત હુઆ કિ વહ અહિંસા રૂપ
ક્રિયાકલાપ હી કરતા હૈ । ભાવાર્થ યહ હૈ કિ જો પ્રાણાતિપાત આદિ
સે વિરત હોતા હૈ વહ શાસ્ત્રોક્ત ક્રિયાઓં કા અનુષ્ઠાન કરતા હૈ,
અતઃપ્રવૃત્તિ ઓર અસત્નિવૃત્તિ રૂપ ક્રિયાઓં દ્વારા હોને વાલા
કર્મક્ષય કરતા હૈ ઓર કર્મોં કા ક્ષય કરકે મોક્ષ પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ ।

યહાં યહ સમજ લેના યાહિએ-પ્રાણાતિપાત કા અર્થ હૈ-પ્રાણવિ-

અથવા મૈથુન અપ્રહ્યર્ચ્ય કહેવાય છે. મૂર્છા અર્થાત્ જેના માટે શાસ્ત્રની
અનુમતિ નથી એવા સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્ર દ્રવ્ય આદિમાં સમત્વ
ધારણ કરવું પરિગ્રહ છે.

આ પ્રાણાતિપાત આદિથી પૂર્ણતયા, ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી-
મન વચન કાયથી નિવૃત્ત થવું પાંચ મહાવ્રત છે. હિંસા આદિથી નિવૃત્ત
થવું વ્રત કહેવાય છે. વ્રતમાં રહેલો પુરુષ હિંસારૂપ ક્રિયાકલાપ કરતો નથી.
આનાથી એવું સાબિત થયું કે તે અહિંસારૂપ ક્રિયાકલાપ જ કરે છે. ભાવાર્થ
એ છે કે જે પ્રાણાતિપાત આદિથી વિરત થાય છે તે શાસ્ત્રોક્ત ક્રિયાઓનું
અનુષ્ઠાન કરે છે આથી સત્પ્રવૃત્તિ અને અસત્નિવૃત્તિ રૂપ ક્રિયા દ્વારા થનારાં
કર્મ ક્ષય કરે છે અને કર્મોના ક્ષય કરીને મોક્ષ પ્રાપ્ત કરી લે છે.

અહીં એક બાબત સમજ લેવાની જરૂર છે-પ્રાણાતિપાતનો અર્થ છે-

माणश्चेन्द्रियादयः तत्सम्बन्धात्प्राणिनो जीवाः पृथिवीकायाद्येकेन्द्रियद्वीन्द्रिय-
त्रीन्द्रिय-चतुरिन्द्रिय-पञ्चेन्द्रियास्तान्-जीवान् विज्ञाय-श्रद्धया प्रतिपद्य भावत-
स्तस्याऽकरणं ज्ञानश्रद्धानपूर्वकं चारित्रमुच्यते, तच्च-सदसत्प्रवृत्तिनिवृत्तिक्रिया-
लक्षणं चारित्रं मनोवाक् कायकृतकारिताऽनुमोदितभेदेनाऽनेकविधं बोध्यम्।
उक्तञ्च-स्थानाङ्गे पञ्चमस्थाने प्रथमोद्देशके-‘पञ्च महाव्रथा पण्णत्ता, तं जहा-
सव्वाओ पाणाहवायाओ, जाव सव्वओ परिग्गहाओ वेरम्मणं’ इति,।
पञ्च महाव्रतानि भज्जन्तानि, तद्यथा-प्राणातिपाताद्विरमणम्, यावद्-सर्वस्मात्
परिग्रहाद् विरमणम्-इति, आवश्यकं दशवैकालिकेऽप्युक्तम् ॥५५॥

योजन । प्राण इन्द्रिय आदि दस हैं । उन्हीं के संबंध से जीव प्राणी
कहलाते हैं । पृथ्वीकाय आदि एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय
और पंचेन्द्रिय, ये सब प्राणी हैं । इन जीवों को जानकर एवं इन पर
श्रद्धा करके भाव से प्राणातिपात न करना ज्ञान-श्रद्धान-पूर्वक चारित्र
कहलाता है । सत् अनुष्ठान में प्रवृत्ति और असत् अनुष्ठान से
निवृत्ति उसका लक्षण है । मन, वचन, काय, कृत, कारित और
अनुमोदन आदि के भेद से चारित्र अनेक प्रकार का है । स्थानांगसूत्र
के पंचम स्थान के प्रथम उद्देशक में कहा है-‘पांच महाव्रत कहे गए
हैं, वे इस प्रकार हैं-समस्त प्राणातिपात से विरत होना, जाव अर्थात्
समस्त मृषावाद से विरत होना, समस्त अदत्तादान से विरत होना,
समस्त मथुन से विरत होना और समस्त परिग्रह से विरत होना ।’
आवश्यक और दशवैकालिक सूत्र में भी ऐसा ही कहा है ॥५५॥

प्राणवियोजन प्राण इन्द्रिय आदि दस છે તેમના જ સંબંધથી જીવ પ્રાણી
કહેવાય છે. પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને
પંચેન્દ્રિય, આ બધાં પ્રાણી છે આ જીવોને જાણીને અને એમનામાં શ્રદ્ધા
કરીને ભાવથી પ્રાણાતિપાત ન કરવો જ્ઞાન-શ્રદ્ધાનપૂર્વક ચારિત્ર કહેવાય છે.
સત્ અનુષ્ઠાનમાં પ્રવૃત્તિ અને અસત્ અનુષ્ઠાનથી નિવૃત્ત તેનું લક્ષણ છે.
મન, વચન, કાયા, કૃત, કારિત અને અનુમોદન આદિના લેહથી ચારિત્ર
અનેક પ્રકારના છે. સ્થાનાંગસૂત્રના પંચમ સ્થાનના પ્રથમ ઉદ્દેશકમાં કહ્યું છે-
‘પાંચ મહાવ્રત કહેવામાં આવ્યા છે તે આ મુજબ છે-સમસ્ત પ્રાણાતિપાતથી
વિરત થવું, સમસ્ત મૃષાવાદથી વિરત થવું, સમસ્ત અદત્તાદાનથી વિરત થવું,
સમસ્ત મૈથુનથી વિરત થવું અને સમસ્ત પરિગ્રહથી વિરત થવું. આવશ્યક
તેમજ દશવૈકાલિક સૂત્રમાં પણ આ પ્રમાણે જ કહેવામાં આવ્યું છે. ॥૫૫॥

मूलम्—तत्थेज्जट्टं ईरियाइया पणवीसं भावणाओ ॥५६॥

छाया—‘तत्स्थैर्यार्थम्—ईर्यादिकाः पञ्चविंशति भावनाः’ ॥५६॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं देशतो हिंसादिविरहितलक्षण पञ्चाणुव्रतादिस्वरूपं प्ररूपितम्, सम्पत्ति-तेषां व्रतानां स्थिरता सम्पादनार्थं तावद् ईर्यादिकाः पञ्चविंशतिभावनाः प्ररूपयितुमाह—‘तत्थेज्जट्टं’ इत्यादि । तत्स्थैर्यार्थम्—तेषां पूर्वोक्तानां व्रतानां स्थूल प्राणातिपातविरमणादिलक्षणानां स्थिरताकरणार्थं दृढीकरणार्थम् ईर्यादिकाः—ईर्यादिलक्षणाः पञ्चविंशतिभावना भवन्ति । तत्र—ईर्या—ईरणं यत्नया गमनम् १ आदिपदेन—मनः प्राशस्त्य २ वचः प्राशस्त्ये ३ पणा ४ ऽऽदाननिक्षेपरूपाः ५ पञ्च प्रथममहाव्रतस्य भावनाः १ अलोच्य सम्भाषणम् १ क्रोध

‘तत्थेज्जट्टं ईरियाइया’ इत्यादि ॥५६॥

सूत्रार्थ—व्रतों की स्थिरता के लिए ईर्यादिक पचवीस भावनाएं हैं ॥५६॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले एक देश से हिंसादि से विरति रूप पांच अणुव्रत आदि का लक्षण कहा गया है, अब उन व्रतों में स्थिरता लाने के लिए ईर्या आदि पचवीस भावनाओं का प्ररूपण करते हैं—पूर्वोक्त स्थूल प्राणातिपात विरमण आदि व्रतों की स्थिरता के लिए अर्थात् उन्हें दृढ करने के लिए ईर्या आदि पचवीस भावनाएं कही गई हैं । वे इस प्रकार हैं ।

(१) ईर्या अर्थात् यतनापूर्वक गमन करना (२) मन की प्रशस्तता (३) वचन की प्रशस्तता (४) एषणा (५) आदाननिक्षेप, यह पांच प्रथम व्रत की भावनाएं हैं ।

(१) सोच-विचार कर भाषण करना (२) क्रोधत्याग (३) लोभ-

‘तत्थेज्जट्टं ईरियाइया पणवीसं भावणाओ’

सूत्रार्थ—व्रतों की स्थिरता भाटे ईर्यादिक पचवीस भावनाओं से ॥५६॥

तत्त्वार्थदीपिका—अगाऊ ओकदेशथी हिंसादिथी विरतिरूप पांच अणुव्रत आदिना लक्षण कहेवाभां आया छे डवे ते व्रतों में स्थिरता लाववाना आशयथी ईर्या वगेरे पचवीस भावनाओंनुं अरूपण करीये छीये—पूर्वाक्त स्थूलप्राणातिपात विरमण वगेरे व्रतों की स्थिरता भाटे अर्थात् तेमने दृढ करवा भाटे ईर्या वगेरे पचवीस भावनाओं कहेवाभां आवी छे, ते आ प्रमाणे छे—(१) ईर्या अर्थात् यतनापूर्वक गमन करवुं (२) मन की प्रशस्तता (३) वचन की प्रशस्तता (४) एषणा (५) आदान निक्षेप आ पांच प्रथम व्रत की भावनाओं छे,

(१) समञ्ज विचारीने जाववुं (२) क्रोध त्याग (३) लोभत्याग (४)

૨ લોભ ૩ મય ૪ હાસ્યેષુ ૫ અનૃતવિવર્જનએતિ પચ્ચ દ્વિતીય મહાવ્રતસ્ય ભાવનાઃ
૨ અષ્ટાદશનિધિ વિશુદ્ધવસતેયૌચનાપૂર્વકં સેવનમ્ ૧ પ્રતિદિનમવગ્રહં યાચિત્વા
તૃણકાષ્ઠાદિગ્રહણમ્ ૨ પીઠફલકાદ્યર્થમપિ વૃક્ષાદીનાં છેદનમ્ ૩ સાધારણ પિણ્ડસ્યા-
ઽધિકતો ન સેવનમ્ ૪ સાધુવૈયાવૃત્યકરણએ ૫ તિ પ્રચ્ચ તૃતીયમહાવ્રતસ્ય ભાવનાઃ ૩ ।
સ્ત્રીપશુપણ્ડકરહિતવસતિસેવનમ્ ૧ સ્ત્રીકથાવર્જનમ્ ૨ રત્નપદ્મોપાઙ્ગાઽનવલોક-
નમ્ ૩ પૂર્વકૃતસુરતરતેરસ્મરણમ્ ૪ પ્રતિદિનં ભોજનપરિત્યાગએ ૫ તિ પચ્ચ
ચતુર્થમહાવ્રતસ્ય ભાવનાઃ ૪ પ્રશસ્તાઽપશસ્તશ્વદ ૧ રૂપ ૨ રસ ૩ ગન્ધ ૪

ત્યાગ (૪) અયત્યાગ ઓર (૫) હાસ્યત્યાગ યહ દ્વિતીયવ્રત કી પાંચ ભાવનાએ હિં ।

(૧) અઠારહ પ્રકાર સે વિશુદ્ધ વસતિ કા યાચના પૂર્વક સેવન કરના (૨) પ્રતિદિન અવગ્રહ કી યાચના કરકે તૃણ કાષ્ઠ આદિ કો ગ્રહણ કરના (૩) પાટ આદિ લે લિએ સ્ત્રી વૃક્ષ આદિ કા છેદન ન કરના (૪) સાધારણ પિણ્ડ કા અધિક સેવન ન કરના અર્થાત્ અનેક સાધુઓ કા જો સ્પિષ્ટિત આહાર હો ઉસસે સે અપને ઉચિત ભાગ સે અધિક ન લેના ઓર (૫) સાધુઓ કા વૈયાવૃત્ય કરના, યહ તૃતીયવ્રત કી પાંચ ભાવનાએ હિં ।

(૧) સ્ત્રી, પશુ ઓર પણ્ડક સે રહિત વસતિ કા સેવન કરના (૨) સ્ત્રીકથા ન કરના (૩) સ્ત્રી કે અંગોપાંગો કા અવલોકન નહીં કરના (૪) પૂર્વ કૃત ભોગો કા સ્મરણ ન કરના ઓર (૫) પ્રતિદિન ગરિષ્ઠ ભોજન કા પરિત્યાગ કરના, યહ ચૌથે વ્રત કી પાંચ ભાવનાએ હિં ।

અયત્યાગ અને (૫) હાસ્યત્યાગ, આ ત્રીજા વ્રતની પાંચ ભાવના છે.

(૧) અઠાર પ્રકારથી વિશુદ્ધ વસતીનું યાચનાપૂર્વક સેવન કરવું (૨) દરરોજ અવગ્રહની યાચના કરીને તૃણ કાષ્ઠ વગેરેને ગ્રહણ કરવા (૩) પાટ વગેરે માટે પણ વૃક્ષ વગેરેનું છેદન ન કરવું (૪) સાધારણ પિણ્ડનું અધિક સેવન ન કરવું અર્થાત્ અનેક સાધુઓ માટેનો જે ભોગો કરેલો આહાર હોય તેમાંથી પોતાના ભાગે હોય તેનાથી વધુ ન લેવું અને (૫) સાધુઓની વૈયાવૃત્ય (સેવા) કરવી આ ત્રીજા વ્રતની પાંચ ભાવનાઓ છે.

(૧) સ્ત્રી, પશુ અને નપુંસક વગરની વસતીમાં વાસ કરવો (૨) સ્ત્રીકથા ન કરવી (૩) સ્ત્રીના અંગોપાંગોનું અવલોકન ન કરવું (૪) પૂર્વ ભોગવેલા ભોગોનું સ્મરણ ન કરવું અને (૫) દરરોજ સ્વાદિષ્ટ ભોજનનો પરિત્યાગ કરવો, આ ચોથા વ્રતની પાંચ ભાવના છે.

સ્પર્શેષુ ૫ રાગદ્વેષવર્જનં શબ્દાદિભેદાત્ પશ્ચ પશ્ચમમ્હાત્રતસ્યેતિ મિલિતાઃ
પશ્ચવિંશતિર્ભાવનાઃ કર્તવ્યાઃ ॥૨૫॥૫૬॥

‘તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વે સર્વપ્રાણાતિપાતવિરમણાદિલક્ષણાનિ પશ્ચમમ્હાત્રતાનિ
પ્રરૂપિતાનિ, સમ્પ્રતિ—તેવાં વ્રતાનાં દાઢ્યર્થ મૈકૈકસ્ય મહાત્રતસ્ય પશ્ચ પશ્ચભાવનાઃ
પ્રરૂપયિતુમાહ—‘તત્થેજ્જટ્ટં ઈરિયાહયા પળવીસં ભાવનાઓ’ ઇતિ । તત્થૈર્યા-
ર્યમ્—ઈર્યાદિકાઃ પશ્ચવિંશતિર્ભાવના ભાવનીયાઃ, તેવાં પૂર્વોક્તસ્વરૂપાણાં સર્વત,

(૧) પ્રશસ્તરૂપ (૨) રસ (૩) ગંધ (૪) સ્પર્શ ઓર (૫) શબ્દ મેં
રાગ ઓર અપ્રશસ્ત રૂપાદિ મેં દ્વેષ ધારણ ન કરના, યહ પાંચ પંચમત્રત
કી ભાવનાएं हैं । सब मिलकर पच्चीस भावनाएं होती हैं ॥५६॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્ત—પહલે સમ્પૂર્ણ પ્રાણાતિપાતવિરમણ આદિ પાંચ
મહાત્રતોં કી પ્રરૂપણા કી ગઈ, અબ ઉન વ્રતોં કી દ્રઢતા કે લિએ—એક-
એક મહાત્રત કી પાંચ-પાંચ ભાવનાएं कहते हैं ।

उन व्रतों की स्थिरता के लिए ईर्ष्या आदि पच्चीस भावनाओं का
सेवन करना चाहिए अर्थात् सम्पूर्ण प्राणातिपातविरमण आदि पांच
महाव्रतों का तथा स्थूलप्राणातिपात विरमण आदि पांच अणुव्रतों को
दृढ करने के लिए पच्चीस भावनाएं कही गई हैं । वे इस प्रकार हैं—
(१) ईर्ष्यासमिति (२) मनोगुप्ति (३) वचनगुप्ति (४) एषणा (५) आदा-
ननिक्षेपणा (६) आलोच्य संभाषण—सोच-विचार करके बोलना (७)
क्रोध का त्याग (८) लोभ का त्याग (९) भय का त्याग (१०) हास्य

(૧) પ્રશસ્ત રૂપ (૨) રસ (૩) ગંધ (૪) સ્પર્શ અને (૫) શબ્દમાં
રાગ તથા અપ્રશસ્ત રૂપાદિમાં દ્વેષ ધારણ ન કરવો એ પાંચ પાંચમાત્રતની
ભાવનાઓ છે. બધી મળીને પચ્ચીસ ભાવનાઓ થાય છે ॥ ૫૬ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—અગાઉ સમ્પૂર્ણ પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ
પાંચ મહાત્રતોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી હવે આ વ્રતોની દ્રઢતાને માટે
એક એક મહાત્રતની પાંચે પાંચ ભાવનાઓ કહીએ છીએ

તે વ્રતોની સ્થિરતા માટે ઈર્ષ્યા આદિ પચ્ચીસ પ્રકારની ભાવનાઓનું
સેવન કરવું જોઈએ અર્થાત્ સમ્પૂર્ણ પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ પાંચ આણુવ્રતો
ને દૃઢ કરવા માટે પચ્ચીસ ભાવનાઓ કહેવામાં આવી છે જે આ પ્રમાણે
છે— (૧) ઈર્ષ્યાસમિતિ (૨) મનોગુપ્તિ (૩) વચનગુપ્તિ (૪) એષણા (૫) આદાન
નિક્ષેપણા (૬) આલોચ્ય સંભાષણ—સમગ્રી વિચારીને બોલવું (૭) ક્રોધનો
ત્યાગ (૮) લોભનો ત્યાગ (૯) ભયનો ત્યાગ (૧૦) હાસ્યનો ત્યાગ (૧૧)

प्राणातिपातविरमणादि लक्षणानां पञ्च महाव्रतानां देशतः प्राणातिपातादिविरति-
लक्षणाऽणुव्रतानाञ्च स्थैर्यार्थं दृढतासम्पादनार्थम् ईर्यासमितिः १ आदिपदेन-
मनोगुप्तिः २ वचोगुप्तिः ३ एषणा ४ आदाननिक्षेपणा आलोच्य सम्भाषणम् ५ क्रोध
प्रत्याख्यानम् ७ लोभप्रत्याख्यानम् ८ भयप्रत्याख्यानम् ९ हास्य प्रत्याख्यानम्
१० अष्टादशविधविशुद्धवसतेर्याचनापूर्वकं सेवनम् ११ प्रतिदिनमवग्रहं याचित्वा
तृणकाष्ठादिग्रहणम् १२ पीठ फलकाद्यर्थमपि वृक्षादीना मच्छेदनम् १३ साधारण-
पिण्डस्याऽधिकतो न सेवनम् १४ साधु वैयावृत्यकरणञ्च १५ स्त्रीपशुनपुंसक
संसक्तशयनाऽऽसनवर्जनम् १६ रागयुक्तस्त्रीकथा वर्जनम् १७ स्त्रीणां मनोहरेन्द्रिय-
वर्जनम् १८ पूर्वव्रतानुस्मरणवर्जनम् १९ प्रतिदिनं भोजनपरित्यागश्च २० मनो-
ज्ञाऽमनोज्ञस्पर्श २१ रस २२ गन्ध २३ वर्ण २४ शब्दानां २५ रागद्वेषवर्जनञ्च
—त्येवं पञ्चविंशतिर्भावनाः । तत्र-प्रथमाः पञ्च भावनाः ईर्यासमितेः (प्राणाति-

का त्याग (११) अठारह प्रकार से विशुद्ध वसति का याचनापूर्वक सेवन
(१२) प्रतिदिन अवग्रह की याचना करके तृण काष्ठ आदि को ग्रहण
करना (१३) पीठ फलक आदि के लिए भी वृक्ष आदि को न काटना
(१४) साधारण पिण्ड का अपने समुचित भाग से अधिक सेवन न
करना (१५) साधुओं का वैयावृत्य करना (१६) स्त्री, पशु और नपुं-
सक के संसर्गवाले शय्या एवं आसन के सेवन से बचना (१७) राग-
युक्त स्त्री कथा का त्याग (१८) स्त्रियों की मनोहर इन्द्रियों को न
देखना (१९) पहले भोगे भोगों का स्मरण न करना (२०) प्रतिदिन
सरस भोजन का त्याग करना—कभी-कभी उपवास आदि करना
(२१-२५) मनोज्ञ और अमनोज्ञ स्पर्श, रस, गंध, रूप और शब्द पर
राग-द्वेष न करना, ये पञ्चीस भावनाएं हैं ।

अठार पकारथी विशुद्ध वसतीनुं याचनापूर्वक सेवन करवुं (१२) हरदोज
अवग्रहनी याचना करीने तृण काष्ठ वगेरेनुं ग्रहण करवुं (१३) पीठ-पाठ
वगेरे भाटे पणु वृक्ष वगेरे न कापवा (१४) साधारण पिण्डनुं पोताना लागथी
वधारे सेवन न करवुं (१५) साधुओनी वैयावत्या (शुश्रूषा) करवी (१६) स्त्री पशु
अने नपुंसकना संसर्गवाणी पथारी अने आसनना सेवनथी दूर रहेवुं
(१७) रागयुक्त स्त्रीकथाना त्याग (१८) स्त्रीओनी मनोहर इन्द्रियोने न जेवी
(१९) पूर्वे लोगवेदा लोगोनुं स्मरण न करवुं (२०) हरदोज स्वाहु लोण-
नने त्याग करवो—क्यारेक क्यारेक उपवास वगेरे करवा (२१-२५) मनोज्ञ
अने अमनोज्ञ स्पर्श रस, गंध, रूप तथा शब्द पर राग-द्वेष न करवो,
आ पञ्चीस भावनाओ छे.

પાતવિરતૈઃ) દ્વિતીયાઃ પશ્ચ ભાવનાઃ-અસત્યવિરતૈઃ, તૃતીયાઃ પશ્ચભાવનાઃ સ્તેય-
વિરતૈઃ, ચતુર્થ્યઃ પશ્ચ ભાવનાઃ-વ્રહ્મચર્યસ્ય, પશ્ચમ્યઃ પશ્ચ ભાવનાઃ પરિગ્રહવિરતૈ
રવગન્તવ્યાઃ તત્ર તાવત્-ઈરણં ગમનમ્-ઈર્યા, તસ્યાં સમિતિઃ-સજ્જતિઃ શ્રુતરુપેના-
ડસત્મનઃ પરિણતિઃ, તદુપયોગેન પુરસ્તાન્ યુગમાત્રયા દૃષ્ટ્યા સ્થાવરજઙ્ગમાનિ-
ભૂતાનિ પરિત્યજન્ અપ્રમત્તઃ સન્ ગચ્છેત્-ઈત્યાદિરુપો વિધિઃ ઈર્યાસમિતિ રુચ્યતે?
મનોગુપ્તિશ્ચ-મનસો રક્ષણમ્, આર્ત્તરૌદ્રધ્યાનાડવચારઃ-ધર્મધ્યાને ઉપયોગશ્ચર વચો-
ગુપ્તિશ્ચ-એષણાસમિતિરૂપા ૩ એષણા ચ-ત્રિવિધા, ગવેષણ ૧ ગ્રહણ ૨ ગ્રાસ ૩
ભેદાત્ । તસ્યામેષણાયામસમિતસ્ય એષણામપિ કાયાના મુપધાનાપત્તિઃ સ્યાદતસ્ત-
ત્સંરક્ષણાર્થ સકલેન્દ્રિયોપયોગલક્ષણા-એષણાસમિતિઃ કર્તવ્યા ૪ આદાનનિષેષણા

— હનમેં સે પ્રારંભ કી પાંચ ભાવનાएं प्राणातिपात विरमणव्रत की,
दूसरी पांच असत्यविरति की, तीसरी पांच स्तेयविरति की, चौथी
पांच ब्रह्मचर्यव्रत की और पांचवीं भावनाएं परिग्रहविरति की हैं ।

હન આવનાઓં કા અર્થ હસ પ્રકાર હૈ-ગમન કરને મેં યતના
રખના ઈર્યાસમિતિ હૈ અર્થાત્ ચાર હાથ આગે કી મૂમિ દેખકર સ્થાવર
ઔર જસ જીવોં કી રક્ષા કરતે હુર, અપ્રમત્ત ભાવ સે ગમન કરના
પ્રથમ ભાવના હૈ । મનોગુપ્તિ કા અર્થ હૈ આર્ત્તધ્યાન ઔર રૌદ્રધ્યાન સે
વચ કર ધર્મધ્યાન મેં લીજ્ઞ હોના । વચન કો ગોપન કરના અર્થાત્
મૌન ધારણ કરના વચનગુપ્તિ હૈ । એષણા કે ત્રીન ભેદ હૈ-ગવેષણા,
ગ્રહણેષણા ઔર ગ્રાસેષણા । જો એષણા સમિતિ સે રહિત હોતા હૈ, વહ
છહોં કાર્યોં કા વિરાધક હોતા હૈ, અતએવ જીવોં કી રક્ષા કે લિપ

આમાંથી પ્રારંભની પાંચ ભાવનાઓ પ્રાણાતિપાત વિરમણ વ્રતની બીજી
પાંચ અસત્યવિરતિની ત્રીજી પાંચ સ્તેયવિરતિની, ચોથી પાંચ બ્રહ્મચર્ય વ્રતની
અને પાંચમી પાંચ ભાવનાઓ પરિગ્રહ વિરતિની છે.

આ ભાવનાઓનો અર્થ આ પ્રમાણે છે. ચાલવામાં જતના રાખવી
ઈર્યાસમિતિ છે. અર્થાત્ ચાર હાથ આગળની જમીનનું ખારીકાઈથી નિરીક્ષણ
કરીને સ્થાવર તેમજ જસ જીવોની રક્ષા કરતા થકા અપ્રમત્ત ભાવથી ગમન
કરવું એ પ્રથમ ભાવના છે. મનોગુપ્તિનો અર્થ છે. આર્ત્તધ્યાન તથા રૌદ્ર
ધ્યાનથી અળગા રહીને ધર્મધ્યાનમાં લીન થવું, વચનને ગોપવું અર્થાત્
મૌનવ્રત ધારણ કરવું વચનગુપ્તિ છે. એષણાના ત્રણ ભેદ છે-ગવેષણા,
ગ્રહણેષણા અને ગ્રાસેષણા જેઓ એષણા સમિતિથીરહિત હોય છે તે છએ કાર્યોનો
વિરાધક હોય છે આથી જીવોની રક્ષા માટે એષણાસમિતિનું પાલન કરવું

समितिस्तु-औधिक-औपग्रहिकभेदेन द्विविधस्योपधेर्ग्रहण-स्थापनलक्षणयोरादान निक्षेपणयोरागमनालुसारेण प्रत्यवेक्षण-प्रमार्जनरूपा समिति रुच्यते५ आलोकित, पानभोजनन्तु-प्रतिगृहं पात्रमध्यपतितपिण्डस्य चक्षुराद्युपयोगेन तत्समुत्थाऽऽ- गन्तुकसत्त्वसंरक्षणार्थं प्रत्यवेक्षणं कर्तव्यम् उपाश्रयमागत्य च पुनरपि प्रकाशयुक्ते- प्रदेशे स्थित्वा पानभोजनं सुप्रत्यवेक्षितं कृत्वा प्रकाशप्रदेशाऽवस्थितेन बल्गनं कर्तव्य मिति बोध्यम् इत्येवं शीत्या-एताः पञ्चभावनाः पुनः पुनर्भावनं वासयन् वाहुल्येन सम्पादयन् समस्ताम् प्राणातिपातलक्षणामर्हिसां पातुं समर्थो भवतीति भावः । अथाऽनृतविरतिलक्षण सत्यवचनस्य दाढ्यार्थं पूर्वोक्त पञ्च भावनासु प्रथमं तावत्-अनुवीचिभाषणमुच्यते, अनुवीचिशब्दो देशीयः-आलोचनार्थकः । तथा च

एषणासमिति का पालन करना चाहिए । औधिक और औपग्रहिक के भेद से दोनों प्रकार की उपधि के धरने-उठाने में, आगम के अनुसार प्रमार्जन एवं प्रतिलेखन का ध्यान रखना आदाननिक्षेपणा समिति है ।

पात्र में पड़े हुए या रक्खे हुए आहार को चक्षु आदि का उपयोग लगा कर, उसमें उत्पन्न हुए अथवा बाहर से आए जीवों की रक्षा के लिए देखना चाहिए । उपाश्रय में आकर पुनः प्रकाशयुक्त प्रदेश में स्थित होकर आहार-पानी को अली-भांति देखकर प्रकाशपूर्ण स्थान में हो उसे खाना चाहिए । यह आलोकितपानभोजन भावना है । इन पांच भावनाओं से सम्पन्न श्रमण पूर्णरूपेण प्राणातिपातविरमण व्रत का पालन करने में समर्थ होता है ।

मृषावादविरमणव्रत की दृढता के लिए इन पांच भावनाओं का सेवन करना चाहिए-‘अनुवीचिभाषण’ यहां ‘अनुवीचि’ शब्द देशीय

जेઠએ, ઔધિક અને ઔપગ્રહિકના લેહથી બંને પ્રકારની ઉપધિને ઉપાડવા તથા મૂકવામાં આગમ અનુસાર પ્રમાર્જન તથા પડિવેહણાનું ધ્યાન રાખવું આદાનનિક્ષેપણા સમિતિ છે.

પાત્રમાં પડેલા અથવા રાખેલા આહારને ચક્ષુ વગેરેનેા ઉપયોગ લગાવીને, તેમાં ઉત્પન્ન થયેલા અથવા બહારથી આવેલા જીવોની રક્ષા માટે અવલોકન કરવું જોઈએ. ઉપાશ્રયમાં આવીને ફરી એકવાર પ્રકાશવાળી જગ્યાએ બેસીને આહાર-પાણીને સારી પેઠે જોઈ તપાસીને અજવાળું હોય એવી જગ્યાએ જ તેનેા ઉપલોગ કરવો જોઈએ. આ છે આલોકિતપાન લોજન ભાવના આ પાંચ ભાવનાઓથી સંપન્ન સાધુ સંપૂર્ણતયા પ્રાણાતિપાત વિરમણવ્રતનું પાલન કરવામાં સમર્થ થાય છે.

મૃષાવાદ વિરમણવ્રતની દૃઢતા કાચે આ પાંચ ભાવનાઓનું સેવન કરવું

—સમીક્ષ્યાઽઽલોચ્ય વચનપ્રવર્તનમ્ અનુવીચિભાષણં વોધ્યમ્, અનાલોચિતવક્તા કદાચિન્મૃષા મપિ બ્રૂયાત્ તતશ્ચાઽઽત્મનોલાઘવ-વૈર-પીડાઃ સ્વલુ-એદિકાનિ-ફલાનિ સ્યુઃ, પરમાણોપધાતશ્ચાઽઽવશ્યંભાવી, અતઃ—સમીક્ષ્યોદાહરણેનાઽઽત્માનં ભાવયન્ ન મૃષાભાષણ જનિતપાપેન સમ્પૃક્તો ભવતિ ૧ ક્રોધસ્ય ક્ષપાયવિશેષસ્ય મોહકસૌંદયનિષ્પન્નપદ્ધેષપાયસ્યાઽપ્રીતિલક્ષણસ્ય પ્રત્યાખ્યાનં—નિવૃત્તિરનુવૃત્તિર્વા, તેન ક્રોધપ્રત્યાખ્યાનેન સતતમાત્માનં ભાવયેત્, તથા ભાવયન્—વાસયંશ્ચ સત્યાદિ-શ્યોન વ્યભિચરતીતિર એવં—લોભપ્રત્યાખ્યાનં તાવત્ તૃષ્ણાલક્ષણસ્ય લોભસ્ય પ્રત્યા-ખ્યાનં—પરિત્યાગઃ, તેનાઽપ્યાત્માનં ભાવયન્ ન વિતથમાપીભવતિ ૩ એવં—મયશી-

હૈ ઓર उसका अर्थ है 'विचार करना' । अशय यह हुआ कि सोच-समझ कर बोलना 'अनुवीचिभाषण' कहलाता है । विना विचारे बोलने वाला कदाचिद् मिथ्या भाषण भी करता है । इससे आत्मा की लघुता, वैर और पीडा आदि इस लोक संबंधी फलों की प्राप्ति होती है और दूसरे के प्राणों का घात होता है । अतएव जो सोच-विचार कर भाषण करता है वह कभी मिथ्या भाषण के पापसे लिप्त नहीं होता ।

મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે ઉત્પન્ન હોને વાલે દ્વેષ રૂપ એવં અપ્રીતિ લક્ષણવાલે ક્રોધ કા ત્યાગ કરના ચાહિએ । ક્રોધ પ્રત્યાખ્યાન સે આત્મા કી નિરન્તર ભાવના કરની ચાહિએ । જો એસી ભાવના કરતા હૈ વહ અસત્ય આદિ સે બચ જાતા હૈ । તૃષ્ણા રૂપ લોભ કા ભી પરિત્યાગ કરના ચાહિએ । જો લોભ પ્રત્યાખ્યાન સે આત્મા કો ભાવિત કરતા હૈ વહ મિથ્યાભાષી નહીં હોતા । હસી પ્રકાર જો ભય યા ભીરુતા કા

જોઈએ—‘અનુવીચિભાષણ’ અહીં ‘અનુવીચિ’ શબ્દ દેશીય છે અને તેનો અર્થ થાય છે ‘વિચાર કરવો તાત્પર્ય’ એ થયું કે સમગ્રી વીચારીને બોલવું ‘અનુ-વીચિભાષણ’ કહેવાય છે વગર વિચાર્યે બોલનાર કવચિત્ મિથ્યાભાષણ પણ કરતો હોય છે. આથી આત્માની લઘુતા વેર અને પીડા વગેરે આલોક સંબંધી ફળોની પ્રાપ્તિ થાય છે અને બીજાના પ્રાણોની હિંસા થાય છે. આથી જે સમગ્રી—વિચારીને બોલે છે તે ક્યારેય પણ મિથ્યાભાષણના પાપથી ખરડાતો નથી.

મોહનીયકર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થનારા દ્વેષરૂપ તેમજ અપ્રીતિ લક્ષણ વાળા ક્રોધનો ત્યાગ કરવો જોઈએ ક્રોધ પ્રત્યાખ્યાનથી આત્માની નિરન્તર ભાવના કરવી જોઈએ જે આવી ભાવના ભાવે છે તે અસત્ય આદિથી ખચી જાય છે. તૃષ્ણરૂપી લોભનો પણ પરિત્યાગ કરવો જોઈએ. જે લોભ પ્રત્યા-ખ્યાનથી આત્માને ભાવિત કરે છે તે મિથ્યાભાષી હોતો નથી આવી જ

લસ્ય મીરુત્વસ્ય પ્રત્યાખ્યાનેનાડપિ-આત્માનં આવયન્ નાડનૃતં કદાચિદ્ વદતિ મયશીલો જનઃ કદાચિત્ વિતથમપિ માપતે ચૌરોડથપિશાચો વા મયા રાત્રી દૃષ્ટિ, તસ્માદ્-નિર્ભય વાસનાધ્યાન માત્મનિ ભાવયેત્ ૪ એવં-મોહોદ્ઘવપરિહાસલક્ષણહાસ્ય પરિણતઃ આત્મપરિહાસં કુર્વન્ પરેણ સહ વિતથમપિ માપેત, તસ્માત્-તસ્ય પ્રત્યા-ખ્યાનેનાડડત્માનં ભાવયન્ સત્યવ્રતપાલનક્ષમો ભવતિ ૧૦ એવં-સહુ-અનુવીચિ-અવગ્રહયાચનં તાવત્-આલોચ્યાડવગ્રહયાચનરૂપં બોધમ્ ૧૧ અવગ્રહશ્ચ-દેવેન્દ્રરાજ-ગૃહપતિ શય્યાતરસાધર્મિકભેદેન પञ्ચવિધઃ, તત્ત-યો યત્ર સ્વામી સ એવ યાચનીયઃ, અસ્વામિયાચને દોષાધિક્યં હયાત્ । તસ્માત્-‘આલોચ્યાડવગ્રહો યાચ્ય.’ इत्येव

પ્રત્યાખ્યાન કરતા હૈ, વહ કમી અસત્ય ભાષણ નહીં કરતા હરવોક હોતા હૈ વહ મિથ્યા ભાષણ મી કરતા હૈ, જૈસે-આજ રાત્રિ મેં મુઝે ચોર અથવા પિશાચ દિઝાઈ દિયા થા इत्यादि । अतः अपने आपको निर्भय बनना चाहिए । मोहनीय कर्म के उदय से उत्पन्न एवं परिहास लक्षण वाला हास्य जो करता है वह अपनी हंसी करता हुआ दूसरे के प्रति मिथ्या भाषण भी करता है । अतएव हास्य के प्रत्याख्यान से आत्मा को भावित करने वाला सत्य व्रत का पालन करने में समर्थ होता है ।

અસ્તેયવ્રત કી પાંચ ભાવનાएं-સોચ-વિચાર કર અવગ્રહ કી યાચના કરના યાહિયે । અવગ્રહ પાંચ પ્રકાર કા હૈ-(૧) ઇન્દ્ર (૨) રાજા (૩) ગૃહપતિ (૪) શય્યાતર ઓર (૫) સાધર્મિક કા અવગ્રહ । જહાં જો સ્વામી હો વહાં ડસી સે યાચના કરના યાહિયે । જો સ્વામી નહીં હૈ

રીતે ભય અથવા કાયરતાનુ પ્રત્યાખ્યાન કરે છે તે કહી પણ અસત્ય બોલતો નથી. જે હરવોક હોય છે તે મિથ્યાભાષણ પણ કરતો હોય છે જેમ કે આજે રાતે મને ચોર અથવા પિશાચ દેખાયા હતા. વગેરે આથી દરેકે પોતાની જાતને નિર્ભય બનાવવી જોઈએ મોહનીય કર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન તથા લક્ષણવાળું હાસ્ય જે કરે છે તે પોતાની મશકરી કરતો થકો બીજાની પ્રતિમિથ્યાભાષણ પણ કરે છે. આથી હાસ્યના પ્રત્યાખ્યાનથી આત્માને પ્રભાવિત કરનાર સત્યવ્રતનું પાલન કરવા સમર્થ બને છે.

અસ્તેયવ્રતની પાંચ ભાવનાઓ—સમજી વિચારીને અવગ્રહની યાચના કરવી જોઈએ અવગ્રહ પાંચ પ્રકારના છે-(૧) ઇન્દ્ર (૨) રાજા (૩) ગૃહપતિ (૪) શય્યાતર અને (૫) સાધર્મિકનો અવગ્રહ જ્યાં જે માલિક હોય ત્યાં તેની પાસે જ યાચના કરવી જોઈએ, જે માલિક નથી તેની પાસે યાચના

માત્મનિ ભાવ્યેત્ इत्थञ्च भावयन् नाऽदत्तादाने प्रवर्तत इति । अभीक्ष्णाऽवग्रह
 याचनं तावत्-स्वामिना सकृद्वत्तेऽपि परिग्रहे मुहुर्मुहुश्च ग्रहयाचनरूपं बोध्यम् ।
 पूर्वलब्धपरिग्रहः-गलानाचयस्थानेषु मूत्र-पुरीषोत्सर्गं पात्र दत्तपादप्रक्षालनस्था
 नानि स्वामिचित्तपीडापरिहारार्थं याचनीयानि । एव-मेतावत्परिमितं सर्वतः
 क्षेत्रं सर्वग्रहीतव्यम् इत्येतदेवाऽवधारणरूपम् एतावदित्यवग्रहाऽवधारणं बोध्यम्-
 १२ एवम्-पीठफलकाद्यर्थमपि वृक्षादीनामच्छेदनं ज्ञेयम्-१३ एवं-साधारण-
 पिण्डस्यापि सेवनं नाऽधिकता, अपितु-गुरुभि रनुज्ञापितमेव पान-भोजनं ग्रहीत-
 व्यम् गुरुणा अनुज्ञया स्वीकृतं पानभोजनं सूत्रोक्तविधिका भुञ्जीत । औधिकौ

ઉસસે યાચના સે દોષોં કી અધિકતા હોતી હૈ । અતएव 'સોચ-
 -વિચાર કર અવગ્રહ કી યાચના કરની યાહિએ' ऐसी भावना करे ।
 जो ऐसी भावना करता है वह अदत्तादान से प्रवृत्ति नहीं करता ।
 एक बार स्वामी द्वारा परिग्रह प्रदान करने पर भी बार-बार अवग्रह
 की याचना 'अभीक्ष्ण-अवग्रह याचना' कहलाता है । रुग्णता आदि
 अवस्थाओं में मल-मूत्र के त्याग का पात्र तथा हाथ-पैर धोने के
 स्थान की याचना पुनः इसलिए करनी चाहिए कि जिस से स्वामी के
 चित्त को पीडा न पहुंचे । इसी प्रकार 'इतना ही क्षेत्र मुझे ग्रहण करना
 है, ऐसा अवधारण कर लेना चाहिए । और पीढा तथा पाटा आदि के
 लिए भी वृक्ष आदि का छेदन नहीं करना चाहिए । साधारण पिण्ड
 का अधिक सेवन नहीं करना चाहिए, बल्कि गुरुने जिन को सेवन
 की अनुमति दी हो उस को भोजन-पानी ही ग्रहण करना चाहिए ।
 गुरु की आज्ञा से स्वीकृत भोजन-पानी भी सूत्रोक्त विधि से खाना

કરવાથી દોષોની અધિકતા થાય છે. આથી સમજી-વિચારીને અવગ્રહની
 યાચના કરવી જોઈએ એવી ભાવના ભાવે જે આ જાતની ભાવના સેવે છે
 તે અદત્તાદાનમાં પ્રવૃત્ત થતો નથી એકવાર માલિક દ્વારા પરિગ્રહનું પ્રદાન
 થવા છતાં વારંવાર અવગ્રહની યાચના કરવી 'અભીક્ષ્ણ-અવગ્રહ યાચના
 કહેવાય છે. રોગી વગેરે અવસ્થાઓમાં મળ-મૂત્રના ત્યાગ કરવાના પાત્ર
 તથા હાથ-પગ ધોવાના સ્થાનની યાચના ફરીવાર એ માટે કરવી જરૂરી છે
 કે જેથી માલિકના મનને બ્યથા ન પહોંચે એવી જ રીતે આટલું જ ક્ષેત્ર
 મારે ગ્રહણ કરવું છે એવો અભિગ્રહ ધારણ કરી લેવો જોઈએ તેમજ પીઠ
 પાટ વગેરે માટે પણ વૃક્ષ વગેરેનું છેદન કરવું ન જોઈએ પરંતુ શુદ્ધ એટલા
 આહારપાણીની અનુમતિ આપી હોય તેટલું ભોજનપાણી જ ગ્રહણ કરવું
 જોઈએ શુદ્ધની આજ્ઞાથી સ્વીકારેલા ભોજન પાણી પણ સૂત્રોક્ત વિધિ

પગ્રહિકભેદ મુપધિરૂપં વસ્ત્રાદિકમપિ સર્વં ગુરુભિરનુજ્ઞાતં વન્દનપૂર્વકં ગુરુવચન-
વિધિના પરિમોક્તવ્યમ્ એવંરીત્યાઽઽસ્ત્મનિ ભાવયન્-વાસયંશ્ચાઽસ્તેયવ્રતં નાતિ-
ક્રામતિ ! ૧૪ એવં-સાધુવૈયાવૃત્યકરણમપિ બોદ્યમ્ ૧૫ એવં-બ્રહ્મચર્યસ્ય-મૈથુન
વિરતિલક્ષણસ્ય પૂર્વોક્તાશુ ભાવનાસુ સ્ત્રીપશુ નપુંસકસંસક્તશયનાઽઽસનવર્જનં
તાવત્-દેવ-મનુષ્ય સ્ત્રીતિર્દગ્જાતિ વડવા ગોમહિષ્ય-જાઽવિકાદિભિઃ સહ
સંસક્તાઽઽસન શયનાદિપરિત્યાગરૂપં બોધ્યમ્ તામિઃ સહ પ્રતિશ્રય-સંસ્તારકા-
ઽઽસનાદિ વહ્નવાયત્વાદ્વર્જનીય મિત્યેવં વાસયન્નાત્માનં ભાવયેદિતિ ૧૬ એવં-
સ્ત્રીપશુ નપુંસકાનામસદ્ભાવેઽપિ રાગસંયુક્ત સ્ત્રીકથાદર્જનં કર્તવ્યમ્ મોહોદ્ભવ-
કષાયરૂપ રાગાકાર પરિણતિયુક્તા રાગજનની ચ્લુ સ્ત્રીકથા દેશજાતિકુલનેપથ્ય.

ચાહિયે । હસી પ્રકાર ઔધિક ઔપગ્રહિક ઉપધિ વસ્ત્ર આદિ મી
ગુરુ કી આજ્ઞાપૂર્વક, વન્દનપૂર્વક, ગુરુ કે વચનોં કી વિધિ કે અનુસાર
હી કામ મેં લાના ચાહિયે જો ઁસી ભાવના કરતા હૈ વહ અસ્તેયવ્રત
કા ઉલ્લંઘન નહીં કરતા । હસી પ્રકાર સાધુ કો વૈયાવૃત્ય કરના મી
સમજા લેના ચાહિયે । ઁ પાંચ અદત્તાદાન વ્રત કી ભાવનાં હૈ ।

બ્રહ્મચર્યવ્રત કી ભાવનાં--બ્રહ્મચર્યવ્રત કી પૂર્વોક્ત ભાવનાઓં મેં
સે સ્ત્રીપશુ નપુંસક સંસક્ત શયનાસનવર્જન કા અર્થ હૈ-દેવાંગના,
માનવસ્ત્રી, તિર્યક્સ્ત્રી જૈસે ઘોડી, ગાય, ઁમ્, બકરી, મેડ આદિ કે
સંસર્ગવાલે શયન એવં આસન કા ત્યાગ કરના ચાહિયે, કયોંકિ ઉસ
સે અનેક પ્રકાર કી હાનિયાં હોતી હૈ, સ્ત્રી પશુ ઔર નપુંસક કા
સંસર્ગ ન હોને પર મી રાગયુક્ત સ્ત્રી સે વચના ચાહિયે । સ્ત્રીકથા
મોહજનિત કષાયરૂપ પરિણતિ સે યુક્ત હોતી હૈ ઔર રાગભાવ કો

મુંજળ જ ખાવા જોઈએ એવી જ રીતે ઔધિક તેમજ ઔપગ્રહિક ઉપધિ
વસ્ત્ર વગેરે પણ ગુરૂની આજ્ઞા પૂર્વક વંદનપૂર્વક ગુરૂના વચનોની વિધિ અનુસાર
જ કામમાં લેવા જોઈએ જે આ જાતની ભાવના ભાવે છે તે અસ્તેયવ્રતનું
ઉલ્લંઘન કદી પણ કરતો નથી આવી જ રીતે સાધુની શુશ્રૂષા માટે પણ
સમજી લેવું આ પાંચ અદત્તાદાન વ્રતની ભાવનાઓ છે.

બ્રહ્મચર્યવ્રતની ભાવનાઓ--બ્રહ્મચર્યવ્રતની પૂર્વોક્ત ભાવનાઓમાંથી સ્ત્રી-
પશુનપુંસકસંસક્ત શયનાસનવર્જનનો અર્થ છે-દેવાંગના માનવસ્ત્રી જેવા કે ઘોડી,
ગાય, ભેંસ, બકરી ઘેરી વગેરેના સંસર્ગવાળી પથારી તથા આસનનો ત્યાગ
કરવો જોઈએ કારણકે તેનાથી અનેક પ્રકારની નુકશાનીઓ થાય છે, સ્ત્રી, પશુ,
તથા નપુંસકનો સંસર્ગ ન હોવા છતાં પણ રાગયુક્ત સ્ત્રીકથાથી અચળ જોઈએ.
સ્ત્રીકથા મો જનિત કષાય રૂપ પરિણતિથી યુક્ત હોય છે તથા તે રાગભાવને

વચનાઽઽલાપગતિવિલાસવિભ્રમ-શ્રૂષંગકટાક્ષહાસ્યલીલાપ્રણયકલહ-શૃંગારરસપરિ-
પૂર્ણા સતી વ્રાત્યા-ઇવ (વળ્ટોરિયા જેસે) ચિન્નોદધિ નૂનમેવ દિક્ષોમયાંતં તસ્માત્-
રાગાનુવન્ધિ સ્ત્રીકથા વર્જનં શ્રેયઃ इति भावयेत् ૧૭ एवं સ્ત્રીણાં મનોહરેન્દ્રિયા-
ઽઽલોકનવર્જનં કર્તવ્યમ્, તામાં-કમનીય કુચકલશાઘવલોકનાદિ વિરતિઃ સ્વલુ
શ્રેયસી વર્તેતે, इत्येवं भावयेत् ૧૮ एवं પૂર્વસ્તાનુસ્મરણવર્જનં કર્તવ્યમ્, સાધ્વ-
વસ્થાયાં ગૃહસ્થદશોઽનુભૂતરત ક્રીડાઘનુસ્મરણાત્ કામાગ્નિ સન્ધુષણં (સન્દીપનમ્)
ભવતિ, તસ્માત્-તદ્વર્જનં શ્રેયઃ इति स्वान्મनि भावयेत् ૧૯ एवं-પ્રણીતરસમોજન
વર્જનં કર્તવ્યમ્, પ્રણીતસ્ય વૃણ્યસ્ય-સ્નિગ્ધ મધુરાદિ રસસ્ય દુગ્ધ-દધિ-દેયઃ-

ઉત્પન્ન કરતી હૈ, વલ દેગ, જાતિ, કુલ, વેષભૂષા, વચનાલાપ, ગતિ,
વિલાસ, વિભ્રમ, શ્રૂષંગ, કટાક્ષ, હાસ્યલીલા, પ્રણયકલહ, આદિ રૂપ
શૃંગારરસ સે પરિપૂર્ણ હતી છુઈ ચિત્ત કો ડસી પ્રકાર કુબ્ધ કર દેતી
હૈ જૈસે તૂફાન સમુદ્ર કો । હસ કારણ રાગાનુવન્ધિની સ્ત્રીકથા કા
ત્યાગ કરના શ્રેયસ્કર હૈ । હસી પ્રકાર સ્ત્રિયોં કો મનોહર અંગો કો
અવલોકન કા ખી ત્યાગ કરના ચાહિયે ઔર યેસી ભાવના કરની
ચાહિયે કિ-‘સ્ત્રિયોં કો સુન્દર કુચ-કલશ આદિ કો અવલોકન સે
વિરત હોના હી શ્રેયસ્કર હૈ । ઔર સાધુ જોને સે પહેલે ગૃહસ્થાવસ્થા
મેં કી છુઈ કામ-ક્રીડા કો સ્મરણ કા ખી ત્યાગ કરના ચાહિયે । પૂર્વ
કાલીન કામ-ક્રીડા કો સ્મરણ સે કામાગ્નિ પ્રજ્વલિત હો ડઠતી હૈ,
અતઃપ્રવ વસકા ત્યાગ કરના શ્રેયસ્કર હૈ । પૌષ્ટિક મોજન કા ખી
ત્યાગ કર દેના ચાહિયે । પુષ્ટિકર સ્નિગ્ધ ઔર મધુર દૂધ, દહીં, ઘી,

ઉત્પન્ન કરે છે તે દેશ, જાતિ કુળ, વેશભૂષા, વચનાલાપ, ગતિ, વિલાસ,
વિભ્રમ શ્રૂષંગ કટાક્ષ હાસ્ય પ્રણય કલહ વગેરે રૂપ શૃંગારરસથી પરિપૂર્ણ
થતી થતી ચિત્તને તેજ પ્રકારથી કુબ્ધ કરી દે છે જેમ કે વાવાઝોડાથી
સમુદ્રની થતી ડામાડોળ સ્થિતી. આથી રાગ વધારનારી સ્ત્રીકથાનો ત્યાગ કરવો
એ જ શ્રેયસ્કર છે એવી જ રીતે સ્ત્રીઓના ચાડ અંગોપાંગોનું અવલોકન
પણ ત્યજ દેવું જોઈએ અને એવી ભાવના ભાવવી જોઈએ કે સ્ત્રીઓના
સુન્દર રતન-યુગ્મ વગેરેના અવલોકનથી વિરત ધવામાં જ ભલું રહેલું છે
અને સાધુ થતાં પહેલા ગૃહસ્થાવસ્થામાં કરેલી રતિક્રીડાના સ્મરણનો પણ
ત્યાગ કરવો જરૂરી છે. પૂર્વકાલીન કામક્રીડાના સ્મરણથી કામાગ્નિ પ્રજ્વલિત
થઈ બળે છે માટે તેનો ત્યાગ કરવો શ્રેયસ્કર છે. પૌષ્ટિક ભોજનનો પણ
ત્યાગ કરી દેવો જોઈએ. પૌષ્ટિક સ્નિગ્ધ અને મીઠાં દૂધ દહીં ગોળ ઘી

વીનઘૃતગુડતૈલાદિ મક્ષણેન મેદો મજ્જા શુક્રાદ્યુપચયાદપિ ઘોહોદ્ભવો ભવતિ, તસ્માત્-નિરન્તરાભ્યાસેન ધર્મીતરસભોજનં વર્જનીયમિતિ બ્રહ્મચર્યરક્ષાર્થં માત્મનિ ભાવયેત્ ૨૦. એવં-વાહ્યાભ્યન્તરપરિગ્રહશૂન્યસ્ય શ્રમણસ્ય પञ्ચાનાં રૂપ ૧ રસ ૨ ગન્ધ ૩ સ્પર્શ ૪ શબ્દાનાં ૫ મનોજ્ઞાના મિન્દ્રિયાર્થાનાં પ્રાપ્તૌ માર્ગ્ય વર્જનમ્, અમનોજ્ઞાનાં ચ તેષાં પ્રાપ્તૌ દ્વેષ વર્જનં કર્તવ્ય મિત્યાત્મનિ ભાવયેત્ ૨૫ ઉક્તશ્ચ-સમવાયાજ્ઞે ૨૫ સમવાયે-‘પંચજામસ્ય ષણ્ડીસં ભાવનાઓ ષણ્ણત્તાઓ, તં જહા-ઈરિયાસ્યમિર્દ ૧, ઇળગુત્તી ૨, ચત્તોગુત્તિ ૩, આલોચ-ભાષણ-મોચનં ૪, આદાન અંડલત્તનિક્કલ્લેવણાસ્યમિર્દ ૫, અણુવીહભાસણયા ૬, કોહલિવેગે ૭, લોભલિવેગે ૮, અયલિવેગે ૯, હાસલિવેગે ૧૦, હગ્ગહ અણુણવચણા ૧૧, હગ્ગહસીમ જાણણયા, સમમેવ હગ્ગહં-અણુણિણહ-ણયા, સાહમ્મિ હગ્ગહં અણુણવિચપરિમુંજણયા, સાહારણમ્મત્તપાળં અણુણાવિચપડિસુંજણયા, હપ્પી પસુપંડગલંસત્તમ સ્થણાસણવહજ-ણયા, હત્થી કહલ્લજ્જણયા, હત્થીણં હંદિયાણપ્પાલોચણવહજણયા, પુવ્વ-રત્ત પુવ્વકીલિપાળં અણુણસરણયા, ધર્મીયાહારવહજણયા, લોહંદિય-રાગોવરહં, ચર્મિલ્લદિયરાગોવરહં, ઘાળિંદિયરાગોવરહં, જિલ્લિંમદિયરાગો-વરહં, ફાલિંદિયરાગોવરહં’ હતિ ।

ગુડ, તેલ આદિ કે આદાર સે મેદ મજ્જા શુક્ર આદિ ધાતુઓં का उपचय होता है और इस से भी मोह की उत्पत्ति होती है, अतएव निरन्तर अभ्यास रूप से पौष्टिक भोजन का त्याग करना चाहिए । ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए ऐसी भावना करनी चाहिए ।

इसी प्रकार वाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह से शून्य श्रमण को रूप, रस, गंध, स्पर्श और शब्द, इन पांचों इन्द्रियों के मनोज्ञ विषयों से राग और अमनोज्ञ रूपादि में द्वेष नहीं करना चाहिए ।

ગોળ તેલ વગેરેનાં આહારથી મેદ મજ્જા શુક્ર વગેરે ધાતુઓનો ઉપચય થાય છે અને આમ થવાથી પણ મોહની ઉત્પત્તિ થાય છે આથી નિરંતર અભ્યાસ રૂપથી સ્વાદુ ભોજનનો ત્યાગ કરવો જોઈએ બ્રહ્મચર્યની રક્ષા માટે આવા પ્રકારની ભાવના ભાવવી જરૂરી છે.

એવી જ રીતે બાહ્ય આભ્યન્તર પરિગ્રહથી શૂન્ય સાધુએ રૂપ રસ ગંધ સ્પર્શ અને શબ્દ એ પાંચ ઇન્દ્રિયના મનોજ વિષયોમાં રાગ અને અમનોજ વિષયોમાં દ્વેષ ન રાખવા જોઈએ.

પશ્ચ યમસ્ય પશ્ચર્વિણ્ણતિ મૌઘનાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તથા-ઈર્ધ્યાસમિતિઃ ૧ મનો-
ગુપ્તિઃ ૨ વચોગુપ્તિઃ ૩ આલોકિતપાનભોજનમ્ ૪ આદાનમણ્ડામત્રનિક્ષેપણા
સમિતિઃ ૫ અનુવીચિભાષણમ્ ૬ ક્રોધવિવેકઃ ૭ લોભવિવેકઃ ૮ મયવિવેકઃ ૯
હાસ્યવિવેકઃ ૧૦ અવગ્રહાનુજ્ઞાપનતા ૧૧ અવગ્રહસીમાનુજ્ઞાપનતા ૧૨ સ્વયમેવા-
વગ્રહાનુગ્રહણતા ૧૩ સાધર્મિકાવગ્રહમનુજ્ઞાય પરિભોગતા ૧૪ સાધારણભક્ત-
પાનમનુજ્ઞાપ્ય પરિમુક્તનેન ૧૫ સ્ત્રી પશુપંડક સંસર્ગતક શયનાસનવર્જનતા ૧૬
સ્ત્રીકથાવર્જનતા ૧૭ સ્ત્રીના મિન્દ્રિયાલોકવર્જનતા ૧૮ પૂર્વરતપૂર્વક્રીડિતાના-
મનુસ્મરણતા ૧૯ પ્રણીતાહારવર્જનતા-શ્રોત્રેન્દ્રિયરાગોપરતિઃ ચક્ષુરિન્દ્રિયરાગોપરતિઃ
-ગ્રાણેન્દ્રિયરાગોપરતિઃ-જિહ્વેન્દ્રિયરાગોપરતિઃ સ્પર્શેન્દ્રિયરાગોપરતિઃ ઇતિ ૫૬।

સમવાયાંગ સૂત્ર કે પચીસવેં સમવાય મેં કહ્યા હૈ-પાંચ વ્રતો કી
પચીસ ભાવનાएं કહી गई है, वे इस प्रकार हैं-(१) ईर्ध्यासमिति
(२) मनोगुप्ति (३) वचनगुप्ति (४) आलोकितपानभोजन (५) आदान-
भाण्डामत्र निक्षेपणासमिति (६) अनुवीचिभाषणता (७) क्रोधविवेक
(८) लोभविवेक (९) भयविवेक (१०) हास्यविवेक (११) अवग्रह-अनु-
ज्ञापनता (१२) अवग्रहसीमानुज्ञापनता (१३) स्वयमेव अवग्रह-अनु-
ग्रहणता (१४) साधर्मिकअवग्रहअनुज्ञायपरिभोगता (१५) साधारण-
भक्तपान को अनुमति लेकर काम में लाना (१६) स्त्रीपशुपंडक के
संसर्गवाले शयनासन का त्याग करना (१७) स्त्री कथा का त्याग
(१८) स्त्रियों को इन्द्रियों के अवलोकन का त्याग (१९) पूर्वभुक्तरति-
क्रीडा का स्मरण न करना (२०) पौष्टिक आहार का त्याग (२१) श्रोत्रे-
न्द्रिय के विषय पर राग न करना (२२) चक्षु के विषय पर राग न

સમવાયાંગસૂત્રના પચીસમાં સમવાયમાં કહેવામાં આવ્યું છે-પાંચ
વ્રતોની પચીસ ભાવનાઓ કહેવામાં આવી છે જે આ પ્રમાણે છે-(૧)
ઈર્ધ્યાસમિતિ (૨) મનોગુપ્તિ (૩) વચનગુપ્તિ (૪) આલોકિતપાનભોજન (૫)
આદાનભાણ્ડામત્ર નિક્ષેપણા સમિતિ (૬) અનુવીચિભાષણતા (૭) ક્રોધવિવેક
(૮) લોભવિવેક (૯) ભયવિવેક (૧૦) હાસ્યવિવેક (૧૧) અવગ્રહ-અનુગ્રહણતા
(૧૨) અવગ્રહસીમાનુજ્ઞાપનતા (૧૩) સ્વયમેવ અવગ્રહ-અનુગ્રહણતા
(૧૪) સાધર્મિક અવગ્રહ અનુજ્ઞાય પરિભોગતા (૧૫) સાધારણ ભક્તપાનનો
આજ્ઞા લઈને ઉપયોગ કરવો (૧૬) સ્ત્રી પશુ નપુંસકના સંસર્ગવાળા શયના-
સનનો ત્યાગ કરવો (૧૭) સ્ત્રીકથાનો ત્યાગ (૧૮) સ્ત્રીઓની ઇન્દ્રિયોના અવ-
લોકનનો ત્યાગ (૧૯) પૂર્વ ભોગવેલ રતિક્રીડાનું સ્મરણ ન કરવું (૨૦)
પૌષ્ટિક આહારનો ત્યાગ (૨૧) શ્રોત્રેન્દ્રિયના વિષયમાં રાગ ન કરવો (૨૨)

મૂલમ્—હિંસાદિસુ ઉભયલોગે ધોરદુઃખં ચતુર્ગતિભ્રમણશ્ચ ॥૫૭॥

છાયા—‘હિંસાદિવ્રમયલોકે ધોરદુઃખં-ચતુર્ગતિભ્રમણશ્ચ’ ॥૫૭॥

તત્ત્વार्થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રે પ્રાણાતિપાતાદિવિરમણલક્ષણેષુ પશ્ચસુ મહાવ્રતેષુ પ્રતિવ્રત મધિકૃત્ય પશ્ચ પશ્ચ ભાવનાઃ પ્રરૂપિતાઃ સમ્પ્રતિ-સામાન્યતઃ સર્વવ્રત-સાધારણી ભાવનાઃ પ્રતિપાદયિતુ માહ-‘હિંસાદિસુ’ इत्यादि । हिंसादिषु प्राणातिपाताऽनृत-स्तेयाऽब्रह्मचर्य-परिग्रहेषु पश्च वक्ष्यमाणास्त्रयेषु उभयलोके, इहलोके-परलोके च नरकादिजन्मनि धोरदुःखं, तद्विपाकान्नरकादिषु तीव्र यातनाऽनुभवनं तद् भावयेत् । ज्ञानपूर्वकक्रियानुष्ठानेन हिंसादिषु ऐहिक-पारलौ-

करना (२३) घ्राणेन्द्रिय के विषय पर राग न करना (२४) जिह्वा इन्द्रिय के विषय पर राग न करना और (२५) स्पर्शेन्द्रिय के विषय पर राग न करना ॥५६॥

‘હિંસાદિસુ ઉભયલોગે’ इत्यादि ।

સૂત્રार्થ—હિંસા આદિ પાપોં કા સેવન કરને પર ઇહ-પરલોક મેં ધોર દુઃખ હોતા હૈ ઓર ચારોં ગતિયોં મેં ભ્રમણ કરના પડતા હૈ ॥૫૭॥

તત્ત્વार्થદીપિકા—પૂર્વ સૂત્ર મેં પ્રાણાતિપાતવિરમણ આદિ પાંચ મહાવ્રતોં મેં સે પ્રત્યેક કી પાંચ-પાંચ ભાવનાઓં કા પ્રરૂપણ કિયા ગયા, અવ સમી વ્રતોં કૈલિય સમાન ભાવનાઓં કા પ્રતિપાદન કરતે હૈ ।

હિંસા આદિ અર્થાત્ હિંસા, અનૃત, અદત્તાદાન, અબ્રહ્મચર્ય ઓર પરિગ્રહ, इन पाँचों आसर्वा का सेवन करने से इस लोक में तथा नारक आदि परलोक में धोर दुःख भुगतना पडता है, ऐसी भावना करनी चाहिए । तात्पर्य यह है कि जान-बुझ कर हिंसा आदि का आचरण

અક્ષુના વિષયમાં રાગ ન કરવો (૨૪) જીભ સ્વાદુ ઇન્દ્રિયના વિષયમાં રાગ ન કરવો અને (૨૫) સ્પર્શેન્દ્રિયના વિષયમાં રાગ ન કરવો ॥ ૫૬ ॥

‘હિંસાદિસુ ઉભયલોગે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—હિંસા આદિ પાપોનાં સેવન કરવાથી આલોક તેમજ પરલોકમાં ધોર દુઃખ થાય છે અને ચારે ગતિઓમાં ભ્રમણ કરવું પડે છે. ॥૫૭॥

તત્ત્વार्થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ પાંચ મહા-વ્રતોમાંથી પ્રત્યેકની પાંચ-પાંચ લાવનાઓનાં પ્રરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે અર્ધાં વ્રતો માટે સમાન લાવનાઓનાં પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

હિંસા આદિ અર્થાત્ હિંસા, અનૃત, અદત્તાદાન, અબ્રહ્મચર્ય અને પરિગ્રહ આ પાંચે આસર્વોનાં સેવન કરવાથી આલોકમાં તથા નારક વગેરે પર-લોકમાં ધોર દુઃખો ભોગવવા પડે છે એવી લાવના રાખવી જોઈએ. કહેવાનો આશય એ છે કે ઇરાદાપૂર્વક હિંસા વગેરેનાં સ્મરણ કરવાથી આહિક અને

ક્રિક નરકાદિજન્માઽનર્થપરમ્પરાં ગર્હિત નારકાદિ તીવ્રદુઃખાનુભવનઞ્ચોપલમ-
માનો જીવઃ પ્રાણાતિપાતાદિષુ ન પ્રવર્તતે इति भावः । ધોરદુઃખમેવ હિંસાદિષુ
સર્વત્ર ભાવયેત્, ચતુર્ગતિભ્રમણઞ્ચ-નારક તિર્યહ્મનુપ્યદેવગતિરુપચતુર્ગતિષુ
ભ્રમણઞ્ચ ભવતિ હિંસાદિનેતિ ભાવઃ ॥૫૭॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિઃ--પૂર્વ સર્વતો-દેશનથ્ય હિંસાઽનુલ-સ્તેયાઽબ્રહ્મચર્ય-
પરિગ્રહેઽયો વિરતિલક્ષણેષુ પશ્ચ મહાવ્રતાઽણુવ્રતેષુ પ્રતિવ્રતં પશ્ચ પશ્ચ ભાવનાઃ તેપાં
દાહર્ચાર્થં પ્રરૂપિતાઃ, સમ્ગતિ-સર્વવ્રતસામાન્ય ભાવનાઃ પ્રરૂપયિતુમાહ-'હિંસા-
દિષુ લબ્યલોગે ધોરદુઃખં-ચડગમહમ્ભજનં ચ' इति । હિંસાદિષુ હિંસા-
ઽસત્ય-સ્તેય-મૈથુન-પરિગ્રહેષુ પશ્ચસુ વક્ષ્યમાણાસત્રવેષુ તિષ્ઠતામુભયલોકેઽસ્મિન્
-પરલોકે ચ નરકાદૌ ધોરદુઃખં-તીવ્રયાતના, લઙ્કાપાકમન્ય તીવ્રનારકાદિયાતના-
ઽનુભવનં 'સા શૂયાત્' इति भावनया व्रीजीञ्चो हिंसादिषु कथञ्चिदपि न प्रवर्तते, ।

કરને પર ऐहिक और पारलौकिक अनेक प्रकार के अनर्थों की परम्परा
उत्पन्न होती है, नरक आदि दुर्गतियों में तीव्र दुःख का अनुभव करना
पडना है, ऐसी भावना करने से जीव प्राणातिपात आदि में प्रवृत्ति
नहीं करता । हिंसा आदि में घोर दुःख है और उसके कारण चारों
गतियों में भ्रमण करना पडना है ॥५७॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિ—હસમે પૂર્વ સર્વવિરતિરુપ મહાવ્રતોં ઓર દેશ
વિરતિરુપ અણુવ્રતોં મેં સે પ્રત્યેક કી પાંચ-પાંચ ભાવનાઓં કા પ્રતિ-
પાદન ક્રિયા ગયા, અવ સમી વ્રતોં કે લિય સાધારણ ભાવનાઓં
કા નિરૂપણ કરતે હૈં-

હિંસા, અસત્ય, સ્તેય, અબ્રહ્મચર્ય ઓર પરિગ્રહ, હન પાંચ આસત્રવોં
મેં પ્રવૃત્તિ કરને ચાલોં કો દન્ય લોક મેં તયા નરક આદિ પરલોક મેં
તીવ્ર યાતનાનં ન ભોગવી પડે, હસ પ્રકાર કી ભાવના સે વ્રીજીવ

પારલૌકિક અનેક પ્રકારના અર્થોની પરમ્પરા ઉત્પન્ન થાય છે, નરક આદિ
દુર્ગતિઓમાં તીવ્ર દુઃખને અનુભવ કરવો પડે છે, એવી ભાવના કરવાથી
જીવ પ્રાણાતિપાત આદિમાં પ્રવૃત્તિ કરતો નથી હિંસા આદિમાં ધોર દુઃખ
જ દુઃખ છે અને તેના કારણે ચારે ગતિઓમાં ભ્રમણ કરવું પડે છે. ॥૫૭॥

તત્ત્વાર્થટીપિકા—આની પૂર્વે વિરતિરૂપ મહાવ્રતોને અને દેશવિરતિ
રૂપ અણુવ્રતોમાંથી પ્રત્યેકની પાંચ પાંચ ભાવનાઓનું પ્રતિપાદન કરવામાં
આવ્યું, હવે બધાં વ્રતો માટે સાધારણ ભાવનાનું નિરાકરણ કરીએ છીએ-

હિંસા, અસત્ય, સ્તેય, અબ્રહ્મચર્ય અને પરિગ્રહ, આ પાંચ આસત્રવોમાં
પ્રવૃત્તિ કરનારાઓને આલોકમાં તથા નરક આદિ પરલોકમાં તીવ્ર યાતનાઓ
ન ભોગવવી પડે, આ પ્રકારની ભાવનાથી વ્રતીજીવ હિંસા આદિમાં પ્રવૃત્તિ

પાર્જિતાઽશુભકર્મવિપાકોઽયં સ્વલુ 'એતસ્ય મમ વરાકસ્યે' ત્યેવં સમ્માવયતશ્ચ વિવેકવલાત્ 'પ્રાણિચધાદ્વ્યુપરમઃ શ્રેયાન્' ઇતિ તસ્ય દૃઢનિશ્ચયઃ સમુત્પચતે ઇતિ શાવઃ । એવં-હિંસાદિના નારક-તિર્યઙ્મનુષ્યદેવગતિરૂપ ચતુર્ગતિકે સંસારે-ભ્રમણમ્, નરક નિગોદાદિપુ-અનન્તાઽનન્તજન્મમરણાદિકં ઘોરાતિઘોરં દુઃખં પ્રાપ્તુવન્તિ । અથ હિંસકો જનો યથા પ્રત્યવાયેન લિપ્યતે, એવ મસત્યવાદ્યપિ-જનઃ પ્રત્યવાયભાગૂપવતિ, લોકેઽશ્રદ્ધેયવચનશ્ચ સંજાયતે । એવમૈદિકં પ્રત્ય-વાયજન્યમ્ અસત્યભાષણપ્રયુક્તં જિહ્વાચ્છેદન શ્રોત્રનાસિકાચ્છેદનાદિકં પ્રતિ-લોક મેં નરક આદિ દુર્ગતિયાં પ્રાપ્ત કરતા હૈ, લોક મેં ગહિત ઓર નિન્દિત હોતા હૈ । જો મનુષ્ય વિવેક કે થલ સે યહ સમજતા હૈ કિં પૂર્વ જન્મ મેં ઉપાર્જિત, અશુભ કર્મ કા હી યહ ફલ મુક્ત અભાગે કો પ્રાપ્ત હુઆ હૈ, અથ હિંસા સે વિરત હો જાના હી શ્રેયસ્કાર હૈ, હસ પ્રકાર કા દૃઢ નિશ્ચય ઉસકે ચિત્તમેં ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ ।

હસી પ્રકાર હિંસા આદિ પાપોં કે કારણ નરક તિર્યંચ મનુષ્ય ઓર દેવ ગતિ રૂપ સંસાર મેં પરિભ્રમણ કરનાં પડતા હૈ । હિંસક નરક-નિગોદ આદિ મેં જન્મ-મરણાદિ કે અનન્તાનન્ત ઘોર અતિ-ઘોર દુઃખ પ્રાપ્ત કરતે હૈ ।

જેસે હિંસક પુરુષ અનર્થોં કા ભાગી હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર અસત્ય વાદી જન ભી અનર્થ ભાગી હોતા હૈ । લોક મેં ઉસકે વચન કા કોઈ વિશ્વાસ નહીં કરતા । અસત્ય ભાષણ કે કારણ અસત્યભાષી કી જીમ કાટલી જાની હૈ, કાન કાટ લિયે જાતે હૈ, નાક કાટ લી જાની હૈ ।

હિંસક એવ પ.લોકમાં નરક આદિ દુર્ગતિઓ પ્રાપ્ત કરે છે, લોકમાં ગહિત અને નિન્દિત થાય છે. જે મનુષ્ય વિવેકના બળથી એવું સમજે છે કે પૂર્વજન્મમાં ઉપાર્જિત, અશુભ કર્મનું જે ફળ મને અલાગીયાને પ્રાપ્ત થયું છે હવે તો હિંસાથી વિરત થઈ જવામાં જે ભલું છે એ જાતનો દૃઢ નિશ્ચય એના ચિત્તમાં ઉત્પન્ન થઈ જાય છે.

આવી જ રીતે હિંસા આદિ પાપોના કારણે નરક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવગતિરૂપ સંસાર અટવિમાં પરિભ્રમણ કરવું પડે છે. હિંસક નરક-નિગોદ વગેરેમાં જન્મ મરણાદિના અનન્તાનન્ત ઘોર અતિઘોર દુઃખ પ્રાપ્ત કરે છે.

જેમ હિંસક પુરુષ અનર્થોના ભાગીદાર થાય છે તેવી જ રીતે અસત્ય-વાદી મનુષ્ય પણ અનર્થભાગી થાય છે લોકમાં તેના વચનનો કોઈ વિશ્વાસ કરતું નથી. અસત્ય ભાષણના કારણે અસત્યભાષીની જીભ કાપી લેવામાં

गर्हितं फलं लभते, नारकादितोत्रयातनादुःखं चाऽऽप्नुष्मिक फलं लभते। एव-
मनृतभाषणजनितदुःखयुक्तैर्भयो बद्धवैरोभयो जिह्वाच्छेदनादिपूर्वोक्त दोषा-
पेक्षयाऽपि यातनादिशेषान् अधिकान् वधबन्धादीन् दुःखहेतून् प्राप्नोति, तीव्रा-
शयो जन स्तीव्रस्थित्यनुभावेव कर्मोपादत्ते भेत्यचाऽशुभाऽनीव्रनारकादियातना
मासादयति, तस्माद्-अनृतभाषणस्यैवविषयविषमफलविपाक सात्मनि भाषयन्
'तद्व्युपरमः श्रेयान्' इति रीत्या विचार्याऽनृतभाषणाद् व्युपरतो भवति, यथा
च-प्राणातिपाताऽपत्यभाषणऽनुष्ठापितः प्रत्ययाययुक्ता भवन्ति, एवं-परद्रव्य-

इसी प्रकार के अन्य गर्हित फल भी होते हैं। उसे परलोक में नरक
आदि की तीव्र यातनाएं भोगनी पड़ती हैं। जो लोग असत्य
भाषण से उत्पन्न दुःखयुक्त वैरानुबंध से हैं; वे जिह्वाच्छेदन आदि
पूर्वोक्त दोषों की अपेक्षा भी अधिक यातना वध-बन्ध आदि दुःख के
हेतुओं को प्राप्त करते हैं। जिसका आशय-अध्यवसाय तीव्र होता है
वह दीर्घ स्थिति और तीव्र अनुभाग वाले अशुभ कर्मों का बंध करता
है और परलोक में नरक आदि की अशुभ एवं तीव्र यातना को प्राप्त
करता है। अतएव असत्य भाषण का ऐसा विषय फलविपाक होता
है, ऐसी भावना करता हुआ 'इससे विरत हो जाना ही श्रेयस्कर है,
इस प्रकार विचार करके असत्य भाषण से निवृत्त हो जाता है।

जैसे हिंसा और असत्य भाषण करने वाले दुःखों के पात्र होते

आवे છે, કાન કાપી લેવામાં આવે છે, નાક કાપી લેવામાં આવે છે આવી જ
જાતના અન્ય ગર્હિત ફળ પણ ભોગવવા પડે છે. તેને પરલોકમાં નરક આદિની
તીવ્ર યાતનાઓ ભોગવવી પડે છે. જે લોકો અસત્ય ભાષણથી ઉત્પન્ન થનારા
દુઃખયુક્ત વૈરાનુબંધવાળાઓ છે. તેઓ જિહ્વાચ્છેદન આદિ પૂર્વેકિત દોષોની
અપેક્ષા એ પણ અધિક યાતના વધ બન્ધન આદિ દુઃખના હેતુઓને પ્રાપ્ત કરે
છે જેમને આશય-અધ્યવસાય તીવ્ર હોય છે તે દીર્ઘ સ્થિતિ અને તીવ્ર અનુ-
ભાગવાળા અશુભ કર્મો બધે છે અને પરલોકમાં નરક આદિની અશુભ અને તીવ્ર
યાતનાઓને પ્રાપ્ત કરે છે આથી અસત્ય-ભાષણનું આવું વિષમ ફળ વિપાક
મળે છે, એવી ભાવના કરતો થકો, આનાથી વિરત થઈ જવું એમાં જ શ્રેય
છે. આ પ્રમાણે ચિન્તવન કરીને અસત્ય ભાષણથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે

જેવી રીતે હિંસા અને અસત્ય ભાષણ કરવાળાં દુઃખોને પ્રાપ્ત થાય

હરણપસક્તમતિરપિ સ્તેનઃ સર્વભૂમૌદ્વેજકો યવતિ-અપહ્રિયમાણદ્રવ્યાદિધનસ્વામિન
 ઉદ્વેગં સમુત્પાદયતિ, (તેન) હલ્લોકેઽન્વદ્રવ્યાપહરણજન્ય તાડન-પીડનકશાયમિ-
 ઘાતનિગડગૂઢ્ઘલાદિબન્ધનં કર-ચરણ-શ્રોત્ર નાસિકૌઠ્ઠચ્છેદનભેદનં સર્વસ્વ-
 હરણાદિકં લપ્સતે, પ્રેત્યચ નારકાદિતીવ્રયાતનામર્તિ પ્રાપ્નોતિ તસ્માત્-‘સ્તેયાદ-
 વ્યુપરમ્ઃ ઐયાન્’ इति भावयन् चौर्याद् व्युपरतो भवति, यथा खलु-माणाति-
 पाताऽसत्यभाषणस्तेयाऽनुष्ठायिनः पचुरान् प्रत्यत्रायान् प्राप्नोति । एव-मव्रत-
 सेविनोऽपि, कामिनीविलासविशेषविभ्रमोद्भ्रान्तरवान्ताः विप्रकीर्णेन्द्रियवृत्तयः
 तुच्छविषये प्रवर्तितेन्द्रियाः मनोज्ञेषु शब्द रूप-रस गन्धस्पर्शेषु रागाक्षेपेषु अनु-

ઈં उसी प्रकार પરદ્રવ્યના અપહરણ કરને વાળા ચોર ભી દુઃખોં ના
 ભાગી હોતા હૈ ઓર સ્વયં નો ઉદ્વેગ પહુંચાતા હૈ-જિલ્લાના ધન હરણ
 કરતા હૈ ઉસે દુઃખ પહુંચાતા હૈ । ઇસકે ફલસ્વરૂપ ઉસે તાડન-પીડન,
 ઘાવુ નોં ની માર, હથકડી-વેડી આદિ ના બન્ધન, હાથ-પૈર-કાન-
 નાક ઓર હોઠોં ના છેદન-ભેદન તથા સર્વસ્વ હરણ આદિ મોગના
 પડતા હૈ । બહુ પરલોક મેં નરક આદિ ની તીવ્ર વેદનાં પ્રાપ્ત કરતા હૈ ।
 અતઃપ્રેત્ય ‘સ્તેય સે વિરત હો જાના ઐશ્વર્યકર હૈ, ઈસી ભાવના કરતા
 હુઆ ચોરી સે વિરત હો જાતા હૈ ।

જેસે પ્રાણાતિપાત, અસત્ય ભાષણ ઓર ચોરી કરને વાલે અનેક
 અનર્થોં નો પ્રાપ્ત હોતે હૈં ઉસી પ્રકાર અવ્રતવર્ય ના સેવન કરને વાળા
 ભી । સ્ત્રિયોં ને હાવ-ભાવ વિભ્રમ-વિલાસ આદિ સે જિનના ચિત્ત
 ડાંવાડોલ રહતા હૈ, જિનની ઇન્દ્રિયાં ચંચલ હોતી હૈં ઓર તુચ્છ વિષયોં

છે તેવી જ રીતે પરદ્રવ્યનુ અપહરણ કરનારો ચોર પણ દુઃખનો ભાગી થાય
 છે અને બધાને ઉદ્વેગ પહોંચાડે છે-જેનું ધન હરણ કરે છે તેને દુઃખ
 પહોંચાડે છે-આના કળસ્વરૂપે તેને તાડન-પીડન, ચાબુકોનો માર હાથકડી-
 જંજીર વગેરેનું બન્ધન-હાથ-પગ-કાન-નાક અને હોઠોનું છેદન-ભેદન તથા
 સર્વસ્વ હરણ વગેરે ભોગવવા પડે છે. તે પરલોકમાં નરક આદિની તીવ્ર
 વેદનાઓ પ્રાપ્ત કરે છે. આથી સ્તેયથી વિરત થઈ જવું ઐશ્વર્યકર છે, એવી
 ભાવના કરતો થોડો ચોરીથી વિરત થઈ જાય છે.

જેવી રીતે પ્રાણાતિપાત, અસત્યભાષણ અને ચોરી કરનારા અનેક
 અનર્થોને પ્રાપ્ત થાય છે તેવી જ રીતે અવ્રતચર્યનું સેવન કરનાર પણ
 સ્ત્રીઓના હાવ-ભાવ, વિભ્રમ વિલાસ આદિથી જેમનું ચિત્ત ડામાડોળ રહે
 છે, જેમની ઇન્દ્રિયાં ચંચલ હોય છે તેમજ હલકા પ્રકારના વિષયોમાં રચેલી

રક્તાઃ સન્તો મદોન્મત્તગજેન્દ્રા इव निरङ्कुशा इष्टानिष्ट प्रवृत्तिनिवृत्तिविचाररहिताः
कुत्रापि न शर्मलमन्ते, मोहाभिभूताश्च कर्तव्याऽकर्तव्यविवेकरहितत्वात् सर्वमपि कर्म
शोभनमेव मन्यमानाः कर्तुं प्रवर्तन्ते ग्रहाविष्टपुरुषदत् परस्त्रीगमनप्रयुक्तांश्चेहलोके
वैરાनुबन्धलिङ्गच्छेદन वध बन्धन सर्वस्वापहरणादीन् अपायान् प्रतिलभन्ते, प्रेत्यच
नारकादिगतिं प्राप्नुवन्ति, तस्मात्-‘मैथुनतो व्युपरसः श्रेयान्’ इति भावयन्
ततो व्युपरतो भवति। एवं परिग्रहवानपि जन स्तस्करादीना साक्रमणीयो
भवति,—यथा कश्चित् पक्षी मांसपेशीकरः श्येनादिपक्षिभिः आममांस

में व्याप्त रहती हैं, जो मनोज्ञ शब्द, रूप, रस गंध और स्पर्श में अनु-
रक्त होते हैं, जो मतवाले हाथी के समान निरंकुश होते हैं और इष्ट
तथा अनिष्ट विषयों में प्रवृत्ति-निवृत्ति के विचार से रहित होते हैं,
वे कहीं भी सुख-शान्ति प्राप्त नहीं करते। मोह से अभिभूत होने के
कारण कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य के विवेक से रहित हो जाते हैं और प्रत्येक
कार्य को अच्छा ही समझ कर करने को तैयार रहते हैं मानों उन्हें
भूत लग गया हो। परस्त्रीगमन के कारण इस लोक में दूसरों के साथ
उनका वैर बंध जाता है। वे लिंग-छेदन, वध, बन्धन और सर्वस्वाप-
हरण आदि अपायों को प्राप्त करते हैं। परलोक में उन्हें नरक आदि
गतियां प्राप्त होती हैं। इस कारण ‘मैथुन से विरत होजाना श्रेयस्कर
है, ऐसी भावना करता हुआ पुरुष उससे निवृत्त हो जाता है।

इसी प्रकार परिग्रहवान् पुरुष पर तस्कर आदि आक्रमण करते हैं।
जैसे मांस का टुकड़ा चोंच में दबाने वाले पक्षी पर श्येन आदि दूसरे

પથેલી રહે છે, જે મનોજ્ઞ શબ્દ, રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શમાં લીન રહે
છે, જે મદમસ્ત હાથીની માફક નિરંકુશ હોય છે અને ઇષ્ટ તથા અનિષ્ટ
વિષયોમાં પ્રવૃત્તિ-નિવૃત્તિના વિચારથી રહિત હોય છે, તેઓ કોઈ પણ સ્થળે
સુખ-શાન્તિ પ્રાપ્ત કરતા નથી. મોહથી અભિભૂત હોવાના કારણે કર્ત્તવ્ય-અકર્ત્ત-
વ્યના વિવેકથી રહિત થઈ જાય છે અને દરેક કાર્યને સારું જ સમજીને તે
કરવા તત્પર રહે છે જાણે તેઓને ભૂત ન વળગ્યું હોય! પરસ્ત્રીગમનના કારણે
આ લોકમાં બીજાઓની સાથે તેમનું વેર બંધાયું જાય છે તેઓ લિંગચ્છેદન,
વધ, બન્ધન અને સર્વસ્વાપહરણ આદિ મુશ્કેલીઓને વહોરે છે. પરલોકમાં
તેમને નરક આદિ ગતિઓ પ્રાપ્ત થાય છે. આ કારણથી મૈથુનથી વિરત થઈ
જવું શ્રેયસ્કર છે, એવી ભાવના કરતો થકો પુરુષ તેનાથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે.

આ પ્રમાણે પરિગ્રહવાન પુરુષ ઉપર ચોર વગેરે આક્રમણ કરે છે
જેવી રીતે માંસનો ટુકડો ચાંચમાં દબાવનાર પક્ષી પર બાજ આદિ બીજા

મક્ષિમિરમિમવનીયો મવતિ । તથૈવ-પરિગ્રહીજનોઽપિ તસ્કરાદિમિરમિમૂયતે-
તદુપાર્જનરક્ષણક્ષયમયુક્તાંશ્ચ દુઃસ્વપરિશ્રમશોકાદિદોષાન્ પ્રતિલભતે, પરિગ્રહશીલ-
સ્ય શુભકેન્ધનૈર્ગ્નેરિવ દ્રવ્યાદિમિરતૃપ્તિર્ન મવતિ, લોભામિમવાચ્ચ કર્તવ્યાઽકર્ત-
વ્યવિવેકરાહિત્યાન્મહદનિષ્ટં પ્રાપ્નોતિ, પ્રેત્ય ચ નારન્નાદિ તીવ્રગતિં પ્રાપ્નોતિ,
'લુબ્ધોઽયં જનઃ' ઇતિ ચ સર્ગર્વિતો મવતિ, તસ્માત્-'પરિગ્રહતો વ્યુપરતિઃ
શ્રેયસી' ઇત્યાત્મનિ ભાવયન્ પરિગ્રહાદ્ વ્યુપરતો મવતિ । લોમરૂપયા તૃષ્ણા-
પિજ્ઞાચિક્રયા વશીકૃતચિત્તો ન કાનપિ પ્રત્યવાધાન્ પશ્યતિ, લોભપ્રહ્મસ્તો જનઃ

ક.ચ્ચા માંસ ભક્ષણ કરને વાલે પક્ષી હમલા કરતે હૈં, उसी प्रकार
परिग्रहवान् पुरुष को तस्कर आदि सताते हैं । परिग्रही को धन आदि
के उपार्जन से कष्ट उठाना पड़ता है, उपार्जित करने के पश्चात् उनकी
रक्षा करने की चिन्ता करनी पड़ती है और रक्षा करते-करते भी जब
वह नष्ट हो जाता है तो शोकसन्ताप का अनुभाव करना पड़ता है ।
जैसे सूखे ईंधन से अग्नि की तृप्ति नहीं होती उसी प्रकार तृष्णावान्
पुरुष धन से कभी सन्तुष्ट नहीं होता । वह लोभ से घिरा रहने के
कारण कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य के विवेक से रहित हो जाना है और परि-
णामस्वरूप महान् अनिष्ट प्राप्त करता है । परलोक में उसे नरक आदि
की तीव्र यातनाएं भोगनी पड़ती हैं । लोग उसे 'लोभी-कंजूस-मक्खी-
चूस' आदि कह कर तिरस्कृत करते हैं । अतएव' परिग्रह से विरत
हो जाना ही श्रेयस्कर है, ऐसी भावना करने वाला परिग्रह से विरत
हो जाता है । जिसका चित्त लोभ रूप तृष्णापिशाची के वशीभूत हो

કાચા માંસનું ભક્ષણ કરનાર પક્ષી હુમલો કરે છે તેવી જ રીતે પરિગ્રહવાન
પુરુષને ચોર વગેરે પજવે છે. પરિગ્રહીને ધન આદિના ઉપાર્જનમાં કષ્ટ
સહેવા પડે છે, ઉપાર્જિત કર્યા બદ તેનું રક્ષણ કરવાની ચિન્તા સવાર થાય
છે અને રક્ષણ કરવા છતાં પણ જ્યારે તે નાશ પામે છે ત્યારે શોક-સન્તા-
પનો અનુભવ કરવો પડે છે. જેમ સુકા ઇંધણથી અગ્નિની તૃપ્તિ થતી નથી
તેમ તૃષ્ણાવાન પુરુષ ધનથી કદી પણ ધરાતો નથી. તે લોભથી ઘેરાયેલો
રહેવાના કારણે કર્તવ્ય-અકર્તવ્યના વિવેકથી રહિત થઈ જાય છે અને પરિ-
ણામ સ્વરૂપ રહ્યાન અનિષ્ટ પ્રાપ્ત કરે છે. પરલોકમાં તેને નરક આદિની
તીવ્ર યાતનાઓ, સહન કરવી પડે છે. લોકો તેને 'લોભી-કંજુસ-મક્ખીચૂસ'
વગેરે ઉપનામ લગાડીને તેને હઠધૂત, કરે છે. આથી 'પરિગ્રહથી વિરત થઈ
જવું' જ શ્રેયસ્કર છે. એવી ભાવના ભાવનાર પરિગ્રહથી વિરત થઈ જાય છે.
જેનું ચિત્ત લોભરૂપી તૃષ્ણા પિશાચીનીને વશીભૂત થઈ જાય છે તે

પિતરમપિ ધનાર્થં વ્યાપાદયતિ માતરમપિ હિનરિત ચ સુતમપિ હન્તુમુચ્યનો ભવતિ,
 भ्रात्रादीनपि द्रव्यार्थं जिघांसति, किं बहुना स्व प्राणप्रियां प्रेयसी मपि तदर्थं
 हन्ति, एव मन्यान्पि बह्वनर्थान् करोति इति लोभाभिभूतो जनः किमपि कार्यम-
 कार्यं न परिगणयति, तस्मात् परिग्रहेऽनर्थान् बहून् भावयन् ततो निवृत्ति
 समासादयति, हिंसादिषु पञ्चसु दुःखमेव च भावयेत् । एवञ्च-हिंसादि पञ्चકં
 यथा મમ દુઃખજનકત્વાદ્ અપ્રિયં મમતિ એવં-સર્વેષામપિ પ્રાણિનાં હિંસાદિકં વધ
 બન્ધનચ્છેદનાદિ હેતુકમપ્રિયં મવતિ इत्यात्मानुभवेन सर्वेषां दुःखं हिंसादौ भाव-

જાતા હૈ, વહ કિન્हीं भी अनर्थों को नहीं देख पाता । लोभ के चंगुल
 में फंसा मनुष्य धन के लिए पिता की भी हत्या कर डालता है, माता
 की भी जान ले लेता है, पुत्र का घात करने को भी उद्यत हो जाता है,
 द्रव्य के लिए आई आई का भी खून कर डालना चाहता है, अधिक
 क्या कहा जाय, अपनी प्राणप्रिया पत्नी की भी हत्या कर डालता है !
 ऐसे अन्यान्य बहुत-से अनर्थ करता है । इस प्रकार लोभ से अभि-
 भूत प्राणी कार्य-अकार्य का कुछ भी विवेक नहीं करता । जो परिग्रह
 के बहुत-से दुष्परिणामों का विचार करता है । वह उससे
 निवृत्त हो जाता है ।

સાધક કો યાહિયે કિ વહ હિંસા આદિ સે દુઃખ કી ભાવના કરે ।
 जैसे हिंसा आदि पांचों सुझे दुःख जनक होने के कारण अप्रिय हैं,
 उसी प्रकार वध, बन्धन, छेदन आदि के कारण हिंसा आदि सभी को
 अप्रिय हैं, इस प्रकार के आत्मानुभव से हिंसा आदि में सभी के

કોઈ જ અનર્થને જોઈ શકતો નથી. લોભની પકડમાં આવેલ મનુષ્ય ધન
 માટે સગા બાપની પણ હત્યા કરી બેસે છે, માતાનો જીવ પણ લઇ લે છે,
 પુત્રનો ઘાત કરવા માટે પણ તત્પર થઈ જાય છે, દ્રવ્ય કળે લાઈનું ખૂન કરી
 નાખવા ઇચ્છે છે, વધારે શું રહી શકાય, પોતાની પ્રાણવદલભાની પણ હત્યા
 કરી નાખે છે. આ જાતના અન્યાન્ય ઘણા બધા અનર્થ કરે છે. આ રીતે લોભથી
 અભિભૂત પ્રાણી કાર્ય-અકાર્યનો કંઈ પણ વિવેક કરતો નથી. જે પરિગ્રહના
 ઘણા બધાં દુષ્પરિણામોનો વિચાર કરે છે તે તેનાથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે.

સાધકે હિંસા આદિમાં દુઃખની જ ભાવના કરતી જોઈ એ. જેવી રીતે
 હિંસા આદિ પાંચે મને દુઃખજનક હોવાના કારણે અપ્રિય છે. તેવી જ રીતે
 વધ, બન્ધન, છેદન આદિના કારણે હિંસા વગેરે બધાંને અપ્રિય છે. આ
 જાતના આત્માનુભવથી હિંસા આદિમાં બધાના દુઃખની ભાવના કરતો થકો

યન્ પ્રાણાતિપાતાદ્ વિરતિ શ્રેયસીતિ ભાવનયા તસ્માદ્ વિરતો ભવતિ । એવં
યથા સ્મૃત્યભાષણાદિં બહુ મહદ્દુઃખમુપજાયતે, એવં સર્વેષામપિ પ્રાણિના
મસત્ય ભાષણાભ્યાસ્યાનૈનાઽભ્યાસ્યાનહેતુકં મહદ્દુઃખમસ્મિલ્લોકે ભવતિ । પર-
લોકેતુ-અસત્યભાષણપરો યત્ર જન્મ માસાદયતિ તત્ર તત્ર ચ સર્વત્ર તથાવિધૈરેવાઽ-
સત્યભાષણાભ્યાસ્યાનૈરભિયુજ્યમાનઃ સદા મહદ્દુઃખમનુભવતીતિ ભાવયન્ અનૃત-
ભાષણાદ્ વિરતો ભવતિ । એવં-યથા તસ્કરાદિભિર્મમેષ્ટદ્રવ્યાપહરણેન દુઃખં
ભવતિ-મૃતપૂર્વશ્ચ તથા સર્વ પ્રાણિનામપિ દ્રવ્યાપહારે દુઃખં ભવતિ ભવિષ્યતિ ચેત્યા-
ત્માનુભવેન ભાવયન્ અદત્તાદાનતો વિરતો ભવતિ । એવં-મૈથુનસ્યાપિ રાગદ્વેષમૂઢ-

દુઃખની ભાવના કરતા હુઆ પુરુષ કો 'પ્રાણાતિપાત' સે વિરત હો જાના
હી શ્રેયસ્કર હિં, હસ ભાવના સે હિંસા આદિ સે નિવૃત્ત હો જાતા હૈ ।

જૈસે અસત્યભાષણ સે મુઝે મહાન્ દુઃખ હોતા હૈ, ડસી પ્રકાર
પ્રાણિયોં કો અસત્યભાષણ એવં મિથ્યાદોષારોષણ સે હસ લોક મેં
ઘોર દુઃખની પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । અસત્યભાષી જહાં કહીં જન્મ લેતા હૈ
વહીં ડસે અસત્યભાષણ-દ્વારા મિથ્યા આરોપોં કા શિકાર હોના પડતા
હૈ ઓર સદૈવ ઘોર દુઃખોં કા પાત્ર બનના પડતા હૈ । એસી ભાવના
કરને વાલા પુરુષ અસત્ય ભાષણ સે વિરત હો જાતા હૈ ।

હસી પ્રકાર જૈસે તસ્કર આદિ કે દ્વારા મેરે હષ્ટ દ્રવ્ય કા અપહરણ
કરને સે મુઝે દુઃખ હોતા હૈ યા પહેલે હુઆ થા, ડસી પ્રકાર અન્ય પ્રાણિયોં
કો સી ડનકે દ્રવ્ય કે અપહરણ સે દુઃખ હોના હૈ ઓર હોગા, હસ પ્રકાર
આત્માનુભવ સે ભાવના કરતા હુઆ અદત્તાદાન સે વિરત હો જાતા હૈ ।

પુરુષ-‘પ્રાણાતિપાતથી વિરત થઈ જવું જ શ્રેયસ્કર છે’ એવી ભાવના ભાવતો
હિંસા આદિથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે.

જેમ અસત્ય ભાષણથી મને મહાન્ દુઃખ થાય છે, તેવી જ રીતે બધાં
પ્રાણિઓ ને અસત્ય ભાષણ અને મિથ્યાદોષારોષણથી આ લોકમાં ઘોર દુઃખની
પ્રાપ્તિ થાય છે અસત્યભાષી જ્યાં પણ જન્મ લે છે ત્યાં જ તેને અસત્ય ભાષણ
દ્વારા મિથ્યા આરોપોનો શિકાર થવું પડે છે અને સદૈવ ઘોર દુઃખોના પાત્ર
બનવું પડે છે. આવી ભાવના રાખનાર પુરુષ અસત્યભાષણથી વિરત થઈ જાય છે.

આવી જ રીતે તસ્કર વગેરે દ્વારા પ્રિય ધનનું અપહરણ થતાથી મને
દુઃખ થાય છે અથવા તો અગાઉ થવું હતું તેવી જ રીતે અન્ય પ્રાણિઓને
પણ તેમના દ્રવ્યના અપહરણથી દુઃખ થાય છે અને આ રીતે આત્માનુભવથી
ભાવના કરતો થકો અદત્તાદાનથી વિરત થઈ જાય છે.

કત્વાદ્ હિંસાદિવદેવ દુઃખજનકત્વેન લોકસમાજગર્હિતત્વેન ચ દુઃખજનકત્વં
ભાવયન્ તસ્માદ્ વિરતો ભવતિ । અથ સ્ત્રીણામુપભોગે યત્તોઽધરપાનાદિ સંસ્પર્શજનિત
સુખવિશેષાઽનુભવેવ લૌકિકશાસ્ત્રકારિભિઃ સડિન્ડિમણ્નદ્વુષ્યતે, સંશબ્ધયતે,
તદનુયાયિભિશ્ચ રાગાનુસારિભિઃ વાંધૈરિવ (ગીયતે) તત્ કિમિતિ તસ્ય દુઃખાત્મક-
ત્વમિતિવેત્ ? અત્રોચ્યતે-યથા સ્વચ્છ ક્ષયકુઠાદયો વ્યાધિવિશેષાઃ મૈષઙ્યો-
પયોગેન, પથ્યાઽસેવનેન ચાંડાતઃ સમુચ્છિધમાના અપિ પુનઃ પુનઃ ઉદ્ભવન્તિ,
એવં-કામદેવવ્યાધયોઽપિ ન સ્વચ્છ મૈથુનસેવનેન સર્વથા શાન્તાઃ અભવન્ ન વા
ભવન્તિ ભવિષ્યન્તિ ચ । તથા ચોક્તમ્-

મૈથુન મ્હી રાગ-દ્વેષ મૂલક હૈ, હિંસા આદિ કે સમાન દુઃખ જનક
હૈ, લોક ઓર સમાજ મ્હે ગર્હિત હૈ, ફલ કારણ દુઃખ જનક હૈ, એસી
ભાવના કરને વાલા ઉસસે નિવૃત્તિ હો જાતા હૈ ।

શંકા—સ્ત્રીયો'ં કે ઉપયોગ મ્હે, ઉનકે અધરપાન આદિ સંસ્પર્શ સે
ઉત્પન્ન હોને વાલા વિશેષ પ્રકાર કા સુખાનુભવ હી લૌકિક શાસ્ત્રકાર
ડિંડિમનાદ કે સાથ ઉચ્ચ સ્વર સે ઘોષિત કરતે હૈં ઓર ઉનકે અનુ-
યાયી રાગાનુસારી વાદ્યો'ં કે જૈસે ઉસકા હી ગાન કરતે હૈં । એસી
સ્થિતિ મ્હે ઉસે દુઃખરૂપ કેસે કહ સકતે હૈં ?

સમાધાન—જૈસે ક્ષય એવં કોઠ આદિ વ્યાધિ ાં ઔષધ કે પ્રયોગ
સે ઓર પથ્ય કે સેવન સે આંશિકરૂપ સે મિટ જાતી હૈં કિન્તુ વારંવાર
પ્રકટ હો ઉઠતી હૈં, ફસી પ્રકાર કામ-વ્યાધિ મ્હી મૈથુન-સેવન સે ન
કમ્હી પૂરી તરહ શાન્ત હુઈ હૈ, ન હોતી હૈ ઓર ન હોમી દી । કહા મ્હી હૈ—

મૈથુન યણ રાગ-દ્વેષમૂલક છે, હિંસા અ દિની જેમ દુઃખજનક છે,
લોક અને સમાજમાં તિરસ્કૃત છે. આ કારણે દુઃખજનક છે એવી ભાવના
કરનાર તેનાથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે.

શંકા—સ્ત્રીઓના ઉપભોગમાં, તેમના અધરપાન આદિ સંસ્પર્શથી
ઉત્પન્ન થતો વિશેષ પ્રકારનો સુખાનુભવ જ લૌકિક શાસ્ત્રકાર ડિંડિમનાદની
સાથે ઉચ્ચસ્વરથી ઘેષણા કરે છે અને તેમના શિષ્યો રાગાનુસારી વાદ્યોની જેમ
તેમનું જ ગાન કરે છે. આવી સ્થિતિમાં તેને દુઃખરૂપ કેવી રીતે કહી શકાય ?

સમાધાન—જેવી રીતે ક્ષય અને કોઠ આદિ વ્યાધિઓ ઔષધના
પ્રયોગથી અને પરહેજના સેવનથી આંશિક રૂપથી મટી જાય છે તેમ જ વારં-
વાર ઉથલા મારે છે, એવી જ રીતે કામ-વ્યાધિ યણ મૈથુન સેવનથી ક્યારેય
પશુ પૂર્ણતયા શાન્ત થયો નથી, અને ક્યારેય પણ થશે નહીં કહ્યું યણ છે-

ન જાતું કામઃ કામાનામુપરોગેન શામ્યતિ ।

દ્વિષા કૃષ્ણવર્ત્મેવ भूयो भूयो विवर्धते ॥૧૧॥

इति, तस्मात्-कर्मणां क्षयोपशमादयः क्षेत्रकालद्रव्यभावापेक्षिणो नाऽन्यन्तिकं सुखमुत्पन्नयितुं समर्था भवन्ति, केवलं तेषां किञ्चिन्कालार्थं दुःखप्रतिबन्धमात्रं कारितत्वात्, तस्मात्-मूढा इवमवस्थाविशेषं वस्तुतो दुःखमपि सुखमभिमन्यन्ते । यथा-कण्डूयनं (पात्रस्वर्जनम्) कूर्वा जने दुःखमेव तदानीं सुखमभिमन्यते-मोहात्, तथा-मैथुनमुपसेवमानोऽपि मोक्षप्रतिबन्धकीभूताऽनन्ताऽनन्तसंसार-भ्रमणादि दुःखमेव (आपातरामणीयकम्) स्पर्शसुखमभिमन्यते, तस्मात्-मैथुने-ऽपि दुःखभावनाभाविहचेतसो मैथुनाद्विरति भवति । एवम्-धनादिषु ममत्वरूप

‘કર્મો કે ઉપભોગ છે કામ કદાપિ શાન્ત નહીં હોના । યહી નહીં, વરન્ જૈસે ઘૃત ઢાલને છે અગ્નિ અધિક પ્રજ્વલિત હોતી હૈ, ઉસી પ્રકાર કામ છેવન છે કામ કી અધિલાખા અધિકાધિક વઢતી હી જાતી હૈ ।

‘કર્મ કે ક્ષયોપશમ આદિ ક્ષેત્ર, કાલ, દ્રવ્ય ઓર ભાવ કી અપેક્ષા રાખતે હે, ઉનસે આત્યન્તિક સુખ કી ઉત્પત્તિ નહીં હો સકતી । વાસ્તવ મેં ઉનસે થોડે સમય કે લિએ દુઃખ કી રુકાવટ માત્ર હી હોતી હૈ । અતએવ મૂઢ જન ઉસ દુઃખ પ્રતિબન્ધ અવસ્થા કો સુખ માન લેતે હે । જૈસે રાજ રુગ્ગલાને વાલા પુરુષ ઉસ સમય દુઃખ કો હી સુખ સમજતા હૈ, ઉસી પ્રકાર મૈથુન કા સેવન કરને વાલા પુરુષ મોક્ષ કે વિરોધી એવં અનન્તાનન્ત સંસાર ભ્રમણ કે દુઃખ કો જો આપાતર-મણીય હૈ-કેવલ ઝારી દૃષ્ટિ સે હી રમ્ય પ્રતીત હોતા હૈ, સ્પર્શસુખ

કામોના ઉપભોગથી કામ કદાપિ શાન્ત થતો નથી એટલું જ નહીં, પરન્તુ જેમ ઘી હોમવાથી અગ્નિ અધિક પ્રજ્વલિત થાય છે તેવી જ રીતે કામસેવનથી, કામની અધિલાખા અધિક ધિક વધતી જાય છે.

કર્મના ક્ષયોપશમ આદિ ક્ષેત્ર, કાળ, દ્રવ્ય અને ભાવની અપેક્ષા રાખે છે, તેનાથી આત્યન્તિક સુખ ની ઉત્પત્તિ થઈ શકતી નથી. વાસ્તવમાં તેમનાથી થોડા સમય માટે દુઃખનું રોકાણ માત્ર થાય છે આથી મૂઢ લોકો તે દુઃખ પ્રતિબન્ધ અવસ્થાને જ સુખ માની જોસે છે જેમ ખરજવાને ખંજોળનાર પુરુષ તે સમયે દુઃખને જ સુખ સમજે છે તેવી જ રીતે મૈથુનનું સેવન કરનાર પુરુષ મોક્ષના વિરોધી અને અનન્તાનન્ત સંસારભ્રમણના દુઃખને, જે આપાતરમણીય છે, માત્ર ઉપલબ્ધિયા દૃષ્ટિથી જ રમ્ય ભાસે છે, સ્પર્શસુખ

પરિગ્રહવાન્ જનોઽપાપ્તપ્રાપ્ત-નષ્ટેષુ ધનાદિવસ્તુષુ ક્રમશઃઽભિલાષા-રક્ષણ-
શોકોદ્ભવં દુઃખમેવ સર્વથા પ્રાપ્નોતિ, તસ્માદ્ અપાપ્તેષુ વસ્ત્રાદિવસ્તુષુ પ્રાપ્ત્યભિ-
લાષાં કુર્વન્ તદનાસાદયન્ દુઃખમેવાઽનુભવતિ, પ્રાપ્તેષુ ચ તેષુ રાજ-તસ્કરાઽનલ-
દાયાદમૂષિકાદિભ્યો રક્ષણે સતત મુદ્ધિગ્નઃ સન્ દુઃખમેવાસાદયન્, વિનષ્ટેષુ ચ
તેષુ પરિગ્રહેષુ તદ્વિયોગજનિતોઽસહ્ય સ્મૃત્યનુષંગલક્ષણઃ શોકાનલઃ સન્તાપયતિ-
નિતરામ્, તસ્માત્-તેષુ પરિગ્રહેષુ દુઃખમેવ ભાવયતો જનસ્ય પરિગ્રહ ઇ વિરમો
સમશ્નતા હૈ ।

હસી પ્રકાર ધનાદિ મેં સમત્વ રાખને વાલા પરિગ્રહી જન ધન આદિ
કી અપ્રાપ્તિ મેં ડસકી અભિલાષા જનિત દુઃખ કા અનુભવ કરતા હૈ,
ડસકે પ્રાપ્ત હોને પર ડસકી રક્ષા કા દુઃખ ડઠાના હૈ ઓર રક્ષા
કરતે-કરતે ભી જબ ડસકા વિનાશ હો જાના હૈ તો વિયોગ જન્ય
શોક કા અનુભવ કરતા હૈ । જબ ધનાદિ પ્રાપ્ત નહીં હોતે ઓર ડનકો
પ્રાપ્ત કરને કી અભિલાષા હોતી હૈ તો દુઃખ કા અનુભવ હોતા હૈ ।
જબ ડનકી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ તબ રાજા, ચોર, અગ્નિ, મૂષિક ઓર
ભાગીદારો આદિ સે રક્ષા કરને મેં ડદ્ધિગ્ન હોઁર દુઃખ કા હી અનુભવ
કરતા હૈ । ઓર જબ વહ ધન આદિ નષ્ટ હો જાતા હૈ તો ડસકે
વિયોગ કી અસહ્ય શોકાગ્નિ ડસે સન્તપ કરતી હૈ । અતઁવ પરિગ્રહ
મેં દુઃખ હી હૈ, ઁસી ભાવના કરને વાલા પુરુષ પરિગ્રહ સે
ડપરત હોજાતા હૈ ।

સમજે છે. આ કારણે જે મૈથુનમાં દુઃખરૂપતાની ભાવના કરે છે તે મૈથુનથી
વિરત થઈ જાય છે.

ઐવી જ રીતે ધનાદિમાં સમત્વ રાખનાર પરિગ્રહી જન ધન વગેરેની
અપ્રાપ્તિમાં તેની અભિલાષાનું દુઃખ અનુભવે છે, તેની પ્રાપ્તિ થવાથી તેના
રક્ષણનું દુઃખ ભોગવે છે અને રક્ષણ કરવા છતાં પણ જ્યારે તેનો વિનાશ
થઈ જાય છે ત્યારે વિયોગજન્ય શોકનો અનુભવ કરે છે. જ્યારે ધન આદિ
પ્રાપ્ત થતા નથી અને તેમને મેળવવાની અભિલાષા થાય છે ત્યારે દુઃખનો
અનુભવ થાય છે. જ્યારે તેમની પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે ત્યારે રાજા, ચોર, અગ્નિ
ઉંદર અને ભાગીદારો વગેરેથી તેનું રક્ષણ કરવામાં 'ઉદ્ધિગ્ન' થઈ દુઃખને
જ અનુભવ કરે અને જ્યારે તે ધન આદિ નષ્ટ થઈ જાય છે ત્યારે તેના
વિયોગનો અસહ્ય શોકાગ્નિ તેને પ્રજ્વળે છે આથી પરિગ્રહમાં દુઃખ જ છે,
ઐવી ભાવના રાખનાર પુરુષ પરિગ્રહથી મુક્ત થઈ જાય છે.

भवति, एवं-रीत्या प्राणातिपाताऽमृताभाषण-स्तेयाऽब्रह्मपरिग्रहेषु दुःखमेव भाव-
यतो ब्रह्मिनः पञ्चव्रतेषु स्थिरबालक्षण दृढता भवतीति भावः। उक्तञ्च-स्थानाङ्गे ४
स्थाने २ उद्देशके २८२-सूत्रे-‘संवेगिणी कथा चउव्विहा पण्णत्ता, तं
जहा-इहलोगसंवेगिणी, परलोगसंवेगिणी, आयसररीर संवेगिणी
परसररीरसंवेगिणी। णिव्वेद्यणी कथा चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा-इह-
लोगे दुच्चिण्णणा कम्मा इहलोगे दुहफलविभागसंजुत्ता भवंति १ इहलोगे
दुच्चिण्णणा कम्मापरलोगे दुहफलविभागसंजुत्ता भवंति २ परलोगे दुच्चिण्णणा
कम्मा इहलोगे दुहफलविभागसंजुत्ता भवंति ३ परलोगे दुच्चिण्णणा कम्मा
परलोगे दुहविभागफलसंजुत्ता भवंति ४ इहलोगे सुच्चिण्णणा कम्मा इहलोगे
सुहफलविभागसंजुत्ता भवंति १ इहलोगे सुच्चिण्णणा कम्मा परलोगे सुह-
फलविभाग संजुत्ता भवंति २ एवं चउअंगो’

संवेगिनी कथा चतुर्विधा प्रज्ञप्ता तद्यथा-इहलोगसंवेगिनी, परलोकसंवे-
गिनी, आत्मशरीरसंवेगिनी, परशरीरसंवेगिनी, निर्वेदिनी कथा चतुर्विधा प्रज्ञप्ता,
तद्यथा-इहलोके दुश्चीर्णानि कर्माणि-इहलोके दुःखफलविपाकसंयुक्तानि भवन्ति १
इहलोके दुश्चीर्णानि कर्माणि परलोके दुःखफलविपाकसंयुक्तानि भवन्ति २

इस प्रकार प्राणातिपात, मृषाभाषण, स्तेय, अब्रह्मचर्य और परि-
ग्रह में जो दुःख की ही आधना करता है वह ब्रतो पांचों ब्रतों में
स्थिर होता है। स्थानांगसूत्र के चौथे स्थान के द्वितीय उद्देशक
में कहा है-

‘संवेगिनी कथा चार प्रकार की कही गई है, यथा-(१) इह लोक
संवेगिनी (२) परलोकसंवेगिनी (३) स्वशरीरसंवेगिनी और (४) पर-
शरीरसंवेगिनी। इसी प्रकार निर्वेदिनी कथा भी चार प्रकार की कही गई
है, यथा-(१) इस लोक में किये गये छोटे कर्म इसी लोक में दुःख रूप
फल विपाक को उत्पन्न करते हैं (२) इस लोक में किये गये छोटे कर्म

આવી રીતે પ્રાણાતિપાત, મૃષાભાષણ, સ્તેય, અબ્રહ્મચર્ય અને પરિ-
ગ્રહમાં, જે દુઃખની જ ભાવના કરે છે તે વ્રતી પાંચે વ્રતોમાં સ્થિર થાય
છે. સ્થાનાંગસૂત્રના ચોથા સ્થાનના દ્વિતીય ઉદ્દેશકમાં કહ્યું છે-

‘સંવેદિની કથા ચાર પ્રકારની કહેવામાં આવી છે. જેવી કે-(૧) દહિ-
લોકસંવેદિની (૨) પરલોકસંવેદિની (૩) સ્વશરીરસંવેદિની અને (૪) પર-
શરીરસંવેદિની એવી જ રીતે નિર્વેદિની કથા પણ ચાર પ્રકારની કહેવામાં
આવી છે જેવી કે-(૧) આ લોકમાં કરવામાં આવેલા ખોટા કર્મો આ જ
લોકમાં દુઃખરૂપ ફળવિપાકને ઉત્પન્ન કરે છે. (૨) આ લોકમાં કરેલા ખોટાં

परलोके दुश्चीर्णानि कर्माणि इहलोके दुःखफलविपाकसंयुक्तानि भवन्ति ३ परलोके दुश्चीर्णानि कर्माणि परलोके दुःख फलविपाकसंयुक्तानि भवन्ति ४ इहलोके सुचीर्णानि कर्माणि इहलोके सुख फलविपाकसंयुक्तानि भवन्ति १ इहलोके सुचीर्णानि कर्माणि परलोके सुखफलविपाकसंयुक्तानि २ एवं चतुर्भङ्गाः । तथा च-परलोके सुचीर्णानि कर्माणि इहलोके सुखफलविपाकसंयुक्तानि भवन्ति ३ परलोके सुचीर्णानि कर्माणि परलोके सुख फलविपाकसंयुक्तानि भवन्ति ४ इत्येवं चत्वारो भङ्गाः सुचीर्णकर्मफलविपाकानां बोध्याः । संवेद्यते-संवेग्यते संसारऽ-सारताप्रदर्शनेन मोक्षाभिलाष उत्पद्यतेऽनयेति संवेदिनी-संवेगिनी, तत्र-या कथा संसारस्यासारतां प्रदर्श्य भव्यजीवेषु मोक्षाभिलाषां जनयति सा-संवेगिनी

परलोक में दुःख उत्पन्न करते हैं (३) परलोक में किये गये खोटे कर्म इस लोक में दुःख उत्पन्न करते हैं और (४) परलोक में किये गये खोटे कर्म परलोक में दुःख उत्पन्न करते हैं । एवं (१) इस लोक में किये गये सुकृत इसी लोक में सुख रूप फल प्रदान करते हैं (२) इस लोक में किये गये सुकृत परलोक में सुखरूप विपाक उत्पन्न करते हैं (३) परलोक में किये गये सुकृत इस लोक में सुख उत्पन्न करते हैं और (४) परलोक में किये गये सुकृत परलोक में सुख उत्पन्न करते हैं ।

जो कथा अर्थात् धर्मदेशना संसार की असारता प्रदर्शित करके मोक्ष की अभिलाषा उत्पन्न करती है वह संवेगिनी या संवेदिनी कथा कहलाती है । इस प्रकार जो कथा संसार की असारता प्रदर्शित करके भव्यजीवों में मोक्ष की अभिलाषा उत्पन्न करती है, उसे संवेगिनी

કર્મો પરલોકમાં દુઃખ ઉત્પન્ન કરે છે. (૩) પરલોકમાં કરવામાં આવેલા ખોટાં કર્મો આ લોકમાં દુઃખ ઉત્પન્ન કરે છે અને (૪) પરલોકમાં કરવામાં આવેલા ખોટાં કર્મો પરલોકમાં દુઃખ ઉત્પન્ન કરે છે અને (૧) આ લોકમાં કરેલા સુકૃતો આ લોકમાં સુખરૂપ ફળ પ્રદાન કરે છે. (૨) આ લોકમાં કરેલા સુકૃતો પરલોકમાં સુખરૂપ વિપાક ઉત્પન્ન કરે છે. (૩) પરલોકમાં કરવામાં આવેલા સુકૃતો આ લોકમાં સુખ ઉત્પન્ન કરે છે અને (૪) પરલોકમાં કરવામાં આવેલા સુકૃતો પરલોકમાં સુખ ઉત્પન્ન કરે છે.

જે કથા અર્થાત્ ધર્મદેશના સંસારની અસારતા પ્રદર્શિત કરીને મોક્ષની અભિલાષા ઉત્પન્ન કરે છે તે સંવેદિની કથા કહેવાય છે. એ રીતે જે કથા સંસારની અસારતા પ્રદર્શિત કરીને ભવ્યજીવોમાં મોક્ષની અભિલાષા ઉત્પન્ન કરે છે તેને સંવેદિની કથા સમજવી જોઈ એ જેવી રીતે

વોધ્યા, યથા-મલ્લીકુમારી સ્વસ્થામનુરક્તાન્ પદ્મિ ભૂમિપાલાન્ વિદ્વાય તેભ્યઃ
સંસારાસારતાં પ્રદર્શ્ય વિનીય મોક્ષાભિલાષં જનયાન્નાસ । તથા ચેત્તમ્-

યસ્યાઃ શ્રવણમાત્રેણ મુક્તિ વાઙ્મઙ્ગા પ્રજાયતે ।

સંવેદિની યથા મલ્લી પદ્મ નૃપાન્ પ્રત્યવોધયન્ ॥૧॥

નિવેદ્યતે વિષયભોગેભ્યો વિરજ્યતે શ્રોતાઽનયેતિ નિર્વેદિની । તથાચોક્તમ્-
યદાકર્ણનમાત્રેણ વૈરાગ્યમુપજાયતે ।

નિર્વેદિની યથા શાલિભદ્રો વીરેણ વોધિતઃ ॥૧॥

યસ્યાઃ કથાયાઃ શ્રવણમાત્રેણૈવ વૈરાગ્યમુપજાયતે, સા નિર્વેદિની કથા ધર્મ-
કથા મોચ્યતે, યથા-ભગવાન્ મહાવીરઃ શાલિભદ્રં પ્રતિવોધિતવાન્ ૩૮ ॥૫૭॥

મૂલમ્-સઠ્ઠસમૂયગુણાહિગકિલિસ્સમાણા વિળણસુ મિત્તિ-
પ્પમોય કારુણ્યામજ્જતથાઈ ॥૫૮॥

કથા સમજના યાહિય, જૈસે કુમારી મલ્લી ને છહ રાજાઓં કો અપને
ઉપર અનુરક્ત જાન કર, ડન્હેં સંસાર કી અસારતા દિલ્લાંકર મોક્ષ
કી અભિલાષા ઉત્પન્ન કી થી । કહા ખી હૈ-

‘જિસ કથા કે સુનને માત્ર સે મુક્તિ કી અભિલાષા ઉત્પન્ન હોતી
હૈ, વહ સંવેદિની કથા કહલાતી હૈ, જૈસે મલ્લી કુમારી ને છહ રાજાઓં
કો પ્રતિવોધ દિયા ॥૧॥

જિસ કથા કે દ્વારા શ્રોતા વિષયભોગોં સે વિરક્ત હોતા હૈ વહ
નિર્વેદિની કથા કહલાતી હૈ । કહા ખી હૈ-

‘જિસ કથા કે શ્રવણ માત્ર સે વૈરાગ્ય કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ, વહ
નિર્વેદિની કથા કહલાતી હૈ, જૈસે ભગવાન્ મહાવીર ને શાલિભદ્ર કો
પ્રતિવોધ દિયા ॥૫૭॥

કુમારી મલ્લીએ છ રાજાઓં ને પોતાની ઉપર અનુરક્ત બાણીને, તેમને સંસારની
અસારતા બતાવીને મોક્ષની અભિલાષા ઉત્પન્ન કરી હતી કહ્યું પણ છે-

‘જે કથાને સાંભળવા માત્રથી મોક્ષની અભિલાષા ઉત્પન્ન થાય છે, તે
સંવેદિની કથા કહેવાય છે, જેવી રીતે મલ્લીકુમારીએ ૬ (છ) રાજાઓંને
પ્રતિબોધ આપ્યો. ॥૫૭॥

જે કથા દ્વારા શ્રોતા વિષયભોગોથી વિરક્ત થાય છે તે નિર્વેદિની
કથા કહેવાય છે કહ્યું પણ છે-

‘જે કથાના શ્રવણમાત્રથી વૈરાગ્યની ઉત્પત્તિ થાય છે, તે નિર્વેદિની કથા
કહેવાય છે જેવી રીતે ભગવાન મહાવીરે શાલિભદ્રને ઉપદેશ આપ્યો. ॥૫૭॥

छाया—सर्वभूतगुणाधिक क्लिश्यमानाऽविनयेषु मैत्रीप्रमोद कारुण्य माध्य स्थानि ॥५८॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रे हिंसादि निवृत्तिलक्षण पञ्चत्रय साधारणतया प्राणातिपातादिषु, इहाऽमुत्र घोरदुःखभावेना च प्ररूपिता, सम्प्रेप्ति-तद्व्रजस्यैव दाढ्यार्थं सर्व सूत्रादिषु मैत्र्यादि भावेनाः प्ररूपयितुमाह—‘सर्वभूय’ इत्यादि । सर्वभूत गुणाधिकक्लिश्यमानाऽविनयेषु मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि, इति । तत्र—सर्वभूतेषु सर्वप्राणिषु मैत्रीं भावयेत्, गुणाधिकेषु स्वाऽपेक्षयाऽधिकगुणवत्सु प्रमोदं—हर्षातिशयं भावयेत्, क्लिश्यमानेषु—क्लेशमनुभवत्सु च कारुण्यं—दया.

‘सर्वभूयगुणाहिग’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—सर्व प्राणियो पर मैत्री, अधिक गुणवानों पर प्रमोद, क्लेश पाते हुआ पर करुणा और अविनीतो पर मध्यस्थ भाव धारण करना चाहिए ॥५८॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्व सूत्र में हिंसाविरमण आदि पाँचों व्रतों की साधारण भावना अर्थात् हिंसा आदि में इस लोक में और परलोक में घोर दुःख का विचार करना ऐसी भावना का प्ररूपण किया गया, अब उसी व्रत की दृढता के लिए मैत्री आदि भावनाओं का प्ररूपण करते हैं—

सर्वभूत, गुणाधिक, क्लिश्यमान और अविनीत पर अनुक्रम से मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ भाव रखना चाहिए । अर्थात् समस्त प्राणियों पर मैत्री भावना भावे, अपने से अधिक गुणवानों पर

‘सर्वभूयगुणाहिग’ इत्यादि

सूत्रार्थ—सर्व प्राणियो प्रति मैत्री, अधिक गुणवानो पर प्रमोद, क्लेश पावन राखो पर करुणा अने अविनीतो पर मध्यस्थ भाव धारण करवो जेधये ॥५८॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रमां ‘हिंस विरमण आदि पाये’ व्रतानी साधारण भावना अर्थात् हिंसा आदिमां आ लोकमां अने परलोकमां घोर दुःखनो विचार करवो—येही भावनानुं प्ररूपण करवामां आण्युं हुवे ते ज व्रतनी दृढता भाटे मैत्री आदि चार भावनाओनुं विवेचन करीये छीये—

सर्वभूत, गुणाधिक, क्लिश्यमान अने अविनीत पर अनुक्रमथी मैत्री, प्रमोद, करुण्य अने माध्यस्थ भाव राखवो जेधये अर्थात् समस्त प्राणियो पर मैत्री भावना भावे, पोताना करतां अधिक गुणवानो पर प्रमोद भावना

दाक्षिणं भावयेत्, अविनयेषु-अविनीतेषु शठेषु च माध्यस्थ्यम् औदासीन्यम्
उपेक्षावृत्तिं भावयेत्, एवं विधौ मैत्र्यादि भावयद्भिः सर्वैः सह वैरादिकं विनष्टं भवति
इति भावः तथाचोक्तम्-

सत्त्वेषु मैत्रीं, गुणेषु प्रमोदं-विलम्बेषु-जीवेषु दयापरत्वम् ।

माध्यस्थ्यभावं विपरीतवृत्तौ-सदा ममाऽऽत्माविदधातु धीरः

(देव ?) । १ । इति ॥ ५८ ॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं प्राणातिपातादि विरतिलक्षण पञ्चव्रतानां स्थिरतार्थं
सर्वसाधारणतया हिंसादिषु ऐहिक-पारलौकिकाऽपायाऽवयव दर्शनरूपा भावना
दुःखभावना च प्ररूपिता, सम्प्रति-तेषामेव व्रतानां परम्परया स्थिरता सम्पा-

प्रमोद भावना भावे अर्थात् उन्हें देख कर अतिशय हर्ष का अनुभव
करे, जो जीव क्लेश का अनुभव कर रहे हैं उनके प्रति करुणा भाव
का अनुभव करे और जो अविनीत अर्थात् शठ हैं, उनके प्रति मध्य-
स्थता, उदासीनता या उपेक्षा वृत्ति धारण करे। इस प्रकार मैत्रीभाव
आदि धारण करने से किसी के प्रति बैर-विरोध नहीं रहता।
कहा भी है-

‘प्रमो ! मेरी आत्मा प्राणी मात्र के प्रति मैत्रीभाव धारण करे, गुणी
जनों के प्रति प्रमोद भाव धारण करे, क्लेश भोगने वालों पर करुणा
भाव धारण करे और विपरीत आचरण करने वालों पर मध्यस्थता
का भाव धारण करे ॥ ५८ ॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले प्राणातिपातविरमण आदि पांच व्रतों की
स्थिरता के लिए हिंसा आदि में अपाय एवं अवयवदर्शन भावना और
दुःख भावना का निरूपण किया गया, अब उन्हीं व्रतों की परम्परा से

भावने अर्थात् तेमने जेधने अतिशय हर्ष अनुभव, जे जेव क्लेशने अनु-
भव करी रह्यां छे तेमना प्रति कइयाभावने अनुभव करे अने जेओ अवि-
नीत अर्थात् शठ छे तेमना तरई मध्यस्थता उदासीनता अथवा उपेक्षावृत्ति
धारण करे आ रीते मैत्रीभाव आदि धारण करवाथी कैछि नी प्रत्ये बैर-
विरोध रहेतो नथी कह्युं पण छे-

‘प्रमो ! मेरी आत्मा प्राणीमात्र प्रति मैत्रीभाव धारण करे, गुणिजनानी
तरई प्रमोदभाव धारण करे, क्लेश भोगनारा पर कइयाभाव धारण करे
अने विपरीत आचरण करनाराओ पर मध्यस्थताने भाव धारण करे ॥ ५८ ॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—आनी अगाँव प्राणातिपात विरमण आदि पांच
व्रतानी स्थिरता भाटे हिंसा आदिमां अपाय अने अवयवदर्शनभावना अने

दनार्थं सर्वभूतादिषु मैत्र्यादिभावनाः प्रतिपादयितुमाह—‘स्नेहश्च’ इत्यादि । सर्वभूतगुणाधिक क्लिश्यमानाऽविनयेषु मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि इति, तत्र—यथाक्रमं सर्वसत्त्वेषु मैत्रीम् १ गुणाधिकेषु प्रमोदम् २ क्लिश्यमानेषु कारुण्यम् ३ अविनयेषु साधारण्यञ्च भावयेतेति बोध्यम् । तत्र मेघति-स्निग्धति इति मित्रम् तस्य भावो मैत्री परहितचिन्तारूपा, सकलप्राणिविषय आत्मनः स्नेह परिणामः, प्रमादाद् अन्यथा कृतापकारेष्वपि प्राणिषु मित्रतां हृदये निधाय ‘अहमेतस्य मित्रमस्मि’ एतेच मम मित्राणि सन्ति इति ‘नाऽहं मित्रद्रोहित्वं प्रति-पत्स्ये’ मित्रद्रोहित्वस्य दुर्जनाश्रयत्वात् । तस्मात्—‘सर्वप्राणिनोऽहं क्षमे’ इति सर्व स्थिरता के लिए सर्वभूत आदि से मैत्री आदि भावनाओं का प्रति-पादन करते हैं ।

सर्वभूत, गुणाधिक, क्लिश्यमान और अविनीतों के प्रति मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और साध्यस्थभाव धारण करना चाहिए । तात्पर्य यह है कि समस्त प्राणियों के प्रति मैत्रीभाव धारण करे अपने से अधिक गुणवान् जनों के प्रति प्रमोदभाव धारण करे, जो क्लेश के पात्र बने हुए हैं उनके प्रति करुणाभाव धारण करे और अविनीत जनों पर मध्यस्थभाव धारण करे ।

पर के हित का चिन्तन करना मैत्री है अर्थात् समस्त जीवों के प्रति अपना स्नेहभाव होना । अगर कोई जीव प्रमाद के कारण किसी प्रकार का अपकार करे तो भी उनके ऊपर मैत्री भाव धारण करके ‘मैं इनका मित्र हूँ और ये मेरे मित्र हैं, मैं मित्रद्रोह नहीं करूँगा

हुःअलावनानुं निरूपणु करवामां आ०युं हवे ते न प्रतोनी परम्पराथी स्थिरता भाटे सर्वभूत आदिमां मैत्री वगेरे लावनाञ्चानुं प्रतिपादन करीये छ’ये—

सर्वभूत, गुणाधिक, क्लिश्यमान અને અવિનીતોના પ્રતિ મૈત્રી, પ્રમોદ, કારુણ્ય અને માધ્યસ્થભાવ ધારણ કરવા બોધ્યે તાત્પર્ય’ એ છે કે સમસ્ત પ્રાણીએ તરફ મૈત્રીભાવ ધારણ કરે, યોતાના કે તાં અધિકે ગુણવાન જનો તરફ પ્રમોદભાવ ધારણ કરે, જેઓ કલેશના પાત્ર બનેલા છે તેમના પ્રત્યે કારુણ્યભાવ ધારણ કરે અને અવિનીત જનો પ્રત્યે મધ્યસ્થભાવ ધારણ કરે.

ખીનના હિતનું ચિન્તન કરવું મૈત્રી છે અર્થાત્ સમસ્ત જીવો તરફ યોતાનો સ્નેહભાવ હોવો. અગર કોઈ પ્રમાદના કારણે કોઈ જાનને અપકાર કરે તો પણ તેમના પર મૈત્રીભાવ ધારણ કરીને ‘હું’ એમનો મિત્ર છું’ અને આ મારો મિત્ર છે, હું મિત્રદ્રોહ કરીશ તહીં’ કારણ કે મિત્રનો દ્રોહ કરવો

સત્ત્વાન્ પ્રતિભાવયેત્ 'સમ્યક્મનોવચનકાર્યૈઃ સર્વસત્ત્વાનં સદૈ' इत्येवं भावनया मित्रता यथार्थतयाऽऽप्याच्यते। ये च मयापकृताः प्राणिन स्तानपि मित्रत्वत्वात् क्षमेऽहम्, तथा च सर्वप्राणिषु मम मैत्री वर्तते न केनापि मम वैरमिति, स चैव वैरानुबन्धः प्रसृतप्रत्यवायशाखाशतसंवाधो मात्सर्यविषयोदयो भूयोभूयो विच्छिन्नबीजाङ्कुर प्रसवसमर्थोऽपि तीक्ष्ण प्रज्ञाविवेकाऽसिधाराच्छेद्य स्तिरस्कृत निखिलशेषहेतुगणि मैत्रीभावनया निरवशेषं समूलघातं प्रतिहन्तव्यः इति बोध्यम्। एव-सम्यक्त्वादि गुणाधिकेषु प्रतिषु ममोद-हर्षातिशयं भावयेत्।

કયોં કિ મિત્ર કા દ્રોહ કરના દુર્જનતા કા લક્ષણ હૈ અતઃૈવ મૈ સ્વ પ્રાણિયોં કો ક્ષમા કરતા હું' હસ પ્રકાર કી સમસ્ત જીવોં કૈ પ્રતિ ભાવના કરે। 'મૈ સમ્યક્ મન વચન કાય સે સમસ્ત પ્રાણિયોં કો સહન કરતા હું, ઁસી ભાવના સે વાસ્તવિક મિત્રતા કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ। ઔર જિન પ્રાણિયોં કા મૈને અપકાર કિયા હૈ, મિત્ર હોને કૈ કારણ મૈં ઉનસે સ્વમાતા હું। મેરા સમસ્ત પ્રાણિયોં પર મૈત્રીભાવ હૈ, કિસી કૈ સાથ વૈરભાવ નહીં હૈ। યહ વૈરાનુબંધ જબ વઢતા હૈ તો હસમૈં સે સૈકડોં અનર્થોં કી શાખા-પ્રશાખાં ફૂટતી હૈ, માત્સર્ય આદિ દોષોં કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ, હસકૈ અંકુર તીક્ષ્ણ 'પ્રજ્ઞા ઁવં વિવેક રૂપી તલવાર કી ધાર સે હી કાટે જા સકતે હૈ ઔર કિસી કારણ સે ઁસકા ઉચ્છેદ નહીં હો સકતા। હસકા સમૂલ વિનાશ મૈત્રી ભાવના કૈ દ્વારા હી કરના ઁહિયે।

હસી પ્રકાર જો સમ્પ્રક્તવ આદિ ગુણોં મૈં અધિક હૈ, ઉનકૈ પ્રતિ

દુર્જનતાનું લક્ષણ છે. આથી હું બધાં પ્રાણિઓને ક્ષમા આપું છું' આ પ્રકારની સમસ્ત જીવો તરફ ભાવના રાખે 'હું સમ્યક્ મન વચન કાયાથી સમસ્ત પ્રાણિઓને સહન કરું છું' એવી ભાવનાથી વાસ્તવિક મિત્રતાની પ્રાપ્તિ થાય છે અને જે પ્રાણિઓને મેં અપકાર કર્યો છે, મિત્રતાના તે હું તેમનાથી ક્ષમાપના મેળવું છું' મારો સમસ્ત પ્રાણિઓ પર મૈત્રીભાવ છે, કોઈની સાથે વૈરભાવ નથી. આ વૈરાનુબંધ બંધાવે વધે છે ત્યારે એમાંથી સંકટો અનર્થોની શાખા-પ્રશાખાઓ ફૂટી નીકળે છે, માત્સર્ય આદિ દોષોની ઉત્પત્તિ થાય છે, આના અંકુર તીક્ષ્ણ પ્રજ્ઞા અને વિવેક રૂપી તલવારની ધાર વડે જ કાપી શકાય છે બીજા કોઈ કારણે તેનું ઉચ્છેદન થઈ શકતું નથી. આનો જરૂરથી વિનાશ મૈત્રીભાવના દ્વારા જ કરવો જોઈએ

એવી જ રીતે જેઓ સમ્યક્ત્વ આદિ ગુણોમાં અધિક છે તેમના પ્રત્યે

तत्र प्रमोद स्तावद्-वन्दनस्तवनप्रशंसनवैयावृत्यकरणादिसिः सम्यक्त्वज्ञान-
चारित्रतपोऽधिकेषु मुनिवरेषु स्त, पर, तदुभय कृतसम्मानजन्यः सर्वेन्द्रियाभि-
व्यक्त आनन्दातिरेक उच्यते । तत्र सम्यक्त्वं तावत्-तत्त्वार्थश्रद्धानस्वरूपं
बोध्यम्, ज्ञानश्चे-ष्टाऽनिष्टप्रवृत्तिनिवृत्तिविषयकं बोधरूपं, चारित्रश्च-मूलोत्तर-
गुणभेदम्, तपश्च-बाह्यभ्यन्तरभेदेन द्विविधमवसेयम्, एतैश्चोपर्युक्तलक्षणैः सम्य-
क्त्वादिभिः श्रावकापेक्षया विशिष्टेषु श्रमणेषु स्वेन परेण तदुमाभ्यां वा कृत-
वन्दनादिना मुनिजनगुणोत्कीर्तनसमये-एकतान श्रवणसमुत्फुल्लनयनाविर्भूत-

प्रमोद अर्थात् हर्ष के अतिरेक को धारण करे अर्थात् गुणी जनों को
देख कर अत्यन्त प्रसन्न हो । जो सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र अथवा
तप में अधिक-अपने से ऊंचे हैं उनका यथोचित वन्दन, स्तवन,
प्रशंसा, वैयावृत्य आदि करना, आदर-सत्कार करना और सब
इन्द्रियों से आनन्द की अधिकता को व्यक्त करना प्रमोद कहलाता
है । इनमें से सम्यक्त्व का अर्थ है तत्त्वार्थ का श्रद्धान करना । इष्ट में
प्रवृत्त और अनिष्ट से निवृत्त होने के बोध को ज्ञान कहते हैं और
मूलगुणों और उत्तरगुणों को चारित्र कहते हैं । बाह्य और अभ्यन्तर
के भेद से तप के दो भेद हैं । इन सम्यक्त्व आदि गुणों में जो अपने
से अधिक उत्कृष्ट हैं, उनके प्रति मानसिक हर्ष प्रकट करना प्रमोद
है । एक श्रावक की अपेक्षा दूसरा श्रावक और एक मुनि की अपेक्षा
दूसरा मुनि इन गुणों में अधिक होता है । श्रावक की अपेक्षा मुनि
में ये गुण अधिक पाये ही जाते हैं । मुनिजन के गुणोत्कीर्तन के

प्रमोद अर्थात् हर्षना अतिरेकने धारण करे अर्थात् गुणीजनोना दर्शनथी
अत्यन्त प्रसन्न थाय जे सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्र अथवा तपमां अधिक-
पोतानाथी वधादे डोय तेमतुं यथोचित वंदन स्तवन, प्रशंसा, वैयावृत्य,
वगेरे करवा, आदर-सत्कार करवा अने भधी इन्द्रियोथी आनंदनी पराका-
ष्ठाने व्यक्त करवी, प्रमोद कडेवाय छे. आमांथी सम्यक्त्वनो अर्थ छे
तत्त्वार्थनी श्रद्धा करवी छिष्टमां प्रवृत्ति अने अनिष्टथी निवृत्त थवाना बोधने
ज्ञान कडे छे अने मूलगुणो तथा उत्तरगुणोने चारित्र कडे छे. बाह्य अने
आभ्यन्तरना लेहथी तपना जे लेह छे, आ सम्यक्त्व आदि गुणोमां जे
पोताना करतां अधिक उत्कृष्ट छे तेमना प्रत्ये मानसिक हर्ष प्रकट करवे
प्रमोद छे ओक श्रावकनी अपेक्षा भीजे श्रावक अने ओक मुनिनी अपेक्षा
भीजे मुनि आ गुणोमां अधिक डोय छे श्रावकनी अपेक्षा मुनिमां आ गुण
अवश्य अधिक जेवा भजे छे. मुनिजने गुणोत्कीर्तन देणाओ ओकाथ थधने

રોમાશ્ચન્ચુકિતગાત્રયદૃષ્ટ્યાદિ લિંગેન પ્રકટિતો યનઃપ્રદર્શનઃ પ્રમોદો વ્યપદિશ્યતે તં
 માવયેદિતિ । एवं-क्लेशमनुभवस्तु क्लिश्यमानेषु दीनेषु-अनाथबालवृद्धादिषु
 कारुण्यं भावयेत्, तत्र-कारुण्यं खल्वनुकम्पारूपं मुच्यते, दीनोपरि-अनुग्रहो दया-
 दृष्टिः दीनत्वञ्च-मानसिकशारीरिदुःखैरभिभूतत्वं बोधयम् । तत्र-करुणाक्षेत्रेषु
 सत्त्वेषु मिथ्यादर्शनाऽनन्तानुबन्धादिरूपं महामोहमिभूतेषु मतिश्रुतविभङ्गज्ञान
 व्याप्तेषु इष्टानिष्टप्राप्तिपरिहारवर्जितेषु-अनेकदुःखपीडितेषु दीनकृपणाऽनाथ-
 बालवृद्धादिषु-अविच्छिन्नं कारुण्यं भावयेत्, तथाविधं कारुण्यं भावयंश्च
 मोक्षोपदेशदेश-कालापेक्षं बह्वानुपानप्रतिश्रयौषधादिभिस्ताननुगृहीयात् इति ।

સમય એકાગ્ર હોકર શ્રવણ કરના જેવોં કા સ્થિતિ ઊઠના, સમસ્ત
 શરીર મેં રોમાંચ પ્રગટ હોના, इत्यादि चिह्नों से मानसिक हर्ष
 પ્રકટ હોના હૈ । इस प्रमोद से आत्मा को भावित करे ।

જો કલેશ-કષ્ટ કા અનુભવ કર રહે હોં, એસે દુઃખી, દીન,
 અનાથ ઓર વૃદ્ધ આદિ પર કરુણા ભાવ સે આત્મા કો ભાવિત કરે ।
 કારુણ્ય કા અર્થ હૈ અનુકમ્પા, દીન પ્રાણી પર અનુગ્રહ, દયાદૃષ્ટિ ।
 જો શારીરિક યા માનસિક દુઃખોં સે પીડિત હૈં વે દીન કહલાતે હૈં ।
 इनमें से जो प्राणी मिथ्यादर्शन तथा अनन्तानुबन्धी आदि महामोह
 સે ગ્રસ્ત હૈં, કુમતિ કુશ્રુત ઓર વિભંગ જ્ઞાન સે વ્યાપ્ત હૈં, જો ઇષ્ટ
 પ્રાપ્તિ ઓર અનિષ્ટ પરિહાર નહીં કર સકતે ઓર અનેક દુઃખોં સે
 પીડિત હૈં, જો દીન, કૃપણ, અનાથ, બાલ ઓર વૃદ્ધ હૈં, उनके प्रति
 નિરન્તર કરુણા કી ભાવના કરની યાહિયે ઓર કરુણા કી ભાવના

શ્રવણ કરવું, આંખે નું નાચી ઉઠવું, સમસ્ત શરીરમાં રોમાંચ જાગૃત થવો
 ઇત્યાદિ ચિહ્નોથી આ માનસિક હર્ષ પ્રગટ થાય છે. આ પ્રમોદથી આત્માને
 ભાવિત કરવો જોઈએ.

જેઓ કલેશ-કષ્ટનો અનુભવ કરી રહ્યા હોય એવા દીન, દુઃખી અનાથ
 અને વૃદ્ધ આદિ પર કષ્ટના ભાવથી આત્માને ભાવિત કરવો. કષ્ટણ્યનો અર્થ
 છે અનુકમ્પા, દીનપ્રાણી પર અનુગ્રહ, કૃપાદૃષ્ટિ જેઓ શારીરિક અથવા
 માનસિક વ્યથાઓથી પીડિત છે તેઓ દીન કહેવાય છે. આમાંથી જે પ્રાણી
 મિથ્યાદર્શન તથા અનન્તાનુબંધી આદિ મહામોહથી ગ્રસ્ત છે, કુમતિ, કુશ્રુત
 અને વિભંગ જ્ઞાનથી વ્યાપ્ત છે, જેઓ ઇષ્ટ પ્રાપ્તિ અને અનિષ્ટ પરિહાર
 કરી શકતા નથી અને અનેક દુઃખોથી પીડિત છે, જેઓ દીન, કૃપણ, બાલ
 તેમજ વૃદ્ધ છે, તેમના તરફ હરહંમેશ કષ્ટણ્યની ભાવના ભાવવી જોઈએ

अविनेयेषु शठेषु जनेषु माध्यस्थ्यम्-औदासीन्यम्-उपेक्षां भवयेत् । तत्र-विनी-
यन्ते शिक्षां ग्राहयितुं शक्यन्ते ये ते विनेयाः शिक्षार्हाः, ये तथा न भवन्ति तेऽ-
विनेयाः शिक्षाऽनर्हाः उच्यन्ते । चेतनाः अपि काष्ठ-कुड्याऽश्मसन्निभाः
ग्रहणधारणेहाऽशोदशून्याः मिथ्यादर्शनाभिभूताः दुष्टजनविमलब्धा उच्यन्ते,
तेष्वौदासीन्यं भावयेत्, तेषु-सदुपदेशादिकं शुष्कबीजमिदोषरभूमिषु, उत्तमपि
न किमपि फलदायकं भवति, तस्मात्-तेषूपेक्षेत्र कर्तव्येति भावः ।

तथाचोक्तम्-परहितचिन्ता मैत्री, परदुःखनिवारणं तथा करुणा ।

परसुखतोषो मोदः, परदोषोपेक्षणमुपेक्षा ॥१॥ इति

करते हुए उन्हें मोक्ष का उपदेश देना चाहिए, देश-कालोचित वस्त्र,
अन्न, पानी, आवास तथा औषध आदि से उन पर अनुग्रह करना चाहिए।

जो अविनेय-शठ हैं उन पर माध्यस्थ्य भाव धारण करना
चाहिए । जो शिक्षा ग्रहण करने योग्य हों वे विनेय कहलाते हैं और
जो शिक्षा के योग्य न हों वे अविनेय कहे जाते हैं अर्थात् जो सचेतन
होते हुए भी काठ, दीवाल एवं पाषाण के समान ग्रहण, धारण, ईहा,
अपोह से शून्य हैं, मिथ्यादर्शन से ग्रस्त हैं और दुष्ट जनों द्वारा वह-
काये हुए हैं, उन्हें अविनेय समझना चाहिए । ऐसे जनों पर उदासीन
भाव धारण करे । जैसे ऊपर भूमि में डाला हुआ बीज निष्फल होता
है, उसी प्रकार ऐसे लोगों को दिया हुआ उपदेश व्यर्थ जाता है ।
उसका कुछ भी फल नहीं होना, अतएव उन पर उपेक्षाभाव धारण

અને કરણની ભવના કરતા થકા તેઓને મોક્ષનો ઉપદેશ આપવો જોઈએ,
દેશ-કાળ પ્રમાણે વસ્ત્ર, અનાજ, પાણી, આવાસ તથા ઔષધ આદિ દ્વારા
તેમના પર અનુગ્રહ કરવો જોઈએ.

જેઓ અવિનયી-શઠ છે તેમના તરફ માધ્યસ્થભાવ ધારણ કરવો
જોઈએ. જેઓ શિક્ષણ ગ્રહણ કરવા લાયક છે તેઓ વિનય કહેવાય છે અને
જેઓ શિક્ષણને યોગ્ય ન હોય તેમને અવિનેય કહેવામાં આવે છે અર્થાત્
જે સચેતન હોવા છતાં પણ લાકડા, દીવાલ અને પથરાની માફક, ગ્રહણ,
ધારણ, ઇંહા, અપોહથી શૂન્ય છે, મિથ્યાદર્શનથી ગ્રસ્ત છે અને દુષ્ટજનો
દ્વારા ભેરાયેલા છે તેમને અવિનેય સમજવા જોઈએ. આવા માણસો તરફ
ઉદાસીનભાવ ધારણ કરવો જેવી રીતે ખારાપાટવળી જમીનમાં નાખેલું
બીજ નિષ્ફળ નીવડે છે તેવી જ રીતે આવા લોકોને આપવામાં આવેલો
ઉપદેશ નિષ્ફળ બને છે. તેનું કંઈ જ ફળ આવતું નથી આથી તેમના પર
ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરવો એ જ યોગ્ય છે. કહ્યું પણ છે-‘બીજના હિતની

ઉક્તશ્ચ સૂત્રકૃતાંગે પ્રથમશ્રુતસ્કન્ધે ૧૬ અધ્યયને તૃતીયગાથાયाम્-‘મૈત્રી
શ્રુતેષુ કલ્પયેત્’ इति । एवम्-औपपातिके प्रथमसूत्रे २० प्रकरणे चोक्तम्-
‘सुप्रत्यानन्दः-प्रमोदः’ इति । पुनस्तत्रैवौपपातिके भगवदुपदेशे चोक्तम्-‘साणुक्को-
सयाए’ सानुक्रोशतया इति आचाराङ्गप्रकरणे श्रुतस्कन्धे ८ अध्ययने ७ उद्देशे
६ गाथायाञ्चोक्तम्-

‘मज्झस्थो निर्जरापेही, समाहिमनुपालए’ इति ।

मध्यस्थो निर्जरापेक्षी, समाधिमनुपालयेत् ॥इति॥५८॥

मूलम्-चरित्तं पंचविहं सामाइय छेदोवट्ठावणपरिहारविसु-
द्धिय सुहुमसंपराय जहक्खायभेयओ ॥५९॥

करना ही उचित है । कहा भी है-‘दूसरों के हित की चिन्ता करना
मैत्री है, पराये दुःख का निवारण करना करुणा है, दूसरे के सुख को
देखकर सन्तोष मानना प्रमोद है और पराये दोषों की उपेक्षा करना
उपेक्षा भावना है ॥१॥

सूत्र कृतांग के प्रथम श्रुतस्कंध के पंद्रहवें अध्ययन की तीसरी
गाथा में कहा है-‘प्राणियों पर मैत्री धारण करे’ । इसी प्रकार औप-
पातिक सूत्र के प्रथम सूत्र के २० वें प्रकरण में भी कहा है-‘सुप्रत्या-
नन्दः-प्रमोदः’ । इसी सूत्र में भगवान् के उपदेश-प्रकरण में कहा है-
‘साणुक्कोसयाए’ अर्थात् दया युक्तता से । आचारांग श्रुतस्कंध के
आठवें अध्ययन, सातवें उद्देशक की पांचवीं गाथा में कहा है-

‘मध्यस्थ एवं निर्जरा की अपेक्षा करने वाला श्रमण समाधि का
अनुपालन करे ॥५८॥

ચિન્તા કરવી મૈત્રી છે, બીજાના દુઃખોનું નિવારણ કરવું કરુણા છે, બીજાના
સુખને જોઈ સન્તોષ માનવો પ્રમોદ છે, અને પારકા દોષોની ઉપેક્ષા કરવી
ઉપેક્ષા ભાવના છે. ॥૧॥

સૂત્રકૃતાંગના પ્રથમ શ્રુતસ્કંધના પંદરમાં અધ્યયનની ત્રીજી ગાથામાં
કહ્યું છે-‘પ્રાણિઓ પર મૈત્રી ધારણ કરો’ એ જ પ્રમાણે ઔપપાતિકસૂત્રના
પ્રથમ સૂત્રના, ૨૦ માં પ્રકરણમાં પણ કહ્યું છે-સુપ્રત્યાનન્દ-પ્રમોદ. આ જ
સૂત્રમાં ભગવાનના ઉપદેશ પ્રકરણમાં કહ્યું છે. ‘સાણુક્કોસયાए’ અર્થાત્ દયા-
યુક્તતાથી આચારાંગ શ્રુતસ્કંધના આઠમાં અધ્યયન, સાતમા ઉદ્દેશકની પાંચમી
ગાથામાં કહ્યું છે-‘મધ્યસ્થ’ અને નિર્જરાની અપેક્ષા કરનાર શ્રમણ સમાધિનું
અનુપાલન કરે. ॥૫૮॥

छाया—चारित्रं पञ्चविधं, सामायिक छेदोपस्थापन परिहारविशुद्धिसूक्ष्म साम्पराय यथाख्यातभेदतः ॥५९॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावत् समितिगुप्तिधर्मानुपेक्षा परीषहजय चारित्राणां कर्मास्रवनिरोधलक्षणसंवरहेतुत्वेन प्रतिपादितत्वात् तेषां खलु संवरहेतूनां मध्ये चारित्रसंज्ञाव्यपदेशार्थं प्रथमं चारित्रभेदान् प्रतिपादयितुमाह—‘चरित्तं पञ्चविहं’ इत्यादि । चारित्रं तावत्—पूर्वोक्तदशविधश्रमणधर्मान्तर्भूतं संयमात्मकं पञ्चविधं वर्तते, सामायिक १ छेदोपस्थापन २ परिहारविशुद्धिक ३ सूक्ष्मसाम्पराय ४ यथाख्यात ५ भेदतः । तथा च—सामायिकचारित्रम् १ छेदोपस्थापन-चारित्रम् २ परिहारविशुद्धिकचारित्रम् ३ सूक्ष्मसाम्परायिकचारित्रम् ४ यथाख्यात चारित्रञ्च ५ त्वेवं पञ्चविधं चारित्रमवगन्तव्यम् । समः—समं वं रागद्वेषरहितत्वेन

‘चरित्तं पञ्चविहं सामाह्य’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—चारित्र पांच प्रकार का है—(१) सामायिक (२) छेदोपस्थापनीय (३) परिहार विशुद्धि (४) सूक्ष्मसाम्पराय और (५) यथाख्यात ॥५९॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले प्रतिपादन किया गया था कि समिति, गुप्ति धर्म अनुपेक्षा, परीषह जय और चारित्र संवर के कारण हैं । इन संवर के हेतुओं में से चारित्र का स्वरूप प्रतिपादन करने के लिए उसके भेदों का निर्देश करते हैं—

पूर्वोक्त दस प्रकार के श्रमण धर्मों के अन्तर्गत संयमात्मक चारित्र पांच प्रकार का है—(१) सामायिक (२) छेदोपस्थापनीय (३) परिहार विशुद्धिक (४) सूक्ष्मसाम्पराय और (५) यथाख्यात । इस प्रकार चारित्र पांच प्रकार का समझना चाहिए ।

‘चरित्तं पञ्चविहं’ इत्यादि ॥५९॥

सूत्रार्थ—चारित्र पांच प्रकार का है—(१) सामायिक (२) छेदोपस्थापनीय (३) परिहारविशुद्धि (४) सूक्ष्मसाम्पराय और (५) यथाख्यात ॥५९॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले प्रतिपादन करवाया आयेगा हेतु के समिति, गुप्ति, धर्म, अनुपेक्षा, परीषहजय और चारित्र, संवरना कारण छे. आ संवरना हेतुओंमांथी चारित्रना स्वइयुं प्रतिपादन करवा भाटे तेना लेहेतुं निदर्शन करीये छीये—

पूर्वोक्त दश प्रकारना श्रमणधर्मोंना अन्तर्गत संयमात्मक चारित्र पांच प्रकारना छे—(१) सामायिक (२) छेदोपस्थापनीय (३) परिहार विशुद्धिक (४) सूक्ष्मसाम्पराय और (५) यथाख्यात आवी रीते चारित्र पांच प्रकारना समझवा लेछीये.

સર્વેષુ જીવેષુ સ્વાત્મસામ્યવત્ત્વમ્, તસ્ય સમત્વસ્ય આયઃ-પ્રાપ્તિઃ સમાયઃ પ્રવર્ધમાન-
શરદશુક્લચન્દ્રકલાવત્ પ્રતિક્ષણવિલક્ષણજ્ઞાનાદિલાભઃ સ પ્રયોજનમસ્યેતિ સામા-
યિકમ્, સામાયિકઞ્ચ તત્ ચારિત્રઞ્ચેતિ સામાયિકચારિત્રમ્, एतस्य खलु-सर्व-
सुखानिदानभूतायाः सर्वेषु जीवेषु स्वात्मतुल्यदर्शनरूपायाः समतायाः प्राप्तयेऽनु-
ष्ठानं क्रियते । तत्र-पूर्वोक्तस्वरूपं सामायिकचारित्रं तावद् द्विविधम्, नियत-
कालिकम्, अनियतकालिकञ्च । तत्र-स्वाध्यायादिकं सामायिकचारित्रं नियत
कालिकम्, ऐर्ष्यापथिकादिकन्तु-अनियतकालिकं सामायिकचारित्रं बोध्यम् ।
छेदोपस्थापनन्तु-प्रमादकृत हिंसाद्यव्रताऽनुष्ठानस्य सर्वथा परित्यागानन्तरं सम्य-

સમ અર્થાત્ સમત્વ યા રાગ-દ્રેષ કે અભાવ કે કારણ સમસ્ત
જીવોં કો અપને સમાન સમજના । उस समत्व के आय (लाभ) को
समाय करते हैं अर्थात् वृद्धि को प्राप्त होती हुई शरद् ऋतु के चन्द्रमा
की कलाओं के समान प्रतिक्षण विलक्षण ज्ञानादि की प्राप्ति । वह
समाय जिसका प्रयोजन हो उसे सामायिक कहते हैं, सामायिक रूप
चारित्रको सामायिक चारित्र कहा गया है । समस्त सुखों
के कारण और समस्त प्राणियों पर आत्म तुल्य दर्शन रूप
समता की प्राप्ति के लिए सामायिक का अनुष्ठान किया जाता है ।
यह सामायिकचारित्र दो प्रकार का है-नियतकालिक और अनियत-
कालिक । इन में से स्वाध्याय आदि सामायिक चारित्र नियतकालिक
कहलाता है और ऐर्ष्यापथिक अनियतकालिक सामायिक चारित्र है ।

પ્રમાદ કે કારણ હિંસા આદિ અવ્રતોં કે અનુષ્ઠાન કા સર્વથા

સમ અર્થાત્ સમત્વ અથવા રાગ-દ્રેષના અભાવના કારણે સમસ્ત
જીવોને પોતાના જેવા સમજવા તે સમત્વના આય (લાભ)ને સમાય કહે
છે અર્થાત્ વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થતી થકી શરદ ઋતુના ચંદ્રમાની કલાઓની જેમ
પ્રતિક્ષણે વિલક્ષણ જ્ઞાનાદિની પ્રાપ્તિ તે સમાય જેનું પ્રયોજન હોય તેને
સામાયિક કહે છે, સામાયિક રૂપ, ચારિત્રને સામાયિક ચારિત્ર કહેવામાં
આવ્યું છે સમસ્ત સુખોના કારણ અને સમસ્ત પ્રાણીઓ પર આત્મતુલ્ય
દર્શનરૂપ સમતાની પ્રાપ્તિ માટે સામાયિકનું અનુષ્ઠાન કરવામાં આવે છે.
આ સામાયિક ચારિત્ર બે પ્રકારના છે. નિયતકાલિક અને અનિયતકાલિક
આમાથી સ્વાધ્યાય આદિ સામાયિક ચારિત્ર નિયતકાલિક કહેવાય છે અને
ઐર્ષ્યાપથિક અનિયતકાલિક સામાયિક ચારિત્ર છે.

પ્રમાદને કારણે હિંસા આદિ અવ્રતોના અનુષ્ઠાનનો સર્વથા પરિત્યાગ

ગામોક્તવિધિના પુનર્વતારોપણં સમ્યક્ પ્રતિક્રિયાત્મકં વોધ્યમ્ । છેદેન દિવસ
પક્ષમાસાદિ પ્રવ્રજ્યા-દ્વાપન્નેનોપસ્થાપનં પુનર્વતારોપણં છેદોપસ્થાપનમિતિ વ્યુત્પત્તિઃ,
સંકલ્પદિકલ્પનિષેધો વા છેદોપસ્થાપનચારિત્રમુચ્યતે । પરિહરણં પરિહારઃ પ્રાણા-
તિપાતાન્નિવૃત્તિઃ, પરિહારેણ વિશિષ્ટા શુદ્ધિઃ કર્મમલકલક્રપદ્મગ્રજ્જાલનં યસ્મિન્ચારિત્રે
તત્ પરિહારવિશુદ્ધિચારિત્રમુચ્યતે, યથા- દ્વાત્રિશદ્વર્ષજાતસ્ય ચિરકાલતીર્થપાદ-
સેવિનઃ પ્રત્યાખ્યાન નામધેયનવમપૂર્વોક્ત સમ્યગાચારવેદિનોઽપિ પ્રચુરચર્યાઽનુ-
ષ્ઠાયિનઃ સન્ધ્યાત્રયં વર્જયિત્વા દ્વિગવ્યૂતગામિનઃ સંયતસ્ય ધુનેઃ પરિહારવિશુદ્ધિ-

પરિત્યાગ કરને કે પશ્ચાત્ આગમોક્તવિધિ કે અનુસાર પુનઃ વ્રતોં કા
આરોપણ કરના છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર હૈ । ઉત્તે સમ્યક્ પ્રતિક્રિયા
રૂપ સમજના ચાહિય । ‘છેદોપસ્થાપન’ શબ્દ કી વ્યુત્પત્તિ હસ પ્રકાર હૈ-
છેદ અર્થાત્ દિન, પક્ષ, માસ આદિ કી દીક્ષા કમ કરકે, ઉપસ્થાપન
અર્થાત્ ફિર વ્રતોં મેં અરોપણ કરના ‘છેદોપસ્થાપન’ હૈ । અથવા સંકલ્પ-
વિકલ્પ કા નિષેધ છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર કહલાતા હૈ ।

પરિહાર કા આશય હૈ પ્રાણાતિપાત સે નિવૃત્ત હોના । જિસ ચારિત્ર
મેં ‘પરિહાર’ કે દ્વારા વિશિષ્ટ શુદ્ધિ અર્થાત્ કર્મમલ રૂપ પંક કા પ્રક્ષા-
લન કિયા જાતા હૈ, વહ પરિહારવિશુદ્ધિ ચારિત્ર હૈ । જો વત્તીસ
વર્ષ કા હો ચુકા હો, ચિરકાલ તક જિસને તીર્થકર કે ચરણોં
કી સેવા કી હો, જો પ્રત્યાખ્યાન નામક નૌવેં પૂર્વ મેં કથિત આચાર
વસ્તુ કા જ્ઞાતા હો’ ઉગ્ર ચર્યાવાન્ હો, જો તીનોં સંધ્યાઓં કો બચાકર

કર્યા બાદ આગમોક્ત વિધિ અનુસાર પુનઃ વ્રતોનું આરોપણ કરવું છેદો-
પસ્થાપનીય ચારિત્ર છે તેને સમ્યક્ પ્રતિક્રિયા રૂપ સમજવું જોઈએ.
‘છેદોપસ્થાપન’ શબ્દની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે છે. છેદ અર્થાત્ દિવસ, પખવા-
ડિયું, માસ વગેરેની દિક્ષા ઓછી કરીને, ઉપસ્થાપન અર્થાત્ ફરીવાર વ્રતોમાં
આરોપણ કરવું ‘છેદોપસ્થાપન’ અથવા સંકલ્પ-વિકલ્પનો નિષેધ છેદોપસ્થાપન
ચારિત્ર કહેવાય છે.

પરિહારનો આશય છે પ્રાણાતિપાતથી નિવૃત્ત થવું. જે ચારિત્રમાં
‘પરિહાર’ દ્વારા વિશિષ્ટ શુદ્ધિ અર્થાત્ કર્મમલરૂપ કાદવનું પ્રક્ષાલન કરવામાં
આવે છે તે પરિહાર વિશુદ્ધિ ચારિત્ર છે. જે બત્તીસ વર્ષના થઈ ગયો હોય,
ચિરકાળ સુધી જેણે તીર્થકરના ચરણોની સેવા કરી હોય, જે પ્રત્યાખ્યાન
નામક નવમા પૂર્વમાં કથિત આચારવસ્તુને જ્ઞાતા હોય, ઉગ્ર ચર્યાવાન હોય,
જે ત્રણે સંધ્યાઓને બચાવીને બે ગવ્યૂતિ ગમન કરે છે. એવા સંયમશીલ

ચારિત્ર' મન્વતિ । અતિસૂક્ષ્મ ક્રોધમાનમાયાદિ કષાયત્વાત્ સૂક્ષ્મસામ્પરાયચારિત્ર-
 મુચ્યતે, સમ્પરાયશબ્દસ્ય કષાયવાચકત્વાત્ । સર્વસ્ય મોહનીયસ્યોપશમઃ ક્ષયો-
 વા વર્તતે યસ્મિન્ તત્ પરમૌદાસીન્યલક્ષણં જીવસ્વભાવદશાવિશિષ્ટં યથારુચ્યાત-
 ચારિત્રમ્, યથા-ડડ મનઃ શુદ્ધઃ સ્વભાવઃ સ્થિતઃ તથૈવાડડરુચ્યાતઃ કથિત આત્મનઃ
 સ્વભાવો યસ્મિન્ચારિત્રે તત્-યથારુચ્યાતચારિત્રમિતિ વ્યુત્પત્તિઃ, તથાચ-નિરત્ર-
 શેષસ્ય મોહનીયકર્મણ ઉપશમાત્-ક્ષયાચ્ચાડડત્મસ્વભાવાપેક્ષાલક્ષણં યથારુચ્યાત
 ચારિત્ર' વ્યપદિશ્યતે, યથારુચ્યાતમેવાડડારુચ્યાતચારિત્ર નામ્નાપિ વ્યપદિશ્યતે ।
 તદ્વાડડમર્થઃ-પ્રાક્તનચારિત્ર વિધાયિભિઃ સ્વલુ આત્મનો યદુત્કૃષ્ટં ચારિત્રમારુચ્યાતં
 દો ગવ્યૂતિ ગમ્મન કરતા હો, એલે સંયમશીલ મુનિ કો પરિહારવિશુદ્ધિ
 ચારિત્ર હોતા હૈ ।

જિસ અવસ્થા મેં કષાય અત્યન્ત સૂક્ષ્મ રહ જાતે હૈ, ઉસ અવસ્થા
 મેં હોને વાલા ચારિત્ર સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર કહલાતા હૈ । સમ્પરાય
 શબ્દ કષાય કા વાચક હૈ ।

મોહનીય કર્મ કા સર્વથા ઉપશમ યા ક્ષય હોને પર જો ચારિત્ર
 પ્રકટ હોતા હૈ વહ યથારુચ્યાત ચારિત્ર હૈ । યહ ચારિત્ર પરમ ઉદાસીનતા-
 મય ઓર જીવન કી સ્વભાવદશા રુપ હૈ । આત્મા કા જો શુદ્ધ સ્વભાવ
 હૈ વહી જિસ ચારિત્ર મેં કહા ગયા હો, વહ યથારુચ્યાત ચારિત્ર । ઇસ
 કારણ સમ્પૂર્ણ મોહનીય કર્મ કે ઉપશમ સે યા ક્ષય સે આત્મસ્વભાવ-
 યથારુચ્યાત ચારિત્ર કહલાના હૈ । ઇસે અથારુચ્યાત ચારિત્ર ભી કહતે હૈ ।
 ઉસકા આશય યહ હૈ-પહેલે ચારિત્ર કે જો આરાધક હુવૈ હૈં ઉન્હેં આત્મા
 કા જો ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્ર કહા હૈ, વૈસા ચારિત્ર જીવને પહેલે નહીં પ્રાપ્ત

મુનિને પરિહારવિશુદ્ધિચરિત્ર હોય છે.

જે અવસ્થામાં કષાય અત્યંત સૂક્ષ્મ રહી જાય છે તે અવસ્થામાં થનારું
 ચારિત્ર સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચરિત્ર કહેવાય છે. સંપરાય શબ્દ કષાયનો વાચક છે.

મોહનીય કર્મનો સર્વથા ઉપશમ ક્ષય થવાથી જે ચારિત્ર પ્રકટ થાય
 છે તે યથારુચ્યાતચારિત્ર છે. આ ચારિત્ર પરમઉદાસીનતામય અને જીવન
 સ્વભાવદશા રૂપ છે. આત્મનો જે શુદ્ધ સ્વભાવ છે તે જે ચારિત્રમાં કહેવામાં
 આવ્યું હોય, તે યથારુચ્યાત ચરિત્ર આથી સંપૂર્ણ મોહનીય કર્મના ઉપશમથી
 અથવા ક્ષયથી આત્મસ્વભાવ રૂપ યથારુચ્યાતચારિત્ર કહેવાય છે અને અથા-
 રુચ્યાતચારિત્ર પણ કહે છે. તેનો આશય આ છે. પહેલાં ચારિત્રના જે આરાધક
 થયા છે તેઓએ આત્માનું જે ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્ર કહ્યું છે એવું ચારિત્ર જીવે

कथितं तथाविधं चारित्रं जन्वेन पूर्वं न प्राप्तम् किन्तु-अनन्तरं मोहनीयकर्मक्षयोपशमाभ्यां प्राप्तं यच्चारित्रं तत्-अथाख्यातचारित्रं मित्युच्यते, अथ शब्दस्याऽऽनन्तर्याऽर्थकतया सकलमोहनीयकर्मक्षयोपशमानन्तरं आत्मरूपायाऽऽविर्भावात् ५९।

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं क्रमप्राप्तस्य संवरहेतुभूतपरीषहजयस्य प्ररूपणं कृतम्, सम्प्रति-संवरहेतुतया प्रतिपादितस्य चारित्रस्य भेदान् प्रतिपादयितुमाह—‘चरित्तं पञ्चविधं’ इत्यादि । चारित्रं खलु-संयमलक्षणं पञ्चविधम्, सामायिक छेदोपस्थापन-परिहारविशुद्धिक-सूक्ष्मसाम्पराय-यथाख्यात ५ भेदात्, तथाच-सामायिकचारित्रम् १ छेदोपस्थापनचारित्रम् २ परिहारविशुद्धिकचारित्रम् ३ सूक्ष्मसाम्परायचारित्रम् ४ यथाख्यातचारित्रम् ५ चेत्वेव पञ्चविधं चारित्रमव-

किया है, इस कारण वह अथाख्यात चारित्र कहलाता है । ‘अथ’ शब्द आनन्तर्य अर्थ का वाचक है, अनएव समस्त मोहनीय कर्म के क्षय अथवा उपशम के अनन्तर जो चारित्र प्राप्त हो वह अथाख्यात चारित्र है इस चारित्र की उपस्थिति में आत्मा का शुद्ध स्वभाव प्रकट होता है ॥५९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले संवर के क्रमप्राप्त कारण परीषह जय का निरूपण किया गया था । अब चारित्र के, जो संवर का कारण कहा जा चुका है, भेदों का निर्देश करते हैं—

संयम रूप चारित्र पांच प्रकार का है (१) सामायिक (२) छेदोपस्थापनीय (३) परिहार विशुद्धिक (४) सूक्ष्मसाम्पराय और (५) यथाख्यात । इस प्रकार (१) सामायिकचारित्र (२) छेदोपस्थापनचारित्र (३)

अगाढ प्राप्तं कथुं न डेतुं परन्तु पाछज्जी मोहनीय कर्मना क्षय अथवा उपशम द्वारा संपादन करेछुं छे. आ कान्छे ते अथाख्यातचारित्र कडेवाय छे. ‘अथ’ शब्द आनन्तर्य अर्थना वाचक छे. आथी समस्त मोहनीय कर्मना क्षय अथवा उपशमना अनन्तर जे चारित्र प्राप्त थाय ते अथाख्यात-चारित्र छे आ चारित्रनी उपस्थितिमां आत्मानो शुद्ध स्वभाव प्रकट थाय छे ॥५९॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहिलां संवरना कर्मप्राप्त कारण परीषहजयनुं निरूपण करवामां आन्थुं डेतुं. डवे चारित्रना. जे संवरना कारण कडेवाछ गया छे, तेनां लेहोनुं निदर्शन करीओ छीओ—

संयम रूप चारित्र प प्रकारना छे—(१) सामायिक (२) छेदोपस्थापनीय (३) परिहार विशुद्धिक (४) सूक्ष्मसाम्पराय अने (५) यथाख्यात आ रीते (१) साम.यिक चारित्र (२) छेदोपस्थापन चारित्र (३) परिहार विशुद्धिक

કાલાદારમ્ય મરણકાલપર્યન્તં તિષ્ઠતિ પ્રથમાઽન્યતીર્થકૃતોઃ શિષ્યાણાં-સામાન્ય સામાયિકપર્યાયઃછેદો વિશુદ્ધતરસર્વસાવચયોગવિરતો સમસ્થાનં વિવિક્તતર-મહાવ્રતારોપણં છેદોપસ્થાપનીયચારિત્રમ્ । પૂર્વપર્યાયઃછેદે સતિ-ઉત્તરપર્યાયે-ઉપસ્થાપનમ્, તત્ત્વાપિ દ્વિવિધમ્ નિરતિચારસાતિચારભેદતઃ, તત્ર-શિક્ષકસ્ય નિરતિચારં છેદોપસ્થાપનીયમધીત વિશિષ્ટાઽધ્યયન વિદો મધ્યમતીર્થકરશિષ્યો વા યદા-ચરમતીર્થકરશિષ્યાણાં સવિધે-ઉપતિષ્ઠતે, સાતિચારં છેદોપસ્થાપનીયન્તુ વિનિષ્ઠમૂલગુણસ્ય પુનર્વ્રતારોપણાદ્ભવતિ । તથા ચે-તદુપયમપિ સાતિચારં નિરતિ-

મેં યાવજ્જીવિક સમાયિકચારિત્ર હોતા હૈ । વહ દીક્ષા અંગીકાર કરને કે સમય સે લગાકર મરણકાલ પર્યન્ત રહતા હૈ । પ્રથમ ઔર અન્તિમ તીર્થકરોં કે શાસન મેં શિષ્યોં કે સામાન્ય પર્યાય કા છેદ હોના, વિશુદ્ધતર સર્વસાવચયોગવિરતિ મેં સ્થિત હોના ઔર વિવિક્તતર મહાવ્રતોં મેં આરોપણ કરના છેદોપસ્થાપનીયચારિત્ર કહલાતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ પૂર્વ પર્યાય કા છેદ હોકર ઉત્તર પર્યાય મેં સ્થાપિત કરના છેદોપસ્થાપન હૈ । ઉસકે મીં દો ભેદ હૈ-નિરતિચાર ઔર સાતિ-ચાર । જિસને વિશિષ્ટ અધ્યયન કા અધ્યયન કર લિયા હૈ ઉસકો તથા જબ મધ્યમ તીર્થકર કા કોઈ શિષ્ય ચરમ તીર્થકર કે શિષ્યોં કે પાસ જાતા હૈ તય નિરતિચાર છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર કહલાતા હૈ । જિસ સાધુ કા મૂલગુણ નષ્ટ હો જાતા હૈ ઉસે પુનઃ પ્રવ્રજ્યા દેકર વ્રતોં મેં આરોપિત કિયા જાના સાતિચાર છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર હૈ । હસ કારણ યહ દોનોં અર્થાત્ સાતિચાર ઔર નિરતિચાર છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર પ્રથમ

દેના શાસનમાં યાવજ્જીવિક સામાયિક ચારિત્ર થાય છે તે દીક્ષા અંગીકાર કરવાના સમયથી માંડીને મરણકાલ પર્યાન્ત રહે છે. પહેલા અને છેલ્લા તીર્થકરેના શાસનમાં શિષ્યેના સામાન્ય પર્યાયનો છેદ, વિશુદ્ધતર થવો, સર્વસાવચ યોગ વિરતિમાં સ્થિત હોવું અને વિવિક્તતર મહાવ્રતોમાં આરોપણ કરવું છેદોપસ્થાપનીય ચારિત્ર કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે પૂર્વપર્યાયમાં સ્થાપિત કરવું છેદોપસ્થાપન છે. તેના પણ બે ભેદ છે-નિરતિચાર અને સાતિચાર જેણે વિશિષ્ટ અધ્યયનનો અભ્યાસ કરી લીધો છે તેને તથા જ્યારે મધ્યમતીર્થકરને કોઈ શિષ્ય ચરમતીર્થકરના શિષ્યેની પાસે જાય છે ત્યારે નિરતિચાર છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર કહેવાય છે. જે સાધુને મૂળગુણ નષ્ટ થઈ જાય છે તેને ફરીવાર દીક્ષા આપીને વ્રતોમાં આરોપિત કરવું સાતિચાર છેદોપસ્થાપનચારિત્ર છે. આથી આ બંને અર્થાત્ સાતિચાર અને નિરતિચાર

ચારશ્ચ પ્રથમાઽન્ત્યતીર્થકૃતોરેવ સમ્ભવતિ, । પરિહરણં-પરિહારઃ તપોવિશેષઃ
 તેન-વિશુદ્ધં પરિહારવિશુદ્ધિક ચારિત્રમુચ્યતે, તદપિ-પરિહારવિશુદ્ધિકં દ્વિવિધમ્
 નિર્વિશ્યમાનકમ્-નિર્વિષ્ટકાયિકશ્ચેતિ । તત્રાઽપેક્ષ્યમાનં પરિભુજ્યમાનસ્વરૂપં
 નિર્વિશ્યમાનકમુચ્યતે, આસેવિતમ્-ઉપયુક્તસ્વરૂપમ્, નિર્વિષ્ટકાયિકમુચ્યતે ।
 તત્સહચરિતત્વાત્ તદ્બુઢ્યાધિનોઽપિ નિર્વિશ્યમાનાઃ ઉચ્યન્તે । ઉપભોગો
 નિર્વેશઃ, તદુપ્ભુજાનાઃ નિર્વિશ્યમાનકા ભવન્તિ । નિર્વિષ્ટકાયિકાઃ પુન
 નિર્વિષ્ટઃ કાયો યેષાં તે-નિર્વિષ્ટકાયિકાઃ, તત્સહચરિતત્વાત્ તેનાકારેણ તપો-
 બુઢ્યાનદ્વારેણ પરિયુક્તઃ કાયો યૈસ્તે પરિયુક્ત તથાવિધતપસો નિર્વિષ્ટકાયિકા
 ઉચ્યન્તે, પરિહારવિશુદ્ધિકશ્ચ તપઃ પ્રતિષ્ઠાનાં નવકો ગચ્છો ભવતિ । તત્ર ચત્વાર
 તાવત્ પરીહારાઃ, ચારિણશ્ચત્વારોઽનુપરિહારિણઃ, એકસ્તુ-કલ્પિતો વાચનાચાર્યઃ

और अन्तिम तीर्थंकर के शासनकाल में ही होता है ।

પરિહાર નામક એક વિશેષ પ્રકાર કા તપ છે, उससे जो विशुद्ध
 हो वह परिहारविशुद्धिक चारित्र कहलाता है। परिहारविशुद्धिकचारित्र
 भी दो प्रकार का है-निर्विश्यमानक और निर्विष्ट कायिक । जो सेवन
 किया जा रहा हो वह निर्विश्यमानक कहलाता है और जो सेवन
 किया जा चुका हो वह निर्विष्टकायिक कहा जाता है । इन दोनों प्रकार
 के चारित्र का सेवन करने वाले भी निर्विश्यमान और निर्विष्ट-
 कायिक कहलाते हैं । तात्पर्य यह है कि जो विशिष्ट तपश्चरण कर रहे
 हों वे निर्विश्यमान और जो कर चुके हों वे निर्विष्टकायिक कहलाते हैं ।

नौ साधु मिलकर परिहारविशुद्धिक चारित्र का सेवन करते हैं ।
 उनमें से चार परिहारी होते हैं अर्थात् तप करते हैं, चार अनुपरिहारी

છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર પ્રથમ અને અંતિમ તીર્થંકરના શાસનકાળ દરમિયન
 બ થાય છે.

પરિહાર નામનું એક વિશેષ પ્રકારનું તપ છે. તેનાથી જે વિશુદ્ધ છે તે
 પરિહાર વિશુદ્ધિક ચારિત્ર કહેવાય છે. પરિહાર વિશુદ્ધિકચારિત્ર પણ બે
 પ્રકારના છે-નિર્વિષ્ટ માનક અને નિર્વિષ્ટકાયિક જેનું સેવન કરવામાં આવતું
 હોય તે નિર્વિષ્ટ માનક કહેવાય છે. અને જેનું સેવન થઈ ચૂક્યું છે તે
 નિર્વિષ્ટકાયિક કહેવાય છે આ બંને પ્રકારના ચારિત્રનું સેવન કરનારા પણ
 નિર્વિષ્ટમાનક અને નિર્વિષ્ટકાયિક કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે જેઓ
 વિશિષ્ટ તપશ્ચર્યા કરી રહ્યા છે તેઓ નિર્વિષ્ટ માનક અને જેઓ સેવન કરી
 ચૂક્યા છે તે નિર્વિષ્ટકાયિક કહેવાય છે.

નવ સાધુ મળીને પરિહાર વિશુદ્ધિક ચારિત્રનું સેવન કરે છે એમાંથી
 ચાર પરિહારિ હોય છે. અર્થાત્ તપ કરે છે, ચાર અનુપરિહારિ હોય છે.

इत्येवं नवको गच्छः । तत्र-यद्यपि सर्वेऽपि ते श्रुताद्यतिशयसम्पन्ना भवन्ति, तथापि-प्रसिद्धा-कल्पस्थित नवसु विशिष्टवाचनाचार्य एकः कश्चिद्व्यस्थाप्यते । तत्र ये खलु विभिन्नकाये विहिततपोऽनुष्ठानं कुर्वन्ति ते-परिहारिण उच्यन्ते । अनुपहारिणस्तु-वैयावृत्यकारिणः नियताचाम्लभक्ताः सन्तस्तेषामेव तथोग्लानानां परिहारिणामन्तिके साहाय्यमाचरन्त स्तिष्ठन्ति, कल्पस्थितोपि-नियताचाम्लभक्त एव भाति । यत् खलु परिहारिणां तपो ग्रीष्मर्तौ चतुर्थपटुऽष्टमभक्तलक्षणकं जघन्यं मध्यममुत्कृष्टञ्च, वर्षर्तौ चाऽष्टमदशमद्वादशभक्तस्वरूपं तपो जघन्यं मध्यममुत्कृष्टञ्चाऽवसेयम् । पारणाकाले च-समुपस्थितेऽपि आचाम्लमेव पारयन्ति तथा-विधं तपः षण्मासं विधाय परिहारिणोऽनुपरिहारित्वमासादयन्ति । अनुपरिहारि-

होते हैं अर्थात् उन तपस्विनों का वैयावृत्य करते हैं और एक वाचनाचार्य होता है । यद्यपि वे सभी साधु विशिष्ट श्रुत के ज्ञाता होते हैं तथापि उनमें से कोई एक विशिष्टवाचनाचार्य स्थापित कर लिया जाता है । तथा विभिन्न कालों में जो शास्त्रविहित तप का सेवन करते हैं वे परिहारी कहलाते हैं और उनका जो वैयावृत्त करते हैं वे अनुपरिहारि कहलाते हैं । वे अनुपरिहारी नियत आयंचिल करते हैं और तपस्या में संलग्न परिहारियों के समीप रह कर उनकी सेवा सहायता करते हैं । कल्पस्थित भी नियत आयंचिल ही करता है । परिहारियों का तप ग्रीष्म ऋतु में अनुक्रमण से जघन्य चतुर्थभक्त, मध्यम षष्ठ और उत्कृष्ट अष्टम भक्त होता है । वर्षा ऋतु में जघन्य अष्टम भक्त मध्यम दश भक्त और उत्कृष्ट द्वादश भक्त होता है । जब पारणा का काल आता है तो आयंचिल से ही पारणा करते हैं । इस प्रकार वह

अर्थात् ते तपस्वीઓની વૈયાવૃત્ત કરે છે અને એક વાચનાચાર્ય હોય છે. જો કે તે બધા સાધુ વિશિષ્ટ શ્રુતના જ્ઞાતા હોય છે. તે પણ તેમનામાંથી કેાઈ એકને વિશિષ્ટ વાચનાચાર્ય નિયુક્ત કરી લેવામાં આવે છે તથા વિભિન્ન કાળોમાં જેઓ શાસ્ત્રવિહિત તપનું સેવન કરે છે તેઓ પરિહારિ કહેવાય છે. તે અનુપરિહારિ હમેશા આયંચિલ કરે છે અને તપસ્યામાં રહેલા પરિહારિઓની પાસે રહીને તેમની સેવાચારી કરે છે. કલ્પસ્થિત પણ નિયત આયંચિલ જ કરે છે પરિહારિઓનો તપ ગ્રીષ્મ ઋતુમાં અનુક્રમથી જઘન્ય ચતુર્થભક્ત, મધ્યમ, ષષ્ઠભક્ત અને ઉત્કૃષ્ટ અષ્ટમભક્ત હોય છે. વર્ષાઋતુમાં જઘન્ય અષ્ટમભક્ત, મધ્યમ, દશમભક્ત અને ઉત્કૃષ્ટ દ્વાદશ ભક્ત છે, બ્યારે પારણાનો સમય આવે છે. ત્યારે આયંચિલથી જ પારણા કરે છે. આ રીતે

પાશ્વ પરિહારિણો ભવન્તિ, તેઽપિ સ્વલુ-અનુપરિહારિણઃ પળ્પાસં તત્તપઃ સમાચરન્તિ તદનન્તરં કલ્પસ્થિતન એકકલ્પે પળ્પાસાવધિકં પરિહારતપઃ સમાસાદયતિ । તસ્ય ચૈકોઽનુપરિહારી ભવતિ, તન્મધ્યે ચાઽપર એકઃ કલ્પસ્થિતો ભવતિ, ઇત્યેવં રીત્યા સ્વલુ પરિહારવિશુદ્ધં તપોઽષ્ટાદશમિર્માસૈઃ પરિપૂર્ણં ભવતિ, પરિપૂર્ણં ચ તસ્મિન્ પુનઃ સ્તદેવ પરિહારતપઃ કેચિદન્યે સ્વશક્ત્યનુમારં પ્રતિપદ્યન્તે, કેચિત્પુનર્જિન-કલ્પં પ્રતિપદ્યન્તે, કેચિદન્યેતુ-ગચ્છમેવ વા પ્રવિશન્તિ । પરિહારવિશુદ્ધિકાશ્ચ સ્થિતકલ્પે આઘ ચરમતીર્થં કરતીર્થયોરેવ ભવન્તિ નતુ-મધ્યમતીર્થેષુ ઇતિ ભાવઃ । સૂક્ષ્મસામ્પરાય સંયમચારિત્રવન્તુ-શ્રેણીમારોહતઃ પ્રવત્તો વા સમ્ભવતિ, શ્રેણિસ્તાવદ્

માત્ર તક તપ કરકે પરિહારિ અનુપરિહારિ બન જાતે હૈં ઓર જો અનુ-પરિહારિ થે વે પરિહારિ બન જાતે હૈં । વે અનુપરિહારિ ખી પરિહારિ બન કર છહ મહીનોં તક વહી તપ કરતે હૈં । તત્પશ્ચાત્ કલ્પસ્થિત એક સાધુ છહ માત્ર તક પરિહાર તપ કરતા હૈ । ડસકા એક અનુપરિહારિ હોતા હૈ, ડનમેં સે દૂસરા એક કોઈ કલ્પસ્થિત હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર પરિહાર વિશુદ્ધ તપ અઠારહ મહીનોં મેં પરિપૂર્ણ હોતા હૈ ।

જય પરિહાર વિશુદ્ધ તપ પરિપૂર્ણ હો જાતા હૈ તય કોઈ-કોઈ અપની શક્તિ કે અનુસાર પુનઃ ડસ તપ કા અનુષ્ઠાન કરતે હૈં, કોઈ જિનકલ્પ કો અંગીકાર કર લેતે હૈં ઓર કોઈ અપને ગચ્છ મેં શામિલ હો જાતે હૈ । સ્થિતકલ્પ મેં, આઘ ઓર અન્તિમ તીર્થં કર કે તીર્થ મેં હી પરિહાર વિશુદ્ધિક હોતે હૈં, મધ્ય કે વાઈસ તીર્થં કરોં કે શામ્બ મેં નહીં હોતે ।

સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર યા તો શ્રેણી ચઢતે સમય હોતા હૈ યા

છ માસ સુધી તપ કરીને પરિહારિ અનુપરિહારિ થઈ જાય છે અને જેઓ અનુપરિહારિ હોય છે તેઓ પરિહારિ બની જાય છે તે અનુપરિહારિ પણ પરિહારિ બની જઈને છ માસ સુધી તે જ તપ કરે છે ત્યાર બાદ કલ્પ-સ્થિત એક સાધુ છ માસ સુધી પરિહાર તપ કરે છે તેના એક અનુપરિહારિ હોય છે તેમાથી બીજો એક કોઈ કલ્પસ્થિત થાય છે. આ રીતે પરિહાર વિશુદ્ધ તપ ૧૮ માસમાં પરિપૂર્ણ થાય છે.

જ્યારે પરિહારવિશુદ્ધ તપ પરિપૂર્ણ થઈ જાય છે ત્યારે કોઈ કોઈ પોતાની શક્તિ મુજબ પુનઃ તે તપનું અનુષ્ઠાન કરે છે, કોઈ જિનકલ્પને અંગીકાર કરી લે છે જ્યારે કોઈ પોતાના ગચ્છમાં સામેલ થઈ જાય છે. સ્થિતકલ્પમાં, આઘ અને અન્તિમ તીર્થં કરના તીર્થમાં જ પરિહારવિશુદ્ધિક થાય છે, મધ્યના બાવીસ તીર્થં કરના શાસનમાં થતાં નથી.

સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર કાંતો શ્રેણી ચઢતી વખતે થાય છે અથવા

દ્વિવિધા, ઔપશમિકી-ક્ષાયિકી ચ । તત્રૌપશમિકી શ્રેણિસ્તાચદ્ અનન્તાલુચ્ચન્ધિનો મિથ્યાત્વાદિત્રયં સ્ત્રી-નપુંસકવેદાઃ, હાસ્યરત્યાદિષટ્કમ્, અપત્યાશ્વાના-વરણમ્, સંજ્વલનશ્ચેતિ, અસ્થાઃ સ્વલ્લ ઔપશમિકશ્રેણેશરમ્મકોઽપ્રમત્તસંયતો ભવતિ । સૂક્ષ્મઃ શ્લક્ષ્ણાવયવઃ સમ્પરાયઃ ક્રોધાદિકપાયઃ સંસારહેતુર્યત્ર સ સૂક્ષ્મ-સમ્પરાયસંયમઃ, સ ચો-પશાન્તકપાયોઽપિ સ્વલ્પઘટ્યચલામાત્ દાવાનલ-દગ્ધાક્ષ્ણનવૃક્ષો યથો-દક સિશ્વનાદિ લામાદકુરાદિ સ્વરૂપ સુપદર્શયતિ દ્વમેદ-સદોરક-મુલવસ્ત્રિકાદિષુ મમત્વ સમીરણેન સંઘર્ષદાનઃ વર્ષાગ્નિઃ-ચારિ-ત્રેન્ધનમ્ આમૂલતો દહન્ પ્રતિવિશિષ્ટા-ઽધ્યવસાયાત્ સવત્ પ્રચ્ચાલયતિ ।

શ્રેણી સે ગિરતે સમય હોતા હૈ । શ્રેણી દો પ્રકાર કી હોતી હૈ । ઉપ-શમ શ્રેણી ઔર ક્ષપક શ્રેણી । મોહનીય કર્મ કી પ્રકૃતિયોં કા ઉપશ-મન કરતે હુએ ઉંચે ચઢના ઉપશમ શ્રેણી હૈ ઔર ઉનકા ક્ષપણ કરતે હુએ આગે પઢના ક્ષપક શ્રેણી હૈ । દોનોં મેં સે કિસી સી શ્રેણીકા આરંભ અષ્ટમ ગુણ સ્થાન વર્તી અપ્રમત્ત મુનિ હી કરતા હૈ । ઉપશમ શ્રેણી કરને ચાલા મુનિ જબ આઠવેં ગુણસ્થાનસે નૌવેં ઔર નૌવેં સે દસવેં ગુણસ્થાન મેં પહુંચતા હૈ તબ ઉસે સૂક્ષ્મસમ્પરાય ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । તત્પશ્ચાત્ વહ મુનિ ગ્યાત્ત્વેં ગુણસ્થાન મેં પહુંચતા હૈ ઔર વહાં મોહનીય કર્મ કો એક અન્તર્મુહર્ત્ત કે લિએ પૂર્ણ રૂપ સે ઉપશાન્ત કરતા હૈ । ફિર સંજ્વલન કષાય કા ઉદય હોતા હૈ ઔર શ્રેણી સમ્પન્ન મુનિ પુનઃ ગિર કર દશવેં ગુણસ્થાન મેં આ જાના હૈ । ઉસ સમય સી ઉસસે સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર હોતા હૈ ।

શ્રેણીથી પડતી વખતે થાય છે શ્રેણી બે પ્રકારની હોય છે. ઉપશમ શ્રેણી અને ક્ષપક શ્રેણી મોહનીય કર્મની પ્રકૃતિએ તું ઉપશમ કરતાં થકા ઉંચે ચઢવું ઉપશમ શ્રેણી છે. અને તેમતું ક્ષપણ કરતાં થકા આગળ વધવું ક્ષપક શ્રેણી છે. બંનેમાંથી કેમ પણ શ્રેણીનો આરંભ અષ્ટમ ગુણસ્થાનવર્તી અપ્રમત્ત મુની જ કરે છે. ઉપશમ શ્રેણી કરનારા મુનિ જ્યારે આઠમાં ગુણસ્થાનથી નવમા અને નવમાંથી દશમાં ગુણસ્થાનમાં પહોંચે છે ત્યારે તેને સૂક્ષ્મ સંપરાયચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે. ત્યાર બાદ તે મુનિ અગિયારમા ગુણસ્થાનમાં પહોંચે છે. અને ત્યાં મોહનીય કર્મને એક અંતરમુહર્ત્તને માટે પૂર્ણતયા ઉપશાન્ત કરે છે. પછી સંજ્વલન કષાયનો ઉદય થાય છે. અને શ્રેણી સંપન્ન મુનિ પુનઃ પડીને દશમાં ગુણસ્થાનમાં આવી જાય છે. તે સમયે પણ તેનો સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર હોય છે.

ક્ષાયિકીશ્રેણિ:-અનન્તાનુવન્ધિનઃ કાયાઃ મિથ્યાત્વમિશ્રમમ્યક્ત્વાનિ અપ્રત્યા-
 રુયાનપ્રત્યારુયાનાવરણાનિ, પું-નપુંમક-સ્ત્રીવેદાઃ, હાસ્યાદિષટ્કમ્ સંજ્વલન
 કષાયશ્ચ-ઉ, અસ્યાશ્ચ ક્ષાયિકશ્રેણેઃ-મારોહકઃ અવિરતદેશમમત્તાઽપમત્તાઽવિર-
 તાન્યતમઃ કશ્ચિદ્ વિશુદ્ધમાનાઽધ્યવસાયો ભવતિ । સ સ્વલ્લ અનન્તાનુવન્ધિનઃ
 કષાયાન્ અન્તર્મુહૂર્તેનૈવ યુગપદેવ ક્ષપયતિ, તતશ્ચ-યાવત્ સંજ્વલનકોમકષાય
 સંખ્યેયમાગં ક્ષાયતિ, તથાસતિ-સૂક્ષ્મસમ્પરાયસંયમચારિત્રવાન સમ્પન્નતે ।
 સમસકલમોહનીયકર્મોદ્ગમેતુ એકાદશગુણસ્થાનપ્રાપ્તઃ સન્ ઉપશાન્તકષાયો
 યથારુયાતસંયમચારિત્રવાન ભવતિ, ક્ષપકઃ પુનઃ સમસ્તમોહનીયકર્મોદર્ધિ

ક્ષપક શ્રેણી કરતે વાલા મુનિ એ જ્યે દસવેં ગુણસ્થાન મેં પહુન્ચતા
 હૈ ત્ય ઉસે એ સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચરિત્ર હોના હૈ, વિશેષતા યહી હૈ કિ
 ક્ષપક શ્રેણી વાલા દસવેં સે સીધે વારહવેં ગુણસ્થાન મેં પહુન્ચ કર
 અપ્રતિપાતી હો જાતા હૈ । ઉસકા પતન નહીં હોતા ।

ઉપશામ શ્રેણી મેં અનન્તાનુવન્ધી કષાય, દર્શનત્રિક, અપ્રત્યારુયાની
 કષાય, પ્રત્યારુયાનાવરણીય કષાય, પુરુષ વેદ-સ્ત્રી વેદ-નપુંમક વેદ,
 હાસ્યાદિ ષટ્ક ઓર સંજ્વલન કષાય કા ઉપશામ કરતા હૈ જ્ય કિ
 ક્ષપક શ્રેણી વાલા હસ પ્રકૃતિયોં કા ક્ષય કરતા હૈ ।

ઉપશામ શ્રેણી વાલા મુનિ જ્યે ગ્યારહવેં ગુણસ્થાન કો પ્રાપ્ત કરતા
 હૈ ત્ય અન્તર્મુહૂર્ત સમય કે લિખ ઉસે યથારુયાત ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ
 હોતી હૈ । ક્ષપક શ્રેણી વાલા વારહવેં ગુણસ્થાન કો પ્રાપ્ત કરકે અપ્ર-
 તિપાતી યથારુયાત ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરતા હૈ ।

ક્ષપક શ્રેણી કરવાવાળા મુનિ પણ જ્યારે દશમા ગુણસ્થાનમાં પહોંચે
 છે ત્યારે તેને પણ સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્ર થાય છે. વિશેષતા એ છે કે ક્ષપક
 શ્રેણીવાળા દશમાંથી સીધા બારમા ગુણસ્થાનમાં પહોંચીને અપ્રતિપાતિ થઈ
 જાય છે. તેનું પતન થતું નથી

ઉપશામ શ્રેણીમાં અનન્તાનુવન્ધી કષાય, દર્શનત્રિક, અપ્રત્યાખ્યાની
 કષાય, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાય, પુરુષવેદ-સ્ત્રીવેદ, નપુંસકવેદ, હાસ્યાદિ ષટ્ક
 અને સંજ્વલન કષાયનો ઉપશામ કરે છે જ્યારે ક્ષપક શ્રેણીવાળા આ
 પ્રકૃતિઓનો ક્ષય કરે છે.

ઉપશામ શ્રેણીવાળા મુનિ જ્યારે અગીયારમા ગુણસ્થાનને પ્રાપ્ત કરે છે.
 ત્યારે અન્તર્મુહૂર્ત સમયને માટે તેને યથાખ્યાત ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે
 ક્ષપક શ્રેણીવાળા બારમા ગુણસ્થાનને પ્રાપ્ત કરીને અપ્રતિપાતિ યથાખ્યાત
 ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરે છે.

સમુત્તીર્ણો નિર્ગ્રન્થઃ શ્રમણો યથાચ્ચાત્ચારિત્ર સંયમી સમ્પદ્યતે । યથાચ્ચાત્ચારિત્રઃ
કથિતસ્તીર્થકૃતા તથૈવ યો વર્તતે સ યથાચ્ચાત્ચારિત્રસંયમઃ સમ્પદ્યતે, અકષાયઃ સ્વલ્લ સંયમ
સ્તીર્થકૃતાચ્ચાત્ચારિત્રઃ, સ ચૈકાદશ-દ્વાદશગુણસ્થાનયોઃ સમ્પદ્યતિ, ઉપશાન્તત્વાત્-
ક્ષીણત્વાન્ચ કષાયાભાવ इति भावः । तथा चैवं रीत्या पञ्चदश चारित्रमवगन्तव्यम्
ज्ञानावरणाद्यष्टविधकर्मपुञ्जरयं रिक्तीकरणात् । उक्तञ्चોत्तराध्ययने २८-अध्ययने
३२-३३ गाथायाम् ।

‘સામાહ્યત્થપદમ્-છેદોઽદ્વાવણં ભવે બીયં ।

પરિહારવિસુદ્ધીયં-સુહુમતહસંપરાયં ચ’ ॥૧॥

‘અકષાયમહવસ્વાયં-છુદમ્મત્થસ્ય જિણસસ ચા ।

एवं चयरिस्तकरं-चारित्तं होह आहियं’ ॥૨॥ इति ।

‘સામાયિકમથ પ્રથમં-છેદોપસ્થાપનં ભવેદ્ દ્વિતીયમ્ ।

परिहारविशुद्धिकं-सूक्ष्मं तथा सम्परायश्च’ ॥૩॥

તીર્થકરો ને ‘યથા’ અર્થાત્ જૈસા ‘ચ્ચાત્’ અર્થાત્ કહા હૈ, વૈસા હી
જો હો વહ ‘યથાચ્ચાત્’ કહલાતા હૈ । તીર્થકરો ને કષાયરહિત સંયમ
કહા હૈ । યહ યથાચ્ચાત્ ચારિત્ર ગ્યારહવે’ ઓર નારહવે’ ગુણસ્થાન મેં
હોતા હૈ, इन गुणस्थानों में कषाय उपशान्त या क्षीण हो जाते हैं,
अतएव उनका उदय नहीं रहता ।

इस प्रकार पांच प्रकार का चारित्र समझना चाहिए । ज्ञाना वाणीय
आदि आठ प्रकार के कर्मों के समूह को रिक्त करने से उसे चारित्र
कहते हैं । उत्तराध्ययनसूत्रके २८ वें अध्ययन की ३२-३३ वीं
गाथा में कहा है—

પહલા સામાયિક ચારિત્ર હૈ, દુસરા છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર હૈ, તત્પ

તીર્થકરો એ ‘યથા’ અર્થાત્ જેવું ‘ચ્ચાત્’ અર્થાત્ કહ્યું છે તેવું જ જે
હોય તે ‘યથાચ્ચાત્’ કહેવાય છે તીર્થકરોએ કષાય રહિત સંયમ કહેલ છે
આ યથાચ્ચાત્ ચારિત્ર અગિયારમાં અને બારમાં ગુણસ્થાનમાં થાય છે, આ
ગુણસ્થાનોમાં કષાય, ઉપશાન્ત અથવા ક્ષીણ થઈ જાય છે. આથી તેમનો
ઉદય રહેતો નથી.

આ રીતે પાંચ પ્રકારના ચારિત્ર સમજવા ઘટે જ્ઞાનાવરણીય આદિ ૮
પ્રકારના કર્મોના સમૂહને અપાવવા તેને ચારિત્ર કહે છે. ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના
૨૮ માં અધ્યયનની બત્રીસ-તેત્રીસમી ગાથામાં કહ્યું છે—પહેલું સામાયિક
ચારિત્ર છે, બીજું છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર છે ત્યાર બાદ પરિહાર-

‘અકપાયમથારુચાતં—છદ્ધસ્થસ્ય જિનસ્ય વા, ।

एवं चयस्त्रिक्तकरं—चारित्रं भवति आख्यातम्’ ॥૨॥ इति । ५૯॥

મૂળ—તત્ત્વો દુવિહં, બાહિરણ—અર્ઘિમતરણ ય ॥૬૦॥

છાયા—તપો દ્વિવિધય્, બાહ્ય—આભ્યન્તરશ્ચ ॥૬૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાવત્-કર્માસ્ત્વનિરોધલક્ષણસંવર હેતુત્વેન તપસ્ય ઉક્તત્વાત્, સમ્પતિ-તપસ્યઃ પ્રરૂપયિતું પ્રથમં તરણ વાહ્યાભ્યન્તરભેદેન ભેદદ્વયમાહ—‘તત્ત્વો દુવિહં, બાહિરણ—અર્ઘિમતરણ ય’ इति । तपस्ति—दहति अष्टविधकर्माणि, तप्यति वा तपः कर्तरि असुन् प्रत्ययः, संयमतिशिष्टात्मनः शेषाशयविशोधनार्थं बाह्याभ्यन्तरतापनं तपः उच्यते, शरीरेन्द्रियतापनात्-कर्ममलनिर्दाहकत्वाच्च

આત્મપરિહાર વિશુદ્ધિક ઔર સૂક્ષ્મસામ્પરાય હૈ । પાંચમાં ચારિત્ર યથા રૂપાત હૈ જો છદ્ધસ્થ કો ઔર જિન ભગવાન કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ । કર્મોં કે ચય-સમૂહ કો-રિક્ત-નષ્ટ કરને સે ચારિત્ર સંજ્ઞા સાર્થક હોતી હૈ ॥૫૭॥

‘તત્ત્વો દુવિહં બાહિરણ’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—તપ દો પ્રકાર કા હૈ—બાહ્ય ઔર આભ્યન્તર । ૬૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે તપ કો સંવર કા કારણ કહા ગયા થા, અવ હસ તપ કી પ્રરૂપણા કરને કે લિએ પહેલે હસકે બાહ્ય ઔર આભ્યન્તર ભેદોં કા નિર્દેશ કરતે હૈ—

તપ દો પ્રકાર કા હૈ—બાહ્ય તપ ઔર આભ્યન્તર તપ । જો આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કો તપાના-જલાતા હૈ, વહ તપ કહલાતા હૈ । સંયમ સે યુક્ત આત્મા કા શેષ આશય કો શુદ્ધ કરને કે લિએ બાહ્ય ઔર

વિશુદ્ધિક અને સૂક્ષ્મસાંપરાય છે પાંચમું ચારિત્ર યથારૂપાત છે જે છદ્ધસ્થને અને જિન ભગવાનને પ્રાપ્ત થાય છે. કર્મોના ચય-સમૂહને રિક્ત-નષ્ટ કરવાથી ચારિત્ર સંજ્ઞા સાર્થક થાય છે. ॥૫૮॥

‘તત્ત્વો દુવિહં, બાહિરણ અર્ઘિમતરણ ય’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—તપ બે પ્રકારના છે—બાહ્ય અને આભ્યન્તર. ॥૬૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—અગાઉ તપને સંવરનું કારણ કહેવામાં આવ્યું હતું. હવે તે તપની પ્રરૂપણા કરવાને માટે પહેલાં તેના બાહ્ય અને આભ્યન્તર ભેદોનું નિર્દેશન કરીએ છીએ—

તપ બે પ્રકારના છે—બાહ્ય તપ અને આભ્યન્તર તપ જે ૮ પ્રકારના કર્મોને તપાવે-બાળે છે તે તપ કહેવાય છે. સમયથી યુક્ત આત્માના શેષ આશયને શુદ્ધ કરવા માટે બાહ્ય અને આભ્યન્તર તપાનને તપ કહે છે.

તપો વ્યપદિશ્યતે, તત્ત્વ દ્વિવિધમ્, બાહ્યમાભ્યન્તરશ્ચ । તત્ર-બાહ્ય દ્રવ્યાપેક્ષત્વાત્
-બાહ્યં તપ ઉચ્યતે, આભ્યન્તરશ્ચ-અન્તાકરણવ્યાપારસાધ્યત્વાત્ બાહ્યદ્રવ્યાન-
પેક્ષત્વાચ્ચાઽઽભ્યન્તર તપ ઉચ્યતે તત્રાઽ-સાધનાદિઃ કાયવલેશાત્મકં તપો બહિ-
ર્લેક્ષ્યતે इति બાહ્યં તત્-તપ ઉચ્યતે, અનશનાદિકશ્ચાપિ બાહ્યં તપઃ । પ્રાયશ્ચિત્ત-
વિનયાદિકન્તુ-આભ્યન્તરં તપ ઉચ્યતે, અથવા-પરપ્રત્યક્ષં તપો બાહ્યમ્, સ્વપ્રત્યક્ષં
પુનરાભ્યન્તરં તપ ઉચ્યતે, અથવા-પરપ્રત્યક્ષં તપો બાહ્યમ્, સ્વપ્રત્યક્ષં પુનરાભ્ય-
ન્તરં તપ ઉચ્યતે । તદુમયં તપઃ પ્રત્યેકં ષડ્ભેદાદ્ દ્વાદશવિધં વોચ્યમ્ ॥૬૦॥

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વે કર્માસ્થાનિરોધરૂક્ષણહંભરં પ્રતિ સમિતિ-ગુણિ-

આભ્યન્તર તપન કો તપ કહતે હૈં । શરીર ઔર ઇન્દ્રિયોં કો તસ કરને
કે કારણ યા કર્મ-ફલ કો દગ્ધ કરને કે કારણ મી વહ તપ કહલાતા હૈ ।

બાહ્ય તપ ઔર આભ્યન્તર તપ કે ભેદ સે તપ દો પ્રકાર કા હૈ ।
જિસ તપ મેં બાહ્ય દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા હોતી હૈ વહ બાહ્ય તપ ઔર અન્તઃ
કરણ કે વ્યાપાર સે હી હોને કે કારણ એકં બાહ્ય દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા ન
રખને કે કારણ આભ્યન્તર તપ કહલાતા હૈ । આત્મારના આદિ કાયવલેશ
રૂપ તપ બાહ્ય સે પ્રતીત હોતા હૈ, અન્તઃ બાહ્ય તપ કહલાતા હૈ । અન-
શન આદિ મી બાહ્ય તપ હી હૈં । પ્રાયશ્ચિત્ત, વિનય આદિ કો આભ્યન્તર
તપ કહતે હૈં । યા જો તપ દૂસરોં કો પ્રત્યક્ષ હો સકે વહ બાહ્ય ઔર
જો સ્વપ્રત્યક્ષ હી હો વહ આભ્યન્તર તપ । દોનોં તપોં કે છહ-છહ ભેદ
હૈ, અન્તઃ સબ મિલકર ચારહ પ્રકાર કા તપ હૈ ॥ ૬૦ ॥

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિ-પહેલે યહ પ્રતિપાદન કિયા ગયા થા કિ કર્માસવ

શરીર અને ઇન્દ્રિયોને તપાવવાના કારણે અથવા કર્મભળને દગ્ધ કરવાના
કારણે પણ આ તપ કહેવાય છે.

બાહ્ય તપ અને આભ્યન્તર તપના ભેદથી તપ બે પ્રકારના છે. જે
તપમાં બાહ્ય દ્રવ્યોની અપેક્ષા રહે છે. તે બાહ્ય તપ અને અન્તાકરણના
વ્યાપારથી જ થવાના કારણે અને બાહ્ય દ્રવ્યોની અપેક્ષા ન રાખવાને કારણે
આભ્યન્તર તપ કહેવાય છે આત્મારના આદિ કાયવલેશ રૂપ તપ બહારથી
પ્રાપ્ત થાય છે. આથી બાહ્ય તપ કહેવાય છે. અનશન આદિ પણ બાહ્ય
તપ છે. પ્રાયશ્ચિત્ત વિનય આદિને આભ્યન્તર તપ કહે છે. અથવા જે તપ
બીજાને પ્રત્યક્ષ થઈ શકે તે બાહ્ય અને જે સ્વપ્રત્યક્ષ જ હોય તે આભ્યન્તર
તપ અને તપના છ છ ભેદ છે. આથી બધા મળીને ચાર પ્રકારના તપ છે ॥૬૦॥

તત્ત્વार्થનિર્યુક્તિ—પહેલાં એ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હતું કે

ધર્માનુપ્રેક્ષાપરીપહજય-ચારિત્ર તપસાં હેતુ વક્થનાત્ ક્રમશઃ સમિત્યાદિ ચારિત્રા-
ન્તાનાં પ્રરૂપણં ક્રતમ્, સમ્પતિ-તપઃ પ્રરૂપયિતું પ્રથમં તાવત્ તદ્ભેદદ્વયં પ્રતિ-
પાદયતિ-‘તત્ત્વો દુર્લભઃ, બાહિર-અર્ચિઃ-અંતર-અર્ચિઃ’ इति । તપઃ સ્વલ્પ-કર્મફલ
નિર્દહનરૂપં દ્વિવિધમ્ ભવતિ, જ હામ્-આભ્યન્તરશ્ચ, તત્ર-વાહ્યન્તાવદ્ વક્ષ્યમાણ-
મનશનાદિકં षड્વિધમ્, એવમ્-આભ્યન્તરં ચાઽપિ પ્રાયશ્ચિત્તાદિકં षड્વિધમવગન્ત-
વ્યમ્ । તથા ચ-તદુપયં તપઃ સ્વલ્પ-દ્વાદશવિધં ભવતિ, પરિસેવ્યમાનમ્ આતાપ-
નાદિકં તપઃ કર્મણિ-આત્મ પ્રદેશેભ્યઃ પૃથક્કૃત્ય પરિશાદયતિ, અનશનપ્રાયશ્ચિત્ત-
ધ્યાનાદિતપોઽવશ્યમેવ કર્માસ્રવદ્વારં સંવૃણોતિ, । તથા ચ-તપસા સ્વલ્પ-પૂર્વોપચિત
કર્મ પરિક્ષયો ભવતિ નૂતનકર્મપ્રવેશાભાવશ્ચ, તસ્માત્-સંવરસ્ય-નિર્જરાયાશ્ચ
હેતુભૂતં તપો ભવતીતિભાવઃ ॥૬૦॥

નિરોધ રૂપ સંવર કે કારણ સમિતિ, ગુપ્તિ, ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા, પરીપહ-
જય, ચારિત્ર ઓર તપ હૈં । इनमें से समिति से लेकर चारित्र तक की
प्ररूपणा की जा चुकी है, अब तप की प्ररूपणा करने के लिए सर्व-
प्रथम उनके दो भेदों का कथन करते हैं—

કર્મનિર્દહન રૂપ તપ દો પ્રકાર કા હૈ-બાહ્ય ઓર આભ્યન્તર ।
બાહ્ય તપ અનશન આદિ છહ પ્રકાર કા હૈ ઓર આભ્યન્તર તપ બી
પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ કે ભેદ સે છહ પ્રકાર કા હૈ । दोनों के मिलकर बारह
भेद होते हैं । આરાધન ક્રિયા જાને ચાલા આતાપના આદિ તપ કર્મ
કો આત્મપ્રદેશો સે પ્રથક્ કરકે હટા દેના હૈ ઓર અનશન, પ્રાયશ્ચિત્ત
એવં ધ્યાન આદિ તપ અવશ્ય હી કર્મોં કે આસ્રવદ્વાર કો રોકતા હૈ ।
તપસ્યા કે દ્વારા પૂર્વસંચિત કર્મોં કા ક્ષય (નિર્જરા) હોના હૈ ઓર નવીન

કર્માસ્રવનિરોધ इय संवरना कारण समिति, गुप्ति, धर्म, अनुप्रेक्षा, परीपह-
जय चारित्र, અને તપ છે. આમાંથી સમિતિથી લઈને ચારિત્ર સુધીની
પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે. હવે તપની પ્રરૂપણા કરવા માટે સર્વ પ્રથમ
તેના બે ભેદોનું કથન કરીએ છીએ.

કર્મનિર્દહન इय. તપ બે પ્રકારના છે. બાહ્ય અને આભ્યન્તર બાહ્ય
તપ અનશન આદિ છ પ્રકારના છે. અને આભ્યન્તર તપ પણ પ્રાયશ્ચિત્ત
આદિના ભેદથી ૬ પ્રકારના છે. બંનેના રૂળીને બાર ભેદ થાય છે. આરાધના
કરવામાં આવનાર આતાપના આદિ તપ કર્મોના આત્મપ્રદેશોથી પૃથક્ કરીને
ઠાઠી નાખે છે અને અનશન, પ્રાયશ્ચિત્ત અને ધ્યાન આદિ તપ અવશ્ય જ
કર્મોના આસ્રવદ્વારને રોકે છે. તપસ્યા દ્વારા પૂર્વસંચિત કર્મોના ક્ષય (નિર્જરા)

मूलम्—बाहिरए तवे छव्विहे, अणसणऊणोयरियाभिवखा-
यरिया रसपरिच्चाग—कायकिलेस—संलीणया भेयओ ॥६१॥

छाया—‘बाह्यन्तपः षड्विधम्, अनशनोऽवमौढ्यं—भिक्षाचर्यारसपरित्याग—
कायक्लेश—संलीनताभेदतः’ ॥६१॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रे—संवरहेतुभूततपसो द्वैविध्यं प्रतिपादितम्, बाह्या-
ऽभ्यन्तरभेदात्, सम्प्रति-तस्यैव तपसः प्रथमभेदभूतस्य बाह्य तपसः षड्भेदान् प्ररूप-
यितुमाह—‘बाहिरए तवे छव्विहे’ इत्यादि। बाह्यं बहिर्भवं तपः खलु षड्विधं
वर्तते, तद्यथा—अनशनोऽवमौढ्यं—भिक्षाचर्या—रसपरित्याग—कायक्लेश—संलीनता-
भेदतः। तत्राऽशनपान खाद्य स्वाद्यरूपचतुर्विधाद्वारपरित्यागोऽनशनमुच्यते, तत्र—

कर्मों का आस्त्रय रुक जाता है। इस प्रकार तप संवर और निर्जरा
दोनों का कारण है ॥ ६० ॥

‘बाहिरए तवे छव्विहे’ इत्यादि

सूत्रार्थ—बाह्य तप छह प्रकार का है—(१) अनशन (२) अवमौढ्य
(३) भिक्षाचर्या (४) रसपरित्याग (५) कायक्लेश और (६) प्रति-
संलीनता ॥६०॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्व सूत्र में संवर के कारणभूत तप के दो भेद कहे
हैं—बाह्य और आभ्यन्तर। अब बाह्य तप के भेदों का निरूपण करते हैं।

बाह्य तप छह प्रकार का है—(१) अनशन (२) अवमौढ्य (३)
भिक्षाचर्या (४) रसपरित्याग (५) कायक्लेश और (६) संलीनता।
इनमें से अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप चार प्रकार के आहार
का परित्याग करना अनशन कहलाता है। उपवास, बेला, तेला, चौला

થાય છે અને નવા કમોનો આસ્રવ રોકાઈ જાય છે આ રીતે તપ, સંવર
અને નિર્જરા બંનેનું કારણ છે. ॥૬૦॥

‘बाहिरए तवे छव्विहे’ इत्यादि

सूत्रार्थ—बाह्य तप छ प्रकार का है—(१) अनशन (२) अवमौढ्य (३)
भिक्षाचर्या (४) रसपरित्याग (५) कायक्लेश અને (६) प्रतिसंलीनता.

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रમાં સંવરના કારણભૂત તપના બે ભેદ કહેવામાં
આવ્યા છે બાહ્ય તેમજ આભ્યન્તર હવે બાહ્ય તપના ભેદોનું નિરૂપણ
કરીએ છીએ—

બાહ્ય તપ છ પ્રકારના છે—(૧) અનશન (૨) અવમૌદ્ય (૩) ભિક્ષા-
ચર્યા (૪) રસપરિત્યાગ (૫) કાયકલેશ અને (૬) પ્રતિસંલીનતા આમાંથી
અશન, પાન, બાદ અને સ્વદ્ય રૂપ ચાર પ્રકારના આહારનો પરિત્યાગ

ચતુર્થ પટ્ટાડપ્ટમ-દશમ-દ્વાદશાદિ મેદાનનેકવિધમ્ । તથા-હત્વરિક-મરણકાલિકમેદાદનશનં દ્વિધિયં ભવતિ, તનાપિ-હત્વરિકં શ્રેણિતપઃપ્રભૃતિ મેદંરનેકવિધમ્ । एवं-મરણકાલિકં તપોડપિ સચિચારાડવિચારનિર્હારિમ્ડનિર્હારિમાદિમેદરનેકવિધં ભવતિ । તત્ત્વ દૃષ્ટાડદૃષ્ટફલાડનપેક્ષતયા સંયમસિદ્ધિરાનોચ્છેદકર્મવિનાશધ્યાનાડસમપ્રાપ્ત્યર્થં ક્રિયતે १ સંયમ જ્ઞાનાદિદેતોર્યત્ સ્વાહારપરિમાણન્યૂનં ભુજ્યતે તદ્-અમૌદર્યં યુજ્યતે, તત્ત્વ-દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવપર્યવૌ પશ્ચવિધં ભવતિ, તદ્દિ-સંયમવૃદ્ધ્યર્થં તદ્ગત્ત્વોપપન્નમાર્થં સન્તોષસ્વાધ્યાયાદિ સિદ્ધ્યર્થં

और पंचोडा आदि के सेद से अनशन अनेक प्रकार का है । इत्वरिक अनशन और यादजजीवन अनशन के सेद से भी अनशन दो प्रकार का है । इत्वरिक अनशन श्रेणि तप आदि के सेद से कई प्रकार का है । इसी प्रकार यादजजीवन (मरणकालिक) अनशन के भी सविचार, अविचार, निर्हारिम, अनिर्हारिम के सेद से अनेक सेद हैं । अनशन तप प्रत्यक्ष और परोक्ष लौकिक फल की अपेक्षा न रखते हुए संयम की सिद्धि के लिए, राग को नष्ट करने के लिए, कर्मों का विनाश करने के लिए, ध्यान और ज्ञान की प्राप्ति के लिए किया जाता है ।

સંયમ ઔર જ્ઞાન આદિ કી સિદ્ધિ કે લિઅ અપને આહાર મેં જો કમી કી જાતી હૈં વહ અવમૌદર્ય તપ કહલાતા હૈં । દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, ભાવ ઔર પર્યવ કે સેદ સેં હસકે પાંચ સેદ હૈં । સંયમ કી વૃદ્ધિ કે લિઅ, સંયમ સંબંધી દોષોં કો શાન્ત કરને કે લિઅ, તથા સંતોષ એવં

કરવો. અનશન કહેવાય છે. ઉપવાસ, છઠ્ઠ, અઠ્ઠમ, ચાંદડું અને પંચોળ પગેરના લેદથી અનશન અનેક પ્રકારના છે. ઇત્વરિક અનશન અને યાજ્ઞજીવન અનશનના લેદથી પણ અનશન બે પ્રકારના છે. ઇત્વરિક અનશન શ્રેણિતપ આદિના લેદથી ઘણી જાતના છે. એવી જ રીતે યાવજજીવન (મરણપર્યન્તક) અનશનના પણ સચિચાર, અવિચાર, નિર્હારિમ અનિર્હારિમના લેદથી અનેક લેદ છે. અનશન તપ પ્રત્યક્ષ અને પરોક્ષ લૌકિક ફળથી અપેક્ષા ન રાખતા થકા સંયમની સિદ્ધિને માટે, રાગને નાશ કરવા માટે, કર્મોને વિનાશ કરવા માટે, ધ્યાન તથા જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ અર્થે કરવામાં આવે છે.

સંયમ અને જ્ઞાન આદિની સિદ્ધિ માટે પોતાના આહારમાં બે ઘટ્ટાડો કરવામાં આવે છે તે અવમૌદર્ય તપ કહેવાય છે દ્રવ્ય ક્ષેત્ર, કાળ ભાવ અને પર્યવના લેદથી તેના પાંચ લેદ સંયમની વૃદ્ધિ માટે સંયમ સંબંધી દોષોને શાન્ત કરવા માટે તથા સંતોષ અને સ્વાધ્યાય વગેરેની સિદ્ધિના

ચ ક્રિયતે ૨ મિક્ષાર્થં ચરણં-મિક્ષાચર્યા. સાચાઽષ્ટવિધગોચરાગ્ર સત્તૈષણા-
તદન્યામિગ્રહરૂપા યત્તિ, इयं वृत्तिपरिसंख्यानमिति नाम्नापि प्रसिद्धेति ३ इन्द्रिय-
મદનિગ્રહાર્થં સ્તીર-દહિ-ઘૃતાદિ પ્રણીતપાનયોજનસ્ય પરિવર્જનમ્, 'સ્તીર દહિ-
સપ્તિમાર્ઘ' इत्युत्तराध्ययनोक्तेनाऽऽदिशब्देन तिक्त-कटु-कषायादिरसानामपि
ગ્રહણં બોધ્યમ્ રસપરિત્યાગ इन्द्रियदर्पमिग्नह निद्राविजयश्वाध्यायसिद्ध्यादि-
નિમિત્તં દુગ્ધાદિ પૌષ્ટિકરસપરિત્યાગશ્ચતુર્યં તપ ઉચ્યતે ૪ શુભપરિણામજનક-મોક્ષ
સુખસમ્પાદક-વીરાસનોત્કુટુકાદ્યુગ્રાસન વિધાનાદિ રૂપઃ કાયવલ્લેશઃ, તદ્વૃપં તપઃ
સ્વાધ્યાય આદિ કી સિદ્ધિ કે લિપ ક્રિયા જાતા હૈ ।

મિક્ષા કે લિપ વિચરણ કરના મિક્ષાચર્યા હૈ । યહ ઝાઠ પ્રકાર કે
ગોચરાગ્ર, સાત ઇષણા તથા અન્ય અભિગ્રહ રૂપ હૈ । હસકા દૂધરા નામ
'વૃત્તિપરિસંક્ષેપ' મી પ્રસિદ્ધ હૈ ।

ઇન્દ્રિયો કે ઉન્માદ કા તથા નિદ્રા આદિ કા નિગ્રહ કરને કે લિપ
દૂધ, દહી, ઘૃત આદિ પૌષ્ટિક આહાર પાની કા ત્યાગ કરના રસપરિ-
ત્યાગ તપ હૈ । 'સ્તીર-દહિ-સપ્તિમાર્ઘ' ઉત્તરાધ્યયન મેં યહાં જો 'આદિ
શબ્દ કા પ્રયોગ ક્રિયા હૈ, ઉસસે તિક્ત, કટુ ઓર કષાય આદિ રસો
કા મી ગ્રહણ કર લેના ઝાહિપ । ઇન્દ્રિયો કી પ્રચલતા કો દબાને કે
લિપ, નિદ્રાવિજય કે લિપ તથા સ્વાધ્યાય આદિ કી સિદ્ધિ કે લિપ દૂધ
આદિ પૌષ્ટિક રસો કા ત્યાગ કરના રસપરિત્યાગ નામ કા ઝોથાતપ હૈ ।

શુભ પરિણામો કો ઉત્પન્ન કરને કે લિપ ઓર મોક્ષસુખ કો પ્રાપ્ત

માટે કરવામાં આવે છે.

લિક્ષા માટે વિચરણ કરવું લિક્ષાચર્યા છે. આ ઝાઠ પ્રકારના ગોચરાગ્ર,
સાત ઇષણા તથા અન્ય અભિગ્રહ ૩૫ છે આનું બીજું નામ વૃત્તિપરિ-
સંક્ષેપ' પણ બાણીતું છે.

ઇન્દ્રિયોના ઉન્માદનું તથા નિદ્રા આદિનો નિગ્રહ કરવા માટે દૂધ, દહી,
ઘી આદિ પૌષ્ટિક આહાર-પાણીનો, ત્યાગ કરવો રસપરિત્યાગ તપ છે.
'સ્તીર દહી સપ્તિમાર્ઘ' ઉત્તરાધ્યયનમાં અહીં જે 'આદિ' શબ્દનો પ્રયોગ
કરવામાં આવ્યો છે તેનાથી તીખા, કડવા અને કસાયેલા વગેરે રસોનું પણ
અહણ કરી લેવું જોઈએ. ઇન્દ્રિયોની પ્રબળતાને દબાવવા કાળે, નિદ્રાવિજયને
માટે તથા સ્વાધ્યાય આદિની સિદ્ધિ માટે દૂધ વગેરે પૌષ્ટિક રસોનો ત્યાગ
કરવો રસપરિત્યાગ નામક ચોથું તપ છે.

શુભ પરિણામોને ઉત્પન્ન કરવા માટે અને મોક્ષસુખને પ્રાપ્ત કરવા

-કાયકલેશતપઃ પશ્ચમપુચ્યતે, । તત્ત્વ-કાયકલેશરૂપં તપઃ શારીરિક દુઃખ
તિત્તિશ્ચા સુખાનભિષ્ઙ્ગ પ્રવચન પ્રમાણનાર્થમ્, અથ્થ પરીષદ્ કાયકલેશયોઃ કો
વિભેદઃ ૩ इति चेदुच्यते-પરીષદ્ સ્તાવદ્ યદ્વચ્ચા સ્વલુ-ઉપનિપતિતો ભવતિ,
કાયકલેશસ્તુ-સ્વયંકૃતો મવતીતિ વિશેષો દ્રષ્ટવ્યઃ । બાહ્યદ્રવ્યાપેક્ષત્વાત્-
-અપત્યક્ષત્વાત્ચ કાયકલેશસ્ય બાહ્યત્વવ્યવહારો મવતીતિભાવઃ ૫ સંલીનતા
-ચતુર્વિધા, ઇન્દ્રિય ૧ કષાય ૨ યોગ ૩ વિવિક્તચર્યા ૪ ભેદાત્ તપ્તે-
ન્દ્રિયસંલીનતા-ઇન્દ્રિયગોપનમ્ ૧ કષાયસંલીનતા-કષાયોદયનિરોધઃ, ૨
યોગ સંલીનતા-મનોવાક્કાયયોગાનાં શુભેષુ પ્રવૃત્તિઃ ૩ વિવિક્તચર્યા-

કરને કે લિપ્ત વીરાસન, ઉત્કુટુકાસન આદિ કઠિન આસન કરના
આદિ કાયકલેશ તપ છે । યહ પાંચવાં છે । હસ તપ કા ઉદ્દેશ્ય છે-
શારીરિક કષ્ટ કો સહન કરના, સુખ મેં આસક્તિ ન ઉત્પન્ન હોને દેના
ઔર પ્રવચન કી પ્રમાણના ।

પ્રશ્ન-પરીષદ્ ઔર કાયકલેશ મેં કયા ભેદ છે ?

ઉત્તર-પરીષદ્ વહ કષ્ટ છે જો અપને-આપ આ પડતા છે કિન્તુ
કાયકલેશ સ્વેચ્છા સે ઉત્પન્ન ક્રિયા હોતા હે । યહ દોનો મેં અન્તર છે ।

બાહ્ય દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા હોને સે દૂસરોં કો પ્રત્યક્ષ હોને સે કાય
કલેશ બાહ્ય તપ કહલાતા છે ।

સંલીનતા ચાર પ્રકાર કી છે-(૧) ઇન્દ્રિય સંલીનતા (૨) કષાયસંલી-
નતા (૩) યોગસંલીનતા ઔર (૪) વિવિક્ત ચર્યા સંલીનતા । ઇન્દ્રિયોં
કા ગોપન કરના ઇન્દ્રિયસંલીનતા છે, કષાય કે ઉદય કા નિરોધ કરના

માટે વીરાસન, ઉત્કુટુકાસન વગેરે અઘરાં આસન કરવા કાયકલેશ તપ છે.
આ પાંચમું તપ છે. આ તપનો હેતુ છે-શારીરિક કષ્ટને સહન કરવા, સુખમાં
આસક્તિ ઉત્પન્ન ન થવા દેવી અને પ્રવચનની પ્રભાવના.

પ્રશ્ન-પરીષદ્ અને કાયકલેશમાં શો ભેદ છે ?

ઉત્તર-પરીષદ્ તે કષ્ટ છે જે પોતાની મેળે આવી પડે છે પરન્તુ
કાયકલેશ સ્વેચ્છાપૂર્વક ઉત્પન્ન કરવામાં આવે છે અનેમાં આ તકાવત છે

બાહ્ય દ્રવ્યોની અપેક્ષા હોવાથી, બીજાઓને પ્રત્યક્ષ હોવાથી કાયકલેશ
બાહ્ય તપ કહેવાય છે.

સંલીનતા ચાર પ્રકારની છે-(૧) ઇન્દ્રિયસંલીનતા (૨) કષાયસંલીનતા
(૩) યોગસંલીનતા અને (૪) વિવિક્તચર્યાસંલીનતા ઇન્દ્રિયોં ગોપન કરવું
ઇન્દ્રિયસંલીનતા છે, કષાયના ઉદયનો નિરોધ કરવો કષાયસંલીનતા છે, મન

एकान्ताऽनपातस्त्री पशु पण्डकविवर्जित शयनाऽऽसनसेवनम् ४ तद्रूपं तपः
संलीनता तपः षष्ठं बाह्यं तप उच्यते ६ इति ॥ ६१ ॥

तत्त्वार्थનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વે તાવત્-કર્માસ્ત્રવનિરોધલક્ષગ સંવરસ્ય હેતુતયા તપઃ
પ્રતિપાદિતમ્, તત્કલુ તપો દ્વાદશવિધમ્ તત્ર-પદ્ધિયં ચ હ્યમ્, પદ્ધિયમાભ્યન્તર-
શ્ચેતિપ્રરૂપિતત્વાત્, સમ્પ્રતિ-પ્રથમં પદ્ધિયં બાહ્યં તપો નિરૂપયિતુમાહ-‘બાહિરણ
તવે છન્નિદ્ધે, અણસણ-ઝળોયરિયા-મિકલાયરિયા-રસપરિચ્છાગ-કાયકિલેસ-
સંલીનયા મેયમો’ હતિ । બાહ્ય-બહિર્ભવં બહિર્લક્ષ્યમાણં તત્સ્તાત્ પદ્ધિયં
ભવતિ અનશનાઽવમૌદર્ય-મિક્ષાચર્યા-રસપરિત્યાગ-કાયકલેશસંલીનતા મેદાત્,
તત્ર-અનશનમ્ ૧ અવમૌદર્યમ્ ૨ મિક્ષાચર્યા ૩ રસપરિત્યાગઃ ૪ સંલી-
નતા ૬ કાયકલેશઃ ૫ ઇત્યેવં પદ્ધિયં બાહ્યં તપ ઉચ્યતે । યઃ પુનઃ પ્રવચનોક્ત-

કષાયસંલીનતા હૈ । મન વચન और काय को अशुभ व्यापार में प्रवृत्त
न होने देना योगसंलीनता है और एकान्त, जहां लोगों का आवागमन
न हो तथा जो स्त्री, पशु और पण्डक से रहित हो ऐसे शयनासन का
सेवन करना विविक्तचर्या है । यह प्रति संलीनता नामक छठा बाह्य
तप है ॥ ६१ ॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—પહેલે કર્માસ્ત્રવનિરોધ રૂપ સંવર કા કારણ તપ
હૈ, એસા પ્રતિપાદન કિયા ગયા થા । ઉસ તપ કે ચારહ મેદ હૈ-છહ
બાહ્ય ઓર છહ આભ્યન્તર, યહ મો કહા જા ચુકા હૈ । અવ પ્રથમ
બાહ્ય તપ કે છહ મેદોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ-

बाह्य तप छह प्रकार का है-अनशन, अवमौदर्य, ऊनोदरता,
मिक्षाचर्या, रसपरित्याग, कायकलेश और प्रतिसंलीनता । जो तप
बाह्य हो और बाह्य से जाना जा सके वह बाह्य तप कहलाता है ।

વચન અને કાયાને અશુભ વ્યાપારમાં પ્રવૃત્ત ન થવા દેવી યેગમંલીનતા
છે અને એકાન્ત, જ્યાં લોકોનું આવાગમન ન હોય તથા જે સ્ત્રી, પશુ
અને નપુંસકધી રહિત હોય એવા શયનાસનનું સેવન કરવું વિવિક્તચર્યા છે.
આ પ્રતિમંલીનતા નામક છઠું બાહ્ય તપ છે. ॥ ૬૧ ॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—પહેલાં કર્માસ્ત્રવનિરોધ રૂપ સંવરનું કારણ તપ છે,
એવું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હતું. તે તપના બાર ભેદ છે-છ બાહ્ય તથા
છ આભ્યન્તર એ પણ કહેવામાં આવ્યું છે. હવે પ્રથમ બાહ્ય તપના છ
ભેદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ-

બાહ્ય તપ છ પ્રકારના છે-અનશન, અવમૌદર્ય, ઉનોદરતા, મિક્ષાચર્યા,
રસપરિત્યાગ, કાયકલેશ અને પ્રતિસંલીનતા જે તપ બહાર ગાય અને બહારથી
જાણી શકાય તે બાહ્ય તપ કહેવાય છે.

અદ્વયા સ્વસામર્થ્યાનુવારં દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવચિન્નઃ સન્ અહોરાત્રાભ્યન્તર કર્તૃભ્ય
ક્રિયાશ્ચાપરિત્યજન્ અનશનાદિકં તપશ્ચરતિ સ કર્મનિર્જરાભાગ્ ભવતિ इति
બોધ્યમ્ । પૂર્વોક્તસ્ય-સપ્તદશવિધસ્ય પૃથિવીકાયિકાદિ સંયમસ્ય સામાયિકાદિ
પશ્ચવિધચારિત્રરૂપસ્ય વા સંયમસ્ય પરિપાલનાર્થં રસત્યાગાદિકં તપો ભવતિ ।
તૈન-તપસા જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મણ આત્મપ્રદેશેભ્યઃ પૃથક્કરણરૂપપરિશાટન-
લક્ષણા નિર્જરા ભવતિ । તત્રા-ડશનમ્-આહારઃ, તત્ પરિત્યાગોડનશનમ્, તત્ત્વ
દ્વિવિધમ્ ઇત્વરં-યાવજ્જીવં । તત્રેત્વરમનશનં નમસ્કારસહિતાદિકં ચતુર્થમક્તાદિ
-પાપાસપર્યન્તશ્ચાડવસેયમ્ । યાવજ્જીવં પુન સ્ત્રિવિધમ્, પાદપોષગમનમ્-ઇક્ષિતમ્-

જો સાધક પ્રવચન મેં શ્રદ્ધા રાખતા હુઆ, અપને સ્વામર્થ્ય કે અનુ-
સાર, દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવ કો જાનતા હુઆ, દિનમેં ઓર રાત્રિ મેં
કરને યોગ્ય ક્રિયાઓં કા પરિત્યાગ ન કરતા હુઆ અનશન આદિ તપ
કરતા હૈ, વહ કર્મનિર્જરા કા આત્મા હોના હૈ । પૂર્વોક્ત સત્તરહ પ્રકાર
કે પૃથ્વીકાય સંયમ આદિ કા પાલન કરને કે લિપ યા પાંચ પ્રકાર કે
સામાયિક ચારિત્ર આદિ રૂપ સંયમ કે પાલન કે લિપ રસપરિત્યાગ
આદિ તપ ક્રિયા જાતા હૈ । તપ સે કર્મોં કી નિર્જરા હોતી હૈ અર્થાત્
જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોં કા આત્મપ્રદેશોં સે પૃથક્કરણ રૂપ પરિશાટન
હોના હૈ ।

અશન કા અર્થ હૈ-આહાર, ઉત્સકા ત્યાગ કરના અનશન હૈ । હસકે
દો ભેદ હૈ-ઇત્વરિક ઓર યાવજ્જીવ । ઇત્વરિક અનશન નૌકારસી સે
લેકર ઉપવાસ આદિ છહ મહીને તક કા હોતા હૈ । યાવજ્જીવ અનશન
કે ત્રીન ભેદ હૈ-પાદપોષગમન, ઇન્દ્રિયમરણ ઓર ભક્તવ્રત્યાહવાન ।

જે સાધક પ્રવચનમાં શ્રદ્ધા રાખતો થકો, પેતની શક્તિ મુજબ,
દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાળ-ભાવને જાણતો થકો, દિવસ અને રાત્રિદરમ્યાન કરવા યોગ્ય
ક્રિયાઓનો પરિત્યાગ ન કરતો થકો, અનશન વગેરે તપ કરે છે, તે કર્મ-
નિર્જરાનો ભાગી થાય છે પૂર્વોક્ત સત્તર પ્રકારના પૃથ્વીકાય સંયમ આદિનું
પાલન કરવા માટે અથવા પાંચ પ્રકારના સામાયિક ચારિત્ર આદિ રૂપ
સંયમના પાલન માટે રસપરિત્યાગ આદિ તપ કરવામાં આવે છે. તપથી
કર્મોની નિર્જરા થાય છે અર્થાત્ જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોના આત્મપ્રદેશોથી
પૃથક્કરણ રૂપ પરિશાટન થાય છે.

અશનનો અર્થ છે-આહાર, તેનો ત્યાગ કરવો અનશન છે આના બે
ભેદ છે-ઇત્વરિક અને યાવજ્જીવ ઇત્વરિક અનશન નૌકારશીથી લઇને ઉપ-
વાસ વગેરે છ માસ સુધીનું હોય છે. યાવજ્જીવ અનશનના ત્રણ ભેદ છે-

મક્તપત્યાશ્વાનશ્ચ । તન્ન-પાદપોષગમનં દ્વિવિધમ્, સવ્યાઘાતમ્-નિર્વ્યાઘાતશ્ચ
તન્ન-સતોડ્વ્યાયુષઃ સમુત્પન્નવ્યાધિના સંજાત મહાવેદનેન યત્પ્રાણોત્ક્રાન્તિ કરોતિ
તત્-સવ્યાઘાતમુચ્યતે. નિર્વ્યાઘાતં પાદપોષગમનં તુ-મવ્રજ્યા શિક્ષા પદાદિક્રમેણ
જરાજર્જરિતદેહઃ સન્ન ઉપહિતચતુર્વિધાહાર ષ્ટત્યાશ્વનઃ પ્રશસ્તધ્યાનવ્યાપૃતા-
ન્તઃકરણો જન્તુરહિતં રથ ણ્ડલયાશ્રિત્ય પાદપવત્ એકેન પાર્શ્વેન નિપત્ય પરિસ્પ-
ન્દશૂન્યઃ તાવત્કાલપર્યન્તસાસ્તૈ યાદત્પ્રાણા નોત્ક્રાન્તિ, इत्येवं તાવત્ પાદપો-
ષગમરૂપં દ્વિવિધ મનશનમ્ । શ્રુતવિહિત ક્રિયાવિશેષરૂપ મિજ્જિતમુચ્યતે, તદ્વિશિ-
ષ્ટં મરણમિજ્જિતમરણમ્ । इदमपि-અનશનવ્રતસ્વીકુર્વન્ દીક્ષા-શિક્ષાપદાદિ-

પાપપોષગમન કે દો ભેદ હૈં-સવ્યાઘાત ઓર નિર્વ્યાઘાત । જિસે વ્યાધિ
ઉત્પન્ન હુઈ હૈ ઓર ઘોર વેદના હો રહી હૈ વહ આયુ રોષ હોને પર મી
પ્રાણોં કી જો ઉત્ક્રાન્તિ કરતા હૈ વહ સવ્યાઘાત પાદપોષગમન હૈ ।
જિસ સાધુ કા શરીર મવ્રજ્યા એવં શિક્ષા પદ આદિ કે ક્રમ સે જરા સે
જર્જરિત હો ગયા હો, વહ ચારોં પ્રકાર કે આહાર કા પરિહાર કરકે,
પ્રશસ્ત ધ્યાન મેં ચિત્ત લગાવર જીવ-જન્તુઓં સે રહિત ભૂમિ કા
આશ્રય લેકર પાદપ (વૃક્ષ) કે જેસે એક પસવાડે સે ટેટ જાતા હૈ,
હલન-ચલન બિલકુલ બંધ કર દેતા હૈ ઓર જીવન કે અન્ત તક ડસી
પ્રકાર સ્થિર રહતા હૈ । યહ નિર્વ્યાઘાત પાદપોષગમન કહલાતા હૈ । યહ
દોનો પ્રકાર કા પાદપોષગમન નામક અનશન હૈ ।

શાસ્ત્રવિહિત ક્રિયા કો ઇંગિત કહતે હૈ, ડસસે યુક્ત મરણ ઇંગિત
મરણ સમજના ચાહિયે । ડસ અનશન વ્રત કો મી વહી સ્વીકાર કરતા

પાદપોષગમન ઇંગિતમરણ અને લઘતપત્યાશ્વાન પાદપોષગમનના બે ભેદ છે
સવ્યાઘાત અને નિર્વ્યાઘાત જેને વ્યાધિ ઉત્પન્ન થઈ છે અને ઘોર વેદના
થઈ રહી છે તે આયુષ્ય બહી હોવા છતાં પણ પ્રાણોની જે ઉત્ક્રાન્તિ કરે
છે તે સવ્યાઘાત પાદપોષગમન છે. જે સાધુનું શરીર મવ્રજ્યા અને શિક્ષાપદ
આદિના ક્રમથી ઘડપણથી જર્જરિત થઈ ગયું છે, તે ચારે પ્રકારના આહારનો
ત્યાગ કરીને, પ્રશસ્ત ધ્યાનમાં ચિત્ત પરોવીને, જીવજન્તુઓ વગરની ભૂમિનો
આશરો લઈને, પાદપ (વૃક્ષ)ની જેમ એક પડખેથી સુઈ જાય છે, હલન-
ચલન તદન બંધ કરી દે છે અને જીવનના અન્ત સુધી તે જ હાલતમાં
સ્થિર રહે છે. આ નિર્વ્યાઘાત પાદપોષગમન કહેવાય છે. આ બંને પ્રકારના
અનશન પાદપોષગમન નામક છે.

શાસ્ત્રવિહિત ક્રિયાને ઇંગિત કહે છે, તેનાથી યુક્ત મરણ ઇંગિતમરણ
સમજવું. આ અનશન વ્રતનો પણ તે જ સ્વીકાર કરે છે જે દીક્ષા અને

પ્રતિપત્તિક્રમણેવા-ડડયુવઃ ક્ષીણતામવગમ્ય મૃતીતરવોપકરણો નિર્જન્ટુકસ્યષિલક
 શાયી ભૂત્વા-एकक एव प्रत्याख्यानं चतुर्विधाहारो मर्यादितभूमौ गमनाऽगमनं
 कुर्वन्-चेष्टावान् सम्यग्ज्ञाननिष्ठः प्राणान् परित्यजति, एतत् खलु-इक्षितमरणं
 परपरिकर्मवर्जितञ्च भवति । भक्तपत्याख्यानरूपमनशनं तु-गच्छमध्यवर्तिनः
 संयतस्य बोध्यम्, स खलु गच्छमध्यवर्ती संयतः कदाचित् त्रिविधाहारमत्या-
 ख्याता भवति-कदाचित्-चतुर्विधाहार प्रत्याख्याता भवति, अन्ते च-मृदुसंस्तार-
 काश्रितः कृतसकलपत्याख्यानः शरीराद्युपकरणमदत्तरहितः सत् स्वयं परि-

હૈ જો દીક્ષા ઔર शिक्षा पद आदि के क्रम से आयु को क्षीण हुआ
 समझता है । वह अपने उपकरणों को ग्रहण करके जीव-जन्तु विहीन
 भूमिभाग में चला जाता है । अकेला ही चारों प्रकार के आहार का त्याग
 कर देता है और मर्यादा की गई भूमि में ही गमनागमन करता है । इस
 प्रकार सम्याक् ज्ञान में निष्ठ हो कर समाधि पूर्वक प्राणों का परित्याग
 कर देता है । हंगित मरण परपरि कर्म से वर्जित होता है अर्थात् इस में
 भी दूसरे से किसी प्रकार की सेवा-शुश्रूषा नहीं करवाई जाती ।

भक्तप्रत्याख्यान अनशन गच्छ में रहे हुए साधु को होता है ।
 गच्छ के अन्दर रहा हुआ साधु कभी तीन प्रकार के आहार का, त्याग
 करता है और कभी चारों प्रकार के आहार का परित्याग कर देता
 है । अन्त में संस्तारक पर लेट कर, सब प्रकार का प्रत्याख्यान करके,
 शरीर एवं उपकरण आदि में ममता से रहित होकर, स्वयं नमस्कार

શિક્ષાપદ આદિના ક્રમથી આયુષ્યને ક્ષીણ થયેલું સમજે છે. તે પોતાના
 ઉપકરણોને ગ્રહણ કરીને જીવ-જન્તુ વિહોણી ભૂમિભાગમાં ચાલ્યો જાય છે.
 એકલો જ ચારે પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરી દે છે અને મર્યાદા બાંધેલી
 ભૂમિમાં જ ગમનાગમન કરે છે. આ રીતે સમ્યગ્જ્ઞાનમાં નિષ્ઠ થઈને
 સમાધિપૂર્વક પ્રાણોનો પરિત્યાગ કરી દે છે ઇંગિતમરણ પરપરિકર્મથી વર્જિત
 હોય છે અર્થાત્ આમાં પણ બીજાથી કોઈ પ્રકારની સેવા-શુશ્રૂષા કરવામાં
 આવતી નથી

ભક્તપ્રત્યાખ્યાન અનશન ગચ્છમાં રહેલા સાધુ માટે હોય છે. ગચ્છની
 અંદર રહેલો સાધુ કોઈ વાર ત્રણ પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરે છે અને
 ક્યારેક ચારે પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરે છે. છેવટે સાથરા પર સુઈ
 જઈને, બધા પ્રકારના પદ્યખાણ કરીને, શરીર અને ઉપકરણ વગેરેમાં
 મમતાથી રહિત થઈને સ્વયં નમસ્કાર ગ્રહણ કરીને અથવા પાસે રહેતા

પ્રાહિતનમસ્કારઃ, પ્રત્યાસન્ન શ્રમણકૃતનમસ્કારો વા-ઉદ્વર્તન પાશ પરિવર્તનાદિકં વિદધતુ સમાધિના કાલં કરોતિ, તદેતદ્ સ્વલુ-ભક્તપ્રત્યાખ્યાનરૂપ મનશનમવ સેયમ્ ૧ અવમૌદર્યં તાવત્-અવમ-ન્યૂનમ્-ઉદરં यस્ય સોડવમૌદરઃ તસ્ય આવઃ અવમૌદર્યમ્, ન્યૂનોદરત્વમ્, તત્ત્વ-અવમૌદર્યં તપ શ્વતુર્વિધં ભવતિ । ૧ જઘન્યા-ડવમૌદર્યમ્, ૨ પ્રમાણપ્રાપ્તાડવમૌદર્યમ્, ૩ અર્ધાડવમૌદર્યમ્, ૪ ઉત્કૃષ્ટ ડવમૌદર્યમ્, ૨ । યત્ર-એકા સિકથાદારભ્ય કવલપર્યન્તં ન્યૂન માહારાદિકં ધુજ્યતે તત્-જઘન્યાડવમૌદર્યમ્, દ્વાત્રિંશતપ્રમાણે-આહારે ચતુર્વિંશતિ કવલમાત્રં ધુજ્યતે યત્ર, તત્-પ્રમાણપ્રાપ્તાડવમૌદર્યમ્, ષોડશકવલમાત્રં યત્ર ધુજ્યતે તદ્-અર્ધાડવમૌદર્યમ્, કવલાષ્ટકા દારભ્ય સિકથમાત્રં યત્ર ધુજ્યતે તદ્-ઉત્કૃષ્ટ ડવમૌદર્યમ્ । एतच्च-ન્યૂનતર-ન્યૂનતમા-ડહારે ઉત્કૃષ્ટમ્-ઉત્કૃષ્ટમશ્ચાડવમૌદર્યં ભવતીતિ ૨ શિક્ષા-

ગ્રહણ કરકે યા પાસ મેં રહે હુણ સાધુ કે દ્વારા કૃત નમસ્કાર હોકર, પસવાડા બદલતા હુઆ સમાધિ કે સાથ કાલધર્મ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈં । યહ ભક્તપ્રત્યાખ્યાન અનશન હૈં ।

(૧) ઝનોદરતા કો અવમૌદર્ય કરતે હૈં । અવમૌદર્ય તપ કે ચાર ભેદ હૈં—(૧) જઘન્ય અવમૌદર્ય (૨) પ્રમાણપ્રાપ્ત અવમૌદર્ય (૩) અર્ધાવમૌદર્ય ઓર (૪) ઉત્કૃષ્ટાવમૌદર્ય । એક સીધ સે લેકર એક ગ્રાસ તક કમ આહાર કરના જઘન્ય-અવમૌદર્ય હૈં । પૂર્ણ આહાર વત્રીસ કવલ માના જાતા હૈં, ઉસમેં સે ચૌવીસ કવલ માત્ર યાના પ્રમાણપ્રાપ્ત અવમૌદર્ય હૈં । સોલહ કવલ યાના અર્ધાવમૌદર્ય હૈં ઓર આઠ કવલ સે લેકર એક સીધ તક યાના ઉત્કૃષ્ટાવમૌદર્ય હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈં કિ પરિપૂર્ણ આહાર મેં સે જિતના-જિતના આહાર કમ કિયા જાતા હૈં, ઉતના-ઉતના ઉત્કૃષ્ટ અવમૌદર્ય તપ હોતા હૈં ।

સાધુ દ્વારા કૃતનમસ્કાર થઈને પડખું બદલતો થઈ સમાધિપૂર્વક કાળધર્મને પ્રાપ્ત થાય છે. આ ભક્તપ્રત્યાખ્યાન અનશન છે

(૨) ઝનોદરતાને અવમૌદર્ય કહે છે. અવમૌદર્ય તપના ચાર ભેદ છે—(૧) જઘન્ય અવમૌદર્ય (૨) પ્રમાણપ્રાપ્ત અવમૌદર્ય (૩) અર્ધાવમૌદર્ય અને (૪) ઉત્કૃષ્ટાવમૌદર્ય એક સીધથી લઈને એક કોળિયા સુધી આહાર ઓછો કરવો જઘન્ય-અવમૌદર્ય છે. પૂર્ણ આહાર બત્રીસ કોળિયા માનવામાં આવે છે તેમાંથી ચોવીસ કોળિયા જ ખાવું પ્રમાણપ્રાપ્ત-અવમૌદર્ય છે. સોળ કોળિયા ખાવા અર્ધાવમૌદર્ય છે અને આઠ કોળિયાથી લઈને એક સીધ સુધી ખાવું ઉત્કૃષ્ટાવમૌદર્ય છે તાત્પર્ય એ છે કે પરિપૂર્ણ આહારમાંથી જેટ-જેટલો આહાર ઓછો કરવામાં આવે છે, તેટલું-તેટલું ઉત્કૃષ્ટાવમૌદર્ય તપ થાય છે.

ચર્યા ચ-વૃત્તિ પરિસંખ્યાનરૂપાઽનેકવિધા ભવતિ, ઉત્ક્ષિપ્તચર્યા-નિક્ષિપ્તચર્યાદિ
 મેદાત્ । તત્રોત્ક્ષિપ્ત-નિક્ષિપ્તચર્યાદીનાં સવતુ-કુલ્માષોદનાદીનામન્યતમમભિગ્રહ-
 મભિગૃહ્ય મિક્ષાયૈ પર્યટનમ્-તદન્યસ્ય પ્રત્યાખ્યાનં મિક્ષાચર્યા । તત્ર-દ્રવ્યક્ષેત્ર-
 કાલ-ભાવતો વિમક્તાનભિગૃહ્યાન કૃત્વા મિક્ષાટનં કર્તવ્યમ્, તત્ર-દત્તીનાં
 મિક્ષાણાશ્ચ પરિગ્રહણં કર્તવ્યમ્ । તથા-‘અગ્રૈકાં દત્તિ ગ્રહીष્યામિ દ્વે વા-તિસ્રો
 વા’ એવમ્-મિક્ષાણામપિ પરિગણનં કર્તવ્યમ્, તત્ર દ્રવ્યતોઽભિગ્રહઃ સવતુ-
 કુલ્માષાઽન્ન શુષ્કોદનાદેર્ગ્રહણવિષયે, તત્રસ્ય-એકકસ્યાઽઽચામ્લ પર્ણકસ્ય મળ-
 કાનાઽઽમિગ્રહઃ ક્ષેત્રતોઽમિગ્રહો દેહલીમાગસ્ય જહ્વયોરન્તઃકરણેન મિક્ષાગ્રહણ-

(૩) મિક્ષાચર્યાં કો વૃત્તિપરિસંક્ષેપ ધી કહતે હૈં । યહ અનેક પ્રકાર
 કી હૈં—ઉત્ક્ષિપ્તચર્યા, નિક્ષિપ્તચર્યા આદિ । ઉત્ક્ષિપ્ત યા નિક્ષિપ્ત,
 સવતુ, કુલ્માષ, ઓદન આદિ મૈં સે કિસી કા અભિગૃહ લેકર મિક્ષા
 કે લિં અટન કરના ઓર દૂસરી વસ્તુઓં કા ત્યાગ કરના મિક્ષાચર્યા
 હૈં । દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ સે વિમક્ત વસ્તુઓં કા અભિગ્રહ
 કરકે મિક્ષાટન કરના ચાહિં । અભિગ્રહ દત્તિ ઓર મિક્ષા કા કિયા
 જાતા હૈ, જૈસે—આજ એક હી દત્તિ ગ્રહણ કરુંગા યા દો અથવા ત્રીન હી
 ગ્રહણ કરુંગા । હસી પ્રકાર મિક્ષા કી ધી ગણના-મર્યાદા કર લેની
 ચાહિં । સવતુ, કુલ્માષ, અન્ન યા ઓદન કો ગ્રહણ કરને કે વિષય
 મૈં યા તત્ર આચામ્લ પર્ણક યા મળક કે વિષય મૈં અભિગ્રહ કરના
 દ્રવ્ય સે મિક્ષાચર્યા હૈ । એક પૈર દેહલી કે બાહર ઓર એક મીતર હો
 તો મિક્ષા લૂંગા, હસ પ્રકાર કા અભિગ્રહ કરના ક્ષેત્ર સંબંધી મિક્ષા-

(૩) મિક્ષાચર્યાને વૃત્તિપરિસંક્ષેપ યણુ કહે છે આ અનેક પ્રકારની છે—
 ઉત્ક્ષિપ્તચર્યા, નિક્ષિપ્તચર્યા આદિ ઉત્ક્ષિપ્ત અથવા નિક્ષિપ્ત સવતુ કુલ્માષ
 ઓદન વગેરેમાંથી કોઈને અભિગ્રહ લઈને મિક્ષા માટે અટન કરવું અને
 બીજી વસ્તુઓને ત્યાગ કરવો મિક્ષાચર્યા કહેવાય છે. દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને
 ભાવથી વિમક્ત વસ્તુઓને અભિગ્રહ કરીને મિક્ષાટન કરવું જોઈએ. અભિગ્રહ
 દત્તિ તથા મિક્ષાને કરવામાં આવે છે, જેમ કે—આજે એક જ વસ્તુ ગ્રહણ
 કરીશ અથવા બે અથવા ત્રણનું જ ગ્રહણ કરીશ આ રીતે મિક્ષાની પણ
 ગણના-મર્યાદા બાંધી લેવી જોઈએ. સવતુ, કુલ્માષ અનાજ અથવા ઓદનને
 ગ્રહણ કરવાના વિષયમાં અથવા છાશ આચાર્ય પર્ણક અથવા મંડકના
 વિષયમાં અભિગ્રહ કરવો દ્રવ્યથી મિક્ષાચર્યા છે. એક પગઉંબરા
 બહાર અને બીજો અંદર હોય તો જ મિક્ષા લઈશ આ જાતને અભિગ્રહ
 ક્ષેત્રસંબંધી મિક્ષાચર્યા છે, જ્યારે બધાં જ મિક્ષાકે આદ્યા જશે ત્યારે મિક્ષા

વિષયે કાલતોઽભિગ્રહઃ સર્વેષાં મિશ્રચરાણાં વિનિર્ગમનાનન્તરં ગ્રહણ વિષયે ।
 ભાવતોઽભિગ્રહો હાસ્યરોદનાદિ વ્યાપૃતસ્ય હાયકસ્ય મિશ્રા-દાનવિષયેઽગ્નન્તઃ,
 તદેવં-દ્રવ્યાધન્યતમાઽભિગ્રહં કૃત્વા શેષ મત્યાગુગાનં વૃત્તિ પરિસંખ્યાનરૂપાં
 મિશ્રાચર્યાતપો વ્યપદિશ્યતે ૩ રસપરિત્યાગસ્તાવત્-અનેકવિધઃ, દુગ્ધ દધ્યાદિ
 રસવિકૃતીનાં મત્યાગુગાનં વિરસ-રુક્ષાદીનામભિગ્રહશ્ચ વૌધ્યઃ । તન્ન-રસ્યન્તે-
 ઽતિશયેના-ઽઽસ્વાધન્ને इति રસાઃ દુગ્ધ-દધિ-ઘૃતાદયઃ તેષાં પરિત્યાગઃ પરિ-
 હરણં-રસપરિત્યાગઃ, તદ્વરૂપં તપો રસપરિત્યાગતપઃ ૪ એકાન્તે શરીરોપઘાતરહિતે
 સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ પ્રાણિવર્જિતે સ્ત્રી પશુપન્ડકરહિતે સ્થાને સ્થિતિઃ, શૂન્યાગાર-ગિરિ-
 ચર્યા હૈ । જવ સમી મિશ્રુક નિકલ ચુકેંગે તવ મિશ્રા લૂંગા, હત્યાદિ
 કાલ સંબંધી અભિગ્રહ કરના કાલ સે મિશ્રાચર્યા હૈ । અગર દાતા
 હંસતા હુઆ યા રોતા હુઆ આહાર દેગા તો હી ગ્રહણ કરુંગા, હત્યાદિ
 અભિગ્રહ કરના ભાવ સે મિશ્રાચર્યા હૈ । હસ પ્રકાર હન દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર
 આદિ મેં સે કિસી કા અભિગ્રહ કરકે શેષ કા ત્યાગ કરના વૃત્તિપરિ-
 સંખ્યાન રૂપ મિશ્રાચર્યા તપ હૈ ।

(૪) રસપરિત્યાગ તપ મી અનેક પ્રકાર કા હૈ । દૂધ, દહીં આદિ
 રસવિકૃતિયો' કા ત્યાગ કરના ઓર વિરસ-નીરસ સૂચે આદિ કા
 અભિગ્રહ કરના હસી તપ કે અન્તર્ગત હૈ । જો રસે જાં અર્થાત્
 આસ્વાદન કિયે જાં ઉન્હે' રસ કહતે હૈં, જૈસે દૂધ, દહીં, ઘૃત આદિ,
 ઉન રસો' કા ત્યાગ રસપરિત્યાગ કહલાતા હૈ ।

(૫) એકાન્ત, શારીરિક વ્યાધાત સે વર્જિત, સૂક્ષ્મ ઓર સ્થૂલ

ગ્રહણ કરીશ વગેરે કાળ સંબંધી અભિગ્રહ કરવો, કાળથી લિક્ષાચર્યા છે
 જે દાતા હંસતા હંસતા અથવા રડતા રડતા આહાર આપશે તો જ ગ્રહણ
 કરીશ વગેરે અભિગ્રહ કરવો, ભાવથી લિક્ષાચર્યા છે આવી રીતે આ દ્રવ્ય,
 ક્ષેત્ર વગેરેમાંથી કોઈનો અભિગ્રહ કરીને શેષનો ત્યાગ કરવો એ વૃત્તિપરિ
 સંખ્યાન રૂપ લિક્ષાચર્યા તપ છે.

(૪) રસપરિત્યાગ તપ પણ અનેક પ્રકારના છે. દૂધ, દહીં આદિ
 રસવિકૃતિઓનો ત્યાગ કરવો અને વિરસ-નીરસ રસ આદિનો અભિગ્રહ
 કરવો આ તપના જ અન્તર્ગત છે જે રસી શકાય અર્થાત્ આસ્વાદન
 કરી શકાય તેમને રસ કહે છે, જેવી રીતે દૂધ, દહીં, ઘી આદિ :સે નો
 ત્યાગ રસપરિત્યાગ કહેવાય છે.

(૫) એકાન્ત, શારીરિક વ્યાધાતથી વર્જિત, સૂક્ષ્મ અને સ્થૂળ પ્રાણિ-

ગુહાદૌ સમાધ્યર્થ નિવસનં કાયકલેશથાઽને કવિધઃ, આતાપનાદિકમ્-વીરાસનમ્-
 ઉત્કુટુકામનમ્ એકપાર્શ્વશાયિત્વમ્-દંડાયતશાયિત્વમ્-અપ્રાવૃત્તાદિકમ્-કેશ-
 લુશ્ચનશ્ચ ઽગન્તવ્યમ્ ૬ સંલીનતા તાવત્-ઇન્દ્રિય-કષાય-યોગ-વિવિક્તચર્યા
 મૈદાત્ ચતુર્વિધા । ઇન્દ્રિયકષાયયોગાનાં શુભેષુ પ્રવૃત્તિરિન્દ્રિયકષાયયોગસંલી-
 નતા ચતુર્થી-વિવિક્તશય્યા, ણ્યા-વિવિક્તશયનાસનસેવનતા-इत्यपि कथ्यते ६
 इत्येवं पञ्चविधवाह्यतपसा खलु संसारसङ्गत्यागः-शरीरलघुत्वम्-इन्द्रियविजयः
 संयमरक्षणं-ज्ञानावरणादि कर्म निर्जलणश्च समासाद्यते संयतैः-श्रमणैः इति ॥२१॥

પ્રાણિયોં સ્થે રહિત એવં સ્ત્રી પશુ તથા નપુંસક જ્યાં ન હો એસે સ્થાન મેં
 રહના-સમાધિ કે લિએ સૂને ઘર યા પર્વત ત્રી ગુફા આદિ મેં નિવાસ
 કરના કાયકલેશ હૈ । ઉસકે અનેક ભેદ હૈ, જેહે—આતાપના લેના, વીરાસન
 કરના, ઉત્કુટુક આસન કરના, એક હી પછવાડે સે શયન
 કરના, દંડાયત (દંડ ત્રી તરહ લંબા) હોકર શયન કરના જીર્ણશીર્ણ
 રાખના, અલ્પ મૂલ્ય વસ્ત્ર રાખના કેશલોચ કરના આદિ ।

(૬) સંલીનતા—હસકે ચાર ભેદ હૈ—ઇન્દ્રિય સંલીનતા, કષાય-
 સંલીનતા, યોગ સંલીનતા ઓર વિવિક્તચર્યા । ઇન્દ્રિયોં ત્રી અશુભ
 પ્રવૃત્તિ ન હોને દેના ઇન્દ્રિય સંલીનતા, કષાયોં ત્રી પ્રવૃત્તિ ન હોને દેના
 કષાય સંલીનતા ઓર યોગોં ત્રી અશુભ પ્રવૃત્તિ ન હોને દેકર શુભ
 પ્રવૃત્તિ કરના યોગ સંલીનતા હૈ । સ્ત્રી આદિ સે ર્જિત શયન-આસન
 કા સેવન કરના વિવિક્તશય્યા નામક સંલીનતા હૈ ।

એથી રહિત અને સ્ત્રી, પશુ તથા નપુંસક જ્યાં ન હોય એવા સ્થાનમાં
 વાસ કરવો—સમાધિ માટે સુના ઘર અથવા પર્વતની ગુફા આદિમાં નિવાસ
 કરવો કાયકલેશ છે તેના અનેક ભેદ છે, જેવાં કે—આતાપના લેવી, વીરાસન
 કરવું, ઉત્કુટુક આસન કરવા, એક જ પડખે શયન કરવું, દંડાયત (દંડની
 જેમ લાંબા) થઈને શયન કરવું, છૂર્ણશીર્ણ વસ્ત્રો રાખવા, અલ્પમૂલ્ય વસ્ત્ર
 રાખવા, કેશલોચ કરવો વગેરે.

(૬) સંલીનતા—આના ચાર ભેદ છે—ઇન્દ્રિયસંલીનતા, કષાયસંલીનતા,
 યોગસંલીનતા અને વિવિક્તચર્યા ઇન્દ્રિયોની અશુભ પ્રવૃત્તિ ન થવા દેવી
 ઇન્દ્રિયસંલીનતા, કષાયોની પ્રવૃત્તિ ન થવા દેવી કષાયસંલીનતા અને યોગોની
 અશુભ, પ્રવૃત્તિ ન થવા દઈ શુભ પ્રવૃત્તિ કરવી યોગસંલીનતા છે. સ્ત્રી
 આદિથી વર્જિત શયન-આસનનું સેવન કરવું વિવિક્તશય્યા નામક સંલીનતા છે.

આ રીતે છ પ્રકારના બાહ્ય તપથી સંસાર તરફથી આસક્તિનો ત્યાગ

મૂલમ્—અઽવિંમતરણ તવે છવિવહે, પ્રાયશ્ચિત્ત-વિનય-વૈયા-
વચ્ચ-સજ્ઞાય-જ્ઞાણ-વિડુસગમેયઓ ॥૬૨॥

છાયા—આશ્યન્તરં તપઃ ષડ્વિધમ્, પ્રાયશ્ચિત્ત-વિનય-વૈયાવૃત્ય સ્વાધ્યાય-
ધ્યાનવ્યુત્સર્ગભેદતઃ ॥૬૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ તાત્ત્વ-વાહ્યાઽશ્યન્તરભેદેન તપસો દ્વૈવિધ્યસ્યોક્ત
ત્વાત્ તત્ત્વ પૂર્વસૂત્રે ષડ્વિધં વાહ્યં તપઃ પ્રરૂપિતમ્, સમ્પતિ-ષડ્વિધમેવાઽશ્યન્તરં
તપઃ પ્રતિપાદયિતુમ્નાહ—‘અઽવિંમતરણ તવે છવિવહે’ ઇત્યાદિ । તથા ચ-પ્રાય-
શ્ચિત્તમ્, વિનયઃ, વૈયાવૃત્યમ્, સ્વાધ્યાયઃ, ધ્યાનમ્, વ્યુત્સર્ગઃ, ઇત્યેવં ષડ્વિધં

હસ પ્રકાર છહ પ્રકાર કે વાહ્ય તપ સે સંસાર કે પ્રતિ આસક્તિ
કા ત્યાગ હોતા હૈ, શારીરિક લઘુતા આતી હૈ, ઇન્દ્રિયોં પર વિજય પ્રાપ્તી
હોતી હૈ, સંયમ કી રક્ષા હોતી હૈ ઓર જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોં કી
નિર્જરા હોતી હૈ ॥૬૧॥

‘અઽવિંમતરણ તવે છવિવહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—આશ્યન્તર તપ કે છહ ભેદ હૈ—(૧) પ્રાયશ્ચિત્ત (૨) વિનય
(૩) વૈયાવૃત્ય (૪) સ્વાધ્યાય (૫) ધ્યાન ઓર (૬) વ્યુત્સર્ગ ॥૬૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે વાહ્ય ઓર આશ્યન્તર યે તપ કે દો ભેદ
કહે થે, હસમેં સે પૂર્વસૂત્ર મેં વાહ્ય તપ કે છહ ભેદોં કા નિરૂપણ કિયા
ગયા અવ આશ્યન્તર તપ કે છહ ભેદોં કા પ્રતિપાદન કરને કે લિપ
કહતે હૈ—

(૧) પ્રાયશ્ચિત્ત (૨) વિનય (૩) વૈયાવૃત્ય (૪) સ્વાધ્યાય (૫) ધ્યાન
ઓર (૬) વ્યુત્સર્ગ, યહ છહ પ્રકાર કા આશ્યન્તર તપ હૈ । યે પ્રાયશ્ચિત્ત

થાય છે, શારીરિક લઘુતા આવે છે, ઇન્દ્રિયો પર વિજય પ્રાપ્ત થાય છે,
સંયમનું રક્ષણ થાય છે અને જ્ઞાનાવરણ વગેરે આઠ કર્મોની નિર્જરા
થાય છે. ॥૬૧॥

અઽવિંમતરણ તવે છવિવહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—આશ્યન્તર તપના છ ભેદ છે—(૧) પ્રાયશ્ચિત્ત (૨) વિનય (૩)
વૈયાવૃત્ય (૪) સ્વાધ્યાય (૫) ધ્યાન અને (૬) વ્યુત્સર્ગ. ॥૬૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા વાહ્ય અને આશ્યન્તર એમ તપના બે ભેદ
કહેવામાં આવ્યા હતા. આમાંથી પૂર્વસૂત્રમાં વાહ્ય તપના ભેદોનું નિરૂપણ
કરવામાં આવ્યું હવે આશ્યન્તર તપના છ ભેદોનું પ્રતિપાદન કરવા માટે
કહીએ છીએ—

(૧) પ્રાયશ્ચિત્ત (૨) વિનય (૩) વૈયાવૃત્ય (૪) સ્વાધ્યાય (૫) ધ્યાન
અને (૬) વ્યુત્સર્ગ, આ છ પ્રકારના આશ્યન્તર તપ છે. આ પ્રાયશ્ચિત્ત વગેરે
ત૦ ૫૯

સ્વલ્પાભ્યન્તરં તપ ઉચ્યતે, મનોનિયમનાર્થત્વા દેતેપામાભ્યન્તરત્વેન વ્યપદેશો
ભવતિ। તત્ર પ્ર-પ્રકૃષ્ટોડયઃ, પ્રશસ્તઃ શુભાવહો વિધિર્યસ્ય શ્રમણલોકસ્ય સ પ્રાયઃ,
પ્રકૃષ્ટચારિત્રઃ તસ્ય પ્રાયસ્ય-પ્રકૃષ્ટચારિત્રસ્ય શ્રમણલોકસ્ય ચિત્તં ચસ્મિન્ કર્મણિ
તત્-પ્રાયશ્ચિત્તમ્, આત્મવિશુદ્ધિકારકઃ ક્રિયાવિશેષ ઉચ્યતે । યદ્વા-પ્ર-પ્રણટઃ-
ગતોડયઃ પ્રાયઃ અપરાધઃ, તસ્ય ચિત્તં-શુદ્ધિઃ પ્રાયશ્ચિત્તમ્ પ્રમાદોત્પન્ન દોષનિવા-
રણં પ્રાયશ્ચિત્તમ્ । તથાચોક્તમ્—

‘પ્રાય’ इत्युच्यते लोकश्चित्तं तस्य मनो भवेत् ।

तस्य शुद्धिकरं कर्म प्रायश्चित्तं तदुच्यते ॥ इति ॥ १

પર્યાયજ્યેષ્ઠેષુ મુનિ પ્રભૃતિષુ સમાદરો વિનયઃ ૨ કાયિકચ્ચેષ્ટયા-દ્રવ્યાન્ત-
રેણ ચોપાસનં વૈયાવૃત્યમ્ ૩ શરીરપ્રવૃત્યા-દ્રવ્યાન્તરેણ વા ગ્લાનસ્ય-મુનેઃ પાદ-
આદિ મન કો નિયંત્રિત કરને વાળે હૈં. હસ કારણ હન્હે આભ્યન્તર
કહા હૈ । ‘પ્ર’ અર્થાત્ પ્રકૃષ્ટ (ઉત્કૃષ્ટ), ‘અય’ અર્થાત્ અપ્રશસ્ત-શુભ-
કર વિધિ કો ‘પ્રાયઃ’ કહતે હૈં જિસ કા અર્થ હૈ ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્ર । પ્રકૃષ્ટ
ચિત્ત વાળે સાધુજનો કા ‘ચિત્ત’ જિસમૈં હો વહ ‘પ્રાયશ્ચિત્ત’ કહલાતા
હૈ । આત્મ શુદ્ધિ કરને વાળે ક્રિયાવિશેષ કો પ્રાયશ્ચિત્ત કહતે હૈં । અથવા
‘પ્રાયઃ’ કા અર્થ અપરાધ હૈં, ઉસ ચિત્ત અર્થાત્ શોધન કો પ્રાયશ્ચિત્ત
કહતે હૈં । કહા મી હૈં—

‘પ્રાયઃ’ કા અર્થ હૈં લોગ ઓર ‘ચિત્ત’ કા અર્થ હૈં—ઉસકા મન ચિત્ત
કી શુદ્ધિ કરને વાલા કૃત્ય પ્રાયશ્ચિત્ત કહલાતા હૈ ॥૧॥

દીક્ષાપર્યાય મૈં જ્યેષ્ઠ મુનિ આદિ કા આદર કરના વિનય હૈ ।
કાયિક વ્યાપાર સે અથવા અન્ય દ્રવ્યો સે ઉપાસના કરના વૈયાવૃત્ય

મનને અંકુશમાં રાખનારાં છે, આ કારણે એમને આભ્યન્તર કહેવામાં આવ્યા
છે. ‘પ્ર’ અર્થાત્ પ્રકૃષ્ટ (ઉત્કૃષ્ટ) ‘અય’ અર્થાત્ અપ્રશસ્ત-શુભકર વિધિને
‘પ્રાય’ કહે છે એનો અર્થ ઉત્કૃષ્ટ ચારિત્ર પ્રકૃષ્ટ ચિત્તવાળા સાધુપુરુષોનું
‘ચિત્ત’ એમાં હોય તે ‘પ્રાયશ્ચિત્ત’ કહેવાય છે. આત્મશુદ્ધિ કરનાર ક્રિયા.
વિશેષને પ્રાયશ્ચિત્ત કહે છે અથવા ‘પ્રાયઃ’નો અર્થ અપરાધ છે. તે ‘ચિત્ત’
અર્થાત્ શોધનને પ્રાયશ્ચિત્ત કહે છે. કહ્યું પણ છે—‘પ્રાયઃ’નો અર્થ થાય છે
લોક અને ચિત્તનો અર્થ થાય છે—તેનું મન ચિત્તની શુદ્ધિ કરનાર કૃત્ય
પ્રાયશ્ચિત્ત કહેવાય છે. ॥૧॥

દીક્ષાપર્યાયમાં જ્યેષ્ઠ મુનિ આદિને આદર કરવો વિનય છે. કાયિક
વ્યાપારથી અથવા અન્ય દ્રવ્યોથી ઉપાસના કરવી વૈયાવૃત્ય છે. શરીરથી

संवाहनादिभिराराधनं वैयावृत्यम् । ज्ञानभावनार्थं मूलसूत्रपठनं स्वाध्यायः ४
ध्यानं-धर्मशुक्लरूपं ध्यातव्यमिति पञ्चममाभ्यन्तरं ध्यानम् ५ शयनाऽऽसन-
स्थानेषु काय चेष्टायाः परित्यागो व्युत्सर्गः ६ ॥६२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तावत् संवरहेतुत्वेन तपः प्ररूपितम्, तच्च-
द्विविधम्, बाह्यऽभ्यन्तरभेदात् तत्र-बाह्यन्तपः षड्विधमनशनादिकं पूर्वसूत्रे
प्ररूपितम्, सम्प्रति-आभ्यन्तरं तपः षड्विधं भवतीति प्ररूपयितुमाह-‘अहिं-
सर ए तवे छविहे प्रायश्चित्त-विनय वैयावृत्य सज्ज्ञाय-ज्ञाण-‘विउ-
सर्गमेयञ्चो’ इति । आभ्यन्तरं तपः षड्विधम्, प्रायश्चित्त-विनयवैयावृत्य
स्वाध्याय-ध्यान-व्युत्सर्गभेदतः इति, तथा च-प्रायश्चित्तं, विनयवैयावृत्यं-

है । शरीर से रूग्ण मुनि के पांच दवाना अथवा अन्य प्रकार से उसकी
आराधना करना वैयावृत्य है । ज्ञान-भावना के लिए मूलसूत्रों का
पठन करना स्वाध्याय है । चित्त को एकाग्र करना ध्यान है या धर्म-
ध्यान और शुक्लध्यान करना ध्यान तप है । काय की चेष्टा का
परित्याग करना व्युत्सर्ग है ॥६२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-—पहले तप को संवर का कारण कहा था । तप के
दो भेद हैं-बाह्य और आभ्यन्तर । बाह्य तप के अनशन आदि
छह भेद हैं, यह पहले सूत्र में प्रतिपादन किया जा चुका है, अब
आभ्यन्तर तप के छह भेद कहते हैं-

आभ्यन्तर तप के छह भेद हैं-(१) प्रायश्चित्त (२) विनय (३)
वैयावृत्य (४) स्वाध्याय (५) ध्यान और (६) व्युत्सर्ग । इस प्रकार

पीडित मुनिना यग द्वावरा अथवा अन्य प्रकारशी तेमनी आराधना करवी
वैयावृत्य छे. ज्ञान-भावना भाटे मूलसूत्रोतुं पठन करवुं स्वाध्याय छे चित्तने
ओकाग्र करवुं ध्यान छे अर्थात् धर्मध्यान अने शुक्लध्यान करवुं ध्यान तप
कायानी चेष्टानो परित्याग करवो व्युत्सर्ग छे. ॥६२॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-—पड़ेलां तपने संवरना कारण इप कड़ेवामां आव्युं.
तपना छे लेद छे-बाह्य तथा आभ्यन्तर बाह्य तपना अनशन आदि छ
लेद छे ओ पड़ेला सूत्रमां प्रतिपादन करवामां आवी गयुं छे, हवे आभ्य-
न्तर तपना छ लेद कहीओ छीओ-

आभ्यन्तर तपना छ लेद छे-(१) प्रायश्चित्त (२) विनय (३) वैयावृत्य
(४) स्वाध्याय (५) ध्यान अने (६) व्युत्सर्ग आरीते प्रायश्चित्त,

સ્વાધ્યાયો-ધ્યાન-વ્યુત્સર્ગ इत्येवं षड्विध आभ्यन्तरं तप उच्यते । मूलोत्तर-
गुणेषु कश्चिदतीचारश्चित्तं मलिनयतीति तत्तु द्वयर्थं प्रायश्चित्तं विहितं भवति,
पापच्छेदकारित्वात् प्रायश्चित्तमुच्यते, प्रायो बाहुल्येन चित्तविशुद्धिहेतुत्वात्-प्राय-
श्चित्तम् १ विनीयते ज्ञानावरणादिकमष्टप्रकारकं कर्माऽपनीयते येन स विनयः २
श्रुतोपदेशेन व्यावृत्ता-श्रुतव्यापारवान्, तस्य भावः-कर्म वा वैयावृत्यम् ३
निर्जरार्थं ग्लानादि सेवाकरणं वैयावृत्यमुच्यते ३ सुष्ठु-मर्यादया काल वेला-
परिहारेण, पौरुष्यापेक्षया वा मूलसूत्रस्याऽऽध्यायः पठनं स्वाध्याय उच्यते ४
ध्यायते चिन्त्यते वस्तुनेने तिष्ठानम्, तच्चाऽऽर्त्त-रौद्रे वर्जयित्वा धर्मशुक्लरूपम्,
प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान और व्युत्सर्ग, ये छह
आभ्यन्तर तप कहलाते हैं । इनका स्वरूप इस प्रकार है ।

(१) प्रायश्चित्त-मूल या उत्तर गुणों में कोई अतिचार लगा हो
और वह चित्त को मलिन बना रहा हो तो उसकी शुद्धि के लिए
प्रायश्चित्त किया जाता है । पाप का छेद (विनाश) करने के कारण वह
प्रायश्चित्त कहलाता है ।

(२) विनय-जिसके सेवन से ज्ञानावरण आदि आठ प्रकार के
कर्म विनीत-दूर होते हैं, वह विनय तप है ।

(३) वैयावृत्य-श्रुत के उपदेश के अनुसार शुभ व्यापारवान् का
भाव या कर्म वैयावृत्य कहलाता है । अर्थात् अपने कर्मों की निर्जरा
के अर्थ ग्लान मुनि की सेवा करना वैयावृत्य तप कहलाता है ।

(४) सु अर्थात् समीचीन रूप से-मर्यादा के साथ-कालवेला का

विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय; ध्यान અને વ્યુત્સર્ગ આ છ આભ્યન્તર તપ
કહેવાય છે. તેમનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે-

(૧) પ્રાયશ્ચિત્ત-મૂળ અથવા ઉત્તરગુણોમાં કોઈ અતિચાર લાગ્યો હોય
તેમજ તે ચિત્તને કલુષિત બનાવતો હોય તો તેની શુદ્ધિ કાજે પ્રાયશ્ચિત્ત
કરવામાં આવે છે, પાપનો છેદ (વિનાશ) કરવાના કારણે તે પ્રાયશ્ચિત્ત
કહેવાય છે.

(૨) વિનય-જેના સેવનથી જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકારના કર્મ વિનીત-
દૂર થાય છે, તે વિનય તપ છે.

(૩) વૈયાવૃત્ય-શ્રુતના ઉપદેશ અનુસાર શુભ વ્યાપારવાનનો ભાવ
અથવા કર્મ વૈયાવૃત્ય કહેવાય છે અર્થાત્ પોતાના કર્મોની નિર્જરા માટે
ઉદ્દાસીન મુનિની સેવા-શુશ્રૂષા કરવી વૈયાવૃત્ય તપ કહેવાય છે.

(૪) સુ અર્થાત્ સમીચીન રૂપથી-મર્યાદા સહિત-કાળ-વેળાનો પરિહાર

एतत्पञ्चममाभ्यन्तरं तपः उच्यते ५ शयने-उपवेशने स्थाने-ऊर्ध्वस्थाने कायचेष्टा-
याः वर्जनं व्युत्सर्ग इत्युच्यते ६ इत्येवं षड्विधं खलत्राभ्यन्तरं तपो व्यपदिश्यते ॥६२॥

મૂલમ્—પ્રાયશ્ચિત્તે તવે દસવિહે, આલોચન પટિક્રમણ—તદુ-
ભયવિવેકવિઉત્સર્ગતવહેદમૂલાવળદુષ્પપારંચિયમેયઓ ॥૬૩॥

છાયા—પ્રાયશ્ચિત્ત દશવિધમ્, આલોચન-પ્રતિક્રમણ-તદુભય-વિવેકવ્યુત્સર્ગ
-તપ-હેદ-મૂલાવસ્થાપ્ય-પારાશ્ચિક્કમેદતઃ, ॥૬૩॥

परिहार करके या पौरुषी का ध्यान रख कर मूल सूत्र का अध्याय
अर्थात् पठन करना स्वाध्याय है ।

(૫) ધ્યાન—જિસકે દ્વારા વસ્તુ કા ચિન્તન કિયા જાય વહ ધ્યાન ।
યહાં આર્ત્તધ્યાન ઓર રૌદ્રધ્યાન કો ત્યાગ કર ધર્મધ્યાન ઓર શુક્લ-
ધ્યાન હી ગ્રહણ કરના ચાહિયે । યહ પાંચવાં આભ્યન્તર તપ હૈ ।

(૬) શયન યા સ્થાન મેં અર્થાત્ બેઠ કર યા खडे होकर काय
संबंधी चेष्टाओं का त्याग करना व्युत्सर्ग है । यह छह प्रकार का
आभ्यन्तर तप है ॥६२॥

‘પ્રાયશ્ચિત્તે દસવિહે’ હત્યાદિ ॥સૂ૦૬૩॥

સૂત્રાર્થ—પ્રાયશ્ચિત્ત દસ પ્રકાર કા હૈ—(૧) આલોચન (૨) પ્રતિક્રમણ
(૩) તદુભય-આલોચન-પ્રતિક્રમણ (૪) વિવેક (૫) વ્યુત્સર્ગ (૬) તપ
(૭) હેદ (૮) મૂલ (૯) અનવસ્થાપ્ય ઓર (૧૦) પારાંચિક ॥૬૩॥

કરીને અથવા પોરસીનું ધ્યાન રાખીને મૂળસૂત્રનું અધ્યયન અથવા પઠન
કરવું સ્વાધ્યાય છે.

(૫) ધ્યાન—જેના વડે વસ્તુનું ચિન્તન કરવામાં આવે તે ધ્યાન અત્રે
આર્ત્તધ્યાન અને રૌદ્રધ્યાનનો ત્યાગ કરીને ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાન જ
ગ્રહણ કરવું જોઈએ. આ પાંચમું આભ્યન્તર તપ છે.

(૬) શયન અથવા સ્થાનકમાં અર્થાત્ ઉભા થઈ ને કે બેસીને, કાયા
સંબંધી ચેષ્ટાઓનો ત્યાગ કરવો વ્યુત્સર્ગ છે.

આ છ પ્રકારના આભ્યન્તર તપ છે. ॥૬૨॥

‘પ્રાયશ્ચિત્ત દસવિહે’ હત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—પ્રાયશ્ચિત્ત દશ પ્રકારના છે—(૧) આલોચન (૨) પ્રતિક્રમણ
(૩) તદુભય-આલોચન-પ્રતિક્રમણ (૪) વિવેક (૫) વ્યુત્સર્ગ (૬) તપ (૭)
હેદ (૮) મૂળ (૯) અનવસ્થાપ્ય અને (૧૦) પારાંચિક. ॥૬૩॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रे—प्रायश्चित्तविनय—वैयावृत्यादिभेदेन पञ्चविध
आभ्यन्तरं तपः प्ररूपितम्, तत्र—प्रथमोपात्तं प्रायश्चित्तं तावद् दशविधं भवतीति
प्रख्यायतुमाह—प्रायश्चित्ते दस्य इत्यादि । प्रायश्चित्तम्—आत्मशुद्धिकारकक्रिया
विशेषो दशविधं वर्तते, आलोचनप्रतिक्रमण—तदुभय—विवेक—व्युत्सर्ग—तप—
छेद—मूलानवस्थाप्यपाराञ्चिक भेदतः । तथा चाऽऽलोचनप्रायश्चित्तम् १ प्रति-
क्रमणप्रायश्चित्तम् २ तदुभयप्रायश्चित्तम् ३ विवेकप्रायश्चित्तम् ४ व्युत्सर्ग-
प्रायश्चित्तम् ५ तपः प्रायश्चित्तम् ६ छेद प्रायश्चित्तम् ७ मूलप्रायश्चित्तम् ८ अन-
वस्थाप्यप्रायश्चित्तम् ९ पाराञ्चिक प्रायश्चित्तम् १०, इत्येवं दशविधं प्रायश्चित्तम् ।
तत्राऽऽचार्याय प्रमादस्य दशदोषविनिर्जितं निवेदनं मालोचनं मुख्यते, एकान्तो

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्व सूत्र में प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य आदि
के भेद से छह प्रकार के आभ्यन्तर तप का निरूपण किया गया, उनमें
प्रथम आभ्यन्तर तप प्रायश्चित्त के दस भेदों का यहां निरूपण
किया जाता है ।

प्रायश्चित्त अर्थात् आत्मशुद्धि कारक क्रिया के दस भेद हैं—(१)
आलोचन (२) प्रतिक्रमण (३) उभय—आलोचन—प्रतिक्रमण (४) विवेक
(५) व्युत्सर्ग (६) तप (७) छेद (८) मूल (९) अनवस्थाप्य और पारां-
चिक । इस प्रकार (१) आलोचन प्रायश्चित्त (२) प्रतिक्रमण प्रायश्चित्त
(३) तदुभयप्रायश्चित्त (४) विवेकप्रायश्चित्त (५) व्युत्सर्गप्रायश्चित्त (६)
तपः प्रायश्चित्त और (१०) पाराञ्चिकप्रायश्चित्त, इस तरह दस प्रकार
का प्रायश्चित्त है ।

(१) आलोचन—आचार्य और उपाध्याय के समक्ष अपने प्रमाद

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रमां प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य आदिनां
लेख्यो छ प्रकारना आभ्यन्तर तपनुं निरूपण करवामा आव्युं, तेमां प्रथम
आभ्यन्तर तप प्रायश्चित्तना दश लेखोनुं अहीं निरूपण करवामा आवे छे—

प्रायश्चित्त अर्थात् आत्मशुद्धिकारक क्रियाना दश लेख छे—(१) आलोचन
(२) प्रतिक्रमण (३) उभय—आलोचन—प्रतिक्रमण (४) विवेक (५) व्युत्सर्ग
(६) तप (७) छेद (८) मूल (९) अनवस्थाप्य अने (१०) पाराञ्चिक आ-
रीने (१) आलोचन (२) प्रायश्चित्त (२) प्रतिक्रमण प्रायश्चित्त (३) तदुभय-
प्रायश्चित्त (४) विवेकप्रायश्चित्त (५) व्युत्सर्गप्रायश्चित्त (६) तपःप्रायश्चित्त
(७) छेदप्रायश्चित्त (८) मूलप्रायश्चित्त (९) अनवस्थाप्यप्रायश्चित्त अने (१०)
पाराञ्चिकप्रायश्चित्त आ रीते दश प्रकारना प्रायश्चित्त छे.

(१) आलोचन—आचार्य अने उपाध्यायनी इमइ पोताना प्रमादनुं दश

पविष्टाय प्रसन्नचित्ताय विज्ञातदोष-देश-कालाय गुरवे सदिनयं वञ्चनारहितस्य शिशुवत् सरलबुद्धेः-शिष्यस्य निजापराधस्य मर्यादया प्रकाशनम्-आलोचनं बोध्यम् १ मिथ्यादुष्कृताभिधानात्-अभिव्यक्तप्रतिक्रियं तावत्-प्रतिक्रमणं नाम प्रायश्चित्तं भवति तद्धि-गुरुणाऽनुज्ञातः शिष्य एव कुर्याद् यत्रालोचनं मिथ्यादुष्कृतदानरूपं-प्रतिक्रमणं चेति द्वयमपि भवेत्तत् २ तदुभयं नामप्रायश्चित्तम् शुद्धस्याऽपि यत्राऽशुद्धत्वेन सन्देह-विपर्ययो (स्तः) भवतः-अशुद्धस्याऽपि च शुद्धत्वेन यश्च निश्चयो भवति तत्राऽऽलोचन-प्रतिक्रमण द्वयं भवतीति भावः ३ सदोषान्नपानोप-करणादिवर्जनं द्विवेको नाम प्रायश्चित्तम् ४ यद्वस्तुनियमितं भवति तद्वस्तु चेत्

को दस दोषों से रहित निवेदन करना आलोचन कहलाता है । अर्थात् एकान्त में बैठे हुए, प्रसन्नचित्त, देश-काल और दोष के स्वरूप के ज्ञाता गुरु के सम्मुख, विनयपूर्वक, वञ्चनभाव से रहित होकर शिशु के समान सरल बुद्धि से शिष्य का अपने अपराधों का निवेदन करना आलोचन नामक प्रायश्चित्त समझना चाहिए ।

(२) प्रतिक्रमण-‘मिच्छामि दुष्कृतं’ ऐसा कह कर प्रतिक्रिया प्रकट करना । गुरु की अनुमति से शिष्य ही प्रतिक्रमण करे ।

(३) तदुभय-किसी अतिचार की शुद्धि के लिए आलोचन और प्रतिक्रमण-दोनों का अनुष्ठान करना तदुभय प्रायश्चित्त है । तात्पर्य यह है कि जहाँ शुद्ध होने पर भी अशुद्ध होने का संदेह या विपर्यय हो या अशुद्ध का भी शुद्ध रूप से निश्चय हो जाय, वहाँ आलोचन-प्रतिक्रमण दोनों किये जाते हैं ।

दोषेથી रहित निवेदन કરવું આલોચન કહેવાય છે અર્થાત્ એકાન્તમાં બેઠેલા, પ્રસન્નચિત્ત, દેશ-કાળ અને દોષના સ્વરૂપના જ્ઞાતા શિષ્યની સન્મુખ, વિનયપૂર્વક વંચનાભાવથી રહિત ધર્મને, બાળકની માફક સરળ બુદ્ધિથી શિષ્યનું પોતાના અપરાધોનું નિવેદન કરવું આલોચન નામક પ્રાયશ્ચિત્ત સમજવું.

(૨) પ્રતિક્રમણ-‘મિચ્છામિ દુષ્કૃતં’ એમ વદીને પ્રતિક્રિયા પ્રકટ કરવી. શિષ્યની અનુમતિથી શિષ્ય જ પ્રતિક્રમણ કરે.

(૩) તદુભય-કોઈ અતિચારની શુદ્ધિ માટે આલોચન અને પ્રતિક્રમણ એ બંનેનું અનુષ્ઠાન કરવું તદુભય પ્રાયશ્ચિત્ત છે. તાત્પર્ય એ છે કે જ્યાં શુદ્ધ હોવા છતાં પણ અશુદ્ધ હોવાની શંકા અથવા ભ્રમ થાય અથવા અશુદ્ધ પણ શુદ્ધ રૂપથી નક્કી થઈ જાય, ત્યારે આલોચન-પ્રતિક્રમણ એમ બંને કરવામાં આવે છે.

સ્વદ્વસ્તગતપાત્રે પતતિ મુલ્યમધ્યે વા ગચ્છતિ, યસ્મિન્ વસ્તુનિ ગૃહીતે વા લોભાદિ કષાયાદિકમુપજાયતે તસ્ય સર્વસ્ય વસ્તુનસ્ત્યાગો વિવેકનામ પ્રાયશ્ચિત્તં વોધ્યમ્ ૪ નિયતકાલં કાયસ્ય-વાચો-મનસશ્ચ ત્યાગરૂપઃ કાયોત્સર્ગઃ વ્યુત્સર્ગનામ પ્રાયશ્ચિત્તમ્ ૫ એવશ્વાઽનશનાઽવમૌદર્યમિક્ષાચર્યાસપરિત્યાગવિવિક્તશય્યાઽસન કાયક્લેશરૂપં વાહ્યં પદ્ધિવિધં તથ સ્તપોનામ પ્રાયશ્ચિત્તમ્ ૬ દિવસ-પક્ષ-માસાદિના દીક્ષા-પર્યાયચ્છેદનં છેદોનામ પ્રાયશ્ચિત્તમ્ ૭ દિવસ-પક્ષ-માસાદિ-વિભાગેન દીક્ષાસ્વીકરણમિત્યર્થઃ ૭ પુનર્મહાત્રનારોપણં મૂલં નામ પ્રાયશ્ચિત્ત મુચ્યતે

૪ વિવેક-દોષયુક્ત અન્ન, પાની, ઉપકરણ આદિ કા વર્ણન કરના વિવેક નામક પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ । જિસ વસ્તુ કા ત્યાગ કર રક્ષા હો વહ અપને પાત્ર મેં પડજાય અથવા મુલ્ય મેં ચલીજાય અથવા જિસ વસ્તુ કા ગ્રહણ કરને પર લોભ આદિ કષાયોં કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ, ઉસ વસ્તુ કા ઉત્સર્ગ-ત્યાગ કરદેના વિવેક નામક પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ ।

(૫) વ્યુત્સર્ગ-નિયમિત સમય પર્યંત કાય, વચન ઓર મન કા ત્યાગ કરના કાયોત્સર્ગ યા વ્યુત્સર્ગ પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ ।

(૬) તપ-અનશન, અવમૌદર્ય, મિક્ષાચર્યા રસપરિત્યાગ, વિવિક્ત શય્યાસન ઓર કાયક્લેશરૂપ છહ પ્રકાર કા તપ કરના તપ નામક પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ ।

(૭) છેદ-દિવસ પક્ષ, માસ આદિ કી દીક્ષા કા છેદન કરના અર્થાત્ ઉસે કમ કર દેના છેદ નામક પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ ।

(૪) વિવેક-દોષયુક્ત અન્ન, પાણી, ઉપકરણ આદિનો ત્યાગ કરવો વિવેક નામક પ્રાયશ્ચિત્ત છે. જે વસ્તુનો ત્યાગ કરી દીધો હોય તે પોતાના પાત્રમાં પડી જાય અથવા મોઢામાં આવી જાય અથવા જે વસ્તુનું ગ્રહણ કરવાથી લોભ આદિ કષાયોની ઉત્પત્તિ થાય છે તે વસ્તુનો ઉત્સર્ગ-ત્યાગ કરી દેવો વિવેક નામક પ્રાયશ્ચિત્ત છે.

(૫) વ્યુત્સર્ગ-નિયમિત સમય સુધી કાયા, વચન અને મનનો ત્યાગ કરવો કાયોત્સર્ગ અથવા વ્યુત્સર્ગ પ્રાયશ્ચિત્ત છે.

(૬) તપ-અનશન, અવમૌદર્ય, ભિક્ષાચર્યા રસપરિત્યાગ, વિવિક્ત શય્યાસન અને કાયક્લેશ રૂપ છ પ્રકરના તપ કરવા તપ નામક પ્રાયશ્ચિત્ત છે.

(૭) છેદ-દિવસ, પક્ષ, માસ આદિની દીક્ષાનું છેદન કરવું અર્થાત્ તેને ઓછા કરી નાખવા છેદ નામક પ્રાયશ્ચિત્ત છે.

८ यस्मिन्नासेदिते वञ्चन कालं व्रतेष्वनवस्थाप्यं कृत्वा पश्चाच्चोर्णं तपः तद्दोषो-
परतो व्रतेषु स्थाप्यते तद् अनवस्थाप्यं नाम प्रायश्चित्तम् ९ एवम्-यस्मिन्प्रति-
षेदिते लिङ्ग-क्षेत्र-काल-तपोदिः पाराश्रिको वहिर्भूतः क्रियते तत्-पाराश्रिकं
नाम प्रायश्चित्तं मुच्यते १० इति ॥६३॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः— पूर्वं तावत् तपो द्विविधं मित्युक्तम् बाह्यमाभ्यन्तरश्च,
तत्र-प्रायश्चित्तादि भेदात् षड्विधे आभ्यन्तरतपसि प्रथमोपात्तस्य प्रायश्चित्तस्य
दशभेदान् प्ररूपयितुमाह-‘प्रायश्चित्ते दसविधे, आलोचन-पण्डिकम्भण-
तदुभय-विशेष-विउह्यगतव-भेद-मूलाणददृष्य पारांचिक भेषओ’
इति । प्रायश्चित्तं पूर्वोक्तचित्तं दिशुद्धिहेतुभूततपः क्रियाविशेषरूपं दशविधं भवति,

(८) मूल-नये सिरे से नरात्रों का आरोपण करना मूल नामक प्रायश्चित्त है ।

(९) अनवस्थाप्य-जिसका सेवन करने पर कुछ काल तक व्रतों में अनवस्थाप्य करके बाद में जिसका आचरण करने से दोष की निवृत्ति होने पर व्रतों में स्थापित किया जाय वह अनवस्थाप्य प्रायश्चित्त कहलाता है ।

(१०) पारांचिक-जिस प्रायश्चिन में लिंग (वेष), क्षेत्र, काल और तप से पारांचिक अर्थात् बाहर कर दिया जाता है, वह पारांचिक नामक प्रायश्चित्त कहलाता है ॥१०॥६३॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले बाह्य और आभ्यन्तरके भेद से तप के दो भेद कहे गए हैं, उनमें से आभ्यन्तर तप के छह भेदों में पहला भेद प्रायश्चित्त बतलाया गया है । उसके दस भेदों की प्ररूपणा करते हैं ।

प्रायश्चित्त अर्थात् चारित्र्य संबंधी लगे हुए दोष की शुद्धि के लिए

(८) मूल-नवेसरथी गडावतनुं आरोपणु करवुं मूल नामक प्रायश्चित्त छे

(९) अनवस्थाप्य-जेनुं सेवन करवाथी थोडा समय सुधी मतोभां अनवस्थाप्य करीने पाछणथी जेनुं आचरणु करवाथी दोषनी निवृत्ति थवाथी मतोभां स्थापित करवामां आवे ते अनवस्थाप्य प्रायश्चित्त कहेवाय छे.

(१०) पारांचिक-जे प्रायश्चित्तमां लिंग (वेश), क्षेत्र, काल अने तपथी पारांचिक अर्थात् गहार करी नाभवामां आवे छे ते पारांचिक नामक प्रायश्चित्त कहेवाय छे. ॥६३॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहेला गहा अने आभ्यन्तर लेहथी तपना जे लेह कहेवामां आव्या छे तेमांथी आभ्यन्तर तपना छे लेहोमां पहेलो प्रायश्चित्त गताववामां आवेला छे. तेना दस लेहोनी प्ररूपणा करीअे छीअे-

प्रायश्चित्त अर्थात् चारित्र्य संबंधी लागेला दोषनी शुद्धि भाटे करवामां

આલોચન-પ્રતિક્રમણ-તદુભય-વિવેક-વ્યુત્સર્ગ-તપ-છેદ-મૂળાનવસ્થાપ્ય-પારા-
શ્ચિત્તભેદતઃ । તથા ચાડ્ડલોચનમ્ ૧ પ્રતિક્રમણમ્ ૨ આલોચન-પ્રતિક્રમણરૂપં
તદુભયમ્ ૩ વિવેકઃ ૪ વ્યુત્સર્ગઃ ૫ તપઃ ૬ છેદઃ ૭ મૂળમ્ ૮ અનવસ્થાપ્ય ૯
પારાશ્ચિકમ્ ૧૦ દશવિધં પ્રાયશ્ચિત્તમ્ । તત્રૈ-કાન્તોપવિષ્ટાય પ્રસન્નચિત્તાય
વિદિતદોષદેશકાલાય ગુરુવે તથાવિદ્યેન શિષ્યેણ સવિનયં સ્વ પ્રમાદનિવેદનં
દશદોષવર્જનપૂર્વકં નિજપ્રમાદપ્રકાશનમ્-આલોચનં નામ પ્રાયશ્ચિત્ત મુચ્યતે ।
તથાચોક્તં દશદોષવિષયે સ્થાનાંગે દશમસ્થાને ।

‘આકંપિય અણુમાણિય જં વિદ્વં યાદરં ચ સુદુર્મં ચ ।

છર્ણાસદ્ધા હલયં બહુજળ અવત્તતસ્સેવિ’ ॥૧॥

‘આકમ્પિત મનુમાનિતં ચદ્દષ્ટં વાદરશ્ચ સૂક્ષ્મશ્ચ ।

છન્નં શબ્દાકુલશ્ચ બહુજનમવ્યવતં તત્સેવી ॥૧॥ઈતિ॥

ક્રિયા જાને વાલા તપશ્ચરણવિશેષ દસ પ્રકાર કા હૈ-(૧) આલોચન
(૨) પ્રતિક્રમણ (૩) તદુભય (૪) વિવેક (૫) વ્યુત્સર્ગ (૬) તપ (૭) છેદ
(૮) મૂળ (૯) અનવસ્થાપ્ય ઓર (૧૦) પારાંચિત । હસ પ્રકાર (૧)
આલોચન (૨) પ્રતિક્રમણ (૩) તદુભય-આલોચન-પ્રતિક્રમણ (૪) વિવેક
(૫) વ્યુત્સર્ગ (૬) તપ (૭) છેદ (૮) મૂળ (૯) અનવસ્થાપ્ય ઓર (૧૦)
પારાંચિત, યહ દસ પ્રકાર કા પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ । હનકા સ્વરૂપ હસ પ્રકાર હૈ ।

(૧) આલોચન—એકાન્ત મેં સ્થિત, પ્રસન્નચિત્ત, દોષ, દેશ એવં
કાલ કે સ્વરૂપ કે જાનકાર ગુરુ કે સમક્ષ શિષ્ય વિનય પૂર્વક આલો-
ચનાકે દસ દોષો સે બચકર અપને પ્રમાદ કા નિવેદન કરતા હૈ—અપને
દોષ કો પ્રકટ કરતા હૈ, બહુ આલોચન નામક પ્રાયશ્ચિત્ત કહલાતા
હૈ । સ્થાનાંગ સૂત્ર કે દસવેં સ્થાન મેં દસ દોષો કે સંબંધ મેં કહા હૈ ।

આવતી તપસ્યા વિશેષ દશ પ્રકારની છે—

(૧) આલોચન (૨) પ્રતિક્રમણ (૩) તદુભય (૪) વિવેક (૫) વ્યુત્સર્ગ
(૬) તપ (૭) છેદ (૮) મૂળ (૯) અનવસ્થાપ્ય અને (૧૦) પારાંચિત આ
દશ પ્રકારના પ્રાયશ્ચિત્ત છે. એમનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—

(૧) આલોચન—એકાન્તમાં સ્થિત, પ્રસન્નચિત્ત, દોષ, દેશ તથા કાળના
સ્વરૂપના જ્ઞાતા ગુરુની સમક્ષ, શિષ્ય વિનયપૂર્વક આલોચનના દશ દોષોથી
બચીને પોતાના પ્રમાદનું નિવેદન કરે છે—પોતાના દોષને પ્રકટ કરે છે તે
આલોચના નામક પ્રાયશ્ચિત્ત કહેવાય છે. સ્થાનાંગસૂત્રના દશમાં સ્થાનમાં દશ
દોષોના સંબંધમાં કહેવામાં આવેલ છે—

तत्रोपकरणादि दानेन गुरोरनुकम्पासुत्पाद्याऽऽलोचने-आकम्पितं नाम दोषः, वचनेनाऽनुमायाऽऽलोचनेऽनुमानितं नामदोषः, यल्लोकैर्दृष्टं तस्यैवालोचने दृष्टं नामदोषः, स्थूलस्यैवाऽऽलोचने बादरं नाम दोषः, अल्पस्यैव दोषस्याऽऽलोचने सूक्ष्मं नामदोषः, केनचित्-पुरुषेण निजदोषे प्रकाशिते सति यादृशो दोषोऽनेन प्रकाशित स्तादृशो ममापि वर्तते इत्येवं प्रच्छन्नस्य दोषस्याऽऽलोचने छन्नं नाम-

आकम्पित, अनुमानित, दृष्ट, बादर, सूक्ष्म, छन्न, शब्दाकुल, बहुजन, अव्यक्त और तत्सेवी नामक दस दोष आलोचना के समझना चाहिए । इनका स्वरूप इस प्रकार है ।

(१) गुरु को उपकरण वस्त्र आदि देकर, उनके चित्त में अपने प्रति अनुकम्पा उत्पन्न करके आलोचन करना आकम्पित नामक दोष है ।

(२) वचन से अनुमान करके आलोचन करना अनुमानित दोष है ।

(३) लोगों ने जिस दोष को देख लिया हो उसी की आलोचना करता दृष्ट नामक दोष है ।

(४) स्थूल दोष की ही आलोचना करना बादर दोष है ।

(५) सूक्ष्म-छोटे से अपराध की आलोचना करना सूक्ष्म दोष है ।

(६) छन्न-किसी पुरुष के द्वारा अपना दोष प्रकाशित करने पर ऐसा कहना कि-‘जैसा दोष इन्हे’ लगा है वैसा ही मुझे भी लगा है, इस प्रकार प्रच्छन्न (गुप्त) रूप से दोष को प्रकाशित करना छन्न नामक दोष है ।

आकम्पित, अनुमानित, दृष्ट, बादर, सूक्ष्म, छन्न, शब्दाकुल, बहुजन, अव्यक्त અને તત્સેવી નામના દશ દોષ આલોચનાના સમજવા બોધ એ. એમનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે-

(૧) ગુરુને ઉપકરણ વસ્ત્ર આદિ આપીને, તેમના ચિત્તમાં પોતાની તરફ અનુકમ્પા ઉત્પન્ન કરીને, આલોચના કરવી આકમ્પિત-નામક દોષ છે.

(૨) વચનથી અનુમાન કરીને, આલોચના કરવી અનુમાનિત દોષ છે.

(૩) લોકોએ જે દોષને જોઈ લીધા હોય તેની જ આલોચના કરવી દૃષ્ટ નામક દોષ છે.

(૪) સ્થૂળ દોષની જ આલોચના કરવી બાદર દોષ છે.

(૫) સૂક્ષ્મ-નાના સરખા અપરાધની કરવી સૂક્ષ્મ દોષ છે.

(૬) છન્ન-કોઈ પુરૂષ દ્વારા દોષ ખોલે આ પ્રમાણે કહેવું

દોષઃ, શબ્દાકુલં યથા-શ્રવતિ તથાવિધકોલાહલપદ્યે યથા-ગુરરપિ ન શૃણોતિ
 इत्येवंविधालोचने शब्दाकुलं नाम दोषः-वहन् गुरुनानां प्रति आलोचने बहुजनं
 नामदोषः, अव्यक्तस्याऽप्रबुद्धस्याऽग्रे-आलोचनेऽव्यक्तं नामदोषः, तद्दोषसेविनो
 गुरोराग्रे आलोचने तत्सेवीनामदोषो भवति, इत्येवं द्वयं दोषविरजितं द्वयाश्रयं
 व्याश्रयं वाऽऽलोचनं भवति । तथा च कश्चिदतीचारः प्रकाशनमात्रेणैव दूरी भवति,
 यथा-श्रुतोपदिष्ट व्यापारानुष्ठायीसंयतः शिष्यो मोक्षार्थं प्रयत्नमानोऽव्यानु-
 ष्टेयेषु प्रत्युपेक्षण-प्रमार्जन-वैयावृत्त्यस्वाध्याय-तपश्चरणाऽऽहारविहार-मुनि-

(૭) જવ કોલાહલ હો રહ્યા હો તપ અપને દોષ કો પ્રકાશિત કરના,
 जिससे गुरु भी ठीक तरह न सुन सके, यह शब्दाकुल नामक दोष है ।

(૮) એક હી અપરાધ કી અનેકોં કો સામને આલોચના કરના
 बहुजन नामक दोष है ।

(૯) જો અવ્યક્ત હો અર્થાત્ પ્રાયશ્ચિત્તશાસ્ત્ર કા જ્ઞાના ન હો એસે
 के समक्ष आलोचन करना अव्यक्त दोष है ।

(૧૦) જિસ દોષ કી આલોચના કરના હૈ, ડહી દોષ કા સેવન
 करने वाले साधु के सामने उस दोष की आलोचना करना तत्सेवी
 नामक दोष है ।

હસ પ્રકાર આલોચન દસ દોષોં સે રહિત દ્વાયાશ્રય અથવા વ્યાશ્રય
 होता है । जैसे-किसी अतिचार को प्रकाशित करने मात्र से शुद्धि हो जाती
 है । यथा-जो साधु शास्त्रविहित आचार का परिपालन करता है, मोक्ष
 के लिए प्रयत्नशील है, अवश्य करने योग्य प्रतिलेखन, प्रमार्जन, वैया

કે-‘જેવો દોષ એને લાગ્યો છે તેવો જ મને પણ લાગ્યો છે’ આ રીતે
 प्रच्छिन्न (शुभ्र) इपथी दोषने लड़ेर करवुं એ છન્ન નામક દોષ છે.

(૭) જ્યારે શોરણકાર થઈ રહ્યો હોય ત્યારે પોતાના દોષને પ્રકાશિત
 કરવા, જેને શુદ્ધ પણ સારી પેઠે સાંભળી ન શકે, આ શબ્દાકુલ નામક દોષ છે.

(૮) એક જ અપરાધની અનેકની સામે આલોચના કરવી બહુજન-
 નામક દોષ છે.

(૯) જે અવ્યક્ત હોય અર્થાત્ પ્રાયશ્ચિત્ત શાસ્ત્રનો જે જ્ઞાતા નથી
 એવાની સામે આલોચના કરવી અવ્યક્ત દોષ છે.

(૧૦) જે દોષની આલોચના કરવાની હોય તે જ દોષનું સેવન કરનાર
 સાધુની સમક્ષ તે દોષની આલોચના કરવી તત્સેવી નામક દોષ છે,

આ રીતે આલોચન દસ દોષોથી રહિત દ્વાયાશ્રય અથવા વ્યાશ્રય હોય
 છે જેમ કે-કોઈ અતિચારને બહેર કરવા માત્રથી શુદ્ધિ થઈ જાય છે યથા-
 જે સાધુ શાસ્ત્રવિહિત આચારનું પરિપાલન કરે છે, મોક્ષને માટે પ્રયત્ન-
 શીલ છે, અવશ્ય કરવા યોગ્ય પ્રતિલેહન, પ્રમાર્જન, વૈયાવૃત્ય, સ્વાધ્યાય,

વન્દનાદિકાર્યેષુ નિતાન્તોપયુક્તો નિરસ્તસ્થૂલાતિચારઃ સૂક્ષ્માઽઽસ્ત્રવ-પ્રમાદ-
ક્રિયા વિશુદ્ધયર્થ મ.લોચનમાત્રાદેવ વિશુદ્ધો ભવતિ ! એવમ્-અતિચારાભિમુખ્ય
પરિહારેણ પ્રતીપં ક્રમણમ્ અપસરણં પ્રતિક્રમણમ્ મિથ્યાદુષ્કૃતામિધાનાત્ અભિ-
વ્યવતીકૃતપશ્ચાત્તાપઃ સૂત્રવિરુદ્ધમિદ મયા દુષ્ટં કૃતં દુષ્કૃતં ચરણવિરાધનં સ્વ-
ચ્છન્દતો, નતુ-સૂત્રાણુસારેણેતિ સમુપજાતપશ્ચાત્તાપસ્તત્પ્રતીપમપસર્પતિ-પ્રત્યાચષ્ટે
ન સ્વલુ-પુનરેવં કરિષ્યામિ' इत्येवं प्रत्याख्यानं प्रतिक्रमणं घुच्यते २ तदुभय-

વૃત્ય, સ્વાધ્યાય, તપશ્ચરણ, આહાર, વિહાર એવં મુનિવન્દન આદિ કાર્યોં
મેં સૂત્ર ઉપયોગ લગાવે રહતા હૈ, સ્થૂલ અતિચારોં સે બચા રહતા હૈ,
વહ અપને સૂક્ષ્મ પ્રમાદ કે લિયે યદિ આલોચના કરલેતા હૈ તો ઉસ સે
શુદ્ધ હો જાતા હૈ । ઉસે કિસી અન્ય પ્રાયશ્ચિત્ત કી આવશ્યકતા નહીં રહતી ।

(૨) પ્રતિક્રમણ—અતિચારોં કી અભિમુખતા ત્યાગ કર ઉલટા
ચલના પ્રતિક્રમણ હૈ । જો સાધુ મિથ્યા દુષ્કૃત દેહર અપને પશ્ચાત્તાપ
કો પ્રકટ કરતા હૈ ઓર કહતા હૈ-‘મેંને સૂત્ર સે વિરુદ્ધ યહ દૂષિત કર્મ
કિયા હૈ, સ્વચ્છન્દ માત્ર સે ચારિત્ર કી વિરાધના કી હૈ, સૂત્ર કે અનુ-
કૂલ નહીં કિયા હૈ’ ઓર એસા કહકર જો પશ્ચાત્તાપ કરતા હૈ ફિર ઉસ
દૂષિત કૃત્ય સે વિપરીત કથન કરતા હૈ કિ-‘અવ એસા ફિર નહીં
કરુંગા’ હસ પ્રકાર કા પ્રત્યાખ્યાન કરના પ્રતિક્રમણ કહલાતા હૈ ।

(૩) તદુભય-કા આશય હૈ આલોચના ઓર પ્રતિક્રમણ દોનો ।

તપસ્યા, આહાર, વિહાર અને મુનિવંદણા આદિ કર્યોમાં ઘણો ઉપયોગ
રાખતો હોય, સ્થૂળ અતિચારોથી બચતો રહે છે તે પોતાના સૂક્ષ્મ પ્રમાદને
માટે જો આલોચના કરી લે છે તો તેથી જ શુદ્ધ થઈ જાય છે. તેને કોઈ
અન્ય પ્રાયશ્ચિત્તની આવશ્યકતા રહેતી નથી.

(૨) પ્રતિક્રમણ—અતિચારોની અભિમુખતા ત્યાગીને વિપરીત ચાલવું
પ્રતિક્રમણ છે. જે સાધુ મિથ્યા દુષ્કૃત દઈને પોતાના પશ્ચાત્તાપને પ્રકટ
કરે છે અને કહે છે-‘મેં સૂત્ર વિરુદ્ધ આ દૂષિત કર્મ કર્યું છે, સ્વચ્છન્દ,
ભાવથી ચારિત્રની વિરાધના કરી છે, સૂત્રને અનુકૂળ કર્યું નથી’ અને આ
પ્રમાણે કહીને જે પશ્ચાત્તાપ કરે છે અને પછી તે દૂષિત કૃત્યથી વિપરીત
કથન કરે છે કે-‘આવું ફરી ક્યારે પણ કરીશ નહીં’ એ પ્રકારના પરિણામ
કરવા પ્રતિક્રમણ કહેવાય છે.

(૩) તદુભય—આનો આશય છે આલોચના અને પ્રતિક્રમણ બંને

પદેના-આલોચન પ્રતિક્રમણ રૂપોઅયં પ્રાયશ્ચિત્તમુચ્યતે, તત્રાઽઽલોચનં પ્રતિક્રમણઞ્ચ પૂર્વં મધુનૈવ વ્યાખ્યાતં વર્તતે, તત્ર-પૂર્વં માલોચનં પશ્ચાદ્ ગુરુસન્દિપ્તસ્ય પ્રતિક્રમ-
ણમ્, એતદુચ્યં પ્રાયશ્ચિત્તં સમ્ભ્રમમગતુરાપતત્ સહસાઽનાભોગાઽનાત્મવશગતસ્ય
દુષ્ટચિન્તનભાષણચેષ્ટાયુક્તસ્ય ચ કૃને વિહિતમવગન્તવ્યમ્ એવં વિવેકઃ શુદ્ધા-
ઽશુદ્ધાન્નપાનાદિવિષયે વિવેચનમ્ અશુદ્ધાન્નપાનાદિપરિત્યાગ इत्यर्थः સ્વલ્પ ત્યાગ-
પરિણતિરૂપવિવેચન ભાવાવશુદ્ધ્યાત્મકો વિશોધનરૂપઃ પ્રત્યુપેક્ષણરૂપો ભવતિ,
અયં તાવદ્ વિવેકો નામ પ્રાયશ્ચિત્તં સંવક્તાહારપાનોપકરણૌપગ્રહિકોપધિ શય્યા-
મસ્માદિષુ ભવતિ । તથા ચ-યસ્મિન્ વસ્તુાન ગૃહીતે સતિ લોભાદિ કષાયાદિક
મુત્પદ્યતે તસ્ય સર્વસ્ય વસ્તુનસ્ત્યાગો વિવેકો નામ પ્રાયશ્ચિત્ત મવગન્તવ્યમ્, યથા-

આલોચના ઔર પ્રતિક્રમણ કી અભી-અભી વ્યાખ્યા કી ગઈ હૈ । પહેલે
આલોચના ફિર ગુરુ કે કહનૈ પર પ્રતિક્રમણ કરના આલોચન પ્રતિ-
ક્રમણ પહલાતા હૈ । જો મુનિ સંભ્રમ યા અથ સે આતુર હૈ, સહસા
ઉપયોગ શૂન્યતા કે કારણ અપને અધીન નહીં રહા હૈ ઔર જો દુષ્ટ
ચિન્તન, દુષ્ટ ભાષણ એવં દુષ્ટ ચેષ્ટા સે યુક્ત હૈ, ઉસકે લિપ્ત ઇસ
પ્રાયશ્ચિત્ત કા વિધાન કિયા ગયા હૈ ।

(૪) વિવેક--શુદ્ધ-અશુદ્ધ અન્ન-પાની આદિ કે વિષય મૈ પૃથક્
કરણ કરના અર્થાત્ અશુદ્ધ અન્ન-પાની આદિ કા ત્યાગ કરના વિવેક
પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ । ત્યાગ પરિણતિરૂપ યહ વિવેચન ભાવ શુદ્ધિસ્વરૂપ હૈ,
વિશોધનરૂપ હૈ, પ્રત્યુપેક્ષણરૂપ હૈ, યહ વિવેક પ્રાયશ્ચિત્ત દૂષિત આહાર,
પાની, ઉપકરણ, ઔપગ્રહિક ઉપધિ, શય્યા તથા આસન આદિ કે વિષય

આલોચના અને પ્રતિક્રમણની હમણા જ વ્યાખ્યા કરવામાં આવી છે.
પહેલા આલોચના પછી શુદ્ધી આશાથી પ્રતિક્રમણ કરવું આલોચનપ્રતિક્રમણ
કહેવાય છે. જે મુનિ સંભ્રમ અથવા ભયથી આતુર છે. એકાએક ઉપયોગ-
શૂન્યતાને કારણે પોતાને વશ રહેતો નથી અને જે દુષ્ટ ચિન્તન, દુષ્ટ
ભાષણ તેમજ દુષ્ટચેષ્ટાથી યુક્ત છે તેના માટે આ પ્રાયશ્ચિત્તનું વિધાન
કરવામાં આવ્યું છે.

(૪) વિવેક-શુદ્ધ-અશુદ્ધ અન્ન-પાણી વગેરેના પૃથક્કરણ કરવું
અર્થાત્ અશુદ્ધ અન્ન-પાણી આદિનો ત્યાગ કરવો વિવેક પ્રાયશ્ચિત્ત છે.
ત્યાગપરિણતિરૂપ આ વિવેચન ભાવશુદ્ધિ સ્વરૂપ છે, વિશોધનરૂપ છે, પ્રત્યુ-
પેક્ષણરૂપ છે. આ વિવેક પ્રાયશ્ચિત્ત દૂષિત આહાર, પાણી, ઉપકરણ, ઔપ-
ગ્રહિત ઉપધિ, શય્યા તથા આસન આદિના વિષયમાં થાય છે. આથી જે

उपयुक्तेन गीतार्थेनाऽन्नादिकं प्रथमं गृहीतं पश्चादशुद्धं चेज्ज्ञातं भवति तदा—
तस्य त्यागो विवेकाख्यं प्रायश्चित्तं भवति ३ एवं—विशिष्ट उत्सर्गो व्युत्सर्गः, काय
बाहुमनो व्यापाराणां प्रणिधानपूर्वको निरोधो व्युत्सर्गप्रायश्चित्तमुच्यते, तथा
च नियतकालं कायस्य बाहो मनसश्च व्यापारत्यागो व्युत्सर्गो नाम प्रायश्चित्तम्
एतत्कायोत्सर्गशब्देनाऽयुते ५ एवं—षड्विधं पूर्वोक्त अनशनाऽवमौढ्यादिकं
ब्रह्म तपः खलु तपोनाम प्रायश्चित्तमुच्यते ६ अथाऽऽभ्यन्तरतपोरूपतया प्राय
श्चित्तस्य, बाह्यतपोरूपत्वेनाऽनशनादेश्च कथं तयो रैक्यं सम्भवति, परस्परविरो-

में होता है । अतएव जिन वस्तुओं के ग्रहण करने पर लोभादिक
कषायों की उत्पत्ति होती है, उन सब का त्याग करना विवेक प्राय-
श्चित्त है । जैसे किसी उपयोगवान् गीतार्थ सुनि ने पत्ते अन्न आदि
को ग्रहण कर लिया, पश्चात् वह दूषित मालूम हुआ तो उसका
त्याग करदेना विवेक प्रायश्चित्त है ।

(५) व्युत्सर्ग—विशिष्ट प्रकार के उत्सर्ग को व्युत्सर्ग कहते हैं
अर्थात् शरीर, वचन और मन के व्यापारों का उपयोग पूर्वक निरोध
करना व्युत्सर्ग है । इस प्रकार मर्यादित समय के लिए शरीर के, वचन
के और मन के व्यापार का त्याग करना व्युत्सर्ग नामक प्रायश्चित्त
है । इसे 'कायोत्सर्ग' भी कहते हैं ।

(६) तप—पूर्वोक्त अनशन आदि छह प्रकार का बाह्य तप प्राय-
श्चित्त कहलाता है ।

शंका—प्रायश्चित्त आभ्यन्तर तप है, वह अनशन आदि बाह्य

वस्तुओंानुं ग्रहण करवाथी दोषादिक कषायेनी उत्पत्ति थाय छे आ अधाने
त्याग करवे। विवेक प्रायश्चित्त छे जेम कोछ उपयोगवान् गीतार्थ सुनि
प्रथम अन्न वगेरे ग्रहण करी लीधा, पछणथी ते दूषित जणाय तो तेना
त्यग करी देवे। विवेक प्रायश्चित्त छे।

(५) व्युत्सर्ग—विशिष्ट प्रकारना उत्सर्गने व्युत्सर्ग कहे छे अर्थात्
शरीर, वचन अने मनना व्यापारेने। उपयोगपूर्वक निरोध करवे। व्युत्सर्ग
छे। आवी रीते मर्यादित समयने भाटे शरीरना, वचनना अने मनना व्यापारेने
त्याग करवे। व्युत्सर्ग नामक प्रायश्चित्त छे। आने 'कायोत्सर्ग' पण कहे छे।

(६) तप—पूर्वोक्त अनशन आदि छ प्रकारना बाह्य तप—प्राय-
श्चित्त कहेवाय छे।

शंका—प्रायश्चित्त आभ्यन्तर तप छे, ते अनशन आदि बाह्य तप रूप

ધાત્વ ઇતિવેત્ ૨ ઉચ્યતે—અહ્યાત્મનિ સ્વેદજનકત્વેનાઽઽભ્યન્તરત્વમિતિ ન કશ્ચિદ્ વિરોધઃ । છેદોનામ પ્રાયશ્ચિત્તં તાવદ્ દિવસ-પક્ષ-માસાદિવિમાગેન દીક્ષાપર્યાય ચ્છેદનં મવ્રજ્યાન્યૂનકરણમ્, તથા ચ-મહાવ્રતારોપણકાલાદારમ્ મવ્રજ્યાદિવસ-પક્ષ-માસ-સંવત્સરાણા મન્યતમાનાં, પર્યાયસ્ય ચ છેદો ભવતિ યસ્મિન્ દિવસે મહાવ્રતારોપણં કૃતં તથાવિધમવ્રજ્યાદિવસાદિઃ પર્યાય ઉચ્યતે, તન્ન-પશ્ચક પ્રભૃતિ ચ્છેદઃ પર્યાયસ્ય યથા યસ્ય સ્વહૃ દસવર્ષાણિ-આરોપિતમહાવ્રતસ્યાઽપ-રાધાનુરૂપઃ 'કદાચિત્-પશ્ચકચ્છેદઃ' 'કદાચિદ્-દશકચ્છેદઃ' इत्यादिरीत्या

તપ રૂપ કિસ પ્રકાર હો સકતા હૈ ? દોનોં એક કેસે હો સકતે હૈ ? દોનોં મેં પરસ્પર વિરોધ હૈ ।

સામાધાન-આત્મા મેં સ્વેદજનક હોને કે કારણ હસે બી આભ્યન્તર કહા જાતા હૈ, અતઃવ કોઈ વિરોધ નહોં હૈ । (યોં બી બાહ્ય ઓર આભ્યન્તર તપ મેં પારસ્પરિક વિરોધ નહોં હૈ, બાહ્ય તપ બી પરિણામ વિશેષ સે આભ્યન્તર બન જાતા હૈ ઓર આભ્યન્તર તપ બી બાહ્ય બન સકતા હૈ ।

(૭) છેદ—કતિપય દિન, પક્ષ યા માસ કી દીક્ષા કા છેદન કરના અર્થાત્ ઉસે કમ કર દેના છેદ પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ । મહાવ્રતોં કે આરોપણકાલ સે લગાકર જો દીક્ષાકાલ હૈ ઉસમેં સે કુછ દિન, પક્ષ યા માસ કા દીક્ષા કાલ કમ કરદેના છેદ કહલાતા હૈ । જિસ દિન મહાવ્રતોં કા આરોપિત ક્રિયા ગયા વહ દીક્ષા દિવસ આદિ પર્યાય કહલાતા હૈ । ઉસમેં પાંચ આદિ કા છેદન હોતા હૈ । ઉદાહરણાર્થ-કિસી કી દીક્ષા

કઇ રીતે હોઇ શકે ? બંને એક કેવી રીતે હોઇ શકે ? બંનેમાં પરસ્પર વિરોધ છે.

સમાધાન-આત્મામાં સ્વેદજનક હોવાના કારણે અને પણ આભ્યન્તર કહેવામાં આવે છે. આથી કોઈ વિરોધાભાસ નથી (આમ પણ બાહ્ય અને અને આભ્યન્તર તપમાં પારસ્પરિક વિરોધ નથી, બાહ્ય તપ પણ પરિણામ વિશેષથી આભ્યન્તર બની જાય છે અને આભ્યન્તર તપ પણ બાહ્ય બની શકે છે.)

(૭) છેદ-કેટલાંક દિવસ પક્ષ અથવા માસની દીક્ષાનું છેદન કરવું અર્થાત્ તેમાં ઘટાડો કરી દેવો છેદ પ્રાયશ્ચિત્ત છે, મહાવ્રતોનાં આરોપણ-કાળથી માંડીને જે દીક્ષાકાળ છે તેમાંથી થોડાં દિવસ, પક્ષ અથવા માસનો દીક્ષાકાળ ઓછો કરી દેવો છેદ કહેવાય છે. જે દિવસે મહાવ્રતોનું આરોપણ કરવામાં આવ્યું તે દીક્ષાદિવસ આદિ પર્યાય કહેવાય છે તેમાં પાંચ આદિનો છેદ થાય છે. દાખલા તરીકે-કોઈની દીક્ષા પર્યાય દશ વર્ષની છે તો અપરાધ

યાવત્-પણ્નાશપરિણાનચ્છેદો લ્પુ-ગુરુર્વા સ્વતિ । એવંવિધેન છેદેન છિદ્યમાનઃ । પ્રવ્રજ્યાદિવસમપિ છેદયતિ ૭ મૂલં પ્રાયશ્ચિત્તં પુનર્વ્રતારોપણમ્ અસ્ય વિષયઃ-સંકુલ્પાત્ કૃતઃ પ્રાણાતિપાતશ્ચતુર્થાઽસ્રવસેવન-મુત્કૃષ્ટં મૃષાવાદાદિકં વાઽસેવમાનો બોધ્યઃ ૮ અનવસ્થાપ્યં નામ પ્રાયશ્ચિત્તં સેવિતાઽતિચારસ્યાઽકૃતતર્થો વિશેષસ્ય વ્રતાઽનારોપણીયતારૂપલક્ષણસેવમ્, તથા-યદ્ આસેવિતે ચ દોષે કશ્ચનકાલં વ્રતારોપણાઽયોગ્યં કૃત્વા પશ્ચાન્નર્ત્તીર્ણં તપાસ્તદ્ દોષોપરતો વ્રતેષુ સ્થાપ્યતે તત્ ૯ પારા-

-પર્યાંય દસ વર્ષ લી હૈ તો અપરાધ કે અનુસાર उसमें से कदाचित् पंचकच्छेद होता है, कदाचित् दशकच्छेद होता है । अधिक से अधिक छह महीने का छेद प्रायश्चित्त दिया जाता है ।

(૮) મૂલ— નવે સિરે સે પુનઃ દીક્ષા દેના મૂલ પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ । યહ પ્રાયશ્ચિત્ત તમ્હી દિધા જાતા હૈ જવ કોઈ સાધુ સંકલ્પ પૂર્વક પ્રાણાતિપાત કરે, ચતુર્થ આસ્રવ-મૈથુન કા સેવન કરે યા ઉત્કૃષ્ટ મૃષાવોદ આદિ કા સેવન કરે ।

(૯) અનવસ્થાપ્ય—જિહ્વ સાધુ ને અતિચાર કા સેવન કિયા હો કિન્તુ ઉસકે પ્રાયશ્ચિત્તસ્વરૂપ તપવિશેષ કા સેવન ન કિયા હો, વહ વ્રતારોપણ કે યોગ્ય નહીં હોતા । ઉસકી યહ અયોગ્યતા અનવસ્થાપ્ય પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ । દોષ કા સેવન કરને પર કુછ કાલ તક વહ સાધુ વ્રતારોપણ કે યોગ્ય નહીં હોના, વાદ મેં જવ તપશ્ચરણ કરહેતા હૈ ઓર ઉસ દોષ કી નિવૃત્તિ હો જાતી હૈ તવ વ્રતો મેં ઉસે સ્થાપિત કિયા જાતા હૈ ।

મુજબ તેમાંથી કદાચિત્ પંચકચ્છેદ થાય છે, કદાચિત્ દશકચ્છેદ થાય છે. વધારેમાં વધારે છ માસનું છેદપ્રાયશ્ચિત્ત આપવામાં આવે છે.

(૮) મૂળ-નવેસરથી ફરીવાર દીક્ષા આપવી મૂળ પ્રાયશ્ચિત્ત છે જ્યારે કોઈ સાધુ સંકલ્પપૂર્વક પ્રાણાતિપાત કરે ત્યારે જ આ પ્રાયશ્ચિત્ત કરવામાં આવે છે, ચતુર્થ આસ્રવ-મૈથુનનું સેવન કરે અથવા ઉત્કૃષ્ટ મૃષાવાદ આદિનું સેવન કરે.

(૯) અનવસ્થાપ્ય-જે સાધુએ અતિચારનું સેવન કર્યું છે. પરંતુ તેના પ્રાયશ્ચિત્ત સ્વરૂપ તપવિશેષનું સેવન કર્યું નથી, તે વ્રતારોપણ માટે યોગ્ય હોતો નથી તેની આ અયોગ્યતા અનવસ્થાપ્ય પ્રાયશ્ચિત્ત છે. દોષનું સેવન કરવાથી થોડા સમય સુધી તે સાધુ વ્રતારોપણ માટે યોગ્ય રહેતો નથી, છેલ્લે જ્યારે તપસ્યા કરી લે છે અને દોષની નિવૃત્તિ થઈ જાય છે ત્યારે વ્રતોમાં તેને સ્થાપિત કરવામાં આવે છે.

શ્ચિકં નામ દશમં પ્રાયશ્ચિત્તમ્, તથાહિ-પારં-પ્રાયશ્ચિત્તાનામન્તમ્, યસ્માત્-પર-
 કૃત્કૃષ્ટ પ્રાયશ્ચિત્તાઽભાવાત્ અશ્વતિ-પ્રાપ્નોતીતિ પારાશ્ચિક મુચ્યતે । યદ્વા-પારઃ
 અપરાધાનામન્તઃ અચ્ચયતે-પ્રાપ્યતે યેન પ્રાયશ્ચિત્તેન તત્-પારાશ્ચિકં નામ પ્રાય-
 શ્ચિત્ત મુચ્યતે । અત્રાઽયં વિવેકઃ-કૃતાતિચારં લિંગ-ક્ષેત્ર-કાલતો વહિર્ભૂતં કૃત્વા
 કૃત્વા ચ તપસા શુદ્ધં પુનઃ સ મહાવ્રતૈષ્વારોપ્યતે, । इदं प्रायश्चित्तं जातिकुल-
 सम्पन्न एव-(કશ્ચિત્ ક્વચિત્) સ્વીકરોતીતિ । યઃ કોઽપિ સાધુર્ગચ્છાધિષ્ઠાત્રી રાજ-
 રાજ્ઞી-શ્રેષ્ઠિષ્ઠત્નીગામી, તથા-સ્ત્યાનર્દિં નિદ્રાવાન્ મૃતગુરુદન્તોત્પાટક ઇત્યાદિ
 દુષ્કૃત્યાઽઽકારી ભવતિ તસ્મૈ-इदं प्रायश्चित्तं देयं भवति ॥૧૦॥ઈતિ ભાવઃ॥૬૩॥

(૧૦) પારાંચિક—યહ દસમાં પ્રાયશ્ચિત્ત હૈ । जिससे बड़ा अन्य
 कोई प्रायश्चित्त न हो अर्थात् जो सर्वोत्कृष्ट प्रायश्चित्त हो वह परां-
 चिक प्रायश्चित्त कहलाता है । अथवा जिस प्रायश्चित्त के सेवन से
 अपराधि अपने अपराध के पार (अन्त) पहुंच जाय अर्थात् शुद्ध हो
 जाय वह परांचिक प्रायश्चित्त, यहां यह समझ लेना चाहिए कि जिसने
 अनाचार का सेवन किया है उसे लिंग क्षेत्र और काल से बाहर
 करके, तत्पश्चात् तपस्या कर चुकने पर पुनः दीक्षित किया जाता
 है । जाति और कुल से सम्पन्न कोई-कोई ही इस प्रायश्चित्त को
 कदाचित् स्वीकार करता है । जो साधु गच्छ की अधिष्ठात्री (प्रव-
 र्तिनी) राजरानी या किसी सेठानी के साथ संगम करता है अथवा
 जो स्त्यानर्दिं निद्रावान् होता है और अपने मृत गुरु के दातों को
 कषायाविष्ट होकर उखाड़ना जैसा घोर अनाचार करता है, उसी को
 यह प्रायश्चित्त किया जाता है ॥६३॥

(૧૦) પારાંચિક— આ દશમું પ્રાયશ્ચિત્ત છે. જેનાથી મોટું કોઈ બીજું
 પ્રાયશ્ચિત્ત હોય નહીં, અર્થાત્ જે સર્વોત્કૃષ્ટ પ્રાયશ્ચિત્ત છે તે પારાંચિક
 પ્રાયશ્ચિત્ત કહેવાય છે, અથવા જે પ્રાયશ્ચિત્તના સેવનથી અપરાધી પોતાના
 અપરાધને છોડે પહોંચી જાય, અર્થાત્ શુદ્ધ થઈ જાય તે પારાંચિક પ્રાયશ્ચિત્ત,
 અહીં એ સમજ લેવું જોઈએ કે જેને અનાચારનું સેવન કર્યું છે તેને લિંગ,
 ક્ષેત્ર અને કાળથી બહાર કરીને, ત્યાર બાદ, પુનઃ દીક્ષિત કરવામાં આવે છે.
 જાતિ અને કુળથી સમ્પન્ન કોઈ-કોઈ જ આ પ્રાયશ્ચિત્તનો કદાચિત્ સ્વીકાર
 કરે છે. જે સાધુ ગચ્છની અધિષ્ઠાત્રી (પ્રવર્તિની), રાજરાણી અથવા કોઈ
 શેઠાણીની સાથે સંગમ કરે છે, અથવા જે સ્ત્યાનર્ધિં નિદ્રાવાન્ થાય છે
 અને પોતાના મૃત ગુરુના દાંતને કષાયાવિષ્ટ થઈને ઉખાડવા જેવો ઘોર
 અનાચાર કરે છે, તેને જ આ પ્રાયશ્ચિત્ત આપવામાં આવે છે. ॥૬૩॥

मूलम्—विणए सत्तविहे, णाणदंसणचरित्तमणवड्कायलोगो-
वयारभेयओ ॥६४॥

छाया—‘विनयः सप्तविधः, ज्ञान-दर्शन-चारित्र-मनो-वचः-कायलोकोप-
चारभेदतः’ ॥६४॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वसूत्रे-प्रायश्चित्तविनय वैयावृत्त्यादि षड्विधाभ्यन्तर-
तपसां प्रथमोपात्तस्य प्रायश्चित्तस्याऽऽलोचनप्रतिक्रमणादिदशभेदानां प्ररूपणं
कृतम् सम्प्रति-क्रमप्राप्तस्य द्वितीयस्य विनयरूपस्याभ्यन्तर तपसो भेदान् प्ररूप-
यितुमाह—‘विणए सत्तविहे’ इत्यादि । विनयः—विनीयतैऽपनीयते क्षिप्यते
ज्ञानावरणाद्यष्टविध कर्मरजोराशिर्येन स विनयः सप्तविधः ज्ञान-दर्शन-चारित्र-
मनो-वचः-काय-लोकोपचारभेदतः । तथा च ज्ञानविनयः १ दर्शनविनयः २

‘विणए सत्तविहे णाण’ इत्यादि

सूत्रार्थ—विनय सात प्रकार का है—(१) ज्ञान (२) दर्शन (३) चारित्र
(४) मन (५) वचन (६) काय और (७) लोकोपचार ॥६४॥

पूर्वसूत्र में प्रायश्चित्त विनय वैयावृत्त्य आदि छह प्रकार के
आभ्यन्तर तपों में से प्रायश्चित्त के आलोचन प्रतिक्रमण आदि दस
भेदों का निरूपण किया गया, अब क्रमप्राप्त विनय नामक आभ्यन्तर
तप के भेदों की प्ररूपणा करते हैं—

जिसके द्वारा ज्ञानावरण आदि आठ प्रकार का कर्म-रज विनीत
किया जाय-हटाया जाय उसे विनय कहते हैं । वह ज्ञान, दर्शन,
चारित्र, मन, वचन, काय और लोकोपचार के भेद से सात प्रकार
है अर्थात् उसके सात भेद हैं, यथा—(१) ज्ञानविनय (२) दर्शन

‘विणए सत्तविहे णाणदंसण’ इत्यादि

सूत्रार्थ—विनय सात प्रकारનો છે—(૧) જ્ઞાન (૨) દર્શન (૩) ચારિત્ર
(૪) મન (૫) વચન (૬) કાય અને (૭) લોકોપચાર. ॥६४॥

તત્ત્વર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં પ્રાયશ્ચિત્ત વિનય વૈયાવૃત્ત્ય આદિ છ
પ્રકારના આભ્યન્તર તપોમાંથી પ્રાયશ્ચિત્તના આલોચન પ્રતિક્રમણ આદિ દશ
ભેદોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે ક્રમપ્રાપ્ત વિનય નામક આભ્યન્તર
તપના ભેદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ—

જેના વડે જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકારના કર્મ-રજ વિનીત કરવામાં
આવે-હર કરવામાં આવે તેને વિનય કહે છે. તે જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, મન,
વચન, કાયા અને લોકોપચારના ભેદથી સાત પ્રકારનો છે અર્થાત્

ચારિત્રવિનયઃ ૩ મનોવિનયઃ ૪ વચોવિનયઃ ૫ કાયવિનયઃ ૬ લોકોપચારવિન-
યશ્ચ ૭ । તન્નાઽઽલસ્યવર્જિતેન દેશ-કાલ-દ્રવ્ય-ભાવાદિશુદ્ધિકરણેન વહુમાનેન
મોક્ષપ્રાપ્ત્યર્થં જ્ઞાનગ્રહણં જ્ઞાનાભ્યાસો જ્ઞાનસ્મરણાદિકં જ્ઞાનવિનય ઉચ્યતે ।
સ ચ પશ્ચવિધઃ, મતિજ્ઞાનવિનયશ્રુતજ્ઞાનવિનયાઽવધિજ્ઞાનવિનય-કેવલજ્ઞાનવિનય-
ભેદાત્ । તત્ર-શંકાઽઽકાંક્ષાઽઽદિદોષવર્જિતં તત્ત્વશ્રદ્ધાનં દર્શનવિનય ૧ ઉચ્યતે
સ ચ-સુશ્રૂષણાઽપ્યાશાતનાભેદાદ્ દ્વિવિધઃ ૨ । જ્ઞાનદર્શનવતઃ પુરુષસ્ય ચારિત્રે
જ્ઞાતે સતિ તસ્મિન્ પુરુષે-ભાવતોઽતિમક્તિવિધાનં ભાવતઃ સ્વયં ચારિત્રાનુષ્ઠાનશ્ચ
ચારિત્રવિનય ઉચ્યતે । સ ચ પશ્ચવિધઃ, સામાયિકચારિત્રવિનય-છેદોપસ્થાપનીય
વિનય (૩) ચારિત્ર વિનય (૪) મનોવિનય (૫) વચન વિનય (૬) કાય
વિનય (૭) લોકોપચાર વિનય ।

આલસ્યરહિત હોકર દેશ, કાલ, દ્રવ્ય ઓર ભાવ આદિ સંબંધી શુદ્ધિ
કરકે, વહુમાનપૂર્વક, મોક્ષ પ્રાપ્ત કરને કે હેતુ જ્ઞાન કો ગ્રહણ કરના જ્ઞાન-
કા અભ્યાસ કરના જ્ઞાન કા સ્મરણ આદિ કરના જ્ઞાન વિનય કહલાતા
હૈ ? જ્ઞાનવિનય કે પાંચ ભેદ હૈ મતિજ્ઞાનવિનય, શ્રુતજ્ઞાનવિનય,
અવધિજ્ઞાનવિનય, મનઃપર્યવ જ્ઞાનવિનય ઓર કેવલ જ્ઞાનવિનય ।

શંકા, કાંક્ષા આદિ દોષોં સે રહિત હોકર તત્ત્વાર્થ પર શ્રદ્ધાન
કરના દર્શનવિનય હૈ । હરુકે દો ભેદ હૈ—શુશ્રૂષણા ઓર
અનત્યાશાતના ।

જ્ઞાન-દર્શન સમ્પન્ન પુરુષ મૈં યદિ ચારિત્ર માલૂમ હો તો ઉસકે
પ્રતિ ભાવપૂર્વક અત્યન્ત ભક્તિ કરના ઓર સ્વયં ભાવપૂર્વક ચારિત્ર
કા અનુષ્ઠાન કરના ચારિત્રવિનય હૈ । ચારિત્રવિનય પાંચ પ્રકાર કા

તેના સાત ભેદ છે—(૧) જ્ઞાનવિનય (૨) દર્શનવિનય (૩) ચારિત્રવિનય (૪)
મનોવિનય (૫) વચનવિનય (૬) કાયવિનય અને (૭) લોકોપચારવિનય.

આજસ ખંખેરીને દેશ, કાળ, દ્રવ્ય અને ભાવ આદિ સંબંધી શુદ્ધિ
કરીને, બહુમાનપૂર્વક, મોક્ષ પ્રાપ્ત કરવાના હેતુથી જ્ઞાન ગ્રહણ કરવું, જ્ઞાનનો
અભ્યાસ કરવો, જ્ઞાનનું સ્મરણ આદિ કરવું જ્ઞાનવિનય કહેવાય છે. જ્ઞાન-
વિનયના પાંચ ભેદ છે—મતિજ્ઞાનવિનય, શ્રુતજ્ઞાનવિનય, અવધિજ્ઞાનવિનય,
મનઃપર્યવજ્ઞાનવિનય અને કેવલજ્ઞાનવિનય.

શંકા—કાંક્ષા આદિ દોષોથી રહિત થઇને તત્ત્વાર્થ પર શ્રદ્ધા કરવી
દર્શનવિનય છે. આના બે ભેદ છે—શુશ્રૂષણા અને અનત્યાશાતના,

જ્ઞાન—દર્શન સમ્પન્ન પુરુષમાં જે ચારિત્ર જણાય તો તેના પ્રત્યે
ભાવપૂર્વક અત્યન્ત ભક્તિ કરવી અને સ્વયં ભાવપૂર્વક ચારિત્રનું અનુષ્ઠાન

ચારિત્રવિનય-પરિહારવિશુદ્ધિક ચારિત્રવિનય-સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્રવિનય-
યથાલ્પ્યાત્ચારિત્રભેદાત્ । તથા ચ જ્ઞાનદર્શનવતઃ પુરુષસ્ય ચારિત્રસમાહિત-
ચિત્તતા ચારિત્રવિનયો વ્યપદિશ્યતે ૩ મનોવિનયસ્તુ પરોક્ષેષ્વપિ-આચાર્યોપાધ્યા-
યાદિષુ ગુણાનુસ્મરણાદિરુપ ઉચ્યતે ૪ સ ચ-પ્રશસ્તાઽપ્રશસ્તભેદાદ્ દ્વિવિધઃ । एवं
વચોવિનયોઽપિ-પરોક્ષેષ્વપિ તૈષુ વચસા ગુણકીર્તનાદિરુપ ઉચ્યતે, અયમપિ પ્રશ-
સ્તાઽપ્રશસ્તભેદાદ્ દ્વિવિધઃ ૫ एवं-કાયવિનયોઽપિ પરોક્ષેષ્વપિ આચાર્યોપાધ્યા-
યાદિષુ કાયેન શિરાહસ્તાદિનાઽઙ્ગલિક્રિયાદિરુપોઽસેયઃ ૬ અસાવપિ-પ્રશસ્તા-
હૈ-સામાયિક ચારિત્રવિનય, છેદાપસ્થાપનીય ચારિત્રવિનય, પરિહારવિ-
શુદ્ધિક ચારિત્રવિનય, સૂક્ષ્મસામ્પરાય ચારિત્રવિનય ઓર યથાલ્પ્યાત-
ચારિત્રવિનય । હસ પ્રકાર જ્ઞાન ઓર દર્શન સે યુક્ત પુરુષ કા ચારિત્ર
મેં ચિત્ત લગ જાના ચારિત્રવિનય હૈ ।

આચાર્ય યા ઉપાધ્યાય આદિ પરોક્ષ હોં તો ખી उनके गुणों
का स्मरण आदि करना मनोविनय कहलाता है । मनोविनय के दो
भेद हैं-प्रशस्तमनोविनय और अप्रशस्तमनोविनय ।

आचार्य उपाध्याय आदि परोक्ष हों तो भी वचन से उनके गुणों
का कीर्तन करना आदि वचन विनय है । प्रशस्त और अप्रशस्त
के भेद से यह भी दो प्रकार का है ।

हसी प्रकार काय विनय भी समझना चाहिए-आचार्य आदि
परोक्ष हो तो भी उन्हें काय से हाथ आदिसे अंजलि क्रिया करना आदि
काय विनय है । प्रशस्त और अप्रशस्त के भेद से इसके भी दो भेद हैं ।

કરવું ચારિત્રવિનય છે. ચારિત્રવિનય પાંચ પ્રકારના છે-સામાયિક ચારિત્રવિનય,
છેદાપસ્થાપનીય ચારિત્રવિનય, પરિહારવિશુદ્ધિ ચારિત્રવિનય સૂક્ષ્મસંપરાય
ચારિત્રવિનય અને યથાળ્યાત ચારિત્રવિનય આ રીતે જ્ઞાન અને દર્શનથી
યુક્ત પુરુષનું ચારિત્રમાં મન પરોવાઈ જવું ચારિત્રવિનય છે.

આચાર્ય અથવા ઉપાધ્યાય આદિ પરોક્ષ હોય તો તેમના ગુણોનું
સ્મરણ વગેરે કરવું મનોવિનય કહેવાય છે. મનોવિનયના બે ભેદ છે-
પ્રશસ્તમનોવિનય અને અપ્રશસ્તમનોવિનય.

આચાર્ય, ઉપાધ્યાય આદિ પરોક્ષ હોય તો પણ વચનથી તેમનાં
ગુણોનું કીર્તન કરવું વગેરે વચનવિનય છે. પ્રશસ્ત તેમજ અપ્રશસ્તના
ભેદથી આ પણ બે પ્રકારના છે-

આવી જ રીતે કાયવિનય પણ સમજવો-આચાર્ય આદિ પરોક્ષ હોય
તો પણ તેમને કાયાથી-હાથ વગેરેથી અંજલિક્રિયા કરવી આદિ કાયવિનય
છે. પ્રશસ્ત અને અપ્રશસ્તના ભેદથી આના પણ બે ભેદ છે.

ऽप्यशस्तभेदाद् द्विविधः ६ लोकोपचारविनयस्तु-उपचरणमुपचारः लोकविषय
श्रद्धानपूर्वक नम्रता विशेषलक्षणो विलक्षणो व्यवहारः सचाऽसौ विनयश्चेति लोको-
पचारविनयः । स च-सप्तविधः, अभ्यासवृत्तिता-परिच्छन्दानुवर्तिताऽऽदिभेदात्
७ । विनयस्य सविस्तरं भेदानुभेदरूपं वर्णनम्-‘औपपातिक’ सूत्रस्य मत्कृतायां
‘पीयूषवर्षिणी’ टीकायां त्रिशत्तमसूत्रव्याख्यायां (पृष्ठ-२५७×२७२)
विलोकनीयम् ॥६४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तावत्-पट्टविधाऽऽभ्यन्तरतपसः प्रथमोपात्तस्य
प्रायश्चित्तस्याऽऽलोचन-प्रतिक्रमणादि दशभेदानां प्ररूपणं कृतम्, सम्प्रति क्रमप्राप्त-
स्य द्वितीयस्य विनयरूपाभ्यन्तरतपसः प्ररूपणं कर्तुमाह-‘विणए सत्तविहे,
णाण-दसण-चरित्त-मण-बह-काय-लोगोवयारभेयओ’ इति । विनय-
स्तावत् पूर्वोक्त स्वरूपो ज्ञानावरणाद्यष्टविधकर्मरजोराशि विनाशक नम्रता विशेषः

लोक विषयक श्रद्धापूर्वक नम्रता होना लोकोपचार विनय है । इसके
सात भेद हैं-अभ्यासनवृत्तिता अर्थात् गुरु के निकट में रहना, परछन्दा-
नुवर्तिता दूसरे की इच्छा को समझकर उसके अनुसार कार्य करना
आदि ।

विनय का विस्तार पूर्ण भेदानुभेद सहित वर्णन ‘औपपातिक’
सूत्र की मेरे द्वारा रचित ‘पीयूषवर्षिणी’ टीका में, तीसरे सूत्र की
व्याख्या में देखना चाहिए ॥ ६४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-छह प्रकार के आभ्यन्तर तप में परिगणित प्रथम
भेद प्रायश्चित्त के आलोचन प्रतिक्रमण आदि दस भेदों का वर्णन
पूर्वसूत्र में किया गया, अब क्रमप्राप्त द्वितीय आभ्यन्तर तप विनय की
प्ररूपणा करते हैं-

लोकविषयक श्रद्धापूर्वक नम्रता होनी लोकोपचारविनय छे. आना सात
लेह छे-अभ्यासवृत्तिता अर्थात् गुरुनी सांनिध्यमां रहेवुं; परछन्दानुवर्तिता-
भीलानी धरछाने समल्ल लध ने तह अनुसार कार्य करवुं वगेरे.

विनयनुं विस्तारपूर्वक लेहानुलेह सहित वर्णन ‘औपपातिक’ सूत्रनी
भारा वडे रथायेली ‘पीयूषवर्षिणी’ टीकां, त्रीसमां सूत्रनी व्याख्यामां लेध
देवा ललाभल्ल छे ॥६४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-छ प्रकारना आभ्यन्तर तपमां परिगणित
प्रथम लेह प्रायश्चित्तना आलोचन प्रतिक्रमण आदि दश लेहेनुं वर्णन
पूर्वसूत्रमां करवामां आंयुं, हवे कम प्राप्त द्वितीय आभ्यन्तर तप विनयनी
प्ररूपणा करीये छीये-

સમવિધો ભવતિ, વિનીયન્તે-ક્ષિપ્યન્તે જ્ઞાનાવરણાચ્છવિધકર્માણિ યેન સ વિનય
 इति व्युत्पत्तेः । तद्यथा-ज्ञान, दर्शन, चारित्र, मनो, वचः, काय, लोकोपचार,
 भेदतः । १ ज्ञानविनयः २ दर्शनविनयः ३ चारित्रविनयः ४ मनोविनयः ५
 वचोविनयः ६ कायविनयः ७ लोकोपचारविनयश्चेति । तत्र-ज्ञानविनयस्तावत्
 पञ्चविधः, तद्यथा-मतिज्ञानविनयः केवलज्ञानविनयश्चेति । तथा च-आदरपूर्वकं
 मोक्षार्थं ज्ञानग्रहणं ज्ञानाभ्यासः ज्ञानस्मरणादिकं यथाशक्ति ज्ञानविनय उच्यते ।
 ज्ञानविनये सति मति ज्ञानादि पञ्चके सबहुमानं शक्त्यतिशयो ज्ञानस्वरूपश्रद्धानं
 तद्विषयं श्रद्धानश्चोपजायते, श्रद्धेच विशेषो जायते । तथा चेकत्तम्-

‘કાલે વિજ્ઞાનં બહુમાણે ઉબહાણે તદ્ અનિહુવણે ।

વંજણ અતથ તદુભવ અદ્ભુવિહો નાણમાચારો’ ॥૧॥

જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મ રૂપી રજ કો દૂર કરને વાલી
 નમ્રતા કો વિનય કહતે હૈં-ઉસકે સાત ભેદ હૈં । જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, મન,
 વચન, કાય ઓર લોકોપચાર અર્થાત્ (૧) જ્ઞાન વિનય (૨)
 દર્શન વિનય (૩) ચરિત્રવિનય (૪) મનો વિનય (૫) વચન વિનય
 (૬) કાયવિનય ઓર (૭) લોકોપચારવિનય, इनमें से ज्ञानविनय के पांच
 ભેદ હૈં-મતિજ્ઞાનવિનય, શ્રુતજ્ઞાનવિનય, અવધિજ્ઞાનવિનય, મનઃપર્ય-
 વજ્ઞાનવિનય ઓર કેવલજ્ઞાનવિનય, આદર કે સાથ જ્ઞાન કો ગ્રહણ
 કરના, જ્ઞાન કા અભ્યાસ કરના, જ્ઞાન કા સ્મરણ આદિ કરના,
 જ્ઞાન વિનય હૈ । જ્ઞાનવિનય કે હોને પર મતિજ્ઞાન આદિ પાંચ જ્ઞાનો
 મેં વહુમાનપૂર્વક શક્તિ કા આધિક્ય હોતા હૈ, જ્ઞાન કે સ્વરૂપ કા શ્રદ્ધાન
 હોતા હૈ ઓર જ્ઞાન કે વિષય પર શ્રી શ્રદ્ધાન હોતા હૈ । શ્રુતજ્ઞાન મેં
 વિશિષ્ટતા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । કહા ભી હૈ-

જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકારના કર્મરૂપી રજને દૂર કરનારી નમ્રતાને
 વિનય કહે છે, તેના સાત ભેદ છે-જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, મન, વચન, કાયા
 અને લોકોપચાર અર્થાત્ (૧) જ્ઞાનવિનય (૨) દર્શનવિનય (૩) ચારિત્રવિનય
 (૪) મનોવિનય (૫) વચનવિનય (૬) કાયવિનય અને (૭) લોકોપચારવિનય.

આમાંથી જ્ઞાનવિનયના પાંચ ભેદ છે-મતિજ્ઞાનવિનય, શ્રુતજ્ઞાનવિનય,
 અવધિજ્ઞાનવિનય, મનઃપર્યવજ્ઞાનવિનય અને કેવળજ્ઞાનવિનય સન્માનપૂર્વક જ્ઞાન
 ગ્રહણ કરવું. જ્ઞાનને અભ્યાસ કરવો, જ્ઞાનનું સ્મરણ વગેરે કરવું જ્ઞાનવિનય
 છે જ્ઞાનવિનયના હોવાથી મતિજ્ઞાન આદિ પાંચ જ્ઞાનોમાં બહુમાનપૂર્વક
 શક્તિનું આધિક્ય થાય છે, જ્ઞાનના સ્વરૂપની શ્રદ્ધા થાય છે અને જ્ઞાનના વિષય
 પર પણ શ્રદ્ધા થાય છે. શ્રુતજ્ઞાનમાં વિશિષ્ટતા ઉત્પન્ન થાય છે. કહ્યું પણ છે-

‘કાલે વિનયે बहुमाने उपधाने तथा अनिहवे ।

व्यञ्जनेऽर्थे तदुभये अष्टविधो ज्ञाने आचारः ॥१॥ इति,

શકાદિદોષનર્જિતં તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં દર્શનદિનય ઉચ્યતે, સ ચ-સમ્યગ્દર્શન-
વિનયઃ શુશ્રૂષણાઽનત્યાશાતનાભેદાદ્ દ્વિવિધઃ ૨, તથા-તીર્થકર પ્રણીતસ્ય ધર્મસ્યા-
ઽઽચાર્યો-પાધ્યાય-સ્થવિર-કુલગણ - સંઘ-શ્રમણસામ્મોગિકમનોજ્ઞાનાશ્વાઽનાશા-
તના પ્રશમ સંવેગ-વૈરાગ્યાઽનુક્રમ્પાઽઽસ્તિવચાનિ ચ સમ્યગ્દર્શનવિનયો વોધ્યઃ
જ્ઞાનદર્શનવતઃ પુરુષસ્ય ચારિત્રે વિજ્ઞાતે સતિ તસ્મિન્ પુરુષે ભાવત આદરાતિશય-
કરણમ્-દ્રવ્યભાવતઃ સ્વયં ચારિત્રાનુષ્ઠાનશ્ચ ચારિત્રવિનય ઉચ્યતે, । સ ચારિત્ર-
વિનયઃ પશ્ચવિધઃ, સામાયિકચારિત્રવિનયઃ-છેદોપસ્થાપનચારિત્રવિનયઃ-

કાલ, વિનય, बहुमान, उपधान, अनिहव, शब्द अर्थ और
उभय-शब्दार्थ, यह आठ प्रकार का ज्ञानविनय है ।

શંકા આદિ દોષોં સે રહિત તત્ત્વાર્થ કા શ્રદ્ધાન દર્શનવિનય કહ-
લાતા હે । શુશ્રૂષણાં ઓર અનત્યાશાતના કે ભેદ સે યહ દો પ્રકાર કા
હે । તીર્થકર દ્વારા પ્રણીત ધર્મ કી આશાતના ન કરના તથા આચાર્ય,
ઉપાધ્યાય, સ્થવિર શૈક્ષ, ગ્લાન, તપસ્વી, સાધર્મિક, કુલ, ગણ સંઘ,
અવ મેનોજ્ઞ શ્રમણો કી આશાતના ન કરના તથા પ્રશમ, સંવેગ, વૈરા-
ગ્ય અનુક્રમ્પા આસ્તિત્વ યહ સમ્યગ્દર્શનવિનય હૈ ।

જ્ઞાન દર્શનવાન્ પુરુષ કે ચારિત્ર કા જ્ઞાન હોને પર ઉહ પુરુષ કા
અતિશય આદર કરનાં તથા દ્રવ્ય ભાવ સે સ્વયં ચારિત્ર કા અનુષ્ઠાન
કરના ચારિત્ર વિનય હૈ । ચારિત્ર વિનય કે પાંચ ભેદ હૈ-સામાયિક
ચારિત્ર વિનય, છેદોપસ્થાપન ચારિત્રવિનય, પરિણામ વિશુદ્ધિત ચારિત્ર-

કાળ, વિનય, बहुमान, उपधान अनिहूनव शब्द अर्थ અને ઉભય
શબ્દાર્થ-આ આઠ પ્રકારના જ્ઞાનવિનય છે.

શંકા વગેરે દોષોથી રહિત તત્ત્વાર્થની શ્રદ્ધા દર્શનવિનય કહેવાય છે.
શુશ્રૂષણા અને અનત્યાશાતનાના ભેદથી તે બે પ્રકારનો છે. તીર્થકર દ્વારા
પ્રણીત ધર્મની અશાતના ન કરવી તથા આચાર્ય, ઉપાધ્યાય, સ્થવિર, શૈક્ષ-
ગ્લાન તપસ્વી, સાધર્મિક, કુળ, ગણ, સંઘ અને મેનોજ્ઞ શ્રમણોની અશા-
તના ન કરવી તથા પ્રશમ, સંવેગ, વૈરાગ્ય, અનુક્રમ્પા અને આસ્તિક્ય આ
સમ્યગ્દર્શનવિનય છે.

જ્ઞાન-દર્શનવાન્ પુરુષના ચારિત્રનું જ્ઞાન થવાથી તે પુરુષનો અતિશય
આદર કરવો તથા દ્રવ્ય-ભાવથી સ્વયં ચારિત્રનું અનુષ્ઠાન કરવું ચારિત્રવિનય
છે ચારિત્રવિનયના પાંચ ભેદ છે-સામાયિક ચારિત્રવિનય છેદોપસ્થાપન ચારિત્ર-

સૂક્ષ્મસામ્પ્રાયિકચારિત્રવિનયઃ—યથાખ્યાતવિનયશ્ચેતિ । તથા ચ પૂર્વોક્ત સામાયિકાદિ સ્વરૂપશ્રદ્ધાનપૂર્વકં ચાનુષ્ઠાનવિધિના પ્રરૂપણં ચારિત્રવિનય ઉચ્યતે ૨ પરોક્ષેષુ ચાપિ આચાર્યોપાધ્યાયાદિષુ મનસા-વચસા કાયેન ચ સ્વલ્લ મનો વિનયઃ, વચો વિનયઃ, કાયવિનયશ્ચોચ્યતે । લોકોપચારવિનયસ્તુ—ઉપચરણ—મુપચારઃ શ્રદ્ધાનપૂર્વકો નમ્રતારૂપક્રિયાવિશેષલક્ષણો લોકવિષયો વ્યવહારઃ, સચાડસૌ વિનયશ્ચેતિ લોકોપચારવિનયઃ ઉચ્યતે । સ ચ-સમ્પ્રવિધઃ, અભ્યાસ-વૃત્તિતા પરચ્છન્દાનુવર્તિતાદિભેદાત્ । વિનયસ્ય સવિસ્તરવર્ણનં ભેદાનુભેદરૂપમ્ ‘ઔપપાતિક’ સૂત્રસ્ય મત્કૃતાયાં ‘પીયૂષવર્ષિણી’ ટીકાયાં ત્રિશત્તમસૂત્રવ્યા-ત્યાયાં (પૃષ્ઠ ૨૪૭-૨૭૨) વિલોકનીયમ્ ॥૬૪॥

વિનય, સૂક્ષ્મ સામ્પ્રાયિક ચારિત્રવિનય ઓર યથાખ્યાત ચારિત્ર વિનય । હલ્લકે અતિરિક્ત પૂર્વોક્ત સામાયિક આદિ કે સ્વરૂપ કે શ્રદ્ધાન કે સાથ અનુષ્ઠાન વિધિ લે પ્રરૂપણ કરના ચારિત્ર વિનય હૈ ।

આચાર્ય આદિ પરોક્ષ મેં હો તો મી મન સે વચન ઓર કાય સે ઉનકા વિનય કરના કયશઃ મનોવિનય, વચનવિનય ઓર કાયવિનય કહલાતા હૈ ।

ઉપચરણ કો ઉપચાર કહતે હૈં । શ્રદ્ધાનપૂર્વક નમ્રતારૂપ ક્રિયા વિશેષ ઉપચાર કહલાતા હૈ તાત્પર્ય યહ હૈ કિ લૌકિક વ્યવહાર મેં નમ્રતા એવં સૌજન્ય રચના લોકોપચાર વિનય હૈ । અભ્યાસવૃત્તિતા, પરચ્છન્દાનુવર્તિતા આદિ કે ભેદ સે હલ્લકે સાત ભેદ હૈં ।

ભેદ—પ્રભેદ કે સાથ વિનય કા વિસ્તૃત વર્ણન મેરે દ્વારા રચિત

વિનય, પરિહાર વિશુદ્ધિક ચારિત્રવિનય, સૂક્ષ્મસામ્પ્રાયિક ચારિત્રવિનય અને યથાખ્યાત ચારિત્રવિનય આ સિવાય પૂર્વોક્ત સામાયિક આદિના સ્વરૂપની શ્રદ્ધા સહિત અનુષ્ઠાન વિધિથી પ્રરૂપણ કરવી ચારિત્રવિનય છે.

આચાર્ય આદિ પરોક્ષ હોય તો પણ મનથી, વચનથી તેમજ કાયથી તેમનો વિનય કરવો અનુક્રમે મનોવિનય, વચનવિનય અને કાયવિનય કહેવાય છે.

ઉપચરણને ઉપચાર કહે છે. શ્રદ્ધાપૂર્વક નમ્રતારૂપ ક્રિયા વિશેષ ઉપચાર કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે લૌકિક વ્યવહારમાં નમ્રતા અને સૌજન્ય દાખવવા લોકોપચારવિનય છે અભ્યાસવૃત્તિતા, પરચ્છન્દાનુવર્તિતા આદિના ભેદથી આના સાત ભેદ છે.

ભેદ—પ્રભેદની સાથે વિનયનું વિસ્તૃત વર્ણન મારા વડે રચાયેલી

મૂલમ્-વૈયાવચ્ચે દસવિહે, આચરિય ઉવજ્ઞાય-થેર-તવ-
સ્સિ-સેહ-ગિલાણકુલગણસંઘ-સાહમ્મિય મેયઓ ॥૬૫॥

છાયા—‘વૈયાવૃત્ત્યં દશવિધમ્, આચાર્યો-પાધ્યાય-સ્થવિર-તપસ્વી-શૈક્ષ-
ગ્લાન કુલ-ગણ-સંઘ-સાધર્મિકભેદતઃ’ ॥૬૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વે તાવદ્ આશ્યન્તરતપસઃ પ્રાયશ્ચિત્તવિનયવૈયાવૃત્ત્યા-
દિભેદેન પદ્ધવિધસ્ય પ્રતિપાદિતત્વેન તત્ર-ક્રમશઃ પ્રાયશ્ચિત્તસ્ય દશભેદાના-
માલોચન-પ્રતિક્રમણાદીનાં વિનયસ્ય ચ તપ્તભેદાનાં જ્ઞાન-દર્શનચારિત્રા-
દિવિનયાનાં પ્રરૂપણં કૃતમ્, સમ્પતિ-ક્રમપ્રાપ્તસ્ય વૈયાવૃત્ત્યરૂપતૃતીયા-
શ્યન્તરતપસો દશભેદાનામ્ આચાર્યો-પાધ્યાયાદિ વૈયાવૃત્ત્યાનાં પ્રરૂપણં
કર્તુમાહ-‘વૈયાવચ્ચે દસવિહે’ इत्यादि । वैयावृत्यम् सूत्रोक्तविधिना
व्यावर्तते इमेतिव्यावृत्तः निर्जलक्षण शुभव्यापारवान् तस्य भावः-कर्म वा

‘ઔપપાતિક સૂત્રની ‘પીયૂષવર્ષિણી’ ટીકામાં, ત્રીસવેં સૂત્રની વ્યાખ્યા
માં (૫-૨૫૭-૨૭૨-૫૨) દેખના જાણી ॥સૂત્ર ૬૪॥

‘વૈયાવચ્ચે દસવિહે’ इत्यादि ॥ सू० ६५ ॥

સૂત્રાર્થ—વૈયાવૃત્ત્ય દસ પ્રકાર કા હૈ-૧ આચાર્ય ૨, ઉપાધ્યાય ૩,
સ્થવિર ૪ શૈક્ષ ૫ ગ્લાન ૬ તપસ્વી ૭ સાધર્મિક ૮ કુલ ૯ ગણ ૧૦ સંઘ
કે વૈયાવૃત્ત્ય કે ભેદ સે ॥સૂ०॥૬૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલે આશ્યન્તર કે પ્રાયશ્ચિત્ત, વિનય, વૈયાવૃત્ત્ય આદિ
છહ ભેદ કહે ગણે છે । उनमें से आलोचन, प्रतिक्रमण आदि दस भेद
प्रायश्चित्त के तथा ज्ञानविनय, दर्शनविनय, चारित्रविनय आदि दस भेद
विनय के कहे जा चुके हैं, अब क्रम प्राप्त तीसरे आश्व्यन्तर तप वैयावृत्य
के आचार्य वैयावृत्य, उपाध्याय वैयावृत्य आदि दस भेदों की प्ररूपणा

ઔપપાતિક સૂત્રની ‘પીયૂષવર્ષિણી’ ટીકામાં, ત્રીસમાં સૂત્રની વ્યાખ્યામાં
(પાના નં. ૨૫૭-૨૭૨) પર જોઈ લેવા લેવામાં છે. ॥૬૪॥

સૂત્રાર્થ-વૈયાવૃત્ત્ય દશ પ્રકારની છે-(૧) આચાર્ય (૨) ઉપાધ્યાય (૩)
સ્થવિર (૪) શૈક્ષ (૫) ગ્લાન (૬) તપસ્વી (૭) સાધર્મિક (૮) કુલ (૯)
ગણ તથા (૧૦) સંઘની વૈયાવૃત્ત્યના લેખથી. ॥૬૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલા આશ્યન્તર તપના પ્રાયશ્ચિત્ત, વિનય,
વૈયાવૃત્ત્ય આદિ છ ભેદ કહેવામાં આવ્યા. તેમાંથી આલોચન, પ્રતિક્રમણ
આદિ દશ ભેદ પ્રાયશ્ચિત્તના તથા જ્ઞાનવિનય, દર્શનવિનય, ચારિત્રવિનય
આદિ દશ ભેદ વિનયના કહેવામાં આવેલ છે હવે ક્રમપ્રાપ્ત ત્રીજા આશ્ય-
ન્તર તપ વૈયાવૃત્ત્યના આચાર્ય વિનય, ઉપાધ્યાયવિનય આદિ દશ ભેદોની

વૈયાવૃત્યમ્, સેવાકરણમ્ તદ્ દશવિધં ભવતિ । તદ્યથા-આચાર્યોપાધ્યાયસ્થવિર-
તપસ્વિ-શૈક્ષ-ગ્લાન-કુલ-ગણ-સંઘ-સાધર્મિકભેદતઃ, તત્ર-દશવિધં સ્વલ્લુ વૈયા-
વૃત્યં ભવતિ આચાર્યસ્ય વૈયાવૃત્યં સેવાઽઽચાર્ય વૈયાવૃત્યમ્ ૧ ઉપાધ્યાયસ્ય શુશ્રૂષા-
કરણમ્-ઉપાધ્યાયવૈયાવૃત્યમ્ ૨ સ્થવિરસ્ય-વૃદ્ધમુનેવૈયાવૃત્યં સ્થવિરવૈયાવૃત્યમ્ ૩
તપસ્વી-માસમક્ષણાદિકારકઃ, તસ્ય વૈયાવૃત્યં તપસ્વિવૈયાવૃત્યમ્ ૪ શૈક્ષસ્ય-
ગ્રહણાઽઽસેવનશિક્ષાભ્યાસશીલસ્ય વૈયાવૃત્યં-શૈક્ષવૈયાવૃત્યમ્ ૫ ગ્લાનસ્ય રુગ્ણસ્ય
રોગાદિક્લેશયુક્તશરીરસ્ય વૈયાવૃત્યં ગ્લાનવૈયાવૃત્યમ્ ૬ અનેકગણસમુદાયઃ-
કુલં તસ્ય વૈયાવૃત્યં કુલવૈયાવૃત્યમ્ ૭ મુનિસમૂહસ્ય વૈયાવૃત્યં ગણવૈયાવૃત્યમ્ ૮
સંઘસ્ય-સાધુ સાધ્વી શ્રાવક શ્રાવિકારૂપસ્ય ચતુર્વિધસ્ય સંઘસ્ય વૈયાવૃત્યં સંઘ-

કરને કે લિખે કહતે હૈ-નિજેરા રૂપ શુભવ્યાપારવાલે કો વ્યાવૃત્ત કહતે હૈ
વૈયાવૃત્યકા આવ યા કર્મ વૈયાવૃત્ય કહલાતા હૈ, જિસકા અભિપ્રાય હૈ સેવા
કરના । વૈયાવૃત્ય કે દસ ભેદ હૈ-(૧) આચાર્ય કી સેવા કરના આચાર્ય
વૈયાવૃત્ય હૈ (૨) ઉપાધ્યાય કી સેવા કરના ઉપાધ્યાય વૈયાવૃત્ય હૈ (૩)
સ્થવિર અર્થાત્ વૃદ્ધ મુનિ કી સેવા કરના સ્થવિર વૈયાવૃત્ય હૈ (૪)
ગ્રહણ-આસેવન રૂપ શિક્ષા કા જો અભ્યાસ કર રહ્યા હો એસે નવ
દીક્ષિત મુનિ કી સેવા કરના શૈક્ષ વૈયાવૃત્ય હૈ (૫) ગ્લાન-અર્થાત્
રોગ ગ્રસ્ત કી સેવા કરના ગ્લાન વૈયાવૃત્ય હૈ (૬) માસ સ્વમ્પણ આદિ
તપસ્યા કરને વાલે તપસ્વી કી સેવા કરના તપસ્વિ વૈયાવૃત્ય હૈ (૭)
સાધર્મિક અર્થાત્ સમાન સમાચારીવાલે સાધુ કી સેવા કરના સાધ-
ર્મિક વૈયાવૃત્ય હૈ અનેક કુલ કે સમૂહ કો ગણ કહતે હૈ, કુલ કી
સેવા કરના કુલ વૈયાવૃત્ય હૈ (૮) અનેક ગણ કે અર્થાત્ મુનિયો કે

પ્રપણા કરવા માટે કહીએ છીએ-નિજેરા રૂપ શુભ વ્યાપારવાળાઓને
વ્યાવૃત્ત કહે છે, વ્યાવૃત્તનો ભાવ અથવા કર્મ વૈયાવૃત્ય કહેવાય છે એનો
અર્થ એ થાય કે સેવા કરવી વૈયાવૃત્યના દશ ભેદ છે-(૧) આચાર્યની સેવા
કરવી આચાર્ય વૈયાવૃત્ય છે (૨) ઉપાધ્યાયની સેવા કરવી ઉપાધ્યાય વૈયાવૃત્ય
છે (૩) સ્થવિર અર્થાત્ વૃદ્ધ મુનિની સેવા કરવી સ્થવિર વૈયાવૃત્ય છે (૪)
ગ્રહણ-આસેવન રૂપ શિક્ષણનો જે અભ્યાસ કરતો હોય એવા નવદીક્ષિત
મુનિની સેવા કરવી ગ્લાનવૈયાવૃત્ય છે (૬) માસખમણ આદિ તપસ્યા કરનાર
તપસ્વીની સેવા કરવી તપસ્વી વૈયાવૃત્ય છે. (૭) સાધર્મિક અર્થાત્ સમાન
સમાચારીવાળા સાધુની સેવા કરવી સાધર્મિક વૈયાવૃત્ય છે. (૮) અનેક કુળના
સમૂહને ગણ કહે છે કુળની સેવા કરવી કુળવૈયાવૃત્ય છે. (૯) અનેક ગણના

વૈયાવૃત્ત્યમ્ ૯ એવમ્-સાધર્મિકસ્ય-સમાનાચારવતઃ સાધર્મૈવૈયાવૃત્ત્યં સાધર્મિક
વૈયાવૃત્ત્યમ્ ઉચ્યતે ૧૦ इत्येवं दशविधं वैयावृत्यमवगन्तव्यम् वैयावृत्येन च समा-
धिप्राप्तिः-प्रवचने शङ्काद्यभावः-प्रवचन वात्सल्यप्राकट्यञ्च भवतीति भावः ॥६५॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિઃ--પૂર્વે તાવત્-પ્રાયશ્ચિત્તવિનયવૈયાવૃત્ત્યાદિ પદ-
વિધસ્યાભ્યન્તરતપસો યથાક્રમં દશવિધપ્રાયશ્ચિત્તસ્ય, સપ્તવિધવિનયસ્ય ચ
પ્રરૂપણં કૃતમ્, સમ્પ્રતિ-ક્રમપ્રાપ્તસ્ય વૈયાવૃત્ત્યસ્ય દશભેદાન્ આચાર્યોપાધ્યાયાદિ
વૈયાવૃત્ત્યરૂપાન્ પ્રરૂપયિતુમાહ-‘વૈયાવચ્ચે દસવિધે, આયરિય-ઉવજ્ઞાય-
યેર-તવરિસ-સેહ-ગિલાણકુલ-ગણ-સંઘ-સાહમ્મિય મેયઓ’ इति ।
વૈયાવૃત્ત્યમ્ વ્યાવૃત્તસ્ય-નિર્જરાદિશુ મવ્યાપારપ્રવૃત્તસ્ય પ્રવચનપયોજિતક્રિયા-
વિશેષાનુષ્ઠાનતત્પરસ્ય ભાવઃ તથાવિધપરિણામઃ-કર્મ વા, વૈયાવૃત્ત્યમ્, તત્ત્વ-

સમૂહ કી સેવા કરના ગણ વૈયાવૃત્ય તપ હૈ (૧૦) સંઘ કી અર્થાત્
સાધુ-સાધ્વી, શ્રાવક ઓર શ્રાવિકા રૂપ ચતુર્વિધ સંઘ કી સેવા કરના
સંઘ વૈયાવૃત્ય હૈ । યહ દસ પ્રકાર કા વૈયાવૃત્ય તપ હૈ । વૈયાવૃત્ય સે
સમાધિ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ, પ્રવચન સંબન્ધી શંકા-કાંક્ષા આદિ કી
નિવૃત્તિ હો જાતી હૈ ઓર પ્રવચન વાત્સલ્ય પ્રકટ હોતા હૈ ॥૬૫॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ-પહેલે પ્રાયશ્ચિત્ત, વિનય, વૈયાવૃત્ય આદિ છઠ્ઠ પ્રકાર
કે આભ્યન્તર તપ મેં સે દસ પ્રકાર કે પ્રાયશ્ચિત્ત તથા સાત પ્રકાર કે
વિનય કા નિરૂપણ ક્રિયા ગયા, અબ ક્રમપ્રાપ્ત વૈયાવૃત્ય કે આચાર્ય
વૈયાવૃત્ય, ઉપાધ્યાય વૈયાવૃત્ય આદિ દસ ભેદ કા પ્રરૂપણ કરતે હૈ ।

જો નિર્જરા આદિ શુભવ્યાપાર મેં પ્રવૃત્ત હૈ ઓર શાસ્ત્ર પ્રતિપાદિત
ક્રિયા વિશેષ કે અનુષ્ઠાન મેં તત્પર હૈ, તલકા ભાવ યા કર્મ વૈયા-

અર્થાત્ મુનિઓના સમૂહની સેવા કરવી ગણવૈયાવૃત્ય છે. (૧૦) સંઘની
અર્થાત્ સાધુ, સાધ્વી, શ્રાવક અને શ્રાવિકા રૂપ ચતુર્વિધસંઘની સેવા કરવી
સંઘવૈયાવૃત્ય છે. આ દશ પ્રકારનું વૈયાવૃત્ય તપ છે. વૈયાવૃત્યથી સમાધિની
પ્રાપ્તિ થાય છે, પ્રવચન સંબન્ધી શંકા-કાંક્ષા વગેરેની નિવૃત્તિ થઈ જાય છે
અને પ્રવચનવાત્સલ્ય પ્રકટ થાય છે. ॥૬૫॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ—આ અગાઉ, પ્રાયશ્ચિત્ત, વિનય, વૈયાવૃત્ય આદિ
છ પ્રકારના આભ્યન્તર તપમાંથી દશ પ્રકારના પ્રાયશ્ચિત્તના તથા સાત
પ્રકારના વિનયનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે ક્રમપ્રાપ્ત વૈયાવૃત્યના
આચાર્યવૈયાવૃત્ય, ઉપાધ્યાય વૈયાવૃત્ય અદિ દશ ભેદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ—

જે નિર્જરા આદિ શુભવ્યાપારમાં પ્રવૃત્ત છે અને શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત
ક્રિયા વિશેષના અનુષ્ઠાનમાં તત્પર છે, તેનો ભાવ અથવા કર્મ વૈયાવૃત્ય

યથાયોગં ક્ષેત્ર-વસતિ-પ્રત્યવેક્ષણ ભક્તપાનવસ્ત્રપાત્રૌષધભેષજશરીરશુશ્રૂષાદિ-
રૂપ મવગન્તવ્યમ્, તત્ સ્વલુ-વૈયાવૃત્યમ્-આચાર્યોપાધ્યાયસ્થવિરતપસ્વિશૈક્ષ-
ગ્લાનકુલગણસંઘસાધર્મિકભેદતો દશવિધં ભવતિ । તન્નાઽઽવરતિ આચારયતિ
વા ધર્માદિક મિત્યાચાર્ય સ્તસ્ય વૈયાવૃત્યમ્-આચાર્યવૈયાવૃત્યમ્ ૧ ઉપાધ્યાયસ્ય
વૈયાવૃત્યમ્ ઉપાધ્યાયવૈયાવૃત્યમ્-૨ સ્થવિરસ્ય વયસા પર્યાયેણ શ્રુતેન વૃદ્ધસ્ય વૈયા-
વૃત્યં સ્થવિરવૈયાવૃત્યમ્ ૩ ચતુર્થષ્ઠાઽષ્ટમભક્તાદિવિવિધતપકારક સ્તપસ્વી
તસ્ય વૈયાવૃત્યં તપસ્વિવૈયાવૃત્યમ્ ૪ એકદિનાદારભ્યષ્ણમાસાઽવધિ દીક્ષાયુક્તસ્ય
નવદીક્ષિતસ્ય શૈક્ષસ્ય વૈયાવૃત્યં શૈક્ષવૈયાવૃત્યમ્ ૫ ગ્લાનસ્ય-રુગ્ણસ્ય વ્યાધ્યમિ-

વૃત્ય કહલાતા હૈ । ઉસે યથાયોગ્ય ક્ષેત્ર-વસતિ પ્રત્યવેક્ષણ, ભક્ત-
પાન, વસ્ત્ર, પાત્ર, ઔષધ ભેષજ, શરીર શુશ્રૂષા આદિરૂપ સમજના
ચાહિયે, અર્થાત્ હન સબ કે દ્વારા સેવા કરના વૈયાવૃત્ય હૈ । સેવ્ય કે
ભેદ સે વૈયાવૃત્ય કે દસ ભેદ હૈ (૧) આચાર્ય (૨) ઉપાધ્યાય (૩) સ્થ-
વિર (૪) શૈક્ષ (૫) ગ્લાન (૬) તપસ્વી (૭) સાધર્મિક (૮) કુલ (૯)
ગણ ૧૦ સંઘ કા વૈયાવૃત્ય । જો સ્વયં પાંચ આચાર રૂપ ધર્મ કા પાલન
કરતા હૈ ઓર દૂસરોં સે પાલન કરવાતા હૈ વહ આચાર્ય કહલાતા હૈ,
ઉસ કે વૈયાવૃત્ય કો આચાર્ય વૈયાવૃત્ય કહતે હૈ । (૨) ઉપાધ્યાય કી
સેવા કરના ઉપાધ્યાય વૈયાવૃત્ય હૈ । (૩) સ્થવિર અર્થાત્ વય દીક્ષા-
પર્યાય ઓર શ્રુતસે જો વૃદ્ધ હૈ ઉસકી સેવા કરના સ્થવિર વૈયાવૃત્ય હૈ ।
(૪) એક દિન સે લેકર છહમાસ તક કા દીક્ષિત નવ દીક્ષિત યા શૈક્ષ
કહલાતા હૈ । ઉસકા વૈયાવૃત્ય શૈક્ષવૈયાવૃત્ય હૈ । (૫) ગ્લાન અર્થાત્

કહેવાય છે. તેને યથાયોગ્ય ક્ષેત્ર-વસતિ-પ્રત્યવેક્ષણ, ભક્ત-પાન, વસ્ત્ર, પાત્ર,
ઔષધ, ભેષજ, શરીર શુશ્રૂષા આદિ રૂપ સમજવું જોઈએ અર્થાત્ આ બધા
પડે સેવા કરવી વૈયાવૃત્ય છે. સંવ્યના લેદથી વૈયાવૃત્યના દશ ભેદ છે-(૧)
આચાર્ય (૨) ઉપાધ્યાય (૩) સ્થવિર (૪) શૈક્ષ (૫) ગ્લાન (૬) તપસ્વી (૭)
સાધર્મિક (૮) કુલ (૯) ગણ અને (૧૦) સંઘનું વૈયાવૃત્ય જે સ્વયં પાંચ
આચાર રૂપ ધર્મનું પાલન કરે છે અને બીજાઓ મારફતે પાલન કરાવે છે
આચાર્ય કહેવાય છે. તેના વૈયાવૃત્યને આચાર્યવૈયાવૃત્ય કહે છે. (૨)
ઉપાધ્યાયની સેવા કરવી ઉપાધ્યાયવૈયાવૃત્ય છે. (૩) સ્થવિર અર્થાત્ વય,
દીક્ષાપર્યાય તથા શ્રુતથી જે વૃદ્ધ છે તેમની સેવા કરવી સ્થવિર વૈયાવૃત્ય છે.
(૪) એક દિવસથી લઈને છ માસ સુધીના દીક્ષિત નવદીક્ષિત અથવા શૈક્ષ
કહેવાય છે તેનું વૈયાવૃત્ય શૈક્ષવૈયાવૃત્ય છે. (૫) ગ્લાન અર્થાત્ રોગી, જે

ભૂતસ્ય શ્રમણસ્ય વૈયાવૃત્ત્યં ગ્લાનવૈયાવૃત્ત્યમ્ ૬ અનેકગણસમુદાયઃ કુલમ્ તસ્ય વૈયાવૃત્તમ્ કુલવૈયાવૃત્ત્યમ્ ૭ અનેક સાધુસમુદાયો ગણઃ તસ્ય વૈયાવૃત્ત્યં ગણવૈયાવૃત્ત્યમ્ ૮ સંઘસ્ય સાધુ સાધ્વી શ્રાવક શ્રાવિકારૂપસ્ય ચતુર્વિધસ્ય વૈયાવૃત્ત્યં સંઘ-વૈયાવૃત્ત્યમ્ ૯ સાધર્મિકાઃ-સમાનાચારવન્તઃ તેષાં-જ્ઞાનદર્શનાદિ પૌરુષેય શક્તિભિર્મોક્ષસાધકાનાં મૂલોત્તરગુણપ્રસ્પાન્નાનાં વૈયાવૃત્ત્યં સાધર્મિકવૈયાવૃત્ત્યમ્ ૧૦ । તથાચૈતેષા માચાર્યાદીનામ્ આહારપાનવસ્ત્રપાત્રપ્રતિશ્રયપીઠફલકશય્યાસંસ્તારાદિર્ધર્મસાધનભૂતઃ કાન્તારાદિ વિષમસ્થાનગર્તકૂપકણ્ઠકાદિવ્યાપ્ત

રુગ્ણ, જો કિસી વ્યાધિ સે પીડિત હો उसका वैयावृत्य ग्लान वैयावृत्य कहलाता है । (६) उपवास वेला, तेला, आदि विविध प्रकार का तपश्चरण करने वाला तपस्वी कहलाता है । उसका वैयावृत्य तपस्वि वैयावृत्य है । (७) साधर्मिक अर्थात् समान समाचारीवाले साधु की सेवा करना साधर्मिक वैयावृत्य है । (८) कुल અનેક સાધુઓં કે સમૂહ કો કુલ કહેતે હૈં અનેક કુલ કે સમૂહ કો ગણ કહેતે હૈં અનેક ગણ કે સમૂહ કો સંઘ કહેતે હૈં કુલ કી સેવા કરના કુલ વૈયાવૃત્ય હૈ (૯) ગણ-અનેક ગણકે અર્થાત્ મુનિયોં કે સમૂહ કી સેવા કરના ગણ-વૈયાવૃત્ય હૈ (૧૦) સંઘ-સાધુ, સાધ્વી, શ્રાવક ઓર શ્રાવિકા રૂપ ચતુર્વિધ સંઘ કી સેવા કરના સંઘ વૈયાવૃત્ય હૈ ।

પૂર્વોક્ત આચાર્ય આદિ કી આહાર-પાની સે, વસ્ત્ર-પાત્ર સે, ઉપાશ્રય, પીઠ, ફલક, શય્યા એવં સંસ્તારક આદિ મોક્ષ કે સાધનોં સે સેવા કરના, કાન્તાર આદિ વિષમ સ્થાનોં સે, ગડ્ડા, કૂપ, કંઠક આદિ સે યુક્ત

વ્યાધિથી પીડિત હોય, વૈયાવૃત્ય ગ્લાનવૈયાવૃત્ય કહેવાય છે. (૬) ઉપવાસ, છઠ્ઠ, અઠમ આદિ વિવિધ પ્રકારનું તપશ્ચરણ કરનાર તપસ્વી કહેવાય છે તેનું વૈયાવૃત્ય તપસ્વિવૈયાવૃત્ય છે. (૭) સાધર્મિક+અર્થાત્ સમાન સમાચારીવાળા સાધુની સેવા કરવી સાધર્મિકવૈયાવૃત્ય છે. (૮) કુળ-અનેક સાધુઓના સમૂહને કુળ કહે છે, અનેક કુળના સમૂહને ગણ કહે છે. અનેક ગણના સમૂહને સંઘ કહે છે કુળની સેવા કરવી કુળવૈયાવૃત્ય છે. (૯) ગણ-અનેક ગણની અર્થાત્ મુનિઓના સમૂહની સેવા કરવી ગણવૈયાવૃત્ય છે. (૧૦) સંઘ-સાધુ-સાધ્વી, શ્રાવક અને શ્રાવિકા રૂપ ચતુર્વિધ સંઘની સેવા કરવી સંઘવૈયાવૃત્ય છે.

પૂર્વોક્ત આચાર્ય આદિની, આહાર-પાણીથી, વસ્ત્ર-પાત્રથી, ઉપાશ્રય, પીઠ, ફળક, શય્યા અને સંતારા વગેરે મોક્ષના સાધનોથી સેવા કરવી કાન્તાર આદિ વિષમ સ્થાનોથી, ખાડો, કૂવો, કંઠક આદિથી યુક્ત સ્થળોથી

स्थल ज्वराऽतीसार-कासश्वासाद्युपसर्गेषु शुश्रूषणम् औषधभैषज्यकरणम् अभ्युद्धरणं परिरक्षणादिकं वैयावृत्यमुच्यते । उक्तञ्च व्याख्याप्रज्ञप्तौ भगवती सूत्रे २५ शतके ७ उद्देशके ८०२-सूत्रे 'वैयावच्छे दसविहे पणत्ते तं जहा-आयुरिय वैयावच्छे, उवज्झायवैयावच्छे, सेह वैयावच्छे, गिलाणवैयावच्छे, तवस्सिवैयावच्छे, थेरवैयावच्छे, साहम्मिवैयावच्छे, कुलवैयावच्छे, गणवैयावच्छे, संघवैयावच्छे, इति' । वैयावृत्यं दशविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा-आचार्यवैयावृत्यम् १ उपाध्याय वैयावृत्यम् २ शैक्षवैयावृत्यम् ३ ग्लानवैयावृत्यम् ४ तपस्विवैयावृत्यम् ५ स्थितिरवैयावृत्यम् ६ साधर्मिक वैयावृत्यम् ७ कुलवैयावृत्यम् ८ गणवैयावृत्यम् ९ संघवैयावृत्यम् १० इति ॥६५॥

मूलम्-सज्झाए पंचविहे, वायणा-पुच्छणा-परिवर्तनाऽणु-पेहा-धम्मकहा भेयओ ॥६६॥

छाया-‘स्वाध्यायः पञ्चविधः, वाचना-मच्छना-परिवर्तनाऽनुपेक्षा-धर्मकथा, भेदतः’ ॥६६॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वसूत्रे-प्रायश्चित्तादि षड्विधाऽभ्यन्तरतपसो यथा क्रमं तृतीयस्य वैयावृत्यस्याऽऽचार्यो-पाध्यायादि दशविधस्य प्ररूपणं विहितम्, सम्प्रति-क्रमागतस्य चतुर्थस्य स्वाध्यायस्य वाचना-मच्छनादि पञ्चभेदान्

स्थल से, ज्वर, अतिसार, खांसी, श्वास आदि का कष्ट होने पर सेवा करना-औषध-भेषज लाकर देना इत्यादि वैयावृत्य कहलाता है ॥६५॥

‘सज्झाए पंचविहे’ इत्यादि

सूत्रार्थ-स्वाध्यायतप पांच प्रकार का है-(१) वाचना (२) पृच्छना (३) परिवर्तना (४) अनुपेक्षा और (५) धर्मकथा ॥ ६६ ॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वसूत्र में प्रायश्चित्त आदि छह प्रकार के आभ्यन्तर तप में से तीसरे वैयावृत्य तपके दस भेदों-आचार्य वैयावृत्य, उपा-

ध्यायवा, ज्वर, अतिसार, उधरस श्वास वगेरेनुं कष्ट होय त्यारे सेवा करवी-औषध-लेषज लावीने आपवा वगेरे वैयावृत्य कहेवाय छे. ॥६५॥

‘सज्झाए पंचविहे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ-स्वाध्याय तप पांच प्रकारनुं छे-(१) वाचना (२) पृच्छना (३) परिवर्तना (४) अनुपेक्षा अने (५) धर्मकथा ॥६६॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्व सूत्रमां प्रायश्चित्त आदि छ प्रकारना आभ्यन्तर तपमांथी त्रीण वैयावृत्यतपना दश लेहो-आचार्यवैयावृत्य, उपाध्यायवैयावृत्य

પ્રરૂપયિતુમાહ-‘સજ્ઞાપ પંચવિદ્’ इत्यादि । स्वाध्यायः-सु-गुण्टु आ-अम्-
 र्यादयाऽस्वाध्यायपरिहारेण पौरुष्याद्यपेक्षयाऽध्यायः-अध्ययनं सूत्रपृच्छपठनं
 स्वाध्यायः, स पञ्चविधो भवति, तद्यथा-वाचना १ पृच्छना २ परिवर्तना ३
 अनुप्रेक्षा ४ धर्मकथा ५ चेति । तत्र-निश्चय सूत्रार्थं तदुभयभ्याऽऽदान-प्रदान-
 रूपा वाचना १ सन्देहनिवारणाय निश्चितार्थदाढर्याय वा शास्त्रस्यार्थं जानतोऽपि
 गुरुं प्रति पृच्छा-पृच्छनं पृच्छना २ अधीतस्य सूत्रादेः पुनः पुनरावृत्तिकरणं-गुणनं
 परिवर्तना ३ अधिगतार्थस्य-ज्ञातार्थस्य सूत्रस्य मनसा चिन्तनम् अनुप्रेक्षा ४ अर्हिया-
 दिधर्मस्य प्ररूपणं-धर्मकथा ५ इत्येवं पञ्चविधः खलु स्वाध्यायोऽदमन्दव्य ॥६६॥

ધ્યાયવૈયાવૃત્ત્ય આદિ, કા પ્રરૂપણ કિયા ગયા અથ ક્રમાગત ચોથે સ્વા-
 ધ્યાય તપ કે વાચના પૃચ્છના આદિ પાંચ ભેદો કા પ્રરૂપણ કરતે હૈં ।

મર્યાદાપૂર્વક અર્થાત્ અસજ્ઞાપ કો ટાલકર પૌરુષી આદિ કો
 રુખાલ રાખતે હુપ અધ્યાય-અધ્યયન અર્થાત્ સૂત્રપાઠ પઢાના સ્વાધ્યાય
 કહલાતા હૈ । સ્વાધ્યાય પાંચ પ્રકાર કા હૈ-વાચના, પૃચ્છના, પરિવર્તના
 અનુપ્રેક્ષા ઓર ધર્મકથા । इनका स्वरूप इस प्रकार है-(१) निर्दोष
 सूत्र, अर्थ और सूत्रार्थ दोनों का आदान प्रदान करना वाचना है । (२)
 संदेह का निवारण करने के लिए अथवा निश्चित अर्थ की दृढ़ता के
 लिए शास्त्र के अर्थ को जानते हुए भी गुरु के समक्ष प्रश्न करना
 पृच्छना है । (३) पढ़े हुए सूत्र आदि की बार-बार आवृत्ति करना,
 उसे गुनना परिवर्तना है । (४) जिसका अर्थ जान लिया हो उस सूत्र

આદિનું પ્રરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે ક્રમાગત ચોથા સ્વાધ્યાય તપના વાચના,
 પૃચ્છના આદિ પાંચ ભેદોનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ-

મર્યાદાપૂર્વક અર્થાત્ અસજ્ઞાપને ટાળીને, પોરસી વગેરેનો ખ્યાલ
 રાખતા થકા અધ્યાય-અધ્યયન કરવું અર્થાત્ મૂળપાઠ લાણવે, સ્વાધ્યાય
 કહેવાય છે. સ્વાધ્યાય પાંચ પ્રકારના છે-વાચના, પૃચ્છના, પરિવર્તના, અનુ-
 પ્રેક્ષા અને ધર્મકથા એમનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે છે-(૧) નિર્દોષસૂત્ર, અર્થ અને
 સૂત્રાર્થ બંનેનું આદાન-પ્રદાન કરવું વાચના છે. (૨) સન્દેહનું નિવારણ કરવા
 માટે અથવા નિશ્ચિત અર્થની દૃઢતા માટે શાસ્ત્રના અર્થને જાણતા હોવા
 છતાં પણ ગુરુ સમક્ષ પ્રશ્ન કરવો પૃચ્છના છે. (૩) લાણી ગયેલા સૂત્ર
 આદિની વારંવાર આવૃત્તિ કરવી, તેને ફરી ફરીવાર જોઈ જવું પરિવર્તના
 છે. (૪) જેનો અર્થ જાણી લીધો હોય તે સૂત્રનું મનથી ચિન્તન કરવું

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः--'पूर्व' तावद् यथाक्रमं षड्विधाभ्यन्तरतपसः प्रायश्चित्तश्च-विनयस्य-वैयावृत्यस्य च प्ररूपणं कृतम्, सम्प्रति-क्रममाप्तस्य स्वाध्यायस्य चतुर्थाभ्यन्तरतपसो वाचनादि पञ्चभेदान् प्ररूपयितुमाह- 'सज्ज्ञाए पंचविहे, वाचणापृच्छणापरिवर्तनाअनुपेक्षा-धर्मकथाभेयओ' इति । स्वाध्यायः-सुष्ठु मर्यादाया कालवेलापरिहारेण पौरुषाद्यपेक्षया वा-
 ऽध्यायः-मूलसूत्रपठनसू-स' पञ्चविधो वर्तते । तद्यथा-वाचना प्रच्छना परिवर्तनाऽनुपेक्षा धर्मकथा चेत्येवं परिसंख्यातः स्वाध्यायोऽवगन्तव्यः, तत्र-
 शिष्याणां आगमार्थाध्यापनरूपा वाचना १ कालिकस्यो-त्कालिकस्याऽऽलाप-
 प्रदानं वा-वाचना २ सन्देहविनाशाय निश्चितार्थदाढर्याय वा सूत्रार्थयोराचार्य-

का मन से चिन्तन करना अनुपेक्षा है । (५) अहिंसा आदि धर्म की प्ररूपणा करना धर्म कथा है । यह पांच प्रकार का स्वाध्याय जानना चाहिए ॥६६॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति- छह प्रकार के आभ्यन्तर तप में से प्रायश्चित्त, विनय और वैयावृत्य का निरूपण किया जा चुका, अब चौथे आभ्यन्तर तप स्वाध्याय के वाचना आदि पांच भेदों की प्ररूपणा करते हैं-

मर्यादापूर्वक अर्थात् असज्ज्ञाय काल को टालकर या पौरुषी आदि का ध्यान रखकर मूलसूत्रका पठन स्वाध्याय कहलाता है । उसके पांच भेद हैं (१) वाचना (२) पृच्छना (३) परिवर्तना (४) अनु-
 प्रेक्षा और (५) धर्मकथा शिष्यों को आगम का अर्थ पढ़ाना वाचता है या कालिक और उत्कालिक के आलापों का प्रदान करना वाचना स्वाध्याय कहलाता है । संशय का निवारण करने के लिए या निश्चित

अनुपेक्षा छे. (५) अहिंसा आदि धर्मनी प्ररूपणा करवी धर्मकथा छे. आ पांच प्रकारना स्वाध्याय जानुवा जेठये. ॥६६॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-छ प्रकारना आभ्यन्तर तपभांथी प्रायश्चित्त, विनय अने वैयावृत्यनुं निरूपण करवाभां आब्युं, हवे योथा आभ्यन्तर तप स्वाध्यायना वाचना आदि पांच लेहोनी प्ररूपणा करीये छीये-

मर्यादापूर्वक अर्थात् असज्जयकाण वगेरेने टाणी छठने अथवा पोरसी आदिनुं ध्यान राणीने मूलसूत्रनुं पठन स्वाध्याय कडेवाय छे-तेना पांच लेह छे-(१) वाचना (२) पृच्छना (३) परिवर्तना (४) अनुपेक्षा (५) धर्मकथा शिष्योने आगमने अर्थ लण्वावे वाचना छे अथवा कालिक अने उत्कालिकना आलापोनुं प्रदान करवुं वाचना स्वाध्याय कडेवाय छे. संशयनुं निवारण करना भाटे अथवा निश्चिन अर्थनी दढता भाटे सूत्र अथवा अर्थना विषयभां आचार्यने प्रश्न पूछवे पृच्छना छे. लण्वा गयेला सूत्र अने अर्थनुं

પ્રતિ પ્રશ્નઃ—પ્રચ્છના—૨ અધીત સૂત્રાર્થયોઃ પુનઃ પુનઃ પઠનમ્ પરિવર્તના—૩ વિદિતાર્થસ્ય મનસા ચિન્તનમ્—અનુપ્રેક્ષા ૪ શ્રુતચારિત્રરૂપધર્મસ્યોપદેશો ધર્મકથા ૫ ઉક્તશ્ચ ભગવતી સૂત્રે ૨૫ શતકે ૭ ઉદ્દેશકે ૮૦૨—સૂત્રે—‘સ્વાધ્યાય પાંચવિદે પઠણત્તે વાચના—પઙ્કિપુચ્છના—પરિઞટ્ટના અણુપ્પેહા—ધર્મકથા’ ઇતિ । સ્વાધ્યાયઃ પશ્ચવિધઃ, મજ્જસઃ, તથથા—વાચના ૧ પ્રતિપ્રચ્છના ૨ પરિવર્તનમ્ ૩ અનુપ્રેક્ષા ૪ ધર્મકથા ૫ ઇતિ । એવમ્—ઉત્તરાધ્યાયેऽપ્યુક્તમ્ એવશ્ચ—વાચનાદયઃ પશ્ચ તાવત્ સ્વાધ્યાયપદેન ગ્રહીતવ્યાઃ ॥૬૬॥

મૂલમ્—એગત્ત ચિત્તાવદ્દાણં જ્ઞાણં ॥૬૭॥

છાયા—‘એકત્ર ચિત્તાવસ્થાનં ધ્યાનમ્’ ॥૬૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—‘પૂર્વ’ તાવત્ પદ્ધિવિષેષુ પ્રાયશ્ચિત્તાદ્યાભ્યન્તરતપઃસુ પંચાનાં પ્રાયશ્ચિત્તવિનયવૈયાવૃત્ત્યસ્વાધ્યાયાનાં યથાક્રમં પ્રરૂપણં વિહિતમ્, અર્થ કી દૃઢતા કે લિપે સૂત્ર યા અર્થ કે વિષય મેં આચાર્ય સે પ્રશ્ન કરના પ્રચ્છતા હૈ । પઠિત સૂત્ર એવં અર્થ કા પુનઃપુનઃ પઠન કરના પરિવર્તના હૈ । જ્ઞાત અર્થ કા વાર-વાર ચિન્તન કરના અનુપ્રેક્ષા હૈ । શ્રુત એવં ચારિત્ર રૂપ ધર્મ કા ઉપદેશ દેના ધર્મકથા હૈ । ભગવતીસૂત્ર કે ૨૫ વે શતક કે ૭વે ઉદ્દેશક કે ૮૦૨ સૂત્ર મેં કહા હૈ—‘સ્વાધ્યાય પાંચ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ—વાચના, પ્રતિપ્રચ્છના, પરિવર્તના, અનુપ્રેક્ષા એવં ધર્મ કથા । હસી પ્રકાર ઉત્તરાધ્યાયન સૂત્ર મેં ભી કહા ગયા હૈ । હસ પ્રકાર સ્વાધ્યાય શબ્દ સે વાચના આદિ પાંચોં કો ગ્રહણ કરના ચાહિપ ॥૬૬॥

‘એગત્ત ચિત્તાવદ્દાણં’ ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—એક જગહ ચિત્ત કા સ્થિર હોના ધ્યાન હૈ ॥૬૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે છહ પ્રકાર કે આભ્યન્તર તપોં મેં લે પ્રાયશ્ચિત્ત

પુનઃ પુનઃ પઠન કરવું પરિવર્તના છે. જાણેલા અર્થનું વારંવાર ચિન્તન કરવું અનુપ્રેક્ષા છે અને શ્રુત અને ચારિત્ર રૂપ ધર્મને ઉપદેશ આપવો ધર્મકથા છે. ભગવતી સૂત્રના ૨૫માં શતકના ૭માં ઉદ્દેશકના ૮૦૨ સૂત્રમાં કહ્યું છે—સ્વાધ્યાય પાંચ પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે—વાચના પ્રતિપ્રચ્છના, પરિવર્તના, અનુપ્રેક્ષા અને ધર્મકથા આવી જ રીતે ઉત્તરાધ્યાયન સૂત્રમાં પણ કહેવામાં આવ્યું છે. આમ સ્વાધ્યાય શબ્દથી વાચના આદિ પાંચેયનું ગ્રહણ કરવું જોઈએ. ॥૬૬॥

‘એગત્તચિત્તાવદ્દાણં જ્ઞાણં’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—એક જગ્યાએ ચિત્તનું સ્થિર થવું ધ્યાન છે. ॥૬૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા છ પ્રકારના આભ્યન્તર તપોમાંથી પ્રાય-

सम्पत्ति-क्रमप्राप्तं ध्यानाख्यमाभ्यन्तरतपः प्ररूपयितुमाह-‘एगत्तचित्ता-
वट्ठाणं ज्ञाणं’ इति । ध्यानम्-ध्यातिर्ध्यानम्, परिणामस्थैर्यम् अन्तर्मुहूर्तमात्रकाल
मेकाग्रचित्तताऽध्यवसान मित्यर्थः नानार्थावलम्बनेन परिस्पन्दवतश्चित्तस्याऽन्या-
ऽशेषविषयेभ्यो व्यावर्त्य-एकत्रैव विषये नियमतः स्थापनम् अन्यतोऽन्तःकरण-
वृत्तिनिरोधो ध्यानमिति भावः । तच्च-ध्यानं चतुर्विधम्, आर्तरीद्र-धर्म-शुक्ल
भेदात्, । तदत्र समाहितचित्तस्याऽऽर्त-रौद्र ध्याने वर्जयित्वा धर्म-शुक्लरूपे
ध्यानद्वयं ध्यानशब्देन ग्राह्यम् । उक्तंच-उत्तराध्ययने त्रिंशत्तमेऽध्ययने पञ्च-
त्रिंशत्तमगाथायाम्-

विनय वैयावृत्य और स्वाध्याय का क्रम से निरूपण किया गया है,
अब क्रमागत ध्यान नामक आभ्यन्तर तप का प्ररूपण करने के लिए
कहते हैं-

परिणाप की स्थिरता ध्यान है । अभिप्राय यह है कि अन्तर्मुहूर्त
काल पर्यन्त चित्त का एकाग्र रहना ध्यान कहलाता है । यह चित्त नाना
अर्थों का अवलम्बन करता हुआ चंचल रहता है, अतः इसे अन्य
समस्त विषयों से हटाकर किसी एक ही विषय में लगा देना-और सब
तरफ से चित्तवृत्ति का निरोध कर देना ध्यान है ।

ध्यान चार प्रकार का है-आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान और
शुक्लध्यान, यहां आर्तध्यान और रौद्रध्यान को छोड़कर धर्मध्यान
और शुक्लध्यान ये दो ध्यान ही समझना चाहिए, क्योंकि यहां
मोक्षमार्ग का प्रकरण है और आर्तध्यान तथा रौद्रध्यान मोक्षोपयोगी

श्चित्त, विनय, वैयावृत्य तप અને स्वाધ્યાયનું ક્રમથી નિરૂપણ કરવામાં
આવ્યું હવે ક્રમાગત ધ્યાન નામક આભ્યન્તર તપનું પ્રરૂપણ કરવા માટે
કહીએ છીએ-

પરિણામની સ્થિરતા ધ્યાન છે. અભિપ્રાય એ છે કે અન્તર્મુહૂર્ત કાળ
પર્યન્ત ચિત્તનું એકાગ્ર રહેવું ધ્યાન કહેવાય છે. આ ચિત્ત બીજેલા અર્થોનું
અવલમ્બન કરતું થકું ચંચળ રહે છે, આથી તેને બીજા બધાં વિષયોથી
મુક્ત કરીને કોઈ એક જ વિષયમાં પરાવી દેવું-અને ચારે બાજુએથી ચિત્ત
વૃત્તિનો નિરોધ કરવો ધ્યાન છે.

ધ્યાન ચાર પ્રકારના છે-આર્તધ્યાન રૌદ્રધ્યાન, ધર્મધ્યાન અને શુક્લ-
ધ્યાન અહીં આર્તધ્યાન અને રૌદ્રધ્યાનને છોડી દઈ ધર્મધ્યાન અને શુક્લ-
ધ્યાન એ બે ધ્યાન જ સમજવાના છે કારણ કે આ મોક્ષમાર્ગનું પ્રકરણ
આલી રહ્યું છે જ્યારે આર્તધ્યાન તથા રૌદ્રધ્યાન મોક્ષોપયોગી નહીં પણ

‘અદ્વ-રુદાણિ વજ્જિજ્ઞા-જ્ઞાણજ્ઞા સુસમાહિણ ।

ધમ્મ-સુક્કાદ્ જ્ઞાણં તં તુ બુહાવણ’ ॥૧॥

‘આર્તરીદ્રે વર્જયિત્વા-ધ્યાયેત સુસમાહિતઃ ।

ધર્મ-શુક્લે ધ્યાને-ધ્યાનં તત્તુ બુધા વદન્તિ’ ॥૧॥ इति ॥६७॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વસૂત્રે-પદ્ધિધ્યામ્યન્તરતપસઃ ક્રમપ્રાપ્તસ્ય સ્વાધ્યા-
યસ્ય પ્રરૂપણં કૃતમ્, સમ્પતિ-પશ્ચમસ્યાઽમ્યન્તરતપસો ધ્યાનસ્ય પ્રરૂપણં
કૃતુમાદ્-‘એગત્તચિત્તાવદ્દાણં જ્ઞાણં’ इति । એકસ્મિન્ એવ ધ્યેયવસ્તુનિ ચિત્તાવ-
સ્થાનમ્, અન્યવિષયેભ્યો વ્યવર્તનપૂર્વકમ્-એકાગ્રતયા ચિત્તસ્ય વ્યવસ્થાપનં-
સ્થિરસ્તપાદનં નિર્વાતસ્થાનસ્થિતસ્થિરદીપશિખાવત્ (તત્) । એદઞ્ચ-કાવલમ્બનં
નિશ્ચલં સ્થિરતા યુક્તમધ્યવસાનં છદ્મસ્થવિષયધ્યાનમુચ્યતે । કેવલિનાન્તુ

નહીં વરન્ ઉસકે વાધકા હૈં । ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર કૈ તીસવેં અધ્યયન કી
પચ્ચીસવીં ગાથા મેં કહા હૈ —

‘સમાધિમાન્ પુરુષ આર્ત્ત ઓર રૌદ્ર ધ્યાનોં કા પરિત્યાગ કરકે ધર્મ-
ધ્યાન ઓર શુક્લધ્યાન ધ્યાવે । જ્ઞાની પુરુષ હસી કો ધ્યાન કહતે હૈં ॥૬૭॥

— તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વસૂત્ર મેં છહ આમ્યન્તર તપોં મેં સે ક્રમપ્રાપ્ત
સ્વાધ્યાય કા પ્રરૂપણ કિયા ગયા, અવ પાંચવેં આમ્યન્તર તપ ધ્યાન કી
પ્રરૂપણ કરને કૈ લિણ કહતે હૈ—

કિસી એક હી ધ્યેય વસ્તુ મેં ચિત્ત કા સ્થિર હોના અર્થાત્ વાયુ
રહિત સ્થાન મેં સ્થિત દીપક કી શિખા કૈ સમાન ચિત્ત કા એકાગ્ર રૂપ
મેં સ્થિર હો જાના ધ્યાન કહલાતો હૈ । હસ પ્રકાર એક વસ્તુ કા અવલ-
મ્બન કરને વાલા, નિશ્ચલ, સ્થિરતા સે યુક્ત છદ્મસ્થ વિષયક અધ્યવ-

તેના અવરોધક છે. ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના ત્રીસમાં અધ્યયનની પચ્ચીસમી
ગાથામાં કહ્યું છે—સમાધિમાન્ પુરુષ આર્ત્ત અને રૌદ્ર ધ્યાનોના પરિત્યાગ
કરીને ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાન ધ્યાવે જ્ઞાની પુરુષ અને જ ધ્યાન કહે છે. ॥૬૭॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વસૂત્રમાં છ આમ્યન્તર તપોમાંથી ક્રમપ્રાપ્ત
સ્વાધ્યાયનું પ્રરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે પાંચમાં આમ્યન્તર તપ ધ્યાનની
પ્રરૂપણ કરવા માટે કહીએ છીએ—

કોઈ એક જ લક્ષ્ય વસ્તુમાં ચિત્તનું સ્થિર થવું અર્થાત્ વાયુરહિત
સ્થાનમાં રહેલા દીવાની જ્યોતની સમાન ચિત્તનું એકાગ્ર રૂપમાં સ્થિર થઈ
જવું ધ્યાન કહેવાય છે. આ રીતે એક વસ્તુનું અવલમ્બન કરનાર, નિશ્ચલ,
સ્થિરતાથી યુક્ત છદ્મસ્થ વિષયક અધ્યવસાન ધ્યાન સમજવું જોઈએ, જેને

मनसोऽभावाद् वाक्ययोगनिरोध एव ध्यान भवगन्तव्यम् । प्राप्त केवलज्ञानस्य मनोव्यापारो न सम्भवति सकलकरणसमुदायनिरपेक्षत्वात् । तच्च ध्यानम् आर्त-रौद्र-धर्म-शुक्लभेदाद् चतुर्विधम् भवति, तदत्राऽऽर्त-रौद्रे वर्जयित्वा धर्म-शुक्लरूपं ज्ञेयम् । तत् खलु-ध्यानं जघन्येन-एकं समयम्, उक्तृष्टेनाऽन्तर्मुहूर्तं मात्रम्, मुहूर्तात्परतो न भवति, मोहनीय कर्माऽनुभावात्-संकलेशाद्वा । उक्तञ्च व्याख्याप्रज्ञप्ता भगवती सूत्रे २५ शतके ६ उद्देशके ७०७ सूत्रे पुलाकादि विषये 'केवह्यं कालं अवद्विय पारिणामे होज्जा ? गोयमा । जहण्णेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं अंतो मुहूत्तं' क्रियन्तं कालम् अवांस्थितपरिणामो भवति ?

साय ध्यान समझना चाहिए । केवली मनन व्यापार से रहित होते हैं अतएव उनकी अपेक्षा वचन और काय योग का निरोध ही समझना चाहिए । जिसे केवलज्ञान प्राप्त हो जाता है उसमें मनोव्यापार नहीं होता क्योंकि वह समस्त कारणों से निरपेक्ष होता है ।

ध्यान चार प्रकार का है-आर्त्तध्यान रौद्रध्यान धर्मध्यान और शुक्लध्यान आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान को छोड़कर यहां धर्म और शुक्लध्यानको ही तप में परिगणित करना चाहिए, क्योंकि यही दो ध्यान मोक्षसाधना में उपयोगी होते हैं :-आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान नहीं ।

ध्यान का काल जघन्य एक समय और उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त है । इससे अधिक समय तक मोहनीय कर्म के अनुभाव से अथवा संकलेश के कारण ध्यान स्थिर नहीं रह सकता भगवती सूत्र के पच्चीसवें शतक के छठे उद्देशक के ७०७ वें सूत्र में पुलाक आदि के विषय में कहा है—

प्रश्न- भगवन् ! कितने काल तक स्थिर परिणाम वाला रहता है ?

केवलज्ञान प्राप्त થઈ જાય છે તેમનામાં મનોવ્યાપાર હોતો નથી કારણ કે તે સમસ્ત કરણોથી નિરપેક્ષ હોય છે.

ધ્યાન ચાર પ્રકારનું છે-આર્તધ્યાન, રૌદ્રધ્યાન, ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાન આર્તધ્યાન અને રૌદ્ર ધ્યાનને છોડીને અહીં ધર્મ અને શુક્લ ધ્યાનને જ તપમાં પરિગણિત કરવા જોઈએ કારણ કે આ જ બે ધ્યાન મોક્ષ સાધનામાં ઉપયોગી થાય છે-આર્તધ્યાન અને રૌદ્રધ્યાન નહીં.

ધ્યાનને કાળ જઘન્ય એક સમય અને ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહૂર્ત છે. આનાથી વધુ સમય સુધી મોહનીય કર્મના અનુભાવથી અથવા સંકલેશના કારણે ધ્યાનમાં સ્થિરતા રહી શકતી નથી. ભગવતી સૂત્રના પચ્ચીસમાં શતકના છઠા ઉદ્દેશકના ૭૦૭માં સૂત્રમાં પુલાક વગેરેના વિષયમાં કહ્યું છે—

પ્રશ્ન- ભગવન્ ! કેટલા કાળ સુધી સ્થિર પરિણામવાળા રહે છે ?

ગૌતમ ! જધન્યેન એકં સમયમ્, ઉત્કૃષ્ટેન અન્તર્મુહૂર્તમ્ इति । સ્થાનાન્નવૃત્તો ૪
સ્થાને પ્રથમોદ્દેશકે ૨૪૭ સૂત્રે ચોક્તમ્—

‘અન્તોમુહુત્તચિત્તં ચિત્તાવદ્ધાણમેગવત્થુમ્મિ ।

છદ્ધસ્થાણં દ્ધાણં યોગનિરોહો જિનાણંતુ’ ॥૧॥

‘અન્તર્મુહૂર્તમાત્રં ચિત્તાઽવસ્થાનમેકવસ્તુનિ ।

છદ્ધસ્થાનાં ધ્યાનં યોગનિરોધો જિનાનાન્તુ ॥૧॥ इति ૬૭॥

મૂલમ્—તં ચ ચડવિવહં, અટ્ટરોદ્ધમ્મસુકમેયઓ ॥૬૮॥

છાયા—‘તચ્ચ ચતુર્વિધમ્, આર્ત-રૌદ્ર-ધર્મ-શુક્લ ભેદતઃ ॥૬૮ ।

તત્ત્વર્થાદીપિકા—પૂર્વસૂત્રે-મોક્ષ સાધન સમ્યક્ત્વાદિ પ્રધાનતયા ધ્યાનસ્વરૂપં
પ્રરૂપિતમ્, સમ્પતિ-તસ્ય ધ્યાનસ્ય ચતુર્ભેદાન્ પ્રતિપાદયિતુમાહ—‘તચ્ચડવિવહં
અટ્ટ-રોદ્ર-ધમ્મ સુકમેયઓ’ इति । તત્ સ્વલ્પ પૂર્વોક્તસ્વરૂપં ધ્યાનં ચતુર્વિધં

ઉત્તર-ગૌતમ ! જધન્ય એક સમય ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહૂર્ત તક સ્થાનાંગ
સૂત્ર કી ટીકા મેં, ચૌથે સ્થાન કે પ્રથમ ઉદ્દેશક મેં કહા હૈ—

છદ્ધસ્થોં કે ચિત્ત કી સ્થિરતા એક વસ્તુ મેં અન્તર્મુહૂર્ત તક હો
સકતી હૈ । વહ ચિત્ત સ્થિરતા હી ધ્યાન હૈ । કેવલી કે યોગોં કા નિરોધ
હો જાના ધ્યાન કહલાતા હૈ ॥૬૭॥

‘તં ચ ચડવિવહં’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ-ધ્યાન ચાર પ્રકાર કા હૈ—આર્ત, રૌદ્ર, ધર્મ ઓર શુક્લ ॥૬૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્ર મેં મોક્ષ કે સમ્યક્ત્વ આદિ સાધનોં મેં
પ્રધાન હોને કે કારણ ધ્યાન કે સ્વરૂપ કા પ્રરૂપણ કિયા ગયા, અબ
ધ્યાન કે ચાર ભેદોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

ઉત્તર—ગૌતમ ! જધન્ય એક સમય, ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહૂર્ત સુધી.
સ્થાનાંગસૂત્રની ટીકામાં ચોથા સ્થાનના પ્રથમ ઉદ્દેશકમાં કહ્યું છે—
છદ્ધસ્થાના ચિત્તની સ્થિરતા એક વસ્તુમાં અન્તર્મુહૂર્ત સુધી રહી શકે
છે. આ ચિત્ત સ્થિરતા જ ધ્યાન છે. કેવળીના યોગોનો નિરોધ થઈ જવો
ધ્યાન કહેવાય છે. ॥૬૭॥

‘તં ચ ચડવિવહં’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—ધ્યાન ચાર પ્રકારનું છે—આર્ત, રૌદ્ર, ધર્મ અને શુક્લ. ॥૬૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં મોક્ષના સમ્યક્ત્વ આદિ સાધનોમાં,
મુખ્ય હોવાના કારણે, ધ્યાનના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે
ધ્યાનના ચાર ભેદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ—

भवति, आर्त्त-रौद्र-धर्म-शुक्ल भेदतः । तथा च-आर्त्तध्यानम् १ रौद्रध्यानम् २ धर्मध्यानम् ३ शुक्लध्यानञ्च ४ ति । तत्र-ऋतं दुःखम्, अर्दन-मर्तिवा तत्र भवम् आर्त्तम्, तद्रूपं ध्यानम्-आर्त्तध्यानम् उच्यते १ रुद्रः-क्रूराशयः तस्य कर्म, तत्र भवं वा रौद्रम् तद्रूपं ध्यानं-रौद्रध्यानमुच्यते २ पूर्वोक्तस्वरूपाद् धर्मादिनपेतं (धर्म्यम्) धर्मध्यानं मुच्यते, तच्च धर्मध्यानं परंपरया मोक्षहेतुर्भवति, गौणतया मोक्षसाधनं मुपचर्यते, शुक्लध्यानं पुनः साक्षात् तद्भवे मोक्षकारणं भवति, । उपशमकं श्रेण्यपेक्षया तु-शुक्लध्यानं तृतीये भवे मोक्षदायकं भवति तच्च शुक्ल-ध्यानं शुचिगुणयोगात् शुक्लं व्यपदिश्यते ॥६८॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तावत्-षष्ठः-अभ्यन्तरतपसो ध्यानरूपस्य स्वरूपं प्रतिपादितम्, तस्य खलु ध्यानस्य भेदान् प्रतिपादयितुमाह-‘तच्च उन्विहं अद्विरोद्धम्मसुक्कमेवओ’ इति । तत् खलु ध्यानं चतुर्विधम्, तद्यथा-आर्त्तरौद्र

जिसका स्वरूप पहले कहा गया है वह ध्यान चार प्रकार का है—(१) आर्त्तध्यान (२) रौद्रध्यान (३) धर्मध्यान और (४) शुक्लध्यान ऋत या अर्ति से अर्थात् दुःख के कारण जो ध्यान होता है वह आर्त्तध्यान कहलाता है । रुद्र अर्थात् क्रूर का जो कर्म है रौद्र ध्यान कहलाता है पूर्वोक्त धर्म से जो युक्त हो वह धर्मध्यान परम्परा से मोक्ष का कारण होता है अर्थात् मोक्ष का गौण कारण है । शुक्लध्यान उसी भव में मोक्ष का साक्षात् कारण है उपशम श्रेणी की अपेक्षा से शुक्ल ध्यान तीसरे भव में मोक्ष दायक होता है । शुक्ल ध्यान शुचि गुण के योग से शुक्ल कहलाता है ॥६८॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले छठे आभ्यन्तर तप ध्यान के स्वरूप का प्रतिपादन किया गया, अब ध्यान के भेदों का निरूपण करते हैं—

જેનું સ્વરૂપ પહેલા કહેવામાં આવ્યું તે ધ્યાન ચાર પ્રકારનું છે—(૧) આર્તધ્યાન (૨) રૌદ્રધ્યાન (૩) ધર્મધ્યાન અને (૪) શુક્લધ્યાન ઋત અથવા અર્તિથી અર્થાત્ દુઃખના કારણે જે ધ્યાન થાય છે તે આર્તધ્યાન કહેવાય છે. રુદ્ર અર્થાત્ ક્રૂરનું જે કર્મ છે તે રૌદ્રધ્યાન કહેવાય છે પૂર્વોક્ત ધર્મથી જે યુક્ત હોય તે ધર્મધ્યાન છે. ધર્મધ્યાન પરંપરાથી મોક્ષનું કારણ હોય છે અર્થાત્ મોક્ષનું ગૌણ કારણ છે શુક્લધ્યાન તે જ ભવમાં મોક્ષનું સાક્ષાત્ કારણ છે. ઉપશમ શ્રેણીની અપેક્ષાથી શુક્લધ્યાન ત્રીજા ભવમાં મોક્ષદાયક હોય છે. શુક્લધ્યાન શુચિગુણના યોગથી શુક્લ કહેવાય છે. ॥૬૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—આની અગાઉ છઠા આભ્યન્તર તપ ધ્યાનના સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હવે ધ્યાનના ભેદોનું નિરૂપણ કરીએ

ધર્મશુક્લભેદતઃ, તથા ચ આર્તધ્યાનમ્ ૧ રૌદ્રધ્યાનમ્ ૨ ધર્મધ્યાનમ્ ૩ શુક્લધ્યાનમ્ ૪ इत्येवं चतुर्विधं ध्यानं भवतीति बोध्यम् । तत्र-ऋतं दुःखमुच्यते ऋते भवम् आर्तम् दुःखमवं दुखानुबन्धि च यद्-ध्यानं तद्-आर्तध्यानमुच्यते । एवं रोदयति अन्यान् इति रुद्रो दुःखहृत् हेतुः तेन कृतं तत्कर्मवा रौद्रम्, प्राणाऽतिपात कर्मबन्ध परिणत आत्मा रुद्रः तत् सम्बन्धिध्यानमुच्यते । क्षमादिदशविधलक्षणात् धर्मात् अनपेतं धर्म्यम् उच्यते, तथाविधधर्मयुक्तं ध्यानं धर्मध्यानं व्यपदिश्यते । शुक्लं निर्मलं, सकलकर्मक्षयहेतुतया शुचि विशुद्धम्, यद्वा शुचम् अष्टविधकर्मलक्षण दुःखं कल्पयति क्षपयति-ग्लपयति निरस्यतीति शुक्लम् तथाविधं ध्यानं शुक्लध्यानमुच्यते । उक्तञ्च व्याख्याप्रज्ञप्तौ भगवतीसूत्रे २५ शतके ७ उद्देशके ८०३ सूत्रे-‘चत्वारि ज्ञाणा पणन्या, तं जहा अष्टे ज्ञाणे, रोदेज्ञाणे, धर्मे ज्ञाणे,

ધ્યાન કે ચાર ભેદ હૈં-(૧) આર્તધ્યાન (૨) રૌદ્રધ્યાન (૩) ધર્મધ્યાન ઓર (૪) શુક્લધ્યાન । इनमें से जो ध्यान दुःख के कारण उत्पन्न होता है और दुखानुबन्धी होता है वह आर्तध्यान कहलाता है । जो दूसरों को रुलावे वह दुःख का कारण रुद्र कहा जाता है उससे जो उत्पन्न या उसका जो कर्म हो वह रौद्र कहलाता है । अथवा हिंसा रूप परिणत आत्मा रुद्र और उसका ध्यान रौद्रध्यान कहलाता है । क्षमा आदि दस प्रकार के, धर्म से जो युक्त हो वह धर्म्य, ऐसा धर्मयुक्तध्यान धर्मध्यान शुक्ल अर्थात् निर्मल, सकल कर्मों के क्षय का कारण होने से शुचि-विशुद्ध, अथवा अष्टविध कर्म रूप दुःख शुचि कहलाता है, उसका जो क्षय कर देता है वह शुक्ल । ऐसा ध्यान शुक्लध्यान है ।

ભગવતીસૂત્ર કે પચ્ચીસવે શતક કે સસમ ઉદ્દેશ્યક મેં કહા હૈં—

છીએ-ધ્યાનના ચાર ભેદ છે-(૧) આર્તધ્યાન (૨) રૌદ્રધ્યાન (૩) ધર્મધ્યાન અને (૪) શુક્લધ્યાન આમાંથી જે ધ્યાન દુઃખના કારણે ઉત્પન્ન થાય છે અને દુઃખાનુબન્ધી હોય છે તે આર્તધ્યાન કહેવાય છે. જે બીજાને સતાવે તે દુઃખનું કારણ રૂદ્ર કહેવામાં આવે છે, તેનાથી ઉત્પન્ન અથવા તેનું જે કર્મ હોય તે રૌદ્ર કહેવાય છે અથવા હિંસારૂપ પરિણત આત્મા રૂદ્ર અને તેનું ધ્યાન રૌદ્રધ્યાન કહેવાય છે. ક્ષમા આદિ દશ પ્રકારના ધર્મથી જે યુક્ત હોય તે ધર્મ, આવું ધર્મયુક્ત ધ્યાન એ ધર્મધ્યાન શુક્લ અર્થાત્તિ નિર્મળ, સકળ કર્મોના ક્ષયનું કારણ હોવાથી-શુચિ-વિશુદ્ધ અથવા અષ્ટવિધ કર્મરૂપ દુઃખ શુચિ કહેવાય છે તેનો જે નાશ કરી નાખે છે તે શુક્લ આવું ધ્યાન શુક્લધ્યાન છે.

ભગવતીસૂત્રના પચ્ચીસમાં શતકનાં સાતમાં ઉદ્દેશકમાં ૧૬૮ છે-‘ધ્યાન ચાર કહેવામાં આવ્યા છે-આર્તધ્યાન રૌદ્રધ્યાન ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાન. ॥૬૮॥

सुक्के' इति चत्वारिध्यानानि प्रज्ञपयानि, तद्यथा आर्तध्यानम् रौद्रध्यानम् धर्मध्यानम् शुक्लं ध्यानमिति ॥६८॥

मूलम्—धम्मसुक्काहं मोक्खहेउणो ॥६९॥

छाया—‘धर्म्य शुक्ले मोक्षहेतू ॥६९॥

तत्त्वार्थदीपिका—‘पूर्वं तावद् आभ्यन्तरतपसः प्रायश्चित्तादि भेदेन षड्विधस्य क्रमशो निरूपणानन्तरं षष्ठमपि ध्यानरूपमाभ्यन्तरतपः आर्तरौद्र धर्मशुक्लभेदेन चतुर्विधं प्रतिपादितम्, तत्र प्रथमद्वयं संसारहेतुः—अन्तिमद्वयं च मोक्षहेतुर्भवेतीति प्रतिपादयितुमाह—‘धम्मसुक्काहं मोक्खहेउणो’ इति धर्मशुक्ले पूर्वोक्ते धर्मादनपेतलक्षणधर्म शुक्लश्रेयसेते द्वे अन्तिमे ध्याने मोक्षहेतू मुक्ति-साधने भवतः । प्रथमद्वयन्तु आर्तध्यानं रौद्रध्यानञ्च संसारस्थितिकारणं भवति,

‘ध्यान चार कहे गए हैं— आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान और शुक्ल-ध्यान ॥६८॥

‘धम्मसुक्काहं मोक्खहेउणो’

सूत्रार्थ—धर्मध्यान और शुक्लध्यान मोक्ष के कारण हैं ॥६९॥

तत्त्वार्थदीपिका—पहले प्रायश्चित्त आदि के भेद से छह प्रकार के आभ्यन्तर तप का क्रमशः निरूपण करने के पश्चात् छठे आभ्यन्तर तप ध्यान के आर्त, रौद्र, धर्म और शुक्ल के भेद से चार प्रकार प्रदर्शित किए गए, इनमें से प्रथम के दो संसार के कारण हैं और अन्तिम दो मोक्ष के कारण हैं, यह प्रतिपादन करने के लिए कहते हैं—

पूर्वोक्त धर्मध्यान और शुक्लध्यान मोक्ष के साधन हैं । आरंभ के दो अर्थात् आर्तध्यान और रौद्रध्यान संसार के कारण हैं । अन्तिम दो को जब मोक्ष का साधन कहा तो पारिशेष्य न्याय से आरंभ के

‘धम्मसुक्काहं मोक्खहेउणो’ इत्यादि

सूत्रार्थ—धर्मध्यान અને शुक्लध्यान મોક્ષના કારણ છે. ॥६९॥

તત્ત્વર્થદીપિકા—પહેલા પ્રાયશ્ચિત્ત આદિના ભેદથી છ પ્રકારના આભ્યન્તર તપનું ક્રમશઃ નિરૂપણ કર્યા બાદ છઠ્ઠા આભ્યન્તર તપ ધ્યાનના આર્ત, રૌદ્ર, ધર્મ અને શુક્લના ભેદથી ચાર પ્રકાર પ્રદર્શિત કથવામાં આવ્યા આમાંથી પ્રથમ બે સંસારના કારણ છે બચારે છેલ્લા બે મોક્ષના કારણ છે એ પ્રતિપાદન કરવાના આશયથી કહીએ છીએ—

પૂર્વોક્ત ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાન મોક્ષના સાધન છે. પ્રારંભના બે અર્થાત્ આર્તધ્યાન અને રૌદ્રધ્યાન સંસારના કારણ છે અન્તિમ બેને બે મોક્ષના સાધન કહેવામાં આવ્યા તો પારિશેષ્ય ન્યાયથી આરંભના બે

અન્તિમદ્વયસ્ય મોક્ષહેતુત્વકથનેન પ્રથમદ્વયસ્ય પરિશેષાત્ સંસારહેતુત્વસિદ્ધેઃ
મોક્ષસંસારાભ્યાં પ્રકારાન્તરાઽધ્યાત્મ, તૃતીયસ્ય સાધ્યસ્ય કસ્યચિદભાવાત્ ॥૬૧॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિઃ—પૂર્વસૂત્રે—ધ્યાનરૂપં પઠ્યમાધ્યન્તરં તપશ્ચતુર્વિધ માર્તરૌદ્ર
ધર્મ્ય—શુક્લભેદાત્ સવિશદં પ્રતિપાદિતમ્, સંપત્તિ—તેષુ ચતુર્વિધેષુ ધર્મ—શુક્લ
ધ્યાનદ્વયં મોક્ષહેતુઃ, પ્રથમદ્વયન્તુ—આર્ત—રૌદ્ર ધ્યાનરૂપં સંસારહેતુર્ભવતીતિ મરૂપયિ-
તુમાહ—‘ધર્મસ્તુક્કાહં ઓક્લહેડળો’ इति । પૂર્વોક્ત ધ્યાનચતુષ્ટયેષુ અન્તિમ
દ્વયં ધર્મ શુક્લધ્યાનરૂપં મોક્ષહેતુર્ભવતિ, પરિશેષાત્પ્રથમદ્વયં સ્વલ્લ—આર્તરૌદ્રધ્યાન-
રૂપં સંસારકારણં ભવતિ, । તત્રાપિ—ધર્મ્યધ્યાનં શુક્લધ્યાનશ્ચ દેવગતે મુક્તેશ્ચ
(ઉપયોગઃ) કારણં ભવતઃ, નતુ—કેવલં મુક્તેરેવ કારણં ભવતઃ । આર્તરૌદ્રધ્યાનયોસ્તુ

દો સંસાર કે કારણ આપ હી આપ સિદ્ધ હો ગણ, ક્યોંકિ મોક્ષ ઔર
સંસાર સે અતિરિક્ત અન્ય કોઈ પ્રકાર નહીં હૈ, इन दो के सिवाय
तीसरा कोई साध्य नहीं है ॥६१॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિ—પૂર્વસૂત્ર ચેં ધ્યાન નામક આધ્યન્તરતપ કે ચાર
ભેદ—આર્ત, રૌદ્ર, ધર્મ ઔર શુક્લ વિશદ રૂપ સે પ્રતિપાદિત કિયે જા
ચુકે હૈં, अब यह प्रतिपादन करते हैं कि उन चार भेदों में से अन्तिम
ही मोक्ष के कारण हैं और आदि के दो संसार के कारण हैं—

પૂર્વોક્ત ચાર પ્રકાર કે ધ્યાનો મેં સે અન્તિમ દો અર્થાત્ ધર્મધ્યાન
ઔર શુક્લધ્યાન મોક્ષ કે કારણ હૈં ઔર આર્તધ્યાન તથા રૌદ્રધ્યાન
સંસાર કે કારણ હૈં । ધર્મધ્યાન ઔર શુક્લધ્યાન દેવગતિ ઔર મુક્તિ
દોનોં કે કારણ હોતે હૈં, अकेली मुक्ति के कारण नहीं परन्तु आर्तध्यान

સંસારના કારણુ સ્વયં જ સાબિત થઈ ગયા કારણુ કે મોક્ષ અને સંસારથી
અતિરિક્ત અન્ય કોઈ પ્રકાર નથી. આ બેના સિવાય ત્રીજું કશું જ સાધ્ય
નથી ॥ ૬૧ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિ—પૂર્વસૂત્રમાં ધ્યાન નામક આધ્યન્તર તપના ચાર ભેદ—
આર્ત, રૌદ્ર ધર્મ અને શુક્લ, વિશદ રૂપથી પ્રતિપાદિત કરવામાં આવ્યા છે.
હવે એ પ્રતિપાદન કરીએ છીએ કે તે ચાર ભેદોમાંથી અન્તિમ મોક્ષના કારણુ
છે અને શરૂઆતના બે સંસારના કારણુ છે.

પૂર્વોક્ત ચાર પ્રકારના ધ્યાનો માંથી અન્તિમ બે અર્થાત્ ધર્મ ધ્યાન અને
શુક્લધ્યાન મોક્ષના કારણુ છે અને આર્ત ધ્યાન તથા રૌદ્રધ્યાન સંસારના
કારણુ છે ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાન દેવગતિ અને મુક્તિ બંનેના કારણુ છે
એકલી મુક્તિનું કારણુજ નથી પરંતુ આર્તધ્યાન અને રૌદ્રધ્યાન એકાન્તતા
સંસારના જ કારણુ છે. તે મોક્ષના કારણુ કદાપિ હોઈ શકતા નથી.

सर्वथा संसारकारणत्वमेव नतु-कदाचिदपि मोक्षहेतुत्वं संभवति । संसारश्च-
नारकादिभेदेन चतुर्विधो वर्तते । एवन्तु-रागद्वेषमोहाः संसारहेतवः, तदनु-
गतश्चाऽऽर्त्तरीद्रूपं ध्यानमपि प्रकृष्टतमरागद्वेषमोहमाजो जनस्य भवति, तस्मात्
भवभ्रमणहेतुता तयोः खलु भवति, नतु-मोक्षहेतुता इति भावः । उक्तश्चोत्तराध्ययने
३० अध्ययने ३५ गाथायाम्-

‘अदृशद्वाणि दज्जिज्जा ज्ञाएज्जा सुसमाहिए ।

धम्म सुक्काहं ज्ञाणाहं ज्ञाणं तं तु बुद्धावए ॥१॥

आर्त्तरीद्रे वर्जयित्वा ध्यायेत्त सुसमाहितः ।

धर्मशुक्ले ध्याने ध्यानं तत्तु बुद्धा वदन्ति ॥१॥ इति,

तथा च चतुर्विधेषु ध्यानेषु-आर्त्तरीद्रध्याने भवभ्रमणहेतू, धर्मशुक्लध्यानेतु-
मोक्षहेतू भवत इति फलितम् तेषां प्रत्येक भवान्तरभेदा अग्रेऽभिधास्यन्ते ॥६९॥

और रौद्रध्यान एतान्ततः संसार के ही कारण हैं, वे मोक्ष के कारण
कदापि नहीं हो सकते । नारक आदि के भेद से संसार चार प्रकार का
होता है । यों तो राग द्वेष और मोह संसार के कारण हैं, मगर उनसे
अनुगत आर्त्त-रौद्र ध्यान भी तीव्रतम राग, द्वेष और मोह वाले
पुरुष का होता है उत्तराध्ययन के तीसवें अध्ययन की पैंतीसवीं
गाथा में कहा है-

‘समाधिमान् पुरुष आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान को त्याग कर धर्म
और शुक्लध्यान ध्यावे । ज्ञानी जन इसी को ध्यान कहते हैं ।

फलित हुआ कि चार प्रकार के ध्यानों में से आर्त्तध्यान और
रौद्रध्यान भवभ्रमण के कारण हैं और धर्मध्यान तथा शुक्लध्यान
मोक्ष के कारण हैं इनमें से प्रत्येक के अवान्तर भेदों का कथन आगे
किया जाएगा ॥६९॥

નારકઆદિના ભેદથી સંસાર ચાર પ્રકારનો છે. આમતો, રાગ
દ્વેષ અને મોહ સંસારના કારણ છે. પરંતુ તેમનાથી અનુગત આર્ત—
રૌદ્રધ્યાન પણ તીવ્રતમ રાગ દ્વેષ અને મોહ વાળા પુરુષને થાય છે આથી
તે બંને પણ ભવભ્રમણના કારણ છે ઉત્તરાધ્યયનના ત્રીસમાં અધ્યયનની
પાંત્રીસમી ગાથામાં કહ્યું છે.—

સમાધિમાન પુરુષ આર્તધ્યાન અને રૌદ્રધ્યાનનો ત્યાગ કરીને ધર્મ અને
શુક્લધ્યાન ધ્યાવે જ્ઞાનીજન આને જ ધ્યાન કહે છે.

સાબિત થયું કે ચાર પ્રકારના ધ્યાનોમાંથી આર્તધ્યાન અને રૌદ્રધ્યાન
ભવભ્રમણના કારણ છે. જ્યારે ધર્મધ્યાન તથા શુક્લધ્યાન મોક્ષના કારણ છે.
આમાંથી પ્રત્યેકના અવાન્તર ભેદોનું કથન આગળ જતા કરવામાં આવશે ॥૬૯॥

મૂલમ્-અદૃજ્ઞાણં ચતુર્વિવં, અસમ્પ્રયોગસંપ્રયોગ-વિપ્રયોગ-
સમ્પ્રયોગ મેયમ્ ॥૭૦॥

છાયા-આર્તધ્યાનં ચતુર્વિધમ્, અમનોજ સંપ્રયોગ-વિપ્રયોગસ્મૃત્યાદિભેદતઃ
તત્ત્વાર્થદીપિકા--પૂર્વં તાત્પર્ય-ધ્યાનમ્ આર્તરોદ્રધર્મશુક્લભેદેન ચતુર્વિધં
પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પ્રતિ-તેષાં ચાતુર્વિધ્યં પ્રતિપાદયિતું પ્રથમમાર્તધ્યાનસ્ય
પ્રથમોપાસ્ય ચાતુર્વિધ્યં પ્રરૂપયતિ--‘અદૃજ્ઞાણં ચતુર્વિવં’ इत्यादि । આર્તધ્યાનં
ચતુર્વિધં ભવતિ, તથા-અમનોજસંપ્રયોગ-વિપ્રયોગ-સ્મૃત્યાદિ ભેદતઃ તથા-
મનોજસંપ્રયોગવિપ્રયોગ સ્મૃતિઃ ૧ આદિના-મનોજવિપ્રયોગસંપ્રયોગસ્મૃતિઃ ૨
આતંકસંપ્રયોગવિપ્રયોગસ્મૃતિઃ ૩ પરિપેક્ષિત કામભોગસંપ્રયોગવિપ્રયોગ
સ્મૃતિશ્ચે ૪ ત્યેવં તાત્પર્ય આર્તધ્યાન ચતુર્વિધં ભવતિ । તત્રામનોજસ્ય શબ્દાદેઃ
સમ્પ્રયોગે પ્રાપ્તૌ સત્યાં તદ્વિપયોગાય ‘સ કથાં રીત્યા મે ન સ્યાત્’ इत्येवं स्मृति-

‘અદૃજ્ઞાણં ચતુર્વિવં’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ-આર્તધ્યાન ચાર પ્રકાર કા હૈ-અમનોજ સમ્પ્રયોગ-વિપ્રયોગ
સ્મૃતિ આદિ ॥૭૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા--પહેલે આર્ત, રોદ્ર, ધર્મ ઓર શુક્લ કે ભેદ સે
ધ્યાન ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ, અવ ઉસમેં સે પ્રથમ આર્તધ્યાન
કે ભી ચાર ભેદોં કા પ્રતિપાદન કરતે હૈ--

આર્તધ્યાન કે ચાર ભેદ હૈ--(૧) અમનોજ સમ્પ્રયોગ-વિપ્રયોગ-
સ્મૃતિ (૨) મનોજ વિપ્રયોગ સંપ્રયોગસ્મૃતિ (૩) આતંક સમ્પ્રયોગ વિપ્ર-
યોગ સ્મૃતિ ઓર (૪) આલેખિત કામભોગ સમ્પ્રયોગ વિપ્રયોગ સ્મૃતિ ।

અમનોજ વસ્તુ કા સંભોગ હોને પર ઉત્તરે વિપ્રયોગ કે લિષ્ટ ચિન્તન
કરના- સંકલ્પ પ્રવંધ હોના, જૈસે-‘ કિસ ઉપાય સે હસસે સેરા પિન્ડ

‘અદૃજ્ઞાણં ચતુર્વિવં’ इत्यादि

સૂત્રાર્થઃ-- આર્તધ્યાન ચાર પ્રકારનું છે. અમનોજ સામ્પ્રયોગ વિપ્રયોગ
સ્મૃતિ વગેરે ॥ ૭૦ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા--પહેલાં આર્ત રોદ્ર ધર્મ અને શુક્લના ભેદથી ધ્યાન
ચાર પ્રકારનું કહેવામાં આવ્યું છે હવે પ્રથમ આર્તધ્યાનના પણ ચાર ભેદોનું
પ્રતિપાદન કરીએ છીએ--

આર્તધ્યાનના ચાર ભેદ છે--(૧) અમનોજસમ્પ્રયોગ-વિપ્રયોગ-
સ્મૃતિ (૨) મનોજવિપ્રયોગ સમ્પ્રયોગ સ્મૃતિ (૩) આતંકસમ્પ્રયોગ વિપ્રયોગ
સ્મૃતિ અને (૪) આલેખિત-કામભોગસમ્પ્રયોગ વિપ્રયોગસ્મૃતિ

અમનોજ વસ્તુનો સંયોગ થવાથી તેના વિયોગને માટે ચિન્તન કરવું
સંકલ્પપ્રવંધ થવું જેમકે કયા ઉપાયથી આનાથી માફ પિન્ડ છુટે એવું વારંવાર

ચિન્તનં સંકલ્પ મવન્ધઃ-અમનોજસંપ્રયોગવિપ્રયોગસ્મૃતિરુચ્યતે ૧ અમનોજ-
મનસોઽપ્રિયમ્ તદ્વલુ-મનસઃ પ્રતિકૂળશ્વાદ્ મનસા ન જ્ઞાયતે इत्यમનોજ મુચ્યતે,
તત્ત્વાઽમનોજં વસ્તુ ચેતન-મચેતનશ્ચ । તત્ર-ચેતનં કુલ્લિતરૂપં દુર્ગન્ધશરીર
દૌર્ભાગ્યાદિ સહિતં કલત્રાદિકમ્ મદગ્રાસાદ્યુત્પાદક મુદ્રેગજનકં શત્રુભર્ષ
વ્યાત્રાદિકશ્ચ, પરમયુક્તં વિપગલ્લરૂપટકાદિક મચેતનં વોદ્યમ્ તેષાં પીડા
કારકત્વાત્, इत्येवं તાવત્ પ્રથમમ્ આર્તધ્યાન મનિષ્ઠસંયોગરૂપમમનોજ
વિપ્રયોગરૂપં વોચમ્ ૧ દ્વિતીયં તાવત્-મનોજવિપ્રયોગસંપ્રયોગચિન્તનરૂપમ્
આર્તવાનર્ પનોજસ્યેષ્ટદા શબ્દાદેઃ પુત્રકલત્રધનાદેર્વા વિપ્રયોગે-ચિરહે સતિ
તત્સંપ્રયોગાય-તત્પ્રાપ્તયે ચિન્તનમ્ વિવારમવન્ધઃ-પનોજવિપ્રયોગસંપ્રયોગ
ચિન્તન મુચ્યતે ૨ અથ તૃતીય આર્તધ્યાનં તાવદ્-આતંકસંપ્રયોગવિપ્રયોગ
ચિન્તારૂપમ્, આતંકો રોગઃ તસ્ય વાતાદિ પ્રકોપજનિતસ્ય સંપ્રયોગે સમુત્પન્ને

છટે' એસા વાર વાર ચિન્તન કાના અમનોજ સમ્પ્રયોગ-વિપ્રયોગ સ્મૃતિ
નામક આર્તધ્યાન કહલાગા હૈ । જો મન કો પ્રિય ન લગે વહ અમનોજ ।
અમનોજ વસ્તુ ચેતન સ્ત્રી હોતી હૈ, ઓર અચેતન સ્ત્રી' ચેતન જૈસે-કુરુપા,
દુર્ગન્ધિત શરીર કાલી એવં અસુન્દર પત્ની આદિ તથા મગ્ય ઓર ગ્રાસ
જનક શત્રુ, ભર્ષ, વ્યઘ્ર આદિ અચેતન અમનોજ, જૈસે-દિષ, શસ્ત્ર,
કંટક આદિ, ક્યોંકિ યે સર્વ પીડાકારક હોતે હૈ ।

દૂસરા આર્તધ્યાન મનોજ વિપ્રયોગ સંપ્રયોગ સ્મૃત્તિ હૈ' હસકા
અર્થ હૈ-મનોજ અર્થાત્ દષ્ટ શબ્દ આદિ એવં પુત્ર, કલત્ર, ધન આદિ કા
વિયોગ હોને પર ઉનકે સંયોગ કે લિએ ચિન્તન કરના ।

ત્રીસરા મેદ્ આતંક સમ્પ્રયોગ વિપ્રયોગ ચિન્તા હૈ । યહાં આતંક કા
અર્થ હૈ રોગ, વાત આદિ કે પ્રકોપ સે રોગ કે ઉત્પન્ન હોને પર ઉસકે

ચિન્તન કરવું' અમનોજ સમ્પ્રયોગ વિપ્રયોગસ્મૃતિ નામક આર્તધ્યાન કહેવાય છે.
જે મનને પ્રિય ન લાગે તે અમનોજ અમનોજ વસ્તુ ચેતન પણ હોય છે
અને અચેતન પણ, ચેતન જેમકે કુરુપ દુર્ગન્ધિત શરીરવાળી અને અસુન્દર
પત્ની વગેરે તથા હાય અને ગ્રાસજનક શત્રુ, સાપ વાઘ વગેરે અચેતન અમનોજ
જેવાકે ઝેર શસ્ત્ર, કાંટો વગેરે કારણકે આ બધા દુઃખદાયક હોય છે.

બીજુ આર્તધ્યાન મનોજ વિપ્રયોગ સંપ્રયોગસ્મૃતિ છે. આનો અર્થથાય છે
મનોજ અર્થાત્ દષ્ટ શબ્દ આદિ અને પુત્ર પત્ની ધન વગેરેનો વિયોગ થવાથી
તેમના સંયોગને માટે ચિન્તન કરવું.

ત્રીજો ભેદ આતંકસંપ્રયોગ વિપ્રયોગ ચિન્તા છે. અહીં આતંકનો અર્થ
છે રોગ વાયુ આદિના પ્રકોપથી રોગના ઉત્પન્ન થવાથી તેના વિયોગને માટે

સતીત્યર્થઃ તદ્વિપ્રયોગાય 'તદ્વાયઃ કથં મે રચાત્' इत्येवं चिन्तनं मुच्यते, આતઙ્ક્ય-રોગસ્ય વેદનાયા પીડિતસ્ય ચલચિત્તસ્ય ચ્યુતધૈર્યસ્ય વેદના પ્રત્યાસત્તૌ સત્યા કથમેતસ્યા વેદનાયા નિવૃત્તિર્મવિષ્ણતીતિ વેદનાવિયોગાય પુનઃ પુનશ્ચિન્તનં કર-શિરઃ પ્રમૃતિ ત્રિધૂનનમ્ આક્રોશનમ્-આક્રન્દનમ્ અશ્રુજલમોચનમ્-'પાપ-સ્વરૂપોઽયં વ્યાધિરતીવ આં વાધતે પીડયતિ કદાઽયં રોગો વિનદ્ક્ષયતિ इत्येवं चिन्तनं तृतीयं मार्तध्यानं भवतीति भावः ૩ અથ ચતુર્થ તાવત્-પરિષેવિત કામભોગસંપ્રયોગમિયદિપ્રયોગ ચિન્તારૂપ માર્તધ્યાન મુચ્યતે, ભોગાકાઙ્ક્ષાં પ્રતિ આતુરસ્ય પુરુહસ્ય પ્રાપ્ત કામભોગાદિ વિપ્રયોગં પ્રતિ મનઃ પ્રણિધાનરૂપં ચિન્તનમ્' અનાગત વિષય ભોગાકાઙ્ક્ષારૂપં વા' ચતુર્થમાર્તધ્યાન મવગન્તવ્યમ્ ૪ ॥૭૦॥

વિયોગ કે લિપ્ત ચિન્તન કરના-‘યહ રોગ કૈસે મિટ જાય ’ એસા વિચાર કરના તૈસરા આર્તધ્યાન હૈ તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જો રોગ કી વેદના સે પીડિત હૈ, જિસકા ધૈર્ય નષ્ટ હો ગયા હૈ, વહ વેદના કા સંયોગ હોને પર સોચતા હૈ-કૈસે મેરી વેદના કી નિવૃત્તિ હોગી ? એસા સોચકર હાથો સે સિર ધુનતા હૈ, ચીંચતા હૈ, આંસુ વહાતા હૈ ઓર ચિન્તન કરતા કિ-‘યહ પાપરૂપ વ્યાધિ મુઝે સતા રહી હૈ, કબ હસકા વિનાશ હોગો ? યહ તૈસરા આર્તધ્યાન કા ભેદ હૈ ।

ચૌથા આર્તધ્યાન સેવન કિયે હુએ કામભોગોં કે વિયોગ કા ચિન્તન કરના હૈ । જો ભોગોં કી કામના સે પીડિત હૈ, વહ એસા સોચતા હૈ કિ કરીં એસા ન હોં કિ હનકા વિયોગ હો જાએ યહ ચિન્તન ચૌથા આર્તધ્યાન હૈ । અથ ૧ મવિષ્ય સંબંધી કામભોગોં કા ચિન્તન કરના ચૌથા આર્તધ્યાન સમજના ચાહિએ ॥૭૦॥

ચિન્તન કરવું આ રોગ કેવી રીતે મટી જાય આવો વિચાર કરવો ત્રીજું આર્ત ધ્યાન છે.

તાત્પર્ય એ છે કે રોગી, જે રોગની વેદનાથી પીડિત છે. જેની ધીરજનો અંત આવી ગયો છે. તે વેદનાનો સંયોગ થવાથી વિચારે છે કઈ રીતે મારી વેદનાનો છુટકારો થશે? આવું કહીને હાથ વડે માથું ફેટે છે. ચીસાચીસ પાડે છે. આસુ વહેવડાવે છે અને ચિન્તન કરતો હોય છે કે આ પાપ રૂપ વ્યાધિ મને પરેશાન કરી રહી છે. ત્યારે આનો અંત આવશે? આ ત્રીજા આર્તધ્યાનનો ભેદ છે.

ચોથું આર્તધ્યાન સેવના કામભોગોના વિયોગનું ચિન્તન કરવું એ છે જે ભોગોની ઇચ્છાઓથી પીડિત છે તે એવું વિચારે છે કે કયાંય એમ ન બને કે આનો વિયોગ થઈ જાય આ ચિન્તન ચોથું આર્તધ્યાન છે અથવા ભવિષ્ય સંબંધી કામભોગોનું ચિન્તન કરવું ચોથું આર્તધ્યાન સમજવું જોઈએ ॥૭૦॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ-પૂર્વસૂત્રે-પઠસ્યાધ્યન્તરતપસો ધ્યાન સ્વરૂપસ્યાઽઽર્તરૌદ્ર ધર્મ-
શુક્લભેદેન ચાતુર્વિધ્ય મુક્તમ્, તત્ર તેષાં ચતુર્ણામપિ આર્તધ્યાનાદીનાં પ્રત્યેકં ચાતુ-
ર્વિધ્યં પ્રતિપાદયિતું પ્રથમં પ્રથમોપાત્તસ્યાઽઽર્તધ્યાનસ્ય ચાતુર્વિધ્યં પ્રરૂપયતિ-
'અદૃશ્ણાણં ચઙ્ગિવિહં, અમણુણ સંયઓગ વિષયઓગ સ્વહઆહ ભેયઓ'
इति । आर्तध्यानं ऋतं-दुःखं, तस्य निश्चितम्. यद्वा-तत्र अदम् आर्तम्, तच्च
तद्ध्यानम् आर्तस्य दुःखितस्य वा ध्यानम् आर्तध्यान मुच्यते उक्तञ्च

‘રાજ્યોપભોગ શયનાસનવાહનેષુ, સ્ત્રીગન્ધ માલ્યમણિ રત્નવિભૂષણેષુ ।

इच्छाभिलाषमतिमात्रमुपैति मोहाद् ध्यानं तदार्तमिति सप्रवदन्ति तज्ज्ञाः । १।

તત્-ચતુર્વિધ્યં મન્વતિ, તથા-અમનોજ્ઞસંપ્રયોગવિપ્રયોગસ્મૃત્યાદિ ભેદતઃ
તથા ચ અમનોજ્ઞસંપ્રયોગવિપ્રયોગસ્મૃતિઃ ૧ આદિના-મનોજ્ઞ સંપ્રયોગવિપ્રયોગ-
સ્મૃતિઃ ૨ આતંકસંપ્રયોગવિપ્રયોગસ્મૃતિઃ ૩ પરિષેવિતકામભોગસમયોગવિપ્રયોગ-

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પૂર્વસૂત્ર સેં છટે આધ્યન્તર તપ ધ્યાન કે ચાર ભેદ
કહે-આર્ત, રૌદ્ર, ધર્મ ઓર શુક્લધ્યાન । અવ ઉનમેં સે પ્રત્યેક કે ચાર-
ચાર ભેદ વતલાતે હુએ પ્રથમ આર્તધ્યાન કે ચાર ભેદોં કી પ્રરૂપના
કરતે હૈ-

ઋત કા અર્થ દુઃખ હૈ । જો ઋત કા કારણ હો અથવા ઋત સે
ઉત્પન્ન હો વહ આર્ત । અર્થાત્ દુઃખિત કા ધ્યાન આર્તધ્યાન કહલાતા
હૈ । કહા મી હૈ-

‘રાજ્ય, ઉપભોગ, શયન, આસન, વાહન, સ્ત્રી, ગંધ, માલા, મણિ,
રત્ન તથા આભૂષણ આદિ મેં યોગ કી તીવ્રતા સે જો અતીવ આકાંક્ષા
હોતી હૈ, ઉસે ધ્યાનવેત્તા આર્તધ્યાન કરતે હૈ ॥૧॥

આર્તધ્યાન ચાર પ્રકાર કા હૈ-(૧) અમનોજ્ઞ સમ્પ્રયોગ વિપ્રયોગ
સ્મૃતિ (૨) મનોજ્ઞ સમ્પ્રયોગ વિપ્રયોગસ્મૃતિ (૩) આતંક સમ્પ્રયોગ

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ-પૂર્વસૂત્રમાં છટ્ટા આધ્યન્તર તપ ધ્યાનના ચાર ભેદ
કહ્યા આર્તરૌદ્રધર્મ અને શુક્લધ્યાન હવે તેમાંથી પ્રત્યેકના ચાર ચાર ભેદ
બતાવતા થકાં પ્રથમ આર્તધ્યાનના ચાર ભેદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ

ઋતનો અર્થ દુઃખ છે. જે ઋતનું કારણ હોય અથવા ઋતથી ઉત્પન્ન થાય તે
આર્ત. આર્ત અર્થાત્ દુઃખિતનું ધ્યાન આર્તધ્યાન કહેવાય છે. વળી કહ્યું પણુ છે

રાજ્ય, ઉપભોગ, શયન, આસન, વાહન, સ્ત્રી, ગંધ મણિ, રત્ન તથા
આભૂષણ આદિમાં યોગની તીવ્રતાથી જે અતીવ આકાંક્ષા થાય છે. તેને
ધ્યાનવેત્તા આર્તધ્યાન કહે છે ॥ ૧ ॥

આર્તધ્યાન ચાર પ્રકારનું છે-(૧) અમનોજ્ઞસમ્પ્રયોગ વિપ્રયોગ સ્મૃતિ
(૨) મનોજ્ઞસમ્પ્રયોગ વિપ્રયોગ સ્મૃતિ (૩) આતંકસમ્પ્રયોગ વિપ્રયોગ સ્મૃતિ

સ્મૃતિઃ ૪ इत्येवं तावदार्तध्यानं चतुर्विधं गणनन्तव्यम् । तत्र अमनो-
 ज्ञस्याऽनिष्टस्य शब्दादिविषयाणां सम्प्रयोगे सम्बन्धे श्रोत्रादीन्द्रियेण सह सम्पर्के
 सति शब्दादिविषयाणां सान्निध्ये सति इत्यर्थः तेषां शब्दादीनां मनिष्ठानां
 विप्रयोगायाऽपगमायाऽनिष्ट शब्दादिविषयपरिहाराय कथमहमस्मादनिष्ट
 संप्रयोगान्मुच्येय' इति चिन्तनम् अमनोज्ञसंप्रयोगविप्रयोगस्मृतिरूपं प्रथम-
 मार्तध्यानं भवतीति भावः १ अथ द्वितीयमार्तध्यानं मनोज्ञसंप्रयोगाऽविप्रयोग
 चिन्तारूपम् यथा—'मनोज्ञस्येष्टरस्य वस्तुनः संप्रयोगे तस्याऽविप्रयोग-
 चिन्तनम् यथाकथमपि तस्य विप्रयोगो न स्यात्' इत्येवं चिन्तनं द्वितीय
 मार्तध्यानं मुच्यते २ अथ तृतीयमार्तध्यानम् आतङ्क संप्रयोग विप्रयोग चिन्ता-
 रूपम् यथाऽऽतङ्कस्य दुःखवेदनायाः पित्तादि धातुप्रकोपजनिताया शूल शिरः
 कम्पज्वरादिकायाः सम्प्रयोगे प्राप्ता सत्यां तद्विप्रयोगाय कथमयं मम विनङ्क्ष्य

विप्रयोग स्मृति और (४) परिषेदित कामभोग सम्प्रयोग विप्रयोग
 स्मृति । इनका स्वरूप इस प्रकार है—

(१) अनिष्ट वस्तु का संयोग होने पर उसके वियोग के लिए चिन्तन
 करना—'कैसे मैं इस अनिष्ट वस्तु से छुटकारा पाऊँ' ऐसा चिन्तन करना
 प्रथम आर्तध्यान है ।

(२) इष्ट वस्तु का संयोग होने पर ऐसा सोचना कि—'कहीं इसका
 वियोग न हो जाय' दूसरा आर्तध्यान है ।

(३) पित्त आदि के प्रकोप से रोग की वेदना उत्पन्न हो जाय—शूल
 उत्पन्न हो जाए, शिर में कम्पन होने लगे या ज्वर आ जाय, तो उसके
 वियोग के विषय में चिन्तन करना अर्थात् 'कैसे इसका विनाश हो'

અને (૪) પરિષેદિત કામભોગસમ્પ્રયોગ વિપ્રયોગ સ્મૃતિ એમનું સ્પર્શ
 આ પ્રકારે છે—

(૧) અનિષ્ટ વસ્તુનો સંયોગ થવાથી તેના વિયોગને માટે ચિન્તન કરવું
 — આ અનિષ્ટ વસ્તુથી કઈ રીતે મારો છુટકારો થાય? આવું ચિન્તન કરવું
 પ્રથમ આર્તધ્યાન છે.

(૨) ઈષ્ટ વસ્તુનો સંયોગ થવાથી એવું વિચારવું કે ક્યાંય આનો
 વિયોગ ન થઈ જાય એ બીજું આર્તધ્યાન છે.

(૩) પિત્ત આદિના પ્રકોપથી રોગની વેદના ઉપજે—શૂળ ઉત્પન્ન થઈ
 જાય માથું ધુજવા માંડે અથવા તાવ આવી જાય ત્યારે એમના વિયોગના
 વિષયમાં ચિન્તન કરવું અર્થાત્ કઈ રીતે આનો વિનાશ થાય એવો વિચાર

તીતિ ચિન્તનં તૃતીય માર્તધ્યાન મવગન્તવ્યમ્ ૩ અથ ચતુર્થમાર્તધ્યાનમ્
યથા - કામોપહતચેતસા પરિવેવિતકામભોગસંપ્રયોગસ્ય ઽવિપ્રયોગચિન્તનં ચતુર્થ-
માર્તધ્યાનમવસેયમ્ ૪ તસ્યૈતસ્ય ચતુર્વિધસ્યાપિ આર્તધ્યાનસ્ય ક્રન્દનાદીનિ
ચિહ્નાનિ ભવન્તિ યૈઃ સ્વલ્પ આર્તધ્યાયી સંલક્ષ્યતે કરતલનિહિતમ્બલાન સુખઃ
આક્રન્દતિ શોચતિ તપતિ નિઃશ્વદ મશ્રુ મુશ્ચતિ પરિદેવતે હૃદયર્થઃ इत्येवं परि-
સ્ફુટિતાનિ લક્ષણાનિ ભવન્તિ । ઉક્તશ્ચ વ્યાખ્યાપ્રજ્ઞતૌ મગવતીસૂત્રે ૨૫ શતકે
૭ ઉદ્દેશકે ૮૦૩ સૂત્રે ‘અદૃષ્ટ જ્ઞાણે ચતુર્વિદ્ધે પળ્લવતે તં જહા અમણુન્ન
સંપઓગસંપડતે, તસ્મ વિપ્પઓગ સહ સમ્મન્નાગણ્યાવિભવહ ૧ મણુપ્પ-
સંપઓગસંપડતે, તસ્મ અવિપ્પઓગેસહસમ્મન્નાગણ્યાવિ ભવહ ૨
આયંકસંપઓગ સંપડતે, તસ્મ વિપ્પઓગસહસમ્મન્નાગણ્યાવિ ભવહ ૩
પરિજુમિત કામભોગસંપઓગસંપડતે, તસ્મ અવિપ્પઓગ સહ સમ-
મ્મન્નાગણ્યાવિ ભવહ ૪ ‘અદૃષ્ટ જ્ઞાણસ્મ ચત્તારિ લક્ષણા પળ્લવત્તા,
તં જહા=કંદપ્પચા ૧ સોપજયા ૨ તિપ્પજયા ૩ પરિદેવજયા ૪ । इति,

ऐसा विचार करना तीसरा आर्तध्यान है ।

(૪) કામભોગોં કે પ્રાપ્ત હોને પર ઉનકા વિયોગ ન હોને કા ચિન્તન
કરના ચૌથા આર્તધ્યાન હૈ ।

इस चारों प्रकार के आर्तध्यान के लक्षण आक्रन्दन ‘रोना’ आदि
हैं, जिनसे यह पता लग जाता है कि यह आर्तध्यान कर रहा है । आ-
र्तध्यानी अपने ग्लान सुख को हथेली पर रख लेना है, आक्रन्दन करता
है, शोक करता है, संतप्त होता है और कभी-कभी शब्द किये बिना
आंसू बहाता है । ये आर्तध्यान का प्रकट लक्षण हैं । भगवतीसूत्र के
पच्चीसवें शतक के आठवें उद्देशक में कहा है—‘ आर्तध्यान चार प्रकार

કરવેા ત્રીજું આર્તધ્યાન છે.

(૪) કામભોગોં પ્રાપ્ત થયા પછી તેમનો વિયોગ ન થાય એ જાતનું
ચિન્તન કરવું ચૌથું આર્તધ્યાન છે..

આ ચારે પ્રકારના આર્તધ્યાન લક્ષણ આક્રન્દ રૂદન આદિ છે જેનાથી
એ જાણી શકાય છે કે આ માણસ આર્તધ્યાન કરી રહ્યો છે. આર્તધ્યાની
પોતાના મ્હાન મુખને હથેળી ઉપર રાખી લે છે, આક્રન્દ કરે છે, શોક કરે
છે, સંતપ્ત થાય છે અને કોઈ કોઈ વાર શબ્દ ઉચ્ચાર કર્યા વગર આંસુ
સારે છે. આ બધા આર્તધ્યાનના પ્રકટ લક્ષણ છે ભગવતી સૂત્રના પચ્ચીસમાં
શતકના સાતમાં ઉદ્દેશકમાં કહ્યું છે— આર્તધ્યાન ચાર પ્રકારના

आर्तध्यानं चतुर्विधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा अमनोज्ञ संप्रयोगसंप्रयुक्ते तस्य विप्रयोग-
स्मृतिसमन्वागतश्चापि भवति १ मनोज्ञविप्रयोगसंप्रयुक्ते तस्याऽविप्रयोग-स्मृति-
समन्वागतश्चाऽपि भवति २ आतङ्कसंप्रयोगसंप्रयुक्ते तस्य विप्रयोगस्मृतिसमन्वा-
गतश्चापि भवति ३ परिजुष्ट कामभोग संप्रयोग संप्रयुक्ते तस्याऽविप्रयोगसमन्वा-
गतश्चापि भवति ४ । आर्तस्य खलु ध्यानस्य चत्वारि लक्षणानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा
-क्रन्दनता १ शोचनता २ तेषनता-३ परिदेवनता ४ इति ॥७०॥

मूलम्-तं च अविरय-देशविरयप्रमत्तसंयताणां ॥७१॥

छाया-तच्चाऽविरत-देशविरत-प्रमत्तसंयतानाम् ॥७१॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वमूत्रे खलु-आर्तध्यानस्य स्वरूपम् अमनोज्ञसंप्रयोग-
विप्रयोगस्मृत्यादिभेदेन तस्य चातुर्विध्यं प्रतिपादितम्, सम्प्रति किं स्वामिक मेत-

का कहा गया है-(१) अमनोज्ञ वस्तु का संप्रयोग होने पर उसके वियोग
का विचार करना (२) मनोज्ञ वस्तु का वियोग होने पर उसके संयोग
के लिए चिन्तन करना (३) किसी प्रकार का रोग पैदा हो जाने पर उससे
छुटकारा पाने की चिन्ता करना और (४) सेवित कामभोगों का संयोग
होने पर उनका कहीं वियोग न हो जाय, ऐसा विचार करना । आर्त-
ध्यान के चार लक्षण कहे गये हैं-(१) क्रन्दन करना-चीखना, (२) शोक
करना (३) रुदन करना और (४) आंसू बड़ाना ॥७०॥

‘तं च अविरय देश’ इत्यादि

सूत्रार्थ-आर्तध्यान अविरत, देशविरत और प्रमत्तसंयत
को होता है ॥७१॥

तत्त्वार्थदीपिका-पहले आर्तध्यान के स्वरूप और उसके चार भेदों

कहेवालों आया छे -- (१) अमनोज्ञ वस्तुने संयोग थवाथी तेना वियोग
ने विचार करवे। (२) मनोज्ञ वस्तुने वियोग थवाथी तेना संयोगने भाटे
चिन्तन करवुं (३) कैरि जातने रोग उत्पन्न थवाथी तेमांथी छुटकारे
भोगववानी चिन्ता करवी अने (४) सेवित कामभोगोने संयोग थवाथी
क्यांय तेना वियोग न थई जाय ओवे विचार करवे आर्तध्यानना चार
लक्षण कहेवालों आया छे -- (१) क्रन्दन करवुं - अराडा पाउवा (२)
शोक करवे (३) रुदन करवुं अने (४) आंसू बड़ाववा ॥ ७० ॥

‘तं च अविरय देशविरय’ इत्यादि

सूत्रार्थ-आर्तध्यान, अविरत देशविरत अने प्रमत्त संयतने थाय-छे ॥७१॥

तत्त्वार्थदीपिका-- पहला आर्तध्यानना स्वरूप अने तेना - और

चचतुर्विधमार्तध्यानं भवतीति प्रतिपादयितुमाह-‘तं च-अविरत’ इत्यादि । तच्च पूर्वोक्तं चतुर्विधमार्तध्यानम्-अविरत, देशविरत, प्रमत्तसंयतानां भवति, तत्राऽ-विरताः असंयत सम्यग्दृष्ट्यन्ता ग्रह्याः । देशविरतस्तु-संयतासंयताः अवसेयाः । प्रमत्तसंयताः पञ्चदशदेश प्रमादोपेक्षाः क्रियाऽनुष्ठायिनोऽवगन्तव्याः तत्राऽविरत-देशविरतानां चतुर्विधमार्तध्यानं भवति, असंयमपरिणामोपेतत्वात्, प्रमत्तसंयताना-न्तु-अप्राप्तप्रियवस्तुसंप्रयोगचिन्तारूपम्, चतुर्थमार्तध्यानं वर्जयित्वा शेषमार्तध्यान त्रयं प्रमादोदयोद्रेकात् कदाचित् सम्भवति, कदाचिन्नापि सम्भवतीति भावः । ७१।

‘तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वं ताददू-आर्तध्यानस्वरूपं समेदं प्ररूपितम्, सम्प्रति का निरूपण किया गया, अब यह बतलाते हैं कि यह चारों प्रकार का आर्तध्यान किस-किस को होना है ?--

पूर्वोक्त चार प्रकार का आर्तध्यान अविरत, देशविरत और प्रमत्त संयत को होता है । यहां अविरत’ शब्द से असंयत सम्यग्दृष्टि तक का ग्रहण करना चाहिए । एकदेश संयमी संयतासंयत कहलाते हैं । प्रमाद से युक्त महाव्रतधारी साधु प्रमत्तसंयत कहलाते हैं ।

इनमें से अविरत और देशविरत में चारों प्रकार का आर्तध्यान पाया जाता है, क्योंकि उनमें असंयस रूप परिणाम होते हैं । प्रमत्तसं-यतो में अप्राप्त प्रियवस्तु सम्प्रयोग चिन्ता रूप अर्थात् कामभोगों की अभिलाषा रूप चौथे आर्तध्यान को छोड़कर शेष तीन आर्तध्यान प्रमाद के उद्रेक से कभी-कभी पाये जाते हैं, और कदाचित् नहीं भी होते हैं । ७१।

तत्त्वार्थनिर्युक्ति--पहले आर्त्तध्यान के स्वरूप और भेदों का कथन

લેહોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું હવે એ બતાવીએ છીએ કે આ ચારે પ્રકારના આર્તધ્યાન કેને કેને થાય છે ?

પૂર્વોક્ત ચાર પ્રકારના આર્તધ્યાન અવિરત દેશવિરત અને પ્રમત્ત સંયતને થાય છે. અહીં અવિરત શબ્દથી અસંયત સમ્યક્ દ્રષ્ટિ સુધીનું ગ્રહણ કરવું જોઈએ. એક દેશ સંયમી સંયતાસંયત કહેવાય છે પ્રમાદથી યુક્ત મહાવ્રતધારી સાધુ પ્રમત્ત સંયત કહેવાય છે.

આમાંથી અવિરત અને દેશવિરતમાં ચારે પ્રકારના આર્તધ્યાન જોવામાં આવે છે કારણકે તેમનાં અસંયમ રૂપ પરિણામ હોય છે. પ્રમત્તસંયતોમાં અપ્રાપ્ત પ્રિય વસ્તુ સમ્પ્રયોગ ચિન્તા રૂપ અર્થાત્ કામભોગોની અભિલાષા રૂપ થોથા આર્તધ્યાનને છેડીને શેષ ત્રણ આર્તધ્યાન પ્રમાદના ઉદ્રેકથી કોઈ કોઈ વાર જોવા મળે છે અને કદાચિત્ ન પણ હોય ॥ ૭૧॥

તત્ત્વર્થનિર્યુક્તિ-પહેલા આર્તધ્યાનના સ્વરૂપ અને લેહોનું કથન કરવામાં

કે સ્વલુ-આર્તધ્યાનસ્ય ચતુર્વિધસ્યાઽપિ ધ્યાતાશો ભવન્તિ કેષાં સ્વલુ આર્તધ્યાનં
ભવતીતિ પ્રભુષયિતુમાદ-‘તં ચ અવિરય દેસવિરય પ્રમત્ત સંજયાર્ણ’ ઇતિ ।
તત્ત્વ પૂર્વોક્તસ્વરૂપં ચતુર્વિધ મપિ-આર્તધ્યાનમ્, અવિરતદેશવિરતપ્રમત્તસંયતાનાં
મવતિ, તથાચાઽવિરત સમ્યગ્દષ્ટીનામ્ અવિરત પદવાચ્યાનાં ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તિ-
નામ્, સંયતાસંયતાનાશ્ચ દેશવિરત=પદવાચ્યાનાં પશ્ચગુણસ્થાનવર્તિનાં પ્રમત્તસંય-
તાનાશ્ચ ષષ્ઠગુણસ્થાનવર્તિનાં પૂર્વોક્તમાર્તધ્યાનં મવતિ, નત્વપ્રમત્તસંયતાદીનામ્ ।
અપ્રત્યાખ્યાનાવરણોદયે સતિ વિરતિલક્ષણસંયમાભાવાદ્ અવિરતસમ્યગ્દષ્ટિરુચ્યતે ।
અન્ન-નન્-અલ્પાર્થકઃ, તથાચોક્તમ્—

ક્રિયા ગયા છે. અબ યહ વતલાતે હૈં કિ ચારોં પ્રકાર કા આર્તધ્યાન
કિસ-કિસ કો હોતા હૈ—

ચારોં પ્રકાર કા આર્તધ્યાન અવિરત, દેશવિરત ઓર પ્રમત્ત સંય-
ત કો હોતા હૈ । હસ પ્રકાર પહેલે ગુણસ્થાન સે ચોથે ગુણસ્થાન તક કે
સમી ‘અવિરત’ શબ્દ સે કહે જાને વાલે જીવોં કો પંચમ ગુણસ્થાન
વર્તી સંયતાસંયતોં કો અર્થાત્ દેશસંયતોં કો તથા છટે ગુણસ્થાન મેં
રહે હુઅ પ્રમત્ત સંયતોં કો આર્તધ્યાન હોતા હૈ । અપ્રમત્ત સંયત આદિ,
જો ષષ્ઠ ગુણસ્થાન સે ઉપર હોતે હૈં, ડનમેં આર્તધ્યાન નહીં પાયા જાતા ।

જિસ જીવ કો સમ્યગ્દર્શન કી પ્રાપ્તિ હો ચુકી હો કિન્તુ અપ્રત્યા-
ખ્યાનકષાય કે ઉદય સે દેશ સંયમ મી પ્રાપ્ત ન હો વહ અવિરત સમ્ય-
ગ્દષ્ટિ કહલાતા હૈ । યહાં નન્ કા અલ્પ અર્થ મેં પ્રયોગ ક્રિયા ગયા હૈ ।
કહા મી હૈ—

આન્થું હવે એ બતાવીએ છીએ કે ચારે પ્રકારના આર્તધ્યાનકેને કેને થાય છે ?—

ચારે પ્રકારના આર્તધ્યાન અવિરત, દેશવિરત અને પ્રમત્ત સંયતને
થાય છે. આ રીતે પ્રથમ ગુણસ્થાનથી ચોથા ગુણસ્થાનક સુધીના બધા
‘અવિરત’ શબ્દથી કહેવામાં આવનારા જીવોં ને પંચમગુણસ્થાનવર્તી સંયતા
સંયતોને અર્થાત્ દેશસંયતોને તથા છટ્ટા ગુણસ્થાનમાં રહેલા પ્રમત્તસંયતોને
આર્તધ્યાન થાય છે. અપ્રમત્તસંયત આદી જે છટ્ટા ગુણસ્થાનથી ઉપર હોય
છે, તેમનામાં આર્તધ્યાન જોવામાં આવતું નથી.

જે જીવને સમ્યગ્દર્શનની પ્રાપ્તિ ન હોય પરન્તુ અપ્રત્યાખ્યાન કષાયના
ઉદયથી દેશસંયમ પણ પ્રાપ્ત ન હોય તે અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિ કહેવાય છે. અહીં
નન્નો અલ્પ અર્થમાં પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે. વળી કહ્યું પણ છે.—

જે કષાય જીવના અલ્પ પ્રત્યાખ્યાનને પણ રોકે છે. તેમને અપ્રત્યાખ્યાન
કષાય કહે છે. આ રીતે અહીં નન્ અલ્પ અર્થમાં સમજાવેા જોઈએ. ૧૨ ।

આવૃણ્વન્તિ પ્રત્યાખ્યાનં સ્વલ્પમપિ યેન જીવસ્ય ।

તેનાઽપ્રત્યાખ્યાનાવરણા સ્તૈનજ્ઞિંસોઽલ્પાર્થઃ ॥૧॥

‘પ્રત્યાખ્યાનાવરણ સદૃક્ત્વાદ્વા તથા ભવતિ સિદ્ધમ્ ।

નજ્ઞસ્વબ્રહ્મણવચનૈ તત્ સદૃશઃ પુરુષ એવેષ્ટઃ ॥૨॥ ઇતિ,

સમ્યગ્દર્શનં તાવત્-ત્રિવિધં ભવતિ, ઔપશમિક ૧ ક્ષાયોપશમિક ૨ ક્ષાયિક ૩ ભેદાત્, તદ્ યોગાત્સમ્યગ્દૃષ્ટિ રુચ્યતે । દેશવિરતસ્તુ-સંયતાસંયતો વ્યપદિશ્યતે, હિંસાદિભ્યો દેશતો-વિરતત્વાત્ સંયત ઉચ્યતે । સ એવાઽન્યતઃ સાવચયોગાદનિવૃત્તત્વાદ્-અસંયતોઽપ્યુચ્યતે, અતએવ-સ સંયતાઽસંયતો ભવતિ,

જો કષાય જીવ કે અલ્પ પ્રત્યાખ્યાન કો ઓ રોકતે હૈં, ડનકો અપ્રત્યાખ્યાન કહતે હૈં હસ પ્રકાર યહાં નજ્ અલ્પ અર્થ મૈં સમ-જ્ઞના ચાહિય ॥૧૨॥

અથવા જો પ્રત્યાખ્યાન ન હો કિન્તુ ડસકે સદૃશ હો, વહ અપ્રત્યાખ્યાન કહલાતા હૈ । જૈસે અબ્રાહ્મણ કહને પર બ્રાહ્મણ કે સદૃશ કિસી અન્ય પુરુષ કા હી બોધ હોતા હૈ ॥૨॥

સમ્યગ્દર્શન ત્રીન પ્રકાર કા હૈ-(૧) ઔપશમિક (૨) ક્ષાયોપશમિક ઓર (૩) ક્ષાયિક । હનમૈં સે ંક ઓ સમ્યગ્દર્શન જિસમૈં પાયા જાય વહ સમ્યગ્દૃષ્ટિ કહલાતા હૈ ।

સંયતાસંયત કો દેશવિરત કહતે હૈં, વહ ંકદેશ સે અર્થાત્ આંશિક રૂપ સે હિંસા આદિ પાપો સે નિવૃત્ત હોતા હૈ, હસ કારણ ડસે સંયત કહતે હૈં ઓર વહ સૂક્ષ્મ સાવચ સે વિરત હોને કે કારણ અસંયત ઓ કહલાતા હૈ । હસ પ્રકાર વહ સંયતાસંયત હૈં ।

અથવા જે પ્રત્યાખ્યાન ન હોય કિન્તુ તેના જેવું જ હોય, તે અપ્રત્યાખ્યાન કહેવાય છે. જેવી રીતે અબ્રાહ્મણ કહેવાથી બ્રાહ્મણના જેવા કેઈ અન્ય પુરુષ નો જ બોધ થાય છે ॥ ૨ ॥

સમ્યગ્દર્શન ત્રણ પ્રકારનું છે — (૧) ઔપશમિક (૨) ક્ષાયોપશમિક અને (૩) ક્ષાયિક આમાંથી ંક પણ સમ્યગ્દર્શન જેનામાં જેવામાં આવે તે સમ્યગ્દૃષ્ટિ કહેવાય છે.

સંયતાસંયતને દેશવિરત કહે છે, તે ંક દેશથી અર્થાત્ આંશિક પણે હિંસા આદિ પાપોથી નિવૃત્ત થાય છે, આથી તેને સંયત કહે છે અને તે સૂક્ષ્મ સાવધથી વિરત ન હોવાના કારણે અસંયત પણ કહેવાય છે. આવી રીતે તે સંયતાસંયત છે. સંયતાસંયત જીવ અવિરત સમ્યગ્દૃષ્ટિના

સ સ્વલુ-સંયતાસંયતોઽવિરતસમ્યગ્દષ્ટિસ્થાનાદ્ અસંખ્યેયાનિ વિશોધિ સ્થાનાનિ-
ગત્વાઽપ્રત્યાખ્યાનાવરણરૂપાયેષુ ક્ષાયોપશમં પ્રાપિતેષુ પ્રત્યાખ્યાનાવરણરૂપાયો-
દયાત્ સકલપ્રત્યાખ્યાનાઽભાવાત્ દેશવિરતો વ્યપદિચ્યતે ઉક્તથ-

‘તસ્માદ્વિરત સમ્યગ્દષ્ટિ સ્થાનાદ્ વિશોધિમુપગમ્ય ।

સ્થાનાન્તરાખ્યનૈકા ન્યારોહતિ પૂર્વવિધિનૈવ ॥૧॥

‘ક્ષપયત્યુપશમયતિ વા પ્રત્યાખ્યાનાવૃતઃ કષાયાસ્થાન્ ।

સ તતો યેન ભવેત્ તસ્ય વિરમણે બુદ્ધિરલ્પેઽલ્પા ॥૨॥

‘તસ્ય તથૈવ વિશોધિ સ્થાનાન્યારોહતોઽતિ સંખ્યાનિ ।

ચલ્છન્તિ સર્વથાઽપિ પ્રકર્ષસ્તે ક્ષયોપશમમ્ ॥૩॥

શ્રાવકધર્મો દ્વાદશ ભેદઃ સંજાયતે તત્તસ્તસ્ય ।

પશ્ચન્નિચતુઃ સંખ્ય વ્રત ગુણશિક્ષામયઃ શુદ્ધઃ ॥૪॥

-સંયતાસંયત જીવ અવિરતસમ્યગ્દષ્ટિ કે સ્થાન સે અસંખ્યાત અધિક
વિશુદ્ધિસ્થાનોં કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ । અપ્રત્યાખ્યાન કષાય કા
ક્ષયોપશમ હો જાને પર ખી પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાય કા ઉદય
હોને કે કારણ ઉસમેં સકલ પ્રત્યાખ્યાન નહીં હોતા । હસ કારણ
ઉસે દેશવિરત કહતે હીં । કહા ખી હૈ-

અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિ કે સ્થાન સે અનેક (અસંખ્યાત) વિશુદ્ધિ-
સ્થાનોં પર પૂર્વોક્ત વિધિ સે વહ આરોહણ કરતા હૈ ।

પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાય કા જય ઉપશમ યા ક્ષય કમતા હૈ
તવ ઉસકી દેશવિરતિ મેં અલ્પ બુદ્ધિ હોતો હૈ ॥૨॥

જવ વહ પહલે કી સાંતિ અસંખ્યાત વિશુદ્ધિસ્થાનોં પર આરો-
હણ કરતા હૈ, તવ ઉસકે ઉત્તર ખી ક્ષયોપશમ હો જાતા હૈ ॥૩॥

સ્થાનથી અસંખ્યાત અધિક વિશુદ્ધિસ્થાનોને પ્રાપ્ત થાય છે. અપ્રત્યાખ્યાન
કષાયને ક્ષયોપશમ થઈ જવાથી પણ પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાયને ઉદય થવાના
કારણે તેમાં સકલ પ્રત્યાખ્યાન થતું નથી. આ કારણે તેને દેશવિરત કહે છે.
કહ્યું પણ છે --

અવિરત સમ્યગ્દષ્ટિના સ્થાનથી અનેક (અસંખ્યાત) વિશુદ્ધિસ્થાનો
પર પૂર્વોક્ત વિધિથી તે અરેહણ કરે છે.

પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાયને જ્યારે ઉપશમ અથવા ક્ષય કરે છે. ત્યારે
તેની દેશવિરતિમાં અલ્પ બુદ્ધિ હોય છે. ॥ ૨ ॥

જ્યારે તે અગાઉની જેમ અસંખ્યાત વિશુદ્ધિસ્થાનો પર આરેહણ
કરે છે ત્યારે તેના પણ ક્ષયોપશમ થઈ જાય છે ॥ ૩ ॥

સર્વં પ્રત્યાખ્યાનં યેનાવૃત્તિરિતિ તદ્વિલક્ષ્યતોડપિ ।

તેન પ્રત્યાખ્યાના વરણાસ્તૈ નિર્વિશેષોક્તાઃ ॥૫॥ इति,

इदानीं प्रमत्तसंयतो व्याख्यायते तस्य देशविरतस्य तस्मादपि देशविरति स्थानात्—असंख्येयानि विशोधिस्थानानि आरोहती मायारूपतृतीयकषायेषु प्रकर्षेण क्षयोपशमं प्राप्तेषु सर्वं सावध्य यौग प्रत्याख्यान विरति भवति तथाचोक्तम्—

‘देशविरतोऽपि ततः स्थानात् सविशोधिषुत्तमां प्राप्य ।

स्थानान्तराणि पूर्वविधिनैव संयात्यनेकानि । १॥

તથા ઉસ જીવ કે બારહ પ્રકાર કા આશ્રકધર્મ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, જિસમેં અણુવ્રત પાંચ, ગુણવ્રત ત્રીન ઓર શિક્ષવ્રત ચાર હોતે હૈં ઓર વહ આવકધર્મ શુદ્ધ હોતા હૈ । ૪॥

પ્રત્યાખ્યાનની અભિલાષા કરને પર મી જિસકે ઉદય સે પ્રત્યાખ્યાન ન હો સકે વહ સામાન્યતઃ પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાય કહે ગઈ હૈં । ૫।

અવ પ્રમત્તસંયતની વ્યાખ્યા કરતે હૈ—જવ દેશવિરત આવક દેશવિરત સ્થાન સે અસંખ્યાત વિશુદ્ધિસ્થાનો પર આરૂઢ હોતા હૈં ઓર ત્રીસરી માયા કષાય કા અધિકતા કે સાથે ક્ષયોપશમ કરતા હૈ, તથા સર્વસાવધયેગ કા પ્રત્યાખ્યાન રૂપ વિરતિઉત્પન્ન હોતી હૈ । કહા મી હૈ—

દેશવિરત મી દેશવિરતિસ્થાન સે વિશિષ્ટ શુદ્ધિ કો પ્રાપ્ત હો કર પૂર્વોક્ત વિધિ કે અનુસાર અનેક સ્થાનાન્તરોં કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ । વહ પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાયોં કા ઉપશમ અથવા ક્ષય કરતા

ત્યારે તે જીવને બાર પ્રકારનો આવકધર્મ ઉત્પન્ન થાય છે જેમાં અણુવ્રત પાંચ ગુણવ્રત ત્રણ અને શિક્ષવ્રત ચાર હોય છે અને તે આવકધર્મ શુદ્ધ હોય છે ॥ ૪ ॥

પ્રત્યાખ્યાનની અભિલાષા કરવા છતાં પણ જેના ઉદયથી શક્ય પ્રત્યાખ્યાન ન થઈ શકે તેને સામાન્યતઃ પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાય કહેવામાં આવ્યા છે. ॥ ૫ ॥

હવે પ્રમત્તસંયતની વ્યાખ્યા કરીએ છીએ ત્યારે દેશવિરત આવક દેશવિરતિ સ્થાનથી અસંખ્યાત વિશુદ્ધિ સ્થાનો પર આરૂઢ થાય છે અને ત્રીજી માયા કષાયની અધિકતાની સાથે ક્ષયોપશમ કરે છે, ત્યારે સર્વસાવધયેગના પ્રત્યાખ્યાન રૂપ વિરતિ ઉત્પન્ન થાય છે. કહેયું પણ છે—

દેશવિરત પણ દેશવિરતિ સ્થાનથી વિશિષ્ટ શુદ્ધિને પ્રાપ્ત થઈને પૂર્વોક્ત વિધિ અનુસાર અનેક સ્થાનાન્તરોંને પ્રાપ્ત થાય છે ત્યારે તેનામાં સર્વવિરતિ

‘ક્ષયત્યુપશમયતિ વા પ્રત્યાખ્યાનાદૃતઃ કષાયાસ્તાન્ ।

સતતોદયેન ભવેત્, તસ્ય વિરમણે સર્વતોઽપિ મતિઃ ॥૨॥

છેદોપસ્થાપ્યં ચાદૃતં સામાયિકં ચરિત્રં વા ।

સતતો લક્ષતે પ્રત્યાખ્યાનાવરણક્ષયોપશમાત્ ॥૩॥

તસ્ય સ્વલુ-તથાશૂતસ્ય સંયતસ્ય સર્વતોવિરમણ મતિયુક્તસ્ય પञ્ચમહાવ્રત સમિતિગુપ્તિવિશિષ્ટસ્ય કષાયનિગ્રહાત્-ઇન્દ્રિયદમનાચ્ચ નિરુદ્ધાસ્રવસ્ય નિર્વેદાદિ વૈરાગ્યભાવનાભિઃ સ્થિરીકૃતસંવેગસ્ય પૂર્વોક્ત દ્વાદશ વાહ્યાભ્યન્તરતપોયોગાત્ સશ્ચિત્કર્મણિ નિર્જરયતઃ સૂત્રાનુસારં યતમાનસ્ય તદાત્મો મોહનીયકર્માનુભાવાત્ સ તથાશૂતઃ સંયતઃ સંકલેશસ્થાનાદ્વા-વિશોધિ સ્થાનાદ્વાઽન્તર્મુહૂર્તાત્ પરાવર્તતે, તદનન્તરં સંજ્વલનકષાયોદયાત્-ઇન્દ્રિયવિકથા પ્રમાદાદ્ યોગ દુષ્પ્રણિધાનાત્કુશ-

હૈ, તથા ઉત્તમે સર્વવિરતિ કી ભાવના ઉત્પન્ન થોતી હૈ । તત્પ-
દ્વાત્ વહ પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાય કે ક્ષય યા ઉપશમ યા ક્ષયોપશમ
છેદોપસ્થાપનીય અથવા સામાયિક ચારિત્ર કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ ॥૨-૩॥

જો શ્રમણ સર્વવિરતિ કો પ્રાપ્ત કર ચુકા હૈ, જો પાંચ મહા-
વ્રતો, સમિતિયોં ઓર ગુપ્તિયોં સે સમ્પન્ન હૈ, જિસને કષાયોં ઓર
ઇન્દ્રિયોં કા નિગ્રહ કરકે આસ્રવ કા નિરોધ કર દિયા હૈ, નિર્વેદ
આદિ ભાવનાઓં સે જિસકા સંવેગ સ્થિર હો ચુકા હૈ, જો પૂર્વો-
ક્ત ચારહ પ્રકાર કે વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર તપ કે દ્વારા સંચિત્ત
કર્મોં કી નિર્જરા કરને મેં ઉચન હૈ, સૂત્ર કે અનુસાર યતના-
ચાર કરતા હૈ, એના સાધુ જવ સંકલેશસ્થાન સે યા વિશુદ્ધિ
સ્થાન સે અન્તર્મુહૂર્ત કે વાદ પલટતા હૈ, તથા સંજ્વલન કષાય કે

ની ભાવના ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારબાદ તે પ્રત્યાખ્યાનાવરણ કષાયના ક્ષય
અથવા ઉપશમ અથવા ક્ષયોપશમથી છેદોપસ્થાપનીય અથવા સામાયિક
ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરી લે છે ॥ ૧ - ૩ ॥

જે શ્રમણ સર્વવિરતિને પ્રાપ્ત કરી ચુકયો છે, જે પાંચ મહાવ્રતો
સમિતિઓ અને ગુપ્તિઓથી સમ્પન્ન છે, જેણે કષાયો અને ઇન્દ્રિયોને
નિગ્રહ કરીને આસ્રવનો નિરોધ કર્યો છે, નિર્વેદ આદિ ભાવનાઓથી જેનો
સંવેગ સ્થિર થઈ ગયેલ છે. જે પૂર્વોક્ત બાર પ્રકારના વાહ્ય અને આભ્યન્તર
તપ દ્વારા સંચિત્ત કર્મોની નિર્જરા કરવામાં ઉદ્યુક્ત છે. સૂત્ર અનુસાર
યતનાચાર કરે છે એવા સાધુ બપોરે સંકલેશ સ્થાનથી અથવા વિશુદ્ધ સ્થાન
થી અન્તર્મુહૂર્ત બાદ બદલાય છે. ત્યારે સંજ્વલન કષાયના ઉદયથી ઇન્દ્રિય

છેવુ કર્મસ્વપ્નનાદરાચ્ચ સંકલેશાદ્યાયાં સ્થિતઃ પ્રમત્તસંયતો ભવતિ । (વઠ-
સપ્તમગુણસ્થાનયોઃ પરસ્પરં પરાવર્તનં કુર્વન્તી, તત્ર પ્રત્યેકત્રાઽન્તર્મુહૂર્તકાલં યાવત્
સ્થિત્વા વઠ ગુણસ્થાનાત્પરાવૃત્ય સપ્તમે ગુણસ્થાને ગચ્છતિ, તદાઽપમત્તસંયતો
ભવતિ । સપ્તમાત્પરાવૃત્ય પુનઃ વઠે વદા સમાયાતિ તદા પ્રમત્તસંયતો ભવતીતિ
ભાવઃ) । તથાચ્ચેતે ત્રયોઽપિ-અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ દેશવિરત-પ્રમત્તસંયતાઃ આર્ત-
ધ્યાનિનો ભવન્તીતિ શાબઃ । ચતુર્વિધશ્ચૈતદાર્તધ્યાનં કાપોત નીલ કૃષ્ણલેશ્યાનુ-
સારિ વિજ્ઞેયમ્ ॥૭૧॥

ઉદય સે, હન્દ્રિયવિકથા પ્રમાદ સે, યોગ કે અપ્રશસ્ત વ્યાપાર સે
કુશળ કર્મો મેં અનાદર હોને સે, સંકલેશકાલ મેં પ્રમત્તસંયત હો
જાતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ છટે ઓર સાતવેં ગુણસ્થાન કા
પરસ્પર પરિવર્તન હોતા રહતા હૈ । હનમેં સે કિસી એક ગુણસ્થાન મેં
અન્તર્મુહૂર્ત કાલ તક રહકર દુસરે મેં ચલાજાતા હૈ, જૈસે છટે સે સાતવે
મેં ઓર સાતવેં સે છટે ગુણસ્થાન મેં આતા-જાતા રહતા હૈ । જબ
મુનિઆત્મધ્યાન મેં લીન હોતા હૈ ઓર બાહ્યક્રિયા સે નિવૃત્ત હોના હૈ
તબ સપ્તમ ગુણસ્થાન મેં હોતા હૈ । જબ ધર્મોપદેશ, ગુરુચન્દન ભિક્ષાચર્યા
આદિ કોઈ મી બાહ્ય પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ તબ આત્મિક ઉપયોગ સે
ચ્યુત હો જાને કે કારણ છટે ગુણસ્થાન મેં આ જાતા હૈ । હસ
પ્રકાર હન દોનોં ગુણસ્થાનોં મેં પરિવર્તન હોતા હી રહતા હૈ ।

આશય યહ હૈ કિ અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ, તક દેશવિરત ઓર
પ્રમત્તસંયત મેં આર્તધ્યાન પાયા જાતા હૈ । યહ ચારોં પ્રકાર કા
આર્તધ્યાન કાપોત, નીલ ઓર કૃષ્ણલેશ્યા સે અનુગત હોતા હૈ ॥૭૧॥

વિકથા પ્રમાદથી યોગના અપ્રશસ્ત વ્યાપારથી કુશળ કર્મોમાં અનાદર થવાથી
સંકલેશકાળમાં પ્રમત્તસંયત થઇ જાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે છટકા અને સાતમાં
ગુણસ્થાનોનાં પરસ્પર પરિવર્તન થતુ રહે છે આમાંથી કોઈ એક ગુણસ્થાનમાં
અન્તર્મુહૂર્ત કાળ સુધી રહીને બીજામાં ચાલ્યો જાય છે જેમ છટકામાંથી
સાતમાં અને સાતમાંથી છટકા ગુણસ્થાનમાં આવતો - જતો રહે છે.
જ્યારે મુનિરાજ આત્મધ્યાનમાં લીન હોય છે અને બાહ્ય ક્રિયાથી નિવૃત્ત
થાય છે ત્યારે સપ્તમ ગુણસ્થાનમાં હોય છે. જ્યારે ધર્મોપદેશ, ગુરુવંદણા
ભિક્ષાચર્યા આદિ કોઈ પણ બાહ્ય પ્રવૃત્તિ કરે છે ત્યારે આત્મિક ઉપયોગથી
વ્રણ થઈ જવાના કારણે છટકા ગુણસ્થાનમાં આવી જાય છે. આમ આ-બંને
ગુણસ્થાનોમાં પરિ-વર્તન થતું જ રહે છે.

કહેવાનું એ છે કે અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ સુધી દેશવિરત અને પ્રમત્ત-
સંયતમાં આર્તધ્યાન જોવામાં આવે છે. આ ચારે પ્રકારના આર્તધ્યાન કાપોત
નીલ અને કૃષ્ણલેશ્યાથી અનુગત હોય છે ॥ ૭૧ ॥

મૂલમ્-રોદ્ધજ્ઞાણં ચતુર્વિહં, હિંસા-મૌસ-સ્તેય-સંરક્ષણાનુ-
બંધિ મૈયઓ અવિરય દેસવિરયાણં ॥૭૨॥

છાયા-રોદ્ધધ્યાનં ચતુર્વિધમ્, હિંસા-મૃષા-સ્તેય સંરક્ષણાનુબંધિ મેદતોઽવિ-
રત-દેશવિરતાનામ્ ॥૭૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વે સ્વલ્પ ચતુર્વિધેષુ ધ્યાનેષુ પ્રથમં ચતુર્વિધ મપ્યાર્તધ્યાનં
પરુપિતમ્, સંપતિ-ક્રમપ્રાપ્તસ્ય દ્વિતીયસ્ય રોદ્ધધ્યાનસ્ય ચાતુર્વિધ્યં તત્સ્વામિત્વજ્ઞ
પ્રતિપાદયિતુમાહ-‘રોદ્ધજ્ઞાણં ચતુર્વિહં’ इत्यादि । રોદ્ધધ્યાનં સ્વલ્પ ચતુર્વિધં
भवति, હિંસાહેતુકત્વાત્-મૃષાસ્તેય સંરક્ષણાનુબંધિમેદતઃ તથાચ-રોદ્ધધ્યાનસ્ય
હિંસાહેતુકત્વાત્-મૃષાહેતુકત્વાત્-ચૌર્યહેતુકત્વાત્-સંરક્ષણહેતુકત્વાત્ચ કાર્યે કાર-
ણોપચારાત્ રોદ્ધધ્યાનમપિ ચતુર્વિધં ભવતિ । હિંસા મૃષા સ્તેય-સંરક્ષણાનુબંધિ-

‘રોદ્ધજ્ઞાણં ચતુર્વિહં’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ-રોદ્ધધ્યાન ચાર પ્રકાર કા હૈ- (૧) હિંસાનુબંધી (૨)
મૃષાવાદાનુબંધી ઓર (૪) સંરક્ષણાનુબંધી યહ ધ્યાન અવિરત
ઓર દેશવિરતિ મેં હો પાયા જાતા હૈ ॥૭૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-ચાર પ્રકાર કે ધ્યાનોં મેં સે પ્રથમ આત્મધ્યાન
કે ચાર ભેદોં કા નિરૂપણ ક્રિયા જા ચુકા હૈ, અવ ક્રમપ્રાપ્ત દૂસરે
રોદ્ધધ્યાન કે ભેદોં ઓર ઉનકે સ્વામિયોં કા પ્રતિપાદન કરતે હૈ-

રોદ્ધધ્યાન હિંસાહેતુક, મૃષાહેતુક, ચૌર્યહેતુક ઓર સંરક્ષણહેતુક
હોને સે, કાર્ય મેં કારણ કા ઉપચાર કરકે રોદ્ધધ્યાન કો ભી
ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । હિંસા, મૃષા, સ્તેય ઓર સંરક્ષણ
યે ચારોં રોદ્ધધ્યાન કી ઉત્પત્તિ કે કારણ હૈ । ભાવ યહ હૈ કિ

રોદ્ધજ્ઞાણં ચતુર્વિહં इत्यादि ॥

મૂત્રાર્થ-રોદ્ધધ્યાન ચાર પ્રકારનું છે- (૧) હિંસાનુબંધી (૨)
મૃષાવાદાનુ બંધી (૩) સ્તેયાનુબંધી અને (૪) સંરક્ષણાનુબંધી. આ ધ્યાન
અવિરત અને દેશવિરતમાં જ જોવા મળે છે, ॥ ૭૨ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-— ચાર પ્રકારના ધ્યાનોમાંથી પ્રથમ આત્મધ્યાનના
ચાર ભેદોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું હોવે ક્રમપ્રાપ્ત બીજા રોદ્ધધ્યાનના ભેદો
અને સ્વામીઓનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ —

રોદ્ધધ્યાન હિંસાહેતુક, મૃષાહેતુક ચૌર્યહેતુક અને સંરક્ષણહેતુક હોવાથી કાર્યમાં
કારણનો ઉપચાર કરીને રોદ્ધ ધ્યાનને પણ ચાર પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે.
હિંસા, મૃષા, સ્તેય અને સંરક્ષણ આ ચારે રોદ્ધધ્યાનની ઉત્પત્તિના કારણ

ચતુર્ણાં રૌદ્રધ્યાનોત્પત્તે નિષ્કિત્ત્વાત્ હિંસાનુધ્યાનરૂપમ્-મૃષાનુધ્યાનરૂપમ્-સ્તેયાનુધ્યાનરૂપમ્ સંરક્ષણાનુધ્યાનરૂપમ્ રૌદ્રધ્યાનં ચતુર્વિધં ભવતીતિ શાવઃ । તત્ત્વ રૌદ્રધ્યાનમ્ અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટેદેશવિરતસ્ય ચ સંયતસ્ય ભવતિ । અથા-અવિરતસ્ય રૌદ્રધ્યાનસંભવેઽપિ દેશવિરતસ્ય ન તત્સમ્ભવ ઇતિ चेत् ? उच्यते-देशविरतस्यापि हिंसा-मृषा-स्तेयाद्यावेशात् धनादिसंरक्षणं तन्त्रत्वाच्च कदाचिद् रौद्रध्यानं सम्भवति तत्र-नारकादीनां रौद्रध्यानमकारणं भवति, सम्यग्दर्शनसामर्थ्यात् खलु संयतस्य रौद्रध्यानं न भवति, अपितु-अविरतस्य-देशविरतस्य चैव भवति ॥७२॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ-પૂર્વેતાવત્-આર્ત-રૌદ્ર ધર્મ-શુક્લધ્યાનભેદેન ચતુર્વિધસ્ય

રૌદ્રધ્યાન ચાર પ્રકાર કા હૈ-હિંસાનુધ્યાનરૂપ, મૃષાનુધ્યાનરૂપ સ્તેયાનુધ્યાનરૂપ ઓર સંરક્ષણાનુધ્યાનરૂપ । યહ રૌદ્રધ્યાન અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ ઓર દેશવિરત ગુણસ્થાન તક હી હોતા હૈ ।

શંકા-અવિરત કે રૌદ્રધ્યાન હો સકતા હૈ મગર દેશવિરત કે નહીં હો સકતા ।

સમાધાન-દેશવિરત કો મી હિંસા, મૃષા, સ્તેય આદિ કા આવેશ આ જાતા હૈ ઓર ધનાદિ કે સંરક્ષણ મી ઉસે કરના હોતા હૈ અતઃકવ કદાચિત્ રૌદ્રધ્યાન હોના સંભવ હૈ । નારક આદિ કો અકારણ હી રૌદ્રધ્યાન બના રહતા હૈ, મગર સંયમ કે સામર્થ્ય કે કારણ સંયત પુરુષ મેં રૌદ્રધ્યાન નહીં હોના । સ પ્રકાર અવિરત ઓર દેશવિરત મેં હી રૌદ્રધ્યાન કા હોના હૈ ॥૭૨॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલે બતલાયા ગયા હૈ કિ આર્ત, રૌદ્ર, ધર્મ ઓર

છે ભાવ એ છે કે રૌદ્રધ્યાન ચાર પ્રકારના છે- હિંસાનુધ્યાનરૂપ, મૃષાનુધ્યાનરૂપ, સ્તેયાનુધ્યાનરૂપ સંરક્ષણાનુધ્યાનરૂપ આ રૌદ્રધ્યાન અવિરત સમ્યગ્દૃષ્ટિ અને દેશવિરત ગુણસ્થાન સુધી જ હોય છે.

શંકા-અવિરતને રૌદ્રધ્યાન થઈ શકે છે પરંતુ દેશવિરતને થઈ શકતું નથી.

સમાધાન- દેશવિરતને પણ હિંસા, મૃષા, સ્તેય આદિનો આવેશ થઈ જાય છે તેમજ ધનાદિનું સંરક્ષણ પણ તેને કરવું પડે છે, આથી કદાચિત્ રૌદ્રધ્યાન થવાની શક્યતા રહેલી છે. નારકી આદિના જીવોને કોઈ કારણ વગર જ રૌદ્રધ્યાન રહેલું હોય છે. પરંતુ સંયમના સામર્થ્યના કારણે સંયત પુરુષમાં રૌદ્રધ્યાન હોતું નથી આ રીતે અવિરત અને દેશવિરતમાં જ રૌદ્રધ્યાન હોય છે ॥ ૭૨ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલાં બતાવવામાં આવ્યું કે આર્ત, રૌદ્ર, ધર્મ અને

ધ્યાનસ્ય પ્રત્યેકં ચાતુર્વિધ્યસ્યોક્તત્વેન પ્રથમોપાત્તસ્યાऽऽર્તધ્યાનસ્યા-અમનોજ સંપ્રયોગ વિષયોગ સ્મૃત્યાદિ ભેદતઃ ચાતુર્વિધ્યં પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પ્રતિ-ક્રમાગતસ્ય દ્વિતીયસ્ય રૌદ્રધ્યાનસ્ય ચાતુર્વિધ્યં પ્રતિપાદયિતુમાહ-‘રોદ્ધઙ્ગાણં ચત્ત્વિહં હિંસા-મૃણ-સ્તેય-સંરક્ષણાનુવંધિ એવમ્, અવિરત્ય દેશવિરયાણં’ इति । રૌદ્રધ્યાનં રોદયતિ પરાન્ इति रुद्रः माण्युपघातादि परिणतो जीवः तस्य कर्म रौद्रम् हिंसाघति क्रूरत्वरूपम्, तद्ध्यानं रौद्रध्यानम् उक्तञ्च-

સંછેદનૈર્હનનસજ્જન મારણૈશ્ચ વન્ધવહારદમનૈર્ વિનિકૃન્તનૈશ્ચ ।

યો યાતિ રાગમુપયાતિ નચાતુરુપાં ધ્યાનં તુ રૌદ્રમિતિ તત્ પ્રવદન્તિ તજ્ઞાઃ ॥૧॥

તત્ચતુર્વિધં ભવતિ, તત્તથા-હિંસામૃણસ્તેયસંરક્ષણાનુવંધિ ભેદતઃ તથાચ-હિંસાર્થ મૃપાર્થ સ્તેયાર્થ સંરક્ષણાર્થશ્ચ રૌદ્રધ્યાનં ભવતિ, તત્ર-હિંસા મૃણ સ્તેયસંરક્ષણોપાયેષુ પ્રવર્તમાનસ્ય પ્રવળક્રોધાવિષ્ટસ્ય મહામોહાઽભિભૂતસ્ય તીવ્રવધવન્ધસંકિલ્બાઽધ્યવસાયસ્ય નાનામકારકદોષત્વં સમ્ભવતિ । તથાચહિંસા-

શુક્લધ્યાન કે ભેદ સે ધ્યાન ચાર પ્રકાર કા હૈ । इनमें से आर्तध्यान के भी अमनोजसम्प्रयोग स्मृति आदि चार भेद हैं । अब क्रमागत द्वितीय रौद्रध्यान के चार भेदों का प्रतिपादन करने के लिए कहते हैं-

રૌદ્રધ્યાન ચાર પ્રકાર કા હૈ-હિંસાનુવંધી, મૃણાનુવંધી, સ્તેયાનુવંધી ઓર સંરક્ષણાનુવંધી । यह रौद्रध्यान अविरत और देशविरत में ही पाया जाता है । इस प्रकार रौद्रध्यान हिंसा के लिए मृणा के लिए स्तेय के लिए और विषय संरक्षण के लिए होता है । जो पुरुष हिंसा, मृणावाद, स्तेय और संरक्षण के उपायों में प्रवृत्त होता है, तीव्र क्रोध से युक्त होना है, महामोह से ग्रस्त होता है और वध वन्धन आदि संबंधी संकिलष्ट परिणामों से युक्त होता है, उसमें अनेक प्रकार के दोष उत्पन्न हो जाते हैं । इस प्रकार हिंसा, असत्या,

શુક્લધ્યાનના ભેદથી ધ્યાન ચાર પ્રકારના છે. આમાંથી આર્તધ્યાનના પણ અમનોજ સમ્પ્રયોગ સ્મૃતિ આદિ ચાર ભેદ છે. હવે ક્રમપ્રાપ્ત દ્વિતીય રૌદ્રધ્યાનના ચાર ભેદોનું પ્રતિપાદન કરવા માટે કહીએ છીએ-- રૌદ્રધ્યાન ચાર પ્રકારના છે -- હિંસાનુવંધી, મૃણાનુવંધી સ્તેયાનુવંધી અને સંરક્ષણાનુવંધી આ રૌદ્રધ્યાન અવિરત અને દેશવિરતમાં જ હોય છે. આ રીતે રૌદ્રધ્યાન હિંસાને માટે મૃણાને માટે સ્તેયને માટે અને વિષયસંરક્ષણને હોય છે. જે પુરુષ હિંસા, મૃણાવાદ, સ્તેય અને સંરક્ષણના ઉપયોગમાં પ્રવૃત્ત હોય છે. તીવ્ર ક્રોધથી યુક્ત હોય છે. મહામોહથી પીડિત હોય છે. તેનામાં અનેક પ્રકારના દોષ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. આ રીતે હિંસા અસત્ય ચોરી

ऽનृतस्तेयबन्धनादिविषयसंरक्षणहेतुकत्वात् कार्ये कारणोपचारात् हिंसानुबन्धि
 रौद्रध्यानम्, मृषानुबन्धि रौद्रध्यानम् स्तेयाऽनुबन्धि रौद्रध्यानम्, विषयादि संरक्षणा-
 ऽनुबन्धिरूपं रौद्रध्यानं भवतीति भावः । एतच्चतुर्विधमपि रौद्रध्यानम्—‘अवि-
 रय देशविरयाणं’ अविरत-देशविरतयो भवति, अविरतसम्यग्दृष्टेः देशविरतस्य
 च संयताऽसंयतस्य भवति, एतस्य च चतुर्विधस्य रौद्रध्यानस्य चत्वारि लक्षणानि,
 उसन्नदोष-बहुदोषा-ऽज्ञानदोषाऽऽमरणान्तदोषरूपाणि बोध्यानि । तत्र—‘उसन्न
 इति प्रायः इत्यर्थे देशीशब्दः, तेन-उसन्न दोष इति प्रायो दोषवत्त्वम्, दोषसम्भ-
 वत्वमित्यर्थः । तथाहि-हिंसामृषास्तेयसंरक्षणानां चतुर्णां भेदाना मन्यतमे
 प्रवर्तमानस्य बाहुल्येन दोषो भवति । एवम्-हिंसामृषादिषु चतुर्ष्वपि प्रवर्तमानस्या

‘चौर्य और विषयो’ के संरक्षण के कारण होने से, कार्य हैं कारण का
 उपचार करके अर्थात् कार्य को ही कारण मान करके हिंसानुबंधी रौद्र
 ध्यान, मृषानुबंधी रौद्रध्यान, स्तेयानुबंधी रौद्रध्यान और विषयसंरक्ष-
 णानुबंधी रौद्रध्यान होता है । यह चारों प्रकार का रौद्रध्यान अविरत
 और देशविरत में ही पाया जाता है, अर्थात् पांचवें गुणस्थान से उपर
 यह नहीं होता ।

रौद्रध्यान के चार लक्षण हैं—(१) उसन्नदोष (२) बहुदोष (३) अज्ञान-
 दोष और (४) आमरणान्त दोष ।

‘उसन्न’ शब्द प्राय, अर्थ का वाचक और देशीभाषा का है । उसन्न
 दोष का अभिप्राय है—प्रायः दोषवान् होना-दोषों का संभव होना ।
 हिंसा, मृषा, स्तेय और संरक्षण, इन चार भेदों में से किसी भी एक
 में जो प्रवृत्ति करना है, उसे बहुलता से दोष लगता है । इसी प्रकार

અને વિષયોના સંરક્ષણના કારણે હોવાથી કાર્યમાં કારણોનો ઉપચાર કરીને
 અર્થાત્ કાર્યને જ કારણ માની બેસી હિંસાનુબંધી રૌદ્રધ્યાન, મૃષાનુબંધી
 સ્તેયાનુબંધી રૌદ્રધ્યાન અને વિષયસંરક્ષણાનુબંધી રૌદ્રધ્યાન હોય જ આ
 ચારે પ્રકારના રૌદ્રધ્યાન અવિરત અને દેશવિરતમાં જ હોય છે. અર્થાત્
 પાંચમાં ગુણસ્થાનથી ઉપર આ હોતાં નથી.

રૌદ્રધ્યાનના ચાર લક્ષણ છે -- (૧) ઉસન્નદોષ (૨) બહુદોષ (૩)
 અજ્ઞાનદોષ અને (૪) આમરણાન્તદોષ

ઉસન્ન શબ્દ પ્રાયઃ અર્થનો વાચક અને દેશી ભાષાનો છે. ઉસન્નદોષનો
 આશય છે—પ્રાયઃ દોષિત હોવું—દોષોનો સંભવ હોવો. હિંસા, મૃષા, સ્તેય
 અને સંરક્ષણ આ ચાર ભેદોમાંથી કોઈ પણ એક માં જે પ્રવૃત્તિ કરે છે,
 તેને બહુલતાથી દોષ લાગે છે. આથી જ રીતે જે હિંસા આદિ ચારમાં

અભિનિવિષ્ટાન્તઃકરણસ્ય વહુદોષતાઽજ્ઞાનદોષતાચ ભવતિ । આમરણાન્તદોષસ્તુ-
મરણાવસ્થાયામપિ હિંસામૃત્વાસ્તેયસંરક્ષણકૃતઃ સ્વલ્પોઽપિ પશ્ચાત્તાપો યસ્ય ન
ભવતિ તસ્યાઽવગન્તવ્યઃ । તથ ચૈ-તૈલક્ષણૈઃ સ્વલ્પ હિંસાદિવિષયરૌદ્રધ્યાનં જ્ઞાયતે
ઉક્તશ્ચ વ્યાખ્યામજ્જ્ઞાતૌ ભગવતીસૂત્રે-‘રૌદ્રજ્ઞાણે ચડવિવહે પળ્ળત્તે, તં જહા-
હિંસાણુવંધી, મૃસાણુવંધી તેષાણુવંધી, સારક્ષણાણુવંધી’ રૌદ્રધ્યાનં ચતુર્વિધં
મજ્જમ્, તથા હિંસાનુવંધિ, મૃષાનુવંધિ, સ્તેયાનુવંધિ, સંરક્ષણાનુવંધિ ઇતિ ॥૭૨॥

મૂલમ્-ધમ્મજ્ઞાણં ચડવિવહં, આણાઅવાયવિવાગસંઠાણ-
વિચયમેયઓ, અપ્પમત્તસંજયસ્સ-ઉવસતં સ્વીળમોહણા ય ॥૭૩॥

છાયા-‘ધર્મધ્યાનં ચતુર્વિધમ્, આજ્ઞાઽપાય-વિપાક-સંસ્થાનવિચયમેદતઃ,
અપ્રમત્તસંયતસ્ય-ઉપશાન્તક્ષીળમોહયોશ્ચ ॥૭૩॥

જો હિંસા આદિ ચાર મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ ઓર જિસકા ચિત્ત અભિનિવેષ
સે યુક્ત હોતા હૈ, ડસમેં વહુદોષતા ઓર અજ્ઞાનદોષતા ઓ હોતી હૈ ।
આમરણાન્ત દોષ ડસે સમજ્ઞના ડાહિયે જિસે મરણ-અવસ્થા મેં ઓ
હિંસા, અસત્ય, સ્તેય ઓર સંરક્ષણ કે લિયે સ્વલ્પ ઓ પશ્ચાત્તાપ ન હો
-જો અન્તિમ શ્વાસ તક ઇન શબ્દોં કા સેવન કરતા રહે । ઇન ચાર
લક્ષણોં સે રૌદ્રધ્યાન કા પતા ચલ જાતોં હૈ । શ્રી ભગવતીસૂત્ર મેં કહા
હૈ-‘રૌદ્રધ્યાન ચાર પ્રકાર કા હૈ-હિંસાનુવંધી, મૃષાનુવંધી, સ્તેયાનુવંધી
ઓર સંરક્ષણાનુવંધી ॥૭૨॥

‘ધમ્મજ્ઞાણં ચડવિવહં’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-ધર્મધ્યાન ચાર પ્રકાર કા હૈ-(૧) આજ્ઞા વિચય (૨) અપાય
વિચય (૩) વિપાકવિચય ઓર (૪) સંસ્થાનવિચય । યહ ધ્યાન અપ્ર-
મત્તસંયત, ઉપશાન્તમોહ ઓર ક્ષીળમોહ સંયતોં કો હોતા હૈ ॥૭૩॥

પ્રવૃત્ત થાય છે અને જેનું મનહું અભિનિવેષથી યુક્ત હોય છે તેનામાં
બહુ દોષતા અને અજ્ઞાન દોષતા પણ હોય છે આમરણાન્ત દોષ તેને
સમજવો નોંધ્યો જેને મરણ-અવસ્થામાં પણ હિંસા અસત્ય સ્તેય અને
સંરક્ષણ માટે થે ડો પણ પ્રશ્ચાત્તાપ ન થાય જે અન્તિમ શ્વાસ સુધી આ
દોષે નું સેવન કરતો રહે આ ચાર લક્ષણોથી રૌદ્રધ્યાનની નાણ થઈ જાય
છે શ્રી ભગવતીસૂત્રમાં કહેવામાં આવ્યું છે ‘, રૌદ્રધ્યાન ચાર પ્રકારના છે-
હિંસાનુબંધી, મૃષાનુબંધી, સ્તેયાનુબંધી અને સંરક્ષણાનુબંધી ॥ ૭૨ ॥

‘ધમ્મજ્ઞાણ ચડવિવહં’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-ધર્મધ્યાન ચાર પ્રકારના છે-(૧) આજ્ઞાવિચય (૨) અપાય-
વિચય (૩) વિપાકવિચય અને સંસ્થાનવિચય. આ ધ્યાન અપ્રમત્તસંયત,
ઉપશાન્તમોહ અને ક્ષીળમોહ સંયતોને હોય છે ॥ ૭૩ ॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तावत्—आर्तरीद्रधर्मशुक्लध्यानभेदेन चतुर्विधेषु ध्यानेषु क्रमशः प्रत्येकं चतुर्विधतयाऽऽर्त्तध्यानं-रौद्रध्यानञ्च प्रतिपादितम्, सम्प्रति-क्रमप्राप्तस्य धर्मध्यानस्य चातुर्विध्यं प्रतिपादयितुमाह—‘धम्मज्झाणं चउच्चिहं’ इत्यादि। धर्मध्यानं चतुर्विधम्, तद्यथा आज्ञाविचयः १ अपायविचयः २ विपाकविचयः ३ संस्थानविचयः ४ आज्ञाविचयादिरूपप्रयोजनचातुर्विध्यात् तच्चतुर्विधप्रयोजनकत्वाद् धर्मध्यानं सपि चतुर्विधम्, धर्मः—वस्तुस्वभावरूपः, उक्तञ्च—‘धम्मो वत्थु सहायो खमादि भावोय दसविहो धम्मो ।

चारित्तं खलु धम्मो जीवाण य रक्खणं धम्मो ॥१॥

धर्मो वस्तु स्वभावः क्षमादिभावश्च दशविधो धर्मः ।

चारित्रं खलु धर्मो जीवानाञ्च रक्षणं धर्म ॥१॥ इति ।

तत्त्वार्थदीपिका—आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान और शुक्ल-ध्यान, के भेद से चार प्रकार के ध्यानों में से प्रत्येक के चार चार भेद होने से आर्त्त और रौद्रध्यान के भेदों का निरूपण किया जा चुका है, अब क्रमप्राप्त धर्मध्यान के चार भेदों का प्रतिपादन करने के लिए सूत्र-कार कहते हैं—

धर्मध्यान चार प्रकार का है—(१) आज्ञाविचय (२) अपायविचय (३) विपाकविचय और (४) संस्थान विचय । आज्ञा आदि प्रयोजन चार प्रकार के हैं अतएव धर्मध्यान भी चार प्रकार का है । धर्म वस्तु का स्व-भाव है । कहा भी है—

‘वस्तु का स्वभाव धर्म कहलाता है । क्षमा आदि दस प्रकार के भाव भी धर्म कहलाते हैं । चारित्र भी धर्म कहलाता है और जीवों का रक्षण करना भी धर्म कहलाता है ॥१॥

तत्त्वार्थदीपिका—आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान અને शुक्ल-ध्यानના લેહથી ચાર પ્રકારના ધ્યાનોમાંથી પ્રત્યેકના ચાર ચાર લેહ હોવાથી આર્ત અને રૌદ્રધ્યાનના લેહોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું હવે ક્રમપ્રાપ્ત ધર્મધ્યાનના ચાર લેહોનું પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે—

ધર્મધ્યાન ચાર પ્રકારના છે— (૧) આજ્ઞાવિચય (૨) અપાયવિચય (૩) વિપાકવિચય અને (૪) સંસ્થાનવિચય આજ્ઞા આદિ પ્રયોજન ચાર પ્રકારના છે આથી ધર્મધ્યાન પણ ચાર પ્રકારના છે. ધર્મ એ વસ્તુનો સ્વભાવ છે. કહું પણ છે—

વસ્તુનો સ્વભાવ ધર્મ કહેવાય છે. ક્ષમા આદિ દશ પ્રકારના ભાવ પણ ધર્મ કહેવાય છે ચારિત્ર પણ ધર્મ કહેવાય છે અને જીવોનું રક્ષણ કરવું એ પણ ધર્મ કહેવાય છે ’ ॥ ૧ ॥

તસ્ય તદ્વિષયં વા ધ્યાનમ્, આજ્ઞાવિચયાદિરૂપપ્રયોજનચાતુર્વિધ્યાત્
તત્ત્વચતુર્વિધપ્રયોજનકત્વાદ્ ધર્મધ્યાનમપિ ચતુર્વિધમ્, તત્ર-વિચયઃ ચિન્તનમ્
આજ્ઞાયાઃ-જિનોપદેશસ્ય વિચય ચિન્તનમ્ આજ્ઞાવિચયઃ વર્તમાનોપદેષ્ટુરભાવાત્
મન્દબુદ્ધિત્વાત્ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મોદયાત્ પદાર્થાનાં મુક્ષમત્વાચ્ચ હેતુદૃષ્ટાન્તાઽ
ભાવે સતિ સર્વજ્ઞપણીતમાગમં પ્રમાણત્વેનાઽવધાર્ય-ઇદમિત્યમેવ વર્તતે યથા
'ભગવતાતીર્થંકૃના પ્રતિપાદિતમ્ ભગવાન્ સ્વલુ જિનો નાઽન્યથાવાદી' इत्येवं
ગહનપદાર્થ શ્રદ્ધાનપૂર્વકમર્થાવધારણમ્ આજ્ઞાવિચય ઉચ્યતે। યદ્વા-સ્વયં વિદિત
પદાર્થતત્ત્વસ્ય પરં પ્રતિપાદયિતુમિચ્છતઃ સ્વસિદ્ધાન્તાઽવિરુદ્ધતયા તત્ત્વસમર્થનાર્થ

ધર્મ કા ધ્યાન યા ધર્મવિષયક ધ્યાન ધર્મધ્યાન હૈ। ઉત્તકે ચાર
પ્રયોજન હૈ, અતઃપ્રયોજન કે ભેદ સે ધર્મધ્યાન કે બી ચાર ભેદ હૈ।
- વિચય અર્થાત્ ચિન્તન। આજ્ઞા કા અર્થાત્ જિનેન્દ્ર ભગવાન્ કે ઉપ-
દેશ કા ચિન્તન કરના આજ્ઞાવિચય હૈ। વર્તમાન કાલ મેં વિશિષ્ટ ઉપ-
દેષ્ટા કા અભાવ હોને સે, બુદ્ધિ કી મન્દતા સે, જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે
ઉદય સે વસ્તુસ્વરૂપ કી ગહનતા સે હેતુ ઓર દૃષ્ટાન્ત કે અભાવ મેં બી
સર્વજ્ઞપ્રણિત આગમ કો પ્રમાણ માનના ઓર એહા સમજના કિ 'ભગવાન્
તીર્થંકર ને જો પ્રતિપાદન ક્રિયા હૈ વહ સત્ય ઇવં તથ્ય હી હૈ। વીતરાગ
દેવ અન્યથાવાદિ નહીં હો સકતે।' इस प्रकार की श्रद्धा रखते हुए अर्थ
का निश्चय करना आज्ञावિचय धर्मध्यान कहलाता है। अथवा जिसने
वस्तु के स्वरूप को स्वयं जान लिया है और जो दूसरों को उसे सम-
झाना चाहता है, वह अपने सिद्धान्त से अविरुद्ध तत्त्व का समर्थन

ધર્મનું ધ્યાન અથવા ધર્મવિષયક ધ્યાન ધર્મધ્યાન છે. તેના ચાર પ્રયોજન
છે આથી પ્રયોજનના ભેદથી ધર્મધ્યાનના પણ ચાર ભેદ છે.

વિચય અર્થાત્ ચિન્તન આજ્ઞાનું અર્થાત્ જિનેન્દ્ર ભગવાનના ઉપદેશનું.
ચિન્તન કરવું આજ્ઞાવિચય છે. વર્તમાનકાળમાં વિશિષ્ટ ઉપદેષ્ટાનેા અભાવ
હોવાથી બુદ્ધિની મન્દતાથી, જ્ઞાનાવરણ કર્મના ઉદયથી અને વસ્તુસ્વરૂપની
ગહનતાથી હેતુ અને દૃષ્ટાન્તના અભાવમાં પણ સર્વજ્ઞપ્રણીત આગમને પ્રમાણ
ભૂત માનવા અને એવું સમજવું કે, ભગવાન્ તીર્થંકરે જે પ્રતિપાદન કયું
છે તે સત્ય અને તથ્ય છે જ. વીતર ગદેવ અન્યથાવાદી હોઈ શકે નહીં,
આ બીજીની શ્રદ્ધા રાખતા થકાં અર્થનો નિશ્ચય કરવો આજ્ઞાવિચય ધર્મધ્યાન
કહેવાય છે અથવા જેણે વસ્તુના સ્વરૂપને સ્વયં પારખી લીધું છે અને જે
બીજાઓને તે સમજાવવા ઇચ્છે છે તે પોતાના સિદ્ધાન્તથી અવિરુદ્ધ તત્ત્વનું

તર્કનય-પ્રમાણપરકં સમુત્પાદાનં સર્વજ્ઞાજ્ઞાપ્રકાશનાર્થસ્વા દાજ્ઞાવિચય ઉચ્યતે ।
અપાયવિચયસ્તાવત્-અપાયાઃ રાગદ્વેષાદિજન્યા અનર્થાઃ, તેષાં વિચયઃ તદ્દો-
ષાઽનુચિન્તનમ્, જાત્યન્ધવદ્ મિથ્યાદૃષ્ટયઃ સર્વજ્ઞપ્રણીતમાર્ગાદ્ વિમુક્તાઃ
મોક્ષાર્થિનઃ સમ્યક્માર્ગાપરિજ્ઞાનાત્ સુદૂરમેવ ગચ્છતીતિ તદ્ગતાપાયચિન્તનરૂપઃ
યદ્વા-મિથ્યાદર્શનજ્ઞાનચારિત્રેભ્યઃ સ્વલ્પક્રમે પ્રાણિનઃ કથમપસરેયુરિતિ ચિન્તનમ્
અપાયવિચયઃ । વિપાકવિચયસ્તુ-જ્ઞાનાવરણાદીનાં કર્મણાં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર કાલ-ભાવ
ભવનિમિત્તકફલ'નુભવરૂપાઃ । સંસ્થાનવિચયઃ સંસ્થાનાનાં દ્વીપસમુદ્રાદ્યા-
કૃતીનાં ચિન્તનરૂપઃ, इत्येतदर्थम् उत्तमक्षमादिलक्षणं धर्मध्यानं चतुर्विधं भव-
के लिए तर्क, नय और प्रमाण पूर्वक सर्वज्ञ भगवान् की आज्ञा को प्रका-
शित करता है । यह भी आज्ञाविचय ध्यान है ।

રાગ-દ્વેષ આદિ સે ઉત્પન્ન હોને ચાલે અનર્થ 'અપાય' કહલાતે હૈ ।
ઉનેકા ચિન્તન કરના અપાયવિચય હૈ । જો મોક્ષાર્થી હૈં કિન્તુ જન્માન્ધ
કે સમાન મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈં ઓર સર્વજ્ઞપ્રણીત માર્ગ સે વિમુક્ત હૈં, વે
સમીચીન માર્ગ સે અનભિજ્ઞ હોને કે કારણ મોક્ષ સે દૂર હી જાતે હૈં ।
ઉનેકો જિન અનર્થોં કા સામના કરના પડતા હૈ, ઉનેકા વિચાર
કરના અપાયવિચય હૈ ।

જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કા દ્રવ્ય, ક્ષેત્રકાલ, ભાવ ઓર ભવ કે
નિમિત્ત સે જો ફલ પ્રાપ્ત હોના હૈ, ઉસકા ચિન્તન કરના વિપાકવિચય હૈ ।

દ્વીપ, સમુદ્ર, લોક આદિ કે આકાર કા ચિન્તન કરના સંસ્થાન-
વિચય ધર્મધ્યાન હૈ । યહ ચારોં પ્રકાર કા ધર્મધ્યાન અપ્રમત્તસંયમ મેં

સમર્થન કરવા માટે તર્ક નય અને પ્રમાણપૂર્વક સર્વજ્ઞ ભગવાનની આજ્ઞાને
પ્રકાશિત કરે છે. આ પણ આજ્ઞાવિચય ધ્યાન છે રાગ-દ્વેષ આદિથી ઉત્પન્ન
થનારા અનર્થ 'અપાય' કહેવાય છે તેમનું ચિંતન કરવું અપાયવિચય છે જેથી
મુમુક્ષુ છે પરંતુ જન્માન્ધની માફક મિથ્ય દૃષ્ટિવાળા છે અને સર્વજ્ઞપ્રણીત માર્ગથી
વિમુક્ત છે, તેઓ સમીચીન માર્ગથી અનભિજ્ઞ હોવાથી મોક્ષથી આઘા ને આઘા
ભય છે. તેમને જે અનર્થોના સામનો કરવો પડે છે. તેના વિચાર કરવો
અપાયવિચય છે.

જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળભાવ અને ભવના નિમિત્તથી
જે ફળ પ્રાપ્ત થાય છે તેનું ચિન્તન કરવું વિપાકવિચય છે

દ્વીપ, સમુદ્ર, લોક આદિના આકારનું ચિંતન કરવું સંસ્થાન વિચય
ધર્મધ્યાન છે. આ ચારે પ્રકારના ધર્મધ્યાન અપ્રમત્તસંયતોમાં સાક્ષાત્ હોય

નન્તવ્યમ્ । एवंविधं चतुर्विधमपि धर्मध्यानमप्रमत्तसंयतस्य साक्षाद् भवति, किन्तु
-अविरतं सम्यग्दृष्टिदेशविरतं प्रमत्तसंप्रतानां गौणवृत्त्या धर्मध्यानं बोध्यम् । एव
मुपशान्तकषायस्य क्षीणप्रोक्तकषायस्य चापि एतच्चतुर्विधं धर्मध्यानं भवति ॥७३॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિઃ—પૂર્વે તાવદુક્તસ્ય ધ્યાનસ્ય આર્ત-રૌદ્ર-ધર્મ-શુક્લ
ભેદેન ચતુર્વિધસ્યોક્તત્વાત્ તન્ન-ક્રમશઃ પ્રત્યેકં ચાતુર્વિધ્યં પ્રતિપાદયિતુમ્
આર્તસ્ય-રૌદ્રસ્ય ચ ચાતુર્વિધ્યં પ્રતિપાદિતમ્ સમ્પ્રતિ-ક્રમપ્રાપ્તસ્ય ધર્મધ્યાનસ્ય
ચાતુર્વિધ્યં પ્રતિપાદયતિ-‘ધર્મજ્ઞાણં ચ’ઉન્નિવહં, આજ્ઞા અપાય વિચય
સંઠાણવિચય ભેદબો, અપ્રમત્તસંજયસ્સ શ્વસંનસ્વીણમોહાણં ચ’
હતિ । ધર્મધ્યાનં-સર્વજ્ઞાઽઽજ્ઞાઘ્રુચિન્તનમ્, ઉક્તશ્ચ ।

‘સૂત્રાર્થસાધનમહાવ્રતધારણેષુ-વન્ધપ્રમોક્ષગમનાગમનેષુ ચિન્તા ।

પશ્ચેન્દ્રિયવ્યુપરમશ્ચ દયા ચ ભૂતે ધ્યાનં તુ ધર્મ મિતિ સમ્પ્રવદન્તિ તજ્ઞાઃ ॥૧॥

સાક્ષાત્ હોતા હૈ ઓર અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ, દેશવિરત તથા પ્રમત્તસંયત
મેં ગૌણરૂપ સે હોતા હૈ । इसी प्रकार उपशान्त कषाय और क्षीणकषाय
में भी चारों प्रकार का धर्मध्यान होता है ॥७३॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ—પહેલે ધ્યાન કે ચાર ભેદ કહે ગયે હૈ । उनमें
से प्रत्येक के चार-चार भेदों का निरूपण करते हुए आर्तध्यान और
रौद्रध्यान के चार-चार भेद कहे जा चुके हैं । अब क्रमप्राप्त धर्मध्यान
के चार भेदों का निरूपण करते हैं—

ધર્મધ્યાન ચાર પ્રકાર કા હૈ—(૧) આજ્ઞાવિચય (૨) અપાયવિચય
(૩) વિપાકવિચય ઓર (૪) સંસ્થાનવિચય । यह ध्यान अप्रमत्तसंयत
उपशान्तमोह और क्षीणमोह संयतों को होता है । सर्वज्ञ की आज्ञा
आदि का चिन्तन धर्मध्यान कहलाता है । कहा भी है—‘सूत्रार्थसाधन

છે અને અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ દેશવિરત તથા પ્રમત્તસંયતમાં ગૌણપણથી હોય છે.
આવી જ રીતે ઉપશાન્ત કષાય અને ક્ષીણકષાયમાં પણ ચારે પ્રકારના ધર્મ
ધ્યાન હોય છે. ॥ ૭૩ ॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ—પહેલાં ધ્યાનના ચાર ભેદ કહેવામાં આવ્યા છે.
તેમાંથી પ્રત્યેકના ચાર ચાર ભેદોનું નિરૂપણ કરતા થકા આર્તધ્યાન અને
રૌદ્રધ્યાન ના ચાર ચાર ભેદ કહેવાઈ ગયા છે હવે ક્રમપ્રાપ્ત ધર્મધ્યાનના ચાર
ભેદોનું નિરૂપણ કરીએ છીએ—

ધર્મધ્યાન ચાર પ્રકારના છે—(૧) આજ્ઞાવિચય (૨) અપાયવિચય (૩)
વિપાકવિચય અને (૪) સંસ્થાનવિચય આ ધ્યાન અપ્રમત્તસંયત, ઉપશાન્તમોહ
અને ક્ષીણમોહ સંયતોને થાય છે. सर्वज्ञની आज्ञा आदिનું ચિન્તન ધર્મધ્યાન

इति, तच्चतुर्विधं भवति, तद्यथा-आज्ञाऽपाय-विपाकसंस्थानविचय भेदतः । तथा च आज्ञाविचयार्थम् अपायविचयार्थम् संस्थानविचयार्थञ्च धर्मध्यानं भवति । तत्राऽऽज्ञा तावत् सर्वज्ञतीर्थकृत् प्रणीतागमरूपा, तस्या विचयः-अनुचिन्तनम् तथाविधाज्ञायाः आगमरूपायाः पूर्वापरविशुद्धतयाऽतिनिपुणतया सकलजीवकायहितकारितयाऽनवद्यतया महार्थतया महानुभावतया निपुणजनविज्ञेयतया द्रव्यपर्याय विस्तारयुक्ततयाऽनादि निधनतया विचयः पर्यालोचनम् । उक्तञ्च नन्दीसूत्रे-५८ । 'इच्छेह्यं दुष्कालसंगं गणिपिटकं न कयाह णासी' इत्यादि, 'इत्येतद् द्वादशाङ्गं गणिपिटकं न कदाऽपि नासीत्' इति, तत्र यदि

महाव्रतधारण, बन्ध, मोक्ष और गमना-गमन का चिन्तन, पांचों इन्द्रियों के विषयों से उपशम और जीवदया को ध्यानवेत्ता पुरुष धर्म ध्यान कहते हैं ।

आज्ञाविचय, अपायविचय, विपाकविचय और संस्थानविचय के भेद से धर्मध्यान चार प्रकार का है । सर्वज्ञ तीर्थकर द्वारा उपदिष्ट आगम को आज्ञा कहते हैं, उसका चिन्तन करना आज्ञाविचय ध्यान है । तीर्थकर की आज्ञा पूर्वापरविरोध से रहित है, अत्यन्त निपुण है समस्त जीवों का हित करने वाली है, निरवद्य है, महार्थ से युक्त है, महानुभाव है, कुशल पुरुषों द्वारा ही ज्ञेय है, द्रव्यों और पर्यायों के विस्तार से युक्त है और अनादिनिधन है, इस प्रकार चिन्तन करना आज्ञाविचय है ।

नन्दीसूत्र में कहा है-‘यह द्वादशाङ्ग गणिपिटक कभी नहीं था,

कडेवाय છે. વળી કહ્યું પણ છે—સૂત્રાર્થસાધન, મહાવ્રતધારણ બન્ધ, મોક્ષ અને ગમનાગમનનું ચિંતન, પાંચે ઈન્દ્રિયોના વિષયોથી ઉપશમ અને જીવ—ધ્યાને, ધ્યાનવેત્તા પુરૂષ ધર્મધ્યાન કહે છે.

આજ્ઞાવિચય, અપાયવિચય, વિપાકવિચય અને સંસ્થાનવિચયના ભેદથી ધર્મધ્યાન ચાર પ્રકારના છે. સર્વજ્ઞ તીર્થંકર દ્વારા ઉપાદિષ્ટ આગમ ને આજ્ઞા કહે છે, તેનું ચિન્તન કરવું આજ્ઞાવિચય ધ્યાન છે. તીર્થંકર ની આજ્ઞા પૂર્વાપર વિરોધથી રહિત છે. અત્યન્ત નિપુણ છે સમસ્ત જીવોનું હિત કરનારી છે, નિરવધ છે મહાર્થથી યુક્ત છે મહાનુભાવ છે. કુશળ પુરૂષો દ્વારા જ જ્ઞેય છે દ્રવ્યો અને પર્યાયોના વિસ્તારથી યુક્ત છે અને અનાદિ નિધન છે. આ જાતનું ચિન્તન કરવું આજ્ઞા વિચય છે.

નન્દીસૂત્રમાં કહ્યું છે—આ દ્વાદશાંગ ગણિપિટક કયારેય પણ ન હતું એમ

પ્રજ્ઞાદુર્બલ તથોપયુક્તેઽપિ સૂક્ષ્મધિપા કેવલજ્ઞાનરૂપયા વિનિશ્ચિન્વન્તઃ સત્યવાદિનઃ
ક્ષીણરાગદ્વેષમોહાઃ સર્વજ્ઞાઃ સ્વલુ ગદ્રૂપેગ ચદ્વાતુ વ્યવસ્થિતં મયતિ તદ્વસ્તુ તેનૈવ રૂપેણ
પ્રતિપાદયતિ ન તદ્વસ્તુ તદન્યથારૂપેણ પ્રતિપાદયતિ મૃષાભાષણકારણાઽભાવાત્
તસ્માત્-સત્યમેવેદં શાસ્ત્રમ્ આગમલ્ભ્ય નાના દુઃખ જટિલાત્ સંસારાર્ણવાત્ સમુત્તા-
રકં વર્તતે इत्येव માજ્ઞારૂપામયે સ્મૃત્યાધ્યાનમ્ આજ્ઞાવિચયરૂપં પ્રથમં ધર્મધ્યાન
મુચ્યતે ૧ અપાયવિચય સ્વા-ત્-દ્વિતીયં ધર્મધ્યાન મુચ્યતે, આપાયાનાં શારીરિક-
-માનસિક દુઃખાનાં વિનશોઽનુચિન્તનમ્ હઠાઽમુચ ચ રાગ-દ્વેષાકુલચિત્તવૃત્તયઃ

એસા નહીં હૈ, કભી નહીં હૈ, એસા મો નહીં હૈ, કમી નહીં હોગા,
એસામી નહીં હૈ इत्यादि, यदि પ્રજ્ઞા કી દુર્બલતા કે કારણ ઉપયોગ
લગાને પર મી કોઈ વાસ્તવિક વસ્તુ કો નહીં સમજ પાતા તો યહી
સમજના ચાહિયે કિ મેરા જ્ઞાન આવરણવાલા હૈ, इसी कारण मेरी समझ
में नहीं आता। જિનેન્દ્ર ભગવાનકે દ્વારા વસ્તુસ્વરૂપકો જાના હૈ, वे राग
द्वेष और मोह से रहित हैं एवं सर्वज्ञ हैं। जो वस्तु जिस रूप में है, उसे
वे उसीरूप में प्रतिपादन करते हैं, अन्यथा रूप में नहीं। उनमें मिथ्या
भाषण का कोई कारण विद्यमान नहीं हैं। अतएव यह आगम-
शास्त्र सत्य ही है और यह विविध प्रकार के दुःखों से व्याप्त संसार
सागर से तारने वाला है। इस प्रकार आज्ञारूप आगम में स्मृत्या-
ध्यान करना आज्ञाविचय नामक प्रथम धर्मध्यान है।

દૂસરા ધર્મધ્યાન અપાયવિચય હૈ। અપાયોં કા અર્થાત્ શારીરિક
ઔર માનસિક દુઃખોં કા ચિન્તન કરના અપાયવિચય હૈ। ‘જિનકા

નથી, ક્યારેય પણ નથી, એમ પણ નથી, ક્યારે પણ હંશે નહીં એવું પણ નથી,
ઇત્યાદિ જે પ્રજ્ઞાની દુર્બલતાના કારણે ઉપયોગ લગાવવાથી પણ કોઈ વાસ્તવિક
વસ્તુ ન સમજાય તો એમ જ સમજવું જોઈએ કે મારું જ્ઞાન આવરણ
વાળું છે. આથી જ મારી સમજણમાં આવતું નથી જિનેન્દ્ર ભગવાને કેવળ
જ્ઞાન દ્વારા વસ્તુ સ્વરૂપને જાણ્યું છે. તેઓ સત્યવક્તા છે. રાગદ્વેષ તથા
મોહથી રહિત છે તેમજ સર્વજ્ઞ છે. જે વસ્તુ જે સ્વરૂપે છે. તેને તેઓ એ
જ સ્વરૂપે પ્રતિપાદન કરે છે. અન્યથા રૂપે નહીં તેમનામાં મિથ્યાભાષણનું
કોઈ કારણ વિદ્યમાન નથી આથી આ આગમ-શાસ્ત્ર સત્ય જ છે અને આ
વિવિધ પ્રકારના દુઃખોથી વ્યાપ્ત સંસારસાગરથી તારનાર છે આ રીતે
આજ્ઞા રૂપ આગમમાં સ્મૃત્યાધ્યાન કરવું આજ્ઞા વિચય નામક પ્રથમ ધર્મધ્યાન છે
ખીજું ધર્મધ્યાન અપાયવિચય છે. અપાયે.નો અર્થાત્ શારીરિક અને
માનસિક દુઃખોનું ચિન્તન કરવું અપાયવિચય છે. જેમનું ચિત્ત રાગ અને

खलु प्राणिनो मूलोत्तरप्रकृतिविभागकृतजन्मजरामृत्युसागरपरिभ्रमणश्रान्ता-
न्तरात्मनः सांसारिकसुखमपञ्चेषु तृप्तिरहितमानसाः शरीरेन्द्रियादिषु कर्मा-
स्रवद्वारप्रवाहेषु तिष्ठन्तो मिथ्यात्वाऽज्ञानाऽविरतिपरिणतियुक्ता भवन्ति'
इत्येवं विवेचनं तावद् अपायविचयरूपं द्वितीयं धर्मध्यानं भवति २ । अथ तृतीयं
तावद् धर्मध्यानं विपाकविचयरूपं मुच्यते, विविधो-विशिष्टो वा पाको-विपाकः,
अनुमानो नरक-तिर्यङ् मनुष्यदेवमवेषु कर्मणा रसानुभव उच्यते, तस्य खलु
तथाविधरसानुभवरूपविपाकस्य विचयोऽनुचिन्तनम्-मार्गणं तन्समवहितचित्तः
सन् तत्रैव स्मृतिमाधाय वर्तमानो विपाकविचयध्यानवान् भवति । तथाहि-
ज्ञानावरणादिकमष्टविधं कर्म प्रकृतिस्थित्यनुभावपदेश भेदम् इष्टाऽनिष्ट

चित्त राग और द्वेष से व्याकुल है, ऐसे प्राणी अने किये कर्मों
के अनुसार जन्म-जरा-मरण रूपी सागर में परिभ्रमण करते शान्त
हो गए, सांसारिक सुखों में तृप्तिरहित चित्त वाले हैं, शरीर और
इन्द्रिय आदि कर्मों के आस्रवद्वारों में स्थित हैं और मिथ्यात्व,
अविरति एवं अज्ञान की परिणति से युक्त हैं । इस प्रकार का विचार
करना अपायविचय नामक दूसरा धर्मध्यान है ।

तीसरा धर्मध्यान विपाक विचय है । विविध प्रकार का अथवा
विशिष्ट पाक अर्थात् नरकगति तिर्यङ्गगति, मनुष्यगति और देव-
गति में होने वाले कर्म-रस का अनुभव विपाक कहलाता है । उस
रसानुभव रूप विपाक का विचय अर्थात् चिन्तन करना विपाकवि-
चयध्यान है । जो कर्म-विपाक में ही चित्त लगा देता है और उसका
चिन्तन करता है वह विपाकविचयध्यानवान् कहलाता है ।

द्वेषથી વ્યાકુળ છે, એવા પ્રાણી પોતાના કરેલાં કર્મો અનુસાર જન્મ-જરા
મરણ રૂપી સાગરમાં પરિભ્રમણ કરતાં કરતા થ કી ગયા છે. સાંસારિક સુખો
માં તૃપ્તિરહિત ચિત્તવાળા છે. શરીર અને ઈન્દ્રિય આદિ કર્મોના આસ્રવદ્વાર
માં સ્થિત છે અને મિથ્યાત્વ અવિરતિ અને અજ્ઞાનની પરિણતિથી યુક્ત છે.
આ પ્રમાણે વિચારવું અપાયવિચય નામક બીજું ધર્મધ્યાન છે. ત્રીજું ધ્યાન વિવિધ
વિપાકવિચય છે વિવિધ પ્રકારનો અથવા વિશિષ્ટ પાક અર્થાત્ નરકગતિ તિર્યંચ
ગતિ, મનુષ્યગતિ અને દેવગતિમાં થનારા કર્મ રસનો અનુભવ વિપાક કહેવાય
છે. તે રસાનુભવ રૂપ વિપાકનો વિચય અર્થાત્ ચિન્તન કરવું વિપાકવિચય ધ્યાન
છે. જે કર્મ વિપાકમાં જ ચિત્ત લગાવી દે છે - અને તેનું ચિન્તન કરે છે
તે વિપાકવિચયધ્યાન કહેવાય છે.

વિપાકપરિણામં જઘન્ય-મધ્યમોત્કૃષ્ટસ્થિતિકં નાનાપ્રકારવિપાકયુક્તં ભવતિ,
 યથા-જ્ઞાનાવરણાત્ દુર્મેધાત્મમ્ ૧ દર્શનાવરણાચ્ચ-વક્ષુર્વૈકલ્યં, સામાન્ય ગ્રાહિ-
 વૌધૈકલ્યં, નિદ્રાદ્યુદ્ભવશ્ચ ૨ વેદનીયમ્, અસદ્વેદ્ય-સદ્વેદ્યભેદાદ્ દ્વિવિધમ્ । તત્રા-
 ઽસદ્વેદ્યાદ્ દુઃખમ્ સદ્વેદ્યાત્સુખાનુભવઃ ૩ મોહનીયકર્મોદયાત્ વિપરીતગ્રાહિત્વં
 ચારિત્રનિવૃત્તિશ્ચ ૪ આયુઃ કર્મોદયાદનેક ભવોદ્ભવશ્ચ ૫ નામકર્મોદયાદ્ શુમાઽશુભ
 શરીરાદિનિષ્પત્તિઃ ૬ ગોત્રકર્મોદયાચ્ચ નીચકુલોત્પત્તિઃ ૭ અન્તરાયોદયાત્સલુ-
 અલાભો ભવતિ इत्येवं સલુ નિરુદ્ધચેતસઃ કર્મવિપાકાનુસરણે एव स्मृत्याधा-

પ્રકૃતિ, સ્થિતિ, અનુભાવ ઓર પ્રદેશ હસ પ્રકાર ભેદવાલે, તથા
 અનિષ્ટ પરિણમન વાલે, જઘન્ય, મધ્યમ ઓર ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ વાલે
 જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મ વિવિધ પ્રકાર કે વિપાક
 કો ઉત્પન્ન કરતે હૈ, જૈસે—જ્ઞાનાવરણ કર્મ સે મન્દબુદ્ધિતા એવં દર્શના
 વરણ કર્મ કે ઉદય સે નેત્રહીનતા, દર્શનહીનતા, ઓર નિદ્રા આદિ
 કા ઉદ્ભવ હોતા હૈ । વેદનીય કર્મ દો પ્રકાર કા હૈ—અસાતાવેદનીય
 ઓર સાતાવેદનીય । અસાતાવેદનીય સે દુઃખ ઓર સાતાવેદનીય
 સે સુખ કા અનુભવ હોતા હૈ । મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે વિપરીત
 ગ્રહણ તથા ચારિત્ર કા અભાવ હોતા હૈ । આયુકર્મ કે ઉદય સે
 અનેક ભવોં મેં જન્મ લેના પડતા હૈ । નામ કર્મ કે ઉદય સે અચ્છે-
 ઘુરે શરીર કી રચના હોતી હૈ । ગોત્ર-કર્મ કે ઉદય સે ઉચ્ચ-નીચ
 કુલોં મેં ઉત્પત્તિ હોતી હૈ । અન્તરાય કર્મ કે ઉદય સે લાભ આદિ મેં
 વિપ્ર ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ચિત્ત કો એકાગ્ર કરકે હસ પ્રકાર કર્મવિપાક
 કા ચિન્તન કરના વિપાકવિચય નામક ધર્મધ્યાન હૈ ।

પ્રકૃતિ, સ્થિતિ અનુભાવ અને પ્રદેશ આ જાનતા લેઈ વાળા, ઈષ્ટ તથા
 અનિષ્ટ પરિણમનવાળા. જઘન્ય મધ્યમ અને ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિવાળા, જ્ઞાનાવરણ
 આદિ આઠ પ્રકાર ના કર્મ, વિવિધ પ્રકારના વિપાકને ઉત્પન્ન કરે છે જેમકે—
 જ્ઞાનાવરણ કર્મથી મન્દબુદ્ધિતા અને દર્શનાવરણ કર્મના ઉદયથી નેત્રહીનતા
 દર્શનહીનતા અને નિદ્રા વગેરેનો ઉદ્ભવ થાય છે. વેદનીય કર્મ બે પ્રકારના
 છે—અસાતા વેદનીય અને સાતાવેદનીય, અસાતાવેદનીયથી દુઃખ અને સાતાવેદનીય
 થી સુખનો અનુભવ થાય છે. મોહનીય કર્મના ઉદયથી વિપરીત ગ્રહણ તથા
 ચારિત્રનો અભાવ થાય છે. આયુષ્યકર્મના ઉદયથી અનેક લવેમાં જન્મ લેવો
 પડે છે નામકર્મના ઉદયથી સારા નરસા શરીરની રચના થાય છે ગોત્રકર્મના
 ઉદયથી લાભ આદિમાં અન્તરાય ઉત્પન્ન થાય છે. ચિત્તને એકાગ્ર કરીને
 આ રીતે કર્મવિપાકનું ચિન્તન કરવું વિપાકવિચય નામક ધર્મધ્યાન છે.

नतो धर्मध्यानं भवति । अथ संस्थानविचयो नाम चतुर्थं धर्मध्यानं मुख्यते, तत्र लोकस्य द्रव्याणाञ्च संस्थानम् आकारविशेषः, तत्र लोकः-चतुर्दशरज्जुपरमाणो-धर्माधर्मादि पञ्चास्तिकायात्मकः-अशेष द्रव्याधारभूतो वैशाख स्थान कटिन्यस्त करयुग्मपुरुषोपलक्षित आकाशखण्डरूपः, तस्य स्थानं तावदधोमुखमल्लकवद् वर्तते । अधोलोकस्य संस्थानन्तु-स्थालवद् बोध्यम् । तिर्यग्लोकस्य संस्थानं पुन रुर्ध्व मधोमल्लकसमुद्रवद् वर्तते, तत्रापि-तिर्यग् लोको ज्योतिष्क वानव्यन्तर व्याप्तो भवति, असंख्येया द्वीपसमुद्रा वलयाकृतयो धर्माधर्माकाशपुद्गलजीवा स्तिकायस्वरूपाः अनादिनिधनसन्निवेशशालिन आकाशप्रतिष्ठि १: क्षिति वलयद्वीप-

चौथा धर्मध्यान संस्थान विचय है । लोक का या द्रव्यों का आकार संस्थान कहलाता है । इनमें से लोक चौदह रज्जु परिमाण वाला है, धर्म-अधर्म आदि पांच अस्तिकायमय है समस्त द्रव्यों का आधार है और कमर पर दोनों हाथ रखकर तथा पांच फैलाकर खड़े हुए पुरुष के आकार का है । यह लोक सम्पूर्ण आकाश का एक खण्ड है । लोक तीन भागों में विभक्त है-अधोलोक, मध्यलोक और ऊर्ध्वलोक । इनमें से अधोलोक का आकार अधोमुख मल्लक (सिकोरा के समान है । मध्यलोक थाली के आकार का है और ऊर्ध्वलोक उस सिकोरे के आकार का है जिसका मुख ऊपर की ओर हो तिर्छा लोक मनुष्यों, तिर्यचो ज्योतिष्क देवों और वानव्यन्तर देवों से व्याप्त है । इसमें असंख्यात द्वीप और समुद्र हैं और वे सब वलय की तरह गोलाकार हैं । धर्म, अधर्म, आकाश और जीवास्तिकाय स्वरूप हैं, अनादिनिधन सन्निवेश से युक्त हैं, आकाश पर आश्रित हैं । इसी

चौथुं धर्मध्यान संस्थान विचय छे. लोकने अथवा द्रव्येने आकार संस्थान कहेवाय छे आमांथी लोक चौद रज्जु परिमाण वाणे छे. धर्म अधर्म आदि पांच अस्तिकायमय छे समस्त द्रव्येने आधार छे अने कमर पर अने हाथ राणीने तथा पग पसारीने उभा रडेला पुइषना आकारने छे. आ लोक सम्पूर्ण आकाशने अके लाग छे लोक त्रणु भागेमां वडेयायले छे- अधोलोक, मध्यलोक अने ऊर्ध्वलोक आमांथी आदिने लोकने आकार अधोमुख मल्लक (शिकोरे) ना जेवे छे. मध्यलोक थालीना आकारे छे जेनुं मुख उपरनी आनुअे होय तिर्छालोक मनुष्ये, तिर्यचे, ज्योतिष्कदेवो. अने वानव्यन्तर देवोथी व्यस्त छे अेमां असंख्यात द्वीप अने समुद्र छे अने ते सधना अंगडीनी भाइ गोलोकार छे धर्म अधर्म, आकाश तेमज्जुवास्तिकाय स्वरूप छे, अनादिनिधन सन्निवेशथी युक्त छे. आकाश पर

સાગરનરકવિમાનભાવનાદિ સંસ્થાનાનિ ચોધ્યાનિ, આત્માચો-પયોગલક્ષણ-અનાદિ
 નિધનઃ શરીરાત્-અર્થાન્તર્ભૂતઃ-અરુપી-કર્તા-મોક્તાચ સ્વકૃતકર્મણા સ્વ-સ્વદેહ-
 પરિમિતઃ, મુક્તો ત્રિમાગધીનાકારથ્ય મવતિ, । ઊર્વલોક સ્તાવત્-સૌધર્મકલ્પાદયો
 દ્વાદશકલ્પાઃ પરિપૂર્ણપૂર્ણિમા માઢડલાકારાઃ, નવ ગ્રૈવેયકાણિ પશ્ચોત્તરમહાવિમાનાનિ
 -ઈષ્ટપ્રાગ્મારા ચ અધોલોકોઽપિ મવનપતિદેવનારકાધિવસતિઃ ધર્માસ્તિકાયા-
 ધર્માસ્તિકાયા લોકાકારો ગતિસ્થિતિ હેતુ મૂર્તી વર્તેતે, આકાશ મદગાહલક્ષણં વર્તેતે,
 પુદ્ગલદ્રવ્યં શરીરાદિકાર્યજનકં વર્તેતે હત્યેવ લોકદ્રવ્યસંસ્થાનસ્વાભાવ્યાઽનુસન્ધા-

પ્રકાર પૃથ્વી, દ્વીપ, સાગર, નરક, વિમાન એવં મવન આદિ કે સંસ્થાન
 આકાર સ્મરણ લેના ચાહિયે ।

આત્મા ઉપયોગમય છે, અનાદિનિધન છે, શરીર સે મિન્ન છે,
 અરુપી, કર્તા, મોક્તા ઓર અપને કર્મ કે અનુસાર પ્રાપ્ત દેહ કે ઘરામર
 છે । મુક્ત દશા મેં અન્તિમ શરીર સે ત્રીસરા માગ કમ આકાર વાલા
 રહતા છે ।

ઊર્વલોક મેં સૌધર્મ આદિ ચારહ કલ્પ છે જો પૂર્ણિમા કે સમ્પૂર્ણ
 ચન્દ્રમણ્ડલ કે આકાર કે છે, નો ગ્રૈવેયક વિમાન છે પાંચ અનુત્તર મહા-
 વિમાન છે ઓર ઈષ્ટપ્રાગ્માર પૃથ્વી (સિદ્ધશિલા) છે । અધોલોક નારકો
 ઓર મવનપતિ દેવો કી નિવાસભૂમિ છે । ધર્માસ્તિકાય ઓર અધર્માસ્તિ-
 કાય લોક કે આકાર કે છે ઓર ગતિ તથા સ્થિતિ કે નિમિત્ત કારણ
 છે । આકાશ કા લક્ષણ અવગાહ દેના છે । પુદ્ગલ દ્રવ્ય શરીર આદિ
 કા જનક છે । હમ પ્રકાર લોક, દ્રવ્ય આદિ કે સંસ્થાન-સ્વભાવ કા

આશ્રિત છે આવી જ રીતે પૃથ્વી, દ્વીપ, સાગર, નરક, વિમાન તથા મવન
 આદિના સંસ્થાન આકર સમજ લેવા જોઇએ

આત્મા ઉપયોગમય છે, અનાદિનિધન, શરીરથી મિન્ન છે અરૂપી, કર્તા,
 મોક્તા અને પોતાના કર્માનુસાર પ્રાપ્ત દેહની ધરામર છે. મુક્ત દશામાં
 અન્તિમ શરીરથી ત્રીજો ભાગ જોઇએ એટલા આકારવાળો રહે છે

ઊર્વલોકમાં સૌધર્મ આદિ ધર કલ્પ છે જે પૂર્ણિમાના સમ્પૂર્ણ ચન્દ્ર
 મન્ડળના આકારના છે. નવ ગ્રૈવેયક વિમાન છે પાંચ અનુત્તર મહાવિમાન છે
 અને ઈષ્ટપ્રાગ્માર પૃથ્વી (સિદ્ધશિલા) છે અધોલોક નારકી અને મવનપતિ
 દેવોની નિવાસભૂમિ છે. ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય લોકના આકારના
 છે અને ગતિ તથા સ્થિતિના નિમિત્ત કારણ છે. આકાશનું લક્ષણ અવગાહ
 આપવાનું છે પુદ્ગલદ્રવ્ય શરીર આદિ કાર્યોનિજનક છે. આ રીતે લોક
 દ્રવ્ય આદિના સંસ્થાન સ્વભાવનું અનુચિન્તન કરવું સંસ્થાન વિચર્ય ધર્મધ્યાન

નાર્થ સ્મૃત્યાધાનં ચતુર્થં સંસ્થાનવિચારુયં ધ્યાન મુચ્યતે । इत्यञ्च-धर्मध्यानेन
 પદાર્થસ્વરૂપપરિજ્ઞાનરૂપસ્તત્ત્વાવબોધો ભવતિ, તત્ત્વાવબોધાચ્ચ સત્ક્રિયાનુ
 ણ્ઠાનં ક્રિયતે, સત્ક્રિયાનુઠાનાચ્ચ મોક્ષ-પ્રાપ્તિર્ભવતિ । एतच्च चतुर्विधमपि
 ધર્મધ્યાનમ્ અપ્રમત્તસંયતસ્ય ભવતિ । प्रमत्तसंयतस्थानात् विशुद्धयमाना-
 ધ્યવસાયોઽપ્રમત્તસંયતસ્થાનમાસાદયતિ, તસ્માત્-વિશુદ્ધાયાં વિદ્યમાનસ્યાઽ-
 પ્રમત્તસંયતસ્ય સ્વલ્લુ તસ્ય ધર્મધ્યાનાદિ તપો યોગૈઃ કર્મણિ ક્ષયયતો વિશોધિસ્થા-
 નાન્તરાણિ સમારોહતશ્ચાઽઽમર્શોષધ્યાદિલ્લઘ્નયઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ । उक्तञ्च व्याख्या
 પ્રજ્ઞપ્તૌ શ્રીભગવતીસૂત્રે ૨૫ શતકે ૭ ઉદ્દેશકે ૮૦૩ સૂત્રે-‘ધર્મ્યે જ્ઞાણે ચત્તરિવિદ્ધે
 પળ્લવે, તં જહા, આણાવિચર, અગ્નાયવિચર, વિષ્ણાવિચર સંઠાણ
 વિચર’ ધર્મધ્યાનં ચતુર્વિધં પ્રજ્ઞપ્તૃઃ; તથા-આજ્ઞાવિચર, અપાયવિચર,
 વિપાકવિચર, સંસ્થાનવિચર इति ॥७३॥

અનુચિન્તન કરના સંસ્થાન વિચર ધર્મધ્યાન કહલાતા હૈ ધર્મધ્યાન સે
 પદાર્થ કે પરિજ્ઞાન રૂપ તત્ત્વબોધ કો પ્રાપ્તિ હોતી હૈ, તત્ત્વબોધ સે સત્-
 ક્રિયા કા અનુણાન હોના હૈ ઓર સત્ક્રિયા કે અનુણાન સે મોક્ષ કી
 પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । યહ ચારો પ્રકારકા ધર્મધ્યાન અપ્રમત્ત સંયત સો હોના હૈ ।

પ્રમત્તસંયત કે સ્થાન સે જિસકે અધ્યવસાય વિશુદ્ધિ કો પ્રાપ્ત હોતે
 હૈ વહ અપ્રમત્તસંયતસ્થાન કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । इत प्रकार जो विशुद्धता
 મેં વર્ત્ત રહ્યા હૈ, ધર્મધ્યાન આદિ તપયોગથી કર્મોના ક્ષય કર રહ્યા હૈ
 ઓર અધિકાધિક વિશુદ્ધ અધ્યવસાયો કો પ્રાપ્ત કર રહ્યા હૈ, એસે અપ્ર-
 મત્ત સંયત કો આશીવિષ આદિ લલ્લિધ્યો ઉત્પન્ન હોતી હૈ । भगवतीसूत्र
 શતક ૨૫ ઉદ્દેશક ૭ મેં કહ્યો હૈ-‘ધર્મધ્યાન ચાર પ્રકાર કા કહ્યા ગયા હૈ,
 યથા-આજ્ઞાવિચર, અપાયવિચર, વિપાકવિચર ઓર સંસ્થાનવિચર । ७३ ।

કહેવાય છે. ધર્મધ્યાનથી પદાર્થના પરિજ્ઞાન રૂપ તત્ત્વબોધની પ્રાપ્તિ થાય છે,
 તત્ત્વબોધથી સત્ક્રિયાનું અનુણાન થાય છે અને સત્ ક્રિયાના અનુણાનથી
 મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે. આ ચારે પ્રકારના ધર્મધ્યાન અપ્રમત્તસંયતને થાય છે

પ્રમત્તસંયતના સ્થાનથી જેના અધ્યવસાય વિશુદ્ધિને પ્રાપ્ત થાય છે તે
 અપ્રમત્તસંયતસ્થાનને પ્રાપ્ત કરે છે એ રીતે જે વિશુદ્ધતામાં વર્તી રહ્યો
 હોય, ધર્મધ્યાન આદિ તપયોગથી કર્મોના ક્ષય કરી રહ્યો હોય અને અધિ-
 કાધિક વિશુદ્ધ અધ્યવસાયને પ્રાપ્ત કરી રહ્યો હોય એવા અપ્રમત્તસંયતને
 આશીવિષ આદિ લલ્લિધ્યો ઉત્પન્ન થાય છે. ભગવતીસૂત્ર શતક ૨૫ ઉદ્દેશક
 ૭, માં કહેયું છે-ધર્મધ્યાન ચાર પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે યથા આજ્ઞા
 વિચર, અપાયવિચર, વિપાક વિચર અને સંસ્થાનવિચર ॥ ૭૩ ॥

સૂક્ષ્મ-સુક્ષ્મજ્ઞાણે ચત્ત્વિહે, પુહુત્તવિયક્તસવિચાર-પગત-
વિયક્તઅવિચાર-સુહુમકિરિય અનિયદ્વિ-સમુચ્છિન્નકિરિય અપ-
હિવાહ મેયઓ ॥૭૪॥

છાયા-‘શુક્લધ્યાન’ ચતુર્વિધમ્, પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચારૈકત્વવિતર્કો
વિચારસૂક્ષ્મક્રિયાઽનિવર્તિ, સમુચ્છિન્નક્રિયાઽપ્રતિપાતિભેદતઃ ॥૭૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા--‘પૂર્વ તાવદ્ ધર્મધ્યાન’ ચતુર્વિધમ્, આજ્ઞાવિચયાદિ ભેદતઃ
પ્રરૂપિતમ્ સમ્પતિ-શુક્લધ્યાન’ ચતુર્વિધતયા પ્રરૂપયિતુમ્-‘સુક્ષ્મજ્ઞાણે
ચત્ત્વિહે’ इत्यादि । શુક્લધ્યાન’ શુ-इति શુચં-शोकं, कल इति कलमयति-
अपनयतीति शुक्लं- अवक्षयकारणम्, तच्च तद्ध्यानं च शुक्लध्यानम् । उक्तञ्च

‘यस्येन्द्रियाणि विषयेषु पराङ्मुखानि संकल्परूपनविकल्प विकारदोषैः ।
योगैः सच विभिरहो निभृतान्तरात्मा ध्याનોत्तम प्रवरशुक्लमिदं वदन्ति ।१।

‘સુક્ષ્મજ્ઞાણે ચત્ત્વિહે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—શુક્લધ્યાન ચાર પ્રકાર કા હૈ—(૧) પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચાર
(૨) એકત્વવિતર્ક-અવિચાર (૩) સૂક્ષ્મ ક્રિયાનિવર્તિ, ઓર (૪) સમુચ્છિ-
ન્નક્રિયાઽપ્રતિપાતિ ॥૭૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે આજ્ઞાવિચય ધ્યાદિ કે ભેદ સે ચાર પ્રકાર
કા ધર્મધ્યાન કહા ગયા હૈ, અબ શુક્લધ્યાન કે ચાર ભેદાં કી પ્રરૂપણા
કરતે હૈ—શુક્લશબ્દ કા અર્થ હસ પ્રકાર હૈ—‘શુ’ અર્થાત્ શુચ-शोक
‘કલ’ અર્થાત્ દૂર કરને ચાલા । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જિસસે જન્મ-મરણ
કા દુઃખ દૂર હો જાય ઉસે શુક્લ કહતે હૈ, એસા ધ્યાન શુક્લધ્યાન
કહલાતા હૈ । કહા ઓ હૈ—‘ જિસકી ઇન્દ્રિયાં વિષયો સે વિમુક્ત હો

‘સુક્ષ્મજ્ઞાણે ચત્ત્વિહે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—શુક્લધ્યાન ચાર પ્રકારના છે—(૧) પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચાર (૨)
એકત્વવિતર્ક-અવિચાર (૩) સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ અને (૪) સમુચ્છિન્નક્રિયા-
પ્રતિપાતિ ॥ ૭૪ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા આજ્ઞાવિચય ધ્યાદિના ભેદથી ચાર પ્રકારના
ધર્મધ્યાન કહેવામાં આવ્યા છે, હવે શુક્લધ્યાનના ચાર ભેદોની પ્રરૂપણા
કરીએ છીએ—

શુક્લ શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે— ‘શુ’ અર્થાત્ શુચ-शोक,
‘કલ’ અર્થાત્ દૂર કરનાર તાત્પર્ય એ છે કે જેનાથી જન્મ મરણનું દુઃખ
દૂર થઈ જાય તેને શુ-લ કહે છે આવું ધ્યાન શુક્લ-ધ્યાન કહેવાય છે. કહ્યું
પણ છે—‘ જેની ઇન્દ્રિયો વિષયોથી વિમુક્ત થઈ ચુકી છે, જેનામાંથી સંકલ્પ

चतुर्विधं प्रज्ञप्तम् तद्यथा-पृथक्त्वसविचारादिभेदतः, तथा च-पृथक्त्व-वितर्कसविचारम् १ एकत्ववितर्काऽविचारम् २ सूक्ष्मक्रियाऽनिवर्ति ३ समुच्छिन्न-क्रियाऽप्रतिपाति ४ चेत्येतच्चतुर्विधं शुक्लध्यानं भवति । तत्र प्रथमं पृथक्त्व-वितर्क सविचारम् पूर्वगतश्रुतज्ञानानुसारेण ध्येयविशेष गतोत्पादादिनानापर्यायाणां द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिकादि नानानयैरर्थव्यञ्जनयोगसंक्रान्तिसहित मनुचिन्तनम् अत्र पूर्वगताः शब्दास्तदर्थं वा ध्येया भवन्ति, किन्तु-ध्यातु स्तादृश सामर्थ्या-भावात् स एकं द्रव्यं तद्गुणं पर्यायं वा परित्यज्येतरस्मिन् अर्थे द्रव्ये गुणे पर्याये वा गच्छति इदमेव परिवर्तनं पृथक्त्वमुच्यते, ततः एकस्मात् अर्थादर्थान्तरं

चुकी हैं, जिसमें से संकल्प, विकल्प, विचार और दोष निवृत्त हो चुके हैं और जिसमें अन्तरात्मा तीनों योगों से निवृत्त हो जाता है, उसे शुक्लध्यान कहते हैं। यह सभी ध्यानों में उत्तम है और श्रेष्ठ है।'

शुक्लध्यान चार प्रकार का है-(१) पृथक्त्व वितर्कसविचार (२) एक-त्व वितर्क-अविचार (३) सूक्ष्म क्रियानिवर्ति और (४) समुच्छिन्नक्रियाप्रतिपाति । इनका स्वरूप इस प्रकार है-

(१) पूर्वगत श्रुत के अनुसार, ध्येय वस्तु की नाना पर्यायों का, द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक आदि अनेक नयों से, अर्थ व्यञ्जन (शब्द) और योग के संक्रमण के साथ चिन्तन करना पृथक्त्ववितर्कसविचार ध्यान कहलाता है। इस ध्यान में पूर्वगत शब्द या उसके अर्थ ध्येय होते हैं, किन्तु ध्यान में उतना सामर्थ्य न होने के कारण वह किसी एक द्रव्य, उसके गुण अथवा पर्याय का परित्याग करके दूसरे द्रव्य,

विकल्प विकार અને દોષ નિવૃત્ત થઈ ગયા છે અને જેનાંમાં અન્તરાત્મા' ત્રણે યોગોથી' નિવૃત્ત થઈ જાય છે તેને શુક્લધ્યાન કહે છે. આ બધાં ધ્યાનોમાં ઉત્તમ અને શ્રેષ્ઠ છે. '

શુક્લધ્યાન ચાર પ્રકારના છે—(૧) પૃથક્ત્વ વિતર્કસવિચાર (૨) એકત્વ વિતર્ક અવિચાર (૩) સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ અને (૪) સમુચ્છિન્ન ક્રિયા અપ્રતિપાતિ એમનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે—(૧) પૂર્વગત શ્રુત અનુસાર ધ્યેય વસ્તુના જુદા જુદા પર્યાયોનું દ્રવ્યાર્થિક અને પર્યાયાર્થિક આદિ અनेક નયોથી, અર્થ વ્યંજન (શબ્દ) અને યોગના સંક્રમણની સાથે ચિન્તન કરવું 'પૃથક્ત્વવિતર્ક' સવિચાર ધ્યાન કહેવાય છે. આ ધ્યાનમાં પૂર્વગત શબ્દ અથવા તેના અર્થ ધ્યેય હોય છે પરંતુ ધ્યાતામાં એટલું સામર્થ્ય ન હોવાના કારણે તે કાંઈ એક દ્રવ્ય, તેના ગુણ અથવા પર્યાયોનું ચિન્તન કરવા લાગે છે. આ પરિવર્તન

શબ્દાચ્છેદાન્તરં-યોગાચોગાન્તરં ગન્તુ ચિન્તનમ્, તત્-વિચાર ઉચ્યતે । ઉક્તશ્ચ-
 દ્રવ્યાદ્રવ્યાન્તરં યાતિ, ગુણાદ્યાતિ ગુણાન્તરમ્,
 પર્યાયાદવ્યપર્યાયં, સ્વ પૃથક્ત્વં અદ્યત્યતઃ । ૧ ।
 અર્થાદર્થાન્તરે શબ્દાચ્છેદાન્તરે ચ સંક્રમઃ ।
 યોગાદ્ યોગાન્તરે યત્ર સવિચારં તદુચ્યતે ॥ ૨ ॥

હતિ તદેવમ્ પૃથક્ત્વહેતુકવિચરણાત્મકવિતર્કરૂપં યદ્ધ્યાનં તત્-
 -પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચારં ધ્યાન મુચ્યતે । તત્ત્વ-‘અપૂર્વકરણે’-અનિવૃત્તિ
 કરણે સૂક્ષ્મસંપરાયે’ ઉપશાન્તકષાયે ચેતિ ગુણસ્થાનચતુષ્ટયે
 ભવતિ । યત્ર-એકમાત્રદ્રવ્યં=તત્પર્યાય-સ્તદ્ગુણો વા વ્યક્તિનાર્થયોગવિષયક

ગુણ યા પર્યાય કા ચિન્તન કરને લગતા હૈ । હસ પરિવર્તન કૌ પૃથક્ત્વ
 કહતે હૈ । અતઃવ ઇક અર્થ સે અર્થાન્તર, ઇક શબ્દ સે શબ્દાન્તર
 ઇવં યોગ સે યોગાન્તર મેં પ્રવેશ કરકે ચિન્તન ક્રિયા જાતા હૈ । હસે
 વિચાર કહતે હૈ । કહા ખી હૈ, ઇક દ્રવ્ય કો છોડકર દૂસરે દ્રવ્ય કો
 અવલમ્બન કરના હૈ ઇક ગુણ સે દૂસરે ગુણ પર ચલા જાતા હૈ ઓર ઇક
 પર્યાય કા ચિન્તન કરતે કરતે દૂસરે પર્યાય કા ચિન્તન કરને લગના
 પૃથક્ત્વ કહલાતા હૈ । ॥ ૧ ॥

જો ધ્યાન ઇક અર્થ સે દૂસરે અર્થ સે, ઇક શબ્દ કો છોડકર દૂસરે
 શબ્દ મેં તથા ઇક યોગ સે દૂસરે યોગ મેં જાયા જાતા હૈ, વહ સવિચાર
 ધ્યાન કહલાતા હૈ ॥ ૨ ॥ હસ પ્રકાર પૃથક્ત્વ હેતુક, વિચાર-યુક્ત ઇવં
 વિતર્કરૂપ જો ધ્યાન હૈ, વહ પૃથક્ત્વ સ વિતર્કવિચાર ધ્યાન કહા જાતા
 હૈ । યહ ધ્યાન અપૂર્વકરણ, અનિવૃત્તિરણ, સૂક્ષ્મ સામ્પરાય ઓર
 ઉપશાન્ત કષાય નામક ચાર ગુણસ્થાનો મેં હોના હૈ ।

ને પૃથક્ત્વ કહે છે આથી એક અર્થથી અર્થાન્તર એક શબ્દથી શબ્દાન્તર
 અને યોગથી યોગાન્તરમાં પ્રવેશ કરીને ચિન્તન કરવામાં આવે છે આને
 વિચાર કહે છે કહું પણ છે- એક દ્રવ્યને છોડીને બીજા દ્રવ્યનું અવલમ્બન
 કરવું, એક ગુણથી બીજા ગુણ પર આદ્યા જવું અને એક પર્યાયનું ચિન્તન
 કરતા કરતા બીજા પર્યાયનું ચિન્તન કરવા લાગવું પૃથક્ત્વ કહેવાય છે. ૧ ।

જે ધ્યાન એક અર્થથી બીજા અર્થમાં, એક શબ્દને છોડી બીજા
 શબ્દમાં તથા એક યોગથી બીજા યોગમાં લાગી નય છે તે સવિચાર ધ્યાન
 કહેવાય છે. ॥ ૨ ॥ આ રીતે પૃથક્ત્વ હેતુક, વિચાર યુક્ત અને વિતર્કરૂપ
 જે ધ્યાન છે તે પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચાર ધ્યાન કહેવાય છે. આ ધ્યાન અપૂર્વ
 કરણ, અનિવૃત્તિકરણ, સૂક્ષ્મસામ્પરાય અને ઉપશાન્તકષાય નામક ચાર ગુણ
 સ્થાનોમાં હોય છે.

પરાવર્તનવિચારરહિતં યથાસ્યાત્તથા-એકત્વેન ચિન્તયતે તદ્-એકત્વ
વિતર્કાઽવિચારનામકં દ્વિતીયં શુક્લધ્યાનં ભવતિ । ઉક્તશ્ચ તલ્લક્ષણમ્

નિજાત્મદ્રવ્ય મેકં વા, પર્યાય મથવા ગુણમ્ (આશ્રિત્ય) ।

નિશ્ચલં ચિન્તયતે યત્ર, તદેકત્વં વિદુર્બુધાઃ ॥૧॥

યદ્ વ્યજ્જનાર્થયોગેષુ, પરાવર્તવિવર્જિતમ્ ।

ચિન્તનં તદવિચારં, સ્મૃતં સદધ્યાનકોવિદૈઃ ॥૨॥

કાયકી--ઉચ્છવાસાદિકા યસ્મિન્ ધ્યાને તત્-સૂક્ષ્મક્રિયમ્, ન
નિવર્તતે ન વ્યાવર્તતે યત્તત્ અનિવર્તિ, સૂક્ષ્મક્રિયે ચ-તત્-અનિવર્તિત્તિવેતિ
સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ નામકં શુક્લધ્યાનં તૃતીય મુચ્યતે । સમુચ્છિન્ના
-ક્ષીણા ક્રિયા કાયિકયાદિકા શૈલેશીકરણે નિરુદ્ધયોક્ત્યેન યસ્મિ
સ્તત્તથા ન પતિતું શીલં યસ્ય તત્-અપતિષ્ઠતિ-અનુપરતિ સ્વભાવમ્, સમુચ્છિન્નં

(૨) જિસ ધ્યાન મેં એક આત્મદ્રવ્ય, ઉસકા પર્યાય યા ગુણ, વ્યંજન
અર્થે ઓર યોગ વિષયક પરિવર્તન કે વિના, એક-રૂપ મેં ચિન્તન ક્રિયા
જાતા હૈ, વહ એકત્વવિતર્ક-અવિચાર નામક દ્વિતીય શુક્લધ્યાન હૈ ।
ઉસકા લક્ષણ હસ પ્રકાર કહા ગયા હૈ-'એક નિજાત્મ દ્રવ્ય, પર્યાય
અથવા ગુણ કો અવલમ્બન કારકે નિશ્ચલ રૂપ સે જો ચિન્તન ક્રિયા જાતા
હૈ, ઉસે જ્ઞાની જન 'એકત્વ' કહતે હૈ ॥૧૨॥ વ્યંજન, અર્થ ઓર યોગ
મેં પરિવર્તન હુએ વિના જો ચિન્તન હોતા હૈ, ઉસે ધ્યાન મેં કુશલ
પુરુષ 'અવિચાર' કહતે હૈ ॥૨॥

(૩) જિસ શુક્લધ્યાન મેં ઉચ્છવાસ આદિ કાયિક ક્રિયા સૂક્ષ્મ
રૂપ મેં રહ જાતી હૈ, ઓર જો અનિવર્તિ હોતા હૈ, વહ સૂક્ષ્મક્રિયાનિ
વર્તિ ધ્યાન કહલાતા હૈ ।

(૪) જિસ ધ્યાન મેં, શૈલેશીકરણ મેં, યોગોં કા સર્વથા નિરોધ હો

(૨) જે ધ્યાનમાં એક આત્મદ્રવ્ય, તેના પર્યાય અથવા ગુણ વ્યંજન
અર્થે અને યોગ વિષયક પરિવર્તન વિના, એક રૂપમાં ચિન્તન કરવામાં આવે
છે તે એકત્વવિતર્ક-અવિચાર નામક બીજું શુક્લધ્યાન છે. તેનું લક્ષણ આ
પ્રમાણે કહેવામાં આવ્યું છે- એક નિજાત્મદ્રવ્ય પર્યાય અથવા ગુણને અવલમ્બન
બનાવીને નિશ્ચયપણે જે ચિન્તન કરવામાં આવે છે તેને જ્ઞાનીજન 'એકત્વ'
કહે છે ॥૧૨॥ વ્યંજન, અર્થ અને યોગમાં પરિવર્તન થયા વગર જે ચિન્તન થાય
છે તે ધ્યાનને કુશલ પુરુષ 'અવિચાર' કહે છે ॥ ૨ ॥ (૩) જે શુક્લધ્યાન
ઉચ્છવાસ આદિ કાયિક ક્રિયા સૂક્ષ્મરૂપમાં રહી જાય છે અને જે અનિવર્તિ
હોય છે તે સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ ધ્યાન કહેવાય છે.

(૪) જે ધ્યાનમાં, શૈલેશીકરણમાં, યોગોના સર્વથા નિરોધ થઈ જવાના

ચ તદ્ અપ્રતિપાતિત્વેતિ સમુચ્છિન્નક્રિયાઽપ્રતિપાતિ નામકં ચતુર્થં શુક્લધ્યાનં
 મત્તિ । ઉક્તઞ્ચ વ્યાખ્યામગ્નસૌ શ્રીમગવતીસૂત્રે-૨૫-શતકે ૭ ઉદ્દેશકે ૮૦૩-
 સૂત્રે-‘સુક્લધ્યાને ચતુર્વિધે પળ્લવે, તં જહા-પુહુત્ત વિતર્કસંવિચારી
 ઇત્યેત્ત વિતર્કસંવિચારી ૨સુદ્ધમક્રિયા અણિયાહી ૩ સમુચ્છિન્ન ક્રિયા
 અપરિવર્તિત્વે’ ૧૩, શુક્લધ્યાનં ચતુર્વિધં મગ્નમ્, તદ્ધ્યા-પૃથક્ત્વવિતર્કસંવિચારિ,
 એકત્વવિતર્કસંવિચારિ, સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ, સમુચ્છિન્નક્રિયાઽપ્રતિપાતિ, ઇતિ ॥૭૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિઃ-પૂર્વે તાવદ્-ધર્મધ્યાનમ્ આજ્ઞાવિચંયાદિ ભેદતઃચતુર્વિધ-
 ત્વેન પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પ્રતિ-શુક્લધ્યાનં પૃથક્ત્વવિતર્કસંવિચારાદિ ભેદતઃ
 ચતુર્વિધત્વેન પ્રતિપાદયિતુમાદ-‘સુક્લધ્યાને ચતુર્વિધે’ ઇત્યાદિ, । તત્-
 શુક્લધ્યાનં ચતુર્વિધં મત્તિ । અસ્ય શુક્લધ્યાનસ્ય યે ચત્વારો ભેદાસ્તે દીપિકાયાં

જાને કે કારણ કાચિકી આદિ ક્રિયાએ સર્વથા નિરુદ્ધ હો જાતી છે ઓર
 જિસકા કબી પતન નહીં હોતા વહ સમુચ્છિન્ન ક્રિયા અપ્રતિપાતિ નામક
 ચૌથા શુક્લધ્યાન કહલાતા છે ।

∴ મગવતીસૂત્ર શતક ૨૫ ઉદ્દેશક ૭ । સૂત્ર ૮૦૩ મેં કહા છે-શુક્લધ્યાન
 ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા છે-(૧) પૃથક્ત્વ વિતર્ક સંવિચાર (૨) એકત્વ
 વિચાર અવિચાર (૩) સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ ઓર (૪) સમુચ્છિન્ન ક્રિયા-
 અપ્રતિપાતી ॥૭૪॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિ-પહેલે આજ્ઞા વિચય આદિ કે ભેદ સે ધર્મધ્યાન
 ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા છે, અવ શુક્લધ્યાન કે પૃથક્ત્વ વિતર્ક
 સંવિચાર આદિ ચાર ભેદ બતલાતે છે-

શુક્લધ્યાન ચાર પ્રકાર કા છે । ચારોં પ્રકારોં કા સવિસ્તર નિરૂ

કારણે કાચિકી આદિ ક્રિયાઓ સર્વથા નિરુદ્ધ થઈ જાય છે અને જેનું કારણ
 પણ પતન થતું નથી તે સમુચ્છિન્ન ક્રિયા અપ્રતિપાતી નામક ચોથું શુક્લ-
 ધ્યાન કહેવાય છે.

ભગવતીસૂત્ર શતક ૨૫ ઉદ્દેશક ૭, સૂત્ર ૮૦૩માં કહ્યું છે-શુક્લધ્યાન
 ચાર પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે (૧) પૃથક્ત્વવિતર્ક સંવિચાર (૨) એકત્વ-
 વિતર્ક અવિચાર (૩) સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ અને (૪) સમુચ્છિન્નક્રિયા
 અપ્રતિપાતી ॥ ૭૪ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિ-પહેલા આજ્ઞાવિચય આદિના ભેદથી ધર્મધ્યાન
 ચાર પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે હવે શુક્લધ્યાનના પૃથક્ત્વવિતર્ક સંવિચાર
 આદિ ચાર ભેદ બતાવીએ છીએ-

શુક્લધ્યાન ચાર પ્રકારના છે અને પ્રકારોનું વિગતવાર નિરૂપણ દીપિકા

સચ્ચિસ્તરં વર્ણિતાઃ અતસ્તત્રતો દ્રષ્ટવ્યાઃ । અસ્ય શુક્લધ્યાનસ્ય ચત્વારિ લક્ષણાનિ
ભવન્તિ, તથાહિ-વિવેકો વ્યુત્સર્ગોઽવ્યથમ્-અસંમોહશ્ચ, તન્ન-વિવેકઃ પૃથક્કરણમ્ સ ચ
પૃથકારઃ દેહાદાત્મનો બુદ્ધ્યા વિવેચનમ્-૧ વ્યુત્સર્ગો-નિસ્સજ્જતયા દેહોપધિત્યાગઃ
-૨ અવ્યથમ્-દેવાણુપસર્ગજનિતં ભયં વ્યથા, તયા રહિતમ્ ૩ અસંમોહો-દેવમાયા-
જનિતસ્ય મૂઢત્વસ્ય નિપેધઃ-૪ । શુક્લધ્યાનસ્ય ચત્વારિ-આલમ્બનાનિ ભવન્તિ,
ક્ષાન્તિર્મુક્તિઃ આર્જવમ્-માર્દવશ્ચ । તન્ન-ક્ષાન્તિઃ પરકૃતાઽપકારસહનમ્ ૧ મુક્તિ
નિર્લોભતા-૨ આર્જવં-સરલતા ૩ માર્દવં-મૃદુતા ૪ । શુક્લધ્યાનસ્ય ચત્સોઽ-
નુપેક્ષાઃ, અપાયાઽનુપેક્ષાઽશુભાનુપેક્ષાઽનન્તવૃત્તિતાઽનુપેક્ષા-વિપરિણામાઽનુપેક્ષાશ્ચ
પણ દીપિકા ટીકા મેં ક્રિયા જા ચુકા હૈ, અતएव उनी मેं देख लेना
चाहिए ।

શુક્લધ્યાન કે ચાર લક્ષણ હોતે હૈ-વિવેક, વ્યુત્સર્ગ, અવ્યથ ઓર
અસંમોહ । વિવેક અર્થાત્ પૃથક્કરણ, યહાં દેહ સે આત્મા કા પૃથક્કરણ
સમજના ચાહિએ । વ્યુત્સર્ગ કા અર્થ નિઃસંગ હોકર દેહ ઓર ઉપધિ કા
ત્યાગ કરના હૈ । દેવ આદિ કો ઉપસર્ગ સે ઉત્પન્ન હોને વાલે ભય કા
ન હોના અવ્યથ હૈ ઓર દેવમાયા જનિત મૂઢતા ન હોના અસંમોહ હૈ ।

શુક્લધ્યાન કે ચાર આલમ્બન હોતે હૈ-શાન્તિ, મુક્તિ, આર્જવ
ઓર માર્દવ । દૂસરોં કે ક્રિએ હુએ અપરાધ કો સહન કર લેના શાન્તિ
ક્ષમા હૈ । મુક્તિ કા અર્થ નિર્લોભતા હૈ । સરલતા કો આર્જવ કહતે હૈ ।
માર્દવ કા અર્થ મૃદુતા-નમ્રતા-કોમલતા હૈ ।

શુક્લધ્યાન કી ચાર અનુપેક્ષાં હૈ-અપાયાનુપેક્ષા, અશુભાનુપેક્ષા
અનન્તવૃત્તિતાનુપેક્ષા ઓર વિપરિણામાનુપેક્ષા । પ્રાણાતિપાત આદિ આસ્ત્રવ

ટીકામાં કરવામાં આવી ગયું છે. આથી તેમાં જ નોંધ લેવા લલામણુ છે.

શુક્લધ્યાનના ચાર લક્ષણુ છે- વિવેક, વ્યુત્સર્ગ, અવ્યથ અને અસંમોહ
વિવેક અર્થાત્ પૃથક્કરણ, અહીં દેહનું આત્માથી શુદ્ધ પડવું એન સમજવાનું
છે. વ્યુત્સર્ગનો અર્થ નિઃસંગ થઈ દેહ અને ઉપધિનો ત્યાગ કરવો એમ-
થાય છે. દેવ વગેરેના ઉપસર્ગથી ઉત્પન્ન થનાર ભયનું ન હોવું અવ્યથ છે
અને દેવમાયાજનિત મૂઢતા ન હોવી અસંમોહ છે

શુક્લધ્યાનના ચાર આલમ્બન હોય છે- ક્ષાન્તિ, મુક્તિ, આર્જવ અને
માર્દવ બીજાના કરેલા અપરાધોને સહન કરી લેવા ક્ષાન્તિ-ક્ષમા છે. મુક્તિનો
અર્થ નિર્લોભતા છે. સરલત્વને આર્જવ કહે છે માર્દવનો અર્થ મૃદુતા-નમ્રતા-
કોમળતા છે.

શુક્લધ્યાનની ચાર અનુપેક્ષાઓ છે-અપાયાનુપેક્ષા, અશુભાનુપેક્ષા, અનન્ત
વૃત્તિતાનુપેક્ષા, અને વિપરિણામાનુપેક્ષા પ્રાણાતિપાત આદિ આસ્ત્રવદ્વારેના

તથાઽપાયાઽનુપ્રેક્ષા' અપાયાનાં પ્રાણાતિપાતાદ્યાસ્રવદ્વારજનિર્તાનામનર્થાના મનુચિન્તનમ્ ૧ અશુભાઽનુપ્રેક્ષા-સંસારસ્યૈવાઽશુભરૂપતયાઽનુચિન્તનમ્ ૨ અનન્ત-વૃત્તિતાઽનુપ્રેક્ષા ઝનન્તવૃત્તિતા, તૈલિકચક્રયોજિતસ્ય વૃષસ્ય માર્ગાઽનવસાનવત્ કદાઽપ્યસમાપ્તિશીલતા, તસ્યા અનુપ્રેક્ષાઽનુચિન્તનમ્ ૩ વિપરિણામાઽનુપ્રેક્ષા' ઉત્પાદ ધ્રૈવ્ય સ્વભાવાનાં પદાર્થાનાં ચો વિપરિણામઃ પ્રતિક્ષણં નવ નવ પર્યાયરૂપઃ તસ્યાઽનુચિન્તનમ્ ૪ તદુક્તમ્ ઔપપાતિકે ૩૦ સૂત્રે='સુક્રકજ્ઞાણે ચઽવિવેકે સ્વપ્પહોયારે પળગત્તે, તં જહા-પુહુત્તવિચક્રકે સવિચારી ૧ એગત્તવિચક્રકે અવિચારિ ૨ સુદુમ્ભકિરિણ અપરહિગર્હ૩ સમુચ્છિન્નકિરિણ અભિયદ્વી૪ 'સુક્રકસ્ય ણં જ્ઞાણસ્ય ચત્તારિ લક્ષણા પળગત્તા, તં જહા-વિવેકે-૧ વિઝસગ્ગે ૨ અવ્વહે ૩ અસંમોહે' ॥૪॥

સુક્રસ્ય ણં જ્ઞાણસ્ય ચત્તારિ આલક્ષણા પળગત્તા, તં જહા સંતી ૧ મુત્તી ૨ અજ્જવે ૩ મદ્ધવે ૪ સુક્રકસ્ય ણં જ્ઞાણસ્ય ચત્તારિ અણુપ્પેહાઓ પળગત્તાઓ, તં જહા 'અવાયાણુપ્પેહા ૧ અસુખાણુપ્પેહા ૨ અણંતવત્તિયાણુપ્પેહા ૩ વિપરિણામાણુપ્પેહા ૪ સે તં જ્ઞાણે સૂ. ૦ ॥૩૦॥

છાયા-શુકલધ્યાનં ચતુર્વિધં ચતુષ્કલ્પત્યવતારં મજ્જતમ્, તથથા પૃથક્ત્વ વિતર્ક સવિચારિ ૧ એકત્વવિતર્કઅવિચારિ ૨ સૂક્ષ્મક્રિયમગ્નિપાતિ ૩ સમુચ્છિન્નક્રિય મનિ-

દ્વારો' કે કારણ હોને ચાલે અનર્થો'ના વિચાર કરના અપાયાનુપ્રેક્ષા છે. સંસારનો અશુભરૂપ મેં ચિન્તન કરના અશુભાનુપ્રેક્ષા છે. જેણે કોલ્હ કે ચૈલ કે માર્ગ કા અન્ત નહીં જાતા, ઉસી પ્રકાર રાગી-દ્વેષી જીવ કે ભવભ્રમણ કા ખીકમી ખી અન્ત નહીં જાતા, એસા વિચાર કરના અનન્તવૃત્તિતાનુપ્રેક્ષા છે. પ્રત્યેક પદાર્થ ઉત્પાદ, વ્યય ઓર ધ્રોવ્ય સ્વભાવવાળા છે, ઉસમેં પ્રતિ ક્ષણ નવીન-નવીન પર્યાયો' કા ઉત્પાદ ઓર પુરાતન પર્યાય કા વિનાશ હોતા રહતા છે, એસા ચિન્તન કરના વિપરિણામાનુપ્રેક્ષા છે.

ઔપપાતિકનૂત્ર દે. ૩૦ વેં સૂત્ર મેં કહા છે—શુકલધ્યાન ચાર

કારણે થનારા અનર્થોના વિચાર કરવો અપાયાનુપ્રેક્ષા છે. સંસારનું અશુભરૂપમાં ચિન્તન કરવું અશુભાનુપ્રેક્ષા છે જેમ ઘાણીના બળદના માર્ગનો અન્ત નથી આવતો તેવી જ રીતે રાગીદ્વેષી જીવના ભવભ્રમણનો પણ ક્યારેય પણ અન્ત આવતો નથી એવો વિચાર કરવો અનન્તવૃત્તિતાનુપ્રેક્ષા છે પ્રત્યેક પદાર્થ ઉત્પાદ, વ્યય અને ધ્રોવ્ય સ્વભાવવાળા છે. તેમાં પ્રતિક્ષણ નવીન-નવીન પર્યાયોના ઉત્પાદ અને પુરાતન પર્યાયનો વિનાશ થતો રહે છે એવું ચિન્તન કરવું વિપરિણામાનુપ્રેક્ષા છે.

ઔપપાતિક સૂત્રના ૩૦ માં સૂત્રમાં કહ્યું છે—શુકલધ્યાન ચાર પ્રકારના

શીપિકા-નિર્યુક્તિ ટીકા મ.૭ સુ.૭૫ ચ.શુક્લધ્યાનસ્ય સ્વામ્યાદિપ્રરૂપણમ્ ૫૪૫,

વર્તિ ૪ ઇતિ ॥ શુક્લસ્ય સ્વલ્પ ધ્યાનસ્ય ચત્વારિ લક્ષણાનિ પ્રજ્ઞતાનિ તદ્યથા વિવેકઃ
૧ વ્યુત્સર્ગઃ ૨ અવ્યથમ્ ૩ અસંમોહઃ ૪ શુક્લસ્ય સ્વલ્પ ધ્યાનસ્ય ચત્વાર્યાલમ્બનાનિ
પ્રજ્ઞતાનિ, તદ્યથા ક્ષાન્તિઃ ૧ મુક્તિઃ ૨ આર્જવમ્ ૩ માર્દવમ્ । શુક્લસ્ય ધ્યાનસ્ય
ચત્વારોઽનુપ્રેક્ષાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તદ્યથા-અપાયાઽનુપ્રેક્ષા ૧ અશુભાઽનુપ્રેક્ષા ૨ અનન્ત-
વૃત્તિતાઽનુપ્રેક્ષા ૩ વિપરિણામાઽનુપ્રેક્ષા ૪ ઇતિ । તદેતદધ્યાનમ્ ॥સૂ.૦ ૭૪॥

મૂલમ્-પઠમા વે સુક્લજ્ઞાણા પુત્વધરસ્સ, ઉવસંતક્ષીણ
કસાયાણં ચ ॥૭૫॥

હાયા-પ્રથમે દ્વે શુક્લે ધ્યાને પૂર્વધરસ્ય, ઉપશાન્તક્ષીણકષાયયોશ્ચ ॥૭૫॥

પ્રકાર કા હૈ ઓર ચાર પદોં મેં ઉસકા અવતરણ હોતા હૈ, યથા-
(૧) પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચારી (૨) એકત્વવિનર્ક અવિચારી (૩) સૂક્ષ્મ
ક્રિયા-અપ્રતિપાતી ઓર (૪) સમુચ્છિન્નક્રિયા અનિવર્તિ

શુક્લધ્યાન કે ચાર લક્ષણ કહે गए हैं-વિવેક, વ્યુત્સર્ગ, અવ્યથ
ઓર અસંમોહ । શુક્લધ્યાન કે ચાર આલમ્બન કહે हैं-ક્ષમા, મુક્તિ,
આર્જવ ઓર માર્દવ ।

શુક્લધ્યાન 'કી ચાર અનુપ્રેક્ષાં હૈ-અપાયાનુપ્રેક્ષા, અશુભાનુ-
પ્રેક્ષા, અનન્તવૃત્તિતાનુપ્રેક્ષા ઓર વિપરિણામાનુપ્રેક્ષા હૈ ॥૭૪॥

‘પઠમા વે સુક્લજ્ઞાણા’ ઇત્યાદિ ૭૫।

સૂત્રાર્થ-પ્રથમ કે દો શુક્લધ્યાન પૂર્વધર કો ઉપશાન્ત કષાય
ઓર ક્ષીણકષાય કો હોતે हैं ॥૭૫॥

છે અને ચાર પદોમાં તેનું અવતરણ થાય છે, યથા-(૧) પૃથક્ત્વવિતર્ક
સવિચાર (૨) એકત્વવિતર્ક અવિચાર (૩) સૂક્ષ્મક્રિયા-અપ્રતિપાતી અને (૪)
સમુચ્છિન્નક્રિયા-અનિવર્તિ.

શુક્લધ્યાનનાં ચાર લક્ષણ કહેવામાં આવ્યા છે ‘વિવેક, વ્યુત્સર્ગ’ અવ્યથ
અને અસંમોહ. શુક્લધ્યાનમાં ચાર આલમ્બન કહ્યા છે, ક્ષાન્તિમુક્તિ, આર્જવ
અને માર્દવ.

શુક્લધ્યાનની ચાર અનુપ્રેક્ષાઓ છે-અપાયાનુપ્રેક્ષા અશુભાનુપ્રેક્ષા,
અનન્તવૃત્તિતાનુપ્રેક્ષા અને વિપરિણામાનુપ્રેક્ષા ॥૭૪ ॥

‘પઠમા વે સુક્લજ્ઞાણા’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-પ્રથમના બે શુક્લધ્યાન પૂર્વધર, ઉપશાન્તકષાય અને ક્ષીણ-
કષાયને થાય છે. ॥ ૭૫ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાવદ્ ગથાક્રમે પ્રત્યેકમ્ આર્તરોદ્રધર્મશુક્લં ચતુર્વિધ-
મપિ ચાતુર્વિધ્યેન પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પતિ-ચતુર્વિધસ્ય શુક્લધ્યાનસ્ય કે સ્ત્રામિનઃ
સન્તિ । કસ્ય કસ્ય તચ્ચતુર્વિધમપિ શુક્લધ્યાનં ભવતીતિ પ્રરૂપયિતું પ્રથમં
તાવદ્ આદિમદ્વયં, કસ્ય કસ્ય સમ્ભવતીતિ પ્રતિપાદયતિ—‘પદમા વે સુવક્રજ્ઞાણા
ઇત્યાદિ । પૂર્વોક્તેષુ ચતુર્વિધેષુ શુક્લધ્યાનેષુ પ્રથમે-આદ્યે દ્વે શુક્લેધ્યાને પૃથક્ત્વ-
વિતર્કસવિચારમ્ એકત્વવિતર્કાઽવિચારમ્ પૂર્વધરસ્થ, તથા ઉપશાન્તક્ષીણ-
કષાયયોશ્ચ ભવતઃ, તે દ્વે ધ્યાને ચતુર્દશપૂર્વધારણ્યૈર્ભવતઃ નત્સેકાંદશાઙ્ગવિદઃ
શ્રુતકેવલિનઃ । પૂર્વે યત્-ઉપશાન્તકષાયયોર્ધર્મધ્યાનં પ્રોક્તમ્, તદ્-અવિશેષેણ
સામાન્યતયા પ્રોક્તમ્, કિન્તુ-તયોર્-દ્વે શુક્લધ્યાને અપિ ભવતઃ ન સ્વલ્પ-તયોશ્ચતુ-
ષ્મકારકમપિ શુક્લધ્યાનં ભવતીતિ વોદ્યમ્ । તથા ચ-શ્રેણ્યારોહણાત્ પ્રાક્,

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે અનુક્રમ સે આર્ત, રોદ્ર, ધર્મ ઓર શુક્લ
ધ્યાન કે ચાર-ચાર ભેદ કહે ગયે હૈં, અબ યહ નિરૂપણ કરતે હૈં કિ
ચારોં પ્રકાર કે શુક્લધ્યાન કિસ-કિસ કો હોતે હૈં ? કિસ કા
સ્વામી કૌન હૈ ?

પૂર્વોક્ત ચાર પ્રકાર કે શુક્લધ્યાનોં મેં સે પ્રારંભ કે દો શુક્લ
ધ્યાન-પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચાર ઓર એકત્વવિતર્કાઽવિચાર પ્રાયઃ પૂર્વો
કે ધારક મુનિ કો હોતે હૈં તદા ઉપશાન્તકષાય ઓર ક્ષીણ કષાય
વીતરાગોં કો હોતે હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈં કિ યે દોતોં શુક્લધ્યાન પ્રાયઃ
ચૌદહ પૂર્વોં કે જ્ઞાતા શ્રુતકેવલી કો હી હોતે હૈં, પહેલે ઉપશાન્તકષાય
ઓર ક્ષીણ કષાયકો જો ધર્મધ્યાન કહા ગયા હૈ, વહ સામાન્ય રૂપ સે કહા
ગયા હૈ, કિન્તુ ઊનકો દો શુક્લધ્યાન ભી હોતે હૈં । ઊનકો ચારોં પ્રકારકા
શુક્લધ્યાન નહીં હોતા । શ્રેણી પર આરુઢ હોને સે પહેલે અર્થાત્

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા અનુક્રમથી આર્ત, રોદ્ર, ધર્મ અને
શુક્લધ્યાનનાં ચાર ભેદ કહેવામાં આવ્યા હવે એ નિરૂપણ કરીએ છીએ કે
ચારે પ્રકારના શુક્લધ્યાન કેને કેને થાય છે. કયા ધ્યાનનો સ્વામી કોણ છે ?

પૂર્વોક્ત ચાર પ્રકારનાં શુક્લધ્યાનોમાંથી પ્રારંભના એ શુક્લધ્યાન-
પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચાર અને એકત્વવિતર્ક અવિચરપ્રારઃ પૂર્વોનાં ધારક મુનિને
હોય છે તથા ઉપશાન્ત પ્રાય અને ક્ષીણકષાય વીતરાગોને થાય છે. તાત્પર્ય
એ છે તે આ બંને શુક્લધ્યાન પ્રાય ચૌદ પૂર્વોના જ્ઞાતા શ્રુતકેવળીને જ થાય
છે પહેલાં ઉપશાન્તકષાય અને ક્ષીણકષાયને જે ધર્મધ્યાન કહેવામાં આવ્યા
છે તે સામાન્ય રૂપથી કહેવામાં આવ્યા છે પરંતુ તેમને એ શુક્લધ્યાન થાય

अपूर्वकरणात्पूर्वमेव चतुर्थाद् गुणस्थानात्-सप्तमगुणस्थानं यावद् धर्मध्यानं भवति, किन्तु-अपूर्वकरणेऽनिवृत्तिकरणे, सूक्ष्मसम्पराये, उपशान्तकषाये चेति गुणस्थानचतुष्टये पृथक्त्ववितर्कसविचारं नाम प्रथमं शुक्लध्यानं भवति क्षीण-कषायगुणस्थानेतु-एकत्ववितर्काऽविचारं नाम द्वितीयं शुक्लध्यानं भवति
उक्तञ्च-निजात्म द्रव्यमेकंवा, पर्याय मथवा गुणम् ।

निश्चलं चिन्तयते यत्र तदेकत्वं विदुर्बुधाः ॥१॥

इति भावः एवम्-उपशान्तमोहरूपकषायस्य क्षीणमोहकषायस्य चाऽपि प्रथमद्वयंपृथक्त्ववितर्कसविचाररूपम्, एकत्ववितर्काऽविचाररूपञ्च शुक्लध्यानं भवतीति बोध्यम् ॥७४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वं तावद् ध्यानं चतुर्विधमपि-आर्तरीद्र धर्म शुक्लरूपं अपूर्वकरण नामक आठवे गुणस्थान से पूर्व, चौथे गुणस्थान से सातवे गुणस्थान तक धर्मध्यान होता है किन्तु अपूर्व करण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसम्पराय और उपशान्तकषाय-इन चार गुणस्थानों में पृथक्त्व वितर्कसविचार नामक प्रथम शुक्लध्यान होता है । क्षीण कषाय में एकत्ववितर्क-अविचार नामक दूसरा शुक्लध्यान होता है । कहा भी है-एक निजात्मद्रव्य का, पर्याय का अथवा गुण का निश्चल रूप से जिस ध्यानमें चिन्तन किया जाता है, उसे विद्वान् जन एकत्व कहते हैं । १।

इस प्रकार ऐसा समझना चाहिए कि उपशान्त कषाय और क्षीणकषाय को प्रारंभ के दो-पृथक्त्ववितर्कसविचार और एकत्ववितर्क-अविचार नामक दो शुक्लध्यान होते हैं ॥७५॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-पहले चारों ध्यानों के चार-चार भेदों का

छे-तेमने ચારે પ્રકારના શુક્લધ્યાન થતાં નથી. શ્રેણી પર આડઠ થતાં પહેલા અર્થાત્, અપૂર્વકરણ નામક આઠમા ગુણસ્થાન સુધી ધર્મધ્યાન થાય છે. પરંતુ અપૂર્વકરણ અનિવૃત્તિકરણ, સૂક્ષ્મસાંપરાય અને ઉપશાંતકષાય આ ચાર ગુણસ્થાનોમાં પૃથક્ત્વ વિકર્ક સવિચાર નામક પ્રથમ શુક્લધ્યાન હોય છે. ક્ષીણકષાયમાં એકત્વવિકર્ક અવિચાર નામક બીજું શુક્લધ્યાન પણ હોય છે કહ્યું પણ છે ” એક નિજાત્મદ્રવ્યનાં પર્યાયનું અથવા ગુણનું નિશ્ચલ રૂપથી જે ધ્યાનમાં ચિંતન કરવામાં આવે છે તેને વિદ્વાનજન એકત્વ કહે છે ” ૧૧. આ રીતે એમ સમજવું જોઈએ કે ઉપશાંતકષાય અને ક્ષીણકષાય ના પ્રારંભના પૃથક્ત્વવિકર્ક સવિચાર અને એકત્વવિકર્ક અવિચાર નામક બે શુક્લધ્યાન હોય છે. ॥ ૭૫ ॥

તત્ત્વર્થનિર્યુક્તિ-પહેલા ચારે ધ્યાનોના ચાર ચાર ભેદોનું નિરૂપણ

પ્રત્યેકં ચતુર્વિધં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પ્રતિ-ચતુર્વિધસ્ય શુક્લધ્યાનસ્ય કઃ કઃ સ્વામી
 ભવતિ, કસ્ય-કસ્ય પુરુષસ્ય એતન્ચતુર્વિધં શુક્લધ્યાનં ભવતીતિ પ્રરૂપયિતું પ્રથમં
 પ્રથમદ્વયં શુક્લધ્યાનં પ્રરૂપયતિ-‘પઢસ્યા વે સુક્ષ્મા દ્વાણા પુન્નવધરસ્સ ઉવસંત
 સ્ત્રીણક્રસાયાણં ચ’ इति । પ્રથમે પૂર્વોક્તેષુ ચતુર્વિધેષુ શુક્લધ્યાનેષુ આદ્યે-દ્વે
 શુક્લધ્યાને પૃથક્ત્વવિતર્કસંવિચારં ‘એકત્વવિતર્કાવિચારં ચ પૂર્વસ્ય ચતુર્દશ
 પૂર્વધારિણો ભવતઃ । એવમ્-ઉપશાન્તમોહકષાયસ્ય, ક્ષીણમોહકષાયસ્ય ચાપિ
 પ્રથમદ્વયં શુક્લધ્યાનં પૃથક્ત્વવિતર્કસંવિચારરૂપમ્, એકત્વવિતર્કાવિચાર-
 રૂપત્ત્વ મદતિ । તત્ર-ઉપશાન્તાઃ કષાયાઃ મોહરૂપા यस્ય સ ઉપશાન્તકષાયઃ
 એકાદશગુણસ્થાનવર્તી સ્વલુ વ્યવદિશ્યતે । એવં-ક્ષીણાઃ કષાયા મોહા यस્ય સ
 ક્ષીણકષાયઃ, તયોરપિ દ્વયોઃ-પૃથક્ત્વ વિતર્કસંવિચારૈકત્વવિતર્કાવિચારરૂપે
 નિરૂપણ ક્રિયા ગયા, અથ શુક્લધ્યાન સે ચારોં મેદોં કે સ્વામિયોં
 કા અર્થાત્ કૌન-સા શુક્લધ્યાન કિસકો હોતા હૈ, હસ ઘાત કા
 કથન કરતે હૈ । હસમેં ઓ પહેલે પ્રારંભ કે દો શુક્લધ્યાનોં કે સ્વા-
 મિયોં કા નિર્દેશ કરતે હૈ—

પ્રથમ કે દો અર્થાત્ પૃથક્ત્વવિતર્કસંવિચાર ઓર એકત્વવિતર્ક
 અવિચાર નામક દો શુક્લધ્યાન ચતુર્દશપૂર્વધારી કો હી હોતે હૈ,
 હસી પ્રકાર ઉપશાન્તકષાય ઓર ક્ષીણકષાય કો ઓ હોતે હૈ । જિસકે
 સમસ્ત કષાય ઉપશાન્ત હો ચુકે હોં ઉસે ઉપશાન્ત કષાય કહતે
 હૈ ઓર જિસકે સમસ્ત કષાયોં કા ક્ષય હો ચુકા હો વહ ક્ષીણ કષાય
 કહલાતા હૈ । હનકે ઓ પૃથક્ત્વવિતર્કસંવિચાર ઓર એકત્વવિતર્ક-
 અવિચાર નામક શુક્લધ્યાન હોતે હૈ ।

પૃથક્ત્વ કા અર્થ અનેકત્વ હૈ, ઉસકે સાથ સંવિચાર જો વિતર્ક
 કરવામાં આવ્યું. હવે શુક્લધ્યાનના ચારે ભેદોના સ્વામીઓનું અર્થાત્ કયું
 શુક્લધ્યાન કેને હોય છે એ વિષયનું કથન કરીએ છીએ. તેમાં પણ પ્રથમ
 પ્રારંભના એ શુક્લધ્યાનના સ્વામીઓનો નિર્દેશ કરીએ છીએ—

પ્રથમના એ અર્થાત્ પૃથક્ત્વવિતર્ક સંવિચાર અને એકત્વવિતર્ક
 અવિચાર નામક એ શુક્લધ્યાન ચૌદ પૂર્વધારીને જ હોય છે. એવી જ રીતે
 ઉપશાન્તકષાય અને ક્ષીણકષાયને પણ હોય છે. જેના સમસ્તકષાયો ઉપશાન્ત
 થઈ ગયાં છે તેને ઉપશાન્તકષાય કહે છે અને જેના સમસ્તકષાયોના ક્ષય થઈ
 ચૂક્યો હોય તે ક્ષીણકષાય કહેવાય છે આમને પણ પૃથક્ત્વવિતર્ક સંવિચાર
 અને એકત્વવિતર્ક અવિચાર નામક શુક્લધ્યાન હોય છે.

પૃથક્ત્વનો અર્થ અનેકત્વ છે, તેની સાથે સંવિચાર જે વિતર્ક છે તે

શુક્લધ્યાને-આગ્રે દ્વે ભવતઃ । તત્ર-પૃથક્ત્વમ્ અનેકત્વમ્ તેન સહ ગતો વિતર્કઃ સવિચારં યત્ર ભવેત્ તત્-પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચારં નામ શુક્લધ્યાનમ્, પૃથક્ત્વમેવ વા વિતર્કસહગતં વિતર્કપુરોગતં સવિચારસહિતં યત્ર તત્-પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચારમ્, તત્ત્વ-પરમાણુત્રીશાદાવેકદ્રવ્યે-ઉત્પાદવ્યયધ્રાવ્યાદિ પર્યાયાઽ-નેકતયાઽપિ યત્-યત્ તત્ત્વં તત્પૃથક્ત્વેન તસ્ય ચિન્તનં વિતર્કમહચરિતં સવિચારં ચ યત્ તત્ પૃથક્ત્વમેવ વા વિતર્ક સહગતં વિતર્કપુરોગતં વિચારસહિતં યત્ર તત્-પૃથક્ત્વ વિતર્કસવિચારં શુક્લધ્યાનં પ્રથમં મુચ્યતે, વિચારઃ પૂર્વગત શ્રુતાઽનુસારેણાર્થવ્યંજનયોગસંક્રાન્તિઃ અર્થાદ્-વ્યંજનં વ્યંજનં વ્યંજનાદ્ અર્થે સંક્રાન્તિઃ એવમ્-મનોયોગાત્ કાયયોગસંક્રમણમ્-વાગ્યોગસંક્રમણં વા વિચારઃ । એવં-કાયયોગાદ્ મનોયોગ સંક્રમણમ્=વાગ્યોગસંક્રમણં વા, એવં-વાગ્યોગાત્ મનોયોગસંક્રમણં કાયયોગસંક્રમણં વા વિચાર ઉચ્યતે । યત્ર યોગસંક્રમણં ભવતિ તત્રેવ નિરોધો ધ્યાનં સવિચારં ભવતીતિ ભાવઃ ।

હૈ વહ પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચાર નામક શુક્લધ્યાન કહલાતા હૈ । તાત્પર્યં યહ હૈ કિ જિસ ધ્યાન મેં વિતર્ક અથવા શ્રુત કા આલમ્બન લિયા જાતા હૈ, જિસમેં અર્થ, વ્યંજન એવં યોગ કા સંક્રમણ હોતા રહતા હૈ ઓર સાથ હી યોગ કા બી પરિવર્તન હોતા રહતા હૈ, વહ પૃથક્ત્વવિતર્કવિચાર નામક શુક્લધ્યાન કહલાતા હૈ । વિચાર કા અર્થ પૂર્વગત શ્રુત કે અનુસાર અર્થ, વ્યંજન ઓર યોગ કા સંક્રમણ હોતા હૈ-અર્થ સે વ્યંજન મેં ઓર વ્યંજન સે અર્થ મેં સંક્રમણ હોતા રહતા હૈ । કબી મનોયોગ સે કાયયોગ મેં સંક્રમણ હોતા હૈ, કબી વચન યોગ મેં યહ સંક્રમણ વિચાર કહલાતા હૈ । હસી પ્રકાર કામયોગ સે મનોયોગ યા વચનયોગ મેં સંક્રમણ હોના તથા વચનયોગ સે મનોયોગ યા કાયયોગ મેં સંક્રમણ હોના બી સમજ લેના ચાહિયે । જહાં યોગ કા

પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચાર નામક શુક્લધ્યાન કહેવાય છે. તાત્પર્યં એ છે કે જે ધ્યાનમાં વિતર્ક અથવા શ્રુતનું આલમ્બન લેવામાં આવે છે જેમાં અર્થવ્યંજન તેમજ યોગનું સંક્રમણ થતું રહે છે અને સાથેસાથે યોગનું પણ પરિવર્તન થતું રહે છે તે પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચાર નામક શુક્લધ્યાન કહેવાય છે. વિચારનેા અર્થ પૂર્વગતશ્રુત અનુસાર અર્થ વ્યંજન અને યોગનું સંક્રમણ થાય છે અર્થથી વ્યંજનમાં અને વ્યંજનથી અર્થમાં સંક્રમણ થતું રહે છે. ક્યારેક મનોયોગથી કાયયોગમાં સંક્રમણ થાય છે. કદી વચનયોગમાં આ સંક્રમણ વિચાર કહેવાય છે. એવી જ રીતે કાયયોગથી મનોયોગ અથવા વચનયોગમાં સંક્રમણ થવું તથા વચનયોગથી મનોયોગ તથા કાયયોગમાં સંક્રમણ પણ સમજ લેવા જોઈએ જ્યાં યોગનું સંક્રમણ થાય છે ત્યાંજ

અથ દ્વિતીયં શુક્લધ્યાનમ્' એકત્વવિતર્કમ્ અવિચાર મુચ્યતે, એકસ્ય ભાવઃ એકત્વમ્, એકત્વગતો વિતર્કો વિચારરહિતો યત્ર, તત્-એકત્વવિતર્કાવિચારમ્ નામદ્વિતીયં શુક્લધ્યાનં યત્તિ, એકઃ કશ્ચિદ્ યોગ સ્વયાણામન્યતમઃ અર્થો વ્યજ્ઞનં ચૈકમેવ એકપર્યાય ચિન્તનમ્-ઉત્પાદ-વ્યય ધ્રોવ્યાદિ પર્યાયાણામેકસ્મિન્નેવ પર્યાયે નિવાતગૃહસ્થિત મદીપશિલ્પારાજિવદ્ નિષ્કમ્પં, પૂર્વગતશ્રુતાનુસારિ ચ ચિત્તં નિર્વિચારં યદ્ભવતિ તદેકત્વવિતર્કમવિચારં વ્યપદિશ્યતે । ઉક્તશ્ચ-

‘ક્ષીણકષાયસ્થાનં, તત્પ્રાપ્ય તતો વિશુદ્ધલેશ્યઃ સન્ ।

એકત્વવિતર્કાવિચારં, ધ્યાનં તતોઽધ્યેતિ ॥૧॥

સંક્રમણ હોતા હૈ વહીં ધ્યાનસવિચાર હોતા હૈ ।

દૂસરા શુક્લધ્યાન એકત્વવિતર્ક-અવિચાર કહલાતા હૈ । એક કા ભાવ એકત્વ કહલાતા હૈ । જો એકત્વરૂપ હો એસા વિતર્ક એકત્વવિતર્ક હૈ । વહ વિચારરહિત હોને સે દૂસરા શુક્લધ્યાન એકત્વ વિતર્ક-અવિચાર કહા ગયા હૈ । હસમેં તીનો યોગોં મેં સે એક યોગ હોના હૈ । અર્થ ઓર વ્યંજન (શબ્દ) ઓ એકહી હોતા હૈ । કિસી એક પર્યાયકા ચિન્તન હોતા હૈ । હસ મકાર ઉત્પાદ, વ્યય ઓર ધ્રોવ્ય આદિ પર્યાયો મેં સે કિસી એક પર્યાય મેં, વાયુવિહીન ગૃહ મેં સ્થિત દીપક કી શિલા કે સમાન, નિષ્કમ્પ ચિત્ત હોના એકત્વવિતર્ક-અવિચાર ધ્યાન કહલાતા હૈ । યહ ધ્યાન ઓ પ્રાયઃ પૂર્વગત શ્રુત કે આલમ્બન સે હી હોતા હૈ-કહા ઓ હૈ ।

ચીતરાગ મુનિ ક્ષીણકષાય સ્થાન કો પ્રાપ્ત કરકે વિશુદ્ધ લેશ્યાવાળા હોકર એકત્વવિતર્કાવિચાર ધ્યાન ધ્યાતા હૈ ॥૧॥

ધ્યાનસુવિચાર થાય છે

ખીણુ શુક્લધ્યાન એકત્વવિતર્ક-અવિચાર કહેવાય છે. એક નો ભાવ એકત્વ કહેવાય છે જે એકત્વરૂપ હોય એવો વિતર્ક એકત્વવિતર્ક છે. તે વિચાર રહિત હોવાથી ખીણુ શુક્લધ્યાન એકત્વવિતર્ક-અવિચાર કહેવાયું છે આમાં ત્રણે યોગોમાંથી એક યોગ હોય છે, અર્થ અને વ્યંજન (શબ્દ) પણ એક જ હોય છે કેઈ એક પર્યાયનું ચિન્તન હોય છે આવી રીતે ઉત્પાદ વ્યય અને ધ્રોવ્ય આદિ પર્યાયોમાંથી કેઈ એક પર્યાયમાં વાયુરહિત ઘરમાં સ્થિત દીપકની વાટની જેમ, નિષ્કમ્પ ચિત્ત હોયું એકત્વવિતર્ક-અવિચાર ધ્યાન કહેવાય છે. આ ધ્યાન પણ પ્રાયઃ પૂર્વગત શ્રુતના આલંબનથી જ થાય છે કહ્યું પણ છે—

ચીતરાગ મુનિ ક્ષીણ કષાય સ્થાનને પ્રાપ્ત કરીને વિશુદ્ધ લેશ્યાવાળો થઈને એકત્વ વિતર્કાવિચાર ધ્યાન ધ્યાવે છે ॥૧॥

તથાચાઽષ્ટાવિંશતિમકારકમોહનીયકર્મોપશમા દુપશાન્તકષાયવીતરાગ-
 છદ્વસ્થઃ છદ્વનિ-આવરણે સ્થિતત્વાત્ છદ્વસ્થશ્ચ ઉચ્યતે, મોહનીયસ્ય કૃત્સ્ન
 ક્ષયાત્ સક્ષીણકષાયવીતરાગઃ છદ્વસ્થશ્ચ ધર્મધ્યાન શુક્લાઽઽદ્યદ્વયધ્યાનવિશેષાત્
 યથાશ્રયાતસંયમવિશુદ્ધ્યાઽવશેષાણિ કર્મણિ ક્ષપયતિ । તન્ન-દ્વિચરમસમયે
 इति चरम समयद्वयाद्वशिष्टे निद्रा-प्रचले क्षपयति, ततोऽस्य चरमसमये ज्ञान-
 दर्शनावरणद्वयान्तरायरूप कर्मत्रिक क्षयात् केवलज्ञानदर्शनमुपजायते ॥૭૬॥

મૂળમ્-ચરમા બે કેવલિસ્સ ॥૭૬॥

જાયા-‘ચરમે દ્વે કેવલિનઃ-॥૭૬॥

जिन्होंने अट्टाईस प्रकार के मोहनीय कर्म का उपशम कर दिया है
 वे उपशान्त कषाय वीतराग छद्वस्थ कहलाते हैं । छद्व अर्थात् आवरण
 में जो स्थित हो वह छद्वस्थ कहा जाता है । मोहनीय कर्म का सर्वथा
 क्षय कर देने वाला क्षीण कषाय कहलाता है अगर ऐसा मुनि बारहवें
 गुणस्थान में हो तो ज्ञानावरणादि के उदय के कारण छद्वस्थ होता है ।
 यह क्षीणकषाय वीतराग छद्वस्थ धर्मध्यान और शुक्लध्यान के प्रथम
 दो भेदों से तथा यथाश्रयात् संयम की विशुद्धता के प्रभाव से शेष
 घातिक कर्मों को युगपत् क्षय कर डालता है । वह द्विचरम समय में
 निद्रा और प्रचला प्रकृतियों का क्षय करके चरम समय में ज्ञानावरण,
 दर्शनावरण और अन्तराय, इन तीनों का क्षय करता है और केवल
 ज्ञान, केवल दर्शन और अनन्त धीर्य को प्राप्त कर लेता है ॥७५॥

જેઓએ અઠ્યાવીસ પ્રકારના મોહનીય કર્મનો ઉપશમ કરી દીધો છે
 તે ઉપશાન્તકષાય વીતરાગ છદ્વસ્થ કહેવાય છે. મોહનીય કર્મનો સર્વથા
 ક્ષય કરનાર ક્ષીણકષાય કહેવાય છે. આવી રીતે છદ્વ અર્થાત્ આવરણમાં
 જે સ્થિત હોય તે છદ્વસ્થ કહેવાય છે. જે એવો મુનિ બારમાં ગુણસ્થાને હોય
 તે જ્ઞાનાવરણાદિના ઉદયના કારણે છદ્વસ્થ હોય છે. આ ક્ષીણકષાય વીતરાગ
 છદ્વસ્થ ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાનના પ્રથમના બે ભેદોથી તથા યથાશ્રયાતસંય-
 મની વિશુદ્ધતાના પ્રભાવથી શેષ ત્રણ ઘાતિક કર્મોને યુગપત્ ક્ષય કરી
 નાખે છે. તે દ્વિચરમ સમયમાં નિદ્રા અને પ્રચલા પ્રકૃતિઓનો ક્ષય કરીને
 ચરમ સમયમાં જ્ઞાનાવરણ દર્શનાવરણ અને અન્તરાય ચા ત્રણેનો ક્ષય કરે
 છે અને કેવળજ્ઞાન, કેવળદર્શન અને અનન્તવીર્યને પ્રાપ્ત કરી લે છે ॥૭૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રે-પૃથક્ત્વવિતર્કરૂપમ્-એકત્વવિતર્કરૂપમ્ પ્રથમ દ્વયં શુક્લધ્યાનં ચતુર્દશ પૂર્વધરસ્ય એકાદશ ગુણસ્થાનવર્તિન ઉપશાન્તકષાયસ્ય ક્ષીણકષાયસ્ય ચ ભવતીતિ પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પત્તિ અન્તિમદ્વયં શુક્લધ્યાનં સૂક્ષ્મ-ક્રિયાઽનિવૃત્તિરૂપં સમુચ્છિન્નક્રિયાપ્રતિપાતિ રૂપમ્ ક્રમશઃ કેવલિન એવ ત્રયોદશ ચતુર્દશ ગુણસ્થાનવર્તિનો ભવતિ, ન તુ-હ્રસ્વસ્થસ્ય । તત્ર-સૂક્ષ્મક્રિયાઽનિવૃત્તિરૂપં તૃતીયં શુક્લધ્યાનં સયોગસ્ય વીતરાગ કેવલિનો ભવતિ તસ્ય ત્રયોદશ ગુણસ્થાન-વર્તિત્વાત્ । સૂક્ષ્મક્રિયા-કાયિકી ઉચ્છવાસાદિકા યત્ર તત્ સૂક્ષ્મક્રિયમ્ ન નિવર્તતે-અવ્યુચ્છિન્ન ક્રિયાઽપ્રતિપાતિધ્યાનાવાપ્તેરિત્યનિવૃત્તિ, સૂક્ષ્મક્રિયમ્ તદ્ અનિવૃત્તિ ચેતાદૃશં ધ્યાનં સૂક્ષ્મક્રિયાઽનિવૃત્તિ વ્યપદિશ્યતે તત્ત્વ-યોગ નિરોધકાલે

‘ચરમા વે કેવલિસ્સ’ ।

સૂત્રાર્થ—અન્તિમ દો શુક્લધ્યાન કેવલી મેં પાચે જાતે હૈં ॥૭૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્ર મેં પ્રતિપાદન કિયા ગયા હૈ કિ પૃથક્ત્વ વિતર્ક તથા એકત્વવિતર્ક રૂપ દો શુક્લધ્યાન પ્રાયઃ ચૌદહપૂર્વોં કે ધારક ગ્યારહવેં ઓર ચારહવેં ગુણસ્થાન વર્તી ઉપશાન્ત કષાય ઓર ક્ષીણ-કષાય કો હોતે હૈં, અચ યહ પ્રતિપાદન કરતે હૈં કિ અન્તિમ દો શુક્લ-ધ્યાન કેવલી કો હી હોતે હૈં—

સૂક્ષ્મક્રિયાનિવૃત્તિ નામક તીસરા શુક્લધ્યાન સયોગ કેવલી કો હોતા હૈ । જો તેરહવેં ગુણસ્થાનવર્તી હોતે હૈં । ઉચ્છવાસ આદિ શારીરિક ક્રિયા જિસ ધ્યાન મેં નિરુદ્ધ નહીં હોતી ઓર જો અપ્રતિપાતિ હોતા હૈ વહ સૂક્ષ્મક્રિયાનિવૃત્તી ધ્યાન કહલાતા હૈ । યહ ધ્યાન યોગોં કા નિરોધ કરતે સમય હોતા હૈ ।

‘ચરમા વે કેવલિસ્સ’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—અન્તિમ બે શુક્લધ્યાન કેવલીમાં હોય છે. ॥૭૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું કે પૃથક્ત્વ-વિતર્ક તથા એકત્વવિતર્ક રૂપ શુક્લધ્યાન પ્રાયઃ ચૌદ પૂર્વોના ધારક-અગીયારમાં અને બારમાં ગુણસ્થાનવર્તી ઉપશાન્તકષાય અને ક્ષીણકષાયને હોય છે હવે એ પ્રતિપાદન કરીએ છીએ કે અન્તિમ બે શુક્લધ્યાન કેવળીને જ હોય છે—

સૂક્ષ્મક્રિયાનિવૃત્તિ નામક ત્રીજું શુક્લધ્યાન સયોગ કેવળીને હોય છે, જે તેરમાં ગુણસ્થાનવર્તી હોય છે. ઉચ્છવાસ આદિ શારીરિક ક્રિયા જે ધ્યાનમાં નિરુદ્ધ થતી નથી અને જે અપ્રતિપાતી હોય છે તે સૂક્ષ્મક્રિયાનિવૃત્તિ ધ્યાન કહેવાય છે. આ ધ્યાન યોગોનો નિરોધ કરતી વેળાએ થાય છે.

દીપિકા-નિર્યુક્તિ ટીકા અ.૭ છ.૭૬ અન્તિમદ્વયં શુ. કસ્ય ભવતીતિપ્રરૂપણમ્ ૫૫૩

भवति । समुच्छिन्नक्रियाऽप्रतिपातिरूपं चतुर्थं शुक्लध्यानन्तु-अयोगिनो वीतराग
केवलिनो भवति । तस्य-चतुर्दश गुणस्थानवर्तित्वात् समुच्छिन्ना-विनष्टा सूक्ष्मा-
ऽपि क्रिया उच्छ्वासादिका यत्र तत्-समुच्छिन्नक्रियम् तच्च तत्-अप्रतिपाति
अनुपरतिशीलमिति समुच्छिन्नक्रियातिपातिनामकं चतुर्थं शुक्लध्यानं सूच्यते ॥७६

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વે તાવત્-પ્રથમદ્વયં શુક્લધ્યાનં પ્રતિપાદિતમ્,
સમ્પતિ ચરમદ્વયં શુક્લધ્યાનં પ્રતિપાદયિતુમાહ-‘ચરમ્યા વે કેવલિસ્સ’ इति चरमे
અન્તિમે દ્વે શુક્લધ્યાને સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ-સમુચ્છિન્નક્રિયાઽપ્રતિપાતિરૂપે
કેવલિનઃ ક્રમશઃ સયોગિકેવલિનઃ અયોગિકેવલિનશ્ચ ભવતઃ ન તુ-છદ્મસ્થસ્ય
તત્ર-સયોગિવીતરાગકેવલિન સ્ત્રયોદશ ગુણસ્થાનવર્તિત્વાત્ સૂક્ષ્મક્રિયાઽનિવર્તિ
રૂપં તૃતીયં શુક્લધ્યાનં ભવતિ, અયોગિ કેવલિનતુ-ચતુર્દશ ગુણસ્થાનવર્તિત્વાત્

समुच्छिन्न क्रिया अप्रतिपाती नामक चौथा शुक्लध्यान अयोगी
केवली को होता है, जो चौदहवें गुणस्थान में होते हैं । जिस ध्यान में
उच्छ्वास आदि सूक्ष्म क्रिया भी निरुद्ध हो जाती है और जो अप्रति-
पाती होता है, वह समुच्छिन्न क्रिया प्रतिपाती नामक चौथा शुक्लध्यान
कहलाता है ॥७६॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-दो प्रारंभ के शुक्लध्यानों का निरूपण किया जा
चुका अब अन्तिम दो का निरूपण करते हैं—

अन्तिम दो शुक्लध्यान सूक्ष्मक्रियानिवर्ति और समुच्छिन्न क्रिया-
अप्रतिपाति क्रमशः सयोग केवली और अयोग केवली को होते हैं,
छद्मस्थ को नहीं होते । इनमें से सयोग केवली तेरहवें गुणस्थान
में होते हैं. अतः उन्हें सूक्ष्मक्रियानिवर्ति नामक तीसरा शुक्लध्यान
होता है और अयोग केवली चौदहवें गुणस्थान में होते हैं, इस कारण

समुच्छिन्न क्रियाअप्रतिपाती नामક ચોથું શુક્લધ્યાન અયોગ કેવળીને
થાય છે જેઓ ચૌદમાં ગુણસ્થાનમાં હોય છે. જે ધ્યાનમાં ઉચ્છ્વાસ આદિ
સૂક્ષ્મ ક્રિયા પણ નિરુદ્ધ થઈ જાય છે અને જે અપ્રતિપાતિ હોય છે, તે
સમુચ્છિન્ન ક્રિયાપ્રતિપાતી નામક ચોથું શુક્લધ્યાન કહેવાય છે. ॥૭૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પ્રારંભના બે શુક્લધ્યાનેતુ નિરૂપણ કરવામાં
આવી ગયું, હવે અન્તિમ બેતુ નિરૂપણ કરીએ છીએ—

અન્તિમ બે શુક્લધ્યાન સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ અને સમુચ્છિન્ન ક્રિયાઅપ્ર
તિપાતી ક્રમશઃ સયોગ કેવળી અને અયોગ કેવળી ને હોય છે, છદ્મસ્થને
હોતા નથી આમાંથી અયોગી કેવળી તેરમા ગુણસ્થાનમાં હોય છે આથી
તેમને સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ નામક ત્રીજું શુક્લધ્યાન હોય છે અને અયોગી-
કેવળી ચૌદમાં ગુણસ્થાનમાં હોવાના કારણે તેમને સમુચ્છિન્નક્રિયા-અપ્ર.

સમુચ્છિન્નક્રિયાઽપ્રતિપાત્તિરૂપ ચતુર્થં શુક્લધ્યાનં ભવતીતિ ભાવઃ । તથાહિ-
 દ્વિતીય શુક્લધ્યાનસ્ય દ્વિચરમસમયે પ્રાપ્તદેવલઃ કેવલી જઘન્યેનાઽન્તર્મુહત્મ,
 ઉત્કૃષ્ટેન દેશોનપૂર્વકોદિવર્ષાણિ પિહન્ય તતો વેદનીય નામ ગોત્રાલ્યાનાં ત્રયાણાં
 કર્મણાં સવધારણીયાઘ્યાઽડ્યુષ્કર્મનોઽધિક સ્થિતિકાના યાચુષ્કર્મ સમીકરણાર્થ
 સમુદ્યાતં કરોતિ. તતોઽયો સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ નામકં તૃતીયં ધ્યાયન્ સૂક્ષ્મકાય-
 યોગ સ્વાશ્વટસ્મેતૈવ નિરુણદ્ધિ, તદાઽન્યસ્યાઽવશ્ટમ્મતીય યોગાન્તગ્સ્યાઽસદ્ભા-
 વાત્ । તદ્ધ્યાન સામર્થ્યત્ત્વ વદ્ઽનોદરાદિવિવરપૂર્ણાત સંકુચિત દેહવિભાગવ-
 ર્યાત્મપ્રદેશો ભવતિ । તન્નાઽયં ક્રમઃ-સૂક્ષ્મનિવર્તિરૂપં તૃતીયં ધ્યાનં ધ્યાયન્
 કેવલી જઘન્યયોગવતઃ સંજ્ઞિવર્યાવરય સ્તનો દ્રવ્યાણિ સમયે સમયે નિરુન્ધન્

ઉન્હે સમુચ્છિન્નક્રિયા-અપ્રતિપાતિ જાનક ચૌથા શુક્લધ્યાન હોતા હૈ ।

દ્વિતીય શુક્લધ્યાન કે દ્વિચરમ સમય મેં કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરકે
 કેવલી જઘન્ય અન્તર્મુહર્ત્તે ઓર ઉત્કૃષ્ટ દેશોન કરોડ પૂર્વ તક વિચરણ
 કરને કે પશ્ચાત્ વેદનીય. નામ ઓર ગોત્ર કર્મની સ્થિતિ યદિ આયુ
 કર્મ સે અધિક જાનતે હૈ તો ઉત્તમી સ્થિતિ કો વરાવર કરને કે લિપ્
 સમુદ્યાત કરતે હૈ । ફિર વે સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ નામક તીસરા શુક્લ-
 ધ્યાન આરંભ કરતે હુણ અપને હી આલમ્બન સે સૂક્ષ્મ કાયયોગ કા
 નિરોધ કરતે હૈ કયોંકિ ઉત્ત સમય અવલમ્બન હેને યોગ્ય દૂસરા કોઈ
 યોગ હોતા નહીં હૈ । ઉત્ત ધ્યાન કે સામર્થ્ય સે સુત્ત ઓર હદર આદિ કે
 છિદ્રોં કો પૂરિત કર હેને કે કારણ આત્મપ્રદેશ સંકુચિત દેહ ભાગવર્તી
 હો જાતે હૈ । ઉસમેં ક્રમ યોં હૈ-સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ નામક તીસરે ધ્યાન
 કો પ્રારંભ કરતે હુણ કેવલી જઘન્યા જઘન્ય યોગ લાહે સંજ્ઞી પર્યાપ્ત

તિપાતી નામક ચોથું શુક્લધ્યાન હોય છે.

દ્વિતીય શુક્લધ્યાનના દ્વિચરમ સમયમાં કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને
 જઘન્ય અન્તર્મુહર્ત્ત અને ઉત્કૃષ્ટ દેશોન કરોડ પૂર્વ સુધી વિચરણ કર્યા બાદ
 વેદનીય નામ અને ગોત્ર કર્મની સ્થિતિ નો આયુષ્ય કર્મથી અધિક
 જાણે તો તેમની સ્થિતિ સરખી કરવા માટે સમુદ્યાત કરે છે. પછી તેઓ
 સૂક્ષ્મક્રિયાનિવર્તિ નામક ત્રીજું શુક્લધ્યાન આરંભ કરતા પોતાના જ આલ-
 મ્બનથી સૂક્ષ્મકાયયોગનો નિરોધ કરે છે કારણ કે તે સમયે અવલમ્બન
 રાખવા લાયક બીજો કોઈ યોગ હોતો નથી. તે ધ્યાનના સામર્થ્યથી મુખ્ય
 તેમ જ ઉદર આદિના છિદ્રોને પૂર્ણ કરી લેવાના કારણે આત્મપ્રદેશ સંકુ-
 ચિત દેહભાગવર્તી થઈ જાય છે તેમાં ક્રમ આ પ્રમાણે છે. સૂક્ષ્મક્રિયા
 નિવર્તિ નામક ત્રીજા ધ્યાનનો પ્રારંભ કરતા થકા કેવલ જઘન્યા જઘન્ય
 યોગવાળા સંજ્ઞી પર્યાપ્ત હોવને યોગ્ય....મનોદ્રવ્યોનો પ્રત્યેક સમયમાં

असंख्यातसमयैः सम्पूर्ण मनोयोगं निरुगद्धि, तत्पश्चात् पर्याप्त द्वीन्द्रियस्य वाग्योग पर्याप्तोऽसंख्यातगुणहीनवाग्योगपर्यायान् प्रतिसमयं निरुन्धन् असंख्यात समयैः समस्तवाग्योगं निरुगद्धि । तत्तत्र प्रथमसमयसमुत्पन्नाऽपर्याप्त निगोद जीवस्य जघन्य काययोगपर्यायतोऽसंख्यातगुणहीनकाययोगं प्रतिसमयं निरुन्धन् असंख्यातसमयैर्वादरकाययोगं च सर्वथा निरुगद्धि तदेदं तृतीयं सूक्ष्मक्रियानिवर्ति नामकं ध्यानं भवति । ततः स भद्रोपग्राहि कर्मक्षपणार्थं लेशयातीत अत्यन्ताप्रकम्पं परमनिर्जराकारणं चतुर्थं समुच्छिन्नक्रियाप्रतिपाति नामकं ध्यानं प्रतिपितु र्योगनिरोधार्थं सुपन्नते । ततोऽसौ चतुर्थे समुच्छिन्न-

जीव के योग्य मनोद्वयो का प्रत्येक समय में निरोध करते हुए सम्पूर्ण मनोयोग का निरोध कर देते हैं । तत्पश्चात् पर्याप्त द्वीन्द्रिय जीव के वचन योग से असंख्यात गुणहीन वचनयोग के पर्यायो को प्रतिसमय निरुद्ध करते हुए असंख्यात स्वनयो में सम्पूर्ण वचनयोग का निरोध करते हैं । तदनन्तर प्रथम समय में उत्पन्न अपर्याप्त निगोदिया जीव के जघन्य काययोग के पर्यायो से असंख्यात गुणहीन काययोग का समय-समय निरोध करते हुए, असंख्यात स्वयो में वादर काययोग को सर्वथा निरुद्ध कर देते हैं । उस समय यह तीसरा सूक्ष्मक्रियानिवर्ति नामक शुक्लध्यान होता है ।

तत्पश्चात् भद्रोपग्राही कर्माना क्षय करने के लिए लेशया से अतीत, अत्यन्त निश्चल उत्कृष्ट निर्जरा के कारणभूत चौथे समुच्छिन्न क्रिया-अप्रतिपाती नामक शुक्लध्यान को प्राप्त करने के लिए योग का सर्वथा

निरोध करता था सम्पूर्ण मनोयोगने निरोध करी दे छे. तत्पश्चात् पर्याप्त द्वीन्द्रिय जवना वचनयोगही असंख्यातगुणहीन वचनयोगना पर्यायाने प्रतिसमय निरुद्ध करता था असंख्यात समयोमां सम्पूर्ण वचनयोगने निरोध करे छे. तदनन्तर प्रथम समयमां अपर्याप्त निगोदिया जवना जघन्य काययोगना पर्यायिथी असंख्यातगुणहीन काययोगने समय-समये निरोध करता था असंख्यात समयोमां वादर काययोगने सर्वथा निरोध करी दे छे ते समये आ त्रीजु सूक्ष्मक्रियानिवर्ति नामक शुक्लध्यान डोय छे.

त्यारगाह ज्योपग्राही कर्मेने अपाववा भाटे लेशयाथी अतीत अत्यन्त निश्चल, उत्कृष्ट निर्जराणा कारणभूत योथा समुच्छिन्नक्रिया अप्रतिपाती नामक शुक्लध्यानने प्राप्त करवा भाटे योगने सर्वथा निरोध करवाना अर्थ उपक्रम करे छे. योथा शुक्लध्यानमां आसोच्छवासरूप सूक्ष्म काययोगने

ક્રિયાઽપ્રતિપાતિ ધ્યાને શ્વાસોચ્છવાસરૂપં સૂક્ષ્મયપિ કાયયોગં નિરુધ્યાઽયોગિત્વં
પ્રાપ્ય શૈલેઝીમવસ્થાં શૈલવદ્ અવિચલામવસ્થાં પ્રતિપચતે તતોઽસૌ મધ્યમકાલેન
અ, ઇ, ઉ, ઋ, લૃ, इत्येवं रूपं पञ्चह्रस्वाक्षरोच्चारणसमकालस्थितिकं चतुर्थं
समुच्छिन्नक्रियाऽप्रतिपाति ध्यानं मनुभवति इत्येतत्कालानन्तरं मोक्षप्राप्तिर-
वश्यम्भावात् इति ॥७६॥

મૂલમ્—‘ચત્ત્વિઙ્હે સુક્કજ્ઞાણે જહા ક્કમ્મંતિ એમકાયજોગા-
જોગાણં ॥૭૭॥

છાયા—ચતુર્વિધં શુક્લધ્યાનં યથાક્રમં ત્ર્યેકકાયયોગાઽયોગાનામ્ ॥૭૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વં તાવત્-શુક્લધ્યાનં ચતુર્વિધં પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પ્રતિ
તેષાં ચતુર્ણાં સ્થાનવિશેષનિર્ધારણાર્થં મુચ્યતે-‘ચત્ત્વિઙ્હે સુક્કજ્ઞાણે’ इत्यादि

નિરોધ કરને કે અર્થ ઉપક્રમ કરતે હૈં। ત્રીથે શુક્લધ્યાન મેં શ્વાસોચ્છવાસ
રૂપ સૂક્ષ્મ કાયયોગ કા નિરોધ કરકે અયોગી દશા પ્રાપ્ત કરતે હૈં। इस
दशा में वे पर्वत के लक्ष्मण अविचल-अकम्प अवस्था को प्राप्त कर लेते
हैं। इस समय उन्हें समुच्छिन्न क्रिया-अप्रतिपाती ध्यान होता है।
मध्यम रूप से अ, इ, उ, ऋ, लृ, इन पांच ह्रस्व स्वरों के उच्चारण में
जितना काल लगता है, उतने काल तक ही यह ध्यान रहता है। इसके
पश्चात् नियम से विदेह दशा-मुक्ति प्राप्त हो जाती है ॥७६॥

‘ચત્ત્વિઙ્હે સુક્કજ્ઞાણે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—ચાર પ્રકાર કા શુક્લધ્યાન અનુક્રમ સે ત્રીનો યોગો વાલો
કો એક યોગ વાલે કો, કાયયોગીકો ઔર અયોગી કો હોતા હૈ ॥૭૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલે શુક્લધ્યાન ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ।
અથ उनके स्थान विशेष का निश्चय करने के लिए कहते हैं—

નિરોધ કરીને, અયોગી દશા પ્રાપ્ત કરે છે. આ દશામાં તેઓ પર્વતની
માફક અવિચલ-અકમ્પ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરી લે છે. તે સમયે તેઓને
સમુચ્છિન્નક્રિયા-અપ્રતિપાતી ધ્યાન હોય છે મધ્યમ રૂપથી અ. ઇ, ઉ, ઋ,
લૃ, આ પાંચ હ્રસ્વ સ્વરોના ઉચ્ચારણમાં બેટલો. સમય લાગે છે તેટલા
કાળ સુધી જ આ ધ્યન ટકી રહે છે. આની પશ્ચાત્ નિયમથી વિદેહદશા-
મુક્તિ પ્રાપ્ત થઇ જાય છે. ॥૭૬॥

‘ચત્ત્વિઙ્હે સુક્કજ્ઞાણે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—ચાર પ્રકારના શુક્લધ્યાન અનુક્રમથી ત્રણે યોગોવાળાને
એક યોગવાળાને કાયયોગીને અને અયોગીને હોય છે, ॥૭૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પહેલા શુક્લધ્યાન ચાર પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા
છે. હવે તેમના સ્થાન વિશેષનો નિશ્ચય કરવા માટે કહીએ છીએ--

चतुर्विधं खलु शुक्लध्यानम्, पृथक्त्ववितर्क-रुतद्वितर्क सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति-समु-
च्छिन्नक्रियाऽनिवर्तिरूपं यथाक्रमं क्रमशः स्त्रियोगै-कयोग-काययोगाऽयोगानां
भवति । तथा च-कायवाङ्मनोयोगत्रयसहितस्य पृथक्त्ववितर्करूपं प्रथमं
शुक्लध्यानम् एकयोगस्य योगसंकमणकाले कायादि योगान्यतमयोगसहितस्य
एकत्ववितर्करूपं द्वितीयं शुक्लध्यानम् । कययोगस्य-काययोगसहितस्य
निरुद्ध मनोवाग्योगस्य सूक्ष्मक्रियाऽप्रतिपातिरूपं तृतीयं शुक्लध्यानम् । अयोगस्य
योगरहितस्य तु-समुच्छिन्नक्रियानिवर्तिरूपं चतुर्थं शुक्लध्यानं भवतीति भावः ।
एवञ्च-मनोवाक् कायानां भवदृष्टमेनाऽऽत्मप्रदेशपरिस्पन्दरूपं आत्मप्रदेशचलन-
रूपं प्रथमं पृथक्त्वसविचारं नाम शुक्लध्यानं भवति । तथाविधत्रिधोगेषु मध्ये

पृथक्त्ववितर्क, एकत्ववितर्क, सूक्ष्मक्रियानिवर्ति और समुच्छिन्न
क्रिया-अप्रतिपाती नामक शुक्लध्यान क्रम से तीनों योगों वाले को,
एक योग वाले को, काययोग वाले को और अयोगी को होता है ।
अर्थात् काययोग वचनयोग और मनोयोग से सहित मुनि को पृथक्त्व
वितर्क नामक प्रथम शुक्लध्यान होता है । एक योग वाले को अर्थात्
काययोग आदि में से किसी भी एक योग वाले को एकत्व वितर्क
शुक्लध्यान होगा है । जिसने वचनयोग और मनोयोग का सर्वथा
निरोध कर दिया है और जिसमें सिर्फ काययोग ही शेष रह गया है,
सूक्ष्मक्रिया-अनिवर्तिध्यान होता है और अयोगी को समुच्छिन्न क्रिया-
अप्रतिपाती नामक चौथा शुक्लध्यान होता है ।

इस प्रकार मन, वचन और काय के निमित्त से आत्मप्रदेशों में
चंचलता जिस ध्यान में रहती है, वह पृथक्त्व वितर्क सविचार शुक्ल-

पृथक्त्ववितर्क, सूक्ष्म-क्रियानिवर्ति અને समुच्छिन्नक्रिया-अप्रतिपाती
नामक शुक्लध्यान ક્રમથી ત્રણે યોગવાળાને એક યોગવાળાને કાયયોગવાળાને
અને અયોગીને હોય છે અર્થાત કાયયોગ વચનયોગ અને મનોયોગથી
સહિત મુનિને પૃથક્ત્વવિતર્ક નામક પ્રથમ શુ કલધ્યાન હોય છે એક યોગ
વાળાને અર્થાત કાયયોગ આદિમાંથી કેઈ પણ એક યોગવાળાને એકત્વવિતર્ક
શુક્લધ્યાન હોય છે જેમણે વચનયોગ અને મનોયોગનો સર્વથા નિરોધ કરેલ
છે અને જેમનામાં માત્ર કાયયોગ જ શેષ રહી જવા પામેલ છે તેને સૂક્ષ્મ
ક્રિયા-અનિવર્તિ ધ્યાન હોય છે અને અયોગીને સમુચ્છિન્નક્રિયા-અપ્રતિ-
પાતી નામક ચોથું શુક્લધ્યાન હોય છે.

આ રીતે મન, વચન અને કાયાના નિમિત્તથી આત્મપ્રદેશોમાં અચળતા
જે ધ્યાનમાં રહે છે, તે પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચાર શુક્લધ્યાન છે. ત્રણે યોગો

મનોવાક્યાનામન્યતમાઽલમ્બનેના-ઽઽત્મપ્રદેશપરિસ્પન્દનં દ્વિતીયમ્ એકત્વ-
વિતર્કવિચારં નામ શુક્લધ્યાનં ભવતિ । કાયયોગમાત્રાઽલમ્બનેનાત્મપ્રદેશ-
ચલનં તૃતીયં સૂક્ષ્મક્રિયાઽપ્રતિપાતિ નામ શુક્લધ્યાનં ભવતિ । એકમપિ કાયાદિ-
યોગમલમ્બ્યાઽઽત્મપ્રદેશચલનં ચતુર્થં સમુચ્છિન્નક્રિયાનિવર્તિ નામ શુક્લ-
ધ્યાનં ભવતીતિ ફલિતમ્ ॥૭૭॥

ધ્યાન હૈ। ત્રીનોં યોગોં મેં સે કિસી એક યોગ વાલે કો એકત્વ વિતર્ક
શુક્લધ્યાન હોતા હૈ। જિસકે વચનયોગ ઔર મનોયોગ કા સર્વથા
નિરોધ હો ચુકા હૈ ઔર સિર્ફ કાયયોગ શેષ રહ ગયા હો, ઉસે ત્રીસરા
શુક્લધ્યાન સૂક્ષ્મક્રિયા-અનિવર્તિ હોતા હૈ। ચૌથા શુક્લધ્યાન અયોગી
કો હોતા હૈ।

હસ પ્રકાર શુક્લધ્યાન મેં મન વચન ઔર કાયયોગ કે આલમ્બન
સે આત્મપ્રદેશોં મેં સ્પન્દન હોતા રહતા હૈ વહ પૃથક્ત્વ વિતર્ક સવિચાર
શુક્લધ્યાન કહલાતા હૈ। ત્રીનોં યોગોં મેં સે કિસી એક યોગ કે આલ-
મ્બન સે આત્મપ્રદેશોં મેં જહાં સ્પન્દન હોતા રહતા હૈ, વહ એકત્વ વિતર્ક-
અવિચાર ધ્યાન કહલાતા હૈ। કાયયોગ માત્ર કે આલમ્બન સે આત્મ
પ્રદેશોં મેં હલન ચલન હોના ત્રીસરા સૂક્ષ્મક્રિયા-અપ્રતિપાતી નામક
શુક્લધ્યાન હૈ। જિસ ધ્યાન મેં કિસી મી યોગ કા આલમ્બન
નહીં હોતા અતઃપ્રેવ આત્મપ્રદેશોં કા સ્પન્દન મી નહીં હોતા વહ સમુ-
ચ્છિન્નક્રિયા-અપ્રતિપાતી શુક્લધ્યાન કહલાતા હૈ, વહ ફલિતાર્થ હૈ ॥૭૭॥

માંથી કોઈ એક યોગવાળાને એકત્વવિતર્ક શુક્લધ્યાન હોય છે. જેમના
વચનયોગ અને મનોયોગ નો સર્વથા નિરોધ થઈ ચૂકયો છે અને માત્ર
કાયયોગ જ શેષ રહી ગયો છે તેને ત્રીજું શુક્લધ્યાન સૂક્ષ્મક્રિયા-અનિ-
વર્તિ હોય છે. ચોથું શુક્લધ્યાન અયોગીને હોય છે.

આ રીતે જે શુક્લધ્યાનમાં મન વચન અને કાયયોગના આલમ્બનથી
આત્મપ્રદેશોમાં સ્પન્દન થતું રહે છે તે પૃથક્ત્વ-વિતર્કસવિચાર શુક્લધ્યાન
કહેવાય છે. ત્રણે યોગોમાંથી કોઈ એક યોગના આલમ્બનથી આત્મપ્રદેશોમાં
જ્યાં સ્પન્દન થતું રહે છે તે એકત્વવિતર્ક-અવિચાર ધ્યાન કહેવાય છે
કાયયોગ માત્રના આલમ્બનથી આત્મપ્રદેશોમાં હલન-ચલન થતું ત્રીજું
સૂક્ષ્મક્રિયા-અપ્રતિપાતી નામક શુક્લધ્યાન છે. જે ધ્યાનમાં કોઈ પણ યોગનું
આલમ્બન હોતું નથી જેથી આત્મપ્રદેશોનું સ્પન્દન પણ થતું નથી તે
સમુચ્છિન્નક્રિયા-અપ્રતિપાતી શુક્લધ્યાન કહેવાય છે. આ ફલિતાર્થ છે ॥૭૭॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ:-પૂર્વે સ્વલુ ચતુર્થે શુક્લધ્યાનં પ્રરૂપિતમ્, તત્ર-પ્રથમમુપ-
શાન્તકષાયસ્ય-કાદશગુણસ્થાનદર્શિન શ્વતુર્દશ પૂર્વધારિણો ઋવતિ । દ્વિતીયં
ક્ષીણરૂપાયસ્ય ભવતિ । તૃતીયસન્તુ-સયોગિ કેવલિનો ભવતિ । ચતુર્થે પુનઃ
શુક્લધ્યાનમ્-અયોગિ કેવલિનો ભવતીતિ ચાઽપિ પ્રરૂપિતમ્, ॥ તત્ત્વપતિ-તેષાં
ચતુર્ણાં સ્વલુ ઉપશાન્તકષાયાદીનાં સ્વામિનાં શબ્દાન્તરેણ વિશિષ્ટ્ય પ્રતિપાદનાર્થ-
માહ-‘ચત્ત્વિહે સુક્લરૂપાણે જહાન્નદ્વસંતિ-એમ કાચજોગા જોગાણં’ઈતિ
ચતુર્વિંશ સ્વલુ પૂર્વોક્તં શુક્લધ્યાનં પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચારરૂપમ્, એકત્વવિતર્કી
વિચારરૂપમ્, સૂક્ષ્મક્રિયાઽવતિપાતિરૂપમ્, સમુચ્છિન્નક્રિયાઽ નેવર્તિરૂપાશ્ચ
યથાક્રમમ્-ક્રમશઃ ત્રિયોગસ્ય-મનોવચઃકાદયોગયુક્તસ્ય, એકયોગસ્ય-સંક્રમણ-
કાલે મનોવચઃ કાયાઽન્યતમયોગયુક્તસ્ય, કાયયોગસ્ય-નિરુદ્ધયોગદ્વયસ્ય કાય-
યોગવ્યાપારવતઃ, અયોગસ્ય-કાયાદિયોગરહિતસ્ય ચ ભવતિ । તત્ર મનોવક્-
કાયવ્યાપારવતઃ પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચાર નામ શુક્લધ્યાનમ્, કાયાદિયોગા-

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલે શુક્લધ્યાન કા નિરૂપણ ક્રિયા ગયા । યહ
ભી વતલાયા જા ચુકા હૈ કિ પ્રથમ દોશુક્લધ્યાન પ્રાયઃ ચતુર્દશ પૂર્વધારક
કો હોતે હૈ, ઓર અન્તિમ દો કેવલી કો હોતે હૈ । ત્રીન યોગોં કી
અપેક્ષા સે ભી ઉલકે સ્વામિયોં કા ઉલ્લેખ કરતે હૈ—

ચાર પ્રકાર કા શુક્લધ્યાન અર્થાત્ પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચાર, એક-
ત્વવિતર્ક-અવિચાર, સૂક્ષ્મક્રિયા પ્રતિપાતી ઓર સમુચ્છિન્નક્રિયા-
નિવર્તિ ક્રમ સે ત્રીનોં યોગોં વાલે કો, એક યોગ વાલે કો, કાયયોગી
કો ઓર અયોગી કો હોતે હૈ । તાર્પર્ય યહ હૈ કિ મન, વચન ઓર કાય
કે વ્યાપાર વાલે કો પૃથક્ત્વ વિતર્ક સવિચાર શુક્લધ્યાન હોતા હૈ, ત્રીનોં
યોગોં મેં સે કિસી એક યોગ વાલે કો એકત્વ વિતર્ક-અવિચાર ધ્યાન
હોતા હૈ । હસ ધ્યાન કો કરને વાલે કે કાય આદિ યોગોં મેં સે કિસી

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલા શુક્લધ્યાનનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું. એ પણ
ખતાવવામાં આવ્યું કે પ્રથમના બે શુક્લધ્યાન પ્રાયઃ ચૌદ પૂર્વધારકને હોય
છે બીજાને અન્તિમ બે કેવલીને હોય છે. ત્રણ યોગોની અપેક્ષાએ પણ તેના
સ્વામિઓનો ઉલ્લેખ કરીએ છીએ—

ચાર પ્રકારના શુક્લધ્યાન અર્થાત્ પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચાર એકત્વ-
વિતર્ક-અવિચાર, સૂક્ષ્મક્રિયાપ્રતિપાતી અને સમુચ્છિન્ન ક્રિયાનિવર્તિક્રમથી
ત્રણે યોગોવાળાને, કાયયોગી ને અને અયોગીને હોય છે. આશય એ છે
કે મન વચન અને કાયાના વ્યાપારવાળાઓને પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચાર
શુક્લધ્યાન હોય છે, ત્રણે યોગોમાંથી કેાઇ એક યોગવાળાને એકત્વવિતર્ક
અવિચાર ધ્યાન હોય છે. આ ધ્યાનને ધ્યાવવાવાળાઓને કાય આદિ
યોગોમાંથી કેાઇ એક યોગનો વ્યાપાર હોય છે જેમે કે કયારેક વચનયોગ

ન્યતમયોગવતઃ—એકત્વવિતર્કાવિચારં નામ શુક્લધ્યાનમ્ ૧ ભવતિ यस્ય-
ધ્યાયિનઃ કાયાદિયોગાના મન્યતમો યોગો વ્યાપ્રિયતૈ યથા—કદાચિદ્—વાગ્મયોગઃ
કદાચિત્—મનોયોગો વેતિ શ્વાઃ ૨ વાયૈકયોગો વેતિ શ્વાઃ ૨ કાયૈકયોગ
વ્યાપારવતસ્તુ—સૂક્ષ્મક્રિયાઽપ્રતિપાતિનામકં તૃતીયં શુક્લધ્યાનં ભવતિ ૩
કાયાદિયોગરહિતસ્ય શૈલેશ્યવસ્થાવિશિષ્ટસ્ય મનોવાક કાયયોગત્રયરહિતત્વાત્
સમુચ્છિન્નક્રિયાઽનિવર્તિં રૂપં ચતુર્થં શુક્લધ્યાનં ભવતીતિ શ્વાઃ ૪ ॥૭૭॥

મૂલપૂ—પદ્મસા દો ઇગાસયા સવિચારા સવિચારાવિચારા ॥૭૮॥

છાયા—‘પ્રથમે દ્વે, એકાશ્રયે સવિતર્કે સવિચારાઽવિચારે ॥૭૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા— પ્રથમે આપ્તે દ્વે, પૃથક્ત્વવિતર્કસવિચારમ્—એકત્વવિતર્ક-
વિચારં વેતિ । એકાશ્રયે—એકઃ આશ્રયઃ . પૂર્વધરરૂપઃ આલમ્બનં યયો સ્તે, એકસ્વા-
મિકે इत्यर्थः । સવિતર્કે—વિતર્કેણ પૂર્વગતશ્રુતસસ્વન્ધિના તર્કેણ સહિતે, તત્ર—પ્રથમં
સવિચારમ્, દ્વિતીયમવિચારં ભવતિ । અતएव—પ્રથમં પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચારમ્,
દ્વિતીયમ્—એકત્વવિતર્કાઽવિચારં વ્યપદિશ્યતે । અનયોર્વ્યાख्या પૂર્વગતા इति ॥૭૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વ તાવત્—ચતુર્વિધસ્યાપિ શુક્લધ્યાનસ્ય સ્વામ્યાદીનાં

એક યોગ કા વ્યાપાર હોતા હૈ, જૈસે કબી વચનયોગ કા ઓર કબી
મનોયોગ કા । સિર્ફ એક કાયયોગ વાલે કો સૂક્ષ્મક્રિય—અપ્રતિપાતી
નામક તૈસરા શુક્લધ્યાન હોતા હૈ । જો શૈલેશી અવસ્થા કો પ્રાપ્ત હો
ચુકા હૈ ઓર તૈનોં સે રહિત હો ગયા હૈ એસે અયોગી કો સમુચ્છિન્ન
ક્રિયા—અપ્રતિપાતી ધ્યાન હોતા હૈ ॥૭૭॥

‘પદ્મસા દો ઇગાસયા’ इत्यादि ॥૭૮॥

પ્રથમ કે દો શુક્લધ્યાન એક આશ્રય વાલે હૈં, સવિતર્ક હૈં ઓર
સવિચાર અવિચાર હૈં, અર્થાત્ પહેલો સવિચાર હૈ, દૂસરા અવિચાર હૈ ॥૭૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પ્રારંભ કે દો શુક્લધ્યાન પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચાર

ના અને કય.રેક મનોયોગના. માત્ર એક કાયયોગવાળાને સૂક્ષ્મક્રિય—અપ્ર-
તિપાતી નામક ત્રીજું શુક્લધ્યાન હોય છે. જે શૈલેશી અવસ્થાને પ્રાપ્ત થઈ
ચૂક્યા છે અને ત્રણે યોગથી રહિત થઈ ગયા છે એવા અયોગીને સમુચ્છિ-
ન્નક્રિય—અપ્રતિપાતી ધ્યાન હોય છે. ॥૭૭॥

‘પદ્મસા દો ઇગાસયા’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—પ્રથમના બે શુક્લધ્યાન એક આશ્રયવાળા છે, સવિતર્ક છે. અને
સવિચાર—અવિચાર છે, અર્થાત્ પહેલું સવિચાર છે બીજું અવિચાર છે. ॥૭૮॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પ્રારંભના બે શુક્લધ્યાન પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચાર અને

પ્રરૂપણં કૃતમ્, સમ્પત્તિ-પ્રથમદ્વિતીયશુક્લધ્યાનયોઃ કિञ्ચિદ્ વિશેષપ્રતિપત્યર્થે
પ્રતિપાદયતિ-‘પદ્મના દો પદ્માસયા સ્વચિત્કા સ્વચિચારાચિચારા’ इति प्रथमे
આદિમે ઢે શુક્લધ્યાને, સચિત્કે વિતર્કેણ-શ્રુતજ્ઞાનેન સહિતે ભવતઃ, એકદ્રવ્યા-
શ્રયે-એકસ્વામિકે ચ તે વિજેયે । પરમાણુદ્રવ્યયેકમવલમ્બ્ય આત્માદિ દ્રવ્યં વા,
એકમાલમ્બ્ય શ્રુતાનુસારેણ નિરુદ્ધચેતસઃ પ્રથમદ્વિતીયે શુક્લધ્યાને ભવતઃ
પૂર્વગતશ્રુતાનુસારિણી સ્વલ્લ પૃથક્ત્વવિતર્કસચિચારૈ-કત્ત્વવિતર્કાઽવિચારૈ

और एकत्ववितर्क-अविचार एक ही आश्रय बांछे हैं अर्थात् प्रायः
पूर्वधर ही इन दोनों का आश्रय है, दोनों का एक ही स्वामी होता
है । दोनों वितर्क ललित हैं अर्थात् पूर्वगत श्रुत के अवलम्बन से
होते हैं, किन्तु दोनों में जो अन्तर है वह यह है कि पहला सचिचार
और दूसरा अविचार है । व्याख्या इनकी पढले की जा चुकी है ॥७८॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-—पढले चारों प्रकार के शुक्लध्यान के स्वामी
आदि की प्ररूपणा की जा चुकी है । अब प्रथम और द्वितीय शुक्ल-
ध्यान में जो समानता और असमानता है, उसका प्रतिपादन करते हैं—

આદિ કે દો શુક્લધ્યાન સચિતર્ક અર્થાત્ શ્રુતજ્ઞાન સહિત
हैं एकस्वामिक हैं । एक परमाणु द्रव्य अथवा आत्मा आदि द्रव्य का
અવલમ્બન કરકે શ્રુત કે અનુસાર ચિત્ત-નિરોધ કરને વાલે કો
પ્રથમ ઓર દ્વિતીય શુક્લધ્યાન હોતે હે । હવ પ્રાર પૃથક્ત્વવિતર્ક-
અવિચાર નામક દોનો શુક્લધ્યાન પ્રાયઃ પૂર્વગત શ્રુત કે અનુસારી

એકત્વવિતર્ક-અવિચાર એક જ આશ્રયવાળા છે અર્થાત્ પ્રાયઃ પૂર્વધર જ
આ બંનેના આશ્રય છે, બંનેનો એક જ સ્વમિ હોય છે. બંને વિતર્ક
સહિત છે અર્થાત્ પૂર્વગત શ્રુતના અવલમ્બનવાળા હોય છે પરંતુ બંનેમાં
જે ફરક છે તે એ છે કે પહેલું સચિચાર અને બીજું અવિચાર છે. એમની
વ્યાખ્યા તો અગાઉ કરી દેવામાં આવી છે. ॥૭૮॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-अगोष्ठि चारे प्रकारना शुक्लध्यानना स्वामि आदिनी प्ररू-
पणा करवाમાં आनी गर्भ છે હવે પ્રથમ અને દ્વિતીય શુક્લધ્યાનમાં જે
સમાનતા અને અસમાનતા છે તેનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ—

પ્રારંભના બે શુક્લધ્યાન સચિતર્ક અર્થાત્ શ્રુતજ્ઞાન સહિત છે, એક
પરમાણુ દ્રવ્ય અથવા આત્મા આદિ દ્રવ્યનું અવલમ્બન કરીને શ્રુત અનુસાર
ચિત્ત-નિરોધ કરનારાને પ્રથમ અને દ્વિતીય શુક્લધ્યાન હોય છે. આ રીતે
પૃથક્ત્વવિતર્ક સચિચાર નામક બંને શુક્લધ્યાન પ્રાયઃ પૂર્વગત શ્રુતને અનુ-
સાર હોય છે પરંતુ પ્રથમ શુક્લધ્યાન સચિચાર અર્થાત્ અર્થ વગેરેના સંકેત,

भवतः, किन्तु-प्रथमं तावत्-पृथक्त्ववितर्करूपं शुक्लध्यानं सविचारम् अर्थादि संक्रान्तियुक्तं भवति द्रव्यमालम्ब्य जायमानं मपि द्रव्यं विहाय पर्यायमुपैति, पर्यायं वा त्यक्त्वा द्रव्यमाश्रयते इत्थेवं संक्रान्तियुक्तं भवति । द्वितीयं पुनरेकत्ववितर्करूपं शुक्लध्यानं यमालम्ब्योपजायते तं परित्यज्य नाऽन्यत्र संक्रामति । अतएव-यद् अविचारं भवति, तस्याऽर्थव्यञ्जनयोगसंक्रान्तिरहितत्वात् ॥७८॥

मूलम्—वितर्के-सुए, विचारे-अथव्यंजनयोग संकंती ॥७९॥

छाया—‘वितर्कः-श्रुतम्, विचारोऽर्थव्यञ्जनयोगसंक्रान्तिः ॥७९॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વસૂત્રે-પ્રથમદ્વયસ્ય શુક્લધ્યાનસ્ય સવિતર્કત્વમ્, સ-

होते हैं । किन्तु प्रथम शुक्लध्यान सविचार अर्थात् अर्थ आदि के संक्रमण से युक्त होता है । वह द्रव्य के आलम्बन से उत्पन्न होकर द्रव्य को छोड़ कर पर्याय का चिन्तन करने लगता है । कभी पर्याय को त्याग कर द्रव्य का चिन्तन करने लगता है । इस प्रकार का संक्रमण उसमें होता रहता है । मगर दूसरा एकत्ववितर्कध्यान जिस विषय का आलम्बन लेकर उत्पन्न होता है, उसे त्याग कर अन्य विषय का चिन्तन नहीं करता । इस कारण वह अविचार कहलाता है । वह अर्थ व्यंजन और योग के संक्रमण से रहित होता है ॥७८॥

‘वितर्के-सुए विचारे’ इत्यादि सूत्र ७३

સૂત્રાર્થ—વિતર્ક કા અર્થ શ્રુત છે । અર્થ, વ્યંજન ઓર યોગ કા ઉલટ-ફેર વિચાર કહલાતા છે ॥૭૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ સૂત્ર માં પ્રારંભ કે દો શુક્લધ્યાનો કો

શ્રુતી યુક્ત હોય છે તે દ્રવ્યના આલમ્બનથી ઉત્પન્ન થઈને, દ્રવ્યને છોડી દઈને, પર્યાયનું ચિન્તન કરવા લાગે છે ક્યારેક પર્યાયનો ત્યાગ કરીને દ્રવ્યનું ચિન્તન કરવા લાગે છે. આ બંનેનું સંક્રમણ તેનામાં થતું રહે છે પરંતુ બીજું એકત્વવિતર્ક ધ્યાન જે વિષયનું આલમ્બન લઈને ઉત્પન્ન થાય છે તેનો ત્યાગ કરીને અન્ય વિષયનું ચિન્તન કરતું નથી આથી તે અવિચાર કહેવાય છે. તે અર્થ વ્યંજન અને યોગના સંક્રમણથી રહિત હોય છે

‘વિતર્કે સુપ વિચારે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—વિતર્કનો અર્થ, શ્રુત છે અને વ્યંજન અને યોગ નો ઉલટ-ફેર વિચાર કહેવાય છે. ॥૭૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ સૂત્રમાં પ્રારંભના બે શુક્લધ્યાનોને સવિતર્ક કહ્યા છે,

વિચારત્વમ્, અવિચારત્વં ચોક્તમ્, તત્ર-કસ્તાવદ્ વિતર્કઃ-વિચારો વા ? इति जिज्ञासायामाह-‘विनष्टो ह्युप, विद्यारे अत्यत्रंजणजोगसंक्रांती’ इति । वितर्कः श्रुतम्, वितर्क्यते-आलोच्यते येन पदार्थः स (कारणभूतः) वितर्कश्रुतज्ञानमुच्यते । विशेषेण तर्कणं वितर्कः श्रुतज्ञानम्, विचारस्तु-अर्थ व्यञ्जनयोगसंक्रान्तिरुच्यते, अर्थस्य परमाण्वादेर्ध्येयस्तुतो द्रव्यस्य-द्रव्यपर्यायस्य वा संक्रान्तिः-परिवर्तनम् अर्थसंक्रान्तिः, द्रव्यमवलम्ब्य जायमानं ध्यानं द्रव्यं विहाय पर्यायमुपैति, पर्यायमाश्रित्य जायमानस्तु-पर्यायं परित्यज्य द्रव्यमुपैति । एवं व्यञ्जनस्य तद् वाचकशब्दस्य संक्रान्तिः-परिवर्तनं व्यञ्जनसंक्रान्तिः । एकं तद् वाचक-

સવિતર્ક કહા છે. પ્રથમ શુક્લધ્યાન કો સવિચાર ઔર દૂસરે કો અવિચાર કહા છે તો યહ વિતર્ક અથવા વિચાર કયા હૈ ? ऐसी जिज्ञासा होने पर उसका समाधान करते हैं—

વિતર્ક કા અર્થ શ્રુત હૈ । અર્થ, વ્યંજન ઔર યોગ કા સંક્રમણ વિચાર કહલાતા હૈ । જિજ્ઞાસા દ્વારા પદાર્થ કી વિતર્કણા યા આલોચના કી જાય ઉસે વિતર્ક-શ્રુતજ્ઞાન કહતે હૈ । અર્થ, વ્યંજન ઔર યોગ કા સંક્રમણ અર્થાત્ પરિવર્તન વિચાર કહલાતા હૈ । અર્થ અર્થાત્ પરમાણુ આદિ ધ્યેય વસ્તુ કા-દ્રવ્ય યા પર્યાય કા પરિવર્તન અર્થ સંક્રાન્તિ હૈ અર્થાત્ દ્રવ્ય કા ચિન્તન કરતે-કરતે પર્યાય કા ચિન્તન કરને લગના ઔર પર્યાય કા ચિન્તન કરતે-કરતે દ્રવ્ય કા ચિન્તન કરને લગના, અર્થ સંક્રમણ હૈ । વ્યંજન અર્થાત્ શબ્દ કા સંક્રમણ વ્યંજન સંક્રાન્તિ હૈ । વસ્તુ કે એક વાચક શબ્દ કો લેકર

પ્રથમ શુક્લધ્યાનને સવિચાર અને બીજાને અવિચાર કહ્યું છે તો આ વિતર્ક અથવા વિચાર શું છે ? એવી જિજ્ઞાસા થવાથી તેનું સમાધાન કરીએ છીએ--

વિતર્કનો અર્થ શ્રુત છે. અર્થ વ્યંજન અને યોગનું સંક્રમણ વિચાર કહેવાય છે. જેની દ્વારા પદાર્થની વિતર્કણા અથવા આલોચના કરવામાં આવે તેને વિતર્ક-શ્રુતજ્ઞાન કહે છે. અર્થ, વ્યંજન અને યોગનું સંક્રમણ અર્થાત્ પરિવર્તન વિચાર કહેવાય છે. અર્થ અર્થાત્ પરમાણુ આદિ ધ્યેય વસ્તુનું-દ્રવ્ય અથવા પર્યાયનું પરિવર્તન અર્થસંક્રાન્તિ છે અર્થાત્ દ્રવ્યનું ચિન્તન કરતાં કરતાં પર્યાયનું ચિન્તન કરવા લાગવું અને પર્યાયનું ચિન્તન કરતાં કરતાં દ્રવ્યનું ચિન્તન કરવા લાગવું અર્થસંક્રમણ છે વ્યંજન અર્થાત્ શબ્દનું સંક્રમણ વ્યંજન સંક્રાન્તિ છે. વસ્તુના એક વાચક શબ્દને લઈને ધ્યાન

શબ્દમુપાદાય પ્રવર્તમાનં ધ્યાન શબ્દાન્તરમાશ્રયતે તદપિ વચનં પરિત્યજ્યાઽન્યદ્
વચન માલમ્બતે હિતિ વ્યજ્ઞનસંક્રાન્તિઃ । एवं-कायादियोगानां संक्रान्तिः परि-
वर्तनं योगसंक्रान्तिः । उच्यते, यथा-काययोगमाश्रित्य जायमानं ध्यानं वचो-
योग मालम્बते वचोयोगं त्रिहाय मनोयोगमुपैति, मनोयोगं परित्यज्य पुनः
काययोग मुपादत्ते, इत्येवं योगसंक्रान्ति भवति इत्येवं रीत्याऽर्थव्यञ्जनयोग
परिवर्तनं विचार उच्यते । अथ परिवर्तनरूप संक्रान्तौ सत्यां कथं ध्यानमेक
विषयकं संभवति, संक्रान्तौ तस्याऽनेकविषयत्वात् इति चेत् ? उच्यते-ध्यान
सन्तानस्यापि ध्यानपदेन ग्रहणाद् दोषाऽभावः । तथा च-ध्यान धाराया अपि
ध्यानत्वेन बहुत्वा दुक्तदोषो न संभवति ॥७९॥

ધ્યાન ચાલૂ હો, ફિર વહ દૂસરે શબ્દ ના આશ્રય લે લે, ફિર उस
शब्द को भी त्याग कर तीसरे शब्द का चिन्तन करने लगे, इस परि-
वर्तन को व्यंजन संक्रान्ति कहते हैं । इसी प्रकार काययोग आदि
का परिवर्तन योगसंक्रान्ति कहलाता है, जैसे काययोग का आलम्बन
करके उत्पन्न होने वाला ध्यान वचनयोग का आलम्बन करता
है फिर वचनयोग को त्याग कर मनोयोग का आश्रय लेता है,
मनोयोग को त्याग कर पुनः काययोग का सहारा लेता है, इस प्रकार
योग संक्रान्ति होती है । इस प्रकार अर्थ, व्यंजन और योग परिवर्तन
विचार कहलाता है ।

શંકા--સંક્રમણ અર્થાત્ પરિવર્તન હોને પર ખી ધ્યાન એક વિષ-
યક કિસ પ્રકાર કહા જા સકતા હૈ ! સંક્રમણ હોને પર તો વહ અનેક
વિષયક હો જાતા હૈ ।

સમાધાન--ધ્યાન કી સન્તાન ખી ધ્યાન કહલાતી હૈ । અર્થાત્

ચાલુ હોય, પછી તે બીજા શબ્દનો આશ્રય લઈ લે પછી તે શબ્દનો
પણ ત્યાગ કરીને ત્રીજા શબ્દનું ચિન્તન કરવા લગે, આ પરિવર્તનને
વ્યંજનસંક્રાન્તિ કહે છે આવી જ રીતે કાયયોગ આદિનું પરિવર્તન યોગ-
સંક્રાન્તિ કહેવાય છે જેવી રીતે કાયયોગનું આલમ્બન લઈને ઉત્પન્ન થનારું
ધ્યાન વચનયોગનું અલમ્બન કરે છે, પાછું વચનયોગનો પણ ત્યાગ કરીને મનો
યોગનો આશ્રય લે છે મનોયોગનો ત્યાગ કરીને પુનઃ કાયયોગનો સહારો લે છે.
આવી રીતે યોગસંક્રાન્તિ થાય છે આમ, અર્થ વ્યંજન અને યોગનું
પરિવર્તન વિચાર કહેવાય છે.

શંકા--સંક્રમણ અર્થાત્ પરિવર્તન થવાથી ધ્યાન એક-વિષયક કેવી
રીતે કહી શકાય ? સંક્રમણ થવાથી તો તે અનેક વિષયક થઈ જાય છે-

સમાધાન--ધ્યાનનું સન્તાન પણ ધ્યાન કહેવાય છે. અર્થાત્ ધ્યેયમાં

તત્ત્વત્રયનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વં તાવન્-શુદ્ધધ્યાનસ્ય સવિતર્કત્વં-સવિચારત્વમ્-
અવિચારત્વચ્ચ યથાક્રમ, મુક્તમ્ તત્ત્વ-રૂપતાવદ્ વિતર્કઃવિચારો વા? इत्याकाङ्क्षामाह
'વિતર્કકે સુપ, વિચારે અત્યવંજન જોગ સંકાંતી' इति । વિતર્કઃ શ્રુત મુચ્યતે
વિતર્કણં વિશેષેણ કહનં વિતર્કઃ શ્રુતજ્ઞાનમ્, વિતર્કયતે-આલોચ્યતે-પદાર્થો યેન
સ વિતર્કઃ શ્રુતજ્ઞાનમ્. સંજયદિપર્યવરહિતં નિર્ણયસ્વરૂપ મિત્યર્થઃ । વિચારસ્તુ-
અર્થ વ્યજ્ઞનયોગસંક્રાન્તિ રુચ્યતે, તત્રાર્ધઃ પરમાણ્યાદિ દ્રવ્ય-પર્યાયશ્ચ, વ્યજ્ઞનં
તદ્વાચકઃ શબ્દઃ, યોગાઃ-કાય-વાઙ્મનોરૂપાઃ, સંક્રમણં પરિવર્તનં સંક્રાન્તિઃ,
અર્થવચનક્રાયાદિયોગાનાં પરિવર્તનં વિચાર ઉચ્યતે । તત્રાર્ધસંક્રાન્તિર્થથા-
આત્માદિ દ્રવ્યમેક માલમ્બ્ય જાયમાનં ધ્યાનં તદપઘાય પર્યાયં સંક્રામતિ । પર્યાયં
ધ્યેય મેં પરિવર્તન દો જાને પર ઓ ધ્યાન કા પ્રવાહ ચદિ અવિચિન્ન
રહતા હૈ તો વહ ઓ ધ્યાન હી કહલાતા હૈ, અનઃ પૂર્વોક્ત આશંકા કો
કોઈ અવકાશ નહીં ॥૭૧॥

તત્ત્વત્રયનિર્યુક્તિ—પહેલે શુદ્ધધ્યાન કે પ્રાથમિક દો ભેદો કો
સવિતર્ક કહા હૈ । પહેલે કો સવિચાર ઓર દુસરે કો અવિચાર કહા
હૈ તો વિતર્ક ઓર વિચાર કિસે કહતે હૈ, ડલ આશંકા કા સમાધાન કરતે
હૈ—યહાં વિતર્ક કા અર્થ શ્રુત હૈ, જિસકે દ્વારા વસ્તુ કી વિતર્કણા
કી જાય આલોચના કિયા જાય વહ વિતર્ક અર્થાત્ શ્રુતજ્ઞાન વિચાર
કા અભિપ્રાય હૈ અર્થ, વ્યંજન ઓર યોગ કા સંક્રમણ । પરમાણુ આદિ
દ્રવ્ય યા પર્યાય અર્થ કહલાતા હૈ, ઉસકા વાચક શબ્દ વ્યંજન કહલાતા
હૈ ઓર કાય, વચન તથા મન કા વ્યાપાર યોગ કહલાતા હૈ । સંક્રમણ
કા મનસ્ય હૈ ઉલટ-ફેર હોના । કાયયોગ આદિ કે ઉલટફેર કો
વિચાર કહતે હૈ । આત્મા આદિ કિસી એક દ્રવ્ય કા આલમ્બન કરકે

પરિવર્તન થઇ જવાથી પણ ધ્યાનનો પ્રવાહ કદાચ અવિચિન્ન રહે તો પણ
ધ્યાન જ કહેવાય છે, આથી પૂર્વોક્ત આશંકાને કોઇ સ્થાન નથી. ॥૭૧॥

તત્ત્વત્રયનિર્યુક્તિ—પહેલા શુદ્ધધ્યાનના પ્રાથમિક બે ભેદોને સવિતર્ક
કહેવામા આવ્યા છે. પહેલા ને સવિચાર અને બીજાને અવિચાર કહેલ છે તો
વિતર્ક અને વિચાર કોને કહે છે એ આશંકાનું સમાધાન કરીએ છીએ—અહીં
વિતર્કનો અર્થ શ્રુત છે. જેના વડે વસ્તુની વિતર્કણા કરવામાં આવે,
આલોચન કરવામાં આવે તે વિતર્ક અર્થાત્ શ્રુતજ્ઞાન વિચારનો અભિપ્રાય
છે અર્થ વ્યંજન અને યોગનું સંક્રમણ પરમાણુ આદિ દ્રવ્ય અથવા પર્યાય
અર્થ કહેવાય છે તેનો વાચક શબ્દ વ્યંજન કહેવાય છે અને કાય વચન
તથા મનનો વ્યાપાર યોગ કહેવાય છે. સંક્રમણનો અર્થ થાય છે ઉલટ-
ફેર થવું. કાયયોગ આદિની ફેર-બદલીને વિચાર કહે છે. આત્મા આદિ

વાડશ્રિત્ય જાયમાનં યાનં તં વિદાય દ્રવ્યમુપૈતિ । અથ વાચક શબ્દવ્યજ્ઞન સંક્રાન્તિર્યથા-એકં શ્રુતશબ્દમાલમ્બ્ય જાયમાનં શબ્દાન્તર માલમ્બતે, તદપિ પરિત્યજ્ય શબ્દાન્તરમુપાદત્તે, યોગ સંક્રાન્તિર્યથા-કાયયોગોપયુક્તધ્યાનં વાગ્યોગં સંક્રામતિ, વાગ્યોગોપયુક્તધ્યાનઞ્ચ-મનોયોગં સંક્રામતિ, મનોયોગોપયુક્તધ્યાનઞ્ચ-કાયયોગં સંક્રામતિ, इत्येवं खलु-अर्थव्यञ्जनयोगसंक्रमणं विचार उच्यते इति भावः । उक्तञ्च--

‘उत्पायठिह भंगाहं पज्जायाण जमेगद्वंमि ।

નાનાનયાણુસરણં પુવ્વગયસુયાણુસારેણં ॥૧॥’

‘સવિચાર મત્થ વંજણજોગંતરઓ તયં પઢમ સુક્કં ।

હોહ પુહુત્ત વિયક સવિચાર સરાગભાવસ્સ’ ॥૨॥

‘જં પુણ સુનિપ્પકંપં નિદાયસરણપ્પહવમિવચિત્તં ।

ઉત્પાયઠિઃ ભંગાહયાણમેગમ્મિ પજ્જાણ ॥૩॥

અવિચારમત્થવંજણજોગંતરઓ તયં વિહય સુક્ક ।

પુવ્વગય સુયાલંબણ મેગત્ત વિયકમવિચારં ॥૪॥

હોને વાલા ધ્યાન उस द्रव्य को छोड़कर पर्याय में चला जाता है, पर्याय का चिन्तन करते-करते द्रव्य का चिन्तन करने लगता है, यह अर्थ का संक्रमण कहलाता है । व्यंजन की संक्रान्ति का मतलब यह है कि श्रुत के किसी एक शब्द का चिन्तन करते-करते दूसरे शब्द का चिन्तन करने लगना । કાયયોગ કે અવલમ્બન સે હોને વાલા ધ્યાન કદાચિત્ વચનયોગ કા આશ્રય લેના હૈ, કદાચિત્ કિસી અન્ય યોગ કા યહ યોગ સંક્રાન્તિ હૈ । હસ પ્રકાર અર્થ, વ્યંજન ઓર યોગ કા સંક્રમણ હોના વિચાર કહા ગયા હૈ । કહા ખી હૈ—

‘पूर्वगत श्रुत के अनुसार, अनेक नयों की अपेक्षा से एक द्रव्य

કોઇ એક દ્રવ્યનું આલમ્બન લઇને થનારું ધ્યાન તે દ્રવ્યને છોડીને પર્યાયમાં આલ્યું બીય છે પર્યાયનું ચિન્તન કરતા કરતા દ્રવ્યનું ચિન્તન કરવા લાગે છે આ અર્થનું સંક્રમણ કહેવાય છે, વ્યંજનની સંક્રાન્તિનો અર્થ એવો થાય છે કે શ્રુતના કોઇ એક શબ્દનું ચિન્તન કરતા કરતા બીજા શબ્દનું ચિન્તન કરવા લાગવું કાયયોગના અવલમ્બનથી થનારું ધ્યાન કદાચિત વચનયોગનો આશ્રય લે છે, કદાચિત્ કોઇ એન્ય યોગનો આ યોગસંક્રાન્તિ છે આ રીતે અર્થ વ્યંજન અને યોગનું સંક્રમણ થવું-વિચાર કહેવામાં આવ્યો છે, કહ્યું પણ છે-

पूर्वगत श्रुत अनुसार, अनेक नयानी अपेक्षाથી એક દ્રવ્યના ઉત્પાદ

छाया--उत्पाद स्थिति भङ्गादि पर्यायाणां यदेक द्रव्ये ।

नाना नयानुसरणं पूर्वगतश्रुतानुसारेण ॥१॥

सविचार मर्थ व्यञ्जन योगान्तरतस्तथा प्रथमशुक्लम् ।

भवति पृथक्त्ववितर्कसविचारं सरागभावस्य ॥२॥

यत्पुनः सनिष्प्रकम्पं निवातशरणमदीपमिव चित्तम् ।

उत्पाद स्थिति भङ्गादिकाना मेकस्मिन्पर्याये ॥३॥

अविचारमर्थ व्यञ्जन योगान्तर तस्तथा द्वितीयशुक्लम् ।

पूर्वगत श्रुतावलम्बन मेकत्ववितर्कमविचारम् ४ ७९ ।

मूलम्--विउत्सर्गो दुविहे द्रव्यभावभेदयो ॥८०॥

छाया--व्युत्सर्गो द्विविधः, द्रव्यभावभेदतः ॥८०॥

के उत्पाद, व्यय और प्रौढ्य आदि पर्यायों का अर्थ व्यञ्जन और योग के परिवर्तन के साथ चिन्तन करना पृथक्त्ववितर्क-सविचार नामके प्रथम शुक्लध्यान कहलाता है । यह ध्यान छद्मस्थ में होता है । १-२

जो ध्यान वायुविहीन स्थान में रक्खे हुए दीपक के समान निष्प्रकम्प होता है और उत्पाद, व्यय तथा प्रौढ्य : आदि में से किसी एक पर्याय का ही चिन्तन करता है वह एकत्ववितर्क अविचार नामक दूसरा शुक्लध्यान कहलाता है । यह ध्यान भी पूर्वगत श्रुत के आश्रय से होता है किन्तु अर्थ, व्यञ्जन और योग के संक्रमण से रहित होता है ॥ ३-४॥ ७९॥

‘विउत्सर्गो दुविहे’ इत्यादि सू० ॥८०॥

सूत्रार्थ--व्युत्सर्ग दो प्रकार का है--द्रव्यव्युत्सर्ग और भाव व्युत्सर्ग ॥ ८० ॥

व्यय અને પ્રૌઘ્ય આદિ પર્યાયોનો અર્થ, વ્યંજન અને યોગના પરિવર્તનની સાથે ચિન્તન કરવું પૃથક્ત્વવિતર્ક સવિચાર નામક પ્રથમ શુક્લધ્યાન કહેવાય છે આ ધ્યાન છદ્મસ્થઅવસ્થામાં થાય છે ॥૧-૨॥

જે ધ્યાન વાયુવિહીન સ્થાનમાં રાખવામાં આવેલા દીપકની માફક નિષ્પ્રકમ્પ હોય છે અને ઉત્પાદ વ્યય તથા પ્રૌઘ્ય આદિમાંથી કોઈ એક પર્યાયનું જ ચિન્તન કરે છે. તે એકત્વવિતર્ક-અવિચાર નામક બીજું શુક્લ ધ્યાન કહેવાય છે. આ ધ્યાન પણ પૂર્વગત શ્રુતના આશ્રયથી થાય છે. ॥૩-૪॥ ॥૭૯॥

‘વિઉત્સર્ગો દુવિહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ--વ્યુત્સર્ગ બે પ્રકારના છે-દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ અને ભાવવ્યુત્સર્ગ ॥૮૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વ તાવત્-આભ્યન્તરતપસઃ પ્રાયશ્ચિત્તાદિ ભેદેન પદ્ધિત્વપતિપાદનાત્ તત્ર-યથાક્રમં પ્રાયશ્ચિત્તાદયઃ પ્રરુપિતાઃ, સમ્પતિ-ક્રમ પ્રાપ્તસ્ય પશ્ચમાભ્યન્તરતપસો વ્યુત્સર્ગરૂપસ્ય દ્રવ્ય ભાવભેદેન દ્વૈવિધ્યં પ્રરુપયિતુમાહ-‘વિડલ્લગ્ને દુષ્વિદ્ધે’ इत्यादि । વ્યુત્સર્ગો વ્યુત્સર્જનં, સ દ્વિવિધો, દ્રવ્ય-ભાવભેદતઃ, તત્ર-દ્રવ્યત્વ ઉપધ્યાદિમમત્વવર્જનં વ્યુત્સર્ગઃ ભાવતઃ કષાયત્યાગો ભાવવ્યુત્સર્ગઃ, इत्येवं द्विविधो व्युत्सर्गः अथवा-व्युत्सर्ग इति कायोत्सर्गः काय-ममत्वत्यागः शयनाऽऽसनस्थानेषु काय चेष्टावर्जनम् । સોઽપિ દ્વિવિધઃ, इत्वरिको यावत्कथिक्श्चेति ॥૮૦॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિઃ પૂર્વે સ્વલ્પ-પ્રાયશ્ચિત્ત, વિનય, વૈયાવૃત્ત્ય, સ્વાધ્યાય વ્યુત્સર્ગ ભેદેન પદ્ધિત્વસ્યાઽઽભ્યન્તરતપસા યથાક્રમં પ્રાયશ્ચિત્તાદીનાં સભેદં પ્રરૂપણં કૃતમ્,

તત્ત્વાર્થદીપિકા--પહેલે આભ્યન્તર તપ કે છઠ્ઠ ભેદોં કા નિરૂપણ ક્રિયા ગયા થા, ઉનદેં સે પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ કા નિરૂપણ હો ચુકા, અવ ક્રમપ્રાપ્ત પાંચવેં આભ્યન્તર તપ વ્યુત્સર્ગ કે દ્રવ્ય ઓર ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકાર બતલાતે હેં હેં--

વ્યુત્સર્ગ કે દો ભેદ હેં-દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ ઓર ભાવવ્યુત્સર્ગ । ઉપધિ આદિ કા ત્યાગ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ કહલાતા હેં ઓર કષાયોં કા ત્યાગ ભાવવ્યુત્સર્ગ કહલાતા હેં । વ્યુત્સર્ગ કો કાયોત્સર્ગ ઓર કાયમમત્વ-ત્યાગ ખી કહતે હેં જિસકા આશય હેં શયન, આસન એવં સ્થાન મેં કાય કી ચેષ્ટા કા ત્યાગ । ઉસકે ખી દો ભેદ હેં-ઇત્વરિક ઓર યાવત્કથિક ॥૮૦॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ--પહેલે પ્રાયશ્ચિત્ત વિનય, વૈયાવૃત્ત્ય સ્વાધ્યાય ઓર

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલા આભ્યન્તર તપના છ ભેદોતું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું હતું તેમાંથી પ્રાયશ્ચિત્ત આદિતું નિરૂપણ થઈ ગયું હવે ક્રમપ્રાપ્ત પાંચમાં આભ્યન્તર તપ વ્યુત્સર્ગના દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે પ્રકાર બતાવીએ છીએ--

વ્યુત્સર્ગના બે ભેદ છે-દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ અને ભાવવ્યુત્સર્ગ ઉપધિ આદિનો ત્યાગ દ્રવ્ય વ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે અને કષાયોનો ત્યાગ ભાવવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે. વ્યુત્સર્ગને-કાયોત્સર્ગ અને કાયમમત્વત્યાગ પણ કહે છે જેનો આશય છે શયન આસન અને સ્થાનમાં કાયની ચેષ્ટાનો ત્યાગ તેના પણ બે ભેદ છે--ઇત્વરિક અને યાવત્કથિક ॥૮૦॥

તત્ત્વાર્થનિર્ચુક્તિ--પહેલા પ્રાયશ્ચિત્ત, વિનય, વૈયાવૃત્ત્ય, સ્વાધ્યાય અને

સમ્પત્તિ-ક્રમપ્રાપ્તસ્ય પશ્ચમાશ્વઃતરતપસો દ્રવ્ય-ભાવ ભેદેન દ્વિવિધસ્ય પ્રરૂપણં કર્તુમાહ-‘વિડમગ્નો દુવિદ્ધે, દ્રવ્ય-ભાવભેદયો’-इति । વ્યુત્સર્ગો વિવિધસ્ય કાયવ્યાપારસ્ય પ્રવચનવિહિતેન વિવિધોત્સર્ગ સ્થાગઃ સ-દ્વિવિધો ભવતિ, દ્રવ્યભાવભેદતઃ । તત્ર-દ્રવ્યતો વાહ્યોપધે વ્યુત્સર્ગ-સ્થાગો દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગઃ, વાહ્યોપધિ મમત્વત્યાગ इत्यर्थः । ભાવતશ્ચાભ્યન્તરોપધેઃ ક્રોધાદિકષાયરૂપસ્ય વ્યુત્સર્ગસ્થાગો ભાવવ્યુત્સર્ગઃ સ ચ મનોવાક્કાર્યઃ ક્રોધાદિક્ષાયાણાં કૃતકારિતાનુમતિમિશ્ર ભાવવ્યુત્સર્ગો વ્યપદિશ્યતે । ઉક્તશ્ચ વ્યરૂપાપજ્ઞગૌ શ્રી મગવતી સૂત્રે ૨૫-શતકે ૭ ઉદ્દેશકે ૮૦૨ સૂત્રે -‘વિડમગ્નો દુવિદ્ધે પળ્લત્તે, તં જહા-દ્રવ્યવિડમગ્ને ય-ભાવ વિડમગ્નેય’ વ્યુત્સર્ગો દ્વિવિધઃ પ્રજ્ઞસઃ, તચયા-દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગશ્ચ, ભાવવ્યુત્સર્ગશ્ચેતિ

વ્યુત્સર્ગ કે ભેદ સે આભ્યન્તર તપ કે છહ ભેદ કહે ગણ થે । ઉનમેં સે પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ કા ભેદ પ્રદર્શનપૂર્વક નિરૂપણ ક્રિયા ગયા । અથ ક્રમપ્રાપ્ત પાંચવેં આભ્યન્તર તપ વ્યુત્સર્ગ કે દો ભેદોં કી પ્રરૂપણા કરતે હૈં—

વિવિધ પ્રકાર કે કાયિક વ્યાપાર કા આગમોક્ત વિધિસે ત્યાગ કરના વ્યુત્સર્ગ હૈં ઉસકે દો ભેદ હૈં-દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ ઔર ભાવવ્યુત્સર્ગ । વાહ્ય ઉપધિ સંબંધી મમત્વ કા ત્યાગ કરના દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ હૈં ઔર આભ્યન્તર ઉપધિ કષાય કા ત્યાગ કરના ભાવવ્યુત્સર્ગ હૈં । મન, વચન કાય સે કૃત, કારિત ઔર અનુમોદન સે કાર્યોં કા ત્યાગ કરના ભાવવ્યુત્સર્ગ કહલાતા હૈં । મગવતી સૂત્ર શતક ૨૫, ઉદ્દેશક ૭ મેં કહા ગયા હૈં-દ્રવ્ય ઔર ભાવકે ભેદ સે વ્યુત્સર્ગ, દો પ્રકારકા હૈં । હસ

વ્યુત્સર્ગના ભેદથી આભ્યન્તર તપના છ ભેદ કહેવામાં આવ્યા હતા તેમાંથી પ્રાયશ્ચિત્ત આદિના ભેદ પ્રદર્શનપૂર્વક નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું હવે ક્રમપ્રાપ્ત પાંચમાં આભ્યન્તર તપ વ્યુત્સર્ગના બે ભેદોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ—

વિવિધ પ્રકારના કાયિક વ્યાપારનો આગમોક્ત વિધિથી ત્યાગ કરવો વ્યુત્સર્ગ છે તેના બે ભેદ છે-દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ અને ભાવવ્યુત્સર્ગ । વાહ્ય ઉપધિ સંબંધી મમત્વનો ત્યાગ કરવો દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ છે, અને આભ્યન્તર ઉપધિ કષાયનો ત્યાગ ભાવવ્યુત્સર્ગ છે । મન વચન, કાયથી તથા કૃતકારિત અને અનુમોદનથી કષાયોનો ત્યાગ કરવો ભાવવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે, મગવતી સૂત્ર શતક ૨૫, ઉદ્દેશક ૭માં કહ્યું છે-દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી વ્યુત્સર્ગ

તથા ચ વાહ્યોપધ્યાદિ સમસ્ત વ્યુત્સર્ગો દ્રવ્ય વ્યુત્સર્ગ ઉચ્ચતે આભ્યન્તર ક્રોધાદિ
કષાય વ્યુત્સર્ગશ્ચ ભાવવ્યુત્સર્ગ ઉચ્ચતે ॥૮૦॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्बल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषा-
कलितकलितकलापालापकमविशुद्धगद्यपद्यानैकग्रन्थनिर्मापक,
वादिमानमर्दक-श्रीशाहूच्छत्रपति कोल्हापुरराजमदत्त-
'जैनाचार्य' पदभूषित — कोल्हापुरराजगुरु-
बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य — जैनधर्मदिवाकर
पूज्य श्री घासीलालव्रतिविरचियां श्री
दीपिका-निर्युक्ति व्याख्या द्वयो-
तस्य तत्त्वार्थसूत्रस्या सप्तमो-
ध्याय समाप्तः ॥७॥

પ્રકાર વાહ્ય ઉપધિ કા ત્યાગ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ ઔર ક્રોધ આદિ આભ્યન્તર
ઉપધિ કા ત્યાગ ભાવવ્યુત્સર્ગ કહલાતા હૈ ॥૮૦॥

જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજીમહારાજકૃત
'તત્ત્વાર્થસૂત્ર' કી દીપિકા-નિર્યુક્તિ વ્યાખ્યા કા
સાતવાં અધ્યાય સમાપ્ત ॥૭॥

એ પ્રકારના છે-આવી રીતે બાહ્ય ઉપધિનો ત્યાગ દ્રવ્યવ્યુત્સર્ગ અને ક્રોધ
આદિ આભ્યન્તર ઉપધિનો ત્યાગ ભાવવ્યુત્સર્ગ કહેવાય છે. ॥૮૦॥

જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત “તત્ત્વાર્થસૂત્ર”ની
દીપિકા-નિર્યુક્તિ વ્યાખ્યાનો સાતમો અધ્યાય સમાપ્ત: ॥૭॥



अथाऽष्टमोऽध्यायः प्रारम्भते

मूलम्—देसओ कम्मक्खओ निज्जरा ॥१॥

छाया—‘देशतः कर्मक्षयो निर्जरा ।’

तत्त्वार्थदीपिका—जीवादि नवतत्त्वानां यथाक्रमं प्ररूपणार्थं पूर्वं जीवादि संवरतत्त्वपर्यन्तं सप्ततत्त्वानां प्ररूपणं कृतम्, सम्पत्ति-क्रमप्राप्तं सप्तमं निर्जरा-तत्त्वं प्ररूपयितुं सप्तममध्यायं प्रारभते—‘देसओ कम्मक्खओ निज्जरा’ इति । देशतो न तु—सर्वतः कर्मक्षयः कर्मणां ज्ञानावरणादि कर्मणां क्षयः, आत्मप्रदेशतो देशतः पृथग् भवनम्, विपाकेन—कर्मफलभोगेन—तपसा चाऽनशनादिना देशतो विनाशः परिशुद्धं जीवात्मनि वस्त्रे लिप्तस्य संश्लिष्टस्य कर्ममलस्य पृथग्भवनेन देशतो विध्वंसनं निर्जरा—उच्यते । तथा च जीवरूपे वस्त्रे कर्मरूपमलस्य ज्ञानरूप

अष्टम अध्याय का प्रारंभ

‘देसओ कम्मक्खओ निज्जरा’

सूत्रार्थ—एक देश से कर्मक्षय होना निर्जरा है ॥१॥

तत्त्वार्थदीपिका—जीव आदि नौ तत्त्वों का निरूपण करते हुए जीव से लेकर संवर तत्त्व पर्यन्त सप्त तत्त्वों का निरूपण किया जा चुका अब क्रमप्राप्त आठवें निर्जरातत्त्व की प्ररूपणा करने के लिए आठवां अध्याय का आरंभ करते हैं—

ज्ञानावरण आदि कर्मों का आत्मप्रदेशों से पृथक् होना अर्थात् विपाक (कर्मफल के भोग) से और तपस्या से एक देश से विनाश होना निर्जरा है । जैसे वस्त्र में लगा मैल धुलने पर हट जाता है उसी प्रकार कर्म आत्मप्रदेशों से अलग हो जाते हैं । जीव रूपी वस्त्र में, कर्म रूपी मल

आठमा अध्यायनो प्रारंभ

‘देसओ कम्मक्खओ निज्जरा’ इत्यादि

सूत्रार्थ—એક દેશથી કર્મક્ષય થવો નિર્જરા છે ॥ ૧ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—જીવ આદિ નવ તત્ત્વોનું નિરૂપણ કરતા થકા જીવથી લઈને સંવર તત્ત્વ પર્યન્ત સાત તત્ત્વોનું નિરૂપણ કરવામાં આવી ગયું, હવે ક્રમપ્રાપ્ત આઠમાં નિર્જરા તત્ત્વની પ્રરૂપણા કરવાને માટે આઠમાં અધ્યયનનો પ્રારંભ કરીએ છીએ—

જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોનું આત્મ પ્રદેશોથી છૂટા પડવું અર્થાત્ વિપાક (કર્મફળના ભોગ) થી અને તપસ્યાથી એક દેશથી વિકાસ થવો નિર્જરા છે. જેમ વસ્ત્રમાં લાગેલો મેલ તેને ધોવાથી દૂર થઈ જાય છે તેજ રીતે કર્મ આત્મ પ્રદેશોથી જુદું થઈ જાય છે. જીવરૂપી વસ્ત્રમાં કર્મરૂપી મળનો, જ્ઞાન-

જલેનાડનશનાદિ તપઃ સંયમરૂપક્ષારદ્રવ્યેણ પ્રક્ષાલનદ્વારા નિર્જરાતત્ત્વં વ્યપદિશ્યતે, નિર્જરણં-દેશતઃ પરિશટનં નિર્જરેતિ વ્યુત્પત્તેઃ ॥૧॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વે તાવદ્ જીવાદિ સંવરપર્યન્તસપ્તતત્ત્વાનાં પ્રરૂપણં કૃતમ્, સમ્પત્તિ-ક્રમ પ્રાપ્તસ્યાડ્દમસ્ય નિર્જરા તત્ત્વસ્ય પ્રરૂપણં કર્તુમષ્ટમમધ્યાયમારમતે—‘દેસઓ કમ્મકલ્લઓ નિજ્જરા’ इति । देशतो न तु-सर्वतः कर्मक्षयः कर्मणां ज्ञानावरणदर्शनावरणादि कर्मणां विपाकालां वा देशतः क्षयो-विनाशः परिशटनम् आत्मप्रदेशेभ्यो विघटनं-पृथग्भवनं निर्जरोच्यते । ‘निर्जरणं परिशटनं निर्जरा’-इति व्युत्पत्तेः, तथा च-पूर्वोपाजितानां कर्मणाम् आत्म संश्लिष्टानां विपाकेन वेदनरूपकर्मफलभोगेन-तपसा चाऽनशनादिना द्वादशविधेनाऽऽसेव्यमानेन देशतः क्षयो विध्वंसनं निर्जरातत्त्वं वरपदिश्यते । एवञ्चाऽऽत्मरूपवस्त्रे जतुकाष्ठवत्-संश्लिष्टस्य ज्ञानावरणादि कर्मरजोमलस्य ज्ञानरूपादि संश्लि-

ક્ષા, જ્ઞાન રૂપી જલ સે, અનશન આદિ તપ એવં સંયમ રૂપી સ્વાર (સોડે) સે પ્રક્ષાલન દ્વારા હટ જાના નિર્જરાતત્ત્વ છે । ૧ ।

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલે જીવ સે લેકર સંવર પર્યન્ત સાત તત્ત્વોં કા નિરૂપણ ક્રિયા ગયા અવ ક્રમાનુસાર આઠવેં નિર્જરા તત્ત્વ કા નિરૂપણ કરને કે લિએ આઠવાં અધ્યાય પ્રારંભ ક્રિયા જાતા છે ।

વિપાક કો પ્રાપ્ત અથવા નહીં પ્રાપ્ત જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોં કા એક દેશ સે ક્ષય હોના—આત્મપ્રદેશોં સે પૃથક્ક હો જાના નિર્જરા છે । પૂર્વોપાજિત ઔર આત્મપ્રદેશોં કે સાથ એકમેક હુએ કર્મ વિપાક કે દ્વારા અર્થાત્ ફલભોગ કે દ્વારા ચારહ પ્રકાર કે અનશન આદિ તત્ત્વોં કે દ્વારા ક્ષય કો પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં, વસી કો નિર્જરા કહતે હૈં ।

इस प्रकार अत्मा रूपी वस्त्र में दूध और पानी की तरह परस्पर

રૂપી જળથી અનશન આદિ તપ અને સંયમ રૂપી ખાર (સોડા) થી પ્રક્ષાલન દ્વારા દૂર થઈ જવું નિર્જરાતત્ત્વ છે. ॥ ૧ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પહેલાં જીવથી લઈને સંવર પર્યન્ત સાત તત્ત્વનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે ક્રમાનુસાર આઠમાં નિર્જરાતત્ત્વનું નિરૂપણ કરવા માટે આઠમો અધ્યાય શરૂ કરવામાં આવે છે.

વિપાકને પ્રાપ્ત અથવા નહીં પ્રાપ્ત જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોંના એકદેશથી ક્ષય થવો આત્મપ્રદેશોંથી પૃથક્ક થવું નિર્જરા છે પૂર્વોપાજિત અને આત્મપ્રદેશોંની સાથે એકમેક થયેલા કર્મવિપાક દ્વારા અર્થાત્ ફલભોગ દ્વારા ચાર પ્રકારના અનશન આદિ તત્ત્વોં દ્વારા ક્ષયને પ્રાપ્ત થઈ જાય છે, તેને જ નિર્જરા કહે છે.

આ રીતે આત્મારૂપી વસ્ત્રમાં, દૂધ અને પાણીની જેમ પરસ્પર અદ્વ જ્ઞાના

લેનાડનશન પ્રાયશ્ચિત્તાદિ તપઃ સંયમરૂપ ક્ષાસ્ત્રવ્દેણ પરિશોધન દ્વારા નિષ્ક્રાસનં નિસ્સરણં નિર્જરેત્યવગન્તવ્યમ્ । ઉત્તરાધ્યયને ૩૦-અધ્યયને ૬ ગાથાયાશ્ચોક્તમ્ 'एवं तु संजयरसावि पावकम्मनिरासवे । भवकोटी संचितं कर्म तवसा निज्जरिज्जह' ॥૧॥ एवन्तु संयतस्याऽपि पापकर्मनिरासवे । भवकोटी सञ्चितं कर्म तपसा निर्जर्यते ॥૧॥

મૂલમ્—સા દુવિહા, વિવાગજા—અવિવાગજા ચ ॥૨॥

છાયા—સા દ્વિધા, વિપાકજાઽવિપાકજા ચ ॥૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રે-દેશતો જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મક્ષયરૂપં નિર્જરાતરવં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પત્તિ-તદ્ભેદં પ્રતિપાદયિતુમાહ—'સા દુવિહા' इत्यादि । सा खलु पूर्वोक्तस्वरूपा निर्जरा द्विविधा भवति, तपसा-विपाकजाऽविपाकजाचेति, तत्र-

વહ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મ રૂપી રજ-મલ કા, જ્ઞાનાદિ રૂપ જલ સે એવં અનશન આદિ તથા પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ તપ રૂપી સોડે સે શોધન હોકર હટ જાના નર્જરા સમગ્રતા ચાદિષ । ઉત્તરાધ્યયન કે તીસવે અધ્યયન કી છઠી ગાથા મેં કહા હૈ—

પાપકર્મો' કા આત્મવ સ્વક જાને પર સંચયી પુરુષ કે કરોડો' મવો' મેં સંચિત કર્મો' કી તપસ્યા કે દ્વારા નિર્જરા હો જાતી હૈ ॥૧॥

'મા દુવિહા વિવાગજા' इत्यादि

નિર્જરા હો પ્રકાર કી હૈ-વિપાકજા ઓર અવિપાકજા ॥૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્ર મેં જ્ઞાનાવરણ આદિ કા એક દેશ સે ક્ષય હોને રૂપ નિર્જરાતરવ કા નિરૂપણ ક્રિયા ગયા હૈ, અવ ઉત્તરે ભેદો' કા પ્રરૂપણ કરતે હૈ—

વરણીય આદિ કર્મ રૂપી રજ-મલનો જ્ઞાનાદિ રૂપ જળથી અને અનશન આદિ તથા પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ તપ રૂપી સોડાથી શુદ્ધ થઇને દૂર થઇ જવું, નિર્જરા સમજવું જોઇએ, ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના ત્રીસમાં અધ્યયનની છઠ્ઠી ગાથામાં હેલેવામાં આવ્યું છે—

પાપકર્મેના આત્મવ રોકાઈ જવાથી સંયમી પુરુષના કરોડો ભવોમાં સંચિત કર્મોની તપસ્યા દ્વારા નિર્જરા થઈ જાય છે. ॥ ૧ ॥

'સા દુવિહા વિવાગજા' इत्यादि

સૂત્રાર્થ—નિર્જરા એ પ્રકારની છે-વિપાકજા અને અવિપાકજા ॥૨॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વસૂત્રમાં જ્ઞાનાવરણ આદિનું એક દેશથી ક્ષય થવા રૂપ નિર્જરા તત્વનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે, હવે તેના ભેદોનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ—

વિપાકઃ કર્મફલવેદનરૂપો ભોગઃ તસ્માદ્ વિપાકાદ્ જાતા-નિપ્પન્ના જાયમાના ઉત્પ-
ચમાના નિપ્પચમાના વા નિર્જરા દેશતઃ પૃથગ્ભવનરૂપા વિપાકજા વ્યપદિશ્યતે ૧ ।
તથાવિધકર્મફલભોગરૂપવિપાકં વિનૈવાઽનશનપ્રાયશ્ચિત્તાદિના તપઃ સંયમેન
જાતા દેશતઃ પૃથગ્ભવનરૂપા નિષ્પન્ના જાયમાના વા નિર્જરાઽવિપાકજા વ્યપ-
દિશ્યતે ૨, તત્ર-નારકતિર્યકમનુષ્યદેવ ચતુર્ગતિષુ નાના જાતિવિશેષ ભ્રમિ
વિઘૂર્ણિત સંસારમહાઘર્ણવે ચિરં પરિભ્રમણં કુર્વતો જીવસ્ય શુભાશુભસ્ય કર્મણઃ
ક્રમેણ પરિપાકકાલપ્રાપ્તફલાનુભવોદયાવલિકાસ્રોતોઽનુપવિષ્ટસ્યારબ્ધફલસ્ય
યા નિવૃત્તિઃ સા વિપાકજા નિર્જરા ભવતિ । કિન્તુ-યત્પુનઃ કર્મવિપાકકાલા-
પ્રાપ્તમેવ-ઔપક્રમિકક્રિયાવિશેષ સામર્થ્યાદનુદીર્ઘં હઠાદુદીર્યોદયાવલિકાં
પ્રવેશ્ય વેદ્યતે વહ્નિ તાપ સન્ધૂયનાદિનાઽઽમ્ન-પનસાદિપાકવત્ સાઽવિપાકજા
નિર્જરાઽવગન્તવ્યા-ઠતિ ભાવઃ ॥૨॥

નિર્જરા કે દો ભેદ હૈ-વિપાકજા ઓર અવિપાકજા । ઉદય મેં આપ
હુએ કર્મ કે ફલ કો ભોગના વિપાક કહલાતા હૈ, ઉસસે હોને વાલી
નિર્જરા વિપાકજા નિર્જરા કહલાતી હૈ । દૂસરી અવિપાકજા નિર્જરા કા
અર્થ હૈ-કર્મ કે ફલ કો ભોગે વિના હી અનશન-પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ તપ-
શ્ર્ચ્યા કે દ્વારા હોને વાલી નિર્જરા ।

નારક, તિર્યચ, મનુષ્ય ઓર દેવગતિ રૂપ સંસાર-મહાસાગર મેં
અનાદિ કાલ સે ભ્રમણ કરતે હુએ જીવ કે, પરિપાક કો પ્રાપ્ત શુભ ઓર
અશુભ કર્મ, ઉદયાવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ હોતર ઓર અપના ફલ દેકર હટ
જાતે હૈ, ઉસે અવિપાક નિર્જરા કહતે હૈ । કિન્તુ સ્થિતિકાલ પૂર્ણ હુએ
વિના હી કિસી ઔપક્રમિક ક્રિયાવિશેષ કે સામર્થ્ય સે જો કર્મ હઠાત
ઉદય મેં લે લાયા જાતા હૈ ઓર ઉદયાવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ કરા કર ફલ

નિર્જરાના બે ભેદ છે-વિપાકજા અને અવિપાકજા ઉદયમાં આવેલા કર્મના
ફળને ભોગવવા તે વિપાક કહેવાય છે, તેનાથી થનારી નિર્જરા વિપાકજા
નિર્જરા કહેવાય છે બીજી અવિપાકજા નિર્જરા બે કર્મના ફળને ભોગવ્યા
વગર જ અનશન પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ તપશ્ર્ચ્યા દ્વારા થનારી નિર્જરા છે.

નારકી, તિર્યચ, મનુષ્ય અને દેવગતિ રૂપ સંસાર મહાસાગરમાં અનાદિ
કાળથી ભ્રમણ કરતા થકા જીવને, પરિપાકને પ્રાપ્ત શુભ અને અશુભ કર્મ
ઉદયાવલિકામાં પ્રવિષ્ટ થઈને અને એમનું ફળ પ્રદાન કરીને દૂર થઈ જાય
તેને અવિપાક નિર્જરા કહે છે પરંતુ સ્થિતિકાળ પૂર્ણ થયા વગર જ કોઈ
ઔપક્રમિક ક્રિયા વિશેષના સામર્થ્યથી બે કર્મ ઉદયમાં લાવવામાં આવે છે
અને ઉદયાવલિકામાં પ્રવિષ્ટ કરાવીને ફળ ભોગવી લીધા બાદ તે આત્માથી

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વસૂત્રે-કર્મ ક્ષયરૂપનિર્જરાયાઃ સ્વરૂપં નિરૂપિતમ્, સમ્પતિ-તસ્યા ભેદદ્વયં પ્રતિપાદિયિતુમાહ-‘સા દુષિહા, વિષાગજા અવિષાગજા-ય’ इति । सा पूर्वोक्तस्वरूपा निर्जरा द्विविधा भवति, तद्यथा-विपाकजाऽ-विपाकजाचेति । तत्र-विपचनं विपाकः, उदयावलिकामवेशः, ज्ञानावरणादि कर्मणां विशिष्टो नानाप्रकारको वा पाकः कर्मफलानुभावो विपाकः, अप्रशस्त शुभ-परिणामाना मुत्कटः, प्रशस्त शुभपरिणामाना मनुत्कटश्च कर्मबन्धफलभोग रूपोऽनुभवः, सर्वासां कर्मप्रकृतीनां फलभोगो विपाकोदयोऽनुभाव उच्यते । विविधः पाको विपाकः, स खलु-विपाकस्तथा भवति, अन्यथा च भवति, यथा येनाऽध्यवसायप्रकारेण यादृग्भावं वद्धं कर्म भवति तत्तथा तेनैव प्रभारेण विष्यच्यते

મોગને કે પશ્ચાત્ વદ આત્મા સે પૃથક્ક હો જાતા હૈ, ઉસે અવિષાગજા નિર્જરા કહતે હૈ જૈસે ગર્મી પહુંચાકર આગ કો સમય સે પહેલે હી પકા લિયા જાતા હૈ, જલ્દી પ્રકાર સ્થિતિ કા પરિપાક હોને સે પહેલે હી તપસ્યા આદિ કે દ્વારા કર્મ કો વિપાકોન્મુખ કર લેના અવિષાગજા નિર્જરા હૈ ॥૨॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વસૂત્ર મેં નિર્જરા કા સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કિયા ગયા, અથ ઉમકે દો ભેદોં કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

નિર્જરા દો પ્રકાર કી હૈ-વિપાકજા ઓર અવિષાકજા । જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોં કા નાના પ્રકાર પોં જો ફલાનુભવ હૈ, વહ વિપાક કહલાતા હૈ । સમી કર્મપ્રકૃતિયોં કા ફલભોગ-વિપાકોદયઅનુભાવ કહા જાતા હૈ । વિવિધ પ્રકાર કે પાક પોં બી વિપાક કહતે હૈ । કર્મ કા વિપાક કબી ઉસી રૂપ મેં હોતા હૈ, જિસ રૂપ મેં બાંધા હૈ ઓર કબી અન્યથા બી

પૃથક્ક થઇ જાય છે, તેને અવિપાકજા નિર્જરા કહે છે. જેમ ગરમી આપીને ફેરીને સમય થતા પહેલા જ પકાવી લેવામાં આવે છે. તેવી જ રીતે સ્થિતિ નો પરિપાક થતાં અગાઉ જ તપસ્યા આદિ દ્વારા કર્મને વિપાકોન્મુખ કરી લેવા તે અવિપાકજા નિર્જરા છે ॥ ૨ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વસૂત્રમાં નિર્જરાનું સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું, હવે તેના બે ભેદોનું નિરૂપણ કરીએ છીએ

નિર્જરા બે પ્રકારની છે-વિપાકજા અને અવિપાકજા જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોં નો જુદા જુદા પ્રકારનો જે ફલાનુભવ વિપાકોદય અનુભવ છે તે વિપાક કહેવાય છે બધી કર્મપ્રકૃતિયોના ફળ ભોગને વિપાકોદય અનુભાવ કહેવામાં આવે છે વિવિધ પ્રકરના પાકને પણ વિપાક કહે છે કર્મનો વિપાક કોઈવાર તે જ રૂપમાં હોય છે, કે જે રૂપે બાંધ્યું હોય અને ક્યારેક અન્યથા પણ હોય છે.

વિપાકઃ કર્મફલવેદનરૂપો ભોગઃ તસ્માદ્ વિપાકાદ્ જાતા-નિષ્પન્ના જાયમાના ઉત્પ-
ચમાના નિષ્પચમાના વા નિર્જરા દેશતઃ પૃથગ્ભવનરૂપા વિપાકજા વ્યપદિશ્યતે ૧ ।
તથાત્રિધર્મફલભોગરૂપવિપાકં વિનૈવાડનશનપ્રાયશ્ચિત્તાદિના તપઃ સંયમેન
જાતા દેશતઃ પૃથગ્ભવનરૂપા નિષ્પન્ના જાયમાના વા નિર્જરાડવિપાકજા વ્યપ-
દિશ્યતે ૨, તત્ર-નારકતિર્યકમનુષ્યદેવ ચતુર્ગતિષુ નાના જાતિવિશેષ ભ્રમિ
વિઘૂર્ણિત સંસારમહાગર્ભે ચિરં પરિભ્રમણં કુર્વતો જીવસ્ય શુભાશુભસ્ય કર્મણઃ
ક્રમેણ પરિપાકકાલપ્રાપ્તફલાનુભવોદયાવલિકાસ્રોતોડનુપવિષ્ટસ્યારબ્ધફલસ્ય
યા નિવૃત્તિઃ સા વિપાકજા નિર્જરા ભવતિ । કિન્તુ-યત્પુનઃ કર્મવિપાકકાલા-
પ્રાપ્તમેવ-ઔપક્રમિકક્રિયાવિશેષ સામર્થ્યાદનુદીર્ણં ઠઠાદુદીર્યોદયાવલિકાં
પ્રવેશ્ય વેચ્યતે વહ્નિ તપ સંધૂપનાદિનાડડમ્ર-પનસાદિપાકવત્ સાડવિપાકજા
નિર્જરાડવગન્તવ્યા-ઠતિ માવઃ ॥૨॥

નિર્જરા કે દો ભેદ હૈ-વિપાકજા ઓર અવિપાકજા । ઉદય મેં આપ
હુએ કર્મ કે ફલ કો ભોગના વિપાક કહલાતા હૈ, ઉત્સે હોને વાલી
નિર્જરા વિપાકજા નિર્જરા કહલાતો હૈ । દૂસરી અવિપાકજા નિર્જરા કા
અર્થ હૈ-કર્મ કે ફલ કો ભોગે વિના હી અનશન-પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ તપ-
શ્રયા કે દ્વારા હોને વાલી નિર્જરા ।

નારક, તિર્યચ, મનુષ્ય ઓર દેવગતિ રૂપ સંસાર-મહાસાગર મેં
અનાદિ કાલ સે ભ્રમણ કરતે હુએ જીવ કે, પરિપાક કો પ્રાપ્ત શુભ ઓર
અશુભ કર્મ, ઉદયાવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ હોકર ઓર અપના ફલ દેકર હટ
જાતે હૈ, ઉસે સવિપાક નિર્જરા કહતે હૈ । કિન્તુ સ્થિતિકાલ પૂર્ણ હુએ
વિના હી કિસી ઔપક્રમિક ક્રિયાવિશેષ કે સામર્થ્ય સે જો કર્મ ઠઠાત
ઉદય મેં લે લાગા જાતા હૈ ઓર ઉદયાવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ કરા કર ફલ

નિર્જરાના બે ભેદ છે-વિપાકજા અને અવિપાકજા ઉદયમાં આવેલા કર્મના
ફળને ભોગવવા તે વિપાક કહેવાય છે, તેનાથી થનારી નિર્જરા વિપાકજા
નિર્જરા કહેવાય છે બીજી અવિપાકજા નિર્જરા બે કર્મના ફળને ભોગવ્યા
વગર જ અનશન પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ તપશ્રયા દ્વારા થનારી નિર્જરા છે.

નારકી, તિર્યચ, મનુષ્ય અને દેવગતિ રૂપ સંસાર મહાસાગરમાં અનાદિ
કાળથી ભ્રમણ કરતા થકા જીવને, પરિપાકને પ્રાપ્ત શુભ અને અશુભ કર્મ
ઉદયાવલિકામાં પ્રવિષ્ટ થઈને અને એમનું ફળ પ્રદાન કરીને દૂર થઈ જાય
તેને સવિપાક નિર્જરા કહે છે પરંતુ સ્થિતિકાળ પૂર્ણ થયા વગર જ કોઈ
ઔપક્રમિક ક્રિયા વિશેષના સામર્થ્યથી બે કર્મ ઉદયમાં લાવવામાં આવે છે
અને ઉદયાવલિકામાં પ્રવિષ્ટ કરાવીને ફળ ભોગવી લીધા બાદ તે આત્માથી

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વસૂત્રે-કર્મ ક્ષયરૂપનિર્જરાયાઃ સ્વરૂપં નિરૂપિતમ્, સમ્પતિ-તસ્યા ભેદદ્વયં પ્રતિપાદિયિતુમાહ-‘સા દુષ્ટિહા, વિશાગજા અવિવા-ગજા-ય’ इति । सा पूर्वोक्तस्वरूपा निर्जरा द्विविधा भवति, तद्यथा-विपाकजाऽ-विपाकजावेति । तत्र-विपचनं विपाकः, उदयावलिकामवेशः, ज्ञानावरणादि कर्मणां विशिष्टो नानाप्रकारको वा पाकः कर्मफलानुभावो विपाकः, अप्रशस्त शुभ-परिणामाना मुत्कटः, प्रशस्त शुभपरिणामाना मनुत्कटश्च कर्मबन्धफलभोग रूपो-ऽनुभवः, सर्वासां कर्मप्रकृतीनां फलभोगो विपाकोदयोऽनुभाव उच्यते । विविधः पाको विपाकः, स खलु-विपाकस्तथा भवति, अन्यथा च भवति, यथा येना-ऽध्यवसायप्रकारेण यादृग्भावं वद्धं कर्म भवति तत्तथा तेनैव प्रशारेण विष्यते

भोगने के पश्चात् वह आत्मा से पृथक् हो जाता है, उसे अविपाकजा निर्जरा कहते हैं जैसे गर्मी पहुंचाकर आम को खमख से पहले ही पका लिया जाता है, उसी प्रकार स्थिति का परिपाक होने से पहले ही तपस्या आदि के द्वारा कर्म को विपाकोन्मुख कर लेना अविपाकजा निर्जरा है ॥२॥

तत्त्वार्थनિર્યુક્તિ--પૂર્વસૂત્ર મેં નિર્જરા કા સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કિયા ગયા, અથ ઉસકે દો ભેદોં કા નિરૂપણ કરતે હૈ—

નિર્જરા દો પ્રકાર કી હૈ-વિપાકજા ઓર અવિપાકજા । જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોં કા નાના પ્રકાર પોં જો ફલાનુભવ હૈ, વહ વિપાક કહલાતા હૈ । સમી કર્મપ્રકૃતિયોં કા ફલભોગ-વિપાકોદયઅનુભવ કહા જાતા હૈ । વિવિધ પ્રકાર કે પાક વોં બી વિપાક કહતે હૈ । કર્મ કા વિપાક કમી ઉસી રૂપ મેં હોતા હૈ, જિસ રૂપ મેં બાંધા હૈ ઓર કમી અન્યથા બી

પૃથક્ થઈ જાય છે, તેને અવિપાકજા નિર્જરા કહે છે. જેમ ગરમી આપીને કેરીને સમય થતા પહેલા જ પકાવી લેવામાં આવે છે. તેવી જ રીતે સ્થિતિ નો પરિપાક થતાં અગાઉ જ તપસ્યા આદિ દ્વારા કર્મને વિપાકોન્મુખ કરી લેવા તે અવિપાકજા નિર્જરા છે ॥ ૨ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પૂર્વસૂત્રમાં નિર્જરાનું સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું, હવે તેના બે ભેદોનું નિરૂપણ કરીએ છીએ

નિર્જરા બે પ્રકારની છે-વિપાકજા અને અવિપાકજા જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મો નો જુદા જુદા પ્રકારનો જે ફલાનુભવ વિપાકોદય અનુભવ છે તે વિપાક કહેવાય છે અધી કર્મપ્રકૃતિયોના ફળ ભોગને વિપાકોદય અનુભવ કહેવામાં આવે છે વિવિધ પ્રકરના પાકને પણ વિપાક કહે છે કર્મનો વિપાક કોઈવાર તે જ રૂપમાં હોય છે, કે જે રૂપે બાંધ્યું હોય અને ક્યારેક અન્યથા પણ હોય છે.

અન્યથા ચ-પ્રકારાન્તરેણાપિ ચ વિપચ્યતે, સ ચ વિપાકઃ કર્મફલભોગો-રસો-
 ઽનુભાવશ્ચોચ્યતે, સ ચ તીવ્ર-મન્દાદિભેદો યત્નતિ । તત્ર-કદાચિત્ શુભમપિ કર્મ-
 ઽશુભવિપાકતયઽનુભૂયતે, અશુભઞ્ચ-શુભવિપાકતયાઽનુભૂતં ભવતિ, સર્વાસાં કર્મ-
 પ્રકૃતીનાં ફલભોગો વિપાકોદયાઽનુભાવવન્ધાદ્ જીવસ્યાઽનુભવનમિચ્છાઽનિચ્છા
 પૂર્વકં ભવતિ । તથાહિ-જ્ઞાનાવરણકર્મપ્રકૃતિફલં જ્ઞાનાઽભાવઃ, દર્શનાવરણકર્મ-
 પ્રકૃતિફલં દર્શન શક્ત્યુપરોધઃ । ઇત્યેવ રીત્યા સર્વકર્મણાં સ્વસ્વકાર્યવન્ધરૂપાઽનુ-
 ભૂતિર્ભવતિ । તત્ર-જ્ઞાનાવરણાઘટ્ટવિધેષુ કર્મસુ કિંચિત્કર્મપુદ્ગલેષ્વેવ વિપચ્યતે,

હોતા છે । તત્ત્વર્થે યહ છે કે કોઈ કર્મ જિસ પ્રકાર કે અધ્યવસાય સે
 જિસ રૂપ મેં બાંધા ગયા છે, ઉસી રૂપ મેં ભોગા જાતા છે ઓર કિસી
 કર્મ કા વિપાક અન્યથા રૂપ મેં બી હોતા છે, અર્થાત્ અપવર્તના, ઉદ્વ-
 ર્તના આદિ કરણોં કે દ્વારા કર્મ કે વિપાક મેં તારતમ્ય બી હો જાતા
 છે । વહ કર્મફલ રસ એવં અનુભાવ બી કહલાતા છે । કિસી કર્મ કા
 અનુભાવ મન્દ ઓર કિસી કા તીવ્ર હોતા છે । કબી-કબી શુભ વિપાક
 અશુભ વિપાક કે રૂપ મેં ઓર અશુભ વિપાક શુભ વિપાક કે રૂપ મેં
 પરિણત હો જોતા છે સબી કર્મપ્રકૃતિયોં કા ફલ ઉનકે નામ કે અનુસાર
 હી હોતા છે, જૈસે જ્ઞાનાવરણ પ્રકૃતિ કા ફલ જ્ઞાન કો આવૃત્ત કરતા છે
 ઓર દર્શનાવરણ પ્રકૃતિ કા ફલ દર્શન શક્તિ કો આચ્છાદિત કરતા
 છે । હસી પ્રકાર અન્ય સ્વયં કર્મપ્રકૃતિયોં કે વિષય મેં સમજ્ઞ લેના જાહિયે ।

હસી પ્રકાર જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ કર્મપ્રકૃતિયોં મેં સે કોઈ કર્મ-
 પ્રકૃતિ પુદ્ગલ વિપાકિની હોતી છે । ઉસકા ફલ પુદ્ગલ મેં હી હોતા છે ।

તાત્પર્ય એ છે કે કોઈ કર્મ જે પ્રકારના અધ્યવસાયથી જે રૂપમાં બાંધવામાં
 આવ્યું છે તે જ રૂપમાં ભોગવવામાં આવે છે અને કોઈ કર્મનો વિપાક
 અન્યથા રૂપમાં પણ હોય છે, અર્થાત્ અપવર્તના ઉદ્વર્તના આદિ કારણો
 દ્વારા કર્મના વિપાક માં તારતમ્ય પણ થઈ જાય છે. તે કર્મફળ રસ અને
 અનુભાવ પણ કહેવાય છે કેઈ કર્મનો અનુભાવ મન્દ અને કોઈનો તીવ્ર હોય
 છે. ત્યારે ક્યારેક શુભ વિપાક અશુભ વિપાકના રૂપમાં અને અશુભ વિપાક
 શુભ વિપાકના રૂપમાં પરિણત થઈ જાય છે. બધી કર્મપ્રકૃતિનું ફળ તેમના
 નામ પ્રમાણે હોય છે, જેમ કે જ્ઞાનાવરણ પ્રકૃતિનું ફળ જ્ઞાનને ઢાંકવાનું અને
 દર્શનાવરણ પ્રકૃતિનું ફળ દર્શન શક્તિને આચ્છાદિત કરવાનું છે આવી જ રીતે
 અન્ય સઘળી કર્મપ્રકૃતિની બાબતમાં પણ સમજવું. આવી જ રીતે જ્ઞાના-
 વરણ આદિ આઠ કર્મપ્રકૃતિઓમાંથી કોઈ કોઈ કર્મપ્રકૃતિ પુદ્ગલ વિપાકિની
 હોય છે. તેનું ફળ પુદ્ગલમાં જ થાય છે. કોઈ કર્મ પ્રકૃતિ ભવવિપાકિની હોય

તત્કર્મ નાનાપ્રકારેણ પુદ્ગલાન્ પરિણમયતિ, કિञ્ચિત્પુનઃ કર્મ ભવવિપાકી, ભવતિ તસ્મિન્ ભવે પ્રાપ્ત જન્મન આત્મનઃ શરીરવિશેષાવચ્છિન્નસ્ય વિપચ્યતે, કિञ્ચિત્કર્મ ક્ષેત્રવિપાકી ભવતિ ક્ષેત્રાન્તરે વિપચ્યતે, કિञ્ચિત્કર્મ તુ જીવવિપાકી ભવતિ તજ્જીવે એવ પરમવાદાવપિ વિપચ્યતે, इत्येवं ચતુર્થા વિપચ્યતે । તથાચોક્તમ્-

‘સંહનનં સંસ્થાનં વર્ણં સ્પર્શં રસં ગન્ધં નામાનિ ।

અંગ્ગોપાંગ્ગાનિ તથા શરીરનામાનિ સર્વાણિ’ ॥૧॥

‘અગુરુ લઘુ પરાઘાતો-પઘાત નામાતપોદ્યોતનામાનિ ।

પ્રત્યેકશરીરં સ્થિરં શુભં નામા નીતરૈઃ સાર્ધમ્’ ॥૨॥

પ્રકૃતય પૃતાઃ પુદ્ગલવિપાકા ભવવિપાકમુક્ત માયુષ્કમ્ ।

ક્ષેત્રફલમાનુપૂર્વી જીવવિપાકાઃ પ્રકૃતયોઽન્યાઃ ॥૩॥इति॥

કોઈ કર્મ ભવવિપાકી હોતા હૈ । વરુ અમુક ભવ મેં હી યા ભવ કે નિમિત્ત સે હી અપના ફલ પ્રદાન કરતા હૈ । કોઈ કર્મ ક્ષેત્રવિપાકી હોતા હૈ, जिसका फल क्षेत्र के निमित्त से ही होता है । કોઈ કર્મ જીવ વિપાકી હોતા હૈ । उसका फल आत्मा को ही भोगना पड़ता है अर्थात् आत्मिक गुणों पर उसका प्रभाव होता है । इस प्रकार चार प्रकारसे કર્મ કા વિપાક હોતા હૈ । કહા બી હૈ-

સંહનન, સંસ્થાન, વર્ણ, સ્પર્શ, રસ, ગન્ધ, અંગોપાંગનામ કર્મ, શરીરનામકર્મ, અગુરુલઘુનામ, પરાઘાત, ઉપઘાત નામકર્મ, આતપ નામકર્મ, ઉદ્યોત નામકર્મ, પ્રત્યેક શરીર, સ્થિર ઓર શુભ નામકર્મ, તથા ડનકી વિપરીત પ્રકૃતિયાં જૈસે સાધારણ શરીર, અસ્થિર ઓર અશુભ નામકર્મ, યે સ્વ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયાં પુદ્ગલ વિપાકી હૈ । ચાર

છે. તે અમુક ભવમાં જ અથવા ભવના નિમિત્તથી જ પોતાનું ફળ પ્રદાન કરે છે. કોઈ કર્મપ્રકૃતિ ક્ષેત્રવિપાકી હોય છે- તેનું ફળ ક્ષેત્રના નિમિત્તથી જ થાય છે. કોઈ કર્મપ્રકૃતિ જીવ વિપાકી હોય છે. તેનું ફળ આત્માને જ ભોગવવું પડે છે. અર્થાત્ આત્મિક ગુણો પર તેનો પ્રભાવ હોય છે. આમ ચાર રીતે કર્મનો વિપાક થાય છે. કહ્યું પણ છે-

સંહનન, સંસ્થાન, વર્ણ, સ્પર્શ, રસ, ગન્ધ, અંગોપાંગ નામ કર્મ, શરીર નામ કર્મ, અગુરુ લઘુ નામ પરાઘાત, ઉપઘાત નામ કર્મ, આતપ નામ કર્મ ઉદ્યોતનામ કર્મ પ્રત્યેક શરીર, સ્થિર અને શુભનામ કર્મ તથા એમની વિપરીત પ્રકૃતિઓ જેમકે સાધારણ શરીર અસ્થિર અને અશુભ નામ કર્મ, આ બધી નામ કર્મની પ્રકૃતિઓ પુદ્ગલ વિપાકી છે. ચાર પ્રકારનું આયુષ્ય કર્મ ભવ-વિપાકી છે. આનુપૂર્વી પ્રકૃતિ ક્ષેત્ર વિપાકી છે અને શેષ બધી પ્રકૃતિઓ જીવ વિપાકી છે. ॥૧-૩॥

અથ કથં તાવત્-અન્યથા કર્મબન્ધઃ, તદન્યથા ફલવિપાકરૂપો રસો વિપચ્યતે' इति । चेत् ? अत्रोच्यते-जीवः कर्मफलविपाकमनुभवन् कर्महेतुकमेवाऽनाभोगपूर्वकं कर्म संक्रमं करोति, तथाचोत्पादव्ययध्रौव्यत्वात् परिणामी खल्वाना- त्मा ज्ञानावरणादिकस्य कर्मणः फलविपाकं भुञ्जानो वेद्यमानः सन् मूलकर्म प्रकृतिभिन्नोत्तरप्रकृतीनां संक्रमं करोति यथा-ज्ञानावरणरूपमूलप्रकृतेः पञ्चविधासु मतिज्ञानावरणश्रुतज्ञानावरणरूपोत्तरप्रकृतिषु परस्परं संक्रमो भवति । तत्रोत्तरप्रकृतीनामेवोत्तरप्रकृतिषु संक्रमो बोध्यः यथा-मतिज्ञाना-

પ્રકાર કા આયુર્કર્મ ભવ વિપાકી છે । આનુપૂર્વી પ્રકૃતિ ક્ષેત્ર વિપાકી છે ઓર જોષ સ્વ પ્રકૃતિયાં જીવ વિપાકી છે ॥૧-૩॥

શંકા-કર્મ કા બન્ધ અન્ય રૂપ મેં હો ઓર ઉત્કા ફલ વિપાક અન્ય રૂપ મેં યહ કૈસે હો સકતા છે ?

સમાધાન-જીવ કર્મ ફલ ભોગતા હુઆ અનાભોગ પૂર્વક અર્થાત્ અનજાન મેં હી કર્મ કા સંક્રમણ કર લેતા છે । ઉત્પાદ, વ્યય ઓર ધ્રૌવ્ય સ્વરૂપ હોને કે કારણ પરિણમન શીલ આત્મા જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મો કા ફલ ભોગતા હુઆ ઉનકી ઉત્તર પ્રકૃતિયો મેં ઉલટફેર કર લેતા છે । હસી કો સંક્રમણ કહતે હૈં । યહ પ્રકૃતિસંક્રમણ મૂલ પ્રકૃતિયો કા હોતા, અર્થાત્ એક મૂલ પ્રકૃતિ દૂસરી મૂલ પ્રકૃતિ કે રૂપ મેં નહીં પલટ સકતી, જૈસે જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ કે રૂપ મેં સંક્રાન્ત નહીં હોતી ઓર દર્શનાવરણ કિસી દૂસરી મૂલ પ્રકૃતિ કે રૂપ મેં નહીં પલટતી । એક મૂલ પ્રકૃતિ કા ઉત્તર પ્રકૃતિયો મેં સંક્રમણ હોતા છે । ઉદાહરણાર્થ

શંકા-કર્મનો બન્ધ અન્ય રૂપમાં હોય અને તેનો ફળવિપાક અન્ય રૂપમાં હોય એમ કઈ રીતે હોઈ શકે ?

સમાધાન-જીવ કર્મફળ ભોગવતો થકો. અનાભોગપૂર્વક અર્થાત્ અજાણપણે જ કર્મનું સંક્રમણ કરી લે છે. ઉત્પાદ વ્યય અને ધ્રૌવ્ય સ્વરૂપ હોવાના કારણે પરિણમનશીલ આત્મા જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોનું ફળ ભોગવતો થકો તેમની ઉત્તરપ્રકૃતિઓમાં ફેરવદલી કરી લે છે. અને જ સંક્રમણ કહે છે. આ પ્રકૃતિસંક્રમણ મૂળ પ્રકૃતિઓનું થતું નથી અર્થાત્ એક મૂળપ્રકૃતિ બીજી મૂળપ્રકૃતિના રૂપમાં બદલાઈ શકતી નથી, જેમકે જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણના રૂપમાં સંક્રાન્ત થતી નથી અને દર્શનાવરણ કોઈ બીજી મૂળપ્રકૃતિના રૂપમાં ફેરવાતી નથી. એક મૂળપ્રકૃતિનું ઉત્તરપ્રકૃતિમાં સંક્રમણ થાય છે. હા. ત. મતિ જ્ઞાના-

वरणं श्रुतज्ञानावरणं संक्रामति, श्रुतज्ञानावरणं वा मतिज्ञानावरणं संक्रामति । एवं-श्रुतज्ञानावरणस्य खलु अवधिज्ञानावरणेन संक्रमो भवति, एवं-तस्यापि मनः पर्ययज्ञानावरणादिषु-अपि संक्रमो बोध्यः । किन्तु-मतिज्ञानावरणादिकं पञ्च-विधं ज्ञानावरणं न दर्शनावरणमूलप्रकृतेरूप चक्षुर्दर्शनावरणादिषु संक्रामति, नाऽपि मूलप्रकृतिषु संक्रमो भवति, नहि-ज्ञानावरणं दर्शनावरणे संक्रामति, नापि-दर्शनावरणं ज्ञानावरणे वा संक्रामति' इत्येव मन्यत्रापि योजनीयम् । बन्ध विपाकनिमित्तानां भिन्नजातीयकत्वात् यथा-ज्ञानावरणस्य बन्धनिमित्तं प्रदोष-

मति ज्ञानावरण श्रुतज्ञानावरण आदि ज्ञानावरण की पांच उत्तर प्रकृतियां हैं, उनमें परस्पर संक्रमण हो सकता है मति ज्ञानावरण पलट-कर श्रुतज्ञानावरण रूप में परिणत हो सकता है और श्रुतज्ञानावरण मति ज्ञानावरण के रूप में संक्रान्त हो सकता है । श्रुतज्ञानावरण प्रकृति अवधि ज्ञानावरण के रूप में अवधि ज्ञानावरण मनःपर्यव ज्ञानावरण के रूप में और मनःपर्यव ज्ञानावरण केवल ज्ञानावरण के रूप में संक्रान्त हो सकती है । इसी प्रकार अन्यान्य कर्मों की उत्तर प्रकृतियां भी परस्पर बदल जाती हैं । इस नियम में दो अपवाद हैं । प्रथम यह की कर्म की प्रकृतियों में संक्रमण नहीं होता, जैसे देवायु प्रकृति मनुष्यायु के रूप में या मनुष्यायु बदलकर अन्य किसी आयु के रूप में नहीं बदलती । दूसरा अपवाद यह है कि दर्शन मोहनीय और चारित्र्य मोहनीय प्रकृतियों में भी परस्पर संक्रमण नहीं होता है । दर्शन मोहनीय चारित्र्य मोहनीय के रूप में और चारित्र्य मोहनीय दर्शन मोहनीय के रूप में नहीं पलटती ।

परञ्च श्रुतज्ञानावरण आदि ज्ञानावरणानी पांच उत्तरप्रकृतिओ छे तेमनामां परस्पर संक्रमण थछ शक्ये छे. मतिज्ञानावरण गदलाछने श्रुतज्ञानावरण रूपमां परिणत थछ शक्ये छे अने श्रुतज्ञानावरण मतिज्ञानावरणना रूपमां संक्रान्त थछ शक्ये छे. श्रुतज्ञानावरणप्रकृति अवधिज्ञानावरणना रूपमां, अवधिज्ञानावरण मनःपर्यव-ज्ञानावरणना रूपमां अने मनःपर्यवज्ञानावरण केवलज्ञानावरणना रूपमां संक्रान्त थछ शक्ये छे. ओवीज रीते अन्यान्य कर्मानी उत्तर प्रकृतिओ पञ्च परस्पर सम्प्रतिपक्ष प्रकृति साथे गदलाछ ज्ञाय छे. आ नियममां ओ अपवाद छे प्रथम ओ छे के आयुष्य कर्मानी प्रकृतिओमां संरक्षण थतुं नथी. जेमके देवायु-प्रकृति मनुष्यायुना रूपमां अथवा मनुष्यायु गदलाछने अन्य केछ आयुष्यना रूपमां पलटाती नथी. ओजो अपवाद ओ छे के दर्शन मोहनीय अने चारित्र्य-

નિહનવાદિ, અસદ્વેદનીયાદેદુઃસ્વશોકાદિ, જ્ઞાનાવરણદર્શનાવરણયોર્બન્ધનિમિત્ત-
 સ્યાઽભિન્નત્વેઽપિ સદાશયવિશેષાદ્ મિચતે એવ, વિશેષગ્રાહિ જ્ઞાનાવરણં વિશેષોપ-
 યોગમન્તર્ધત્તે, દર્શનાવરણન્તુ-સામાન્યમાત્રગ્રાહિત્વાત્ સામાન્યોપયોગમેવાઽન્તર્ધત્તે,
 इत्येवं बन्धनिमित्तभेदात् विपाकनिमित्तभेदाच्च भिन्नासु ज्ञानावરणाद्यष्टविध-
 मूलप्रकृतिषु परस्परं संक्रमो न भवति । एवमुत्तरप्रकृतिष्वपि सजातीययोरपि
 दर्शनचारित्रमोहनीययोः परस्परं संक्रमो न भवति, नहि-दर्शनमोहचारित्रमोहे
 संक्रमति नाऽपि-चारित्रमोहो दर्शनमोहे संक्रामति । एवं-सम्यक्त्वं सम्यग्-
 मिथ्यात्वे न संक्रामति, किन्तु-पूर्वं मसत्यपि बन्धे सम्यङ्मिथ्यात्वस्य सम्यक्त्वे
 संक्रमो भवत्येव । एवं-नारक, तिर्यङ्, મનુષ્ય, દેવ ભેદસ્વાઽઽયુક્તસ્ય પરસ્પરં
 સંક્રમો ભવતિ । એતેષા મપિ પ્રત્યેક જાત્યન્તરાઽનુબન્ધવિપાકનિમિત્તાનાં
 વિભિન્નજાતીયકત્વાત્ સ સ્વલ્લ-કર્મફલવિપાકો ગતિ નામાઘનુસારેણ

यह पहले ही कहा जा चुका है कि मूल प्रकृतियों में संक्रमण नहीं होता है । इसका कारण यह है कि उनके बन्ध के कारणों में मौलिक भेद होता है, जैसे ज्ञानावरण कर्म के बन्ध के कारण प्रदोष और निह्नव आदि हैं, जब कि आसाता वेदनीय के बन्ध के कारण दुःस्व-
 शोक आदि हैं

તાત્પર્યં યહ હૈ કિ કર્મ કા ફલ ભોગ લેને કે પશ્ચાત્ વહ કર્મ આત્મપ્રદેશોં સે પૃથક્ક્ર હો જાતા હૈ, અકર્મ કે રૂપ મેં પરિણત હો જાતા હૈ, ઉસે વિપાકજા નિર્જરા કહલે હૈં । હસ પ્રકાર સંસાર રૂપી મહા સમુદ્ર મેં બહતે હુએ આત્મા કે જો શુભ-અશુભ કર્મ વિપાક કો પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં-ઉદયાવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ હોકર ઓર અપના યથાયોગ્ય

મોહનીય પ્રકૃતિઓમાં પણ પરસ્પર સંક્રમણ થતું નથી. દર્શનમોહનીય ચારિત્ર-
 મોહનીયના રૂપમાં અને ચારિત્રમોહનીય દર્શનમોહનીયના રૂપમાં બદલાતી નથી.

એ તો પહેલાજ કહેવામાં આવી ગયું છે કે મૂળપ્રકૃતિઓમાં સંક્રમણ થતું નથી એનું કારણ એ છે કે તેમના બન્ધના કારણોમાં મૌલિક ભેદ હોય છે જેમકે જ્ઞાનાવરણ કર્મના બન્ધના કારણો પ્રદોષ અને નિહનવ આદિ છે, જ્યાં કે આસાતા વેદનીયના બંધના કારણ દુઃખ-શોક આદિ છે. તાત્પર્ય એ છે કે કર્મનું ફળ ભોગવી લીધા બાદ તે કર્મ આત્મપ્રદેશોથી પૃથક્ થઈ જાય છે. અકર્મના રૂપમાં પરિણત થઈ જાય છે, તેને વિપાકજા નિર્જરા કહે છે. આ રીતે સંસાર રૂપી મહા સમુદ્રમાં વહેતા આત્માના જે શુભ અશુભકર્મ વિપાકને પ્રાપ્ત થઈ જાય છે ઉદયાવલિકામાં પ્રવિષ્ટ થઈને અને પોતાનું યથાયોગ્ય ફળ

भवति यथा नामविषयते इति भावः तस्मात् खलु विपाकलक्षणा दनुभावाद्
ज्ञानावरणादिकर्मणां या-निर्जरा निर्जरणम् आत्मप्रदेशेभ्यः परिशटनं क्षयः कर्म-
परिणति विनाशोभवति सा विपाकजा निर्जरा व्यपदिश्यते । तथा च-संसारमहार्णवे
परिप्लवमानस्याऽऽत्मनः शुभाशुभकर्मणो विपाककालप्राप्तस्य यथायथमुदया
वलिकाप्रविष्टस्य फलोपभोगादुपजातस्थितिक्षये सति या निवृत्तिर्भवति
सा विपाकजा खलु निर्जरा-इति फलितम् । यत्पुनः कर्माऽप्राप्तकालविपाकमौप-
क्रमिक क्रियाविशेषसामर्थ्यादनुदीर्णं सपदि बलादुदीर्योदयावलिकामनुप्रवेश्या-
ऽऽम्रपनसतिन्दुकादि फलपाकवद् वेद्यमानं सत् निर्जोर्णं भवति, स खलु
-अविपाकजा निर्जरा उच्यते ॥२॥

मूलम्-तवो विवागोय निज्जराहेऊणो ॥३॥

छाया-‘तपो विपाकश्च निर्जराहेतवः ॥३॥

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वं तावद् द्विविधा निर्जरा भवति, विपाकजाऽविपाकजा-
चेति प्ररूपितम्, सम्प्रति-तस्याः खलु कर्मक्षयलक्षणाया निर्जराया हेतु प्रति-

फल देकर स्थिति का क्षय होने पर आत्मा से अलग हो जाते हैं,
वह विपाकजा निर्जरा है ।

जो कर्म स्थिति पूर्ण होने से पूर्व ही, तपश्चरण आदि के द्वारा
उदयावलिका में ले आया जाता है और आम्र, पनस तिन्दुक आदि
फलों के शीघ्र पाक की तरह भोग लिया जाता है, उसकी निर्जरा को
अविपाकजा निर्जरा कहते हैं ॥२॥

‘तवो विवागोय’ इत्यादि सू० ३

सૂत्रार्थ-—तप और विपाक निर्जरा के कारण हैं ॥३॥

तत्त्वार्थदीपिका-પહેલે કહા ગયા છે કે વિપાકજા ઓર અવિપાકજા

પ્રદાન કરીને સ્થિતિને ક્ષય થવાથી આત્માંથી અલગ થઈ જાય છે, તે વિપાકજા
નિર્જરા કહેવાય છે.

જે કર્મ સ્થિતિ પૂર્ણ થતાં અગાઉ જ તપશ્ચરણ આદિ દ્વારા ઉદયાવલિકામાં
લાવવામાં આવે છે અને આમ્રફળ, ફળુસ સીતાફળ વગેરે ફળોના શીઘ્ર
પરિપક્વતાની જેમ, ભોગવી લેવામાં આવે છે, તેવી નિર્જરાને અવિપાકજા
નિર્જરા કહે છે. ॥ ૨ ॥

‘તવો વિવાગોય નિજ્જરાહેऊणો’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-— તપ અને વિપાક નિર્જરાના કારણ છે ॥ ૩ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલા કહેવામાં આવ્યું કે વિપાકજા અને અવિપાકજા

પાદયિતુમાહ-‘ત્વો વિવાગોય નિજ્જગાહેઝ્ઞો’ ઇતિ । તપઃ શરીરેન્દ્રિય તપન રૂપં વાહ્યમનશનાદિકમ્, આભ્યન્તરં પ્રાયશ્ચિત્તાદિકમ્ દ્વિવિધં તપઃ । વિપાકમ્-ફલભોગરૂપો નિર્જરાહેતુઃ કર્મક્ષયલક્ષણનિર્જરાયાઃ વર્તેતે, તથા ચાઽનશનાદિ ષડ્વિધેન વાહ્યેન તપસ્યા, પ્રાયશ્ચિત્તાદિના ચાઽભ્યન્તરેણ તપસ્યા શરીરેન્દ્રિયાદિ સ્વન્તાપનાત્ કર્મનિર્દહનાચ્ચ જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મક્ષય લક્ષણા નિર્જરા ભવતિ । એવં-વિપાકેન ચ શુભાશુભકર્મફલસુખદુઃસ્વાનુભવ-લક્ષણેન પૂર્વોક્તસ્વરૂપેણ કર્મક્ષયલક્ષણા નિર્જરા ભવતી । અતएव-વાહ્યાભ્યન્તર-તપઃ કૃતક્રમેણઃ સુખદુઃસ્વરૂપફલભોગવિપાકમ્ દેશતો નિર્જરાહેતુઃ ઇતિ । ૩ ।

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિઃ-પૂર્વં તાવત્-કર્મક્ષયલક્ષણનિર્જરાયાઃ સ્વરૂપં-ભેદશ્ચ પ્રરૂપિતઃ, સમ્પ્રાત્-તસ્યાઃ કારણં પ્રતિપાદયિતુમાહ-‘ત્વો’ ઇત્યાદિ । તપઃ શરીરેન્દ્રિયસ્વન્તાપનરૂપં-કર્મનિર્દહનરૂપમ્ વાહ્યમાભ્યન્તરશ્ચાઽનશનાદિષડ્વિધં

કે ભેદ સે નિર્જરા દો પ્રકાર કી હૈ, અથ उसके कारणों का प्ररूपण करते हैं- शरीर और इन्द्रियाँ को तपाना तप है । अनशनादि बाह्य और प्रायश्चित्त आदि आभ्यन्तर तप हैं । यों तप के दो भेद हैं । कर्मफल का भोग विपाक कहलाता है । ये दोनों निजरा के कारण हैं । इस प्रकार अनशन आदि बाह्य और प्रायश्चित्त आदि आभ्यन्तर तप से, निर्जरा होती है । इसी प्रकार शुभाशुभ कर्मों का सुख-दुःख रूप फल के उपभोग रूप विपाक से ओ निर्जरा होती है ॥ ३ ॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ-પહલે કર્મક્ષય રૂપ નિર્જરા કે સ્વરૂપ કા ઓર ભેદોં કા નિરૂપણ કિયા ગયા હૈ, અથ उसके कारणों का प्ररूपण करते हैं--

ના લેદથી નિર્જરા બે પ્રકારની છે, હવે તેના કારણોની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ । શરીર અને ઇન્દ્રિયોને તપાવવા, એ તપ છે. અનશનાદિ બાહ્ય અને પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ આભ્યન્તર તપ છે. તપના આમ બે ભેદ છે. કર્મફળનું ભોગવવું વિપાક કહેવાય છે. આ બંને નિર્જરાના કારણ છે. આવી રીતે અનશન આદિ બાહ્ય અને પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ આભ્યન્તર તપથી નિર્જરા થાય છે એવી જ રીતે શુભાશુભ કર્મોની સુખ દુઃખ રૂપ ફળના ઉપભોગ રૂપ વિપાકથી પણ નિર્જરા થાય છે. ॥ ૩ ॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ-પહેલા કર્મક્ષય રૂપ નિર્જરાના સ્વરૂપનું અને ભેદોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે તેના કારણોનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ । શરીર અને ઇન્દ્રિયોને તપાવવા રૂપ તપ બે પ્રકારના છે । અનશન આદિ

प्रायश्चित्तादिष्वद्विधश्च तपः विपावश्च शुभाशुभकर्मफलभोगरूपो रसोऽनु-
भावात्मको निर्जराहेतुः देशतः कर्मक्षयलक्षणाया निर्जरायाः कारणं वर्तते ।
एवं-कृतकर्मफलभोगरूपविपाकेन चोपर्युक्तस्वरूपा निर्जरा भवति अनशन
प्रायश्चित्तादितपः चिरसञ्चितकर्मक्षयरूपां निर्जरां करोति शुभाशुभकृतकर्म-
फलभोगरूपः सुखदुःखानुभवात्मको विपाकश्च तथाविध कर्मक्षयरूपां निर्जरां
जरयति । अतएव-अनशनप्रायश्चित्तादिकं द्वादशविधं तपः कर्मफलभोगरूपो
विपाकश्च कर्म क्षयलक्षणां निर्जरां प्रतिहेतु भवति । उक्तश्चोत्तराध्ययने ३०
अध्ययने ६ गाथायासु-‘एवं तु संजयस्त्वा विपावकम्मनिरासवे । भवकोटी-
संचियं कम्म तवसा निज्जरिस्सइ’ ॥१॥ एवन्तु संयतस्यापि पापकर्मनिरासवे ।
भवकोटी सञ्चितं कर्म तपसा निर्जीर्यते ॥१॥ इति, उक्तञ्च व्याख्याप्रज्ञप्तौ-

भेद होता है, जैसे ज्ञानावरण कर्म के बन्ध के कारण प्रदोष और
निह्नव आदि हैं, जब की असाता वेदनीय के बंध के कारण दुःख-
शोक आदि हैं

शरीर एवं इन्द्रियों को तपाना रूप तप दो प्रकार का है-अनशन
आदि छह बाह्य तप है और प्रायश्चित्त आदि छह आन्तरिक तप हैं ।
शुभाशुभ कर्मों का फल भोगना विपाक कहलाता है । इन दोनों
कारणों से निर्जरा होती है । इस प्रकार कृत कर्मों के फलभोग रूप
विपाक से कर्मक्षय रूप निर्जरा होती है । अनशन एवं प्रायश्चित्त
आदि पारह प्रकार के तप से भी चिरसंचित कर्मों की निर्जरा होती है-

उत्तराध्ययनसूत्र के अध्ययन ३०, गाथा ६ में कहा है-

‘इस प्रकार संयमशील पुरुष जब पाप कर्मों के आस्त्रव का निरोध
कर देता है तो कोटी कोटी भवों में संचित कर्मों का तपस्या के द्वारा
क्षय कर देता है ॥१॥

छ आहृतप छ अने प्रायश्चित्त आदि छ आन्तरिक तप छे. शुभाशुभ कर्मोनु
इण लोगवतुं विपाक कहेवाय छे. आ अने कारणाथी निर्जरा थाय छे आवी
रीते कृत कर्मोना इणलोग इय विपाकथीकर्मक्षय इय निर्जरा थाय छे
अनशन अने प्रायश्चित्त आदि पार प्रकारना तपथी यणु चिर संचित
कर्मोनी निर्जरा थाय छे.

उत्तराध्यायन सूत्रना अध्ययन ३०, गाथा ६ मां कहुं छे आ रीते संयमशील
पुरुष जयाये पापकर्मोना आस्त्रवनो निरोध करी दे छे तो कोटी-कोटी भवो
मां संचित कर्मोना तपस्या द्वारा क्षय करी दे छे ॥ १ ॥

‘કમ્મા ઉદીરિયા વેદધાય નિઝિજ્ઞણા’ ઇતિ કર્માણિ-ઉદીરિતાનિ, વેદિતા-નિચ નિર્જીર્ણાનિ ભવન્તિ ઇતિ ॥૩॥

મૂલમ્—તવો દુવિહો બાહિરઽંતરભેયા ॥૪॥

છાયા—તપો દ્વિવિધમ્ વાહ્યમાભ્યન્તરભેદાત્ ॥૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ નિજરાયાસ્તપો-વિપાકથ કારણમિતિ પ્રતિપાદિતમ્ સમ્પ્રતમ્ તપસો દ્વૈવિધ્યં પ્રતિપાદયિતુમાહ-‘તવો દુવિહો’ ઇત્યાદિ । તપો દ્વિવિધં ભવતિ વાહ્યમાભ્યન્તરંચ, તત્ર-વાહ્યમ્ અનશનાદિકમ્ આભ્યન્તરં પ્રાયશ્ચિત્તાદિક મિતિ દ્વિવિધં તપઃ । તત્ર વાહ્યન્તપોઽનશનાદિ ભેદાત્પદ્ધિવિધમ્, એવ-માભ્યન્તર તપોઽપિ પ્રાયશ્ચિત્તાદિભેદાત્પદ્ધિવિધમિતિ દ્વાદશવિધં તપો ભવતિ । દ્વાદશવિધ-સ્યાઽસ્ય તપસઃ સવિસ્તરં ભેદપ્રભેદપ્રતિપાદિકા વ્યાખ્યા પૂર્વં સપ્તમાઽધ્યાયે-ગતાઽતસ્તત્રાઽવલોકનીયા ॥૪॥

વ્યાખ્યા પ્રજ્ઞપ્તિ મેં મી કહા હૈ-ઉદય મેં આઈ કર્મ જબ મોગ લિયે જાતે હૈં તો ઉનકી નિર્જરા હો જાતી હૈ ॥૩॥

‘તવો દુવિહો બાહિરઽંતરભેયા’

સૂત્રાર્થ—તપ દો પ્રકાર કા હૈ-વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર ॥૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વ મેં કહા ગયા હૈ કિ તપ ઓર વિપાક સે નિર્જરા હોતી હૈ, અતએવ યહાં તપ કે દો ભેદોં કા નિરૂપણ કરતે હૈ

વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર ભેદ સે તપ દો પ્રકાર કા હૈ । વાહ્ય તપ અનશન આદિ કે ભેદ સે છહ પ્રકાર કા હૈ । આભ્યન્તર તપ પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ હૈ । ઉસકે મી છ ભેદ હૈ । હસ પ્રકાર તપ કે ચારહ ભેદ હોતે હૈ । ચારહોં પ્રકાર કા તપ કા વિસ્તૃત વર્ણન ભેદ પ્રભેદ સહિત સાતવેં અધ્યાયમેં કિયા જા ચુકા હૈ । વહાં દેખ લેના ચાહિયે ॥૪॥

વ્યાખ્યાનપ્રજ્ઞપ્તિમાં પણ કહ્યું છે-ઉદયમાં આવેલા કર્મ બ્યારે લોગવી લેવા માં આવે છે ત્યારે તેમની નિર્જરા થઈ જાય છે ॥ ૩ ॥

‘તવો દુવિહો બાહિરઽંતરભેયા’-ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—તપ બે પ્રકારના છે બાહ્ય અને આભ્યન્તર ॥ ૪ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—અગાઉ કહેવામાં આવ્યું છે કે તપ અને વિપાકથી નિર્જરા થાય છે, આથી અહીં તપના બે ભેદોનું નિરૂપણ કરીએ છીએ

બાહ્ય અને આભ્યન્તરના ભેદથી તપ બે પ્રકારના છે બાહ્યતપ અનશન આદિના ભેદથી છ પ્રકારના છે આભ્યન્તર તપ પ્રાયશ્ચિત્ત આદિ છે તેના પણ છ ભેદ છે. આવી રીતે તપના બાર ભેદ થાય છે. બારે પ્રકારના તપનું સવિસ્તર વર્ણન ભેદ પ્રભેદસહિત સાતમાં અધ્યાયમાં કરવામાં આવ્યું છે ત્યાં જોઈ લેવા ભલામણ છે ॥૪॥

मूलम्—तत्थबाहिरए अणसणतवे दुविहे, इत्तरिए—जाव कहिए य ॥५॥

छाया—तत्र बाह्यम्—अनशनतपो द्विविधम्, इत्वरिकं—यावत्कथिकञ्च ॥५॥
तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं तपसो बाह्याभ्यन्तरभेदेन द्वादशविधस्यापि निर्जरा-
हेतुत्वं प्रतिपादितम्, सम्प्रति—षड्विधबाह्यतपसः प्रथमोपात्तस्याऽनशनरूपस्य
द्वैविध्यं प्रतिपादयितुमाह ‘तत्थ बाहिरए’ इत्यादि । तत्र—पूर्वोक्त षड्विध बाह्य
तपसि बाह्यम्—बहिर्भवं खलु अनशनतपो द्विविधं भवति तद्यथा—इत्वरिकं, याव-
त्कथिकञ्च । तत्र अल्पकालिकम् इत्वरिकं नामाऽनशन तपः । यावज्जीव पर्यन्त
मनशन तपस्तु—यावत्कथिक मुच्यते, तत्र—एति गच्छति तच्छीलम् इत्वरिकम्
अल्पकालिक मनशन मुच्यते, गमनशीलत्वात् । यावत्कथिकन्तु—यावद् यदवधि-
र्मनुष्योऽयम् इति मुख्य व्यवहाररूपा कथा प्रचलति, तत्र भवं यावत्कथिकं जीवनं

‘तत्थ बाहिरए अणसणतवे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—बाह्यतप अनशन के भेद हैं—इत्वरिक और यावत्कथिक ॥५॥

तत्त्वार्थदीपिका—बारह प्रकार का तप निर्जरा के हेतु है, यह पहले
कहा गया है, अब प्रथम बाह्य तप अनशन के दो भेदों का कथन
करते हैं—

पूर्वोक्त छह प्रकार के बाह्य तपों में से अनशन के दो भेद हैं—
इत्वरिक और यावत्कथिक । थोड़े समय के लिए जो अनशन किया
जाता है वह इत्वरिक अनशन कहलाता है और जो अनशन जीवन
पर्यन्त तक के लिए किया जाता है, उसे यावत्कथिक कहते हैं । अल्प-
कालिक अनशन इत्वरिक है और जब तक ‘यह मनुष्य है’ ऐसा
व्यवहार होता रहे अर्थात् जो अनशन जीवन पर्यन्त रहे वह यावत्क-

‘तत्थ बाहिरए अणसणतवे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—बाह्य तप अनशनના ભેદ ઇત્વરિક અને યાવત્કથિક છે. ॥૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—બાર પ્રકારના તપ નિર્જરાના હેતુ છે, એ પહેલાં
કહેવામાં આવ્યું છે, હવે પ્રથમ બાહ્ય તપ, અનશનના બે ભેદોનું કથન કરીએ
છીએ. પૂર્વોક્ત છ પ્રકારના બાહ્ય તપોમાંથી અનશનના બે ભેદ છે ઇત્વરિક
અને યાવત્કથિક. થોડા વખત માટે જે અનશન કરવામાં આવે છે તે ઇત્વ-
રિક અનશન કહેવાય છે અને જે અનશન જીવનપર્યન્ત માટે કરવામાં આવે
છે, તેને યાવત્કથિક કહે છે. અલ્પકાલીન અનશન ઇત્વરિક છે અને જ્યાં
સુધી ‘આ મનુષ્ય છે’ એવો વ્યવહાર થતો રહે અર્થાત્ જે અનશન

પર્યન્ત મનશનં ભવતિ । તથા ચ-અલ્પકાલિકત્વાદ્ ઇત્વરિકમ્, જીવનપર્યન્ત વ્યાપિત્વાદ્ યાવત્કથિક મુચ્યતે ॥૫॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ:—પૂર્વ તપસો નિર્જરાહેતુત્વં પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પ્રતિ-
અનશનાદિકસ્ય ષડ્વિધસ્ય વાહ્યતપસઃ પ્રથમોપાત્તસ્યાઽનશનતપસો દ્વૈવિધ્યં
પ્રતિપાદયિતુ માહ-‘તત્થ બાહિરેણ અણસણતવે દુવિહે, ઇત્તરિણ-જાવ-
કહિણ ય’ ઇતિ । તત્ર-દ્વાદશવિધેષુ તપઃસુ વાહ્યમ્ વહિર્મવમ્ અનશનરૂપં
પ્રથમતપો દ્વિવિધં ભવતિ, ઇત્વરિકં-યાવત્કથિકશ્ચ । તત્રાઽલ્પ કાલિક મનશન-
તપ ઇત્વરિકં વ્યપદિશ્યતે, એતિ-ગચ્છિતિ તચ્છીલન્ ઇત્વરમ્ ‘ઇણ નશ જિસ-
તિંમ્મયઃકરપ્પ’ ઇતિ તાચ્છીલ્યે વ્વરપ્પ પ્રત્યયઃ ઇત્વરમેવ ઇત્વરિકમિતિવ્યુત્પત્તેઃ ।
તથા-શ્રીમહાવીર સ્વામિનોઽન્તિમતીર્થંકરસ્ય તીર્થે નમસ્કાર સહિત મક્તાદિ
પ્રત્યાખ્યાનકાલાદારમ્બ્ય ચતુર્થમક્તપ્પઠમક્તાદિક્રમેણ પ્પમાસ પર્યન્ત મનશન તપો
થિક કહલાતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અલ્પકાલિક હોને સે ઇત્વરિક ઓર
જીવન વ્યાપી હોને સે યાવત્કથિક અનશન કહલાતા હૈ ॥૫॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલે બતલાયા ગયા હૈ કિ તપ નિર્જરા
કા કારણ હૈ । અવ અનશન આદિ છહ પ્રકાર કે વાહ્ય તપોં મેં પ્રથમ
ગિનાય અનશન તપ કે દો ભેદોં કા કથન કરતે હૈ—

બારહ પ્રકાર કે તપોં મેં અનશન નામક પ્રથમ તપ કે દો ભેદ હૈ—
ઇત્વરિક ઓર યાવત્કથિક । જો અનશન મર્યાદિત કાલ કે લિપ્
કિયા જાતા હૈ વહ ઇત્વરિક કહલાતા હૈ ।

અન્તિમ તીર્થંકર શ્રી મહાવીર સ્વામી કે તીર્થ મેં નવકારસી કે
પ્રત્યાખ્યાન કાલ સે આરંભ કરકે ચતુર્થમક્ત, ષ્ઠમક્ત આદિ કે
ક્રમ સે છહ માસ તક કા અનશન તપ હોતા હૈ । આદિ તીર્થંકર શ્રી

જીવનપર્યન્ત રહે તે યાવત્કથિક કહેવાય છે. આ રીતે અલ્પકાલિન હોવાથી
ઇત્વરિક અને જીવન વ્યાપી હોવાથી યાવત્કથિક અનશન કહેવાય છે. ૫ ।

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલા બતાવવામાં આવ્યું છે કે તપ નિર્જરાનું કારણ
છે. હવે અનશન આદિ છ પ્રકારના બાહ્યતપોમાં પ્રથમ ગણાવેલા અનશન
તપના બે ભેદોનું કથન કરીએ છીએ—

બાર પ્રકારના તપોમાં અનશન નામક પ્રથમ તપના બે ભેદ છે—
ઇત્વરિક અને યાવત્કથિક જે અનશન તપ મર્યાદિત કાળ સુધી કરવામાં આવે
છે તે ઇત્વરિક કહેવાય છે. અન્તિમ તીર્થંકર શ્રી. મહાવીરસ્વામીના શાસન
કાળમાં નવકારસીના પ્રત્યાખ્યાન કાળથી આરંભ કરીને ચતુર્થભક્ત ષ્ઠભક્ત
આદિના કેમથી છ માસ સુધીનું અનશન તપ થતું હતું. આદિતીર્થંકર

भवति । श्रीनाभेयतीर्थङ्करस्याऽऽदिनाथस्य तीर्थे च नमस्कारसहित भक्तादि प्रत्याख्यान कालादारभ्य चतुर्थ भक्तादि क्रमेण संवत्सरपर्यन्त मनशनतपो भवति, तदन्येषां द्वाविंशति तीर्थकराणां तीर्थेतु नमस्कारसहित भक्तादि प्रत्याख्याना-
दारभ्य चतुर्थभक्तादि क्रमेणाऽष्टमासपर्यन्तम् अनशनतपो विहितमागमे यावत्कथि-
कन्तु-यावद् यदवधिर्मनुष्योऽयम् इति मुख्य व्यवहाररूपा कथा प्रचलति तत्र भवं
यावत्कथिकम् इति जीवनपर्यन्तमनशन तपो व्यपदिश्यते उक्तञ्चौपपातिकसूत्रे-
'से किं तं अणसणे ? अणसणे दुविहे पणत्ते, तं जहा-इत्तरिएय,
आवकहिए य' इति । अथ किन्तु अनशनम् ? अनशनं द्विविधं प्रपन्नम्,
तद्यथा-इत्वरिकंच, यावत्कथिकञ्च, इति । ५।

मूलम्-इत्तरिए अणेगविहे, चउत्थमत्त छट्ठभत्ताइ भेयओ ॥६॥

छाંયા-‘इत्वरिकम्-अनेकविधम्, चतुर्थभक्त-षष्ठभक्तादि भेदतः

ऋषभदेव के शासन में नवकारसी प्रत्याख्यान काल से आरंभ करके चतुर्थभक्त, षष्ठभक्त आदि के क्रम से एक वर्ष तक का अनशन तप होता था । मध्य के बाईस तीर्थ'करो' के काल में नवकारसी के प्रत्याख्यान से लेकर चतुर्थभक्त आदि के क्रम से आठ मास तक के अनशन तप का विधान था । जीवन पर्यन्त के लिए जो अनशन किया जाता है, वह यावत्कथिक अनशन कहलाता है ।

औपपातिक सूत्र में कहा है—अनशन तप कितने प्रकार का है ?

(उत्तर)—अनशन तप दो प्रकार का कहा गया है, यथा-इत्वरिक और यावत्कथिक ॥५॥

श्रीऋषभदेवના શાસનમાં નવકારસી વ્યાખ્યાન કાળથી આરંભ કરીને ચતુર્થભક્ત, ષષ્ઠભક્ત વિગેરેના ક્રમથી એક વર્ષ સુધીનું અનશન તપ થાય છે. મધ્યના બાવીસ તીર્થકરોના સમયમાં નવકારસીના પ્રત્યાખ્યાનથી લઈને ચતુર્થભક્ત આદિના ક્રમથી આઠમાસ સુધીના અનશન તપનો ઉલ્લેખ જોવા મળે છે. જીવનપર્યન્ત માટે જે અનશન કરવામાં આવે છે તે યાવત્કથિક અનશન કહેવાય છે.

औपपातिकसूत्रમાં કહ્યું છે—અનશન તપ કેટલા પ્રકારના છે ?-ઉત્તર-અનશન તપ બે પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે-જેવાકે-ઇત્વરિક અને યાવત્કથિક. ॥૫॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વે તાવદ્-વાહ્યપદ્ધતિ તપઃસુ-અનશન નામક પ્રથમતપસો દ્વિધિય સુક્તમ્, તત્ર-પ્રથમોપાત્તસ્યાઽનશનતપસશ્ચતુર્થમક્તાદિ ભેદેનાઽનેક વિધત્વં પ્રતિપાદયિતુમાહ-‘હત્તરિણ અણેગવિહે’ इत्वरिकं નામાઽલ્પકાલિકમ્ અનશનતપોઽનેકવિધમ્ પ્રવ્રણ્તમ્, તથથા-ચતુર્થમક્ત પઠમક્તાદિ ભેદતઃ, ચતુર્થ મક્તમ્ ૧ પઠમક્તમ્ ૨ આદિના-અષ્ટમમક્તમ્ ૩ દશમમક્તમ્ ૪ દ્વાદશમક્તમ્ ૫ ચતુર્દશમક્તમ્ ૬ ષોડશ મક્તમ્ ૭ અર્ધમાસિકમક્તમ્ ૮ માસિકમક્તમ્ ૯ દ્વિમાસિકમક્તમ્ ૧૦ ત્રિમાસિકમક્તમ્ ૧૧ ચાતુર્માસિકમક્તમ્ ૧૨ પંચમાસિક-મક્તમ્ ૧૩ ષાષ્ઠમાસિકમક્તમ્ ૧૪ ચેતિ । એવ મષ્ટમાસપર્યન્તં-વર્ષ પર્યન્તશ્ચોન્નેયમ્ ।

‘હત્તરિણ અણેગવિહે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ-इत्वरिक તપ ઉપવાસ વેલા આદિ કે ભેદ સે અનેક પ્રકાર કા હૈ ॥૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલે છહ પ્રકાર કે વાહ્ય તપશ્ચરણો મેં સે અનશન નામક પ્રથમ તપ કે દો ભેદ કહે ગણ, અથ પ્રથમ ભેદ इत्वरिक તપ કે ચતુર્થમક્ત આદિ અનેક ભેદોં કા નિરૂપણ કરતે હૈ-

इत्वरिक अर्थात् अल्पकालिक अनशन तप અનેક પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ, જૈસે-ચતુર્થમક્ત, પઠમક્ત, અષ્ટમમક્ત, દશમમક્ત, દ્વાદશ-મક્ત, ષોડશમક્ત, અર્ધમાસિકમક્ત, માસિકમક્ત, દ્વિમાસિકમક્ત, ત્રિમાસિકમક્ત, ચાતુર્માસિકમક્ત, પંચમાસિકમક્ત, ષાષ્ઠમાસિકમક્ત, હિસી પ્રકાર અષ્ટમાસમક્ત સે લેકર વર્ષ પર્યન્ત કા અનશન તપ સમજા હેના ચાહિયે । હનમેં એક ઉપવાસ ચતુર્થમક્ત કહલાતા હૈ, લગાતાર

‘હત્તરિણ અણેગવિહે’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ-इत्वरिक તપ ઉપવાસ છઠ આદિના લેદથી અનેક પ્રકારનું છે. ૬ તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલા છ પ્રકારના વાહ્ય તપશ્ચરણોમાંથી અનશન નામક પ્રથમ તપના બે લેદ કહેવામાં આવ્યા હવે પ્રથમ લેદ इत्वरिक તપના ચતુર્થ-મક્ત આદિ અનેક લેદોનું નિરૂપણ કરીએ છીએ-

इत्वरिक अर्थात् अल्पकालिक अनशन तप અનેક પ્રકારના કહેવામાં આવ્યા છે જેમકે-ચતુર્થમક્ત, પઠમક્ત, અષ્ટમમક્ત દશમમક્ત દ્વાદશમક્ત, ચતુર્દશમક્ત ષોડશમક્ત અર્ધ માસિકમક્ત મસિકમક્ત, દ્વિમાસિકમક્ત ત્રિમા-સિકમક્ત ચાતુર્માસિકમક્ત, પંચમાસિકમક્ત, ષાષ્ઠમાસિકમક્ત એવી જ રીતે અષ્ટમાસિકમક્તથી લઈને વર્ષ પર્યન્તનું અનશન તપ પણ સમજવું, આમાં એક ઉપવાસ ચતુર્થમક્ત કહેવાય છે, લગાતાર બે ઉપવાસને પઠમમક્ત કહે

તત્ર-एकोपवासरूपं चतुर्थभक्तम् निरन्तरदिनद्वयोपवासरूपं षष्ठभक्तम्, निरन्तरदिन
त्रयोपवासरूप मष्टमभक्तम् । एवमग्रेऽपि स्वयं सूहनीयम् ॥६॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વ તાવત્-પથમોપાત્તસ્યાડનશનતપસ ઇત્વરિક
યાવત્કથિક ભેદેન દ્વૈવિધ્યમુક્તમ્, સમ્પતિ-તત્રોપાત્તસ્ય-‘ઇત્વરિક’ નામ્નોડનશન
તપસોડનેકવિધત્વં પ્રતિપાદયિતુમાહ-‘ઇત્તરિણ અણેવિહે, ચઉત્થમત્ત-છટ્ઠ
મત્તાહ મેઘઓ’ ઇતિ । ઇત્વરિકં નામાડ્લપકાલિક મનશન તપઃ સ્વલ્પ-અનેકવિધં
ભવતિ । તથથા-ચતુર્થમક્તાદિ ભેદતઃ, ચતુર્થમક્તમ્ ૧ ષષ્ઠમક્તમ્ ૨ આદિના-
અષ્ટમમક્તમ્-૩ - દશમમક્તમ્-૪ દ્વાદશમક્તમ્ ૫ ચતુર્દશમક્તમ્-૬ ષોડશ-
મક્તમ્-૭ અર્ધમાસિકમક્તમ્-૮ માસિકમક્તમ્-૯ દ્વૈમાસિકમક્તમ્ ૧૦ ત્રૈમાસિક
મક્તમ્-૧૧ ચાતુર્માસિકમક્તમ્-૧૨ પાંચમાસિકમક્તમ્-૧૩ ષાળ્માસિકમક્તમ્
૧૪-ઇત્યાદિરીત્યા સંવત્સરપર્યન્ત મુન્નેયમ્ । તત્ર-ચતુર્થમક્તમ્ ઈકોપવાસરૂપમ્

દો ઉપવાસ કો ષષ્ઠ મક્ત કહતે હૈં । ત્રીન ઉપવાસ કો અષ્ટમમક્ત
કહતે હૈં । આગે હસી પ્રકાર સ્વયં સમજ્ઞ લેના ચાહિણ । ૬।

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—પહેલે અનશન તપ કે દો ભેદ કહે ગુણ-ઇત્વરિક
ઔર-યાવત્કથિક । અથ ઇત્વરિક તપ કે અનેક ભેદોંકા વિધાન કરતે હૈં-

ઇત્વરિક અર્થાત્ અલ્પકાલિક તપ અનેક પ્રકાર કા હૈ-ચતુર્થમક્ત,
ષષ્ઠમક્ત ઔર આદિ શબ્દ સે અષ્ટમમક્ત, દશમમક્ત, દ્વાદશમક્ત,
ચતુર્દશમક્ત, ષોડશમક્ત, અર્ધમાસિકમક્ત, માસિકમક્ત, દ્વૈમા-
સિક મક્ત, ત્રૈમાસિક મક્ત, ચાતુર્માસિકમક્ત, પાંચમાસિકમક્ત,
ષાળ્માસિકમક્ત હસ પ્રકાર ઈક વર્ષ તક કા ઇત્વરિક અનશન
તપ સમજ્ઞ લેના ચાહિણ ।

ચતુર્થમક્ત ઈક ઉપવાસ કહલાતા હૈ । લગાતાર દો દિન કા ઉપ-

છે, ત્રણ ઉપવાસને અષ્ટમમક્ત કહે છે. આગળ પણ આ જ પ્રમાણે-સ્વયં
સમજ્ઞ લેવા જોઈએ. ॥૬॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલા અનશન તપના જે ભેદ કહેવામાં આવ્યા-ઇત્વરિક
અને યાવત્કથિક હવે ઇત્વરિક તપના અનેક ભેદોનું વિધાન કરીએ છીએ-

ઇત્વરિક અર્થાત્ અલ્પકાલિક તપ અનેકપ્રકારના છે ચતુર્થમક્ત ષષ્ઠમક્ત
અને આદિ શબ્દથી અષ્ટમમક્ત દશમમક્ત દ્વાદશમક્ત ચતુર્દશમક્ત, ષોડશ-
મક્ત અર્ધમાસિકમક્ત, માસિકમક્ત, દ્વૈમાસિકમક્ત, ત્રિમાસિકમક્ત, ચતુર્મા-
સિકમક્ત પાંચમાસિકમક્ત ષાળ્માસિકમક્ત-એવી રીતે એક વર્ષ સુધીના
ઇત્વારેક અનશન તપ સમજ્ઞ લેવા જોઈએ.

ચતુર્થમક્ત એક ઉપવાસ કહેવાય છે. લગાતાર જે દિવસના ઉપવાસ

ષષ્ઠમક્તં નિરન્તરદિન દ્વયોપવાસરૂપમ્, અષ્ટમમક્તં નિરન્તર દિન ત્રયોપવાસરૂપમ્, દશમમક્તં નિરન્તરદિન ચતુષ્ટયોપવાસરૂપમ્, દ્વાદશમક્તં નિરન્તરદિન પચ્ચકોપવાસરૂપમ્, ચતુર્દશમક્તં નિરન્તરદિન પટ્કોપવાસરૂપમ્, ષોડશમક્તં નિરન્તર દિન સપ્તકોપવાસરૂપમ્, અર્ધમાસિકમક્તમ્ નિરન્તર પચ્ચદશદિવસોપવાસરૂપમ્, માસિકમક્તમ્ નિરન્તરં ત્રિંશદિવસોપવાસરૂપમ્, દ્વૈમાસિકમક્તં નિરન્તર ષષ્ઠદિવસોપવાસરૂપમ્, ત્રૈમાસિકમક્તં નિરન્તર નવતિદિવસોપવાસરૂપમ્, ચાતુર્માસિકમક્તં નિરન્તર ત્રિંશત્યધિક શતદિવસોપવાસરૂપમ્, પાંચમાસિકમક્તં નિરન્તર પચ્ચાશદધિક શતદિવસોપવાસરૂપમ્, ષાષ્ઠમાસિકમક્તં નિરન્તર ડશીત્યધિકશતદિવસોપવાસરૂપમનશનતપોડવગન્તવ્યમ્ । एवं संवत्सरपर्यन्तं स्वयं मांगमादित ऊहनीयम् । उक्तश्चौपपातिकसूत्रे-३-सूत्रे-‘सेकिं तं हत्तरिए-? हत्तरिए अणेग-

વાસ ષષ્ઠ મક્ત, લગાતાર તોન દિન કા ઉપવાસ અષ્ટમ મક્ત, લગાતાર ચાર દિન કા ઉપવાસ દશમ મક્ત, લગાતાર પાંચ દિન કા ઉપવાસ દ્વાદશ મક્ત, લગાતાર છ હ દિન કા ઉપવાસ ચતુર્દશ મક્ત, લગાતાર સાત દિન કા ઉપવાસ ષોડશ મક્ત, લગાતાર પંદ્રહ દિનોં કા ઉપવાસ અર્ધમાસ મક્ત, ઓર લગાતાર તોસ દિનોં કા ઉપવાસ માસિક મક્ત કહલાતોં હૈ । નિરન્તર સાઠ દિનોં તક કા ઉપવાસ દ્વૈમાસિક મક્ત, લગાતાર નવ્વે દિનોં કા ઉપવાસ ત્રૈમાસિક મક્ત કહલાતા હૈ । લગાતાર એક સૌ વીસ દિનોં કા ઉપવાસ ચાતુર્માસિક મક્ત કહલાતા હૈ, એક સૌ પચાસ દિનોં કા ઉપવાસ પાંચમાસિક મક્ત કહા જાતા હૈ ઓર એકસો અસી દિનોં કા ઉપવાસ ષાષ્ઠમાસિક મક્ત કહલાતા હૈ । હસી પ્રકાર સંવત્સર પર્યન્ત કા તપ આગમ આદિ સે સ્વયં સમજ્ઞ લેના ચાહિં ।

ષષ્ઠલકત, લગાતાર ત્રણ દિવસના ઉપવાસ અષ્ટમલકત, ચાર દિવસના ઉપવાસ દશમલકત, લગાતાર પાંચ દિવસના ઉપવાસ દ્વાદશલકત લગાતાર છ દિવસના ઉપવાસ ચતુર્દશલકત લગાતાર સાત દિવસના ઉપવાસ ષોડશલકત લગાતાર પંદર દિવસના ઉપવાસ અર્ધમાસલકત અને લગાતાર ત્રીસ દિવસોના ઉપવાસ માસિકલકત કહેવાય છે. નિરંતર સાઠ દિવસો સુધિના ઉપવાસ દ્વૈમાસિકલકત, લગાતાર નેવું દિવસો સુધિના ઉપવાસ ત્રૈમાસિકલકત. કહેવાય છે લગાતાર, એકસોવીસ દિવસોના ઉપવાસ ચાતુર્માસિકલકત કહેવાય છે, એકસોપચાસ દિવસોના ઉપવાસ પાંચમાસિકલકત કહેવાય છે અને એકસો એંશી દિવસોના ઉપવાસ ષાષ્ઠમાસિકલકત કહેવાય છે, આવી જ રીતે સંવત્સર પર્યન્તનું તપ આગમ આદિથી સ્વયં સમજ્ઞ લેવું જોઈએ.

વિદે પળળતે તં જહા-ચત્થમ્ભક્તે છટ્થમ્ભક્તે અટ્થમ્ભક્તે-ચારસમ્ભક્તે ચત્થસ-
મ્ભક્તે સોલસમ્ભક્તે અદ્દમાસિયમ્ભક્તે માસિયમ્ભક્તે દોમાસિયમ્ભક્તે-તેમાસિ-
યમ્ભક્તે ચત્થમાસિયમ્ભક્તે પાંચમાસિયમ્ભક્તે છમ્માસિયમ્ભક્તે ઇતિ । અથ કિં તત્
ઇત્વરિકમ્-૩ ઇત્વરિક મનેકવિધં પ્રજ્ઞમ્, તચ્ચથા-ચતુર્થમ્ભક્તમ્ ૧ ષઠમ્ભક્તમ્-૨
અષ્ટમ્ભક્તમ્-૩ દશમ્ભક્તમ્-૪ દ્વાદશમ્ભક્તમ્ ૫ ચતુર્દશમ્ભક્તમ્ ૬ ષોડશમ્ભક્તમ્-૭
અર્ધમાસિકમ્ભક્તમ્ ૮ માસિકમ્ભક્તમ્-૯ દ્વૈમાસિકમ્ભક્તમ્-૧૦ ત્રૈમાસિકમ્ભક્તમ્-૧૧
ચાતુર્માસિકમ્ભક્તમ્ ૧૨ પાંચમાસિકમ્ભક્તમ્ ૧૩ ષાષ્ઠમાસિકમ્ભક્તમ્-૧૪ ઇતિ । ૬॥

મૂલમ્-જાવકહિણ દુવિદે પાઓવગમણે-ભક્તપચ્ચક્ષણે ય । ૭।

છાયા-‘યાવત્કથિકં દ્વિવિધમ્, પાદપોષગમનં ભક્તપત્યાખ્યાનશ્ચ ॥૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વં તાવત્-પ્રથમસ્ય-‘ઇત્વરિક’ નામકસ્યાડનશનતપસો
ડનેકવિધત્વં ચતુર્થમ્ભક્તાદિ ભેદેન પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પતિ-દ્વિતીયસ્ય યાવત્કથિ-

ઔપપાતિક સૂત્ર કે તિસરે સૂત્ર મેં કહા હૈ-

‘ઇત્વરિક તપ કિસે કહતે હૈ?’

‘ઇત્વરિક તપ અનેક પ્રકાર કા હૈ-જૈસે-ચતુર્થમ્ભક્ત, અષ્ટમ્ભક્ત,
દશમ્ભક્ત, દ્વાદશમ્ભક્ત, ચતુર્દશમ્ભક્ત, ષોડશમ્ભક્ત, અર્ધમાસિક
મ્ભક્ત, માસિકમ્ભક્ત, દ્વૈમાસિકમ્ભક્ત, ત્રૈમાસિકમ્ભક્ત, ચાતુર્માસિક
મ્ભક્ત, પાંચમાસિક મ્ભક્ત, ષાષ્ઠમાસિક મ્ભક્ત, ઇત્યાદિ ॥૬॥

‘જાવકહિણ દુવિદે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-‘યાવત્કથિત અનશન દો પ્રકાર કા હૈ-પાદપોષગમન
ઔર ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન ॥૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલે ઇત્વરિક નામક અનશન તપ કે ચતુર્થ-

ઔપપાતિકસૂત્રના ત્રીજા સૂત્રમાં કહ્યું છે-

ઇત્વરિક તપ કેને કહે છે ?

ઇત્વરિક તપ અનેક પ્રકારના છે જેવા કે-ચતુર્થભક્ત અષ્ટમ્ભક્ત
દશમ્ભક્ત દ્વાદશમ્ભક્ત, ચતુર્દશમ્ભક્ત, ષોડશમ્ભક્ત, અર્ધમાસિકભક્ત,
માસિકભક્ત, દ્વૈમાસિકભક્ત ત્રૈમાસિકભક્ત, ચાતુર્માસિકભક્ત પાંચમાસિક-
ભક્ત ષાષ્ઠમાસિકભક્ત ઇત્યાદિ ॥૬॥

‘જાવકહિણ દુવિદે’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ-‘યાવત્કથિક અનશન બે પ્રકારના છે, પાદપોષગમન અને
ભક્તપ્રત્યાખ્યાન ॥૭॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલા ઇત્વરિક નામક અનશન તપના ચતુર્થભક્ત આદિ

कस्याऽनशनतपसो द्वैविध्यं प्रतिपादयितुमाह—‘जाव कहिए’ इत्यादि । यावत्कथिकं नास जीवनपर्यन्तम् अनशनतपोद्विविधं भवति, पादपोषगमनम्—भक्त प्रत्याख्यानश्च । तत्र—पादपस्य वृक्षस्यैवो—पगमनम् निश्चलतया स्पन्दरहितत्वेनाऽवस्थानम् छिन्नतरुशाखावत् चतुर्विधाहारपरित्यागेन प्रतिक्रियापरिवर्जनेन वृक्षवत्—निश्चलावस्थानम् पादपोषगमनं नामाऽनशन तप उच्यते । भक्त प्रत्याख्यानं तावत्—भक्तस्य चतुर्विधस्याऽऽहारस्या—ऽशन—पान—खादिम—स्वादिमरूपस्य, त्रिविधस्य वा—पानकरहितस्य वाऽऽहारस्य प्रत्याख्यानं—वर्जनं भक्तप्रत्याख्यानमुच्यते । सूत्रे चकारेण ‘इङ्गित’ मरणमपि यावत्कथिकं तपः संगृह्यते, तथा च—

भक्त आदि अनेक भेदों का प्रतिपादन किया गया, अब दूसरे भेद यावत्कथिक अनशन तप के दो विकल्प बतलाते हैं—

जीवनपर्यन्त किया जाने वाला अनशन तप यावत्कथिक कहलाता है । उसके दो भेद हैं—पादपोषगमन और भक्तप्रत्याख्यान । पादप अर्थात् वृक्ष की भांति निश्चल होकर हलन—चलन को रोककर स्थित होना पादपोषगमन कहलाता है तात्पर्य यह है कि जैसे वृक्ष की कटी हुई शाखा निश्चल होकर पड़ी रहती है, उसी प्रकार सब तरह का आहार त्याग कर समस्त शारीरिक चेष्टाओं को त्यागकर, स्पन्दनहीन अवस्था में रहना पादपोषगमन अनशन कहलाता है ।

अशन, पान, खादिम और स्वादिम रूप चार प्रकार के या पान को छोड़कर तीन प्रकार के आहार का आजीवन त्याग करना भक्त प्रत्याख्यान अनशन कहलाता है ।

अनेक लेखानुं प्रतिपादन करवामां आभ्युं, हुवे भीज लेह यावत्कथिक अनशन तपना मे विकल्प अतावीये छीये—

जीवनपर्यन्त करवामां आवतुं अनशन तप यावत्कथिक कहेवाय छे तेना मे लेह छे—पादपोषगमन अने भक्तप्रत्याख्यान पादप अर्थात् वृक्षनी जेम निश्चल यधने हलन—चलनने रोकने स्थिर थवुं पादपोषगमन कहेवाय छे. तात्पर्य अये छे के जेम वृक्षनी कापेली डाणी निश्चल यधने पडी रहे छे, तेवी ज रीते अधी जतने आहार त्यज्ज दधने सधणी शारीरिक चेष्टाओंना त्याग करीने स्पन्दनहीन अवस्थामां रहेवुं पादपोषगमन अनशन कहेवाय छे.

अशन, पान, खाद्य अने स्वाद्य रूप चार प्रकारना अथवा, पानने भाद करीने त्रय प्रकारना आहारने आजीवन त्याग करवे। भक्तप्रत्याख्यान अनशन कहेवाय छे.

यावत्कथिकं नामाऽनशनतपस्त्रिविधं भवति, पादपोषगमनम् १-इङ्गितमरणम् २ भक्तप्रत्याख्यानं-३ च । तत्र-‘इङ्गितं नाम’ श्रुतविहित क्रियाविशेष स्तद्विशिष्टं मरणम् इङ्गितमरणं मुच्यते ॥७॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्वं तावत्-अनशनं तपः इत्वरिक-यावत्कथिकं भेदेन द्विविधं प्ररूपितम्, तत्राऽपि-प्रथमोपात्त मित्वरिकं नाम तपः प्रतिपादितम् । सम्प्रति-यावत्कथिकं नाम द्वितीयन्तपः प्रतिपादयितुमाह-‘जावकहिए दुविहे पाओवगमाणे=अत्तपच्चक्खाणेय’ इति । यावत्कथिकं नाम जीवनपर्यन्त अनशन तपो द्विविधम् भवति, तद्यथा-पादपोषगमनम् भक्तप्रत्याख्यानञ्च । तत्र-पादपस्य वृक्षस्येवोपगमनं स्पन्दरहितत्वेन निश्चलतयाऽवस्थानम् पादपोषगमनम्,

सूत्र में प्रयुक्त ‘च’ शब्द से इङ्गितमरण नामक यावत्कथिक अनशन का ग्रहण किया गया है । इस प्रकार यावत्कथिक अनशन तीन प्रकार का है-(१) पादोपगमन (२) इङ्गितमरण और (३) भक्तप्रत्याख्यान । यहां ‘इङ्गित’ का अर्थ है-शास्त्र में विहित एक विशेष प्रकार की क्रिया, उससे विशिष्ट मरण इङ्गितमरण कहलाता है ॥७॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले इत्वरिक और यावत्कथिक के भेद से अनशन तप दो प्रकार का कहा गया था, इनमें से प्रथम इत्वरिक तप का प्रतिपादन किया जा चुका । अब यावत्कथिक नामक दूसरे तप का प्रतिपादन करते हैं-

जीवनपर्यन्त के लिए किया जाने वाला अनशन तप दो प्रकार का है-पादपोषगमन और भक्तप्रत्याख्यान । पादप अर्थात् वृक्ष की भांति स्पन्दनहीन होकर निश्चल रूप में स्थित होना पादपोषगमन अन-

सूत्रमां प्रयुक्त-च शब्दधी इङ्गितमरणं नामकं यावत्कथिकं अनशनं तु पण्यं ग्रहण्य करवांमां आवेत छे, आ रीते यावत्कथिकं अनशनं त्रणुं प्रकारना छे—(१) पादपोषगमन (२) इङ्गितमरणं अने (३) भक्तप्रत्याख्यानं. अही इङ्गितने। अर्थ थाय छे-शास्त्रमां विहित अेक विशेष प्रकारनी क्रिया, तेनांथी विशिष्ट मरण इङ्गितमरण कहेवाय छे. ॥७॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पडेवा इत्वरिक अने यावत्कथिकना लेदधी अनशन तप के प्रकारना कडेवांमां आव्या छे, आमांथी प्रथम इत्वरिक तपनुं प्रतिपादन करवांमां आव्यु डवे यावत्कथिक नामक बीज तपनुं प्रतिपादन करीअे छीअे-

अवनपर्यन्त माटे करवांमां आवेतुं अनशन तप के प्रकारनुं छे—पादपोषगमन अने भक्तप्रत्याख्यान पादप अर्थात् वृक्षनी भाइक-स्पन्दनहीन

ચતુર્વિધાઽઽહારપરિત્યાગેન સ્વશરીરસ્ય સેવા શુશ્રૂષાદિ ક્રિયાવર્જનેન ચ વૃક્ષવ-
ન્નિમ્બલતયાઽવસ્થાનરૂપં પાદપોષગમનં નામ પ્રથમં યાવત્કથિક મનશ્ચન તપ
ઉચ્ચયતે । ભક્ત પ્રત્યાખ્યાનશ્ચ=અશનપાનસ્વાદિમસ્વાદિમરૂપસ્ય ચતુર્વિધસ્યા-
ઽઽહારસ્ય ત્રિવિધસ્ય વા પાનવર્જિતસ્યાઽઽહારસ્ય પ્રત્યાખ્યાનવર્જનરૂપં ભક્ત
પ્રત્યાખ્યાનં નામ દ્વિતીયં યાવત્કથિકય્ અનશનતપઃ ઉચ્ચયતે । તત્ર-પ્રથમં
તાવત્ પાદપોષગમનં નામ યાવત્કથિકં તપઃ શરીરચલનાદિક્રિયારહિતં ભવતિ
દ્વિતીયન્તુ-ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં નામ યાવત્કથિકં તપઃ શરીરચલનાદિ ક્રિયા
સહિતં ભવતીતિ ભાવઃ, ચકારેણ-ઈઙ્ગિતમરણમપિ ગમ્યતે । ક્વચિત્તુ-યાવત્ક-
થિકં તપસ્ત્રિવિધં ભવતીત્યુક્તમ્, તત્ર-'ઈઙ્ગિતં નામ-શ્રુતવિદિત ક્રિયાવિશેષસ્ત
જ્ઞાનં હૈ ।

અશન, પાન, સ્વાદિમ અને શ્વાદિમ, આ ચારોં પ્રકાર કે આહાર
કા યા પાન કે સિવાય ત્રીન પ્રકાર કે આહાર કા ત્યાગ કરના ભક્તપ્ર-
ત્યાખ્યાન નામક દૂસરા યાવત્કથિક અનશન તપ કહલાના હૈ ।

આનમૈ પાદપોષગમન નામક પ્રથમ યાવત્કથિક અનશન તપ મૈ
શરીર કો હીલાને-હુલાને કા બી ત્યાગ કિયા જાતા હૈ, કિન્તુ દૂસરે
ભક્તપ્રત્યાખ્યાન તપ મૈ શરીર કે હલન-ચલન કા ત્યાગ નહીં હોતા ।

સૂત્ર મૈ પ્રયુક્ત 'ચ' શબ્દ સે ઈંગિતમરણ કા ગ્રહણ કિયા જાતા

યદનિ નિશ્ચલ રૂપમાં સ્થિત થયું પાદપોષગમન અનશન છે, આ અનશન
તપમાં ચારે પ્રકારનો આહાર ત્યાગીને અને શરીરની સેવા-શુશ્રૂષા આદિ
ક્રિયાઓનો પરિહાર કરીને વૃક્ષની માફક નિશ્ચલપણે અવસ્થિત થઈને
રહે છે આથી જ આને પાદપોષગમન કહે છે.

અશન, પાન. ખાધ અને સ્વાદ એ ચારે પ્રકારના આહારોનો અથવા
પાન સિવાય ત્રણ પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરવો ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન નામક
બીજું યાવત્કથિક અનશન તપ કહેવાય છે.

આમાં પાદપોષગમન નામક પ્રથમ યાવત્કથિક અનશન તપમાં શરીર
ના હલન-ચલનનો પણ ત્યાગ કરવામાં આવે છે પરંતુ બીજા ભક્તપ્રત્યાખ્યાન
તપમાં શરીરના હલન ચલનનો ત્યાગ થતો નથી.

સૂત્રમાં પ્રયુક્ત 'ચ' શબ્દથી ઈંગિતમરણનું ગ્રહણ કરવામાં આવે છે, કારણ

દ્વિશિષ્ટં મરણમ્ હંગિતમરણ મુચ્યતે, અસ્ય નામ-હંગિની' મરણમિત્યપ્યુચ્યતે ।
અન્યદ્ દ્વયન્તુ-પાદપોષગમનં ભક્તપ્રત્યાખ્યાનશ્ચ પૂર્વોક્ત સમાનમેવાડવગન્તવ્યમ્,
આગમેતુ-યાવત્કથિકં નામ તપો દ્વિવિધમેવ દૃશ્યતે । ઉક્તશ્ચૌપપાતિકે સૂત્રે ૩૦
સૂત્રે-‘સે કિં તં જાવકહિએ ? જાવકહિએ દુવિહે પળ્ળત્તે, તં જહા-પાઓવ-
ગમણેય-ભક્તપચ્ચક્ખાણેય’ ઇતિ । અથ કિં તત્-યાવત્કથિકં યાવત્કથિકં
દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તથથા-પાદપોષગમનમ્ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનશ્ચ, ઇતિ ॥૭॥

મૂલમ્-પાઓવગમણે દુવિહે વાઘાઈમે-ણિઠ્ઠાઘાઈમે ય નિયમા
અપ્પાડિકમ્મે ॥૮॥

છાયા-પાદોષગમનં દ્વિવિધમ્ વ્યાઘાતિમં-નિર્વ્યાઘાતિમં ચ નિયમતોડ-
પ્રતિકર્મ ॥૮॥

હૈ વર્ષોંકિ કહીં-કહીં યાવત્કથિક તપ તં ન પ્રકાર કા મો કહા ગયા
હૈ । શાસ્ત્ર મેં પ્રતિપાદિન એક વિશિષ્ટ પ્રકાર કી ક્રિયા કો ‘હંગિત’
કહતે હૈં, ઉસસે યુક્ત મરણ હંગિતમરણ કહલાતા હૈ । શેષ દો પાદ-
પોષગમન ઓર ભક્તપ્રત્યાખ્યાન પહેલે હી બતલાય જા ચુકે હૈં । આગમ
મેં યાવત્કથિક નામક તપ દો હી પ્રકાર કા દેખા જાતા હૈ । ઔપપાતિક
સૂત્ર મેં કહા મો હૈ--

‘યાવત્કથિક અનશન કે કિતને મેદ હૈં ?

‘યાવત્કથિક કે દો મેદ હૈં-પાદપોષગમન ઓર ભક્તપ્રત્યાખ્યાન ૭

‘પાઓવગમણે દુવિહે વાઘાઈમે’ ઇત્યાદિ સૂ. ૮

સૂત્રાર્થ-પાદપોષગમન તપ દો પ્રકાર કા હૈ-વ્યાઘાતિમ ઓર
નિર્વ્યાઘાતિમ । દોનોં પ્રકાર કા યહ તપ નિયમ સે પ્રતિકર્મરહિત-
સેવાશુશ્રૂષા વર્જિત હોતા હૈ ॥૮॥

કે કોઈ-કોઈ સ્થળે યાવત્કથિક તપ ત્રણ પ્રકારના પણ કહેવામાં આવ્યા છે,
‘શાસ્ત્રમાં પ્રતિપાદિત એક વિશિષ્ટ પ્રકારની ક્રિયાને ‘હંગિત’ કહે છે, તેનાથી
યુક્ત મરણ હંગિતમરણ કહેવાય છે. શેષ બે પાદપોષગમન અને ભક્તપ્રત્યા-
ખ્યાન પહેલા જ બતાવવામાં આવી ગયા છે. આગમમાં યાવત્કથિક નામક
તપ બે પ્રકારના બેવામાં આવે છે. ઔપપાતિકસૂત્રમાં કહ્યું પણ છે--
યાવત્કથિક અનશનના કેટલા ભેદ છે ?

‘યાવત્કથિકનાં બે ભેદ છે-પાદપોષગમન અને ભક્તપ્રત્યાખ્યાન-’ ॥ ૭ ॥

‘પાઓવગમણે દુવિહે ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ-પાદપોષગમન તપ બે પ્રકારના છે-વ્યાઘાતિમ અને નિર્વ્યાઘાતિમ
અને પ્રકારના આ તપ નિયમથી પ્રતિકર્મ રહિત સેવાશુશ્રૂષાવર્જિત જ
હોય છે ॥ ૮ ॥

તત્ત્વાર્થદીપીકા-પૂર્વ તાવદ્-યાવત્કથિકં દ્વિવિધં, પાદપોષગમનં-મક્તપ્રત્યા-
 ળ્યાનં ચેતિ પ્રોક્તમ્, તત્ર-પ્રથમં પાદપોષગમનસ્ય દ્વૈવિધ્યં પ્રતિપાદયિતુમાહ-
 'વાઓષગમણે' इत्यादि । પાદપોષગમનં તાવત્ પૂર્વોક્તસ્વરૂપં તપો દ્વિવિધં
 ધ્રુવતિ, તદ્વથા-વ્યાધાતિમંચ-નિવ્યાધાતિમં ચેતિ । તત્ર-વ્યાધાતઃ સિંહ-વ્યાઘ્ર
 દાવાનલાદિ કૃતોપદ્રવઃ, તેન-સહિતં વ્યાધાતિમમ્, તથા ચ-સિંહાદિ કૃતોપદ્રવ-
 સહિતં પાદપોષગમનં નામ યાવત્કથિકં તપો વ્યાધાતિમ મુચ્યતે । एवं-સિંહ
 વ્યાઘ્ર દાવાનલાદ્યુપદ્રવરૂપ વ્યાધાતરહિતં પાદપોષગમનં નિવ્યાધાતિમ મુચ્યતે
 एतदुभयमपि पादपोषगमनं नियमात् नियमतः-અપ્રતિકર્મ શરીર ચલનાદિક્રિયા
 રૂપ પ્રતિકર્મવર્જિતં ભવતિ, एव मौषधोपचारादि रहितञ्च भवतीतिभावः ॥૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ-પૂર્વ તાવત્-યાવત્કથિકં ચ પાદપોષગમન-મક્તપ્રત્યાહ્યાન-

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલે કહા ગયા થા કિ યાવત્કથિક તપ દો પ્રકાર
 કા હૈ-પાદપોષગમન ઓર મક્તપ્રત્યાહ્યાન । અથ પાદપોષગમન કે
 મી દો ભેદોં કા પ્રતિપાદ કરતે હૈ-

પૂર્વોક્ત પાદપોષગમન તપ કે દો ભેદ હૈ-વ્યાધાતિમ ઓર નિવ્યા-
 ધાતિમ । જિસ તપ મેં સિંહ, વાઘ, દાવાનલ આદિ કા ઉપદ્રવ હો બહ
 વ્યાધાતિમ કહલાતા હૈ ઓર સિંહ, વ્યાઘ્ર, દાવાનલ આદિ કે ઉપદ્રવ
 રૂપ વ્યાધાત સે રહિત પાદપોષગમન તપ નિવ્યાધાતિમ કહલાતા હૈ ।
 યહ દોનોં હી પ્રકાર કા પાદપોષગમન તપ નિયમ સે અપ્રતિકર્મ હી
 હોતા હૈ અર્થાત્ ન હસમેં હલચ-ચલન ક્રિયા જાતા હૈ, ન ઔષધોપચાર
 આદિ કિસી પ્રકાર કી શારીરિક સેવા-શુશ્રૂષા હી કી જાતી હૈ ॥૮॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-યાવત્કથિક અનગ્નન કે દો ભેદ-પાદપોષગમન

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલા કહેવામાં આયું કે યાવત્કથિક તપ બે પ્રકાર
 ના છે- પાદપોષગમન અને ભક્તપ્રત્યાહ્યાન હવે પાદપોષગમનના બે
 ભેદોનું પ્રતિપાદન કરીએ છીએ-

પૂર્વેક્ત પાદપોષગમન તપના બે ભેદ છે- વ્યાધાતિમ અને નિવ્યાધાતિમ
 જે તપમાં સિંહ, વાઘ, દાવાનલ આદિના ઉપદ્રવ હોય તે વ્યાધાતિમ કહેવાય
 છે અને સિંહ, વાઘ, દાવાનલ આદિના ઉપદ્રવરૂપ વ્યાધાતથી રહિત પાદપો-
 ષગમન તપ નિવ્યાધાતિમ કહેવાય છે. આ બંને જ પ્રકારના પાદપોષગમન
 તપ નિયમથી અપ્રતિકર્મ જ હોય છે અર્થાત્ ન તો એમનામાં હલન ચલન
 કરવામાં આવે છે અથવા ન તો ઔષધોપચાર આદિ કોઈ પ્રકારની શારીરિક
 સેવા શુશ્રૂષા કરવામાં આવે છે ॥ ૮ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-યાવત્કથિક અનગ્નનના બે ભેદ-પાદપોષગમન અને

भेदेन द्विविध मित्युक्तम्, तत्र-सम्प्रति पादपोषगमनस्य द्वैविध्यं प्रतिपादयितुमाह 'पाओवगमणे दुविहे, वाघाहमे निव्वाघाहमेय, नियमा अप्पडिकम्मे' इति पादपोषगमनं नाम-पूर्वोक्त-स्वरूपं यावत्कथिकविशेषतपो द्विविधं भवति, तद्यथा-व्याघातिमं, निर्व्याघातिमं चेति । तत्र-व्याघातेन सिंहव्याघ्रभल्लूक दावानलाद्युपद्रवेण सहितं पादपोषगमनं व्याघातिमं मुच्यते । एवं-सिंह व्याघ्र भल्लूक तरक्षुदावानलादिकृतोपद्रवरहितं पादपोषगमनं निर्व्याघातिमं मुच्यते । एतदुभयमपि व्याघातिमं-निर्व्याघातिमं च पादपोषगमनं नियमात्-नियमतः अप्रतिकर्म शरीरचलनादिक्रियारूपप्रतिकर्मवर्जितं भवति, एव औषधोपचार रहितश्च भवति । उक्तश्चौपपातिकसूत्रे ३० सूत्रे-'से किं तं पाओवगमणे ? पाओवगमणे दुविहे पणत्ते, तं जहा-वाघाहमेय, निव्वाघाहमेय-नियमा अप्पडिकम्मे, से तं पाओवगमणे' इति । अथ किन्तत् पादपोषगमनम् ? और भक्तप्रत्याख्यान कहे गए हैं, अब पादपोषगमन के दो भेदों का प्रतिपादन करते हैं ।

पूर्वोक्त पादपोषगमन नामक यावत्कथिक अनशन तप दो प्रकार का है-व्याघातिम और निर्व्याघातिम । व्याघात अर्थात् विघ्न से युक्त हो वह व्याघातिम और जो विघ्नरहित हो वह निर्व्याघातिम कहलाता है । उपद्रव सिंह, व्याघ्र, भालू तरक्ष तथा दावानल आदि द्वारा होते हैं, यह व्याघातिम और निर्व्याघातिम-दोनों प्रकार के पादपोषगमन नियम से अप्रतिकर्म ही होते हैं अर्थात् शारीरिक हलन-चलन आदि क्रिया से रहित ही होते हैं और इनमें औषधो, पचार भी नहीं किया जाता । औपपातिक सूत्र में कहा है-

प्रश्न-पादपोषगमन के कितने भेद हैं ?

भक्तप्रत्याख्यान कहेवाभां आख्या छे डवे पादपोषगमनना जे लेहोनु' प्रतिपादन करीअे छीअे-

पूर्वोक्त पादपोषगमन नामक यावत्कथिक अनशन तप जे प्रकारना छे-व्याघातिम अने निर्व्याघातिम, व्याघात अर्थात् विघ्नथी जे युक्त होय ते व्याघातिम अने जे विघ्न रहित होय ते निर्व्याघातिम कहेवाय छे. उपद्रव सिंह, वाघ, रीछ, तरक्ष तथा दावानल आदि द्वारा थाय छे. आ व्याघातिम अने निर्व्याघातिम अने प्रकारना पादपोषगमन नियमथी अप्रतिकर्म ज होय छे अर्थात् शारीरिक हलन चलन आदि क्रियाथी रहित ज होय छे. अने जेभा औषधोपचार पणु करवाभां आवतो नथी. औपपातिक सूत्रभां कहुं छे ?

प्रश्न-पादपोषगमनना केदला लेह छे.

પાદપોષગમનં દ્વિવિધં મજ્જસમ્, તચ્ચથા-વ્યાધાતિમં ચ, નિર્વ્યાધાતિમં ચ, નિરમાદ
અમનિકર્મ, તદેનત્ પાદપોષગમનમ્ ઇતિ ॥૮॥

મૂલમ્-મક્તપચ્ચક્ષાણે દુવિહે, વાઘ.ફમે-નિઠ્ઠાવાઘાફમેય,
નિયમા સપ્પઢિકમ્મે । ૯।

છાયા-મક્તપત્યાખ્યાન દ્વિવિધમ્ વ્યાધાતિમં-નિર્વ્યાધાતિમં ચ નિયમાત્
સપ્રતિકર્મ' । ૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વં તાવત્-પાદપોષગમનં વ્યાધાતિમ-નિર્વ્યાધાતિમભેદેન
દ્વિવિધમપિ-પ્રાતપાદિતમ્-સમ્પ્રતિ દ્વિર્તાયં મક્તપત્યાખ્યાનં નામ તપઃ પ્રતિપાદ-
યિતુમાહ-'મક્ત પચ્ચક્ષાણે' ઇત્યાદિ । મક્તપત્યાખ્યાનં નામ પૂર્વોક્તસ્વરૂપં
તપો દ્વિવિધં-વ્યાધાતિમં-નિર્વ્યાધાતિમં-ચેતિ, તત્ર-વ્યાધાતો વિગ્ર સ્તેન સહિતં
વ્યાધાતિમં વિગ્રયુક્ત મુચ્યતે । નિર્વ્યાધાતિમં વિગ્રરહિતશ્ચ ચ્યતે, તથા ચ-
વિગ્રસહિતં મક્તપત્યાખ્યાનં વ્યાધાતિમં વ્યપદિશ્યતે વિગ્રરહિતશ્ચ મક્તપત્યા-

ઉત્તર-પાદપોષગમન દો પ્રકાર કા કરા ગયા હૈ-વ્યાધાતિમ ઓર
નિર્વ્યાધાતિમ । યહ દોનો હો પ્રકાર કે પાદોપગમન નિયમ સે પ્રતિ
કર્મરહિત હી હોતે હૈ ॥૮॥

‘મક્તપચ્ચક્ષાણે દુવિહે’ ઇત્યાં

સૂત્રાર્થ-મક્તપત્યાખ્યાન દો પ્રકાર કા હૈ-વ્યાધાતિમ ઓર નિર્વ્યા
ધાતિમ । યહ દોનો નિયમતઃ સપ્રતિકર્મ હોતે હૈ ॥૯॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા--હસસે પહલે વ્યાધાતિમ ઓર અવ્યાધાતિમ કે
ભેદ સે દો પ્રકાર કે પાદપોષગમન તપ કા નિરૂપણ કિયા ગયા અબ
મક્તપત્યાખ્યાન નામક દૂસરે યાવત્કથિક તપ કા નિરૂપણ કરતે હૈ
પૂર્વોક્ત મક્તપત્યાખ્યાન તપ દો પ્રકાર કા હૈ-વ્યાધાતિમ ઓર

ઉત્તર-પાદપોષગમન યે પ્રકારના કરેવામાં આવ્યા છે-વ્યાધાતિમ અને
નિર્વ્યાધાતિમ આ બંને જ પ્રકારના પાદપોષગમન નિયમથી પ્રતિકર્મરહિત
જ હોય છે ॥ ૮ ॥

‘મક્તપચ્ચક્ષાણે દુવિહે’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ--લક્તપત્યાખ્યાન યે પ્રકારના છે-વ્યાધાતિમ અને નિર્વ્યાધાતિમ.
આ બંને નિયમતઃસપ્રતિકર્મ હોય છે ॥ ૯ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા--આની અગાઉ વ્યાધાતિમ અને અવ્યાધાતિમના ભેદ
થી યે પ્રકારના પાદપોષગમન તપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે લક્ત-
પત્યાખ્યાન નામક બીજા યાવત્કથિક તપનું નિરૂપણ કરીએ છીએ

પૂર્વોક્ત લક્તપત્યાખ્યાન તપના યે પ્રકારના છે-વ્યાધાતિમ અને નિર્વ્યાધા-
તિમ. વ્યાધાતનો અર્થ છે વિગ્ર, જે એથી યુક્ત હોય તે વ્યાધાતિમ-અર્થાત્

રૂપાનં નિર્વ્યાધાતિમં વ્યપદિશ્યતે । કિંતુ-એતદુભયમપિ વ્યાધાતિમં નિર્વ્યાધાતિમં
ચ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં નિયમાત્-નિયમતઃ સપ્રતિકર્મ ચલનાદિક્રિયા રૂપ પ્રતિકર્મ
સહિતં ભવતિ, એવં-વાહ્યૌષધોપચારવૈયાઘૃત્યાદિ યુક્તશ્ચ ભવતિ ॥૯॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ-પૂર્વં તાવત્-પાદપોષગમનં વ્યાધાતિમ-નિર્વ્યાધાતિમ
ભેદેન દ્વિવિધં પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પ્રતિ-ભક્તપ્રત્યાખ્યાનમપિ દ્વૈવિધ્યેન પ્રતિપાદ-
યિતુમાહ-‘ભક્તપચ્ચક્ષણે’ इत्यादि । ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં નામ પૂર્વોક્તસ્વરૂપં
તપો દ્વિવિધં ભવતિ, તદ્યથા-વ્યાધાતિમં, નિર્વ્યાધાતિમં ચ । તત્ર-વ્યાધાતો
વિગ્ર સ્તેન સહિતં ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં વ્યાધાતિમ મુચ્યતે, કિંતુ-વ્યાધાતરૂપ
વિગ્રરહિતં ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં તપો નિર્વ્યાધાતિમ મુચ્યતે । તથા ચ-વિગ્રયુક્તં
ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં વ્યાધાતિમં વ્યપદિશ્યતે, વિગ્રરહિત ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં

નિર્વ્યાધાતિમ । વ્યાધાત કા અર્થ હૈ વિગ્ર જો ઉત્પન્ન હો વહ
વ્યાધાતિમ અર્થાત્ વિગ્રયુક્ત । જિસમેં કિસી પ્રકારકા વિગ્ર ન આ
વહ નિર્વ્યાધાતિમ કરલાતા હૈ વહ દોનો હી પ્રકાર કા ભક્તપ્રત્યા-
ખ્યાન નિયમ સે સપ્રતિકર્મ હી હોતા હૈ અર્થાત્ ફલમેં ચલના-ફિરના
આદિ ક્રિયા વર્જિત નહીં હૈ । ફલમેં બાહ્ય ઔષધ કા ઉપચાર મી
ક્રિયા જા સકતા હૈ ઓર વૈયાઘૃત્ય મી કી-કરવાઈ જા સકતા હૈ ॥૯॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલે વ્યાધાતિમ ઓર નિર્વ્યાધાતિમ કે ભેદ
સે પાદપોષગમન કે દો ભેદોં કા પ્રતિપાદન ક્રિયા ગયા, અબ ભક્તપ્ર-
ત્યાખ્યાન કે મી દો ભેદોં કા કથન કરતે હૈ-

પૂર્વોક્ત ભક્તપ્રત્યાખ્યાન તપ મી દો પ્રકાર કા હૈ-વ્યાધાતિમ
ઓર નિર્વ્યાધાતિમ । જો ભક્તપ્રત્યાખ્યાન વ્યાધાત અર્થાત્ વિગ્ર સે

વિગ્રયુક્ત જેમાં કોઈ પ્રકારનું વિગ્ર ન આવે તે નિર્વ્યાધાતિમ કહેવાય છે.
આ બંને જ પ્રકારના ભક્તપ્રત્યાખ્યાન નિયમથી સપ્રતિકર્મ જ હોય છે.
અર્થાત્ આમાં ચાલવું ફરવું આદિ ક્રિયા વર્જિત નથી. આમાં બાહ્ય ઔષધનો
ઉપચાર પણ કરી શકાય છે અને વૈયાઘૃત્ય પણ કરી કરાવાઈ શકે છે ॥ ૯ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ-પહેલા વ્યાધાતિમ અને નિર્વ્યાધાતિમના ભેદથી પાદ-
પોષગમનના બે ભેદોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હોયે ભક્તપ્રત્યાખ્યાનના
પણ બે ભેદોનું કથન કરીએ છીએ

પૂર્વોક્ત ભક્તપ્રત્યાખ્યાન તપ પણ બે પ્રકારના છે

વ્યાધાતિમ અને નિર્વ્યાધાતિમ. જે ભક્તપ્રત્યાખ્યાન વ્યાધાત અર્થાત્ વિગ્રથી

નિર્વ્યાધાતિમં વ્યપદિશ્યતે । ઉક્તઞ્ચૌપપાતિકસૂત્રે-૩૦ સૂત્રે-‘સેકિં તં ભક્ત-
પચ્ચક્ષણે ? ભક્ત પચ્ચક્ષણે દુવિહે પળ્ણત્તે, તં જહા-વાધાદ્દમેય,
નિર્વ્યાધાદ્દમે ચ ણિયમા સપ્પડિકમ્મે’ इति । અથ કિં તત્-ભક્ત પ્રત્યાખ્યા-
નમ્ ? ભક્તપ્રત્યાખ્યાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તથા-વ્યાધાતિમં ચ, નિર્વ્યાધાતિમં
ચ નિયમતઃ સપ્રતિકર્મ इति ॥૯॥

મૂલમ્-ઓમોયરિયા તવે દુવિહે, દવ્વોમોયરિયા-ભાવો-
મોયરિયાય ॥૧૦॥

છાયા-‘અવમોદરિકાતપો દ્વિવિધમ્, દ્રવ્યાવમોદરિકા-ભાવાવ-
મોદરિકા ચ ॥૧૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-—‘પૂર્વં તાવત્-પ્રથમોપાત્તર્યા-ડનશનસ્યેત્વરિક-યાવ-

યુક્ત હો વહ વ્યાધાતિમ ઓર જિસમેં કિસી પ્રકાર કા વિદ્ધ ન હો
વહ નિર્વ્યાધાતિમ કહલાતા હૈ ।

ઔપપાતિકસૂત્ર કે ૩૦વેં સૂત્ર મેં કહા હૈ-

‘ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કે કિતને ભેદ હૈં ?

‘ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કે દો ભેદ હૈં, યથા-વ્યાધાતિમ ઓર નિર્વ્યાધા-
તિમ । યહ દોનોં પ્રકાર કા ભક્તપ્રત્યાખ્યાન નિયમ સે પ્રતિકર્મયુક્ત
હી હોતા હૈ ॥૯॥

‘ઓમોયરિયા તવે દુવિહે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ-અવમોદરિકા નામક તપ દો પ્રકાર કા હૈ-દ્રવ્ય-અવમોદ-
રિકા એવં ભાવ-અવમોદરિકા ॥૧૦॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-—ઈત્વરિક ઓર યાવત્કથિક-દોનોં પ્રકાર કે અન

યુક્ત હોય તે વ્યાધાતિમ અને જેમાં કોઈ પ્રકારનું વિદ્ધ ન હોય તે
નિર્વ્યાધાતિમ કહેવાય છે.

ઔપપાતિક સૂત્રના ૩૦ માં સૂત્રમાં કહ્યું છે

ભક્તપ્રત્યાખ્યાનના કેટલા ભેદ છે ?

ભક્તપ્રત્યાખ્યાનના બે ભેદ છે યથા વ્યાધાતિમ અને નિર્વ્યાધાતિમ આ
બંને પ્રકારના ભક્તપ્રત્યાખ્યાન નિયમથી પ્રતિકર્મ યુક્ત જ હોય છે. ॥ ૯ ॥

સૂત્રાર્થ-અવમોદારિક નામનું તપ બે પ્રકારનું છે દ્રવ્ય, અવમોદારિકા
અને ભાવ અવમોદરિકા ॥ ૧૦ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-ઈત્વરિક અને યાવત્કથિક બંને પ્રકારના અનશન તેપનું

तत्कथिकभेदेन द्विविधस्य प्ररूपणं कृतम्, सम्प्रति-द्वितीयस्यावमोदरिका नामक बाह्यतपसः स्वरूपं प्ररूपयितुमाह-‘ओमोय-रिया तवे दुविहे’ इत्यादि । अवमो-दरिका तपः-अवमम्-ऊरम् उदरं यस्मिन् भोजने तदवमोदरं तदस्त्यस्यां क्रिया-याम् इति-अवमोरिका तपो विशेषरूपा क्रिया तद्रूपम्-अवमोदरिका नाम तपो द्विविधं भवति । द्रव्यावमोदरिकारूपं भावावमोदरिकारूपञ्च, तत्र-आहारो-पध्यादि बाह्यवस्तुनोऽल्पीकरणं द्रव्यावमोदरिका, क्रोधादिकषाय रूपान्तरिक-वस्तुनोऽल्पीकरणं भावावमोदरिकेति ॥१०॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः-पूर्वं तावत्-प्रथमोपात्तरया-अनशनस्य बाह्य तपस इत्वरिक-यावत्कथिकभेदेन द्विविधस्य सविस्तरं प्ररूपणं कृतम्, सम्प्रति-क्रमा-गतस्य द्वितीयबाह्यतपसो-अवमोदरिका रूपस्य स्वरूपं निरूपयितुमाह-‘ओमोय-शन तप का निरूपण क्रिया जा चुका अब दूसरे बाह्य तप अवमोदरिका (अनोदर) स्वरूप का प्रतिपादन करते हैं-

अवम अर्थात् ऊन (कम) उदर जिस भोजन में हो उसे अवमोदर कहते हैं । जिस क्रिया में अवमोदर हो वह अवमोदरिका । यह एक प्रकार की तपश्चर्या है । इसके दो भेद हैं-द्रव्य-अवमोदरिका और भाव-अवमोदरिका । आहार, उपधि आदि बाह्य वस्तुओं में कमी करना द्रव्य-अवमोदरिका है और क्रोधादि कषायों में कमी करना भाव-अवमोदरिका है ॥१०॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-इससे पूर्व प्रथम बाह्यतप अनशन के यावत्कथिक और इत्वरिक भेदों का विस्तारपूर्वक निरूपण किया गया, अब क्रम-प्राप्त द्वितीय बाह्य तप अवमोदरिका के स्वरूप का प्रतिपादन करते हैं-

निश्पणुं करवाभां आवी गयुं, डवे जीज्ज आह्य तप अवमोदरिका (अनोदर) ना स्वरूपनुं प्रतिपादन करीये छीये.

अवम अर्थात् ऊन (ओछु) उदर के लोअनभां होय तेने अवमोदर कहे छे. के क्रियाभां अवमोदर होय ते अवमोदरिका आ ओक प्रकारनी तपश्चर्या छे. आना जे लेह छे द्रव्य अवमोदरिका अने भाव अवमोदरिका आहार’ उपधि आदि आह्य वस्तुओभां घटाओ करवे। द्रव्य अवमोदरिका छे अने क्रोधादि कषायोभां घटाओ करवे। भाव अवमोदरिका छे ॥ १० ॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति-आनी पहेलां प्रथम आह्यतप अनशनना यावत्कथिक अने इत्वरिक लेहोनुं विस्तारपूर्वक निश्पणुं करवाभां आवी गयुं छे, डवे कमप्राप्त द्वितीय आह्यतप अवमोदरिकाना स्वरूपनुं प्रतिपादन करीये छीये

રિયા તવે દુવિહે, દ્વોમોરિયા-ભાવોમોયરિયા ય' इति । अवमोदरिका तपः-अवमसू उनम् उदरं यस्मिन् भोजने तद्-अवमोदरंभोजनम्, तदस्त्यस्या क्रियायामिति अवमोदरिका तपो विशेषरूपा क्रिया उच्यते तद्रूपं तपोऽवमोदरिका तप उच्यते तत्खलु-अवमोदरिका तपो द्विविधं भवति-द्रव्यावमोदरिकारूपं-भावावमोदरिकारूपश्चेति, । तत्र-बाह्य वस्तुनोल्पीकरणं द्रव्यावमोदरिका, आन्तरिक वस्तुनोऽल्पीकरणं भावावमोदरिका व्यपदिश्यते । उक्तञ्चौपपातिके ३० सूत्रे- 'स्ये किं तं ओमोयरिया ? ओमोयरिया दुविहा पणत्ता तं जहा-द्वोमोयरिया-भावोमोयरिया य' इति, अथ का सा-अवमोदरिका-? अवमोदरिका द्विविधा प्रज्ञप्ता तद्यथा-द्रव्यावमोदरिका च-भावावमोदरिका च १०॥

મૂલ્ય-દ્વોમોયરિયા તવે દુવિહે, ઉવગરણદ્વોમોયરિયા, મત્તપાણદ્વોમોયરિયા ય ॥૧૧॥

હાયા-દ્રવ્યાવમોદરિકા તપો દ્વિવિધમ્, ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા ભક્ત-પાનદ્રવ્યાવમોદરિકા ચ' ॥૧૧॥

जिस भोजन में उदर उन (कम) हो वह भोजन अवमोदर कहलाता है, वह जिस क्रिया में हो वह अवमोदरिका । अवमोदरिका एक प्रकार की तपश्चर्या है । इसके दो भेद हैं-द्रव्य-अवमोदरिका और भाव-अवमोदरिका बाह्य वस्तुओं की अल्पता करना द्रव्य-अवमोदरिका हैं और कषायादि विकारभाव को अल्प करना भाव-अवमोदरिका है । औपपातिकसूत्र के तीसवें सूत्र में कहा है-

પ્રશ્ન-અવમોદરિકાં કે કિતને ભેદ હૈં ।

ઉત્તર-અવમોદરિકા દો પ્રકાર કી હૈ-દ્રવ્ય-અવમોદરિકા ઓર ભાવ-અવમોદરિકા ॥૧૦॥

‘દ્વોમોયરિયા તવે દુવિહે’ इत्यादि ॥૧૧॥

જે ભોજનમાં ઉદર ઉન (ઓછું) હોય તે ભોજન અવમોદર કહેવાય છે તે જે ક્રિયામાં હોય તે અવમોદરિકા. અવમોદરિકા એક પ્રકારની તપશ્ચર્યા છે એના બે ભેદ છે દ્રવ્ય અવમોદરિકા અને ભાવ અવમોદરિકા. બાહ્ય વસ્તુઓનું ઓછાપણું કરવું દ્રવ્ય અવમોદરિકા છે જ્યારે કષાયાદિ વિકારભાવને ઓછો કરવો એ ભાવ અવમોદરિકા છે. ઔપપાતિક સૂત્રના ત્રીસમા સૂત્રમાં કહેલ છે પ્રશ્ન-અવમોદરિકાના કેટલા ભેદ છે ?

ઉત્તર-અવમોદરિકા બે પ્રકારની છે દ્રવ્ય અવમોદરિકા અને ભાવ અવમોદરિકા ॥ ૧૦ ॥

‘દ્વોમોયરિયા તવે દુવિહે’ इत्यादि

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પૂર્વે તાવદ્ અવમોદરિકા રૂપં તપો દ્રવ્યભાવભેદરૂપપરદ્વિ-
વિધ્યેન પ્રરૂપિતમ્, સમ્પતિ-દ્રવ્યાવમોદરિકા તપસો દ્વિવિધ્યં પ્રરૂપયિતુમાહ-
'દ્રવ્યોમોઘરિયા તવે' इत्यादि । દ્રવ્યાવમોદરિકા તપો દ્વિવિધમ્ ભવતિ । તથા
ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા ચ, તન્નાડલ્પદસ્ત્રપાત્ર સદોરક
મુલવસ્ત્રિકાદ્યુપકારણરૂપ દ્રવ્ય વિષયકાવમોદરિકારૂપ તપો વિશેષક્રિયા
'ઉપકરણ દ્રવ્યાવમોદિકા' ઉચ્યતે । અલ્પભક્તપાનાદિ દ્રવ્યવિષયકાવમોદ-
રિકારૂપતપશ્ચરણવિશેષક્રિયા 'ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા' વ્યપદિશ્યતે ॥૧૧॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયિકા-પૂર્વે સ્વલુ-બાહ્યં તપોડવમોદરિકારૂપં દ્રવ્ય-ભાવ ભેદમા-
શ્રિત્ય દ્વિવિધતયા પ્રતિપાદિતમ્, સમ્પતિ-તત્ર પ્રથમોપાત્તં દ્રવ્યાવમોદરિકા તપઃ

સૂત્રાર્થ-—દ્રવ્ય-અવમોદરિકા તપ દો પ્રકાર કા હૈ-ઉપકરણદ્રવ્ય-
અવમોદરિકા ઓર ભક્તપાન-દ્રવ્ય-અવમોદરિકા ॥૧૧॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલે અવમોદરિકા તપ કે દ્રવ્ય ઓર ભાવ કી
અપેક્ષા સે દો ભેદ કહે ગણ, અબ દ્રવ્ય-અવમોદરિકા તપ કે દો ભેદ
કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ-—દ્રવ્ય અવમોદરિકા તપ દો પ્રકાર કા હૈ-ઉપ-
કરણ દ્રવ્ય-અવમોદરિકા ઓર ભક્તપાન દ્રવ્યાવમોદરિકા । વસ્ત્ર, પાત્ર,
હોરા-સહિત મુલવસ્ત્રિકા આદિ ઉપકરણો કા અલ્પતા કો ઉપકરણ
દ્રવ્ય-અવમોદરિકા કહતે હૈ ઓર ભોજન-પાન કી અલ્પતા કો
ભક્તપાન-દ્રવ્યઅવમોદરિકા કહતે હૈ ॥૧૧॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયિકા-—પહેલે અવમોદરિકા બાહ્ય તપ કે દ્રવ્ય ઓર ભાવ
કી અપેક્ષા સે દો ભેદ બતાવે ગણ, અબ દ્રવ્ય-અવમોદરિકા તપ કી
પ્રરૂપણા કરતે હૈ-

સૂત્રાર્થ-—દ્રવ્ય અવમોદરિકા તપ યે પ્રકારનુ' છે-ઉપકરણદ્રવ્ય અવમો-
દરિકા અને ભક્તપાન દ્રવ્ય અવમોદરિકા ॥ ૧૧ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા-પહેલા અવમોદરિકા તપના દ્રવ્ય અને ભાવની અપેક્ષાથી
યે ભેદ કહેવામાં આવ્યા. હવે દ્રવ્ય અવમોદરિકા તપના યે ભેદોની પ્રરૂપણા
કરીએ છીએ—

દ્રવ્ય અવમોદરિકા તપ યે પ્રકારના છે-ઉપકરણદ્રવ્ય અવમોદરિકા અને
ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા વસ્ત્ર, પાત્ર હોરા સહિત મુહ્યર્પિત આદિ ઉપકરણોની
અલ્પતાને ઉપકરણ દ્રવ્ય અવમોદરિકા કહે છે અને ભોજન પાનની અલ્પ-
તાને ભક્તપાન દ્રવ્ય અવમોદરિકા કહે છે ॥ ૧૧ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયિકા-—પહેલાં અવમોદરિકા બાહ્ય તપના દ્રવ્ય અને ભાવની
અપેક્ષાથી યે ભેદ બતાવાયા, હવે દ્રવ્ય અવમોદરિકા તપની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ

પ્રરૂપયિતુમાહ—‘દ્વ્યોમોયરિયા તવે દુવિહે, ઉવગરણદ્વ્યોમોયરિયા—મક્ત
પાણદ્વ્યોમોયરિયા ય’ इति । દ્રવ્યાવમોદરિકા તપઃ દ્વિવિધં મવતિ, ઉપક-
રણદ્રવ્યાવમોદરિકા મક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકાચેતિ । તત્ર—વસ્ત્રપાત્રાદ્યુપકરણ-
રૂપ દ્રવ્યવિષયકાવમોદરિકા તપઃ—ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા તપ’ ઉચ્યતે
મક્તપાનાદિરૂપ દ્રવ્યવિષયકાવમોદરિકા તપો વિશેષ ક્રિયારૂપં મક્તપાન-
દ્રવ્યાવમોદરિકા તપ ઉચ્યતે । ઉક્તઞ્ચૌપપાતિકે ૩૦ સુત્રે—સે કિં તં દ્વ્યો-
મોયરિયા ૩ દ્વ્યોમોયરિયા દુવિહા પળ્લન્તા, તં જહા—ઉવગરણ દ્વ્યો-
મોયરિયા ય—મક્તપાણદ્વ્યોમોયરિયા ય—’ इति અથ કા સા દ્રવ્યાવમોદ-
રિકા—? દ્રવ્યાવમોદરિકા દ્વિવિધા પ્રજ્ઞપ્તા તથા—ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા ચ,
મક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા ચ इति ॥૧૧॥

મૂલમ્—ઉવગરણદ્વ્યોમોયરિયા તિવિહા, ઇગવત્થ—ઇગ-
પાણ—ચિયત્તોવગરણ સાહજ્જળયા ભેદઓ ॥૧૨॥

છાયા—‘ઉપકરણ દ્રવ્યાવમોદરિકા ત્રિવિધા, એકવસ્ત્ર—એકપાત્ર—ત્યક્તોપકરણ
સ્વાદનતા ભેદતઃ ॥૧૨॥

દ્રવ્ય—અવમોદરિકા તપ કે દો ભેદ હૈં—ઉપકરણદ્રવ્ય—અવમોદરિકા
ઔર મક્તપાનદ્રવ્ય—અવમોદરિકા । વસ્ત્ર—પાત્ર આદિ ઉપકરણો સંબંધી
ઝનોદરી કો ઉપકરણદ્રવ્ય—અવમોદરિકા તપ કહતે હૈં ઔર આહાર-
પાની સંબંધી ઝનોદરી કો મક્તપાનદ્રવ્ય—અવમોદરિકા કહતે હૈં ।
ઔપપાતિકસૂત્ર કે ૩૦ વે સૂત્ર મેં કહા હૈ—

પ્રશ્ન—દ્રવ્ય—અવમોરિકા કે કિતને ભેદ હૈં ?

ઉત્તર—દ્રવ્ય—અવમોદરિકા કે દો ભેદ હૈં—ઉપકરણ દ્રવ્ય—અવમો-
દરિકા ઔર મક્તપાનદ્રવ્ય—અવમોદરિકા ॥૧૧॥

‘ઉવગરણ દ્વ્યોમોયરિયા’ इत्यादि

દ્રવ્ય અવમોદરિકા તપના બે ભેદ છે ઉપકરણ દ્રવ્ય અવમોદરિકા અને
મક્તપાન દ્રવ્યાવમોદરિકા વસ્ત્ર, પાત્ર આદિ ઉપકરણો સંબંધી ઝનોદરીને ઉપ-
કરણ દ્રવ્ય અવમોદરિકા તપ કહે છે અને આહાર પાણી સંબંધી ઝનોદરીને
મક્તપાનદ્રવ્ય અવમોદરિકા કહે છે ઔપપાતિક સૂત્રના ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહ્યું છે

પ્રશ્ન—દ્રવ્ય—અવમોદરિકાના કેટલા ભેદ છે. ?

ઉત્તર—દ્રવ્ય અવમોદરિકાના બે ભેદ છે ઉપકરણદ્રવ્ય અવમોદરિકા
અને મક્તપાન દ્રવ્ય અવમોદરિકા ॥ ૧૧ ॥

‘ઉવગરણ દ્વ્યોમોયરિયા’ इत्यादि

तत्त्वार्थदीपिका-पूर्वं तावद्-द्रव्यावमोदरिका द्विविधत्वेन प्ररूपिता, उपकरणद्रव्यावमोदरिका-भक्तपानद्रव्यावमोदिका चेति । तत्र-प्रथमोपात्ताया उपकरणद्रव्यावमोदरिकाया स्त्रैविध्यं प्रतिपादयितुमाह-'उचगरण द्रव्यो-मोघरिया' इत्यादि उपकरणद्रव्यावमोदरिका वस्त्रपात्राद्युपकरणरूप द्रव्य-विषयकाऽवमोदरिका त्रिविधा भवति, तद्यथा-एकवस्त्र-एकपात्र-त्यक्तोपकरण स्वादनता भेदतः । एकं वस्त्रम् एकं चोलपट्टरूपं वस्त्रम्, न द्वितीयम् १ एकं पात्रम् २ त्यक्तोपकरण स्वादनता ३ च, त्यक्ता उपकरणस्य भाण्डोपकरणादेः स्वादनता आसक्तिर्यस्यावमोदरिकायां तपो विशेषक्रियायां सा त्यक्तोपकरणस्वादनता भाण्डामत्रोपकरणादिषु मूर्च्छापरित्यागता, इत्येवं रीत्या त्रिविधा खलु उपकरण द्रव्यावमोदरिका भवति ॥१२॥

सूत्रार्थ-उपकरणद्रव्य-अवमोदरिका के तीन भेद हैं-एक वस्त्र, एक पात्र और त्यक्तोपकरण स्वादनता ॥१२॥

तत्त्वार्थदीपिका--द्रव्य, अवमोदरिका के दो भेदों का प्ररूपण किया गया-उपकरणद्रव्य-अवमोदरिका और भक्तपान द्रव्य-अवमोदरिका अब इनमें से पहले भेद उपकरण द्रव्य अवमोदरिका के तीन भेदों का प्रतिपादन करते हैं-

उपकरण द्रव्य-अवमोदरिका तीन प्रकार की है-एक वस्त्र एक पात्र त्यक्तोपकरण स्वादनता । वस्त्र सिर्फ एक ही-चोलपट्ट और सदोरक मुख वस्त्रिका होना, दूसरा न होना एक वस्त्र-अवमोदरिका है । इसी प्रकार एक ही पात्र रखना एक पात्र अवमोदरिका है । भाण्ड, उपकरण आदि में मूर्च्छा का परित्याग करना त्यक्तोपकरण स्वादनता-अवमोदरिका कहलाती है ॥१२॥

सूत्रार्थ:-उपकरणद्रव्य अवमोदरिकांना त्रयु लेह छे ओक वस्त्र, ओक पात्र अने त्यक्तोपकरणस्वादनता ॥ १२ ॥

तत्त्वार्थदीपिका--द्रव्य अवमोदरिकांना ये लेहोनुं प्रश्न करवाभां आण्युं उपकरणद्रव्य अवमोदरिका अने लक्ष्मपानद्रव्य अवमोदरिका हुवे आ भांथी पडेला लेह उपकरण द्रव्यअवमोदरिकांना त्रयु लेहोनुं प्रतिपादन करीये छीये

उपकरणद्रव्य अवमोदरिका त्रयु प्रकारनी छे ओक वस्त्र, ओकपात्र अने त्यक्तोपकरणस्वादनता वस्त्र-पात्र ओक न घोजी अने दोरा सहितनी मुभवस्त्रिका जीणु न होवुं ओक वस्त्र अवमोदरिका छे जेवी न रीते ओक न पात्र राखवुं ओक पात्र अवमोदरिका छे. वासण, उपकरण आदिभां मोडने परित्याग करवे त्यक्तोपकरणस्वादनता अवमोदरिका कडेवाय छे, ॥ १२ ॥

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ:-પૂર્વે સ્વલુ-દ્રવ્યાવમોદરિકાયા દ્વિવિધ્યં પ્રોક્તમ્, સામ્પ્રતં-તત્ર પ્રથમોપાત્તોપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકાયા વિધ્યં પ્રતિપાદયિતુ માહ-‘ઉવગરણદ્રવ્યોષ્મોચરિયા તિવિહા, એગવસ્થ એગપાએ-ચિયત્તોવગરણ સાહ-જ્જળયા એયઓ’ ઇતિ । ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા-વસ્ત્રસ્ય પાત્રાદેરૂપકરણ-દ્રવ્યસ્ય વિષયેડવમોદરિકા તપઃ ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકારૂપમુચ્યતે, સા સ્વલુ-પકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા ત્રિવિધા ભવતિ । તથા-એકં વસ્ત્રં સદોરસ્મુખવસ્ત્રિકા સહિતમ્ એકં ચોલપટરૂપં વસ્ત્રમ્, ન દ્વિતીયં ભવતિ । એવમ્-એકં પાત્રમ્, ત્યક્તોપકરણસ્વાદનતા ચ, ત્યક્તા-ઉપકરણસ્ય માળ્ડામત્રોપકરણાદેઃ સ્વાદનતા મૂર્છાડ-સક્તિર્યસ્યામવમોદરિકાયાં ક્રિયાયાં સા-ત્યક્તોપકરણસ્વાદનતા, માળ્ડોપકરણાદિષુ મૂર્છાપરિત્યાગિતા, ઇત્યેવં ત્રિવિધા સ્વલુ-ઉપકરણ દ્રવ્યાવમોદરિકા તપો વિશેષક્રિયાડવગન્તવ્યા । ઉક્તશ્ચોપપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘સે કિં તં ઉવકરણ-

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ--પહેલે દ્રવ્ય-અવમોદરિકા કે દો ભેદોં કા કથન કિયા ગયા અવ ઉપકરણદ્રવ્ય-અવમોદરિકા કે ત્રીન ભેદોં કા કથન કરતે હૈં-

ઉપકરણ દ્રવ્ય-અવમોદરિકા ત્રીન પ્રકાર કા હૈં-વસ્ત્ર-પાત્ર આદિ ઉપકરણ દ્રવ્યોં કે વિષય મેં જનોદરી હોના ઉપકરણદ્રવ્ય-અવમોદરિકા કહલાતી હૈં । ઉસકે ત્રીન ભેદ હસ પ્રકાર હૈં (૧) એક વસ્ત્ર-ડોરા સહિત મુખવસ્ત્રિકા કે સાથ એક ચોલપટ હી રખના, દૂસરો કોઈ વસ્ત્ર ન રખના (૨) એકપાત્ર-એક સે અધિક પાત્ર ન રખના ઓર (૩) ત્યક્તોપકરણ સ્વાદનતા માળ્ડ, પાત્ર આદિ ઉપકરણોં પર મૂર્છા-મમતા ન હોના યહ ત્રીન પ્રકાર કી ઉપકરણ દ્રવ્ય-અવમોદરિકા સમજની ચાહિયે । ઔપપાતિકસૂત્ર કે ત્રીસવેં સૂત્ર મેં કહા હૈં-

તત્ત્વાર્થનિયુક્તિ--પહેલાં દ્રવ્ય અવમોદરિકાના બે ભેદોનું કથન કરવા માં આન્યું હવે ઉપકરણદ્રવ્ય અવમોદરિકાના ત્રણ ભેદોનું કથન કરીએ છીએ

ઉપકરણદ્રવ્ય અવમોદરિકા ત્રણ પ્રકારની છે વસ્ત્ર, પાત્ર આદિ ઉપકરણદ્રવ્યોના વિષયમાં ઉનોદરી હોવી ઉપકરણદ્રવ્ય અવમોદરિકા કહેવાય છે. તેના ત્રણ ભેદ આ પ્રમાણે છે (૧) એક વસ્ત્ર દોરા સહિત મુખવસ્ત્રિકાની સાથે એક ચોળપટ જ રાખવો બીજું કોઈ પણ વસ્ત્ર ન રાખવું (૨) પાત્ર એકથી અધિક પાત્ર ન રાખવા અને (૩) ત્યક્તોપકરણસ્વાદનતા વાસણ પાત્ર આદિ ઉપકરણો પર મૂર્છા મમતા ન હોવી. આ ત્રણ પ્રકારની ઉપકરણદ્રવ્ય અવમોદરિકા સમજવી બેઈએ

ઔપપાતિકસૂત્રના ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહ્યું છે

દ્વોમોચરિયા ? ઉવગરણદ્વોમોચરિયા તિવિહા વળ્લતા, તં જહા-
એગે વચ્ચે એગે પાણ ચિચત્તોવગરણસાહજ્જણયા, સે તં ઉવગરણદ્વો-
મોદરિયા' इति, અથ કા સા-ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા ? ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદ-
રિકા ત્રિવિધા પ્રજ્ઞસા, તદ્યથા-એકં વસ્ત્રમ્, એકં પાત્રમ્, ત્યક્તોપકરણસ્વાદનતા,
સા-ણા, ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા, ॥૩૨॥

મૂળમ્-ભક્તપાણદ્વોમોચરિયા તવે અણેગવિહે, અટ્ટ-
કવલપ્પમાણમેત્તાહ મેયઓ ॥૩૩॥

છાયા-ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા તપોડનેકવિધમ્, અટ્ટકવલ પ્રમાણ
માત્રાદિ ભેદતઃ' ॥૩૩॥

તત્ત્વર્થાદીપિકા-પૂર્વ તાવત્-ઉપકરણદ્રવ્યાવમોદરિકા ત્રૈવિધ્યેન પ્રતિ-
પાદિતા, સમ્પ્રતિ-ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકાં પ્રરૂપયિતુ માદ્-'ભક્તપાણદ્વો-
મોદરિયા તવે' इत्यादि । ભક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા તપોડનેકવિધં ભવતિ, તત્ર

પ્રશ્ન-ઉપકરણદ્રવ્ય-અવમોદરિકા કિસે કહતે હૈં ?

ઉત્તર-ઉપકરણદ્રવ્ય-અવમોદરિકા ત્રીન પ્રકાર કી કહી હૈ-
એકવસ્ત્ર, એકપાત્ર ઓર ત્યક્તોપકરણ સ્વાદનતા ॥૩૨॥

'ભક્તપાણ દ્વોમોચરિયા' इत्यादि

સૂત્રાર્થ-આઠ કવલ માત્ર હી આહાર કરને આદિ કે ભેદ સે
ભક્તપાન દ્રવ્ય-અવમોદરિકા તપ અનેક પ્રકાર કા હૈ ॥૩૩॥

તત્ત્વર્થાદીપિકા-પહેલે ઉપકરણદ્રવ્ય-અવમોદરિકા કે ત્રીન ભેદ
કહે ગયે હૈં, અવ ભક્તપાનદ્રવ્ય-અવમોદરિકા કા નિરૂપણ કરતે હૈં-

ભક્તપાનદ્રવ્ય-અવમોદરિકા તપ અનેક પ્રકાર કા હૈ । અશન,
પાન, સ્વાદિમ ઓર સ્વાદિમ, યહ ચાર પ્રકાર કા આહાર ભક્ત-પાન

પ્રશ્ન-ઉપકરણદ્રવ્ય અવમોદરિકા કેને કહે છે ?

ઉત્તર-ઉપકરણદ્રવ્ય અવમોદરિકા ત્રણ પ્રકારની કહેલી છે એક વસ્ત્ર,
એકપાત્ર અને ત્યક્તોપકરણસ્વાદનતા ॥ ૧૨ ॥

'ભક્તપાણ દ્વોમોચરિયા' इत्यादि

સૂત્રાર્થ-આઠ કવલ માત્ર જ આહાર કરવા આદિના ભેદથી ભક્તપાન
દ્રવ્ય અવમોદરિકા તપ અનેક પ્રકારના છે. ॥ ૧૩ ॥

તત્ત્વર્થાદીપિકા-પહેલાં ઉપકરણદ્રવ્ય અવમોદરિકાના ત્રણ ભેદ કહેવામાં
આવી ગયા છે હવે ભક્તપાનદ્રવ્ય અવમોદરિકાનું નિરૂપણ કરીએ છીએ

ભક્તપાનદ્રવ્ય અવમોદરિકા તપ અનેક પ્રકારના છે. અશન, પાન, આદ્ય
અને સ્વાદ્ય, આ ચાર પ્રકારના આહાર ભક્તપાનદ્રવ્ય કહેવાય છે. આનાથી

—મક્તપાનદ્રવ્યમ્ અશનપાનસ્વાદિમ-સ્વાદિમરૂપચતુર્વિધાહારદ્રવ્યમુચ્યતે, તત્ત-
મ્વન્ધિ-અવમોદરિકા તપઃ—અવમોદરિકા નામ તપશ્ચરણક્રિયાવિશેષઃ તદ્વૂપં
તપઃ મક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા તપ ઉચ્યતે, તત્ત્વાઽનેકવિધં ભવતિ, ‘અષ્ટ-
કવલપ્રમાણમાત્રાદિ ભેદાત્ । તત્રાપિ—પ્રાધાન્યેન ત્રિવિધમ્—ઉત્કૃષ્ટ, મધ્યમ,
જઘન્યભેદાત્ । તત્રો—ત્કૃષ્ટમ્ એકકવલાદારમ્યાઽષ્ટકવલાહારપર્યન્તાહારરૂપમ્ ૧
મધ્યમમ્—નવમકવલાદારમ્ય પોડશકવલાહારપર્યન્તાહારરૂપમ્ ૨ જઘન્યમ્—સપ્ત-
દશકવલાદારમ્યૈકત્રિંશત્કવલપર્યન્તાહારરૂપમ્ ૩ તત્રાપિ—एकादि कवलहानेस्तार-
हम्येनाऽस्याऽनेकविधत्व मपि भवति ॥इति॥१३॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિઃ—‘પૂર્વ’ તાવદ્—દ્વિવિધં તપઃ, તત્રાપિ—ઉપકરણદ્રવ્યાવ-
મોદરિકાતપસ્ત્રિવિધં પ્રતિપાદિતમ્ સમ્પ્રતિ—મક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકાતપઃ પ્રરૂ-
પયિતુ માહ—‘મક્ત પાપણદ્વોમોઘરિયા તવે અળેગવિહે અટ્ટકવલપ-
માણમેત્તાહ મેઘઓ’ ઇતિ । મક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા તપઃ—અશનપાનરૂપા-

દ્રવ્ય કહલાતા હૈ । इससे संबंध रखने वाली ऊनोदरी को भक्तपान
द्रव्य अवमोदरिका तप कहते हैं । वह यद्यपि अनेक प्रकार की है,
मगर स्थूल भेदों की अपेक्षा से तीन प्रकार की है—उत्कृष्ट, मध्यम
और जघन्य । एक कवल से लेकर आठ कवल तक खाना उत्कृष्ट, नौ
कवल से लगा कर सोलह कवल तक खाना मध्यम और सत्तरह
कवल से लगाकर इकतीस कवल तक खाना जघन्य भक्तपानद्रव्य-
अवमोदरिका है । इसमें एक-दो कवलों की न्यूनाधिकता के कारण
अनेक अवान्तर भेद निष्पन्न होते हैं, अतः अनेक प्रकार की है ॥१३॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિ—ઉપકરણદ્રવ્ય-અવમોદરિકા તપ કે ત્રીન ભેદોં
કા નિરૂપણ કિયા ગયા અવ મક્તપાનદ્રવ્ય-અવમોદરિકા તપ કી પ્રરૂ-
પણા કી જાતી હૈ—

સંબંધ રાખનારી ઉનોદરીને ભક્તપાનદ્રવ્ય અવમોદરિકા તપ કહે છે. તે બે
કે અનેક પ્રકારની છે પણ સ્થૂળભેદોની અપેક્ષાથી ત્રણ પ્રકારની છે. ઉત્કૃષ્ટ,
મધ્યમ અને જઘન્ય. એક કોળીયાથી લઈને આઠ કોળીયા સુધી ખાવું
ઉત્કૃષ્ટ, નવ કોળીયાથી શરૂ કરીને સોળ કોળીયા સુધી ખાવું મધ્યમ અને
સત્તર કોળીયાથી લઈને એકત્રીસ કોળીયા સુધી ખાવું જઘન્ય ભક્તપાનદ્રવ્ય
અવમોદરિકા છે. આમાં એક બે કોળીયાની ન્યૂનાધિકતાને કારણે અનેક
અવાન્તર ભેદ નિષ્પન્ન થાય છે આથી અનેક પ્રકારની છે ॥ ૧૩ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્ણયુક્તિ—ઉપકરણદ્રવ્ય અવમોદરિકા તપના ત્રણ ભેદોનું
નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું હવે ભક્તપાનદ્રવ્ય અવમોદરિકા તપની પ્રરૂપણા
કરવામાં આવે છે

हारद्रव्यसम्बन्धितपः भक्तपानद्रव्यावमोदरिका तप उच्यते । तच्चाऽनेकविधं भवति, अष्टकवलप्रमाणमात्रादि भेदतः, कवलपरिमाणं चाऽत्रकुक्कुटाण्डप्रमितं बोध्यम् । प्राधान्यतोऽवमोदरिकातपः-उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्यावमोदरिकाभेदात् त्रिविधं भवति तत्पूर्वं प्रदर्श्यते-द्वात्रिंशत्परिमितैः कवलैः पर्याप्तः पुरुषाहारो भवति । तत्रैककवलादारभ्याऽष्टकवलपरिमिताहारकरणं मुत्कृष्टावमोदरिकातपः १ नव कवलादारभ्य षोडशकवलपरिमिताहारकरणं मध्यमावमोदरिकातपः २ सप्तदशकवलादारभ्यैकत्रिंशत्कवलपरिमिताहारकरणं जघन्यावमोदरिकातप उच्यते ३ । इत्थं त्रिविधमप्यवमोदरिकातपः प्रत्येक मैकादिकवलहीनाहारभेदेनाऽनेकविधत्वं भजतीति सूत्रेऽप्यऽनेकविधत्वमुक्तम् । तथाऽन्यप्रकारेणाऽपि-अव-

भक्तपानद्रव्य-अवमोदरिका तप अनेक प्रकार का है, यथा आठ कवल मात्र आहार करना आदि । यहां कवल का परिमाण मुर्गी के अंडे के बराबर समझना चाहिए । प्रधान रूप से यह अवमोदरिका तप तीन प्रकार का है-उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य । पुरुष का परिपूर्ण आहार बत्तीस कवल-प्रमाण माना जाता है, इसमें से एक कवल से लेकर आठ कवल तक आहार करना उत्कृष्ट-अवमोदरिका तप है । नौ कवल से लेकर सोलह कवल तक आहार करना मध्यम अवमोदरिका तप है और सत्तरह कवल से आरंभ करके इकतीस कवल तक खाना जघन्य अवमोदरिका तप है ।

इस प्रकार अवमोदरिका तप यद्यपि तीन प्रकार का है तथापि एक-दो कवल कम या ज्यादा खाने से उसके अवान्तर भेद होते हैं । इसी कारण सूत्र में उसे अनेक प्रकार का कहा है ।

भक्तपानद्रव्य अवमोदरिका तप अनेक प्रकारना छे' यथा आठ केणीया मात्र आहार करवे। वगेरे अही' केणीयांनु' परिमाण भरधीना छ'डानी भराभर समजवुं लेछे। प्रधान रूपथी आ अवमोदरिका तप त्रय प्रकारना छे उत्कृष्ट, मध्यम अने जघन्य, पुरुषना परिपूर्ण आहार भत्रीस केणीया प्रमाण मानवामां आवे छे. आमांथी ओक केणीयाथी लछने आठ केणीया सुधी आहार करवे। उत्कृष्ट अवमोदरिका तप छे. नव केणीयाथी लछने सोण केणीया सुधी आहार करवे। मध्यम अवमोदरिका तप छे अने सत्तर केणीया थी आरंभ करीने ओकत्रीस केणीया सुधी आवुं जघन्य अवमोदरिका तप छे.

आवी रीते अवमोदरिका तप ले के त्रय प्रकारना छे तो यणु ओक छे केणीया ओछा के वधारे भावाथी तेना अनेक अवान्तर लेह थाय छे अने आथी ज सूत्रमां तेने अनेक प्रकारनी कडेवामां आवेद छे,

મોદરિકાતપસઃ પશ્ચદિધત્વેન શાસ્ત્રોવતત્ત્વાદનેકવિધત્વં ભવતિ, તથાદિ-અલ્પા-
 હારાવમોદરિકા ૧ અપાર્ધાવમોદરિકા ૨ દ્વિભાગપ્રાપ્તાવમોદરિકા ૩ પ્રાપ્તાવમો-
 દરિકા ૪ કિંચિદૂનાવમોદરિકા ૫ ચેતિ । તત્રાઽષ્ટકવલપ્રમાણમાત્રકવલાહારોઽ-
 લ્પાહારરૂપમવમોદરિકા તપો ભવતિ ૧ દ્વાદશકુક્કુટાણ્ડપ્રમાણમાત્રકવલાહારો-
 ઽપાર્ધાવમોદરિકાતપો ભવતિ-૨ એવમ્-—પોડશકુક્કુટાણ્ડક પ્રમાણમાત્રકવલા-
 હારો દ્વિભાગપ્રાપ્તાવમોદરિકાતપો ભવતિ-૩ એવં-ચતુર્વિંશતિ કુક્કુટાણ્ડકપ્રમાણ-
 માત્રકવલાહારઃ પ્રાપ્તાવમોદરિકાતપો ભવતિ-૪ એકત્રિંશતિકુક્કુટાણ્ડકપ્રમાણમાત્ર-
 કવલાહારઃ કિંચિદૂનાવમોદરિકા તપો ભવતિ-૫ । તત્રાઽષ્ટૌ કુક્કુટાણ્ડકપ્રમા-
 ãમાત્રાન્ કવલાન્ ય આહરતિ તસ્ય પુરુષસ્યાઽલ્પાહારનામકાઽવમોદરિકા તપો
 ભવતિ । દ્વાદશ કુક્કુટાણ્ડકપ્રમાણમાત્રાન્ કવલાન્ ય આહરતિ તસ્ય સ આહારો
 -ઽપાર્ધાવમોદરિકાતપો ભવતિ ।

અન્ય પ્રકાર સે અવમોદરિકા તપ કે શાસ્ત્ર મેં પાંચ ભેદ કહે ગયે હૈં,
 હસ કારણ ખી ઉસકે અનેક ભેદ કહે જા સકતે હૈં । વે ભેદ હસ પ્રકાર હૈં-

(૧) અલ્પાહાર અવમોદરિકા (૨) અપાર્ધ-અવમોદરિકા (૩) દ્વિભાગ
 પ્રાપ્ત-અવમોદરિકા (૪) પ્રાપ્ત-અવમોદરિકા ઓર (૫) કિંચિદૂન-અવ-
 મોદરિકા । આઠ કવલ માત્ર આહાર કરના અલ્પાહાર-અવમોદરિકા
 તપ હૈ, મુર્ગીં કે અંડે કે બરાબર ચારહ કવલ માત્ર આહાર કરના
 અપાર્ધ-અવમોદરિકા તપ હૈ, હસી પ્રકાર સોલહ કવલ માત્ર આહાર
 કરના દ્વિભાગ પ્રાપ્ત-અવમોદરિકા તપ હૈ, ચોવીસ કવલ આહાર કરના
 પ્રાપ્ત-અવમોદરિકા હૈ ઓર હકતીસ કવલ મુર્ગીં કે અંડે કે બરાબર
 આહાર કરના કિંચિદૂન-અવમોદરિકા તપ કહલાતા હૈ ।

અન્ય પ્રકારથી અવમોદરિકા તપના શાસ્ત્રમાં પાંચ ભેદ કહેવામાં આવ્યા
 છે એ કારણને લઈને પણ તેના અનેક ભેદ કહી શકાય છે. આ ભેદ આ પ્રમાણે છે
 (૧) અલ્પાહાર અવમોદરિકા (૨) અપાર્ધ અવમોદરિકા (૩) દ્વિભાગપ્રાપ્ત
 અવમોદરિકા (૪) પ્રાપ્ત અવમોદરિકા અને (૫) કિંચિત ઉન અવમોદરિકા
 આઠ કોળીયા માત્ર આહાર કરવો અલ્પાહાર અવમોદરિકા તપ છે મરઘીના
 ઇંડાની બરાબર બાર કોળીયા માત્ર આહાર કરવો અપાર્ધ અવમોદરિકા તપ
 છે, એજ પ્રકારે સોળ કોળીયા આહાર કરવો દ્વિભાગ પ્રાપ્ત અવમોદરિકા
 તપ છે, ચોવીસ કોળીયા આહાર કરવો પ્રાપ્ત અવમોદરિકા તપ છે અને
 એકત્રીસ કોળીયા, મરઘીના ઇંડાની બરાબર આહાર કરવો કિંચિદૂન
 અવમોદરિકા તપ કહેવાય છે.

षोडशकवला अर्द्धः पुरुषाहारः तस्मात् अर्धात् अपकृष्टा-न्यूना या-ऽवमोदरिका द्वादशकवलात्मकत्वात् सा-ऽषाढीवमोदरिकाऽवसेया । एवं-षोडश कुक्कुटाण्डकप्रमाणमात्रान् कवलान् य आहरति तस्य स आहारो द्विभागप्राप्तावमोदरिका तपो भवति । तथा च द्वात्रिंशत्कवलात्मकं पर्याप्तपुरुषाहारस्य भागद्वये कृते सति प्राप्तान् षोडशकवलान् भुञ्जानस्य पुरुषस्य द्विभागप्राप्तावमोदरिका तपो भवतीति भावः । एवं-चतुर्विंशति कुक्कुटाण्डकप्रमाणमात्रान् कवलान् य आह-

इस प्रकार जो पुरुष मुर्गी के अण्डे जितने आठ कौर आहार करता है उसके अल्पाहार नामक ऊनोदरी तप होता है । जो मुर्गी के अंडे के बराबर बारह कवल प्रमाण आहार करता है वह अपार्ध-अवमोदरिका तप वाला कहलाता है । सोलह कवल आहार पुरुष का अर्धाहार गिना जाना है, उस आधे से भी कम अर्थात् बारह कवल का आहार करना अपार्ध-अवमोदरिका तप है । जो मुर्गी के अंडे के बराबर सोलह कवल आहार करता है, उसका आहार द्विभाग प्राप्त-अवमोदरिका है । उसे द्वितीय भाग (आधा) अवमोदरिका तप भी कहते हैं । तात्पर्य यह है कि बत्तीस कवल के पुरुष के पूर्ण आहार के बराबर-बराबर के दो भाग किये जाएँ तो सोलह-सोलह हो सकते हैं । इस कारण सोलह कवल का आहार द्विभाग प्राप्त-अवमोदरिका तप समझना चाहिए । जो पुरुष मुर्गी के अण्डे के बराबर सोलह कवल का आहार करता है वह द्विभाग प्राप्त अवमोदरिका तप वाला कहलाता है ।

આ પ્રમાણે જે પુરુષ મરઘીના ઇંડા જેટલા આઠ કોળીયાનો આહાર કરે છે, તેનું અલ્પાહાર નામક ઉનોદરી તપ હોય છે જે મરઘીના ઇંડા બરાબર બાર કોળીયા પ્રમાણ આહાર કરે છે તે અપાર્ધ અવમોદરિકા તપવાળો કહેવાય છે. સોળ કોળીયાનો આહાર પુરુષનો અડધો આહાર ગણાય છે. તે અડધાથી ઓછો અર્થાત્ બાર કોળીયા આહાર કરવો અપાર્ધ અવમોદરિકા તપ છે. જે મરઘીના ઇંડા જેટલા સોળ કોળીયાનો આહાર કરે છે તેનો આહાર દ્વિભાગપ્રાપ્ત અવમોદરિકા તપ સમજવો તેને દ્વિતીય ભાગ (અડધો) અવમોદરિકા તપ પણ કહે છે. તાત્પર્ય એ છે કે બત્તીસ કોળીયા પુરુષના પૂર્ણ આહારના સરખા સરખા જે ભાગ કરવામાં આવે તો સોળ સોળ થાય છે આ કારણે સોળ કોળીયાનો આહાર દ્વિ ભાગ પ્રાપ્ત અવમોદરિકા તપ સમજવો જોઈએ જે પુરુષ મરઘીના ઇંડાની બરાબર સોળ કોળીયાનો આહાર કરે છે તે દ્વિભાગ પ્રાપ્ત અવમોદરિકા તપવાળો કહેવાય છે. અવી જ રીતે

રતિ તસ્ય સ આહારઃ પ્રાપ્તાવમોદરિકા-પાદોનમાત્રન્યુનતયા પ્રાપ્તેવાઽવ-
મોરિકા પ્રાપ્તાવમોદરિકા વ્યપદિશ્યતે । એવમ્-દ્વકત્રિશત્કુક્કુટાણ્ડકપ્રમાણ-
માત્રાન્ કવલાન્ યઃ પુરુષ આહરતિ તસ્ય આહારઃ કિશ્ચિદ્નાવમોદરિકા કવલૈક
ન્યુનાઽવમોદરિકા તપસ્યા ભવતિ, કિન્તુ-દ્વાત્રિશત્ કવલપ્રમાણમાત્રાન્ કવલાન્
ય આહરતિ તસ્ય પુરુષસ્ય સ આહારઃ પ્રમાણ પ્રાપ્તાહારત્વાત્ અવમોદરિકા તપો ન
ભવતિ । અપિતુ-એકેનાઽપિ કવલેન ઝનમાહારમાહરન્ શ્રમણો નિર્ગ્રન્થો ન પ્રકા-
મરસભોજી ભવતીતિ વક્તું પાર્યતે । તથા ચ-જઘન્યાઽવમોદારિકારૂપા તપસ્યાં
કુર્વન્ શ્રમણો નિર્ગ્રન્થઃ પ્રકામભોજીતિ ન વક્તું શક્યતે, ઇશ્યેવં રીત્યા ભક્તપાન
દ્રવ્યાવમોદરિકા તપોઽનેકવિધં ભવતીતિ વોધ્યમ્ । ઉક્તશ્ચૌપપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-
સે કિં તં ભક્તપાણદ્વ્યવોમોયરિયા-? ભક્તપાણ દ્વ્યવોમોયરિયા-અણેગ
વિહા પણ્ણત્તા, તં જહા-અટ્ઠકુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે આહર-
માણે અવહોમોયરિયા-૨ સોલસ કુક્કુડિયંડગપ્પમાણમેત્તે કવલે
આહરમાણે દુભાગપત્તોમોયરિયા-૩ ચડ્ડીસં કુક્કુડિયંડગપ્પમાણ-
મેત્તે કવલે આહરમાણે પત્તોમોયરિયા-૪ એકકસીસં કુક્કુડિયંડગ

इसी प्रकार चौबीस कवल का आहार करने वाले को प्राप्त अवमोदरिका
तप होता है । जो पुरुष इकतीस कवल का आहार करता है, उसका
तप किञ्चिद्दून (कुछकम) अनोदरी तप कहलाता है । किन्तु जो पुरुष
बत्तीस कवल प्रमाण आहार करता है, उसका आहार प्रमाण प्राप्त
(पूर्ण) होने से अवमोदरिका तप नहीं कहा जा सकता । जो श्रमण
या श्रमणोपासक परिपूर्ण आहार से एक ही कवल कम खाता है उसी
के विषय में ऐसा कहा जा सकता है कि यह प्रकारस भोजी नहीं है ।
इस प्रकार भक्तपान द्रव्य-अवमोदरिका तप अनेक प्रकार का होता है ।
औपपातिक सूत्र में कहा है—

ચોવીસ કોળીયાનો આહાર કરનારને પ્રાપ્ત અવમોદરિકા તપ હોય છે જે
પુરૂષ એકત્રીસ કોળીયાનો આહાર કરે છે તેનું તપ કિચ્ચિદ્દૂન (થોડું ઓછું)
ઉનોદરી તપ કહેવાય છે, પરંતુ જે પુરૂષ બત્રીસ કોળીયા પ્રમાણ આહાર
કરે છે તેનો આહાર પ્રમાણ પ્રાપ્ત (પૂર્ણ) હોવાથી અવમોદરિકા તપ કહી
શકાય નહીં. જે શ્રમણ અથવા શ્રમણોપાસક પરિપૂર્ણ આહારથી એક
કોળીયા પણ ઓછું ખાય છે તેના જ સંબંધમાં એમ કહી શકાય કે આ
પ્રકાર સ ભોજી નથી. આવી રીતે ભક્તપાનદ્રવ્ય અવમોદરિકા તપ અनेक
પ્રકારના હોય છે. ઔપાપાતિક સૂત્રમાં કહ્યું છે

પ્રમાણમેત્તે કવલે આહારમાણે પ્રમાણપત્તે, एतो एगेण वि घासणं
ऊणयं आहारमाहारे माणे समणे निगमंथे णो पकासरसमोहं ति
वत्तव्वं सिधा, से तं भत्तपाणदव्वोमोयरिया, से तं दव्वोमोयरिया' इति
अथ का सा भक्तपानद्रव्यावमोदरिका-१ भक्तपानद्रव्यावमोदरिका-अनेक
विधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा-अष्ट कुक्कुटाण्डकप्रमाणमात्रान् कवलान् आहरन्-अल्पा-
हारः-१ द्वादशकुक्कुटाण्डकप्रमाणमात्रान् कवलान् आहरन् अपार्धाऽवमोद-
रिका-२ षोडश कुक्कुटाण्डकप्रमाणमात्रान् आहरन् द्विभागप्राप्ताऽवमोद-
रिका-३ चतुर्विंशति कुक्कुटाण्डकप्रमाणमात्रान् कवलान् आहरन् प्राप्ताऽवमो-
दरिका-४, एकत्रिंशत् कुक्कुटाण्डकप्रमाणमात्रान् कवलान् आहरन् किञ्चिद्दूनाऽ
ऽवमोदिका-५, द्वात्रिंशत्कुक्कुटाण्डकप्रमाणमात्रान् कवलान् आहरन् प्रमाणप्राप्तः
इव एकेनापि कवलेन ऊनकम् आहार माहरन् श्रमणो निर्ग्रन्थो 'न प्रकासरस-

પ્રશ્ન—મત્તપાન દ્રવ્ય-અવમોદરિકા તપ કિતને પ્રકાર કા હૈ ?

ઉત્તર—મત્તપાન દ્રવ્ય-અવમોદરિકા તપ અનેક પ્રકાર કા હૈ, યથા
મુર્ગી કે અંડે કે બરાબર આઠ કવલ માત્ર આહાર કરના અલ્પાહાર હૈ।
મુર્ગી કે અંડે કે બરાબર બારહ કવલ કા આહાર કરના અપાર્ધ-અવમો-
દરિકા તપ હૈ, હસી પ્રકાર સોલહ કવલ કા આહાર કરના દ્વિભાગપ્રાપ્ત-
અવમોદરિકા હૈ। ચૌવીસ કવલ કા જો આહાર કરતા હૈ ઉસકા તપ
પ્રાપ્ત-અવમોદરિકા કહલાતા હૈ। જો ફકતીસ કવલ આહાર કરતા હૈ
ઉસે કિંચિદૂન અવમોદરિકા તપ હોતા હૈ। જો પૂરા મુર્ગી કે અંડે કે
બરાબર વત્તીસ કવલ આહાર કરતા હૈ, ઉસકા આહાર પ્રમાણપ્રાપ્ત
કહલાતા હૈ। જો શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પ્રમાણપ્રાપ્ત આહાર (વત્તીસ) કવલ સે
એક બી કવલ કસ આહાર કરતા હૈ, ઉસકે વિષય સે યહ નહીં કહા

પ્રશ્ન—ભક્તપાનદ્રવ્ય અવમોદરિકા તપ કેટલા પ્રકારના છે ?

ઉત્તર—ભક્તપાનદ્રવ્ય અવમોદરિકા તપ અનેક પ્રકારના છે જેમ કે
મરધીના ઇંડા જેટલો આઠ કોળીયા માત્ર આહાર કરવો અલ્પાહાર છે.
મરધીના ઇંડા બરાબર બાર કોળીયા આહાર કરવો અપાર્ધ અવમોદરિકા
તપ છે, એવી જ રીતે સોળ કોળીયાનો આહાર કરવો દ્વિભાગપ્રાપ્ત અવમો-
દરિકા છે. ચોવીસ કોળીયાનો જે આહાર કરે છે તેનું કિંચિદૂન અવમોદરિકા
તપ હોય છે. જે મરધીનાં ઇંડા જેટલા પૂરા બત્રીસ કોળીયાનો આહાર કરે
છે તેનો આહાર પ્રમાણપ્રાપ્ત કહેવાય છે. જે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પ્રમાણ પ્રાપ્ત આહાર
(બત્રીસ) કોળીયાથી એક પણ કોળીયો એછા આહાર કરે છે તેના વિષયમાં

‘મોજી’ તિ વ્યવ્યં સ્યાત્ સા-એવા મક્તપાનદ્રવ્યાવમોદરિકા, સા-એવા દ્રવ્યાવમોદરિકા’ इति ॥૧૩॥

મૂલમ્—ભાવોમોચરિયા તવે અણેગ વિહે, અપ્પકોહાડ મેયઓ ॥૧૪॥

છાયા—ભાવાવમોદરિકા તપોડનેકવિધમ્, અલ્પક્રોધાદિ મેદતઃ ॥૧૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાવહ્—દ્રવ્યાવમોદરિકા તપઃ પ્રરૂપિતમ્, સમ્પતિ-ભાવાવમોદરિકા તપઃ પ્રરૂપાયતુમાહ—‘ભાવોમોચરિયાતવે’—इत्यादि । भावावमोदरिका तपः—भावस्य क्रोधादि कषायरूपात्मपरिणामस्य प्रतनुकारकम् अवमोदरिका नाम क्रियाविशेषरूपतपो भावावमोदरिका तपः—भावस्य क्रोधादि कषायरूपात्मपरिणामस्य प्रतनुकारकम् अवमोदरिका नाम क्रियाविशेषरूपं तपो भावावमोदरिका तप उच्यते । तच्चाऽनेकविधं भवति, तद्यथा—अल्पक्रोधः अल्पमानः अल्पमाया अल्पलोभः अल्पशब्दः अल्पकलहः अल्पझञ्झश्च, इत्येव मनेकविधं भावावमोदरिकातपो भवति । तत्राऽलाः प्रतनुः क्रोधः क्रोधमोहनोयोदय-

જા સુકતા કિ વહ પ્રકામ રસ મોજી હૈ । यह भक्तपान द्रव्य-अवमोदरिका तप है । इस प्रकार द्रव्यावमोदरिका विवेचन पूर्ण हुआ ॥१३॥

‘ભાવોમોચરિયા તવે’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—અલ્પક્રોધ આદિ કે મેદ સે ભાવ-અવમોદરિકા તપ મી અનેક પ્રકાર કા હૈ ॥૧૪॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—દ્રવ્ય-અવમોદરિકા તપ કી વ્યાખ્યા કી ગઈ, અવ-ભાવ-અવમોદરિકા તપ કી પ્રરૂપણા કરતે હૈ—

આત્મા કે ક્રોધાદિ વિભાવ-પરિણામોં કો કમ કરના ભાવ-અવમોદરિકા તપ કહલાતા હૈ । उसके अनेक प्रकार हैं, जैसे क्रोध को कम करना, मान को कम करना, माया को कम करना, लोभ को कम करना,

એવું ન કહી શકાય કે તે પ્રકામરસ લોભ છે. આ ભક્તપાનદ્રવ્ય અવમોદરિકા તપ છે. આ રીતે દ્રવ્યાવમોદરિકાનું વિવેચન પૂર્ણ થયું. ॥૧૩॥

‘ભાવોમોચરિયાતવે’ इत्यादि

સૂત્રાર્થ—અલ્પક્રોધ આદિના લેદથી ભાવ અવમોદરિકા તપ અનેક પ્રકારના છે ॥ ૧૪ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—દ્રવ્ય અવમોદરિકા તપની વ્યાખ્યા કરવામાં આવી, હવે ભાવ અવમોદરિકા તપની પ્રરૂપણા કરીએ છીએ

આત્માના ક્રોધાદિ વિભાવ પરિણામોના ઘટાડો કરવો ભાવ અવમોદરિકા તપ કહેવાય છે. તેના અનેક પ્રકાર છે. જેમકે ક્રોધ ઓછો કરવો, માન ઓછું કરવું, માયાને ઘટાડવી, લોભ ઓછો કરવો, વચનની ન્યૂનતા, કલહ

जन्योऽसहनरूपाऽक्षमा परिणति विशेषः—अल्पक्रोधः क्रोध कषायालपता-१ एवम्
अल्पमानः जात्याद्यभिमानराहित्यम् मानालपता २ एवम् अल्पमाया मायालपता ३
अल्पलोभो लोभालपता ४ अल्पशब्दः शब्दालपता, परिमितभाषणम् ५ अल्पकलहः
कलहाभावः ६ अल्पझञ्झः परस्परभेदोत्पादकवचनव्यापाररूप झञ्झस्याऽ-
भावोऽवगन्तव्यः ॥७॥ ॥१४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पूर्व खलू=द्रव्यावमोदरिका तपः प्ररूपितम्, सम्प्रति-
भावमोदरिकातपः प्ररूपयितुमाह—‘भावोमोयरिया तवे अपोगबिहे, अप्प
कोहाइ भेयओ’—इति । भावमोदरिका तपः—भावस्य क्रोधादि कषायादे-
राभ्यन्तरस्य अक्षमादि परिणतरूपस्य प्रतनु विधायकम् अवमोदरिकानाम तपो
भावाऽवमोदरिका तपः, तच्चाऽनेकविधं भवति । अल्पक्रोधादि भेदतः तद्यथा—
अल्पक्रोधमानमाया लोभशब्दकलहझञ्जभेदतः । अत्राऽल्प शब्दस्य द्वन्द्वादौ

वचन की न्यूनता, कलह और झञ्झ की न्यूनता आदि । क्रोध मोहनीय
के उदय से उत्पन्न होने वाले असहन रूप असाता परिणाम को क्रोध
कहते हैं, उसकी अल्पता क्रोध की अल्पता है । जाति आदि के अभिमान
की न्यूनता मानालपता है । माया की कमी को मायालपता कहते हैं । लोभ
के पतलेपन को लोभालपता या अल्पलोभ कहते हैं । परिमित भाषण को
शब्दालपता कहते हैं । कलह का अभाव अल्पकलह कहलाता है । परस्पर
में भेद उत्पन्न करने वाले वचनों का प्रयोग न करना अल्पझञ्झ है ॥१४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—द्रव्य-अवमोदरिका तप की व्याख्या की जा
चुकी, अब भाव अवमोदरिका तप का निरूपण करते हैं—

अक्षमा-परिणतिरूप क्रोध आदि वैभाविक भावों की अल्पता को
भाव-अवमोदरिका तप कहते हैं । उसके अनेक भेद हैं—अल्पक्रोध, अल्प-

अने कलुयानी न्यूनता आदि क्रोध मोहनीयता उदयथी उत्पन्न थनारा
असहनइय अक्षमापरिणामने क्रोध कहे छे. तेनी अल्पता क्रोधनी अल्पता छे.
जाति वगेरेना अभिमाननी न्यूनता मान अल्पता छे मायानुं ओछापणुं
मायाल्पता कहेवाय छे. दोलने पातणो पाउवे दोल अल्पता अथवा अल्पदोल कहे
छे. परिमित भाषणुने शब्दालपता कहे छे कलहुने अभाव अल्पकलह कहेवाय छे.
परस्परमां लेद उत्पन्न करनार वचनोने प्रयोग न करवे अल्प अंअ छे ॥१४॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—द्रव्य अवमोदरिका तपनी व्याख्या करवामां आवी
हुवे भाव अवमोदरिका तपनुं निरूपणु करीअे छीअे

अक्षमा परिणति रूप क्रोध आदि वैभाविक भावों की अल्पताने भाव
अवमोदरिका तप कहे छे. तेना अनेक भेद छे अल्पक्रोध, अल्पमान, अल्पमाया,

સદ્ભાવાત્ તસ્ય પ્રત્યેકમભિસમ્બન્ધાત્, અલ્પક્રોધઃ-૧ અલ્પશબ્દઃ મતનુ
વાચકઃ તેનાડલ્પઃ સ્વલ્પઃ ક્રોધઃ ક્રોધમોહનીયકર્મોદયસમ્પાદ્યઃ અસહનરૂપાડ-
ક્ષમા પરિણતિવિશેષઃ ક્રોધાલ્પત્વદિત્યેવમ્ અલ્પક્રોધોનામ ભાવાવમોદરિકા
તપઃ ૧ અલ્પમાનઃ જાત્યાદ્યભિમાનરાહિત્યમ્ દાતાલ્પતા ૨ અલ્પમાયા-
માયાલ્પત્વમ્-૩ અલ્પલોભઃ લોભાલ્પતા ૪ અલ્પજ્ઞઃ-પરિમિતભાષણમ્, શબ્દા-
લ્પતા-૫ અલ્પકલહઃ-કલહાભાવઃ-૬ અલ્પજ્ઞઃ-પરસ્પર ભેદોત્પાદકવચનવ્યા-
પારરૂપજ્ઞઞસ્યાડમાવઃ-૭ इत्येवं रीत्या भावावमोदरिका तपोऽनेकविधं भवति ।
ઉક્તશ્ચૌપપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘સે કિં તં ભાવે.મોયરિયા ૩ ભાવોમોયરિયા
અપેગવિહા પળ્લતા, તં જહા અપગોહે? અપ્પમાળે ૨ અપ્પમાણે ૩ અપ્પ-

માન અલ્પમાયા, અલ્પલોભ, અલ્પશબ્દ, અલ્પકલહ, અલ્પજ્ઞ આદિ ।
‘અલ્પ’ શબ્દ મન્દતા યા ન્યૂનતા का वाचक है । अतः अल्पक्रोध का अर्थ
है-क्रोध मोहनीय कर्म के उदय से उत्पन्न होने वाले असहनरूप अक्षमा
परिणति की न्यूनता या मन्दता यह मन्दता अल्पक्रोध नामक भाव-
अवमोदरिका तप है । इसी प्रकार जाति आदि के अभिमान की अल्पता
को अल्पमान तप समझना चाहिए । माया की अल्पता अल्पमाया
कहलाति है । लोभ की अल्पता अल्पलोभ है । परिमित भाषण को
अल्पशब्द कहते हैं । कलह का अभाव अल्पकलह है । परस्पर में भेद
उत्पन्न करने वाले का प्रयोग ज्ञंज्ञ कहलाता है और उसका अभाव
अल्पज्ञंज्ञा । इस प्रकार भावअवमोदरिका तप अनेक प्रकार का है । औप-
पातिक सूत्र में कहा है-भाव अवमोदरिका तप कितने प्रकार का है ?

અલ્પલોભ અલ્પશબ્દ, અલ્પકલહ, અલ્પ ઝંઝ-આદિ ‘અલ્પ’ શબ્દ મન્દતા
અથવા ન્યૂનતાનું વાચક છે આથી અલ્પક્રોધનો અર્થ છે ક્રોધ મોહનીય કર્મના
ઉદયથી ઉત્પન્ન થનારા અસહનરૂપ અક્ષમાપરિણતિની ન્યૂનતા અથવા મન્દતા
અલ્પ ક્રોધ નામક ભાવ અવમોદરિકા તપ છે એવી જ રીતે જાતિ આદિના
અભિમાનની અલ્પતાને અલ્પમાન તપ સમજવું જોઈએ માયાની અલ્પતા
અલ્પમાયા કહેવાય છે. લોભની અલ્પતા અલ્પલોભ છે. પરિમિત ભાષણને
અલ્પશબ્દ કહે છે.

કલહનો અભાવ અલ્પકલહ છે. પરસ્પરમાં ભેદ ઉત્પન્ન કરનાર વચનોના
પ્રયોગને ઝંઝ કહેવાય છે અને તેનો અભાવ અલ્પઝંઝ છે-આરીતે ભાવ
અવમોદરિકા તપ અनेक प्रकारना છે.

लोहेऽ अल्पसह्यऽ अल्पज्ञज्ञेऽ से तं भावोमोयरिया से तं ओमोयरिया' इति । अथ का सा भावमोदरिका ? भावाऽवमोदरिकाऽनेकविधा प्रज्ञप्ता, तद्यथा—अल्पक्रोधः १ अल्पमानः २ अल्पमाया ३ अल्पलोभः ४ अल्पशब्दः ५ अल्पकलहः ६ अल्पज्ञज्ञः ७ सा-एषा भावाऽवमोदरिका, सा एषा अवमोदरिका इति ॥१४॥

मूलम्—भिक्षाचरिया तवे अणेगविहे, दट्वाभिग्रहचराइ भेयओ ॥१५॥

छाया—भिक्षाचर्या तपोऽनेकविधम्, द्रव्याभिग्रहचरादि भेदतः ॥१५॥

तत्त्वार्थदीपिका—पूर्वं खलु—‘अवमोदरिका’ नाम द्वितीयं बाह्यं तपः सविस्तरं प्ररूपितम् सम्प्रति-तृतीयं भिक्षाचर्या तपः प्ररूपयितुमाह—‘भिक्षाचरिया तवे अणेगविहे, दट्वाभिग्रहचराइ भेयओ’ इति । भिक्षाचर्या तपः—‘अमुक्तस्थाने अमुक्तकाले अमुक्तवस्तु ग्रहीष्यामि’ इत्येवं रीत्याऽभि-

उत्तर—भाव अवमोदरिका तप अनेक प्रकार का है—अल्पक्रोध, अल्प-मान, अल्पमाया, अल्पलोभ, अल्पशब्द, अल्पज्ञज्ञ आदि । यह भाव-अवमोदरिका तप है ॥१४॥

‘भिक्षाचरिया तवे अणेगविहे’ इत्यादि,

सूत्रार्थ—द्रव्याभिग्रहचर आदि के भेद से भिक्षाचर्या तप भी अनेक प्रकार का है ॥१५॥

तत्त्वार्थदीपिका—इससे पहले अवमोदरिका नामक बाह्य तप का विस्तार पूर्वक प्ररूपण किया गया, अब भिक्षाचर्या नामक तीसरे तप की प्ररूपणा करते हैं—

द्रव्याभिग्रहचर आदि के भेद से भिक्षाचर्या तप के अनेक भेद

औपपातिकसूत्रना त्रीसमां सूत्रमां कथुं छे लाव अवमोदरिका तप केटला प्रकारना छे ? उत्तर—लाव अवमोदरिका अनेक प्रकारनी छे. अल्पक्रोध, अल्पमान, अल्पमाया, अल्पलोभ, अल्पशब्द, अल्पकलह, अपजंज—आदि आ लाव अवमोदरिका तप छे. ॥ १४ ॥

‘भिक्षाचरिया तवे’ ध्यादि

सूत्रार्थ—द्रव्याभिग्रहचर आदिना लेदथी भिक्षाचर्या तप अनेक प्रकारना छे ॥ १५ ॥

तत्त्वार्थदीपिका—आनी पहेला अवमोदरिका नामक द्वितीय आहृतपनुं विस्तारपूर्वक प्ररूपण करवाभां आबुं, हवे भिक्षाचर्या नामक त्रीन तपनी प्ररूपणा करीअे छीअे—

द्रव्याभिग्रहचर आदिना लेदथी भिक्षाचर्या तपना अनेक लेद छे, त० ७८

ગ્રહપૂર્વકં ભિક્ષાટનવિષયકં તપો ભિક્ષાચર્યા તપ ઉચ્યતે । તત્ત્વાઽનેકવિધં ભવતિ તથા-દ્રવ્યાભિગ્રહચરઃ-અમુકમેવાઽશન પાનં ગ્રહીष્યામિ' इत्येवं द्रव्याभि-ग्रहेण चरतीति द्रव्याभिग्रहचर, उच्यते १ आदिना क्षेत्राभिग्रहचरः 'अमुकस्थाने गृहीष्यामि' इत्येवं क्षेत्राभिग्रहेण चरतीति क्षेत्राभिग्रहचरः २ कालाभिग्रहचरः 'अमुककाले पूर्वाह्णादावेव गृहीष्यामि-न तु पराह्णे नापि रात्रौ' इत्येवं काल विशेषाभिग्रहेण चरतीति कालाभिग्रहचरः ३ एवम्-भावाभिग्रहचरः ४ उत्क्षिप्तचरः ५ निक्षिप्तचरः ६ उत्क्षिप्तनिक्षिप्तचरः ७ निक्षिप्तोत्क्षिप्तचरः ८ वर्तमानचरः ९

हैं । 'अमुकस्थान में' अमुक काल में, अमुक वस्तु ग्रहण करूंगा' इस तरह अभिग्रह करके भिक्षाटन करना भिक्षाचर्यातप कहलाता है । उसके अनेक भेद हैं । वे इस प्रकार हैं-

(१) द्रव्याभिग्रहचर-अमुक अशन-पान ही ग्रहण करूंगा, इस प्रकार द्रव्य संबंधी अभिग्रह करके भिक्षाटन करने वाला ।

(२) क्षेत्राभिग्रहचर-'अमुक स्थान पर ही ग्रहण करूंगा, इस तरह क्षेत्र संबंधी अभिग्रह करके भिक्षाटन करने वाला ।

(३) कालाभिग्रहचर-अमुक काल में-जैसे पूर्वाह्ण में, ही ग्रहण करूंगा, न अपराह्ण में, न मध्याह्न में, ऐसा अभिग्रह करके भिक्षा टन करने वाला ।

इसी प्रकार (४) भावाभिग्रहचर (५) उत्क्षिप्तचर (६) निक्षिप्तचर (७) उत्क्षिप्तनिक्षिप्तचर (८) निक्षिप्तउत्क्षिप्तचर (९) वर्तमानचर (१०) संहि-

અમુક સ્થાને. અમુક કાળમાં, અમુક વસ્તુ ગ્રહણ કરીશ આ રીતે અભિગ્રહ કરીને ભિક્ષાટન કરવું ભિક્ષાચર્યા તપ કહેવાય છે. તેના અनेक ભેદ છે-તે આ પ્રકારે છે

(૧) દ્રવ્યાભિગ્રહચર-અમુક અશન પાન જ ગ્રહણ કરીશ એ રીતે દ્રવ્ય સંબંધી અભિગ્રહ કરીને ભિક્ષાટન કરનાર

(૨) ક્ષેત્રાભિગ્રહચર-અમુક સ્થળે જ ગ્રહણ કરીશ, આ પ્રમાણે ક્ષેત્ર-સંબંધી અભિગ્રહ કરીને ભિક્ષાટન કરનાર.

(૩) કાલાભિગ્રહચર--અમુકકાળમાં જેમકે પૂર્વાહ્ણમાં જ ગ્રહણ કરીશ અપરાહ્ણમાં કે મધ્યાહ્ણમાં નહીં એવો અભિગ્રહ ધારીને ભિક્ષાટન કરનાર એવી જ રીતે (૪) ભાવાભિગ્રહચર (૫) ઉત્ક્ષિપ્તચર (૬) નિક્ષિપ્તચર (૭) ઉત્ક્ષિપ્તનિક્ષિપ્તચર (૮) નિક્ષિપ્તઉત્ક્ષિપ્તચર (૯) વર્ત્યમાનચર (૧૦) સંહિ-

संहियमाणचरः १० उपनीतचरः ११ अपनीतचरः १२ उपनीतापनीतचरः १३ अपनी-
तोपनीतचरः १४ संसृष्टचरः १५ असंसृष्टचरः १६ तज्जातसंसृष्टचरः १७ अज्ञात-
चरः १८ मौनचरः १९ दृष्टलाभिकः २० अदृष्टलाभिकः २१ पृष्टलाभिकः २२ अपृष्ट-
लाभिकः २३ भिक्षालाभिकः २४ अभिक्षालाभिकः २५ अन्नशालायकः २६ औपनि-
हितकः २७ परिमितपिण्डपातिकः २८ शुद्धैषणिकः २९ संख्यादत्तिकः इत्येवं
रीत्याऽनेकविधं तावद् भिक्षाचर्यातपो भवतीति बोध्यम् । तत्र भावाभिग्रहचरस्तु—
'अमुक प्रकारको दाता यदि दास्यति-तदा ग्रहीष्यामि' इत्येवं भावाभिग्रहेण
चरतीति भावाभिग्रहचरोऽवगन्तव्यः ४ एवम् उत्क्षिप्त चरादिकमपि स्वयं ज्ञेयम् । १५।

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पूर्वं तावद् द्वितीयं बाह्यरूपम् अवमोदरिका तपः

यमाणचर (११) उपनीतचर (१२) अपनीतचर (१३) उपनीतापनीतचर
(१४) संसृष्टचर (१५) असंसृष्टचर (१६) तज्जातसंसृष्टचर (१७) अज्ञा
तचर (१८) मौनचर (१९) दृष्टलाभिक (२०) अदृष्टलाभिक (२१) पृष्ट-
लाभिक (२२) अपृष्टलाभिक (२३) भिक्षालाभिक (२४) अभिक्षालाभिक
(२५) अन्नशालायक (२६) औपनिहितक (२७) परिमितपिण्डपातिक (२८)
शुद्धैषणिक (२९) संख्यादत्तिक, इस प्रकार भिक्षाचर्या तप करने वाले
अनेक प्रकार के हैं और इसी कारण इस तप के भी अनेक भेद होते हैं ।

'अमुक प्रकार का दाता यदि देगा तो ग्रहण करूंगा इस प्रकार
भाव संबन्धी अभिग्रह करके भिक्षाटन करने वाला भावाभिग्रहचर
समझना चाहिए । इसी प्रकार उत्क्षिप्तचर आदि का अर्थ भी स्वयं
ही समझ लेना चाहिए ॥ १५॥

तत्त्वार्थनिर्युक्तिः—पहले अवमोदरिका नामक द्वितीय बाह्य तप का

यमाणचर (११) उपनीतचर (१२) अपनीतचर (१३) उपनीतापनीतचर (१४)
अपनीतोपनीतचर (१५) संसृष्टचर (१६) असंसृष्टचर (१७) तज्जातसंसृ-
ष्टचर (१८) अज्ञातचर (१९) मौनचर (२०) द्रष्टलाभिक (२१) अद्रष्टलाभिक
(२२) पृष्टलाभिक (२३) अपृष्टलाभिक (२४) भिक्षालाभिक (२५) अभिक्षा-
लाभिक (२६) अन्नशालायक (२७) औपनिहितक (२८) परिमितपिण्डपातिक
(२९) शुद्धैषणिक (३०) संख्यादत्तिक, आ रीते भिक्षाचर्या तप करनेवाले
अनेक प्रकारके हैं अने आ कारणे जे आ तपना पण अनेक लेह होय छे.

अमुक प्रकारको दाता जे आपसे तो जे ग्रहण करीश आ रीते लाव
संबन्धी अभिग्रह करीने भिक्षाटन करनेवाले भावाभिग्रहचर समझवे लेहये
ओवी जे रीते उत्क्षिप्तचर वगैरेको अर्थ पण स्वयं समझ लेवे ॥ १५॥

तत्त्वार्थनिर्युक्ति—पहले अवमोदरिका नामक द्वितीय बाह्य तप का

સવિસ્તરં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પતિ-ક્રમપ્રાપ્તસ્ય તૃતીયસ્ય ભિક્ષાચર્યા નામક તપસઃ સ્વરૂપં સમેદં પ્રરૂપયિતુમાહ=‘મિક્ષાચરિયા તવે અણેગવિહે, દ્રવ્યાભિગ્રહ ચ્ચરાહ્મેદઓ’ ઇતિ ભિક્ષાચર્યા તપઃ વૃત્તિપરિસંખ્યાનરૂપમ્ ‘અમુકસ્થાને અમુકકાલે અમુક વસ્તુ ગ્રહીષ્યામિ’ ઇત્યાદિરીત્યાઽભિગ્રહપૂર્વકં ભિક્ષાટન-રૂપં તપશ્ચરણમ્ અનેકવિધં ભવતિ । તથથા-દ્રવ્યાભિગ્રહચરાદિ મેદતઃ, દ્રવ્યાભિ-ગ્રહચરઃ ૧ આદિના ક્ષેત્રાભિગ્રહચરઃ ૨ કાલાભિગ્રહચરઃ ૩ ભાવાભિગ્રહચરઃ ૪ ઉત્ક્ષિપ્તચરઃ ૫ નિક્ષિપ્તચરઃ ૬ ઉત્ક્ષિપ્તનિક્ષિપ્તચરઃ ૭ નિક્ષિપ્તોત્ક્ષિપ્તચરઃ ૮ વર્ત્યમાનચરઃ ૯ સંહ્રિયમાનચરઃ ૧૦ ઉપનીતચરઃ ૧૧ અપનીતચરઃ ૧૨ ઉપનીતાપનીત-ચરઃ ૧૩ સંસૃષ્ટચરઃ ૧૪ અસંસૃષ્ટચરઃ ૧૫ તજ્ઞાતસંસૃષ્ટચરઃ ૧૬ અજ્ઞાતચરઃ ૧૭ મૌનચરઃ ૧૮ દૃષ્ટલાભિકઃ ૧૯ અદૃષ્ટલાભિકઃ ૨૦ પૃષ્ટલાભિકઃ ૨૧ અપૃષ્ટ-

સવિસ્તર પ્રરૂપણ ક્રિયા ગયા અવ ક્રમપ્રાપ્ત ત્રીસરે ભિક્ષાચર્યા નામક તપ કા મેદો સહિત સ્વરૂપ પ્રદર્શિત કરતે હૈ—

ભિક્ષાચર્યા તપ કા દૂસરા નામ વૃત્તિપરિસંખ્યાત હૈ । ‘અમુક સ્થાન મેં’ અમુક વસ્તુ હી ગ્રહણ કરુંગા ‘ઇત્યાદિ રૂપ સે અભિગ્રહ કરકે ભિક્ષા-ટન કરના ભિક્ષાચર્યા તપ કહલાતા હૈ । યહ તપ દ્રવ્યાભિગ્રહચર આદિ કે મેદ સે અનેક પ્રકાર કા હૈ, યથા- (૧) દ્રવ્યાભિગ્રહચર (૨) ક્ષેત્રાભિ-ગ્રહચર (૩) કાલાભિગ્રહચર (૪) ભાવાભિગ્રહચર (૫) ઉત્ક્ષિપ્તચર (૬) નિક્ષિપ્તચર (૭) ઉત્ક્ષિપ્તનિક્ષિપ્તચર (૮) નિક્ષિપ્તઉત્ક્ષિપ્તચર (૯) વર્ત્યમાનચર (૧૦) સંહ્રિયમાનચર (૧૧) ઉપનીતચર (૧૨) અપની-તચર (૧૩) ઉપનીતાપનીતચર (૧૪) અપનીતોપનીતચર (૧૫) સંસૃષ્ટચર (૧૬) અસંસૃષ્ટચર (૧૭) તજ્ઞાતસંસૃષ્ટચર (૧૮) અજ્ઞાતચર (૧૯) મૌનચર (૨૦) દૃષ્ટલાભિક (૨૧) અદૃષ્ટલાભિક (૨૨) પૃષ્ટલાભિક

સવિસ્તર પ્રરૂપણ કરવામાં આવ્યું હવે ક્રમપ્રાપ્ત ત્રીજા ભિક્ષાચર્યા નામક તપ નું લેદો સહિત સ્વરૂપ પ્રદર્શિત કરીએ છીએ

ભિક્ષાચર્યા તપનું બીજું નામ વૃત્તિપરિસંખ્યાત છે. અમુક સ્થાનમાં અમુક કાળમાં, અમુક વસ્તુ ને ગ્રહણ કરીશ ઇત્યાદિ રૂપથી અભિગ્રહ કરીને ભિક્ષાટન કરવું ભિક્ષાચર્યા તપ કહેવાય છે. આ તપ દ્રવ્યાભિગ્રહચર આદિ ના લેદથી અનેક પ્રકારના છે જેમકે—(૧) દ્રવ્યાભિગ્રહચર (૨) ક્ષેત્રાભિગ્રહ ચર (૩) કાલાભિગ્રહચર (૪) ભાવાભિગ્રહચર (૫) ઉત્ક્ષિપ્તચર (૬) નિક્ષિપ્તચર (૭) ઉત્ક્ષિપ્તનિક્ષિપ્તચર (૮) નિક્ષિપ્ત ઉત્ક્ષિપ્તચર (૯) વર્ત્યમાનચર (૧૦) (૧૧) સંહ્રિયમાનચર (૧૨) ઉપનીતચર (૧૩) અપનીતચર (૧૪) ઉપનીતાપનીતચર (૧૫) સંસૃષ્ટચર (૧૬) અસંસૃષ્ટચર (૧૭) તજ્ઞાતસંસૃષ્ટચર (૧૮) અજ્ઞાતચર (૧૯) મૌનચર (૨૦) દૃષ્ટલાભિક (૨૧) અદૃષ્ટલાભિક (૨૨) પૃષ્ટલાભિક (૨૩) અપૃષ્ટલાભિક

લામિકઃ ૨૩ મિશ્તાલામિકઃ ૨૪ અમિશ્તાલામિકઃ ૨૫ અન્નગ્લાયકઃ ૨૬ ઔપનિહિતકઃ ૨૭ પરિમિતપિણ્ડપાતિકઃ ૨૮ શુદ્ધૈષણિકઃ ૨૯ સંખ્યાદત્તિકઃ ૩૦
 इत्येवं रीत्याऽनेकविधं शिक्षाचर्या तपो भवति । तत्राश्रिताऽभिग्रहं वा यश्चरति-
 आसेवते, स द्रव्याभिग्रहचर उच्यते, शिक्षाचर्यायाः प्रस्तावेऽपि-धर्मधर्मिणोर-
 भेदविवक्षया द्रव्याभिग्रहचर इत्युक्तम् । द्रव्याभिग्रहश्च लेपकृतादि द्रव्यविषयोऽव-
 गन्तव्यः भक्तपानादि द्रव्यविषयकोऽभिग्रहो द्रव्याभिग्रहो बोध्यः १ 'अमुकस्थाने
 ग्रहीष्यामि' इत्येवं रीत्या क्षेत्रविशेषमभिग्रह्य यश्चरति-मिक्षामटति स क्षेत्राभि-
 ग्रहचर उच्यते, क्षेत्रविषयकोऽभिग्रहः क्षेत्राभिग्रहः २ 'पूर्वाह्णे ग्रहीष्यामि-

(૨૩) અપૃષ્ટલામિક (૨૪) મિશ્તાલામિક (૨૫) અમિશ્તાલામિક (૨૬) અન્નગ્લાયક (૨૭) ઔપનિહિતક (૨૮) પરિમિતપિણ્ડપાતિક (૨૯) શુદ્ધૈષણિક (૩૦) સંખ્યાદત્તિક, હવ પ્રકાર મિશ્તાચર્યા તપ અનેક પ્રકાર કા હૈ । इनका स्वरूप इस प्रकार है—

(૧) દ્રવ્યાભિગ્રહચર-દ્રવ્ય સંબંધી અભિગ્રહ કરકે જો મિશ્તાટન કરતા હૈ, વહ દ્રવ્યાભિગ્રહચર કહલાતા હૈ । મિશ્તા કા પ્રકરણ હોને પર મી ધર્મ ઓર ધર્મી કે અભેદ કી વિવક્ષા કરકે દ્રવ્યાભિગ્રહચર એસા કહા ગયા હૈ । દ્રવ્યાભિગ્રહ યહાં લેપકૃત આદિ દ્રવ્યસંબંધી સમ જ્ઞાના ચાહિય । ભોજન-પાની આદિ દ્રવ્યોં સે સંબંધ રચને વાલા અભિગ્રહ દ્રવ્યાભિગ્રહ કહલાતા હૈ ।

(૨) ક્ષેત્રાભિગ્રહચર-‘અમુક સ્થાનપરગ્રહણ કરુંગા’ હવ પ્રકાર ક્ષેત્ર સંબંધી અભિગ્રહ કરકે જો મિશ્તાર્ય ભ્રમણ કરતા હૈ વહ ક્ષેત્રાભિગ્રહચર કહલાતા હૈ । ક્ષેત્ર સંબંધી અભિગ્રહ ક્ષેત્રાભિગ્રહ હૈ ।

(૨૪) મિશ્તાલામિક (૨૫) અમિશ્તાલામિક (૨૬) અન્નગ્લાયક (૨૭) ઔપનિહિતક (૨૮) પરિમિતપિણ્ડપાતિક (૨૯) શુદ્ધૈષણિક (૩૦) સંખ્યાદત્તિક આ રીતે મિશ્તાચર્યા તપ અનેક પ્રકારના છે. એમનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે (૧) દ્રવ્યાભિગ્રહચર-દ્રવ્યસંબંધી અભિગ્રહ ધારીને જે મિશ્તાટન કરે છે, તે દ્રવ્યાભિગ્રહચર કહેવાય છે મિશ્તાનું પ્રકરણ હોવા છતાં પણ ધર્મ અને ધર્મના અભેદની વિવક્ષા કરીને ‘દ્રવ્યાભિગ્રહચર’ એમ કહેવામાં આવ્યું છે. દ્રવ્યાભિગ્રહ અહીં લેપકૃત આદિ દ્રવ્યસંબંધી સમજવો જોઈએ ભોજન પાણી આદિ દ્રવ્યોથી સંબંધ રાખનાર અભિગ્રહ દ્રવ્યાભિગ્રહ કહેવાય છે.

(૨) ક્ષેત્રાભિગ્રહચર—‘અમુક સ્થાન પર ગ્રહણ કરીશ’ આ રીતે ક્ષેત્ર સંબંધી અભિગ્રહ કરીને જે મિશ્તા કાજે ભ્રમણ કરે છે તે ક્ષેત્રાભિગ્રહચર કહેવાય છે. ક્ષેત્ર સંબંધી અભિગ્રહ ક્ષેત્રાભિગ્રહ છે.

નાપરાહ્ણે-જ રાત્રી વા' इत्येवं કાલવિશેષમભિગૃહ્ય ચરતિ-મિશામટતિ યઃ સ કાલાભિગ્રહચર ઉચ્યતે, કાલવિશેષકોઽભિગ્રહઃ કાલાભિગ્રહઃ ૩ 'અમુક પ્રકારનો દાતા શુદ્ધભાવેન દાસ્યતિ-તદા ગ્રહીષ્યામિ' इत्येवं દાતૃવિશેષમભિગૃહ્ય ચરતીતિ ભાવાભિગ્રહચરઃ । યદ્વા-ગાન હામનાદિ મવૃત્તપુરુષાદિ વિષયકોઽભિગ્રહો ભાનાભિગ્રહોઽવસેયઃ ૪ ઉત્ક્ષિપ્તં ગૃહસ્થેન સ્વાર્થે પાકમાજનાદુદ્ઘૃતમભિગૃહ્ય ચરતિ 'સ્વાર્થે' પાકપાત્રાદુ ઉદ્ઘૃતં ભોજનાદિકં યદિ દાસ્યતિ તદા ગ્રહીષ્યામિ' इत्येवમ્-ઉત્ક્ષિપ્તાભિગ્રહચર ઉચ્યતે, ઉત્ક્ષિપ્તવિષયકોઽભિગ્રહઃ ઉત્ક્ષિપ્તાભિગ્રહઃ ૫

(૩) કાલાભિગ્રહચર-પૂર્વાહ્ણ મેં હી ગ્રહણ કરુંગા, અપરાહ્ણ યા મધ્યાહ્ણ મેં જહીં, એસા અભિગ્રહ કરને વાલા કાલાભિગ્રહચર કહલાતા હૈ । કાલવિષયક અભિગ્રહ કાલાભિગ્રહ હૈ ।

(૪) ભાવાભિગ્રહચર-અમુક પ્રકાર વા દાતા શુદ્ધભાવ સે દેગા તો ગ્રહણ કરુંગા હસ તરફ દાતા સંબંધી અભિગ્રહ કરકે મિશાટન કરને વાલા ભાવાભિગ્રહચર કહલાતા હૈ અથવા ગાને યા હસને મેં પ્રવૃત્ત પુરુષ આદિ કે હાથ સે હી આહાર લૂંગા, એસા અભિગ્રહ કરના ભાવાભિગ્રહ સમજના યાહિયે ।

(૫) ઉત્ક્ષિપ્તચર-ગૃહસ્થ ને અપને લિય પાત્ર મેં સે નિકાલા હો વહ ઉદ્ઘૃત કહલાતા હૈ । 'જો ભોજનાદિક અપને સુદ કે લિય હંડિયા મેં સે બાહર નિકાલા હો વહી ગ્રહણ કરુંગા એસા નિયમ ગ્રહણ કરને વાલા ઉત્ક્ષિપ્તચર કહલાતા હૈ । ઉત્ક્ષિપ્ત (બાહર નિકાલે) આહાર વા નિયમ સ્વીકાર કરના ઉત્ક્ષિપ્તાભિગ્રહ સમજના યાહિયે ।

(૩) કાલાભિગ્રહચર-પૂર્વાહ્ણમાં જ ગ્રહણ કરીશ, અપરાહ્ણ અથવા મધ્યાહ્ણમાં નહીં એવો અભિગ્રહ રાખનાર કાલાભિગ્રહચર કહેવાય છે. કાલ વિષયક અભિગ્રહ કાલાભિગ્રહ છે.

(૪) ભાવાભિગ્રહચર-અમુક પ્રકારનો દાતા શુદ્ધ ભાવથી આપશે તો જ ગ્રહણ કરીશ એ રીતે દાતા સંબંધી અભિગ્રહ રાખીને મિશાટન કરનાર ભાવાભિગ્રહચર કહેવાય છે, અથવા ગાવા અગર હસવામાં પ્રવૃત્ત પુરુષ આદિ ના હાથે જ આહાર લઇશે એવો અભિગ્રહ કરવો ભાવાભિગ્રહ સમજવો.

(૫) ઉત્ક્ષિપ્તચર-ગૃહસ્થે પોતાને માટે પાત્રમાંથી કાઢ્યું હોય તે ઉદ્ઘૃત કહેવાય છે. જે ભોજનાદિક પોતાના જ માટે વાસણમાંથી બહાર કાઢ્યું હોય તે જ ગ્રહણ કરીશ એવો નિયમ ગ્રહણ કરનાર ઉત્ક્ષિપ્તચર કહેવાય છે. (બહાર કાઢેલ) આહારનો નિયમ સ્વીકાર કરવો ઉત્ક્ષિપ્ત અભિગ્રહ સમજવો જોઈએ.

નિક્ષિપ્તં પાકાદિ ભાજનાત્ ઉદ્ધૃત્યાઽન્યભાજને સ્થાપિતમશનાદિકમભિગૃહ્ય ચરતિ
 इति निक्षिप्तचर उच्यते, निक्षिप्तविषयकोऽभिग्रहो निक्षिप्ताऽभिग्रहः ६ उत्क्षिप्तनि-
 क्षिप्तचरः—पाकभाजनादुक्षिप्तं तदेवाऽन्यत्र स्थाने यत् निक्षिप्तं तद्-उत्क्षिप्तनि-
 क्षिप्तचर उच्यते ७ निक्षिप्तोत्क्षिप्तचरः—निक्षिप्तं पाकभाजनाद् उद्घृत्याऽन्यत्र
 स्थापितं, तदेव उत्क्षिप्तं पुनर्हस्ते गृहीतं तदभिग्रहेण चरतीति निक्षिप्तोत्क्षिप्तचर
 उच्यते ८ वर्त्यमानचरः वर्त्यमानं परिविष्यमाणमभिगृह्य चरतीति वर्त्यमानचर

(૬) નિક્ષિપ્તચર-પકાને કે પાત્ર મેં સે નિકાલકર જો ભોજન
 અન્ય પાત્ર મેં રાખ દિવા ગયા હો વહ નિક્ષિપ્ત કહલાતા હૈ । એસે
 આહાર કો હી ગ્રહણ કરને કા નિયમ લેને ચાલા નિક્ષિપ્તચર હૈ ।
 નિક્ષિપ્ત વિષયક અભિગ્રહ નિક્ષિપ્તાભિગ્રહ સમજના ચાહિય ।

(૭) ઉત્ક્ષિપ્ત નિક્ષિપ્તચર-પાક-પાત્ર મેં નિકાલ દિવા ગયા હો ઓર
 અન્ય સ્થાન પર રાખા હો વહ આહાર ઉત્ક્ષિપ્તનિક્ષિપ્ત કહલાતા હૈ ।
 ઉસકા અભિગ્રહ કરકે મિક્ષાટન કરને ચાલા ઉત્ક્ષિપ્તનિક્ષિપ્તચર હૈ ।

(૮) નિક્ષિપ્તોત્ક્ષિપ્તચર-પાકપાત્ર મેં સે બાહર નિકાલા હો, અન્ય
 સ્થાન પર રાખ દિવા હો, ઉસીકો ફિર હાથ મેં લિયા હો એસા આહાર પ્રાપ્ત
 હોગા તો હી ગ્રહણ કરુંગા, એસા નિયમ અંગીકાર કરને ચાલા નિક્ષિ-
 પ્તઉત્ક્ષિપ્તચર કહલાતા હૈ ।

(૯) વર્ત્યમાનચર—યદિ પરીક્ષા જાતા હુઆ આહાર મિલેગા તો
 હી લૂંગા એસા અભિગ્રહ કરને ચાલા વર્ત્યમાનચર કહલાતા હૈ ।

(૬) નિક્ષિપ્તચર—રાંધવાના પાત્રમાંથી કાઢીને જે ભોજન અન્ય પાત્રમાં
 રાખી દેવામાં આવ્યું હોય તે નિક્ષિપ્ત કહેવાય છે. આવા આહારને જે ગ્રહણ
 કરવાનો નિયમ લેનાર નિક્ષિપ્તચર છે. નિક્ષિપ્તવિષયક અભિગ્રહ નિક્ષિપ્તાભિ-
 ગ્રહ સમજવો જોઈએ.

(૭) ઉત્ક્ષિપ્તચર—પાક પાત્રમાંથી કાઢી નાખવામાં આવ્યું હોય અને અન્ય
 સ્થાન ઉપર રાખેલ હોય તે આહાર ઉત્ક્ષિપ્તનિક્ષિપ્ત કહેવાય છે. તેનો અભિગ્રહ
 રાખીને મિક્ષાટન કરનાર ઉત્ક્ષિપ્તનિક્ષિપ્તચર છે.

(૮) નિક્ષિપ્તોત્ક્ષિપ્તચર—પાકપાત્રમાંથી બહાર કાઢેલ હોય, અન્ય
 સ્થાન પર રાખી દેવામાં આવ્યું હોય તેને જે ફરી હાથમાં લેવામાં આવ્યો
 હોય એવો આહાર મળશે તો જે ગ્રહણ કરીશ એવો નિયમ અંગીકાર
 કરનાર નિક્ષિપ્ત ઉત્ક્ષિપ્તચર કહેવાય છે

(૯) વર્ત્યમાનચર—જે પીરસવામાં આવી રહેલો આહાર મળશે તો જે
 લઈશ એવો અભિગ્રહ કરનાર વર્ત્યમાનચર કહેવાય છે.

ઉચ્યતે ૯ એવં-સંહ્રિયમાણચરઃ-અત્યુષ્ણં વ્યજ્ઞન સૂપાદિકં શીતલીકરણાય સ્થાલ્યા-
દિષુ પ્રસારિતં તત્ પુનર્ભીજને સ્પિયમાણં સંહ્રિયમાણ મુચ્યતે તદભિગ્રહેણ ચરતીતિ
સંહ્રિયમાણચરો વોધ્યઃ ૧૦ ઉપનીતચરઃ-અન્યેન કેનચિદ્ ગૃહસ્થાય પ્રેષિતં યત્
તદુપનીત મુચ્યતે, તદભિગ્રહેણ ચરતીતિ ઉપનીતચરઃ 'તદેવાહં ગ્રહીષ્યામિ
ચદન્યેન તદર્થં પ્રેષિતં ભવેત્' इत्येवमभिग्रह अपनीताभिग्रह इत्यर्थः ૧૧ અપનીત-
ચરઃ-અપનીતં ગૃહસ્થેન કસ્મૈવિદન્યસ્મૈ દાતું નિઃસાર્ય ચદન્યત્ર સ્થાપિતં તદભિગ્રહેણ
ચરતીતિ-અપનીચરઃ ઉચ્યતે, 'તદેવાહં ગ્રહીષ્યામિ ચદન્યસ્મૈદાતું' નિઃસાર્ય
સ્થાપિતં સ્થાત્' इत्येवमभिग्रहोऽपनीताभिग्रह इत्यर्थः ૧૨ ઉપનીતાપનીતચરઃ-
'યદેવોપનીતમ્ અન્યેન પ્રેષિતં, તદેવ ચદિ અપનીતં સ્થાનાન્તરે સ્થાપિતં
સ્થાત્ તદેવ ગ્રહીષ્યામિ' इत्येवमभिग्रहेण चरतीति अपनीतापनीतचर उच्यते ૧૩

(૧૦) સંહ્રિયમાણચર—અત્યન્ત ઉષ્ણ આહાર ઠંડા કરને કે લિપ
થાલી આદિ મેં ફેલાયા ગયા હો, ઉસે પુનઃ પાત્ર મેં ઢાલા જા રહા
હો વહ આહાર સંહ્રિયમાણ કહલાતા હૈ। એસા આહાર હી લૂંગા એસી
પ્રતિજ્ઞા કરને વાલા તપસ્વી સંહ્રિયમાણચર હૈ।

(૧૧) ઉપનીતચર—જો ભોજન કિસી દૂસરે ને ગૃહસ્થ કે લિપ
મેજા હો વહ ઉપનીત કહલાતા હૈ ઓર ઉસકા અભિગ્રહ કરને વાલા
ઉપનીતચર। મેં વહી ભોજન ગ્રહણ કરૂંગા જો દૂસરે ને ગૃહસ્થ કે લિપ
મેજા હો એસી આઘડી કરના ઉપનીતાભિગ્રહ હૈ।

(૧૨) અપનીતચર—ગૃહસ્થને કિસી કો દેને કે લિપ અન્યત્ર રલ
દિયા હો એસે આહાર કો હી ગ્રહણ કરને કા નિયમ સ્વીકાર કરને
વાલા અપનીતચર કહલાતા હૈ। જો આહાર દૂસરે કો દેને કે લિપ

(૧૦) સંહ્રિયમાણચર—અત્યન્ત ઉષ્ણ આહાર ટાઢો કરવા માટે થળી
વગેરેમાં પાત્રવામાં આવ્યો હેય, તેને પુનઃ પાત્રમાં નાખવામાં આવી રહ્યો
હોય તે આહાર સંહ્રિયમાણ કહેવાય છે. આવો જ આહાર લઈશ, એવી
પ્રતિજ્ઞા કરનાર તપસ્વી સંહ્રિયમાણચર છે.

(૧૧) ઉપનીતચર—જે ભોજનને કોઈ બીજાએ ગૃહસ્થને માટે મોકલ્યું
હોય તે ઉપનીત કહેવાય છે અને તેનો અભિગ્રહ કરનાર ઉપનીતચર છે. હું
તે જ ભોજન ગ્રહણ કરીશ જે બીજાએ ગૃહસ્થ માટે મોકલ્યું હોય એવી
આખડી કરવી ઉપનીતાભિગ્રહ છે.

(૧૨) અપનીતચર—ગૃહસ્થે કોઈને આપવા માટે અન્યત્ર રાખવામાં
આવેલ હોય એવા આહારને ગ્રહણ કરવાનો નિયમ સ્વીકાર કરવા વાળો
અપનીતચર કહેવાય છે, જે આહાર બીજાને આપવા માટે કાઢીને અન્યત્ર

અપનીતોપનીતચરઃ—અપનીતં કસ્મૈચિદન્યસ્મૈ દાતું નિસ્સાર્યાઽન્યત્ર સ્થાપિતં, તદેવો—પનીતં યસ્ય ગૃહસ્થ સમીપે પ્રેષિતં તસ્ય ગૃહસ્થસ્ય ગૃહે પ્રાપિતં તદપનીતો-
પનીત મુચ્યતે, તદભિગ્રહેણ ચરતીતિ અપનીતોપનીતચર ઉચ્યતે ૧૪ સંસૃષ્ટચરઃ
સંસૃષ્ટેન શાકાદિ પૂરિતૈન હસ્તાદિના દીયમાન મશનાદિકં સંસૃષ્ટ મુચ્યતે, તદભિ-
ગ્રહેણ ચરતીતિ સંસૃષ્ટચરઃ ઉચ્યતે ૧૫ અસંસૃષ્ટચરઃ—અસંસૃષ્ટેન શાકાદિના—

નિકાલ કર અન્યત્ર રાખ દિયા ગયા હો ઉસ આહાર સમ્બન્ધી અભિગ્રહ
અપનીતાભિગ્રહ સમજના યાહિયે ।

(૧૩) ઉપનીતાપનીતચર—જો આહાર દુસરે ને ખેજા હો વહ યદિ
સ્થાનાન્તર પર રાખ દિયા ગયા હો તો હી ઉસે લૂંગા એસા અભિગ્રહ
કરકે અટન કરને કાલા તપસ્વી ઉપનીતાપનીતચર કહલાતા હૈ ।

(૧૪) અપનીતોપનીતચર—કિસી કો દેને કે લિયે પાત્ર મેં નિકા-
લકર બાહર રાખ દિયા હો ઓર ઉસ ગૃહસ્થ કે યહાં ખેજ દિયા ગયા
હો વહ અપનીતોપનીત કહલાતા હૈ । એસે આહારકો ગ્રહણ કરને કા
અભિગ્રહ કરને વાલા અપનીતોપનીતચર હૈ ।

(૧૫) સંસૃષ્ટચર—શાકુ—દાલ આદિ સે ભરે હુય (લિસ) હાથ આદિ
સે દિયા જાને વાલા આહાર સંસૃષ્ટ કહા જાતા હૈ, ઉસકા અભિગ્રહ
ધારણ કરકે ભિક્ષાર્થ અટન કરને વાલા સંસૃષ્ટચર કહલાતા હૈ ।

રાખવામાં આવ્યો હોય, તે આહાર સંબંધી અભિગ્રહ અપનીતાભિગ્રહ
સમજવો જોઈએ.

(૧૩) ઉપનીતાપનીતચર—જો આહાર ખીજાને મોકલ્યો હોય તે જો
સ્થાનાન્તર પર રાખવામાં આવ્યો હોય તો જ તેને લઈશ, એવો અભિગ્રહ
કરીને અટન કરનાર તપસ્વી ઉપનીતાપનીતચર કહેવાય છે.

(૧૪) અપનીતોપનીતચર—કોઈને આપવા માટે પાત્રમાંથી કાઢીને
બહાર રાખવામાં આવ્યો હોય અને તે ગૃહસ્થને ત્યાં મોકલી દેવામાં આવ્યો
હોય તે અપનીતોપનીત કહેવાય છે. એવા આહારને ગ્રહણ કરવાનો અભિગ્રહ
કરનાર અપનીતોપનીતચર છે.

(૧૫) સંસૃષ્ટચર—શાક દાળ આદિથી ભરેલા (ખરડાયેલા) હાથ આદિ
થી આપવામાં આવતો આહાર સંસૃષ્ટ કહેવામાં આવે છે. તેનો અભિગ્રહ
ધારણ કરીને ભિક્ષાર્થ અટન કરનાર સંસૃષ્ટચર કહેવાય છે

રિક્તેન હસ્તાદિના દીયમાનં વસ્તુ 'અસંસૃષ્ટ મુચ્યતે' તદભિગ્રહેણ ચરતીતિ-
 અસંસૃષ્ટચરો વોધ્યઃ ૧૬ તજ્જાત સંસૃષ્ટચરઃ-તજ્જાતેન પરિવેપ્યમાણદ્રવ્યેણ યત્સં-
 સૃષ્ટં હસ્તાદિ તૈન-દીયમાન વસ્તુ ગ્રહીતું ચ ચરતિ સ તજ્જાતસંસૃષ્ટચર ઉચ્યતે ૧૭
 અજ્ઞાતચરઃ-અજ્ઞાતમ્ અજ્ઞાત શ્રમણનિયમમ્-અપરિચિતં ગૃહસ્થકુલં ચચરતિ સોઽ-
 જ્ઞાતચરઃ-ઉચ્યતે ૧૮ મૌનચરઃ-મૌનં વાક્યસંયમનં તદભિગ્રહેણ ચચરતિ સ મૌનચર
 ઉચ્યતે ૧૯ દૃષ્ટલાભિકઃ-દૃષ્ટસ્યૈવ સત્કપાનાદેર્લાભો દૃષ્ટલાભઃ અથવા-દૃષ્ટાત્
 પ્રથમ દૃષ્ટાદૈવ વાતુર્ગૃહાદ્વા લાભો દૃષ્ટલાભઃ સોઽરિત યરય સ દૃષ્ટલાભિકઃ ૨૦

(૧૬) અસંસૃષ્ટચર-જો હાથ, પાત્ર યા ચમ્મચ શાક આદિ સે
 ખરા ન હો વહ અસંસૃષ્ટ કહલાતા હૈ । એસે હાથ આદિ સે હી લેને કી
 પ્રતિજ્ઞા કરને વાલે કો અસંસૃષ્ટચર સમજના ચાહિય ।

(૧૭) તજ્જાત સંસૃષ્ટચર-જિસ દ્રવ્ય સે હાથ આદિ સંસૃષ્ટ હૈ, ડસી
 સે વહી વસ્તુ લેને કા જો અભિગ્રહ ધારણ કરતા હૈ વહ તજ્જાતસંસૃષ્ટ-
 ચર કહલાતા હૈ ।

(૧૮) અજ્ઞાતચર-અજ્ઞાત અર્થાત્ અપરિચિત ગૃહસ્થ કે ઘર સે જો
 ભિક્ષા લે વહ અજ્ઞાતચર કહલાતા હૈ ।

(૧૯) મૌનચર-મૌન ધારણ કરકે ભિક્ષાટન કરને વાલા ।

(૨૦) દૃષ્ટલાભિક-પ્રત્યક્ષ દીઁખને વાલે આહાર-પાની કા લાભ
 હોના દૃષ્ટલાભ કહલાતા હૈ અથવા જો પહેલે પહેલ દિઁવાઈ દે એસે દાતા
 યા ઘર સે આહારાદિ કા લાભ હોના દૃષ્ટલાભ હૈ । એસે આહાર આદિ
 કો હી ગ્રહણ કરને કા નિયમ અંગીકાર કરને વાલા દૃષ્ટલાભિક હૈ ।

(૧૬) અસંસૃષ્ટચર-જે હાથ, પાત્ર અથવા ચમચો શાક આદિથી
 લઘાયેલા ન હોય તે અસંસૃષ્ટ કહેવાય છે. આવા હાથ વગેરેથી જ આહાર
 લેવાની પ્રતિજ્ઞા કરનાર અસંસૃષ્ટચર સમજવો જોઈએ

(૧૭) તજ્જાતસંસૃષ્ટચર-જે દ્રવ્યથી હાથ વગેરે સંસૃષ્ટ છે તેનાથી
 તે વસ્તુ લેવાનો જે અભિગ્રહ ધારણ કરે છે તે તજ્જાતસંસૃષ્ટચર કહેવાય છે

(૧૮) અજ્ઞાતચર-અજ્ઞાત અર્થાત્ અપરિચિત ગૃહસ્થના ઘરથી જે
 ભિક્ષા લે તે અજ્ઞાતચર કહેવાય છે.

(૧૯) મૌનચર-મૌન ધારણ કરીને ભિક્ષાટન કરનાર

(૨૦) દ્રષ્ટલાભિક-પ્રત્યક્ષ જોઈ શકાય તેવા આહાર પાણીનો લાભ
 થવો દ્રષ્ટલાભ કહેવાય છે અથવા જે સૌ પ્રથમ જોવામાં આવે એવા દાતા
 અથવા ઘરેથી આહાર આદિનો લાભ થવો દ્રષ્ટલાભ છે. આવા આહાર વગેરેને
 જ ગ્રહણ કરવાના નિયમનો અંગીકાર કરનાર દ્રષ્ટલાભિક કહેવાય છે.

અદૃષ્ટલાભિકઃ-અદૃષ્ટસ્યાઽઽવરણાદિનાઽઽચ્છાદિતસ્ય દાત્રાદિભિઃ કૃતોપયોગ-
સ્ય ભક્તાદેર્લાભઃ । યદ્વાઽદૃષ્ટાત્ પૂર્વં કદાપિ ન દૃષ્ટાત્ દાયકાદ્ લાભોઽદૃ-
ષ્ટલાભઃ સોઽસ્યાઽસ્તીતિ અદૃષ્ટલાભિકઃ ૨૧ પૃષ્ટલાભિકઃ-મિશ્નાર્થે સમુપસ્થિતં
યં શ્રમણં ‘મો ! શ્રમણ ! ત્વં કિમિચ્છસિ’ इत्येवं कश्चिद्ग्रहस्थः पृच्छति
स पृष्ठ इत्युच्यते, तस्य श्रमणस्य तस्माद् गृहस्थाद् यो लाभो भवति स पृष्ठ-
लाभ उच्यते सोऽस्याऽस्तीति पृष्ठलाभिको बोध्यः २२ अपृष्ठलाभिकः-केनचित्-
गृहस्थेनाऽपृष्ठस्यैव श्रमणस्य य तस्माद् गृहस्थाद् लाभः सोऽपृष्ठलाभ उच्यते
सोऽस्याऽस्तीति अपृष्ठलाभिको बोध्यः २३ भिक्षालाभिकः-कस्यचित् क्षेत्राद्
गृहस्था द्वा याचित्वा गृहस्थेन समानीतं तुच्छं बल्लचणककोद्रवादिकं निष्पादित
आहारो भिक्षोच्यते, तस्याऽलाभो-यस्याऽस्तीति स भिक्षालाभिक उच्यते २४

(૨૧) અદૃષ્ટલાભિક-અદૃષ્ટ અર્થાત્ કિસી चीज से आच्छादित
आहार-पानी को जिसका उपयोग दाता आदि ने कर लिया हो, लेने
की प्रतिज्ञा करने वाला अदृष्टलाभिक कहलाता है । अथवा पहले कभी
न देखे हुए दाता के हाथ से लेने का अभिग्रह करने वाला अदृष्टलाभिक
कहलाता है ।

(૨૨) પૃષ્ટલાભિક-મિશ્ના કે લિે ઉપસ્થિત શ્રમણ સે-‘હે શ્રમણ
આપકો કયાં યાહિે ?’ એસા પૂછ કર દિયે જાને વાલે આહાર કો હી
ગ્રહણ કરને કા નિયમ લેને વાલા પૃષ્ટલાભિક કહલાતા હૈ ।

(૨૩) અપૃષ્ટલાભિક-જો ગૃહસ્થ વિના પૂછે આહાર દેગા, વસી કો
ગ્રહણ કરુંગા-એસી પ્રતિજ્ઞા કરને વાલા અપૃષ્ટલાભિક કહલાતા હૈ ।

(૨૪) મિશ્નાલાભિક-કિસી જગહ અથવા ગૃહસ્થ સે યાચના કરકે
કોઈ ગૃહસ્થતુચ્છ બલ્લ, ચના યા કોદ્રવ આદિ લાયા હો ઓર વસસે જો

(૨૧) અદ્રૃષ્ટલાભિક-અદ્રૃષ્ટ અર્થાત્ કોઈ વસ્તુથી ઢાંકેલા આહાર પાણીને
જેનો ઉપયોગ દાતા વગેરેએ કરી લીધો હોય તે લેવાની પ્રતિજ્ઞા કરનાર
અદ્રૃષ્ટલાભિક કહેવાય છે. અથવા પહેલા કદી પણ ન જોયેલા દાતાના હાથથી
લેવાનો અભિગ્રહ ધારણ કરનાર અદ્રૃષ્ટલાભિક કહેવાય છે,

(૨૨) પૃષ્ટલાભિક-લિશ્વાને માટે ઉપસ્થિત શ્રમણને હે શ્રમણ આપ
ને શું ખપે ? એવું પૂછીને આપવામાં આવનાર આહારને જ ગ્રહણ
કરવાનો નિયમ લેનાર પૃષ્ટલાભિક કહેવાય છે.

(૨૩) અપૃષ્ટલાભિક-જો ગૃહસ્થ વગર પૂછે આહાર આપશે તેનાથી
જ ગ્રહણ કરીશ એવી પ્રતિજ્ઞા કરનાર અપૃષ્ટલાભિક કહેવાય છે

(૨૪) મિશ્નાલાભિક-કોઈ જગ્યાએથી અથવા ગૃહસ્થથી યાચના કરીને
કોઈ ગૃહસ્થ તુચ્છ ખલ્લ, ચણા અથવા કોદરી આદિ લાવ્યો હોય અને

અભિક્ષાલાભિકઃ અયાચિતલાભોઽમિક્ષા તસ્યા અમિક્ષયા લાભોઽસ્યાઽસ્તીતિ
 અભિક્ષાલાભિકઃ ઉચ્યતે ૨૫ અન્નગ્લાયકઃ—અન્નેનાઽઽહારેણ વિના ગ્લાયકઃ,
 ‘રાત્રિનિષ્પાદિત મન્નં ગૃહીષ્યામિ’ इत्यभिग्रहं कृत्वा भिक्षाचरः पयुर्पितान्न-
 भिक्षाचरः खलु अन्नग्लायक उच्यते ૨૬ औपनिहितकः—औपनिहितं कथञ्चिद्
 गृहस्थेन स्वसमीपे समानीत मन्नादिकम्, तदभिग्रहेण चरतीति औपनिहितकचर
 उच्यते ૨૭ परिमितपिण्डपातिकः—परिमितपिण्डस्य प्रमाणपरिच्छिन्नपिण्डस्य
 प्राप्तो लाभः परिमितपिण्डपातः सोऽस्याऽस्तीति परिमितपिण्डपातिकः आधा-
 कर्मादि दोषरहितं भक्तपानादिकं ‘यदि—एकस्माद् गृहात् पर्याप्तं’ लभ्यते तदा—ग्रही-
 तव्यम् इत्येव मभिग्रहवान् परिमितपिण्डपातिकः उच्यते—૨૮ शुद्धैषणिकः—शुद्धैषणा

‘મોજન તૈયાર કિયા હો વહ ભિક્ષા કહલાતા હૈ। એસે મોજન કો છેને
 કી પ્રતિજ્ઞા કરને ચાલા અભિક્ષાલાભિક હૈ।

(૨૫) અભિક્ષાલાભિક—યાચના કિયે વિના હી લાભ હોના અભિક્ષા
 હૈ। એસે આહારાદિ કો હી છેને કી પ્રતિજ્ઞા કરને ચાલા અભિક્ષાલાભિક હૈ।

(૨૬) અન્નગ્લાયક—આહાર કે વિના ગ્લાનિ પાને ચાલા અન્નગ્લાયક
 કહલાતા હૈ। જો વાસી આહાર કો હી છેને કા અભિગ્રહ કરતા હૈ ઉસે
 અન્નગ્લાયક સમજના વાહિયે।

(૨૭) ઔપનિહિતક—કિસી નિમિત્ત સે કોઈ ગૃહસ્થ મેરે પાસ
 આહાર છે આગા તો લૂંગા ’ એસી પ્રતિજ્ઞા કરને ચાલા તપસ્વી ઔપ
 નિહિતક કહલાતા હૈ।

(૨૭) પરિમિતપિણ્ડપાતિક—પરિમિત આહાર કા લાભ હોના પરિ-
 મિતપિણ્ડપાત હૈ, ઉસકા અભિગ્રહ કરને ચાલા પરિમિતપિણ્ડપાતિક
 કહલાતા હૈ।

તેનાથી જે ભોજન તૈયાર કર્યું હોય તે ભિક્ષા કહેવાય છે. આવા ભોજન
 ને દેવાની પ્રતિજ્ઞા કરનાર ભિક્ષાલાભિક છે.

(૨૫) અભિક્ષાલાભિક—યાચના કર્યા વગર જ લાભ થવો અભિક્ષા છે.
 આવા આહારાદિને જ દેવાની પ્રતિજ્ઞા કરનાર અભિક્ષાલાભિક છે.

(૨૬) અન્નગ્લાયક—આહાર વગર ગ્લાનિ પામનાર અન્નગ્લાયક
 કહેવાય છે. જે વાસી આહારને જ દેવાનો અભિગ્રહ ધારે છે તેને
 અન્નગ્લાયક સમજવો જોઈએ.

(૨૭) ઔપનિહિતક—કોઈ નિમિત્તથી કોઈ ગૃહસ્થ મારી પાસે આહાર
 લઈને આવશે તો જ લઈશ એવી પ્રતિજ્ઞા કરનાર તપસ્વી ઔપનિહિતક
 કહેવાય છે.

શુદ્ધાદિ દોષરાહિત્યમ્, શુદ્ધસ્ય ઉદ્ગમાદિદોષરાહિત્યસ્ય વા, એવળા સાઽસ્યાસ્તીતિ શુદ્ધૈષણિકઃ સર્વથા-શુદ્ધમેવ ગ્રહીતવ્યમ્ इत्यभिग्रहधारीति શુદ્ધૈષણિક ઉચ્યતે ૨૯ સંખ્યાદત્તિકઃ-સંખ્યા પ્રધાનદત્તિઃ સંખ્યાદત્તિઃ તદભિગ્રહેણ ચરતીતિ સંખ્યા દત્તિકઃ, દર્વી-કટોરકાદિતોઽવિચ્છિન્નધારયા યા મિક્ષા પતતિ સા દત્તિ રુચ્યતે એક ક્ષેપ રૂપા ચ મિક્ષા દત્તિરિત્યેવં રીત્યાઽનેકવિધા મિક્ષાચર્યા ભવતીતિમાવઃ । ઉક્તશ્ચી-પપાતિકે ૩૦ સૂત્રે-‘સે કિંતં મિક્ષાચરિયા? મિક્ષાચરિયા અણે-ગવિહા પળ્લસા, તં જહા-દ્વવાભિગ્રહચરણ૧ સ્વેત્તાભિગ્રહચરણ૨ કાલા-ભિગ્રહચરણ૩ મઃવાભિગ્રહચરણ૪ ઉક્ષિત્તચરણ૫ ણિક્ષિત્તચરણ૬ ઉક્ષિત્તણિક્ષિત્તચરણ૭ ણિક્ષિત્તઉક્ષિત્તચરણ૮ વટ્ટિજ્જમાળ-ચરણ૯ સાહરિજ્જમાળચરણ૧૦ ઉવળીયચરણ૧૧ અવળીયચરણ૧૨ ઉવળીય અવળીયચરણ૧૩ અવળીય ઉવળીયચરણ૧૪ સંસટ્ટચરણ૧૫ અસંસટ્ટચરણ૧૬ તડજાયસંસટ્ટચરણ૧૭ અળ્લાયચરણ૧૮ મોળચરણ૧૯ દિટ્ટલામિણ૨૦ અદિટ્ટલામિણ૨૧ પુટ્ટલામિણ૨૨ અપુટ્ટલામિણ૨૩

(૨૯) શુદ્ધૈષણિક-શંકા આદિ દોષો સે અથવા ઉદ્ગમ આદિ દોષો સે રહિત હી આહાર આદિ કી ગવેષણા કરને વાલા શુદ્ધૈષણિક કહલાતા હૈ । અર્થાત્ જિસને એલા અભિગ્રહ ધારણ કિયા હો કિ સર્વથા શુદ્ધ આહાર હી ગ્રહણ કરુંગા, ઉસે શુદ્ધૈષણિક સમજના ચાહિયે ।

(૩૦) સંખ્યાદત્તિક-દત્તિયોં કી સંખ્યા નિશ્ચિત કરકે આહાર લેને વાલા । વિના ધાર દૂટે એક વાર મેં જિતના આહાર-પાની કા લાભ હો વહ એક દત્તી કહલાતી હૈ ।

હસ પ્રકાર મિક્ષા ચર્યાં કે અનેક ભેદ હૈં । ઔપપાતિક સૂત્ર કે ત્રીસવેં સૂત્ર મેં કહા હૈ-

(૨૮) પરિમિતપિણ્ડપાતિક--પરિમિત આહારનો લાભ થવો પરિમિત પિણ્ડપાત છે. તેવો અભિગ્રહ કરનાર પરિમિતપિણ્ડપાતિક કહેવાય છે.

(૨૯) શુદ્ધૈષણિક--શંકા વગેરે દોષોથી અથવા ઉદ્ગમ આદિ દોષોથી રહિત જ આહાર આદિની ગવેષણા કરનારાણે શુદ્ધૈષણિક કહેવાય છે અર્થાત્ જેણે આવો અભિગ્રહ ધરણ કર્યો હોય કે સર્વથા શુદ્ધ આહાર ગ્રહણ કરીશ, તેને શુદ્ધૈષણિક સમજવો જોઈએ.

(૩૦) સંખ્યાદત્તિક--દત્તિઓની સંખ્યા નિશ્ચિત કરીને આહાર ગ્રહણ કરનાર સાતત્ય જળવાઈ રહે તેવી રીતે એકવારમાં જેટલા આહાર પાણીનો લાભ થાય તે એક દત્તિ કહેવાય છે.

આ રીતે મિક્ષાચર્યાના અનેક ભેદ છે. ઔપપાતિક સૂત્રના ત્રીસમાં સૂત્રમાં કહ્યું છે.

મિક્ષાલાભિ ૨૪ અમિક્ષાલાભિ ૨૫ અણ્ણલાભિ ૨૬ ઓવણિ-
હિ ૨૭ પરિમિતપિંડવાઇ ૨૮ સુદ્વેષણિ ૨૯ સંખ્યાદત્તિ ૩૦ સેતં-
મિક્ષાચરિયા' इति । अथ का सा भिक्षा चर्या ३ भिक्षाचर्याऽनेकविधा मन्त्रा-
तद्यथा-द्रव्याभिग्रहचरकः १ क्षेत्राभिग्रहचरकः २ कालाभिग्रहचरकः ३ भावाभि-
ग्रहचरकः ४ उत्क्षिप्तचरकः ५ निक्षिप्तचरकः ६ उत्क्षिप्तनिक्षिप्तचरकः ७ निक्षिप्तो-
त्क्षिप्तचरकः ८ वर्त्यमानचरकः ९ संह्रियमाणचरकः १० उपनीतचरकः ११ अपनीत-
चरकः १२ उपनीतापनीतचरकः १३ अपनीतोपनीतचरकः १४ संसृष्टचरकः १५
असंसृष्टचरकः १६ तज्जातसंसृष्टचरकः १७ अज्ञातचरकः १८ मौनचरकः १९ दृष्ट-
लाभिकः २० अदृष्टलाभिकः २१ पृष्ठलाभिकः २२ अपृष्ठलाभिकः २३ भिक्षा-
लाभिकः २४ अभिक्षालाभिकः २५ अन्नग्लायकः २६ औपनिहितकः २७ परिमित-
पिण्डपातिकः २८ शुद्धैषणिकः २९ संख्यादत्तिकः ३० सा-एषा भिक्षाचर्या, इति । १५।

પ્રશ્ન-ભિક્ષાચર્યા કે કિતને ભેદ હૈ ?

ઉત્તર-ભિક્ષાચર્યા અનેક પ્રકાર કી હૈ, યથા-(૧) દ્રવ્યાભિગ્રહચર (૨) ક્ષેત્રાભિગ્રહચર (૩) કાલાભિગ્રહચર (૪) ભાવાભિગ્રહચર (૫) ઉત્ક્ષિ-
પ્તચર (૬) નિક્ષિપ્તચર (૭) ઉત્ક્ષિપ્ત નિક્ષિપ્તચર (૮) નિક્ષિપ્ત ઉત્ક્ષિ-
પ્તચર (૯) વર્ત્યમાનચર (૧૦) સંહ્રિયમાણચર (૧૧) ઉપનીતચર (૧૨)
અપનીતચર (૧૩) ઉપનીત-અપનીતચર (૧૪) અપનીત-ઉપનીતચર (૧૫)
સંસૃષ્ટચર (૧૬) અસંસૃષ્ટચર (૧૭) તજ્જાતસંસૃષ્ટચર (૧૮) અજ્ઞાતચર
(૧૯) મૌનચર (૨૦) દૃષ્ટલાભિક (૨૧) અદૃષ્ટલાભિક (૨૨) પૃષ્ટલાભિક
(૨૩) અપૃષ્ટલાભિક (૨૪) ભિક્ષાલાભિક (૨૫) અભિક્ષાલાભિક (૨૬)
અન્નગ્લાયક (૨૭) ઔપનિહિતક (૨૮) પરિમિતપિણ્ડપાતિક (૨૯)
શુદ્ધૈષણિક ઓર (૩૦) સંખ્યાદત્તિક, યહ સવ ભિક્ષાચર્યા હૈ ॥૧૫॥

પ્રશ્ન-ભિક્ષાચર્યાના કેટલા ભેદ છે.

ઉત્તર-ભિક્ષાચર્યા અનેક પ્રકારની છે, જેવી કે (૧) દ્રવ્યાભિગ્રહચર
(૨) ક્ષેત્રાભિગ્રહચર (૩) કાલાભિગ્રહચર (૪) ભાવાભિગ્રહચર (૫) ઉત્ક્ષિપ્તચર
(૬) નિક્ષિપ્તચર (૭) ઉત્ક્ષિપ્તનિક્ષિપ્તચર (૮) નિક્ષિપ્ત ઉત્ક્ષિપ્તચર (૯) વર્ત્ય-
માનચર (૧૦) સંહ્રિયમાનચર (૧૧) ઉપનીતચર (૧૨) અપનીતચર (૧૩)
ઉપનીત-અપનીતચર (૧૪) અપનીત ઉપનીતચર (૧૫) સંસૃષ્ટચર (૧૬)
અસંસૃષ્ટચર (૧૭) તજ્જાતસંસૃષ્ટચર (૧૮) અજ્ઞાતચર (૧૯) મૌનચર (૨૦)
દૃષ્ટલાભિક (૨૧) અદૃષ્ટલાભિક (૨૨) પૃષ્ટલાભિક (૨૩) અપૃષ્ટલાભિક
(૨૪) ભિક્ષાલાભિક (૨૫) અભિક્ષાલાભિક (૨૬) અન્નગ્લાયક (૨૭) ઔપનિ-
હિતક (૨૮) પરિમિત પિણ્ડપાતિક (૨૯) શુદ્ધૈષણિક અને (૩૦) સંખ્યાદત્તિક
આ બધી ભિક્ષાચર્યા છે. ॥ ૧૫ ॥

મૂલમ્—રસપરિચ્છાગતવે અળેગવિહે, નિર્વિકૃત્ય પળીયરસ-
પરિચ્છાયાઈ મેયઓ ॥૧૬॥

છાયા—‘રસપરિત્યાગતપોડનેકવિધમ્ નિર્વિકૃતિપ્રળીતરસપરિત્યાગાદિ
મેદતઃ ॥૧૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—પૂર્વે તાવત્-તૃતીયં ભિક્ષાચર્યા નામ બાહ્યં તપોડનેકવિધં
પ્રરૂપિતમ્, સમ્પત્તિ-રસપરિત્યાગતપઃ પ્રરૂપયિતુમાહ—‘રસપરિચ્છાગતવે’
ઇત્યાદિ । રસપરિત્યાગઃ-ઘૃતાદિરસપરિત્યાગરૂપં તપો નિર્વિકૃતિકાહારાદિગ્રહણ
રૂપમ્ અનેકવિધં ભવતીતિમાવઃ । તદ્યથા—નિર્વિકૃતિકઃ ૧ પ્રળીતરસપરિત્યાગઃ ૨
આચામામ્લમ્ ૩ આયામસિક્થમોળી ૪ અરસાહારઃ ૫ વિરસાહારઃ ૬ અન્તાહારઃ ૭
પ્રાન્તાહારઃ ૮ રુક્ષાહારઃ ૯ તુચ્છાહારઃ ૧૦ इत्येवं રીત્યા રસપરિત્યાગ તપોડનેક
વિધં ભવતીતિમાવઃ । તત્ર-નિર્વિકૃતિકાહાર ઃતાદ્ નિર્ગતા ઘૃતાદિરૂપા વિકૃતિર્ય-

‘રસપરિચ્છાગતવે અળેગવિહે’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—નિર્વિકૃતિ-પ્રળીતરસપરિત્યાગ આદિ કે મેદ સે રસ
પરિત્યાગ તપ અનેક પ્રકાર કા હૈ ॥૧૬॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—હસસે પૂર્વે ભિક્ષાચર્યા નામક તીસરે બાહ્ય તપ
કા નિરૂપણ કિયા ગયા અબ રસ પરિત્યાગ કા વિવેચન કરતે હૈ—

ઘૃત આદિ પૌષ્ટિક રસોં કા ત્યાગ રસપરિત્યાગ તપ કહલાતા હૈ ।
વિગય રહિત આહાર ગ્રહણ કરને આદિ કે મેદ સે ઉલ્લેખે અનેક મેદ
હૈ । વે હસ પ્રકાર હૈ—(૧) નિર્વિકૃતિક (૨) પ્રળીતરસપરિત્યાગ (૩)
આયંબિલ (૪) આયામ સિક્થ મોળી (૫) અરસાહાર (૬) વિરસાહાર (૭)
અન્તાહાર (૮) પ્રાન્તાહાર (૯) રુક્ષાહાર (૧૦) તુચ્છાહાર, ઇત્યાદિ મેદોં
સે રસપરિત્યાગ તપ અનેક પ્રકાર કા હૈ । (૧) ઘૃત આદિ વિગયોં

‘રસપરિચ્છાગતવે અળેગવિહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—નિર્વિકૃતિ-પ્રળીતરસપરિત્યાગ આદિના લેદથી રસપરિત્યાગ
તપ અનેક પ્રકારના છે. ॥ ૧૬ ॥

તત્ત્વાર્થદીપિકા—આની પૂર્વે ભિક્ષાચર્યા નામક ત્રીજા બાહ્ય તપનું
નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું હવે રસપરિત્યાગતપનું વિવેચન કરીએ છીએ

ઘી આદિ પૌષ્ટિક રસોના ત્યાગ રસપરિત્યાગ તપ કહેવાય છે. વિગય
રહિત આહાર ગ્રહણ કરવા આદિના લેદથી તેના અનેક લેદ છે તે આ પ્રમાણે
છે (૧) નિર્વિકૃતિક (૨) પ્રળીત રસપરિત્યાગ (૩) આયંબિલ (૪) આયામ
સિક્થભોળી (૫) અરસાહાર (૬) વિરસાહાર (૭) અન્તાહાર (૮) પ્રાન્તાહાર
(૯) રુક્ષાહાર (૧૦) તુચ્છાહાર, ઇત્યાદિ લેદોથી રસપરિત્યાગ તપ અનેક

નિષ્કાસિતે સતિ વત્પાત્રસંશ્લિષ્ટં દ્વર્યાદિના ઘર્ષણેન નિસ્સારિત મન્નં વલ્લ્ચણ-
કાદિ નિષ્પાદિત મ્લત્તક્રમિશ્રિતં, પર્યુષિતં વાડન્નં પ્રાન્તં તદ્રૂપ આહારઃ પ્રાન્તા-
હાર ઉચ્ચયતે ૮ રુક્ષાહારમ્-રુક્ષમ્ અસ્નિઘ્નમન્નં તદ્રૂપ આહારો રુક્ષાહારઃ ૯
તુચ્છાહારઃ-તુચ્છોડલ્પોડસારશ્ચ શ્યાવાકાદિનિષ્પાદિતો ય આહારઃ સ તુચ્છાહારઃ
૧૦ इत्येवं रस परित्यागो बोध्यः ॥ १६ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિઃ—પૂર્વં લલ્લ પદ્ધતિષુ-અનશનાદિ બાહ્ય તપઃસુ મિક્ષા-
ચર્યા તપઃ સંવિત્તરં પ્રરૂપિતમ્, સમ્પતિ-ક્રમપ્રાપ્તં ચતુર્થં રસપરિત્યાગરૂપં તપઃ
પ્રરૂપયિતુમાહ—‘રસપરિત્યાગતપઃ અણેગચિદ્દે, નિવિઘ્નય પળીય રસપરિત્યાગ-
યાહ મેદધો’ ઇતિ । રસપરિત્યાગ તપઃ-ઘૃતાડૂપાદિ સરસાહારસ્ય પરિત્યાગ-
રૂપં તપસ્તાવદ્ અનેકાવધમ્, તચ્ચા-નિર્વિકૃતિકઃ પ્રણીતરસપરિત્યાગાદિ મેદતઃ ।

કે પાત્ર મેં છે અન્ન નિકાલ લેને પરતુ મેં જો શેષ ચિપટા રહતા હૈ ઓર જિસે
ચમ્મચ આદિ છે સ્વરોચ કર નિકાલ્યા જાતા હૈ વહ પ્રાન્તાહાર કહલાતા
હૈ । અથવા ચના આદિ છે બના હુઆ અમ્લતક્ર મિશ્રિત ઠંડા આહાર
પ્રાન્તાહાર કહા જાતા હૈ । (૯) રુક્ષે અર્થાત્ ચિકનાઈ છે રહિત આહાર
કો રુક્ષાહાર કહતે હૈ । (૧૦) તુચ્છ અર્થાત્ અલ્પ અથવા અસાર સાવાં
આદિ કા બના આહાર તુચ્છાહાર કહલાતા હૈ । હસ પ્રકાર અનેક તરહ
કા રસપરિત્યાગ તપ સમજના ચાહિય ॥ ૧૬ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—છઠ્ઠ પ્રકાર કે અનશન આદિ બાહ્ય તપોં મેં સે
મિક્ષાચર્યા તપ કા વિસ્તાર પૂર્વક પ્રરૂપણ કિયા ગયા, અવ ક્રમપ્રાપ્ત ચૌથે
રસપરિત્યાગ તપ કા પ્રરૂપણ કરતે હૈ—

નિર્વિકૃતિક, પ્રણીત રસપરિત્યાગ આદિ કે મેદ સે રસપરિત્યાગ તપ
કે અનેક મેદ હૈ । વે હસ પ્રકાર હૈ (૧) નિર્વિકૃતિક (૨) પ્રણીતરસપરિત્યાગ

લીધા બાદ તેમાં જે શેષ ચોટેલું રહે છે અને જેને ચમચા આદિથી ઉખાડી
ને કાઢવામાં આવે છે તે પ્રાન્તાહાર કહેવાય છે અથવા ચણા વગેરેથી બનેલો
અમ્લતક્રમિશ્રિત ઠંડો આહાર પ્રાન્તાહાર કહેવાય છે. સુકા અર્થાત્ ચિકણા
પણાથી રહિત આહારને રુક્ષાહાર કહે છે. (૧૦) તુચ્છ અર્થાત્ અલ્પ અથવા
અસાર સામા વગેરેનો બનેલો આહાર તુચ્છાહાર કહેવાય છે. આમ અનેક
પ્રકારના રસપરિત્યાગ તપ સમજવા ભેદીયે ॥ ૧૬ ॥

તત્ત્વાર્થનિર્યુક્તિ—છ પ્રકારના અનશન આદિ બાહ્ય તપોમાંથી
મિક્ષાચર્યા તપનું વિસ્તારપૂર્વક પ્રરૂપણ કરવામાં આવ્યું, હવે ક્રમપ્રાપ્ત ચૌથા
રસ પરિત્યાગ તપનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ

નિર્વિકૃતિક, પ્રણીતરસ પરિત્યાગ આદિના ભેદથી રસપરિત્યાગ તપના
અનેક ભેદ છે. તે આ પ્રમાણે છે (૧) નિર્વિકૃતિક (૨) પ્રણીતરસપરિત્યાગ

નિર્વિકૃતિકઃ ૧ પ્રણીતરસપરિત્યાગઃ ૨ આદિના-આચામામ્લમ્ ૩ આયામસિક્વ્ય
 મોજી ૪ અરસાહારઃ ૫ વિરસાહારઃ ૬ અન્તા-(ન્ત્યા) હારઃ ૭ પ્રાન્તાહારઃ ૮
 રુક્ષાહારઃ ૯ તુચ્છાહારઃ ૧૦ इत्येवं રીત્યા રસપરિત્યાગતપોડનેકવિધં ભવતિ ।
 તત્ર-નિર્વિકૃતિક તાવદ્ નિર્ગતા ધૃતાદિરૂપા વિકૃતિર્યસ્માન્ સ નિર્વિકૃતિકઃ
 આહાર ઉચ્યતે, તથાચ ધૃતાદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થવર્જિતાહારગ્રહણં નિર્વિકૃતિકં નામ
 રસપરિત્યાગતપો ભવતિ ૩ પ્રણીતરસપરિત્યાગઃ-પ્રણીતરસઃ પ્રચુરદ્રવદ્ઘૃત-
 વિન્દુ સન્દોહોડપૂપાદિ રતસ્ય પરિત્યાગઃ પ્રણીતરસપરિત્યાગઃ તદ્રૂપં તપઃ પ્રણીત-
 રસપરિત્યાગ તપ ઉચ્યતે ૨ આચામામ્લમ્-સ્નેહાદિ વિકારરહિતાના મોદન-
 મર્જિતચળકાદીનાં રુક્ષાન્નાનામ્ અચિત્તે જલે પ્રક્ષેપેણ એકાસનસ્થતયોપવિઙ્ય
 સકૃદ્ભોજનં સ્વલુ આચામામ્લં નામ તપ ઉચ્યતે-તથાચોક્તમ્--

(૩) આચામ્લ (૪) આયામસિક્વ્ય મોજી (૫) અરસાહાર (૬) વિરસાહાર
 (૭) અન્તાહાર (૮) પ્રાન્તાહાર (૯) રુક્ષાહાર (૧૦) તુચ્છાહાર । હસ પ્રકાર
 રસપરિત્યાગ તપ અનેક પ્રકાર કા હૈ । ઘૃત આદિ વિકૃતિયોં સે રહિત
 આહાર નિર્વિકૃતિક કહલાતા હૈ । અતએવ ઘૃત આદિ સ્નિગ્ધ પદાર્થોં
 સે રહિત આહાર ગ્રહણ કરના નિર્વિકૃતિક નામક રસપરિત્યાગ તપ હૈ ।
 બહુલતા કે કારણ જિસમેં સે ઘી ટપકતા હો એસે માલપુઆ આદિ કો
 પ્રાણીતરસ કહતે હૈં, ઉસકા ત્યાગ કરના પ્રાણીતરસત્યાગ નામક તપ હૈ ।
 સ્નિગ્ધતા એવં વિગય રહિત ઓદન (ભાત) તથા મુને ચને આદિ રુખે અન્ન
 કો અચિત્ત જલ મેં મિગો કર એક આસન પર બેઠ કર એક વાર હી
 ભોજન કરના આચામ્લ યા આયંબિલ તપ કહલાતા હૈ । કહા મી હૈ-

વિકૃતિરહિત ઓદન કો તથા મુને હુએ ચને આદિ રુખે અન્ન કો અચિત્ત
 જલ મેં ઢાલકર એક સ્થાન પર બેઠકર એક વાર સ્નાના આયંબિલ તપ હૈ । ૧।

(૩) આચામ્લ (૪) આપાત્રસિક્વ્યલોળ (૫) અરસાહાર (૬) વિરસાહાર (૭)
 અન્તાહાર (૮) પ્રાન્તાહાર (૯) રુક્ષાહાર (૧૦) તુચ્છાહાર આમ રસપરિત્યાગ તપ
 અનેક પ્રકારના છે. ઘી વગેરે વિકૃતિઓથી રહિત આહાર ગ્રહણ કરવો નિર્વિકૃ-
 તિક નામક રસપરિત્યાગ તપ છે વધુ પ્રમાણમાં હોવાના કારણે જેમાંથી ઘી
 ટપકતું હોય એવા માલપુકાં આદિને પ્રણીતરસ કહે છે તેનો ત્યાગ કરવો પ્રણીત
 રસત્યાગ નામક તપ છે. સ્નિગ્ધતા અને વિગય ઓદન (ભાત) તથા શેકેલા
 ચણા આદિ સુકા અન્નને અચેત પાણીમાં પળાવીને એક આસને બેસીને એક જ
 વાર ભોજન કરવું આચામ્લ અથવા આયંબિલ તપ કહેવાય છે. કહું પણ છે.

વિકૃતિરહિત ઓદનને તથા શેકેલા ચણા વગેરે સુકા અન્નાને અચિત્ત
 પાણીમાં નાખીને એક સ્થાનકે બેસીને એકવાર ખાવું આયંબિલ તપ છે । ૧।

‘विगह रहियस्स ओयण, भजिजय चणगाइलुक्खअन्नस्स ।

खित्ताजले अचित्ते, खाणं आयंबिलं जाण ॥१॥ इति

‘विकृति रहितस्य ओदन भर्जितचणकादि रूक्षान्नस्य ।

क्षिप्त्वा जले अचित्ते भोजन माचाषाम्लं जानीहि ॥१॥ इति

आयामसिक्खभोजीनाम तपस्तु-मण्डरूपावत्ताणगतसिक्खरूपौदनकण भक्षणमुच्यते धर्म-धर्मिणोरभेदात् तद्भोक्ताऽपि तथाविधतपसा व्यपदिश्यते ४ अरसाहारतपः-अरसो जीरक-हिंशादिभिरसंस्कृतआहारोऽरसाहार उच्यते, तथा-विधाऽरसाहारतपो भवति ५ विरसाहारतपः-विगतो रसो विरसः पुराणधान्यौदना-दिराहारो-विरसाहार उच्यते तथाविध विरसाहारतपो भवति ६ अन्त्याहारतपः-अन्ते-पर्यवसाने भवम् अन्त्यं जघन्य धान्यं क्रोद्रवादि तद्रूप आहारोऽन्त्याहार उच्यते तथाविधान्त्याहार तपो भवति ७ प्रान्ताहारतपः प्रकर्षेण अन्तं प्रान्तम् पाकपात्रादेन्ने निःसारिते तत्पात्रश्लिष्टं दर्व्यादिना घर्षणेन निस्सारित मन्नं वल्लचणकादि निष्पादित मम्रुतक्र मिश्रितं पर्युषितं वाऽन्नं प्रान्त मुच्यते तद्रूप आहारः प्रान्ताहारः तथाविध प्रान्ताहारतपो भवति ८ रूक्षाहारतपः-रूक्षाहारम् अस्निग्धमन्नं तद्रूप आहारो रूक्षाहार उच्यते तथाविध रूक्षाहारतपो भवति ९ तुच्छा-

मांड यो ओसामण में चावल आदि के जो दाने (सीथ) रह जाते हैं उन्हें धर्म और धर्मी के अभेद से आयामसिक्ख भोजी नामक तप कहते हैं ।

जीरा हींग आदि से विना छौंका आहार अरस आहार कहलाता है । पुराने धान्य आदि का आहार करना विरसाहार है । क्रोद्रव आदि घटिया धान्य अन्त कहलाता है, उसको खाना अन्ताहार या अन्त्याहार कहलाता है । पकाने के पात्र में से भोजन निकाल लेने पर उस पात्र में जो शेष लगा रहता है, उसे चम्मच आदि से खुरच कर निकाला जाता है वह प्रान्ताहार कहलाता है अथवा खट्टे छछ से मिश्रित चना आदि या ठंडा भोजन प्रान्ताहार कहलाता है । उसे ही खाने का नियम

ओसामणुमां योआ वगेरेना जे हाण्ठा (सीथ) रही जाय छे तेभने धर्म अने धर्मीना अलेदथी आपात्रसिक्खलोअ नामक तप कडे छे. अरा तथा हींग वगेरेथी वघार्या वगरनो आहार अरस आहार कडेवाय छे जुना धान्य वगेरेनो आहार करवो विरसाहार छे. केदरी वगेरे मडुं धान्य अन्त कडेवाय छे तेने भावुं अन्त्याहार कडेवाय छे. रांधवाना वासणुमांथी लोअन काठी दीधा आद ते पात्रमां जे शेष योंटी रहेवुं छेय तेने यमया, तावेथा आदिथी

હારતપઃ-તુચ્છોડલ્પોડસારથ્ય શ્યામાકાદિનિષ્પાદિત આહાર સ્તુચ્છાહાર ઉચ્યતે તથાવિધતુચ્છાહારતપો ભવતીતિ ૧૦ રીત્યા રસપરિત્યાગતપોડનેકવિધં ભવતીતિ વોધ્યમ્ ઉક્તશ્ચૌપપાતિકે ૩૦ મુત્રે-‘સે કિં તં રસપરિચ્ચાણ ૨ રસપરિચ્ચાણ અણેગવિદે પળ્લન્તે, તં જહા-નિવ્વિદ્દણ ૧ પળીયરસપરિચ્ચાણ ૨ આયં-ચિલ્લણ ૩ આયામસિત્થમ્બોઈ ૪ અરસાહારે ૫ વિરસાહારે ૬ અંતાહારે ૭ પ્રાન્તાહારે ૮ રુક્ષાહારે ૯ તુચ્છાહારે ૧૦ સે ત્તં રસપરિચ્ચાણ’ इति । अथ कौऽसौ रसपरित्यागः १ रसपरित्यागोऽनेकविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-निर्विकृतिकः १ प्रणीतरसपरित्यागः २ आचामाचलम् ३ आयायसिदथमोजी ४ अरसाहारः ५-६ विरसाहारः अन्त्याहारः ७ प्रान्ताहारः ८ रुक्षाहारः ९ तुच्छाहारः १० इति ॥ १६ ॥

મૂલમ્-કાયકિલેસતવે અણેગવિદે, ઠાણદ્વિદ્ધ્યાઈ મેયઓ ॥ ૧૭ ॥

છાયા-‘કાયક્લેશતપોડનેકવિધમ્, સ્થાનસ્થિતિકાદિ મેદતઃ ॥ ૧૭ ॥

અંગીકાર કરના પ્રાન્તાહાર તપ છે । રુક્ષા-લૂક્ષા આહાર રુક્ષાહાર કહલાતા હૈ’

જો આહાર તુચ્છ અર્થાત્ અલ્પ યા અસાર હો-શ્યામાક આદિ કા બના હો વહ આહાર તુચ્છાહાર કહલાતા હૈ । इत्यादि प्रकार से रसपरित्याग तप के अनेक भेद होते हैं । औपपातिकसूत्र के तीसरे सूत्र में कहा है-

प्रश्न-रसपरित्याग तप के कितने भेद हैं ?

उत्तर-रसपरित्याग तप अनेक प्रकार का है, यथा-(१) निर्विकृतिक (२) प्रणीतरसपरित्याग (३) आयंचिल (४) आयायसिदथमोजी (५) अरसाहार (६) विरसाहार (७) अन्त्याहार (८) प्रान्ताहार (९) रुक्षाहार और (१०) तुच्छाहार ॥ १६ ॥

ઉપાધીને કાઢી લેવામાં આવે છે તે પ્રાન્તાહાર કહેવાય છે અથવા ખાટી છાશ થી મિશ્રિત ચણા વગેરે અથવા ટાઢું લોજન પ્રાન્તાહાર કહેવાય ૧
ખાવાનો નિયમ અંગીકાર કરવો પ્રાન્તાહાર તપ છે. રૂણો ૨
રૂક્ષાહાર કહેવાય છે. જે આહાર તુચ્છ અર્થાત્ અલ્પ અથવા ય
શ્યામાક વગેરેનો ખનેડો હોય તે તુચ્છાહાર ૧
રસપરિત્યાગતપના અન્યક ભેદ હોય છે. ઔપપાતિક ૧

પ્રશ્ન-રસપરિત્યાગ તપના કેટલા

ઉત્તર-રસપરિત્યાગ તપ અન્યક પ્રકાર
(૨) પ્રણીતરસપરિત્યાગ (૩) આયંચિલ (૪) આયાયસિદથમોજી (૫) અરસાહાર (૬) વિરસાહાર (૭) અન્ત્યાહાર (૮) પ્રાન્તાહાર (૯) રુક્ષાહાર ૧૦
તુચ્છાહાર ॥ ૧૬ ॥

તત્ત્વार्થદીપિકા--પૂર્વં તાવદ્ ચથાક્રમ મશનાદિરસ પરિત્યાગ પર્યન્તં બાહ્યં તપઃ સવિસ્તરં પ્રરૂપિતદ્, સમ્પ્રતિ-ક્રમાગતસ્ય કાયકલેશરૂપ પञ्चમં બાહ્ય તપસઃ સ્વરૂપં મેદાંશ્ચ પ્રરૂપયિતુમાહ-‘કાયકિલેસતવે’ ઇત્યાદિ । કાયકલેશતપઃ કાયસ્ય લેશો यस્ય-યસ્મિન્વા સ કાયકલેશઃ તદ્દૂપં તપઃ-કાયલેશ તથા ઉચ્યતે ધર્મ-ધાર્મિણોરમેદોષચારાત્ તત્ત્વ-કાયકલેશ તપોઽનેકવિધં ભવતિ । તથથા-સ્થાનસ્થિતિકાદિ મેદતઃ, સ્થાનસ્થિતિકઃ ૧ આદિના-ઉત્કુટકાસનિકઃ ૨ પ્રતિમાસ્થાયી ૩ વીરાસનિકઃ ૪ નૈષધિકઃ ૫ દણ્ડાયતિકઃ ૬ લઙ્કુટશાયી ૭ આતાપકઃ ૮ અપ્રાવૃતકઃ ૯ અકણ્ડૂયકઃ ૧૦ અનિષ્ઠીવકઃ ૧૧ સર્વગાત્રપરિકર્મ-વિમૂષા વિમુક્તઃ ૧૨ ઇત્યેવંરીત્યા કાયકલેશતપોઽનેકવિધં ભવતિ । તત્ર-સ્થાન-

‘કાયકિલેસતવે અણેગવિહે’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ-સ્થાન સ્થિતિક આદિ કે મેદ સે કાયકલેશ તપ કે અનેક મેદ હૈં ॥૧૭॥

તત્ત્વार्થદીપિકા--પહેલે અનશન સે લગા કર રસ પરિત્યાગ પર્યન્ત બાહ્ય તપ કા સવિસ્તર વ્યાખ્યાન કિયા ગયા, અવ ક્રમાગત કાયકલેશ નામક પાંચવે બાહ્ય તપ કે સ્વરૂપ ઓર મેદોં કા પ્રરૂપણ કરતે હૈં-

જિસ તપ સે યા જિસ તપ કો કરને પર કાય કે લેશ હોતા હૈ, વહ કાય લેશ તપ કહલાતા હૈ । યહાં મી ધર્મ ઓર ધર્મીં મેં અમેદ કા ઉપચાર કિયા ગયા હૈ । કાયલેશ તપ અનેક પ્રકાર કા હૈ, જૈસે (૧) સ્થાન સ્થિતિક (૨) ઉત્કુટકાસનિક (૩) પ્રતિમાસ્થાયી (૪) વીરાસનિક (૫) નૈષધિક (૬) દણ્ડાયતિક (૭) લઙ્કુટશાયી (૮) આતાપક (૯) અપ્રાવૃતક (૧૦) અકણ્ડૂયક (૧૧) અનિષ્ઠીવક ઓર (૧૨) સર્વગાત્ર

‘કાયકિલેસતવે અણેગવિહે’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-સ્થાનસ્થિતિક આદિના લેદથી કાયકલેશ તપના અનેક લેદ છે ॥૧૭॥

તત્ત્વार्થદીપિકા-પહેલાં અનશનથી માંડીને રસપરિત્યાગ પર્યન્ત બાહ્ય તપનું સવિસ્તર વર્ણન કરવામાં આવ્યું હોવે ક્રમાગત કાયકલેશ નામક પાંચમાં બાહ્ય તપના સ્વરૂપ અને લેદોનું પ્રરૂપણ કરીએ છીએ

જે તપથી અથવા જે તપ કરવાથી કાયાને લેશ થાય છે તે કાયકલેશ તપ કહેવાય છે. અહીં પણ ધર્મ અને ધર્મીમાં અલેદનો ઉપચાર કરવામાં આવ્યો છે. કાયકલેશ તપ અનેક પ્રકરના છે (૧) સ્થાનસ્થિતિક (૨) ઉત્કુટકાસનિક (૩) પ્રતિમાસ્થાયી (૪) વીરાસનિક (૫) નૈષધિક (૬) દણ્ડાયતિક (૭) લઙ્કુટશાયી (૮) આતાપક (૯) અપ્રાવૃતક (૧૦) અકણ્ડૂયક (૧૧) અનિષ્ઠીવક